

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराज-  
विरचितयाऽऽचारचिन्तामणि-व्याख्यया समलङ्कृतं  
हिन्दीगुर्जरभाषासहितम्-

43769

# आचाराङ्गसूत्रम् ।

( द्वितीयो भागः, अध्य० २-४ )

[ प्रथमः श्रुतस्कन्धः ]

नियोजक :—

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि-  
पण्डितमुनिश्री-कन्हैयालालजी-महाराजः

★

प्रकाशिका :—

श्री अ. भा. श्वे. स्था. जैनशास्त्रोद्धारसमितिः  
राजकोट ( सौराष्ट्र )

★

मूल्य रु. १०.००  
१०-०





મળવાનું ઠેકાણું :

શ્રી અ. ભા. દે. સ્થાનકવાસી

જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

ઝીન લોજ પાસે, રાજકોટ.

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૦૦૦

વીર સંવત : ૨૪૮૩

વિક્રમ સંવત : ૨૦૧૩

ઈસ્વી સન : ૧૯૫૭

: મુદ્રક :

મણિલાલ છગનલાલ શાહ

ધી નવપ્રભાત પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ

ધીર્કાંટા રોડ : : અમદાવાદ

શ્રી-વર્ધમાન-શ્રમણ-સંઘના આચાર્યશ્રી

પૂજ્ય આત્મારામજી મહારાજશ્રીએ

આ પે લ

## સ મ મ તિ પ ત્ર

૧

\*

ઉપરાંત

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ-રચિત

બીજા સૂત્રોની ટીકા માટે તેઓશ્રીના મંતવ્યો

\*

તે મ જ

અન્ય મહાત્માઓ, મહાસતીજીઓ, અદ્યતન-પદ્ધતિવાળા કોલેજના પ્રોફેસરો

તે મ જ

શાસ્ત્રજ્ઞ શ્રાવકોના અભિપ્રાયો

કે. ગ્રીન લોજ પાસે  
ગરેડીયા કુવારોડ  
રાજકોટ : સૌરાષ્ટ્ર

}

શ્રી. અખિલ ભારત પ્રવે. સ્થા. જૈન-  
શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

जैनागमवेत्ता जैनधर्मदिवाकर उपाध्याय श्री १००८ श्री आत्मारामजी  
 महाराज तथा न्याय व्याकरण के ज्ञाता परम पण्डित मुनिश्री १००८  
 श्री हेमचन्द्रजी महाराज, इन दोनों महात्माओंका दिया हुआ  
 श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रका प्रमाणपत्र निम्न प्रकार है—

### सम्मइवत्तं

सिरि-वीरनिव्वाण-संवच्छर २४५८ आसोई  
 पुण्णमासी १५ सुक्कारो लुहियाणाओ ।

मए मुणिहेमचंदेण य पंडियरयणमुणिसिरि-घासीलालविणिम्मिया सिरिउवा-  
 सगसुत्तस्स अगारधम्मसंजीवणीनामिया वित्ती पंडियमूलचंदवासाओ अज्जोवंतं  
 सुया, समीईणं, इयं वित्ती जहाणामं तहा गुणेवि धारेइ, सच्चं, अगाराणं तु इमा  
 जीवण ( संजमजीवण ) दाई एव अत्थि । वित्तिक्त्तुणा मूलसुत्तस्स भावो उज्जु-  
 सेलीओ फुडीकओ, अहय उवासयस्स सामणविसेसधम्मो, णयसियवायवाओ,  
 कम्मपुरिसट्ठवाओ समणोवासयस्स धम्मदहत्ता य, इच्चाइविसया अस्सि फुडरीइओ  
 वणििया, जेण कत्तुणो पडिहाए सुट्ठुप्पयारेण परिचओ होइ, तह इइहासदिट्ठिओवि  
 सिरिसमणस्स भगवओ महावीरस्स समए वट्ठमाण-भरहवासस्स य कत्तुणा विसय-  
 प्पयारेण चित्तं चित्तितं, पुणो सकवपाटीणं, वट्ठमाणकाले हिन्दीणामियाए भासाए  
 भासीणं य परमोवयारो कडो, इमेण कत्तुणो अरिहत्ता दीसइ, कत्तुणो एयं कज्जं  
 परमप्पसंसणिज्जमत्थि । पत्तेयजणस्स मज्झत्थभावाओ अस्स सुत्तस्स अवलोयणमईव  
 लाहप्पयं, अविउ सावयस्स तु (उ) इमं सत्थं सव्वस्समेव अत्थि, अओ कत्तुणो  
 अणेगकोडीसो धन्नवाओ अत्थि, जेहिं अच्चंतपरिस्समेण जइजणतोवरि असीमो-  
 वयारो कडो, अहय सावयस्स वारस नियमा उ पत्तेयजणस्स पढणिज्जा अत्थि,  
 जेसि पहावओ वा गहणाओ आया निव्वाणाहिगारी भवइ, तहा भवियव्वयावाओ  
 पुरिसकारपरक्कमवाओ य अवस्समेव दंसणिज्जो, किंहुणा इमीसे वित्तीए पत्तेय-  
 विसयस्स फुडसहेहिं वण्णणं कयं, जइअन्नोवि एवं अम्हाणं पसुत्तप्पाए समाजे विज्जं  
 भवेज्जा तथा नाणस्स चरित्तस्स तहा संघस्स य खिप्पं उदयो भविस्सई, एवं हं मन्ने॥

भवईओ—

उवज्झाय-जइणमुणि-आयाराम-पंचनईओ,

## सम्मतिपत्र

( भाषान्तर )

श्रीवीरनिर्वाण सं० २४५८ आसोज-

शुक्ल ( पूर्णिमा ) शुक्रवार लुधियाना

मैंने और पंडितमुनि हेमचन्द्रजीने पण्डितरत्न मुनि श्रीघासीलाल-  
जीकी रची हुई उपासकदशांग सूत्रकी गृहस्थधर्मसंजीवनी नामक टीका  
पंडित मूलचन्द्रजी व्याससे आद्योपान्त सुनी है। यह वृत्ति यथानाम-  
तथागुणवाली-अच्छी बनी है। सच यह गृहस्थोंके तो जीवनदात्री-  
संयमरूप जीवनको देनेवाली ही है। टीकाकारने मूलसूत्र के भावको  
सरल रीतिसे वर्णन किया है, तथा श्रावकका सामान्य धर्म क्या है ?  
और विशेष धर्म क्या है ? इसका खुलासा इस टीकामें अच्छे ढंगसे  
बतलाया है। स्याद्वादका स्वरूप कर्म-पुरुषार्थ-वाद और श्रावकको  
धर्मके अन्दर दृढता किस प्रकार रखना, इत्यादि विषयोंका निरूपण  
इसमें भलीभांति किया है। इससे टीकाकारकी प्रतिभा खूब झलकती  
है। ऐतिहासिक दृष्टिसे श्रमण भगवान् महावीर के समय जैनधर्म  
किस जाहोजलाली पर था ? और वर्तमान समय जैनधर्म किस  
स्थितिमें पहुंचा है ? इस विषयका तो ठीक चित्र ही चित्रित कर दिया  
है। फिर संस्कृत जाननेवालों को तथा हिन्दीभाषाके जाननेवालों को  
भी पूरा लाभ होगा, क्यों कि टीका संस्कृत है उसकी सरल हिन्दी  
कर दी गई है। इसके पढ़नेसे कर्ताकी योग्यताका पता लगता है कि  
वृत्तिकारने समझानेका कैसा अच्छा प्रयत्न किया है। टीकाकार का  
यह कार्य परम प्रशंसनीय है। इस सूत्रको मध्यस्थ भावसे पढ़ने-  
वालोंको परम लाभकी प्राप्ति होगी। क्या कहें श्रावकों ( गृहस्थों ) का  
तो यह सूत्र सर्वस्व ही है, अतः टीकाकार को कोटिशः धन्यवाद दिया  
जाता है, जिन्होंने अत्यन्त परिश्रमसे जैन-जनताके ऊपर असीम  
उपकार किया है। इसमें श्रावकके बारह नियम प्रत्येक पुरुषके पढ़ने  
योग्य हैं, जिनके प्रभावसे अथवा यथायोग्य ग्रहण करनेसे आत्मा  
मोक्षका अधिकारी होता है। तथा भवितव्यतावाद और पुरुषकार-

पराक्रमवाद हरएकको अवश्य देखना चाहिये। कहां तक कहें इस टीकामें प्रत्येक विषय सम्यक् प्रकारसे बताये गये हैं। हमारी सुसप्राय (सोई हुईसी) समाजमें अगर आप जैसे योग्य विद्वान् फिर भी कोई होंगे तो ज्ञान चारित्र तथा श्रीसंघका शीघ्र उदय होगा, ऐसा मैं मानता हूं—

आपका

उपाध्याय जैनमुनि आत्माराम पंजाबी.



इसी प्रकार लाहोरमें विराजते हुए पण्डितवर्य विद्वान् मुनिश्री १००८  
श्री भागचन्दजी महाराज तथा पं. मुनिश्री त्रिलोकचन्दजी  
महाराजके दिये हुए, श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रके  
प्रमाणपत्रका हिन्दी सारांश निम्न प्रकार है—

श्री श्री स्वामी घासीलालजी महाराज कृत श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रकी संस्कृत टीका व भाषाका अवलोकन किया, यह टीका अतिरमणीय व मनोरञ्जक है, इसे आपने बड़े परिश्रम व पुरुषार्थसे तैयार किया है सो आप धन्यवादके पात्र हैं। आप जैसे व्यक्तियोंकी समाजमें पूर्ण आवश्यकता है। आपकी इस लेखिनीसे समाजके विद्वान् साधुवर्ग पढ़ कर पूर्ण लाभ उठावेंगे, टीकाके पढ़नेसे हमको अत्यानन्द हुआ, और मनमें ऐसे विचार उत्पन्न हुए कि हमारी समाजमें भी ऐसे २ सुयोग्य रत्न उत्पन्न होने लगे—यह एक हमारे लिये बड़े गौरवकी बात है।

वि. सं. १९८९ मा. आश्विन  
कृष्णा १३ वार भौम लाहोर.





श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रकी 'अनगारधर्माऽमृतवर्षिणी' टीका पर  
जैनदिवाकर साहित्यरत्न जैनागमरत्नाकर परमपूज्य श्रद्धेय  
जैनाचार्य श्री आत्मारामजी महाराजका

## सम्मतिपत्र

लुधियाना, ता. ४-८-५१

मैंने आचार्यश्री घासीलालजी म. द्वारा निर्मित 'अनगार-धर्माऽमृत-वर्षिणी' टीकावाले श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रका मुनि श्री रत्नचन्द्रजीसे आद्योपान्त श्रवण किया।

यह निःसन्देह कहना पड़ता है कि यह टीका आचार्यश्री घासीलालजी म. ने बड़े परिश्रम से लिखी है। इसमें प्रत्येक शब्दका प्रामाणिक अर्थ और कठिन स्थलों पर सार-पूर्ण विवेचन आदि कई एक विशेषतायें हैं। मूल स्थलों को सरल बनाने में काफी प्रयत्न किया गया है, इससे साधारण तथा असाधारण सभी संस्कृतज्ञ पाठकों को लाभ होगा ऐसा मेरा विचार है।

मैं स्वाध्यायप्रेमी सज्जनों से यह आशा करूंगा कि ये वृत्तिकारके परिश्रम को सफल बना कर शास्त्रमें दी गई अनमोल शिक्षायों से अपने जीवन को शिक्षित करते हुए परमसाध्य मोक्षको प्राप्त करेंगे।

श्रीमान्जी जयवीर

आपकी सेवामें पोष्ट द्वारा पुस्तक भेज रहे हैं और इस पर आचार्यश्रीजी की जो सम्मति है वह इस पत्रके साथ भेज रहे हैं पढ़ने पर समाचार दें।

श्री आचार्यश्री आत्मारामजी म. ठाने ६ सुखशान्तिसे विराजते हैं। पूज्य श्री घासीलालजी म. सा. ठाने ४ की हमारी ओरसे वन्दना अर्ज कर सुखशाता पूछें।

पूज्य श्री घासीलालजी म. जी का लिखा हुआ (विपाकसूत्र) महाराज-श्रीजी देखना चाहते हैं इसलिये १ कापी आप भेजने की कृपा करें, फिर आप को वापिस भेज देंगे। आपके पास नहीं हो तो जहां से मिले वहां से १ कापी जरूर भिजवाने का कष्ट करें, उत्तर जल्द देनेकी कृपा करें। योग्य सेवा लिखते रहें।

लुधियाना ता. ४-८-५१

निवेदक  
प्यारेलाल जैन

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-उपाध्याय-पण्डित-मुनि  
श्री आत्मारामजी महाराज (पंजाब)का आचाराङ्गसूत्रकी  
आचारचिन्तामणि टीका पर

सम्मति-पत्र ।

मैंने पूज्य आचार्यवर्य श्री घासीलालजी (महाराज) की बनाई हुई श्रीमद् आचाराङ्ग सूत्रके प्रथम अध्ययन की आचारचिन्तामणि टीका सम्पूर्ण उपयोगपूर्वक सुनी ।

यह टीका-न्याय सिद्धान्त से युक्त, व्याकरण के नियम से निबद्ध है । तथा इसमें प्रसङ्ग २ पर क्रम से अन्य सिद्धान्त का संग्रह भी उचित रूप से मालूम होता है ।

टीकाकारने अन्य सभी विषय सम्यक् प्रकार से स्पष्ट किये हैं, तथा प्रौढ विषयों का विशेषरूप से संस्कृत भाषा में स्पष्टतापूर्वक प्रतिपादन अधिक मनोरंजक है, एतदर्थ आचार्य महोदय धन्यवाद के पात्र हैं ।

मैं आशा करता हूँ कि-जिज्ञासु महोदय इसका भली-भाँति पठन द्वारा जैनागम - सिद्धान्तरूप अमृत पी-पी कर मन को हर्षित करेंगे, और इसके मनन से दक्ष जन चार अनुयोगों का स्वरूपज्ञान पावेंगे । तथा आचार्यवर्य इसीप्रकार दूसरे भी जैनागमों के विशद विवेचन द्वारा श्वेताम्बर-स्थानकवासी समाज पर महान उपकार कर यशस्वी बनेंगे ।

वि. सं. २००२

मृगसर सुदि १

जैनमुनि-उपाध्याय आत्माराम

लुधियाना पंजाब शुभमस्तु



बीकानेरवाला समाजभूषण शास्त्रज्ञ भेरुदानजी शेठिआनो अभिप्राय



आप शास्त्रका कार्य कर रहे हैं यह बड़ा उपकारका कार्य है ।  
इससे जैनजनता को काफी लाभ पहुँचेगा ।

( ता. २८-३-५६ना पत्रमांथी )

॥ श्रीः ॥

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-जैनाचार्य-पूज्य-श्री आत्मारामजी-  
महाराजानां पञ्चनद-( पंजाब )स्थानामनुसरोपपातिकसूत्राणा-  
मर्थबोधिनीनामटीकायामिदम्-

### सम्मतिपत्रम् .

आचार्यवर्यैः श्री घासीलालमुनिभिः सङ्कलिता अनुसरोपपातिकसूत्राणामर्थ-  
बोधिनीनाम्नी संस्कृतवृत्तिरूपयोगपूर्वकं सकलाऽपि स्वशिष्यमुखेनाऽश्रावि मया, इयं  
हि वृत्तिर्मुनिवरस्य वैदुष्यं प्रकटयति । श्रीमद्भिर्मुनिभिः सूत्राणामर्थान् स्पष्टयितुं  
यः प्रयत्नो व्यधायि तदर्थमनेकशो धन्यवादानर्हन्ति ते । यथा चेयं वृत्तिः सरला  
सुबोधिनी च तथा सारवर्त्याप । अस्याः स्वाध्यायेन निर्वाणपदमभीप्सुभिर्निर्वाण-  
पदमनुसरद्भिर्ज्ञान-दर्शन-चारित्र्येषु प्रयतमानैर्मुनिभिः श्रावकैश्च ज्ञानदर्शन-चारित्र्याणि  
सम्यक् सम्प्राप्याऽन्येऽप्यात्मानस्तत्र प्रवर्तयिष्यन्ते ।

आशासे श्रीमदाशुकविर्मुनिवरो गीर्वाणवाणीजुषां विदुषां मनस्तोषाय जैना-  
गमसूत्राणां सारावबोधाय च अन्येषामपि जैनागमानामित्थं सरलाः सुस्पष्टाश्च  
वृत्तीर्विधाय तांस्तान् सूत्रग्रन्थान् देवगिरा सुस्पष्टयिष्यति ।

अन्ते च “मुनिवरस्य परिश्रमं सफलयितुं सरलां सुबोधिनीं चेमां  
सूत्रवृत्तिं स्वाध्यायेन सनाथयिष्यन्त्यवश्यं सुयोग्या हंसनिभाः पाठकाः ।”  
इत्याशास्ते—

विक्रमाब्द २००२  
श्रावणकृष्णा प्रतिपदा  
लुधियाना, }

उपाध्याय आत्मारामो जैनमुनिः ।

( श्री दशवैकालिकसूत्रका सम्मतिपत्र )

॥ श्री वीरगौतमाय नमः ॥

### सम्मतिपत्रम्.

मए पंडियमुणि-हेमचंदेण य पंडिय-मूलचन्दवासवारा पत्ता पंडिय-रयण-मुणि-घासीलालेण विरइया सक्कय-हिंदी-भाषाहिं जुत्ता सिरि-दसवेयालिय-नाम-सुत्तस्स आयारमणिमंजूसा वित्ती अवलो-इया, इमा मणोहरा अत्थि, एत्थ सद्दाणं अइसयजुत्तो अत्थो वणिणओ विउजणाणं पाययजणाण य परमोवयारिया इमा वित्ती दीसइ ! आयारविसए वित्तीकत्तारेण अइसयपुव्वं उल्लेहो कडो, तहा अहिंसाए सरूव जे जहा-तहा न जाणंति तेसिं इमाए वित्तीए परमलाहो भविस्सइ, कत्तुणा पत्तेयविसयाणं फुडरूवेण वण्णणं कडं, तहा मुणिणो अरिहत्ता इमाए वित्तीए अवलोयणाओ अइसय-जुत्ता सिज्झइ ! सक्कयछाया सुत्तपयाणं पयच्छेओ य सुबोहदायगो अत्थि, पत्तेयजिण्णासुणो इमा वित्ती दट्ठन्वा । अम्हाणं समाजे एरिसविज्ज-मुणिरयणाणं सन्भावो समाजस्स अहोभगं अत्थि, किं ? उत्तविज्जमुणिरयणाणं कारणाओ जो अम्हाणं समाजो सुत्तप्पाओ, अम्हकेरं साहिच्चं च लुत्तप्पायं अत्थि तेसिं पुणोवि उदओ भविस्सइ जस्स कारणाओ भवियप्पा मोक्खस्स जोम्भो भवित्ता पुणो निव्वाणं पाविहिइ अओहं आयारमणि-मंजूसाए कत्तुणो पुणो पुणो धन्नवायं देमि— ॥

वि. सं. १९९० फाल्गुन-  
शुक्लत्रयोदशी-मङ्गले  
(अलवर स्टेट)

इइ-  
उवज्झाय-जहण-मुणी, आयारामो  
(पंचनईओ)

ऐसेही :—

मध्यभारत सैलाना-निवासी श्रीमान् रतनलालजी डोसी श्रम-  
णोपासक जैन लिखते हैं कि :—

श्रीमान् की की हुई टीकावाला उपासकदशांग सेवक के दृष्टि-  
गत हुवा, सेवक अभी उसका मनन कर रहा है यह ग्रन्थ सर्वाङ्ग-  
सुन्दर एवम् उच्चकोटि का उपकारक है ।

निरयावलिका का सम्मतिपत्र.  
आगमवारिधि-सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-जैनाचार्य-पूज्यश्री  
आत्मारामजी महाराजकी तरफ का आया हुआ

### सम्मतिपत्र

लुधियाना. ता. ११ नवम्बर ४८

श्रीयुत गुलाबचन्द्रजी पानाचन्द्रजी । सादर जयजिनेन्द्र ॥

पत्र आपका मिला ! निरयावलिका विषय पूज्यश्रीजीका स्वास्थ्य ठीक न होने से उनके शिष्य पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराजने सम्मतिपत्र लिख दिया है आपको भेज रहे हैं । कृपया एक कोपी निरयावलिकाकी और भेज दीजिये और कोई योग्य सेवा कार्य लिखते रहें !

भवदीय गुजरमल-बळवंतराय जैन

॥ सम्मतिः ॥

( लेखक :- जैनमुनि पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराज )

सुन्दरबोधिनीटीकया समलंकृतं हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादसहितं च श्रीनिरयावलिकासूत्रं मेधाविनामल्पमेधसां चोपकारकं भविष्यतीति सुदृढं मेऽभिमतम् , संस्कृतटीकेयं सरला सुबोधा सुललिता चात एव अन्वर्थनाम्नी चाप्यस्ति । सुविशदत्वात् सुगमत्वात् प्रत्येकदुर्बोधपद-व्याख्यायुतत्वाच्च टीकैषा संस्कृतसाधारणज्ञानवतामप्युपयोगिनी भाविनीत्यभिप्रेमि । हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादावपि एतद्भाषाविज्ञानां महीयसे लाभाय भवेतामिति सम्यक् संभावयामि ।

जैनाचार्य - जैनधर्मदिवाकर - पूज्यश्री घासीलालजी महाराजानां परिश्रमोऽयं प्रशंसनीयो धन्यवादाहर्षश्च ते मुनिसत्तमाः । एवमेव श्री-समीरमल्लजी-श्री कन्हैयालालजी मुनिवरेण्ययोर्नियोजनकार्यमपि श्लाघ्यं, तावपि च मुनिवरौ धन्यवादाहर्षौ स्तः ।

सुन्दरप्रस्तावनाविषयानुक्रमादिना समलंकृते सूत्ररत्नेऽस्मिन् यदि शब्दकोषोऽपि दत्तः स्यात्तर्हि वरतरं स्यात् । यतोऽस्यावश्यकतां सर्वेऽप्यन्वेषकविद्वांसोऽनुभवन्ति ।

पाठकाः सूत्रस्यास्याध्ययनाध्यापनेन लेखकनियोजकमहोदयानां परिश्रमं सफलधिष्यन्तीत्याशास्महे । इति ।



श्री उपासकदशाङ्ग सूत्र परत्वे जैन समाजना अग्रगण्य जैनधर्मभूषण  
महान् विद्वान् संतोए तेमज विद्वान् श्रावकोए सम्मतिओ समपी  
छे तेमना नामो नीचे प्रमाणे छे.

- (१) लुधियाना-संवत् १९८९, आश्विन पूर्णिमा का पत्र, श्रुतज्ञान के  
भंडार आगमरत्नाकर जैनधर्मदिवाकर श्री १००७ श्री उपाध्याय श्री  
आत्मारामजी महाराज, तथा न्यायव्याकरणवेत्ता श्री १००७ तच्छिष्य  
श्री मुनि हेमचन्द्रजी महाराज.
- (२) लाहौर-वि० सं० १९८९ आश्विन वदि १३ का पत्र, पण्डितरत्न श्री  
१००८ श्री भागचंदजी महाराज तथा तच्छिष्य पण्डितरत्न श्री १००७  
श्री त्रिलोकचंदजी महाराज.
- (३) खिचन-से ता. ९-११-३६ का पत्र, क्रियापात्र स्थविर श्री १००८  
श्री भारतरत्न श्री समरथमलजी महाराज.
- (४) वालाचोर-ता. १४-११-३६ का पत्र, परम प्रसिद्ध भारतरत्न श्री  
१००८ श्री शतावधानी श्री रतनचंदजी महाराज.
- (५) बम्बई-ता. १६-११-३६ का पत्र, प्रसिद्ध कवीन्द्र श्री १००८ श्री  
कवि नानचंद्रजी महाराज.
- (६) आगरा-ता. १८-१२-३६, जगत् वल्लभ श्री १००८ जैनदिवाकर  
श्री चौथमलजी महाराज, गुणवन्त गणीजी श्री १००७ श्री साहित्यप्रेमी  
श्री प्यारचन्द्रजी महाराज.
- (७) हैद्राबाद-( दक्षिण ) ता. २५-११-३६ का पत्र, स्थिवरपदभूषित  
भाग्यवान् पुरुष श्री ताराचंदजी महाराज तथा प्रसिद्ध वक्ता श्री १००७  
श्री सोभागमलजी महाराज.
- (८) जयपुर-ता. २७-११-३६ का पत्र, संप्रदाय के गौरववर्धक शांत-  
स्वभावी श्री १००८ श्री पूज्य श्री खूबचन्द्रजी महाराज.
- (९) अम्बाला-ता. २९-११-३६ का पत्र, परमप्रतापी पंजाबकेशरी श्री  
१००८ श्री पूज्य श्री रामजी महाराज.

- (१०) सेलाना-ता. २९-११-३६ का पत्र, शास्त्रों के ज्ञाता श्रीमान् रतनलालजी डोसी.  
 (११) खीचन-ता. ९-११-३६ का पत्र, पंडितरत्न न्यायतीर्थ सुश्रावक श्रीयुक् माधवलालजी.



ता० २५-११-३६

सादर जय जिनेन्द्र

आपका भेजा हुआ उपासकदशांग सूत्र तथा पत्र मिला यहाँ विराजित प्रवर्तक वयोवृद्ध श्री १००८ श्री ताराचंदजी महाराज पण्डित श्री किशनलालजी महाराज आदि ठाणा १४ सुख शांती में विराजमान हैं आपके वहाँ विराजित जैनशास्त्राचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज आदि ठाणा नव से हमारी बन्दना अर्ज कर सुख शांति पूछे आपने उपासकदशांग सूत्र के विषय में यहाँ विराजित मुनिवरों की सम्मती मंगाई उसके विषय में वक्ता श्री सोभागमलजी महाराजने फरमाया है कि वर्तमान में स्थानकवासी समाज में अनेकानेक विद्वान मुनि महाराज मौजूद हैं मगर जैनशास्त्र की वृत्ति रचने का साहस जैसा घासीलालजी महाराज ने किया है वैसा अन्यने किया हो ऐसा नजर नहीं आता दूसरा यह शास्त्र अत्यन्त उपयोगी तो यों हैं संस्कृत प्राकृत हिन्दी और गुजराती भाषा होने से चारों भाषा वाले एक ही पुस्तक से लाभ उठा सकते हैं जैन समाज में ऐसे विद्वानोंका गौरव बढे यही शुभ कामना है आशा है कि स्थानकवासी संघ विद्वानों की कदर करना सीखेगा।

योग्य लिखें शेष शुभ

भवदीय

जमनालाल रामलाल कीमती



आगरा से:—

श्री जैनदिवाकर प्रसिद्धवक्ता जगद्वल्लभ मुनि श्री चोथमलजी महाराज व पंडितरत्न सुव्याख्यानि गणीजी श्री प्यारचन्दजी महाराजने इस पुस्तकको अतीव पसन्द की है।

श्रीमान् न्यायतीर्थ पण्डित

माधवलालजी खचिन से लिखते हैं कि—

उन पंडितरत्न महाभाग्यवंत पुरुषों के सामने उनकी अगाध-  
तत्त्वगवेषणा के विषय में मैं नगण्य क्या सम्मति दे सकता हूं।

परन्तु :—

मेरे दो मित्रों ने जिन्होंने इसको कुछ पढ़ा है बहुत सराहना की  
वास्तव में ऐसे उत्तम व सबके समझने योग्य ग्रन्थों की बहुत  
आवश्यकता है और इस समाज का तो ऐसे ग्रन्थ ही गौरव बढ़ा  
सकते हैं—ये दोनों ग्रन्थ वास्तव में अनुपम हैं ऐसे ग्रन्थरत्नों के सुप्र-  
काशसे यह समाज अमावास्या के घोर अन्धकार में दीपावली का अनुभव  
करती हुई महावीर के अमूल्य वचनों का पान करती हुई अपनी उन्नति  
में अग्रसर होती रहेगी।



ता. २९-११-३६

अम्बाला (पंजाब)

पत्र आपका मिला श्री श्री १००८ पंजाबकेसरी पूज्य श्री काशी-  
रामजी महाराज की सेना में पढ़ कर सुना दिया। आपकी भेजी हुई  
उपासकदशाङ्ग सूत्र तथा गृहिधर्मकल्पतरु की एक २ प्रति भी प्राप्त हुई।  
दोनों पुस्तकें अति उपयोगी तथा अत्यधिक परिश्रम से लिखी हुई हैं।  
ऐसे ग्रन्थरत्नों के प्रकाशित करवानेकी बड़ी आवश्यकता है। इन पुस्तकों  
से जैन तथा अजैन सबका उपकार हो सकता है। आपका यह पुरुषार्थ  
सराहनीय है।

आपका

शशिभूषण शास्त्री

अध्यापक जैन हाई स्कूल

अम्बाला शहर

शान्तस्वभावी वैराग्यमूर्ति तत्त्ववारिधि, धैर्यवान् श्री जैनाचार्य पूज्यवर श्री श्री १००८ श्री खूबचन्दजी महाराज साहेबने सूत्र श्री उपासकदशाङ्गजी को देखा । आपने फरमाया कि पण्डित मुनि घासीलालजी महाराज ने उपासक-दशाङ्ग सूत्रकी टीका लिखने में बड़ा ही परिश्रम किया है । इस समय इस प्रकार प्रत्येक सूत्रों की संशोधनपूर्वक सरल टीका और शुद्धहिन्दी अनुवाद होने से भगवान् निर्ग्रन्थों के प्रवचनों के अपूर्व रस का लाभ मिल सकता है ।



वालाचोर से भारतरत्न शतावधानी पंडित मुनि श्री १००८ श्री रतनचन्दजी महाराज फरमाते हैं कि :—

उत्तरोत्तर जोतां मूल सूत्रनी संस्कृत टीकाओ रचवामां टीकाकारे स्तुत्य प्रयास कर्यों छे, जे स्थानकवासी समाज माटे मगरूरी लेवा जेवुं छे, वली करांचीना श्री संवे सारा कागळमां अने सारा टाईपमां पुस्तक छपावी प्रगट कर्युं छे जे एक प्रकारनी साहित्य सेवा बजावी छे.



बम्बई शहरमें विराजमान कवि मुनि श्री नानचन्दजी महाराजने फरमाया है कि पुस्तक सुन्दर है प्रयास अच्छा है ।



खीचन से स्थविर क्रियापात्र मुनि श्री रतनचन्दजी महाराज और पंडित रत्न मुनिश्री समर्थमलजी महाराज श्री फराते हैं कि—विद्वान् महात्मा पुरुषोंका प्रयत्न सराहनीय है, जैनागम श्रीमद् उपासकदशाङ्गसूत्र की टीका, एवं उसकी सरल सुबोधनी शुद्ध हिन्दी भाषा बड़ी ही सुन्दरता से लिखी है ।



## श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री श्री श्री १००८ जैनधर्म दिवाकर जैनागमरत्नाकर श्रीमज्जै-  
नाचार्य श्री पूज्य घासीलालजी महाराज चरणवन्दन स्वीकार हो ।

अपरञ्च समाचार यह है कि आपके भेजे हुए ९ शास्त्र मास्टर  
शोभालालजी के द्वारा प्राप्त हुए, एतदर्थ धन्यवाद ! आपश्रीजीने तो ऐसा  
कार्य किया है जो कि हजारों वर्षों से किसी भी स्थानकवासी जैनाचार्य  
ने नहीं किया ।

आपने स्थानकवासीजैनसमाज के ऊपर जो उपकार किया है वह  
कदापि भुलाया नहीं जा सकता और नहीं भुलाया जा सकेगा ।

हम तीनों मुनि भगवान महावीर से अथवा शासनदेव से प्रार्थना  
करते हैं कि आपकी इस वज्रमयी लेखनी को उत्तरोत्तर शक्ति प्रदान  
करें ता कि आप जैन समाज के ऊपर और भी उपकार करते रहें और  
आप चिरञ्जीव हों ।

हम हैं आप के मुनि तीन

मुनि सत्येन्द्रदेव—मुनि लखपतराय—मुनि पद्मसेन



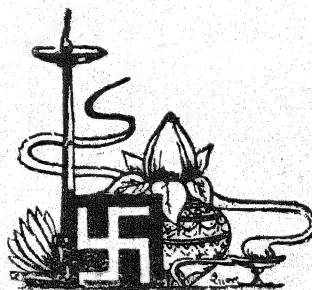


इतवारी बाजार  
नागपुर ता. १९-१२-५६

प्रखर विद्वान जैनाचार्य मुनिराज श्री घासीलालजी महाराजद्वारा जो आगमोद्धार हुआ और हो रहा है सचमुच महाराजश्री का यह स्तुत्य कार्य है। हमने प्रचारकजी के द्वारा नौ सूत्रों का सेट देखा और कई मार्मिक स्थलोंको पढ़ा, पढ़ कर विद्वान मुनिराजश्री की शुद्ध श्रद्धा तथा लेखनीके प्रति हार्दिक प्रसन्नता फूट पड़ी।

वास्तव में मुनिराज श्री जैन समाज पर ही नहीं इतर समाज पर भी महा उपकार कर रहे हैं। ज्ञान किसी एक समाज का नहीं होता वह सभी समाज की अनमोल निधि है जिसे कठिन परिश्रम से तैयार कर जनता के सम्मुख रखवा जा रहा है जिसका एक एक सेट हर शहर गांव और घर घर में होना आवश्यक है।

साहित्यरत्न  
मोहनमुनि सोहनमुनि जैन



# શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રનું સમ્મતિ પત્ર

શ્રમણ સંઘના મહાન આચાર્ય આગમ વારિધિ સર્વતન્ત્ર સ્વતંત્ર જ્ઞાનાચાર્ય પૂજ્યશ્રી આત્મારામજી મહારાજે આપેલા સમ્મતિપત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ.



મેં તથા પંડિત મુનિ હેમચંદ્રજીએ પંડિત મુલચંદ વ્યાસ ( નાગૌર મારવાડવાલા ) દ્વારા મળેલી પંડિત રત્ન શ્રી ધાસીલાલજી મુનિ વિરચિત સંસ્કૃત અને હિન્દી ભાષા સહિત શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રની આચારમણિમંજૂષા ટીકાનું અવલોકન કર્યું. આ ટીકા સુંદર બની છે. તેમાં પ્રત્યેક શબ્દનો અર્થ સારી રીતે વિશેષભાવ લઈને સમજાવવામાં આવેલ છે.

તેથી વિદ્વાનો અને સાધારણ બુદ્ધિવાળાઓ માટે પરમ ઉપકાર કરવાળી છે. ટીકાકારે મુનિના આચાર વિષયનો સારો ઉલ્લેખ કરેલ છે. જે આધુનિક-મતાવલંબી અહિંસાના સ્વરૂપને નથી જાણતા, હયામાં પાપ સમજે છે તેમને માટે ‘અહિંસા શું વસ્તુ છે’ તેનું સારી રીતે પ્રતિપાદન કરેલ છે. વૃત્તિકારે સૂત્રના પ્રત્યેક વિષયને સારી રીતે સમજાવેલ છે. આ વૃત્તિના અવલોકનથી વૃત્તિકારની અતિશય યોગ્યતા સિદ્ધ થાય છે.

આ વૃત્તિમાં એક બીજી વિશેષતા એ છે કે મૂલસૂત્રની સંસ્કૃત છાયા હોવાથી સૂત્ર, સૂત્રનાં પદ અને પદચ્છેદ સુબોધદાયક બનેલ છે.

પ્રત્યેક જ્ઞાસુએ આ ટીકાનું અવલોકન અવશ્ય કરવું જોઈએ. વધારે શું કહેવું. અમારી સમાજમાં આવા પ્રકારના વિદ્વાન મુનિ રત્નનું હોવું એ સમાજનું અહોભાગ્ય છે. આવા વિદ્વાન મુનિરત્નોના કારણે સુમપ્રાય—સુતેલો સમાજ અને હુમપ્રાય એટલે લોપ પામેલું સાહિત્ય એ બન્નેનો ફરીથી ઉદય થશે. અમો વૃત્તિકારને વારંવાર ધન્યવાદ આપીએ છીએ.

વિક્રમ સંવત ૧૯૬૦ શકાબદ શુકલ  
તેરસ મંગળવાર  
( અલવર સ્ટેટ )

ઈઈ  
ઉવજાગ્ય જઈણ  
મુણી આચારામો  
પંચનઈઓ

શ્રમણ સંઘના પ્રચારમંત્રી પંજબકેશરી મહારાજ શ્રી પ્રેમચંદણ મહારાજ જેઓશ્રી રાજકોટમાં પધારેલા હતા ત્યારે તેઓના તરફથી શાસ્ત્રોને માટે મળેલો અભિપ્રાય.

\*

શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ તરફથી પૂજ્યપાદ શાસ્ત્રવારિધિ પંડિતરાજ સ્વામીશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજદ્વારા શાસ્ત્રોદ્ધારતું જે કાર્ય થઈ રહ્યું તે કાર્ય જૈન સમાજ તેમાં ખાસ કરીને સ્થાનકવાસીજૈનસમાજને માટે મૂળભૂત મૌલિક સંસ્કૃતિની જડને મજબુત કરવાવાળું છે.

એટલા ખાતર આ કાર્ય અતિ પ્રશંસનીય છે માટે દરેક વ્યક્તિએ તેમાં યથાશક્તિ ભોગ દેવાની ખાસ આવશ્યકતા છે અને તેથી એ ભગીરથ કાર્ય જલ્દીથી જલ્દી સંપૂર્ણપણે પાર પાડી શકાય અને જનતા શ્રુતજ્ઞાનનો લાભ મેળવી શકે.

\*

દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઇશ્વરલાલજી મહારાજ સાહેબના

## સૂત્રો સંબંધે વિચારો

નમામિ વીરં ગિરિસારધીરં

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવરશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તથા પંડિતશ્રી કનૈયાલાલજી મહારાજ આદિ થાણા છની સેવામાં—

અમદાવાદ શાહપુર ઉપાશ્રયથી મુનિ દયાનંદજીના ૧૦૮ પ્રણિપાત.

આપ સર્વે થાણાઓ સુખ સમાધિમાં હશે નિરંતર ધર્મધ્યાન ધર્મારાધનમાં લીન હશે.

સૂત્ર પ્રકાશન કાર્ય ત્વરિત થાય એવી ભાવના છે દશવૈકાલિક તથા આચારાંગ એક એક ભાગ અહીં છે ટીકા ખૂબ સુંદર, સરળ અને પંડિતજનોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે. સાથે સાથે ટીકા વિનાના મુળ અને અર્થ સાથે પ્રકાશન થાય તો શ્રાવકગણ તેનો વિશેષ લાભ લઈ શકે અને પૂજ્ય આચાર્ય ગુરુદેવને આંખે મોતીયો ઉતરાવ્યો છે અને સાફ છે એજ.

આસો શુદ્ધ ૧૦, મંગળવાર તા. ૨૫-૧૦-૫૫

પુનઃ પુનઃ શાતા ધૃષ્ટો,  
દયા મુનિના પ્રણિપાત.

\*

દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પંડિત રત્ન ભાઈચંદ્ર મહારાજનો અભિપ્રાય

શ્રી

રાણપુર તા. ૧૯-૧૨-૧૯૫૫

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિવર પંડિત રત્ન પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આદિ મુનિવરોની સેવામાં, આપ સર્વ સુખસમાધીમાં હશે.

સૂત્રપ્રકાશનનું કામ સુંદર થઈ રહ્યું છે તે જાણી અત્યંત આનંદ. આપના પ્રકાશિત થયેલાં કેટલાંક સૂત્રો જોયાં. સુંદર અને સરલ સિદ્ધાંતના ન્યાયને પુષ્ટિ કરતી ટીકા પંડિતરત્નોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે. સૂત્રપ્રકાશનનું કામ ત્વરિત પૂર્ણ થાય અને ભવિ આત્માઓને આત્મકલ્યાણ કરવામાં સાધનભૂત થાય એજ અભ્યર્થના.

લી. પંડિતરત્ન બાળપ્રદ્યારી  
પૂ૦ શ્રી ભાઈચંદ્ર મહારાજની  
આજ્ઞાનુસાર શાન્તિમુનીના  
પાયવંદન સ્વીકારશે.

\*

તા. ૧૧-૫-૫૬

વીરમગામ

ગચ્છાધિપતિ પૂજ્ય મહારાજ શ્રી જ્ઞાનચંદ્રજી મહારાજના સંપ્રદાયના આત્માર્થી, ક્રિયાપાત્ર, પંડિતરત્ન, મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજનો અભિપ્રાય.

ખીચનથી આવેલ તા. ૧૨-૨-૫૬ના પત્રથી ઉદ્દૃત.

પૂજ્ય આચાર્ય ઘાસીલાલજી મહારાજના હસ્તક જે સૂત્રોનું લખાણ સુંદર અને સરળ ભાષામાં થાય છે. તે સાહિત્ય; પંડિત મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજ, સમય ઓછો મળવાને કારણે સંપૂર્ણ જોઈ શક્યા નથી. છતાં જેટલું સાહિત્ય જોયું છે, તે ખડુ જ સાઈ અને મનન સાથે લખાયેલું છે, તે લખાણ શાસ્ત્ર-આજ્ઞાને અનુરૂપ લાગે છે. આ સાહિત્ય દરેક શ્રદ્ધાળુ જીવોને વાંચવા યોગ્ય છે. આમાં સ્થાનકવાસી સમાજની શ્રદ્ધા, પ્રરૂપણા અને ફરસણાની દૃઢતા શાસ્ત્રાનુકૂળ છે. આચાર્યશ્રી અપૂર્વ પરિશ્રમ લઈ સમાજ ઉપર મહાન ઉપકાર કરે છે.

લી. કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ માલુ  
મુ. ખીચન.

\*

## લીંબડી સંપ્રદાયના સદાનંદી મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શ્રી વીતરાગદેવે જ્ઞાનપ્રચારને તીર્થંકર-નામ-ગોત્ર બાંધવાનું નિમિત્ત કહેલ છે. જ્ઞાનપ્રચાર કરનાર, કરવામાં સહાય કરનાર, અને તેને અનુમોદન આપનાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મને ક્ષય કરી કેવળ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરી પરમ પદનાં અધિકારી બને છે. શાસ્ત્રજ્ઞ, પરમ જ્ઞાન્ત અને અપ્રમાદી પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે અવિશ્રાન્તપણે જ્ઞાનની ઉપાસના અને તેની પ્રભાવના અનેક વિકટ પ્રસંગોમાં પણ કરી રહ્યા છે. તે માટે તેઓશ્રી અનેકશઃ ધન્યવાદના અધિકારી છે. વંદનીય છે, તેમની જ્ઞાનપ્રભાવનાની ધગશ ઘણા. પ્રમાદિઓને અનુકરણીય છે. જેમ પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે જ્ઞાનપ્રચાર માટે અવિશ્રાન્ત પ્રયત્ન કરે છે. તેમજ-શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના કાર્યવાહકો પણ એમાં સહાય કરીને જે પવિત્ર સેવા કરી રહેલ છે. તે પણ ખરેખર ધન્યવાદના પૂર્ણ અધિકારી છે.

એ સમિતિના કાર્યકરોને મારી એક સુચના છે કે:—

શાસ્ત્રોદ્ધારક પ્રવર પંડિત અપ્રમાદી સંત ઘાસીલાલજી મહારાજ જે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ કરી રહેલ છે. તેમાં સહાય કરવા માટે-પંડિતો વિગેરેના માટે જે ખર્ચો થઈ રહેલ છે. તેને પહોંચી વળવા માટે સાફ સરખું ફંડ જોઈએ. એના માટે મારી એ સુચના છે કે:—શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના મુખ્ય કાર્યવાહકો-જો બની શકે તો પ્રમુખ પોતે અને બીજા બે ત્રણ જણાએ ગુજરાત, સૌરાષ્ટ્ર, અને કચ્છમાં પ્રવાસ કરી મેમ્બરો બનાવે અને આર્થિક સહાય મેળવે.

જો કે અત્યારની પરિસ્થિતિ વિષમ છે. બ્યાપારીઓ, ધંધાદારીઓને પોતાના વ્યવહાર સાચવવા પણ મુશ્કેલ બન્યા છે. છતાં જો સંભાવિત ગૃહસ્થો પ્રવાસે નીકળે તો જરૂર કાર્ય સફળ કરે એવી મને શ્રદ્ધા છે.

આર્થિક અનુકુળતા થવાથી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પણ વધુ સરલતાથી થઈ શકે. પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જ્યાં સુધી આ તરફ વિચરે છે ત્યાં સુધીમાં એમની જ્ઞાનશક્તિનો જેટલો લાભ લેવાય તેટલો લઈ લેવો, કદાચ સૌરાષ્ટ્રમાં વધુ વખત રહેવાથી તેમને હવે બહાર વિહરવાની ઈચ્છા થતી હોય તો શાન્તિભાઈ શેઠ જેવાએ વિનંતી કરી અમદાવાદ પધારવા, અને ત્યાં અનુકુળતા મુજબ બે-ત્રણ વર્ષની સ્થિરતા કરાવીને તેમની પાસે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પૂર્ણ કરાવી લેવું જોઈએ.

થોડા વખતમાં જામજોધપુરમાં શાસ્ત્રોદ્ધારકમીટી મળવાની છે, તે વખતે ઉપરની સૂચના વિચારાય તો ઠીક.



ફરી શાસ્ત્રોદ્ધારક પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજને એમની આ સેવા અને પરમ કલ્યાણકારક પ્રવૃત્તિને માટે વારંવાર અભિનંદન છે. શાસનનાયક હેવ તેમના શરીરાદિને સશક્ત અને દીર્ઘાયુ રાખી સમાજ ધર્મની વધુ ને વધુ સેવા કરી શકે. ઓમ અસ્તુ.

ચાતુર્માસ સ્થળ, લીંબડી	}	લી
સાં. ૨૦૧૦ શ્રાવણ વદ ૧૩ ગુરુ.		સદાનંદી જૈનમુનિ છોટાલાલજી

\*

### શ્રી વર્ધમાન સંપ્રદાયના પૂજ્ય શ્રી પુનમચંદ્રજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શાસ્ત્રવિશારદ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રીએ જૈન આગમો ઉપર જે સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચેલ છે. તે માટે તેઓશ્રી ધન્યવાદને પાત્ર છે. તેમણે આગમો ઉપરની સ્વતંત્ર ટીકા રચીને સ્થાનકવાસી જૈન સમાજનું ગૌરવ વધાર્યું છે, આગમો ઉપરની તેમની સંસ્કૃત ટીકા ભાષા અને ભાવની દૃષ્ટિએ ઘણી જ સુંદર છે. સંસ્કૃતરચના માધુર્ય તેમજ અલંકાર વગેરે ગુણોથી સુકત છે. વિદ્વાનોએ તેમજ જૈન સમાજના આચાર્યો, ઉપાધ્યાયો વગેરે એ શાસ્ત્રો ઉપર રચેલી આ સંસ્કૃતરચનાની કદર કરવી જોઈએ અને દરેક પ્રકારનો સહકાર આપવો જોઈએ.

આવા મહાન કાર્યમાં પંડિતરત્ન પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જે પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે તે અલૌકિક છે. તેમનું આગમ ઉપરની સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચવાનું ભગીરથકાર્ય શીઘ્ર સફળ થાય એ જ શુભેચ્છા સાથે.

અમદાવાદ	}	મુનિ પૂર્ણચંદ્રજી
તા. ૨૨-૪-૫૬ રવિવાર મહાવીર જયંતિ		

\*

### ખંભાત સંપ્રદાયના મહાસતી શારદાબાઈ સ્વામીનો અભિપ્રાય

લખતર તા. ૨૫-૪-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલભાઈ મંગળદાસભાઈ  
પ્રમુખ સાહેબ અખિલ ભારત ષ્વેં સ્થાં જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ  
મુ. અમદાવાદ

અમો અત્રે હેવગુરૂની કૃપાએ સુખરૂપ છીએ. વિ. માં આપની સમિતિદ્વારા પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબ જે સૂત્રોનું કાર્ય કરે છે તે પૈકીનાં સૂત્રોમાંથી ઉપાસકદશાંગસૂત્ર, આચારાંગસૂત્ર, અનુત્તરોપપાતિકસૂત્ર

દશવૈકાલિકસૂત્ર વિગેરે સૂત્રો જોયાં તે સૂત્રો સંસ્કૃત હિન્દી અને ગુજરાતી ભાષાઓમાં હોવાને કારણે વિદ્વાન અને સામાન્ય જનોને ઘણું જ લાભદાયિક છે. તે વાંચન ઘણું જ સુંદર અને મનોરંજન છે. આ કાર્યમાં પૂજ્ય આચાર્યશ્રી જે અઘાત પુરૂષાર્થે કાર્ય કરે છે તે માટે વારંવાર ધન્યવાદને પાત્ર છે. આ સૂત્રોથી સમાજને ઘણું લાભનું કારણ છે.

હંસ સમાન બુદ્ધિવાળા આત્માઓ સ્વપરના લેહથી નિખાલસ ભાવનાએ અવલોકન કરશે તો આ સાહિત્ય સ્થાનકવાસી સમાજ માટે અપૂર્વ અને ગૌરવ લેવા જેવું છે. માટે દરેક લગ્ય આત્માઓને સૂચન કરું છું કે આ સૂત્રો પોતા-પોતાના ઘરમાં વસાવાની સુંદર તકને ચુકશો નહિ. કારણ આવા શુદ્ધ પવિત્ર અને સ્વપરંપરાને પુષ્ટીરૂપ સૂત્રો મળવાં બહુ મુશ્કેલ છે. આ કાર્યને આપશ્રી તથા સમિતિના અન્ય કાર્યકરો જે શ્રમ લઈ રહ્યા છે તેમાં મહાન નિર્જરાનું કારણ જોવામાં આવે છે તે બદલ ધન્યવાદ. એ જ

લી. શારદાબાઈ સ્વામી  
ખંભાત સંપ્રદાય.

\*

### બરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી મહાસતીજી મોંઘીબાઈ સ્વામીનો અભિપ્રાય

ધંધુકા તા. ૨૭-૧-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાન્તીલાલ મંગળદાસભાઈ

પ્રમુખ અં લં શ્વેં સ્થાં જૈનશાસ્ત્ર ઉદ્ધાર સમિતિ

મું રાજકોટ

અત્રે બીરાજતા ગું ગુંના ભંડાર મહાસતીજી વિદુષી મોંઘીબાઈ સ્વામી તથા હીરાબાઈ સ્વામી આદિકાણું બન્ને સુખશાતામાં બીરાજે છે, આપને સુચન છે કે અપ્રમત્ત અવસ્થામાં રહી નિવૃત્તિ ભાવને મેળવી ધર્મધ્યાન કરશો એજ આશા છે.

વિશેષમાં અમને પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના રચેલાં સૂત્રો ભાઈ પોપટ ધનજીભાઈ તરફથી ભેટ તરીકે મળેલાં તે સૂત્રો તમામ આઘોપાન્ત વાંચ્યાં મનન કર્યાં અને વિચાર્યાં છે તે સૂત્રો સ્થાનકવાસી સમાજને અને વીતરાગમાર્ગને ખુબ જ ઉન્નત બનાવનાર છે. તેમાં આપણી શ્રદ્ધા એટલી ન્યાયરૂપથી ભરેલી છે તે આપણા સમાજ માટે ગૌરવ લેવા જેવું છે. હંસ સમાન

આત્માઓ જ્ઞાનઞ્જરણાઓથી આત્મરૂપ વાડીને વિકસિત કરશે. ધન્ય છે આપને અને સમિતિના કાર્યકરોને જે સમાજ ઉત્થાન માટે કોઈની પણ પરવા કર્યા વગર જ્ઞાનનું દાન લવ્ય આત્માઓને આપવા નિમિત્તરૂપ થઈ રહ્યા છે. આવા સમર્થ વિદ્વાન પાસેથી સંપૂર્ણ કાર્ય પુરું કરાવશે તેવી આશા છે.

એન લિ. બરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી

મહાસતીજી મોંઘીબાઈ સ્વામી

ના ફરમાનથી લી. ખોડીદાસ ગણેશજી—ધંધુકા

સ્થાનકવાસી જૈન સંઘના પ્રમુખ

\*

## અદ્યતન પદ્ધતિને અપનાવનાર વડોદરા કેલેજના એક વિદ્વાન પ્રોફેસરનો અભિપ્રાય

સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જૈનશાસ્ત્રોના સંસ્કૃત ટીકાબદ્ધ, ગુજરાતીમાં અને હિન્દીમાં ભાષાંતરો કરવાના ઘણા વિકટ કાર્યમાં વ્યાસ થયેલા છે. શાસ્ત્રો પૈકી જે શાસ્ત્રો પ્રસિદ્ધ થયાં છે તે હું જોઈ શક્યો છું, મુનિશ્રી પોતે સંસ્કૃત, અર્ધમાગધી હિન્દી ભાષાઓના નિષ્ણાત છે, એ એમનો ટુંક પરિચય કરતાં સહજ જણાઈ આવે છે. શાસ્ત્રોનું સંપાદન કરવામાં તેમને પોતાના, શિષ્ય વર્ગના અને વિશેષમાં ત્રણ પંડિતોનો સહયાર મળ્યો છે, તે જોઈ મને આનંદ થયો. સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના અગ્રેસરોએ પંડિતોનો સહકાર મેળવી આપી, મુનિશ્રીના કાર્યને સરળ અને શિષ્ટ બનાવ્યું છે. સ્થાનકવાસી સમાજમાં વિદ્વત્તા ઘણી ઓછી છે, તે દિગંબર મૂર્તિપૂજક શ્વેતાંબર વગેરે જૈનદર્શનના પ્રતિનિધિઓના ઘણા સમયથી પરિચયમાં આવતાં હું વિરોધના લય વગર, કહી શકું. પૂ. મહારાજનો આ પ્રયાસ સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં પ્રથમ છે એવી મારી માન્યતા છે. સંસ્કૃત સ્પષ્ટીકરણો સારાં આપવામાં આવ્યાં છે, ભાષા શુદ્ધ છે એમ ચોક્કસ કહી શકું છું, ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ શુદ્ધ અને સરળ થયેલાં છે. મને વિશ્વાસ છે કે મહારાજશ્રીના આ સ્તુત્ય પ્રયાસને જૈનસમાજ ઉત્તેજન આપશે અને શાસ્ત્રોના ભાષાંતરોને વાચનાલયમાં અને કુટુંબોમાં વસાવી શકાય તે પ્રમાણે વ્યવસ્થા કરશે.

પ્રતાપગંજ, વડોદરા

તા. ૨૭-૨-૧૯૫૬

કામદાર કેશવલાલ હિંમતરામ

એમ. એ.

\*

## મુંબઈની બે કોલેજોના પ્રોફેસરોનો અભિપ્રાય

મુંબઈ તા. ૩૧-૩-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલ મંગળદાસ

પ્રમુખ : શ્રી અખિલ ભારત શ્રવે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ,

રાજકોટ.

પૂજ્યાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલ મહારાજે તૈયાર કરેલાં આચારાંગ દશવૈકાલિક, આવશ્યક, ઉપાસકદશાંગ વગેરે સૂત્રો અમે જોયાં. આ સૂત્રો ઉપર સંસ્કૃતમાં ટીકા આપવામાં આવી છે અને સાથે સાથે હિંદી અને ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ આપવામાં આવ્યાં છે. સંસ્કૃતટીકા અને ગુજરાતી તથા હિંદી ભાષાંતરો જોતાં આચાર્યશ્રીના આ ત્રણે ભાષા પરના એકસરખા અસાધારણ પ્રભુત્વની સચોટ અને સુરેખ છાપ પડે છે. આ સૂત્ર ગ્રંથોમાં પાને પાને પ્રગટ થતી આચાર્યશ્રીની અપ્રતિમ વિદ્વત્તા મુગ્ધ કરી દે તેવી છે. ગુજરાતી તથા હિંદીમાં થયેલાં ભાષાંતરમાં ભાષાની શુદ્ધિ અને સરળતા નોંધપાત્ર છે. એથી વિદ્વદ્વજન અને સાધારણ માણસ ઉભયને સંતોષ આપે એવી એમની લેખિનીની પ્રતીતિ થાય છે. ૩૨ સૂત્રોમાંથી હજુ ૧૩ સૂત્રો પ્રગટ થયાં છે. બીજાં ૭ સૂત્રો લખાઈને તૈયાર થઈ ગયાં છે. આ બધાંજ સૂત્રો જ્યારે એમને હાથે તૈયાર થઈને પ્રગટ થશે ત્યારે જૈન-સૂત્ર-સાહિત્યમાં અમૂલ્ય સંપત્તિરૂપ ગણાશે એમાં સંશય નથી. આચાર્યશ્રી આ મહાન કાર્યને જૈનસમાજનો વિશેષતઃ સ્થાનકવાસી સમાજનો સંપૂર્ણ સહકાર સાંપડી રહેશે એવી અમે આશા રાખીએ છીએ.

પ્રો. રમણલાલ ચીમનલાલ શાહ

સેન્ટ ઝેવિયર્સ કોલેજ, મુંબઈ.

પ્રો. તારા રમણલાલ શાહ

સોશીયા કોલેજ, મુંબઈ

\*

રાજકોટની ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજના પ્રોફેસર સાહેબનો અભિપ્રાય

જયમહાલ

નગનાથ પ્લોટ

રાજકોટ, તા. ૧૮-૪-૫૬

પૂજ્યાચાર્ય પં. મુનિ શ્રી ઘાસીલાલ મહારાજ આજે જૈનસમાજ માટે એક એવા કાર્યમાં વ્યાપ્ત થયેલા છે કે જે સમાજ માટે બહુ ઉપયોગી થઈ પડશે. મુનિશ્રીએ તૈયાર કરેલાં આચારાંગ, દશવૈકાલિક, શ્રી વિપાકશ્રુત વિ. મેં જોયાં.

આ સૂત્રો જોતાં પહેલી જ નજરે મહારાજશ્રીનો સંસ્કૃત, અર્ધભાગધી, હિન્દી તથા ગુજરાતી ભાષાઓ ઉપરનો અસાધારણ કાબુ જણાઈ આવે છે. એક પણ ભાષા મહારાજશ્રીથી અજાણી નથી. આપણે જાણીએ છીએ કે એ સૂત્રો ઉચ્ચ અને પ્રથમ કોટિના છે. તેની વસ્તુ ગંભીર, વ્યાપક અને જીવનને તલસ્પર્શી છે, આટલા ગહન અને સર્વબ્રાહ્મ સૂત્રોનું ભાષાંતર પૂ. ધાસીલાલજી મહારાજ જેવા ઉચ્ચ કોટિના મુનિરાજને હાથે થાય છે તે આપણાં અહોભાગ્ય છે. યંત્રવાદ અને ભૌતિકવાદના આ જમાનામાં જ્યારે ધર્મભાવના ઓસરતી જાય છે એવે વખતે આવા તત્ત્વજ્ઞાન આધ્યાત્મિકતાથી ભરેલાં સૂત્રોનું સરળ ભાષામાં ભાષાંતર દરેક જ્ઞાસુ, મુમુક્ષુ અને સાધકને માર્ગદર્શક થઈ પડે તેમ છે. જૈન અને જૈનેતર, વિદ્વાન અને સાધારણ માણસ સાધુ અને શ્રાવક દરેકને સમજણ પડે તેવી સ્પષ્ટ, સરળ અને શુદ્ધ ભાષામાં સૂત્રો લખવામાં આવ્યાં છે. મહારાજશ્રીને જ્યારે જોઈએ ત્યારે તેમના આ કાર્યમાં સંકળાયેલા જોઈએ છીએ. એ ઉપરથી મુનિશ્રીના પરિશ્રમ અને ધગશની કલ્પના કરી શકાય તેમ છે. તેમનું જીવન સૂત્રોમાં વણાઈ ગયું છે.

મુનિશ્રી આ અસાધારણ કાર્યમાં પોતાના શિષ્યોનો તથા પંડિતોનો સહકાર મળ્યો છે. મને આશા છે કે જો દરેક મુમુક્ષુ આ પુસ્તકોને પોતાના ઘરમાં વસાવશે અને પોતાના જીવનને સાચા સુખને માર્ગે વાળશે તો મહારાજશ્રીએ ઉઠાવેલી શ્રમ સંપૂર્ણપણે સફળ થશે.

પ્રો. રસિકલાલ કસ્તુરચંદ ગાંધી

એમ. એ. એલ. એલ. બી.

ધર્મેન્દ્રસિંહજી કાલેજ

રાજકોટ ( સૌરાષ્ટ્ર )

\*

મુંબઈ અને ઘાટકોપરમાં મળેલી સભાએ સિનાસર કોન્ફરન્સ તથા સાધુ સંમેલનમાં મોકલાવેલ ઠરાવ

હાલ જે વખતે શ્રી. શ્વેતાંબર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ માટે આગમ સંશોધન અને સ્વતંત્ર ટીકાવાળા શાસ્ત્રોદ્ધારની અતિ આવશ્યકતા છે અને જે મહાનુભાવોએ આ વાત દીર્ઘદષ્ટિથી પહેલી પોતાના મગજમાં લઈ તે પાર પાડવા મહેનત લઈ રહ્યા છે તેવા મુનિ મહારાજ પંડિતરત્ન શ્રી ધાસીલાલજી મહારાજ કે જેઓને સાદહી અધિવેશમાં સર્વાનુમતે સાહિત્ય મંત્રી નીમ્યા છે તેઓશ્રીની દેખરેખ નીચે અ. ભા. શ્વે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ જે એક મોટી વગવાળી કમિટી છે તેની મારફતે કામ થઈ રહ્યું છે. જેને પ્રધાનાચાર્યશ્રી તથા પ્રચાર મંત્રીશ્રી

તથા અનેક અનુભવી મહાનુભાવોએ પોતાની પસંદગીની મહોર છાપ આપી છે અને છેલ્લામાં છેલ્લા વડોદરા યુનિવર્સિટીના પ્રોફેસર કેશવલાલ કામદાર એમ. એ. પોતાનું સવિસ્તર પ્રમાણપત્ર આપ્યું છે તે શાસ્ત્રોદ્ધાર કમિટીના કામને આ સંમેલન તથા કોન્ફરન્સ હાર્દિક અભિનંદન આપે છે. અને તેમના કામને જ્યાં જ્યાં અને જે જે જરૂર પડે-પડિતની અને નાણાંની-પોતાની પાસેના ફંડમાંથી અને બહાર જનતા પાસેથી મદદ મળે તેવી ઇચ્છા ધરાવે છે.

આ શાસ્ત્રો અને ટીકાઓને જ્યારે આટલી બધી પ્રશંસાપૂર્વક પસંદગી મળી છે ત્યારે તે કામને મદદ કરવાની આ કોન્ફરન્સ પોતાની ફરજ માને છે અને જે કોઈ ત્રુટી હોય તે પં. ર. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજની સાનિધ્યમાં જઈ, બતાવીને સુધારવા પ્રયત્ન કરવો. આ કામને ટલ્લે ચઢાવવા જેવું કોઈ પણ કામ સત્તા ઉપરના અધિકારીઓના વાણી કે વર્તનથી ન થાય તે બેવા પ્રમુખ સાહેબને ભલામણ કરે છે.

(સ્થા. જૈન પત્ર તા. ૪-૫-૫૬)

\*

### સ્વતંત્ર વિચારક અને નિરર લેખક ‘જૈન સિદ્ધાંત’ના તંત્રીશ્રી શેઠ નગીનદાસ ગીરધરલાલનો અભિપ્રાય

શ્રી સ્થાનકવાસી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ સ્થાપીને પૂ. ઘાસીલાલજી મહારાજને સૌરાષ્ટ્રમાં બોલાવી તેમની પાસે બત્રીસે સૂત્રો તૈયાર કરવાની હિલચાલ ચાલતી હતી ત્યારે તે હિલચાલ કરનાર શાસ્ત્રજ્ઞ શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ સાથે મારે પત્રવ્યવહાર ચાલેલો ત્યારે શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈએ તેમના એક પત્રમાં મને લખેલું કે—

“આપણા સૂત્રોના મૂળ પાઠ તપાસી શુદ્ધ કરી સંસ્કૃત સાથે તૈયાર કરી શકે તેવા સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મ. સિવાય મને કોઈ વિશેષ વિદ્વાન મુનિ બેવામાં આવતા નથી. લાંબી તપાસને અંતે મેં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજીને પસંદ કરેલા છે.”

શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ પોતે વિદ્વાન હતા. શાસ્ત્રજ્ઞ હતા તેમ વિચારક પણ હતા. શ્રાવકો તેમજ મુનિઓ પણ તેમની પાસેથી શિક્ષા વાંચના લેતા, તેમ જ્ઞાનચર્યા પણ કરતા. એવા વિદ્વાન શેઠશ્રીની પસંદગી યથાર્થ જ હોય એમાં



નવાઈ નથી. અને પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજીના બનાવેલાં સૂત્રો જોતાં સૌ કોઈને ખાત્રી થાય તેમ છે કે દામોદરદાસભાઈએ તેમજ સ્થાનકવાસી સમાજે જેવી આશા શ્રી ઘાસીલાલજી મ. પાસેથી રાખેલી તે બરાબર ફળીભૂત થયેલ છે.

શ્રી વર્ધમાન શ્રમણસંઘના આચાર્ય શ્રી આત્મારામજી મહારાજે શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના સૂત્રો માટે ખાસ પ્રશંસા કરી અનુમતિ આપેલ છે તે ઉપરથી જ શ્રી ઘાસીલાલજી મ. ના સૂત્રોની ઉપયોગિતાની ખાત્રી થશે.

આ સૂત્રો વિદ્યાર્થીને, અભ્યાસીને તેમજ સામાન્ય વાંચકને સર્વને એક સરખી રીતે ઉપયોગી થઈ પડે છે. વિદ્યાર્થીને તેમજ અભ્યાસીને :મૂળ તથા સંસ્કૃત ટીકા વિશેષ કરીને ઉપયોગી થાય તેમ છે. ત્યારે સામાન્ય હિંદી વાંચકને હિંદી અનુવાદ અને ગુજરાતી વાંચકને ગુજરાતી અનુવાદથી આપું સૂત્ર સરળતાથી સમજાય જાય છે.

કેટલાકનો એવો ભ્રમ છે કે સૂત્રો વાંચવાનું કામ આપણું કામ થઈ, સૂત્રો આપણને સમજાય નહિ. આ ભ્રમ તદ્દન ખોટો છે. બીજા કોઈપણ શાસ્ત્રીય પુસ્તક કરતાં આ સૂત્રો સામાન્ય વાંચકને પણ ઘણી સરળતાથી સમજાઈ જાય છે. સામાન્ય માણસ પણ સમજી શકે તેટલા માટે જ ભગવાન મહાવીરે તે વખતની લોક ભાષામાં (અર્ધ માગધી ભાષામાં) સૂત્રો બનાવેલાં છે. એટલે સૂત્રો વાંચવાં તેમજ સમજવામાં ઘણાં સરળ છે.

માટે કોઈપણ વાંચકને એનો ભ્રમ હોય તો તે કાઢી નાંખવો. અને ધર્મનું તેમજ ધર્મના સિદ્ધાંતોનું સાચું જ્ઞાન મેળવવા માટે સૂત્રો વાંચવાને ચૂકવું નહિ. એટલું જ નહિ પણ જરૂરથી પહેલાં સૂત્રો જ વાંચવાં.

સ્થાનકવાસીઓમાં આ શ્રી સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ જે કામ કર્યું છે અને કરી રહી છે તેવું કોઈ પણ સંસ્થાએ આજ સુધી કર્યું નથી. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના છેલ્લા રિપોર્ટ પ્રમાણે બીજાં છ સૂત્રો લખાયેલ પૃથ્વી છે, જે સૂત્રો-અનુયોગદ્વાર અને ઠાણાંગ સૂત્રો-લખાય છે તે પણ થોડા વખતમાં તૈયાર થઈ જશે. તે પછી બાકીના સૂત્રો હાથ ધરવામાં આવશે.

તૈયાર સૂત્રો જલ્દી છપાઈ જાય એમ ઇચ્છીએ છીએ અને સ્થા. બંધુઓ સમિતિને ઉત્તેજન અને સહાયતા આપીને તેમનાં સૂત્રો ઘરમાં વસાવે એમ ઇચ્છીએ છીએ.

‘જૈન સિદ્ધાન્ત’ પત્ર - મે ૧૯૫૫

## શ્રુત ભક્તિ

( પૂં આચાર્ય શ્રી ઇશ્વરલાલજી મં સાં ની આજ્ઞા અનુસાર લખનાર )

દ. સં. ના જૈન મુનિ શ્રી દયાનંદજી મહારાજ

તાં ૨૩-૬-૫૬ શાહપુર, અમદાવાદ

આજે લગભગ ૨૦ વર્ષથી શ્રદ્ધેય પરમપૂજ્ય, જ્ઞાનદિવાકર પં ૦ મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મં ચરમ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરના અનુત્તર, અનુપમ ન્યાય યુક્ત, પૂર્વાપર અવિરોધ, સ્વપર કલ્યાણકારક, ચરમ શીતળ વાણીના ઘોતક એવા શ્રી જિનાગમ પર પ્રકાશ પાડે છે, તેઓશ્રી પ્રાચીન, પૌર્વાત્ય સંસ્કૃતાદિ અનેક ભાષાના પ્રખર પંડિત છે અને જિનવાણીનો પ્રકાશ સંસ્કૃત, ગુજરાતી અને હિંદીમાં મૂળ શબ્દાર્થ, ટીકા, વિસ્તૃત વિવરણ સાથે પ્રકાશમાં લાવે છે એ જૈન સમાજ માટે અતિ ગૌરવ અને આનંદનો વિષય છે.

ભં મહાવીર અત્યારે આપણી પાસે વિદ્યમાન નથી, પરંતુ તેમની વાણી રૂપે અક્ષરદેહ ગણધર મહારાજેએ શ્રુત પરંપરાએ સાચવી રાખ્યો શ્રુતપરંપરાથી સચવાતું જ્ઞાન જ્યારે વિસ્મૃત થવાનો સમય ઉપસ્થિત થવા લાગ્યો ત્યારે શ્રી દેવદિગણિ ક્ષમાશ્રમણે વલ્લીપુર-વળામાં તે આગમોને પુસ્તકો રૂપે આરૂઢ કર્યો. આજે આ સિદ્ધાંતો આપણી પાસે છે. તે અર્ધ માગધી પાલી ભાષામાં છે. અત્યારે આ ભાષા ભગવાનની, દેવોની તથા જનગણની ધર્મભાષા છે. તેને આપણા શ્રમણો અને શ્રમણીઓ તથા મુમુક્ષુ શ્રાવક શ્રાવિકાઓ મુખપાઠ કરે છે; પરંતુ તેનો અર્થ અને ભાવ ઘણા થોડાઓ સમજે છે.

જિનાગમ એ આપણાં શ્રદ્ધેય પવિત્ર ધર્મસૂત્રો છે. એ આપણી આંખો છે. તેનો અભ્યાસ કરવો એ આપણી સૌની-જૈન માત્રની ફરજ છે. તેને સત્ય સ્વરૂપે સમજાવવા માટે આપણા સહભાગ્યે જ્ઞાનદિવાકર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે સત્ સંકલ્પ કર્યો છે અને તે લિખિત સૂત્રોને પ્રગટાવી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિદ્વારા જ્ઞાન પરળ વહેતી કરી છે. આવા અનુપમ કાર્યમાં સકળ જૈનોનો સહકાર અવશ્ય હોવો ઘટે અને તેનો વધારેમાં વધારે પ્રચાર થાય તે માટે પ્રયત્નો કરવા ઘટે.

ભં મહાવીરને ગણધર ગૌતમ પૂછે છે કે હે ભગવાન, સૂત્રની આરાધના કરવાથી શું ફળ પ્રાપ્ત થાય છે? ભગવાન તેનો પ્રતિ ઉત્તર આપે છે કે શ્રુતની આરાધનાથી જીવોના અજ્ઞાનનો નાશ થાય છે. અને તેઓ સંસારના કલેશોથી નિવૃત્તિ મેળવે છે. અને સંસાર કલેશોથી નિવૃત્તિ અને અજ્ઞાનનો નાશ થતાં મોક્ષ ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે.

આવા જ્ઞાન કાર્યમાં મૂર્તિપૂજક જૈનો, દિગંબરો અને અન્ય ધર્મીઓ હબરો અને લાખો રૂપીયા ખર્ચે છે. હિંદુ ધર્મમાં પવિત્ર મનાતા ગ્રંથ ગીતાના સેંકડો નહિ પણ હબરો ટીકા ગ્રંથો હુનિયાની લગભગ સર્વ ભાષાઓમાં પ્રગટ થયા છે. ઇસાઈ ધર્મના પ્રચારકો તેમના પવિત્ર ધર્મગ્રંથ બાઈબલના પ્રચારાર્થે તેનું જગતની સર્વ

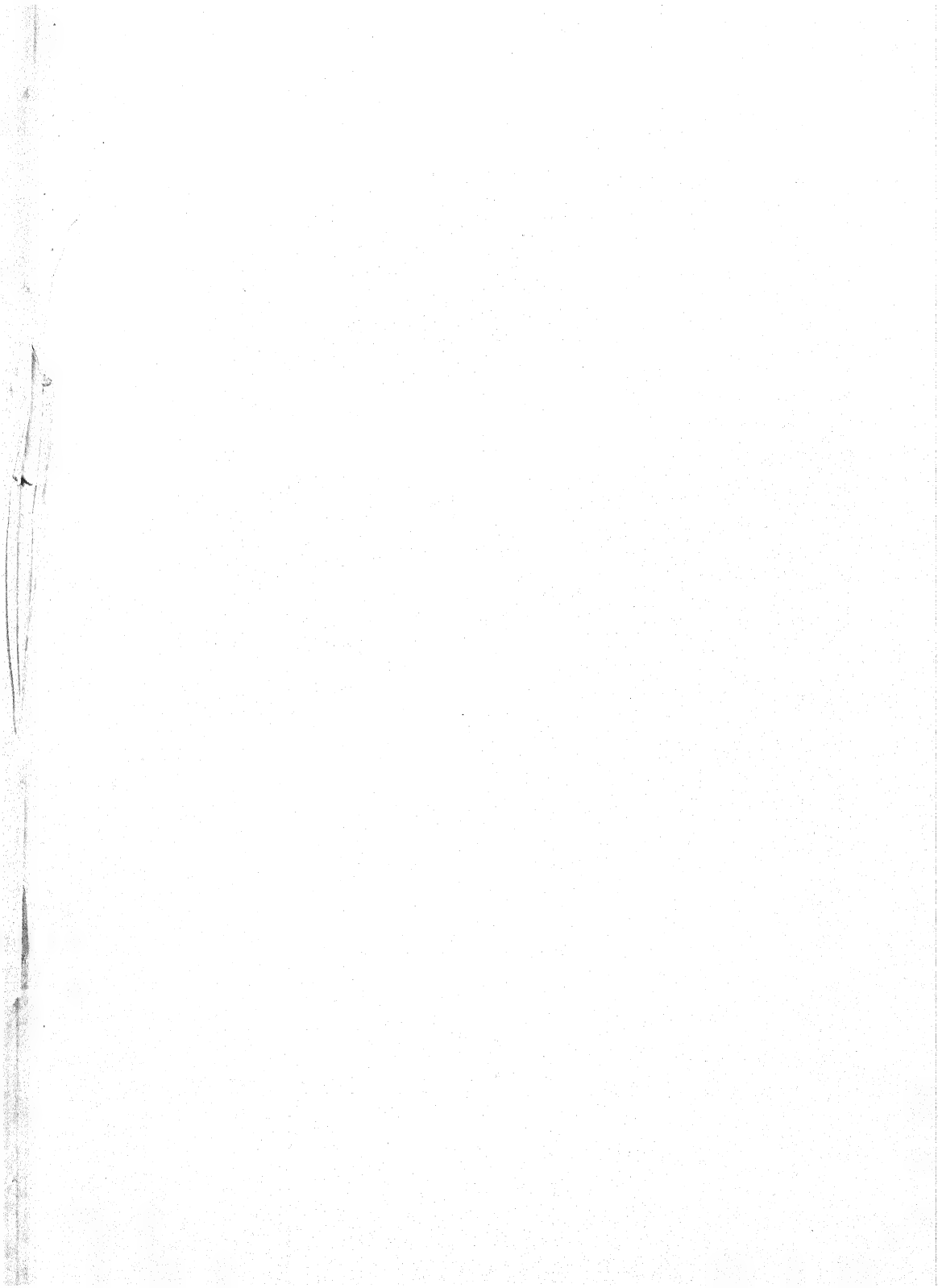
ભાષાઓમાં ભાષાંતર કરી, તેને પડતર કરતાં પણ ઘણી ઓછી કિંમતે વેચી ધર્મ-સૂત્રોનો પ્રચાર કરે છે. મુસ્લિમ લોકો પણ તેમના પવિત્ર મનાતા ગ્રંથ કુરાનનું અનેક ભાષાઓમાં ભાષાંતર કરી સમાજમાં પ્રચાર કરે છે. આપણે પૈસા પરનો મોહ ઉતારી ભગવાનના સિદ્ધાંતોનો પ્રચાર કરવા માટે તન, મન, ધન સમર્પણ કરવાં જોઈએ. અને સૂત્ર પ્રકાશનના કાર્યને વધુ ને વધુ વેગ મળે તે માટે સક્રિય પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. આવા પવિત્ર કાર્યમાં સાંપ્રદાયિક મતભેદો સૌએ ભૂલી જવા જોઈએ અને શુદ્ધ આશયથી થતા શુદ્ધ કાર્યને અપનાવી લેવું જોઈએ. સમિતિના નિયમાનુસાર રૂ. ૨૫૧૧ ભરી સમીતીના સભ્ય બનવું જોઈએ. ધાર્મિક અનેક ખાતાંઓના સુકાબલે સૂત્ર પ્રકાશનનું - જ્ઞાન પ્રચારનું આ ખાતું સર્વશ્રેષ્ઠ ગણાવું જોઈએ.

આ કાર્યને વેગ આપવાની સાથે સાથે એ આગમો-ભગવાનની એ મહાવાણીનું પાન કરવા પણ આપણે હરહંમેશ તત્પર રહેવું જોઈએ. જેથી પરમ શાંતિ અને જીવનસિદ્ધિ મેળવી શકાય. (સ્થા. જૈન તા. ૫-૭-૫૬)

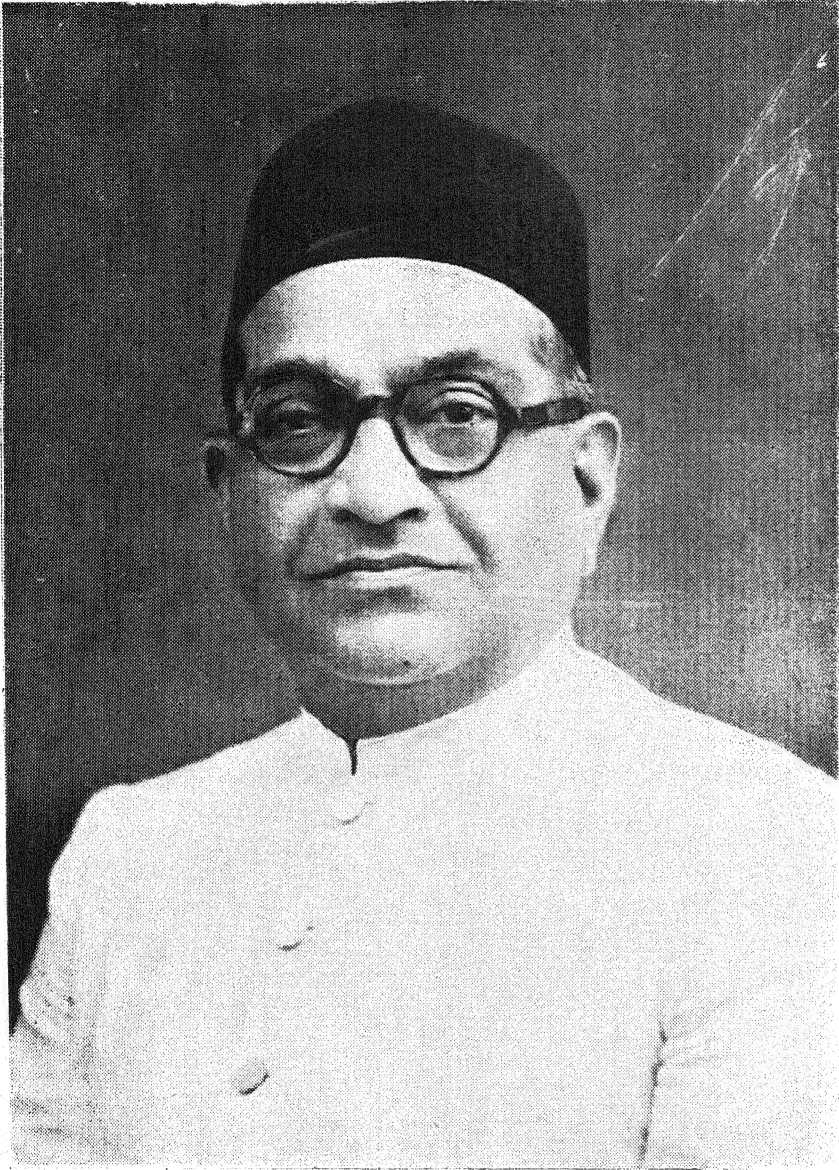
\*

શ્રી. અ. ભા. શ્વે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનાં પ્રમુખશ્રી વગેરે. રાણપુર પરમ પવિત્ર સૌરાષ્ટ્રની પુણ્ય ભૂમિ પર ન્યારથી શાંત-શાસ્ત્રવિશારદ અપ્રમાદિ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં પુનિત પગલાં થયાં છે ત્યારથી ઘણા લાંબા કાળથી લાગુ પડેલ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનાં પડળ ઉતારવાનો શુભ પ્રયાસ થઈ રહ્યો છે. અને જે પ્રવચનની પ્રભાવના તેઓશ્રી કરી રહ્યા છે તે અનંત ઉપકારક કાર્યમાં તમે જે અપૂર્વ સહાય આપી રહ્યા છો તે માટે તમો સર્વને ધન્ય છે અને એ શુભ પ્રવૃત્તિના શુભ પરિણામોનો જનતા લાભ લે છે, મને તો સમજાય છે કે સાધુજી છટે ગુણસ્થાનકે હોય છે. પણ પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તો બહુધા સાતમે અપ્રમત્ત ગુણસ્થાનકે જ રહે છે. એવા અપ્રમત્ત માત્ર પાંચ-સાત સાધુઓ જે સ્થાનકવાસી જૈનસમાજમાં હોય તો સમાજનું શ્રેય થતાં જરાએ વાર ન લાગે. સમાજ-કાશમાં સ્થા. જૈન સંપ્રદાયનો દિવ્ય પ્રભાકર જળહળી નીકળે. ૫.....ણ વો દિન.....

શ્રી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને મારી એક નમ્ર સુચના છે કે-પૂજ્યશ્રીની વૃદ્ધાવસ્થા છે; અને કાર્યપ્રણાલિકા યુવાનોને શરમાવે તેવી છે. તેમને ગામોગામ વિહાર કરવા અને શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરવું તેમાં ઘણી શારીરિક-માનસિક અને વ્યવહારિક મુશ્કેલી વેઠવી પડે છે, તો કેઈ યોગ્ય સ્થળ કે જ્યાંના શ્રાવકો ભક્તિવાળા હોય. વાડાનાં રાગના વિષથી અલિપ્ત હોય. એવા કેઈ સ્થળે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય પૂર્ણ થાય ત્યાં સુધી સ્થિરતા કરી શકે એના માટે પ્રબંધ કરવો જોઈએ. બીજા કેઈ એવા સ્થળની અનુકુળતા ન મળે તો છેવટ અમદાવાદમાં યોગ્ય સ્થળે રહેવાની સગવડતા કરી અપાય તો વધુ સારું. મહારી આ સુચના પર ધ્યાન આપવા ફરી યાદ આપું છું. ફરીવાર પૂજ્ય આચાર્યશ્રીને અને તેમનાં સત્કાર્યના સહાયકોને મારા અભિનંદન પાઠવું છું તે સ્વીકારશોજી. લી. સદાવાંદી જૈનમુનિ છોટાલાલજી



રૂા. ૧૦,૦૦૦) આપનાર આદ્ય મુરખીશ્રી,  
સમિતિના પ્રમુખ; દાનવીર શેઠશ્રી,



શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ  
અમદાવાદ.



## સમિતિના પ્રમુખ અને આદ્ય મુરબીશ્રી શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસનો કુક પરિચય

\*

શ્રી શાંતિલાલ મંગળદાસનો જન્મ ઈ. સ. ૧૯૦૧ નાં ઓગસ્ટની ત્રીજી તારીખે તેમનાં મોસાળ ચોરવડોદરામાં થયો હતો.

વિદ્યાર્થી અવસ્થામાં જ એમનામાં રહેલી તીવ્ર બુદ્ધિ જુદી તરી આવતી હતી. ઈ. સ. ૧૯૧૬ માં અમદાવાદ કેન્દ્રમાંથી મેટ્રીક પાસ થનાર પ્રથમ દસ વિદ્યાર્થીઓમાંના તેઓ એક હતાં. ત્યારબાદ ઈ. સ. ૧૯૨૩માં અર્થશાસ્ત્રનો વિષય લઈ તેઓ B. A. થયા. એ જમાનામાં બહુ થોડાં ધનિક કુટુંબો ઉચ્ચ અભ્યાસમાં રસ લેતા હતા.

ગ્રેજ્યુએટ થયા બાદ તુરત જ એમના ઉપર ધંધાની જવાબદારી આવી પડી. યુવાન વય, તિવ્ર બુદ્ધિ, વિશાળ વાંચન અને મનને તેમને નવીજ દૃષ્ટિ આપી હતી અને તેમની સમક્ષ આવતા ઉદ્યોગના અનેક વિકટ સવાલોને તેમણે બહુ કુશળતાથી ઉકેલવા માંડ્યા. ૧૯૪૫ માં એ અમદાવાદ મિલ માલિક મંડળના પ્રમુખ બન્યા. હિંદની તેમજ ખાસ કરીને ગુજરાત-સૌરાષ્ટ્રનાં વેપારનાં પ્રાણ પ્રશ્નોનાં તળપદા અભ્યાસે મિલમાલિક મંડળના પ્રમુખ તરીકેની કામગીરીને વધુ દીપાવી.

૧૯૪૮ થી હિંદી વેપારી મહામંડળના તેઓ સભ્ય છે અને ૧૯૫૪-૫૫ અને ૧૯૫૫-૫૬નાં વર્ષ માટેના દેશના આ સૌથી મોટા વેપારી મહામંડળના તેઓ અનુક્રમે ઉપપ્રમુખ અને પ્રમુખ હતા. આજે તો ગુજરાત-સૌરાષ્ટ્રને ખૂબજ ઉપયોગી નિવડેલી તેમની અસાધારણ શક્તિઓને દેશવ્યાપી ક્ષેત્ર મળ્યું છે.

૧૯૩૮-૩૯માં ઈન્ટરનેશનલ લેબર ઓર્ગેનિઝેશન (I. L. O.)માં ભાગ લેવા ગયેલ ભારતીય પ્રતિનિધિ મંડળના તેઓ સરકાર તરફથી નિયુક્ત થયેલ સલાહકાર હતા. ૧૯૪૬ માં અને ૧૯૪૮માં બુરોલ્સ અને જનીવા મુકામે ભરાયેલ I. L. O. માં તેઓએ માલિકોના પ્રતિનિધિ તરીકે અગત્યનો ભાગ લીધો હતો.

સામાન્ય નિયમ છે કે શ્રી અને સરસ્વતીને બહુ સંબંધ હોતો નથી. શ્રી શાંતિલાલ અને તેમનું કુટુંબ આમાં અપવાદરૂપ છે. ધનપતિ હોવા છતાં એ સાહિત્ય અને સંસ્કારિતાના પૂજક છે. એમની વિનમ્રતા અને સાદાઈ હજીએ

એ જાળવી રહ્યા છે. અનેક શિક્ષણ સંસ્થાઓ માટે આજે પણ એ પોતાની અનેકવિધ પ્રવૃત્તિઓમાંથી સમય બચાવી લે છે, એજ તેમનાં વિદ્યાપ્રેમનો સચોટ પુરાવો છે. ઉદ્યોગ તો તેમને વારસામાં જ મળ્યો છે અને એ વારસાને તેમણે શોભાવ્યો છે.

એમની દૃષ્ટિ આજનાં પ્રશ્નોને વૈજ્ઞાનિક રીતે છણવાની તો છે જ પણ આવતી કાલને પણ તેઓ એ જ વૈજ્ઞાનિક અને વ્યવહારિક દૃષ્ટિથી નિહાળતાં હોય છે અને એટલે જ તો એમના સંચાલન તંત્રે ચાલતી ચાર મિલો કાપડ ઉદ્યોગમાં સુંદર પ્રતિષ્ઠા જમાવી શકેલ છે. આ ઉપરાંત જુદી જુદી વ્યાપારી પ્રવૃત્તિઓ કરતી ઘણી કંપનીઓમાં તેઓ ડીરેક્ટર તરીકે રહી યોગ્ય માગ-દર્શન અને દોરવણી આપી રહ્યા છે. સૌરાષ્ટ્ર કાંઈનેન્સીયલ કૌરપોરેશનનાં તેઓ ડીરેક્ટર છે. સૌરાષ્ટ્ર મિલ માલિક મંડળમાં તો તેઓ તેમની સ્થાપના થઈ ત્યારથી ઉંડો રસ દાખવે છે. હજુ હમણાં સુધી સતત પાંચ પાંચ વર્ષ સુધી તેનાં પ્રમુખપદે રહી તેમણે સૌરાષ્ટ્રનાં આ ઉદ્યોગની કરેલી સેવાઓ ખરેખર અભિનંદનને યોગ્ય છે. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનાં તેઓ પ્રમુખ છે અને તેની પ્રવૃત્તિમાં ઘણા ઉત્સાહથી હંમેશાં મદદ કરી રહ્યા છે. આ ઉપરાંત અનેક જૈન ને જૈનેતર સામાજિક સંસ્થાઓને તેઓ સેવાઓ આપી રહ્યા છે.



## આદ્ય સુરજીશ્રી ભાણુવડનિવાસી શેઠ હરખચંદ કાલીદાસ વારીયાનું જીવનચરિત્ર

આ સંસ્થાને રૂ. ૬૦૦૦) છ હજાર જેવી રકમનું વાતવાતમાં દાન આપનાર સ્વ૦ શ્રીમાન્ હરખચંદ કાલીદાસ વારીયા ભાણુવડનિવાસીનું હુંક જીવનચરિત્ર અત્રે આપવા પ્રયાસ કરીએ છીએ. સૂત્રમાં તેઓશ્રીનો ફેટો આપવા માટે તેઓશ્રીની હયાતીમાં વાત થયેલ, પરંતુ તેઓ આ જાતની જાહેરાતથી વિરુદ્ધ હતા. તેમના અવસાન બાદ તેમના સુપુત્રો આગળ પણ ફેટાની માગણી કરી પરંતુ તેઓએ પણ તેમના પૂર્વ પિતાજીના પગલે ચાલી ફેટો આપવામાં નારાજ બતાવી. એટલે તેઓશ્રીનું હુંક જીવન આપીએ છીએ. આશા છે કે આવા ઉદાર અને વિચારશીલ મહાતુભાવના જીવનમાંથી વાચકોને ઘણું મળી રહેશે.

જન્મસ્થાન—ઘડેચી ( ઓખામંડળ ) તા. ૨૫-૧૧-૧૮૮૫

પિતાનું નામ—વારીયા કાલીદાસ મેઘજીભાઈ

માતાનું નામ—કેસરબાઈ

અભ્યાસ—ભાણુવડ અને પોરબંદરમાં રહી ફક્ત ગુજરાતી જરૂરત પૂરતું ભણ્યા

પરદેશગમન—માત્ર બાર વર્ષની વયે તેમના કાકા નથુભાઈ મેઘજીને ત્યાં જોલા ખાતે અનુભવ મેળવવા રહ્યા દરમિયાન જોલા (ખ્રી. સોમાલીલેન્ડ)

જીબુટી (ફ્રેન્ચ સોમાલીલેન્ડ) એડન અને ઇથીઓપીઆ તરફ પણ અનુભવ મેળવ્યો.

પ્રથમ ભાગીદારી—બુલહારમાં શ્રી. કાલીદાસ વેલજીના ભાગમાં ભળ્યા પરંતુ સંવત ૧૯૬૭માં તે હુકાન વીટી લીધી અને લગ્ન માટે સ્વદેશ આવ્યા.

લગ્ન—સંવત ૧૯૬૭ માં તેમનાં લગ્ન બાબુના ગામ ગુંદા મુકામે ખૂબ જ પ્રતિષ્ઠિત કુટુંબ મહેતા સુંદરજી પ્રેમજીના જ્યેષ્ઠ પુત્ર ભોવાન સુંદરજીનાં સુપુત્રી મણીબેન સાથે થયાં.

પરિવાર—અત્યારે તેમના પાંચે પુત્રો શ્રી લાલચંદભાઈ, જયચંદ્રભાઈ, નગિન-દાસભાઈ, વૃજલાલભાઈ અને વલ્લભદાસભાઈ એ પાંચે ભાઈઓ તેઓશ્રીનો બહોળો વ્યવહાર અને વ્યાપાર બરાબર સુયોગ્ય રીતે સંભાળી રહ્યા છે.

ભાગીદારી—લગ્ન પછી સં. ૧૯૬૮ માં પાછા પરદેશગમન થયું. શરૂમાં વસનજી નથુભાઈ કુ. ના નામથી પેઢી ચાલતી હતી તેમાં તેઓ ભાગમાં ભળ્યા. તેમાં શ્રી વારીયા નથુભાઈ મેઘજી, શ્રી વારીયા નથુભાઈ મુળજી, શ્રી વારીયા હરખચંદ કાલીદાસ, ફેફરીયા દેવજી જીવાભાઈ તથા શા. વસનજી હીરજીભાઈ એમ પાંચ ભાગીદાર હતા. તે પેઢી સંવત ૧૯૭૨ માં જુદી થઈ અને શ્રી વસનજી હીરજી કે જે સ્વખર્ચે આગળ વધ્યા હતા તેમણે પોતાની પેઢી શા. વસનજી હીરજીના નામથી જુદી કરી અને શા. નથુભાઈ મુળજીના નામથી પેઢી ખોલવામાં વારીયા નથુભાઈ મુળજી જેટલો જ હિસ્સો હરખચંદભાઈનો હતો.

ઉપરની પેઢી—ઉપરોક્ત નામથી એટલે કે શા. નથુભાઈ મુળજીના નામથી જે પેઢી શરૂ થઈ તેના પ્રાણસમા શ્રીયુત હરખચંદભાઈ તેમના જીવનના અંત સુધી રહ્યા હતા. અત્યારે પણ તે નામને શ્રી નથુભાઈ મુળજી તેમજ શ્રી હરખચંદ કાલીદાસના વારસો ઝળહળાવી રહ્યા છે. દૂર દૂરના દેશાવરોમાં એકઠાઈ લગભગ ૪૫ વર્ષ થયાં કામકાજ ચાલે છે. તેના સંચાલનની દોર શ્રી હરખચંદભાઈના હાથમાં અંત સુધી રહી હતી અને તેઓશ્રીના અવસાન પછી પણ તેમના દોરેલા ચીલા ઉપર પેઢીનો વ્યવહાર સરળ રીતે અત્યારે પણ ચાલે છે. અત્યારના સુકાનીઓએ પોતાના પૂર્વજ શ્રી નથુભાઈ તથા શ્રી હરખચંદભાઈના અંકિત કરેલ માર્ગે પોતાની સફર ચાલુ રાખી છે અને તે સદાયે અવિચળ રહે તેવું આશિર્વાચન કોઈ પણ હિન્દી ઉચાર્યા વિના રહી શકે નહીં તેવી તેની ઉત્તમ છાપ ત્યાં પડી છે અને તે નર્થ સત્ય જ છે.

હિન્દની શાન—વર્ષો થયાં એકઠાઈ ‘ ખીઝનેસ ’ ચાલતું હોવા છતાં એક શાહ સોદાગરની જેમ નથુભાઈ મુળજીની પેઢી ઉત્તરોત્તર કુલતી ફાલતી રહી છે વ્યાપારી આંટ અને ઇજ્જતનો એ નાદર નમુનો આજે પણ એ જ ધીર ગંભીરપણે પોતાનું કાર્ય ધપાવે જાય છે. એકધારી લગભગ અડધી સદી થયાં ચાલતી આ પેઢીને રજ માત્ર ડાઘ લાગ્યો નથી તે તો સૌ કોઈ જાણે છે અને શાહ નથુભાઈ મુળજીની પુરાણી પેઢી માટે આજે પ્રત્યેક હિન્દી અભિમાન લઈ શકે છે. તેમાં શ્રી નથુભાઈ વારીયાનું ધર્મપ્રધાનપણું અને શ્રી. હરખચંદભાઈનું દુરંદેશીપણું, કાર્યપ્રણાલીની ઉત્તમતા અને એક-નિષ્ઠા મુખ્ય ગણાય.

વાંચન અને મનન—ઉપરની વાતો તો તેમના વ્યાપારી જીવનની સંક-  
 જતા અને એક નાનામાં નાની વ્યક્તિ આગળ કઈ રીતે વધી શકે છે  
 તેનો આછો ખ્યાલ આપવા પૂરતી થઈ, ત્યારે તેની બીજી એક ખાસ  
 બાજુ છે અતિ સામાન્ય અભ્યાસ પરંતુ સ્વાનુભવે મેળવેલ જ્ઞાનસિદ્ધિ. જે  
 કાળમાં અણખેડાયેલા દેશોમાં આવવા જવાનાં સાધનો પણ ન હતાં,  
 એડન સુધીની મુસાફરી પછી જેલા બરબરા જવામાં નાના વહાણોથી  
 સફર થતી, જીબુટીથી ઈથોપિયા જવામાં દીરદવા પછી (બગલ) ખચ્ચરો  
 ઉપર અને પગપાળા મુસાફરી થતી. દેશો બધા ખુબ જ જંગલી  
 અવસ્થામાં હતા તેવા યુગમાં હિન્મત હાર્યા વિના આંગળીને વેઢે  
 ગણાય તેટલા હિન્દીઓ વ્યાપારમાં આગળ વધ્યા હતા તે યુગમાં શ્રી  
 હરખચંદલાઈ હતા. ખુબ જ અંધકારમાંથી પ્રકાશ મેળવવાનો હતો.  
 અત્યારે ઈથોપિયાના પાટનગર આડીસ અબાબા જવા માટે Air રસ્તે  
 ૧૦ થી ૧૨ કલાકમાં પહોંચાય છે ત્યારે તે જમાનામાં આગળોટ,  
 વહાણ ખડખડપાંચમ જેવી રેલ્વે અને તે પછી ખચ્ચરો ઉપર અને  
 થોડુંક પગપાળા અગર તો ગધેડા ઉપર પણ સફર કરવી પડતી. જુનો  
 જમાનો હતો એટલે હિન્દુ તરિકેનો ધર્મ જાળવવામાં પણ લોકો  
 ચુસ્ત હતા, કેઈનું અડેલું ખવાય નહીં રસોઈ તૈયાર હોય પણ એક  
**સોમાલી કે આરબ** અગર ઈથોપિયનનો હાથ અડકી જાય  
 એટલે ખાવાનું તેને આપી દઈ કડાકા કરવા પડે અગર તો પલાળેલા  
 ચણા કે મકાઈ ખાઈને ગુબારો કરવો પડે તેવા જમાનામાં શ્રી હર-  
 ખચંદલાઈએ ખુબ જ ધંધાકિય સફળતા મેળવી હતી તે સામાન્ય  
 વાત તો નથી જ, અને પોતે ખુબ જ ઓછું ભણ્યા હોવા છતાં ભણ-  
 તર કરતાં ગણુતર તેઓમાં ઘણું હતું. સાહિત્ય અને તે પણ ધાર્મિક  
 અને ગુજરાતી શિષ્ટ સાહિત્યનું વાંચન મનન એટલું બધું તેઓએ  
 કરેલું કે પોતાનો અભ્યાસ બહુ જ ઓછો છે એમ તેઓ ખુલાસો કરે  
 ત્યારે જ ખમર પડે, અભણ્યા માણસને તો તેમનું અંગ્રેજી જ્ઞાન પણ સાફ  
 હશે તેમ લાગતું. વ્યાપારી તાર લખવા ઓછા શબ્દોમાં ઘણું સમજાવી  
 દેવું ઉપરાંત અંગ્રેજી પત્ર વ્યવહારના બહારથી આવતા પત્રો આંટીધુટી  
 સહિત હોય તો પણ યથેચ્છ રીતે સમજી લેવામાં તેઓ એટલા બધા  
 પારંગત થઈ ગયેલા કે જોનારને તેમની શક્તિ ઉપર માન થઈ જતું. અને  
 તેઓ નિખાલસ ભાવથી જ્યારે કહેતા કે હું તો માત્ર ગુજરાતી ચાર પાંચ  
 ચોપડી ભણ્યો છું એમ વાત થતી ત્યારે તે માન અને કગણું વધી જતું.

**અભ્યાસી**—ધાર્મિક ઉંડામાં ઉંડું જ્ઞાન તેમણે વાંચનથી મેળવેલું. દેશ પરદેશની વાતો થતી હોય ત્યારે તેમના આગળ પ્રખર અભ્યાસીઓ પણ ઝાંખા પડતા, વર્તમાન પત્રોનો શોખ તેમનો અજોડ હતો. દેશ પરદેશના નાણાકિય વહેવારો અને હુંડિયામણની વાતો સાંભળીએ ત્યારે તેમના જ્ઞાનના અગાધપણની સાંભળનારને અતિ ઉત્તમ છાપ પડતી.

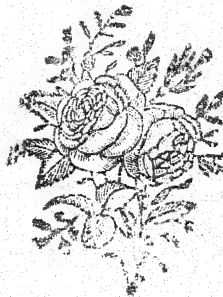
**ધાર્મિક**—ધાર્મિક અભ્યાસ તેમનો એટલો બધો બહોળો હતો કે તેમના આગળથી રોજ અવનવું જાણવા મળતું દરેક ધર્મનો અભ્યાસ તેમણે જ્ઞાસાવૃત્તિથી કર્યો હતો. ધર્મે તેઓ ચુસ્ત સ્થાનકવાસી શ્વેતાંબરી જૈન હતા છતાં ધર્મોધતાનો તેમનામાં અંશ પણ ન હતો. માફ એટલું સાફ એમ નહીં પણ સાફ એટલું માફ એમ માનતા તેથી કદાબ્રહ્મી-પણું તેમનામાં જનમ્યું જ ન હતું. જૈન ધર્મના દરેક પ્રીરકા ઉપર તેમને માન હતું. શ્વેતાંબર મંદિરમાર્ગે ભાઈઓના વરઘોડાઓમાં તેઓ આનંદ અને ઉત્સાહથી જતા, પ્રસંગ આવે ભાઈયારો નલાવવા વ્યવહારપણાનો ઉપયોગ કરી દેરાસરમાં ઘી બોલવાનો પ્રસંગ આવે ત્યારે પણ તેઓ ઉત્સાહથી બોલતા. વરઘોડામાં પોતાના ઘરની પુત્રવધુઓને કળશ લેવડાવતાં તેમને અનેરો આનંદ મળતો, જૈન ધર્મના દરેક પ્રીરકાઓની એકતાના તેઓ પ્રખર ચાહક હતા છેલ્લે છેલ્લે સૌરાષ્ટ્રમાં જૈન શ્વેતાંબર તેરાપંથી સાધુઓ આવતા અને એમને સૌરાષ્ટ્રના જૈનો અને જૈન સાધુઓ તેરાપંથી સાધુને સ્થાન અને આહારપાણી ન આપવાં તેવો પ્રયાસ જોર શોરથી કરતા તે બાબતને પોતે ગાંડપણ માનતા અને પોતાના ઘેર તેરાપંથી સાધુઓને માનથી ગોચરી આપતા સમાજથી જરા પણ ડરતા નહીં. ‘વિચારલેદ તો દરેક જગ્યાએ બુદ્ધિવાદી લોકોમાં હોય મુખાંને વિચારલેદ શાનો?’ આમ તેઓ કહેતા પરંતુ એવા વિચારલેદોને લઈને સાધુનું અને તે પણ પરદેશી સાધુઓનું અપમાન કરવું તેમાં માનવતા ક્યાં રહી? જૈનત્વ ક્યાં રહ્યું? તેમ તેઓએ જામનગરમાં એક વખત કહેલું તે મને બરાબર યાદ છે.

**પ્રેમાળ**—અસત્ય અગર તો જુક દગો આચરનાર તરફ તેમને ઘણો જ રોષ હતો એટલે ઉગ્રતાથી આવા લોકોની ખબર લઈ નાખતા છતાં તેનું દિલ દુલાવ્યું તે ઠીક ન ક્યું તેમ માની તે જ વ્યક્તિ સાથે પ્રેમ અને મમત્વથી વાતો કરતા બીજાનું સાફ જોઈ તેઓ ખરેખર રાચતા તેમની આંખમાં પ્રેમનું અમૃત ભારે.



ભાર ભર્યું હતું. પોતાને ત્યાં નોકરી કરી ગએલ મુનિમ કે કોઈ પણ વ્યક્તિ કમાણી કરીને ખુબ જ આગળ આવે, સારા અને સંસ્કારી થાય વ્યવહારમાં સવાયા થાય તેને ત્યાં લગ્ન પ્રસંગ હોય અગર તો સારામાં સારાં મકાનો તેણે કર્યાં હોય તેવા પ્રસંગે જવાનું થાય ત્યારે તેમના આનંદનો અવધી થઈ જતો. તે વખતે તેઓની આંખોનું અમૃત જેમણે નજરોનજર જોયું હશે તે તેમને જીવનભર નહીં ભૂલે. આવી એક મહાન વિભૂતિના જીવનનો ટુંક સાર જ આપી શકાય. સાંગોપાંગ જીવન તો ક્યાંથી લખાય ?

**કાળ—**જનમ્યું તે જવાનું જ તે કુદરતનો ક્રમ છે તેને આધીન તો સારા નરસા દરેકને થવું જ પડે. સંવત ૨૦૦૭માં તેઓશ્રી ૬૮ વર્ષનું આયુષ્ય ભોગવી ક્ષણભંશુર દેહને છોડી ગયેલા. પરંતુ તેમની સુવાસ સદાય પ્રસરતી જ રહેવાની. ભાણવડ જેવડા નાનકડા ગામમાં અને આસપાસના ગામોમાં જ્યાં જ્યાં તેઓ ગએલા અગર તો તેમનું કાર્યક્ષેત્ર હતું ત્યાં ત્યાં તેમના અવસાનથી સન્નાટો છાઈ ગયેલો. એમનું મૃત્યુ વીશ વર્ષના કંઘોતરનો શોક હોય તેવો શોક સર્વત્ર આપતું ગયેલું. નામ ઠામના લોભ વિના કરેલાં તેમનાં ગુપ્ત દાનો એટલાં બધાં હતાં કે તેમના જવાથી નાના મોટા દરેકને એકસરખી ખોટ લાગતી હતી. છતાં તેઓ જીવતર જીવી ગયા. આવું ધન્ય જીવન અને ધન્ય મૃત્યુ જોઈને આર્તધ્યાન રૌદ્રધ્યાન ધરવું તે કરતાં તેમના જેવા થવાના પ્રયત્નો કરવા. અને તેમના અમર આત્માની શાન્તિ માટે પ્રાર્થના કર્યા સિવાય બીજો માર્ગ જ ક્યાં છે ? ૐ શાન્તિ ! શાન્તિ !! શાન્તિ !!!



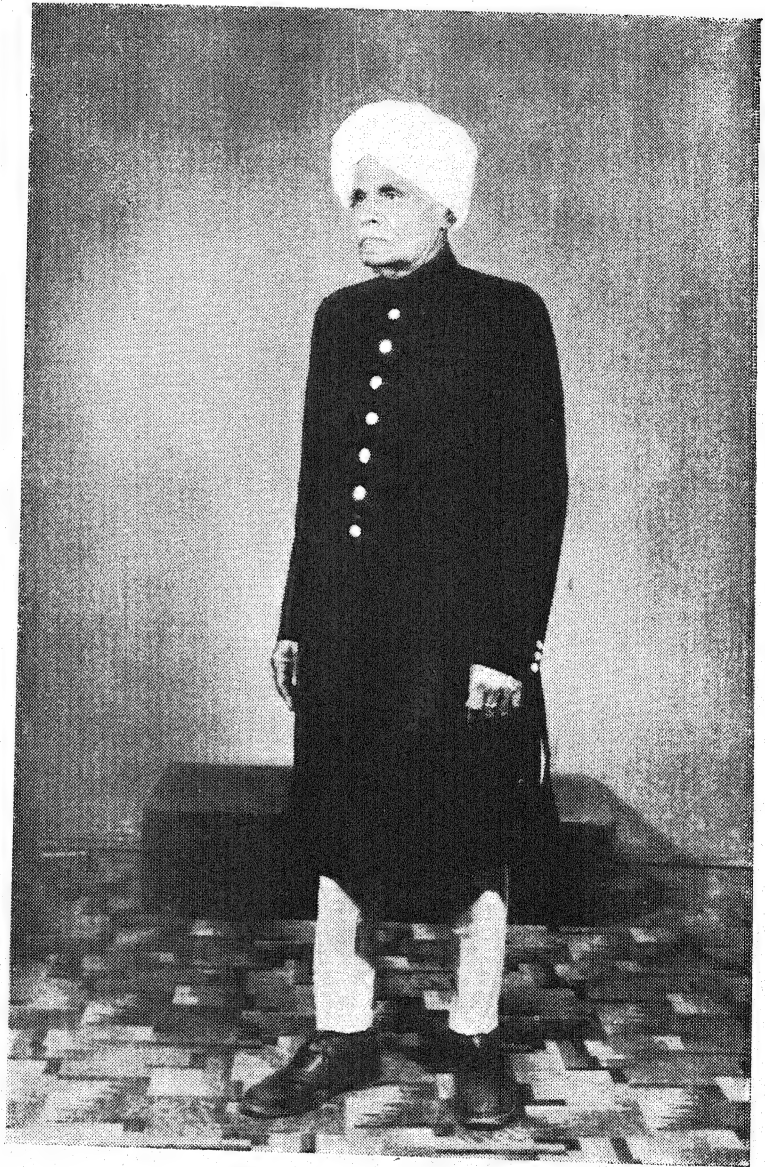
## આચ મુરબીશ્રી કોઠારી હરગોવીંદલાઇ જેચંદનો કુંક પરિચય

\*

પુ૦ શ્રી ૧૦૦૮ ઘાસીલાલજી મહારાજ રાજકોટ પધારતાં પ્રાતઃસ્મરણીય સ્તવનાવલી રાજકોટના રહીશ શુદ્ધ શ્રાવક વૃતધારી જેચંદ અજરામર કોઠારીના સુપુત્ર હરગોવિંદ કાકા તરફથી ૨૦૦૩ માં છપાવવામાં આવી અને તે હિંદભરમાં બહાર મૂકી તેનો ઉપયોગ હાલ સર્વ જૈન જૈનેતર કરી રહેલ છે. કાકા રાજકોટમાં જ નહિ પણ સૌરાષ્ટ્ર, કચ્છ, ગુજરાત, મુંબઈ, દિલ્હી સુધી એક અજોડ ઉત્સાહી પુરૂષ છે. એમનો પ્રબળ અને રાજ ઉપર ઘણો જ સારો પ્રભાવ છે. વેસ્ટર્ન ઈન્ડીયા સ્ટેટ એજન્સી અને ગુજરાત સ્ટેટસ મહીકાંઠા, સાબરકાંઠા બનાસકાંઠામાં રેસીડેન્સીમાં પણ કાકા પ્રત્યે ઘણો જ સારો ભાવ છે. તેઓને ધર્મ પ્રત્યે ઘણી જ સારી ધગશ હોઈ અંગત ખર્ચે પોતાના ઘર આંગણે ધર્મ ધ્યાન માટે પોષધશાળા બંધાવી છે તેમજ આજીવન નદીને કિનારે વિશાળ વ્યાખ્યાન ભુવન હોલ બે માળનો પાંચ હજાર માણસો વ્યાખ્યાન સાંભળી શકે તેવો બંધાવેલ છે. ઉદાર દિલના સખી માણસ છે. કોઈ પણ ગરીબ ગુન્હાહીત માણસ દાદ માગવા આવે તો તરત જ બનતા ઉપાયે તેમને મદદ આપવા ચોવીસ કલાક તૈયાર રહે છે. કાકાનું કુટુંબ પણ ઘણું જ ધર્મીષ્ઠ છે. તેમનાં ધર્મપત્નિ શ્રીમતી અખંડ સૌભાગ્યવતી રક્ષમણીબેન વહેવારદક્ષ પ્રેમાળુ અને પૂર્ણ ધર્માત્મા છે. સાધુ, સાધ્વી પ્રત્યે તથા દરેક કુટુંબ સજ્જન સ્નેહી અને સ્વધર્મીઓ મહેમાનો સાથે ઘણો જ સારો ઉચિત વહેવાર રાખવામાં પૂર્ણ નિષ્પન્ન છે. નિત્ય પોતાની ધર્મ પરાયણતા પ્રત્યે જ વફાદાર રહે છે.

પૂ૦ ઘાસીલાલજી મહારાજ આદી થાણા છ ( સમીરમુનિ, કનૈયાલાલ મુનિ દેવમુનિ, તપસ્વી માંગીલાલ, મદનલાલજી ) મેવાડથી દામનગરના રહીસ દામોદરભાઈના આગ્રહથી પાલનપુર નહીં રોકાતાં તેમણે વિહાર શરૂ કર્યો, અને મોરબી મુકામે તપસ્વી મદનલાલજી અને માંગીલાલજીની ૭૧ ઉપવાસની તપશ્ચર્યા ચાતુ-માસમાં થયેલી જે પ્રસંગે રાજકોટથી હરગોવિંદકાકા કુટુંબ સહિત ગોકળ અષ્ટમીને દીવસે દર્શનાર્થે આવ્યા અને રાજકોટ પધારવાની વિનંતી કરી. અને નવેમ્બર ૧૯૪૬ માં ઘાસીલાલજી મહારાજ રાજકોટ પધાર્યા. કાકાના વ્યાખ્યાન ભુવનમાં ખીરાબ્યા. બંને તપસ્વીજીએ માસખમણની તપશ્ચર્યા કરી. સ્થાનિક રાજકોટ સકલ સંઘે ઘણોજ ભક્તિભાવ બતાવ્યો. અને રતાગઢ ખેડાના રહીશ જવારલાલજી ઉર્ફે ચાંદમલજી ભંડારીની ૨૦૦૨ તા. ૨૭-૧-૪૭ના રોજ દીક્ષા વસંતપંચમીને

૩૧. ૫૨૫૧) આપનાર આદ્ય સુરજબીશ્રી,



કો ઠા રી હર ગો વિંદ ભાઈ જે ચંદ  
રા જ કો ૨.



દીવસે હોવાથી સંઘમાં વધારે ઉત્સાહ આનંદ આવ્યો. મહાસુદિ એકમથી પાંચમ સુધી ૬ વરઘોડાઓ જુદે જુદે ઠેકાણેથી ચડ્યા. મહા સુદી ૪ ના દિવસે કાકાને ઘેરથી દીક્ષા ઉત્સવનો વરઘોડો રાજકોટ ઠાકોર સાહેબ પ્રધુમનસિંહજી અને કુ. શ્રી બનેસિંહજીની સંપૂર્ણ મદદથી રાજેશ્રીના ઠાંઠને પણ વટાવી જાય તે રીતે સરકારી અને સ્ટેટ બેન્ક પોલીસ ઘોડેસ્વાર ગાડીઘોડા મોટરો તથા હજારો જૈન જૈનેતર માનવમેદની સાથે આખા શહેર સદરના રસ્તા પર ફર્યો હતો. પાંચમના દિવસે તપગચ્છના ચાંદીના રથમાં દીક્ષાર્થીને બેસાડી ૪ ચાર બેલ બેડેલ રથને કાકા પોતે સારથી બની હાંકતા હતા. બંને દીવસે સોના રૂપાનાં કુલ તથા પૈસા દિક્ષીત ઉડાવી રહેલ હતા. ઠેકાણે ઠેકાણે પોલીસો ગોઠવવામાં આવી હતી. આ સરઘસ શહેર સદરમાં ફરી જુળીલી બાગમાં આવ્યું અને દસ હજાર માણ-સોની હાજરીમાં પૂઠ શ્રી ઘાસીલાલજીની જેનેશ્રાય નીચે દીક્ષાઆપવામાં આવી તે પ્રસંગે શાંતિ જળવાયેલી. આ પ્રસંગે બંને દીવસોએ ફેાટાઓ તથા જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિની કમિટિના ફેાટાઓ લેવામાં આવ્યા. અને ૩૦-૧-૪૭ના દીવસે શાસ્ત્રોદ્ધારની મિટીંગ મળી જેમાં કાકા તરફથી સૂત્રને માટે રૂપીઆ પાંચ હજારની ભેટ મળી તે ઉપરાંત પ્રસંગોપાત સૂત્ર માટે જુદી ભેટ રોકડી રકમની આપવામાં આવી છે. તેમજ જીવહયાના પ્રખર હિમાયતી પૂઠ ૧૦૦૮ જેઠમલજી મં ની નેશ્રાય નીચે તન મન ધનથી જીવહયાનું કાર્ય કરે છે અને જીવહયાનું પત્ર પોતાને અર્થે છપાવી પ્રસિદ્ધ કરી હિંદુભરમાં તેમજ યુરોપ અમેરીકા આફ્રીકામાં મોકલે છે હાલ પોતે સેવાભાવી કાર્યની પ્રવૃત્તિ કાયમ કર્યા કરે છે.

રાજકોટની ફ્લોર મીલોના ઓનરરી પ્રમુખ : જૈન બોર્ડીંગના ઓનરરી કાર્યકર્તા તથા જીવહયા મંડળના મંત્રી અને S. P. C. A. ના મંત્રી, રાજકોટ શહેરી મંડળના સેક્રેટરી તરીકે ઓનરરી સેવા કરી દરેકને પોતાની સેવાનો સાથ આપવામાં તન મન ધનથી કોઈની પણ સેવા કરવામાં કાયમ તત્પર રહે છે.

## આદ્ય મુરબીશ્રી મહુમ ધારશીલાઈ જીવનલાઈનો કુંકે પરિચય

મરહુમ ધારશીલાઈ જીવનલાઈ શાહ, જેનો ચોઈલ જીવપ્રેસ સાથે આ સૈકાની શરૂઆતથી સંબંધ, પુના સાતે ડીવીઝનના જુદા જુદા સ્થળોના જુનામાં જુના અને અગ્રગણ્ય એજન્ટ તરીકે બાણીતા છે. તેનો જન્મ કાઠીયાવાડમાં પીપળીયા ગામમાં થયેલ, માત્ર પ્રાથમિક કેળવણી લઈ, ૧૧ વર્ષની નાની ઉંમરે આગળ વધવાની ધગશ સાથે, માત્ર ખીસ્સામાં ૨ રૂ. જેટલી નજીવી રકમ સાથે વતન છોડ્યું મુંબઈ આવી મનજી નથુલાઈની પેદીમાં ઓશીસ બોય તરીકે નોકરી લીધી, ત્યાં ઉત્તરોત્તર દરેક કામમાં ખંત રાખી સંતોષ આપતાં તેમને પુના મોકલવામાં આવ્યા. પુનાથી કરમાલા આવી ખલા ઉપર તેલ ઉપાડી ફેરી પણ કરી અને ત્યાંના સબ એજન્ટોને એકદમ પ્રમાણીકપણે સખત કામ બતાવી, કરમાલા ગામમાં તેલની સબડીલર-શીપ પ્રાપ્ત કરી ધીરે ધીરે તે જ પ્રમાણે મહેનત ચાલુ રાખતાં ૧૯૩૧માં જ્યારે ખર્મશિલ અને એસ. વી. એ. સી. વચ્ચે ભાવની હરીફાઈ ઉપડી ત્યારે પોતાની સતત સેવા બતાવી ખર્મશિલ પાસેથી ઘડીયાલ બક્ષીસ મેળવી અને તે લાઈનના તમામ કાર્યવાહકોની ચાહના પ્રાપ્ત કરી.

ધીરે ધીરે પોતાની ખંતથી તેવી જ એજન્સીઓ લીપ્ટન કું., સીમેન્ટ કું., આઈ. સી. આઈ. વીગેરેની પણ મેળવી પોતાના વ્યાપારની સારી જમાવટ કરી.

સોલાપુર ડીસ્ટ્રીક્ટમાં સારા આબરૂદાર શહેરી તરિકે વગ તેમજ ચાહના મેળવી અને લોકસેવા પણ સાથેસાથ ચાલુ રાખી કરમાલા મ્યુન્ના પ્રેસીડન્ટ થયા સોલાપુર ડીસ્ટ્રીક્ટમાં દેશહિતના અનેક કામોમાં તન, મન, ધનથી સારી સેવા બજાવી.

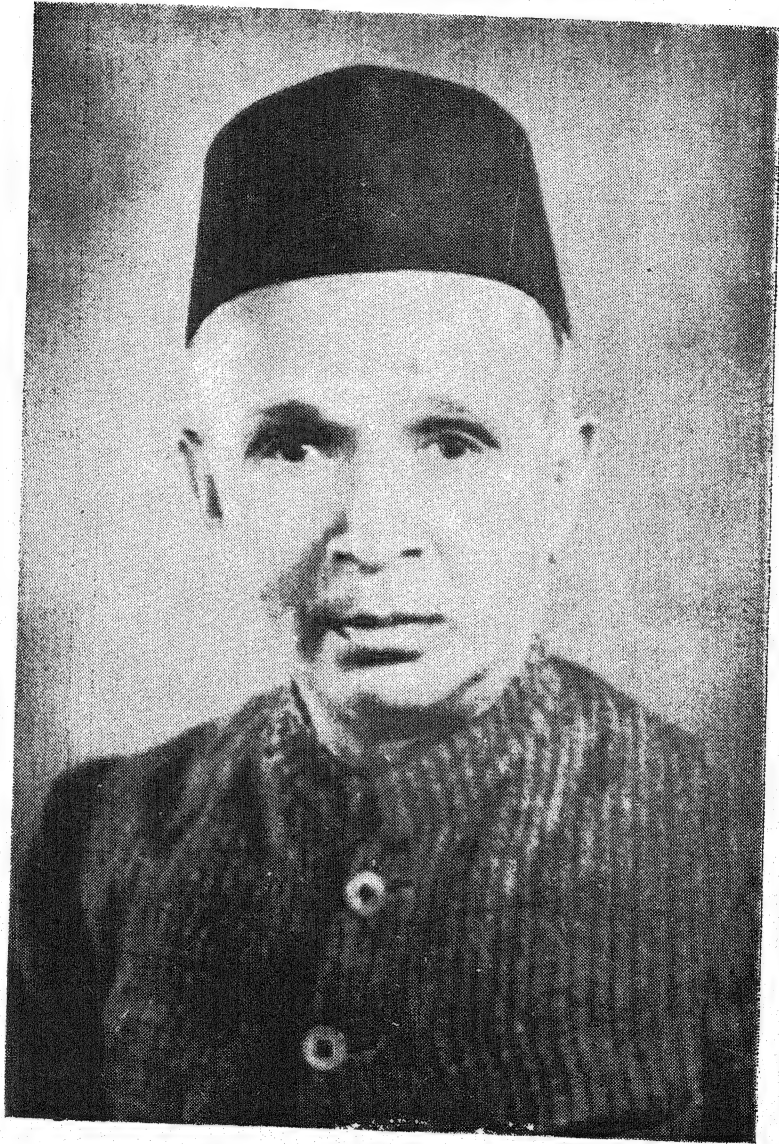
તેનું ખાનગી જીવન પણ બહુ સાદું હોવાથી બધા તેને ચાહતા અને ધંધામાં સારો લાભ મળ્યો અને તે જ પ્રમાણે સેવાના તથા ધર્મદાના અનેક કાર્યોમાં સારી રકમો વાપરી.

પોતાના કુટુંબના વડા તરીકે પણ કુટુંબીજનો, સગાં, સંબંધીઓને દરેક રીતે માર્ગદર્શન આપી જુદા જુદા ધંધા તેમજ એજન્સીઓ વિગેરે મેળવી સ્થિરતા પ્રાપ્ત કરવામાં ઘણો પરિશ્રમ લીધો.

યાંત્રિક ખેતીની પ્રગતીના કાર્યસર વિલાયત જઈ આવ્યા, અમેરીકા જવા પણ ધારણા હતી. ત્યાં લંડનમાં ૧૪-૭-૪૯ના રોજ હૃદય બંધ પડી જતાં સ્વર્ગવાસ કર્યો. તેમની પાછળ બહોળું કુટુંબ, ઘણાં સગાં તેમજ સ્નેહીઓ મૂકી ગયેલ છે. જેઓ સર્વને પોતાની મીઠી યાદગીરી મુકી જીવનનું સાર્થક કરી ગયેલ છે.



રૂ. ૫૦૦૧) આપનાર આદ્ય સુરજીશ્રી,



(સ્વ.) શેઠ ધારસીભાઈ જીવણભાઈ  
સોલાપુર.



# ॥ आचाराङ्गसूत्रके २, ३, ४ अध्ययनों की विषयानुक्रमणिका ॥

( द्वितीय अध्ययन-प्रथम उद्देश )

विषय	पृष्ठाङ्क
१ प्रथमाध्ययन के साथ द्वितीय अध्ययनका सम्बन्धकथन, द्वितीय अध्ययन के छहों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन ।	१-३
२ द्वितीय अध्ययन के प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र ।	४-५
३ शब्दादि कामगुण ही मूलस्थान अर्थात् मोहनीयादि के आश्रय हैं, उन शब्दादि-कामगुणों से युक्त प्राणी परितापयुक्त बना रहता है, और उसकी उस परिस्थितिमें जो भावना रहती है उसका वर्णन ।	६-२८
४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र ।	२९
५ शब्दादिकामगुणमोहित प्राणी वृद्धावस्थामें मूढताको प्राप्त करता है - इसका वर्णन ।	३०-५६
६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र ।	५७
७ वृद्धावस्था में उस मनुष्य की जो दशा होती है - उसका वर्णन ।	५८-७२
८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र ।	७२-७३
९ मनुष्य की वृद्धावस्थामें जो दुर्दशा होती है उसे विचार कर संयम-पालन में मुहूर्तमात्र भी प्रमाद न करे ।	७४-८६
१० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र ।	८७
११ प्रमादी पुरुषों के कार्य का वर्णन ।	८८-९५
१२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र ।	९६
१३ माता पिता या पुत्र कोई भी इहलोक-सम्बन्धी और परलोक-सम्बन्धी दुःखों से बचाने में समर्थ नहीं हैं ।	९६-९७
१४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र ।	९८
१५ असंयत पुरुष उपभोगके लिये धनसंग्रह करता है और उपभोग के समय उसे कासश्वासादि रोग हो जाते हैं, उस समय उसके माता पिता और पुत्र कोई भी रक्षक नहीं होते हैं ।	९९-१००

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र। १००
- १७ वृद्धावस्थामें कोई रक्षक नहीं होता और बाल्यावस्था भी पराधीन होने के कारण दुःखमय ही है—ऐसा विचार कर युवावस्था को ही संयमपालन का योग्य अवसर समझना चाहिये। १०१-१२२
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र। १२२
- १९ बार्द्धक्य और रोगों से जब तक श्रोत्रादि इन्द्रियों के परिज्ञान नष्ट नहीं हुए हैं, तभी तक चारित्रानुष्ठानमें प्रवृत्त हो जाना चाहिये। १२३-१२७
- ॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

\*

## ॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

- १ प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन। १२८
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र। १२९-१३०
- ३ संसारकी असारता को जाननेवाला मुनि संयमविषयक अरतिको दूर कर क्षणमात्रमें मुक्त हो जाता है। १३१-१३७
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र। १३८
- ५ जिनाज्ञा से बहिर्भूत साधु मुक्तिभागी नहीं होता। १३९-१४४
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र। १५५
- ७ 'अनगार' कौन कहलाते हैं। १४६-१५४
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र। १५४
- ९ विषयासक्तिवश परितप्त होकर धन की स्पृहासे दण्डसमारम्भ करनेवाला मनुष्य का वर्णन। १५५-१५९
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र। १५९
- ११ संयमी को दण्ड समारम्भ नहीं करना चाहिये। उद्देश समाप्ति। १६०-१६२

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

\*

## ॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

## विषय

## पृष्ठाङ्कः

- १ द्वितीय उद्देश के साथ तृतीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन। १६३
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र। १६४
- ३ पण्डित को उच्च कुलकी प्राप्ति से हर्ष नहीं करना चाहिये; और न नीच कुलकी प्राप्तिसे क्रोध ही करना चाहिये। १६५-१७०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र। १७१
- ५ किसी भी प्राणीका अहित नहीं करना चाहिये। प्राणियों के अहित करनेवालों को दुरवस्था का वर्णन। १७२-१८६
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र। १८६
- ७ उच्चकुलाभिमानी मनुष्य प्राणियोंका अहित करके जन्मान्तर में कोई अन्धता आदि फल पाकर सकलजननिन्दित होता हुआ, और कोई खेत-घर-धनधान्य-स्त्री आदि परिग्रहमें आसक्त हो तप आदिकी निन्दा करता हुआ विपरीत बुद्धिवाला हो जाता है। १८७-१९४
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र। १९४
- ९ संयमियों के कर्त्तव्य का निरूपण। १९५-२०६
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र। २०७
- ११ असंयमियों के जीवन स्वरूपका वर्णन। २०७-२१४
- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र। २१४-२१५
- १३ असंयमीका अन्यायोपार्जित धन नष्ट हो जाता है, और कुटुम्ब की चिन्ता से व्याकुल वह असंयमी कार्याकार्य को नहीं जानता हुआ विपरीतबुद्धियुक्त हो जाता है। २१५-२२१
- १४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र। २२१
- १५ 'सुखको चाहनेवाला मूढमति असंयमी मनुष्य दुःखही भोगता है' इस बातको भगवान महावीर स्वामीने स्वयं प्ररूपित किया है-इस प्रकार सुधर्मा स्वामी का कथन। २२२-२२६
- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवाँ सूत्र। २२७

## विषय

## पृष्ठाङ्क

१७ पश्यक-तीर्थकर गणधर आदि नरकादि गतिके भागी नहीं होते हैं, बाल-अज्ञानी जीव तो नरक आदि गतिके भागी ही निरन्तर होते रहते हैं—इसका प्रतिपादन और उद्देश-समाप्ति। २२७-२३५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

\*

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

- १ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । २३६
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । २३७-२३८
- ३ वृद्धावस्था में ही श्वासकासादि रोग होते हों, ऐसी बात नहीं !  
ये तो युवावस्था में भी होते हैं । उस रोगावस्था में उस प्राणी  
का रक्षक कोई सगे-सम्बन्धी नहीं होता है, और न वही प्राणी  
उस रोगावस्था से आक्रान्त अपने सगे-सम्बन्धीका रक्षक  
हो सकता है । २३८-२४०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । २४१
- ५ भोगसाधन धनकी विनाशशीलताका वर्णन । २४१-२४२
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । २४२-२४३
- ७ भोगसाधन धन विनश्वर है; अतः भोगकी स्पृहा और भोगके  
विचार का भी परित्याग कर देना चाहिये । २४३-२५५
- ८ चौथे सूत्रका अवतरण और चौथा सूत्र । २५६
- ९ 'कामभोग का आसेवन महा भयस्थान है' ऐसा जानकर अन-  
गार क्या करे ? इसका उपदेश तथा उद्देश-समाप्ति । २५६-२६१

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥

\*



## ॥ अथ पञ्चमोद्देशः ॥

### विषय

### पृष्ठाङ्क

- १ चतुर्थ उद्देशके साथ पञ्चम उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । २६२-२६४
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । २६४
- ३ गृहस्थ कर्मसमारम्भ जिन हेतुओं से करते हैं, उन हेतुओं का प्रतिपादन । २६५-२६८
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । २६९
- ५ भविष्य में उपभोग के लिये पदार्थों के संग्रहमें प्रवृत्त गृहस्थों के बीच संयमाराधनमें तत्पर अनगार को किस प्रकार रहना चाहिये । २६९-२७२
- ६ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । २७३
- ७ साधुको क्रयण, क्रापण और उसके अनुमोदन से रहित होना चाहिये । २७३-२७५
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । २७६
- ९ हननकोटित्रिक और क्रयणकोटित्रिकसे रहित साधुका वर्णन । २७६-२८३
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । २८३
- ११ साधुको एषणीय आहारके सदृश एषणीय वस्त्रपात्रादि भी गृहस्थसे ही याचना चाहिये । २८४
- १२ षष्ठ सूत्रका अवतरण और षष्ठ सूत्र । २८५
- १३ 'मुनिको मात्राज्ञ होना चाहिये' इसका वर्णन । २८५-२९१
- १४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र । २९१
- १५ श्रुतचारित्र्य रूप इस मार्गको आयोंने प्रवेदित किया है । इस मार्ग पर स्थित हो कर जिस प्रकार कर्म से उपलिप्त न हो वैसा करना चाहिये । २९१-२९२
- १६ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र । २९२
- १७ हिरण्य-सुवर्णादि तथा शब्दादि काम दुरुल्लब्ध्य हैं । इन कामों को चाहनेवाले पुरुषकी जो दशा होती है उसका वर्णन । २९३-२९९
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । २९९

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- १९ ज्ञाननेत्रयुक्त मुनिका वर्णन । २९९-३०७
- २० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ३०७
- २१ साधुको कामभोगाशासे युक्त नहीं होना चाहिये; क्यों कि कामभोगाशासे युक्त साधु बहुमायी हो कर लोभ और वैर बढ़ा-नेवाला होता है। वह अपनेको अमर समझता है, इष्ट-विनाश-आदि कारण से वह उच्च स्वर से रुदन करता है । ३०८-३१३
- २२ ग्यारहवां सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ३१३
- २३ बाल-अज्ञानी परतैर्थिक कामभोगस्पृहाकी चिकित्सा कामभोग-सेवनही कहते हैं; इसलिये वे हननादिक क्रियासे युक्त होते हैं। परन्तु अनगार ऐसे नहीं होते हैं । उद्देश-समाप्ति । ३१४-३१८

॥ इति पञ्चमोद्देशः ॥

\*

॥ अथ षष्ठोद्देशः ॥

- १ पञ्चम उद्देशके साथ षष्ठ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । ३१९
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ३१९
- ३ षड्जीवनिकाय के उपघातका उपदेश नहीं देनेवाले अनगार कभी भी पापाचरण नहीं करते । ३२०-३२१
- ४ द्वितीय सूत्र का अवतरण और द्वितीय सूत्र । ३२१
- ५ जो छ जीवनिकायों या छ व्रतों में से किसी एक की विराधना करता है वह छहों की विराधना करता है। सुखार्थी वह वाचाल होता है, और अपने दुःखसे मूढ़ हो वह सुख के बदले दुःख ही पाता है। वह अपने विप्रमादसे अपने व्रतों को विपरीत प्रकार से करता है, अथवा वह अपने संसारको बढ़ाता है, या एकेन्द्रियादिरूप अवस्था को प्राप्त करता है। इसलिये चाहिये कि प्राणियों को जिनसे दुःख हो ऐसे दुःखजनक कर्मों का आचरण नहीं करे। इस प्रकार के कर्मों के अनाचरण से कर्मोपशान्ति होती है। ३२२-३३१

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ३३२
- ७ ममत्वबुद्धि से रहित हो मनुष्य रत्नत्रययुक्त अनगार होता है । ३३२-३३४
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ३३४
- ९ मेधावी मुनि ममत्वबुद्धिको छोड़कर, लोकस्वरूप को जानकर आहारादिमूर्च्छारूप संज्ञा से रहित हो संयमानुष्ठान में पराक्रम करे । ३३४-३३६
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ३३६
- ११ कर्मविदारण करनेमें समर्थ, पुत्रकलत्रादिको त्यागनेवाले वीर चारित्र्यविषयक अरति और शब्दादिविषयक रतिको दूर कर देते हैं; क्यों कि वे अनासक्त होते हैं; अत एव वे शब्दादिविषयों में रागयुक्त नहीं होते । ३३७
- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ३३८
- १३ मुनि इष्टानिष्ट शब्दादि विषयों में रागद्वेष न करता हुआ असंयमजीवन सम्बन्धी प्रमोदको दूर करे, मौन ग्रहणकर कर्मक्षपण करे । सम्यक्तत्त्वदर्शी वीर मुनि प्रान्त और रूक्ष अन्न सेवन करते हैं । प्रान्त-रूक्ष अन्न सेवन करनेवाले मुनि कर्मका विनाश कर ओघन्तर, तीर्ण और मुक्त होते हैं । ऐसे ही मुनि विरत कहलाते हैं । ३३८-३४३
- १४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ३४३
- १५ दुर्बल मुनि भगवान्की आज्ञाका विराधक हो कर तुच्छता एवं ग्लानिको प्राप्त करता है, और भगवान्की आज्ञाका आराधक सुबल मुनि तुच्छता एवं ग्लानि को नहीं पाते हैं और तीर्थङ्कर गणधर आदि से प्रशंसित होते हैं । यह सुबल मुनि लोकसंयोग से रहित हो मुक्तिगामी होते हैं । ३४३-३४७
- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवाँ सूत्र । ३४७
- १७ शारीरिक-मानसिक दुःखजनक कर्मों का जहां जिस प्रकार से बन्ध होता है, मोक्ष होता है, और विपाक होता है । उन सबों

## विषय

## पृष्ठाङ्क

का तीर्थङ्कर गणधर आदिने प्ररूपण किया है। कुशल मुनि बन्ध और मोक्षके उपायों को सर्वदा समझाते हैं। उन बन्ध और मोक्षके उपायों को जान कर भव्य आस्रवद्वारों से दूर रहे। जो मुनि अन्य दर्शनों में श्रद्धान नहीं रखते हैं—जो मुनि अनन्यदर्शी होते हैं—वे अनन्याराम होते हैं और जो अनन्याराम होते हैं वे अनन्यदर्शी होते हैं। कुशल मुनिका उपदेश पुण्यात्मा और तुच्छात्मा दोनों के लिये बराबर होता है। ऐसे मुनिका उपदेश द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके अनुसार ही होता है। ३४८-३५४

१८ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र । ३५५

१९ धर्मोपदेशक श्रोताकी परीक्षा करके धर्मोपदेश करे। ऐसा धर्मोपदेशक ही प्रशंसित होता है। यह मुनि अष्टविधकर्मपाशसे बद्ध जीवों को छुड़ाता है, सभी दिशाओं में सर्वपरिज्ञाचारी होता है और हिंसादि स्थानों से लिप्त नहीं होता है। कर्मों के नाश करने में कुशल, बन्धप्रमोक्षान्वेषी—रत्नत्रय का अन्वेषणशील—वह मुनि न बद्ध है न मुक्त है। ३५६-३६३

२० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ३६४

२१ तीर्थङ्कर, सामान्य केवली और रत्नत्रययुक्त साधुओं ने जैसा आचरण किया है वैसा ही आचरण दूसरे साधु करें, तीर्थङ्करादिकोंने जिस आचरणको प्रतिषिद्ध माना है उस आचरण से दूर रहें। ३६४-३६६

२२ ग्यारहवें सूत्र का अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ३६७

२३ पश्यक—तीर्थङ्कर गणधरादिक नरकादिगतिके भागी नहीं होते, बाल—अज्ञानी तो निरन्तर होते रहते हैं। उद्देशसमाप्ति। द्वितीयाध्ययनसमाप्ति। ३६७

२४ द्वितीय अध्ययन की टीकाका उपसंहार। ३६८

॥ इति द्वितीयाध्ययनम् ॥

## ॥ अथ तृतीयाध्ययनम् ॥

### ॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

#### विषय

#### पृष्ठाङ्क

- १ द्वितीयाध्ययन के साथ तृतीय अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन,  
चारों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन । ३६९-३७०
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ३७१
- ३ अमुनि सर्वदा सोते रहते हैं, और मुनि सर्वदा जागते रहते हैं । ३७१-३८०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ३८०
- ५ दुःखजनक प्राणातिपातादि कर्म अहितके लिये होते हैं; इसलिये  
प्राणातिपातादि कर्मों से विरत रहना चाहिये । ३८०-३८४
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ३८४
- ७ जो शब्दादि विषयों में रागद्वेषरहित है—ऐसा ही प्राणी आत्म-  
वान्, ज्ञानवान्, व्रतवान्, धर्मवान् और ब्रह्मवान् होता है ।  
ऐसा ही प्राणी षड्जीवनिकायस्वरूप लोकके परिज्ञानसे युक्त  
होता है । वही मुनि कहलाता है । वही धर्मवित् और ऋजु है,  
एवं वही आवर्त्त और स्रोतके संबन्धको जानता है । ३८५-३८८
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ३८९
- ९ आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धके जाननेवाला मुनि बाह्य और  
आभ्यन्तर ग्रन्थिसे रहित, अनुकूल और प्रतिकूल परीपहों को  
सहन करनेवाले, संयम विषयक अरति और शब्दादि विषयक  
रति की उपेक्षा करनेवाले होते हैं, और वे परिपहों की  
परुषता को पीडाकारक नहीं समझते हैं । वे सर्वदा श्रुतचारित्र-  
रूप धर्म में जागरूक रहते हैं, दूसरों का अपकार नहीं करना  
चाहते हैं । वे वीर अर्थात् कर्मविदारण करने में समर्थ होते हैं ।  
इस प्रकारके मुनि दुःख के कारणभूत कर्मोंसे मुक्त हो जाते हैं । ३८९-३९१
- १० पाँचवें सूत्रका अवतरण और पाँचवाँ सूत्र । ३९२
- ११ जरा और मृत्युके वशमें पडा हुआ मनुष्य सर्वदा मूढ बना  
रहता है, इसलिये वह श्रुतचारित्र धर्म को नहीं जानता है । ३९२

विषय	पृष्ठाङ्क
१२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र ।	३९२
१३ आत्मकल्याणार्थी मनुष्य आतुर प्राणियों को देखकर, अप्रमत्त हो, संयमाराधनमें तत्पर रहे—इस प्रकार संयमाराधनमें तत्पर रहनेके लिये शिष्यको आज्ञा देना ।	३९३
१४ सप्तम सूत्र ।	३९४
१५ ' यह संसारपरिभ्रमणरूप दुःख सावधक्रियाके अनुष्ठानसे होता है, ऐसा जानकर आत्मकल्याणके लिये अभ्युद्यत रहो ' इस प्रकार शिष्यके प्रति कथन । मायी और प्रमादी वारंवार नरकादियातना को प्राप्त करता है । जो पुरुष शब्दादि—विषयोंमें रागद्वेषरहित होता है, माया एवं प्रमाद से दूर रहता है, वारंवार मरणजनित दुःखके आने की आशंकासे भयभीत रहता है; वह श्रुतचारित्र धर्ममें जागरूक हो मरणसे छूट जाता है ।	३९४-३९५
१६ अष्टम सूत्र ।	३९५
१७ संसारी जीवोंके दुःखों के जाननेवाले, कामभोगजनित प्रमादोंसे रहित, पाप कर्मों से निवृत्त वीर पुरुष आत्माके उद्धार करनेमें समर्थ होते हैं ।	३९६
१८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र ।	३९६
१९ जो शब्दादि विषयों में होनेवाला सावध कर्म के ज्ञाता हैं वे निरवध क्रियारूप संयम में होनेवाले दुःखों के सहन की उप-योगिता को भी जाननेवाले हैं, और जो निरवधक्रियारूप संयममें दुःखों के सहन की उपयोगिता को जाननेवाले हैं वे शब्दादिविषयोंमें होनेवाले सावध कर्म के भी ज्ञाता हैं ।	३९७-३९९
२० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र ।	३९९
२१ कर्मरहित मुनिको नारकादि व्यवहार नहीं होता है; क्यों कि उपाधिका जनक कर्म है ।	३९९-४०१
२२ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र ।	४०२
२३ कर्मको संसारका कारण जानकर कर्मके कारण प्राणातिपातादि का त्याग करे ।	४०२-४०३



## विषय

## पृष्ठाङ्क

२४ बारहवाँ सूत्र ।

४०३

२५ मुनि कर्मस्वरूपका पर्यालोचन कर सर्वज्ञ-जिन सम्बन्धी उपदेश, या संयमको स्वीकार कर रागद्वेषसे रहित हो वीतराग हो जाते हैं ।

४०३

२६ तेरहवाँ सूत्र ।

४०४

२७ कर्मके कारण रागद्वेषका ज्ञानपूर्वक परित्याग कर, संसारी लोगों को विषयकषायों से व्यामोहित जान कर, तथा विषयाभिलाष-रूप लोकसंज्ञाका वमन कर मतिमान् मुनि संयमाराधनमें तत्पर रहे, संयम ग्रहण कर पश्चात्ताप न करे । उद्देशसमाप्ति । ४०४-४०५

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

\*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

१ प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन, और द्वितीय उद्देशका प्रथम सूत्र ।

४०६

२ प्राणियों के जन्मवृद्धिका विचार करो; सभी प्राणियों को सुखप्रिय होता है और दुःख अप्रिय होता है - इस वस्तु को समझो । इस प्रकार विचार करनेवाला प्राणी अतिविद्य हो कर - 'निर्वाणपद या वहां तक पहुंचानेवाले सम्यग्दर्शन आदि परम हैं' ऐसा जान कर परमार्थदर्शी बनकर सावध्य कर्म नहीं करता ।

४०६-४०९

३ द्वितीय सूत्र ।

४१०

४ इस मनुष्यलोकमें बन्धन के कारणभूत मनुष्यों के साथ के सम्बन्धों को छोड़ो । आरम्भजीवी मनुष्य ऐहिक-पारलौकिक दुःखोंको भोगनेवाले होते हैं । कामभोगों में अभिलाषा रखनेवाले जीव अष्टविध कर्मों का संचय करते रहते हैं और काम-भोगादिजन्य कर्मरजसे संश्लिष्ट हो बारंवार गर्भगामी होते हैं । ४१०-४११

५ तृतीय सूत्र ।

४१०

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- ६ अज्ञ मनुष्य मनोविनोद के निमित्त प्राणियोंका संहार कर आनंद मानता है। बालों-अज्ञों का संग व्यर्थ है। उनके संग से तो द्वेषकी ही वृद्धि होती है। ४११-४१२
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र। ४१३
- ८ बालों के संगसे द्वेष ही बढ़ता है; इस हेतु अतिविद्य-सम्यग्ज्ञानवान् प्राणी परम की, अर्थात्-सिद्धिगति नामक स्थान की अथवा सर्वविरतिरूप चारित्र्य की सत्ता को जान कर, नरक-निगोदादिके विविध दुःखोंके ज्ञानसे युक्त हो, पापानुबन्धी कर्म नहीं करता है, न दूसरों से कराता है, न करनेवाले का अनुमोदन ही करता है। वह धीरे धीरे मुनि, अग्र और मूल का विवेक कर के, कर्मों का छेदन कर निष्कर्मदर्शी हो जाता है। ४१३-४१५
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र। ४१६
- १० यह निष्कर्मदर्शी मरणसे मुक्त हो जाता है, केवली होकर दूसरों को भी मुक्त करता है। इहलोकादि भय को देखनेवाला यही मुनि कहलाता है। मुनि परमदर्शी, विविक्तजीवी और उपशान्त आदि हो कर, पण्डितमरणकी आकाङ्क्षा करता हुआ संयमाराधनमें तत्पर रहे। ४१६-४१८
- ११ छठा सूत्र। ४१८
- १२ पापकर्म बहुत प्रकारके कहे गये हैं, उनको दूर करनेके लिये संयममें धृति धरो। संयमपरायण मेधावी मुनि समस्त पाप कर्मोंका क्षण करता है। ४१८-४१९
- १३ सातवाँ सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र। ४१९-४२०
- १४ अनेक विषयों में आसक्तचित्त संसारो पुरुषों की इच्छाकी पूर्ति नहीं होती। ऐसे पुरुष अन्यवधादिरूप पापकर्मों में ही निरत रहते हैं। ४२०-४२४

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- १५ आठवाँ सूत्र । ४२४
- १६ इन अन्यवधादिकों का सेवन करके भरतादि-जैसे कोई २  
इन्हें निस्सार समझ कर संयमाराधन में तत्पर हुए हैं । इसलिये  
इनको निस्सार समझ कर ज्ञानी इनका सेवन नहीं करे । ४२४-४२५
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ४२५
- १८ देव भी जन्ममरणशील होते हैं; इसलिये उनके सुख को भी  
नश्वर समझ कर श्रुतचारित्रधर्मका सेवन करो । ४२६
- १९ दशम सूत्र । ४२७
- २० श्रुतचारित्र धर्म के आराधनमें तत्पर मुनि किसी की हिंसा न करे,  
न दूसरों से हिंसा करावे और न हिंसा करनेवाले की अनु-  
मोदना ही करे । ४२७
- २१ ग्यारहवाँ सूत्र का अवतरण और ग्यारहवाँ सूत्र । ४२७
- २२ स्त्रियों में अनासक्त, सम्यग्ज्ञानदर्शन चारित्रिके आराधन में तत्पर  
तथा पाप के कारणभूत कर्मों से निवृत्त मुनि वैषयिक सुख की  
जुगुप्सा करे । ४२७-४२८
- २३ बारहवाँ सूत्र । ४२९
- २४ क्रोधादि का नाश करे, लोभ का फल नरक समझे, प्राणियों की  
हिंसा से निवृत्त रहे, मोक्ष की अभिलाषा से कर्मों के कारणों को  
दूर करे । ४२९-४३०
- २५ तेरहवाँ सूत्र । ४३१
- २६ इस संसारमें समय की प्रतीक्षा न करते हुए तत्काल ही  
बाह्याभ्यन्तर ग्रन्थिको जान कर परित्याग करे; स्रोत को जान  
कर संयमाचरण करे, इस दुर्लभ नरदेहको पाकर किसी की  
भी हिंसा न करे । उद्देशसमाप्ति । ४३१-४३३

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

## ॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- १ द्वितीयोद्देशके साथ तृतीयोद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, और प्रथम सूत्र । ४३४
- २ सन्धिको जान कर लोकके क्षायोपशमिक भावलोक के विषयमें प्रमाद करना उचित नहीं है । अथवा—सन्धि को जान कर लोक को—षड्जीवनिकायरूप लोक को—दुःख देना ठीक नहीं है । ४३५
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ४३५
- ४ अपनेको जैसे सुख प्रिय है और दुःख अप्रिय, उसी प्रकार सभी प्राणियों को है । इसलिये किसी भी प्राणी की न स्वयं घात करे, न दूसरों से घात करावे, न घात करनेवाले की अनुमोदना ही करे । ४३५-४३६
- ५ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । ४३७
- ६ मुनित्व किसे प्राप्त होता है । ४३७-४४०
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ४४०-४४१
- ८ ज्ञानी पुरुष चारित्र्यमें कभी भी प्रमाद न करे, जिनप्रवचनोक्त आहारमात्रा से शरीर—यापन करे । ४४१-४४२
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ४४३
- १० मुनि उत्तम, मध्यम एवं अधम इन सभी रूपों में वैराग्ययुक्त होवे । ४४४
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ४४५
- १२ जो मुनि जीवोंकी गति और आगतिको जान कर रागद्वेषसे रहित हो जाता है, वह समस्त जीवलोकमें छेदन, भेदन, दहन और हनन—जन्य दुःखों से रहित हो जाता है । ४४५-४४७
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र ४४८
- १४ मिथ्यादृष्टि जीव भूतकाल और भविष्यत्काल सम्बन्धी अवस्थाओं को नहीं जानते हैं । उन्हें यह नहीं ज्ञात होता कि इसका भूत-काल कैसा था और भविष्यत्काल कैसा होगा ?, कोई २ मिथ्यादृष्टि तो ऐसा कहते हैं कि जैसा इस जीव का अतीतकाल था वैसा ही भविष्यत्काल होगा । ४४८

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- १५ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ४४९
- १६ तत्त्वज्ञानो जीव अतीतकालिक और भविष्यत्कालिक पदार्थों का चिन्तन नहीं करते, वे तो वर्तमानकाल के ऊपर ही सावधानता से दृष्टि रखते हैं । इसलिये मुनि विशुद्धाचारी या अतीतानागत कालके संकल्प से रहित हो कर, निरतिचार संयमकी आराधना कर पूर्वोपाजित सकल कर्मोंका क्षण करे । ४५०-४५१
- १७ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र । ४५१-४५२
- १८ अरति और आनन्दकी असारता का विचार कर, उनके विषय में विचलित न होता हुआ ध्यान मार्ग में विचरण करे, तथा सभी प्रकार के हास्योंका परित्याग कर आलीनगुप्त होते हुए संयमानुष्ठान में तत्पर रहे । ४५२-४५५
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ४५५
- २० पुरुष अपना मित्र अपने ही है। बाहरमें मित्र खोजना व्यर्थ है। ४५५-४५७
- २१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४५७-४५८
- २२ जो पुरुष कर्मों के दूर करनेकी इच्छावाला है वह कर्मों को दूर करनेवाला है और जो कर्मों को दूर करनेवाला है वह कर्मों के दूर करने की इच्छावाला है । ४५८-४५९
- २३ बारहवें सूत्रका अवतरण और बारहवां सूत्र । ४५९-४६०
- २४ अपनी आत्माको बाह्य पदार्थों से निवृत्त कर, उसे ज्ञानदर्शन-चारित्र से युक्त कर पुरुष दुःखसे मुक्त हो जाता है । ४६०-४६१
- २५ तेरहवां सूत्र । ४६१
- २६ सत्यको-अर्थात्-गुरु की साक्षिता से गृहीत श्रुतचारित्र धर्म सम्बन्धी ग्रहणी और आसेवनी शिक्षा को, अथवा आगमको विस्मृत न करते हुए तदनुसार आचरण करो । सत्यका अनुसरण करनेवाला मेधावी संसार समुद्रका पारगामी होता है और ज्ञानादियुक्त होने से श्रुतचारित्र धर्मको ग्रहण कर वह मुनि मोक्षपददर्शी होता है । ४६२

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- २७ चौदहवें सूत्रका अवतरण और चौदहवां सूत्र । ४६३
- २८ रागद्वेष का वशवर्त्ती जीव क्षणभङ्गुर जीवनके परिवन्दन, मानन और पूजनके लिये प्राणातिपात आदि असत्कर्मों में प्रवृत्ति करते हैं। इस प्रकार वे परिवन्दन, मानन और पूजनके विषय में प्रमादशील हो जाते हैं, प्रमादी हो जन्म जरा मरणरूप दुःखार्णवमें अपने को डुबो देते हैं, अथवा—इस प्रकार वे उन परिवन्दनादिकों में आनन्द मानते हैं; परंतु वे परिवन्दनादिक उनके हितके लिये नहीं होते । ४६३-४६४
- २९ पन्द्रहवें सूत्रका अवतरण और पन्द्रहवां सूत्र । ४६४-४६५
- ३० ज्ञानचारित्र्युक्त मुनि दुःखमात्रासे स्पृष्ट होकर भी व्याकुल नहीं होता । हे शिष्य ! तुम पूर्वोक्त अर्थ अथवा वक्ष्यमाण अर्थ को अच्छी तरह समझो । रागद्वेषरहित मुनि लोकालोक प्रपञ्च से मुक्त हो जाता है । उद्देशसमाप्ति । ४६५-४६६

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

\*

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

- १ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्ध प्रतिपादन और प्रथम सूत्र । ४६७-४३८
- २ शुभाध्यवसायपूर्वक संयमके आराधनमें तत्पर मुनि क्रोध, मान माया और लोभको दूर करनेवाला होता है; यह बात तीर्थङ्करों ने कही है । तीर्थङ्करों के उपदेशका अनुसरण करनेवाला साधु आदान का—अष्टादश पापस्थानों का, अथवा कषायों का — वमन करनेवाला और स्वकृत कर्मों का नाश करनेवाला होता है । ४६८-४७२
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ४७२-४७३
- ४ जो एक को जानता है वह सबको जानता है, जो सबको जानता है वह एकको जानता है । ४७४-४७५
- ५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ४७५



## विषय

## पृष्ठाङ्क

- ६ प्रमादी को सबसे भय रहता है और अप्रमादीको किसीसे भी नहीं ! ४७५-४७७
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ४७७-४७८
- ८ जो एकका उपशम करता है वह बहुतका उपशम करता है,  
जो बहुतका उपशम करता है वह एकका उपशम करता है । ४७८-४७९
- ९ पांचवें सूत्रका अवतरण और पांचवां सूत्र । ४७९
- १० धीर मुनि-षड्जीवनिकायलोकके दुःखकारण कर्मोंको जानकर,  
पुत्रकलत्रादि तथा हिरण्यसुवर्णादिकी ममता छोड़कर चारित्र्यको  
ग्रहण करते हैं और परसे पर जाते हैं, ऐसे मुनि अपने जीवन  
की अभिलाषा नहीं रखते हैं । ४८०-४८५
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ४८५
- १२ एकका विवेचन करते हुए दूसरोंका भी विवेचन करता है,  
दूसरोंका विवेचन करते हुए एकका भी विवेचन करता है । ४८६-४८७
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ४८७
- १४ मोक्षाभिलाषरूप श्रद्धावाला, जैनागमके अनुसार आचरण करता  
हुआ, मेधावी अप्रमत्त संयमी क्षपकश्रेणीको प्राप्त करता है । ४८७-४८८
- १५ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ४८८
- १६ षड्जीवनिकायके स्वरूपको जिनोक्त प्रकारसे जानकर, जिससे  
षड्जीवनिकाय लोकको किसी प्रकारका भय न हो उस प्रकारसे  
संयमाराधन करे । ४८८-४८९
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ४८९
- १८ शस्त्र परसे पर है और अशस्त्र परसे पर नहीं है । ४८९-४९१
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ४९१
- २० भावशस्त्र परसे पर होता है, अर्थात्-जो क्रोधदर्शी होता है  
वह क्रमशः तिर्यग्दर्शी=निगोदभवसम्बन्धी दुःखोंको देखनेवाला  
होता है । ४९२-४९४
- २१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४९४

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- २२ पूर्वोक्त मेधावी मुनिको चाहिये कि क्रोधसे लेकर मोह तकके भावशस्त्रों का परित्याग कर क्रोधादिकके फलभूत गर्भदुःखादिसे लेकर निगोददुःखपर्यन्त सभी दुःखोंको दूर करे—यह बात भगवान् तीर्थङ्करने कही है । ४९४-४९५
- २३ बारहवें सूत्रका अवतरण और बारहवां सूत्र । ४९५
- २४ क्रोधादिको दूर करनेवाला अपने पूर्वोपार्जित कर्मोंका क्षपण करनेवाला होता है । ४९६
- २५ तेरहवें सूत्रका अवतरण और तेरहवां सूत्र । ४९६
- २६ पश्यकको, अर्थात्—केवलोको उपाधि, अर्थात्—द्रव्योपाधि भावोपाधि, अथवा—कर्मजनित नरकादिभव होता है क्या?; पश्यकको उपाधि नहीं है । उद्देशसमाप्ति । ४९६-४९९

॥ इति तृतीयाध्ययनम् ॥

\*

॥ अथ चतुर्थाध्ययनम् ॥

॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

- १ तृतीय अध्ययनके साथ चतुर्थ अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन । ५००
- २ प्रसङ्गतः सम्यक्तत्त्वका निरूपण । ५००
- ३ सम्यक्तत्त्व शब्दकी सिद्धि, सम्यक्तत्त्वका लक्षण, सम्यक्तत्त्वके लक्षणके विषयमें वादियों की विप्रतिपत्तिका निरसन । ५००-५११
- ४ सम्यक्तत्त्वका द्वैविध्य और दशविधत्वका सविस्तर विवरण । ५१२-५२८
- ५ सम्यक्तत्त्वकी स्थिति । ५२९
- ६ सम्यक्तत्त्वके प्रादुर्भावकी व्यवस्था । ५२९-५३०
- ७ सम्यक्तत्त्वका अन्तरकाल । ५३०
- ८ सम्यक्तत्त्वका फल । ५३१-५५९
- ९ सम्यक्तत्त्वप्राप्तिका क्रम । ५५९-५७२

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- १० सम्यक्त्वमोहनीयका स्वरूप । ५७३-५७५
- ११ मिश्रमोहनीय । ५७६
- १२ मिथ्यात्वमोहनीय । ५७६-५८४
- १३ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ५८५
- १४ सभी तीर्थङ्करोंद्वारा प्रतिपादित सम्यक्त्वका निरूपण । ५८५-५८८
- १५ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ५८९
- १६ यह सर्वप्राणातिपातविरमणादिरूप धर्म-शुद्ध, नित्य और शाश्वत है । इस धर्मको भगवान् ने षड्जैविकायरूप लोकको दुःख-दावानलके अन्दर जलते हुए देखकर प्ररूपित किया है । भगवान् ने इस धर्मका प्ररूपण उत्थित अनुत्थित आदि सबोंके लिये किया है । ५८९-५९३
- १७ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ५९३
- १८ भगवान् का वचन सत्य ही है, भगवान् ने वस्तुका स्वरूप जिस प्रकार प्रतिपादन किया है वह वस्तु वैसी ही है-इस प्रकारके श्रद्धानलक्षण सम्यक्त्वका प्रतिपादन केवल आर्हतागममें ही कहा गया है; अन्यत्र नहीं ! ५९३-५९४
- १९ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ५९५
- २० उस सम्यक्त्वको प्राप्त कर, धर्मको उपदेश-आदि उपायद्वारा जान कर सम्यक्त्वको प्रशम-संवेगादिद्वारा प्रकाशित करे, सम्यक्त्वका परित्याग न करे । ५९५-५९६
- २१ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ५९७
- २२ ऐहिक और पारलौकिक इष्ट-अनिष्ट शब्दादि विषयोंमें वैराग्य रखे । ५९७
- २३ छठा सूत्र । ५९८
- २४ लोकैषणा न करे । ५९८-५९९
- २५ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ५९९
- २६ जिसको लोकैषणा नहीं है उसको सावध-व्यापारमें प्रवृत्ति कहाँसे

हो ! अथवा—जिसको यह सम्यक्त्वपरिणति नहीं है उसको सावधानुष्ठानसे रहित करनेवाली विवेकयुक्त परिणति कहांसे हो ! ५९९-६००

२७ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ६००

२८ इस सम्यक्त्वको जो मैंने कहा है उसे तीर्थङ्करोंने देखा है, गणधरोंने सुना है, लघुकर्मा भव्यजीवोंने माना है; ज्ञानावरणीय के क्षयोपशमसे भव्यजीवोंने जाना है । ६००-६०१

२९ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ६०१

३० जिनवचनमें श्रद्धारूप सम्यक्त्वके अभावसे मातापिता आदिके साथ सांसारिक संबन्ध रखता हुआ, मृत्युद्वारा उनसे वियुक्त होता हुआ, या शब्दादि विषयोंमें आसक्ति करता हुआ मनुष्य एकेन्द्रियादिक भवों में भटकता रहता है । ६०१

३१ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ६०२

३२ दिन-रात मोक्षप्राप्तिके लिये उद्योगयुक्त और सर्वदा उत्तरोत्तर प्रवर्द्धमान हेयोपादेयविवेकपरिणामसे युक्त होते हुए तुम प्रमत्तों को—असंयतोंको आर्हत धर्मसे बहिर्भूत समझो; और पञ्चविध प्रमादोंसे रहित हो मोक्षप्राप्तिके लिये अविच्छिन्न प्रयत्न करो, अथवा—अष्टविध कर्मशत्रुओंको जीतनेके लिये पराक्रम करो । उद्देशसमाप्ति । ६०२-६०४

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

\*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

१ प्रथम उद्देशके साथ द्वितीय उद्देशका संबन्ध—प्रतिपादन; प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६०५

२ जो आस्रव-कर्मबन्धके कारण हैं वे परिस्रव-कर्मनिर्जराके कारण हो जाते हैं, और जो परिस्रव-कर्मनिर्जराके कारण हैं वे आस्रव-

कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं। जो अनास्रव-कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हैं वे अपरिस्रव-कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं, जो अपरिस्रव-कर्मबन्धके कारण हैं वे अनास्रव-कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हो जाते हैं।

६०६-६१५

३ द्वितीय सूत्र।

६१५

४ 'जो आस्रव हैं वे परिस्रव हैं जो परिस्रव हैं वे आस्रव हैं, जो अनास्रव हैं वे अपरिस्रव हैं जो अपरिस्रव हैं वे अनास्रव हैं'-इन पदोंको जानता हुआ ऐसा कौन मुनि है जो षड्जीवनिकायको बँधते हुए और मुक्त होते हुए जिनागमानुसार जान कर, तथा सभी तीर्थङ्करोंद्वारा भिन्न-भिन्नरूपसे प्रतिबोधित बन्धकारण और निर्जराकारणको जानकर धर्माचरणमें प्रवृत्त न हो !

६१५-६१६

५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र।

६१६

६ प्रवचनज्ञानसे युक्त मुनि, हेयोपादेयको तथा यथोपदिष्ट धर्म को जाननेवाले संसारियों के लिये उपदेश देते हैं। ज्ञानीका उपदेश सुनकर, आर्त्त अथवा प्रमत्त भी प्रबुद्ध हो जाते हैं। मैंने जो कुछ कहा है और मैं जो कुछ कहता हूँ वह सत्य ही हैं। मैंने यह सब भगवान्से सुनकर ही कहा है। मोक्षाभिलाषीको इसमें सम्यक्त्व-श्रद्धान रखना चाहिये।

६१६-६२०

७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।

६२०-६२१

८ संसारी जीव मृत्युसे नहीं बच सकते। वे धर्मसे बहिर्भूत होनेके कारण इच्छाके अधीन रहते हैं, अति-असंयमी होते हैं, काल-मृत्युसे गृहीत होते हैं, अथवा-आगामी वर्षमें या उसके बाद के वर्षोंमें धर्माचरण करनेके संकल्प करते रहते हैं, और धान्यादि संग्रह करनेमें ही लगे रहते हैं; ऐसे संसारी जीव अनन्तवार एकेन्द्रियादिक भवोंमें जन्म लेते रहते हैं।

६२१-६२४

९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।

६२४

१० इस लोकमें कितनेक जीवोंको वारंवार उत्पन्न होनेके कारण



- उनसे परिचय हो जाता है, नरकादि स्थानोंमें उत्पन्न हुए वे जीव नरकादि सम्बन्धी दुःखों का अनुभव करते हैं। ६२४-६२५
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र। ६२५
- १२ क्रूरकर्म करनेवाला जीव बहुतकाल तक नरकमें रहता है और क्रूरकर्म नहीं करनेवाला जीव कभी भी नरकमें नहीं जाता है। ६२६
- १३ सातवाँ सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र। ६२७
- १४ चतुर्दशपूर्वधारी और केवलज्ञानीके कथनमें थोड़ासा भी अन्तर नहीं होता ! ६२७-६२८
- १५ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र। ६२८
- १६ इस मनुष्यलोकमें कितनेक श्रमण ब्राह्मण—‘सभी प्राणी, सभी भूत, सभी जीव और सभी सत्त्व हनन करनेयोग्य हैं, हनन करने के लिये आज्ञा देनेयोग्य हैं, हनन करनेके लिये ग्रहण करने योग्य हैं और विषशस्त्रादिद्वारा मारने योग्य हैं; इसमें कोई दोष नहीं है’ इस प्रकार कहते हैं। यह सब अनार्यवचन ही है। ६२८-६३१
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र। ६३२
- १८ सभी प्राणी, सभी भूत—आदि हनन करनेके योग्य हैं, इत्यादि जो कोई श्रमण—ब्राह्मण कहते हैं, उनका यह कथन अनार्यवचन है’ इस प्रकार आर्योंका कथन है। ६३२-६३३
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र। ६३४
- २० ‘सभी प्राणी, सभी भूत आदि हनन करनेयोग्य नहीं हैं—इत्यादि कथन आर्योंका है’—इस प्रकार स्वसिद्धान्तप्रतिपादन। ६३५-६३६
- २१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवाँ सूत्र। ६३६
- २२ दुःख जैसे अपने लिये अप्रिय है उसी प्रकार वह सभी प्राणी, भूत—आदिके लिये भी अप्रिय है। अतः किसीको दुःख नहीं देना चाहिये। उद्देशसमाप्ति। ६३६-६३८

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥



## ॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

- १ द्वितीय उद्देशके साथ तृतीय उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६३९
- २ धर्मसे बहिर्भूत लोगोंकी उपेक्षा करो, ऐसे लोगोंकी उपेक्षा करनेवाला मनुष्य ही विद्वान् है । ६३९-६४०
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ६४१
- ४ विद्वान् मनुष्य मनोवाक्कायके सावद्यन्यापाररूप दण्डके त्यागी होते हैं, अष्टविध कर्मोंके त्यागी होते हैं, उनके शरीर शोभा संस्कार आदिसे रहित होते हैं, अतएव वे सरल होते हैं एवं आरम्भजनित दुःखोंके अभिज्ञ होते हैं । विद्वान्के इस स्वरूपको सम्यक्त्वदर्शी-केवलीने कहा है । ६४१-६४६
- ५ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । ६४६-६४७
- ६ सम्यक्त्वदर्शी मुनि-सर्वज्ञ, यथावस्थित अर्थको प्रतिबोधित करने-वाले तथा अष्टविध कर्मोंको दूर करनेमें कुशल होते हुए सभी प्रकारसे कर्मोंको जानकर ज्ञ और प्रत्याख्यानरूप दो प्रकारकी परिज्ञाको कहते हैं । ६४७-६४८
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ६४८
- ८ इस मनुष्यलोकमें आर्हत आगमका श्रवण, मनन और समाराधन करनेवाला, हेयोपादेयके विवेकमें निपुण, रागद्वेषरहित मनुष्य आत्माको स्वजन-धन-शरीरादिसे भिन्न समझकर शरीरमें आस्था न रखे । ६४९-६५४
- ९ पञ्चम सूत्र । ६५४
- १० तपस्या-आदिके द्वारा शरीरका शोषण करे, शरीरको जीर्ण बना दे । ६५४
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ६५५
- १२ जैसे अग्नि जीर्णकाष्ठोंको भस्म कर डालती है उसी प्रकार आत्मा के शुभ परिणाम सम्यग्दर्शनादिमें सावधान और शब्दादि

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- विषयोंमें रागरहित मनुष्य ज्ञानावरणीयादि अष्टविध कर्मोंको भस्म कर डालता है । ६५५
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ६५६
- १४ मुनि इस मनुष्यलोकको परिमित आयुवाला जानकर प्रथम गुणकी वृद्धि करके क्रोधादि कषायोंका त्याग करे । ६५६
- १५ आठवां सूत्र । ६५७
- १६ हे मुनि ! क्रोधादिवश त्रिकरण-त्रियोगसे प्राणातिपात करनेसे जो प्राणियोंको दुःख होता है, या क्रोधादिसे प्रज्वलित मनवाले जीवको जो मानसिक दुःख होता है उसको समझो, और क्रोधजनित कर्मविपाकसे भविष्यत्कालमें जो दुःख होता है उसे भी समझो । ऐसे क्रोधी व्यक्ति भविष्यत्कालमें नरकनिगोदादि-भयसंबन्धी दुःखोंको भोगते हैं । दुःखागमके भयसे कांपते हुए जीवोंको तुम दयादृष्टिसे देखो । ६५७-६६१
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ६६१
- १८ जो भगवान् तीर्थङ्करके उपदेशमें श्रद्धायुक्त हैं, और उनके उपदेश को धारण करनेके कारण क्रोधादिकषायरूप अग्निके प्रशान्त हो जानेसे शीतीभूत हो गये हैं, अतएव जो पापकर्मोंके विषयमें निदानरहित हैं, वे ही मोक्षमुखके भागी कहे गये हैं । ६६१-६६४
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ६६४
- २० हे शिष्य ! जिसलिये क्रोधादिकषायोंसे युक्त जीव अनन्त दुःख पाता है, इसलिये तुम आर्हतागम परिशीलन-जनित सम्यग्ज्ञानसे युक्त अतिविद्वान् होकर क्रोधादिकषायजनित सन्तापसे अपनेको बचाओ । उद्देशसमाप्ति । ६६४-६६५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

## ॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ तृतीय उद्देशके साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६६६
- २ मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयमको छोड़कर और संयमको प्राप्तकर, शरीरको प्रथम प्रव्रज्याकालमें साधारण तपसे, बादमें प्रकृष्ट तपसे, और अन्तमें पण्डित मरणद्वारा शरीरत्यागकी इच्छासे युक्त हो मासार्द्धमास क्षपणादि तपोसे पीडित-कृश करे । ६६६-६६७
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ६६८
- ४ उपशमका आश्रयण करके कर्मविदारणमें समर्थ, संयमाराधनमें खेदरहित, जीवनपर्यन्त संयमाराधनमें तत्पर और समिति एवं सम्यग्ज्ञानादि गुणोंसे युक्त हो कर मुनि सर्वदा संयमाराधनमें प्रयत्नयुक्त रहे । ६६८
- ५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ६६८-६६९
- ६ मोक्षगामी बीरोंका यह संयमरूप मार्ग कठिनतापूर्वक सेवनीय है । ६६९
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ६६९
- ८ अन्तप्रान्त आहारादिसे और अनशनादिसे अपने शरीरके मांस शोणितको सुखाओ । इस स्वशरीरशोषक मोक्षार्थी पुरुषको तीर्थङ्करोंने कर्मविदारण करनेमें समर्थ और श्रद्धेयवचन कहा है । और जो ब्रह्मचर्य महाव्रतमें तत्पर होकर कर्मोपचयका क्षपण करता है वह भी श्रद्धेयवचन है । ६६९-६७०
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ६७०
- १० साधु विषयोंसे अपनी इन्द्रियोंको हटा कर भी ब्रह्मचर्यमें स्थित हो कर भी और श्रद्धेयवचन हो कर भी यदि शब्दादि विषयभोगोंमें आसक्त होता है तो वह बाल अपने कर्मबन्धको काटनेमें समर्थ नहीं होता ! वह बाल मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयम सम्बन्धको नहीं छोड़ पाता ! आत्महितको



## विषय

## पृष्ठाङ्क

- नहीं जाननेवाला उस बालको भगवान् तीर्थङ्करके उपदेशरूप प्रवचनका अथवा सम्यक्तत्वका लाभ नहीं होता ! ६७०-६७५
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ६७५
- १२ जिसको पूर्वकालमें सम्यक्तत्व नहीं मिला है और भविष्यत्कालमें भी जिसे सम्यक्तत्व नहीं मिलनेवाला है उसे वर्तमानमें सम्यक्तत्व कहांसे मिले ? ६७५-६७७
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ६७७
- १४ जो भोगविलाससे रहित होता है वही जीवाजीवादि पदार्थोंका सम्यग्ज्ञाता तत्त्वज्ञ आरम्भसे उपरत होता है । यह आरम्भसे उपरमण होना ही सम्यक्तत्व है । इस आरम्भोपरमणसे जीव घोर दुःखजनक कर्मबन्धको, वधको और दुस्सह शारीरिक परितापको नहीं पाता है । अथवा जिस आरम्भसे जीव घोर दुःखजनक कर्मबन्ध और वधको तथा दुस्सह शारीरिक मानसिक परिताप को पाता है । ६७७-६८०
- १५ आठवें सूत्रका अवतरण आठवां सूत्र । ६८०
- १६ हिरण्यरजत मातापिता आदिका सम्बन्धरूप अथवा प्राणातिपातरूप बाह्य आस्रवको और विषयाभिलाषरूप आन्तर स्रोतको रोक कर इस लोकमें मनुष्योंके बीच मोक्षाभिलाषी हो सावद्यव्यापारका परित्याग करे । अथवा इस लोकमें मनुष्योंके बीच बाह्य स्रोतको छिन्न कर निष्कर्मदर्शी हो जावे । ६८०-६८२
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ६८२
- १८ ज्ञानावरणीयादिक कर्म अवश्यमेव स्व-स्वफलजनक होते हैं-ऐसा जानकर आर्हतागमजनित सम्यग्ज्ञानवान् मुनि कर्मबन्धके कारण सावद्य व्यापारको छोड़ता है । ६८२-६८३
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ६८३
- २० हे शिष्य ! जो कोई कर्मविदारण करनेमें उत्साहयुक्त, समिति-युक्त, स्वहितमें उद्योगयुक्त अथवा-सम्यग्ज्ञानादियुक्त, सर्वदा

## विषय

## पृष्ठाङ्क

संयमाराधनमें सावधान, हेयोपादेयके ऊपर सर्वदा दृष्टि रखने-  
वाले, अव्याबाध आनन्दस्वरूप मोक्षके अभिलाषी और कषायों  
से निवृत्त होते हुए यथावस्थित लोककी-कर्मलोक अथवा विष-  
यलोककी उपेक्षा करते हुए थे, वे चाहे पूर्व-आदि किसी भी  
दिशामें रहे हुए हों; सत्य मार्गमें ही स्थित थे ।

६८४-६८७

२१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र ।

६८७

२२ वीर-समित-आदि विशेषणोंसे युक्त उन महापुरुषोंके ज्ञानका  
वर्णन हम आगे करेंगे । क्या उनको उपाधि है ? पश्यकको उपाधि  
नहीं होती है । उद्देशसमाप्ति ।

६८७-६८८

२३ चतुर्थ उद्देशकी टीकाका उपसंहार ।

६८९-६९०

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥



## ॥ अथ शुद्धिपत्रम् ॥

अशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
निखिलजीवभेदेन	निखिलजीवभेदज्ञेन	४	१
- द्यनुभवकर्तृत्वञ्च ।	- द्यनुभावनकर्तृत्वञ्च ।	१४	५
परिचितः पिता पितृव्यादिः ।	परिचितः । अथवा पूर्व- संस्तुतः पितापितृव्यादिः ।	१६	१
मूर्च्छा	मूर्च्छां	१८	४
भे	मे	१९	२६
अहो-	अहः-	२०	३
रागाद्याविष्टचेता	रागाद्याविष्टचेताः	२८	९
-पुञ्जमित्यर्थः ।	-पुञ्ज इत्यर्थः ।	३०	८
पकरति	पकरंति	३७	२२
घटं टमिव	घटं पटमिव	४१	४
वार्द्धके	वार्द्धक्ये	४१	२९
फलंबुयारं	कलंबुयारं	४४	२४
-कारणेवयः	-कारणेव यः	४५	४
‘ पायलीकाठ ’ इति भाषा ।	( ‘ पायलीकाठ ’-इति भाषा- प्रसिद्धवत् । )	४७	१
-दिन्द्रियस्वीकारे	-दिन्द्रियत्वस्वीकारे	५०	१
सद्धि	सद्धि	५७	४
दुःखशत-	दुःखशत-	६४	७
भवति	भवति	७१	१०
उत्त्रासकोऽ-	उत्त्रासयिताऽ-	८७	८
-नर्थकरी	-नर्थकरीं	८८	३
उत्त्रासकः	उत्त्रासयिता	८८	८
सद्धि	सद्धि	९६	३
ते	तं	९६	४
एहिक-	एहिक-	१००	७
-दरति भवति	-दरतिर्भवति	१३०	२
नट्ट-	नट्ट-	१३२	५
प्रदातुकाम	प्रदातुकामः	१३५	१



अशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
शब्दादि-	शब्दादि-	१४३	४
सन्तोषादिना	सन्तोषादिना	१५२	१
-समुदाई	समुदाई	१५४	७
-गट्टी	-गट्टी	१५४	८
-विट्ट-	-विट्ट-	१५४	८
कायै-	कायै-	१४४	१६
विरूपरूपैः	विरूपरूपैः	१५७	४
पर्यालोच्य	पर्यालोच्य	१५७	७
-दण्डं	-दण्डं	१५९	१०
जम्बूस्वामिनं-	जम्बूस्वामिनं-	१६०	७
बुद्धा	बुद्धा	१६१	२
परिरक्षेदित्यर्थः ।	परिरक्षेदित्यर्थः ।	१६१	५
स्वसमानार्थमात्मबलादि-	स्वसमानार्थमात्म-		
दण्डसमारम्भो	बलादिद्वारा दण्डसमारम्भो	१६४	१
उच्चैर्गोत्रे	उच्चैर्गोत्रे	१६५	१
जानीहि सातम्	जानीहि प्रत्युपेक्ष्य सातम्	१७१	१
परिसंवेदयते	संपरिवेदयते	१७१	९
-श्चौभौ	श्चौभौ	१७८	२
परिसंवेदयते	सम्परिवेदयते	१८१	६
सूत्रे उपैतीत्यत्रैकवचन-	सूत्रे उपैतीत्यस्याऽऽवृत्त्या		
मार्षत्वात् ।	वचनविपरिणामेन		
	च यथायोग्यमन्वयः ।	१९४	२
येन यत्र	येन यत्र वा	२२३	२
तस्मिन्=	तस्मिन् स्थाने=	२२६	२
सर्द्धि	सर्द्धि	२३८	२
क्षीणमातया	क्षीयमाणतया	२४१	१६
छन्दश्च	छन्दं च	२४३	८
छन्दः	छन्दं	२४३	१७

अंशुद्धम्

शुद्धम्

पृष्ठम्

पंक्तिः

तात्पर्यम् । “ बहुं परचरे

तात्पर्यम् । तथा—‘ गृहस्था  
मे=मह्यम् अनशनादिकं न  
ददाति’ इति हेतोः वीरो न  
न कुप्येत्=न कोपं कुर्यात् ।

“ बहुं परचरे—

२६०

२

—आदानाकोपनम् ,

, आदानाकोपनम् ,

२६१

१

प्राथेयं

प्राथेयं

२६८

२

सर्वामगन्धम्=अशु—

सर्वामगन्धम्=सर्वम् अशु—२७१

२७१

८

आदिस्समाणे

अदिस्समाणे

२७३

२

आदिस्समाणे

अदिस्समाणे

२७३

३

आदिश्यमानः

अदिश्यमानः

२७३

५

‘आदिश्यमान’ इति ।

‘अदिश्यमान’ इति

२७३

७

आदिश्यमानः

अदिश्यमानः

२७३

८

द्रव्यक्षेत्रकालभावपेक्षया

द्रव्यक्षेत्रकालभावापेक्षया

२७८

५

—रनेषणीयमपि

रनेषणीयमपि

२८३

४

लद्धुं

लद्धुं

२८५

५

माद्येत

माद्येत

२८५

८

स्निह्यात्

स्निह्येत

२८५

८

—मवष्वक्केत्

—मवष्वक्केत्

२८५

९

माद्येत

माद्येत

२८६

८

माद्येत

माद्येत

२८७

१

स्निह्यात्

स्निह्येत

२८८

१

अवष्वक्केत्=

अवष्वक्केत्=

२८८

३

कुशलो

कुसलो

२९१

५

ना—

प्रा—

३२३

८

तं

तत्

३३४

८

‘त’—मित्यादि ।

‘त’—दित्यादि ।

३३४

१०

अशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
तं	तत्	३३४	१०
सहइ	सहई	३३६	७
सहइ	सहई	३३६	७
अचइ	अच्चेइ	३४३	६
पमुचइ	पवुचइ	३४३	६
वर्त्तयेत्	वर्त्तकः	३४३	७
यस्य दुर्वसुः	यस्य स दुर्वसुः	३४३	१०
वर्तमानः	वर्त्तकः	३४४	२
अणोद्धातन-	अणाद्धातन-	३५६	३
घटते=	घटते,	३६४	९
वयवं	वेयवं	३८४	७
दुःखा	दुःखा	३८९	४
विदित्वा	विदित्वा	४०५	१
मतिमान्=	मतिमान् मेधावी=	४०५	१
रागद्वेषरहित इत्यर्थः, न छिद्यते	रागद्वेषरहित इत्यर्थः, सर्वलोके=समस्तजीवलोके न छिद्यते	४४६	७
पुव्वे	पुव्वं	४४८	२
एतनुदर्शी	एतदनुदर्शी	४५०	६
स्पृष्टो सन्	स्पृष्टः सन्	४६५	६
सम्यक्त्वं	सम्यक्त्वं	५४४	५
ज्ञानावरणीया-	ज्ञानावरणीया-	५६१	१०
काष्ठहारादय-	काष्ठहारादय-	५९२	६
तिर्थकरै-	तीर्थकरै-	५९४	८
तत्परतो	तत्पुरतो	५९६	४
-कर्तव्य-	-कर्त्तव्य-	५९७	१
पुद्गल परिणा-	पुद्गलपरि-	५९७	८
बालग्नाना-	बालग्नाना-	६०९	४
भवे देवे दित्यर्थः	भवेदेवेत्यर्थः ।	६१६	४

अशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
रसायनं क्रियां,	रसायनक्रियां,	६२१	८
कर्मषु	कर्मसु	६२६	३
दोषो	दोसो	६२८	९
सर्वे	सर्वे	६३५	२
सत्त्वानां	सत्त्वानाम्	६३६	११
धर्मविदः	धर्मविद् इति	६४१	६
-कालवस्था-	-कालवस्था-	६४१	१०
अत एव	इति=अत एव	६४५	१
भवेदित्यर्थः ।	भवेत्यर्थः ।	६५४	५
श्रुत	श्रुतम्	६६५	२
दुःखेन	दुःखेन	६६९	५
निकम्पदंसी	निकम्पदंसी	६८०	२
निष्क्रान्तः	निष्क्रान्तः	६८०	८
कर्मबन्धकरणात्	कर्मबन्धकारणात्	६८२	८

॥ इति शुद्धिपत्रम् ॥

\*

प्रकाशक : श्री अणिल भारत श्वेताम्बर स्थानकवासी नैन शास्त्रोद्धार समिति  
तरङ्गथी शेक भगनलाल छगनलाल भानुमन्त्री मु. राजकोट (सौराष्ट्र)  
मुद्रक : मण्डीलाल छगनलाल शाह. नवप्रसात ग्री. प्रेस धीकांटा-अमदावाद.



## । अथाचाराङ्गसूत्रस्य द्वितीयमध्ययनम् ।

गतं प्रथमाध्ययनं, सम्पत्तिं द्वितीयमारभ्यते । अस्यायमभिसम्बन्धः- पूर्वाध्ययने पृथिव्यादिषट्कायस्वरूपं ज्ञात्वा तदारम्भनिवृत्तौ मुनिर्भवतीति दर्शितं, षट्कायारम्भनिवृत्तिश्च शब्दादिविषयविजयमन्तरेण न भवतीति लोकविजयाध्ययनमारभ्यते । अस्मिन् षडुद्देशकाः सन्ति, तत्र-स्वजनेऽभिष्वङ्गो मुनिना न कार्य इति स्वजनाभिधः प्रथमः १ । “अदृढत्वं संयमिना संयमे न विधेयम्” इत्यदृढत्वाख्यो

## । श्रीआचारङ्ग सूत्रका द्वितीय अध्ययन ।

प्रथम अध्ययन समाप्त हो चुका, अब द्वितीय अध्ययन प्रारंभ होता है । अध्ययन का संबंध इस प्रकार से समझना चाहिये कि प्रथम अध्ययन में “पृथिव्यादि षट्काय के जीवों के आरंभ से रहित मुनि होता है ” जो यह बात कही गई है सो छकाय के आरंभ की निवृत्ति, जब तक शब्दादिविषयों पर विजय प्राप्त न की जावेगी तब तक नहीं हो सकती है । इसी अभिप्राय से यह लोकविजय नामका द्वितीय अध्ययन प्रारंभ किया गया है । इसमें छह उद्देश हैं-प्रथम उद्देश में गणधर भगवान इस बातका वर्णन करेंगे कि संयमी मुनिको माता पिता आदि जो अपने इष्टजन हैं उनमें आसक्ति-ममत्वभाव नहीं रखना चाहिये १ । द्वितीय उद्देशकमें-उसे संयम में अरतिपरिणाम को दूरकर दृढता धारण करनी चाहिये कभी भी अदृढता न आने पावे इसका ख्याल रखना

## श्री आचारङ्ग सूत्रनुं णीनुं अध्ययन

પહેલું અધ્યયન પુરું થયું, હવે બીજા અધ્યયનનો પ્રારંભ થાય છે. અધ્યયનનો સંબંધ એ પ્રકારે સમજવો જોઈએ કે પ્રથમ અધ્યયનમાં “પૃથિવ્યાદિ ષટ્કાયના જીવોના આરંભથી રહિત મુનિ હોય છે. આ વાત જે કહેવામાં આવી છે તે છ કાયના આરંભની નિવૃત્તિ, જ્યાં સુધી શબ્દાદિ વિષયોથી વિજય પ્રાપ્ત નહિ થાય ત્યાં સુધી થઈ શકતી નથી. આ અભિપ્રાયથી આ ‘લોકવિજય’ નામના બીજા અધ્યયનનો પ્રારંભ થાય છે. તેમાં છ ઉદ્દેશો છે. પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ગણધર ભગવાન તે વાતનું વર્ણન કરે છે કે સંયમી મુનિએ માતા પિતા આદિ જે પોતાના ઇષ્ટજન છે તેમાં આસક્તિ-મમત્વભાવ નહિ રાખવો જોઈએ ૧. બીજા ઉદ્દેશમાં તેણે સંયમમાં અરતિપરિણામને દૂર કરી દૃઢતા ધારણ કરવી જોઈએ, કોઈ લાભ તથા અદૃઢતા આવી ન જાય તેનો ખ્યાલ રાખવો જોઈએ ૨. ત્રીજા ઉદ્દેશકમાં-

દ્વિતીયઃ ૨ । “મુનિના માનો ન કાર્યો, નિઃસારતા ચાર્થસારસ્ય ચિન્તનીયે” તિ માના-  
ર્થસારાખ્યસ્તૃતીયઃ ૩ । ‘ભોગેષુ વિરતિઃ સદા સર્વથા વિધેયા મુનિને’—તિ ‘ભોગેષુ’  
નામકથ્વર્તુઃ ૪ । સર્વસાવધાનુષ્ઠાનત્યાગિના મુનિના સંયમયાત્રાનિર્વાહાર્થં સ્વાર્થારમ્ભ-  
પ્રવૃત્તલોકનિશ્રયા વિહરણીયમિતિ ‘લોકનિશ્રયા’ નામધેયકઃ પશ્ચમઃ ૫ । एवं  
વિહરતા મુનિના પૂર્વાપર—માતાપિતૃશ્વશ્રુશ્વશુરાદિપરિચિતાપરિચિતસંયોગે મમતા ન  
વિધેયેતિ ‘લોકમમત્વા’—અ્યઃ ષષ્ઠ ઉદ્દેશઃ ૬ ।

ચાહિયે ૨ । તૃતીય ઉદ્દેશક મેં—મુનિકો માન ન કરના ચાહિયે; एवं ધના-  
દિક પરપદાર્થોં મેં સદા અસારતા કી ભાવના રાખની ચાહિયે ૩ । ચતુર્થ  
ઉદ્દેશકમેં વિષયભોગોં સે સર્વથા (મન, વચન, કાયસે) વિરતિ  
ભાવ રાખના ચાહિયે ૪ । પાંચવેં ઉદ્દેશક મેં સર્વસાવધકમોં કે અનુષ્ઠાન  
સે રહિત ઉસ સંયમી કો અપને સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે અપને  
આરમ્ભાદિકાર્ય મેં પ્રવૃત્ત—ગૃહસ્થલોગોં કે સહારે હી વિહાર કરના ચાહિયે  
૫ । છઠવેં ઉદ્દેશક મેં—લોગોં કે સહારે વિહાર કરનેવાલે ઉસ સંયમી કો  
અપને પરિચિત, અપરિચિત તથા માતા—પિતા સાસ—સસુરા આદિ સે  
મિલને કી ઉત્કંઠા મી નહીં કરની ચાહિયે ૬ ।

ભાવાર્થઃ—ઈસ દ્વિતીય અધ્યયન કે પ્રારંભ કરને કા સ્પષ્ટીકરણ  
કરતે હુણ ટીકાકાર કહતે હૈં કિ પ્રથમ અધ્યયન મેં યહ વાત નિર્દિષ્ટ  
કી ગઈ હૈં કિ મુનિયોં કો પૃથિવીકાયિક, અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક,  
વાયુકાયિક एवं વનસ્પતિકાયિક જીવોં કા યથાર્થ સ્વરૂપ જાનકર ઉનકે  
આરંભ કા સદા પરિત્યાગ કર દેના ચાહિયે, કારણ કિ જબ તક વહ

મુનિને માન ન કરવું જોઈએ, તેમજ ધનાદિક પરપદાર્થોમાં સદા અસારતાની ભાવના  
રાખવી જોઈએ ૩. ચોથા ઉદ્દેશકમાં—વિષયભોગોથી સર્વથા (મન—વચન—કાયાથી)  
વિરતિભાવ રાખવો જોઈએ ૪. પાંચમાં ઉદ્દેશકમાં—સર્વસાવધકમોના અનુષ્ઠા-  
નથી રહિત તે સંયમીએ પોતાના સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે પોતાના આરંભ-  
કાર્યમાં પ્રવૃત્ત ગૃહસ્થ લોકોના સહારાથી વિહાર કરવો જોઈએ ૫. છઠા ઉદ્દેશકમાં—  
લોકોના સહારે વિહાર કરનાર તે સંયમીને પોતાના પરિચિત અને અપરિચિત  
માતા—પિતા સાસુ—સસરા આદિથી મળવાની ઉત્કંઠા પણ ન રાખવી જોઈએ ૬.

ભાવાર્થઃ—આ બીજા અધ્યયનનો પ્રારંભ કરીને સ્પષ્ટીકરણ કરતાં ટીકાકાર  
કહે છે કે પ્રથમ અધ્યયનમાં એ વાત કહેવામાં આવે છે કે મુનિયોએ પૃથિવી-  
કાયિક, અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક જીવોનું યથાર્થ  
સ્વરૂપ જાણીને તેના આરંભનો સદા પરિત્યાગ કરી દેવો જોઈએ, કારણ કે



पृथिवीकायिकादिक एकेन्द्रिय जीवों के आरंभ से रहित नहीं होगा तब तक वह यथार्थ संयमी नहीं हो सकता, अतः इनके आरंभ का त्याग करना उसका आवश्यक कर्तव्य है। यह कर्तव्य उसका तभी निर्दोष रूपसे निभ सकता है जब कि वह इन्द्रियजयी होगा, अन्यथा इन्द्रियों के शब्दादिक विषय में लुब्ध होनेसे वह इस गुण से शून्य ही रहेगा, इसी विषय को विशेषरूपसे खुलासा करने के अभिप्राय से इस अध्ययन को छह उद्देशों में विभक्त किया है। प्रथम उद्देश में यह स्पष्ट किया गया है कि संयमी मुनि के लिये अपने मातापितादिक स्वजनो में आसक्ति भाव नहीं रखना चाहिये। द्वितीय उद्देशमें—गृहीत संयममें कभी भी अरुचिभाव नहीं करे प्रत्युत संयमभाव में दृढ़ता आती रहे ऐसा ही उसका प्रयत्न होना चाहिये। तृतीय उद्देशमें—मुनि को “मैं बड़ा तपस्वी हूँ—साधु हूँ—विद्वान् हूँ—मैं बड़े कुलका हूँ” इत्यादि बड़प्पन का अहंकार न करना चाहिये; तथा सांसारिक समस्त पदार्थों के—धनादिक के यथार्थ स्वरूप का चिन्तन करते रहना चाहिये, इस अभ्यास से उसके हृदयमें उनकी असारता का पूर्ण रूपसे भान होता रहेगा जिससे उसका मन उस तरफ कभी भी लोलुप नहीं हो सकेगा। चतुर्थ उद्देश में—विषयभोगों के वास्तविक स्वरूप का विचार करने से उसके हृदय में उनके प्रति सदा

ज्यां सुधी ते पृथिवीकायिकादिक ऐकेन्द्रिय लोवोना आरंभथी रहित नहि थशे त्यां सुधी ते यथार्थ संयमी बनी शकतो नथी. माटे तेना आरंभने त्याग करवो तेनुं आवश्यक कर्तव्य छे. आ कर्तव्य तेनुं त्यारे निर्दोष रूपथी मनाशे न्यारे ते छिन्द्रियजयी थशे. अन्यथा छिन्द्रियोना शब्दादिक विषयमां लुब्ध थवाथी ते आ शुण्णथी शून्य न गाणुशे. आ विषयने विशेष खुलासा करवा आ अध्ययनने छ उद्देशोमां विलकृत करेव छे. (१) प्रथम उद्देशमां जे स्पष्ट कर्यु छे के संयमी मुनिजे पोताना माता-पितादिक स्वजनोमां आसक्तिभाव राखवो न जेध जे. (२) भीज उद्देशमां—वीधेवां संयममां कदि पणु अरुचिभाव न करे पणु संयमभावमां दृढता आवती रहे जेवो प्रयत्न होवो जेध जे. (३) त्रीज उद्देशमां—मुनिजे “हुं मोटो तपस्वी छुं. साधु छुं, विद्वान् छुं, मोटा कुलनो छुं” इत्यादि मोटापणानो अहंकार न करवो जेध जे, तथा सांसारिक समस्त पदार्थोनो तथा धनादिकना यथार्थ स्वरूपनुं चिन्तन करता रहेतुं जेध जे, आ अभ्यासथी तेना हृदयमां तेनी असारतानुं पूर्ण रूपथी भान थतुं रहेशे जेथी तेनुं मन ते तरफ कद्दी पणु लोलुप थशे नहि. (४) चौथा उद्देशमां—विषयभोगोनो वास्तविक स्वरूप विचार करवाथी

तत्र निखिलजीवभेदेन सकलोपाधिरहितेनोत्तमगुणरञ्जितेन स्वीकृतपञ्चमहा-  
व्रतेन षट्कायसंयमोपस्थितमतिना मुनिना स्वजनादिषु नाभिष्वङ्गो विधेय इति  
प्रदर्शयति सूत्रकारः—“ जे गुणे ” इत्यादि.

मन, वचन और काय से विरति परिणाम ही जगता रहेगा। पंचम  
उद्देशमें—समस्त प्रकार के सावध कार्यों से परे रहनेवाले उस संयमी को  
अपने स्वीकृत संयमयात्रानिर्वाह के लिये, जो अपने निमित्त बनाये हुए  
आहारपानी आदि में प्रवृत्त हैं उनकी नेश्रायमें विहार करना चाहिये।  
छठवें उद्देश में—लोक के नेश्राय से विहार करते हुए भी उसके मनमें  
अपने परिचित अपरिचित परिजनों से मिलने के लिये उत्सुक परिणाम  
नहीं होना चाहिये, इन्हीं सब बातों का इन छह उद्देशों में विशेषरूप  
से खुलासा किया जावेगा।

इसमें सर्वप्रथम प्रथम उद्देशका प्रारंभ करने के लिये सूत्रकार—जीवों  
के भेदज्ञानसे समन्वित, सकल उपाधि से रहित, उत्तमोत्तमगुणविशिष्ट,  
पंचमहाव्रताराधक, छहकाय के जीवों की रक्षा करने में दत्तावधान, संयमी  
मुनिको अपने आसजन मातापितादिक में ममताभाव नहीं रखना चाहिये।  
इसका विवेचन करते हैं—‘ जे गुणे से मूलद्राणे ’ इत्यादि।

तेना हुइयमां तेना प्रति सहा मन-वचन अने कायथी विरतिपरिणाम न जगता  
रहेशे. (प) पांचमां उद्देशमां—समस्त प्रकारना सावध कार्येथी दूर रहनार ते संयमीअ  
पोताना स्वीकृत संयमयात्रा—निर्वाह भाटे न पोताना निमित्ते बनावेलां आधार-  
पाणी आदिमां प्रवृत्त छे तेनी नेश्रायमां विहार करवा जेधअ. (६) छठ्ठा उद्देशमां  
दोठनी नेश्राये विहार करवा छतां मनमां पोताना परिचित अने अपरिचित  
परिजनोंथी मणवाने उत्सुकता राखे नहि. आ अधी वातोना आ छ उद्देशमां—  
विशेष इथी खुलासा करवामां आवशे.

अेमां सर्वप्रथम—प्रथम उद्देशने प्रारंभ करवाने भाटे सूत्रकार—जोवोना  
भेदज्ञानथी समन्वित सकल उपाधिथी रहित, उत्तमोत्तमगुणविशिष्ट, पंच-  
महाव्रताराधक, छ कायना जोवोनी रक्षा करवामां दत्तावधान संयमी मुनिने पोताना  
आसजन—मातापितादिकमां ममताभाव नहि राखवे जेधअ. तेनुं विवेचन करे छे  
—‘ जे गुणे से मूलद्राणे ’ इत्यादि।



मूलम्—जे गुणे से मूलदूठाणे, जे मूलदूठाणे से गुणे इति से गुणदूठी महया परियावेणं पुणो पुणो वसे पमत्ते, तंजहा—माया मे पिया मे भइणी मे भज्जा मे पुत्ता मे धूआ मे णहुसा मे सहि-सयण-संगंथ-संथुआ मे विविक्तुवगरणपरिवट्टणभोयण-च्छायणं मे, इच्चत्थं गढिए लोए वसे पमत्ते अहो य राओ य परितप्पमाणे कालाकालसमुदूठाई संजोगदूठी अदूठालोभी आलुंप्पे सहसाकारे विणिविदूठचित्ते एत्थ सत्थे पुणो पुणो ।

छाया—यो गुणः स मूलस्थानं, यन्मूलस्थानं तद्गुणः, इति स गुणार्थी महता परितापेन पुनः पुनः वसति प्रमत्तः, तद्यथा—माता मे पिता मे भगिनी मे भार्या मे पुत्रा मे दुहिता मे स्नुषा मे सखिस्वजनसंग्रन्थसंस्तुता मे, विविक्तोपकरणपरिवर्तनभोजनाच्छादनं मे, इत्यर्थं गृद्धो लोको वसति प्रमत्तः अहश्च रात्रिं च परितप्यमानः कालाकालसमुत्थायी संयोगार्थी अर्थालोभी आलुम्पः सहसाकारः विनिविष्टचित्तः अत्र शस्त्रे पुनः पुनः ॥१॥

शब्दार्थ—जो मुनि छहकाय के जीवों के स्वरूप को भली-भाँति जानकर कृत कारित अनुमोदित एवं मन, वचन, कायसे उनके आरंभ का त्याग कर देता है वह अपने कर्तव्यमार्ग का ज्ञाता कहा जाता है और वही गुणस्थान एवं मूलस्थान के ज्ञानपूर्वक कषायादिरूप लोक पर विजय प्राप्त करनेवाला होता है। अथवा—अपनी बुद्धि से या दूसरे किसी के कथन से अथवा तीर्थंकरों के उपदेश से या किसी आचार्य के समीप सुनकर यह जान लेता है कि जो गुण है वही मूलस्थान है। जो मूल है वही गुणस्थान है। इसलिये वह गुणार्थी अपरिमित दुःखसे

शब्दार्थ—जे मुनि छ कायना लुवेना स्वरूपने लदी लांती लक्ष्मीने कृत-कारित अनुमोदित अने मन, वचन कायार्थी तेना आरंभने त्याग करे छे ते पोताना कर्तव्य मार्गने ज्ञाता कहेवाय छे, अने ते गुणस्थान तेमज मूल-स्थानना ज्ञानपूर्वक कषायादिरूप लोकपर विजय प्राप्त करनार थाय छे. अथवा—पोतानी बुद्धिथी अगर भील केछना कथनथी अथवा तीर्थंकरेना उपदेशथी अथवा आचार्यने समीपे सांलणीने जे लक्ष्मी ले छे के जे गुण छे ते मूलस्थान छे, जे मूल छे ते गुणस्थान छे. माटे ते गुणार्थी—अपरिमित दुःखथी राज-

રાગદ્વેષરૂપપ્રમત્તદશાસંપન્ન હોતા હૈ। ઇસ પ્રકાર વહ ગુણાર્થી વારંવાર વિષયમેં આસક્ત હોતા હુઆ યહ માનતા હૈ કિ-યહ મેરી માતા હૈ, યહ મેરા પુત્ર હૈ, યહ મેરી પુત્રી હૈ, યહ મેરી વહૂ હૈ, યે મેરે મિત્ર હૈ। યે મેરે માતામહ આદિ હૈ, યે મેરે સંબંધી જનોં કે સંબંધીજન હૈ, યે મેરે પરિચિત બન્ધુ હૈ, યે મેરે સુન્દર ઉપકરણ હૈ, યહ મેરા વિનિમય-એક વસ્તુકો બેંચકર ઉસકે પ્રાપ્ત મૂલ્ય સે ખરીદા હુઆ પદાર્થ હૈ, યે મેરે સ્વાને કે પદાર્થ હૈ, યે મેરે પહિરને કે કપડે હૈ। ઇસ પ્રકાર યહ જીવ ઇન પૂર્વોક્ત પદાર્થોં મેં હી પ્રમાદી બના હુઆ હૈ। ઓર ઇનકે લિયે હી રાત-દિન શારીરિક, માનસિક એવં વાચનિક અનેક કષ્ટોં કો ડોલતા હુઆ કાલ-અકાલકે વિચાર સે રહિત હોકર મનમાના કાર્ય કરતા રહતા હૈ। કારણ કિ યહ સંયોગ કા અભિલાષી હૈ। ઇસલિયે સબ પ્રકારસે ધનકા અભિલાષી બના હુઆ હૈ। અનુચિત માર્ગ સે ભી ધન કે સંગ્રહ કરને મેં જરા ભી સંકોચ નહીં કરતા હૈ। લોભરૂપી મહાસર્પ સે ગ્રસિત હો કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્ય કે જ્ઞાન સે રહિત હો કર જિસ કિસી ભી રીતિસે જો ધનકા સંગ્રહ કરતા હૈ ઉસકા નામ આલુમ્પ હૈ-યહ જીવ પ્રમાદી બનકર ઇસી પ્રકાર સે ધન કે સંગ્રહ કરને મેં લવલીન હોતા રહતા હૈ। ઇસ તરહ યહ

દ્વેષરૂપપ્રમત્તદશાસંપન્ન થાય છે. આ પ્રકારે તે ગુણાર્થી વારંવાર વિષયમાં આસક્ત થઈને માને છે કે-આ મારી માતા છે. આ મારો પુત્ર છે, આ મારી પુત્રી છે, આ મારી વહુ છે, આ મારો મિત્ર છે, આ મારા માતામહ આદિ છે. આ મારા સંબંધીજનોના સંબંધીજન છે, આ મારા પરિચિત બંધુ છે, આ મારા સુંદર ઉપકરણ છે, આ મારો વિનિમય-એક વસ્તુને વેચીને તેની કિંમતથી ખરીદેલી વસ્તુ-છે, આ મારો ખાવાનો પદાર્થ છે, આ મારા પહેરવાના કપડા છે. આ પ્રકારે આ જીવ આવા પૂર્વોક્ત પદાર્થોમાં જ પ્રમાદી બનેલો છે, અને તેના માટે જ રાત્રિન, શારીરિક, માનસિક અને વાચનિક અનેક કષ્ટોને ઉઠાવતો કાળ અકાળના વિચારથી રહિત થઈને મનમાન્યું કાર્ય કરવા લાગે છે, કારણ કે તે સંયોગનો અભિલાષી છે. તેથી બધા પ્રકારથી ધનનો અભિલાષી બની રહે છે. આ અનુચિત માર્ગથી પણ ધનનો સંગ્રહ કરવામાં જરા પણ સંકોચ કરતો નથી. લોભરૂપી મહાસર્પથી ગ્રસિત હોઈને કર્તવ્ય અકર્તવ્યના જ્ઞાનથી રહિત થઈને કોઈ પણ રીતે જે ધનનો સંગ્રહ કરે છે તેનું નામ આલુમ્પ છે. આ જીવ પ્રમાદી બનીને આ પ્રકારથી ધનનો સંગ્રહ કરવામાં રચ્યો પચ્યો રહે છે, આ



ટીકા—અસ્યાધ્યયનસ્ય અનન્તરપરમ્પરસૂત્રૈરિત્થં સમ્બન્ધઃ—અનન્તરસૂત્રસમ્બન્ધો યથા—ષટ્કાયસ્વરૂપં સમ્યગ્જ્ઞાત્વા ત્રિકરણત્રિયોગેન તદારમ્ભં પરિત્યજતિ સ મુનિઃ પરિજ્ઞાતકર્મા ભવતિ, સ એવ ચ ગુણમૂલસ્થાનજ્ઞાનપૂર્વકં કષાયાદિલોકવિજયી ભવતિ । પરમ્પરસૂત્રસમ્બન્ધો યથા—સ્ત્રબુદ્ધ્યા પરવ્યાકરણેન તીર્થદ્કારોપદેશાદન્યેષાં અપને હિત ઔર અહિત કા કુછ મી વિચાર ન કર સહસાકર્મકારી હો જાતા હૈ ઇસ પ્રકાર યહ શબ્દાદિવિષયોં મેં આસક્તચિત્ત હો ઁનકે રક્ષણકે સાધનોંકો સંગ્રહ કરનેકે લિયે અપને હિત ઔર અહિત કે વિવેક સે વિકલ બન રાત-દિન છહકાયકે જીવોંકે ઉપમર્દન કરનેમેં હી વારમ્વાર પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ ।

ટીકાર્થઃ—ઇસ અધ્યયન કા અનન્તર ઔર પરમ્પર સૂત્રોંસે સંબંધ હૈ—ઁસમેં અનન્તર સૂત્રોંકા સંબંધ ઇસ પ્રકાર હૈ—જો મુનિ છહકાય કે જીવોં કા સ્વરૂપ અછી તરહ જાનકર કૃત કારિત ઔર અનુમોદિત ઁવં મન, વચન ઔર કાયસે ઁનકે આરંભ કા ત્યાગ કર દેતા હૈ વહી અપને કર્તવ્ય કો નિર્દોષ રીતિસે પાલતા હૈ, ઔર વહી અપને તપસંયમ મેં પૂર્ણરૂપ સે નિષ્ણાત બન જાતા હૈ । ઁસા વહ સંયમી જન ગુણસ્થાન ઔર મૂલસ્થાન કો જાનતા હુઆ કષાયાદિકરૂપ લોક પર વિજય પ્રાસ કરને વાલા હો જાતા હૈ । પરમ્પર સૂત્રોંસે ઇસ અધ્યયન કા સંબંધ ઇસ પ્રકાર હૈ—વહ સંયમી જન અપની બુદ્ધિ સે યા દૂસરોં કે કથન સે અથવા તીર્થકર

રીતે પોતાના હિત અને અહિતનો જરા પણ વિચાર ન કરતાં સહસા કર્મકારી થઈ બાધ છે. તેવી જ રીતે તે શબ્દાદિ વિષયોમાં આસક્ત ચિત્ત કરીને તેના રક્ષણને માટે રક્ષણના સાધનોનો સંગ્રહ કરવામાં પોતાના હિતાહિતનો વિચાર કર્યા વગર વ્યાકુળ રાતરિવસ છકાયના જીવોનું ઉપમર્દન ( ઘાત ) કરવામાં જ વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે.

ટીકાર્થઃ—આ અધ્યયનનો અનન્તર અને પરમ્પર સૂત્રોથી સંબંધ છે. તેમાં અનન્તર સૂત્રોના સંબંધ આ પ્રકાર છે:—

જે મુનિ છકાયના જીવોનું સ્વરૂપ સારી રીતે જાણીને કૃત કારિત અને અનુમોદિત તેમજ મન, વચન, કાયથી તેના આરંભનો ત્યાગ કરે છે, તે પોતાના કર્તવ્યને નિર્દોષ રીતિથી પાળે છે, અને તે પોતાના તપસંયમમાં પૂર્ણરૂપથી નિષ્ણાત બને છે. એવો તે સંયમીજન ગુણસ્થાન અને મૂળસ્થાનનો જાણકાર કષાયાદિકરૂપ લોકપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાવાળા હોય છે. પરમ્પર સૂત્રોમાં આ અધ્યયનનો સંબંધ આ પ્રકાર છે—તે સંયમીજન પોતાની બુદ્ધિથી અગર બીજાના કથનથી અથવા તીર્થકર પ્રભુના ઉપદેશથી અથવા બીજા કોઈ આચાર્યની પાસેથી

વા કેષાશ્ચિદાચાર્યાદીનાં સમીપે ગત્વા જાનીયાત્ । કિં તદિત્યાહ 'જે ગુણે'   
 इत्यादि । यो गुणः । गुण्यते=आवर्त्यते-चतुर्गतिषु गमनागमनादिरूपेण परिणम्यते   
 आत्माऽनेनेति गुणः ।

પ્રભુ કે ઉપદેશ સે યા અન્ય કિસી આચાર્ય કે સમીપ સુનકર યહ જાન   
 લેતા હૈ કિ જો ગુણ હૈ વહી મૂલસ્થાન હૈ इत्यादि । चार गतियों-नरकगति,   
 तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति और देवगति-में गमन और आगमन रूप से   
 આત્મા જિસકે દ્વારા ભ્રમણ કરતા હૈ ઉસકા નામ ગુણ હૈ । इस गुण   
 शब्दका वाच्यार्थ-शब्दादिक विषय होता है । यह प्रत्येक इन्द्रियका   
 अपना-अपना स्वतंत्र गुण है ।

જો મુનિ છહકાય કે જીવોં કે સ્વરૂપ કો 'અપને આપ યા કિસી   
 કે ઉપદેશ સે જાનકર છકાય કે આરંભ સે વિરત હોતા હૈ વહ   
 મુનિ અપને અંગીકૃત સંયમ કા નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરને વાલા હોનેસે   
 કુશલ માના જાતા હૈ । છકાય કે આરંભ સે નિવૃત્તિ તથ તક સંભવ   
 નહીં હો સકતી કિ જબ તક વહ પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં-ચાહે વે મનોજ   
 હોં ચાહે અમનોજ-રાગદ્વેષ કરને કા ત્યાગ નહીં કરે, અતઃ યહ નિશ્ચિત   
 હૈ કિ છહકાય કે આરંભ કા ત્યાગ, પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં રાગદ્વેષ કે   
 ત્યાગ કરને સે હી હોતા હૈ । इनके विषयों में लोलुपी उनके आरंभ का

સાંભળી એવું જાણું છે કે 'જે ગુણુ છે તે મૂળસ્થાન છે' इत्यादि. चार गतिઓ   
 नरकगति, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति અને देवगतिમાં गमन અને आगमनरूपથી   
 આત્મા જે દ્વારા ભ્રમણ કરે છે તેનું નામ ગુણુ છે. આ ગુણુ-શબ્દનો વાચ્યાર્થ   
 (मुण्य अर्थ) शब्दादिक विषय थाय છે. તે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોતપોતાનો   
 સ્વતંત્ર ગુણુ છે.

જે મુનિ છ કાયના જીવોના સ્વરૂપને પોતાની જાતે, અગર બીજાના   
 ઉપદેશથી જાણીને છ કાયના આરંભથી વિરત થાય છે, તે મુનિ પોતાના   
 અંગીકૃત સંયમનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરનાર હોવાથી કુશળ માનવામાં આવે   
 છે. જ્યાં સુધી પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયો જે મનોજ કે અમનોજ હોય તેમાં રાગ   
 દ્વેષ રાખે ત્યાં સુધી છ કાયના આરંભથી નિવૃત્તિ થતી નથી. તેથી તે નિશ્ચિત   
 છે કે-છકાયના આરંભનો ત્યાગ પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોમાં રાગ દ્વેષનો ત્યાગ   
 કરવાથી જ થાય છે. તેના વિષયોમાં મગ્ન રહેનાર તેના આરંભનો ત્યાગ કરી   
 શકતા નથી.



यद्वा गुण्यते=विशिष्यते निश्चयनयेन शुद्धस्वरूपोऽप्यात्मा नरामरतिर्यगादि-  
भेदेन भिद्यते येनेति गुणः—शब्दादिरूपः कामगुणः । स एव मूलस्थानम् ।

मूलस्थानपदस्य व्युत्पत्तिभेदेन बहवोऽर्था भवन्ति । यथा—मूलं=मोहनीयं

त्याग नहीं कर सकता—“न यारंभो विणा बहा—न चारम्भो विना वधात्”  
इस वाक्य के अनुसार विना हिंसा के आरंभ नहीं होता—जहाँ हिंसा है  
वहाँ सर्व प्रकारसे संयम का आराधन नहीं है । अतः निर्दोष संयम को  
पालने के लिये छहकाय के जीवों के आरंभ करनेका त्याग अवश्य  
करना पड़ता है ।

गुण शब्दका अर्थ—शब्दादिक विषय हैं, क्योंकि इन्हींके सेवन  
से यह आत्मा चतुर्गतिरूप संसार में भटकता फिरता है । आना—जाना  
यही तो एक बड़ा भारी गमनागमन का चक्कर इस जीव के पीछे पड़ा  
हुआ है । कभी नरकमें जाकर रोता है तो कभी मानवपर्याय की प्राप्ति  
से विषयभोगोंमें अपने जन्म को निष्फल कर देता है, कभी स्वर्गमें  
जाकर वहाँ की दिव्य ऋद्धि आदि पाकर इठलाता गर्विष्ठ होता है, तो  
कभी पशुपर्याय में जाकर बिलखता है ।

यही बात—“यो गुणः” इन शब्दोंसे सूत्रकारने प्रकट की है ।

मूलस्थान शब्दका अर्थ प्रकट करने के लिये टीकाकार कहते हैं कि  
मूलस्थान शब्द के व्युत्पत्ति के भेद से अनेक अर्थ होते हैं, जैसे—“मूलं

“न यारंभो विणा बहा” न चारम्भो विना वधात्”

आ वाक्य अनुसार हिंसा विना आरंभ थतो नथी. ज्वां हिंसा छे त्यां  
सर्व प्रकारथी संयमनुं आराधन नथी, भाटे निर्दोष संयम पाणवामां छकाय  
जुवोनो आरंभ करवानो त्याग अवश्य र करवो पडे छे.

गुण शब्दको अर्थ—शब्दादिक विषय छे, कारण के तेना सेवनथी आ  
आत्मा चतुर्गतिरूप संसारमां लटकतो करे छे. जलुं—आवतुं जे तो ओक भारी  
गमनागमननुं चक्कर आ जवनो पाछा पडथुं छे. कोरि वषत नरकमां जर्ध  
रोवे छे तो क्यारेक मानवपर्यायनी प्राप्तिथी विषयभोगोमां पोताना जन्मने  
निष्फल करे छे. क्यारेक स्वर्गमां जर्ध त्यांनी दिव्यऋद्धि आदि जेधने गर्विष्ठ  
थाय छे. क्यारेक पशुपर्यायमां जर्ध रोवे छे.

आ बात—“यो गुणः” आ शब्दोथी सूत्रकारे प्रकट करी छे. मूलस्थान  
शब्दको अर्थ प्रकट करवाने टीकाकार कहे छे के—मूलस्थान शब्दना व्युत्पत्तिना  
बेदथी अनेक अर्थ थाय छे. जेम—“मूलं संसारस्तस्य स्थानमाश्रयः कारणम्”

તસ્ય સ્થાનમાશ્રયઃ । અથવા સંસારસ્ય મૂલભૂતત્વાન્મૂલમિવ મૂલં કારણં જ્ઞાના-  
વરણાદિરૂપમષ્ટવિધં કર્મ, તસ્ય સ્થાનમાધારઃ । યદ્વા મૂલમિતિ નરામરનારકતિર્ય-  
ગ્લક્ષણસ્ય સંસારસ્ય કારણં કષાયાસ્તેષાં સ્થાનમાશ્રયો મૂલસ્થાનમ્, યતો મનો-  
જ્ઞામનોજ્ઞશબ્દાદિપ્રાપ્તૌ કષાયાણામુદયો ભવતિ તેન સંસાર ઇતિ ।

યદ્વા ‘મૂલ’-મિતિ પ્રધાનં, ‘સ્થાન’-મિતિ કારણં, મૂલં ચ તત્સ્થાનં ચેતિ  
મૂલસ્થાનં, શબ્દાદિક એવ કામગુણઃ, કષાયા વા પ્રધાનં કારણં સંસારસ્ય ભવતી-  
ત્યાશયઃ ।

સંસારસ્તસ્ય સ્થાનમાશ્રયઃ કારણમ્” અર્થાત-મૂલ નામ સંસાર કા હૈ  
સ્થાન નામ કારણ કા હૈ-સંસાર કે જો કારણ હૈં उनका नाम मूलस्थान  
है । वे शब्दादिक विषय अथवा कषाय हैं । अथवा-मूल-मोहनीय का जो  
स्थान-आश्रय है उसका नाम मूलस्थान है । अथवा-संसारका मूल स्वरूप  
होनेसे मूलके जैसा जो है, वह मूल है-ज्ञानावरणादिक आठ प्रकार के  
पौद्गलिक कर्मोंका नाम मूल है और उसका जो आधार है उसका नाम  
मूलस्थान है । अथवा-मूल नाम-मनुष्यगति, देवगति, तिर्यश्चगति और  
नरकगतिरूप संसारके कारणभूत कषायोंका भी है, उनके आधार का  
नाम मूलस्थान है, वे शब्दादिक विषय हैं, क्योंकि मनोज्ञ और अमनोज्ञ  
शब्दादिक विषयोंकी प्राप्ति होने पर कषायोंका उदय होता है और इसीसे  
जीवको संसार की प्राप्ति होती है ।

પ્રધાન કારણકો મી મૂલસ્થાન કહતે હૈં, સંસાર કે પ્રધાન કારણ  
શબ્દાદિક વિષય અથવા કષાય હૈં ।

અર્થાત્ મૂળ નામ સંસારનું છે સ્થાન નામ કારણનું છે. સંસારનું જે કારણ છે  
તેનું નામ મૂળસ્થાન છે. તે શબ્દાદિક વિષય અથવા કષાય છે, અથવા મૂળ-  
મોહનીયનું જે સ્થાન-આશ્રય છે તેનું નામ મૂળસ્થાન છે, અથવા સંસારનું  
મૂળ સ્વરૂપ હોવાથી મૂળના જેવું છે, તે મૂળ છે. જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારના  
પૌદ્ગલિક કર્મોનું નામ મૂળ છે, અને તેના જે આધાર છે તેનું નામ મૂળસ્થાન  
છે. અથવા મૂળ નામ, મનુષ્યગતિ, દેવગતિ, તિર્યચગતિ અને નારકગતિરૂપ  
સંસારના કારણભૂત કષાયો પણ છે, તેના આધારનું નામ મૂળસ્થાન છે, તે  
શબ્દાદિક વિષય છે કારણ કે મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ શબ્દાદિક વિષયોની પ્રાપ્તિ થવાથી  
કષાયોનો ઉદય થાય છે, અને તેથી જીવને સંસારની પ્રાપ્તિ થાય છે.

પ્રધાન કારણને પણ મૂળસ્થાન કહે છે. સંસારનું પ્રધાન કારણ શબ્દાદિક  
વિષય અથવા કષાય છે,



ગુણ-મૂલ-સ્થાનયોઃ પરસ્પરમપેક્ષા વર્તતે યથા-યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં, યન્મૂલ-સ્થાનં તદ્ ગુણ ઇતિ તદુપાત્તાનાં વિષયકષાયાદીનામણ્ડપક્ષિવદ્ અનાદિઃ કાર્યકારણ-ભાવો યથા-પક્ષિતોઽણ્ડમ્, અણ્ડાચ્ચ પક્ષી સંજાયતે । એવમેવ મૂલસ્થાનાદુણો, ગુણાચ્ચ મૂલસ્થાનમિતિ ।

અત્ર ચ સમ્પ્રસન્નપાઠમાશ્રિત્યેવં યોજના—યો ગુણે ગુણેષુ વા વર્તતે સ મૂલ-સ્થાને મૂલસ્થાનેષુ વા વર્તતે, યથાત્મા શબ્દાદિકે કામગુણે વર્તતે સ એવ સંસાર-મૂલે કષાયાદિસ્થાને વર્તતે—ઇતિ, એવં દર્શિતરીત્યા ગુણમૂલસ્થાનાનાં કાર્યકારણ-

ગુણ ઓર મૂલસ્થાન, इनकी परस्पर में अपेक्षा है, इस बातको प्रकट करने के लिये “यो गुणः स मूलस्थानं, यन्मूलस्थानं तद् गुणः” यह वाक्य भगवान् ने कहा है । जिस प्रकार पक्षी से अण्डा पैदा होता है और अण्डासे पक्षी पैदा होता है उसी प्रकार मूलस्थान से गुण और गुणसे मूलस्थान होता है । इनका यह परस्पर कार्य-कारणभाव अनादि कालका है । पंचेन्द्रिय के विषयोंसे जीवको कषायभाव और कषायभावसे पंचेन्द्रियोंके विषयका ग्रहण होता है । “जे गुणे से मूलद्वारे” इस वाक्यमें “जे” की छाया “यः” मानकर “गुणे” को सप्तमी विभक्तिका एकवचन मानकर इस प्रकारसे भी अर्थ किया जा सकता है कि जो गुणमें स्थित है वह मूल स्थानमें स्थित है । अर्थात्—जो आत्मा शब्दादिक पांच इन्द्रियोंके विषय में लवलीन है वही आत्मा संसारके मूल कारण कषायादि स्थानमें लवलीन है । इस प्रकार इस पद्धति से गुण और मूल स्थानोंका परस्परमें सूत्रकारने कार्य-कारणभाव प्रकट किया है । “इति” शब्द

ગુણ અને મૂળસ્થાન, એની પરસ્પરમાં અપેક્ષા છે, આ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે “યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં યન્મૂલસ્થાનં તદ્ ગુણઃ” આ વાક્ય લગવાને કહ્યું છે—જે પ્રકારે પક્ષીથી ઇંડુ પેદા થાય છે અને ઇંડાથી પક્ષી પેદા થાય છે તે પ્રકાર મૂળસ્થાનથી ગુણ અને ગુણથી મૂળસ્થાન થાય છે. તેનો પરસ્પર કાર્ય-કારણ ભાવ અનાદિ કાળનો છે. પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોથી જીવને કષાયભાવ અને કષાયભાવથી પાંચ ઇન્દ્રિયોનો વિષય ગ્રહણ થાય છે. “જે ગુણે સે મૂલદ્વારે” આ વાક્યમાં “જે”ની છાયા “યઃ” માનીને “ગુણે”ને સપ્તમી વિભક્તિનું એકવચન માનીને આ પ્રકારે પણ અર્થ થાય છે કે જે ગુણમાં સ્થિત છે તે મૂળસ્થાનમાં સ્થિત છે. અર્થાત્ જે આત્મા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં રહેલો છે તે આત્મા સંસારનું મૂળ કારણ કષાયાદિ સ્થાનમાં રહેલો છે. આ પ્રકારે આવી પદ્ધતિથી ગુણ અને મૂળસ્થાનનો પરસ્પરમાં સૂત્રકારે કાર્યકારણ-

માવો વર્ણિતઃ । “યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં, યન્મૂલસ્થાનં તદ્ ગુણઃ”-ઇત્યનેન કિમા-  
યાતમિત્યાહ-“ઇતિ સ ગુણાર્થી” ઇતિ ।

ઇતિહેતૌ, યતો હિ સંસારસ્થાઃ સર્વેઽપિ પ્રાણિનો ગુણાર્થિનઃ સન્તિ, અનાદિકાલત  
આત્મનો મોહાવેશેનાવેષ્ટિત્વાત્, અતઃ સ ગુણાર્થી કષાયાદિમૂલસ્થાને વર્તતે ।  
ગુણસ્ય=શબ્દાદિગુણસ્ય અર્થઃ=પ્રયોજનં યસ્ય સ ગુણાર્થી । યદ્વા-ગુણે=શબ્દાદૌ  
અર્થોઽનુરાગો યસ્ય સ ગુણાર્થી । સર્વો હિ પ્રાણિગણઃ પ્રાયશઃ કામગુણાર્થી ભવતિ ।  
શબ્દાદિગુણગણસ્યાલાભે તં મુહુરિચ્છતિ, સમ્પ્રાપ્તસ્ય નાશે ચ શોકાવિષ્ટો ભવતિ ।  
મહતા=અપરિમિતેન પરિતાપેન=માનસિકકાચિકવાચિકેન દુઃખેન પ્રમત્તઃ, પ્રમાદોઽત્ર  
રાગદ્વેષરૂપસ્તદ્વાન્ પ્રાણી વિષયેષુ રાગાધિક્યેન પ્રવર્તતે, ઇષ્ટવિષયાપ્રાપ્તાવિષ્ટોપગમે  
હેત્વર્થ મેં હૈ-અસકા અભિપ્રાય યહ હૈ-સંસાર કે સમસ્ત પ્રાણી ગુણાર્થી  
હૈ, ક્યોંકિ યે અનાદિકાલ સે હી મોહ કે આવેશ સે યુક્ત હૈ, ઇસલિયે  
ગુણાર્થી આત્મા-કષાયાદિ મૂલસ્થાન મેં સ્થિત હી હૈ, શબ્દાદિક પાંચઇન્દ્રિયોં  
કા વિષય જિસકા પ્રયોજન હૈ વહ, અથવા શબ્દાદિક વિષયોં મેં જિસે  
અનુરાગ હૈ વહ ગુણાર્થી હૈ । પ્રાયઃ સાંસારિક સમસ્ત પ્રાણી શબ્દાદિક  
વિષયોં કા પ્રાર્થી હોતા હૈ અનકે નહીં મિલને પર અન્હેં પ્રાપ્ત કરનેકી વહ  
વાર ૨ ચેષ્ટા કરતા રહતા હૈ । મિલને પર વે નષ્ટ ન હો જાવેં-ઇસ પ્રકાર  
કા વહ પ્રયત્ન ભી કરતા રહતા હૈ । યદિ પ્રાપ્ત હુઅ વે નષ્ટ હો જાતે હૈ-તો  
અનકે અભાવ મેં અત્યંત શોકાકુલ વહ માનસિક વાચિક ઔર કાયિક  
કષ્ટોં કો સ્થેલતા હૈ । સત્ય હૈ, પ્રમત્ત-રાગદ્વેષાવિષ્ટ આત્મા વિષયોં મેં  
રાગકી અધિકતા સે હી તો પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ । તથા ઇષ્ટ વસ્તુકે નહીં પ્રાપ્ત  
હોને પર અથવા પ્રતિકૂલ વસ્તુ કે મિલને પર અસ વિષયસે દ્વેષ કરતા

ભાવ પ્રકટ કર્યો છે. “ઇતિ” શબ્દ હેત્વર્થમાં છે. તેનો અભિપ્રાય એ છે-સંસારના  
સમસ્ત પ્રાણી ગુણાર્થી છે, કારણ કે તે અનાદિકાળથી મોહના આવેશથી યુક્ત છે  
માટે ગુણાર્થી આત્મા કષાયાદિ મૂલસ્થાનમાં સ્થિત જ છે, શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિ-  
યોનો વિષય જેનું પ્રયોજન છે તે, અથવા શબ્દાદિક વિષયોમાં જેને અનુરાગ છે  
તે ગુણાર્થી છે. સાંસારિક સમસ્ત પ્રાણી શબ્દાદિક વિષયોના પ્રાર્થી થાય છે, તેના  
અભાવમાં તેની પ્રાપ્તિ માટે વારંવાર ચેષ્ટા કરતાં જ રહે છે. મળવાથી ફરી તેનો  
નાશ ન થાય તેના પ્રયત્ન કરતા રહે છે. કદાચ પ્રાપ્ત થયેલાઓનો નાશ થાય  
તો તેના અભાવમાં તે અત્યંત શોકાકુળ બને છે, અને માનસિક વાચિક અને  
કાયિક કષ્ટોને ભોગવે છે. સત્ય છે, પ્રમત્ત રાગદ્વેષાવિષ્ટ આત્મા વિષયોમાં રાગની  
અધિકતાથી જ પ્રવૃત્તિ કરે છે, તથા ઇષ્ટ વસ્તુ પ્રાપ્ત નહિ થવાથી અથવા પ્રતિકૂળ



च तं विषयं द्वेष्टि । एवंविधः संस्तत्र पुनः पुनः=वारं वारं वसति=विषयासक्त्या तिष्ठति, मूर्च्छितो भवतीत्यर्थः । रागद्वेषौ हि यत्र यत्र प्रायशो भवतस्तत्तद्दर्शयति । तद्यथा—“माता मे पिता मे” इत्यादि ।

‘इयं मे माता, अयं मे पिता’ एवंप्रकारं मातरि पितरि च रागस्तु संसारेऽनादिकालतो मोहनीयसद्भावाद् बाल्यावस्थायां लालनपालनादिकारकत्वाच्चोपजायते । रागाविष्टचेता हि चिन्तयति—कथं मयि जीवति सति मे माता-पितरौ क्षुत्पिपासादिकं दुःखमनुभवतः—इति, इत्थं विचिन्त्य बहुप्राणिसंहारजनितपापवान् कृषिवाणिज्यसेवादिरूपां वृत्तिं स्वीकरोति । समुद्रमपि दुरुल्लङ्घं गोष्पदं मन्वानो द्वीपा-द्वीपान्तरं परिभ्रमति । अकार्यशतमपि करोति । अहो कीदृशं रागस्य साम्राज्यम् ? ।

है । इस प्रकार वह उन विषयों में आसक्ति-परिणाम से ही प्रवृत्ति करता रहता है । संसारी जीवों के राग और द्वेष के विषयभूत पदार्थों को सूत्रकार स्पष्ट करते हुए कहते हैं—“माता मे” इत्यादि । यह मेरी माता है, यह मेरा पिता है, इस प्रकार का उनमें इस जीव को जो राग होता है उसका प्रधान कारण मोह है, वह मोह इस संसारमें अनादिकाल से इस जीव के साथ लगा हुआ है । तथा दूसरा कारण बाल्यावस्था में उन्होंने इसका पालन पोषण किया है । रागाविष्ट यह जीव सदा यही विचारता रहता है कि मेरे जीते-जी मेरे माता-पिता कभी भी भूख प्यास आदि से जनित दुःखोंका अनुभव न करें । इस ख्यालसे वह कृषि, वाणिज्य आदि अनेक आरंभों को करता है, जिससे हिंसादिजन्य अनेक पापोंका संचय करता रहता है, दुरुल्लंघ्य समुद्रको भी पारकर एक द्वीपसे दूसरे द्वीपोंमें जाकर

वस्तु भणवाથી તે વિષયમાં દ્વેષ કરે છે. આ પ્રકારે તે આવા વિષયોમાં આસક્તિ-પરિણામથી પ્રવૃત્તિ કરે છે. સંસારી જીવોના રાગ અને દ્વેષના વિષયભૂત પદાર્થોને સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે અને કહે છે—“માતા મે” ઇત્યાદિ. આ મારી માતા છે, આ મારા પિતા છે. આ પ્રકારે જીવને જે રાગ થાય છે તેનું પ્રધાન કારણ મોહ છે. આ મોહ આ સંસારમાં અનાદિ કાળથી જીવની સાથે લાગેલો છે. તથા બીજું કારણ બાલ્યાવસ્થામાં તેણે તેનું પાલન કર્યું છે. રાગાવિષ્ટ આ જીવ હંમેશાં એ જ વિચારતો રહે છે કે મારા માતા પિતા મારા જીવતાં કોઈ વખત પણ ભૂખ તરસથી હાનિ ન થાય. આવા ખ્યાલથી તે કૃષિ, વાણિજ્ય, આદિ અनेક આરંભ કરે છે જેનાથી હિંસાદિજન્ય અનેક પાપોનો સંચય કરે છે. દુરલ્લંઘ્ય સમુદ્રને ઓળંગીને એક દ્વીપથી બીજા દ્વીપોમાં જઈ વ્યાપાર ધંધા નિમિત્તે

“મગિની મે માર્યા મે પુત્રા મે દુહિતા મે સ્તુષા મે” । ઇતિ ।

મગિની=સ્વસા, સા મે=મમ, અસ્યાં રાગકારણં તુ સમાનમાતાપિતૃજત્વમ્ । માર્યાયાં રાગસ્તુ યાવજ્જીવં સ્વાનુકૂલ્યેન વર્તનશીલત્વાત્ । પુત્રે ચ રાગકારણં સેવાદિકાર્યપ્રવર્તકત્વમ્ । સ્તુષા=પુત્રવધૂઃ તસ્યાશ્ચ રાગકારણં સકલગૃહકાર્યસમ્પાદકત્વમ્, પુત્રાદ્યુત્પાદનદ્વારા પૌત્રાદિસુખાદ્યનુભવકર્તૃત્વશ્ચ । ચેતસિ ચ મૂઢો વિચિન્તયતિ-કદા મે પુત્રો ભવિતા, કદા મદીયમઙ્ગમલઙ્કરિષ્યતિ । જાતે પુત્રે ચ કથમયં વિદ્યાધનાદિકં પ્રાપ્સ્યતિ । પત્ની કદા માં સુખિતા આનન્દયિષ્યતિ । કદા મે દુહિતા દૌહિત્રં જનયિષ્યતિ, શ્વશુરકુલે ધનાદિકં પ્રાપ્સ્યતિ ન વેતિ । તદર્થં ચાનેક-

વ્યાપાર ધંધા કે નિમિત્ત ભ્રમણ કરતા હૈ । પૈસા કમાને કે લિયે અનેક અકાર્ય મી કર ઢાલતા હૈ । દેસ્કો રાગકા સામ્રાજ્ય કૈસા આશ્ચર્યકારી હૈ ।

યહ મેરી બહિન, હસ પ્રકાર ઉસમેં રાગકા કારણ એક માતા-પિતાસે ઉત્પન્ન હોના હૈ । સ્ત્રીમેં રાગકા હેતુ યહ હૈ કિ-જીવન મર તક વહ અપને અનુકૂલ પ્રવૃત્તિ કરતી હૈ । પુત્રમેં રાગ હોનેકા કારણ યહ હૈ કિ વહ રાતદિન સેવાદિ કાર્યમેં તહીનતા રખતા હૈ । પુત્રીમેં મી-યહ અપનેસે પૈદા હુઈ યહી રાગકા કારણ હૈ । સમ્પૂર્ણ ઘરકે મારકો સંભાલને તથા પુત્રાદિકોં કો ઉત્પન્ન કરને દ્વારા પૌત્રાદિસુખકા અનુભવ કરાનેસે પુત્રવધૂ મેં રાગ હોતા હૈ । પુત્ર-કલત્રાદિ મેં મહામૂઢ બનકર યહ જીવ વિચારતા હૈ-મેરે પુત્ર કબ હોગા, કબ મેરી ગોદી કો વહ સુશોભિત કરેગા, કૈસે વહ વિદ્યાધ્યયન એવં ધનાદિક પ્રાપ્ત કરેગા, મેરી સ્ત્રી કબ મુઝે સ્વયં સુખ ચૈન ભોગતી હુઈ આનંદિત કરેગી । મેરી પુત્રી કબ દોહિતે કો જન્મ દેગી, વહ અપને શ્વશુરગૃહ મેં

ભ્રમણ કરે છે. પૈસા કમાવા માટે અનેક અકાર્ય પણ કરે છે. બુવો! રાગનું સામ્રાજ્ય કેવું આશ્ચર્યકારી છે?

આ મારી બહેન છે, એ પ્રકારના રાગનું કારણ એક માતા-પિતાથી ઉત્પન્ન થવું તે. સ્ત્રીમાં રાગનું કારણ, જીવનભર તે પોતાના અનુકૂળ પ્રવૃત્તિ કરે છે. પુત્રમાં રાગનું કારણ તે રાતદિવસ સેવાદિ કાર્યમાં તદ્દીનતા રાખે છે. પુત્રીમાં પણ રાગનું કારણ પોતાથી પેદા થઈ છે માટે. સંપૂર્ણ ઘરનો ભાર સંભાળવામાં તથા પુત્રાદિકોની ઉત્પત્તિ દ્વારા પૌત્રાદિસુખનો અનુભવ કરાવવાથી પુત્રવધુમાં રાગ પેદા થાય છે. પુત્રકલત્રાદિમાં મહામૂઢ બનીને આ જીવ વિચારે છે કે-મારે પુત્ર ક્યારે થશે, ક્યારે મારી ગોદીમાં તે બેસીને મને સુશોભિત કરશે, કેવી રીતે તે વિદ્યાધ્યયન તેમજ ધનાદિક પ્રાપ્ત કરશે. મારી સ્ત્રી ક્યારે તેણી સુખ્યેન ભોગવતી મને આનંદિત કરશે. ક્યારે મારી પુત્રી દોહિતને જન્મ આપશે, તેણીના



સાવધાનુષ્ઠાનપરાયણો ભવતિ । અસૌ મમકારમહાગ્રહગૃહીતસ્વાન્તો નિતાન્તં પરિત-  
પતિ । રાગાન્ધો હિ રાગગ્રાહગ્રહિલઃ પરમરમણીયમપિ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિકં વ્યર્થમેવેતિ  
નિશ્ચિન્વાનો મોહશય્યાશયાનો ભાર્યોપુત્રભગિનીગૃહક્ષેત્રારામરમણીયમપિ રમણીયં  
મન્યતે ।

તથા ‘સખિ-સ્વજન-સંગ્રન્થ-સંસ્તુતા મે’ इति । સखा ચ સ્વજનશ્ચ સંગ્રન્થશ્ચ  
સંસ્તુતશ્ચેતિ इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः । સखा=મિત્ર, સ્વજનો=માતામહાદિઃ, સંગ્રન્થઃ=  
સ્વજનસ્યાપિ સમ્બન્ધી યથા-માતામહશ્યાલકાદિઃ । સંસ્તુતો મુદુર્મુદુર્દર્શનસમ્મેલના-  
ધનકી અધિકારિણી હોગી યા નહીં । ઇસ પ્રકાર યહ મમત્વરૂપી મહા-  
ગ્રહ-પિશાચાદિ દ્વારા યુક્ત હોકર રાતદિન ડનકી ચિન્તામેં હી અપને  
ભીતર હી ભીતર જલતા રહતા હૈ, ઠીક હૈ રાગસે અંધા હુઆ પ્રાણી અસુ-  
ન્દર ભી પરપદાર્થોં કો સુન્દર માને તથા ઉપાદેય-સુન્દર પદાર્થોં કો હેય-  
અસુન્દર માને, ઇસમેં કૌનસી અચરજકી વાત હૈ । સંસારમેં સમ્યગ્જ્ઞા-  
નાદિક ઇસ જીવકે ઉપાદેય ધર્મ હૈ-અન્હેં યહ રાગરૂપી ગ્રહ સે ગ્રસ્ત  
હોકર અશોભનીય માનતા હૈ, તથા જો સ્ત્રી, પુત્ર, ભગિની, ઘર-ક્ષેત્ર  
આદિ અશોભનીય પરપદાર્થ હેય હૈ, અન્હેં મોહરૂપી પ્રબલ મદિરાકે નશે  
સે આકુલિતબુદ્ધિ હોતા હુઆ રમણીય-ઉપાદેય માન રહા હૈ । તથા  
“સખિ-સ્વજન-સંગ્રન્થ-સંસ્તુતા મે” સખા-મિત્ર, સ્વજન-માતામહાદિ,  
સંગ્રન્થ-સ્વજન કે સંબંધીજન, સંસ્તુત-બારંબાર દેખને સે મેલ મિલાપ  
સે જિનકે સાથ પરિચય હુઆ હૈ વે, અથવા-પૂર્વ મેં પરિચિત પિતા  
કાકા વગૈરહ, પશ્ચાત્-પરિચિત સસુર સાલે વગૈરહ, યે મિત્ર સ્વજન

શ્વશુરગૃહમાં ધનની અધિકારિણી થશે કે નહિ? આ પ્રકાર તે મમત્વરૂપી મહાગ્રહ  
-પિશાચાદિ દ્વારા યુક્ત બનીને રાતદિન તેની જ ચિંતામાં પોતાના ભીતરની  
અંદર જ જળતો રહે છે. ઠીક છે, રાગથી અંધ બનેલ પ્રાણી અસુંદર પણ પર-  
પદાર્થોને સુંદર માને તથા ઉપાદેય-સુંદર પદાર્થોને હેય - અસુંદર માને, આમાં  
કોઈ અચરજની વાત નથી. સંસારમાં સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક આ જીવનો ઉપાદેય ધર્મ  
છે. તેને રાગરૂપી ગ્રહથી અશોભનીય માને છે. તથા જે સ્ત્રી, પુત્ર, ભગિની, ઘર, ક્ષેત્ર  
આદિ અશોભનીય પરપદાર્થ હોય છે, તેને મોહરૂપી પ્રબળ મદિરાના નશાથી આકુળિત  
બુદ્ધિ થઈ રમણીય-ઉપાદેય માને છે તથા “સખિ-સ્વજન-સંગ્રન્થ-સંસ્તુતા મે”  
સખા-મિત્ર, સ્વજન-માતામહાદિ, સંગ્રન્થ-સ્વજનના સંબંધીજન, સંસ્તુત-  
વારંવાર દેખવાથી, મેળમેળાપથી જેની સાથે પરિચય થયો છે તે, અથવા  
પૂર્વમાં પરિચિત પિતા, કાકા વિગેરે, પાછળથી પરિચિત સસુરા સાળા વિગેરે. આ

દિના પરિચિતઃ પિતા પિતૃવ્યાદિઃ । પશ્ચાત્સંસ્તુતઃ=શ્વશુરશ્યાલકાદિઃ । इति चेमे  
મે સર્વે સર્વદા સુખિનો ભવેયુરિતિ ચિન્તયન્ રાગગ્રસ્તો ભવતિ ।

‘વિવિક્તોપકરણપરિવર્તનભોજનાચ્છાદનં મે’ વિવિક્તં=સુન્દરં મનોહરં પ્રભૂતં  
વા ઉપકરણં=ગૃહારામાદિકં હસ્ત્યશ્વરથાસનપલયઙ્કાદિકં ચ, પરિવર્તનં=વિનિમયઃ  
હસ્ત્યશ્વાદે-મહાર્ઘસમયે વિક્રયણમ્, તન્મૂલ્યેનૈવ સુલભસમયે ચાનેકેષાં ક્રયણમ્ ।  
મયૈવૈકેન હસ્તિનાડનેકે હસ્ત્યાદયઃ સમ્પાદિતાઃ-इत्यादिलक्षणं પરિવર્તનમ્ । કચિત્

સંગ્રન્થ સંસ્તુત મેરે હૈં ઓર इनके लिये भी यह “ ये सदा सुखी  
होवें ” इस प्रकार विचार करता हुआ राग से ग्रस्त होता है ।  
अपने संबंधीजन को तथा संबंधीजन के संबंधीजन को सुखी होने  
की कल्पना करना संयमी जन के लिये राग होनेसे बंध का ही कारण  
शास्त्रकारों ने प्रकट किया है । इस प्रकार का राग मोहकी पर्याय होने से  
संयमी जन के लिये स्वानुभूति में बाधक होता है, अतः इससे निवृत्ति  
ही सर्वश्रेष्ठ है ।

‘વિવિક્તુવગરણ’—इत्यादि-मनोहर अथवा प्रचुर उपकरणरूप  
घर, बगीचा, हस्ती, अश्व, रथ, आसन, पलंग वगैरह वस्तुएँ विविक्त  
उपकरण कहलाते हैं । परिवर्तन शब्द का अर्थ विनिमय है, तेजी के समय  
हस्ति वगैरह पदार्थों का बेचना तथा मंदी के समय उसी पैसे से अनेक  
हस्त्यादिक पदार्थों का खरीदना यह विनिमय है । कहीं “ विचित्र ” यह  
पाठान्तर भी है-जिसका अर्थ होता है कि घर में शोभा के लिये अनेक

મિત્ર, સ્વજન, સંગ્રન્થ, સંસ્તુત મારા છે. તેને માટે પણ તે “ તેઓ સદા સુખી  
રહે ” આ પ્રકારનો વિચાર કરીને રાગથી ગ્રસ્ત થાય છે. પોતાના સંબંધીજનના  
તથા સંબંધીના સંબંધી તેના સુખની કલ્પના કરવી સંયમીજનને માટે રાગરૂપ  
હોવાથી બંધનું જ કારણ શાસ્ત્રકારે પ્રકટ કર્યું છે. આ પ્રકારનો રાગ મોહની  
પર્યાય હોવાથી સંયમીજનને માટે સ્વાનુભૂતિમાં બાધક થાય છે માટે તેમાં નિવૃત્તિ  
જ સર્વશ્રેષ્ઠ છે.

વિવિક્તોપકરણ—इत्यादि-मनोहर अथवा प्रचुर उपकरणरूप घर, बगीचा  
हस्ती, अश्व, रथ, आसन, पलंग विगैरे वस्तुओंने विविक्त उपकरण कहे છે.

પરિવર્તન શબ્દનો અર્થ વિનિમય છે. તેજના સમયમાં હસ્તિ વિગેરે  
પદાર્થોનું વેચવું અને મંદિના સમયમાં તે પૈસાથી હસ્તિ આદિ પદાર્થોનું ખરીદવું  
તે વિનિમય છે. કોઈ ઠેકાણે “ વિચિત્ર ” આવું પાઠાન્તર પણ છે જેનો અર્થ



‘વિચિત્રે’-તિ પાઠઃ । તત્ર વિચિત્રમુપકરણં ગૃહાદૌ શોભાર્થં बहुशिल्पिविनिर्मितं नानाविधं नयनमनोहारि वस्तुजातं मयैव सम्पादितम् ।

ભોજનં=મોદકાદિકં, મયૈવેદશં ભોજ્યં યુક્તમ્ । આચ્છાદનં=વસ્ત્રમ્=એકેન્દ્રિય-નિષ્પન્નં કાર્પાસાદિકં, વિકલેન્દ્રિયનિષ્પન્નં ચીનાંશુકાદિકં, પઞ્ચેન્દ્રિયનિષ્પન્નં રત્ન-કમ્બલાદિકમ્, એતત્સર્વં કદાચિદપિ મા વિનાશમાપ્નુયાત્ । યત્ર યત્ર વિષયે રાગસ્ત-કારીગરો દ્વારા નિર્મિત નેત્ર ઓર મન કો લુભાનેવાલી અનેક પ્રકાર કી વસ્તુઓં કા સંગ્રહ કરના । પ્રમત્ત-દશા-સમ્પન્ન પ્રાણી એસા ગર્વ કરતા હૈ કિ મૈને હી ઇસ ઘર મેં એક હાથી કી જગહ અનેક હાથિયોં કા સંગ્રહ કિયા હૈ, તથા પહિલે ઇસ ઘરમેં શોભા કે લિયે કોઈ સુન્દર વસ્તુ નહીં થી વહ મૈને હી અવ ઇન તમામ નેત્ર ઓર મન કો લુભાનેવાલી વસ્તુઓં કો એકત્રિત કિયા હૈ ।

મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થ ભોજન હૈ । આચ્છાદન નામ વસ્ત્ર કા હૈ । એકેન્દ્રિય સે નિષ્પન્ન કાર્પાસ ( સૂતી ) આદિક, વિકલેન્દ્રિયોં સે પૈદા હુઆ ચીનાંશુક ( રેશમી ) વગૈરહ, તથા પંચેન્દ્રિયોં સે બનાયા ગયા રત્ન-કમ્બલાદિક પદાર્થ મેરે કમી નષ્ટ ન હો જાવેં । ઇસ પ્રકાર કે વિચારોં સે વહ મોહી જીવ સદા સંતૃપ્ત રહા કરતા હૈ । પ્રતિકૂલ ભોજન મિલને પર પહિલે સુન્દર ખાચે ગયે ભોજન કી યાદ કર વ્યાકુલ-ચિત્ત હો જાતા હૈ, સોચતા હૈ-મૈને પહિલે એસા ભોજન કમી નહીં કિયા, સુન્દર ૨ મોદ-કાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થોં કા હી સેવન કિયા હૈ । યહ સર્વ ઇસ પ્રકાર કી

એ થાય છે કે ઘરમાં શોભાને માટે કારીગરોદ્વારા આંખ અને મનને લોભાવવા-વાળી અનેક પ્રકારની વસ્તુઓનો સંગ્રહ કરવો.

પ્રમત્તદશાસમ્પન્ન પ્રાણી એવો ગર્વ કરે છે કે-મેં આ ઘરમાં એક હાથીની જગ્યા અનેક હાથિઓનો સંગ્રહ કર્યો છે, તથા પહેલાં આ ઘરમાં શોભા માટે કોઈ સુંદર વસ્તુ ન હતી પણ મેં જ હમણાં આ તમામ નેત્ર તથા મનને લોભાવવાળી વસ્તુઓ ભેગી કરી છે.

મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થ ભોજન છે. આચ્છાદન નામ વસ્ત્ર છે. એકેન્દ્રિયથી નિષ્પન્ન સૂતરાઈ આદિક, વિકલેન્દ્રિયોથી પૈદા થયેલાં રેશમી વિગેરે, તથા પંચેન્દ્રિયોથી બનાવેલાં મારાં રત્નકંબલાદિક પદાર્થોનો નાશ ન થઈ જાય, આવા પ્રકારના વિચારોથી તે મોહી છવ સદા સંતૃપ્ત રહે છે. પ્રતિકૂળ ભોજનના મળવાથી પહેલાં સુંદર ખાધેલાં ભોજનની યાદ કરીને વ્યાકુળચિત્ત થાય છે. અને વિચારે છે કે-મેં પહેલાં આવું ભોજન કોઈ વખત ખાધું નથી. સુંદર મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થો જ

સ્વૈવેષ્ટતાત્તસ્યાલાભે દ્વેષ ઉપજાયતે, અતો યસ્મિન્ રાગસ્તસ્મિન્નેવ દ્વેષો ભવતિ-ઇતિ સ્વભાવસિદ્ધમ્ । इत्यर्थं गृद्धो लोक इत्येवमर्थमेतेषामर्थं मातापितृ-पुत्रभार्यादिष्वेव रागादिकारणेषु यावज्जीवति तावत्प्रमत्तो 'ममेमे, एषां चाह'-मित्यनिशं रागादिमान् अज्ञानमोहितचित्तो वसति=तिष्ठति तत्र मूर्च्छा प्राप्नोती-विचारधारा का प्रधान कारण पदार्थों में अतिशय उसकी गृद्धता ही है । क्योंकि इससे ही उसे जिस २ विषय में राग होता है वही उसे इष्ट प्रतीत होता है । अनिष्ट प्राप्त होने पर या इच्छित पदार्थ न मिलने पर उसकी आत्मा में उससे द्वेष की भावना जागृत होती है । इस प्रकार इन रागादिकों के कारणभूत इन माता पिता स्त्री आदिक पदार्थों में गृद्ध बना हुआ यह जीवलोक जब तक जीता है तब तक प्रमत्त-दशायुक्त ही बना रहता है । 'ये पदार्थ मेरे हैं-मैं इनका हूँ' इस प्रकार की कल्पना से रातदिन रागादिक भावों से लिप्त बनकर अज्ञान से आच्छादित हो उन्हीं पदार्थों में आसक्त होता रहता है । 'ममकार' यह जीवों का एक प्रबल शत्रु है । बकरे की तरह "मैं-मैं" इस प्रकार के शब्द को करता हुआ यह जीव अन्त में कसाई के तुल्य इस भयंकर काल के द्वारा ग्रसित हो जाया करता है । ममकार को प्रबल शत्रु इस लिये बतलाया गया है कि जिस प्रकार अपने बलिष्ठ शत्रु के समक्ष जीव विवेक-शून्य बन बावला जैसा हो जाता है, ठीक इसी प्रकार इस ममकार के समक्ष भी जीव अपने हित और अहित के भान से रहित हो उन्मत्त

આધેલાં છે. આ બધા પ્રકારની વિચારધારાનું મુખ્ય કારણ પદાર્થોમાં તેની અતિશય ગૃહ્ણતા જ છે. કારણ કે આથી તેને જે જે વિષયમાં રાગ થાય છે તેથી તે ઈષ્ટ પ્રતીત થાય છે. અનિષ્ટ પ્રાપ્ત થવાથી અથવા ઈચ્છિત પદાર્થ ન મળવાથી તેના આત્મામાં તેથી દ્વેષની ભાવના જાગૃત થાય છે. આ પ્રકાર આવા રાગાદિકના કારણભૂત માતા-પિતા સ્ત્રી આદિક પદાર્થોમાં ગૃહ્ણ બનીને જ્યાં સુધી આ જીવલોક જીવે છે ત્યાં સુધી પ્રમત્તદશાયુક્ત રહે છે. 'આ પદાર્થ મારો છે, હું તેનો છું.' આવા પ્રકારની કલ્પનાથી રાત દિવસ રાગાદિક ભાવોથી લિપ્ત બનીને અજ્ઞાનથી આચ્છાદિત જ્ઞાનવાળા હોઈ તેવા પદાર્થોમાં આસક્ત હોય છે. મમકાર એ જીવોનો એક પ્રબળ શત્રુ છે. બકરાની માફક "મैं-મैं" આ પ્રકારના શબ્દ બોલતાં બોલતાં આ જીવ અંતમાં કસાઈતુલ્ય ભયંકર કાળદ્વારા ગ્રસિત બને છે. મમકારને પ્રબળ શત્રુની ઉપમા તે માટે આપી છે કે જેમ પોતાના બલિષ્ઠ શત્રુ સમક્ષ જીવ વિવેકશૂન્ય બની આવળો (ગાંડો) બને છે, ઠીક તે પ્રકાર આ મમકારની સમક્ષ પણ જીવ પોતાના હિતાહિતાના ભાનથી રહિત થઈ ઉન્મત્ત જેવો બને છે. તે વખતે



ત્યર્થઃ । મમકારો હિ પ્રાણિનો મહાઞ્છત્રુઃ, મમશબ્દં કુર્વાણો હિ કરાલકાલવ્યાલ-  
કવલિતો ભવતિ પ્રાણિગણઃ । યથા ચોક્તમ્ ।

અશનં મે વસનં મે, જાયા મે બન્ધુવર્ગો મે ।

ઇતિ મે-મે-કુર્વાણં, કાલઘ્રુકો હન્તિ પુરુષાજમ્ ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે સ્વજના મે ગૃહકલત્રવર્ગો મે ।

ઇતિ કૃત-મે-મે-શબ્દં, પશુમિવ મૃત્યુર્જનં હરતિ ॥

પુત્રકલત્રપરિગ્રહમમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્ ।

કૃમિક ઇવ કોશકારઃ, પરિગ્રહાદુઃસ્વમાપ્નોતિ ॥

જૈસા બન જાતા હૈ । ઉસે ઉસ સમય ઇસ બાત કા ખી ધ્યાન નહીં હોતા  
કિ મેરા સ્વરૂપ ક્યા હૈ ઓર ઇન પરપદાર્થોં કા સ્વરૂપ ક્યા હૈ ? કસાઈ  
કા બકરા જિસ પ્રકાર “મૈ-મૈ” કરતા હુઆ કસાઈ કે દ્વારા અંત મેં  
મૌત કે ઘાટ ઉતાર દિયા જાતા હૈ ઊસી પ્રકાર “મૈ-મૈ” કરનેવાલા  
યહ જીવ ખી અન્ત મેં એક ન એક દિન ઇસ દુષ્ટ ભયંકર કાલ કે દ્વારા  
મારા જાતા હૈ । કહા ખી હૈ—

“અશનં મે વસનં મે, જાયા મે બન્ધુવર્ગો મે ।

ઇતિ ‘મે-મે’-કુર્વાણં, કાલઘ્રુકો હન્તિ પુરુષાજમ્ ॥ ૧ ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે, સ્વજના મે ગૃહ-કલત્ર-વર્ગો મે

ઇતિ કૃત-‘મે-મે’-શબ્દં, પશુમિવ મૃત્યુર્જનં હરતિ ॥ ૨ ॥

પુત્ર-કલત્ર-પરિગ્રહ-મમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્,

કૃમિક ઇવ કોશકારઃ, પરિગ્રહાદુઃસ્વમાપ્નોતિ ॥ ૩ ॥ ” ઇતિ ।

इनका अर्थ ऊपर आ चुका है ।

તેને એ પણ ધ્યાન નથી હોતું કે માઈ સ્વરૂપ શું છે અને આ પરપદાર્થોંનું સ્વરૂપ  
શું છે ? કસાઈનો બકરો જેમ “મૈ-મૈ” કરતો કસાઈદ્વારા અંતમાં મૌતને તાબે થાય  
છે તે પ્રકારે “મૈ-મૈ” કરવાવાળા આ જીવ પણ અંતમાં એક દિવસ આ દુષ્ટ ભયંકર  
કાળદ્વારા મરે છે. કહ્યું પણ છે—

અશનં મે વસનં મે, જાયા મે બન્ધુવર્ગો મે ।

ઇતિ ‘મે-મે’-કુર્વાણં, કાલઘ્રુકો હન્તિ પુરુષાજમ્ ॥ ૧ ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે, સ્વજના મે ગૃહકલત્રવર્ગો મે ।

ઇતિ કૃત-‘મે-મે’-શબ્દં, પશુમિવ મૃત્યુર્જનં હરતિ ॥ ૨ ॥

પુત્રકલત્રપરિગ્રહમમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્ ।

કૃમિક ઇવ કોશકારઃ, પરિગ્રહાદુઃસ્વમાપ્નોતિ ॥ ૩ ॥ ઇતિ ॥

આનો અર્થ ઉપર આવેલ છે,

इति ममकारग्राहगृहीतविग्रहेण पुरुषेण सततं चिन्त्यते । शब्दादिविषयासक्तो नरो मातापित्राद्यर्थं धननिवहोपार्जनपरो दुःखमेवानुभवति । सदैव परितप्यमानो भ्रमतीत्याह—“अहश्च रात्रिश्च परितप्यमानः” । अहो=दिनं रात्रिं, चशब्दात्पक्षमास-

इन्द्रियों के शब्दादिक विषयों में गृह्य पुरुष इन माता पिता आदि को सुखी करने के लिये धनादि कमाने के अभिप्राय से सदा दुःख का ही अनुभव करता है और रातदिन संक्लिष्टपरिणामी हो उसके संग्रह की चिन्ता में इतस्ततः घूमता है, एवं शारीरिक और कायिक अनेक कष्टों का सामना करता है ।

“अहश्च रात्रिं च ” यहाँ पर “ च ” शब्द से पक्ष-मास-ऋतु-वर्ष आदि का ग्रहण होता है । विचारता रहता है कि कब ऐसा अवसर मिले कि जब मैं बाहर जाऊँ और क्रय विक्रय की वस्तुओं को खरीद बेच कर उनसे खूब लाभ उठाऊँ । कौनसी ऐसी जगह है जहाँ इस वस्तु की अधिक खपत होनेसे विक्री तेजी से होती है । कौनसी चीज खरीदने में इस समय अधिक फायदा होगा?, तथा कौनसी वस्तुका संग्रह करने से भविष्य में अधिक लाभ होगा?, इत्यादि बातों की ही उसके हृदय में सदा उथल-पुथल मची रहती है । यहाँ तक कि सोते समय में अथवा सोते हुए उसे इसी बात के स्वप्न आते हैं और कभी २ वह इन्हीं विचारों को लेकर बड़बड़ाने भी लगता है । उसे निद्रा भी ठीक २ नहीं आती । विचार

પાંચ ઇન્દ્રિયોના શબ્દાદિક વિષયોમાં ગુંથાયેલો પુરુષ માતા-પિતા આદિને સુખી કરવાના હેતુથી ધન કમાવામાં જ હમેશા હુઃખનો અનુભવ કરે છે. અને રાત દિવસ બ્યાકુળ બની તેના સંગ્રહની ચિંતામાં અહીં-તહીં ધૂમ્યા કરે છે, અને શારીરિક માનસિક અને કાયિક અનેક કષ્ટોનો સામનો કરે છે.

“અહશ્ચ રાત્રિં ચ ” આ ઠેકાણે “ ચ ” શબ્દથી પક્ષ, માસ, ઋતુ, વર્ષ આદિનું ગ્રહણ થાય છે. વિચારતો રહે છે કે ક્યારે એવો વખત મળે ન્યારે હું ખડાર બાઉં અને કયવિકયની વસ્તુઓને ખરીદી વેચી તેનાથી ખૂબ લાભ ઉઠાવું. એવી કયાં જગ્યા છે ન્યાં અમુક વસ્તુઓ સસ્તી મળતી હોય તથા એવી કયાં જગ્યા છે ન્યાં આ વસ્તુઓ અધિક ખપત હોવાથી તેજીથી વેચાઈ જાય. આ વખતે કઈ ચીજ ખરીદવાથી ફાયદો થશે, તથા કઈ વસ્તુનો સંગ્રહ કરવાથી ભવિષ્યમાં અધિક લાભ થશે, ઇત્યાદિ વાતોની તેના હૃદયમાં સદા ઉથલપાથલ મચી રહે છે. એટલે સુધી કે સુવા વખતે તથા સુતાં સુતાં તેને આ વિષયનાં સ્વપ્નાં આવે છે અને કોઈ વખતે તે આવા વિચારોથી બડબડવા પણ લાગે છે. તેને નિદ્રા પણ ઠીક



તુવર્ષાદિકં ગ્રાહ્યમ્ । પ્રવૃત્તસાવધાનુષ્ઠાનઃ પરિ=સર્વતઃ, તપ્યમાનઃ=શારીરિકમાનસિક-  
વાચિકદુઃખેન ક્લિશ્યમાનઃ અન્તર્દાહદગ્ધો ભવતીતિ યાવત્ ।

કદા મે વિદેશગમનં ? કદા કુત્ર માણ્ડનયને મે લાભો ભવિતા ? કીદૃશશ્ચ ક્રય-  
વિક્રયાવસરઃ ? इत्यनिशं तप्यमानः । पुनः कथम्भूतः ? कालाकालसमुत्थायी,  
कालः=कार्यकरणावसरः, अकालस्तद्विपरीतः, सम्=सर्वथा उत्थातुं शीलं यस्येति स  
समुत्थायी, कालाकालयोः समुत्थायी कालाकालसमुत्थायी । यथैवावसरे करोति  
तथैवानवसरेऽपि करोतीत्यर्थः । यद्वा यथाऽनवसरे न करोति तथैवावसरेऽपि न  
करोति । मातापितृपुत्रभार्यावर्धनिखिलकार्यव्यासक्तान्यमनस्कतया ग्रहग्रहिल इव  
कालाकालज्ञानकलाविकलो भवति ।

રાત દિન इन्हीं विचारों में मग्न बनकर संतप्त होता रहता है । काल और  
अकाल का वह कुछ भी विचार नहीं करता, उसके जैसा ही अवसर वैसा  
ही अनवसर, उसके लिये अवसर और अनवसर में कोई भेद नहीं ।  
वह तो अपनी इच्छानुसार अनर्गल प्रवृत्ति किया करता है । अथवा जिस  
प्रकार भूताद्याविष्ट प्राणी भले बुरे की परीक्षा नहीं कर सकता है, वह तो  
मनमाना ही काम करता है, उसी प्रकार मातापिता आदि सांसारिक  
पदार्थों में ही आसक्त मन वाला प्राणी अन्य आत्महितकारी कार्यों से  
उपेक्षितवृत्तिवाला बन काल-अकाल की ज्ञानकलासे सदा विकल ही  
बना रहता है । अवसर न होने पर जिस प्रकार कार्य नहीं करता उसी  
प्रकार अवसर में भी कार्य नहीं करता, जभी कार्य करने की इच्छा जागृत  
हुई चाहे समय हो चाहे असमय हो कार्य करने लग जाता है । जैसे कोई  
अरिभर्दन नाम का राजा जो शत्रुओं को नष्ट करने में शक्तिशाली था

આવતી નથી. બિચારા રાતદિન આવા જ વિચારોમાં મગ્ન બની સંતપ્ત થાય છે.  
કાળ અકાળનો તે જ રા પણ વિચાર કરતો નથી. તેને જેવો અવસર તેવો જ  
અનવસર, તેને માટે અવસર અને અનવસરમાં કોઈ ભેદ નથી, તે તો પોતાની  
ઇચ્છાનુસાર અનર્ગળ પ્રવૃત્તિ કરે છે. અથવા જેમ ભૂતાદ્યાવિષ્ટ-(ભૂતાના વળગાડ-  
વાળાં) ભલા-ખૂરાનો વિચાર નથી કરી શકતા તે તો મનમાન્યો કામ કરે છે. તે  
પ્રકારે માતા-પિતા આદિ સાંસારિક પદાર્થોમાં જ આસક્ત મનવાળાં પ્રાણી અન્ય  
આત્મહિતકારી કાર્યોથી ઉપેક્ષિત વૃત્તિવાળાં બની કાળ-અકાળની જ્ઞાનકલાથી  
હુમેશાં વિકળ જ બને છે. અવસર નહિ હોવાથી જેમ કાર્ય નથી કરતા તેમ  
અવસરમાં પણ કાર્ય નથી કરતા પણ જ્યાં ઇચ્છા થઈ કે સમય-અસમય જોયાં  
બિના કામ કરવા લાગે છે. જેમ અરિમર્દન નામનો રાજા સમયનો જાણકાર નહિ

યથા કશ્ચિદર્મિર્દનનામા નરાધિપો વિપક્ષપક્ષદલનદક્ષોઽપ્યવસરાનભિજ્ઞો નગરીં સિંહાદિશ્વાપદાકુલિતામલોક્યાપિ બહુષુ પ્રાણિગણેષુ નાશમુપગતેષુ પશ્ચાત્ચ રક્ષાર્થં પ્રાકારં કારિતવાન્ તથૈવ કાલાકાલસમુત્થાયી ચાવસરાનવસરાનભિજ્ઞો ભવતીતિ ભાવઃ ।

યસ્તુ સમ્યક્ કાલોત્થાયી સ ચ કાલપરિજ્ઞાનાર્થં સતતં સાવધાનો યથાવસરં સકલાં ક્રિયાં વિદધાતિ । કિન્તુ યથા જન્માદેરકાલો નાસ્તિ તથા ધર્મેઽપિ નાઽકાલઃ, “ધમ્મો હિ બુદ્ધેહિં પરિસેવિયવ્વો” इति वचनात् । यो हि रागवान् स कालाकालसमुत्थायी किमर्थमित्याह—“संयोगार्थी” संयुज्यते, संयोजनं वा संयोगः, सोऽर्थः—प्रयोजनं यस्यास्तीति संयोगार्थी । संयोगः=शब्दादिविषयः, मातापित्रादिभिश्च संयोगस्तदर्थी=तत्प्रयोजनवान् ।

પરન્તુ અનવસરજ્ઞ હોને સે ઉસને અપની પ્રજાકી રક્ષા ઉસ સમય—જબ કિ ઉસે સિંહાદિ નષ્ટ—ઘ્રષ્ટ કર રહે થે; નહીં કી, પશ્ચાત્ જબ લોગ હર તરહ સે વર્બાદ હો ચુકે તબ ઉસ સમય જોકિ ઉનકી રક્ષા કા અવસર નહીં થા ઉસને રક્ષા કે લિયે નગર કા કોટ બનવા દિયા । જિસ પ્રકાર વહ રાજા કાલાકાલસમુત્થાયી હોને સે વિવેકી નહીં માના જા સકતા, ઉસી પ્રકાર જો પ્રાણી કાલાકાલસમુત્થાયી હોતા હૈ વહ ભી અવસર ઔર અનવસર કા યથાર્થ જ્ઞાતા નહીં હોતા, જો કાર્ય કે ઉચિત કાલ મેં કાર્ય કરને કે સ્વભાવવાલા હોતા હૈ વહ નિરન્તર અવસર કે અનુસાર હી સાવધાન હોકર ઉસી સમય મેં સમસ્ત ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ । રાગવાન પ્રાણી કાલાકાલસમુત્થાયી ક્યોં હોતા હૈ ? ઇસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ—“સંયોગાર્થી” इत्यादि । वह संयोगार्थी है । संयोग ही जिसका प्रयोजन है वह संयोगार्थी है शब्दादिक विषयों के साथ,

હોવાથી જ્યારે સિંહાદિ હિંસક પ્રાણી પ્રજાનો નાશ કરી રહ્યાં હતાં ત્યારે પ્રજાની રક્ષા કરી નહિ પણ જ્યારે પ્રજાની બરબાદી થઈ ગઈ ત્યારે જો કે અવસર નહિ હોવા છતાં પ્રજાની રક્ષા માટે કોટ બનાવ્યો. તો જે પ્રકારે તે રાજા કાળાકાલસમુત્થાયી હોવાથી વિવેકી મનાતો નથી તે પ્રકારે જે પ્રાણી કાળાકાલસમુત્થાયી છે તે પણ સમય અસમયનો જ્ઞાતા નથી, જે કાર્યના ઉચિત કાળમાં કાર્ય કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે તે નિરંતર અવસર અનુસાર જ સાવધાન થઈ તે સમયમાં સમસ્ત ક્રિયાઓ કરે છે. રાગવાળો પ્રાણી કાળાકાલસમુત્થાયી કેમ બને છે ? તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે—“સંયોગાર્થી” इत्यादि. તે સંયોગાર્થી છે. સંયોગ જ જેનું પ્રયોજન છે તે સંયોગાર્થી છે. શબ્દાદિક વિષયોમાં તેમ જ માતાપિતાદિકની



યદ્વા હસ્યશ્વરથકલત્રમિત્રદ્વિપદચતુષ્પદાદિરૂપઃ સંયોગસ્તત્પ્રયોજનવાન્ । યતઃ સંયોગાર્થી અતएव કાલાકાલસમુત્થાયી, ઇતિ હેતુગર્ભે વિશેષણમ્ । સંયોગવ્યગ્રતયૈવા- નવગતકાલાકાલવ્યવસ્થા ઇતિ યાવત્ । અતएव અર્થાલોભી-અર્થો ધનં કુપ્યમકુપ્યં ચેતિ, તત્ર સુવર્ણાદિભિન્નં રત્નાદિ કુપ્યમ્, સુવર્ણરજતાદિરૂપમકુપ્યં ચેતિ ભેદઃ । આ=સમન્તાત્ સર્વતઃ ઇતિ યાવત્, લોભો=લાલસા વિદ્યતે યસ્ય સ આલોભી અર્થસ્યા- લોભી અર્થાલોભી, અત્રાપિ કાલાકાલસમુત્થાયીતિ વિશેષણમ્ । યસ્માદ્ધનાભિલાષી તસ્માત્કાલાકાલસમુત્થાયી, અનિર્જાતકાલાકાલનિયમઃ, યો હિ ધનં કામયતે અથવા માતાપિતાદિક કે સાથ જો સંબંધ હૈ । ડસી કા નામ સંયોગ હૈ । અથવા-હસ્તિ, અશ્વ, રથ, સ્ત્રી, મિત્ર, દ્વિપદ, ચતુષ્પદાદિ રૂપ પરિગ્રહ કે સાથ સંબંધ મી સંયોગ હૈ । તત્પ્રયોજનવાન્ પ્રાણી સંયોગાર્થી કહલાતા હૈ । યહ સંયોગાર્થી હૈ ઇસીલિયે કાલાકાલસમુત્થાયી હૈ । કાલાકાલ-સમુત્થાયી હોને મેં સંયોગાર્થિત્વ યહ હેતુ હૈ । સંયોગ મેં વ્યગ્રતા હી કાલાકાલ કી અવ્યવસ્થા કા કારણ હોતી હૈ । “અર્થાલોભી”-સબ પ્રકાર સે અર્થ કા અભિલાષી જો હોતા હૈ-વહ અર્થાલોભી હૈ । કુપ્ય ઓર અકુપ્ય કે ભેદ સે ધન દો પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ । રત્નાદિક કુપ્ય હૈ । સુવર્ણ-રજતરૂપ દ્રવ્ય અકુપ્ય હૈ । અર્થ-આ-લોભી-હસ પ્રકાર ઇસ વાક્ય મેં પદચ્છેદ કરને સે યહ અર્થ નિષ્પન્ન હોતા હૈ કિ જો આ-સર્વ પ્રકાર સે અર્થલોભી હૈ । યહાં પર મી ‘કાલાકાલસમુત્થાયી’ ઇસ વિશેષણ કી યોજના કર લેની ચાહિયે । ઇસસે યહ ફલિતાર્થ હોતા હૈ કિ યહ ધનાભિલાષી હૈ ઇસીલિયે કાલાકાલસમુત્થાયી હૈ, કાલ ઓર

સાથે જે સંબંધ છે તેનું નામ સંયોગ છે, અથવા હસ્તિ, અશ્વ, રથ, સ્ત્રી, મિત્ર, દ્વિપદ, ચતુષ્પદાદિ રૂપ પરિગ્રહની સાથે સંબંધ પણ સંયોગ છે. એવા પ્રયોજનવાળો પ્રાણી સંયોગાર્થી કહેવાય છે. તે સંયોગાર્થી છે માટે કાળાકાળસમુત્થાયી છે. કાળાકાળસમુ- ત્થાયી હોવામાં સંયોગાર્થીત્વ હેતુ છે, સંયોગમાં વ્યગ્રતા જ કાળાકાળની અવ્યવસ્થાનું કારણ થાય છે. “અર્થાલોભી” બધા પ્રકારે અર્થનો અભિલાષી થાય છે. તે અર્થ- લોભી છે. કુપ્ય અને અકુપ્યના ભેદથી ધન બે પ્રકારનું બતાવ્યું છે. રત્નાદિક કુપ્ય છે, સુવર્ણ-રજતરૂપ દ્રવ્ય અકુપ્ય છે. ‘અર્થ-આ-લોભી’ આ પ્રકારે આ વાક્યમાં પદચ્છેદ કરવાથી એવો અર્થ નિષ્પન્ન થાય છે કે જે આ સર્વ પ્રકારથી અર્થ-કુપ્ય અને અકુપ્યરૂપ દ્રવ્યનો લોભી-અભિલાષી-છે તે અર્થલોભી છે. આ ઠેકાણે પણ ‘કાળાકાળસમુત્થાયી’ આ વિશેષણની યોજના કરવી જોઈ એ તેથી એ ફલિતાર્થ થાય છે કે ધનાભિલાષી છે માટે કાળાકાળસમુત્થાયી છે. કાળ અને અકાળના

સોડવસરાદિકં ન કિમપિ જાનાતિ । અનવસરમપિ શોભમાનાવસરમેવ મન્યમાનો  
યસ્માત્કસ્માદ્ યેન કેન પ્રકારેણાર્થં વાઙ્છતિ । અર્થલુબ્ધો હિ સતતમર્થોપાર્જન-  
વ્યાસક્તમાનસઃ પ્રાવૃષિ મુશલધારાઙ્ગર્જરિતે કાલે દુરધિગતજલસ્થલસુપથવિપથાયાં  
પદમપિ ગન્તુમક્ષમાયાં ક્ષમાયાં વાણિજ્યાર્થં નાવાપારપારાવારમપિ તિતીર્થુર્દ્વીપાદ્-  
દ્વીપાન્તરે ગમનાગમનાદિકં કરોતિ, સર્વત્ર ધનલોભ એવ કારણમ્ । ધનાર્થી પ્રાણમપિ

અકાલ કે નિયમ કા જ્ઞાતા નહીં હૈ । જો ધનકા અભિલાષી હોતા હૈ વહ  
સમય કી પ્રતીક્ષા નહીં કિયા કરતા હૈ । ધનાર્જન કરને કા અવસર નહીં  
હોને પર મી યહ “ ધન કમાને કા સુન્દર અવસર હી હૈ ” એસા માન  
કર જિસ કિસી મી રીતિ સે ધન કી અભિલાષા કિયા કરતા હૈ । જો  
દ્રવ્ય કા લુબ્ધક હોતા હૈ વહ નિરન્તર દ્રવ્ય કે ઉપાર્જન કરને મેં આસક્ત-  
ચિત્ત બન કર વર્ષાકાલ મેં મૂસલધાર પાની વરસને પર મી રાત્રિ કે  
સમય હી ઉસ ભૂમિ મેં કિ જિસમેં જલ સ્થલ સમમાર્ગ ઔર વિષમમાર્ગ  
કી કુછ મી સ્વર નહીં પડતી ઔર જહાં એક કદમ મી ચલના બડા  
મુશ્કિલ હોતા હૈ એસી ભૂમિ મેં મી વ્યાપાર કે લિયે ગાડી આદિ કિસી  
સાધન દ્વારા એક નગર સે દૂસરે નગર મેં, ઔર નૌકા સે અપાર સમુદ્ર કો  
મી પાર કર એક દ્વીપ સે દૂસરે દ્વીપ મેં આતા જાતા રહતા હૈ । પ્રાણોં કો  
મી સંકટ મેં ડાલ ધનાભિલાષી ધન કમાને કે લિયે દુર્ગમ પ્રદેશો મેં  
જાકર ધન કા ઉપાર્જન કરતા હૈ, ઉસમેં સિર્ફ ધન કા લોભ હી કારણ  
હૈ । દ્રવ્યલોલુપી અપને પ્રાણોં કી બાજી લગાકર મી ઇધર ઉધર દ્રવ્ય

નિયમનો જ્ઞાતા નથી, જે ધનનો અભિલાષી છે તે સમયની પ્રતીક્ષા કરતો નથી,  
ધન ઉપાર્જન કરવાનો અવસર નહિ હોવા છતાં “ ધન કમાવાનો સુંદર અવસર  
છે ” એમ માની કોઈ પણ પ્રકારે ધનની અભિલાષા કર્યા કરે છે. જે દ્રવ્યનો  
લુબ્ધક હોય છે તે નિરંતર દ્રવ્ય ઉપાર્જન કરવામાં આસક્ત બની વર્ષાકાળમાં  
મૂસલધાર પાણી વરસતો હોય છતાં રાત્રિ સમય તે ભૂમિમાં કે જ્યાં જળ સ્થળ  
સમમાર્ગ અને વિષમમાર્ગની કાંઈ પણ બબર પડતી નથી અને જ્યાં એક ડગલું  
પણ ભરવું મુશ્કેલ થઈ પડે છે તેવી ભૂમિમાં પણ વ્યાપાર કરવા ગાડા આદિ  
કોઈ સાધનદ્વારા એક ગામથી બીજા ગામમાં અને નૌકાથી અપાર સમુદ્રનો પણ  
પાર કરી એક દ્વીપથી બીજા દ્વીપમાં આવે જાય છે, પ્રાણને પણ જોખમમાં મૂકીને  
ધનાભિલાષી ધન કમાવા દુર્ગમ પ્રદેશોમાં જઈ ધનનું ઉપાર્જન કરે છે તેમાં ફક્ત  
ધનનો લોભ જ કારણ છે. દ્રવ્યલોલુપી પોતાના પ્રાણના ભોગે પણ અહીં-તહીં



તૃણવન્મન્યમાનો મુહુર્મમતિ । ઉપાર્જિતાર્થરક્ષણાય રાત્રાવપિ ચૌરાદિભયાન્ન નિદ્રા-  
મનુભવતિ । મમ્મણશ્રેષ્ઠિવદુઃસ્વી ભવતિ । તથા ચોક્તમ્—

‘ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિતપ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥ ૧ ॥

કો કમાને કે હી ચ્યાલ સે ધૂમતા હૈ તથા ઉપાર્જિત દ્રવ્ય કે રક્ષણ કે  
લિયે રાત્રિમેં બી ચૌરાદિક કે ભય સે યથેચ્છ નિદ્રા નહીં લેતા । મમ્મણ  
સેઠ કી તરહ દુઃસ્વ કા હી અનુભવ કરતા હૈ । કહા બી હૈ:—

“ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિતપ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥૧॥

મુહુર્ધ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો જિમિતું નાપિ ચાદ્ય મહુશ્યામિ ।

નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વહ્ન્ય ॥ ૨ ॥

જનયન્ત્યર્જને દુઃસ્વં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।

મોહયન્તિ ચ સંપત્તૌ, કથમર્થાઃ સુખાવહાઃ ” ॥ ૩ ॥

અર્થ:—ધનલોભી પુરુષ જમીન મેં ગહે હુએ અપને ધનકો કબી  
બાહર નિકાલતા હૈ કબી ફિર જમીન મેં ગાડતા હૈ કબી પેટી આદિ મેં  
રખતા હૈ । વહ ચોર આદિ કે ભય સે રાતકો સોતા નહીં ઓર દિન મેં  
બી શંકા કરતા રહતા હૈ કિ ‘મેરે ધન કો કોઈ ચુરા ન લે જાય ।’ વહ  
ધન કો ઢાટ કર ઉપર સે લીપતા હૈ, તથા ઉસ લીપે હુએ પર ઉસ ધન કો

દ્રવ્ય કમાવાના જ્યાલથી રખડતો કરે છે, તથા કમાયેલા દ્રવ્યનું રક્ષણ કરવા રાત્રિના  
સમયમાં ચૌરાદિકના ભયથી સુખથી નિદ્રા પણ લેતો નથી. મમ્મણ શેઠ માફક  
દુઃખનો જ અનુભવ કરે છે. કહ્યું છે કે:—

“ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિત-પ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥ ૧ ॥

મુહુર્ધ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો જિમિતું નાપિ ચાદ્ય મહુશ્યામિ ।

નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વહ્ન્ય ॥ ૨ ॥

જનયન્ત્યર્જને દુઃસ્વં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।

મોહયન્તિ ચ સંપત્તૌ, કથમર્થાઃ સુખાવહાઃ ” ॥ ૩ ॥

અર્થ:—ધનલોભી પુરુષ જમીનમાં દાટેલું પોતાનું ધન કોઈ વખત બહાર  
કાઢે છે, કોઈ વખત જમીનમાં દાટે છે, ક્યારેક પેટી આદિમાં રાખે છે, વળી  
રાત્રે ચોર આદિના ભયથી સુતો નથી અને દિવસે પણ શંકા કરે છે કે—“મારું  
ધન કોઈ ચોરી ન જાય.” વળી ધનને દાટીને ઉપરથી લીધે છે, તથા તે લીધેલી



મુદ્ધસ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો, જિમિતું નાપિ ચાદ્ય મદ્ધ્યામિ ।  
 નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વદ્ધ ॥ ૨ ॥ અપિ ચ-  
 જનમન્ત્યર્જને દુઃખં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।  
 મોહયન્તિ ચ સમ્પત્તૌ, કથમર્થાઃ સુખાવહાઃ ? ॥ ૩ ॥

પુનરપ્યર્થાલોભિનોઽનુચિતકરણે પ્રવૃત્તિ દર્શયતિ-“આલુમ્પઃ” इति, आ=समन्तालुम्पतीत्यालुम्पो लुण्टाको हठादनापहारकः, स च लोभमहाशीविषदष्टो विस्मृतकर्तव्याकर्तव्यो धनमेवार्जनीय-मिति मन्यमानः कटुककटुकतरविपाकजनकं पहिचानने के लिए पुनः पुनः मुद्रा-निशान करता रहता है ॥ १ ॥ वह न पूरा खाता है न अच्छा खाने के लिये प्रवृत्त होता है तथा बोलता है कि-मैं आज न स्नान करूंगा और न घर पर ही रह सकूंगा, क्योंकि आज मुझे बहुत काम करना है ॥ २ ॥ यह धन उपार्जनकाल में दुःख उत्पन्न करनेवाला है, उसके नष्ट होने पर वह परमदुःख का कारण होता है, बढ़ जाने पर वह मोहकषाय को बढ़ाता है तो फिर कहो कि धन सुखका कारण कैसे हो सकता है ? अर्थात् नहीं हो सकता । अर्थ अनर्थ का ही मूल है किन्तु सुख का नहीं ॥ ३ ॥

अर्थलोभी और भी अयोग्यकार्य में प्रवृत्ति करता है इसे प्रकट करते हैं-आलुम્पः-‘आ-समन्तात् लुम्पति-इति आलुम्पः लुण्टाकः हठादनापहारकः’ जो जबर्दस्ती से दूसरों का धन लूटे-उसे आलुम्प कहते हैं । लूट यह इसलिये मचाता है कि यह लोभरूपी महासर्प से डसा हुआ रहता है । अतः इसे अपने कर्तव्याकर्तव्य का कुछ भी भान

જગ્યા ઉપર તે ધનની પિછાણ માટે નિશાની પણ કરે છે ॥ ૧ ॥ તે પુરું ખાતો પણ નથી તેમજ સાફ ખાવાને પ્રવૃત્ત થતો નથી. અને ખાવે છે કે-હું આજે સ્નાન કરવાનો નથી તેમજ ઘેર પણ રહેવાનો નથી, કારણકે આજે મારે ઘણું કામ છે (૨) આ ધન, ઉપાર્જનકાળમાં દુઃખ ઉત્પન્ન કરવાવાળું છે અને તેનો નાશ થવાથી વધારે દુઃખનું કારણ થાય છે. વધી જતાં ઉપર તે મોહકષાયનો વધારો કરે છે તો હવે કહો ! ધન સુખનું કારણ કેવી રીતે થાય ? અર્થાત્ થઈ શકતું નથી. અર્થ અનર્થનું જ મૂળ છે પણ સુખનું નહિ ॥ ૩ ॥

અર્થલોભી વળી અયોગ્ય કાર્યમાં પણ પ્રવૃત્તિ કરે છે તે પ્રકટ કરે છે:- આલુમ્પઃ ‘આ-સમન્તાત્ લુમ્પતિ-इति आलुम्पः-लुण्टाकः हठादनापहारकः’ જે જબરાઈથી બીજાનું ધન લુંટે-તેને આલુમ્પ કહે છે. લુંટ તે એવી મચાવે છે કે જાણે લોભરૂપી મહાસર્પથી ડસાયેલો હોય, અને તેવે વખતે કર્તવ્યા-

निर्लाञ्छन-गलकर्तन-गृहदाहादिकं क्रूरकर्म करोति 'धनमेव सारं' मन्यमानो हि सततं तद्भावाय मोहाविष्टो भ्रमति । स चार्थलाभाय किं करोतीत्याह-"सहसाकार" इति आर्षत्वात्कर्तरि घञ् । सहसा करोतीति सहसाकारः । स्वहिताहितमविचार्य कर्मकारी । यथा मृगादिः क्षेत्रे जालादिकं विलोक्यापि तमवज्ञाय धान्यादिभक्षण-लोभेन स्ववधमप्यविचार्य जाले बद्धो भवति म्रियते च पश्चात्तेनैव निमित्तेन । तथैव लोभाकुलितचेता धनलाभपरायणः स्वपरप्राणघातकमपि कर्म करोति । अर्थलाभाय नहीं रहता, उस समय एक यही उसका लक्ष्य रहता है कि किसी भी तरह से द्रव्य एकत्रित करना चाहिये । इस ख्याल से वह भयंकर से भी भयंकर भविष्यत्कालीन कटुक विपाक की परवाह न करके लोक-निन्दित निर्लाञ्छन, दूसरों का गला घोटना, दूसरों का घर-बार फूंकना आदि क्रूर कर्म कर डालता है । 'संसार में सार वस्तु एक द्रव्य ही है' ऐसा मान कर निरंतर उसके लाभ के लिये मोहाधीन हो घूमता रहता है । और इसके लाभ के लिये वह "सहसाकारः" हिताहित के विवेक से विकल हो अयोग्य कर्म करने के लिये तत्पर हो जाता है । जैसे मृगादि पशु क्षेत्र में विस्तीर्ण जाल को देख कर भी उसकी कुछ भी परवाह न कर धान्यादिक खाने के लोभ से अपने वध (मृत्यु) की भी उपेक्षा कर जाल में फंस जाते हैं और उसी में फंसे मर जाते हैं । उसी प्रकार लोभ से आकुलितमति होकर धन के लाभ के लिये तत्पर हुआ जीव भी स्व और पर के प्राणों को घात करने वाले क्रूर कर्मों को किया करता है । द्रव्य के लाभ के लिये प्रयत्नशील बना हुआ यह प्राणी जिस प्रकार

कर्तव्यनुं कांछे पणु लान नहि राभतां इक्षत अेक न लक्ष्य राभे छे के कोछे पणु प्रकारे द्रव्य अेकत्रित करी लउं. आवा जयालथी ते लयंकरमां लयंकर लविष्यत्कालीन कटुक विपाकनी परवाड पणु न करतां दोकनिन्दित-निर्लाछन, भीजानुं गणुं दयावपुं, भीजानुं घर भाणपुं, आदि क्रूर कर्म करे छे 'संसारमां सार वस्तु अेक द्रव्य न छे' अेबुं मानीने निरंतर तेनी प्राप्ति माटे मोहाधीन थरुं इरतां रहे छे. द्रव्यप्राप्ति माटे ते "सहसाकारः" हिताहितना विवेकथी विक्षुण थरुं अयोग्य कर्म करवा तत्पर थाय छे. जेम मृगादि पशु क्षेत्रमां विस्तीर्ण जालने देभीने पणु तेनी परवाड नहि करतां धान्यादिक भावाना दोलथी पोतामा मृत्युनी पणु उपेक्षा करी जालमां इसे छे अने तेनी अंदर इसीने तेमां न मरे छे. ते प्रकारे दोलथी आकुलितमतिना अनीने धनना लाल माटे तत्पर थयेल एव पणु पोताना अने भीजाना प्राणाना घात करवामां क्रूर कर्मेनि करे छे; द्रव्यना लाल माटे प्रयत्नशील अनी ते प्राणी जेम धन कमावाना



પ્રયત્નમાનો હિ યથોપાયાન્ પશ્યતિ તથા નાપાયાન્ । અર્થાતુરો હિ ન સ્વજનાદિક-  
મપિ ગણયતિ તમપિ વશ્ચયતિ । પુનરર્થાલોભી કીદૃશો ભવતીત્યાહ—“ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ”  
ઇતિ, વિ=વિવિધં નિવિષ્ટમ્ અનેકથા સ્થિતં ધનાર્જને ચિત્તં યસ્ય સ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ।

યદ્વા—માતાપિત્રાદ્યભિસમ્બન્ધે વિનિવિષ્ટં ચિત્તમન્તઃકરણં યસ્ય સ વિનિ-  
વિષ્ટચિત્તઃ, સતતં તસ્ય ચિત્તે ધનલાભાભિનિવેશ ઉપજાયત ઇતિ ભાવઃ । એવંભૂતઃ  
કિં કરોતીત્યાહ—“ અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ ” ઇતિ । અત્ર=અસ્મિન્ માતાપિતૃભ્રાતૃ-  
ભગિની-ભાર્યા-પુત્ર-દુહિતૃ-સ્ત્રુષા-મિત્ર-પિતૃવ્ય-શ્વશુર-હસ્ત્ય-શ્વાદિકે, શબ્દાદિ-  
કામગુણે વા વિનિવિષ્ટચિત્તઃ શસ્ત્રે=ષડ્જીવનિકાયોપમર્દનલક્ષણે પુનઃ પુનઃ પ્રવર્તતે ।  
રાગાદ્યાવિષ્ટચેતા સંયોગાર્થી અર્થાલોભી આલુમ્પઃ સહસાકારસ્તત્ર વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ષડ્-  
જીવનિકાયસ્યારમ્ભે વારં વારં પ્રવર્તત ઇતિ સૂત્રાશયઃ ॥ ૧ ॥

ધન કમાને કે ઉપાયોં કી ઓર દેખતા હૈ ઉસ પ્રકાર સે કષ્ટોં કી તરફ  
નહીં દેખતા, અર્થાત્ પ્રાણી અપને નિજ જન કી ભી ઇજ્જત નહીં કરતા,  
પ્રત્યુત ઉન્હેં ભી ઠગને કી ફિરાક મેં રહતા હૈ । ક્યોંકિ વહ “ વિનિવિષ્ટ-  
ચિત્તઃ ” અનેક પ્રકાર સે ધન કે ઉપાર્જન કરને મેં આસક્તચિત્તવાલા  
હોતા હૈ । હસ પ્રકાર વહ “ અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ ” માતા, પિતા, ભાઈ,  
બહિન, સ્ત્રી, પુત્ર, પુત્રી, વહુ, મિત્ર, કાકા, સસુર ઓર હસ્તિ આદિ  
પદાર્થોં મેં અથવા શબ્દાદિકવિષયોં મેં વિનિવિષ્ટચિત્ત-તલીન બનકર  
ષડ્જીવનિકાય કે ઉપમર્દનરૂપ શસ્ત્રમેં વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ ।  
હસ સૂત્ર કા ફલિતાર્થ યહ હુઆ કિ રાગાદિકોં મેં તલીનચિત્તવાલા  
સંયોગાર્થી, અર્થાલોભી, આલુમ્પ સહસાકારી પ્રાણી, ઉન ૨ પદાર્થોં મેં  
તત્પર હોકર ષડ્જીવનિકાય કે આરંભ મેં વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ॥ ૧ ॥

ઉપાયો તરફ જ દેખે છે તે પ્રમાણે કષ્ટો તરફ દેખતો નથી અર્થાત્ પ્રાણી પોતાના  
નિજ જનની પણ ઇજ્જત કરતો નથી, ઉદ્દું તેને પણ હુંડવાની ફિકર કરે છે,  
કારણકે તે “ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ” અનેક પ્રકારથી ધન ઉપાર્જન કરવામાં આસક્ત-  
ચિત્તવાળો થાય છે. આ પ્રકારે તે “ અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ ” માતા, પિતા,  
ભાઈ, બહિન, સ્ત્રી, પુત્ર, પુત્રી, વહુ, મિત્ર, કાકા, સસરા અને હસ્તિ આદિ  
પદાર્થોમાં અથવા શબ્દાદિકવિષયોમાં વિનિવિષ્ટચિત્ત-તલીન બનીને ષડ્જીવ-  
નિકાયના ઉપમર્દનરૂપ શસ્ત્રમાં વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે. આ સૂત્રનો ફલિતાર્થ  
એ થાય છે કે રાગાદિકોમાં તલીનચિત્તવાળા સંયોગાર્થી, અર્થાલોભી, આલુમ્પ  
સહસાકારી પ્રાણી તેવા પદાર્થોમાં તત્પર બનીને ષડ્જીવનિકાયના આરંભમાં  
વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે. ૧

યદિ મનુષ્યો દીર્ઘાયુરજરામરો વા ભવેત્તદા યુક્તો માતા-પિત્રાદિષ્વભિષ્વજ્ઞ-સ્તસ્ય, કિન્તુ નૈવમસ્તિ। મનુષ્યશિરસિ ચ મૃત્યુરનિશં ભ્રમતિ। જરાજીર્ણસ્ય કર્તવ્યાકર્તવ્યશૂન્યસ્ય પ્રાણિનો વાર્ધકે માતાપિત્રાદિષ્વભિષ્વજ્ઞેડપિ તદર્થપ્રયાસાક્ષ-મત્વેન મૂઢતા જાયતેતિ દર્શયતિ-“અપ્પં ચ” ઇત્યાદિ।

મૂલમ-અપ્પં ચ ચ્ચલુ આઝયં ઇહમેગેસિં માણવાણં, તં જહા સોયપરિણાણેહિં પરિહાયમાણેહિં, ચક્કુપરિણાણેહિં પરિહાય-માણેહિં, ઘાણપરિણાણેહિં પરિહાયમાણેહિં, રસણપરિણાણેહિં પરિહાયમાણેહિં, ફાસપરિણાણેહિં પરિહાયમાણેહિં, અભિવ્વકંતં ચ ચ્ચલુ વયં સંપેહાય તઓ સે ઇગયા મૂઢભાવં જણયઇ (સૂ. ૨)

યદિ મનુષ્ય દીર્ઘાયુ હોતા અથવા અજર અમર હોતા તો માતા-પિતાદિક મેં હસકા મમત્વ કરના ખી યુક્તિયુક્ત થા, કિન્તુ એસા તો હૈ નહીં ક્યોંકિ નિરન્તર હી હસકે મસ્તક પર મૃત્યુ ઘૂમતી રહતી હૈ। ઓર જરા સે સમયાનુસાર યહ જીર્ણકાય ખી હોતા રહતા હૈ। હસ પરિ-સ્થિતિ મેં મૃત્યુ ઓર જરા કે વશ મેં પડે હુઇ હસકે હૃદય મેં સદા આકુલ-વ્યાકુલ પરિણામોં કી પરિણતિ જાગૃત હોતી રહતી હૈ તબ હસમેં હી રાતદિન મગ્ન હુઆ યહ જબ સ્વયં અપને કર્તવ્યાકર્તવ્ય કે બોધ સે હી વિકલ રહતા હૈ તબ યહ અપને સગે-સમ્બન્ધી માતાપિતાદિક કા અભિષ્વંગ-સંબંધ હોને પર ખી અપની તરફ સે હનકે લિયે થોડા સા ખી પ્રયાસ-ઉદ્યમ નહીં કર સકતા હૈ, જબ પ્રયાસ નહીં કર સકતા હૈ તબ વહ કિંકર્તવ્યમૂઢ બન જાતા હૈ। હસી વાતકો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ:-“અપ્પં ચ ચ્ચલુ આઝયં” ઇત્યાદિ।

કહાય મનુષ્ય દીર્ઘાયુ હોત અથવા અજર અમર હોત તો માતાપિતાદિકમાં તેનું મમત્વ કરવું યુક્તિયુક્ત હતું પણ એવું તો છે નહિ, કારણકે નિરંતર તેના માથા ઉપર માત ભમે છે, અને ઘડપણથી સમયાનુસાર તે જીર્ણકાય પણ થાય છે. આવી પરિસ્થિતિમાં મૃત્યુ અને જરાની વશમાં પડેલો તેના હૃદયમાં હમેશાં આકુળ-વ્યાકુળ પરિણામોની પરિણતિ જાગૃત રહે છે તેમાં જ રાતદિવસ મગ્ન થએલો તે પોતે પોતાના કર્તવ્યા-કર્તવ્યના બોધથી જ વિકળ રહે છે ત્યારે તે પોતાના સગાં સંબંધી માતા પિતાદિકના અભિષ્વંગ-સંબંધ હોવા છતાં પણ પોતાની તરફથી તેમને માટે થોડો પણ પ્રયાસ કરી શકતો નથી:-જ્યારે પ્રયાસ કરી શકતો નથી ત્યારે તે કિંકર્તવ્યમૂઢ બની જાય છે. પૂર્વોક્ત વાતને જ સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે-“અપ્પં ચ ચ્ચલુ આઝયં” ઇત્યાદિ



છાયા—અલ્પં ચ खलु आयुष्कर्मिहैकेषां मानवानाम् । तद्यथा—श्रोत्रपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, चक्षुःपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, घ्राणपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, रसन-परिज्ञानैः परिहीयमानैः, स्पर्शपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, अभिक्रान्तं च खलु वयः सम्प्रेक्ष्य ततः स एकदा मूढभावं जनयति ॥ २ ॥

ટીકા—અલ્પં=સ્તોક, ‘ચ’ શબ્દેન દીર્ઘાયુષ્કપરિગ્રહઃ । खलु શબ્દોડવધારણે, ‘આયુઃ’ પૂર્વકૃતકર્મભોગાર્થમૈતિ=સમાગચ્છતીત્યાયુઃ । यद्वैति=સમાગચ્છતિ સ્વકૃત-કર્મપ્રાપ્તનરકાદિગતિસ્થિતજન્તોઃ પ્રતિબન્ધકતામિત્યાયુઃ, भवस्थितिहेतुः कर्मपुद्गल-पुञ्जमित्यर्थः । आयुर्हि सुखदुःखाधारं देहस्थितं जीवं तत्तद्रतौ धरति । उक्तञ्च—

“दुःखं न देइ आऊ, न वि य सुहं देइ चउसुवि गईसु ।

दुःखसुहाणाधारं, धरइ देहद्वियं जीवं ॥ १ ॥”

છાયા—दुःखं न ददात्यायुर्नापि च सुखं ददाति चतसृष्वपि गतिषु ।

दुःखसुखानामाधारं, धरति देहस्थितं जीवम् ॥ इति ।

इस संसार में कितनेक मनुष्यों की आयु अल्प है, पूर्ण आयु को भोगते हुए भी जब यह प्राणी वृद्धावस्थासंपन्न होता है तब इसकी श्रोत्र-इन्द्रिय अपने विषय के ग्रहण करने में असमर्थ हो जाती है, चक्षु-इन्द्रिय रूप के देखने में क्षीण शक्तिवाली हो जाती है, घ्राण-इन्द्रिय सुगंध-दुर्गन्ध के बोध करने से विमुख हो जाती है, रसना-इन्द्रिय ५ प्रकार के रसास्वादनरूप अपने कार्य से शिथिल बन जाती है और स्पर्शन-इन्द्रिय भी ८ प्रकार के स्पर्श को बतलाने में अक्षम हो जाती है । इस प्रकार प्रत्येक इन्द्रियाँ जब इस अवस्था में अपने २ कर्तव्य से विमुख हो जाती हैं, तब यह प्राणी उस अवस्था में कर्तव्याकर्तव्य के ज्ञान से शून्य हो जाता है ।

આ સંસારમાં કેટલાક મનુષ્યોની આયુ ઓછી છે. પૂર્ણ આયુને ભોગવતો છતાં પણ ન્યારે તે પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન થાય છે ત્યારે તેની શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય પોતાનો વિષય ગ્રહણ કરવામાં અસમર્થ બને છે. ચક્ષુઇન્દ્રિય, રૂપ દેખવામાં ક્ષીણશક્તિવાળી થાય છે. ઘ્રાણઇન્દ્રિય સુગંધ દુર્ગંધનો બોધ કરવામાં વિમુખ થઈ બળ્ય છે. રસના-ઇન્દ્રિય પાંચ પ્રકારના રસાસ્વાદન રૂપ પોતાના કાર્યથી શિથિલ બની બળ્ય છે અને સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય પણ આઠ પ્રકારના સ્પર્શ બતાવવામાં અક્ષમ થાય છે. આ પ્રકારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય ન્યારે આ અવસ્થામાં પોત-પોતાના કાર્યથી વિમુખ થાય છે ત્યારે આ પ્રાણી આ અવસ્થામાં કર્તવ્યાકર્તવ્યના જ્ઞાનથી શૂન્ય થાય છે.

ટીકાર્થ:-સૂત્ર મેં “અપ્પં ચ ” યહાં પર જો “ચ” શબ્દ હૈ ઉસસે લીધ આયુ કા ભી ગ્રહણ હોતા હૈ । “સ્વલુ” શબ્દ અવધારણ-નિશ્ચય અર્થ મેં આયા હૈ । પૂર્વકૃત કર્મ કે ભોગને કે લિયે જો જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ વહ આયુ હૈ અથવા જિસકે દ્વારા જીવ ઇક ગતિ સે દૂસરી ગતિ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ વહ આયુ હૈ અથવા અપને દ્વારા કિયે ગયે કર્મ કે અનુસાર પ્રાપ્ત નરકાદિ ગતિ મેં રહનેવાલે જીવ કો જો અપની સ્થિતિ તક ઓર દૂસરી ગતિ મેં ન જાને દેવે વહ આયુ હૈ । અથવા-અજ્ઞાલિ મેં રહે હુએ જલ કી તરહ જો પ્રતિક્ષણ હાસ કો પ્રાપ્ત હો વહ આયુ હૈ । ઇન તમામ વ્યુત્પત્તિયોં દ્વારા યહી નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈ કિ જો કર્મ-પુદ્ગલપુજ્ઞ ઇસ જીવ કો પ્રાપ્ત હુએ ભવ મેં રોક રહે વહ આયુ હૈ । ક્યોં કિ સુખ દુઃખ કા આધારભૂત ઓર દેહ મેં રહને વાલે જીવ કો આયુ હી ડસ ૨ ગતિ મેં અપને ઉદયપર્યન્ત રોકે રહતા હૈ । આયુ કર્મજીવ કો ચારોં હી ગતિયોં મેં ન તો દુઃખ દેતા હૈ ઓર ન વૈષયિક સુખ હી દેતા હૈ । કિન્તુ જો જીવ જિસ ગતિ કે આયુ કો બાંધ કર ડસ પર્યાય કા ભોગ કરતા હૈ સુખ દુઃખ કે આધારભૂત ડસ જીવકો વહ ડસ ગતિ મેં ડસ વિવક્ષિત પર્યાય મેં રોકે રહતા હૈ ।

ટીકાર્થ:-સૂત્રમાં “અપ્પં ચ” આ ઠેકાણે જે “ચ” શબ્દ છે તેનાથી લીધ આયુતું ગ્રહણ થાય છે “સ્વલુ” શબ્દ અવધારણ-નિશ્ચય-અર્થમાં આવ્યો છે. પૂર્વકૃત કર્મ ભોગવવાને જે જીવને પ્રાપ્ત થાય છે તે આયુ છે, અથવા જે દ્વારા જીવ એક ગતિથી બીજી ગતિમાં જાય છે તે આયુ છે, અથવા પોતાના દ્વારા કરેલા કર્માનુસાર પ્રાપ્ત નરકાદિ ગતિમાં રહેવાવાળા જીવને જે પોતાની સ્થિતિ સુધી બીજી ગતિમાં ન જવાદે તે આયુ છે, અથવા અજ્ઞાતિમાં રહેલા પાણીની માફક જે પ્રતિક્ષણ ઘટતું જાય છે તે આયુ છે. આવી તમામ વ્યુત્પત્તિયો દ્વારા એ નિષ્કર્ષ નિકળે છે કે જે કર્મપુદ્ગલપુજ્ઞ આ જીવને પ્રાપ્ત થએલા ભવમાં રોકી રાખે તે આયુ છે, કારણકે સુખ-દુઃખના આધારભૂત અને દેહમાં રહેનાર જીવને આયુ જ તે તે ગતિમાં પોતાના ઉદયપર્યન્ત રોકી રાખે છે, આયુકર્મ જીવને ચારે ગતિમાં દુઃખ અને વૈષયિક સુખ તથા આપતું પણ જે જીવ જે ગતિની આયુને બાંધીને તે પર્યાયનો ભોગ કરે છે. સુખ દુઃખના આધારભૂત તે જીવને તે ગતિમાં વિવક્ષિત પર્યાયમાં રોકી રાખે છે.



પુરુષસ્યાયુર્વિદ્યુદિવ ક્ષણભદ્ગુરં, તૈલરહિતો દીપો યથા સ્વલ્પેનૈવ કાલેન નાશ-  
મેતિ તથાઽઽયુરપિ તત્તદ્ભવસમ્બન્ધિભોગ્યકર્માભાવે સ્વલ્પેનૈવ કાલેન સમાપ્તિમુપ-  
ગચ્છતિ । આયુર્હિં જલતરન્ગમિવ, જલસ્થિતેન્દુપ્રતિબિમ્બમિવ, વિદ્યુદિવ ધર્તુમશક્યં  
ભવતીત્યાયુષોઽલ્પત્વં માનવાનામિત્યભિપ્રાયમેવ મનસિ નિધાય દર્શયતિ—“ઈહ એકેષાં  
માનવાનામલ્પમાયુષ્કમ્ ” । અત્રૈકેષામિતિ કથનેન સંયમરહિતાનાં સાવધાનુષ્ઠાનેન  
દીર્ઘમપ્યાયુરલ્પમિવ ભવતિ, તથૈવ સંયમિનાં ચ સ્વલ્પમપ્યાયુર્નિરવધાનુષ્ઠાનેન દીર્ઘા-

જિસ પ્રકાર તૈલસે રહિત દીપક થોડે હી સમય મેં બુઝ જાતા હૈ  
ઉસી પ્રકાર આયુકર્મ બી તત્તદ્ભવસમ્બન્ધી કર્મ પુઢ્ઢલોં કે અભાવસે  
થોડેસે હી કાલમેં સમાપ્ત હો જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર જલકીં તરન્ગ ઓર  
પાનીમેં પ્રતિબિમ્બિત ચન્દ્રમા કા પ્રતિબિમ્બ, અથવા બિજલી લાખ પ્રયત્ન  
કરને પર બી નહીં સ્થિર કિયે યા ઠહરાયી જા સકતી હૈં ઉસી પ્રકાર  
તત્તદ્ભવસમ્બન્ધી આયુકી સમાપ્તિ હોને પર ઉસે એક ક્ષણ બી ફિર નહીં  
બઢાયા યા ઠહરાયા જા સકતા । હસી અભિપ્રાય કો ચિત્તમેં ધારણ કર  
સૂત્રકારને—“ઈહ એકેષાં માનવાનામ્ અલ્પમ્ આયુષ્કમ્ ” યહ કહા હૈ ।  
અબ હસી વાતકો સ્પષ્ટ કરતે હૈ—

યહાં પર કિતનેક મનુષ્યોં કા જો આયુ અલ્પ કહા ગયા હૈ ઉસસે  
યહ સમજના ચાહિયે કિ જો મનુષ્ય રાત-દિન સાવધકાર્યોં કે અનુ-  
ષ્ઠાનમેં હી લવલીન હો રહે હૈં—સંયમ-ભાવસે રહિત હૈં ઉન મનુષ્યોં કા  
દીર્ઘકાલિક આયુકર્મ બી ઉસ અનુષ્ઠાનસે અલ્પ જૈસા હો જાતા હૈ, તથા  
સંયમી જીવોં કા અલ્પ બી આયુકર્મ નિરવધ અનુષ્ઠાનસે દીર્ઘ જૈસા હો

જેવી રીતે તેલ વગરનો દીવો થોડાજ સમયમાં યુઝાઈ જાય છે તે પ્રકારે  
આયુકર્મ પણ તત્તદ્ભવસંબંધી કર્મપુદ્ગલોના અભાવથી થોડાજ કાળમાં  
સમાપ્ત થાય છે. જેમ પાણીનું મોઝું, અને ચન્દ્રમાનો પાણીમાં પડતો પ્રતિબિમ્બ,  
અથવા વિજળી લાખ પ્રયત્ન કરવા છતાં પણ સ્થિર કરાતી નથી તેવી રીતે  
તત્તદ્ભવસંબંધી આયુની સમાપ્તિ થવાથી તે એક પણ ક્ષણ રોકી અગર વધારી  
શકાતું નથી. આ અભિપ્રાય ચિત્તમાં ધારણ કરી સૂત્રકારે “ઈહ એકેષાં માન-  
વાનામ્ અલ્પમ્ આયુષ્કમ્ ” એમ કહ્યું છે. હવે આ વાતને સ્પષ્ટ કરે છે:—

આ જગ્યાએ કેટલાક મનુષ્યોની જે આયુ અલ્પ કહેવામાં આવી છે તેથી  
એમ સમજવાનું છે કે જે મનુષ્ય રાત્રિનિ સાવધ કાર્યોના અનુષ્ઠાનમાં જ રચેલો  
રહે છે, સંયમભાવથી રહિત છે તેવા મનુષ્યોના દીર્ઘકાલિક આયુકર્મ પણ આવા  
અનુષ્ઠાનથી ટુંકા જેવા થઈ જાય છે, તથા સંયમી જીવોના ટુંકા પણ આયુકર્મ

ચુરિવ વર્તે, દીર્ઘકાલિકજન્મમરણોચ્છેદેનાયુષઃ સાફલ્યાત્ । इह=સંસારે એકેષાં =કતિપયાનાં માનવાનામાયુરલ્પં ભવતીત્યન્વયઃ । આયુષોડલ્પત્વશ્ચ ક્ષુદ્રકભવાપેક્ષ-યાડન્તર્મુહૂર્તમાત્રં જઘન્યમ્ । ચ શબ્દાદધિકં ચોત્તરોત્તરસમયાદિવૃદ્ધ્યા યુગલિકમા-શ્રિત્ય પલ્યોપમત્રયપરિમિતં ભવતિ । પલ્યોપમત્રયાયુરપિ સંયમકાલાભાવાદધિકમ-પ્યલ્પમેવ ।

અન્તર્મુહૂર્તાદારમ્ય દેશોનપૂર્વકોટિપરિમિતાયુષિ સંયમાયુષ્કસ્યાલ્પત્વાત્તદ-પ્યલ્પમેવ ભવતિ ।

જાતા હૈ । દીર્ઘકાલિક જન્મ-મરણ કે વિનાશ સે હી તો આયુ કી સફલતા હૈ ।

“અલ્પં ચ સ્વલુ આયુષ્કમ્ इह एकेषां मानवानाम् ॥ यहां पर “इह एकेषां मानवानाम् आयुः अल्पं भवति” इस प्रकार अन्वय लगाना चाहिए । આયુકી અલ્પતા ક્ષુદ્રક-સવસે છોટ-ભવકી અપેક્ષાસે પ્રકટ કી ગઈ હૈ, ક્યોંકિ મનુષ્ય ઔર તિર્યંચોં કે આયુકર્મકી સ્થિતિ શાસ્ત્રમેં દો પ્રકારસે વર્ણિત હૈ-(૧) જઘન્ય ઔર (૨) ઉત્કૃષ્ટ । જઘન્ય સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તકી હૈ, ઔર ઉત્કૃષ્ટ ઉત્તરોત્તર એકસમયાદિ કી વૃદ્ધિસે લગા કર ત્રીન પલ્ય કી હૈ । યહ યુગલિયોં કી અપેક્ષાસે હૈ । ભોગભૂમિ મેં જીવકો સંયમ કી પ્રાપ્તિ હોનેકા અવસર હી નહીં હૈ, ઇસ લિયે ત્રીન પલ્ય પરિમિત દીર્ઘ આયુ મી અલ્પ જૈસા હી હૈ, અર્થાત્ ઉસસે જીવકા નિજ કોઈ મી પરમાર્થ નહીં સધતા, કેવલ ભોગાદિકોં કે ઉપભોગસે હી વહ નિષ્ફલ હો જાતા હૈ । સંયમારાધન સે હી કાલ કે

નિરવધ અનુષ્ઠાનથી દીર્ઘ જેવા થાય છે. દીર્ઘકાલિક જન્મ-મરણના વિનાશથી જ આયુની સફળતા છે.

“અલ્પં ચ સ્વલુ આયુષ્કમ્ इह एकेषां मानवानाम्”

અહીં “इह एकेषां मानवानाम् आयुः अल्पं भवति”

આ પ્રકારે અન્વય લગાડવો જોઈએ. આયુની અલ્પતા ક્ષુદ્રક-અધાથી નાના-ભવની અપેક્ષાથી પ્રકટ કરેલ છે કારણકે મનુષ્ય અને તિર્યંચોના આયુ-કર્મની સ્થિતિ શાસ્ત્રમાં બે પ્રકારે વર્ણિત છે. (૧) જઘન્ય અને (૨) ઉત્કૃષ્ટ. જઘન્ય સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તની છે અને ઉત્કૃષ્ટ ઉત્તરોત્તર એકસમયાદિની વૃદ્ધિથી લગાવી ત્રણ પલ્યની છે, આ યુગલિયાની અપેક્ષાથી છે. ભોગભૂમિમાં જીવને સંયમની પ્રાપ્તિ થવાનો અવસર નથી, માટે ત્રણ પલ્યની પરિમિત દીર્ઘ આયુ પણ અલ્પ જેવી છે. અર્થાત્ તેથી જીવનો નિજ કોઈ પણ પરમાર્થ સધાતો નથી, કેવળ ભોગાદિકોના ઉપભોગથી જ તે નિષ્ફળ થાય છે. સંયમારાધનથી જ



યદ્વા ત્રિપલ્યોપમપરિમિતમપ્યાયુરલ્પમેવ, યતોઽન્તર્મુહૂર્તે વિહાય શેષસર્વસ્યાપ્યાયુષોઽપવર્તનશીલત્વાત્, પ્રતિક્ષણમાયુષઃ ક્ષીયમાણત્વાચ્ચ । અપવર્તનં નામ દીર્ઘ-સ્થિતિકાલિકકર્મપરમાણૂનપગમય્ય તેષાં હ્રસ્વસ્થિતિકાલિકતાસમ્પાદનમ્ । આયુશ્ચ સોપક્રમ-નિરુપક્રમભેદેન દ્વિવિધમ્, ઉક્તશ્ચ ભગવતા ભગવત્યામ્—

“ જીવા ણં મંતે ! કિં સોવક્કમાડયા નિરુવક્કમાડયા ? ગોયમા ! જીવા સોવક્ક-માડયાવિ નિરુવક્કમાડયાવિ ” ઇતિ ( ભગવતી, શ. ૨૦ ડ. ૧૦ )

છાયા — જીવાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! કિં સોપક્રમાયુષ્કા નિરુપક્રમાયુષ્કાઃ ? ગૌતમ ! જીવાઃ સોપક્રમાયુષ્કા અપિ નિરુપક્રમાયુષ્કા અપિ ॥ ઇતિ ॥

એક ક્ષણ તક કી સફલતા માની ગઈ છે । उसी प्रकार अन्तर्मुहूर्तसे लगा कर देशोनपूर्वकोटि-देश ऊन एक करोड पूर्व-परिमित आयु प्राप्त होने पर भी उसमें संयम कालका अभाव होने से वह भी अल्प ही है ।

अथवा—अन्तर्मुहूर्तकाल परिमित आयुको छोड़ कर शेष समस्त आयु अपवर्त्तनशील-होने से और क्षण २ में आयुका क्षय होने से त्रिपल्योपम परिमित-तीन पल्योपम का-आयु भी अल्प ही है ।

दीर्घकालिक आयुકર્મ કે પરમાણુઓં કો ચીંચ કર થોડી સ્થિતિ-વાલે આયુકર્મ કે પરમાણુઓં મેં સ્થાપિત કરને કા નામ અપવર્તન છે ।

સોપક્રમ ઓર નિરુપક્રમ કે ભેદ સે આયુ દો પ્રકાર કા છે । ભગવતી સૂત્રમેં ભગવાને યહી વાત કહી છે—

“ જીવા ણં મંતે ! કિં સોવક્કમાડયા નિરુવક્કમાડયા ?, ગોયમા ! જીવા સોવક્કમાડયા વિ નિરુવક્કમાડયા વિ ” ઇતિ । ( ભ. શ. ૨૦ ડ. ૧૦ )

કાળની એક ક્ષણ સુધીની સફળતા મનાય છે, તે પ્રકાર અન્તર્મુહૂર્તથી લગાવી દેશોનપૂર્વ કોટિ-દેશ ઉન એક કરોડ પૂર્વ-પરિમિત આયુ પ્રાપ્ત થવાથી પણ તેમાં સંયમકાળનો અભાવ હોવાથી તે પણ અલ્પ છે, અથવા અન્તર્મુહૂર્તકાળપરિમિત આયુને છોડીને શેષ સમસ્ત આયુ અપવર્તનશીલ હોવાથી અને ક્ષણક્ષણમાં આયુનો ક્ષય હોવાથી ત્રિપલ્યોપમપરિમિત ત્રણ પલ્યોપમ આયુ પણ અલ્પ છે.

દીર્ઘકાલિક આયુકર્મના પરમાણુઓને ખેંચીને થોડી સ્થિતિવાળા આયુકર્મના પરમાણુઓમાં સ્થાપિત કરવાનું નામ અપવર્તન છે.

સોપક્રમ અને નિરુપક્રમના ભેદથી આયુ બે પ્રકારની છે. ભગવતી સૂત્રમાં ભગવાને આ વાત કહી છે:—

“ જીવા ણં મંતે ! કિં સોવક્કમાડયા નિરુવક્કમાડયા ?, ગોયમા ! જીવા સોવક્કમાડયા વિ નિરુવક્કમાડયા વિ ”

ઇતિ ( ભ. શ. ૨૦ ડ. ૧૦ ).

સોપક્રમાયુર્નામ અપ્રાપ્તકાલસ્યાયુષો નિર્જરણમ્ । તદ્વિન્નં નિરુપક્રમાયુઃ । યદા  
જીવઃ સ્વાયુષસ્તૃતીયભાગે તૃતીયભાગતૃતીયભાગે વા જઘન્યત એકેન દ્વાભ્યાં વૉત્કૃષ્ટતઃ  
સપ્તભિરષ્ટભિર્વાઽઽકર્ષૈરથવાઽન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણસ્વરૂપેઽન્તકાલે સ્વાત્મપ્રદેશનાડિકાન્ત-  
ર્વર્તિન આયુષ્કર્મવર્ગણાપુદ્ગલાન્પ્રયત્નવિશેષેનાયુષ્કતયા રચયતિ તદા નિરુપક્રમાયુ-  
ર્ભવતિ, તદ્વિન્નં સોપક્રમાયુઃ । આકર્ષશ્ચ તથાવિધેન પ્રયત્નેન કર્મપુદ્ગલોપાદાનમ્ ।

નનુ કથમેકેન દ્વાભ્યાં ત્રિભિઃ સપ્તભિરષ્ટભિર્વાઽઽકર્ષૈરાયુર્વધ્નાતીતિ ચેદાહ—

હે ભદન્ત ! જીવ સોપક્રમ-આયુવાલે હોતે હૈં યા નિરુપક્રમ-આયુવાલે ?  
હે ગૌતમ ! જીવ દોનોં પ્રકાર કે આયુવાલે હોતે હૈં સોપક્રમઆયુવાલે  
મી હોતે હૈં ઓર નિરુપક્રમઆયુવાલે મી ।

જીવકો જિતના અપને ભવકે આયુકા બંધ હુઆ હૈં ઉતને કા ઉદયા-  
નુસાર ભોગ હુઅ વિના હી કિસી નિમિત્ત કે વશ પહિલે હી ક્ષય  
હોનેકા નામ સોપક્રમ આયુ હૈં । ઇસસે વિપરીત નિરુપક્રમ આયુ હૈં ।

જિસ સમય જીવ અપની આયુ કે તૃતીય ભાગમેં અથવા તૃતીય ભાગ  
કે મી તૃતીય ભાગમેં કમસે કમ એક યા દો આકર્ષૌં સે જ્યાદા સે  
જ્યાદા સાત યા આઠ આકર્ષૌંસે અથવા અન્તસમય કે અન્તર્મુહૂર્ત-પ્રમાણ-  
કાલમેં અપની આત્માકે પ્રદેશોં કી નાડિકા કે મીતર રહે હુઅ આયુકર્મકી  
વર્ગણા કે પુદ્ગલસ્કન્ધોંકો પ્રયત્નવિશેષ સે આયુપને પરિણમાતા હૈં ઉસ  
સમય નિરુપક્રમ આયુ કા બન્ધ હોતા હૈં । ઇસસે વિપરીત સોપક્રમ આયુ  
કા બન્ધ હોતા હૈં । ઉસ પ્રકાર કે પ્રયત્ન સે કર્મપુદ્ગલોં કા ગ્રહણ કરના  
આકર્ષ હૈં ।

હે ભદન્ત ! જીવ સોપક્રમ આયુવાળાં હોય છે કે નિરુપક્રમ આયુવાળાં ?  
હે ગૌતમ ! જીવ બન્ને પ્રકારની આયુવાળા થાય છે. સોપક્રમ આયુવાળાં પણ  
થાય છે અને નિરુપક્રમ આયુવાળાં પણ થાય છે.

જીવને જોડેલો પોતાના ભવની આયુનો બંધ થયો છે તેટલાનો ઉદયાનુસાર  
ભોગ થયા વગર કોઈ નિમિત્તથી પહેલાં જ ક્ષય હોવાનું નામ સોપક્રમ આયુ  
છે, તેનાથી વિપરીત નિરુપક્રમ આયુ છે. જે વખતે જીવ પોતાની આયુના તૃતીય  
ભાગમાં અથવા તૃતીય ભાગના પણ તૃતીય ભાગમાં ઓછામાં ઓછાં એક અગર  
બે આકર્ષોંથી વધારેમાં વધારે સાત અગર આઠ આકર્ષોંથી અથવા અન્ત સમયના  
અન્તર્મુહૂર્ત પ્રમાણ કાળમાં પોતાના આત્માના પ્રદેશોની નાડિની અંદર રહેલાં  
આયુકર્મની વર્ગણના પુદ્ગલસ્કન્ધોને પ્રયત્નવિશેષથી આયુપણે પરિણમે છે,  
તે સમય નિરુપક્રમ આયુનો બંધ કરે છે. તેનાથી વિપરીત સોપક્રમ આયુ બાંધે  
છે. આ પ્રકારના પ્રયત્નથી કર્મપુદ્ગલોનું ગ્રહણ કરવું આકર્ષ છે.

યદા જીવસ્તીત્રેણાયુર્વન્ધાધ્યવસાયેન જાતિનામનિધત્તાયુર્વન્ધનાતિ તદૈકેનૈવાકર્ષેણ  
વન્ધનાતિ । મન્દેન દ્વાભ્યામાકર્ષાભ્યાં, મન્દતરેણ ત્રિભિરાકર્ષૈઃ, મન્દતમેન ચાધ્યવસા-  
યેન ચતુર્ભિઃ પશ્ચભિઃ षઙ્ભિઃ સપ્તભિસ્ત્કૃષ્ટેનાષ્ટાભિર્વાઽઽકર્ષૈર્જાતિનામનિધત્તા-  
યુર્વન્ધનાતિ ।

एवं गतिस्थित्यवगाहनाप्रदेशानुभावनामनिधत्तायुष्काण्यपि जीवो बन्धनाति ।  
निधत्तं हि आयुषा सह जातिगत्यादीनां नियमत एकरूपेण बन्धनमिति । उक्तञ्च—

‘जीवा णं भंते ! जाइनामनिधत्ताउयं कइहिं आगरिसेहिं पकरंति ? गोयमा !  
जहन्नेणं एक्केण दोहिं वा तिहिं वा उक्कोसेणं अट्ठहिं ’ इति ॥

छाया—जीवाः खलु भदन्त ! जातिनामनिधत्तायुष्कं कतिभिराकर्षैः—  
प्रकुर्वन्ति ? गौतम ! जघन्येन एकेन द्वाभ्यां वा त्रिभिर्वा उत्कर्षेणाष्टभिः । इति ।

શક્કા—યહ જીવ કૈસે એક આકર્ષસે અથવા દો આકર્ષોસે એવં  
ત્રીન અથવા સાત આઠ આકર્ષોસે આયુ બાંધતા હૈ ?

उत्तर—जिस समय जीव आयु बांधने के तीव्र अध्यवसाय से जाति-  
नामनिधत्त आयु का बंध करता है उस समय एक आकर्ष से ही उसका  
बन्ध करता है, मन्द अध्यवसाय से दो आकर्षों से, मन्दतर अध्यव-  
साय से तीन आकर्षों से, मन्दतम अध्यवसाय से पांच छह और  
सात और ज्यादा से ज्यादा आठ आकर्षों से जातिनामनिधत्त आयुका  
बंध किया करता है । इसी तरह से गति-स्थिति-अवगाहना-प्रदेश-  
अनुभाव-नामनिधत्त आयुओं का भी यह जीव बन्ध करता है । आयुबंध  
के साथ अन्य जाति गति आनुपूर्वी आदि का नियम से जो बंध होता  
है उसका नाम निधत्त है, कहा भी है—

આ જીવ કેવી રીતે એક આકર્ષથી અથવા બે આકર્ષોથી તેમજ ત્રણ  
અથવા સાત આઠ આકર્ષોથી આયુ બાંધે છે ?

જે વખતે જીવ આયુ બાંધવાના તીવ્ર અધ્યવસાયથી જાતિનામનિધત્ત  
આયુનો બંધ કરે છે, તે વખતે એક આકર્ષથી જ તેનો બંધ કરે છે, મંદ  
અધ્યવસાયથી બે આકર્ષોથી, મન્દતર અધ્યવસાયથી ત્રણ આકર્ષોથી, મન્દતમ અધ્યવ-  
સાયથી પાંચ, છ, સાત અને વધારેમાં વધારે આઠ આકર્ષોથી જાતિનામનિધત્ત  
આયુનો બંધ કરે છે. આવી રીતે ગતિ-સ્થિતિ-અવગાહના-પ્રદેશ-અનુભાવ-નામ-  
નિધત્ત આયુઓનો પણ એ જીવ બંધ કરે છે. આયુબંધની સાથે અન્ય જાતિ  
ગતિ આનુપૂર્વી આદિનો નિયમથી જો બંધ થાય છે તેનું નામ નિધત્ત છે. કહ્યું છે કે:—



સોપક્રમાયુશ્વોપક્રમકારણેદંડકશશસ્ત્રરજ્જુવદ્ધિજલપતનવિષવ્યાલશીતોષ્ણારતિ-  
ભયક્ષુત્પિપાસાવ્યાધિમૂત્રપુરીષનિરોધાતિભોજનાજીર્ણભોજનઘર્ષણશ્વાસપ્રતિરોધનપીડ-  
નરૂપૈરકાલે યસ્યાયુષો નાશસ્તત્ ।

ઉક્તશ્ચ—દંડ—કસ—સત્થ—રજ્જૂ, અગ્ની-ઉદગ—પડળં વિસં વાલા ।

સી—ઉપ્હં અરઙ્ ભયં, ખુહા પિયાસા ય વાહી ય ॥ ૧ ॥

મુત્તપુરીસનિરોધે, જિણ્ણાજિણ્ણે ય ભોયણં વહુસો ।

ઘંસણ—ઘોલણ—પીલણ, આઉસ્સ ઉવક્કમા એ ॥ ૨ ॥

છાયા—દંડઃ કશા શસ્ત્રં રજ્જુરગ્નિરુદ્ધકં પતનં વિષં વ્યાલાઃ ।

શીતમુષ્ણમરતિર્ભયં ક્ષુત્પિપાસા ચ વ્યાધિશ્ચ ॥ ૧ ॥

મૂત્રપુરીષનિરોધો જીર્ણેઽજીર્ણે ચ ભોજનં વહુશઃ ।

ઘર્ષણં ઘોલનં પીડનમાયુષ ઉપક્રમા એતે ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

“જીવા ણં મંતે ! જાહનામનિઘત્તાઉયં કતિહિં આગરિસેહિં  
પકરંતિ ? ગોયમા ! જહન્નેણં દોહિં વા તિહિં વા ઉક્કોસેણં અદ્દહિં ।” ઇતિ ।

હસ સૂત્ર કા અર્થ પૂર્વોક્તરૂપ સે હી હૈ ।

સોપક્રમ આયુ વહ હૈ જિસકા—ઉપક્રમ કે કારણભૂત દંડ, ચાબુક,  
શસ્ત્ર, રજ્જુ, અગ્નિ, જલ, વિષ, સર્પ, શીત, ઉષ્ણ, અરતિ, ભય, ક્ષુધા,  
તૃષ્ણા, વ્યાધિ, મૂત્ર-પુરીષ-લઘુનીત વડીનીત—કા નિરોધ, અતિભોજન,  
અજીર્ણ ભોજન, ઢોરી આદિ બાંધકર ઘસીટના, શ્વાસ કા નિરોધ ઓર  
યંત્ર આદિ મેં પીડના આદિ સે અકાલ મેં હી અન્ત હો જાય, કહા મી હૈ—

“દંડ-કસ-સત્થ-રજ્જૂ-અગ્ની-ઉદગ-પડળં-વિસં-વાલા ।

સી-ઉપ્હં-અરઙ્-ભયં, ખુહા પિવાસા ય વાહી ય ॥ ૧ ॥

“જીવા ણં મંતે ! જાહનામનિઘત્તાઉયં કતિહિં આગરિસેહિં પકરંતિ ?  
ગોયમા ! જહન્નેણં દોહિં વા તિહિં વા ઉક્કોસેણં અદ્દહિં ।” ઇતિ ।

આ સૂત્રનો અર્થ પૂર્વોક્ત રૂપથી જ છે.

સોપક્રમ આયુ તે છે જેના ઉપક્રમના કારણભૂત દંડ, ચાબુક, શસ્ત્ર, રજ્જુ,  
અગ્નિ, જળ, વિષ, સર્પ, શીત, ઉષ્ણ, અરતિ, ભય, ક્ષુધા, તૃષ્ણા, વ્યાધિ, મૂત્ર-  
પુરીષ,—લઘુનીત—બડીનીત નો નિરોધ, અતિભોજન, અભૂર્ણ ભોજન, ઢોરી આદિ  
બાંધીને ઘસડવું, શ્વાસનો નિરોધ અને યંત્ર આદિથી પીડવું, આદિથી અકા-  
ળમાં જ અન્ત થાય. કહ્યું છે:—

“દંડ-કસ-સત્થ-રજ્જૂ, અગ્ની ઉદગ પડળં વિસં વાલા ।

સી-ઉપ્હં અરઙ્ ભયં, ખુહા પિવાસા ય વાહી ય ॥ ૧ ॥



एतेन संयमरहितमानवानां स्वल्पमेवायुस्तत्र शतशो विघ्नसमूहाः । तथा हि मनुजानामायुः प्रायशः शतवर्षपरिमितं भवति । तदर्द्धं रात्रिषु गतम् , अवशिष्टार्द्धं च बालत्वे वृद्धत्वे च न श्रुतचारित्रधर्माचरणकर्तृत्वं जीवस्य भवति । कियदवशिष्टमायुर्नानाविधरोगशोकवियोगादिभिरेवाक्रान्तं भवति, कस्मात्तर्हि सौख्यं प्राणिनां भवेत् ।

मुत्त-पुरीसनिरोहे, जिण्णाजिण्णे य भोयणे बहुसो ।

घंसण घोलण पीलण, आउस्स उवक्कमा एए ॥ २ ॥

अर्थ पहले आचुका है ।

अतः संयमरहित जीवों का दीर्घकालिक आयु भी अल्प जैसा ही है, इसमें भी हजारों विघ्न आते रहते हैं । विचारिये तो—

इस पञ्चम काल में ज्यादा से ज्यादा सौ वर्ष का आयु है । इस सौ वर्ष के आयु का हिसाब लगाया जाय तो पता लगेगा कि आधा आयु तो सोते २ व्यतीत हो जाता है बाकी जो आधा बचता है उसमें बाल-अवस्था वृद्धावस्था आती है । इन अवस्थाओं में जीव किसी भी प्रकार से धर्मादिक शुभ कार्यों का आचरण नहीं कर सकता । अनेक प्रकार के रोग शोक और वियोगादिजन्य दुःख इसके अवशिष्ट जीवन को सदा त्रस्त किये रहते हैं । यौवन अवस्था में स्त्री का प्रेम इसे आराम नहीं लेने देता । इस पर यह छन्द है—

“ बालपने में ज्ञान न लह्यो, तरुण समय तरुणीरत रह्यो ।

अर्धमृतक सम वृद्धापनो, कैसे रूप लखे अपनो ॥ १ ॥

मुत्त-पुरीस-निरोहे, जिण्णाजिण्णे य भोयणे बहुसो ।

घंसण घोलण पीलण आउस्स उवक्कमा एए ॥ २ ॥

અર્થ પહેલાં આવેલ છે.

માટે સંયમરહિત જીવોની દીર્ઘકાલિક આયુ પણ અલ્પ જેવી જ છે, તેમાં પણ હજારો વિઘ્નો આવે છે. વિચારીએ તો આ પાંચમાં કાળમાં વધારેમાં વધારે સો વર્ષની આયુ છે. આ સો વર્ષની આયુનો હિસાબ કરીએ તો માલુમ પડશે કે અડધી આયુ તો સુવામાં જ નત્ય છે બાકીની બે અડધી આયુ છે તેમાં બાલઅવસ્થા અને વૃદ્ધાવસ્થાનો સમાવેશ છે. આ અવસ્થાઓમાં જીવ કેઈ પણ પ્રકારે ધર્માદિક શુભ કાર્યોનું આચરણ કરી શકતો નથી. અનેક પ્રકારના રોગ-શોક અને વિયોગાદિજન્ય દુઃખ તેના અવશિષ્ટ જીવનને સદા ત્રસ્ત કરતા રહે છે. યૌવન અવસ્થામાં સ્ત્રીનો પ્રેમ તેને આરામ લેવા દેતો નથી, આ ઉપર છંદ છે:—

एतादृशस्वल्पायुषः कृते च शिरसि परिभ्राम्यदनेकमहाविपत्तिकलापः संयो-  
गाद्यर्थी विवेकविकलो मानवोऽनिश्चितस्ततः परिभ्रमति । स्वल्पेनैव कालेनायुषः  
क्षयोऽवश्यं भावीत्यहो मौढ्यं प्राणिनो यदर्थं सततं परितप्यमानो धावतीति भावः ।

यह हालत है इस जीव की; फिर कहो इसे सुख कैसे प्राप्त हो सकता है ? फिर भी इतनी छोटी सी आयु को लेकर यह अनेक प्रकार की शिर पर घूमनेवाली आपत्तिविपत्तियों का कुछ भी ख्याल न कर रात-दिन पर पदार्थों के अपनाने में ही मस्त हो रहा है, और अपने कर्तव्य का कुछ भी ख्याल कहीं कर रहा है । अन्त में आयु के समाप्ति होने पर मृत्युशय्या पर विलाप करते हुए इस जीव का कोई भी रक्षक नहीं होगा । वे सब कुटुम्बी-जिनके लिये यह रात-दिन परिश्रम करके अपने खून का पानी कर रहा था—इससे जुदे हो जावेंगे और इसे फाल्गुन मास की होली की तरह चिता में जला देंगे ।

इस प्रकार आयु की अल्पता को देखता हुआ यह जो नहीं चेत रहा है यही एक इसकी बड़ी भारी मूर्खता है । जो इससे जुदे हो जाने वाले हैं उन्हीं के लिये यह रात-दिन महा परिश्रम करने में लगा हुआ है । इसकी इस महा अज्ञानता पर ज्ञानियों को बड़ा भारी आश्चर्य होता है । यहां तक—“अप्पं खलु आउयं इहमेगेसि माणवाणं” इस वाक्य का अर्थ हुआ है ।

“ बालपनमें જ્ઞાન ન લહ્યો, તરુણ સમય તરુણીરત રહ્યો ।

અર્ધમૃતકસમ વૃદ્ધાપનો, કૈસે રૂપ લેખે અપનો ॥ ૧ ॥

આવી હાલત છે આ જીવની. હવે કહો તેને સુખ કેવી રીતે પ્રાપ્ત થાય ? આટલી થોડી આયુ હોવા છતાં તે અનેક પ્રકારની શિર પર ઘૂમવાવાળી આપત્તિ વિપત્તિઓનો પણ જરા ખ્યાલ ન કરતાં રાત-દિન પર પદાર્થોને અપનાવવામાં જ મગ્ન રહે છે, અને પોતાના કર્તવ્યનો જરા પણ ખ્યાલ કરતો નથી. અંતમાં આયુની સમાપ્તિ થવાથી મૃત્યુશય્યા પર વિલાપ કરે છે. આ જીવનો કોઈ પણ રક્ષક થશે નહિ. આ બધા કુટુંબીજનો માટે પોતાના લોહીનું પાણી કરતો હતો તેનાથી જુદો થઈ જશે અને તેને કાગણ માસની હોળી માફક ચિતામાં સળગાવી દેશે.

આ પ્રકારે આયુની અલ્પતાને દેખીને પણ ચેતતો નથી, એજ એક, જીવની મૂર્ખતા છે. જેનાથી જુદું થવાનું છે તેવાઓના માટે રાત-દિન પરિશ્રમ ઉઠાવે છે. આ તેની અજ્ઞાનતા ઉપર જ્ઞાનીઓને મોટું આશ્ચર્ય થાય છે. અહીં સુધી—  
“ અપ્પં ખલુ આઉયં ઇહમેગેસિ માણવાણં ” આ વાક્યનો અર્થ થયો છે.

દણ્ડકશાદિરૂપોપક્રમાભાવેऽપિ પુનસ્તે વાર્દ્ધકકાલવ્યાલક્ષલિતા માનવા મરણાદપિ ગુરુતરાં દુર્દશામનુભવન્તિ । સકલાનિ ચેન્દ્રિયાણિ જરામિશ્રુતતયા શિથિલતાં ગતાનિ, તરુણાયમાનયા ચ તૃણયા વ્યાકુલામૂઢા ભવન્તીતિ દર્શયતિ—“તદ્યથે”-તિ । વાર્દ્ધક્યે સર્વેષામિન્દ્રિયાણાં સ્વકાર્યકરણાક્ષમતા જાયતે તદા “શ્રોત્રપરિજ્ઞાનૈઃ પરિહીયમાનૈઃ” જ્ઞાનોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતાન્ પુદ્ગલાનિતિ શ્રોત્રમ્ । તચ્ચ દ્રવ્યભાવભેદેન દ્વિવિધમ્ । તત્ર કદમ્બપુષ્પસદૃશં દ્રવ્યાત્મકં, ભાવરૂપં હિ ભાષાદ્રવ્યગ્રહણલબ્ધ્યુપયોગસ્વભાવાત્મકમ્ ।

દણ્ડ કશા આદિરૂપ ઉપક્રમ કે અભાવ સે યદિ આયુ કી પૂર્ણતા મી જીવ કો પ્રાપ્ત હુઈ તો યહ જીવ વૃદ્ધાવસ્થા મેં મરણાન્તિક કષ્ટોં કો ભોગતા હૈ, યહી બાત આગે કે વાક્યોં સે સ્પષ્ટ કી જાતી હૈ ।

જબ યહ વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન હોતા હૈ ઉસ સમય હસકા શ્રોત્રેન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાન બિલકુલ અલ્પ હો જાતા હૈ, અર્થાત્ જિસ પ્રકાર હસકી શ્રોત્રેન્દ્રિય તરુણાવસ્થા મેં કામ દેતી થી ઉસ પ્રકાર સે હસ અવસ્થા મેં નહીં દેતી । હસ સમય જબકિ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયાં શિથિલ હો જાતી હૈ તબ એક ચીજ હસકી તરુણ હોતી રહતી હૈ વહ હૈ હસકી તૃણા—“તૃણા ચ તરુણાયતે ” ।

“શૃણોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતપુદ્ગલાન્ ઇતિ શ્રોત્રમ્” ભાષાવર્ગણા કે રૂપ મેં પરિણત પુદ્ગલોં કો જો સુનતા હૈ ઉસકા નામ શ્રોત્ર હૈ । વહ શ્રોત્ર દ્રવ્ય ઔર ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા હૈ । જિસકા આકાર કદમ્બ પુષ્પ કે સમાન હૈ વહ દ્રવ્ય શ્રોત્ર હૈ, જિસકે દ્વારા ભાષાવર્ગણા

દંડ કશા આદિ રૂપ ઉપક્રમના અભાવથી કદાચ આયુની પૂર્ણતા પણ જીવની પુરી થઈ તો આ જીવ વૃદ્ધાવસ્થામાં મરણાન્તિક કષ્ટોને ભોગવે છે આ વાત આગળના વાક્યોથી સ્પષ્ટ છે.

ન્યારે તે વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન થાય છે ત્યારે તેનું શ્રોત્રેન્દ્રિયજ્ઞાન બિલકુલ અલ્પ થઈ જાય છે અર્થાત્ જે પ્રકારે તેની શ્રોત્રેન્દ્રિય તરુણાવસ્થામાં કામ દેતી હતી તે પ્રકારે વૃદ્ધાવસ્થામાં દેતી નથી. આ સમયે દરેક ઇન્દ્રિય શિથિલ થઈ જાય છે ત્યારે એક જ ચીજ તેની તરુણ રહે છે, તે ક્રૂત તૃણા. “તૃણા ચ તરુણાયતે ।”

“શૃણોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતપુદ્ગલાન્ ઇતિ શ્રોત્રમ્ ।”

ભાષાવર્ગણાના રૂપમાં પરિણત પુદ્ગલોને જે સુણે છે (સાંભળે છે) તેનું નામ શ્રોત્ર છે. તે શ્રોત્ર દ્રવ્ય અને ભાવથી જે પ્રકારે છે. જેનો આકાર કદમ્બપુષ્પ સમાન છે, તે દ્રવ્ય શ્રોત્ર છે. જે દ્વારા ભાષાવર્ગણાના રૂપમાં



परि=सर्वतो घटपटादिशब्दविषयकाणि ज्ञानानि=परिज्ञानानि श्रोत्रेण परि-  
ज्ञानानि श्रोत्रपरिज्ञानैः, तैः श्रोत्रपरिज्ञानैः, वार्द्धक्येन परिहीयमानैः=क्षीयमाणै-  
रेकदात्मनो मूढतां जनयति, इत्युत्तरेण सम्बन्धः । वार्द्धक्ये च श्रोत्रेन्द्रियस्य  
शिथिलतामुपगतस्य क्षीयमाणस्वशक्तिकस्य शब्दादिविषयग्रहणे चाक्षमता संजायते,  
येन च बधिरो भवति, घटं टमिव शृणोति न शृणोति वेति तात्पर्यम् । एवं रोगेणापि  
श्रोत्रपरिज्ञानानि क्षीयमाणानि भवन्तीति बोध्यम् । एवं सर्वत्र योज्यम् ।

के रूप में परिणत पुद्गलस्कन्धों का ग्रहण किया जाता है वह भावश्रोत्र  
है । इसके भी दो भेद हैं—(१) लब्धि, और (२) उपयोग । भाषा के रूप  
में परिणत पुद्गलस्कन्धों को जाननेरूप जो क्षयोपशम है उसका नाम लब्धि  
है, अर्थात् शब्दों के जानने की शक्ति का नाम लब्धि है, और उन  
शब्दों के जाननेरूप आत्मा का जो व्यापार-प्रयत्नविशेष है उसका  
नाम उपयोग है । परिज्ञान शब्द का अर्थ है—सर्व प्रकार से अथवा सब  
तरफ से घट पट आदि शब्दों का विषय करने वाला ज्ञान । वृद्धावस्था में  
श्रोत्रजन्य ज्ञान क्षीणप्राय हो जाता है—कोई कहता कुछ है वृद्ध सुनता  
कुछ है, अतः इस अवस्था में इस प्रकार की हालत आत्मा में मूढता को  
उत्पन्न करती है । “ एकदा आत्मनो मूढतां जनयति ” इस उत्तर पदका  
सम्बन्ध प्रत्येक के साथ लगा लेना चाहिये, अर्थात्—“ वार्द्धक्ये परिहीय-  
मानैः श्रोत्रपरिज्ञानैः अभिक्रान्तं वयः समीक्ष्य मूढभावं जनयति, परिहीय-  
मानैः चक्षुर्ज्ञानैः अभिक्रान्तं वयः समीक्ष्य मूढभावं जनयति, ” इत्यादि ।

परिणत पुद्गल स्कन्धोने ग्रहण करे છે. તે ભાવશ્રોત્ર છે. તેના પણ બે ભેદ  
છે—(૧) લબ્ધિ, અને (૨) ઉપયોગ. ભાષાના રૂપમાં પરિણત પુદ્ગલસ્કન્ધોના  
બાણુવારૂપ ક્ષયોપશમ છે તેનું નામ લબ્ધિ છે, અર્થાત્ શબ્દોની શક્તિનું  
બાણુવું તેનું નામ લબ્ધિ, અને તે શબ્દોને બાણુવારૂપ આત્માનો જે વ્યાપાર-  
યત્નવિશેષ છે તેનું નામ ઉપયોગ. પરિજ્ઞાન શબ્દનો અર્થ, સર્વ પ્રકારથી  
અથવા સર્વ તરફથી ઘટ પટ આદિ શબ્દોનો વિષય કરવાવાળું જ્ઞાન. વૃદ્ધાવસ્થામાં  
શ્રોત્રજન્ય જ્ઞાન ક્ષીણપ્રાય થાય છે. કોઈ કહે છે કાંઈ અને વૃદ્ધ બાણુસ સાંભળે  
છે બીજું, તેથી આ અવસ્થામાં આ પ્રકારની હાલત આત્મામાં મૂઢતાને ઉત્પન્ન કરે છે.

“ एकदा आत्मनो मूढतां जनयति ” આ ઉત્તરપદનો સંબંધ પ્રત્યેકની  
સાથે લગાડવો જોઈએ, અર્થાત્ “ વાર્ધક્યે પરિહીયમાનૈઃ શ્રોત્રપરિજ્ઞાનૈઃ અભિ-  
ક્રાન્તં વયઃ સમીક્ષ્ય મૂઢભાવં જનયતિ, પરિહીયમાનૈઃ ચક્ષુર્જ્ઞાનૈઃ અભિક્રાન્તં વયઃ  
સમીક્ષ્ય મૂઢભાવં જનયતિ ” ઇત્યાદિ,



ચક્ષુઃપરિજ્ઞાનૈઃ-ચક્ષુષા મમૂરસંસ્થાનેન પરિજ્ઞાનાનિ-શુક્લનીલાદિરૂપવિષયકાણિ ચક્ષુઃપરિજ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=નશ્યમાનૈઃ । ઘ્રાણપરિજ્ઞાનૈઃ-ઘ્રાણેન

પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થા મેં બહિરા હો જાતા હૈ, ક્યોંકિ ઉસ સમય ઇસકી શ્રોત્રેન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ જિસસે અપને વિષય કો સ્પષ્ટરૂપ સે નહીં જાનતી, અર્થાત્ ઇસ સમય પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિકવિષયોં કો ગ્રહણ કરને મેં ક્ષીણશક્તિ-( નાકાબિલ ) હો જાતી હૈ, અતઃ વહ ઉન્હેં ગ્રહણ કરને મેં અસમર્થ હોતી હૈ, ઇસીકારણ સે બહિરા વ્યક્તિ ઘટ ( ઘડા ) શબ્દ કહે જાને પર ઉસે પટ ( વસ્ત્ર ) શબ્દ જૈસા સુનતા હૈ, અથવા ધીરે બોલને પર નહીં ખી સુનતા હૈ । જિસ પ્રકાર વૃદ્ધાવસ્થા કે કારણ સબ ઇન્દ્રિયોં શિથિલ હો જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર રોગાદિક કારણોં સે ખી ઉનમેં શિથિલતા આજાતી હૈ, યહ સ્વયં સમજ્ઞ લેના ચાહિયે, ઔર ઇસકા સમ્બન્ધ ખી પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય કી પરિહીનતા કે સાથ જોડ લેના ચાહિયે । અર્થાત્-જિસ પ્રકાર શ્રોત્રેન્દ્રિય મેં સ્વવિષયગ્રહણરૂપ વ્યાપાર કે પ્રતિ પરિહીનતા કા કારણ રોગાદિક સે ઉત્પન્ન શિથિલતા હૈ ઉસી પ્રકાર પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય મેં ખી અપને-અપને વિષય કો ગ્રહણ કરને રૂપ વ્યાપાર કી પરિહીનતા મેં રોગાદિક કારણ હૈ ।

ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કા આકાર મસૂર કી દાલ કે તુલ્ય હૈ, ઇસકા વિષય શુક્લ, નીલ આદિ વર્ણ હૈ, ઇસ અવસ્થા મેં અથવા રોગાદિક કારણોં સે

પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થામાં બહેરો થાય છે, કારણકે તે વખતે તેની શ્રોત્રેન્દ્રિય શિથિલ થાય છે, જે પોતાના વિષયને સ્પષ્ટ રૂપથી નથી જાણતી, અર્થાત્ આ વખતે દરેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિક વિષયને ગ્રહણ કરવામાં શક્તિહીન થાય છે અને તેને ગ્રહણ કરવામાં અસમર્થ અને છે. આ કારણે બહેરો માણસ ધડાને વસ્ત્ર શબ્દના રૂપમાં સાંભળે છે અને હળવેથી બોલવા આવે તો સાંભળતો નથી. જેમ વૃદ્ધાવસ્થાના કારણે સઘળી ઇન્દ્રિયો શિથિલ અને છે તે પ્રકારે રોગાદિક કારણોથી પણ તેમાં શિથિલતા આવે છે તે પોતાની મેળે જાણવું જોઈએ, અને તેનો સંબંધ પણ દરેક ઇન્દ્રિયની પરિહીનતા સાથે જોડવો જોઈએ, અર્થાત્ જેમ શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં સ્વવિષય ગ્રહણ કરવા રૂપ વ્યાપાર પ્રતિ પરિહીનતાનું કારણ રોગાદિકથી ઉત્પન્ન થતી શિથિલતા છે તેમ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોતપોતાનાં વિષયને ગ્રહણ કરવા રૂપ વ્યાપારની પરિહીનતામાં રોગાદિક કારણ છે.

ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો આકાર મસૂરની દાળ જેવો છે. તેનો વિષય શુક્લ, નીલ આદિ વર્ણ છે. આ અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક કારણોથી ચક્ષુ ઇન્દ્રિય જ્યારે

અતિમુક્તકકુસુમાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-ગન્ધવિષયકાણિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=પરિત્ય-  
જ્યમાનૈઃ। રસનપરિજ્ઞાનૈઃ-રસનેન ક્ષુરપ્રાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-મધુરતિક્તાદિરસવિષય-  
કાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=ક્ષીયમાણૈઃ। સ્પર્શપરિજ્ઞાનૈઃ-સ્પર્શને-સ્પર્શને-  
ન્દ્રિયેણ નાનાવિધાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-શીતોષ્ણસ્પર્શાદિવિષયકાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ,  
પરિહીયમાનૈઃ=વિલીયમાનૈઃ। ઇતિ સકલાનામપીન્દ્રિયાણાં વાર્દ્ધક્યેન રોગોદયેન ચ  
સ્વસ્વવિષયગ્રાહકશક્તયઃ પરિક્ષીણા ભવન્તીતિ ભાવઃ। અભિક્રાન્તં ચ સ્વલુ વયઃ  
સમ્પ્રેક્ષ્ય સ એકદા મૂઢભાવં જનયતીત્યુત્તરેણાન્વયઃ। શ્રોત્રચક્ષુર્ગ્રાણરસનસ્પર્શનાના-

ચક્ષુઃન્દ્રિય જબ શુક્લ-નીલાદિરૂપ અપને વિષય કો ગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન  
સે રિક્ત હો જાતી હૈ; ગ્રાણ-ઇન્દ્રિય-જિસકા આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ  
કે સમાન હૈ, વહ જબ હસ અવસ્થા મેં અથવા રોગાદિક કારણોં સે  
અપને ગન્ધગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન સે શૂન્ય હો જાતી હૈ, રસના-ઇન્દ્રિય-  
જિસકા આકાર ક્ષુરપા કે સદૃશ હૈ, ઓર જો મધુર, તિક્ત આદિ રસોં  
કો વિષય કરતી હૈ વહ ભી જબ હસ અવસ્થામેં અથવા રોગાદિ કારણોં  
સે અપને વિષયકો ગ્રહણ કરનેવાલે જ્ઞાનમેં અસમર્થ હો જાતી હૈ; સ્પર્શન-  
ઇન્દ્રિય-જિસકા આકાર નિયત નહીં હૈ કિન્તુ અનેક પ્રકારકે આકાર કો  
ધારણ કરનેવાલી હૈ, ઓર જિસકા વિષય આઠ પ્રકાર કા શીત-ઉષ્ણ  
આદિ સ્પર્શ હૈ વહ જબ હસ અવસ્થામેં અથવા રોગાદિક કારણોંસે શિથિલ  
હો જાતી હૈ તબ હસ આત્મામેં મૂઢતા ઉત્પન્ન હોતી હૈ યહ અનુભવસિદ્ધ  
બાત હૈ। મૂઢતા ઉત્પન્ન હોનેકા કારણ યહી હૈ કિ હસ હાલતમેં પ્રત્યેક  
ઇન્દ્રિય અપને ૨ વિષયકો ગ્રહણ કરને કે બોધસે વિકલ હો જાતી

શુક્લ-નીલાદિ રૂપ પોતાના વિષયને ગ્રહણના જ્ઞાનથી રિક્ત થાય છે, ગ્રાણ-  
ઇન્દ્રિય જેનો આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ સમાન છે. તે ત્યારે આ અવસ્થામાં  
અથવા રોગાદિક કારણોથી પોતાને ગન્ધ ગ્રહણ કરવાના જ્ઞાનથી શૂન્ય થાય છે,  
રસના-ઇન્દ્રિય જેનો આકાર તાવેથા જેવો છે અને જે મધુર, તિક્ત આદિ રસોનો  
વિષય કરે છે તે પણ આવી અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક કારણોથી પોતાના વિષયને  
ગ્રહણ કરવાના જ્ઞાનમાં અસમર્થ થાય છે, સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય જેનો આકાર નિયત  
નથી પરંતુ અનેક પ્રકારના આકારને ધારણ કરે છે અને જેના વિષય આઠ  
પ્રકારના શીત-ઉષ્ણ આદિ સ્પર્શ છે તે પણ આ અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક  
કારણોથી શિથિલ થાય છે ત્યારે આત્મામાં મૂઢતા ઉત્પન્ન થાય છે તે અનુભવસિદ્ધ  
વાત છે. મૂઢતા ઉત્પન્ન થવાનું કારણ એ છે કે આવી હાલતમાં દરેક બધી

મિન્દ્રિયાણામાકારાઃ ક્રમેણ કદમ્બપુષ્પ-મસૂરધાન્યાઽતિમુક્તકકુસુમ-ધુરપ્ર-નાના-  
વિધાકારા ભવન્તિ । ઉક્તશ્ચ—

પુષ્પં કલંબુયારં, ધન્નમસૂરાહમુત્તચંદો ય ॥

હોઈ ચુરપ્પ, નાણા-કિઈ ય સોઈંદિયાઈણં ॥ ૧ ॥

છાયા—પુષ્પં કદમ્બાકારં ધાન્યમસૂરાતિમુક્તચન્દ્રશ્ચ ।

ભવતિ ધુરપ્રા નાનાકૃતિશ્ચ શ્રોત્રેન્દ્રિયાદીનામ્ ॥ ઇતિ ।

ઇન્દ્રો જીવસ્તસ્ય ચિદ્દમિન્દ્રિયમ્, તેનૈવ જીવજ્ઞાનસમ્ભવાત્ । તચ્ચ દ્રવ્યભાવ-  
ભેદેન દ્વિવિધમ્ । દ્રવ્યેન્દ્રિયં દ્રવ્યમયમ્, તચ્ચ નિર્વૃત્ત્યુપકરણભેદાદ્વિવિધમ્ । નિર્માણ-  
નામકર્માઙ્ગોપાઙ્ગનામકર્મભ્યાં નિર્વર્તિતં નિર્વૃત્તીન્દ્રિયમ્, તચ્ચ બાહ્યાભ્યન્તરભેદા-  
હૈ । ઇન્દ્રિયોં કા જો યહ આકાર પ્રકટ કિયા હૈ વહ શાસ્ત્રકારોંને ઇસ  
પ્રકાર વતલાયા હૈ—

“ પુષ્પં કલંબુયારં, ધન્નમસૂરાહમુત્તચંદો ય ।

હોઈ ચુરપ્પ, નાણાકિઈ ય સોઈંદિયાઈણં ॥ ૧ ॥ ”

ઇન્દ્રિય શબ્દ કા અર્થ યહ હૈ કિ-‘ ઇન્દ્ર ’ નામ જીવ કા હૈ, ડસકા  
જો ચિદ્દ હૈ વહ ઇન્દ્રિય હૈ, અર્થાત્ જિસકે દ્વારા જીવ પહિચાના જાવે  
ડસકા નામ ઇન્દ્રિય હૈ । યહ પાંચ પ્રકાર કી હૈ । ઇનમેં પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય કે  
દો-દો ભેદ હૈ—(૧) દ્રવ્યેન્દ્રિય, (૨) ભાવેન્દ્રિય । પુદ્ગલદ્રવ્યોં કી જો  
ઇન્દ્રિયાકાર રચના હૈ ડસકા નામ દ્રવ્યેન્દ્રિય હૈ । યહ દ્રવ્યેન્દ્રિય, નિર્વૃત્તિ  
ઑર ઉપકરણ કે ભેદસે દો પ્રકાર કી હૈ । ઇસ દ્રવ્યેન્દ્રિય કી રચના  
નિર્માણનામકર્મ ઑર અઙ્ગોપાઙ્ગ નામકર્મ કે દ્વારા હોતી હૈ । ઇસ નિર્વૃત્તી-  
ન્દ્રિય કે-બાહ્યનિર્વૃત્તિ ઑર આભ્યન્તર-નિર્વૃત્તિ, ઇસ પ્રકાર સે દો ભેદ

ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાના વિષયને ગ્રહણ કરવાના ઝોધથી વિકલ થાય છે. ઇન્દ્રિયોના  
જે આકારો બતાવ્યા છે તે શાસ્ત્રકારોએ આ પ્રકારે બતાવ્યા છે:—

“ પુષ્પં ફલંબુયારં, ધન્નમસૂરાહમુત્તચંદો ય ।

હોઈ ચુરપ્પ-નાણાકિઈય સોઈંદિયાઈણં ॥ ૧ ॥ ”

ઇન્દ્રિય શબ્દનો અર્થ એ છે કે-‘ ઇન્દ્ર ’ નામ જીવનું છે, તેનું જે ચિદ્દ  
છે તે ઇન્દ્રિય છે, અર્થાત્ જે દ્વારા જીવની પિછાણ થાય તેનું નામ ઇન્દ્રિય છે.  
તે પાંચ પ્રકારની છે. તેમાં દરેક ઇન્દ્રિયના બે-બે ભેદ છે. (૧) દ્રવ્યેન્દ્રિય, (૨)  
ભાવેન્દ્રિય. પુદ્ગલ દ્રવ્યોની જે ઇન્દ્રિયાકાર રચના છે તેનું નામ દ્રવ્યેન્દ્રિય છે.  
તે દ્રવ્યેન્દ્રિય, નિર્વૃત્તિ અને ઉપકરણના ભેદથી બે પ્રકારે છે. દ્રવ્યેન્દ્રિયની રચના  
નિર્માણ-નામકર્મ અને અંગોપાંગ-નામકર્મ દ્વારા થાય છે. આ નિર્વૃત્તીન્દ્રિય,  
બાહ્યનિર્વૃત્તિ અને આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિ, આ પ્રકારથી બે ભેદ રૂપ છે. ઉત્તેષાણુંલના



દ્વિવિધમ્ । ઉત્સેધાદ્ગુલાસંખ્યેયભાગપ્રમિતાનાં સ્વચ્છતરાણામાત્મપ્રદેશાનાં પ્રતિનિ-  
યતચક્ષુરાદીન્દ્રિયસંસ્થાનેનાવસ્થિતા યા વૃત્તિઃ સા આભ્યન્તરા નિર્વૃત્તિરુચ્યતે, સ્વદ્ગ-  
ધારાસ્થાનીયેતિ યાવત્ , આત્મપ્રદેશેષુ પુદ્ગલવિપાકિના નિર્માણાખ્યેન કર્મણા રથા-  
દિવસ્તુસમ્પાદકરથકારેણેવયઃ પ્રતિનિયતસંસ્થાનસ્તત્તદિન્દ્રિયાભિધેયઃ કર્ણશષ્કુલ્યા-  
દિર્નિર્વર્ત્યતે સા બાહ્યા નિર્વૃત્તિઃ સ્વદ્ગસદૃશી । તત્ર બાહ્યા પર્પટિકાદિરૂપા, સા ચ  
વિચિત્રા પ્રતિનિયતરૂપતયોપદેષ્ટું ન શક્યતે, તથા હિ-કસ્યચિદક્ષિ સ્થૂલં, કસ્ય-

હૈં । ઉત્સેધાદ્ગુલ કે અસંખ્યાતવૈં ભાગ પ્રમાણ અત્યન્ત નિર્મલ આત્મ-  
પ્રદેશોં કી ચક્ષુરાદિ ઇન્દ્રિયોં કે પ્રતિનિયત આકાર સે અવસ્થિત જો વૃત્તિ  
હૈં ઉસકા નામ આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિ હૈં । ઇસકી ઉપમા તલવાર કી ધારાસે  
દી ગઈ હૈં । ઉન આત્મપ્રદેશોંમેં પુદ્ગલવિપાકી નિર્માણનામકર્મ કે દ્વારા  
જો કર્ણશષ્કુલી આદિ રૂપસે ઉસ-ઉસ ઇન્દ્રિયોં કે આકારોં કી રચના  
કી જાતી હૈં ઉસકા નામ બાહ્યનિર્વૃત્તિ હૈં । જૈસે બઢઈ રથાદિક વસ્તુઓં  
કે પ્રતિનિયત આકારોં કો બનાતા હૈં ઉસી પ્રકાર યહ નિર્માણ-નામકર્મ,  
જો પુદ્ગલવિપાકી પ્રકૃતિ હૈં, ઉન ઇન્દ્રિયાકારરૂપપરિણત આત્મપ્રદેશોં મેં  
પુદ્ગલદ્રવ્યોંકી પ્રતિનિયત ઇન્દ્રિયાકારરૂપ સે રચના કરતા હૈં । ઇસકી  
ઉપમા તલવારસે દી ગઈ હૈં । બાહ્ય નિર્વૃત્તિકા પ્રતિનિયત કોઈ આકાર  
નહીં હૈં, વહ અનેક પ્રકાર કી હૈં, જૈસે આંખોં મેં પર્પટિકાદિરૂપરચના ।  
યહ ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કી બાહ્ય નિર્વૃત્તિ હૈં, પરન્તુ યહ સર્વત્ર ઇસી પ્રકાર કી  
હોતી હૈં, યહ નિયમિત નહીં, ક્યોંકિ કિસી કી આંખ મોટી હોતી હૈં

અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ અત્યન્ત નિર્માણ આત્મપ્રદેશોની ચક્ષુરાદિ ઇન્દ્રિયોના  
પ્રતિનિયત આકારથી અવસ્થિત જે વૃત્તિ છે તેનું નામ આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિ  
છે, તેની ઉપમા તલવારની ધાર જેમ છે. તે આત્મપ્રદેશોમાં પુદ્ગલવિપાકી  
નિર્માણ નામકર્મ દ્વારા જે કર્ણશષ્કુલી આદિ રૂપે તે તે ઇન્દ્રિયોના આકારોની  
રચના કરી છે તેનું નામ બાહ્યનિર્વૃત્તિ છે. જેમ સુથાર રથાદિક વસ્તુઓના  
પ્રતિનિયત આકારોને બનાવે છે તે પ્રકારે આ નિર્માણ નામકર્મ જે પુદ્ગલવિપાકી  
પ્રકૃતિ છે, તે ઇન્દ્રિયાકાર રૂપ પરિણત આત્મપ્રદેશોમાં પુદ્ગલદ્રવ્યોની પ્રતિનિયત  
ઇન્દ્રિયાકાર રૂપ રચના કરે છે. તેની ઉપમા તલવારથી આપી છે. બાહ્ય નિર્વૃત્તિનો  
પ્રતિનિયત કોઈ આકાર નથી. તે અનેક પ્રકારના છે. જેમ આંખોમાં પર્પટિકાદિ  
રૂપ રચના, તે ચક્ષુઇન્દ્રિયની બાહ્ય નિર્વૃત્તિ છે, પરંતુ આમ સર્વત્ર છે,  
તેમ નિયમિત નહિ. કોઈની આંખ મોટી હોય છે, કોઈની નાની. આભ્યન્તર



ચિત્ત્વ હ્રસ્વમિત્યાદ્યનેકપ્રકારા । આભ્યન્તરા તુ નિર્વૃત્તિઃ સર્વેષાં સમાના ભવતિ । ચતુર્ણામેવેન્દ્રિયાણાં બાહ્યાભ્યન્તરભેદો ભવતિ, ન સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્યેતિ बोध्यम् । उप-  
क्रियत इत्युपकरणम्, उपकरणेन्द्रियञ्च खड्गस्थानीयबाह्यनिर्वृत्तेः खड्गधारासदृश-  
स्वच्छतरपुद्गलसमूहरूपाऽभ्यन्तरनिर्वृत्तेश्च शक्तिविशेषः । अनुपघातानुग्रहाभ्यां निर्वृत्ती-  
न्द्रियस्योपकारित्वेनोपकरणम् । तदपि बाह्याभ्यन्तरनिर्वृत्युपकारकत्वेन द्विविधम् ।  
निर्वृत्युपकरणरूपमुभयमेतत्पुद्गलपरिणामात्मकमपि सदिन्द्रियशब्दव्यवहारं लभते ।

और किसीकी छोटी । आभ्यन्तर निर्वृत्ति समस्त इन्द्रियों की एकसी होती है । निर्वृत्ति-इन्द्रिय के जो बाह्य और आभ्यन्तर भेद किये हैं वे स्पर्शन-इन्द्रिय को छोड़ कर शेष चार इन्द्रियों के ही हैं, ऐसा समझ लेना चाहिये ।

द्रव्येन्द्रिय का जो दूसरा भेद उपकरण है उसका अर्थ 'निर्वृत्ति का जो उपकार करे' यह है । यह खड्ग-तलवार-स्थानीय बाह्यनिर्वृत्ति तथा उसकी धारास्थानीय स्वच्छतरपुद्गलसमूहरूप आभ्यन्तर निर्वृत्ति की एक विशेष शक्ति है-जो अनुपघात और अनुग्रह से निर्वृत्ति-इन्द्रिय की उपकारिका मानी गई है ।

यह उपकरण द्रव्येन्द्रिय भी आभ्यन्तर और बाह्य निर्वृत्ति का उप-  
कारक होने की वजहसे दो प्रकार की है-(१) आभ्यन्तर-उपकरण  
और (२) बाह्य-उपकरण । आभ्यन्तर निर्वृत्ति का जो उपकार करे वह  
आभ्यन्तर-उपकरण और बाह्य निर्वृत्तिका जो उपकार करे वह बाह्य-उप-  
करण है । निर्वृत्तिरूप और उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय यद्यपि पुद्गलपरिणामा-

નિર્વૃત્તિ સમસ્ત ઇન્દ્રિયોની એક સરખી છે. નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયના જે બાહ્ય અને  
આભ્યન્તર ભેદ છે તે સ્પર્શન ઇન્દ્રિયને છોડીને શેષ ચાર ઇન્દ્રિયોના છે તેમ  
સમજવાનું છે.

દ્રવ્યેન્દ્રિયનો બીજો ભેદ ઉપકરણ છે, એનો અર્થ 'નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર  
કરે' એ છે. આ તલવારસ્થાનીય બાહ્ય નિર્વૃત્તિનો તથા તેની ધારાસ્થાનીય  
સ્વચ્છતરપુદ્ગલસમૂહરૂપ આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિની એક વિશેષ શક્તિ છે જે  
અનુપઘાત અને અનુગ્રહથી નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયની ઉપકારિકા માની છે.

આ ઉપકરણ દ્રવ્યેન્દ્રિય પણ આભ્યન્તર અને બાહ્ય નિર્વૃત્તિનું ઉપકારક  
હોવાથી બે પ્રકારનું છે. (૧) આભ્યન્તર ઉપકરણ, અને બાહ્ય ઉપકરણ, આભ્યન્તર  
નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે તે આભ્યન્તર ઉપકરણ છે અને બાહ્યનિર્વૃત્તિનો જે  
ઉપકાર કરે તે બાહ્ય ઉપકરણ છે. નિર્વૃત્તિ રૂપ અને ઉપકરણ રૂપ દ્રવ્યેન્દ્રિય

તત્ત્વ ભાવેન્દ્રિયસહયોગં પ્રાપ્તૈવાત્મનઃ સાહાય્યં કરોતિ પ્રસ્થકાઞ્ઠવત્ 'પાયલીકાઠ' ઇતિ ભાષા । આત્મપરિણતિરૂપં ભાવેન્દ્રિયમપિ લબ્ધ્યુપયોગભેદાદ્વિવિધમ્, તત્ત્વ-તત્ત્વ-દિન્દ્રિયાવારકકર્મણાં ક્ષયોપશમો લબ્ધિઃ । ઇન્દ્રિયાણાં સ્વસ્વવિષયેષુ પરિચ્છેદ્યવ્યા-પાર ઉપયોગઃ । અત્ર લબ્ધૌ વર્તમાનાયાં સત્યાં નિર્વૃત્યુપકરણોપયોગાનાં ત્રયાણામપ્ય-પેક્ષા । નિર્વૃત્તૌ વર્તમાનાયાં સત્યામુપકરણોપયોગયોરપેક્ષા । સત્યુપકરણે ચોપયો-

ત્મક હૈ તો મી ઉસકા જો ઇન્દ્રિય શબ્દસે વ્યવહાર કિયા ગયા હૈ ઉસકા મતલબ યહી હૈ કિ યહ આત્માકો પદાર્થજ્ઞાનમેં સહાયક હૈ, ક્યોંકિ વિના દ્રવ્યેન્દ્રિય કે આત્મા કો પદાર્થજ્ઞાન નહીં હો સકતા । યહી કારણ હૈ કિ વિગ્રહગતિ મેં ભાવેન્દ્રિયકે હોને પર મી દ્રવ્યેન્દ્રિય કે અભાવમેં જીવકો બાહ્ય પદાર્થજ્ઞાન નહીં હોતા । દ્રવ્યેન્દ્રિય યદ્યપિ આત્માકો પદાર્થજ્ઞાન કરાનેમેં સહાયક હૈ તો મી વહ ભાવેન્દ્રિય કે સહયોગ કે વિના આત્માકો પદાર્થબોધમેં સહાયક નહીં હો સકતા ।

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય મી લબ્ધિ ઓર ઉપયોગકે ભેદ સે દો પ્રકાર કી હૈ । ડન-ડન ઇન્દ્રિયોં કો આવરણ કરનેવાલે કર્મોંકા જો ક્ષયોપશમ હૈ ઉસકા નામ લબ્ધિ હૈ । ઇવં ઇન્દ્રિયોંકા અપને ૨ વિષયોં કે જાનને રૂપ જો વ્યાપાર હૈ ઉસકા નામ ઉપયોગ હૈ । આત્મામેં લબ્ધિ-જાનને કી યોગ્યતા-હોનેપર મી ઉસે નિર્વૃત્તિ, ઉપકરણ ઇવં ઉપયોગ કી અપેક્ષા રહતી હૈ । લબ્ધિ કે હોતે હુએ મી ઇનકે વિના આત્માકો પદાર્થ-

યદ્યપિ પુહ્લપરિણુમાત્મક છે તો પણ તેનો જે ઇન્દ્રિય શબ્દથી વ્યવહાર કરેલ છે તેનું કારણ એ છે કે તે આત્માને પદાર્થજ્ઞાનમાં સહાયક છે, કારણકે દ્રવ્ય ઇન્દ્રિય વિના આત્માને પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી, એજ કારણ છે કે વિગ્રહગતિમાં ભાવેન્દ્રિય થવાથી પણ દ્રવ્યેન્દ્રિય ના અભાવમાં જીવને બાહ્ય પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી. દ્રવ્યેન્દ્રિય યદ્યપિ આત્માને પદાર્થજ્ઞાન કરાવવામાં સહાયક છે, તો પણ તે ભાવેન્દ્રિયના સહયોગ વિના પદાર્થબોધમાં આત્માને સહાયક થઈ શકતો નથી.

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય પણ લબ્ધિ અને ઉપયોગના ભેદથી બે પ્રકારે છે. તે તે ઇન્દ્રિયોના આવરણ કરનાર કર્મોના જે ક્ષયોપશમ છે તેનું નામ લબ્ધિ છે. ઇન્દ્રિયોના પોત-પોતાના વિષયોને જાણવા રૂપ જે વ્યાપાર છે તેનું નામ ઉપયોગ છે.

આત્મામાં લબ્ધિ-જાણવાની યોગ્યતા-હોવા છતાં તેને નિર્વૃત્તિ, ઉપકરણ, અને ઉપયોગની અપેક્ષા રહે છે. લબ્ધિના હોવા છતાં પણ તેના વિના આત્માને પદાર્થ-

ગસ્યાપેક્ષેતિ વિજ્ઞેયમ્ । અત્રાયં વિશેષઃ-શ્રોત્રં દ્વાદશયોજનાગતં શબ્દં ગૃહ્ણાતિ, ચક્ષુરપિ સાતિરેકૈકવિંશતિલક્ષયોજનસ્થિતં રૂપં ગૃહ્ણાતિ, અન્યાનિ ત્રીણીન્દ્રિયાણિ નવયોજનાગતસ્વસ્વવિષયગ્રાહકાણિ ભવન્તિ । જઘન્યતસ્તુ ચક્ષુરઙ્ગુલસંખ્યેયભાગમિતદેશવર્તિરૂપં ગૃહ્ણાતિ । અન્યાનિ ચત્વારીન્દ્રિયાણિ ચાઙ્ગુલસંખ્યેયભાગપ્રમિતદેશસ્થિતં સ્વસ્વવિષયં ગૃહ્ણન્તીતિ ભાવઃ । તત્ર શ્રોત્રાદીનાં ચતુર્ણાં પ્રાપ્ત્યકારિત્વં, શબ્દાદિપુદ્ગલાનાં કર્ણાદિસંયોગેનૈવ નિર્ણયાત્ । ચક્ષુષશ્ચાપ્રાપ્ત્યકારિત્વં રૂપસ્ય સંયોગં વિના દૂરત એવ નિશ્ચયાદિતિ વિશેષઃ ।

બોધ નહીં હોતા હૈ । ઇસી પ્રકાર નિર્વૃત્તિ કે હોને પર મી ઉસે ઉપકરણ ઓર ઉપયોગકી અપેક્ષા રહા કરતી હૈ, ઓર ઉપકરણ કે સદ્ભાવમેં ઉપયોગ કી । શ્રોત્ર-ઇન્દ્રિય બારહ યોજન સે આયે હુઅ શબ્દ કો ગ્રહણ કરતી હૈ । ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કુછ અધિક ૨૧ ઇક્કીસ લાખ યોજન સ્થિત રૂપ કો જાનતી હૈ । બાકી કી ત્રીન ઇન્દ્રિયાં નવ યોજન સે આયે હુઅ અપને ૨ વિષય કો ગ્રહણ કરનેવાલી હોતી હૈ । યહ ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા ઇન્દ્રિયોં કા વિષય બતલાયા હૈ । જઘન્ય કી અપેક્ષા ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય અઙ્ગુલ કે સંખ્યાતવેં ભાગમેં સ્થિત રૂપકો ગ્રહણ કરતી હૈ । બાકી કી ચાર ઇન્દ્રિયાં અઙ્ગુલકે અસંખ્યાતવેં ભાગ પ્રમાણ દેશમેં રહે હુઅ અપને ૨ વિષય કો જાનનેવાલી હૈ ।

સ્પર્શન, રસન, ગ્રાણ ઓર શ્રોત્ર, યે ચાર ઇન્દ્રિયાં અપને ૨ પૌદ્ગલિક વિષયોં કો છૂ (સ્પર્શ) કર હી જાનતી હૈ ઇસ લિયે યે પ્રાપ્ત્યકારી હૈ ।

બોધ થતો નથી, એ પ્રકારે નિર્વૃત્તિ થવા છતાં પણ તેને ઉપકરણ અને ઉપયોગની અપેક્ષા રહે છે, અને ઉપકરણના સદ્ભાવમાં ઉપયોગની રહે છે.

શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય બાર યોજનથી આવેલા શબ્દને ગ્રહણ કરે છે. ચક્ષુઇન્દ્રિય કાંઈક અધિક એકવીસ લાખ યોજનથી રૂપ બાણે છે. બાકીની ત્રણ ઇન્દ્રિયો નવ યોજનથી આવેલાં પોત-પોતાનાં વિષયને ગ્રહણ કરી શકે છે. આ ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષા ઇન્દ્રિયોનો વિષય બતાવ્યો છે. જઘન્યની અપેક્ષા ચક્ષુઇન્દ્રિય અંગુળના સંખ્યાતમાં ભાગમાં સ્થિત રૂપને ગ્રહણ કરે છે. બાકીની ચાર ઇન્દ્રિયો અંગુળના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ દેશમાં રહેલાં પોત-પોતાનાં વિષયને બાણે છે.

સ્પર્શન, રસન, ગ્રાણ અને શ્રોત્ર, આ ચાર ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાનાં પૌદ્ગલિક વિષયોનો સ્પર્શ કરી બાણે છે માટે એ પ્રાપ્ત્યકારી છે. ચક્ષુઇન્દ્રિય પોતાના વિષયને સ્પર્શ કર્યા વિના બાણી લે છે માટે તે અપ્રાપ્ત્યકારી છે, અર્થાત આ



नन्विन्द्रियाण्येव वस्तु निर्णेतुं प्रभवन्तु किमधिकेनातिरिक्तात्मस्वीकारेणेति चेन्न, तत्तदिन्द्रियनाशेऽपि तत्तदिन्द्रियपूर्वानुभूतार्थस्मरणस्यान्यथानुपपत्त्याऽतिरिक्तस्यात्मनोऽवश्यं सिद्धेः । आत्मनो विज्ञानोत्पत्तौ श्रोत्रादीनि प्रकृष्टोपकारकाणि भवन्ति, तेन करणरूपकारकतया तृतीया विभक्तिः सिद्ध्यति, ततोऽनेन श्रोत्रेण मया शब्दः श्रुतः, अनेन च मन्दतरः शब्दः श्रुतः, इत्यादयः प्रयोगाः सङ्गच्छन्ते ।

चक्षु-इन्द्रिय अपने विषय को बिना छूए (स्पर्श किये) ही जान लेती है अतः वह अप्राप्यकारी है, अर्थात् यह इन्द्रिय अपने साथ अपने विषय का संयोग हुए बिना दूरसे ही अपने रूप-विषय का प्रकाशक है ।

शङ्का—इन्द्रियों को ही अपने २ विषयरूप ज्ञेय का निर्णय करनेवाली मानलेनी चाहिये, उनसे अतिरिक्त आत्माके माननेकी क्या आवश्यकता है ?

उत्तर—यह बात कहना ठीक नहीं है, कारण कि—जब इन्द्रियाँ नष्ट हो जाती हैं तब उनके द्वारा पूर्वानुभूत पदार्थका स्मरण होता है । यदि इन्द्रियाँ ही पदार्थ की ज्ञाता मानी जायें तो फिर जो उनके बिनाश होने पर अनुभूत पदार्थ की स्मृति होती है वह नहीं होनी चाहिये अतः अन्यथानुपपत्ति ( जिसके नहीं होने पर नहीं होना ) रूप अनुमान से इन्द्रियोंके अतिरिक्त आत्माके अस्तित्वकी सिद्धि होती है ।

शङ्का—यदि इन्द्रियों से भिन्न आत्माके अस्तित्व की स्वीकृति मानी जावेगी तो फिर “चक्षुषा दृश्यते, श्रोत्रेण श्रूयते” इत्यादि जो व्यवहार होता है वह नहीं होना चाहिये ।

धन्द्रिय पोतानी साथे पोताना विषयनो संयोग था बिना दूसरी न पोताना ३५ विषयनो प्रकाशक छे.

शंका—धन्द्रियेनेन पोत-पोताना विषय ३५ ज्ञेयनो निर्णय करनार मानवी जेधये जेथी अतिरिक्त आत्माने मानवानी शुं आवश्यकता छे ?

उत्तर—आम कहेपुं व्याजणी नथी. कारणके न्यारे धन्द्रियो नष्ट थाय छे त्यारे तेना द्वारा पूर्वानुभूत पदार्थनुं स्मरण थाय छे. कदाय धन्द्रियेनेन पदार्थनी ज्ञाता मानवामां आवे तो पछी जे तेना बिनाश पछी अनुभूत पदार्थनी स्मृति थाय छे ते थवी जेधये नहि. माटे अन्यथानुपपत्ति ( जेना नहि होवाथी नथी थतुं ) ३५ अनुमानथी धन्द्रियेथी अतिरिक्त आत्माना अस्तित्वनी सिद्धि थाय छे.

शंका—कदाय धन्द्रियेथी भिन्न आत्माना अस्तित्वनी स्वीकृति मानवामां आवे तो पछी “चक्षुषा दृश्यते, श्रोत्रेण श्रूयते” इत्यादि जे व्यवहार थाय छे ते थवी जेधये नहि.



નન્વેવં કરણત્વાદિન્દ્રિયસ્વીકારે તુ વાકપાણિપાદપાયુપસ્થાનામપિ કરણ-  
ત્વાદિન્દ્રિયત્વમન્યત્ર સ્વીકૃતમિદાપિ કુતો નાભિહિતમિતિ चेन्न, आत्मनो विज्ञानो-  
त्पत्तौ तेषां प्रकृष्टोपकारकत्वाभावादिन्द्रियत्वस्यासिद्धेः, सामान्यतः करणत्वादिन्द्रि-  
यत्वस्वीकारे तु स्वस्वन्यापारवत उदरादेरपि करणत्वादिन्द्रियत्वापत्तेश्च ।

उत्तर—शङ्का ठीक है परन्तु विचारने पर स्वतः ही इस शङ्काका  
समाधान हो जाता है, क्योंकि इन्द्रियाँ आत्माके ज्ञानकी उत्पत्ति में  
प्रकृष्ट साधक हैं इस कारण वहा पर “ चक्षुषा दृश्यते, श्रोत्रेण श्रूयते ”  
इत्यादि में करण रूप कारक पने तृतीया विभक्ति का प्रयोग होता है ।  
जभी ये आत्माके विज्ञानकी उत्पत्तिमें प्रकृष्ट उपकारक हैं तभी तो  
‘ मैने इस श्रोत्र इन्द्रियसे मन्द शब्द सुना और इस श्रोत्र इन्द्रियसे  
मन्दतर शब्द सुना—इत्यादि प्रयोग ठीक बैठ जाते हैं ।

शङ्का—आत्माके विज्ञान रूप कार्यकी उत्पत्ति में अत्यन्त साधक  
होनेसे स्पर्शनादिकों को यदि आप इन्द्रिय रूपसे स्वीकार करते हैं तो  
फिर वाक्, पाणि, पाद, पायु ( गुदा ), और उपस्थ ( जननेन्द्रिय ), इन  
को भी इन्द्रियरूपसे आपको स्वीकार करना चाहिये, क्योंकि ये भी  
आत्माके अपने २ अनुरूप कार्यमें प्रकृष्ट साधक होते हैं इसीलिये  
सांख्य सिद्धान्तमें इन्हें इन्द्रियरूपसे स्वीकार किया है फिर आपने इन्हें  
इन्द्रियरूपसे यहां पर क्यों स्वीकार नहीं किया ? ।

उत्तर—શંકા ઠીક છે, પરંતુ વિચારવાથી આપમેળે જ તે શંકાનું સમાધાન થાય  
છે કારણકે ઇન્દ્રિયો આત્માને જ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં પ્રકૃષ્ટ સાધકો છે. આ  
કારણે ત્યાં “ ચક્ષુષા દ્રશ્યતે, શ્રોત્રેણ શ્રૂયતે ” ઇત્યાદિકરણત્વ રૂપ કારકપણે  
ત્રીજી વિભક્તિનો પ્રયોગ થાય છે, માટે જ્યારે આત્માને વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં  
પ્રકૃષ્ટ ઉપકારક છે તેથી જ મેં આ શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી મન્દ શબ્દ સાંભળ્યો અને  
આ શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી મન્દતર શબ્દ સાંભળ્યો ઇત્યાદિ પ્રયોગ ઠીક બેસે છે.

શંકા—આત્માના વિજ્ઞાન રૂપ કાર્યની ઉત્પત્તિમાં અત્યન્ત સાધકાહોવાથી સ્પર્શ-  
નાદિકોને કદાચ આપ ઇન્દ્રિય રૂપે સ્વીકાર કરો છો તો પછી વાક્, પાણિ,  
પાદ, પાયુ ( ગુદા ) અને જનનેન્દ્રિય આ સધાનાં ઇન્દ્રિય રૂપે આપે  
સ્વીકારવાં બેઠાં છે કારણકે આ બધા આત્માને પોત-પોતાનાં અનુરૂપ કાર્યથી  
પ્રકૃષ્ટ સાધક થાય છે માટે સાંખ્ય સિદ્ધાંતમાં તેઓને ઇન્દ્રિય રૂપે સ્વીકાર્યા  
છે તો પછી આપે ઇન્દ્રિય રૂપે આ કેકાણે કેમ સ્વીકાર ન કર્યો ?

નનુ શ્રોત્રેણૈવ રૂપાદીનામપિ કથં ન પ્રત્યક્ષમિતિ चेन्न, इन्द्रियाणां भिन्न-भिन्न-विषयकत्वेन तत्तदिन्द्रियेण स्वस्वविषयकातिरिक्तज्ञानासम्भवात् ।

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं है, यहां पर तो आत्माके लिये जो विज्ञानकी उत्पत्तिमें अत्यन्त उपकारक हैं वे इन्द्रियाँ हैं और वे स्पर्शन आदि हैं, वाक् पाणि वगैरह सांख्यादि सिद्धान्तकी मानी हुई इन्द्रियाँ आत्माको विज्ञानकी उत्पत्तिमें श्रोत्र आदि की तरह प्रकृष्ट उपकारक नहीं हैं अतः उन वाक् आदि में इन्द्रियत्वका व्यपदेश ही सिद्ध नहीं होता। सामान्य रीतिसे जो यह बात मान ली जावे कि—जो करण होते हैं वे इन्द्रियाँ होती हैं अतःकरण होनेसे वाक् पाणि वगैरहमें भी इन्द्रियत्व स्वीकार करलेना चाहिये, तो फिर इस प्रकारसे आत्माके लिये अपने २ व्यापारमें निरत उदरादिक—पेट वगैर—को भी करण होने से इन्द्रिय मानना पड़ेगा, तब इन्द्रियों की जो सांख्यादि सिद्धान्तकारोंने ११ ग्यारह संख्या नियत की है वह सिद्ध नहीं होगी, इससे भी अधिक इन्द्रियाँ इस प्रकार सिद्ध होती हैं ।

शङ्का—श्रोत्र इन्द्रियसे ही रूपादिक अन्य इन्द्रियों के विषयों का प्रत्यक्ष क्यों नहीं होता ?

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं, कारण कि प्रत्येक इन्द्रिय का अपना २

ઉત્તર—આમ કહેવું ઠીક નથી. અહીં તો આત્માને જે વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં અત્યન્ત ઉપકારક છે તે ઇન્દ્રિયો છે અને તેં સ્પર્શનઆદિ છે. વાક્ (વાણી) પાણિ (હાથ), વિગેરે સાંખ્યાદિ સિદ્ધાંતની માનેલી ઇન્દ્રિયો આત્માને વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં શ્રોત્ર આદિની માફક પ્રકૃષ્ટ ઉપકારક નથી માટે તે વાક્ આદિમાં ઇન્દ્રિયત્વનો વ્યપદેશ જ સિદ્ધ થતો નથી. સામાન્ય રીતિથી જો આ વાત માની લેવા આવે કે જે કરણ થાય છે તે ઇન્દ્રિયો હોય છે માટે કરણ થવાથી વાક્, પાણિ વિગેરેમાં પણ ઇન્દ્રિયત્વનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ તો પછી આ પ્રકારે આત્માને માટે પોત-પોતાના વ્યાપારમાં સામાન્ય રૂપે કરણ થવાવાળાં ઉદરાદિક-પેટ વિગેરેનું પણ ઇન્દ્રિયપણું માનવું પડે ત્યારે ઇન્દ્રિયોની જે સાંખ્ય સિદ્ધાન્તકારોએ અગીયાર સંખ્યા નક્કી કરેલ છે તે સિદ્ધ થતી નથી, તેથી પણ અધિક ઇન્દ્રિયો આવી રીતે સિદ્ધ થાય છે.

શંકા—શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી જ રૂપાદિક અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયોની પ્રત્યક્ષ કેમ થતાં નથી ?

ઉત્તર—આમ કહેવું ઠીક નથી. કારણકે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોત-પોતાનો વિષય

નન્વેવં તર્હિ રસપ્રતીતિકાલે શીતોષ્ણકર્કશકઠોરાદિસ્પર્શજ્ઞાનમપિ કથં ભવ-  
તીતિ ચેદાહ—સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્ય સર્વવ્યાપિત્વેન રસનેન્દ્રિયપ્રદેશેઽપિ તસ્ય સત્ત્વેન  
રસપ્રતીતિકાલેઽપિ સ્પર્શજ્ઞાનસ્ય સુલભત્વાત્ ।

નનુ શ્રોત્રાદિવન્મનસઃ કુતો નેન્દ્રિયત્વમિતિ ચેદાહ—

વિષય નિયત હૈ અતઃ વહ દૂસરે વિષયકી ગ્રાહક નહીં હો સક્તી ।  
શાસ્ત્રકાર મી તો યહી કહતે હૈં કિ ઇન્દ્રિયાં ભિન્નર વિષયવાલી હૈં ઇસ  
લિયે વે અપનેર વિષયકે સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોંકે વિષયકી બોધક  
નહીં હોતી હૈં ।

શઙ્કા—યદિ યહી બાત સ્વીકાર કી જાવે તો ફિર રસના ઇન્દ્રિય સે  
રસકે જ્ઞાનકે સમયમૈં શીત, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠોરાદિક સ્પર્શકા જો જ્ઞાન  
હોતા હૈ વહ કૈસે હોગા ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વ વ્યાપક હૈ ઇસલિયે રસના ઇન્દ્રિયકે  
પ્રદેશમૈં મી ઉસકી સત્તા હોને સે રસ પ્રતીતિકે સમયમૈં મી સ્પર્શકે  
જ્ઞાનકી સુલભતા હોતી હૈ ।

શઙ્કા—જિસ પ્રકાર શ્રોત્રાદિકોં મૈં ઇન્દ્રિયત્વકા વ્યપદેશ હોતા હૈ  
ઉસી પ્રકાર મનમૈં મી ઇન્દ્રિયત્વકા વ્યપદેશ ક્યોં નહીં હોતા હૈ ? ।

ઉત્તર—શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયાં અપનેર વિષયકો ગ્રહણ કરનેમૈં જિસ  
પ્રકાર સ્વતન્ત્ર હૈં ઉસ પ્રકાર મન નહીં હૈ, ક્યોંકિ વહ ઉન ઇન્દ્રિયોંકા

નિયત છે તેથી તે બીજા વિષયની આહક બનતી નથી. શાસ્ત્રકાર  
પણ એમ કહે છે કે ઇન્દ્રિયો ભિન્ન ભિન્ન વિષયવાળી છે માટે તેઓ  
પોત-પોતાના વિષય સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયની બોધક થતી નથી.

શંકા—માનો, આ વાત સ્વીકારવામાં આવે તો પછી રસના ઇન્દ્રિયથી રસના  
જ્ઞાનનાં સમયમાં શીત, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠણાદિક સ્પર્શનું જે જ્ઞાન થાય  
છે તે કેમ થાય છે ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વવ્યાપક છે, માટે રસના ઇન્દ્રિયના પ્રદેશમાં પણ  
તેની સત્તા હોવાથી રસપ્રતીતિના સમયમાં પણ સ્પર્શના જ્ઞાનની  
સુલભતા થાય છે.

શંકા—જે પ્રકારે શ્રોત્રાદિકોમાં ઇન્દ્રિયના વ્યપદેશ થાય છે તેમ મનમાં પણ  
ઇન્દ્રિયત્વનો વ્યપદેશ કેમ થતો નથી ?

ઉત્તર—શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાના વિષયો ગ્રહણ કરવામાં જે પ્રકારે  
સ્વતંત્ર છે તે પ્રકારે મન નથી. કારણકે તે તે ઇન્દ્રિયોનું ઉપકારક માત્ર



શ્રોત્રાદીનિ ચ શબ્દાદિવિષયગ્રહણે સ્વતન્ત્રાણિ સન્તિ, મનસ્તુ તેષામુપકારિ-  
માત્રં, સ્વતન્ત્રતયા તસ્ય પદાર્થનિર્ણાયકત્વાભાવાત્ । યતસ્તત્તદિન્દ્રિયનિર્ણીતપદાર્થ  
એવ તસ્ય પ્રવૃત્તિર્ભવતિ નાતસ્તસ્યેન્દ્રિયત્વં ભવિતુમર્હતિ । એકસ્મિન્ન સમય એકેને-  
ન્દ્રિયેણૈક એવોપયોગો ભવતિ, એકસમયે ઉપયોગદ્વયાસમ્ભવાત્ ।

નન્વેવં તર્હિ પર્યટ ( ‘પાપડ’ ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધપદાર્થ ) મક્ષણકાલે પશ્ચભિ-  
રિન્દ્રિયૈઃ સર્વં જ્ઞાનં ભવતિ યથા—શ્રોત્રેણ શબ્દં શૃણોતિ, ચક્ષુષા રૂપં પશ્યતિ, ગ્રાણેન  
ઉપકારક માત્ર હૈ । યહ વિના ઇન્દ્રિયોંસે જાને પદાર્થ કા સ્વતન્ત્ર રૂપસે  
નિર્ણાયક નહીં હોતા હૈ, ક્યોંકિ ભિન્ન ભિન્ન ઇન્દ્રિયોં સે નિર્ણીત પદાર્થ  
મેં હી ઉસકી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ ઇસલિયે ઉસમેં સ્વતન્ત્ર રૂપસે ઇન્દ્રિયપના  
નહીં હૈ । એક સમય મેં એક ઇન્દ્રિયસે એક હી ઉપયોગ હોતા હૈ—એક  
સમયમેં દો ઉપયોગ નહીં હોતે ।

શઙ્કા—યદિ એક સમયમેં દો ઉપયોગ નહીં હોતે હૈં તો ફિર જિસ  
સમય પાપડ ખાયા જાતા હૈં ઉસ સમય જો પશ્ચેન્દ્રિય—જન્ય ઉસકા  
જ્ઞાન હોતા હૈં વહ નહીં હોના ચાહિયે ?, દેખિયે—ખાતે સમય પાપડકી  
ચર—ચર આવાજ હોતી હૈં અતઃ ઇસ શબ્દ કા શ્રોત્રેન્દ્રિયસે પ્રત્યક્ષ હોતા  
હૈં, ઉસ સમય ચક્ષુ—ઇન્દ્રિય ઉસકે રૂપકી બોધિકા હોતી હૈં । ગ્રાણ—ઇન્દ્રિય  
ઉસકે ગન્ધકી, રસના—ઇન્દ્રિય ઉસકે રસકી ઓર સ્પર્શન—ઇન્દ્રિય ઉસકે  
કર્કશ કઠોર આદિ સ્પર્શ કો બોધિકા હોતી હૈં । યે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયસે એક  
હી સમયમેં ઉસર વિષયકે ભિન્નર બોધ હોતે હૈં, સો ક્યોં હોતે હૈં ? ।

છે, તે ઇન્દ્રિયોથી જાણ્યા વગર પદાર્થનો સ્વતંત્ર રૂપે નિર્ણાયક થતું  
નથી, કારણકે જુદી જુદી ઇન્દ્રિયોથી નિર્ણીત પદાર્થમાં જ તેની પ્રવૃત્તિ  
છે. માટે તેમાં સ્વતંત્ર રૂપે ઇન્દ્રિયપણું નથી. એક સમયમાં એક ઇન્દ્રિયથી  
એક જ ઉપયોગ થાય છે. એક સમયમાં બે ઉપયોગ થતા નથી.

શંકા—કદાચ એક સમયમાં બે ઉપયોગ થતા નથી તો પછી જે વખતે પાપડ  
ખાવામાં આવે છે તે સમયે જે પશ્ચેન્દ્રિયજન્ય તેનું જ્ઞાન છે તે નહોતું  
જોઈ એ ? દેખો, ખાતી વખતે પાપડનો ચર—ચર અવાજ થાય છે અને  
તે શબ્દ શ્રોત્રેન્દ્રિયથી પ્રત્યક્ષ છે તે વખતે ચક્ષુઇન્દ્રિય તેના રૂપની બોધક  
થાય છે, ગ્રાણુઇન્દ્રિય તેના ગંધની, રસના ઇન્દ્રિય તેના રસની, અને સ્પર્શન  
ઇન્દ્રિય તેના કર્કશ કઠણ આદિ સ્પર્શની બોધક થાય છે તે પ્રત્યેક  
ઇન્દ્રિયથી એક જ સમયમાં તે તે વિષયનો ભિન્ન ભિન્ન બોધ થાય છે તો  
શા માટે થાય છે ?



ગન્ધં જિઘ્રતિ, રસનેન રસમાસ્વાદયતિ, સ્પર્શનેન કર્કશકઠોરાદિકં સ્પૃશતિ, ઇતિ કથમેકસ્મિન્ સમયે શબ્દાદિવિષયકજ્ઞાનં સંજાયતે ? ઇતિ ચેન્ન, સમયભેદેઽપિ કમલપત્રશતવેધનવત્સૂક્ષ્મતયા તસ્ય જ્ઞાતુમશક્યત્વાત્ ।

एष चोपयोगक्रमः—आत्मा मनसा युज्यते, मनश्चेन्द्रियेण, इन्द्रियाणि च विषयसंयुक्तानि भूत्वा तत्तद्विषयग्राहकाणि भवन्ति, अतो मनसोऽन्तःकरणत्वं सर्वानुगामित्वश्चोपपद्यते ॥

ઉત્તર—इन पांच इन्द्रियों से होने वाले ज्ञानोंमें भी समयका भेद अवश्य है परन्तु यह समयका भेद अति सूक्ष्म होनेसे जाना नहीं जाता है । जिस प्रकार कमलके सैकड़ों पत्ते तीर के ऊपर रखकर वेधने से वे 'एक साथ ही विंध गये' ऐसा बोध होता है परन्तु वे एक साथ नहीं विंधे, एक साथ विंधनेका उनमें भ्रम ही होता है, क्रम-क्रमसे ही वे विंधते हैं परन्तु उनके विंधनेका समय अति सूक्ष्म होनेसे उसमें क्रमिकताका बोध नहीं होता । उपयोगका क्रम इस प्रकार है—आत्मा मनसे संबंधित होता है, मन इन्द्रियों से, इन्द्रियाँ पदार्थोंसे संबंधित होकर अपने-विषयकी ग्राहक होती हैं; इसीलिये मनका, 'अन्तःकरण' यह संज्ञा सार्थक है, क्योंकि यह अन्तरङ्ग करण है और इन्द्रियाँ बहिरंग करण हैं । प्रत्येक इन्द्रियके साथ इसका क्रमसे ही गमनरूप सम्बन्ध है इसलिये यह सर्वानुगामी है ।

ઉત્તર—આ પાંચ ઇન્દ્રિયોથી થવાવાળાં જ્ઞાનમાં પણ સમયનો ભેદ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી જાણી શકાતો નથી. જેમ કમલના સેકડો પત્તા વિંધવાથી તે 'એક સાથ જ વિંધાઈ ગયા' એવો બોધ થાય છે, પરંતુ તેઓ એકી સાથ વિંધાએલ નથી, એકી સાથ વિંધાવાનો તેમાં ખાલી ભ્રમજ છે. ક્રમ ક્રમથીજ તે વિંધાય છે, પરંતુ તેના વિંધાવાનો સમય અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી તેમાં ક્રમિકતાનો બોધ થતો નથી. ઉપયોગનો ક્રમ આ પ્રકારે— છે. આત્મા મનથી સંબંધિત છે, મન ઇન્દ્રિયોથી ઇન્દ્રિયો પદાર્થોથી સંબંધિત થઈ પોત-પોતાના વિષયની ગ્રાહક થાય છે. માટે મનની 'અંતઃકરણ' એ સંજ્ઞા સાર્થક છે, કારણકે તે અન્તરંગ કરણ છે અને ઇન્દ્રિયો બહિરંગ કરણ છે. પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયની સાથ તેનો ક્રમ-ક્રમથી જ ગમન રૂપ સંબંધ છે માટે તે સર્વાનુગામી છે.

ઇન્દ્રિયવિષયકો વિચારો ગતઃ, સામ્પ્રતં પ્રકૃતાર્થમનુસરામઃ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં રોગોદયે ચ સર્વેષામિન્દ્રિયાણાં સ્વસ્વસામર્થ્યહીનતામવલોક્ય સ પ્રાણી મૌઢ્યમાપદ્યતે, इति दर्शयति—‘અભિક્રાન્તં ચ खलु वयः सम्प्रेक्ष्य स एकदा मूढभावं जनयति’ इति । પ્રાણિનાં કાલકૃતા બાલ્યયૌવનાદિરૂપા શરીરાવસ્થા વયસ્તત્ અભિક્રાન્તમ્-અતિક્રાન્તમ્, યદ્વા અભિ=જરામૃત્યૂ અભિમુશ્વીકૃત્ય ક્રાન્તં=પ્રાપ્તં, તિસ્રો હિ માનવાનામવસ્થા ભવન્તિ, તાસુ ચ બાલ્ય-યૌવનદ્વયમતીતં વિલોક્ય સકલેન્દ્રિયસામર્થ્યસ્ય ક્ષીણતાં મૃત્યુકાલસામીપ્યશ્ચ સમાલોચ્ય તતઃ=તદનન્તરં સ પ્રાણી, एकदा=वृद्धाव-

यहां तक इन्द्रिय सम्बन्धी विचार किया, अब प्रकृत अर्थका प्रतिपादन करते हैं—

વૃદ્ધાવસ્થા મેં અથવા કિસી કે રોગાદિ કારણ જ્યેઃ પ્રાણી સમસ્ત ઇન્દ્રિયોંકો અપનેર વિષયોંકે ગ્રહણ કરને મેં શક્તિવિકલ દેખતા હૈ, ત્યે જ્યે કર્તવ્યમૂઢ બન જાતા હૈ, ઇસ બાતકા વર્ણન કરતે હૈ—“અભિક્રાન્તં ચ खलु वयं ” इत्यादि ।

પ્રાણિયોંકી કાલકૃત જો બાલ્ય-યૌવનાદિ રૂપ અવસ્થા હોતી હૈ ઉસકા નામ વય હૈ, ઉસકો અભિક્રાન્ત-અભિ=જરા ઓર મૃત્યુકે સંમુખ ક્રાન્ત=પ્રાપ્ત દેખકર જ્યે પ્રાણી एकदा=वृद्धावस्था અથવા રોગોદયમેં મૂઢ-ભાવ=कर्तव्याकर्तव्यके विवेककी शून्यताको प्राप्त होता है ।

પ્રાણિયોંકી ત્રીન પ્રકાર કી અવસ્થાઈ હૈ—એક બાલ્યાવસ્થા, દૂસરી યૌવનાવસ્થા, ઓર ત્રીસરી વૃદ્ધાવસ્થા । ઇનમેં બાલ્ય ઓર તરુણ અવ-

આટલે સુધી ઇન્દ્રિયસંબંધી વિચાર કર્યો, હવે પ્રકૃત અર્થનું પ્રતિપાદન કરે છે.

વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા કોઈ રોગાદિક કારણે ત્યારે પ્રાણી સમસ્ત ઇન્દ્રિયોને પોતપોતાના વિષયોને ગ્રહણ કરવામાં શક્તિવિકલ દેખે છે ત્યારે તે કર્તવ્યમૂઢ બને છે. આ વાતનું વર્ણન કરે છે. “અભિક્રાન્તં ચ खलु वयं ” इत्यादि ।

પ્રાણિયોંની કાલકૃત જે બાલ્ય-યૌવનાદિરૂપ અવસ્થા છે તેનું નામ વય છે. તેનું અભિક્રાન્ત-અભિ=જરા અને મૃત્યુના સંમુખ ક્રાન્ત=પ્રાપ્ત દેખીને પ્રાણી એકદા=वृद्धावस्था અથવા રોગોદયમાં કર્તવ્યા-कर्तव्यના વિવેકની શૂન્યતાને પ્રાપ્ત થાય છે.

પ્રાણિયોંની ત્રણ પ્રકારની અવસ્થા છે. એક બાલ્યાવસ્થા, બીજી યૌવનાવસ્થા અને ત્રીજી વૃદ્ધાવસ્થા, તેમાં બાલ્ય અને તરુણ અવસ્થાને વ્યતીત દેખીને

સ્થાયાં રોગોદયે ચાત્મનો મૂઢતાં=કર્તવ્યકર્તવ્યવિચારશૂન્યતાં જનયતિ=અજ્ઞાનભાવં પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ । પ્રતિસમયં શ્રોત્ર-ચક્ષુ-ઘ્રાણ-રસન-સ્પર્શન-વિજ્ઞાનૈઃ સકલૈરેકૈકશો વા, દેશતઃ સર્વતો વા નશ્યમાનૈઃ કરણરૂપૈઃ કર્તવ્યમૂઢો ભવતિ ।

યદ્વા-‘સોયપરિણાણેહિં, પરિહીયમાણેહિં’ ઇત્યાદૌ પ્રથમાર્થે તૃતીયાઽઽર્ષ-ત્વાત્તદા તાનિ પરિજ્ઞાનાનિ ક્ષીયમાણાનિ કર્તૃરૂપાણિ મૂઢતાં જનયન્તીત્યર્થો ભવતિ ।

સ્થાકો વ્યતીત દેશકર વૃદ્ધાવસ્થા કો સકલ ઇન્દ્રિયોંકી શક્તિસે રિક્ત, એવં મૃત્યુકાલ કે સમીપ આઈ હુઈ દેશકર ઉસ કાલમેં યહ પ્રાણી મૂઢ ભાવકો પ્રાપ્ત હોતા રહતા હૈ-‘મેરા કર્તવ્ય ક્યા હૈ ઓર અકર્તવ્ય ક્યા હૈ’ ઇસ બાતકા ઉસ સમય વિચાર હી જાતા રહતા હૈ । ઉસ સમય શ્રોત્ર, ચક્ષુ, ઘ્રાણ, રસના ઓર સ્પર્શન, યે સમસ્ત ઇન્દ્રિયાં અપનેર વિષયકે જ્ઞાનસે ક્રમર કરકે અથવા એકહી સાથ, યા કુછ-કુછ અંશમેં રિક્ત હો જાતી હૈં ફિર ઇસે કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્યકા ભાન ભી કૈસે હો સકતા હૈ, ક્યોંકિ કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્ય કા ભાન ઇન્દ્રિયોં દ્વારા હી ગ્રહણ કિયે હુએ વિષયોંમેં માનસિક વિચારધારા સે હોતા હૈ । જબ વે ઇન્દ્રિયાં અપનેર વિષયકે બોધસે વિકલ બનજાતી હૈં તબ ઉનકે વિષયોં મેં જો માનસિક વિચારધારા બંધતી થી વહ કૈસે બંધ સકેગી ? અતઃ યહ ઉસ સમય ઇસ પ્રકાર કે બોધસે રહિત હોકર એક તરહ કા ઉન્મત્ત જૈસા કર્તવ્યમૂઢ હો જાતા હૈ ।

અથવા-આર્ષવાક્ય હોને સે-“સોયપરિણાણેહિં પરિહીયમાણેહિં”

વૃદ્ધાવસ્થાને સકળ ઇન્દ્રિયની શક્તિથી રિક્ત અને મૃત્યુકાળ નજીક આવેલી દેખીને આ કાળમાં પ્રાણી મૂઢ ભાવને પ્રાપ્ત થાય છે. ‘મારું કર્તવ્ય શું છે અને અકર્તવ્ય શું છે’ એ વાતનો તે સમયે તેવો વિચાર જ વિસરાય બાય છે, તે વખતે શ્રોત્ર, ચક્ષુ, ઘ્રાણ, રસના અને સ્પર્શન, આ બધી ઇન્દ્રિયો પોતપોતાના વિષયના જ્ઞાનથી કંમે કંમે અથવા એકી સાથે, અથવા થોડા થોડા અંશમાં રિક્ત થાય છે. પછી તેને કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યનું ભાન કેવી રીતે રહે, કારણ કે કર્તવ્ય અકર્તવ્યનું ભાન ઇન્દ્રિયોદ્વારા જ ગ્રહણ કરેલાં વિષયોમાં માનસિક વિચારધારાથી થાય છે, જ્યારે આ ઇન્દ્રિયો પોતપોતાના વિષયના બોધથી વિકલ બને છે ત્યારે તેના વિષયોમાં જે માનસિક વિચારધારા બંધાતી હતી તે કેવી રીતે બંધાઈ શકે ? માટે તે વખતે તે આ પ્રકારના બોધથી રહિત થઈને એક પ્રકારનો ઉન્મત્ત અને કર્તવ્યમૂઢ થાય છે.

અથવા-આર્ષવાક્ય હોવાથી-સોયપરિણાણેહિં પરિહીયમાણેહિં” ઇત્યાદિ



વૃદ્ધો હિ સન્તતં ચિન્તાનુત્તમઃ પ્રણષ્ટેન્દ્રિયસામર્થ્યઃ ક્ષુત્તિપાસાતુરસ્તરુણાયમાનતૃષ્ણા-  
ભિભૂતઃ કલ્યાણસરણિવિચ્ચુતો ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥ ૨ ॥

વૃદ્ધાવસ્થાયાં કીદૃશી દશા જાયતે ? इत्याह—‘ जेहिं वा सद्धिं ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જેહિં વા સદ્ધિં સંવસઈ તેઽવિ ણં ઇગયા નિયગા પુઠ્ઠિવ  
પરિવયંતિ, સોઽવિ તે નિયણ પચ્છા પરિવણ્ણા, નાલં તે તવ  
તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાણ વા સરણાણ  
વા, સે ન હાસાણ, ન કિઙ્કાણ, ન રઈણ, ન વિભૂસાણ ॥ ૩ ॥

છાયા—યૈર્વા સાર્દ્ધં સંવસતિ તેઽપિ ચલ્લુ એકદા નિજકાઃ પૂર્વં પરિવદન્તિ,  
સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિવદતિ, નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા,  
ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા, સ ન હાસાય, ન ક્રીડાયૈ, ન રતયે, ન  
વિભૂષાયૈ ॥ ૩ ॥

इत्यादि वाक्यों में प्रथमा विभक्ति के स्थानमें तृतीया विभक्ति का प्रयोग किया है । अतः प्रथमा विभक्ति का आश्रय लेकर उसका अर्थ इस प्रकार होगा—नष्ट होनेवाले वे श्रोत्रादिक—परिज्ञान, उस समय—वृद्धावस्था या रोगोदयमें इस जीवको कर्त्तव्यमूढ बना देते हैं, क्योंकि वृद्ध उस समय निरन्तर चिन्तासे जलता रहता है, उसके प्रत्येक इन्द्रिय की शक्ति नष्ट हो जाती है, वह क्षुधा तृषासे पीड़ित रहता है, उसके तृष्णा की वृद्धि होती रहती है, ऐसी हालतमें उसे आत्मकल्याण की बात ही नहीं सुहाती, अतः वह कल्याणमार्गसे बहुत ही दूर रहता है, अर्थात् वह आत्मकल्याण नहीं कर सकता ॥ २ ॥

વાક્યોમાં પ્રથમા વિભક્તિના સ્થાનમાં ત્રીજી વિભક્તિનો પ્રયોગ કરેલ છે, માટે પ્રથમા વિભક્તિનો આશ્રય લઈ તેનો અર્થ આ પ્રકાર થશે—નષ્ટ થનારા તે શ્રોત્રાદિક—પરિજ્ઞાન તે વખત—વૃદ્ધાવસ્થા અગર રોગોદયમાં જીવને કર્તવ્યમૂઢ બનાવે છે, કારણ કે વૃદ્ધ તે વખતે નિરંતર ચિન્તાથી બળતો રહે છે. તેની પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયની શક્તિ નષ્ટ થાય છે, તે ક્ષુધા તૃષ્ણાથી પીડિત રહે છે. તેના તૃષ્ણાની વૃદ્ધિ થતી જ રહે છે. આવી હાલતમાં તેને આત્મકલ્યાણની વાત જ સારી લાગતી નથી માટે તે કલ્યાણ માર્ગથી ઘણો દૂર રહે છે. અર્થાત્ તે આત્મકલ્યાણ કરી શકતો નથી. ૨



ટીકા—“યૈર્વા સાર્દ્ધં સંવસતિ” ઇતિ, વા-શબ્દોઽર્થાન્તરસૂચકઃ તેન યૈઃ સહ ન સંવસતિ તે પરિવદન્તીતિ કિમાશ્ચર્ય, પરં યૈર્વા સાર્દ્ધં સંવસતિ તેઽપિ નિન્દન્તીત્યર્થઃ । યૈર્વા પુત્રમાતૃભાર્યાદિભિઃ સાર્દ્ધં=સહ સંવસતિ=સાનુરાગં નિવસતિ યાન્ યૌવનાવસ્થાયાં સર્વથા ધનોપાર્જનાદિના પરમાદરેણોપકૃત્ય પુપોષેત્યર્થઃ । તેઽપિ

વૃદ્ધાવસ્થામેં હસ જીવકી કેસી દશા હો જાતી હૈ હસકે લિયે કહતે હૈ—“જેહિં વા સદ્ધિ” ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—જિનકે સાથ યહ રહતા હૈ વે આત્મીય જન મી વૃદ્ધાવસ્થામેં અથવા રોગાદિકે સમયમેં હસકા તિરસ્કાર કરને લગ જાતે હૈ । યહ મી उन आत्मीय जनोंकी उस हालतमें निन्दा करने लग जाता है इसलिये हे आत्मन् ! वे परिचित बन्धु तेरी रक्षा करनेके लिये, तुझे शरण देनेके लिये समर्थ नहीं हैं, और न तू भी उन अपने परिचित बन्धुओंकी रक्षा करनेके लिये, उन्हें शरण प्रदान करनेके लिये समर्थ है । उस अवस्थामें वह वृद्ध न हास्यके योग्य होता है न क्रीडाके लायक रहता है, न रतिमें समर्थ होता है और न विभूषाके लायक रहता है ॥ ૩ ॥

“યૈર્વા સાર્દ્ધં સંવસતિ” યહાં જો વા શબ્દ હૈ વહ અર્થાન્તર કા સૂચક હૈ, હસસે યહ વાત પ્રકટ હોતી હૈ કિ યહ જિનકે સાથ નહીં રહતા હૈ વે યદિ હસકા તિરસ્કાર યા હસકી નિન્દા કરતે હૈ તો કોઈ અચરજ કી વાત નહીં હૈ, પરન્તુ આશ્ચર્ય તો હસ વાતકા હૈ કિ ચિરપાલિત જિન

વૃદ્ધાવસ્થામાં આ જીવની કેવી દશા થઈ જાય છે તેના માટે કહે છે:—  
“જેહિં વા સદ્ધિ” ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ:—જેની સાથે તે રહે છે તે આત્મીયજન પણ વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા રોગાદિક સમયમાં તેના તિરસ્કાર કરવા લાગી જાય છે. તે પણ તે આત્મીયજનોની તેવી હાલતમાં નિન્દા કરવા લાગી જાય છે. માટે હે આત્મન્ ! તે પરિચિત બંધુ તારી રક્ષા કરવા માટે, તને શરણુ દેવામાં સમર્થ નથી, અને તું પણ પોતાના પરિચિત બંધુઓની રક્ષા કરવામાં તેમજ શરણુ દેવામાં સમર્થ નથી. તે અવસ્થામાં તે વૃદ્ધ હાસ્યને યોગ્ય હોતો નથી, તેમજ ક્રીડાને લાયક પણ રહેતો નથી, અને રતિમાં પણ સમર્થ થતો નથી, તેમજ વિભૂષાને લાયક પણ રહેતો નથી.

“યૈર્વા સાર્દ્ધં સંવસતિ” આ ઉકાણે જે વા શબ્દ છે તે અર્થાન્તરનું સૂચક છે તેથી એ વાત પ્રગટ થાય છે કે—એ જેની સાથે નહિ રહેતા તે કદાચ તેના તિરસ્કાર અગર તેની નિન્દા કરે તો કોઈ અચરજની વાત નથી, પરંતુ આશ્ચર્ય તો એ વાતનું છે કે ચિરપાલિત જે પુત્ર ભાઈ અને સ્ત્રી સાથે તે ઘણા અનુ-

खलु एकदा निजकाः पूर्वं परिवदन्तीति, ते चिरपरिपालिता अपि स्त्रीपुत्रभृत्यादयः  
खलु=निश्चयेन एकदा=वृद्धावस्थायां रोगोदये च निजकाः=आत्मीयाः परिवदन्ति=  
तिरस्कुर्वन्तीत्यर्थः । तं पूर्वोपकारिणं वृद्धं सम्प्रति शत्रुमिव मन्यन्त इति भावः ।

“अयं वाचालः परुषवाग् न म्रियते, नापि मौनं तिष्ठति, नापि स्थानान्तरं गच्छति,  
पुत्र भाई और भार्या के साथ यह बड़े अनुरागसे रहता है, और जिनका  
इसने अपनी जवानी अवस्थाके समय सर्व प्रकारसे धनादिक के अर्जन  
द्वारा बड़े आदरके साथ संरक्षण किया है, पालन-पोषण किया है ऐसे  
वे आत्मीय जन भी अपने इस उपकारी जनका इस वृद्धावस्थामें, अथवा  
इसके रोगाक्रान्त हो जाने पर तिरस्कार करने लगते हैं, वे इसके प्रति  
इस प्रकारसे व्यवहार करते हैं जैसे कोई अपने शत्रुके साथ व्यवहार  
करता है । नौकर चाकर भी इसकी एक भी बात नहीं सुनना चाहते  
हैं, अथवा सुनकर भी वे उसकी बातका कोई महत्त्व ही नहीं समझते ।  
घरवाले उस समय यही कहते हैं कि-इसकी इस अवस्थामें बुद्धि मारी  
गई है, ‘साठ वर्षमें मनुष्यकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है’ यह बात सत्य  
है, इसे बोलने तकका भी अब तमीज नहीं है-रात दिन बड़बडाता  
ही रहता है, हर एकसे यद्वा-तद्वा कठोर वचन बोल दिया करता है,  
क्या करें, इसे मौत भी नहीं आती है, इससे हजारों बार कह दिया है  
कि ज्यादा मत बोला करो, चुप रहा करो, परन्तु यह नहीं मानता, रात-  
दिन यहीं पर अड़ा बैठा रहता है, इससे इतना भी नहीं बनता कि

રાગથી રહે છે અને જેનો તેણે પોતાની બુવાન અવસ્થાને સમયે સર્વ પ્રકારથી  
ધનાદિક કમાઈને આદરથી રક્ષણ કર્યું છે. એવા તે આત્મીય જન પણ પોતાના  
આવા ઉપકારી માણસનો આ વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા રોગા-ક્રાન્ત થવાથી તેનો  
તિરસ્કાર કરવા લાગી જાય છે. તે તેના પ્રતિ એવા પ્રકારથી વ્યવહાર કરે છે  
કે જાણે પોતાના શત્રુની સાથે વ્યવહાર કરતા હોય. નોકર-ચાકર પણ તેની  
કોઈ વાત સાંભળતા નથી, અથવા સાંભળે તો તેની વાતનો કોઈ મહત્વ સમજતા  
નથી. ઘરવાળા આ સમયમાં એ કહે છે કે-એની આ અવસ્થાએ બુદ્ધિ મારી  
ગઈ છે. “સાઠ વર્ષે” મનુષ્યની બુદ્ધિ ભ્રષ્ટ થાય છે.” આ વાત સત્ય છે, જેને  
બોલવાનો પણ ઢંગ નથી, રાત-દિવસ બડ-બડ કર્યા કરે છે. દરેકથી  
જેમ-તેમ ખરાબ ખરાબ શબ્દો બોલી નાંખે છે. શું કરવું એને મોત પણ આવતી  
નથી. એને હજાર વાર કહ્યું કે બાપુ બોલો નહિ, ચુપ રહ્યા કરો, પરંતુ એ  
માનતો જ નથી, રાત-દિન આ ઠેકાણે અહો લગાવી બેસી જ રહે છે, એનાથી



સ્વદ્વાદિકમપિ ન પરિત્યજતિ इत्येवं नानाविधकठोरवाक्यैस्तर्जन्यादिना तर्जयन्  
 “किमनेन वराकेणे”—इत्येवं सततं तं धिक्कुर्वन्ति । अन्येषां का वार्ता किन्तु स्वय-  
 मपि स्वात्मानं नाद्रियते, तथा हि—उत्थातुकामोऽपि नोत्थातुं शक्नोति, श्रोतुं द्रष्टुं  
 घ्रातुमास्वादयितुं स्पृष्टुमिच्छति, परन्तु तत्तदिन्द्रियसामर्थ्यस्य परिक्षीणतया न  
 शृणोति शब्दं, न पश्यति रूपं, न जिघ्रति गन्धं, नापि रसमास्वादयति, न चैव कर्कशक-  
 यहाँसे दूसरी जगह भी जाकर बैठ जावे, जब देखो तब खाट पर ही  
 पड़ा रहता है, यों तो इसके कोई मतलब ही नहीं है, क्योंकि कमा कर  
 तो हम ही लाते हैं । इस प्रकार के अनेक कठोर वचनोंसे अथवा तर्जनी  
 ऊंगली दिखाकर इसका अनादर करते हैं, उसे सदा धिक्कारा करते हैं ।

इस अवस्थामें दूसरोंकी क्या बात कहना, अर्थात् दूसरे व्यक्ति  
 अथवा अपने सगे संबन्धी लोग इस वृद्ध की सेवा चाकरी आदर सत्कार  
 न करे तो कोई अचरज की बात नहीं, परन्तु यह स्वयं अपने शरीर  
 सम्बन्धी कार्य करनेमें भी असमर्थ हो जाता है—यह उठना चाहता है  
 तो भी उठ नहीं सकता, सुननेकी, देखनेकी, सूंघनेकी और चखनेकी  
 तथा छूनेकी इच्छा करता है तो भी अपनी उनर पदार्थोंको विषय कर-  
 नेवाली इन्द्रियोंकी शक्ति क्षीण होनेसे न शब्द को सुन सकता है, न  
 रूपको देख सकता है, न गन्धको सूंघ सकता है, न रसको चख सकता  
 है और न कर्कश कठोर आदि स्पर्शको पहचान सकता है ।

એટલું પણ નથી બનતું કે અહીંયાથી ઉઠી બીજી જગ્યાએ જઈ બેસે. જ્યારે  
 દેખો ત્યારે ખાટ પર જ પડી રહે છે. આમ તો એને કોઈ મતલબ જ નથી,  
 કારણ કે કમાઈ કમાઈને તો અમે લાવીએ છીએ. આવા પ્રકારના અનેક  
 કઠોર વચનોથી અથવા અંગુઠો બતાવી બતાવીને તેનો અનાદર કરતા જ રહે છે  
 અને તેને ધિકાર્યા જ કરે છે.

આ અવસ્થામાં બીજાની શું વાત કહેવી — અર્થાત્ બીજી વ્યક્તિ અને  
 પોતાનાં સગાં સંબંધી લોક આ વૃદ્ધની સેવા ચાકરી આદર સત્કાર ન કરે તો  
 કોઈ અચરજની વાત નહિ. પરંતુ તે પોતે પોતાના શરીર સંબંધી કાર્ય કરવામાં  
 પણ અસમર્થ બને છે. તે ઉઠવા ચાહે છે તો પણ ઉઠી શકતો નથી, સાંભળવાની  
 દેખવાની સૂંઘવાની અને ચાખવાની તથા સ્પર્શની ઇચ્છા કરે છે તો પણ પોતાની  
 તે તે પદાર્થોથી વિષય કરવાવાળી ઇન્દ્રિયોની શક્તિ ક્ષીણ હોવાથી ન તો શબ્દને  
 સાંભળી શકતો, ન તો રૂપને દેખી શકતો, નથી ગંધને પારખી શકતો, નથી  
 રસને ચાખી શકતો અને કઠોર તેમજ કર્કશ સ્પર્શને પીછાણી શકતો નથી.

ठोरादिकं स्पृशति । इति नानाविधां दुर्दशामनुभूय नवद्वारेभ्यो विनिःसृतं कर्णमलादिकं घृणास्पदं वस्तु दर्शं दर्शमत्यर्थं क्लान्तमना भवति ततः 'कथमेतादृशस्य मम मरणं नायाती—'त्यनिशं खट्वारूढः कासश्वासादिरोगाभिभूतः कफावृतशय्यावसनादिको मुहुरुपतप्तो भवतीति निजशरीरं स्वस्मै सर्वथा न रोचते । उक्तञ्च—

ऐसी अनेक प्रकारकी दुर्दशाको भोगता हुआ यह वृद्ध सदा चित्तमें सन्तप्त होता रहता है । तथा शरीर के नव द्वारोंसे सदा निकलनेवाले कानके मेल तथा खेंखार आदि अपवित्र वस्तुओंको देख-देख कर नित्य ग्लानि करता रहता है परन्तु कर कुछ नहीं सकता, यह तो यही विचारता है कि मेरी मृत्यु कब आवे, ताकि इस दुःखसे छुटकारा मिल जावे, परन्तु इसके इस विचारसे कुछ होना जाना नहीं है, यह तो विचारा अपनी खटिया पर पड़ा-पड़ा ही कफ खाँसी श्वास आदि रोगोंसे दुःखित होता रहता है, कफ आदि मलोंको यह बाहर फेंकनेकी इच्छा करता है तो भी शारीरिक अशक्ति की वजहसे वे कपड़ों पर ही गिर जाते हैं, बाहरमें मलत्यागकी भावना होनेपर भी उठनेकी अशक्ति की वजह से खटिया पर ही टट्टी पेशाब हो जाती है, यह उसमें ही लथ-पथ हो कर पड़ा रहता है और दुःखी भी होता है, परन्तु कर-धर कुछ नहीं सकता । ऐसी परिस्थितिमें इसे स्वयं भी अपना शरीर रुचिकर प्रतीत नहीं होता । कहा भी है—

એવી અનેક પ્રકારની દુર્દશાને ભોગવતાં તે વૃદ્ધ સદા ચિત્તમાં સંતપ્ત રહ્યા કરે છે, તથા શરીરના નવ દ્વારોથી સદા નીકળતાં કાનનાં મેલ તથા ખેખાર આદિ અપવિત્ર વસ્તુઓને દેખીને નિત્ય ગ્લાનિ ભોગવ્યાં કરે છે. પરંતુ કંઈ પણ કરી શકતો નથી. એ તો એ જ વિચારે છે કે મારી મૃત્યુ કયારે આવે જોઈ આ દુઃખથી છુટકારો મળી જાય, પરંતુ તેના આ વિચારથી કંઈ બની શકતું નથી. એ તો બિચારો ખાટલા ઉપર પડ્યો પડ્યો કફ-ખાંસી શ્વાસ આદિ રોગોથી દુઃખી થતો રહે છે. કફ આદિ મળોને તે બાહર ફેંકવાની ઇચ્છા કરે છે તો પણ શારીરિક અશક્તિથી તે તેના કપડા ઉપર જ પડી જાય છે. બાહર મલ ત્યાગની ભાવના હોવા છતાં પણ ઉઠવાની અશક્તિથી ખાટલા ઉપર જ ઝાડો પેશાબ થઈ જાય છે તે તેમાં જ લથ-પથ પડ્યો રહે છે, અને દુઃખી પણ થાય છે. પરંતુ કંઈ પણ કરી શકતો નથી. આવી પરિસ્થિતિમાં તેને પોતાને પણ પોતાનું શરીર રુચિકર પ્રતીત થતું નથી. કહ્યું છે—



શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતા સ્નાયુનિચયઃ,  
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ॥  
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,-  
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ ? ॥ ૧ ॥  
 શરીરં સઙ્કોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ  
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ॥  
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણાઃ સ્ત્રી ન ભજતે  
 જરાયાં હા ! કષ્ટં તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ॥ ૨ ॥  
 સકલપરિવારો વૃદ્ધાવસ્થાયાં જુગુપ્સતે તદ્વિષયે કથાનકમત્ર, તથા હિ—

“ શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતા સ્નાયુનિચયઃ,  
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ।  
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,-  
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ ? ॥ ૧ ॥  
 શરીરં સઙ્કોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ,  
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ।  
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણાઃ સ્ત્રી ન ભજતે,  
 જરાયાં હા ! કષ્ટં, તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।  
 અર્થ સ્પષ્ટ હૈ ॥

વૃદ્ધાવસ્થામેં ઉસકે સમસ્ત અપને જન હસસે ઘૃણા કરને લગજાતે  
 હૈ, હસ વિષયમેં એક કથા લિખી જાતી હૈ—

“ શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતા સ્નાયુનિચયઃ  
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ।  
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,  
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ ? ॥ ૧ ॥  
 શરીરં સઙ્કોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ,  
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ।  
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણાઃ સ્ત્રી ન ભજતે,  
 જરાયાં હા ! કષ્ટં તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।  
 અર્થ ખુલ્લો છે.

વૃદ્ધાવસ્થામાં તેના સમસ્ત પોતાના જન જેનાથી ઘૃણા કરવા લાગી જાય  
 છે. આ વિષયમાં એક કથા આપવામાં આવી છે:—

आसीद्राजगृहे नगरे गुणगणविभूषितः संसारसारसुचारुसौन्दर्यालङ्कृतो निखिल-  
गजवाजिरथवसनविभवोपार्जको 'देवदास'—नामा कश्चिच्छ्रेष्ठी । स च यौवने भा-  
ग्यातिरेकेण दशकोटिमितसुवर्णमुद्रां वाणिज्यकर्मणा समर्ज्य सकलस्त्री-पुत्रादि-  
परिपोषकश्चन्द्र इवाह्लादकस्तेषां बभूव । तस्य चत्वारः पुत्रा आसन् । स एकदा  
वार्द्धके रत्नादिकं सकलधनं विभज्य पुत्रेभ्यः समर्प्य निश्चिन्तोऽभूत्स्वयम् । पुत्रा  
अपि निज-निजपत्नीः पितृशुश्रूषार्थं समादिश्य स्वस्वकार्यसमासक्ता अभूवन् । गतेषु

राजगृह नामके प्रसिद्ध नगरमें देवदास नामक एक सेठ रहता था  
जो अनेक गुणों से अलङ्कृत था । जिसका शरीर संसारमें सारबुद्धिको  
उत्पन्न करानेवाले सुन्दर सौन्दर्यसे सुशोभित था । जिसका घर हाथी  
घोड़ों और रथोंसे सदा भरा-हुवा था । सुन्दर २ कीमती वस्त्रोंकी जिसके  
यहां पर कमी नहीं थी । सम्पत्ति जिसकी दासी थी । किसी समय  
उसने यौवन अवस्थामें शुभ कर्मके उदयसे व्यापारके जरिये दस करोड़  
सुवर्ण मुद्राओंका उपार्जन किया । वह स्त्री-पुत्रादिक परिजनोंके लिये  
चन्द्रमाकी तरह आनन्द उत्पन्न करता था । उसके चार पुत्र थे । उसने  
एक समय अपनी वृद्धावस्थामें अपनी धनसम्पत्ति अपने समस्त पुत्रों  
को बाँट दी और उनकी तर्फसे स्वयं निश्चिन्त हो गया । वे पुत्र भी  
अपनी २ स्त्रियोंको “तुम हमारे पिताकी अच्छी तरहसे सेवा करना”  
ऐसा आदेश देकर अपने २ काममें लग गये । कुछ दिनोंके बाद बड़े  
पुत्र की स्त्री अपने ससुर की सेवा करने में आलस्य करने लगी । पुत्र

राजगृह नामका प्रसिद्ध नगरमें देवदास नामको एक सेठ रहेतो હતો. જે  
અનેક ગુણોથી અલંકૃત હતો. જેનું શરીર સંસારમાં સારબુદ્ધિને ઉત્પન્ન કરવા-  
વાળા સુંદર સૌન્દર્યથી સુશોભિત હતું, જેના ઘરે સુંદર કીમતી વસ્ત્રોની કમીના  
ન હતી. જેનું ઘર હંમેશા હાથી-ઘોડા અને રથોથી ભરેલું રહેતું હતું. સંપત્તિ  
જેની દાસી હતી. એક વખત તેણે યૌવન અવસ્થામાં શુભ કર્મના ઉદયથી  
વ્યાપારથી દસ કરોડ સુવર્ણમુદ્રા કમાયો. તે સ્ત્રી પુત્રાદિક પરિજનો માટે ચંદ્ર-  
માની માફક આનંદ ઉત્પન્ન કરતો હતો. તેને ચાર પુત્રો હતા. તેણે એક વખત  
પોતાની વૃદ્ધાવસ્થામાં પોતાની ધનસંપત્તિ પોતાના સમસ્ત પુત્રોમાં વહેંચી આપી,  
અને તેમના તરફથી બિલકુલ નિશ્ચિત થઈ ગયો. તે પુત્ર પણ પોતપોતાની  
સ્ત્રીઓને “તમે અમારા પિતાની સારી રીતે સેવા કરજો” એવો આદેશ આપીને  
પોતપોતાના કામે લાગી ગયા. થોડા સમય પછી મોટા પુત્રની સ્ત્રી પોતાના  
સસરાની સેવા કરવામાં આળસ કરવા લાગી. પુત્ર જે વખત ઘર આવે અને

च कतिपयेषु दिवसेषु सा ज्येष्ठपुत्रवधूस्तस्य शुश्रूषायां सालसा बभूव । यदा पुत्रो गृहमागत्य पितरं कुशलं शुश्रूषादि च पृच्छति तथा स्थविरः कथयति-नेयं स्नुषा मां शुश्रूषते । सा तु पत्या निर्भर्त्सिता स्वामिनमाह-भवतां न ममोपरि विश्वासोऽस्ति ततश्चान्या एव शुश्रूषन्ताम् । ततश्चान्या स्नुषा तदीयसेवाकर्मणि नियुज्यमानाऽपि तथैव कृतमन्दादरा पुनः स्वपतिभर्त्सिता सेवाधर्माद्विरता बभूव । एवमन्या स्नुषा दुहिता पौत्री पौत्रो भृत्यवर्गश्च क्रमेण सेवात उपरता आसन् । ततश्च सततमनुत्सो गुस्तरखेदखिन्नो ग्रहगृहीत इव दुःखशतमनुभवति । ततः सर्वैः परित्यक्त एकपदमपि

जिस समय घर आकर अपने पितासे कुशल समाचार तथा सेवा करने की बात पूछता तो वह वृद्ध कहता कि भाई क्या कहूँ यह वह तो मेरी जरा भी टहल नहीं करती है । इस बातको सुन कर जब उसका पति उससे नाराज होता तो वह अपने पतिसे कहती कि यदि आपका मेरे ऊपर विश्वास नहीं है तो आप अपने पिता की सेवा दूसरी वहूसे करा क्यों नहीं लेते ? । इस प्रकार उसके कहने पर जब उसने पिता की सेवा के लिये दूसरी वहू को नियुक्त किया तो वह भी पहिली वहू जैसी ही उसकी सेवामें मन्द आदरवाली होने लगी तब उसके भी पतिने उसको बुरा भला कहा तो वह भी उसकी सेवा करने से विमुख हो गयी । इसी प्रकार अन्य और भी बहुएँ तथा पुत्री, पौत्री एवं नौकर चाकर भी उसकी सेवा करने से क्रम २ से विमुख बन गये । जब यह अपनी हालत उस वृद्धने देखी तो उसके चित्तमें बहुत ही ज्यादा सन्ताप हुआ और वह अत्यन्त खेदखिन्न हो पागल जैसा बन कर अनेक प्रकारके कष्टोंका

पिताने कुशल समाचार तथा सेवा करवानी बात पूछे त्यारे ते वृद्ध कहेतो के लार्ड शुं कहुं ? आ वहु तो भारी जरा पणु जातर भरदास करती नथी, आवी बात सांभलीने न्यारे तेनो पति तेष्णीथी नाराज थाय छे त्यारे तेष्णी पोताना पतिने कहे छे के तमने मारा उपर विश्वास नथी तो पछी तमारा पिताना सेवा भील वहुथी केम करावतां नथी ? आवा प्रकारना तेष्णीना कहेवा परथी न्यारे तेष्णी पितानी सेवा भाटे भील वहुने नियुक्त करी तो ते पणु पड़ेली वहुनी भाइक तेनी सेवामां मन्द मन्द आदरवाली थवा लागी, त्यारे तेनो पति पणु न्यारे तेने लखुं लुङ् कहेतो तो ते पणु तेनी सेवा करवाथी विमुअ गनी नती, आ प्रकारे भील वहुयो तथा पुत्र, पौत्री अने नौकर आकर पणु तेनी सेवा करवामां कमे-कमे विमुअ गनी गयां, न्यारे आ पोतानी हालत ते वृद्धे हेभी तो तेना चित्तमां धण्णोअ संताप पेदा थयो अने ते अत्यन्त जेदभिन्न



गन्तुमक्षमस्त्वणकुब्जीकरणेऽप्यसमर्थः शय्यासविधे कृतमूत्रपुरीषोऽतिमलिनवसनो विगलितदशनः कुक्कुरपिण्डमिवाहर्निशं भोजनं लभमानो वृद्धश्चेतसि व्यचिन्तयत् —‘ अहं यौवने धनार्जनपरायणः कुटुम्बपोषणपरः कदापि कल्याणमार्गं नाराधितवान् किमधुना करोमि कोऽपि मां न गणयति, ते पूर्वमुपलालिताश्चिरपालिताः पुत्रादि-परिवारा आत्मसाधनविकलितं कृतकलकलं मामुपहसन्तीत्येवं भृशं विलपति, पश्चात्ता-

अनुभव करने लगा, सब घरवालों ने उसे छोड़ दिया। वह बिलकुल कमजोर हो गया। एक पैर भी चलनेकी उसमें शक्ति नहीं रही। वह अपनी खाटके पास ही मल-मूत्र का त्याग करने लगा। वस्त्र भी उसके अत्यन्त मलिन रहने लगे। उसके दाँत पहिलेसे ही गिर चुके थे। घर-वालों में से भी किसीका उसके प्रति जरा भी स्नेह नहीं रहा। भोजन भी उसे अनादरपूर्वक दिया जाने लगा। इस अपनी हालत को देख कर वह विचार करने लगा कि-हाय ! मैंने यौवन अवस्थामें धन कमाने में ही अपना समय व्यतीत किया, कुटुम्बके भरण-पोषण करने में ही चित्तको लगाया, कल्याण मार्गकी तर्फ सदा उदासीन रहा, उसकी थोड़ीसी भी आराधना नहीं की, अब इस अवस्थामें मैं क्या कर सकता हूँ। इतना सब कुछ करने पर भी तो ये लोग मेरी तर्फ जरा भी ध्यान नहीं देते। जिनका मैंने पहिले अच्छी तरह से लालन-पालन किया, और जिनके साथ मेरा घनिष्ठ प्रेम रहा है। संसारमें जिन्हें आत्मीय

गनी गांडानी माइक गनी अनेक प्रकारना कष्टोने अनुभव करवा लाग्यो, गधा घरवाणायें तेने छोडी दीधो, ते गीलकुल कमलेर थर्छ गयो, अेक उगलुं पणु आलवानी तेनामां शक्ति न रडी, ते पोताना पाटलानी पासे न आडा पेशागने त्याग करवा लाग्यो, तेना वस्त्रो पणु भेदा रडेवा लाग्या, तेना दांते पडेलाथी न पडी गया डता, घरवाणाभांथी कोर्छनो पणु तेना प्रति नरा नेटवो पणु प्रेम ना रह्यो, लोअन पणु तेने अनादरपूर्वक आपवामां आवतुं डतुं, आपोतानी डालतने हेणीने ते विचार करवा लाग्यो के-“ हाय ! में यौवन अवस्थांमां धन कमावामां न पोतानो समय व्यतीत कर्यो, कुटुंअनुं लरणु पोषणु करवामां न चित्तने लगाव्युं, कल्याणमार्गनी तरफ सदा उदासी रह्यो, तेनुं थोडुं पणु आराधन न कथुं, डवे आवी अवस्थांमां डुं शुं करी शकुं ? आटलुं आटलुं करवा छतां पणु आ लोको भार तरफ पणु लेता नथी, नेनुं में पडेलां सारी रीते लालन-पालन अने नेनी साथे भारो घनिष्ठ प्रेम रह्यो छे, संसारमां नेने



પાનુત્તમઃ ‘કથં શીઘ્રં ન મ્રિયે’ ઇતિ વારં-વારં વદન્ વિપીદતિ ચ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં કૃષિવાણિજ્યગજવાજિરથાદિવિષયા જિજ્ઞાસા જાગર્તિ, પ્રત્યહં પૃચ્છતિ પુત્રાદિકં, પરં પુત્રેણ ‘તિષ્ઠ તિષ્ઠ જાલ્મ ! કાક ઇવારુન્તુદાં ગિરં કિં મુધા પ્રલપસિ ? કિં તે જ્ઞાતેન ? કિમત્ર તવ પ્રયોજનમ્ ? મૌનં કૃત્વા યન્મિલતિ ચાશનવસનાદિકં તદ્ ગૃહાણ ’ ઇત્યાદિનાનાવિધપરુષવાગ્મિર્ભૂયોભૂયસ્તર્જિતો મર્ત્યસતશ્ચ ભવતિ ।

કહતે હૈં વે હી મેરી ઉપેક્ષા કર રહે હૈં તો અબ ઓર કૌન એસા હૈ જો આત્મસાધનાસે રહિત મુઝ અભાગે કી ઓર ધ્યાન દેગા ? યે સબ લોગ મુઝે દેખ ર કર હૈસતે હૈં, હાય ! અબ મૈં કયા કરૂં ? ઇત્યાદિ રૂપ સે વહ વિલાપ કરને લગા, ઓર પશ્ચાત્તાપકી અગ્નિમેં જલતા હુવા “મૈં શીઘ્ર ક્યોં નહીં મર જાતા હૂં” ઇસ પ્રકાર વારંવાર વિચારને લગા ઓર દુઃખી હોને લગા ।

જબ જબ વહ ઇસ અવસ્થામેં કૃષિ, વાણિજ્ય, હાથી, ઘોડા ઓર રથ આદિ કે વિષયમેં અપને પુત્રોં સે પૂછતા તો વે ઇસસે કહતે કિ-અરે ! બડ-બડ ક્યોં કરતે હો ? ચુપ-ચાપ ક્યોં નહીં બૈઠે રહતે હો ? તુમકો ઇનસે અબ કયા મતલબ હૈ ? વ્યર્થ હી કૌણ કે સમાન હમકો નહીં સુહા-નેવાલી વાળી ક્યોં બોલતે હો ?, કયા હો રહા હૈ, કયા નહીં હો રહા હૈ ?; ઇસકે જાનનેકી તુમ્હેં કયા જરૂરત હૈ ?, ઇસ પ્રકાર કે જાનને સે મી તુમ્હારા કૌનસા સ્વાર્થ સિદ્ધ હોતા હૈ ?, તુમ તો ચુપ હી રહા કરો, ઓર જો કુછ મી રાને-પીને કો મિલ જાતા હૈ ઉસીમેં સન્તોષ રક્ષો । ઇત્યાદિ

આત્મીય કહે છે તે જ મારી ઉપેક્ષા કરી રહ્યાં છે. તો હવે એવો કોણ છે જે આત્મસાધનાથી રહિત મારા જેવા અભાગીની તરફ ધ્યાન આપે ? આ બધા લોકો મને દેખીને હસે છે. હાય ! હવે હું શું કરું ?” ઇત્યાદિ રૂપથી તે વિલાપ કરવા લાગ્યો અને પશ્ચાત્તાપની અગ્નિમાં જલીને “હું જલદી કેમ મરતો નથી ?” આ પ્રકારે વારંવાર વિચારવા લાગ્યો અને દુઃખી થવા લાગ્યો.

ન્યારે ન્યારે તે આ અવસ્થામાં ખેતી, વ્યાપાર, હાથી, ઘોડા અને રથ આદિ વિષયમાં પોતાના પુત્રોથી પૂછતો તો તેઓ કહેતા કે-“અરે ! બડબડ શું કર્યા કરો છો ? ચુપચાપ કેમ બેસતા નથી ? તમારે તેનાથી શું મતલબ છે ? ખાલી કાગડા સમાન અમારે નહિ સાંભળવા જેવી વાણીને સાંભળાવો છો. ‘શું થઈ રહ્યું છે ? શું નથી થઈ રહ્યું ?’ એ બધું બાણવાની તમારે શું જરૂર છે ? આ પ્રકારનું બાણવાથી પણ તમારો કયો સ્વાર્થ સિદ્ધ થવનો છે ? તમે તો ચુપ જ રહ્યા કરો અને જે કંઈ પણ ખાવા પીવાનું મળે છે તેમાં સંતોષ રાખો” ઇત્યાદિ

वृद्धावस्थायां बहुप्रलपनशीलो निजपरिवारकृताननादरान् यस्मै कस्मैचिदपि प्रातिवेशिकाय कथयतीति दर्शयति—‘ सोऽपि तान् निजकान् पश्चात्परिवदति ’ इति, सः=वृद्धोऽपि तान्=पुत्र-कलत्र-भृत्यादीन् निजकान्=आत्मीयान्, पश्चात्=वृद्धावस्थायां, परिवदति=परिभवति, पूर्वं यान् पुत्रादीन् पोषयितुं धनोपार्जनासक्तः ‘ स्त्री पुत्रादिभरणमेव श्रेयः ’ इति मत्वा विहितनिखिलानर्थनिवहो व्यग्रविग्रहः कल्याणमार्ग-

अनेक प्रकार के कठोर वचनोंसे बारंबार वे उसका तिरस्कार करते हुए उस वृद्ध सेठको दुःखित करते थे ।

वृद्धावस्थामें एक तो मनुष्यको स्वभावतः पहिले की अपेक्षा अधिक वाचालता आजाती है अतः अपने सगे संबंधियों द्वारा जो कुछ भी अनादरसूचक व्यवहार उसके साथ होता है वह जब तक अपने पड़ोसियोंसे न कह दे तब तक उसे शान्ति भी नहीं मिलती, अब इसी बातको सूत्रकार सूचित करते हैं—“ सोऽपि तान् निजकान् पश्चात् परिवदति ” वह वृद्ध उन अपने पुत्र कलत्र और नौकर चाकर आदि अपने आत्मीय जनों की इस प्रकार से निन्दा करने लगता है कि जिनके पालन-पोषण करने में मैंने जरा भी कसर नहीं की, जिनकी सेवामें रात दिन एक कर दिया, यह समझ कर कि स्त्री पुत्रादिकों का पालन-पोषण करना ही सर्वोत्तम कार्य है । मैंने धन उपार्जन करनेमें भी कुछ कसर नहीं रखी, संसार भर के सब अनर्थ किये और आकुलव्याकुल चित्त बन असावधानीपूर्वक अपनी प्रवृत्ति चालू रखी, और अभी तक भी मैं

अनेक प्रकारनां कठोर वचनोत्थी बारंबार तेजो तेनो तिरस्कार करीने ते वृद्ध सेठने दुःखी करता डता.

वृद्धावस्थायां एक तो मनुष्यने स्वभावतः पहिलानी अपेक्षा अधिक वाचालता आवे छे भाटे पोताना सगां संबंधीजो द्वारा जे कांछ पणु अनादरसूचक व्यवहार तेनी साथे थाय छे, ते ज्वां सुधी पोताना पाडोशीजोने ते न कहे त्यां सुधी तेने शान्ति थती नथी. हुवे आ वातने सूत्रकार सूचित करे छे—

“ सोऽपि तान् निजकान् पश्चात् परिवदति ”

ते वृद्ध ते पोताना पुत्र कलत्र अने नौकर आदि पोताना आत्मीयजनोनी आ प्रकारे निन्दा करवा लागे छे जे-जेनुं पालन पोषण करवाभां में जरा पणु कसर नहि राभी, जेनी सेवामां रात दिवस एकज मान्यो, जेनुं समजने जे स्त्री पुत्रादिकोनुं पालन पोषण करनुं जे सर्वोत्तम कार्य छे. में धन उपार्जन करवाभां कांछ कसर राभी नहि. संसारभरना सर्व अनर्थ कर्वा, अने आकुल-

અષ્ટો જાતોઽહં, ત એવ સામ્પ્રતં મમાશનવસનાદિકાર્યેઽપિ વિમનસો ભવન્તીતિ મહત્કષ્ટમ્, કિમધિકેન મદ્વચનમપિ તેષાં વિષાયતે, इत्येवंविधवाक्यैर्निजपरिवारान् वृद्धो धिक्करोतीति भावः । अतो हे आत्मन् ! ‘ नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वेति ’ ‘ त्राणाय वा ’ दौर्बल्यपीडादिरूपापदुद्धरणाय, शरणाय वा= निर्भयावस्थानाय वा न अलं=समर्थाः । अत्र वा-शब्दोऽर्थान्तरद्योतकस्तेन कदाचिजिनके कारण कल्याणमार्गसे दूर रहा वेही अब मेरे खाने-पीने पहिनने के इन्तजाम करनेमें भी मन नहीं लगा रहे हैं, यह कितने कष्ट की बात है? अरे ! अधिक क्या कहा जाय उन लोगोंको तो अब मेरा बोलना भी विष जैसा मालूम पड़ता है । इस प्रकार के वचनोंसे वह वृद्ध उन आत्मीय जनों की निन्दा करता है और उन्हें धिक्कारता है, इसलिये सूत्रकार कहते हैं कि—

“ नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वा ” इति ।

हे आत्मन् ! जिन पर पदार्थोंका तूने अपनी रक्षाके ख्याल से पालन पोषण किया है वे कोई तेरी इस वृद्धावस्थाजन्य दुर्बलतासे अथवा उस समयमें होनेवाले अनेक कष्टरूप आपत्तियों से तेरा उद्धार नहीं कर सकते हैं और न तुझे शरण देने के लिये ही समर्थ हो सकते हैं । इस वाक्यमें जो “ वा ” शब्द आया है वह इस बातका सूचक है कि यदि पूर्व पुण्यके उदयसे कोई ऐसे आत्मीय जन मिले हों जो मातापिताके

વ્યાકુળ ચિત્ત રાખી અસાવધાનીપૂર્વક પોતાની પ્રવૃત્તિ ચાલુ રાખી, અને હળુ સુધી પણ મેં જેના કારણે કલ્યાણ માર્ગથી દૂર રહ્યો તે આજ મારા ખાવામાં-પીવામાં પહેરવામાં સગવડ કરી આપવાજરા પણ મન લગાડતા નથી, તે કેટલા દુઃખની વાત છે? અરે! અધિક શું કહેવું, તે લોકોને તો હવે મારું ખાલવું પણ ઝેર જેવું લાગે છે. આ પ્રકારના વચનોથી તે વૃદ્ધ તે આત્મીય જનોની નિંદા કરે છે અને તેને ધિક્કારે છે તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

“ નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા ” ઇતિ

હે આત્મન્ ! જે પરપદાર્થોનું તેં પોતાની રક્ષા માટે પાલન પોષણ કર્યું છે તે કોઈ તારી આ વૃદ્ધાવસ્થાજન્ય દુર્બલતાથી અથવા આ સમયમાં થનાર અનેક કષ્ટરૂપ આપત્તિઓથી તારો ઉદ્ધાર કરી શકતા નથી, અને તને શરણ દેવામાં પણ સમર્થ નથી. આ વાક્યમાં જે “વા” શબ્દ આવ્યો છે તે આ વાતનો સૂચક છે કે કદાચ પૂર્વ પુણ્યના ઉદયથી કોઈ આવા આત્મીય જન મળ્યા હોય જે માતા-પિતાની વૃદ્ધાસ્થામાં ભક્તિ કરતા હોય, તેમની દરેક પ્રકારની સેવા



ત્પૂર્વપુણ્યોદયેન વૃદ્ધાવસ્થાયાં પુત્રાદયોઽતિભક્તાસ્તવાપમાનં નૈવ કુર્વન્તિ તથાપિ તે વૃદ્ધાવસ્થાજનિતદુઃખપરિમોચકા ન ભવિતુમર્હન્તીતિ તાત્પર્યમવગમ્યતે ।

અથ યદિ પુત્રકલત્રાદયઃ સેવાપરા દુઃખભારભરમગ્નાઃ સન્તીત્યાલોચ્ય તેષાં દુઃખોદ્ધારાય તવ ચેતસિ ચિન્તા સ્યાદપિ તથાપિ તદુદ્ધારઃ કર્તુમશક્ય इति दर्शयति—  
‘ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વે’—તિ, ત્વં વૃદ્ધો ન તેષાં દુર્દશાપદુદ્ધારકો-  
નાપિ તદાશ્રયો ભવિતુમર્હસિ સામર્થ્યાભાવાદિતિ ભાવઃ ।

વૃદ્ધાવસ્થા મેં મી અતિભક્ત હોં, ઉનકી હર તરહસે સેવા ચાકરી કરનેમેં કોઈ કર-કસર ન રગ્વતે હોં, ઉનકા જરા મી તિરસ્કાર નહીં કરતે હોં તો મી હસ વૃદ્ધાવસ્થામેં હોનેવાલે જો અનેક કષ્ટ હૈં ચાહેં વે શારીરિક હોં ચાહેં માનસિક હોં, ચાહેં વાચિક હોં ઉનસે વે ઉનકા ઉદ્ધાર નહીં કર સકતે ।

વૃદ્ધાવસ્થામેં યદિ વહ વૃદ્ધ ચાહે કિ-મેં-અપને સેવક પુત્ર કલત્રા-  
દિકોં કા જો રાત દિન મેરી સેવા કરનેમેં હી લગે રહતે હૈં, ઓર જો  
વિચારે દુઃખોં સે પીડિત હો રહે હૈં મૈં ઉન્હેં કષ્ટસે નિર્મુક્ત કરદૂં’ તો  
હસ પ્રકારકા મી ઉસકા વિચાર કરના વ્યર્થ હી હૈ, હસી વાતકો પ્રકટ  
કરતે હુઅ સૂત્રકાર કહતે હૈં—“ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય  
વા” इति । भाई ! वृद्धावस्थामें तुझे इस प्रकारकी चिन्ता करना ठीक  
नहीं है, कारण कि तुम स्वयं अशक्त हो तब तुम उन दुर्दशामें फँसे हुए  
अपने पुत्र कलत्रादिकों के उद्धारक कैसे हो सकते हो और कैसे उनके

ચાકરી કરવામાં કોઈપણ પ્રકારની કસર રાખતા ન હોય, તેનો જરા પણ તિર-  
સ્કાર કરતા નથી તો પણ આ વૃદ્ધાવસ્થામાં થનાર જે કષ્ટો છે ભલે તે શારીરિક  
હોય કે માનસિક હોય, અગર વાચિક હોય, તેનાથી તેઓ તેમનો ઉદ્ધાર કરી  
શકતા નથી.

વૃદ્ધાવસ્થામાં કહાય તે વૃદ્ધ આહે કે—‘હું મારા સેવક પુત્ર કલત્રાદિકો, જે  
રાત દિવસ મારી સેવા કરવામાં જ લાગ્યા રહે છે અને જે બિચારા દુઃખોથી  
પીડિત થઈ રહ્યાં છે, હું તેમને કષ્ટથી નિર્મુક્ત કરી દઉં’ તો તેનો આ પ્રકા-  
રનો પણ વિચાર વ્યર્થ જ છે. આ વાતને પ્રગટ કરવા સૂત્રકાર કહે છે—

“ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા” इति

ભાઈ ! વૃદ્ધાવસ્થામાં તારે આ પ્રકારની ચિન્તા કરવી ઠીક નથી, કારણ કે  
તું પોતે અશક્ત છે ત્યારે તું આવી દુર્દશામાં ફસેલાં પોતાનાં પુત્ર કલત્રાદિકોનો



ત્રાણ-શરણપદયોરર્થસ્તૂત્ત એવ । અત્રાપિ વા-શબ્દેન તવ પુત્ર-કલત્રાદયો  
યદિ દુઃસ્વમગ્નાસ્ત્વત્સેવાપરા અપિ સ્યુસ્તથાપિ ન તેષાં ત્વં રક્ષકો ભવિતું શક્નોષિ,  
इत्येवं गम्यते । स्वकार्यिककार्यकरणेऽप्यसमर्थस्त्वं कथं महायाससाध्यं तेषां  
भरणपोषणादिकार्यं कर्तुमध्यवस्यसीति भावः ।

સ તસ્યામવસ્થાયાં સ્વયં હાસયોગ્યો નાન્યં જનમુપહસિતું પ્રભવતીતિ દર્શયતિ-  
'સ ન હાસાયે-' તિ, સઃ=વૃદ્ધો હાસાય નિન્દિતાચારમુપહસિતું ન યોગ્યો ભવતિ ।  
આશ્રયપ્રદાતા હો સકતે હો, તુમ તો સ્વયં હસ સમય રક્ષા કરને યોગ્ય  
एवं आश्रय पाने योग्य हो रहे हो ।

इस सूत्रमें भी जो 'वा' शब्द आया है उससे यह बोध होता है  
कि-तेरे पुत्र कलत्रादिक यदि दुःस्वमग्न हैं और तेरी सेवामें भी तत्पर  
हैं तो भी तू उनका रक्षक नहीं हो सकता, क्योंकि जब तू स्वयं अपना  
शारीरिक कार्य करने तकमें भी असमर्थ हो रहा है तो फिर कैसे महाकष्ट-  
साध्य उनके भरण-पोषण आदि कार्य करनेके लिये विचार कर सकता है ।

વૃદ્ધ અપની અવસ્થામે સ્વયં હૈસીકા પાત્ર હૈ વહ દૂસરોંકી હૈસી  
કૈસે કર સકતા હૈ ? હસકા વર્ણન કરતે હૈ-“સ ન હાસાય” જો સ્વયં  
ही हँसी-मजाक का पात्र होता है वह दूसरोंकी हँसी भी कैसे कर सकता  
है अतः कोई यदि निन्दित आचारवाला है तो वह उसकी हँसी करनेके  
योग्य ही नहीं है ।

ઉદ્ધારક કેવી રીતે બની શકે છે, અને કેવી રીતે તેને આશ્રય આપી શકાય. તમે  
પોતે આ સમયે રક્ષા કરાવવા યોગ્ય અને આશ્રય લેવા યોગ્ય છે.

આ સૂત્રમાં પણ જે 'વા' શબ્દ આવ્યો છે તેનાથી એ બોધ થાય છે કે  
તારા પુત્ર કલત્રાદિક કદાચ દુઃખમગ્ન છે અને તારી સેવામાં પણ તત્પર છે તો  
પણ તું તેમનો રક્ષક બની શકતો નથી. કારણ કે જ્યારે તું સ્વયં પોતાના  
શારીરિક કાર્ય કરવામાં અસમર્થ છે તો પછી કેવી રીતે મહાકષ્ટસાધ્ય તેનું  
ભરણ પોષણ આદિ કાર્ય કરવા વિચાર પણ કરી શકે.

વૃદ્ધ પોતાની અવસ્થામાં સ્વયં હાંસીને પાત્ર છે, તે બીજાની હાંસી કેવી  
રીતે કરી શકે ? તેનું વર્ણન કરે છે-“સ ન હાસાય” જે સ્વયં હાંસી મનકનો  
પાત્ર છે તે બીજાની હાંસી કેવી રીતે કરી શકે, માટે કોઈ કદાચ નિન્દિત  
આચારવાળા છે તો તેઓ તેની હાંસી કરવાને યોગ્ય જ નથી.

यः स्वयमुपहासपात्रं स कथमन्यमुपहसेदिति तात्पर्यम् । वृद्धावस्थायां पुरुषः क्रीडा-  
करणाक्षमो भवति, यदा कामचेष्टाभिभूतो भवति तदा स प्राणपणेनापि युवतिं  
कामयते परं सा निजानन्दाक्षमं तं विदित्वाज्वहेलयतीति दर्शयति—‘न क्रीडायै न  
रतये’ इति, क्रीडा=अक्षादिना खेलनं, लङ्घनप्रधावनास्फोटनादिकं वा, तस्यै न स  
प्रभवति । रतिर्नाम वनिताविषयक आलिङ्गनादिनानारूपः क्षणिकसुखविशेषस्तस्यै  
न समर्थो भवतीत्यर्थः । वृद्धावस्थायां युवतिं वशीकर्तुं न पारयति प्रत्युत ‘न लज्जतेऽयं  
पलितकेशोऽचारुवेशो मम हृदये शो बुभूषुर्दुहितृतुल्यामपि मामभिकामयते’  
इत्यादिवाक्यैस्तं सा भर्त्सयति ।

युवतिं लब्धुकामो धृतभूषणोऽपि न शोभत इति दर्शयति—‘न विभूषायै’ इति,  
विभूषा=कटककुण्डलकेयूरालङ्काररूपा, तस्यै स न योग्यो भवति, वृद्धस्य विभूषा  
न शोभत इति भावः ।

“न क्रीडायै न रतये” इस सूत्रमें यह प्रकट किया है कि वृद्धा-  
वस्थामें पुरुष क्रीडा करनेमें असमर्थ हो जाता है तथा वह विषयसेवनके  
भी योग्य नहीं रहता है ।

यहां क्रीडा का अर्थ अक्षादिकों-पासों-से लेखना, लांघना, दौडना  
तथा व्यायाम करना, इत्यादि है । यह क्रीडा वृद्ध कैसे कर सकता है ?  
क्यों कि वह वृद्धावस्था में बिलकुल असक्त हो जाता है । रति का अर्थ है  
आलिङ्गनादिक । इसका भी उपभोक्ता वह नहीं हो सकता कारण कि  
वृद्धावस्थामें प्रत्येक इन्द्रिय शिथिल हो जाती है । अर्थात् शोभाके लिये  
धारण किये गये अलंकार भी इसे कभी शोभा प्रदान नहीं कर सकते ।  
कडे, कुण्डल, केयूर-भुजबन्ध आदि अलंकार उसकी शोभा के अभि-  
वर्द्धक न होकर प्रत्युत उसके लिये हास्य के कारण ही बनते हैं । कहा भी है—

“न क्रीडायै न रतये” आ सूत्रमां ये प्रगट करेले छे के वृद्धावस्थां पुरुष  
क्रीडा करवाने असमर्थ जनी जाय छे तथा ते विषयसेवन माटे पणु योग्य रहेतो नथी.

आ ठेकाणु क्रीडानो अर्थ अक्षादिको-पासाओथी जेलेवुं, ठेकेवुं, कुद्वुं, दोडवुं  
तथा व्यायाम करेवो, धत्यादि छे. आ क्रीडा वृद्ध केवी रीते करी शके, कारण छे  
ते वृद्धावस्थां बिलकुल अशक्त थई जाय छे. रतिनो अर्थ छे आलिङ्गनादिक  
तेना पणु उपभोक्ता ते जनी शक्तो नथी, कारण छे वृद्धावस्थां प्रत्येक इन्द्रियो  
शिथिल जने छे. अर्थात् शोभा माटे पणु धारण करेलां अलंकार पणु तेने शोभा  
आपी शक्तां नथी. कडा, कुंडल, केयूर-भुजबन्ध आदि अलंकार तेनी शोभां  
वृद्ध करता नथी पणु तेना माटे हास्यनुं कारण जने छे. कह्युं छे के:—

उक्तञ्च—“न भूषणं भाति न हास्यमस्य, न विभ्रमो नैव जना अधीनाः ।

प्रवर्तते तत्र यदा तु वृद्धो, विडम्बनां याति परां तदा सः” ॥१॥ इति  
एवं च वृद्धावस्थायां निजतनयवनितादितिरस्कृतस्य जराजर्जरितदेहस्य क्रीडा-  
रतिविभूषादिकं न किमपि शोभत इति सूत्राशयः ॥ ३ ॥

उक्तमप्रशस्तमूलस्थानं, संप्रति प्रशस्तमूलस्थानमाह—यद्वा—यतस्ते पुत्रकलत्रादयो  
नालं मे त्राणाय वा शरणाय वा भवितुमर्हन्तीति विचार्य धीरः क्षणमपि न प्रमादं  
कुर्यादिति दर्शयति—‘इच्छेवं’ इत्यादि ।

“न भूषणं भाति न हास्यमस्य, न विभ्रमो नैव जना अधीनाः ।

प्रवर्तते तत्र यदा तु वृद्धो, विडम्बनां याति परां तदा सः ॥१॥” इति ।

इस प्रकार इसको न भूषण शोभा देते हैं—न इसकी हँसी ही  
इसकी सुन्दरता बढ़ा सकती है, न विभ्रम—विलास ही यह कर सकता है,  
इसके अपने पास में रहे हुए जन भी कहने में नहीं रहते । अगर वह  
ऊपर की बातों में प्रवृत्ति करे तो वह इस वृद्धावस्था में विडम्बना पाता  
हुवा अपने पुत्र—स्त्री आदि से तिरस्कार को ही पाता है, तथा जरासे  
जर्जरित काय बने हुए इसके लिये क्रीडा—रति—विभूषादिक कुछ भी  
शोभा नहीं देते ॥ ३ ॥

अप्रशस्त मूलस्थानों का वर्णन हो चुका, अब प्रशस्त मूलस्थानों  
का दर्शन किया जाता है, अथवा—वे पुत्र कलत्रादिक मेरी रक्षा के लिये  
या मुझे शरण प्रदान करने के लिये समर्थ नहीं हो सकते हैं, ऐसा विचार

“न भूषणं भाति न हास्यमस्य, न विभ्रमो नैव जना अधीनाः ।

प्रवर्तते तत्र यदा तु वृद्धो, विडम्बनां याति परां तदा सः” ॥ १ ॥ इति ।

आ प्रकारे तेने भूषणु शोभा देता नथी. तेनी हांसी पणु तेनी सुंदरता  
वधारी शकती नथी. ते विलास पणु करी शकतो नथी. तेनी पासे रहेता माणुसे  
पणु तेना कडेवाभां रहेता नथी. अगर ते ऊपर कडेली बातोभां प्रवृत्ति करे तो  
ते आ वृद्धावस्थाभां विडम्बना पायीने पोताना पुत्र स्त्री आदिथी तिरस्कार न  
पाये छे. तथा घउपणुथी जर्जरित शरीर अनेकुं डोछ तेना माटे क्रीडा, रति,  
विभूषादिक डोछ पणु शोभा माटे योग्य नथी.

अप्रशस्त मूलस्थानोतुं वर्णन थछ युक्तुं. डवे प्रशस्त मूलस्थानोतुं  
वर्णन करे छे:—अथवा ते पुत्र कलत्रादिक मारी रक्षा माटे अगर मने शरण  
प्रदान करवा माटे समर्थ अनी शकता नथी, ओवे विचार करी धीर वीर पुरुषतुं



મૂલમ્—ઇચ્છેવં સમુદ્વિષ્ અહોવિહારાણ, અંતરં ચ ચ્વલુ ઇમં સંપેહાણ ધીરે મુહુત્તમવિ ણો પમાયણ વઓ અચ્છેતિ જોઞ્વણં વા ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—ઇત્યેવં સમુદ્વિષ્તઃ અહોવિહારાય અન્તરં ચ ચ્વલુ ઇમં સંપેક્ષ્ય ધીરો મુહુત્તમવિ નો પ્રમાદયેત્, વયોઽત્યેતિ યૌવનં વા ॥ સૂ. ૪ ॥

કર ધીર વીર પુરુષ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ એક ક્ષણ મી પ્રમાદ ન કરે—  
ઇસી વાતકી પુષ્ટિ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—

“ઇચ્છેવ સમુદ્વિષ્” ઇત્યાદિ—યૌવન અવસ્થા મેં પુત્ર-મિત્રાદિકોં મેં આસક્ત બના હુઆ યહ પ્રાણી સાવધ વ્યાપાર મેં લવલીન રહતા હૈ ઓર જબ વૃદ્ધાવસ્થા આતી હૈ તવ વહ ઉન સકલ કાર્યોં કે વેદને મેં અસમર્થ હો જાતા હૈ, એસા વિચાર કર સંયમ પાલન કરને કે લિયે ઉદ્યુક્ત હુઆ સંયમી મુનિ સંયમ કો પાલન કરને કે ઇસ અવસર કા અચ્છી તરહ વિચાર કર એક મુહુર્ત્ત મી પ્રમાદ ન કરે, ક્યોં કિ આયુ ઓર યૌવન દોનોં વીત રહે હૈ ।

સૂત્ર મેં “ઇત્યેવં” યહ શબ્દ પૂર્વોક્ત કથન કી પુષ્ટિ કરતા હૈ, અર્થાત્—જબ યહ વાત પ્રમાણિત હો ચુકી કિ યૌવન અવસ્થા મેં પુત્ર મિત્ર કલત્રાદિકોં મેં આસક્ત બના હુઆ પ્રાણી સાવધકાર્યોં કે કરને મેં લવલીન હોતા હૈ પરન્તુ વહી પ્રાણી જબ વૃદ્ધાવસ્થા આતી હૈ તવ ઉન સમસ્ત કાર્યોં કે કરને મેં અપને કો સર્વથા અસમર્થ પાતા હૈ, જબ યહ હાલત હૈ

કર્તવ્ય છે કે તે એક ક્ષણ પણ પ્રમાદ ન કરે. આ વાતની પુષ્ટિ કરવા સૂત્રકાર કહે છે કે—

“ઇચ્છેવ સમુદ્વિષ્” ઇત્યાદિ, યૌવન અવસ્થામાં પુત્ર-મિત્રાદિકમાં આસક્ત બનીને આ પ્રાણી સાવધ વ્યાપારમાં લવલીન રહે છે અને ન્યારે વૃદ્ધાવસ્થા આવે છે ત્યારે તે એ બધા કાર્યોને કરવામાં અશક્ત બની જાય છે, એવો વિચાર કરી સંયમ પાલન કરવા માટે ઉદ્યુક્ત થઈને સંયમી મુનિ સંયમનું પાલન કરવાને આ અવસરનો સારી રીતે વિચાર કરી એક ક્ષણનો પણ પ્રમાદ ન કરે, કારણ કે આયુષ્ય અને યૌવન બંને વીતી જાય છે.

સૂત્રમાં “ઇત્યેવં” આ શબ્દ પૂર્વોક્ત કથનની પુષ્ટિ કરે છે, અર્થાત્ ન્યારે આ વાત પ્રમાણભૂત બની ચૂકી છે કે યૌવન અવસ્થામાં પુત્ર મિત્ર કલત્રાદિકોં આસક્ત બનેલ પ્રાણી સાવધ વ્યાપાર કરવામાં લવલીન થાય છે. પરંતુ તે પ્રાણી ન્યારે વૃદ્ધાવસ્થા આવે છે ત્યારે આ બધા કાર્યો કરવામાં પોતાને સર્વથા અસ-



ટીકા—‘ઇત્યેવમ્’ ઇતિશબ્દઃ પૂર્વપ્રદર્શિતવસ્તુસૂચકસ્તેન યૌવને પુત્રકલત્રાસક્તઃ સાવધાનુષ્ઠાનરતઃ સ એવ વૃદ્ધાવસ્થાયાં સકલકાર્યાક્ષમો ભવતીત્યર્થઃ । एवं=યથો-પદર્શિતેન પ્રકારેણ ‘સમુત્થિતઃ અહોવિહારાયે’તિ ।

અહો ઇત્યાશ્ચર્યજનકો વિહારો=વિહરણં યસ્મિન્ સઃ=અહોવિહારઃ સંયમાનુપાલનં, તસ્મૈ=તદર્થં સમુત્થિતઃ=સમ્યગુચ્યુક્તઃ સન્ મુહૂર્તમપિ ન પ્રમાદયેદિત્યનેન સમ્બન્ધઃ ।

તો વહ્ હસ પ્રકાર કી પરિસ્થિતિ કો દૂર કરને કે લિયે યહ્ સર્વોત્તમ પ્રયત્ન કરે કિ વહ્ સંયમ મેં અપને કો લગા દે, કારણ કિ સંયમ કા અનુષ્ઠાન કરના હી હસ રોગકા હિલાજ હૈ, હસકે પાલન-સેવન કિયે વિના યહ્ ભવર કા રોગ દૂર નહીં હો સકતા-સંયમારાધન મનુષ્ય-ગતિ કે સિવાય અન્ય ઓર કિસી ખી ગતિ મેં હો નહીં સકતા-હસલિયે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ કિ હસ સંયમરૂપી ઓષધિ કા પાન ખી વહી કર સકતા હૈ જો ધીર હો-પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ કે આને પર ખી જો અપને કર્તવ્યપથ સે ચ્યુત નહીં હોતા હો, ઉસકા નામ સિદ્ધાન્ત કી પરિ-ભાષા મેં ધીર હૈ । હસી વાત કી પુષ્ટિ-“અહોવિહારાય” હસ પદસે તથા “ધીરે” હસ પદ સે સૂત્રકારને કી હૈ । અહોવિહાર શબ્દ કા અર્થ સંયમ હૈ, કારણ કિ હસમેં વિચરણ કરનેવાલા પ્રાણી દેહ મેં મમત્વબુદ્ધિ રાખનેવાલોં કે લિયે આશ્ચર્ય પૈદા કરનેવાલા હોતા હૈ, ઉસ કી અનેક પ્રકાર કી તપશ્ચર્યાં એવં કાયકલેશાદિક બાહ્ય તપકો દેખ કર સંસારી બહિરાત્મા જીવ આશ્ચર્યચકિત હો જાતે હૈ, વે વિચારતે હૈ-ધન્ય હૈ હસ

મર્થ માને છે. ન્યારે આવી હાલત છે તો તે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિને દૂર કરવા માટે સર્વોત્તમ પ્રયત્ન કરે કે સંયમમાં પોતાને લગાવી દે, કારણ કે સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવું તે જ આ રોગનો ઉપાય છે. તેનું પાલન-સેવન કર્યા વગર આ ભવોભવનો રોગ મટતો નથી. સંયમારાધન, મનુષ્યગતિ સિવાય અન્ય કોઈ ગતિમાં થઈ શકતું નથી. તેથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે કે આ સંયમરૂપી ઔષધિનું પાન તે કરી શકે છે જે ધીર છે અને પરીષદ્ ઉપસર્ગ આવવા છતાં પણ જે પોતાના કર્તવ્યથી દૂર થતાં નથી. તેનું નામ સિદ્ધાંતની પરિભાષામાં ધીર છે. આ વાતની પુષ્ટિ-“અહોવિહારાય” આ પદથી તથા “ધીરે” આ પદથી સૂત્રકારે કરેલ છે. અહોવિહાર શબ્દનો અર્થ સંયમ છે, કારણ કે તેમાં વિચરણ કરવાવાળાં પ્રાણી દેહમાં મમત્વબુદ્ધિ રાખવાવાળાઓને માટે આશ્ચર્ય પૈદા કરવા-વાળા હોય છે. તેની અનેક પ્રકારની તપશ્ચર્યા અને કાયકલેશાદિક બાહ્ય તપને દેખીને સંસારી બહિરાત્મા જીવ આશ્ચર્યચકિત થાય છે. તે વિચારે છે-ધન્ય છે

સંયમી જન કો, હસ પ્રકાર કી તપશ્ચર્યા કો-જિસસેં શરીર પર મી મમતા નહીં રહતી હૈ, અતઃ હસ પ્રકાર કા સંયમારાધન “પુનરપિ જનનં પુનરપિ મરણં પુનરપિ જનનીજઠરે શયનં” હસ મહારોગ કા અચૂક મહૌષધ હૈ। ઉસકી પ્રાપ્તિ કે લિયે હે પ્રાણી! તૂં એક મુહૂર્ત કી મી દેરી મત કર, મત સોચ હસ બાતકો કિ-“અમી તો જ્વાને પીને કે દિન હૈ-એશ-આરામ ભોગને કા યહ સમય હૈ, બાદ જબ વૃદ્ધાવસ્થા આવેગી। તબ સંયમારાધન કરલૂંગા” કારણ કિ કૌન કહ સકતા હૈ કિ વૃદ્ધાવસ્થા આવેગી। વૃદ્ધાવસ્થા આને કે પહિલે હી યદિ તૂં હસ પર્યાય સે પર્યાયાન્તરિત હો ગયા તો ફિર તેરી યહ કલ્પના કોરી હી રહ જાવેગી। તથા વૃદ્ધાવસ્થા મેં જબ કિ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ, શરીર મી અશક્ત બન જાતા હૈ, કરને કી ભાવના હોને પર મી જિસમેં કુછ મી કરતે ધરતે નહીં બનતા તો હસ સંયમ કા આરાધન હો મી કૈસે સકતા હૈ। યદિ પહિલે સે સંયમારાધન કી શક્તિ આત્મામેં આઈ હુઈ હો તો વૃદ્ધાવસ્થા મેં સંયમારાધન પૂર્વસંસ્કાર કે વશ સે હો મી જાય, પરન્તુ હસ પ્રકાર કી યોગ્યતા તો તૂને અમીતક પ્રાપ્ત હી નહીં કી, યહ યોગ્યતા જબ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય બલવાન્ થી, શરીર મી સશક્ત થા, દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઔર

તે સંયમીજનને, આ પ્રકારની તપશ્ચર્યાને, જેથી શરીરમાં પણ મમતા રહેતી નથી. માટે આ પ્રકારનું સંયમારાધન “પુનરપિ જનનં પુનરપિ મરણં પુનરપિ જનની-જઠરે શયનં” આ મહારોગનું જરૂર મહા ઔષધ છે, તેની પ્રાપ્તિ માટે હે પ્રાણી, તું એક ક્ષણ પણ ઢીલ ન કર. એ વાતનો વિચાર પણ ન કર કે-“હમણાં તો ખાવા પીવાના દિવસો છે-એશઆરામ ભોગવવાનો સમય છે, જ્યારે વળી વૃદ્ધાવસ્થા આવશે ત્યારે સંયમારાધન કરી લઈશ.” કારણ કે કોણ કહી શકે છે કે વૃદ્ધાવસ્થા આવશે. વૃદ્ધાવસ્થા આવ્યા પહેલાં જ કહાય તું આ પર્યાયથી પર્યાયાન્તરિત થઈ ગયો તો પછી તારી આ કલ્પના નકામી જ રહી જવાની. અને વૃદ્ધાવસ્થામાં જ્યારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ થાય છે, શરીર પણ અસક્ત બને છે, કરવાની ભાવના હોવા છતાં પણ કંઈ પણ કરી શકતો નથી તો પછી આ સંયમનું આરાધન કેવી રીતે બની શકે. કહાય પહેલાથી સંયમારાધનની શક્તિ આત્મામાં આવી ગઈ હોત તો વૃદ્ધાવસ્થામાં સંયમારાધન પૂર્વ સંસ્કારને વશથી થઈ પણ બાય પરંતુ આ પ્રકારની યોગ્યતા તો તને હબ્બુ સુધી પ્રાપ્ત જ નથી થઈ. આ યોગ્યતા જ્યારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય બળવાન હતી, શરીર પણ સશક્ત હતું, દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાળ-ભાવ રૂપ સામગ્રી અનુકૂળ હતી, તે અવસ્થામાં આવી શક્ત,

ભાવ રૂપ સામગ્રી અનુકૂલ થી उस अवस्था में आती, परन्तु वह अवस्था तो तूने मित्र पुत्र कलत्रादिकों में आसक्ति के वशवर्त्ती होकर गमा दी और सावधानुष्ठानों के करने से अपनी आत्मपरिणति को कलुषित कर दिया, तब भला, कहो तो सही, सहसा यह कार्य तुझ से अब कैसे बन सकेगा ? । इस पर सूत्रकार कहते हैं कि—हे भव्य प्राणी ! तू “मुहुत्तमवि नो पमायए” एक मुहूर्त भी प्रमाद मत कर, और मन वचन एवं काय से, तथा कृत कारित और अनुमोदना से, अर्थात् नव कोटि से इस संयम का आराधन कर, कनक कामिनी आदि पदार्थ जिन्हें तू भ्रमके वश से अभी तक अपने मानता आया है, और जिनके पाने में तथा पालन पोषण करने में तूने अपने हित और अहित का भी विवेक लुप्त कर दिया है, भला ! उनके स्वरूप का विचार कर और देख कि इनके संयोग से तेरी आत्मा में कहां तक शान्ति जागृत होती है ? यदि ये वास्तविक शान्ति प्रदान करने में असमर्थ हैं तो तू इनका नवकोटि से परित्याग कर दे, इस परित्याग से तेरी आत्मा में वह अपूर्व संस्कार जागृत होगा जो तेरी इन दीनदशा का अन्त करनेवाला हो जायगा, इन पदार्थोंका भोग अथवा संग्रह खाज को खुजलाने के समान है—जिस प्रकार खाजको खुजलानेवाला व्यक्ति

‘પરંતુ તે અવસ્થા તો તે’ પુત્ર મિત્ર કલત્રાદિકોમાં આસક્તિને વશવર્ત્તી બની ગુમાવી અને સાવધાનુષ્ઠાનો કરવાથી પોતાની આત્મપરિણતિને કલુષિત કરી, ત્યારે ભલા કહે તો ખરા; સહસા આ કાર્ય તારાથી હવે કેવી રીતે બની શકશે?, આ ઉપર સૂત્રકાર કહે છે કે:—હે ભવ્ય પ્રાણી ! તું “મુહુત્તમવિ નો પમાયપ” એક ક્ષણનો પણ પ્રમાદ ન કર અને મન વચન અને કાયાથી તથા કૃત, કારિત અને અનુમોદનાથી અર્થાત્ નવ કોટિથી આ સંયમનું આરાધન કર, કનક કામિની આદિ પદાર્થ જેને તું ભ્રમવશ હજી સુધી પોતાના માનતો આવ્યો છે અને જેને મેળવવામાં અને પાલન પોષણ કરવામાં તે પોતાના હિત અહિતનો પણ વિવેક લુપ્ત કરી નાખેલ છે. ભલા ! તેના સ્વરૂપનો વિચાર કર અને દેખ કે તેના સંયોગથી તારા આત્મામાં કયાં સુધી શાંતિ ભગ્નત થાય છે. કહાય તે વાસ્તવિક શાંતિ પ્રદાન કરવામાં અસમર્થ છે તો તું તેના નવકોટિથી પરિત્યાગ કરી દે. આ પરિત્યાગથી તારા આત્મામાં અપૂર્વ સંસ્કાર ભગ્નત થશે તો આ તારી દીન-દશાનો અંત કરી દેશે, આ પદાર્થોનો ભોગ અથવા સંગ્રહ ખુજલીને ખણવા બરાબર છે. જે પ્રકારે ખુજલીને ખણવાવાળો વ્યક્તિ, તે વખતે ખણવાથી આનંદ આવે તેમ માને છે. અને કહ્યું પણ છે:—



खुजलाते समय आनंद में गोते लगाने लगता है और कहा भी है—

“जो नहीं मजा देखा हलवा पुरी खाने में, सो मजा देखा एक खाज के खजुवाने में”

ज्यों ही उस खुजलाने रूप कार्य को बंद कर देता है तो उसको जो जलनरूप वेदना होती है वह वही जानता है, इसी प्रकार इन विषयों का सेवन भी है, ऐसा विचार कर मन, वचन आदि रूप नव कोटि से इनका त्याग कर। इसी बातकी पुष्टि “अहो विहाराण” इस पद में लगा हुआ “अहो” यह पद करता है यह तो निश्चित है कि आत्मा में पूर्व संस्कार जितना कार्य करते हैं उतना वर्तमान संस्कार नहीं। बच्चा जब माता के पेट से उत्पन्न होता है तो उसकी स्तन्यपानप्रवृत्ति में पूर्व संस्कार ही सर्व प्रथम काम करता है। हम यह भी प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं कि कुंभकार अपने घटरूप कार्य को निष्पन्न करने के लिये चाक में जबर्दस्त भ्रमी पैदा करता है, यह जबर्दस्त भ्रमी सिर्फ वर्तमान में ही उसने उसमें उत्पन्न नहीं की है, किन्तु एक के बाद एक जो वह उसमें भ्रमी किया करता है—बारंबार उसे दंड से घुमाता है उससे ही यह उत्पन्न हुई है, इसी भ्रमीरूप संस्कार के द्वारा उसने घटरूप अपने कार्य को निष्पन्न किया है, इसी प्रकार आत्मा भी पूर्व पूर्व पर-पदार्थों के भोगने आदि रूप वासना-संस्कार से सांसारिक परपदार्थों को भोगने

“जो नहीं मजा देखा हलवा पुरी खानेमें, सो मजा देखा एक खाजके खजुवानेमें”

જ્યારે તે ખણુવારૂં કાર્યને બંધ કરવામાં આવે અને પછી તેની જે જલનરૂપ વેદના થાય છે તે તેજ જાણે છે. તે પ્રકારે આ વિષયોનું સેવન પણ છે. તેવો વિચાર કરી મન વચન આદિ રૂપ નવ કોટિથી તેનો ત્યાગ કરીદે. આ વાતની પુષ્ટિ “અહો વિહારાણ” આ પદમાં લાગેલાં “અહો” એ પદ કરે છે. એ તો નિશ્ચિત છે કે આત્મામાં પૂર્વસંસ્કાર જેટલું કાર્ય કરે છે તેટલું વર્તમાન સંસ્કાર નહિ. અચ્યુ જ્યારે માતાના પેટથી ઉત્પન્ન થાય છે તો તેની સ્તન્યપાન-પ્રવૃત્તિમાં પૂર્વસંસ્કાર જ સર્વ પ્રથમ કામ કરે છે. અમે એ પણ પ્રત્યક્ષ અનુભવ કરીએ છીએ કે કુંભાર પોતાના ઘટરૂપ કાર્યને નિષ્પન્ન કરવા માટે ચાકમાં જબર્દસ્ત ભ્રમી પેદા કરે છે, આ જબર્દસ્ત ભ્રમી ફક્ત વર્તમાનમાં જ તેને તેમાં ઉત્પન્ન કરેલ નથી પણ એકની પછી એક જે તે તેમાં ભ્રમી કર્યા કરે છે—વારંવાર લાકડીથી ઘુમાવ્યા કરે છે તેથી જ તે ઉત્પન્ન થયેલ છે, આ ભ્રમીરૂપ સંસ્કાર દ્વારા તેણે ઘટરૂપ પોતાના કાર્યને નિષ્પન્ન કર્યું છે, તે પ્રકારે આત્મા પણ પૂર્વ પૂર્વ પરપદાર્થોના ભોગવવા આદિરૂપ વાસના-સંસ્કારથી સાંસારિક



અથવા અપનાને કી ઓર શુકતા હૈ। इन संस्कारों को सर्वथा प्रक्षीण करने की शक्ति यदि कहीं है तो वह सिर्फ एक संयम में ही है, इस संयम का आराधन नव कोटि से ही होना चाहिये, ऊपर की दिखावटीसे नहीं। “अहो विहाराए ” इस पदमें जो “ अहो ” यह शब्द है वह आश्चर्य वाचक है, पूर्वोक्त प्रकार से एक तो इस पदकी सार्थकता प्रकट की है, दूसरे इस प्रकार से भी इस पदकी सार्थकता टीकाकार प्रकट करते हुए कहते हैं कि-यह भी एक आश्चर्य की बात है कि जब यह आत्मा सांसारिक वासनाओं से वासित था। उस समय किसी को अपना मित्र, किसी को अपना शत्रु मानकर रातदिन राग और द्वेष के फंदे में आपाद-शिख-एडी से चोटी तक जकड़ा हुआ था, इष्टानिष्ट पदार्थों की कल्पना से रात-दिन आर्त रौद्र ध्यान करने में मस्त रहता था, परन्तु ज्यों ही संयम की बागडोर इसके हाथ में आती है यह उस प्रकार की कल्पना से सर्वथा रहित हो जाता है, कारण कि पदार्थों में इष्ट की कल्पना इन्द्रियों के अनुकूल पदार्थों में ही होती है, प्रतिकूल पदार्थों में अनिष्ट की कल्पना। पर जब संयम की बागडोर इसे प्राप्त हो जाती है तब क्या तो अनु-कूल क्या प्रतिकूल सब एक हो जाते हैं-एक जैसे ही मालूम पड़ते हैं।

પરપદાર્થોને લોગવવા તથા અપનાવવાની તરફ જ બુદ્ધિ છે. આ સંસ્કારોને સર્વથા પ્રક્ષીણ કરવાની શક્તિ કદાચ કોઈ જગ્યાએ હોય તો તે ફક્ત સંયમમાં જ છે. આ સંયમનું આરાધન નવકોટિથી હોવું જોઈએ, ઉપર ઉપરના દેખાવ પુરતું ન હોવું જોઈએ.

“ અહો વિહારાપ ” આ પદમાં જે “ અહો ” એ શબ્દ છે તે આશ્ચર્ય-વાચક છે, પૂર્વોક્ત પ્રકારથી એક તો આ પદની સાર્થકતા પ્રગટ કરી છે. બીજું આ પ્રકારથી પણ આ પદની સાર્થકતા ટીકાકાર પ્રગટ કરીને કહે છે કે-એ પણ એક આશ્ચર્યની વાત છે કે જ્યારે આ આત્મા સાંસારિક વાસનાઓથી વાસિત હતો તે વખતે કોઈને પોતાને મિત્ર, કોઈને પોતાનો શત્રુ માનીને રાત દિવસ રાગ અને દ્વેષથી પુરેપુરે પગથી માથા સુધી ફસાએલો હતો, અર્થાત્ જકડાએલો હતો. ઇષ્ટ અનિષ્ટ પદાર્થોની કલ્પનાથી રાતદિવસ આર્ત રૌદ્ર ધ્યાન કરવામાં મસ્ત રહેતો હતો. પરંતુ જ્યાં સંયમની લગામ તેના હાથમાં આવે છે ત્યાં તે એવા પ્રકારની કલ્પનાથી સર્વથા રહિત થાય છે. કારણ કે પદાર્થોમાં ઇષ્ટની કલ્પના ઇન્દ્રિયોના અનુકૂળ પદાર્થોમાં જ થાય છે. પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં અનિષ્ટની કલ્પના. પરંતુ જ્યારે સંયમની દોરી તેને પ્રાપ્ત થાય છે ત્યારે અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ બધું એક

આશ્ચર્યકારિત્વશ્ચાત્ર ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ કનકકામિન્યાદિસકલવસ્તુપરિત્યાગિત્વેન ।  
યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મિત્રભાવેન । અથવાઽન્તર્મુદ્ધૂર્તાન્તર્ગતાઽષ્ટસમયમાત્રસંસ્પૃષ્ટવેઽ-  
પ્યનન્તર્કર્મનિર્જરકત્વેન બોધ્યમ્ ।

લગામ હી તો ઘોડે કો બેઠને વાલે કે અધીનસ્થ કરતી હૈ, ઇન્દ્રિયારૂપી ઘોડે મી હસી સંયમ કી વાગડોર-લગામ સે આત્મા કે અધીન બન જાતે હૈ, તવ “ સમો નિંદાપસંસાસુ તદ્વા માણાવમાણઓ ” અર્થાત્ વહ નિન્દા ઓર પ્રશંસાકો તથા માન ઓર અપમાનકો સમાન સમજતા હૈ । યહ કહને કી હી વાત નહીં હૈ-અનુભવ સિદ્ધ વિષય હૈ । કયા સંયમિયોં કે સમક્ષ પરસ્પર વિરોધી જીવ મૈત્રીભાવ ધારણ કર બેઠે હુઅ નહીં સુને હૈ ?, સંયમ વહ અંજન હૈ કિ જિસકે લગતે હી આંતર ચક્ષુઓંકી યહ કલ્પના કિ “ યહ મિત્ર હૈ, યહ શત્રુ હૈ ” બિલકુલ નષ્ટ હો જાતી હૈ । યહ સંયમી જીવ યદ્યપિ બાહ્ય જગત મેં વિચરણ કરતા હૈ તો મી બાહ્ય જગત મેં વહ જલ મેં કમલ કી તરહ અલિસ હી રહતા હૈ, અતઃ શત્રુ, મિત્ર, ઇષ્ટ, અનિષ્ટ આદિ સમસ્ત કલ્પનાઓં કો મમત્વજન્ય બુદ્ધિ કા વિકાર માનકર વહ ઉનસે ઇકદમ પરે હો જાતા હૈ । હસી અભિપ્રાય કો લેકર ટીકાકાર ને “ યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મૈત્રીભાવેન ” હસ પદ સે હસકા ખુલાસા કિયા હૈ । સમતાભાવ સંયમકા સર્વપ્રથમ ગુણ હૈ । જિસ

જ થઈ બીય છે-એક જ જેવું માલૂમ પડે છે. લગામ જ તો ઘોડાને બેસનારના અધીનમાં કરે છે. ઇન્દ્રિયો રૂપી ઘોડા પણ આ સંયમરૂપ લગામથી આત્માને આધીન થઈ રહે છે. ત્યારે “ સમો નિંદાપસંસાસુ તદ્વા માણાવમાણઓ ” અર્થાત્ તે નિંદા અને પ્રશંસાને તથા માન અને અપમાનને સમાન સમજે છે એ કહેવાની જરૂર રહેતી નથી, કારણ કે આ અનુભવસિદ્ધ વિષય છે. શું સંયમીઓના સમક્ષ પરસ્પર વિરોધી જીવ મૈત્રીભાવ ધારણ કરીને બેઠેલાં નથી સાંભળ્યાં ?, સંયમ તે અંજન છે કે જેનાથી આંતરચક્ષુઓની એ કલ્પના કે “ આ મિત્ર છે, આ શત્રુ છે ” બિલકુલ નષ્ટ થઈ બીય છે. તે સંયમી જીવ હજી સુધી બાહ્ય જગતમાં વિચરણ કરે છે તો પણ તે બાહ્ય જગતમાં તે જલમાં કમલની માફક અલિસ જ રહે છે, માટે શત્રુ, મિત્ર, ઇષ્ટ, અનિષ્ટ, એ બધી કલ્પનાઓ મમત્વજન્ય બુદ્ધિનો વિકાર માનીને તે તેનાથી એકદમ દૂર થઈ બીય છે. આ અભિપ્રાયને લઈને ટીકાકારે “ યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મૈત્રીભાવેન ” એ પદથી તેનો ખુલાસો કરેલ છે. સમતાભાવ સંયમનો સર્વપ્રથમ ગુણ છે, જેમ સૂર્યના ઉદયથી અંધકારનો નાશ

પ્રકાર સૂર્ય કે ઉદિત હોને પર અંધકાર કા અભાવ હો જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર સંયમરૂપી સૂર્ય કે ઉદિત હોતે હી આત્મા સે વિષમતા કી કલ્પના-રૂપ અંધકાર વિલીન હો જાતા હૈ ।

ઇસ પ્રકાર સે મી ‘અહો વિહારાણ’ ઇસ સૂત્રમે ‘અહો’ પદ કી સાર્થકતા ટીકાકાર પ્રકટ કરતે હૈ—“અન્તર્મુહૂર્તાન્તર્ગતાષ્ટસમયમાત્ર-સંસ્પૃષ્ટત્વેઽપિ અનન્તકર્મનિર્જરકત્વેન” ૪૮ મિનટ કે સમયકો એક મુહૂર્ત કહતે હૈ, ઇસ મુહૂર્ત કે મીતર કે સમયકો અન્તર્મુહૂર્ત કહતે હૈ । યહ અસંખ્યાત સમયોં કા એક કાલ હૈ । સમય, વ્યવહારકાલ કા સબ સે સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ હિસ્સા હૈ । કાલ દો પ્રકાર કા હૈ ૧-નિશ્ચયકાલ, ૨-વ્યવહારકાલ । સમય, ઘડી, ઘંટા, પલ, મુહૂર્ત, વર્ષ આદિ સબ વ્યવહાર કાલ હૈ । વર્તના જિસકા લક્ષણ હૈ વહ નિશ્ચયકાલ હૈ, ક્યોં કિ શાસ્ત્રમે ‘વટ્ટનાલક્ષણો કાલો’ કહા હૈ ।

સદ્ભાવોં સે યદિ અષ્ટસમયમાત્ર મી સંયમ કા આરાધન કર લિયા જાવે તો વહ અનન્ત કર્મોં કી નિર્જરા કા કારણ માના ગયા હૈ । હમ દેખતે હૈ—અગ્નિ કી થોડી સી મી ચિનગારી જવ રૂઝ કે પુંજપર પડ જાતી હૈ તો વહ ઉસે ભસ્મ કર દેતી હૈ । ઇસી પ્રકાર અષ્ટસમયમાત્ર

થાય છે તે પ્રકારે સંયમરૂપી સૂર્યના ઉદયથી આત્માથી વિષમતાની કલ્પનારૂપ અંધકારનો નાશ થાય છે.

આ પ્રકારથી પણ “અહો વિહારાણ” આ સૂત્રમાં ‘અહો’ પદની સાર્થ-કતા ટીકાકાર પ્રગટ કરે છે—“અન્તર્મુહૂર્તાન્તર્ગતાષ્ટસમયમાત્રસંસ્પૃષ્ટત્વેઽપિ અનન્તકર્મનિર્જરકત્વેન” ૪૮ મીનીટના સમયને એક મુહૂર્ત કહે છે. આ મુહૂર્તના ભીતરના સમયને અન્તર્મુહૂર્ત કહે છે. તે અસંખ્યાત સમયોનો એક કાળ છે, સમય, વ્યવહાર કાળનો બધાથી સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ હિસ્સો છે. કાલ બે પ્રકારનો છે. ૧ નિશ્ચયકાલ, ૨ વ્યવહારકાલ, સમય, ઘડી, ઘંટા, પલ, મુહૂર્ત, વર્ષ આદિ બધો વ્યવહારકાલ છે, વર્તવું બેનું લક્ષણ છે તે નિશ્ચયકાળ છે, કારણ કે શાસ્ત્રમાં ‘વટ્ટનાલક્ષણો કાલો’ કહેલ છે.

સદ્ભાવોથી કદાચ અષ્ટ સમય માત્ર પણ સંયમનું આરાધન કરી લેવામાં આવે તો તે અનંત કર્મોની નિર્જરાનું કારણ માનેલ છે. અમે દેખીએ છીએ અગ્નિની થોડી પણ ચિનગારી જ્યારે રૂના ઢગલા ઉપર પડી જાય છે તે બધુ રૂ બાળી નાખે છે, તે પ્રકારે અષ્ટ સમય માત્ર પણ સંયમનું સેવન જીવોના અનન્ત કર્મોના નિર્જરાનું કારણ બને છે તેમાં કઈ અચરજની વાત છે ?



કિં કૃત્વા સંયમાનુપાલનતત્પરો ભવેદિત્યાહ—‘અન્તરં ચ સ્વલુ ઇમં સમ્પ્રેક્ષ્ય’  
 ઇમં=તપઃસંયમકરણરૂપમ્ અન્તરમ્=અવસરમ્, ચ=સમુચ્ચયે, સ્વલુ=નિશ્ચયેન સમ્પ્રેક્ષ્ય  
 =સમ્યગ્દૃષ્ટ્વા અનન્તકાલદુર્લભમાનુષજન્માર્યક્ષેત્રશોભનકુલોત્પત્તિબોધિલાભસર્વવિરતિ-  
 પ્રાપ્તિરૂપાવસરોડનાદૌ સંસારે જીવેન લબ્ધ ઇત્યનુભૂય “ધીરો મુહૂર્તમપિ નો પ્રમાદ-  
 યેત્” ધીરઃ=પરીપહોપસર્ગસહને દૃઢઃ સંયમી નો પ્રમાદયેત્=પ્રમાદં ન કુર્યાત્ ।

મી સંયમ કા સેવન જીવોં કે અનન્તકમોં કી નિર્જરા કા કારણ હો તો  
 હસ મેં કૌનસી અચરજ કી વાત હૈ ? ।

અજ્ઞાની જીવ કરોડો ભવોં સે મી જિતને કમોં કી નિર્જરા નહીં કર  
 સકતા હૈ ઉતને કમોં કી નિર્જરા ત્રીન ગુપ્તિ કે ધારક-સંયમી મહાત્મા  
 ઉચ્છ્વાસ માત્ર મેં કર દેતા હૈ, યહ સબ મહિમા સંયમ કી હી હૈ ઇસી  
 લિયે સંયમ ભાવ અચરજકારી હૈ । ઇસલિયે મનુષ્ય-જન્મ કો સફલ  
 બનાને કે લિયે યહ આવશ્યક કર્તવ્ય હૈ કિ સંયમ કા આરાધન કિયા  
 જાવે । યહ દૃઢ વિશ્વાસ રાખના ચાહિયે કિ-સંયમપ્રાપ્તિ કી યોગ્યતા  
 મનુષ્યજન્મ મેં હી હૈ, ઇસમેં મી યદિ અનાર્ય ક્ષેત્ર મેં જન્મ હુવા વહાં અનાર્યોં  
 કી સંગતિ મિલી તો જિસ પ્રકાર કઢવી તુંબડી કે સંગ સે દૂધ કી હાલત  
 હોતી હૈ ટીક યહી હાલત ઇસ આત્મા કી મી હો જાતી હૈ । રાતદિન  
 દુર્વિચારોં કા ઉનકી સંગતિ મેં પડને સે તાંતા લગા રહતા હૈ, ધર્મ કર્મકા  
 ઉસ અવસ્થા મેં ભાન નહીં રહતા-બેહોશી કા નશા હી સવાર રહતા હૈ,  
 મેરા શુભ કર્તવ્ય ક્યા હૈ? હેય ક્યા હૈ? ઉપાદેય ક્યા હૈ? ભક્ષ્ય ક્યા હૈ?  
 અભક્ષ્ય ક્યા હૈ? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાતોં કા વિચાર ઉસસે દૂર રહતા હૈ ।

અજ્ઞાની જીવ કરોડો ભવોથી પણ જેટલા કર્મોની નિર્જરા નથી કરી શકતો  
 તેટલા કર્મોની નિર્જરા ત્રણ ગુપ્તિના ધારક સંયમી મહાત્મા ઉચ્છ્વાસમાત્રમાં  
 કરી લે છે, આ બધો મહિમા સંયમનો જ છે. માટે સંયમભાવ અચરજકારી  
 છે, માટે મનુષ્યજન્મને સફળ બનાવવા માટે એ આવશ્યક કર્તવ્ય છે કે સંય-  
 મનું આરાધન કરવામાં આવે. એ દૃઢ વિશ્વાસ રાખવો જોઈએ કે-સંયમ-  
 પ્રાપ્તિની યોગ્યતા મનુષ્યજન્મમાં જ છે. તેમાં પણ કદાચ અનાર્ય ક્ષેત્રમાં જન્મ  
 થયો ત્યાં અનાર્યોની સંગતિ મળી તો જે પ્રકારે કઢવી તુંબડીના સંગથી દૂધની  
 હાલત થાય છે ટીક તે જ હાલત આ આત્માની પણ થાય છે, રાતદિવસ દુર્વિ-  
 ચારોનું તેની સંગતિમાં પડવાથી તાંતો લાગ્યો રહે છે, ધર્મકર્મનું આ અવ-  
 સ્થામાં ભાન નહિ રહેતું હોવાથી બેહોશીનો નશો રહ્યા કરે છે. માટે શુભ કર્તવ્ય  
 શું છે? હેય શું છે? ઉપાદેય શું છે? ભક્ષ્ય શું છે? અભક્ષ્ય શું છે? ઇત્યાદિ સમસ્ત

જબ હસ પ્રકાર કી પરિસ્થિતિ અનાયોં કૈ સંગ સે ઉપસ્થિત હોતી હૈ તથ વહાં પર સંયમ જૈસી શુદ્ધ પ્રવૃત્તિ કી પ્રાપ્તિ કૈસે હો સકતી હૈ ? કિન્તુ નહીં । યદિ આર્યક્ષેત્ર મૈ જન્મ હુવા તો મી દુષ્કુલ મૈ જન્મ મિલા તો વહાં ઉસકી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી; કારણ કિ વહાં પર હતની યોગ્યતા હી નહીં કિ જિસસે સંયમભાવકો ધારણ કરને કી ભાવના જાગૃત હો, હિંસા, શૂઠ, ચોરી, કુશીલ ઓર પરિગ્રહ જૈસે પાંચ આસ્રવોં કા હી વિશેષતર વહાં સંગ્રહ હોતા રહતા હૈ જિસસે ઉસ મનુષ્યજન્મ કા પાના ન પાને કૈ હી તુલ્ય હો જાતા હૈ । મનુષ્ય પર્યાય મી મિલી, આર્યક્ષેત્ર મિલા ઓર ઉત્તમ કુલમૈ જન્મ મિલા, પરન્તુ જો મૂલ મૈ હી કમી હુઈ તો ઉસ જન્મ સે મી ક્યા લાભ હો સકતા હૈ ? અતઃ વહ જન્મ તમી સફલ હો સકતા હૈ જો બોધિ કી પ્રાપ્તિ હો । યદિ બોધિ કી પ્રાપ્તિ હી ન હુઈ તો સર્વવિરતિ કહાં સે હોગી । સર્વવિરતિ-સાધુકા ચારિત્ર હી શ્રેય કી પ્રાપ્તિકા પ્રધાન કારણ કહા ગયા હૈ હસલિયે હન તમામ વાતોં કી પ્રાપ્તિ કી ઉત્તરોત્તર દુર્લભતા જાનકર ધીર પુરુષ કો ચાહિયે કિ વહ અપને જન્મ કો સફલ કરને કૈ લિયે સંયમારાધન કૈ પ્રતિ મુહૂર્ત માત્ર મી પ્રમાદ નહીં કરે । હસી વાત કા ટીકાકારને-“ અનન્તકાલદુર્લભમાનુ-

વાતોનો વિચાર તેનાથી દૂર રહે છે. જ્યારે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિ રહે છે ત્યારે આ ઠેકાણે સંયમ જેવી શુદ્ધ પ્રવૃત્તિની પ્રાપ્તિ કેવી રીતે થઈ શકે ? બટકે નહિ જ. કદાચ આર્ય ક્ષેત્રમાં જન્મ થયો તો પણ દુષ્કુલમાં જન્મ થયો તો ત્યાં પણ તેની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી, કારણ કે તે જગ્યાએ એટલી યોગ્યતા જ નથી કે જેનાથી સંયમભાવને ધારણ કરવાની ભાવના બાહ્ય થાય. હિંસા, શૂઠ, ચોરી, કુશીલ અને પરિગ્રહ જેવા પાંચ આસ્રવોનું જ વિશેષતર ત્યાં સંગ્રહ થયા કરે છે તેથી તે મનુષ્યજન્મ મળ્યો ના મળ્યા બરાબર જ થઈ બાક છે. મનુષ્યપર્યાય પણ મળી આર્યક્ષેત્ર મળ્યું. ઉત્તમ કુળમાં જન્મ પણ મળ્યું. પરંતુ મૂળમાં જ કમીના બની તો તે જન્મથી જ કયો લાભ મળી શકે ? માટે તે જન્મ ત્યારે સફળ બની શકે છે જ્યારે તેનાથી બોધિની પ્રાપ્તિ થાય. કદાચ બોધિની પ્રાપ્તિ જ ન થઈ તો સર્વવિરતિ કયાંથી થશે. સર્વવિરતિ-સાધુનું ચારિત્ર જ શ્રેયની પ્રાપ્તિનું પ્રધાન કારણ કહેવામાં આવ્યું છે, માટે આ તમામ વાતોની પ્રાપ્તિની ઉત્તરોત્તર દુર્લભતા બાણીને ધીર પુરુષને બેઠાંથી કે પોતાના જન્મને સફળ કરવા સંયમારાધન પ્રતિ મુહૂર્ત માત્ર પણ પ્રમાદ ન કરે. આ વાતનો ટીકાકારે-



ષજન્મા-SSર્યક્ષેત્ર-શોભનકુલોત્પત્તિ-બોધિલાભ-સર્વવિરતિપ્રાપ્તિરૂપા-  
વસરોડનાદૌ સંસારે જીવેન લબ્ધઃ, इत्यनुभूय धीरो मुहूर्तमपि नो  
प्रमादयेत्” इन पङ्क्तियोंसे खुलाशा किया है। अर्थात् दुर्लभ मनुष्य-  
जन्म, आर्यक्षेत्र, उच्चकुल में जन्म, बोधिका लाभ, सर्वविरतिरूप चारित्र  
की प्राप्तिरूप अवसर जीवने अनन्तकालसे प्राप्त किया है, ऐसा विचार  
कर धीर वीर संयमीजन मुहूर्त मात्र भी संयमाराधन करने में प्रमाद-  
शील न बनें। मनुष्यजन्म का पाना बहुत ही दुर्लभ है। इसकी दुर्लभता  
शास्त्रकारोंने दश १० दृष्टान्तों से शास्त्रमें प्रकट की है। प्रथम तो मनु-  
ष्यजन्म की प्राप्ति होना दुर्लभ है, उसमें भी आर्यक्षेत्र में जन्म मिलना  
यह और भी महादुर्लभ है, आर्यक्षेत्र में भी उच्चकुल में जन्म पाना यह  
और भी दुर्लभ है, इस में भी बोधिका लाभ होना और कठिनतर है,  
इसमें भी सर्वविरतिरूप चारित्र का आराधन करना और भी दुर्लभ-  
तम है, अतः इस अनादि संसार में यदि इस पूर्ण साधनसामग्रीकी  
प्राप्ति तेरे हाथ आई है तो हे प्राणी ! तू संयमभाव से एक मुहूर्त भी  
प्रमादी मत बन, धीर वीर होकर इसका-कितने ही उपसर्ग आवें कितने  
ही चाहे परीषहों का ढेर तेरे मार्ग में आडा पड़ा हो तो भी आराधन

“अनन्तकालदुर्लभमानुषजन्माSSर्यक्षेत्रशोभनकુલોત્પત્તિબોધિલાભસર્વવિરતિપ્રાપ્તિ-  
રૂપાવસરોડનાદૌ સંસારે જીવેન લબ્ધઃ, इत्यनुभूय धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमादयेत्”  
આ પંક્તિઓથી ખુલાસો કરેલ છે, અર્થાત્ દુર્લભ મનુષ્યજન્મ, આર્યક્ષેત્ર,  
ઉચ્ચકુળમાં જન્મ, બોધિનો લાભ, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિરૂપ અવસર  
જીવે અનંતકાળથી પ્રાપ્ત કરેલ છે. એવો વિચાર કરી ધીર વીર સંયમી જન મુહૂર્ત  
માત્ર પણ સંયમારાધન કરવામાં પ્રમાદશીલ ન બને. મનુષ્યજન્મનું મળવું ઘણું  
જ દુર્લભ છે, તેની દુર્લભતા શાસ્ત્રકારોએ ૧૦ દૃષ્ટાન્તોથી શાસ્ત્રમાં પ્રગટ કરી  
છે. પ્રથમ તો મનુષ્યજન્મની પ્રાપ્તિ થવી દુર્લભ છે, તેમાં પણ આર્યક્ષેત્રમાં  
જન્મ મળવો એ મહાદુર્લભ છે, આર્યક્ષેત્રમાં પણ ઉચ્ચ કુળમાં જન્મ થવો એ  
પણ દુર્લભ છે, તેમાં પણ બોધિનો લાભ થવો ઘણું જ કઠિનતર છે. તેમાં પણ  
સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રનું આરાધન કરવું તે દુર્લભતમ છે. માટે આ અનાદિ સંસા-  
રમાં કદાચ આ પૂર્ણ સાધન સામગ્રીની પ્રાપ્તિ તારે હાથે આવી છે તો હે  
પ્રાણી ! તું સંયમભાવથી એક મુહૂર્ત પણ પ્રમાદી બનીશ નહિ. ધીર વીર થઈ  
તેમાં કેટલાએ ઉપસર્ગ આવે અને ગમે તેટલા પરિષદોના ઢગલા તારા માર્ગમાં  
આડા આવે તો પણ સંયમનું આરાધન કર. જેથી પ્રાપ્ત થયેલો આવો અવસર તારા



છદ્મસ્થોપયોગો મુહૂર્તમાત્રમવતિષ્ઠતે, તેનાત્ર મુહૂર્તમિતિ કથિતમ્ ; શાસ્ત્રસમ્મતં તુ સમયમાત્રમપીત્યર્થઃ “ સમયં ગોચમ મા પમાયણ ” इति वचनात् ।

પૂર્વપુણ્યોદયેન માનવજન્મ લબ્ધવાન્, તત્રાપિ સંસારાસારતાસમાલોચનેન વિરતો ભૂત્વા ક્ષણમપિ પ્રમાદી ન ભવેદિત્યત્ર હેતુમુપદર્શયતિ-“ અત્યેતિ વયો યૌવનં વા ” इति, वयः=कौमारयौवनादि अत्येति=अतिगच्छति व्यतीतं भवतीत्यर्थः, યૌવનં વા વ્યતિગચ્છતિ, વયોમધ્યેઽપિ યૌવનસ્ય સત્ત્વાત્પુનરુપાદાનં તસ્યૈવ પ્રાધાન્યં નાન્યસ્યેતિ જ્ઞાપનાય, ધર્માર્થકામાદિસાધનાનાં તદધીનત્વાત્, મેઘચ્છાયાસન્ધ્યારાગવદ્ યૌવનં સ્પર્પકાલસ્થાયીતિ મત્વા યથા વ્યર્થં તન્ન વ્યતીયાત્તથા સંયમિના ચાપ્રમાદિના કાર્યમિતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૪ ॥

કર, તાકિ પ્રાસ હુઆ યહ અવસર તેરે હાથ સે ન નિકલને પાવે । પરીષહ ઔર ઉપસર્ગ કે આને પર ખી જો સંયમ પથસે વિચલિત ન હો ઉસકા હી નામ ધીર હૈ । સચ્ચા ધીર વીર વહી હૈ-જો હસ પવિત્ર સંયમ કા આરાધન કર અપને જન્મકો સફલ બનાતા હૈ ।

યહાં પર જો ‘ એક મુહૂર્ત ખી પ્રમાદ ન કરે ’ એસા કહા હૈ વહ છદ્મસ્થ જીવોં કે ઉપયોગ કી અપેક્ષા કથન સમજના ચાહિયે, ક્યોં કિ છદ્મસ્થોં કા ઉપયોગ એક મુહૂર્ત તક હી સ્થિર રહતા હૈ-ફિર ઉપયોગાન્તર હો જાતા હૈ ।

શાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્ત તો હસ વાત કા પ્રતિપાદન કરતા હૈ કિ એક સમય ખી પ્રમાદ મત કરો-“ સમયં ગોચમ ! મા પમાયણ ”-હે ગૌતમ એક સમય ખી પ્રમાદી મત બન ।

હસલિયે સૂત્રકાર હસ વાત કા વિચાર કર સંબોધન કરતે હુણ કહતે હૈં કિ-હે પ્રાણિ ! કિસી વિશિષ્ટ પૂર્વપુણ્યોદય સે હી તુજે હસ દુર્લભતમ

હાથથી ચાલ્યો ન જાય. પરીષદ અને ઉપસર્ગ આવવા છતાં જે સંયમમાર્ગથી વિચક્ષિત ન થાય તેનું નામ જ ધીર છે. સાચો ધીર વીર તે છે જે આ પવિત્ર સંયમનું આરાધન કરી પોતાના જન્મને સફળ બનાવે છે.

આ ઠેકાણે જે ‘ એક મુહૂર્ત પણ પ્રમાદ ન કરે. ’ એવું કહ્યું છે તે છદ્મસ્થ જીવોના ઉપયોગની અપેક્ષા કથન સમજવું જોઈએ. કારણ કે છદ્મસ્થોનો ઉપયોગ એક મુહૂર્ત સુધી જ સ્થિર રહે છે પછી ઉપયોગાન્તર થઈ જાય છે. શાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્ત તો આ વાતનું પ્રતિપાદન કરે છે કે એક સમય પણ પ્રમાદ ન કરે. “ સમયં ગોચમ ! મા પમાયણ ” હે ગૌતમ ! એક સમય પણ પ્રમાદી ન બન.

આના માટે સૂત્રકાર આ વાતનો વિચાર કરી સંબોધન કરી કહે છે કે-હે પ્રાણી ! કેઈ વિશિષ્ટ પૂર્વપુણ્યોદયથી જ તને આ દુર્લભતમ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ થઈ

મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ હુઈ છે તો ઉસે સફલ બનાવે કે લિયે તૂ સંસારની અસારતાની વિચાર કર, તાકિ તેરા મન સાંસારિક પદાર્થોં મેં લુબ્ધ ન બને । સંસારની અસારતાની વિચારની તો સાંસારિક પદાર્થોં મેં તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત કરતા છે । જિન પદાર્થોં કે લિયે યહ રાત દિન એક કર ઢાલતા છે, ઉન પદાર્થોં કા જબ સ્વરૂપ વિચાર કરતા છે તો નિયમતઃ હસકે ચિત્તમેં ઉનસે વિરક્તિભાવ જાગૃત હોતા છે, દૃષ્ટિકા ભેદની તો વિરક્તિભાવ છે । જિન પદાર્થોં કે પરિણમન મેં યહ અપના પરિણમન માનતા થા, તથા પ્રાપ્તિ ન હોવે પર આકુલિત હો ઉઠતા થા, ઉન્હીં પદાર્થોં મેં અસારતા યા તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત હોવે પર ઉનસે હસકી દૃષ્ટિ બદલ જાતી છે ઓર ‘ભોગોં કે નિમિત્ત સે આત્મા મેં કર્મ કા બન્ધ હોતા છે’ એસા સમજ કર ઉનસે ઉદાસીન વૃત્તિ ધારણ કર લેતા છે, તબ જિસ પ્રકાર એક ઘાસ કે તિનખે મેં સાધારણ મનુષ્યકોં બી ન રાગ હોતા છે ઓર ન દ્વેષ હોતા છે, ઠીક હસી પ્રકારની પ્રવૃત્તિ, પરપદાર્થોં મેં દૃષ્ટિભેદ હોવે સે હસકી હો જાતી છે, તબ યહ પ્રત્યેક પદાર્થ કે પરિણમન મેં જ્ઞાતા-દ્રષ્ટા-સ્વરૂપની રહતા છે, આકુલિત યા મોહી નહીં બનતા । યહી પરિસ્થિતિ હસે સંયમભાવ મેં દૃઢ રૂપસે સ્થિર રખતી છે અતઃ યહ એક ક્ષણ બી પ્રમાદી નહીં બનતા, હસી વાત કા ખુલાશા-“અત્યેતિ વયો યૌવનં ચ” હસ વાક્ય સે સૂત્ર-

છે તો તેને સફળ બનાવવા માટે તું સંસારની અસારતાનો વિચાર કર, જેથી તારું મન સાંસારિક પદાર્થોમાં લુબ્ધ ન બને. સંસારની અસારતાનો વિચાર જ તો સાંસારિક પદાર્થોમાં તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત કરે છે, જે પદાર્થો માટે તે રાત દિવસ એક કરી નાખે છે, જ્યારે તે પદાર્થો તું સ્વરૂપ વિચાર કરે છે તો નિયમતઃ તેના ચિત્તમાં તેનાથી વિરક્તિભાવ જાગૃત થાય છે. દૃષ્ટિનો ભેદ તે જ વિરક્તિભાવ છે. જે પદાર્થોના પરિણમનમાં તે પોતાનું પરિણમન માનતો હતો તથા પ્રાપ્તિ ન થવાથી આકુલિત બનતો હતો, તે પદાર્થોમાં અસારતા અગર તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત થવાથી તેનાથી તેની દૃષ્ટિ બદલી જાય છે, અને “ભોગોના નિમિત્તથી આત્મામાં કર્મનો બંધ થાય છે” એવું સમજીને તેનાથી ઉદાસીનવૃત્તિ ધારણ કરી લે છે, ત્યારે જે પ્રકારે એક ઘાસના તણખલા માટે સાધારણ મનુષ્યને પણ રાગ થતો નથી તેમ દ્વેષ થતો નથી, ઠીક તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ, પર પદાર્થોમાં દૃષ્ટિભેદ થવાથી તેની થઈ જાય છે. ત્યારે તે પ્રત્યેક પદાર્થના પરિણમનમાં જ્ઞાતા-દ્રષ્ટા-સ્વરૂપ જ રહે છે, આકુલિત અગર મોહી બનતો નથી. આ પરિસ્થિતિ આ સંયમભાવમાં દૃઢ રૂપથી સ્થિર રાખે છે, માટે તે એક ક્ષણ પણ પ્રમાદી બનતો નથી. આ વાતનો

કારને ક્રિયા છે । પ્રમાદી નહીં બનને મેં યહ હેતુરૂપસે કથન ક્રિયા છે । કૌમાર યૌવનાદિ અવસ્થાઓં કા નામ વય છે, સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-  
 દેખો હે ભવ્ય જીવ ! પરપદાર્થોં મેં રાગી દ્રેષી યા મોહી હોતેર કૌમાર  
 યૌવનાદિ કઈ પૂર્વ ભવોં કી અવસ્થાઈ વ્યતીત હો ચુકી હૈં, પરન્તુ તૂને  
 અપના કુછ બી સુધાર નહીં ક્રિયા, અતઃ યહ વર્તમાન સમય જો તુજે મિલા  
 છે હસે સફલ કરને કી કોશિશ કર, હસ ભવકી બી યે બાલયૌવનાદિ  
 અવસ્થાઈ વ્યતીત હો જાનેવાલી હૈં-સ્થિર રહેનેવાલી નહીં હૈં, હસ લિષ્ટ અબ  
 તો હનસે અપના કુછ કલ્યાણ કરલે । માના કિ-બાલ અવસ્થા મેં અલ્પ-  
 જ્ઞાન હોને સે આત્મા કલ્યાણમાર્ગ કે પથ પર અગ્રસર ન હો સકે તો બી  
 યૌવન અવસ્થા મેં તો હો સકતા છે, પરન્તુ તૂ તો હસે બી વ્યર્થ જો બેઠતા  
 છે, ક્યોં કિ સબ અવસ્થાઓં મેં યૌવન અવસ્થા કી હી મુખ્યતા છે, હસ  
 અવસ્થા મેં હી યહ પ્રાણી સબ કુછ કરતા રહતા છે, ધર્મ, અર્થ ઓર કામાદિ  
 સાધન સબ હસી અવસ્થા મેં પ્રાપ્ત ક્રિયે જાતે હૈં, હસી જ્યાલ સે ‘વય’  
 હસ મેં હસકા સમાવેશ હોનેપર બી “યૌવન” હસ પદ કા પૃથક્  
 રૂપસે ગ્રહણ ક્રિયા છે, અતઃ વહ યૌવન અવસ્થા વ્યર્થ વ્યતીત ન હો હસ  
 પ્રકાર સે સંયમી પુરુષ કો વહ અવસ્થા અપ્રમાદદશાસમન્વિત હોકર

ખુલાસો—“ અત્યેતિ વયો યૌવનં ચ ” આ વાક્યથી સૂત્રકારે કહેલ છે. પ્રમાદી  
 નહિ બનવામાં આ હેતુરૂપથી કથન કરેલ છે કૌમાર યૌવનાદિ અવસ્થાઓનાં  
 નામ વય છે. સૂત્રકાર કહે છે કે-દેખો હે ભવ્ય જીવ ! પરપદાર્થોમાં રાગી દ્રેષી  
 અગર મોહી થતાં કૌમાર-યૌવનાદિ અનેક પૂર્વભવોની અવસ્થાઓ વ્યતીત થયેલ  
 છે. પરંતુ તે પોતાનો કાંઈ પણ સુધાર કર્યો નહિ, માટે આ વર્તમાન સમય જે  
 તેને મળેલ છે તેને સફળ કરવાની કોશિશ કર. આ ભવની પણ એ બાલ યૌવનાદિ  
 અવસ્થાઓ વ્યતીત થઈ જવાની છે-સ્થિર રહેવાવાળી નથી, માટે હવે તો તેનાથી  
 પોતાનું કલ્યાણ કરી લે. માનીલે કે-બાલ અવસ્થામાં અલ્પજ્ઞાન હોવાથી આત્મા  
 કલ્યાણ માર્ગમાં અગ્રસર ન બની શકે તો પણ યૌવન અવસ્થામાં તો બની  
 શકે છે, પરંતુ તું તો તેને પણ વ્યર્થ ખોઈ ખેસે છે, કારણ કે બધી અવસ્થા-  
 ઓમાં યૌવન અવસ્થાની જ મુખ્યતા છે. આ અવસ્થામાં જ પ્રાણી કાંઈક પણ  
 કરી શકે છે. ધર્મ, અર્થ અને કામાદિ સાધન બધું આ અવસ્થામાં પ્રાપ્ત થાય  
 છે, એ જ્યાલથી ‘વય’ તેમાં તેના સમાવેશ હોવા છતાં પણ “યૌવન” આ  
 પદનું પૃથક્ રૂપથી ગ્રહણ કરેલ છે. માટે તે યૌવન અવસ્થા વ્યર્થ વ્યતીત  
 ન થાય એ પ્રકારથી સંયમી પુરુષે તે અવસ્થા અપ્રમાદદશાસમન્વિત બની



‘સંયમાનુપાલનં શ્રેયઃ’ इति यो न जानाति पुत्रकलत्रासक्तः संसारासारसरणि-  
मनुवर्तमानोऽनाराधितकल्याणमार्गोऽसंयमजीविताभिनिवेशवान् प्राणी बहुशः सत्त्वो-  
पघातकारिणीं क्रियां करोतीति दर्शयति—“ जीविण ”—इत्यादि ॥

મૂલમ્—જીવિણ્ણે ઇહ જે પમત્તા સે હંતા છેત્તા મેત્તા લુંપિતા  
વિલુંપિતા ઉદ્ધવિતા ઉત્તાસઙ્ગતા અકલં કરિસ્સામિત્તિ મળ્ણમાણે  
॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—જીવિત્ત ઇહ યે પ્રમત્તાઃ સ હન્તા છેત્તા મેત્તા લુમ્પયિતા વિલુમ્પયિતા  
અપદ્રાવયિતા ઉત્ત્રાસકોઽકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

સફલ બના લેની યાહિયે, ક્યોંકિ યહ અવસ્થા સદા સ્થાયી નહીં હૈ, સંધ્યા-  
રાગ ઓર મેઘછાયાકી તરહ સ્વલ્પકાલ મેં હી દેખતે ૨ નષ્ટ હોજાનેવાલી  
હૈ, અતઃ ઇસકી સફલતા કરને મેં હી બુદ્ધિમાની હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જો વ્યક્તિ ઇસ વાત કો નહીં સમજતા હૈ કિ—‘સંયમ કા પાલન  
કરના હિતાવહ હૈ’ વહ પુત્ર કલત્રાદિ પદાર્થોં મેં આસક્તચિત્ત હોકર ઇસ  
અસાર સંસાર મેં હી ભ્રમણ કરતા રહતા હૈ, કલ્યાણમાર્ગ કા આરાધન  
નહીં કરને કે કારણ અસંયમ જીવન મેં હી વહ અપના સમય વ્યતીત  
કરતા હૈ, ઓર સંયમ જીવન ધારણ કરને કી વાત કહે જાને પર વહ  
અપને દુરભિનિવેશ કે વશવર્તી હો ઉસ તર્ફ જરા બી ધ્યાન નહીં દેતા,  
તથા એસે ૨ કાર્ય કરતા રહતા હૈ કિ જિનકે કરને મેં અનેક ત્રસ જીવોં  
કા ઘાત હોતા હૈ ઇસી વાતકો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

સફળ બનાવી લેવી જોઈએ, કારણ કે આ અવસ્થા સદા સ્થાયી નથી, સંધ્યાના  
રાગ અને મેઘછાયા ની માફક સ્વલ્પકાળમાં જ દેખતાં—દેખતાં નષ્ટ થવાવાળી  
છે, માટે તેની સફળતા કરવામાં જ બુદ્ધિમાની છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જે વ્યક્તિ, ‘સંયમનું’ પાલન કરવું તે હિતાવહ છે’ તેમ સમજતો નથી તે  
પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોમાં આસક્તચિત્ત થઈ આ અસાર સંસારમાં જ ભ્રમણ  
કરતો રહે છે, કલ્યાણ માર્ગનું આરાધન નહિ કરવાના કારણે અસંયમ જીવનમાં  
તે પોતાનો સમય વ્યતીત કરે છે. અને સંયમ જીવન ધારણ કરવાની વાત કહેવા  
ઉપર તે દુરભિનિવેશવશવર્તી હોઈ તેના તરફ જરા પણ ધ્યાન આપતો નથી.  
તથા એવું કાર્ય કરતો રહે છે કે જે કરવામાં અનેક ત્રસ જીવોનો ઘાત થાય  
છે તે વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

ટીકા—“ જીવિત્ત્વે ઇહ યે પ્રમત્તાઃ ” ઇતિ, ઇહાસ્મિન્ જીવિત્ત્વે પ્રત્યહં વયોઽતિ-  
ક્રમેઽપ્યસંયમજીવિત્ત્વે, પ્રમત્તાઃ=વિષયકષાયે પ્રમાદવન્તો ભવન્તીતિ સમ્બન્ધઃ, પ્રમત્તો  
હિ ષડ્જીવનિકાયોપમર્દને પ્રવૃત્તોઽનેકાનર્થકરી વિવિધાં વિરુદ્ધાં સાવધાં ક્રિયાં  
વિદધાતીત્યાહ—“ સ હન્તા ” ઇતિ સઃ=શબ્દાદિવિષયગૃહ્ણઃ પ્રમાદી હન્તા=પૃથિવ્ય-  
પ્તેજોવાયુવનસ્પતિત્રિસાનાં પ્રાણિનાં નાશકઃ ‘ છેત્તા ’ વનસ્પતિપ્રમૃતીનાં, કર્ણનાસિ-  
કાદીનાં ચ, ‘ મેત્તા ’ પૃથિવ્યાદિનિકાયાનાં, ‘ લુમ્પયિતા ’ ગ્રન્થિભેદનાદિના,  
‘ વિલુમ્પયિતા ’ ગ્રામઘાતાદિકર્મણા, ‘ અપદ્રાવયિતા ’ વિષશસ્ત્રાદિપ્રયોગેણ મારકઃ,  
‘ ઉત્ત્રાસકઃ ’ લોષ્ટ્રપ્રક્ષેપાદિનોદ્વેજકો લોકાનાં ભવતીતિ સર્વત્ર યોજ્યમ્ ।

‘ જીવિત્ત્વે ઇહ જે ’ ઇત્યાદિ । इस जीवन में जो प्रमादी बना हुआ है  
वह ‘ यह कार्य मेरे पूर्वजोंने नहीं किया है, इसे मैं करूँगा ’ ऐसा समझकर  
अस स्थावर जीवों का घातक होता है, उनका छेदन करनेवाला होता है,  
उनका भेदन करनेवाला होता है, उनका लुम्पन करनेवाला होता है,  
विलुम्पन करनेवाला होता है, अपद्रावक होता है, उत्त्रासक होता है ।

જીવન उनका ही सफल है जो इस अल्पजीवन में भी संयम द्वारा  
अपना आत्महित कर लेते हैं । धन्य है उन महात्माओं को जो विपुल  
विभूति के भोक्ता होकर भी उसे जीर्ण तृण के समान छोड़ देते हैं,  
और आत्मकल्याण के मार्ग में अग्रसर हो जाते हैं, चक्रवर्तियों या तीर्थ-  
करों के पास किस वस्तुकी कमी थी, जिनका वैभव अतुल्य था, छह  
खंडकी विभूतिके जो भोक्ता थे, देवता तथा इन्द्र जिनकी सेवा में सदा

‘ જીવિત્ત્વે ઇહ જે ’ ઇત્યાદિ. આ જીવનમાં જે પ્રમાદી બનેલ છે તે ‘ આ  
કાર્ય મારા પૂર્વજોએ કરેલ નથી એ હું કરીશ ’ એવું સમજીને અસ સ્થાવર  
જીવોનો ઘાતક થાય છે, તેનું છેદન કરવાવાળો થાય છે, તેનું ભેદન કરવાવાળો  
થાય છે, તેનું લુમ્પન કરવાવાળો થાય છે, વિલુમ્પક થાય છે, અપદ્રાવક થાય છે,  
ઉત્ત્રાસક થાય છે.

જીવન તેનું જ સફળ છે જે આ અલ્પ જીવનમાં પણ સંયમદ્વારા પોતાનું  
આત્મહિત કરી લે છે. ધન્ય છે તે મહાત્માઓને જે વિપુલ વિભૂતિના ભોક્તા  
બનીને પણ તેને જીર્ણતૃણની સમાન છોડી દે છે, અને આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં  
અગ્રેસર થાય છે. ચક્રવર્તિઓ અગર તીર્થંકરોની પાસે કઈ વસ્તુની ખોટ હતી,  
જેનો વૈભવ અતુલ્ય હતો. છ ખંડની વિભૂતિના જે ભોક્તા હતા. દેવતા અને  
ઈંદ્ર જેની સેવામાં સદા ઉપસ્થિત રહેતા હતા, એક ક્ષણ માત્ર પણ જેણે સાંસા-



अत्र मूले पूर्व 'प्रमत्ताः' इति बहुवचनप्रसङ्गे हन्तेत्यादौ सर्वत्रैकवचनं तु जात्येकत्वविवक्षया विज्ञेयम् । अनेकानर्थकरक्रियाप्रदर्शनं च संसाराभिष्वङ्गपरः कालाकालसमुत्थायी सततं परहननादिरूपां नानाविधां क्रियां करोतीत्यर्थबोधनायेति तात्पर्यम् ।

उपस्थित रहते थे । एक क्षण मात्र भी जिन्हें सांसारिक कष्ट का अनुभव नहीं होता था, वे भी इस संयम जीवन की प्राप्ति के लिये उसे तृणवत् त्याग कर आत्मकल्याण के मार्ग में अग्रगामी हुए ।

यह जानी हुई बात है कि—सब भरत चक्रवर्ती जैसे नहीं हैं । जहां आरंभ और परिग्रह का निवास है, वहां शान्तिमय जीवन नहीं, निराकुलतामय आत्मपरिणति नहीं, यत्नाचारपूर्वक प्रवृत्ति नहीं, इन्द्रियसंयम अथवा प्राणिसंयम जैसी सुन्दर वस्तुके वहां पर दर्शन नहीं । रातदिन आधि-व्याधि और उपाधि के भार से दबा हुआ यह प्राणी आत्मिक शान्तिके सच्चे निर्मल स्रोत से वञ्चित ही रहा करता है—सिर्फ झूठी कल्पना से ही अपने को सुखी और शान्ति का उपभोक्ता मानता रहता है । जहां जितना अधिक आरंभ होगा वहां उतना ही अधिक जीवों का उपमर्दन होगा । आरंभ परिग्रह के सद्भाव में यतनापूर्वक प्रवृत्ति ही नहीं हो सकती । अयतनापूर्वक प्रवृत्तिका नाम ही प्रमत्त दशा है । इस प्रमत्त दशाकी निवृत्ति, सर्वविरतिरूप संयम के अनुष्ठान विना नहीं हो सकती !, क्यों कि संयमके अनुष्ठान में त्रस और स्थावर

रिक्त कष्टनो अनुभव करेन नथी. ते पणु आ संयम जवननी प्राप्ति माटे तेने तृणवत् त्याग करी आत्मकल्याणना मार्गमां अग्रगामी थया.

એ બાણેલી હકીકત છે. બધા ભરત ચક્રવર્તી જેવા નથી. જ્યાં આરંભ અને પરિગ્રહનો નિવાસ છે કે ત્યાં શાંતિમય જીવન નહિ. નિરાકુલતામય આત્મ-પરિણતિ નહિ. યત્નાચારપૂર્વક પ્રવૃત્તિ નહિ. ઇન્દ્રિયસંયમ અથવા પ્રાણિસંયમ જેવી સુંદર વસ્તુનું જ્યાં દર્શન નથી. રાત-દિવસ આધિ-વ્યાધિ અને ઉપાધિના ભારથી દબાયેલો આ પ્રાણી આત્મિક શાંતિના સાચા નિર્મળ સ્રોતથી દૂર જ રહ્યા કરે છે. ફક્ત બુઢી કલ્પનાથી જ પોતાને સુખી અને શાંતિનો ઉપભોક્તા માનતો રહે છે. જ્યાં જેટલો અધિક આરંભ થશે ત્યાં તેટલું જ અધિક જીવોનું ઉપમર્દન થશે. આરંભ પરિગ્રહના સદ્ભાવમાં યતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ જ બની શકતી નથી, અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિનું નામ જ પ્રમત્તદશા છે. આ પ્રમત્તદશાની નિવૃત્તિ—સર્વવિરતિરૂપ સંયમના અનુષ્ઠાન વિના બની શકતી નથી, કારણ કે સંયમના અનુ-



જીવોંકે ઉપમર્દન કા ત્યાગ નવકોટિસે હો જાતા હૈ ।

इस संयमाराधन के लिये यह नहीं कहा जा सकता है कि-अभी समय नहीं है, समय आने पर संयमका आराधन कर लेंगे। वे तो एक बहाना लेकर संयमाराधन से विमुख हो रहे हैं, उनकी यह आत्माकी कमजोरी है, जब तक यह कमजोरी नहीं हटाई जावेगी, तब तक असंयम जीवन से छुटकारा भी नहीं मिल सकता है। संयमाराधन के सम्मुख होने के लिये आत्मकमजोरी को जानने की और जान कर उसे दूर करने की सख्त आवश्यकता है। हम जानते हैं कि हमारे घरमें सांप घुसा बैठा है परन्तु जब तक उसे हम नहीं निकाल देते तब तक हमारा जानना हमारे लिये किस मतलब का ।

जीवन अल्प है। स्त्री पुत्रादिकों की प्राप्ति इस जीवको अनन्त बार हो चुकी है। संयोग और वियोग, ये दो ही नाटक संसार के पर्दे पर होते रहते हैं। हमारे साथ जो जन्मे थे वे चले गये, हम भी कभी न कभी चले जावेंगे, परन्तु सर्वविरति-संयमाराधन का अवसर इस जीव को हाथ नहीं आया। यदि आया होता तो-जो हमारा भव भवमें संसार में चक्कर लग रहा है-वह कभी का बंद हो जाता, अतः जब जीवन

ખાનમાં ત્રસ અને સ્થાવર જીવોના ઉપમર્દનનો ત્યાગ નવ કોટિથી થઈ જાય છે.

આ સંયમારાધન માટે એમ કહેવામાં નથી આવતું કે હમણાં સમય નથી પણ સમય આવશે ત્યારે સંયમનું આરાધન કરી લેશું. એ તો એક બહાનું માત્ર છે. જે સમયનું બહાનું લઈ સંયમારાધનથી વિમુખ થઈ જાય છે તેના આત્માની કમજોરી છે. જ્યાંસુધી એ કમજોરી દૂર કરવામાં નહિ આવે ત્યાંસુધી અસંયમ જીવનથી છુટકારો પણ મળી શકતો નથી.

સંયમારાધનસન્મુખ હોવા માટે આત્મકમજોરી બાજીવાની અને બાજીને તેને દૂર કરવાની સખ્ત આવશ્યકતા છે અને બાજીએ છીએ કે અમારા ઘરમાં સાપ ઘુસેલો છે પરંતુ જ્યાં સુધી અમે તેને નહિ બહાર નિકાલીએ ત્યાં સુધી અમારું બાજીપણું નકામું છે.

જીવન અલ્પ છે. સ્ત્રી પુત્રાદિકોની પ્રાપ્તિ આ જીવને અનંતવાર થયેલ છે. સંયોગ અને વિયોગ, એ બે સંસારના પર્દાપર નાટક થતાં જ રહે છે. અમારી સાથે જે જન્મ્યા હતાં તે ચાલી ગયાં, અમે પણ ક્યારેક ચાલ્યા જઈશું, પરંતુ સર્વવિરતિ-સંયમારાધનનો અવસર આ જીવને હાથ નહિ આવ્યો. કદાચ આવ્યો હોત તો જે અમારા ભવોભવના સંસારમાં ચક્કર લાગી રહ્યા છે તે ક્યારના

ક્ષણભંગુર હૈ તો ઉસકે દ્વારા સંયમકી જિતની ખી આરાધના હો સકે શુદ્ધ મન, વચન ઓર કાય સે કર લેની ચાહિયે, હસી મેં બુદ્ધિમાની હૈ । શુદ્ધ આરાધિત થોડા ખી સંયમ અનન્ત કર્મોં કી નિર્જરા કા કારણ માના ગયા હૈ । જિસ પ્રકાર સંતસ લોહેકા ગોલા પાનીકો ચારોં ઓર સે સ્વીંચતા હૈ, ઉસી તરહ અસંયમ જીવન ખી વિષયકષાયોં કે દ્વારા ચારોં ઓર સે કાર્મણવર્ગનાઓંકો સ્વીંચકર ઉન્હેં કર્મરૂપ સે પરિણત કર ઉનસે લિપ્ત હોતા રહતા હૈ । અસંયમી કાર્મણવર્ગનાઓંકો સ્વેંચ ઉન્હેં કર્મરૂપ મેં કર્યોં પરિણમાતા હૈ ? હસકા ઉત્તર દેતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—

‘જીવિષ્ણુ જે પમત્તા સે હંતા’ ઇત્યાદિ ।

નિરન્તર આયુષ વ્યતીત હો રહી હૈ—અંજલિ મેં રહે હુએ જલ કી તરહ ક્ષણ ૨ મેં આયુકર્મ કી સ્થિતિ ઘટ રહી હૈ—ફિર ખી પ્રાણી અસંયમ-જીવનવાલા હી બના હુઆ હૈ, વિષય ઓર કષાયોં મેં લવલીન હો રહા હૈ, રાતદિન વિકથા ઓર કષાય એવં પાંચઇન્દ્રિયોં કે વિષય સેવન કરને મેં હી જુટા હુઆ હૈ । પ્રમાદી વ્યક્તિ સંકષાય યોગવાલા હોતા હૈ—સંકષાય યોગવાલા હોને સે હી ઉસકી પ્રવૃત્તિ ષડ્જીવનિકાય કે ઉપમર્દન કરને મેં હોતી રહતી હૈ । ઉસે હસ વાતકા જરા ખી વિચાર નહીં આતા કિ મેરી

પણુ અંધ થઇ જાત. માટે ન્યારે જીવન ક્ષણભંગુર છે તો તે દ્વારા સંયમની જેટલી પણ આરાધના થઇ શકે તેટલી શુદ્ધ મન-વચન-કાયાથી કરી લેવી જોઈએ. તેમાં જ બુદ્ધિમાની છે. શુદ્ધ આરાધિત થોડો પણ સંયમ અનંત કર્મોની નિર્જરાનું કારણ મનાય છે. જે પ્રકારે સંતસ લોહનો ગોળો ચારે બાજુથી પાણીને ખેંચે છે, તે પ્રકારે અસંયમ જીવન પણ વિષય કષાયોંદ્વારા ચારે તરફથી કામણુ વર્ગણુઓને ખેંચીને તેને કર્મરૂપ પરિણમન કરી તેનાથી લિપ્ત થઇ જાય છે. અસંયમી કામણુ વર્ગણુઓને ખેંચી તેને કર્મરૂપ શા માટે પરિણમાવે છે ? તેનો ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર કહે છે—‘જીવિષ્ણુ જે પમત્તા સે હંતા’ ઇત્યાદિ. નિરંતર આયુષ્ય વ્યતીત થઇ રહ્યું છે, અંજળીમાં રાખેલા પાણી માફક ક્ષણ ક્ષણમાં આયુકર્મની સ્થિતિ ઘટી રહી છે તો પણ પ્રાણી અસંયમ જીવનવાળા જ બની રહે છે. વિષય અને કષાયોંમાં જ લવલીન થઇ રહે છે. રાતદિન વિકથા અને કષાય અને પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય સેવન કરવામાં જ મગ્યા રહે છે. પ્રમાદી વ્યક્તિ સંકષાય યોગવાલા થાય છે. સંકષાય યોગવાલા હોવાથી જ તેની પ્રવૃત્તિ ષડ્જીવનિકાયનું ઉપમર્દન કરવામાં જ બની રહે છે. તેને આ વાતનો જરા પણ વિચાર આવતો નથી કે—



હસ પ્રવૃત્તિ સે ત્રસ અથવા સ્થાવર જીવોંકા ઘાત હો રહા હૈ । અનેક અન-  
ર્થકારી સાવધ ક્રિયાઓં કો વહ કરતે હુણ નહીં હિચકતા હૈ । હસ લિયે  
વહ પ્રમાદી વ્યક્તિ શબ્દાદિ વિષયોં મેં ગૃહ્ બનકર ડન-ત્રસ સ્થાવર  
જીવોંકા હનન કરનેવાલા હોતા હૈ । જહાં અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ હૈ વહાં  
પ્રમત્તયોગ હોને સે હિંસા હોતી હી હૈ, હસલિયે પ્રમાદી વ્યક્તિ 'હંતા'  
કહા જાતા હૈ । જો રાતદિન અપની પ્રવૃત્તિ કો કુત્સિત કરનેવાલી ક્રિયાઓં  
કે સેવન મેં લગાતા રહતા હૈ વહ એક પ્રકાર સે ડસ તર્ફ સે હતના વિવેક-  
શૂન્ય હો જાતા હૈ કિ ફિર ડસે ડસ કામ સે જરા ખી ઘૃણા યા સંકોચ  
નહીં હોતા, દયા જૈસી વસ્તુ ડસકે હૃદય મેં દેખને કો હી નહીં મિલતી ।  
જિસ પ્રકાર ઠક ૨ શબ્દ હોતે રહને પર ખી ઠઠેરે કા કબૂતર નિર્ભય હોકર  
અપને સ્થાન પર બૈઠા રહતા હૈ અર્થાત્ ડસ જગહ ડસે બૈઠને મેં જરા ખી  
સંકોચ નહીં હોતા હૈ, ડસી પ્રકાર જો વાર વાર હિંસા-શૂઠ-આદિ પાંચ  
આશ્રવોં કે સેવન કરને મેં તત્પર રહતે હૈં વે હતને દયારહિત ઓર ડસ  
કાર્યકે કરને મેં હતને વિવેકશૂન્ય બન જાતે હૈં કિ ડન કામોં કો કરતે હુણ  
જરા ખી નહીં લજાતે, યા ડનકે કિયે બિના ડનહેં ચૈન નહીં પડતા । યદિ વે  
બાહર મેં ડસ તરહ કી પ્રવૃત્તિ ન ખી કરેં તો ખી ડનકી માનસિક પ્રવૃત્તિ

મારી આ પ્રવૃત્તિથી ત્રસ અને સ્થાવર જીવોનો ઘાત થઈ રહ્યો છે. અનેક અનર્થ-  
કારી પ્રાપ્તિ ક્રિયાઓને કરતાં જરા પણ થડકતો નથી. માટે તે પ્રમાદી વ્યક્તિ  
શબ્દાદિ વિષયોમાં ગૃહ બનીને આ ત્રસ સ્થાવર જીવોનો ઘાત કરવાવાળો બને  
છે, જ્યાં અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ છે ત્યાં પ્રમત્ત યોગ હોવાથી હિંસા થયા કરે છે,  
માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ 'હંતા' કહેવાય છે. જે રાતદિવસ પોતાની પ્રવૃત્તિને કુત્સિત  
કરવાવાળી ક્રિયાઓના સેવનમાં લગાડતો રહે છે. તે એક પ્રકારે એક તરફથી એવો  
વિવેકશૂન્ય થઈ જાય છે કે તેને તે કામથી જરા પણ ઘૃણા અગર સંકોચ થતો  
નથી. કયા જેવી વસ્તુ તેના હૃદયમાં દેખવામાં આવતી નથી. જે પ્રકારે ઠક ઠક  
શબ્દ થવા છતાં પણ કંસારાની જગ્યા પાસેનું કબુતર નિર્ભય બની પોતાના  
સ્થાન પર જ બેસી જ રહે છે. અર્થાત્ તે જગ્યા ઉપર બેસવામાં તેને જરા  
પણ સંકોચ થતો નથી, તે પ્રકારે જે વારંવાર હિંસા, શૂઠ, આદિ પાંચ આશ્રવોનું  
સેવન કરવામાં તત્પર રહે છે તે એટલા કથારહિત અને તે કાર્ય કરવામાં વિવે-  
કશૂન્ય બની જાય છે કે તેવા કામો કરવામાં તે જરા પણ લાજ મર્યાદા રાખતો  
નથી, અગર તેવા કામ કર્યા બિના તેને ચેન પડતું નથી. કહાય તે બહારમાં  
તેવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ન કરે તો પણ માનસિક પ્રવૃત્તિ તેની સુતાં ઉડતાં બેસતાં



સોતે ઉઠતે બેઠતે ઉસ તરફ સચેત બની રહતી હૈ । શાસ્ત્રકારોં ને હિંસા કે મુખ્ય દો ભેદ કિયે હૈ—૧ દ્રવ્યહિંસા ઓર ૨ ભાવહિંસા । પ્રાણિયોં કે અપનેર યોગ્ય પ્રાણોં કા વિયોગ કરના દ્રવ્યહિંસા, તથા ભાવ-અન્તઃકરણકી કલુષિત વૃત્તિ કરના ભાવહિંસા હૈ । પર્યાપ્તાવસ્થા મેં એકેન્દ્રિય જીવોં કે ૪ પ્રાણ હોતે હૈ, દ્વીન્દ્રિય જીવોં કે ૬, તેન્દ્રિય જીવોં કે ૭, ચતુરિન્દ્રિય જીવોં કે ૮, અસંજ્ઞિ પંચેન્દ્રિય જીવોં કે ૯ ઓર સંજ્ઞિ પંચેન્દ્રિય જીવોં કે ૧૦ । એકેન્દ્રિય જીવ સૂક્ષ્મ ઓર બાદર કે ભેદ સે દો પ્રકાર કે હોતે હૈ । સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય જીવ જો ઇસ લોક મેં સર્વત્ર વ્યાપ્ત હૈ ઉનકા કિસી ભી નિમિત્ત સે ઘાત નહીં હોતા હૈ, બાદર એકેન્દ્રિય જીવોંકા હી ઘાત હોતા હૈ । અતઃ પ્રમાદી વ્યક્તિ અપની પ્રવૃત્તિ સે પૃથિવી-કાયિક, અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક ંવં વનસ્પતિકાયિક એકેન્દ્રિય જીવોં કા તથા દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોં કા ઘાતક માના ગયા હૈ । રાગાદિક ભાવોં કા ઉદ્રેક પ્રત્યેક અવસ્થામેં રહતા હૈ, ઇનકે વિના કોઈ ભી પ્રાણી જીવોં કે ઘાત કરને મેં પ્રવૃત્ત નહીં હોતા, અતઃ ઇનકી ઉદ્રેકતા હી ભાવહિંસા હૈ । અથવા રાગાદિકોં કી ઉત્પત્તિ સ્વયં ભાવહિંસા હૈ, અતઃ પ્રમાદી વ્યક્તિ બાહરમેં હિંસાદિક કાર્યોં મેં પ્રવૃત્ત ન ભી હો તો ભી બહ

તે તરફ જ સચેત બની રહે છે. શાસ્ત્રકારોએ હિંસાના મુખ્ય બે ભેદ કહ્યાં છે. ૧ દ્રવ્યહિંસા, અને ૨ ભાવહિંસા. પ્રાણીઓના પોતપોતાના યોગ્ય પ્રાણોના વિયોગ કરવું તે દ્રવ્યહિંસા, તથા ભાવ-અન્તઃકરણની કલુષિત વૃત્તિ કરવી તે ભાવહિંસા છે. પર્યાપ્તાવસ્થામાં એકેન્દ્રિય જીવોને ૪ પ્રાણ હોય છે, બેદ્રિય જીવોને ૬, તેન્દ્રિય જીવોને ૭, ચોરેન્દ્રિય જીવોને ૮, અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને ૯ અને સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને ૧૦.

એકેન્દ્રિય જીવ સૂક્ષ્મ અને બાહરના ભેદથી બે પ્રકારના હોય છે, સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય જીવ જે આ લોકમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે, તેના કોઈ પણ નિમિત્તથી ઘાત થતો નથી. બાહર એકેન્દ્રિય જીવોનો ઘાત થાય છે, માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ પોતાની પ્રવૃત્તિથી પૃથિવીકાયિક, અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક એકેન્દ્રિય જીવોના તથા બેદ્રિય આદિ ત્રસ જીવોનો ઘાતક માનેલ છે. રાગાદિક ભાવોનો ઉદ્રેક પ્રત્યેક અવસ્થામાં રહે છે. તેના વિના કોઈ પણ પ્રાણી જીવોનો ઘાત કરવામાં પ્રવૃત્ત નથી થતો. માટે તેની ઉદ્રેકતા જ ભાવહિંસા છે. અને રાગાદિકોની ઉત્પત્તિ સ્વયં ભાવહિંસા છે. માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ બહારમાં હિંસાદિક કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત ન હોય તો પણ તે પ્રમત્ત હોવાથી હિંસક માનવામાં

કિમર્થં ચૈતાન્ વ્યાપારાન્ વિદધાતીત્યાહ—‘અકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ’  
 इति, यदन्यैः पूर्वैः सद्भिर्न कृतं=नानुष्ठितं तत्सर्वं करिष्यामि=विधास्यामि, इति मन्य-  
 मानः=स्वीकुर्वाणः सन् हननादिकर्मकर्ता भवति । पुत्रकलत्रासक्तोऽप्राप्तविविध-  
 विभवोऽनर्थकरं कर्म करिष्यामीति निश्चित्य हननादौ प्रवर्तते ।

પ્રમત્ત હોને સે હિંસક માના જાતા હૈ। इसीलिये प्रमादी को शास्त्रकारों ने  
 हिंसक कहा है। प्रमादी जिस प्रकार पांचइन्द्रियों के विषय में लोलुपी बन  
 कर त्रस स्थावरों का घात करता है उसी प्रकार वह उनका छेदन भेदन  
 भी करता है। फिर वह लुम्पयिता—किसी की गांठ काटना, खिसा कत-  
 रना आदि कार्य करता है, विलुम्पयिता—ग्रामघातादि कार्य करता है,  
 अपद्रावयिता—विष शस्त्रादि के प्रयोग से किसीको मारता है, उत्त्रास-  
 यिता—कंकर पत्थर फेंकर किसीको डराता है। अनेक अनर्थों को करनेवाली  
 हनन-छेदन-भेदन आदि क्रियाओं का जो यहां पर प्रदर्शन किया है  
 उसका अभिप्राय सिर्फ इतना ही है कि जो संसार में ही फँसा है वह  
 कालाकाल के ज्ञान से रहित होकर पर जीवों के विषय में अनेक अनर्थोंको  
 पैदाकरनेवाली अनेकप्रकार की घातादिक क्रियाओं को निरन्तर करता  
 रहता है। शंका—अनर्थकारी क्रियाओं को यह प्राणी क्यों करता है ?

उत्तर—“ अकृतं करिष्यामिति मन्यमानः ” अर्थात्—‘जो पहिले  
 अन्य पूर्वजों ने कार्य नहीं किये हैं वे सब मैं करूँगा’ इस अभिप्राय के  
 वशवर्ती होकर ही यह प्राणी उन अनर्थोत्पादक क्रियाओं के करने में

આવે છે. માટે પ્રમાદીને શાસ્ત્રકારોએ હિંસક કહ્યો છે, પ્રમાદી જે પ્રકારે પાંચ  
 ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં લોલુપી બનીને ત્રસ સ્થાવરોના ઘાત કરે છે તે પ્રકારે તે  
 તેનું છેદન ભેદન પણ કરે છે, પછી તે લુમ્પયિતા—કોઈની ગાંઠ કાપવી, ખિસ્સુ  
 કાતરવું, આદિ કાર્ય કરે છે. વિલુમ્પયિતા—ગ્રામઘાતાદિ કાર્ય કરે છે. અપદ્રાવયિતા  
 —વિષ શસ્ત્રાદિકોના પ્રયોગથી કોઈને મારે છે. ઉત્ત્રાસયિતા—કંકર પથ્થર ફેંકીને  
 કોઈને ડરાવે છે, અનેક અનર્થોને કરવાવાળી, હણવું, છેદવું, ભેદવું, આદિ ક્રિયા-  
 ઓનું જે આ ઠેકાણે પ્રદર્શન કર્યું છે, તેના અભિપ્રાય ફક્ત એટલો જ છે કે  
 જે સંસારમાં જ ફસેલા છે તે કાલાકાલના જ્ઞાનથી રહિત બની પર જીવો  
 વિષે અનેક અનર્થોને પેદા કરવાવાળી અનેક પ્રકારની ઘાતાદિક ક્રિયાઓને નિર-  
 તર કરતા રહે છે. શંકાઃ—અનર્થકારી ક્રિયાઓને આ પ્રાણી કેમ કરે છે ?  
 ઉત્તર—“ અકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ ”

અર્થાત્ ‘જે પહેલાનાં અન્ય પૂર્વજોએ કાર્ય નથી કર્યું’ તે બધું હું કરીશ.’  
 આવા અભિપ્રાયને વશવર્તી બનીને તે પ્રાણી તેવા અનર્થોત્પાદક ક્રિયાઓને કર-



યદ્વા-યદન્યૈઃ કૈરપ્યાશ્ચર્યગૃહોદ્યાનાદિકં પૂર્વ ન કૃતં તત્સર્વં કરિષ્યામીતિ મન્ય-  
માનઃ પ્રયતત્ત્વમ્ । સતતં વ્યગ્રો ભૂત્વા નાનાવિધશસ્ત્રોપઘાતપ્રવૃત્તો  
ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૫ ॥

પ્રવૃત્ત હોતા હૈ । યહ સંસારમેં ફંસા હૈ-સ્ત્રીપુત્રાદિકોં મેં ગૃહ્ બના હુઆ  
હૈ । ઉનકે નિર્વાહ કે લિયે સર્વપ્રથમ દ્રવ્યકી ઇસે જરૂરત્ હોતી હૈ પરંતુ  
નિર્વાહ લાયક સાધનોંકો કરતે હુઅ ખી મનમાના દ્રવ્ય ઇસે પ્રાપ્ત નહીં  
હોતા હૈ, ઇસલિયે ઉસકી પ્રાપ્તિ કે લિયે યહ ન્યાય અન્યાય માર્ગકા  
વિચાર ન કર યેન કેન પ્રકારેણ દ્રવ્ય કે સંગ્રહકે લિયે હનનાદિ ક્રિયાઓં  
મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ।

અથવા—“અકૃતં કરિષ્યામિ” ઇસકા યહ ખી અર્થ હોતા હૈ કિ  
‘જો મકાન વગેરહ, અથવા બગીચા વગેરહ હમારે પૂર્વજોંને નહીં કરવાયે  
ઉન્હેં અબ મેં કરવાઝંગા’ એસા સોચ કર જબ વહ ઉનકી તૈયારી કરાને  
મેં પ્રયત્નશીલ હોતા હૈ ઉસ સમય જિસ સ્થાન પર ઇસે બગીચા વગેરહ  
કી તૈયારી કરાની હૈ ઉસ સ્થાન કી વહ સફાઈ કરાને મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ ।  
યદિ ઉસ સ્થાન પર કોઈ ઝાડી વગેરહ ખડી હોતી હૈ તો યહ ઉસે કટ-  
વાતા હૈ, અથવા જો શક્ય હોતા હૈ તો ઉસે સ્વયં ખી કાટતા હૈ । ઇસ  
પ્રકાર યહ પ્રમાદી વ્યક્તિ સ્ત્રીપુત્રાદિકોં મેં ગૃહ્ બનકર અકૃત કે કરને  
મેં લગ જાતા હૈ, અતઃ ઇસ સ્થિતિ મેં વહ ષડ્જીવનિકાય કા ઘાતક  
હોતા હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

વામાં પ્રવૃત્ત થાય છે. તે સંસારમાં ફસેલા છે. સ્ત્રી-પુત્રાદિકોમાં ગૃહ બનેલા છે.  
તેના નિર્વાહ માટે સર્વ પ્રથમ દ્રવ્યની તેને જરૂરત પડે છે, પરંતુ નિર્વાહલાયક  
સાધનોને કરતાં છતાં પણ મનમાન્યું દ્રવ્ય તેને પ્રાપ્ત થતું નથી માટે તેની  
પ્રાપ્તિ માટે તે ન્યાય અન્યાય માર્ગનો પણ વિચાર ન કરીને યેન કેન પ્રકારેણ  
દ્રવ્યના સંગ્રહ માટે હણવાદિ ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે.

અથવા—“અકૃતં કરિષ્યામિ” એનો એ પણ અર્થ થાય છે કે—‘જે મકાન  
વિગેરે અથવા બગીચા વિગેરે અમારા પૂર્વજોએ નહિ બનાવ્યા તે હું બનાવીશ’  
એવો વિચાર કરીને બ્યારે તે તેની તૈયારી કરાવવામાં પ્રયત્નશીલ થાય છે તે  
વખતે જે સ્થાન પર તેને બગીચા વિગેરેની તૈયારી કરાવવાની છે તે સ્થાનની  
તે સફાઈ કરાવવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે. કદાચ તેવા સ્થાન પર કોઈ ઝાડી વિગેરે આડું  
ખડું હોય તો તેને તે કપાવી નાંખે છે, અથવા જે શક્ય હોય છે તેને પોતે  
કાપે છે. આ પ્રકાર આ પ્રમાદી વ્યક્તિ સ્ત્રી પુત્રાદિકોમાં ગૃહ બની અકૃત કરવામાં  
લાગી જાય છે માટે આ સ્થિતિમાં તે ષડ્જીવનિકાયનો ઘાતક થાય છે ॥ સૂ. ૫ ॥



एवं हननादि प्रकारानुचितव्यापारकरणोद्यतो द्वीपान्तरगमनेऽपि समग्रकार्य-  
साधनभूतप्रभूतधनालाभाद्विषण्वेताः किं करोतीति दर्शयति—“जेहिं बे”—त्यादि॥

मूलम्—जेहिं वा सद्धिं संवसइ ते वा णं एगया नियगा  
ते पुड्विं पोसेंति, सो वा ते नियगे पच्छा पोसिज्जा, नालं ते  
तव ताणाए वा सरणाए वा, तुमं पि तेसिं नालं ताणाए वा  
सरणाए वा ॥ सू० ६ ॥

छाया—यैर्वा सार्द्धं संवसति, ते वा खलु एकदा निजकास्तं पूर्वं पोषयन्ति,  
स वा तान् निजकान् पश्चात्पोषयति नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वा, त्वमपि  
तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वा ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘यैर्वेति’ यैः=मातापित्रादिभिः सार्द्धं संवसति=प्रेम्णा निवसति ते खलु=  
निश्चयेन, एकदा=बाल्ये वयसि निजकाः=स्वकीयाः मातापित्रादयः, तं=पुत्रादिकं  
पूर्वं=बाल्यावस्थायां पोषयन्ति, वा-शब्दोऽप्यर्थे स वा=सोऽपि तान्=मातापित्रादीन्,  
निजकान्=आत्मीयान्, पश्चात्=वृद्धावस्थायां धनादिना पोषयति किन्तु ते=माता-  
पित्रादयः तव नालं त्राणाय वा शरणाय वा, त्वमपि तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय  
वा, ऐहिक-पारत्रिक-दुःखोदयेषु न कोऽपि पोष्यः पोषको वा कस्यापि त्राण  
शरणभूतो भवतीति भावः ॥ सू० ६ ॥

इस तरह हननादि प्रकारवाले अनुचित व्यापारों के करने में उद्यत  
यह प्राणी धन कमाने की इच्छा से अन्य दूसरे द्वीपों में भी जाता है, परन्तु  
यदि वहां पर भी समग्र कार्यका साधनभूत प्रभूत धन अर्थात् यथेच्छ  
धनका लाभ जब इसे नहीं होता है तब यह अतिशय खेदखिन्न होता है  
और इस परिस्थिति में यह क्या करता है सो प्रकट करते हैं—

‘जेहिं वा सद्धिं संवसइ’ इत्यादि । अर्थ स्पष्ट है ।

આવી રીતે હણવાના પ્રકારવાળા અનુચિત વ્યાપારો કરવામાં પ્રયત્નશીલ  
તે પ્રાણી ધન કમાવાની ઇચ્છાથી બીજા અન્ય દ્વીપોમાં પણ જાય છે, પરંતુ કદાચ  
ત્યાં પણ સમગ્ર કાર્યનું સાધનભૂત પ્રભૂત ધન અર્થાત્ યથેચ્છ ધનનો લાભ ન્યારે  
ત્યાં પણ મળતો નથી તો તે ઘણો ખિન્ન થઈ જાય છે, અને આ પરિસ્થિતિમાં  
તે શું કરે છે તે પ્રકટ કરવામાં આવે છે:—‘જેહિં વા સદ્ધિ સંવસइ’ ઇત્યાદિ  
અર્થ ખુલ્લો છે.

વિશેષાર્થ-જિન માતાપિતા આદિકોં કે સાથ યહ રહતા હૈ વે इसकी बाल्य अवस्था में सर्वप्रथम सेवा-चाकरी करते हैं, इसकी सहायता करते हैं, इसका पालन पोषण करते हैं। वह भी जब युवावस्था आदि से समृद्ध हो जाता है तब इन अपने मातापिता आदि की वृद्धावस्था में धन आदि से सहायता, सेवा, या इनका पालन पोषण करता है। इस प्रकार पारस्परिक पोष्यपोषक भाव होने पर भी यह उनकी रक्षा के लिये, अथवा उनको शरण देने के लिये समर्थ नहीं होता है, वे भी इसकी रक्षा के लिये, अथवा इसके शरण देने के लिये समर्थ नहीं होते हैं।

संसार की यह रीति है-प्रत्येक प्राणी अपने २ कुटुम्बियों की-स्त्री पुत्रादिकों की मोहाधीन हो हरतरह से सेवा शुश्रूषा संरक्षण पालन पोषण किया करता है। यह वृत्ति सिर्फ मनुष्यों में ही नहीं है, पशु-पक्षियों तक में भी इसी प्रकार की पाई जाती है। वे भी इष्ट के संयोग में हर्षाते हैं और उनके वियोग में दुःखी होते हैं। जैसे चिड़िया घोसले में रहती है और बच्चाबच्ची देती है, जब बाहर से खाना लेकर आती है तब उसके छोटे २ बच्चे उसे देखते ही चैं-चैं कर बाहर निकलते हैं और उसके आस पास फुदक २ कर उसकी ओर अपनी २ चंचु खोलकर

વિશેષાર્થ—જે માતાપિતા આદિની સાથે તે રહે છે તે તેની બાલ્ય અવસ્થામાં સર્વ પ્રથમ સેવા ચાકરી કરે છે તેની સહાયતા કરે છે, તેનું પાલન-પોષણ કરે છે, તે પણ જ્યારે યુવાવસ્થા આદિથી સમૃદ્ધ થઈ જાય છે ત્યારે તે પોતાના માતાપિતા આદિની વૃદ્ધાવસ્થામાં ધન આદિથી સહાયતા, સેવા, અને તેમનું પાલન-પોષણ કરે છે. આ પ્રકારે પારસ્પરિક પોષ્ય-પોષક ભાવ હોવા છતાં પણ તે તેમની રક્ષા માટે કે શરણ દેવામાં સમર્થ થતો નથી, તેમજ તેઓ પણ તેની રક્ષા અને શરણ દેવામાં અસમર્થ બને છે.

સંસારની એ રીતિ છે કે પ્રત્યેક પ્રાણી પોતપોતાના કુટુંબીઓની સ્ત્રી-પુત્રાદિકોની મોહાધીન થઈ દરેક પ્રકારથી સેવા, સુશ્રૂષા, સંરક્ષણ પાલન પોષણ કર્યા કરે છે. આવી વૃત્તિ ફક્ત મનુષ્યોમાં જ છે તેમ નહિ પણ પશુપક્ષીઓમાં પણ છે તેમ દેખવામાં આવે છે. તેઓ પણ ઇષ્ટ સંયોગમાં હર્ષ પામે છે અને તેના વિયોગમાં દુઃખી થાય છે. જેમ ચકલીઓ માળામાં રહે છે અને બચ્ચાં બચ્ચી દે છે, અને જ્યારે બહારથી ખાવાનું લઈ આવે છે ત્યારે તેના નાના નાનાં બચ્ચાં તેને દેખતાં જ ચૈં-ચૈં કરી બહાર નીકળે છે અને તેની આસપાસ ફુદવા માંડે છે અને તેની તરફ પોતપોતાની ચાંચ ખોલીને ખેંસી જાય છે. તે પોતાની ચાંચથી

યથા સ્વજનાદિર્ન તવ ત્રાણાય પ્રભવતિ તથૈવ કષ્ટસમ્પાદિતં સુરક્ષિતં ધનમપિ ન ત્રાણાયેતિ દર્શયતિ—“ઉવાઙ્યે”—ત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઉવાઙ્યસેસેણ વા સંનિહિસંનિચઓ કિજ્જઈ ઇહ-મેગેસિં અસંજયાણ ભોયણાણ, તઓ સે ઇગયા રોગસમુપ્પાયા સમુપ્પજ્ઞંતિ, જોહિં વા સહ્ધિં સંવસઈ તે વા ણં ઇગયા નિયગા તં પુવિં પરિહરંતિ, સો વા તે નિયગે પચ્છા પરિહરિજ્ઞા, નાલં તે તવ તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાણ વા સરણાણ વા ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—ઉપાદિતશેષેણ વા સન્નિધિસંનિચયઃ ક્રિયતે, રૂઢકેપામસંયતાનાં ભોજનાય, તતસ્તસ્યૈકદા રોગસમુત્પાદાઃ સમુત્પદ્યન્તે, યૈર્વા સાર્દ્ધં સંવસતિ તે વા સ્વલુ એકદા નિજકાસ્તં પૂર્વં પરિહરન્તિ, સ વા તાન્ નિજકાન્ પથ્થાત્પરિહરતિ, નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા, ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા ॥ સૂ૦ ૭ ॥

બેઠ જાતે હૈં । વહ અપની ચંચુ સે ઇનકી ચંચુ મેં કુછ સ્વાના ધર દેતી હૈ, બે સ્વા જાતે હૈં, બહે સુશ હોતે હૈં ।

જબ પશુપક્ષિયોં કી યહ પરિસ્થિતિ હૈ તો ફિર મનુષ્ય જો સમ-શ્ચદાર પ્રાણી માના ગયા હૈ ઉસકી અપને ઇષ્ટ બંધુ જનોં કે—પુત્રાદિકોં કે પ્રાલન પોષણ કરને કી વૃત્તિ સબસે બઢ કર હો ઇસમેં કોઈ આશ્ચર્ય જૈસી વાત નહીં, કિન્તુ ઇહલોક પરલોક સમ્બન્ધી દુઃસ્વોં કા ઉદય હોને પર ન બે તેરે ત્રાણ ઓર શરણ હોતે હૈં ઓર ન તૂં ઉનકેલિયે ત્રાણ ઓર શરણ હો સકતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

તેની આંચમાં કાંઈક ખાવાનું ધરે છે તે તેઓ ખાઈ જાય છે. અને ઘણું ખુશ થાય છે.

ન્યારે પશુ પક્ષિઓની આ પરિસ્થિતિ છે તો પછી મનુષ્ય તો સમજદાર વ્યક્તિ માનવામાં આવે છે તેને પોતાના ઇષ્ટ બંધુ જનોને, પુત્રાદિકોને પાળવામાં વૃત્તિ બધાથી વધારે હોઈ શકે તેમાં કોઈ આશ્ચર્યની વાત નથી. પરંતુ આલોક પરલોક સંબંધી દુઃખોનો ઉદય થવાથી નથી તું તેમનો ત્રાણ અને શરણ દેવામાં સમર્થ થતો, અને નથી તેઓ તને ત્રાણ અને શરણ દેવામાં સમર્થ થતાં ॥ સૂ૦ ૬ ॥



टीका—‘उपादिते’—‘त्यादि इह=संसारे एकेषां=कतिपयानाम्, असंयतानां=गृहस्थानां सन्निधिसंनिचयः=सन्निधेर्विद्यमानधनस्य संनिचयः=एकत्रीकरणं, यद्वा—संनिचयो=बाहुल्यम्, उपभोग्यधनसमूह इति यावत्, उपादितशेषेण=उपादितस्य=उपभुक्तस्य शेषेण=अवशिष्टभागेन भोजनाय=भोजनमुपभोगस्तस्मै=तदर्थं क्रियते। यद्वा—असंयताना-मित्यत्रार्थत्वाच्चृतीयार्थे पष्ठी, तेन चोपादितशेषेण सङ्ग्रहलिप्सुभिः कैरप्यसंयतैर्नानाविधसावद्यक्रियोपार्जितमनर्थजनकं धनं सम्पाद्य भविष्यत्काले कुटुम्बपोषणाय स्वोपभोगाय वा क्रियत इत्यर्थः। संसारमूर्च्छितो गृहस्थो भविष्यत्काले उपभोगार्थं धनसंचयं करोतीति भावः। किन्तु सोऽपि धनसंचयो न तस्योपभोगायेत्याह—‘ततः’ इत्यादिना, ततो=धनसंचयानन्तरमुपभोगकाल इति यावत्, तस्योपभोक्तुरेकदा द्रव्यक्षेत्रकालभावनिमित्तप्रकटवेदनीयकर्मोदये ‘रोग-समुत्पादाः’ रोगाणां=कासश्वासराजयक्ष्मकुष्ठार्शआदीनां समुत्पादाः=प्रादुर्भावाः

१ उपपूर्वकात् ‘अद्’-घातोः स्वार्थेणिचिक्तः।

जिस प्रकार स्वजन वगैरह इस जीवके रक्षक नहीं हो सकते हैं उसी प्रकार कष्टसंपादित सुरक्षित धन भी इसका रक्षक नहीं होता है इसी बात को सूत्रकार कहते हैं—

‘उवाह्यसेसेण वा’ इत्यादि। इस संसार में कितनेक असंयत संसारी जीव अपने उपभोग के लिये नाना प्रकार की सावद्य क्रियाओं द्वारा अनर्थकारी धनका उपार्जन कर खाने पीने से अवशिष्ट धनका संचय करते हैं और उसका उपभोग करते समय इच्छानुकूल आहार विहार करते हैं, परन्तु जब असाता का उदय आता है तब उनके शरीर में कास-श्वास आदि अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इस अवस्था में इसके नेत्र और नासिका से पानी गिरने लगता है, कुष्ठ

ये प्रकारे स्वजन विगेरे आ लुपना रक्षक नथी अपनी शकता ते प्रकारे कष्टसंपादित सुरक्षित धन पणु तेनु रक्षक अननु नथी. आ वातने सूत्रकार कहे छे—

‘उवाह्यसेसेण वा’ इत्यादि—आ संसारमां डेटलाक असंयत संसारी लुप पोताना उपभोग माटे नाना प्रकारनी सावद्य क्रियाओद्वारा अनर्थकारी धननु उपार्जन करी पावा—पीवाथी अवशिष्ट धननो संचय करे छे, अने तेनो उपभोग करी ते समय इच्छानुकूल आहार विहार करे छे, परन्तु न्यारे अशातानो उदय आवे छे त्यारे तेना शरीरमां कास श्वास आदि अनेक प्रकारना रोग उत्पन्न थाथ छे. आ अवस्थाभां तेना नेत्र अने नासिकाथी पाणी नीकणवा लागे छे.

समुत्पद्यन्ते=जायन्ते, धनोपभोगे मानवानां स्वेच्छाहारक्रीडादिना इदिति धातु-  
वैषम्योदयान्नाविधरोगा भवन्तीति भावः ।

ततः किं भवतीत्याह—‘यैर्वा सार्द्ध’—मित्यादि । यैः=पुत्रकलत्रादिभिः सार्द्धं  
संवसति त एव निजकाः=आत्मीया एकदा=रोगाभिभवे पूर्व=प्रथमं परस्पररोग-  
संसर्गभयात् तं गलन्नेत्रनासिकं विशीर्णपाणिपादं रोगिणं परिहरन्ति । कदाचित्  
स वा=सोऽपि पश्चात् तान् निजकान्=आत्मीयान् पुत्रकलत्रादीन् परिहरति, किन्तु यदि  
कथञ्चित् शुश्रूषणपरा अपि न तव रक्षकाः, नापि तेषां त्वं रक्षकः, एहिक-पारत्रिक-  
दुःखविमोचनाय परस्परं समर्था न भवन्तीति भावः ॥ सू० ७ ॥

यावद्वार्धक्यादिकं नायातं तावदेव श्रुतचारित्रादिलक्षणे धर्मे यत्नः कर्तव्य  
इति दर्शयति—‘एवं जाणितु’ इत्यादि ।

**मूलम्**—एवं जाणितु दुःखं पत्तेयं सायं, अणभिक्रंतं च खलु  
वयं संपेहाए, खणं जाणाहि पण्डिया ! ॥ सू० ८ ॥

छाया—एवं ज्ञात्वा दुःखं प्रत्येकं सातम्, अनभिक्रान्तं च खलु वयः सम्पेक्ष्य  
क्षणं जानीहि पण्डित ! ॥ सू० ८ ॥

आदि रोग के कारण हाथ पैर गलने लगते हैं, उस समय इसके अपने  
कुटुम्बी-पुत्र कलत्रादिक-भी ‘हमको भी रोग न लग जाय’ इस भय से  
इसे छोड़ देते हैं । अथवा किसी समय यह भी किसी कारणवश उन्हें  
छोड़ देता है । यदि परस्पर कोई किसीको न भी छोड़े तो भी ऐहिक  
और पारत्रिक दुःखों से कोई किसी की रक्षा नहीं कर सकता है ॥ सू० ७ ॥

जब तक वृद्धावस्था बगैरह नहीं आई है तब तक श्रुतचारित्ररूप  
धर्म सेवन करने में प्रयत्न करते रहना चाहिये । इसी बातको सूत्रकार  
प्रदर्शित करते हैं—

कुष्ठ आदि रोगना कारणे हाथ पैर गणवा लागे छे, ते वणत तेना पोताना  
कुटुम्बी-पुत्रकलत्रादिक पणु ‘अमने पणु रोग न लागी नथ’ आ भयथी तेने  
छोडी दे छे. अथवा कोछ वणत ते पणु कोछ कारणवश तेआने छोडी दे छे.  
कदाय परस्पर कोछ कोछने न पणु छोडे तो पणु ऐहिक अने पारत्रिक दुःखोथी  
कोछ कोछनी रक्षा करी शकता नथी. ॥ सू० ७ ॥

न्यां सुधी वृद्धावस्था विगेरे नथी आवी त्यां सुधी श्रुतचारित्ररूप धर्म  
सेवन करवामां प्रयत्न करतो रहेवो नेछये, आ वातने सूत्रकार प्रदर्शित करे छेः—



ટીકા—હે પण્ડિત ! =હે પરમાર્થજ્ઞ—મેધાવિન્ ! એવં=“ કેડપિ સ્વજનાદયસ્ત્રાણાય  
વા શરણાય વા ન ભવન્તિ ” ઇતિ પૂર્વોક્તપ્રકારેણ પ્રત્યેકં=પ્રત્યેકપ્રાણિનઃ સર્વેષાં પ્રાણિ-  
નામિત્યર્થઃ, દુઃખં, તથા સાતં=સુખં ચ જ્ઞાત્વા=‘ સ્વકૃતશુભાશુભકર્મવિપાકાનુભવો-  
ડવશ્યં ભવતી ’-તિબુદ્ધવા અનભિક્રાન્તમ્=અવ્યતીતં વયઃ=શરીરસ્ય કાલકૃતાવસ્થાં  
સંપ્રેક્ષ્ય=પરિવાદદોષવતો વાર્ધક્યસ્ય, પોષણદોષવતો બાલ્યસ્ય, પરિહારદોષવતો  
રોગસ્ય ચ દૂરવર્તિત્વં યત્રાસ્તિ તાદૃશં વયઃ સમાલોચ્ય, ક્ષણમ્=અવસરં જાનીહિ=  
બુદ્ધ્યસ્વ હે પણ્ડિત ! ઇતિ સમ્બન્ધઃ ।

‘ એવં જાણિત્તુ ’ ઇત્યાદિ । હે મેધાવી !—હે સર્વવિરતિસમ્પન્ન ! હે પરમાર્થ  
કે જાનનેવાલે મુનિ ! કોઈ મી સ્વજનાદિક એક દૂસરે કો ત્રાણ ઔર  
શરણ કે લિએ સમર્થ નહીં હો સકતા હૈ । ઇસપ્રકાર પૂર્વોક્ત રીતિ સે  
પ્રત્યેક પ્રાણી કે સુખ દુઃખ કો જાનકર—અર્થાત્ અપને કિયે હુએ પુણ્ય-  
પાપ કા ફલ અવશ્ય ભોગના પડતા હૈ, એસા સમજકર તથા અવસ્થા કો  
મી અનભિક્રાન્ત દેશ્વ કર, તથા જબ તક રોગાદિ કા ઉદય નહીં હુવા હૈ—  
સબ ઇન્દ્રિયાં અપની ૨ શક્તિ મેં સમર્થ હૈં ઔર સ્વજનાદિકોં ને નહી છોડા  
હૈ અર્થાત્ જબતક સ્વજનાદિ આદર કરતે હૈં તબતક હી આત્મા કા  
શ્રેય સાધ લેના ચાહિયે, એસી અવસ્થા કો અર્થાત્ પરિવાદ—દોષયુક્ત વૃદ્ધા-  
વસ્થા, પોષણ—દોષવાલી બાલ્યાવસ્થા ઔર પરિહાર—દોષવાલી રોગાવસ્થા  
કો સોચકર તું સંયમારાધન કે અવસર કો મલી—મૉતિ જાન ।

‘ એવં જાણિત્તુ ’ ઇત્યાદિ—હે મેધાવી !—હે સર્વવિરતિસમ્પન્ન ! હે પરમાર્થના  
જાણકાર મુનિ ! કોઈ પણ સ્વજનાદિક એક બીજાને ત્રાણ અને શરણ માટે  
સમર્થ બનતા નથી. આ પ્રકારે પૂર્વોક્ત રીતિથી પ્રત્યેક પ્રાણીના સુખ દુઃખને  
જાણીને અર્થાત્ ‘ પોતાના કરેલા પાપ પુન્યના ફળ અવશ્ય ભોગવવા પડે છે ’ એવું  
સમજીને તથા અવસ્થાને પણ અનભિક્રાન્ત દેખીને, તથા જ્યાં સુધી રોગાદિકનો  
ઉદય થયો નથી, જ્યાં ઇન્દ્રિયો પોતપોતાની શક્તિમાં સમર્થ છે, અને સ્વજનાદિએ  
છોડેલ નથી, અર્થાત્ જ્યાંસુધી સ્વજનાદિ આદર કરે છે ત્યાંસુધી આત્માનું શ્રેય  
સાધી લેવું જોઈએ. એવી અવસ્થાને અર્થાત્ પરિવાદદોષયુક્ત વૃદ્ધાવસ્થા, પોષણ-  
દોષવાળી બાલ્યાવસ્થા અને પરિહારદોષવાળી રોગાવસ્થાને સોચીને તું સંયમારાધનના  
અવસરને ભલિભાંતિ જાણુ.



ચાહે સુખી હો ચાહે દુઃખી હો-પ્રત્યેક મનુષ્યનો અપને કૃત-કિયે હુણ શુભાશુભ કર્મના ફળનો ભોગ અવશ્ય ભોગના પડતા હૈ। યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ વિના ફળ દિયે કર્મ કમી ભી નષ્ટ નહીં હોતે। આત્માનો જો પૌદ્ગલિક વર્ગણાઈ પરતન્ત્ર કરતી હૈ, ઉનકા નામ હી કર્મ હૈ। હસ લોક મેં કજ્જલ કી કુપ્પી કી તરહ સર્વત્ર કાર્મણવર્ગણાઈ ભરી હુઈ હૈ-યે પૌદ્ગલિક હૈ। આત્માને ક્રોધાદિ કષાયોને નિમિત્ત સે ઉનમેં સ્થિતિબંધ ઓર અનુભાગબંધ રૂપ ફળ દેને કી શક્તિ આતી હૈ। કર્મબંધ કી શાસ્ત્રકારોને ૪ પ્રકાર કી અવસ્થાઈ બતલાઈ હૈ। ૧ પ્રકૃતિ-બંધ, ૨ સ્થિતિબંધ, ૩ અનુભાગબંધ ઓર ૪ પ્રદેશબંધ। જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મો મેં આત્માને ઉન ૨ ગુણોને ઘાત કરને કી જો શક્તિ હૈ ઉસ કા નામ પ્રકૃતિબંધ હૈ। પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવ કા હૈ। જિસ પ્રકાર નીમકા સ્વભાવ કડુવા હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા સ્વભાવ આત્માને જ્ઞાન ગુણનો ઘાત કરને કા હોતા હૈ, દર્શનાવરણીય કર્મ કા સ્વભાવ આત્માને દર્શનગુણનો ઘાત કરને કા હૈ, વેદનીય કર્મકા સ્વભાવ આત્માનો સુખ ઓર દુઃખ દેનેકા હૈ, મોહનીય કર્મકા સ્વભાવ, આત્માને સ્વભાવનો પરપદાર્થો મેં ગૃહ બનાવેના કા હૈ,

ભલે સુખી હોય યા દુઃખી પ્રત્યેક મનુષ્યને પોતાના કૃત-કરેલા શુભાશુભ કર્મના ફળને ભોગવવું પડે છે. એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે ફળ આપ્યા વિના કર્મ કોઈ વખત નાશ થતાં નથી.

આત્માને પૌદ્ગલિક વર્ગણા પરતન્ત્ર કરે છે તેનું નામ જ કર્મ છે. આ લોકમાં કાળજની શીશી માફક સર્વત્ર કાર્મણ વર્ગણાઓ ભરેલી છે. એ પૌદ્ગલિક છે. આત્માના ક્રોધાદિ કષાયોના નિમિત્તથી તેમાં સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધરૂપ ફળ દેવાની શક્તિ આવે છે. કર્મબંધની શાસ્ત્રકારોએ ૪ પ્રકારની અવસ્થાઓ બતાવેલી છે. ૧ પ્રકૃતિબંધ, ૨ સ્થિતિબંધ, ૩ અનુભાગબંધ, અને ૪ પ્રદેશબંધ. જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મોમાં આત્માના તે તે ગુણની ઘાત કરવાની જે શક્તિ છે તેનું નામ પ્રકૃતિબંધ છે. પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવનું છે. જેમ લીંબડાનો સ્વભાવ કડવો હોય છે તે પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના જ્ઞાનગુણનો ઘાત કરવાનું હોય છે. દર્શનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના દર્શનગુણનો ઘાત કરવાનો છે. વેદનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માને સુખ અને દુઃખ આપવાનો છે. મોહનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના સ્વભાવને પરપદાર્થોમાં

આયુ કર્મકા સ્વભાવ નિયત સમય તક જીવકો ઉસ ૨ પર્યાયમેં રોક રાખને કા હૈ, નામ કર્મકા સ્વભાવ ચિત્રકાર કી તરહ શરીરાદિકોં કો અનેક રૂપમેં પરિણમાને કા હૈ, ગોત્રકા સ્વભાવ ઊંચ નીચ કુલમેં પેદા કરાને કા તથા અન્તરાય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે વીર્ય કે ઘાત કરને કા હૈ । પ્રદેશબંધ વહ હૈ-જિસકી વજહ સે દૂધ ઓર પાની કી તરહ આત્મા ઓર કર્મ કે અનન્તાનન્ત પ્રદેશોં કા એકીભાવ જૈસા સંબંધ હો જાતા હૈ । યહ દોનોં પ્રકાર કા બંધ, મન વચન કાય કે યોગોં સે હોતા હૈ । સ્થિતિબંધ-કર્મોં મેં આત્મા કે સાથ રહને કી મર્યાદા કો કહતે હૈ । ફલ દેને કી શક્તિ કી હીનાધિકતા કો અનુભાગબંધ કહતે હૈ । યે સ્થિતિબંધ ઓર અનુભાગબંધ કષાયોં સે હોતે હૈ । કર્મોંકા આત્માકે સાથ બંધ હોતા હૈ, ઇસકા યહ મતલબ નહીં હૈ કિ આત્મા કર્મ હો જાતા હૈ, અથવા કર્મ આત્મા રૂપ હો જાતે હૈ । પ્રત્યેક દ્રવ્યમેં એક અગુરુ-લઘુ નામકી શક્તિ રહ્યા કરતી હૈ, જિસકી વજહ સે એક દ્રવ્ય દૂસરે દ્રવ્યરૂપ નહીં હો સકતા । ઇસ શક્તિ કે સદ્ભાવ સે પ્રત્યેક દ્રવ્ય અપનેસ્વરૂપ મેં સદા કાયમ બના રહતા હૈ । હર એક દ્રવ્ય મેં ઇન છહ ગુણોં કા કિ જિનકો સામાન્ય ગુણ કહતે હૈ સદા નિવાસ રહતા હૈ । (૧) અસ્તિત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય

ગૃહ્થ બનાવવાનો છે. આયુકર્મનો સ્વભાવ નિયત સમય સુધી જીવને તે તે પર્યાયમાં રોકી રાખવાનો છે. નામકર્મનો સ્વભાવ ચિત્રકારની માફક શરીરાદિકોને અનેક રૂપમાં પરિણમાવવાનો છે. ગોત્રનો સ્વભાવ ઊંચ નીચ કુળમાં પેદા કરાવવાનો અને અન્તરાય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના વીર્યનો ઘાત કરવાનો છે. પ્રદેશબંધ તે જ છે, જેની મારફત દૂધ અને પાણી માફક આત્મા અને કર્મને અનન્તાનન્ત પ્રદેશોનો એકીભાવ જેવો સંબંધ થઈ જાય છે. એ બંને પ્રકારના બંધ મન વચન કાયાના યોગોથી થાય છે. સ્થિતિબંધ-કર્મોમાં આત્માની સાથે રહેવાની મર્યાદાને કહે છે, ફળ દેવાની શક્તિની હીનાધિકતાને અનુભાગબંધ કહે છે. એ સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ કષાયોથી થાય છે. કર્મોનો આત્મા સાથે બંધ થાય છે, તેનો એ મતલબ નથી કે આત્મા કર્મ બની જાય છે, અથવા કર્મ આત્મારૂપ બની જાય છે. પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં એક અગુરુલઘુ નામની શક્તિ રહ્યા કરે છે, જેની મારફત એક દ્રવ્ય બીજા દ્રવ્યરૂપ બની શકતું નથી. આ શક્તિના સદ્ભાવથી પ્રત્યેક દ્રવ્ય પોતાના સ્વરૂપમાં સદા કાયમ બની રહે છે. દરેક દ્રવ્યમાં આ છ ગુણો કે જેને સામાન્ય ગુણ કહે છે તે સદા નિવાસ કરી રહેલા છે. ૧ અસ્તિત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યનો કોઈ વખત નાશ નથી થતો.

કા કમી નાશ નહીં હોતા, (૨) વસ્તુત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય ક્ષણ ૨ મેં કુછ ન કુછ કામ કિયા હી કરતા હૈ। (૩) દ્રવ્યત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય મેં એકસી વ ભિન્ન પ્રકાર કી અવસ્થાએં બદલા કરતી હૈ, (૪) અગુરુલઘુત્વ-ઇસકે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય સદા અપની મર્યાદા મેં હી રહતા હૈ-કોઈ ભી ઇસકા ગુણ દૂસરે ગુણરૂપ નહીં હો સકતા, કોઈ દૂસરા ગુણ ભી ઇસમેં બાહર સે આકર નહીં મિલ સકતા, (૫) પ્રદેશવત્ત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્યકા કોઈ ન કોઈ આકાર અવશ્ય હોતા હૈ, (૬) પ્રમેયત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય કિસી ન કિસી જ્ઞાનકા વિષય હોતા રહતા હૈ।

આત્મા ઓર પુદ્ગલ મેં એક એસી વૈભાવિક શક્તિ હૈ કિ જિસસે યે દોનોં અનાદિકાલ સે અન્યોન્યસંપૃક્ત હોને કે કારણ સ્વભાવ સે અન્યથા હોને રૂપ વિભાવ અવસ્થા મેં પડે હુએ હૈં। ઇનકી યહ વિભાવ અવસ્થા અનાદિકાલ કી હૈ-આજ નહીં પૈદા નહીં હુઈ હૈ, ઇસી સે જીવ મેં પુદ્ગલ કે નિમિત્ત સે વિભાવ-અન્યથાભાવ રૂપ પરિણમન ઓર વિભાવ-દશાસંપન્ન જીવ કે નિમિત્ત સે પુદ્ગલ મેં વિભાવ-(કર્મ)-રૂપ પરિણમન હુઆ કરતા હૈ। ઇનકા યહ પરિણમન અનાદિકાલકા હૈ-આજકા નહીં।

૨ વસ્તુત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્ય ક્ષણ-ક્ષણમાં કાંઈ ને કાંઈ કામ કર્યા જ કરે છે. ૩ દ્રવ્યત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યમાં એક અને ભિન્ન પ્રકારની અવસ્થાઓ બદલ્યાં કરે છે. ૪ અગુરુલઘુત્વ-એના નિમિત્તથી દ્રવ્ય સદા પોતાની મર્યાદામાં જ રહે છે, કોઈ પણ તેના ગુણ બીજા ગુણરૂપ બની શકતો નથી, અને બીજા ગુણ પણ તેમાં બહારથી આવી મળી શકતો નથી. ૫ પ્રદેશવત્ત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યનો કોઈ ને કોઈ આકાર અવશ્ય થાય છે. ૬ પ્રમેયત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્ય કોઈ ને કોઈ જ્ઞાનનો વિષય થઈ રહે છે.

આત્મા અને પુદ્ગલમાં એક એવી વૈભાવિક શક્તિ છે કે જેનાથી એ બંને અનાદિ કાળથી અન્યોન્ય સંયુક્ત હોવાને કારણે સ્વભાવથી અન્યથા હોવારૂપ વિભાવ અવસ્થામાં પડેલ છે, તેની આ વિભાવ અવસ્થા અનાદિ કાળની છે. આજ નવી પેદા થયેલ નથી.

એનાથી જીવમાં પુદ્ગલના નિમિત્તથી વિભાવ-અન્યથા ભાવરૂપ પરિણમન અને વિભાવદશાસંપન્ન જીવના નિમિત્તથી પુદ્ગલમાં વિભાવ-(કર્મ)-રૂપ પરિણમન થયા કરે છે. તેનું આ પરિણમન અનાદિ કાળનું છે. આજનું નહિ.



પ્રશ્ન—યદિ આત્મા પહેલે શુદ્ધ થા એસા માન લિયા જાવે તો ક્યા હાનિ હૈ ?

ઉત્તર—બઢી ભારી હાનિ હૈ । ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા મેં કર્મ કે સંબંધ કે પહિલે આત્મા શુદ્ધ ઠહરેગા, ઓર ફિર ઉસકો કર્મકા સંબંધ માનને સે સિદ્ધાત્માઓં કો ભી કર્મ કા સંબંધ માનના પડેગા । એસા તો હૈ નહીં—શુદ્ધ મેં અશુદ્ધતા આસકતી નહીં । સિદ્ધ અવસ્થા શુદ્ધ અવસ્થા હૈ । અશુદ્ધ સે શુદ્ધ હોતા હૈ, ઇસીલિયે બન્ધ સે હી મોક્ષ કહા ગયા હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મ કે ફલ દેને કી કોઈ વિશેષ વિધિ હૈ ?

ઉત્તર—હાં, હૈ । જબ કર્મ બંધતે હૈ તબ ઉનકે પકને કે લિયે કુછ કાલ ચાહિયે, બાંધે હુએ કર્મ ઉસી સમય ઉદયમેં નહીં આને લગતે । ઇનકા હિસાબ તો खेतમેં પડે હુએ बीज की तरह હૈ । જિસ પ્રકાર खेत में बोया गया बीज कुछ काल के बाद ही पकता हॆ ठीक इसी प्रकार बांधे हुए कर्म को पकने में भी समय लगता हॆ । ઇસ સમયકા નામ અબાધાકાલ હૈ । ઇસ આબાધાકાલ કા યહ હિસાબ હૈ કિ—એક કોઢા-કોઢી સાગર કી સ્થિતિવાલે કર્મ મેં ઉસકા અબાધાકાલ ૧૦૦ વર્ષ કા પડતા હૈ, સત્તર ૭૦ કોઢાકોઢી સાગર કી સ્થિતિવાલે મોહકર્મ મેં ૭૦૦૦ વર્ષકા

પ્રશ્ન—કદાચ આત્મા પહેલાં શુદ્ધ હોતો તેમ માની લેવામાં આવે તો શું હરકત છે ?

ઉત્તર—ઘણી ભારી હાનિ છે. આ પ્રકારની માન્યતામાં કર્મના સંબંધના પહેલા આત્માને શુદ્ધ માનવું પડશે. અને પછી તેને કર્મનો સંબંધ માનવાથી સિદ્ધાત્માઓને પણ કર્મનો સંબંધ માનવો પડશે. એવું તો છે નહિ. શુદ્ધમાં અશુદ્ધતા આવી શકતી નથી. સિદ્ધ અવસ્થા શુદ્ધ અવસ્થા છે. અશુદ્ધથી શુદ્ધ છે. માટે બંધથી જ મોક્ષ કહેવાય છે.

પ્રશ્ન—કર્મના ફળ દેવાની બીજી કોઈ વિશેષ વિધિ છે ?

ઉત્તર—હા. છે. જ્યારે કર્મ બંધાય છે ત્યારે તેને પાકવા માટે થોડો વખત જોઈએ, બાંધેલા કર્મ તે વખત ઉદયમાં આવવા લાગતા નથી તેના હિસાબ તો ખેતરમાં પડેલા બી માફક છે. જે પ્રકારે ખેતરમાં વાવેલા બી થોડા વખત પછી પાકે છે તે પ્રકારે બાંધેલા કર્મને પાકવામાં પણ થોડો વખત લાગે છે. તે સમયનું નામ અબાધાકાલ છે. આ અબાધાકાલનો એ હિસાબ છે કે એક કોઢાકોઢી સાગરની સ્થિતિવાળા કર્મમાં તેની અબાધા ૧૦૦ વર્ષની પડે છે ૭૦ કોઢાકોઢી સાગરની સ્થિતિવાળા મોહકર્મમાં ૭૦૦૦ વર્ષનો અબાધાકાલ

અબાધાકાલ પડતા હૈ। ઇસ હિસાબસે કરોડ સાગરની સ્થિતિવાલે કર્મકા અબાધાકાલ અન્તર્મુહૂર્ત માત્ર હી પડેગા, ઇસસે યહ વાત જાની જાતી હૈ કિ—જિતને કમ સ્થિતિ કે કર્મ બંધેગે, વે જલ્દી ફલ દેને કો તૈયાર હો જાવેગે, ઓર યહી વજહ હૈ કિ ઇસી ભવમેં બાંધે હુએ કર્મ જીવ કો ઇસી ભવમેં ઉદય આ જાતે હૈં।

પ્રશ્ન—બાંધે હુએ કર્મકા વૈસા હી ફલ મિલતા હૈ? યા ઉસ મેં કુછ પરિવર્તન ભી હો સકતા હૈ?।

ઉત્તર—જીવોં કે પરિણામોં કે નિમિત્ત સે ફલોપભોગ મેં પરિવર્તન ભી હો જાતા હૈ। ઉસ પરિવર્તન કો—ઉત્કર્ષણ, અપકર્ષણ, સંક્રમણ, ઓર ઉદીરણા કહતે હૈં। બાંધે હુએ કર્મોં કી સ્થિતિ યા ઉનકે અનુભાગ મેં જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્તસે જો વૃદ્ધિ હો જાતી હૈ ઉસે ઉત્કર્ષણ કહતે હૈં। પહિલે બાંધે હુએ કર્મોં કી સ્થિતિ વ અનુભાગ મેં જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે જો ઘટતી હોતી હૈ ઉસે અપકર્ષણ કહતે હૈં। જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે પાપ કા પુણ્ય મેં યા પુણ્ય કા પાપ મેં જો પરિવર્તન—બદલના હોના હૈ ઉસકા નામ સંક્રમણ હૈ। કિન્હીં કર્મોં કો કિસી નિમિત્ત કે વજહ અપની ઠીક સ્થિતિ કે પહિલે ઉદય મેં લાકર સ્થાપા દેનેકા નામ ઉદીરણા હૈ।

પડે છે આ હિસાબથી કરોડ સાગરની સ્થિતિવાળા કર્મને અબાધાકાળ અન્તર્મુહૂર્ત માત્ર જ પડે છે. આથી તે વાત જણાય છે કે જેટલો થોડો સ્થિતિનો કર્મ અંધારો તેટલો જલ્દી ફળ દેવાને તૈયાર થઈ જશે, અને એજ કારણથી આ ભવમાં બાંધેલા કર્મ જીવને આ ભવમાં ઉદય આવે છે.

પ્રશ્ન—બાંધેલા કર્મનું તેવું જ ફળ મળે છે અગર તેમાં કંઈ પરિવર્તન પણ થાય છે?.

ઉત્તર—જીવોના પરિણામોના નિમિત્તથી ફલોપભોગમાં પરિવર્તન પણ થઈ જાય છે, આ પરિવર્તનને—ઉત્કર્ષણ, અપકર્ષણ, સંક્રમણ, અને ઉદીરણા કહે છે. બાંધેલા કર્મોની સ્થિતિ અગર તેના અનુભાગમાં જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી જે વૃદ્ધિ થાય છે તેને ઉત્કર્ષણ કહે છે. પહેલાં બાંધેલા કર્મોની સ્થિતિ અને અનુભાગમાં જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી જે ઘટતી થાય તેને અપકર્ષણ કહે છે. જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી પાપનો પુણ્યમાં, અને પુણ્યનો પાપમાં જે પરિવર્તન થાય છે, તેનું નામ સંક્રમણ છે. કોઈ કર્મને કોઈ નિમિત્તના કારણથી પોતાની ઠીક સ્થિતિના પહેલાં ઉદયમાં લાવીને જે ખપાવી નાંખે છે તેનું નામ ઉદીરણા છે.



इन कर्मों की उत्तर प्रकृतियां कितनी हैं? और उनका क्या स्वरूप है? तथा देशघाति और सर्वघाति, पुण्यरूप और पापरूप प्रकृतियां कितनी और कौन २ हैं? तथा देशघाति प्रकृतियों में सर्वघाति स्पर्द्धक कितने हैं? इत्यादि समस्त बातोंका विचार शास्त्रों में अच्छी तरह किया गया है। इस प्रकार कर्मों का संक्षेप में स्वरूप समझ कर यह प्रकट किया है कि इसी कर्म के निमित्त से आत्मा इस संसार में भटकता और अनेक दुःखों को सहन करता रहता है। कर्म आत्मा को संसार में भ्रमाता है। आत्मा भी स्वयं इनका निमित्त पाकर संसार में भ्रमता रहता है। कर्मों से दुःखी होनेवाले जीव ही संसारी हैं। वे सदा इस संसार में इसी की वजह से भ्रमण किया करते हैं। इस के इस परिभ्रमण को देख कर ज्ञानीजन इसे संबोधन करते हुए कहते हैं कि—

“ आघ्रातं मरणेन जन्म जरया विद्युच्चलं यौवनं,  
सन्तोषो धनलिप्सया शमसुखं भोगाशया देहिनाम् ।  
लोकैर्मत्सरिभिर्गुणा वनभुवो व्यालैर्नृपा दुर्जनैः—  
रस्थैर्येण विभूतिरप्यपहृता ग्रस्तं न किं केन वा ?” ॥१॥

આ કર્મોની ઉત્તર પ્રકૃતિઓ કેટલી છે? અને તેનું શું સ્વરૂપ છે? તથા દેશ-  
ઘાતિ અને સર્વઘાતિ પુણ્યરૂપ અને પાપરૂપ પ્રકૃતિઓ કેટલી અને કઈ કઈ છે?  
તથા દેશઘાતિ પ્રકૃતિઓમાં સર્વઘાતિસ્પર્દ્ધક કેટલાં છે? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાતોનો  
વિચાર શાસ્ત્રોમાં સારી રીતે કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકાર કર્મોના સંક્ષેપમાં  
સ્વરૂપ સમજીને એવું પ્રગટ કરેલ છે કે આ કર્મના નિમિત્તથી આત્મા આ  
સંસારમાં ભટકતો અને અનેક દુઃખોને સહન કરતો રહે છે. કર્મ આત્માને  
સંસારમાં ભ્રમાવે છે. આત્મા પણ સ્વયં તેના નિમિત્ત બનીને સંસારમાં ભ્રમતો  
રહે છે. કર્મથી દુઃખી થવાવાળા એવ સંસારી છે. તે સદા આ સંસારમાં એજ  
કારણથી ભ્રમણ કર્યા કરે છે. તેના આ પરિભ્રમણને દેખીને જ્ઞાની જન તેને  
સંબોધન કરીને કહે છે કે:—

“ આઘ્રાતં મરણેન જન્મ જરયા વિદ્યુચ્ચલં યૌવનં,  
સન્તોષો ધનલિપ્સયા શમસુખં ભોગાશયા દેહિનામ્ ।  
લોકૈર્મત્સરિભિર્ગુણા વનભુવો વ્યાલૈર્નૃપા દુર્જનૈઃ—  
રસ્થૈર્યેણ વિભૂતિરપ્યપહૃતા ગ્રસ્તં ન કિં કેન વા ?” ॥૧॥



હે સંસાર કે જીવોં ! કહો દુનિયામેં એસી કૌનસી વસ્તુ હૈ જો નિર્ભય હો । દેખો-મૃત્યુ ને જન્મકો, બુઢાપે ને વિજલી કે સમાન ચંચલ યુવાવસ્થા કો, ધન કી તૃષ્ણા ને સંતોષ કો, ભોગોં કી આશા ને માનસિક શાંતિ કો, મત્સર-ભાવવાલે દુર્જનોં ને ગુણોં કો, સર્પ ઓર હિંસકોં ને જંગલી જાનવરોં કો, દુષ્ટોં ને રાજાઓં કો ઓર અસ્થિરતા ને ऐश्वर्य કો ભયભીત કર રખા હૈ । એક કો એકા ભય લગા હુઆ હૈ । એકસે એક પ્રસિત હૈ, ફિર હસમેં શાંતિ કી ભાવના રખના માનોં કૂપ કે કિનારે પર બેઠ કર નિર્ભયતાકે સાથ ઝંઘના જૈસા હૈ । હસી લિયે તો જ્ઞાની પદ પદ પર સંબોધિત કર કહતે રહતે હૈં કિ-અરે ભવ્ય !

“તત્ત્વં ચિન્તય સતતં ચિત્તે, પરિહર ચિન્તાં નશ્વરચિત્તે”

સદા તું સારાસાર કા વિચાર કરતા રહ । ક્યોં નાશવાન ધનાદિક કી ચિન્તા સે વ્યર્થ હી અપને કો વ્યાકુલ કિયા કરતા હૈ?, કયા તુજે પતા નહીં કિ જિસ પ્રકાર માંસકે ઉપર ગીધ મંડરાયા-ધૂમા-કરતે હૈં ડસી પ્રકાર તુજે खानે કે લિયે યહ કાલ તેરે શિર પર મંડરા-ધૂમ-રહા હૈ । લોગોં કો તૂ મરતે હુએ નિત્ય દેખતા હૈ, પ્રત્યેક દિવસ વૃદ્ધોં કો અસહ્ય કષ્ટ કી યાતનાઓં સે પીડિત નિહારતા હૈ ઓર સંસાર કો મી

હે સંસારી જીવો ! કહેા દુનિયામાં એવી કઈ વસ્તુ છે કે જે નિર્ભય છે. દેખો મૃત્યુને જન્મને, ઘડપણુને વિજળી સમાન ચંચળ યુવાવસ્થાને, ધનની તૃષ્ણાને સંતોષને, ભોગની આશાને માનસિક શાંતિને, મત્સરભાવવાળા દુર્જનોને ગુણોને, સર્પ અને હિંસકોને જંગલી જનાવરોને, દુષ્ટોને રાજાઓને, અને અસ્થિરતાને ऐश्वर્યને મહાભય છે. એકને એકને ભય લાગેલો છે. એકથી એક પ્રસિત છે, પછી તેમાં શાંતિની ભાવના રાખવી કુવાના કિનારા ઉપર બેસીને નિર્ભયતાની સાથે ઊંઘ લેવા બરાબર છે. માટે તો જ્ઞાની પદે પદે સંબોધિત કરી કરીને કહેતાં રહે છે કે અરે ભવ્ય !

“તત્ત્વં ચિન્તય સતતં ચિત્તે, પરિહર ચિન્તાં નશ્વરચિત્તે”

સદા તું સારાસારને વિચાર કરતો રહે, કારણ કે નાશ થનારા ધનાદિકની ચિન્તાથી વ્યર્થ પોતાની જાતને વ્યાકુલ બનાવીશ નહિ. તું તેને ખબર નથી કે જેવી રીતે માંસ ઉપર ગીધ અવારનવાર ધૂમ્કા કરે છે તે પ્રકારે તેને ખાવા માટે કાલ તારા શિર ઉપર ધૂમી રહ્યો છે. લોકોને મરતાં તું નિત્ય જુવે છે. પ્રત્યેક દિવસ વૃદ્ધોને અસહ્ય કષ્ટની યાતનાઓથી પીડિત ભાળે છે, અને સંસારીજીવોને પણ તરેહ તરેહના ભયોથી ઘેરાયેલાં અને નાના પ્રકારના સંકટોને સહન કરતાં

तरह २ के भयों से घिरा हुआ एवं नाना प्रकार के संकटों को झेलता हुआ तू स्वयं अपनी आंखों से देखता है, फिर भी तू विषय रूप चारे के लोभ से ममता के कांटे में फँस कर अपना नाश कर रहा है। मछली और बन्दर की तरह बन्धन में फँसता हुआ भी वहाँ से नहीं निकलना चाहता। क्या तुझे नहीं मालूम कि तेरी भी एक दिन यही दशा होने-वाली है, अतः यही अवसर कल्याण करने का है। कहा भी है—

“यावत्स्वस्थमिदं कलेवरगृहं यावच्च दूरे जरा,  
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः ।  
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्यः प्रयत्नो महान्,  
प्रोदीप्ते भवने तु कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ?” ॥ १ ॥

हे भव्य ! जब तक तेरा यह शरीर ठीक हालत में है, इसमें कोई भी रोग ने निवास नहीं किया है, जब तक बुढ़ापा दूर है, जब तक इन्द्रियों की शक्ति बनी हुई है, जब तक आयु के दिन बांकी हैं, तब तक तू आत्म-कल्याण करने की चेष्टा अच्छी तरह करता रह। घर जलने पर कूप खोदने से क्या लाभ ? ॥ १ ॥

इन पूर्वोक्त बातों को ध्यानमें रखते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘एवं जाणिस्तु’ इत्यादि। ‘हे पण्डित !’ इस शब्द के अर्थ का टीकाकार—

तुं स्वयं पोतानी आंખોથી દેખે છે, છતાં તું વિષયના લોભથી મમતાના કાંટામાં ફસી પોતાનો નાશ કરી રહ્યો છે. માછલી અને વાંદરાની માફક તું બંધનમાં ફસેલો પણ ત્યાંથી બહાર નીકળવા ચાહતો નથી. શું તને ખબર નથી કે તારી પણ એક દિવસ આ દશા થવાની છે. માટે એજ અવસર કલ્યાણ કરવાનો છે. કહ્યું પણ છે—

“યાવત્સ્વસ્થમિદં કલેવરગૃહં યાવચ્ચ દૂરે જરા,  
યાવચ્છેન્દ્રિયશક્તિરપ્રતિહતા યાવત્ક્ષયો નાયુષઃ ।  
આત્મશ્રેયસિ તાવદેવ વિદુષા કાર્યઃ પ્રયત્નો મહાન્,  
પ્રોદીપ્તે ભવને ચ કૂપખનનં પ્રત્યુદ્યમઃ કીદૃશઃ ?” ॥ ૧ ॥

હે ભવ્ય ! જ્યાં સુધી આ તારું સરીર સારી હાલતમાં છે, તેમાં કોઈ પણ રોગે નિવાસ નથી કર્યો, જ્યાં સુધી ઘડપણ દૂર છે, જ્યાં સુધી ઇન્દ્રિયોની શક્તિ બની રહી છે, જ્યાં સુધી આયુના દિવસો બાકી છે, ત્યાં સુધી તું આત્મ-કલ્યાણ કરવાની ચેષ્ટા સારી રીતે કરતો રહે. ઘર બળવા લાગે ત્યારે કુવો ખોદવાનો શું અર્થ ? ॥ ૧ ॥

આ પૂર્વોક્ત વાતોને ધ્યાનમાં રાખીને સૂત્રકાર કહે છે—“एवं जाणिस्तु” इत्यादि. ‘हे पंडित !’ આ શબ્દના અર્થનું ટીકાકાર—હે મેઘાવી !, હે સર્વવિરતિસંપન્ન !,



હે મેધાવી ! હે સર્વવિરતિસંપન્ન ! હે પરમાર્થજ્ઞ ! इन तीन पदों से विवेचन करते हैं। सार और असारतत्त्व का विवेचन करनेवाली बुद्धि का नाम मेधा-प्रज्ञा है। इसके बलपर ही प्राणी 'उपादेय क्या वस्तु है ? हेय क्या है ?' इस बात का विचार कर सकता है। इस पवित्र विचारधारा से उसकी आत्मा में भेदविज्ञान जागृत होता है। इससे वह यह भली भांति जान लेता है कि "एगो हं नत्थि मे कोई" "मैं स्वतंत्र एक हूं, मेरा इस संसार में कोई नहीं है। इन पर-पदार्थों का केवल मेरे साथ संयोग संबंध है, तादात्म्य संबंधवाले ज्ञानादिगुण मेरी आत्मा के साथ सदा रहनेवाले हैं। इन संयोगी पदार्थों का नियम से वियोग होगा, जिनका तादात्म्य संबंध है वे तो इस आत्मा से त्रिकाल में भी दूर नहीं हो सकते। जो अपना निज गुण है वही हमें उपादेय है, बाकी हेय हैं" इस प्रकार की विशुद्ध भावना से उसकी आत्मा में उन पदार्थों से वैराग्यवृत्ति उत्पन्न होती है, इस वैराग्यवृत्ति से आत्मा में कोई अपूर्व वीर्योल्लास पैदा होता है, इसकी वजह से आत्मा से अनंतानुबंधी चोकड़ी का और दर्शनमोहनीय की प्रकृतियों का क्षय, क्षयोपशम या उपशम होता है। इसी परिस्थिति में इसे उपशम क्षयोपशम या क्षायिक समकित पैदा हो जाता है। अभी आत्मा में चारित्रमोहनीय कर्म की सत्ता मौजूद है,

હે પરમાર્થજ્ઞ !, આ ત્રણ પદોથી વિવેચન કરે છે-સાર અને અસાર તત્ત્વનું વિવેચન કરવાવાળી બુદ્ધિનું નામ મેધા-પ્રજ્ઞા છે. તેના બળ ઉપર હે પ્રાણી 'ઉપાદેય શું વસ્તુ છે. હેય શું છે' આ વાતનો વિચાર કરી શકે છે. આવી પવિત્ર વિચારધારાથી તેના આત્મામાં ભેદવિજ્ઞાન જાગૃત થાય છે, તેથી તે આ સારી રીતે જાણી લે છે કે-"એગો હં નત્થિ મે કોઈ" "હું એકલો છું. માંડે આ સંસારમાં કોઈ નથી. આ પર પદાર્થોનો કેવલ મારા આત્માની સાથે સંયોગ સંબંધ છે. તાદાત્મ્ય સંબંધવાળા જ્ઞાનાદિગુણ મારી આત્માની સાથે સદા રહેવાવાળા છે. આ સંયોગી પદાર્થોનું નિયમથી વિયોગ થશે, જેમ તાદાત્મ્ય સંબંધ છે તેથી તે આ આત્માથી ત્રિકાળમાં પણ દૂર થઈ શકતા નથી. જે પોતાનો નિજગુણ છે તે અમને ઉપાદેય છે, બાકી હેય છે" આવા પ્રકારની વિશુદ્ધ ભાવનાથી તેના આત્મામાં તે પદાર્થોથી વૈરાગ્યવૃત્તિ ઉત્પન્ન થાય છે. તે વૈરાગ્ય વૃત્તિથી આત્મામાં કોઈ અપૂર્વ વીર્યોલ્લાસ પેદા થાય છે. તેની મારફતે આત્માથી અનંતાનુબંધી ચોકડીનો અને દર્શનમોહનીયની પ્રકૃતિઓનો ક્ષય, ક્ષયોપશમ, અગર ઉપશમ થાય છે. આવી પરિસ્થિતિમાં તેને ઉપશમ, ક્ષયોપશમ, અને ક્ષાયિક સમ-કિત પેદા થાય છે. હજી આત્મામાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની સત્તા મોજૂદ છે,



इससे इसे देशविरति या सर्वविरति की प्राप्ति नहीं हुई है, परन्तु समकित की प्राप्ति होने के बाद ज्यों ही यह आगे बढ़नेका प्रयास करता है त्यों ही इसको या तो देशविरति होती है या सर्वविरति। देशविरति से मुक्ति नहीं, अतः जब यह अपने पुरुषार्थ की दिशाको आगे बढ़ाता है तब सर्वविरति के लाभ से यह अपने को पवित्र करता है और वास्तविक तप संयम का आराधक बन जाता है, अतएव परमार्थज्ञ-परम=उत्कृष्ट जो अर्थ=आत्मा का स्वरूप, उसका ज्ञ=ज्ञाता हो जाता है। देशविरति में आत्मा प्राणातिपातादिक पांच आश्रवोंका एक देशसे त्यागी होता है और सर्व विरतिमें उनका सर्व प्रकार से त्याग हो जाता है। वहां समस्त जीवों पर समताभाव रहता है। आत्माका निजस्वरूप जो ज्ञाता-द्रष्टापना है वह इस तपसंयमकी अवस्था में प्रकट हो जाता है।

सूत्रमें—“दुक्खं पत्तेयं सायं” जो पद है वह इस बातकी पुष्टि करता है—यह दुःख और सुख, पाप और पुण्य से होते हैं, अतः “संसार के समस्त प्राणियों को रोगादिक वेदना आदि के समय अपने द्वारा किये गये कर्मका विपाक अवश्य भोगना पड़ता है” ऐसा समझकर हे भव्य ! जब तक अपने शरीरमें रोगादिकों का उदय नहीं होता, और जब तक सचेष्टता बनी हुई है, तथा जब तक स्वजन संबंधी अपने से

તેનાથી તેને દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિ પણ પ્રાપ્ત થયેલ નથી. પરંતુ સમકિતની પ્રાપ્તિ થયા બાદ જ્યારે તે આગળ વધવાનો પ્રયાસ કરે છે ત્યારે તેને દેશવિરતિ થાય છે, અથવા સર્વવિરતિ. દેશવિરતિથી મુક્તિ નહિ માટે જ્યારે એ પોતાના પુરુષાર્થની દિશાને આગળ વધારે છે, ત્યારે સર્વવિરતિના લાભથી તે પોતાને પવિત્ર કરે છે, અને વાસ્તવિક તપ સંયમનો આરાધક બની જાય છે, એટલે પરમાર્થજ્ઞ-પરમ=ઉત્કૃષ્ટ જે અર્થ=આત્માનું સ્વરૂપ તેનો જ્ઞ=જ્ઞાતા થાય છે. દેશવિરતિમાં આત્મા પ્રાણાતિ-પાતાદિક પાંચ આશ્રવોનો એક દેશથી ત્યાગી થાય છે અને સર્વવિરતિમાં તેનો સર્વ પ્રકારથી ત્યાગ થઈ જાય છે. ત્યાં સમસ્ત જીવો ઉપર સમતાભાવ રહે છે. આત્માનું નિજ સ્વરૂપ જે જ્ઞાતા-દ્રષ્ટાપન છે તે આ તપ સંયમની અવસ્થામાં પ્રગટ થઈ જાય છે.

સૂત્રમાં “દુક્ખં પત્તેયં સાયં” જે પદ છે તે આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે—તે દુઃખ અને સુખ પાપ અને પુણ્યથી થાય છે, માટે “સંસારના સમસ્ત પ્રાણીઓને રોગાદિક વેદના આદિના સમયે પોતાનાથી કરેલા કર્મનો વિપાક અવશ્ય ભોગવવો પડે છે.” એવું સમજીને હે ભવ્ય ! જ્યાં સુધી પોતાના શરીરમાં રોગાદિકનો ઉદય નથી થતો, અને જ્યાં સુધી સચેષ્ટતા બનેલ છે, અને જ્યાં સુધી

વિરક્ત નહીં હોતે તબ તક આત્મકલ્યાણ કરને મેં અગ્રસર હો જા, ઓર  
ઇસ સંયમારાધનરૂપ પવિત્ર કાર્યકો ન છોડ । ક્યોં કિ-

“ હાથ પાંચમેં જબ તક બલ હૈ, આંખોં મેં હૈ તેજ પ્રકાશ,  
શ્રવણશક્તિ હૈ, બુદ્ધિ ઉપસ્થિત, રોગાદિક કા હુઆ ન ત્રાસ ।  
ધર્મ આચરણ કરલે પ્રાણી, ધરકર મન મેં ઉત્તમ સાજ,  
કો જાને કલ રહા ન કલ તો, ક્યોં જાને દેતે હો આજ ॥ ૧ ॥ ”

“ અનભિક્રાન્તં ચ વયઃ સમ્પ્રેક્ષ્ય ”

સમય સમય આયુ ઘટતી હૈ, ક્ષણ ક્ષણ કાયા ક્ષીણ હોતી હૈ । જિસ  
પ્રકાર મિટ્ટીકા ઢેલા ખીજતે હી ગલ જાતા હૈ, ડસીં તરહ દેખતે ૨ યહ  
શરીર ગલ જાતા હૈ, ઇસલિયે તું અપને આત્મ-કલ્યાણ કી તરફ પ્રવૃત્તિ  
કર । ક્યોં કિ વય કે વ્યતીત હોને પર પરિવાદ, પોષણ ઓર પરિહાર  
આદિક દોષ ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ । ઇસ લિયે ડસ હાલત મેં સંયમકા પાલન  
અશક્ય હોતા હૈ । ઇસ લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ-જબ તક સંયમ ધારણ  
કરને યોગ્ય અવસ્થા વ્યતીત નહીં હુઈ હૈ તબ તક ધર્માચરણ રૂપ અવસર  
કો હાથસે મત જાને દો, અર્થાત્ યહી અવસ્થા હૈ જિસમેં પ્રાણી ધર્માચરણ  
કર સકતા હૈ । સૂત્ર મેં ‘ચ’ શબ્દ અર્થાન્તર કા બોધક હૈ ઇસ સે યહ

સ્વજન સંબંધી પોતાનાથી વિરક્ત નથી થતાં ત્યાં સુધી આત્મકલ્યાણ કરવામાં  
અગ્રસર બની બા, અને આ સંયમારાધન રૂપ પવિત્ર કાર્યને ન છોડ, કારણ કે-

“ હાથ પાંચમેં જબ તક બલ હૈ, આંખોં મેં હૈ તેજપ્રકાશ,  
શ્રવણશક્તિ હૈ, બુદ્ધિ ઉપસ્થિત, રોગાદિકકા હુઆ ન ત્રાસ ।  
ધર્મ આચરણ કર લે પ્રાણી, ધરકર મનમેં ઉત્તમ સાજ,  
કો જાને કલ રહા ન કલ તો, ક્યોં જાને દેતે હો આજ ॥ ૧ ॥ ”

“ અનભિક્રાન્તં ચ વયઃ સમ્પ્રેક્ષ્ય ”

સમય સમય આયુ ઘટે છે, ક્ષણે ક્ષણે કાયા ક્ષીણ થાય છે. જેમ માટીનું  
ઢેકું પાણી લાગતાં જ ગળી બાય છે તેમ દેખતાં દેખતાંમાં આ શરીર ગળી  
બાય છે, માટે તું પોતાના આત્મકલ્યાણ તરફ પ્રવૃત્તિ કર. કારણ કે વયના  
વ્યતીત થવાથી પરિવાદ, પોષણ અને પરિહાર આદિક દોષ ઉત્પન્ન થાય છે,  
તેથી તેવી હાલતમાં સંયમનું પાલન થવું અશક્ય છે, માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-  
જ્યાં સુધી સંયમ ધારણ કરવાની યોગ્ય અવસ્થા વ્યતીત થઈ નથી ત્યાં સુધી  
ધર્માચરણરૂપ અવસરને હાથથી જવા દો નહિ. અર્થાત્ આજ અવસ્થા છે  
જેમાં ધર્માચરણ પ્રાણી કરી શકે છે. સૂત્રમાં ‘ચ’ શબ્દ અર્થાન્તરનો બોધક છે



યદ્વા-અવસીદતો વિનેયસ્યોત્સાહવર્ધનપરમિદં વાક્યમ્-હે પण्डित ! सम्प्रति त्वमनतिक्रान्तवया असि, अथ च परिवादादिदोषत्रयरहितोऽसि तावदेव संयमाय यतस्वेत्यर्थः, अत्रेदृशक्षणाभिज्ञत्वेन पण्डित ! इति सम्बोधनं सङ्गच्छते ।

પ્રતીત હોતા હૈ કિ પૂર્વોક્ત પરિવાદાદિ ૩ દોષોં મેં સે કિસી એક મી દોષ સે જો અસ્પૃષ્ટ-રહિત હૈ ઓર અવસ્થા મી ધર્માચરણ કરને કી જિસકી નિકલ ગઈ હૈ, પરન્તુ યદિ વહ દૃઢસંહનન વાલા હૈ તો મી પ્રવ્રજ્યા-ભાગવતી દીક્ષા કે યોગ્ય હૈ । જિસ પ્રકાર ભગવાન્ કે માતા પિતાને-દેવાનન્દા ઓર ઋષભદત્તને અપની વૃદ્ધાવસ્થામેં દીક્ષા ધારણ કી થી ।

અથવા-“અનભિક્રાન્તં ચ खलु वयः संप्रेक्ष्य क्षणं जानीहि पण्डित !”  
યહ વાક્ય સંયમ મેં સીદાતે હુણ શિષ્યજનોં મેં જો નિરુત્સાહિત હો રહે હૈં ઉનકા ઉત્સાહ બઢાને કે લિયે કહા ગયા હૈ । ઉનકા ઉત્સાહ બઢાતે હુણ વે કહ રહે હૈં કિ-હે પण्डित ! इस समय तुम प्रव्रज्या ग्रहण करने की अवस्था वाले हो, तथा परिवादादिक दोषत्रय रहित भी हो, सो तुम जब तक इस अवस्था में हो तब तक संयम ग्रहण के लिये प्रयत्नशील रहो । इसी अभिप्राय से सूत्रकार ने ‘पण्डित !’ इस संबोधन से उन्हें संबोधित किया है, कारण कि शिष्यजन स्वयं इस प्रकार की अपनी अवस्था को समझ रहे हैं, अतः यह संबोधन उनके लिये संगत बैठता है ।

તેથી એ પ્રતીત થાય છે કે-પૂર્વોક્ત પરિવાદાદિ ત્રણ દોષોમાંથી કોઈ એક પણ દોષથી જે અસ્પૃષ્ટ-રહિત છે અને અવસ્થા પણ ધર્માચરણ કરવાની જેની વીતી ગઈ છે. પરંતુ કહાય તે દૃઢ સંહનનવાલા છે તો પણ પ્રવ્રજ્યા-ભાગવતી દીક્ષાને યોગ્ય છે. જેમ ભગવાનના માતાપિતાએ દેવાનંદા અને ઋષભદત્તે પોતાની વૃદ્ધાવસ્થામાં દીક્ષા ધારણ કરી હતી.

અથવા-“અનભિક્રાન્તં ચ खलु वयः संप्रेक्ष्य क्षणं जानीहि पण्डित !”  
આ વાક્ય, સંયમમાં કંઈ પામતાં શિષ્યજનોમાં જે નિરુત્સાહિત અનેલ છે, તેનો ઉત્સાહ વધારવા માટે કહેવામાં આવેલ છે. તેનો ઉત્સાહ વધારીને તેઓ કહે છે કે-હે પંડિત ! આ વખત તમે પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કરવાની અવસ્થાવાળા છો, તથા પરિવાદાદિક દોષત્રય વગર પણ છો જેથી તમે ન્યાં સુધી આ અવસ્થામાં છો ત્યાં સુધી સંયમ ગ્રહણ કરવા માટે પ્રયત્નશીલ રહો, આ અભિપ્રાયથી સૂત્રકારે ‘પંડિત’ આ સંબોધનથી તેને સંબોધિત કરેલ છે, કારણ કે-શિષ્યજન સ્વયં આ પ્રકારની પોતાની અવસ્થાને સમજી શકે છે માટે આ સંબોધન તેને માટે સંગત એસે છે.



અથવા—હે અનભિક્રાન્તયૌવન ! શિષ્ય ! ક્ષણં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવભેદેન ચતુર્વિધં જાનીહિ । તત્ર દ્રવ્યક્ષણશ્ચ સ્થાવરજઙ્ગમયોર્જઙ્ગમત્વં, તત્રાપિ દ્વીન્દ્રિયાદિપરિહારેણ પञ્ચેન્દ્રિયત્વં, તત્રાપિ સઙ્ગિત્વં, તત્રાપિ મનુષ્યત્વં, તેષ્વપિ વિશિષ્ટજાતિ-શોભનકુલોત્પત્તિદીર્ઘાયુષ્ટ્વનૈરુજ્યાદિકમુપલભ્ય ચારિત્રપ્રાપ્તિરૂપોઽવસરો લબ્ધઃ । યતો દેવનારકભવે સમ્યક્ત્વં જ્ઞાનાવબોધરૂપશ્રુતસામાયિકોપલબ્ધિશ્ચ ભવતિ, તિર્યક્ષુ કસ્યચિદ્દેશવિરતિરૂપજાયતે, સર્વવિરતિરૂપં ચારિત્રં મનુષ્યજન્મન્યેવ લભતે, સ એવ દ્રવ્યક્ષણઃ । સામાયિકશ્ચતુર્વિધઃ-સમ્યક્ત્વ-શ્રુત-દેશવિરતિ-સર્વવિરતિ-રૂપો બોધ્યઃ ।

અથવા—શિષ્ય કે લિયે સૂત્રકાર ફિર કહતે હૈં કિ—હે અનભિક્રાન્ત-યૌવન શિષ્ય ! દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કે ભેદસે ક્ષણ ( અવસર ) ચાર પ્રકાર કા હૈ ।

(૧) સર્વવિરતિરૂપ અવસ્થા જીવ કો જિસ ક્ષણ મેં પ્રાપ્ત હોતી હૈં ઉસકા નામ દ્રવ્યક્ષણ હૈં, ક્યોં કિ યહ જીવ અવ્યવહાર રાશિસે વ્યવહાર રાશિ મેં આતા હૈં વહાં પર પૃથિવીકાયિક આદિ એકેન્દ્રિય જીવોં મેં જન્મ ગ્રહણ કરતા હૈં । ફિર વહ કર્મ સ્થિતિકો ભોગતા હુઆ ક્રમ સે દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈં । ઇસ પ્રકાર સ્થાવર ઓર ત્રસપર્યાય મેં । ત્રસપર્યાય કી પ્રાપ્તિ દ્રવ્યક્ષણ હૈં । ઇસમેં બી દ્વીન્દ્રિયાદિક પર્યાયોં કે સિવાય પંચેન્દ્રિયપર્યાય કી પ્રાપ્તિ; ઇસમેં બી સંજ્ઞિપન કી પ્રાપ્તિ; ઉસમેં બી મનુષ્યપર્યાય કી પ્રાપ્તિ; વહાં બી વિશિષ્ટ જાતિ-ઉચ્ચકુલ મેં જન્મ, દીર્ઘાયુ કા પાના, નિરોગ શરીર કી પ્રાપ્તિ હોના, ઇસ મેં બી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ

અથવા શિષ્ય માટે સૂત્રકાર ફરીવાર કહે છે કે—હે અનભિક્રાન્તયૌવન શિષ્ય ! દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ ના ભેદથી ક્ષણ ( અવસર ) ચાર પ્રકાર છે.

(૧) સર્વવિરતિરૂપ અવસ્થા જીવને જે ક્ષણે પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ દ્રવ્ય ક્ષણ છે કારણ કે—આ જીવ અવ્યવહાર રાશિથી વ્યવહાર રાશિમાં આવે છે ત્યાં પૃથિવીકાયિક આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં જન્મ ગ્રહણ કરે છે, પછી તે કર્મસ્થિતિને ભોગવતાં કર્મથી બેધન્દ્રિય જીવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે, આ પ્રકાર સ્થાવર અને ત્રસ પર્યાયની પ્રાપ્તિ દ્રવ્યક્ષણ છે. તેમાં પણ બેધન્દ્રિયાદિક પર્યાયો સિવાય પંચેન્દ્રિય પર્યાયની પ્રાપ્તિ, તેમાં પણ સંજ્ઞિપણની પ્રાપ્તિ, તેમાં પણ મનુષ્યપર્યાયની પ્રાપ્તિ, ત્યાં પણ વિશિષ્ટ જાતિ-ઉચ્ચ કુળ-માં જન્મ, દીર્ઘાયુ ભોગવવું, નિરોગ શરીર પ્રાપ્ત થવું, તેમાં પણ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થવી, ઇત્યાદિ. એ બધું દ્રવ્ય

હોના; इत्यादि, ये सब द्रव्यक्षण हैं। ये सब बातें तुझे प्राप्त हुई हैं, क्योंकि- देवगति और नरकगति में तत्त्वश्रद्धानरूप सम्यक्त्वसामायिक, और तत्त्वावबोधरूप श्रुतसामायिक की उपलब्धि जीवको प्राप्त होती है, तिर्यञ्चगति में किसी २ जीव को देशविरति का लाभ होता है, सर्वविरति रूप चारित्र की प्राप्ति तो इस जीवको मनुष्यजन्म में ही होती है। इसी लिये यहां पर वही द्रव्यक्षण है। सामायिक ४ प्रकार का है-१ सम्यक्त्व, २ श्रुत, ३ देशविरति और ४ सर्वविरति।

यहां पर द्रव्यक्षण का विचार किया है, सर्वविरतिरूप चारित्र की उत्पत्ति अथवा प्राप्ति की मुख्यता से मनुष्य पर्याय को ही प्रधानतया द्रव्यक्षण कहा है, क्योंकि सर्वविरतिरूप चारित्र के सिवाय आत्मा दूसरी किसी अवस्था से कर्मोंका क्षय कर मोक्ष प्राप्त नहीं करता। मोक्षप्राप्त करना यह इस की स्वाभाविक अवस्था है। जिस प्रकार तुंबड़ी के ऊपर मिट्टीका लेप लगाने से वह पानी के नीचे बैठ जाती है, ठीक उसी प्रकार यह जीव भी कर्ममल से लिस होने के कारण संसाररूप समुद्र के अन्दर बैठ जाता है। जैसे उस तुंबड़ीका लेप ज्यों २ पानी से गल कर हटता जाता है त्यों २ वह तुंबड़ी पानी के ऊपर आती जाती है, बिल्कुल निर्लेप होने

ક્ષણુ છે. આ બધી વાતો તને પ્રાપ્ત થયેલ છે, કારણ કે દેવગતિ અને નરકગતિમાં તત્ત્વશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વસામાયિક અને તત્ત્વાવબોધરૂપ શ્રુતસામાયિકની ઉપલબ્ધિ જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. તિર્યંચગતિમાં કોઈ કોઈ જીવને દેશવિરતિનો લાભ થાય છે. સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ તો આ જીવને મનુષ્ય જન્મમાં જ થાય છે માટે આ ઠેકાણે તેજ દ્રવ્યક્ષણુ છે. સામાયિક ચાર પ્રકારનું છે. ૧ સમ્યક્ત્વ, ૨ શ્રુત, ૩ દેશવિરતિ અને ૪ સર્વવિરતિ.

અહીં દ્રવ્યક્ષણનો વિચાર કર્યો છે. સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની ઉત્પત્તિ અથવા પ્રાપ્તિની મુખ્યતાથી મનુષ્યપર્યાયને જ પ્રધાનતયા દ્રવ્યક્ષણ કહ્યું છે, કારણ કે સર્વ વિરતિરૂપ ચારિત્ર સિવાય આત્મા બીજી કોઈ અવસ્થાથી કર્મોનો ક્ષય કરી મોક્ષ પ્રાપ્ત કરતા નથી. મોક્ષપ્રાપ્ત કરવો તે તેની સ્વાભાવિક અવસ્થા છે. જેમ તુંબડી ઉપર માટીનો લેપ લગાડવાથી તે પાણીની નીચે ખેસી જાય છે, ઠીક તે પ્રકારે આ જીવ પણ કર્મમલથી લિસ હોવાના કારણે સંસારરૂપ સમુદ્રની અંદર ખેસી જાય છે. જેમ જેમ જેવો તે તુંબડી ઉપરનો માટીનો લેપ પાણીથી ગળીને હડી જાય છે તેમ તેમ તે તુંબડી પાણી ઉપર આવે જાય છે. બિલકુલ નિર્લેપ થવાથી તે



પર વહ પાની કે ઉપર તૈરને લગતી હૈ, ઠીક હસી પ્રકાર જ્યોં ૨ કર્મમલકા લેપ હસ જીવાત્મા સે છૂટતા જાતા હૈ ત્યોં ૨ યહ બી અપની શુદ્ધ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત કરતા જાતા હૈ, ઇક દિન યહ બી આતા હૈ જબ યહ કર્મમલ કે લેપ સે સર્વથા નિર્લેપ હો જાતા હૈ । સર્વથા નિર્લેપ હોના હી હસકી શુદ્ધ અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ હૈ । યહ કર્મોં કો નાશ કરને કી દશા, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ સે હી જીવ કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ, ઇન્દ્રિયાદિક પર્યાયોં મેં હસકી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી, ક્યોં કિ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ વિના જ્ઞાન કે વિકાશ કે નહીં હો સકતી, જ્ઞાન કા વિકાશ મનુષ્ય પર્યાય કે સિવાય અન્યત્ર નહીં હોતા । હસીલિયે પ્રધાનતયા હસીકો હી દ્રવ્યક્ષણ કહા હૈ । જ્ઞાનકે વિકાશ કા અભિપ્રાય પાંચ આશ્રવોં કી નિવૃત્તિ સે હૈ । જ્ઞાનસે પાંચ આશ્રવોં કી સર્વથા નિવૃત્તિ હો વહી જ્ઞાન કા વિકાશ હૈ । યદ્યપિ દેવપર્યાય મેં ભવપ્રત્યય અવધિ હોતા હૈ તથાપિ વહાં પર જો સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી યોગ્યતા નહીં હૈ હસકા ખાસ કારણ યહી હૈ । હસ જ્ઞાન સે વહાં પર પાંચ આશ્રવોં કી નિવૃત્તિ નહીં હો સકતી । હસી પ્રકાર નરક મેં બી પાંચ આશ્રવોં કી નિવૃત્તિ કે અભાવ સે દેશવિરતિ ઓર સર્વવિરતિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી ।

પાણી ઉપર તરવા લાગે છે. તે પ્રકારે જેમ જેમ કર્મમલનો લેપ આ જીવાત્માથી છુટી જાય છે તેમ તેમ તે પણ પોતાની શુદ્ધ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરતો રહે છે. એક દિવસ એવો પણ આવે છે કે તે કર્મમલના લેપથી સર્વથા નિર્લેપ થઈ જાય છે. સર્વથા નિર્લેપ થવું તે તેની શુદ્ધ અવસ્થાની પ્રાપ્તિ છે. આ કર્મોનો નાશ કરવાની દશા, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિથી જ જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. એકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોમાં તેની પ્રાપ્તિ જીવને થતી નથી, કારણ કે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ જ્ઞાનના વિકાસ સિવાય થતી નથી. જ્ઞાનનો વિકાસ મનુષ્ય પર્યાય સિવાય અન્યત્ર નથી થતો, માટે પ્રધાનતયા તેને જ દ્રવ્યક્ષણ કહેલ છે. જ્ઞાનના વિકાસનો અભિપ્રાય પાંચ આશ્રવોની નિવૃત્તિથી છે. જ્ઞાનથી પાંચ આશ્રવોની સર્વથા નિવૃત્તિ થાય તે જ્ઞાનનો વિકાસ છે. હવે દેવપર્યાયમાં ભવપ્રત્યય અવધિ હોય છે તથાપિ તે જગ્યાએ જે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની યોગ્યતા નથી તેનું ખાસ કારણ એ છે કે તે જ્ઞાનથી ત્યાં પાંચ આશ્રવોની નિવૃત્તિ થતી નથી. એ પ્રકારે નરકમાં પણ પાંચ આશ્રવોની નિવૃત્તિના અભાવથી દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી.



ક્ષેત્રક્ષણસ્તુ યસ્મિન્ ક્ષેત્રે સર્વવિરતિસ્વરૂપચારિત્રોપલબ્ધિર્જાયતે, તથા હિ-  
અધોલોકગ્રામસંવલિતતિર્યગ્લોક એવ, તત્રાપિ સમયક્ષેત્ર એવ, તત્રાપિ પશ્ચદશકર્મ-  
ભૂમિષ્વેવ, તાસ્વપિ ભરતક્ષેત્રાપેક્ષયા સાર્દ્ધપશ્ચવિંશતિદેશેષ્વેવ ચારિત્રાવાપ્તિર્ભવતિ । સ  
ચાયં ક્ષેત્રરૂપોઽવસરો દુર્લભઃ । યતોઽન્યક્ષેત્રેષુ સમ્યક્ત્વશ્રુતસામાયિકયોરેવોપલબ્ધિઃ,  
કસ્યચિદેશવિરતિસમ્ભવઃ, કિન્તુ ન સર્વવિરતિપ્રાપ્તિર્ભવતિ ।

इदमुक्तं भवति-क्षेत्रम् ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्लोकरूपम् । तत्रोर्ध्वलोके देशविरति-  
सर्वविरतिरूपसामायिकयोः क्षणो नास्ति, अवशिष्टयोः क्षणोऽस्ति । अधोलोके-

जिस क्षेत्र में सर्वविरतिरूप चारित्र की प्राप्ति इस जीव को होती है उसका नाम क्षेत्रक्षण है । अधोलोक-ग्राम-संवलित अर्थात् सलिलावतीविजययुक्त तिर्यग्लोक में ही, वहां पर भी समयक्षेत्र में ही, वहां भी पन्द्रह कर्मभूमियों में ही, वहां पर भी भरतक्षेत्र की अपेक्षा से २५॥ देशों में ही इस जीव को चारित्र की प्राप्ति होती है । यह क्षेत्र रूप अवसर भी दुर्लभ है, क्यों कि अन्यक्षेत्रों में सम्यक्त्वसामायिक और श्रुतसामायिक, इन दो की उपलब्धि, तथा किन्हीं २ को देशविरति रूप चारित्र की उपलब्धि की संभावना है, परन्तु वहां पर जीवों को सर्वविरति का लाभ नहीं होता है ।

ऊर्ध्वलोक, अधोलोक, और तिर्यग्लोक, इस प्रकार क्षेत्र ૩ प्रकार का है । इनमें ऊर्ध्वलोक में देशવિરતિ और સર્વવિરતિ રૂપ સામાયિક ધારણ કરને કા અવસર હી નહીં છે । સમ્યક્ત્વસામાયિક और શ્રુતસામાયિક इन दो की जीव को वहां प्राप्ति हो सकती है । अधोलोक में भी अधो-

જે ક્ષેત્રમાં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ આ જીવને થાય છે તેનું નામ ક્ષેત્રક્ષણ છે. અધોલોકગ્રામસંવલિત અર્થાત્ સલિલાવતીવિજયયુક્ત તિર્યગ્લોકમાં, ત્યાં પણ સમયક્ષેત્રમાં જ, ત્યાં પણ પંદર કર્મભૂમિઓમાં જ, ત્યાં પણ ભરતક્ષેત્રની અપેક્ષાથી સાર્દ્ધપચીસ ( ૨૫ ) દેશોમાં આ જીવને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે. તે ક્ષેત્રરૂપ અવસર પણ દુર્લભ છે. કારણ કે અન્ય ક્ષેત્રોમાં સમ્યક્ત્વસામાયિક અને શ્રુતસામાયિક, આ બંનેની ઉપલબ્ધિ, તથા કેઈ કેઈ ને દેશવિરતિરૂપ ચારિત્રની ઉપલબ્ધિની સંભાવના છે, પરંતુ તે જગ્યાએ જીવોને સર્વવિરતિનો લાભ થતો નથી.

ઉર્ધ્વલોક, અધોલોક અને તિર્યગ્લોક, આ પ્રકારે ક્ષેત્ર ત્રણ પ્રકારના છે. તેમાં ઉર્ધ્વલોકમાં દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક ધારણ કરવાનો અવસર જ નથી. સમ્યક્ત્વસામાયિક અને શ્રુતસામાયિક, આ બેની જીવને ત્યાં પ્રાપ્તિ થઈ

અધોલોકગ્રામં (સલિલાવતીવિજયં) વર્જયિત્વોર્ધ્વલોકવદ્વિજ્ઞેયમ્, અધોલોક-ગ્રામેષુ ચ ચતુર્ણાં સામાયિકાનાં ક્ષણોઽસ્તિ । તિર્યગ્લોકે મનુષ્યક્ષેત્રાદ્વાહિઃ સર્વ-વિરતિં વિહાય ત્રયાણાં સામાયિકાનાં ક્ષણોઽસ્તિ, તેન મનુષ્યક્ષેત્ર એવ ચતુર્વિધ-સામાયિકપ્રાપ્તિરિતિ બોધ્યમ્ ।

કાલક્ષણઃ-કાલરૂપોઽવસરઃ, સ હિ અવસર્પિણ્યાં સુષમદુષ્પમા-દુષ્પમાસુષમા-દુષ્પમા-રૂપેષુ તૃતીય-ચતુર્થ-પञ્ચમાત્મકેષુ ત્રિધ્વરકેષુ, ઉત્સર્પિણ્યાં દુષ્પમાસુષમા-સુષમદુષ્પમારૂપયોસ્તૃતીય-ચતુર્થારકયોશ્ચ સર્વવિરતિરૂપસામાયિકોપલબ્ધિરૂપ-જાયતે । એતચ્ચ નૂતનધર્મપ્રાપ્તિમપેક્ષ્ય કથિતમ્ । પૂર્વપ્રતિપન્નાપેક્ષ્યા સંહરણાવ-સ્થાયાં લોકત્રયે સર્વારકેષુ સર્વવિરતિસામાયિકોપલબ્ધિર્જાયતે ।

લોકગ્રામ (સલિલાવતીવિજય) કો છોડકર ઊર્ધ્વલોક કી તરહ્ હી સમજના ચાહિયે । અર્થાત્ અધોલોક મેં-અધોલોકગ્રામ-સલિલાવતી વિજય મેં ચારોં હી સામાયિક કો પ્રાપ્ત કરને કા અવસર હૈ, પરન્તુ બાકી જગહ સમ્યક્ત્વ ઓર શ્રુત, ઇન દો સામાયિકોં કી પ્રાપ્તિ કા હી અવસર હૈ । તિર્યગ્લોક મેં મનુષ્યક્ષેત્ર સે બાહિર સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક કે અતિ-રિક્ત બાકી ત્રીન સામાયિકોં કી ઉપલબ્ધિ કા અવસર જીવ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ, પરન્તુ ચારોં પ્રકાર કે સામાયિક કી પ્રાપ્તિ તો જીવ કો મનુષ્ય-ક્ષેત્ર-ઢાઈકીપ મેં હી હોતી હૈ ।

જિસકાલ મેં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ ઇસ જીવ કો હોતી હૈ ઉસકા નામ કાલક્ષણ હૈ । કાલ દો પ્રકારકા હૈ-ઉત્સર્પિણીકાલ ઓર અવસર્પિણીકાલ । ઇસમેં ઉત્સર્પિણીકાલ ૬ પ્રકાર કા, ઓર અવસર્પિણી-કાલ ભી ૬ પ્રકારકા હૈ । ઉત્સર્પિણી કે ૬ ભેદ-૧ દુષ્પમાદુષ્પમા,

શકે છે. અધોલોકમાં પણ અધોલોકગ્રામ (સલિલાવતીવિજય) ને છોડીને ઉર્ધ્વ-લોકની માફક જ સમજવું જોઈએ, અર્થાત્ અધોલોકમાં-અધોલોકગ્રામ-સલિલાવતી વિજયમાં ચારે સામાયિકને પ્રાપ્ત કરી લેવાનો અવસર છે, પરંતુ બીજા જગ્યાએ સમ્યક્ત્વ અને શ્રુત એ બે સામાયિકોને પ્રાપ્ત કરવાનો જ અવસર છે, તિર્યગ્લોકમાં મનુષ્યક્ષેત્રથી બહાર સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકના અતિરિક્ત બાકીના ત્રણ સામા-યિકોની ઉપલબ્ધિનો અવસર જીવને પ્રાપ્ત થાય છે, પરંતુ ચારે પ્રકારની સામા-યિકની પ્રાપ્તિ તો જીવને મનુષ્યક્ષેત્ર-ઢાઈકીપમાં જ થાય છે.

બે કાળમાં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ આ જીવને થાય છે તેનું નામ કાલક્ષણ છે. કાલ બે પ્રકારે છે-ઉત્સર્પિણીકાલ અને અવસર્પિણીકાલ, આમાં ઉત્સર્પિણીકાલ છ પ્રકારે, અને અવસર્પિણીકાલ પણ છ પ્રકારે છે, ઉત્સર્પિણીના



ભાવક્ષણસ્તુ દ્વિવિધઃ-કર્મભાવક્ષણો, નોકર્મભાવક્ષણશ્ચ । કર્મભાવક્ષણશ્ચ કર્મ-  
નામુપશમ-ક્ષયોપશમ-ક્ષયા-ન્યતમપ્રાપ્तिરૂપઃ । તત્રોપશમચારિત્રક્ષણ ઉપશમશ્રેણ્યાં  
૨ દુષ્ણમા, ૩ દુષ્ણમ-સુષમા, ૪ સુષમદુષ્ણમા, ૫ સુષમા, ૬ સુષમ-  
સુષમા, એ હૈં । હસી પ્રકાર અવસર્પિણી કે મી-(૧) સુષમસુષમા, (૨)  
સુષમા, (૩) સુષમદુષ્ણમા, (૪) દુષ્ણમસુષમા, (૫) દુષ્ણમા, (૬) દુષ્ણમ-  
દુષ્ણમા, એ ૬ મેદ હૈં । જિસકાલ મેં જીવોં કે જ્ઞાનાદિ શુભભાવોં કી  
વૃદ્ધિ તથા આયુષ્ય અવગાહના આદિ કી ઔર વર્ણ ગન્ધ રસ સ્પર્શ કે  
પર્યાયોં કી વૃદ્ધિ હોતી હૈ વહ ઉત્સર્પિણી હૈ, ઔર જિસ કાલ મેં જીવોં કે  
જ્ઞાનાદિ શુભભાવોં કા હાસ, તથા આયુષ્ય અવગાહના આદિકા ઔર  
વર્ણ ગન્ધ રસ સ્પર્શ કી પર્યાયોં કા હાસ હોતા હૈ વહ અવસર્પિણી હૈ । ઇનમેં  
અવસર્પિણી કે સુષમદુષ્ણમા-ત્રીસરે કાલ મેં, દુષ્ણમસુષમા-ચતુર્થકાલ  
મેં ઔર દુષ્ણમા-પંચમકાલ મેં, તથા ઉત્સર્પિણી કે દુષ્ણમસુષમા-ત્રીસરે  
કાલ મેં ઔર સુષમદુષ્ણમાનામક ચતુર્થકાલ મેં સર્વવિરતિરૂપ સામા-  
યિક કી પ્રાપ્તિ જીવ કો હોતી હૈ । યહ કથન નવીન ધર્મપ્રાપ્તિ કી અપેક્ષા  
સે કહા હૈ । પૂર્વપ્રતિપન્ન કી અપેક્ષાસે સંહરણાવસ્થા મેં લોકત્રય મેં સમ-  
સ્તકાલોં મેં સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક કી ઉપલબ્ધિ જીવ કો હો સકતી હૈ ।

ભાવક્ષણ દો પ્રકાર કા હૈ ૧ કર્મભાવક્ષણ ઔર ૨ નોકર્મભાવક્ષણ ।

૬ લેદ-૧ દુષ્ણમદુષ્ણમા, ૨ દુષ્ણમા, ૩ દુષ્ણમસુષમા, ૪ સુષમદુષ્ણમા, ૫  
સુષમા, ૬ સુષમસુષમા, એ છે. આ પ્રકારે અવસર્પિણીના પણ (૧) સુષમસુષમા,  
(૨) સુષમા (૩) સુષમદુષ્ણમા, (૪) દુષ્ણમસુષમા, ૫ દુષ્ણમા, ૬ દુષ્ણમદુષ્ણમા,  
આ છ લેદ છે. જે કાળમાં જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ ભાવોની વૃદ્ધિ તથા આયુષ્ય  
અવગાહના આદિની અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શના પર્યાયોની વૃદ્ધિ થાય છે તે  
ઉત્સર્પિણી છે, અને જે કાળમાં જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ ભાવોનો હાસ તથા આયુષ્ય  
અવગાહના આદિનો અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શની પર્યાયોનો હાસ થાય છે તે  
અવસર્પિણી છે. તેમાં અવસર્પિણીના સુષમદુષ્ણમા-ત્રીજા કાળમાં દુષ્ણમસુષમા-ચોથા  
કાળમાં અને દુષ્ણમા-પંચમ કાળમાં, તથા ઉત્સર્પિણીના દુષ્ણમસુષમા-ત્રીજા કાળમાં  
અને સુષમદુષ્ણમા નામક ચોથા કાળમાં સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકની પ્રાપ્તિ જીવને  
થાય છે. આ કથન નવીન ધર્મપ્રાપ્તિની અપેક્ષાથી કહ્યું છે. પૂર્વપ્રતિપન્નની  
અપેક્ષાથી સંહરણાવસ્થામાં લોકત્રયમાં સમસ્ત કાળોમાં સર્વવિરતિરૂપસામાયિકની  
ઉપલબ્ધિ જીવને થાય છે.

ભાવક્ષણ એ પ્રકારના છે. ૧ કર્મભાવક્ષણ અને ૨ નોકર્મભાવક્ષણ. આરિત્ર-



ચારિત્રમોહનીય કર્મકા-ક્ષય, ક્ષયોપશમ ઓર ઉપશમ-રૂપ અવસ્થાઓં મેં સે કિસીં ખી અવસ્થારૂપ હોના-સો કર્મભાવક્ષણ હૈ। ઉસમેં ઉપશમ-શ્રેણીં મેં ચારિત્રમોહનીય કર્મકી ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે ઉપશમ હોને પર અન્ત-મુહૂર્તપરિમિત જો ઉપશમચારિત્ર હોતા હૈ વહ ઉપશમચારિત્ર કા ક્ષણ હૈ। ચારિત્રમોહનીય કર્મકી ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય હોને પર અન્ત-મુહૂર્તપરિમિત જો છદ્મસ્થ ઓર યથાખ્યાત ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ તત્સ્વરૂપ ક્ષાયિકચારિત્ર કા ક્ષણ હૈ। ક્ષયોપશમચારિત્રક્ષણ ચારિત્ર મોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતા હૈ। ઉસકા કાલ ઉત્કૃષ્ટ દેશ ઝન ઇક કરોડ પૂર્વકા હૈ।

કર્મભાવક્ષણ કા મતલબ હૈ-ચારિત્ર કે આચારક-(રોકનેવાલા) ચારિત્રમોહનીય કર્મકે ક્ષય, ક્ષયોપશમ, ઓર ઉપશમ કી પ્રાપ્તિકા અવસર। ઉસમેં ચારિત્રમોહનીય કર્મકી અપ્રત્યાખ્યાનાવરણાદિ ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે ઉપશમસે જો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસકા નામ ઉપશમ-ચારિત્ર હૈ। યહ ઉપશમશ્રેણિં મેં હોતા હૈ, ઇસકા કાલ અન્તમુહૂર્ત હૈ। અપ્રત્યાખ્યાનાવરણાદિ ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય સે જીવ કો જો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસકા નામ ક્ષાયિકચારિત્ર હૈ। ઉપશમશ્રેણીં મેં ઉપશમચારિત્ર ઓર ક્ષપકશ્રેણીં મેં ક્ષાયિકચારિત્ર હોતા હૈ। ઉપશમ-

મોહનીય કર્મનો-ક્ષય, ક્ષયોપશમ અને ઉપશમ-રૂપ અવસ્થાઓમાં કોઈ પણ અવસ્થારૂપ થવું, તે કર્મભાવક્ષણ છે, તેમાં ઉપશમશ્રેણીમાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓનો ઉપશમ થવાથી અન્તમુહૂર્ત પરિમિત જે ઉપશમચારિત્ર થાય છે તે ઉપશમચારિત્રનો ક્ષણ છે. ચારિત્રમોહનીય કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓનો સર્વથા ક્ષય થવાથી અન્તમુહૂર્તપરિમિત જે છદ્મસ્થ અને યથાખ્યાત ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે તત્સ્વરૂપ ક્ષાયિકચારિત્રનું ક્ષણ છે, ક્ષયોપશમચારિત્ર ક્ષણનું ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમથી થાય છે, તેનો કાળ ઉત્કૃષ્ટ દેશઊં એક કરોડ પૂર્વનો છે.

કર્મભાવક્ષણનો મતલબ છે ચારિત્રનો આચારક (રોકવાવાળા) ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષય, ક્ષયોપશમ અને ઉપશમની પ્રાપ્તિનો અવસર, તેમાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની અપ્રત્યાખ્યાનાદિ ૨૧ પ્રકૃતિઓનું ઉપશમ જે ચારિત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ ઉપશમચારિત્ર છે. આ ઉપશમશ્રેણિમાં થાય છે. તેનો કાળ અન્તમુહૂર્ત છે. અપ્રત્યાખ્યાનાદિ ૨૧ પ્રકૃતિઓના સર્વથા ક્ષયથી જીવને જે ચારિત્ર પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ ક્ષાયિકચારિત્ર છે. ઉપશમશ્રેણિમાં ઉપશમચારિત્ર અને ક્ષપક શ્રેણિમાં ક્ષાયિકચારિત્ર થાય છે. ઉપશમશ્રેણિના સ્થાન ૮-૯-૧૦ અને ૧૧માં

ચારિત્રમોહનીયોપશમે સત્યન્તર્મુહર્તપરિમિતઃ, ચારિત્રમોહનીયક્ષયે ચાન્તર્મુહર્ત-  
પરિમિતઃ છદ્મસ્થયથાખ્યાતચારિત્રપ્રાપ્તિરૂપઃ । ક્ષયોપશમચારિત્રક્ષણઃ કર્મણઃ ક્ષયો-  
પશમેન ભવતિ, સ ચોત્કૃષ્ટતો દેશોનર્પૂર્વકોટિવર્ષપરિમિતો વિજ્ઞેયઃ ।

નોકર્મભાવક્ષણશ્ચ—આલસ્યમોહાવર્ણવાદસ્તમ્ભાદેરભાવે સતિ સમ્યક્ત્વાદિ-  
સામાયિકોપલબ્ધિરૂપઃ । આલસ્યમોહાદ્યુપહતઃ સંસારોચ્છેદનસમર્થ મનુષ્યમ્  
પ્રાપ્યાપિ ન बोध्यादિકं लभत इति तात्पर्यम् । કેચિત્તુ—નોકર્મભાવક્ષણં ‘રિક્તક્ષણ’  
इत्यभिदधति ।

श्रेणी के स्थान ८ वां ९ वां १० वां और ११ वां गुणस्थान हैं । १२ वें  
गुणस्थान तक जीव को छद्मस्थावस्था रहती है । यथाख्यातचारित्र ११  
वें १२ वें १३ वें और १४ वें गुणस्थान में होता है । छद्मस्थावस्था के चारित्र  
को छद्मस्थचारित्र और संपूर्ण मोहनीय कर्म के क्षय अथवा उपशम से  
आत्मा के शुद्ध स्वरूप में स्थिर होने को यथाख्यात चारित्र कहते हैं । अनं-  
तानुबंधी आदि १२ कषायों का उदयभावी क्षय तथा उन्हींके निषेकों  
का सदवस्थारूप उपशम और संज्वलन तथा नोकषाय का यथासंभव  
उदय होने पर जो चारित्र होता है उसे क्षायोपशमिक चारित्र कहते हैं ।  
इसका दूसरा नाम सरागसंयम भी है ।

नोकर्मभावक्षण—आलस्य, मोह, अवर्णवादादिक के अभाव होने  
पर जो सम्यक्त्वादिरूप सामायिक की प्राप्ति हुआ करती है वह नोकर्म-  
भावक्षण है, क्योंकि आलस्य और मोहादिक से उपहत हुआ प्राणी  
संसार का निर्मूल उच्छेदन करने में समर्थ मनुष्य भवको प्राप्त करके

गुणस्थान છે. ક્ષપકશ્રેણિનું સ્થાન ૮-૯-૧૦ અને ૧૨મું ગુણસ્થાન છે. ૧૨  
મા ગુણસ્થાન સુધી જીવને છદ્મસ્થાવસ્થા રહે છે. યથાખ્યાતચારિત્ર ૧૧  
-૧૨-૧૩ અને ૧૪ માં ગુણસ્થાનમાં થાય છે. છદ્મસ્થાવસ્થાના ચારિત્રનું છદ્મસ્થ  
ચારિત્ર અને સંપૂર્ણ મોહનીય કર્મના ક્ષય અથવા ઉપશમથી આત્માના શુદ્ધ  
સ્વરૂપમાં સ્થિર હોવું તેને યથાખ્યાતચારિત્ર કહે છે. અનંતાનુબંધી આદિ ૧૨  
કષાયોનો ઉદયભાવી ક્ષય તથા તેના નિષેકોનો સદવસ્થારૂપ ઉપશમ. અને સંજ્વલન  
તથા નોકષાયનું યથાસંભવ ઉદય હોવા પર જે ચારિત્ર થાય છે તેને ક્ષાયોપ-  
શમિકચારિત્ર કહે છે. તેનું બીજું નામ સરાગસંયમ પણ છે.

નોકર્મભાવક્ષણ—આલસ, મોહ, અવર્ણવાદાદિકનો અભાવ થવાપર  
જે સમ્યક્ત્વાદિરૂપ સામાયિકની પ્રાપ્તિ થયા કરે છે તે નોકર્મભાવક્ષણ છે, કારણ  
કે આલસ અને મોહાદિકથી ઉપહત થયેલ પ્રાણી સંસારનો નિર્મૂળ ઉચ્છેદન

અત્રાયં પ્રકરણાર્થઃ સંક્ષિપ્તઃ-દ્રવ્યક્ષણો જઙ્ગમત્વાદિવિશિષ્ટમાનવભવસ્વરૂપઃ ।  
ક્ષેત્રક્ષણ આર્યક્ષેત્રરૂપઃ । કાલક્ષણો ધર્માનુષ્ઠાનસમયઃ । ભાવક્ષણઃ ક્ષયોપશમાદિ-  
રૂપો વિજ્ઞેયઃ । અતો હે પण्डित ! एतादृशं चतुर्विधं धर्माचरणायातिदुर्लभं क्षणमव-  
गम्य संयमानुपालनतत्परोऽवश्यं भवेति भावः ॥ सू० ८ ॥

इत्थमतिदुरापक्षणमवाप्य यावच्च श्रोत्रादीनां शक्तयो न परिहीनास्तावदात्मार्थं  
प्रयासो विधेय इति दर्शयति-‘जावे-’त्यादि ।

મૂલમ-જાવ સોયપરિણાણા અપરિહીણા, નેત્તપરિણાણા  
અપરિહીણા, ફરિસપરિણાણા અપરિહીણા, ઇચ્છેહિં વિરૂવરૂવેહિં  
પણ્ણાણેહિં અપરિહીણેહિં આયટ્ઠં સમ્મં સમણુવાસિજ્ઞાસિ-ત્તિ  
વેમિ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

भी बोधि आदि को प्राप्त नहीं कर सकता है । नो कर्म भावक्षण को कोई  
२ आचार्य रिक्तक्षण भी कहते हैं ।

इस प्रकरण को संक्षिप्त करते हुए टीकाकार कहते हैं-त्रसपर्याय-  
विशिष्ट मानवभवस्वरूप (१) द्रव्यक्षण है, आर्यक्षेत्ररूप (२) क्षेत्रक्षण,  
धर्मानुष्ठान का समय-(३) कालक्षण और क्षयोपशमारूप (४) भाव-  
क्षण है, इसलिये हे परमार्थज्ञ ! मेधावी ! इस प्रकार के इस चतुर्विध क्षण  
को धर्माचरण करने के लिये अत्यन्त दुर्लभ मान कर संयम के पालन करने  
में अवश्य २ मन को लगाओ, नहीं तो समय के हाथसे निकल जाने  
पर अन्त में पश्चात्ताप के सिवाय और कुछ हाथ न आवेगा, इस लिये  
प्राप्त हुए इस चतुर्विध क्षण को संयमाराधन से सफलित करो ॥सू० ८॥

કરવામાં સમર્થ મનુષ્યભવને પ્રાપ્ત કરીને પણ બોધિ આદિને પ્રાપ્ત કરી શકતા  
નથી. નોકર્મભાવક્ષણને કોઈ કોઈ આચાર્ય રિક્તક્ષણ પણ કહે છે.

આ પ્રકરણને સંક્ષિપ્ત કરતાં ટીકાકાર કહે છે:- ત્રસપર્યાયવિશિષ્ટ માનવ-  
ભવસ્વરૂપ (૧) દ્રવ્યક્ષણ છે, આર્યક્ષેત્રરૂપ (૨) ક્ષેત્રક્ષણ, ધર્માનુષ્ઠાનનો સમય  
(૩) કાલક્ષણ અને ક્ષયોપશમાદિરૂપ (૪) ભાવક્ષણ છે, માટે હે પરમર્થજ્ઞ !  
મેધાવી ! આ પ્રકારના ચતુર્વિધ ક્ષણને ધર્માચરણ કરવા માટે અત્યંત દુર્લભ  
માનીને સંયમપાલન કરવામાં લગાવો. નહિ તો સમય નીકળી જવા પછી અંતમાં  
પશ્ચાત્તાપ સિવાય કંઈ પણ હાથ આવશે નહિ, માટે આ પ્રાપ્ત થયેલ ચતુર્વિધ  
ક્ષણને સંયમારાધનથી સફલિત કરો ॥ સૂ૦ ૮ ॥



छाया—यावच्छ्रोत्रपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, नेत्रपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, घ्राणपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, जिह्वापरिज्ञानानि अपरिहीनानि, स्पर्शपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, इत्येतैर्विरूपरूपैः प्रज्ञानैरपरिहीनैरात्मार्थं समनुवासयेत्, इति ब्रवीमि ॥ सू० ९ ॥

टीका—‘याव-’दित्यादि । यावज्जरया रोगेण च श्रोत्रस्य परिज्ञानानि अपरिहीनानि=न नश्यमानानि तावदात्मार्थं समनुवासयेदिति सम्बन्धः । एवं यावच्छब्दः सर्वत्र योज्यः । एवमन्येषामपि नेत्रादीनां परिज्ञानानि यावन्न क्षीयमाणानि सन्ति तावच्छ्रेयो विचिन्तनीयमिति तात्पर्यम् ।

इस प्रकार अत्यंत कठिनता से प्राप्त करने योग्य इस क्षण को पाकर के जब तक श्रोत्रादिक प्रत्येक इन्द्रिय की अपने २ विषय को जानने की शक्ति कमजोर नहीं पड़ती है तब तक आत्मकल्याण के लिये प्रयास करते रहना चाहिये, यह बात सूत्रकार कहते हैं—‘जाव सोयपरिण्णाणा’ इत्यादि ।

जब तक वृद्धावस्था या किसी रोग से तेरा कर्ण-इन्द्रियजन्य ज्ञान अपने विषय को ग्रहण करने की शक्ति से विकल नहीं हुआ है, नेत्र-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने विषय ग्रहण करने की सामर्थ्य से रहित नहीं हुआ है, घ्राण-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने ज्ञेय को जानने की शक्ति से क्षीण नहीं हुआ है, जिह्वा-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने पदार्थ को ग्रहण करने की सामर्थ्य से रहित नहीं हुआ है, स्पर्शन-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक कर्कश-कठोरादि अपने विषय को ग्रहण करने की शक्ति से हीन नहीं हुआ

आ प्रकार अत्यंत कठिनताથી प्राप्त करवायेज्य आ क्षणने भेजवीने न्यां सुधी श्रोत्रादिक प्रत्येक इन्द्रियनी पोतपोतानां विषयने नानुवानी शक्ति कमजोर थती नथी त्यां सुधी आत्मकल्याण भाटे प्रयास करता रहेवो नैधये, ये वात सूत्रकार कहे छेः—

‘जाव सोयपरिण्णाणा’ इत्यादि. न्यां सुधी वृद्धावस्था अगर कोछ रोगथी ताई कर्ण-इन्द्रियजन्य ज्ञान पोताना विषयने अडलु करवानी शक्तिथी विकल नथी थयुं, नेत्र-इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यांसुधी पोतानो विषय अडलु करवानां सामर्थ्यथी रहित नथी थयुं, घ्राण-इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यांसुधी पोताना ज्ञेयने नानुवानी शक्तिथी क्षीण नथी थयुं, जिह्वा-इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यांसुधी पोताना पदार्थने अडलु करवाना सामर्थ्यथी रहित नथी थयुं, स्पर्शन-इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यां सुधी कर्कश कठोरादि पोताना विषयने अडलु करवानी शक्तिथी हीन

હૈ તવ તક અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોં કે જ્ઞાન કી વિદ્યમાનતા મેં હી હે ભવ્ય પ્રાણી ! તૂ અપના કલ્યાણ-અર્થાત્ જ્ઞાનદર્શનચારિત્ર-આરાધન રૂપ નિજ પ્રયોજન કો સિદ્ધ કરલે । યહ નિશ્ચિત હૈ-વૃદ્ધાવસ્થા આને પર, યા કિસી ભયંકર રોગ કે હોને પર-ઇન્દ્રિયોં કી શક્તિયાં યા સ્વયં ઇન્દ્રિયાં હી ક્ષીણ હો જાતી હૈ । જિસ સમય ચેચક નિકલા કરતી હૈ કઈ વ્યક્તિયોં કી આંખેં ફૂટ જાતી હૈ, કાન બી બહિરે હો જાતે હૈ । લકવા કી બીમારી મેં સ્પર્શન ઇન્દ્રિય શૂન્ય હો જાતી હૈ, વચન વર્ગણા ઠીક નહીં નિકલતી, ચલતે સમય પૈર કહીં રખતે હૈ પડતે હૈ કહીં । કહા બી હૈ—

“ ગાત્રં સંકુચિતં ગતિર્વિગલિતા ભ્રષ્ટા ચ દન્તાવલિઃ,

દૃષ્ટિર્નશ્યતિ વર્ધતે વધિરતા વક્ત્રં ચ લાલાયતે ।

વાક્યં નાદ્રિયતે ચ વાન્ધવજનો ભાર્યા ન શુશ્રૂષતે,

હા ! કષ્ટં પુરુષસ્ય જીર્ણવયસઃ પુત્રોઽપ્યમિત્રાયતે ” ॥૧॥

“દૃષ્ટિ ઘટી પલટી તનકી છબિ, બંક ભઈ ગતિ લંક નઈ હૈ,

રૂષ રહી પરની ઘરની, અતિરંક ભયો પરચંક લઈ હૈ ।

કાંપત નાર (નાડ) વહૈ મુખ લાર, મહામતિ સંગતિ છાર ગઈ હૈ,

અંગ ઉપંગ પુરાને પરે, તિસના ઊર ઓર નવીન ભઈ હૈ ” ॥૧॥

નથી થયું ત્યાં સુધી અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોના જ્ઞાનની વિદ્યમાનતામાં જે હે ભવ્ય પ્રાણી ! તું પોતાનું કલ્યાણ અર્થાત્ જ્ઞાનદર્શન ચારિત્ર આરાધનરૂપ નિજ પ્રયોજનને સિદ્ધ કરી લે. એ નિશ્ચિત છે વૃદ્ધાવસ્થા આવવાથી અગર કોઈ ભયંકર રોગ થવાથી ઇન્દ્રિયોની શક્તિઓ અગર સ્વયં ઇન્દ્રિયો જે ક્ષીણ થાય છે. જે વખતે શીતલા નીકળે છે તે વખતે કંઈ વ્યક્તિઓની આંખો ફૂટી જાય છે, કાન પણ બહાર થઈ જાય છે, લકવાની બીમારીમાં સ્પર્શન ઇન્દ્રિય શૂન્ય બની જાય છે, વચન-વાણી પણ ઠીક નીકળતી નથી, ચાલતી વખતે પણ કયાંય રાખે છે અને પણ પડે છે કયાંય. કહ્યું પણ છે:—

“ ગાત્રં સંકુચિતં ગતિર્વિગલિતા ભ્રષ્ટા ચ દન્તાવલિઃ,

દૃષ્ટિર્નશ્યતિ વર્ધતે વધિરતા વક્ત્રં ચ લાલાયતે ।

વાક્યં નાદ્રિયતે ચ વાન્ધવજનો ભાર્યા ન શુશ્રૂષતે,

હા ! કષ્ટં પુરુષસ્ય જીર્ણવયસઃ પુત્રોઽપ્યમિત્રાયતે ” ॥૧॥

“દૃષ્ટિ ઘટી પલટી તનકી છબિ બંક ભઈ ગતિ લંક નઈ હૈ,

રૂષ રહી પરની ઘરની અતિ રંક ભયો પરચંક લઈ હૈ ।

કાંપત નાર (નાડ) વહૈ મુખ લાર મહામતિ સંગતિ છાર ગઈ હૈ,

અંગ ઉપંગ પુરાને પરે તિસના ઊર ઓર નવીન ભઈ હૈ ” ॥૧॥



“વ્યાગ્રીવ તિષ્ઠતિ જરા પરિતર્જયન્તી,  
રોગાશ્ચ શત્રવ ઇવ પ્રહરન્તિ દેહમ્ ।  
આયુઃ પરિસ્ત્રવતિ ભિન્નઘટાદિવામ્ભો,  
લોકસ્તથાપ્યહિતમાચરતીતિ ચિત્રમ્” ॥૧॥

યહ વૃદ્ધાવસ્થા અર્ધમૃતક જૈસી હૈ । ઇસ અવસ્થામેં બુદ્ધિ પ્રાયઃ નષ્ટ હો જાતી હૈ, કૂબડ નિકલ આતી હૈ, દાંત ગિર પડતે હૈ, બાલ સફેદ હો જાતે હૈ, બલ ભી કમ હો જાતા હૈ, આંખોં સે કમ સૂઝને લગતા હૈ, કાનોં સે શબ્દ સુનાઈ નહીં પડતે, હાથ પૈર ઢીલે ઓર ચલતે ફિરને સે લાચાર હો જાતે હૈ, કફ ઓર શ્વાસકા જોર બઢતા હૈ, વૈરિયોં કી તરહ સમસ્ત રોગ ઇસ અવસ્થા મેં અપના બદલા લેનેકે લિયે હી માનોં ઇકદમ ટૂટ પડતે હૈ, તૃષ્ણા કી પ્રબલતા ઇસ અવસ્થા મેં હો જાતી હૈ, પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય વિષય ગ્રહણ કરને કી શક્તિ સે શૂન્ય હો જાતી હૈ । જિસ તરહ કબૂતર પર બાજ છપટને કી તાકમેં રહતા હૈ, અથવા બિહ્લી ચૂહે પકડને કી તાક લગાઈ બેઠી રહતી હૈ, ઠીક ઇસી તરહ મૌત ભી ઇસ અવસ્થા મેં પ્રાણ પચેરુ કો પકડને કે લિયે તૈયાર રહતી હૈ । ઊસી પ્રકાર ઇસ અવસ્થા મેં જવાની કા બલ છિપ જાયા કરતા હૈ । મયૂરોં કી ધ્વનિ સુનને સે જૈસે

“વ્યાગ્રીવ તિષ્ઠતિ જરા પરિતર્જયન્તી,  
રોગાશ્ચ શત્રવ ઇવ પ્રહરન્તિ દેહમ્ ।  
આયુઃ પરિસ્ત્રવતિ ભિન્નઘટાદિવામ્ભો,  
લોકસ્તથાપ્યહિતમાચરતીતિ ચિત્રમ્” ॥૧॥

આ વૃદ્ધાવસ્થા અર્ધમૃતક જેવી છે, આ અવસ્થામાં બુદ્ધિ નષ્ટપ્રાય થાય છે, બલ પણ ઓછું થાય છે, વાંકાપણું આવે છે, દાંત પડી જાય છે, બાલ સફેદ થાય છે, આંખોથી ઓછું દેખાય છે, કાનોથી શબ્દ સંભળાતો નથી, હાથ પગ ઢીલા અને ચાલવા ફરવાથી લાચાર બને છે, કફ અને શ્વાસનું જોર વધે છે, વૈરીઓની માફક સમસ્ત રોગ આ અવસ્થામાં બહારો લેવા માટે બાહ્ય એકદમ તુટી પડે છે, તૃષ્ણાની પ્રબલતા આ અવસ્થામાં થાય છે, પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય વિષય ગ્રહણ કરવાની શક્તિથી શૂન્ય થાય છે. જેવી રીતે કબૂતર પર બાજ અડપ મારવાની તક શોધે છે, અથવા બિલાડી ઉંદર પકડવાની તાક લગાવી બેસે છે, તેવી રીતે મૌત પણ આ અવસ્થામાં પ્રાણપંખેડને પકડવા તૈયાર રહે છે. જે પ્રકારે વાદળોની અંદર સૂર્યનો પ્રકાશ ઢંકાઈ જાય છે તે પ્રકારે આ અવસ્થામાં જીવાનીનું બળ છુપાઈ જાય છે, મોરની ધ્વનિ સંભળવાથી જેમ ચંદનવૃક્ષોમાં



इत्येतैः=पूर्वोक्तैर्विरूपरूपैः-इष्टानिष्टस्वभावतया नानाप्रकारैः प्रज्ञानैः=प्रकृष्ट-  
ज्ञानैरपरिहीनैः=अपरिक्षीणैः सद्भिः आत्मार्थम्=आत्मनोऽर्थ आत्मार्थः, स च ज्ञान-  
दर्शन-चारित्र्यरूपस्तम् ।

यद्वा-आत्मनेऽर्थो हितं प्रयोजनमिति यावत्, तच्चारित्र्यानुष्ठानम्, तम्,  
समनुवासयेत्=भावयेत्, रञ्जयेदिति वा, यथोक्तानुष्ठानेनात्मानं समनुपाल-  
येदिति भावः ।

इति=पूर्वोक्तं ब्रवीमि=सुधર્मा स्वामी जम्बूस्वामिनमाह-यद्भगवतः सकाशात्  
श्रुतं तदेवाहं सूत्रात्मना कथयामि ॥ सू० ९ ॥ इति ॥

इति द्वितीयाध्ययनस्य प्रथमोद्देशः सव्याख्यः समाप्तः ॥ १ ॥

ચન્દનવૃક્ષોં મેં લપટે હુણ મુજંગોં કે બન્ધન ઢીલે પડે જાતે હૈં વૈસે હી જ્વાંસી  
કે જુલ્લ, જુલ્લ શબ્દ સે ઇસ અવસ્થા મેં અસ્થિયોં કી સંધિયાં શિથિલ હો  
જાયા કરતી હૈં । યહ જરા એક મયંકર વ્યાધી કી તરહ સામને આકર  
નિર્ભય રૂપ સે જલ્દી હો જાતી હૈ, ઉસ સમય શત્રુઓં કી તરહ રોગ ઇસ  
પર પ્રહાર કરને સે નહીં ચૂકતે, ફૂટે ઘડે મેં સે પાની કી તરહ આયુ નિક-  
લતી ચલી જાતી હૈ તો ખી આશ્ચર્ય કી વાત હૈ કિ-પ્રાણી અપને આત્મ  
કલ્યાણ કી તરફ ધ્યાન નહીં દેતા ? ।

इसलिए जब तक वृद्धावस्था या किसी रोगसे तेरी शारीरिक शक्ति  
क्षीण नहीं हुई है और प्रत्येक इन्द्रिया जब तक सशक्त बनी हुई है तब  
तक सूत्रकार कहते हैं कि-“आत्मार्थ समनुवासयेत्” आत्माके लिये  
हितकारी सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र्य की प्राप्ति से अपने  
आपको भावित करो ।

લટકેલા સાપોના બંધન ઢીલા પડે છે તેમ ખાંસીના ખુલ્લ-ખુલ્લ શબ્દથી આ  
અવસ્થામાં હાડકાઓની સંધિયો શિથિલ બની જાય છે.

આ વૃદ્ધાવસ્થા એક ભયંકર વ્યાધિની માફક સામે આવીને નિર્ભય રૂપથી  
ખડી થઈ જાય છે, તે વખતે શત્રુઓની માફક રોગ પણ પ્રહાર કરવામાં યુક્તા  
નથી, ફુટેલા ઘડામાંથી પાણીની માફક આયુ નિકળવા માંડે છે, તો પણ આશ્ચ-  
ર્યની વાત છે કે પ્રાણી પોતાના આત્મકલ્યાણની તરફ ધ્યાન દેતા નથી. માટે  
જ્યાં સુધી વૃદ્ધાવસ્થા અગર કોઈ રોગથી તારી શારીરિક શક્તિ ક્ષીણ નથી  
થઈ, અને પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય જ્યાં સુધી સશક્ત બનેલી છે ત્યાં સુધી સૂત્રકાર  
કહે છે કે-“ આત્માર્થ સમનુવાસયેત્ ” આત્મા માટે હિતકારી સમ્યગ્દર્શન  
સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની પ્રાપ્તિથી પોતાને ભાવિત કરે.

યહાં આત્મા કે લિયે હિતકારી સમ્યક્ચારિત્ર કા પ્રધાનતયા ગ્રહણ હોતા હૈ । ક્યોં કિ યથાખ્યાતચારિત્રકે વિના કેવલજ્ઞાન તથા કેવલ-દર્શન નહીં હો સકતે । ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં યથાખ્યાત ચારિત્ર કી પૂર્ણતા હોતે હી યહ આત્મા “ અ હ ડ ક લૃ ” ઇન પાંચ હસ્વ અક્ષરોં કે ઉચ્ચારણ કાલ તક વહાં રહકર મુક્તિમેં જા વિરાજતા હૈ । ઇસ અપેક્ષા સે ચારિત્ર કી યહાં પર પ્રધાનતા કહી હૈ । સમ્યગ્દર્શન કી પૂર્ણતા ચતુર્થ ગુણસ્થાનમેં, સમ્યગ્જ્ઞાનકી પૂર્ણતા તેરહવેં ગુણસ્થાન મેં ઓર સમ્યક્ ચારિત્ર કી પૂર્ણતા ચૌદ હવેં ગુણસ્થાન મેં શાસ્ત્રકારોં ને બતલાઈ હૈ ।

ઇસ પૂર્વોક્ત અર્થ કો સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ-હે જમ્બૂ ! મૈને જૈસા ભગવાન સે સુના હૈ વૈસા હી તુજે કહતા હૂં ॥ સૂ૦ ૯ ॥

॥ યહ દ્વિતીય અધ્યયન કા પ્રથમ ઉદ્દેશ સમાપ્ત હુઆ ॥ ૨-૧ ॥

અહીં આત્મા માટે હિતકારી સમ્યક્ચારિત્રનું પ્રધાનતયા ગ્રહણ થાય છે, કારણ કે યથાખ્યાતચારિત્ર વિના કેવળજ્ઞાન તથા કેવળદર્શન નથી થતું. ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં યથાખ્યાતચારિત્રની પૂર્ણતા થતાં જ આ આત્મા “ અ હ ડ ક લૃ ” આ પાંચ હસ્વ અક્ષરોનું ઉચ્ચારણ કાલ તક ત્યાં રહીને મુક્તિમાં ગિરાજે છે. આ અપેક્ષાથી ચારિત્રની આ ઠેકાણે પ્રધાનતા કહી છે. સમ્યગ્દર્શનની પૂર્ણતા થોથા ગુણસ્થાનમાં, સમ્યગ્જ્ઞાનની પૂર્ણતા તેરમા ગુણસ્થાનમાં, અને ચારિત્રની પૂર્ણતા ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં શાસ્ત્રકારોએ બતાવી છે.

આ પૂર્વોક્ત અર્થને સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીથી કહે છે કે-હે જમ્બૂ ! મેં જેવી રીતે ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યું છે તેવું જ તમને કહું છું. ॥ સૂ૦ ૯ ॥

॥ બીજા અધ્યયનનો પહેલો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૧ ॥

## ॥ આચારાઙ્ગ સૂત્રે દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ ॥

ઉક્તઃ પ્રથમોદ્દેશઃ, સામ્પ્રતં દ્વિતીયો વ્યાખ્યાયતે, તત્રાયં સમ્બન્ધઃ—પ્રથમે વિષયકષાય માતા પિત્રાદિ લોકવિજયેન સંયમિનો મોક્ષકારણચારિત્રસ્ય પ્રાપ્તિઃ, કિન્ન લોકવિજયેન યાવદ્રોગજરાદયો નાયાતાસ્તાવદાત્માર્થં સંયમો વિધેય इत्यपि प्रतिपादितम् ।

## ॥ આચારાઙ્ગ સૂત્રકે દૂસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ ॥

પ્રથમ ઉદ્દેશ કા વર્ણન હો ચુકા, અવ દ્વિતીય ઉદ્દેશ કા વર્ણન કરતે હૈં—ઇસ કે વર્ણન કરને કા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ—પ્રથમ ઉદ્દેશ મેં જો યહ બાત બતલાઈ ગઈ હૈ કિ—“વિષય કષાય ઓર માતા પિતા આદિ જો લોક હૈં ઉન પર વિજય પ્રાપ્ત કરને સે, અર્થાત્ કષાયોં કો જીતને ઓર માતા પિતા આદિ કે સ્નેહ નિવારણ સે સંયમી કો મોક્ષ કે કારણભૂત ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । તથા લોક પર વિજય કરલેને સે જવ તક રોગાદિક અથવા જરાવસ્થા વગેરહ જો સંયમ કો ધારણ કરને મેં પ્રતિબંધક હૈં, વે ઇસ શરીર કો આકર નહીં ઘેરતે હૈં ઇસકે પહિલે આત્મકલ્યાણ કે લિયે સંયમ કા આરાધન કરલેના ચાહિયે ” ॥

## આચારાંગ સૂત્રના બીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ

પહેલાં ઉદ્દેશનું વર્ણન સમાપ્ત થયું. હવે બીજા ઉદ્દેશનું વર્ણન કરે છે. તેનું વર્ણન કરવાનો અભિપ્રાય એ છે કે મહેલા ઉદ્દેશમાં જે વાત બતાવવામાં આવી છે કે “વિષયકષાય અને માતાપિતા આદિ જે લોક છે તે ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાથી અર્થાત્ કષાયોને જીતવાથી અને માતાપિતા આદિનો સ્નેહ નિવારણથી સંયમીને મોક્ષના કારણભૂત ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે. અને લોક ઉપર વિજય કરવાથી જ્યાં સુધી રોગાદિક અને જરાવસ્થા વિગેરે જે સંયમને ધારણ કરવામાં પ્રતિબંધક છે. તે આ શરીરને આવીને ઘેરતા નથી. તેનાં પહેલાં આત્મકલ્યાણ માટે સંયમનું આરાધન કરી લેવું જોઈએ.



અત્ર ચ સંયમિનઃ કદાચિન્મોહનીયોદયાદજ્ઞાનલોભાદિસમુદયાદાત્મદોષાદ્વા સંયમે ચારતિરાવિર્ભૂતા તસ્યા નિરસનં, તથા યેઽપિ વિષયિણોઽલ્પમધિકં વા કાલં સંયમમનુપાલ્યાપિ પૂર્વોક્તદોષેણ મોહોદયાત્સંયમે શૈથિલ્યં પ્રાપ્નુવન્તિ તેષાં સંયમે દૃઢતા, વિષયેષુ ચાદૃઢતા યથા ભવેત્તથાઽઽહ ‘અરં’ ઇત્યાદિ।

સંયમી કો કદાચિત્ મોહ કે ઉદય સે યા અજ્ઞાન એવં લોભાદિ કિસી કષાય કે ઉદયસે અથવા અપને હી કિસી દોષ કે વશ સે સંયમ મેં જો અરતિભાવ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈં ઉસકો જૈસે ખી દૂર કિયા જા સકે; તથા જો શબ્દાદિ વિષયોં મેં લોલુપી બને હુએ હૈં ઓર સંયમ કા પાલન ખી કર રહે હૈં વે ઉસ સંયમ કો અલ્પકાલ તક યા અધિક સમય તક પાલન કરકે ખી પૂર્વોક્ત દોષ સે અથવા મોહકે ઉદય સે સંયમ મેં શિથિલ બન જાતે હૈં વે સંયમ મેં શિથિલ ન બનને પાવેં અર્થાત્ સંયમ મેં ઉનકી દૃઢતા હી બની રહે તથા વિષયોં કી ઓર સે ઉનકી આસક્તિ ઘટે—ઈસી વાતકા વર્ણન ઇસ દ્વિતીય ઉદ્દેશ મેં સૂત્રકાર કરતે હૈં— ‘અરં ઇત્યાદિ’।

અથવા—ચારિત્ર કો અંગીકાર કરને કે લિયે જિનકી ઇચ્છા જાગૃત તો હો ચુકી હૈં પરન્તુ મોહ કે ઉદય સે ઉનકે મન મેં અખી તક અરતિ-ભાવ વિચમાન હૈં, એવં જિન્હોંને ચારિત્ર કો ધારણ તો કર લિયા હૈં પરન્તુ ઉસકે ધારણકે બાદ લોભાદિ સે કિસી ૨ સમય ઉન્હેં ઉસસે અરતિભાવ ખી પૈદા હો જાતા હૈં, ઉસ સમય ઉન્હેં ક્યા કરના ચાહિયે? ઇસીકા નિરૂ-

સંયમીને કદાચિત્ મોહના ઉદયથી અજ્ઞાન અને લોભાદિ કોઈ કષાયના ઉદયથી અથવા પોતાના કોઈ દોષના વશથી સંયમમાં જે અરતિભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેને જેમ તેમ પણ દૂર કરવામાં આવે, અને જે શબ્દાદિ વિષયોમાં લોલુપી બનેલાં છે અને સંયમનું પાલન કરે છે તેઓ સંયમનું અલ્પ કાળ સુધી અગર અધિક સમય સુધી પાલન કરીને પણ પૂર્વોક્ત દોષથી અથવા મોહના ઉદયથી સંયમમાં જેઓ શિથિલ બની જાય છે તેઓ સંયમમાં શિથિલ બની ન જાય અર્થાત્ સંયમમાં તેઓની દૃઢતા બની રહે અને વિષયોની તરફથી તેઓની આસક્તિ ઘટે આ વાતનું વર્ણન આ બીજા ઉદ્દેશમાં સૂત્રકાર કરે છે:—‘અરં’ ઇત્યાદિ.

અને ચારિત્રને અંગીકાર કરવા માટે જેની ઇચ્છા જાગૃત બનેલી છે પરંતુ મોહના ઉદયથી તેના મનમાં હજી સુધી અરતિભાવ મોજીદ છે અને જેઓએ ચારિત્રને ધારણ કરી લીધું છે પરંતુ લીધા પછી લોભાદિથી કોઈ કોઈ સમય તેને તેમાં અરતિભાવ પેદા થાય છે. તે વખતે તેણે શું કરવું જોઈએ તેનું નિરૂપણ

યદ્રા સમુત્પદ્યમાનરૂપેરપિ મોહોદયાદરતિર્જાયતે, કસ્યચિચ્ચ ચારિત્રગ્રહણાનન્તરં લોભાદિના કદાચિદરતિર્ભવતિ તદા કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘અરહં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—અરહં આઉદે સે મેહાવી સ્વળંસિ મુક્તે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—અરતિમ્ આવર્તેત સ મેધાવી ક્ષણે મુક્તઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—‘અરતિ’—મિત્યાદિ, સઃ=કૃતચારિત્રગ્રહણો મેધાવી પરિજ્ઞાતનિઃસાર-સંસારઃ સન્ ‘અરતિમ્’ રમણં=રતિઃ સંયમે ધૃતિસ્તસ્યાભાવોડરતિસ્તાં પશ્ચાચાર-પણ કરતે હૈ—‘અરહં’ ઇત્યાદિ ।

જિસને સંસાર કી અસારતા જાન લી હૈ ઓર ચારિત્ર કો ખી અંગી-કાર કર લિયા હૈ વહ અરતિ-ભાવ કો દૂર કરે તો ક્ષણ ભર મેં મુક્ત હો જાવે । ચારિત્ર કો જિસને અંગીકાર કર લિયા હૈ ઉસકા યહ ધર્મ હૈ કિ વહ કિતને ખી પરીષદોં ઓર ઉપસર્ગોં કે ઉત્પન્ન હોને પર ખી અપને ચારિત્ર ધર્મકા નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરે । પરન્તુ જબ તક કષાયોં કા પૂર્ણતયા વિનાશ નહીં હો જાતા, તબ તક જીવ સે ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ નહીં હોતી હૈ । ક્યોં કિ જિસ ચારિત્રકા યહાં પર વર્ણન કિયા જા રહા હૈ વહ ક્ષાયોપશમિક હૈ, ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર તખી હોતા હૈ જબ ચારિત્ર મોહનીય કર્મ કે ૨૧ પ્રકૃતિયોં મેં સે સર્વઘાતિ પ્રકૃતિયોં કે કુછ સ્પર્દકોં કા-અનન્તાનન્ત કર્મ વર્ગણાઓં કે સમુદાયકા એક સ્પર્દક હોતા હૈ ઉનકા-ઉદયભાવી ક્ષય હો તથા કુછ સર્વઘાતિસ્પર્દકોં કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ હો એવં દેશઘાતિપ્રકૃતિકા ઉદય હો । ઇસ અવસ્થા કા નામ ક્ષાયોપશમ હૈ ।

આ ખીજા ઉદેશમાં સૂત્રકાર કરે છે—“અરહં” ઇત્યાદિ.

જેણે સંસારની અસારતા જાણી છે, અને ચારિત્રને પણ અંગીકાર કરેલ છે તે અરતિભાવને દૂર કરે તો ક્ષણ ભરમાં મુક્ત થઈ જાય. ચારિત્રને જેણે અંગીકાર કરેલ છે તેનો એ ધર્મ છે કે કેટલા પણ પરિષદો અને ઉપસર્ગો ઉત્પન્ન થાય તો પણ પોતાના ચારિત્રધર્મનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરે, પરંતુ જ્યાં સુધી કષાયોનો પૂર્ણ વિનાશ નથી થતો ત્યાં સુધી જીવતી તેવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિ થતી નથી, કારણ કે જે ચારિત્રનું આ ઠેકાણું વર્ણન આપવામાં આવ્યું છે તે ક્ષાયોપશમિક છે. ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર ત્યારે જ થાય છે-જ્યારે ચારિત્ર મોહનીય કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓથી સર્વઘાતી પ્રકૃતિઓના થોડાં સ્પર્દકોના-અનન્તાનન્ત કર્મ વર્ગણાઓના સમુદાયનો એક સ્પર્દક થાય છે. તેના ઉદયભાવી ક્ષય થાય તથા થોડા સર્વઘાતિ સ્પર્દકોના સદવસ્થારૂપ ઉપશમ થાય અને દેશઘાતિ પ્રકૃતિનો ઉદય થાય, આ અવસ્થાનું નામ ક્ષાયોપશમ છે.



વિષયારુચિ કષાયસંસર્ગોત્પન્નાં માતા-પિતૃ-કલત્ર-મિત્રાદ્યુત્પાદિતામ્ આવર્તેત=નિવર્તયેત્, વિષયાભિષ્વજ્ઞે રતિસત્ત્વે સંયમે ચારતિર્ભવતિ, તથા ચ કણ્ડરીકસદૃશસ્ય સંયમિનો નરકાદિગતિર્જાયતે, વિષયે રત્યભાવે સંયમે રતિરુત્પદ્યતે, તથા ચ પુણ્ડરીક-સદૃશસ્ય સદૃતિર્ભવતિ । સંયમે રતિં વિદધાનસ્ય ન કિમપિ દુઃખં પરાભવતિ, ઉક્તञ્ચ—

इस दशामें देशघाति प्रकृति का तो उदय रहता है। यह चारित्र का बिगाड़ नहीं करती। किन्तु जिनका उपशम हुआ है—वे यदि निमित्त पाकर उदय में आजाती हैं तो वे अवश्य २ चारित्र में जीव को अरति-भाव या उससे भ्रष्ट कर देती हैं। इसी बात को लक्ष्य में रखकर सूत्रकार संयमी जन को कहते हैं कि—‘अरतिं आवर्तैत’ इति संयमधारी मेधावी संयम में अरति को दूर करे। संयम में धृति धारण करना—इस का नाम रति है, रति का अभाव अरति है, पाँच आचारका पालन करना संयम है। इस विषय में संयमी जनको कषायों के संसर्ग से अथवा माता-पिता-मित्र-स्त्री आदि के संसर्ग से अरतिभाव पैदा हो सकता है। टीकाकार इस पर अपना अभिप्राय प्रकट करते हुए कहते हैं कि—बात भी ठीक है, क्योंकि विषयों में अभिष्वंग (आसक्ति) रूप रति के सद्भाव होने पर संयममें अरतिभाव जीवों को उत्पन्न हो जाता है, परन्तु मेधावी मुनि संसार की असारता को भली भाँति जानता है तो उसका कर्तव्य है कि वह अरतिभाव को दूर करे, नहीं तो कण्डरीक की तरह उसे नरक गामी होना पड़ेगा, और संयम में रति करने से पुण्डरीक की तरह उसे

આ દશામાં દેશઘાતિ પ્રકૃતિનો તો ઉદય રહે છે, તે ચારિત્રનો બિગાડ કરતી નથી, પરંતુ જેનો ઉપશમ થયેલ છે તે કદાચ નિમિત્ત બનીને ઉદયમાં આવી જાય છે તો તે અવશ્ય જ ચારિત્રમાં જીવને અરતિભાવ અગર તેનાથી ભ્રષ્ટ કરે છે. આ વાતને લક્ષમાં રાખીને સૂત્રકાર સંયમી જનને કહે છે કે— ‘અરતિં આવર્તૈત’ સંયમધારી મેધાવી સંયમમાં અરતિને દૂર કરે. સંયમમાં ધૃતિ ધારણ કરવી, તેનું નામ રતિ છે. રતિનો અભાવ અરતિ છે. પાંચ આચારનું પાલન કરવું સંયમ છે. આ વિષયમાં સંયમી જનને કષાયોના સંસર્ગથી અથવા માતા-પિતા-મિત્ર-સ્ત્રી આદિના સંસર્ગથી અરતિભાવ પેદા થઈ જાય છે ત્યારે ટીકાકાર આ વાત પર પોતાનો અભિપ્રાય પ્રગટ કરતાં કહે છે કે—વાત પણ ઠીક છે. કારણ કે વિષયોમાં આસક્તિરૂપ રતિનો સદ્ભાવ થવાથી સંયમમાં અરતિભાવ જીવેને ઉત્પન્ન થાય છે. પરંતુ મેધાવી મુનિ સંસારની અસારતાને ભલીભાંતિ જાણે છે. તેથી તેનું કર્તવ્ય છે કે તે અરતિભાવને દૂર કરે, નહીં તો કંડરીકની માફક તેને નરકગામી થવું પડશે, અને સંયમમાં રતિ કરવાથી પુંડરીકની માફક તેને



“ ક્ષિતિતલશયનં વા, પ્રાન્તમૈક્ષાશનં વા,  
સહજપરિભવો વા, દુષ્ટદુર્માપિતં વા ।  
મહતિ ફલવિશેષે, નિત્યમભ્યુચતાનાં,  
ન મનસિ ન શરીરે, દુઃખમુત્પાદયન્તિ ” ॥ ૧ ॥

“ તળસંથારનિષણ્ણોઽવિ મુણિવરો નદ્ધરાગમયમોહો ॥  
જં પાવઙ્ મુત્તિસુહં, તં કત્તો ચક્કવટ્ટી વિ ” ॥ ૧ ॥

છાયા—તળસંસ્તારનિષણ્ણોઽપિ મુનિવરો નદ્ધરાગમદમોહઃ ॥  
યત્પ્રાપ્નોતિ મુક્તિસુખં તત્કુતશ્ચક્રવર્ત્યપિ ॥ ૧ ॥ ઇતિ, કિમધિકેન ।

સદ્ગતિકા લાભ હોગા । જીવોં કો અરતિ કા કારણ દુઃખ હોતા હૈ । પરન્તુ સંયમ કો નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરનેવાલે કો કોઈ મી દુઃખ નહીં હોતા હૈ । યદિ કિસી પ્રકાર કે કર્મોદય સે ઉસે દુઃખ મી આ પડે તો વહ દુઃખ ઉસ જીવ કો સંયમ મેં અરતિભાવ કા કારણ નહીં હોતા હૈ । યહી બાત નીચે લિખે શ્લોકસે પ્રકટ કી હૈ, જૈસે—

ક્ષિતિતલશયનં વા પ્રાન્તમૈક્ષાશનં વા,  
સહજપરિભવો વા દુષ્ટદુર્માપિતં વા ।  
મહતિ ફલવિશેષે નિત્યમભ્યુચતાનાં,  
ન મનસિ ન શરીરે દુઃખમુત્પાદયન્તિ ॥ ૧ ॥

ફિર મી—“ તળસંથારનિષણ્ણો વિ મુનિવરો નદ્ધરાગમયમોહો ।  
જં પાવઙ્ મુત્તિસુહં, તં કત્તો ચક્કવટ્ટી વિ ॥ ૧ ॥ ”

સદ્ગતિનો લાભ થશે. જીવોને અરતિનાં કારણે દુઃખ થાય છે, પરંતુ સંયમને નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરવાથી કોઈ પણ દુઃખ થતું નથી. કદાચ કોઈ પ્રકારના કર્મોદયથી તેને દુઃખ પણ આવી પડે તો તે દુઃખ તે જીવને સંયમમાં અરતિ લાવતું કારણ થતું નથી, એ વાત નીચે લખેલા શ્લોકથી પ્રગટ કરી છે—

“ ક્ષિતિતલશયનં વા, પ્રાન્તમૈક્ષાશનં વા,  
સહજપરિભવો વા, દુષ્ટદુર્માપિતં વા ।  
મહતિ ફલવિશેષે, નિત્યમભ્યુચતાનાં,  
ન મનસિ ન શરીરે, દુઃખમુત્પાદયન્તિ ” ॥ ૧ ॥

ફિરમી—“ તળસંથારનિષણ્ણો વિ મુણિવરો નદ્ધરાગમયમોહો ।  
જં પાવઙ્ મુત્તિસુહં, તં કત્તો ચક્કવટ્ટી વિ ” ॥ ૧ ॥

मोहनीयक्षयोपशमेनाधिगतचारित्रस्य कदाचित्पुनर्मोहनीयोदयादरतिरूपज्ञा,  
तस्याः क्षयार्थमुपदिश्यत-इति तात्पर्यम् ।

नन्वनेनारतिमते मेधाविन उपदेशो, यश्च मेधावी स परिज्ञातभवस्वरूप एव  
भवति, तस्मिंश्चारतिमत्त्वस्यासम्भवाच्छायातपयोरिव सहानवस्थानरूपविरोध-  
सत्त्वान्मेधावित्चारतिमत्त्वयोः कथमेकत्र स्थितिः ? । उक्तञ्च—

इसका भाव यही है—कि भूमि पर सोना, अन्तप्रान्त भिक्षा का सेवन  
करना चाहे, कोई तिरस्कार करे, चाहे दुष्ट खोटे २ वचन भी कहें, तो भी  
जिन साधु पुरुषों की प्रवृत्ति उत्तम फल के लाभ करने में सावधान है उनके  
लिये इन बातों से मन में और शरीर में कोई भी कष्ट नहीं होता है।  
“तणसंथारनिसण्णो” घासकी शय्या पर बैठे हुए रागमदमोह रहित मुनि  
निवृत्तिभावसे जिस सुखका अनुभव करता है उस प्रकार के सुख का  
अनुभव रत्नसिंहासन पर बैठा हुआ चक्रवर्त्ती भी नहीं कर सकता ॥१॥

शंका—चारित्र मोहनीय कर्मके क्षयोपशम से चारित्र की जिसे  
प्राप्ति हो चुकी है और फिर बाद में चारित्रमोहनीय की किसी एक  
प्रकृति के उदय से उसमें जिसे अरतिभाव हो गया है ऐसे अरतिभावयुक्त  
मेधावी के लिये आपका यह उपदेश कि—“गृहीत-चारित्र में अरतिभाव  
को दूर करे” लागू होता है । परन्तु जो मेधावी है वह तो संसार के स्वरूप  
का जानकार ही होता है, उसमें अरतिपने का सद्भाव तो असंभव ही  
है । क्यों कि जिस प्रकार छाया और आतप-धूप का एक जगह एक साथ

એનો ભાવ એ છે કે—ભૂમિ ઉપર સુવું, અન્ત પ્રાન્ત-ભિક્ષા સેવન કરવી,  
ભલે કોઈ તિરસ્કાર કરે અને દુષ્ટ ખોટા વચન પણ બોલે તો પણ જે  
સાધુપુરુષ ઉત્તમ ફળનો લાભ કરવામાં સાવધાન છે તેને આવી વાતોથી મનમાં  
અને શરીરમાં કોઈ પણ કષ્ટ થતું નથી. “તણસંથારનિસણ્ણો” ઘાસની શય્યા  
પર બેઠેલા, રાગ મદ મોહ રહિત મુનિ નિવૃત્તિ ભાવથી જે નિર્દોષતારૂપ સુખનો  
અનુભવ કરે છે તે સુખનો અનુભવ રત્નસિંહાસન ઉપર બેઠેલો ચક્રવર્તી પણ  
કરી શકતો નથી. ॥ ૧ ॥

શંકા—ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમથી ચારિત્રની જેને પ્રાપ્તિ થયેલી  
છે, અને પછી ચારિત્ર મોહનીયની કોઈ એક પ્રકૃતિના ઉદયથી તેમાં જેને અરતિ-  
ભાવ થયો છે એવા અરતિભાવયુક્ત મેધાવી માટે આપનો એ ઉપદેશ—“ગૃહીત-  
ચારિત્રમાં અરતિભાવને દૂર કરે” લાગુ થાય છે. પરંતુ જે મેધાવી છે તે તો  
સંસારના સ્વરૂપનો જાણકાર હોય છે, તેમાં અરતિપણના સદ્ભાવનો તો અસંભવ  
જ છે, કારણ કે જે પ્રકારે છાયા અને તડકાનો એક જગ્યાએ એકી સાથ રહેવું

“તજ્ઞાનમેવ ન ભવતિ, યસ્મિન્નુદિતે વિભાતિ રાગગણઃ ।

તમસઃ કુતોઽસ્તિ શક્તિર્દિનકરકિરણાગ્રતઃ સ્થાતુમ્ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

મોહગ્રહગ્રહિલોઽજ્ઞાની સંયમેઽરતિં, વિષયાભિષ્વજ્ઞે કામિન્યાદૌ રતિં ચ કરોતિ, મેધાવી તુ યથા હસ્તી લઘુવૃક્ષે ઘર્ષણં ન કરોતિ તથૈવ તુચ્છે કામિન્યાદૌ રતિં ન વિદધાતિ, કથં તર્હિ પ્રકૃતે મેધાવિનોઽરતિસમ્ભવો વિરોધસત્ત્વાદિતિ ચેન્ન ।

રહના વિરુદ્ધ હૈ, उसी प्रकार मेधावित्व का और अरतिमत्त्व का भी एक जगह एक साथ रहना विरुद्ध ही है । फिर इन दोनों का एक जगह युगपत् कहना कैसे संभव हो सकता है ? यही बात अन्यत्र भी कही है—

“ तज्ज्ञानमेव न भवति, यस्मिन्नुदिते विभाति रागगणः ।

तमसः कुतोऽस्ति शक्तिः,—दिनकरकिरणाग्रतः स्थातुम् ॥ १ ॥” इति॥

बहु ज्ञान ज्ञान ही नहीं है कि जिस के उदित होने पर रागादि गणका सद्भाव रहे । क्या सूर्य के उदय होने पर भी अंधकार रह सकता है ? कभी नहीं ॥ १ ॥ जो मोह रूपी ग्रहसे उन्मत्त हो रहे हैं—ऐसे अज्ञानी जीव ही संयम में अरति और शब्दादि विषयों में रति किया करते हैं । परन्तु जो मेधावी होते हैं—वे जिस प्रकार हाथी एक छोटे वृक्ष से घर्षण नहीं करता उसी प्रकार संसार के तुच्छ पदार्थों में भी रति नहीं करते । किन्तु उनकी उनमें अरति और संयम में रति रहती है । फिर यहां पर मेधावी को अरति होने का संभव कैसे कहा ?

અશક્ય છે તે પ્રકારે મેધાવિત્વને અરતિભાવને પણ એક જગ્યાએ સાથ રહેવું વિરુદ્ધ જ છે, પછી એ બન્નેનું એક જગ્યાએ ભેડાણુ કહેવું કેવી રીતે સંભવ થઈ શકે, આ વાત બીજી જગ્યાએ પણ બતાવી છે કે:—

“ तज्ज्ञानमेव न भवति, यस्मिन्नुदिते विभाति रागगणः ।

तमसः कुतोऽस्ति शक्ति-दिनकरकिरणाग्रतः स्थातुम् ” ॥ ૧ ॥

તે જ્ઞાન જ્ઞાન જ નથી કે જેના ઉદય થવાથી રાગાદિગણનો સદ્ભાવ રહે, સૂર્યનો ઉદય થવાથી શું અંધકાર રહી શકે છે ? કદિ નહિ ॥ ૧ ॥

જે મોહરૂપી ગ્રહથી ઉન્મત્ત થઈ રહેલ છે એવા અજ્ઞાની જીવ જ સંયમમાં અરતિ અને શબ્દાદિ વિષયોમાં રતિ કરે છે. પરંતુ જે મેધાવી હોય છે તે જેમ હાથી નાના વૃક્ષથી ઘર્ષણુ કરતો નથી તે પ્રકાર સંસારના તુચ્છ પદાર્થોમાં રતિ નથી કરતાં પણ તેની તેમાં અરતિ અને સંયમમાં રતિ જ રહે છે. વળી આ ઠેકાણે મેધાવીને અરતિ હોવાનો સંભવ પણ કેમ હોય.



અનેન ચ સમધિગતચારિત્રસ્યોપદેશં પ્રદાતુકામ સૂત્રકારઃ । ચારિત્રં પ્રતિ જ્ઞાનસ્ય હેતુતયા જ્ઞાનરૂપકારણાભાવાચ્ચારિત્રકાર્યાસત્ત્વં સર્વસમ્મતં, ન પુનરત્ર જ્ઞાનારત્યો-વિરોધઃ સમ્ભવતિ, કિન્તુ રત્યરત્યોવિરોધાચ્ચારિત્રમોહનીયોદયાત્સંયમે ભવત્યેવારતિ-જ્ઞાનાજ્ઞાનયોરેવ વિરોધાત્, ન સંયમારતિજ્ઞાનયોવિરોધ ઇતિ પ્રકૃતેઽપિ મેધાવિનોઽ-રતિસત્ત્વે વિરોધાભાવાત્ । સંયમારતિનિવૃત્તસ્ય કિં ભવતીત્યાહ 'ક્ષણે' ઇતિ, પરમ-સ્તોકઃ કાલઃ ક્ષણસ્તત્ર મુક્તો ભવતિ ।

ઉત્તર—ચારિત્ર કે પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ હોતા હૈ, જ્ઞાન રૂપ કારણ કે અભાવ મેં ચારિત્ર રૂપ કાર્યકા અભાવ રહતા હૈ, યહ સબ માનતે હૈં । યહાં પર જ્ઞાન મેં ઓર અરતિ મેં વિરોધ કા કથન નહીં કિયા હૈ કિન્તુ રતિ ઓર અરતિ કા વિરોધ હોને સે ચારિત્ર મોહનીય કે ઉદય સે સંયમ મેં અરતિ હોતી હૈ । જ્ઞાન ઓર અજ્ઞાન મેં હી વિરોધ હૈ સંયમ મેં અરતિ કા ઓર જ્ઞાન કા કોઈ વિરોધ નહીં હૈ । ઇસલિયે મેધાવી હોને પર ભી સંયમ મેં અરતિ કા સદ્ભાવ હોતા હૈ । ઇસ મેં કિસી પ્રકારકા વિરોધ નહીં હૈ ।

ટીકાકાર કા યહ અભિપ્રાય હૈ કિ જિસને ચારિત્ર-સંયમ અંગીકાર કર લિયા હૈ વહ યદિ જ્ઞાની હૈ તો ભી ઉસે ચારિત્ર મોહકે ઉદય સે ઉસમેં અરતિભાવ ઉત્પન્ન હો સકતા હૈ । ક્યોંકિ ચારિત્ર કે પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ-કારણ હૈ, જહાં કારણ કા અભાવ હૈ વહાં કાર્યકા ભી અભાવ હોતા હૈ જબ જ્ઞાન રૂપ કારણ કા સદ્ભાવ હી નહીં હૈ તબ ઉસકે કાર્ય રૂપ ચારિત્ર કા સદ્ભાવ કૈસે હો સકતા હૈ ? નહીં હો સકતા । ઇસલિયે ઉસે જ્ઞાનસંપન્ન હોના હી યાહિયે ।

ઉત્તર—ચારિત્રને પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ હોય છે. જ્ઞાનરૂપ કારણના અભાવમાં ચારિત્રરૂપ કાર્યનો અભાવ રહે છે, એ બધા માને છે. આ ઠેકાણે જ્ઞાનમાં અને અરતિમાં વિરોધનું કથન નથી કર્યું. પણ રતિ અરતિનો વિરોધ હોવાથી ચારિત્ર-મોહનીયના ઉદયથી સંયમમાં અરતિ થાય છે. જ્ઞાન અને અજ્ઞાનમાં જ વિરોધ છે. સંયમમાં અરતિનો અને જ્ઞાનનો કોઈ વિરોધ નથી માટે મેધાવી હોવા છતાં પણ સંયમમાં અરતિનો સદ્ભાવ થાય છે તેથી કોઈ પ્રકારનો આમાં વિરોધ નથી.

ટીકાકારનો એ અભિપ્રાય છે કે જેણે ચારિત્ર-સંયમ અંગીકાર કરેલ છે તે જ્ઞાની છે તો પણ તેને ચારિત્રમોહના ઉદયથી તેમાં અરતિભાવ ઉત્પન્ન થઈ શકે છે. કેમકે ચારિત્રના પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ-કારણ છે, જ્યાં કારણનો અભાવ છે ત્યાં કાર્યનો પણ અભાવ થાય છે. જ્યાં જ્ઞાનરૂપ કારણનો સદ્ભાવ જ નથી ત્યાં તેના કાર્યરૂપ ચારિત્રનો સદ્ભાવ કેવી રીતે હોઈ શકે ? બદકે નથી થતો. માટે તેને જ્ઞાનસંપન્ન થવું જ જોઈએ, તેને અરતિભાવ ઉત્પન્ન

उसके अरति भाव उत्पन्न होने में कौन विरोध आता है? सहानवस्थालक्षण-साथमें नहीं रहने रूप विरोध वहीं पर होता है जो परस्पर में विरोधी होते हैं, जैसे शीत और उष्ण। ये परस्पर में विरोधी हैं इनका एक-साथ एक जगह रहना नहीं हो सकता। प्रकृत में ज्ञान और अज्ञान, रति और अरति ये परस्पर विरोधी दो धर्म हैं इनका भी एक जगह अवस्थान (रहना) नहीं हो सकता। गृहीत-चारित्र में रति ज्ञानपूर्वक होगी अतः वह ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम के साथ चारित्र मोहनीय के क्षयोपशम का कार्य है और अरति ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम के साथ चारित्र मोहनीय के उदय का कार्य है। उदय में और क्षयोपशम में बड़ा भारी अन्तर है, एक क्षयोपशम का कार्य है—एक उदय का कार्य है। अतः ये दोनों—रति और अरति—परस्पर विरोधी बातें युगपत् एकत्र नहीं रह सकतीं।

शंका—रति और अरति ये चारित्र मोहनीय के भेद स्वरूप नोकषाय के कार्य हैं इन्हें क्षयोपशम और उदय जन्य कैसे कहते हैं?

उत्तर—शंका ठीक है। वहां पर रति और अरति जो नोकषाय के उदय से मानी गई हैं उनसे इनमें भेद है। यहां पर रति शब्द का वाच्यार्थ चारित्र को निर्दोष रूप से पालन करने की भावना और तद-

થવામાં કયો વિરોધ આવે છે? સહાનવસ્થાનરૂપ સાથે નહિ રહેવા રૂપ વિરોધ ત્યાં જ થાય છે જે પરસ્પરમાં વિરોધી હોય છે. જેમ ઠંડી અને ગરમી એ પરસ્પરમાં વિરોધી છે તેનું એકી સાથે એક જગ્યાએ રહેવું બની શકતું નથી. પ્રકૃતમાં જ્ઞાન અને અજ્ઞાન, રતિ અને અરતિ, એ પરસ્પર વિરોધી બે ધર્મ છે તેઓનું પણ એક જગ્યાએ અવસ્થાન (રહેવું) બની શકતું નથી, લીધેલાં ચારિત્રમાં રતિ જ્ઞાનપૂર્વક જ થશે. માટે તે જ્ઞાનાવરણીયના ક્ષયોપશમ સાથે ચારિત્ર મોહનીયના ક્ષયોપશમનું કાર્ય છે અને અરતિ જ્ઞાનાવરણીયના ક્ષયોપશમ સાથે ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયનું કાર્ય છે, ઉદયમાં અને ક્ષયોપશમમાં ઘણો જ અંતર છે, એક ક્ષયોપશમનું કાર્ય છે. એક ઉદયનું કાર્ય છે માટે એ બન્ને—રતિ અને અરતિ પરસ્પર વિરોધી વાતો યુગપત્ એકત્ર રહી શકતી નથી.

શંકા—રતિ અને અરતિ એ ચારિત્રમોહનીયના ભેદસ્વરૂપ નોકષાયનું કાર્ય છે તેને ક્ષયોપશમ અને ઉદયજન્ય કેમ કહે છે?

ઉત્તર—શંકા ઠીક છે. ત્યાં જે રતિ અને અરતિ જે નોકષાયના ઉદયથી માનેલ છે તેનાથી એમાં ભેદ છે. આ ઠેકાણે રતિ શબ્દનો વાચ્યાર્થ ચારિત્રના નિર્દોષ રૂપથી પાલન કરવાની ભાવના અને તદનુકૂલ પ્રવૃત્તિ છે, અને અરતિનો



યદ્વા-આર્ષત્વાત્તૃતીયાર્થે સપ્તમી, ક્ષણેન=સ્તોકકાલેન અ-ઈ-ઉ-ઋ-ૠ-ઇત્યેવં-  
રૂપપશ્ચદ્વસ્વાક્ષરોચ્ચારણસમકાલેનેતિ યાવત્; યથાલ્યાતચારિત્રે સમ્યગ્રતૌ મુક્તો  
ભવતિ, સંયમસ્ય સમ્યક્પરિપાલનાત્સ્વલ્પકાલેનૈવ મોક્ષભાગી ભવતીતિ ભાવઃ ॥મુ.૦૧॥

નુકૂલ પ્રવૃત્તિ હૈ, ઓર અરતિકા અર્થ યહ હૈ કિ-લિયે હુએ સંયમ કે  
પાલન કરને મેં પ્રમાદ કો નહીં હટાના-યદ્વા તદ્વા પ્રવૃત્તિ કરના ।  
નોકષાય કે ઉદય સે જો રતિ ઓર અરતિ હોતી હૈ વે રાગ ઓર દ્વેષ કે  
વાચક હૈં । અતઃ પૂર્વોક્ત કથન નિર્દોષ હૈ ।

જિસકો સંયમ મેં અરતિ નહીં હૈ ઉસકો ક્યા હોતા હૈ ? વહ કહતે  
હૈ-‘ક્ષણે’ ઇતિ ।

જિસે સંયમ મેં અરતિ નહીં હૈ વહ ક્ષણ મેં મુક્ત હો જાતા હૈ । અત્યન્ત  
સૂક્ષ્મકાલ કો ક્ષણ કહતે હૈં । ક્ષણ, કાલ કા સબસે છોટા હિસ્સા હૈ  
ઇસસે સૂક્ષ્મ કાલ કા ઓર કોઈ અંશ નહીં હૈ । સંયમ મેં વહ શક્તિ હૈ  
કિ જીવ કો એક ક્ષણ મેં મુક્તિ પ્રાપ્ત કરા દેતા હૈ । ઈંધન કો જિસ પ્રકાર  
અગ્નિ જલાતી હૈ ઉસી પ્રકાર સંયમ મી કર્મરૂપી ઈંધન કો ભસ્મ કર  
ઇસ જીવ કો એક ક્ષણ મેં શુદ્ધ કર દેતા હૈ ।

અથવા-‘ક્ષણે મુક્તઃ’ યહાં પર આર્ષવાક્ય હોને સે તૃતીયા કે  
અર્થ મેં સપ્તમી વિભક્તિ સમજની ચાહિયે । તથા ચ-‘ક્ષણેન મુક્તઃ’  
ઇસ પ્રકાર પરિવર્તન હોને સે એક ક્ષણ કે દ્વારા મુક્ત હો જાતા હૈ, યહ

અર્થ એ છે કે-લીધેલા સંયમનું પાલન કરવામાં પ્રમાદને નહિ છોડતા તે.  
આડી અવળી પ્રવૃત્તિ કરવી. નોકષાયના ઉદયથી જે રતિ અને અરતિ થાય છે  
તે રાગ અને દ્વેષનું વાચક છે માટે પૂર્વોક્ત કથન નિર્દોષ છે.

જેને સંયમમાં અરતિ નથી તેને શું થાય છે? તે કહે છે—

જેને સંયમમાં અરતિ નથી તે ક્ષણમાં મુક્ત થાય છે. અત્યન્ત સૂક્ષ્મ  
કાળને ક્ષણ કહે છે ક્ષણ કાળનો બધાથી નાનો હિસ્સો છે માટે સૂક્ષ્મ કાળનો  
બીજો કોઈ અંશ નથી. સંયમમાં તે શક્તિ છે કે જીવને એક ક્ષણમાં મુક્તિ  
પ્રાપ્ત કરાવી આપે છે. અગ્નિ લાકડાને જે પ્રકારે બાળે છે તે પ્રકારે સંયમ પણ  
કર્મરૂપી ઈંધનને ભસ્મ કરી આ જીવને એક ક્ષણમાં શુદ્ધ કરી નાંખે છે.

અથવા ‘ક્ષણે મુક્તઃ’ આ ઠેકાણે આર્ષ વાક્ય હોવાથી ત્રીજી વિલક્ષિતના  
અર્થમાં સાતમી વિલક્ષિત સમજવી જોઈએ, અને ‘ક્ષણેન મુક્તઃ’ આ પ્રકારે  
પરિવર્તન હોવાથી એક ક્ષણથી મુક્ત થઈ બચે છે. એ અર્થ થાય છે, તેનો



યે ચારિત્રવિષયારતિમન્તસ્તે ચતુર્ગતિકસંસારે દુઃખસાગરમગ્રાશ્વેતસ્તતઃ પરિ-  
ભ્રમન્તીતિ દર્શયતિ—‘અણાણા’—ઇત્યાદિ ।

સૂત્રમ—અણાણા પુઢાવિ ઇગે નિયટ્ટંતિ, મંદા મોહેન  
પાઝડા, અપરિગ્ગહા ભવિસ્સામો સમુદ્ધાયલદ્ધેકામે અભિગાહડ,  
અણાણા મુણિણો પડિલેહંતિ, ઇત્થ મોહે પુણો પુણો સન્ના નો  
હવ્વાણ નો પારાણ ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા—અનાજ્ઞયા સ્પૃષ્ટા અપ્યેકે નિવર્તન્તે, મન્દા મોહેન પ્રાવૃતાઃ, અપરિગ્રહા  
ભવિષ્યામઃ, સમુત્થાય લબ્ધવાન્ કામાનાભિગાહતે, અનાજ્ઞયા મુનયઃ પ્રત્યુપેક્ષન્તે,  
અત્ર મોહે પુનઃ પુનઃ સન્ના નો હવ્યાય નો પારાય ॥ સૂ. ૨ ॥

ટીકા—‘અનાજ્ઞયે’—ઇત્યાદિ, આજ્ઞા=જ્ઞાનાચારાદિપ્રવૃત્તિરૂપો જિનાદેશઃ, ત-  
દ્વિપરીતા અનાજ્ઞા, તયા સ્પૃષ્ટાઃ=પરીપહોપસર્ગૈશ્ચલિતચેતસઃ, એકે=કણ્ડરીકપ્રભૃતયો  
અર્થ હોતા હૈ । ઇસ કા ભાવ યહ હૈ કિ યથાખ્યાત ચારિત્ર મેં જબ ઇસ  
જીવ કી રતિ-રમણ-હો જાતી હૈ તબ યહ ‘અ ઇ ઉ ઋ લૃ’ ઇન પાંચ  
હ્રસ્વ અક્ષરોં કે ઉચ્ચારણ કરને મેં જિતના સમય લગતા હૈ ઉતને સમય  
માત્ર મેં સિદ્ધ ગતિ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ અર્થાત્-સંયમ કો નિર્દોષ રીતિ  
સે પાલને સે થોડે હી કાલ મેં યહ જીવ મુક્તિકા લાભ કર લેતા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

જિનકી ચારિત્ર મેં રતિ નહીં હૈ વે ઇસ ચતુર્ગતિરૂપસંસાર સાગર  
મેં દુઃખોં કી અનન્ત બોદ્ધે કો ફેલતે હુણ ઇતસ્તતઃ ભ્રમણ કરતે રહતે હૈ ।  
ઇસ બાત કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

‘અણાણા’ ઇત્યાદિ । જ્ઞાનાચારાદિકોં મેં પ્રવૃત્તિ કરને રૂપ જો  
જિનેન્દ્ર ભગવાન કા આદેશ હૈ ઉસકા નામ આજ્ઞા હૈ ઇસસે વિપરીત

ભાવ એ છે કે યથાખ્યાત ચારિત્રમાં જ્યારે આ જીવની રતિ-રમણ થાય છે,  
ત્યારે તે ‘અ ઇ ઉ ઋ લૃ’ આ પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણ કરવામાં જેટલો  
સમય લાગે છે તેટલા સમય માત્રમાં સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરી લે છે. અર્થાત્  
સંયમને નિર્દોષ રીતિથી પાળવાથી થોડાજ કાળમાં તે જીવ મુક્તિનો લાભ  
કરી લે છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

જેની ચારિત્રમાં રતિ નથી તે આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારસાગરમાં દુઃખોના  
અનંત યોગને ઉઠાવતાં આંહીતહીં ભ્રમણ કરે છે, એ વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

‘અણાણા’ ઇત્યાદિ. જ્ઞાનાચારાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવા રૂપ જે જિનેન્દ્ર  
ભગવાનનો આદેશ છે તેનું નામ આજ્ઞા છે, તેનાથી વિપરીત પ્રવૃત્તિ અનાજ્ઞા છે.

મન્દાઃ=જડા અનવગતકર્તવ્યવિવેકા इति यावत्, મોહેન=અજ્ઞાનેન મિથ્યાત્વ-મોહનીયેન વા, પ્રાવૃતાઃ=સર્વતોડવગુણિતા મોહાશ્લિષ્ટાત્માન इति यावत्, 'અપિ'-શબ્દસ્ય નિવર્તન્ત इत्यनेन સમ્બન્ધઃ, સકલસાવધવિરતિ રૂપાત્સંયમાન્નિવર્તન્તે, અપિ-નિશ્ચયેન, પ્રાપ્તચારિત્રોઽપિ મોહનીયોદયેન પરીષદોપસર્ગાવિર્ભાવાત્પરિધૃતસાધુવેષોઽપિ ભ્રષ્ટચારિત્રો ભવતીત્યર્થઃ ।

પ્રવૃત્તિ અનાજ્ઞા હૈ । इस अनाज्ञा से जो स्पृष्ट हैं अर्थात् जो परीषद् और उपसर्गों के आने पर चञ्चलचित्त हो जाते हैं—गृहीत चारित्र में अरतिभाव रखनेवाले बन जाते हैं वे कंडरीक आदि कर्तव्याकर्तव्य-विवेकशून्य मनुष्य अज्ञान अथवा मिथ्यात्व मोहनीय से सर्वथा युक्त होते हुए उस चारित्र से अवश्य भ्रष्ट हो जाते हैं । सूत्र में 'अपि' शब्द निश्चय अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । इसका संबंध 'निवर्तन्ते' इस क्रिया के साथ होता है । जिसने सर्वसावधानिवृत्तिरूप चारित्रधर्म को प्राप्त कर लिया है—ऐसा व्यक्ति यदि मोह के उदयसे परीषद् और उपसर्ग के आने पर अपने चारित्र से विचलित हो जाता है तो उसे चारित्रभ्रष्ट ही समझना चाहिये अर्थात् वह भ्रष्टचारित्री है । ऐसे व्यक्ति अपने को साधु के वेष से सुसज्जित कर लोगों की दृष्टि में साधुपने का ढोंग रचते हैं । यद्यपि इनके अन्तरंग में उस वेष से जरा भी प्रेम नहीं होता है तो भी बाह्य में वे अपनी प्रवृत्ति इस प्रकार से प्रदर्शित करते हैं—कि जैसे ये सब

આ અનાજ્ઞાથી જે સ્પૃષ્ટ છે અર્થાત્ જે પરિષદ અને ઉપસર્ગોના આવવા પર ચંચલ થઈ જાય છે. લીધેલા ચારિત્રમાં અરતિભાવ રાખવાવાળાં બની જાય છે તે કંડરીક આદિ કર્તવ્યા-કર્તવ્ય વિવેકશૂન્ય મનુષ્ય અજ્ઞાન અથવા મિથ્યાત્વ મોહનીયથી સર્વથા યુક્ત હોવાથી તે ચારિત્રથી અવશ્ય ભ્રષ્ટ થઈ જાય છે.

સૂત્રમાં 'અપિ' શબ્દ નિશ્ચય અર્થમાં પ્રયુક્ત થયો છે તેનો સંબંધ 'નિવર્તન્તે' આ ક્રિયા સાથે થાય છે, જેણે સર્વસાવધાનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્ર ધર્મને પ્રાપ્ત કરી લીધો છે તેવો માણસ કદાચ મોહના ઉદયથી પરિષદ અને ઉપસર્ગ આવવાથી પોતાના ચારિત્રથી વિચલિત થાય છે તો તેને ચારિત્ર ભ્રષ્ટ જ સમજવો જોઈએ. અર્થાત્ તે ભ્રષ્ટચારિત્રી છે. એવી વ્યક્તિ પોતાને સાધુના વેષથી સુસજ્જિત કરી લોકોની દૃષ્ટિમાં સાધુપણનો ઢોંગ રચે છે, જો કે તેના અંતરંગમાં તે વેષથી જરા પણ પ્રેમ હોતો નથી તો પણ બાહ્યમાં તે પોતાની પ્રવૃત્તિ આ પ્રકારથી પ્રદર્શિત કરે છે કે—જાણે તે સાચો નિર્ઘન્ય છે. આ વાતનો

અસાધવોડપિ સ્વાત્માનં સાધું મન્યમાનાઃ કિં કુર્વન્તીત્યાહ—‘અપરિગ્રહા’—ઈતિ અપરિગ્રહાઃ=પરિ-સર્વતો મૂર્છાભાવેન ગૃહ્યત ઇતિ પરિગ્રહઃ, અવિદ્યમાનઃ પરિગ્રહો યેષામિત્યપરિગ્રહાઃ=નિર્ગ્રન્થા વયં ભવિષ્યામ ઇતિ દણ્ડિશાક્યાદયોઽવસન્નપાર્શ્વ-સ્થાદયો વા સમુત્થાય=સાધુવેષં ચારિત્રં ચ ગૃહીત્વા તતો લબ્ધાન્=પ્રાપ્તાન્ કામાન્=શબ્દાદિવિષયાન્ અભિગાહન્તે=સંશ્રયન્તે । અત્ર મૂલે આર્પણાદેકવચનમ્ । અત્ર ‘અપરિગ્રહા’ ઇતિ પશ્ચમમહાવ્રતોપાદાનાદવશિષ્ટાનિ ચત્વારિ મહાવ્રતાન્યપિ વિજ્ઞે-યાનિ, અપરિગ્રહે સર્વેષામન્તર્ભાવાત્ ।

નિર્ગ્રન્થ હૈં । इसी बात का खुलाशा ‘अपरिग्रहाः’ इस पद से सूत्रकारने किया है । जो मूर्छाभाव से ग्रहण किया जाता है उसका नाम परिग्रह है । यह परिग्रह जिनके विद्यमान नहीं है—वे अपरिग्रह हैं । दण्डी शाक्यादिक अथवा अवसन्न पासत्थादिक ‘हम निर्ग्रन्थ हैं अथवा आगे चलकर निर्ग्रन्थ हो जावेंगे’ इस अभिप्रायसे साधुवेष को और चारित्र को ग्रहण कर उसकी आड से अपनी वैषयिक वासना की तृप्ति करते हैं । इनकी इस प्रकार की बाह्य प्रवृत्ति देखकर लोग धार्मिक भावना से उनकी हर एक प्रकार से सेवा करते हैं, जिस वस्तु की उन्हें आवश्यकता होती है उसकी पूर्ति करते रहते हैं । इस साधुपने के बहाने से उन्हें जो कुछ भी मिलता है सिर्फ वे उससे अपनी वैषयिक वासना की ही पूर्ति करते रहते हैं वास्तविक सर्वसावद्य विरति रूप चारित्र का आचरण उनसे दूर ही रहता है । इसी बात की पुष्टि ‘समुत्थाय लब्धात् कामान् अभिगाहन्ते’ इस पङ्क्ति से सूत्रकार ने की है । सर्वसावद्य-विरतिरूप चारित्र को प्राप्त

ખુલાસો ‘અપરિગ્રહાઃ’ આ પદથી સૂત્રકારે કયો છે. જે મૂર્છાભાવથી ગ્રહણ કરે છે તેનું નામ પરિગ્રહ છે આ પરિગ્રહ જેને વિદ્યમાન નથી તે અપરિગ્રહ છે. દંડી શાક્યાદિક અને અવસન્ન પાસત્થાદિક ‘અમે નિર્ગ્રન્થ છીએ’ ‘અથવા આગળ આવીને નિર્ગ્રન્થ થઈ જશું’ આ અભિપ્રાયથી સાધુવેષ અને ચારિત્રને ગ્રહણ કરી તેની આડથી પોતાની વૈષયિક વાસનાની તૃપ્તિ કરી લે છે. તેની આ પ્રકારે બાહ્ય પ્રવૃત્તિ દેખીને લોક ધાર્મિક ભાવનાથી તેની દરેક પ્રકારથી સેવા કરે છે. જે વસ્તુની તેને આવશ્યકતા હોય તેની પૂર્તિ કરતા રહે છે, આ સાધુપણના બહાનાથી જે કંઈ પણ મળે છે ફક્ત તેનાથી પોતાની વૈષયિક વાસનાની જ પૂર્તિ કરે છે. વાસ્તવિક સર્વસાવધવિરતિરૂપ ચારિત્રનું આચરણ તેનાથી દૂર જ રહે છે. આ વાતની પુષ્ટિ ‘સમુત્થાય લબ્ધાન્ કામાન્ અભિગાહન્તે’ આ પંક્તિથી સૂત્રકારે કહ્યું છે. સર્વસાવધવિરતિરૂપ ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરવાને માટે બાહ્ય અને



કરને કે લિયે બાહ્ય ઓર આભ્યન્તર કારણોં કી જરૂરત હોતી હૈ । બાહ્ય કારણ સે ઇતના કામ નહીં બનતા જિતના અન્તરંગ સે । ચારિત્ર કો અંગી-કાર કરને મેં યદ્યપિ ઉપાદાન કારણ આત્મા હૈ પરન્તુ ઇન દો બાહ્ય આભ્યન્તર કારણોં સે ઉપાદાન મેં વહ શક્તિ આજાતી હૈ કિ જિસસે ડસે અપને લિયે હુણ સંયમ મેં રતિ ઇવં સંસાર-શરીર ઓર ભોગોં મેં અરતિ સ્વતઃ આજાતી હૈ । પ્રકૃત મેં યહાં ચારિત્રમોહનીય કા ઉપશમાદિક અન્તરંગ કારણ હૈ ઓર પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં સે સર્વથા વિરતિભાવ કી જાગૃતિ બાહ્ય કારણ હૈ । જૈસે અગ્નિ ઓર ધૂમ કી ( પરસ્પર અનિયતિ ) વિષમ વ્યાપ્તિ હૈ ડસ પ્રકાર સમ્યક્ ચારિત્ર કે સાથ અન્તરંગ કારણ ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમ કી વિષમ વ્યાપ્તિ નહીં હૈ-અર્થાત્ પરસ્પર સમનિયત હૈ, જહાં પર ચારિત્રમોહનીય કા ઉપશમાદિ હૈ વહાં પર નિયમ સે સમ્યક્ ચારિત્ર હૈ ઓર જહાં પર સમ્યક્ ચારિત્ર હૈ વહાં પર નિયમ સે ચારિત્ર મોહનીય કા ઉપશમાદિ હૈ । ઇસ પ્રકાર સમ્યક્ ચારિત્ર ઓર ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમાદિકોં કી સમવ્યાપ્તિ ( પરસ્પર નિયતિ ) હૈ । પરન્તુ અન્તરંગ મેં ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમાદિક કે અભાવ મેં જો બાહ્ય મેં સર્વ-સાવધવિરતિ રૂપ ચારિત્ર કી સત્તા માલૂમ પડતી હૈ-વહ

આભ્યન્તર કારણોની જરૂરત હોય છે. બાહ્ય કારણોથી આટલું કામ નથી બનતું જેટલું અન્તરંગથી. ચારિત્રના અંગીકાર કરવામાં યદ્યપિ ઉપાદાન કારણ આત્મા છે પરંતુ આ બે-બાહ્ય, આભ્યન્તર-કારણોથી ઉપાદાનમાં તે શક્તિ આવી જાય છે કે જેનાથી તેને પોતાને માટે સંયમમાં રતિ અને સંસાર શરીર અને ભોગોમાં અરતિ આપમેળે આવે છે. પ્રકૃતમાં અહીં આ ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિક અન્તરંગ કારણ છે, અને પાંચે ધન્દ્રિયોના વિષયોથી સર્વથા વિરતિભાવની જાગૃતિ બાહ્ય કારણ છે, જેમ અગ્નિ અને ધૂમની ( પરસ્પર અનિયતિ ) વિષમ વ્યાપ્તિ છે તે પ્રકારે સમ્યક્ચારિત્રની સાથે અન્તરંગ કારણ ચારિત્રમોહનીયના ઉપશમની વિષમ વ્યાપ્તિ નથી. અર્થાત્ પરસ્પર સમનિયત છે. જ્યાં ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિ છે ત્યાં નિયમથી સમ્યક્ચારિત્ર છે. અને જ્યાં સમ્યક્ચારિત્ર છે ત્યાં નિયમથી ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિ છે. આ પ્રકારે સમ્યક્ચારિત્ર અને ચારિત્રમોહનીયના ઉપશમાદિકોની સમ વ્યાપ્તિ ( પરસ્પર નિયતિ છે ) પરંતુ અન્તરંગમાં ચારિત્ર મોહનીયના ઉપશમાદિકના અભાવમાં જે બાહ્યમાં સર્વસાવધ વિરતિરૂપ ચારિત્રની સત્તા માલૂમ પડે છે તે કેવળ એક ઢોંગ છે. તે ઢોંગ ઉલ્ટો

કેવલ એક ઢોંગ હૈ । વહ ઢોંગ ઉલ્ટા જીવ કો કર્મબન્ધ કા કારણ હોતા હૈ । એસે વ્યક્તિ ચારિત્ર કા ઢોંગ રચકર ઉસકી આઢ મેં અપને વિષય-કષાયોં કી હી પુષ્ટિ કિયા કરતે હૈં । યદ્યપિ સૂત્રમેં ‘અપરિગ્રહ’ હસ શબ્દ સે કેવલ પાંચવેં મહાવ્રત કા હી ગ્રહણ બતલાયા હૈ પરંતુ અવશિષ્ટ ચાર મહાવ્રતોંકા ભી હસી એક પદ સે ગ્રહણ હો જાતા હૈ ।

હસી પ્રકાર જો વાસ્તવિક રૂપ સે અપરિગ્રહી નહીં હૈં કિન્તુ પરિગ્રહ-ત્યાગ કા ઢોંગ રચતે હૈં, ઉસીસે યહ ભી સમજ્ઞ લેના ચાહિયે કિ જો વાસ્તવિક રૂપસે અહિંસાદિમહાવ્રતધારી નહીં હૈં, કિન્તુ અહિંસામહા-વ્રતી આદિ હોને કા ઢોંગ કરતે હૈં, વે કેવલ લોકોં કી પ્રતારણા કરને કે લિષ્ટ હી અપની એસી પ્રવૃત્તિ કરતે હૈં । દ્રવ્યલિઙ્ગી સાધુઓં કી પ્રવૃત્તિ હસી ઢંગ કી હી હોતી હૈ । ઇનકે આત્મા મેં ઉસ સમકિતજ્યોતિ કા બિલકુલ હી પ્રકાશ નહીં હોતા હૈ કિ જિસકે સઙ્ગાવ સે મહાવ્રતોં મેં સમ્યક્પના આતા હૈ । ઇનકે ઉપર કે મહાવ્રત હૈ । જિસ પ્રકાર નટ અનેક વેષોં કો ધારણ કરતા હુઆ ભી અન્તરઙ્ગ મેં ઉન ૨ વેષોંકે પરિણામોં સે સર્વથા શૂન્ય રહતા હૈ ઉસી પ્રકાર યે દ્રવ્યલિઙ્ગી ભી બાહ્ય મેં મહા-વ્રતી હોનેકા કેવલ એક ઢોંગ હી કિયા કરતે હૈં ઉસસે ઉનકી આત્મા

ભવને કર્મબન્ધનું કારણ થાય છે, એવી વ્યક્તિ ચારિત્રને ઢોંગ રચીને તેની આડમાં પોતાના વિષય કષાયોની જ પુષ્ટિ કરે છે, યદ્યપિ સૂત્રમાં ‘અપરિગ્રહ’ આ શબ્દથી કેવળ પાંચમાં મહાવ્રતનું જ ગ્રહણ બતાવ્યું છે પરંતુ અવશિષ્ટ ચાર મહાવ્રતોનું પણ એમ એક પદથી ગ્રહણ થાય છે.

આ પ્રકારે જે વાસ્તવિક રૂપથી અપરિગ્રહી નથી પણ પરિગ્રહત્યાગને ઢોંગ રચે છે તેનાથી એ પણ સમજી લેવું જોઈએ કે જે વાસ્તવિક રૂપથી અહિંસાદિ મહાવ્રતધારી નથી પણ અહિંસા-મહાવ્રતી આદિ હોવાનો ઢોંગ કરે છે તેઓ કેવળ લોકોની પ્રતારણા કરવા માટે જ પોતાની એવી પ્રવૃત્તિ કરે છે. દ્રવ્યલિંગી સાધુઓની પ્રવૃત્તિ આ ઢંગની હોય છે. તેના આત્મામાં સમકિત જ્યોતિનો બિલકુલ જ પ્રકાશ નથી હોતો કે જેના સઙ્ગાવથી મહાવ્રતોમાં સમ્યક્પણ આવે. તેના ઉપરના મહાવ્રતો છે. જે પ્રકારે નટ અનેક વેષોને ધારણ કરે છે પણ અંતરંગમાં તે તે વેષોના પરિણામોથી સર્વથા શૂન્ય રહે છે, તે પ્રકારે એ દ્રવ્યલિંગી પણ બાહ્યથી મહાવ્રતી હોવાનો કેવળ એક ઢોંગ જ કરે છે, જેનાથી તેનો આત્મા બિલકુલ રંજિત થતો નથી, ભલે તેની પ્રવૃત્તિથી બાહ્યજન રંજિત થાય, પરંતુ તેનો આત્મા સ્વતઃ તદનુકૂળ પ્રવૃત્તિથી શૂન્ય હોવાથી બિલકુલ



તદિત્યં દ્રવ્યલિङ્ગિનો નટા ઇવ તે હિંસામૃષાડદત્તાદાનાદિના લોકાન્ વચ્ચયન્તિ ।  
તે પુનસ્તદ્દામાય પ્રવૃત્તા ભવન્તીત્યાહ—‘અનાજ્ઞયે’—તિ ।

અનાજ્ઞયા=ભગવદાજ્ઞાબહિર્ભૂતયા સ્વચ્છન્દમત્યા મુનયઃ=મુનિવેષધારિણઃ,  
શબ્દાદિકામોપાયે પ્રત્યુપેક્ષન્તે=પ્રવર્તન્તે કામભોગવિનિવિષ્ટચિત્તા ભવન્તીત્યર્થઃ ।  
અત્ર=અસ્મિન્ કામભોગાસક્તિરૂપે મોહે, દ્રવ્યમોહે=મદ્યાદૌ, ભાવમોહે=સંસારેડજ્ઞાને  
બિલકુલ હી રંજિત નહીં હોતી હૈ । ખલે હી-इनकी प्रवृत्ति से बाह्यजन  
रंजित नहीं होती है, ખલે હી-इनकी प्रवृत्ति से बाह्यजन रंजित हो जावें,  
પરન્તુ इनका आत्मा स्वतः तदनुकूल-प्रवृत्ति से शुन्य होने से बिलकुल  
भी रंजित नहीं हो पाता है; હિંસા, ઝૂઠ, ચોરી આદિ આશ્રવોં મેં હી  
इनका अन्तरङ्ग लालसायुक्त बना रहता है । इसीसे ये लोकों को  
ઠગતે રહતે હૈ । ऐसी प्रवृत्ति इनकी क्यों होती है? इस का कारण बताते  
हुए सूत्रकार कहते हैं कि—‘अनाज्ञया मुनयः प्रत्युपेक्षन्ते’ महाव्रतों  
को धारण करने का ढोंग ये लोग इसी लिये करते हैं कि ये भगवदाज्ञा  
से बहिर्भूत हैं । भगवान की आज्ञा-ग्रहण किये हुए महाव्रतों को अन्त-  
रङ्ग की सच्ची लगन के साथ पालने की है । पांच आश्रवों का नवकोटि  
से त्याग किये बिना उनका शुद्ध पालन नहीं हो सकता है । जो इस प्रकार  
की आज्ञा से बहिर्भूत हैं और “जो हम कहते हैं वह सत्य एवं शुद्ध  
है ” इस प्रकार की स्वच्छन्द्र प्रवृत्तिशाली हैं वे मुनि वेषधारी साधु  
शब्दादिक पांच इन्द्रियों के विषयों में प्रवृत्त रहते हैं । “अत्र मोहे पुनः  
पुनः संज्ञा नो हव्याय नो पाराय” मोह दो प्रकार का है—एक द्रव्यमोह

પણ રંજિત થતો નથી, હિંસા, ઝુઠ, ચોરી, આદિ આશ્રવોમાં જે તેની અંતરંગ  
લાલસા બની રહે છે જેથી તે લોકોને ઠગતા રહે છે. એવી પ્રવૃત્તિ તેની કેમ  
થાય છે તેનું કારણ બતાવતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—

‘અનાજ્ઞયા મુનયઃ પ્રત્યુપેક્ષન્તે’ મહાવ્રતોને ધારણ કરવાનો ઢોંગ તે લોક  
એ માટે કરે છે કે—તેઓ ભગવદ્ આજ્ઞાથી બહિર્ભૂત છે. ભગવાનની આજ્ઞા  
અહણ કરેલા મહાવ્રતોને અંતરંગની સાચી લાગણીથી પાળવાની છે. પાંચ આશ્ર-  
વોના નવ કોટિથી ત્યાગ કર્યા વિના તેનું પાલન થતું નથી. જે આ પ્રકારની  
આજ્ઞાથી બહિર્ભૂત છે અને “જે અમે કહીએ છીએ તે સત્ય અને શુદ્ધ છે”  
આ પ્રકારની સ્વચ્છન્દ પ્રવૃત્તિશાલી છે તે મુનિવેષધારી સાધુ શબ્દાદિક પાંચ  
ઇન્દ્રિયોના વિષયોમાં પ્રવૃત્ત રહે છે. ‘અત્ર મોહે પુનઃ પુનઃ સંજ્ઞા નો હવ્યાય નો પારાય’  
મોહ બે પ્રકારનો છે—એક દ્રવ્યમોહ અને બીજો ભાવમોહ. મદ્યાદિક દ્રવ્યમોહ



ચ પુનઃ પુનઃ=અત્યન્તં મુહુર્વા સન્નાઃ=વિષયાભિલાષિણો મૂઢા નિમગ્નાઃ સન્તો નો દ્રવ્યાય, દ્રવ્યં=ગાર્હસ્થ્યં પ્રકામકામભોગિત્વં તસ્મૈ, પારઃ સંયમસ્તસ્મૈ=તદર્થં ન ભવતિ, નૈતલ્લોકાય ન પરલોકાય ચ, ન તે ગૃહસ્થા નાપિ મુનયો, યથા મધ્યેનદિનિમગ્નાસ્તે ન કથમપિ પારં ગન્તું શક્તુવન્તિ, અપિ તુ નિમજ્જન્ત્યેવ, તથૈવ તે ભવન્તીત્યર્થઃ, યે પરિશૃતસાધુવેષાઃ કામોપાયેષુ સજ્જન્તે તે ન ગૃહસ્થા નાપિ મુનયો વા ભવિતુમર્હન્તીતિ તાત્પર્યમ્ । અદ્વદ્વચિત્તાનાં મુનિવેષધારિણાં પૂર્વે હિરણ્ય-સુવર્ણ-ધન-ધાન્ય-ગૃહ-ગૃહિણી-પુત્ર-મિત્રાદેઃ પરિત્યક્તતયા ન ગૃહસ્થત્વં, ચારિત્રસ્ય સમ્યગપરિપાલનેન વાન્તા-ભિલાષિતયા નાપ્યનગારત્વમુપપદ્યતે इति भावः ॥ सू० २ ॥

और दूसरा भावमोह । मद्यादिक द्रव्यमोह है, संसार एवं अज्ञान भावमोह है । कामभोगों में आसक्तिका नाम मोह है । इन भोगों की आसक्तिमें जीव की प्रवृत्ति अज्ञान से होती है । कामभोगों की प्रवृत्ति को उत्तेजना मद्यादिक के सेवन से जीवों को मिलती है । इसलिये उन्हें द्रव्यमोह कहा है । विषयाभिलाषी मूढ जीव इस मोह में अत्यन्त अथवा बारंबार प्रवृत्ति करते हुए न तो यथेच्छ कामभोगादि भोग सकते हैं और न संयम ही पाल सकते हैं । जैसे नदी की मझधार में निमग्न हुआ प्राणी न इस पारका रहता है और न उस पार का रहता है, उसी प्रकार ऐसे प्राणी न इस लोक के रहते हैं और न उस लोक के ही रहते हैं—न वे सच्चे गृहस्थ ही बन पाते हैं और न सच्चे मुनि ही । नदी की मझधार में निमग्न प्राणी जिस प्रकार मझधार में ही डूब जाता है, उसी तरह से ये प्राणी भी साधुवेष छोड़कर विषयों में लवलीन बन बीच

છે, સંસાર અને અજ્ઞાન ભાવમોહ છે. કામભોગોમાં આસક્તિ તેનું નામ મોહ છે, તે ભોગોની આશક્તિમાં જીવની પ્રવૃત્તિ અજ્ઞાનથી થાય છે. કામભોગોની પ્રવૃત્તિને ઉત્તેજના મદ્યાદિકના સેવનથી જીવોને મળે છે, માટે તેને દ્રવ્યમોહ કહ્યો છે, વિષયાભિલાષી મૂઢ જીવ આ મોહમાં અત્યંત અને વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરવા છતાં પણ નથી યથેચ્છ કામભોગાદિ ભોગવી શકતા, અને નથી સંયમનું પાલન કરી શકતા. જેમ નદીની મઝધારમાં નિમગ્ન થયેલ પ્રાણી નથી આ પાર જઈ શકતું કે નથી તે પાર જઈ શકતું. એ પ્રકારે આવા પ્રાણી, નથી આ લોકના રહેતા અગર નથી પરલોકના રહેતા. નથી તેઓ સાચા ગૃહસ્થી બની શકતા, અને નહિ સાચા મુનિ. નદીની મઝધારમાં નિમગ્ન પ્રાણી જેમ મઝધારમાં જ ડુબી જાય છે તે પ્રકારે આ પ્રાણી પણ સાધુવેષ છોડીને વિષયોમાં લવલીન

ये संयमे रति, शब्दादिविषये चारतिं विदधानास्ते कीदृशा भवन्तीति दर्शयति-  
'विमुक्ता' इत्यादि।

મૂલમ—વિમુક્તા હુ તે જણા જે જણા પારગામિણો, લોભમ-  
લોભેન દુગુંછમાણે લછ્છે કામે નાભિગાહડ, વિનાવિ લોભં નિક્કલ્લમ્મ  
એસ અકમ્મે જાણડ પાસડ, પડિલેહાણ નાવકંલ્લડ, એસ અણ-  
ગારિ-ત્તિ પલુચ્છડ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—વિમુક્તા હુ તે જના યે જના: પારગામિન:, લોભમલોભેન જુગુપ્સમાનો  
લબ્ધાન્ કામાન્નાભિગાહતે, વિનાપિ લોભં નિષ્ક્રમ્ય એષ: અર્કમા જાનાતિ પશ્યતિ  
પ્રત્યુપેક્ષ્ય નાવકાઙ્ક્ષતિ એષ: અનગાર ઇતિ પ્રોચ્યતે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—‘વિમુક્તા’ ઇત્યાદિ, ‘પારગામિન:’ પારો મુક્તિસ્તદ્વેતુર્જ્ઞાનદર્શનચા-  
રિત્રાણ્યપિ પાર: કાર્યકારણયોરભેદાત્, તેન પારં મોક્ષં તદ્વેતુશ્ચ જ્ઞાનાદિકં ગત્તું=પ્રાપ્તું  
હી મેં લટકતે રહતે હૈં, ન વે સાધુ હી હૈં ઓર ન ગૃહસ્થ હી । સંયમ પાલન  
કરને મેં જિનકે ચિત્ત મેં દૃઢતા તો હૈં નહીં, પરંતુ મુનિ કા વેષ ધારણ  
કર લિયા હૈ, હિરણ્ય-સુવર્ણ, ધન-ધાન્ય, ગૃહ-ગૃહિણી પુત્ર-મિત્રાદિક કા  
મુનિવ્રત ધારણ કરને કે પહિલે ત્યાગ ભી કર દિયા હૈ અતઃ ગાર્હસ્થિક  
જીવન કે લિયે ઉપયોગી વસ્તુ કા ઉનકે પાસ સદ્ભાવ ન હોને સે ન ઉનમેં  
ગૃહસ્થતા હૈ, ઓર ચારિત્ર કા સમ્યક્ રીતિ સે પાલન નહીં કરને કી વજહ  
સે મુનિપના હી હૈ ॥ સૂ૦ ॥ ૨ ॥

જો સંયમ મેં રતિ એવં શબ્દાદિ વિષયોં મેં અરતિ કરતે હૈં, વે કૈસે  
હોતે હૈં? ઇસ બાત કા ખુલાશા કરતે હૈં—

‘વિમુક્તા હુ તે જણા’ ઇત્યાદિ । કાર્યકારણ મેં અભેદ-વિવક્ષા હોને સે

બની વચમાં જ લટકતા રહે છે. નથી તેઓ સાધુ છે અગર નથી તેઓ ગૃહસ્થી.  
સંયમ પાળવામાં જેના ચિત્તમાં દૃઢતા છે જ નહિ, પરંતુ મુનિનો વેષ ધારણ  
કરી લીધો છે. હિરણ્ય-સુવર્ણ ધન-ધાન્ય, ગૃહ-ગૃહિણી પુત્ર-મિત્રાદિકનો મુનિવ્રત  
ધારણ કરવા પહેલાં જ ત્યાગ કરેલ છે માટે ગૃહસ્થી જીવન માટે ઉપયોગી  
વસ્તુનો સદ્ભાવ ન હોવાથી નથી તેનામાં ગૃહસ્થીપણું અને આ ચારિત્રને સમ્યક્  
રીતિથી પાલન નહિ કરવાથી મુનિપણું પણ નથી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

જે સંયમમાં રતિ અને શબ્દાદિ વિષયોમાં અરતિ કરે છે તે કેવા હોય  
છે? તેનો ખુલાસો કરે છે.—

‘વિમુક્તા હુ તે જણા’ ઇત્યાદિ—કાર્યકારણમાં અભેદવિવક્ષા હોવાથી પાર

શીલં યેષાં તે પારગામિનો યે જના મુમુક્ષવસ્તે વિમુક્તા વિવિધભાવનયા દ્રવ્યતો  
વિત્તપરિવારસંસર્ગેણ, ભાવતો વિષયકષાયાદિતઃ પ્રતિસમયં મુચ્યમાના મોક્ષ્ય-  
માણા વા વિમુક્તાઃ હુ=નિશ્ચયેન ભવન્તીતિ સમ્બન્ધઃ। વિમુક્તાઃ કુતસ્તે ભવન્તીત્યાહ-  
'લોભ'—મિતિ 'લોભઃ' = લોભમોહનીયોદયેન પરવસ્તુગ્રહણેચ્છા, તમ્ અલોભેન=

પાર શબ્દ કા અર્થ મુક્તિ તથા—મુક્તિ કે કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, સમ્ય-  
ગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર હૈ । ઇસ પાર કો પ્રાપ્ત કરને કા જિનકા  
સ્વભાવ હૈ વે પારગામી કહે જાતે હૈ । જો મુમુક્ષુ હૈ વે અનેક પ્રકાર કી  
સાંસારિક ભાવનાઓં સે રહિત હોતે હૈ । 'વિમુક્ત' ઇસ પદ મેં 'વિ'  
ઉપસર્ગ ઓર 'મુક્ત' એસે દો શબ્દ હૈ । 'વિ' કા અર્થ અનેક પ્રકાર કી  
ભાવના હૈ । 'મુક્ત' શબ્દ કા અર્થ દ્રવ્ય ઓર ભાવ સે રહિત હોના હૈ  
'હુ' શબ્દ કા અર્થ નિશ્ચય હૈ । અર્થાત્ જિનકો મુક્તિ પ્રાપ્ત કરને કી  
ઇચ્છા હોતી હૈ એસે પ્રાણી નિયમતઃ દ્રવ્ય સે—ધનાદિક એવં પરિવાર કે  
સંસર્ગ સે તથા ભાવસે—વિષયકષાયાદિકોં સે પ્રતિસમય રહિત હોતે હૈ ।

લોભમોહનીય કે ઉદય સે પરવસ્તુ કે ગ્રહણ કરને કી ઇચ્છા  
કા નામ લોભ હૈ । ઇસસે વિપરીત અલોભ હૈ । 'જુગુપ્સમાન' શબ્દ કા  
અર્થ જીતને વાલા, યા નિગ્રહ કરને વાલા હૈ । વિમુક્ત હોને મેં યહ હેતુ-  
ગર્ભિત વિશેષણ હૈ । ઇસસે યહ નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈ કિ વે વિમુક્ત  
ઇસલિયે હૈ કિ ઊન્હોંને લોભ કો સંતોષ સે નિગૃહીત કર દિયા હૈ ।

શબ્દનો અર્થ મુક્તિ અને મુક્તિના કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્  
ચારિત્ર છે. આ પારને પ્રાપ્ત કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે પારગામી કહેવાય છે.

જે મુમુક્ષુ છે તે અનેક પ્રકારની સાંસારિક ભાવનાઓથી રહિત હોય છે.  
'વિમુક્ત' આ પદમાં 'વિ'નો અર્થ અનેક પ્રકારની ભાવના છે. 'મુક્ત' શબ્દનો  
અર્થ દ્રવ્ય અને ભાવથી રહિત થવું 'હુ' શબ્દનો અર્થ નિશ્ચય છે. અર્થાત્ જેને  
મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવાની ઇચ્છા થાય છે એવો પ્રાણી નિયમતઃ દ્રવ્યથી—ધનાદિક અને  
પરિવારના સંસર્ગથી, તથા ભાવથી—વિષયકષાયાદિકોથી પ્રતિસમય રહિત થાય છે.

લોભમોહનીયના ઉદયથી પરવસ્તુને ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છા તેનું નામ લોભ  
છે. તેથી વિપરીત અલોભ છે. 'જુગુપ્સમાન' શબ્દનો અર્થ છુતવાવાલા અને  
નિગ્રહ કરવાવાળા છે. વિમુક્ત હોવામાં તે હેતુગર્ભિત વિશેષણ છે તેથી એ નિષ્કર્ષ  
નીકળે છે કે તે વિમુક્ત એટલા માટે છે કે તેઓએ લોભને સંતોષથી નિગૃહીત  
કરેલ છે.



તદ્વિરુદ્ધેન સન્તોષેન જુગુપ્સમાનઃ=નિન્દન્, સૂત્રેઽસ્મિન્ પૂર્વં बहुवचनप्रसङ्गेऽत्रापि सर्वत्रैकवचनं तु जात्येकत्वविवक्षया समर्थनीयम् । लोभो हि संसारगत-पातने प्रथमो गण्यते । लोभस्तु जीवस्य विमोहनमाकुलीकरणमिति यावत्, लुब्धो

સૂત્ર મેં પહિલે बहुवचन का प्रयोग किया है, बाद में जो सर्वत्र एक वचन का प्रयोग हुआ है वह जाति की अपेक्षा से समझना चाहिये ।

परवस्तु को अपनाने की इच्छा लोभमोहनीय के उदय से जीवों को होती है । लोभ दो प्रकार का है—एक बादरलोभ, दूसरा सूक्ष्मलोभ । बादरलोभ का सद्भाव आगम में ९वें गुणस्थान तक, तथा सूक्ष्मलोभ का सद्भाव १०वें गुणस्थान तक प्रकट किया है । इसलिये जबतक आगे २ के गुणस्थानों की प्राप्ति नहीं हुई है तब तक ऐसे जीवों को लोभ का उदयरहता ही है, अतः जब लोभ का उदय है तो उसका कार्य भी वहां होना चाहिये ? इस शंका का निराकरण करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—‘लोभम् अलोभेन जुगुप्समानः’ वे जीव लोभकषाय को संतोष से जीतते हैं । मुमुक्षु जीव परवस्तु के लाभ से आकृष्ट एवं अलाभ से असंतुष्ट नहीं होते ।

लोभ का निराकरण करते हुए टीकाकार कहते हैं कि—जीवों को संसाररूपी गड्ढे में गिराने का सर्वप्रथम कारण लोभ माना गया है जो जीवों को आकुलितपरिणामी बना देता है । लुब्धक रात-दिन व्याकुल ही

સૂત્રમાં પહેલાં બહુવચનનો પ્રયોગ કરેલ છે બાદમાં જે સર્વત્ર એક વચનનો પ્રયોગ થયેલ છે તે બાતિની અપેક્ષાથી સમજવું બેઠ્યો.

પરવસ્તુને અપનાવવાની ઇચ્છા લોભમોહનીયના ઉદયથી થાય છે. લોભ બે પ્રકારના છે. એક બાદરલોભ, બીજો સૂક્ષ્મલોભ.

બાદરલોભનો સદ્ભાવ આગમમાં ૯મા ગુણસ્થાન સુધી, તથા સૂક્ષ્મલોભનો સદ્ભાવ ૧૦માં ગુણસ્થાન સુધી પ્રગટ કરેલ છે, માટે ન્યાંસુધી આગળ આગળના ગુણસ્થાનોની પ્રાપ્તિ નથી થઈ ત્યાં સુધી એવા જીવોને લોભનો ઉદય રહે જ છે, માટે ન્યારે લોભનો ઉદય છે તો તેનું કાર્ય પણ ત્યાં હોવું બેઠ્યો ? આ શંકાનું નિરાકરણ કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે—‘લોભમ્ અલોભેન જુગુપ્સમાનઃ’ તે જીવ લોભકષાયને સંતોષથી જીતે છે. મુમુક્ષુ જીવ પરવસ્તુના લાભથી આકૃષ્ટ અને અલાભથી અસંતુષ્ટ થતાં નથી.

લોભનું નિરાકરણ કરતાયકા ટીકાકાર કહે છે કે—જીવોને સંસારરૂપી ખાડામાં પડવાનું સર્વ પ્રથમ કારણ લોભ જ છે. લોભ જીવોને આકુલિતપરિણામી બનાવી

હિ રાત્રિન્દિવં સમાકુલ એવાવતિષ્ઠતે, 'કદા કુતઃ કથં કુત્ર ધનાદિકં લપ્સ્યે' इत्याशा-  
 ગ્રસ્તો દુર્લભપર્વતમપિ લિલઙ્ગયિષતિ, અપારપારાવારમપિ તિતીર્ષતિ, દુર્ગમગિરિકુબ્જેષુ  
 બંધ્રમીતિ, નિજબાન્ધવનિકરમપિ મિમારયિષતિ, દુર્ગમમપિ જિગમિષતિ, વહુ ભારં  
 વાવહીતિ, દુઃસહાં ક્ષુધમપિ સોદુમિચ્છતિ, પાપં ચિકીર્ષતિ, કુલશીલજાતિધૈર્યાણિ  
 ચ પરિજિહાસતિ, કિમધિકેન ? અજ્ઞાનાન્ધકારાવૃતાયાં લોભરાત્રૌ પ્રાણાતિપાતાદિ-  
 દોષતસ્કરૈરાત્મધનં લુણ્ઠયતિ, ચિત્તમહારણ્યે મોહાન્ધકારે લોભપિશાચં નર્તયતિ ।  
 લોભાકુલિતચેતા હિ જલે જીર્ણપત્રમિવ, વાયૌ લઘુતુળમિવ, ગગને શરન્મેઘઃ સ્વેતસ્તતઃ  
 સંસારે પરિભ્રમતિ । લોભિનો જનસ્ય સકલોઽપિ ગુણો દોષાયતે । લુબ્ધો હિ  
 સર્વાપદાસ્પદં ભવતિ, ઉક્તશ્ચ—

બના રહતા હૈ । વહ 'કિસ સમય કહાં સે કૈસે ધનાદિક કા અર્જન કરૂંગા'  
 इस आशा से प्रेरित हो दुर्लभ्य पर्वतादिकों को भी पार करने की इच्छा  
 रखता है, अपार समुद्र को भी तैरने की भावना रखता है, दुर्गम-पहाड़ी  
 झाड़ियों में भी भ्रमण करने की कामना करता है, अपने बांधवों को भी  
 मारने का मनोरथ करता रहता है, जहां कोई नहीं जा सकता ऐसे  
 भयंकर स्थान में भी जाने की चाहना करता है, बहुत भारी बोझ को  
 भी ढोता है, दुःसह क्षुधा को भी सहन कर लेता है, पाप करने के लिये  
 भी उतारु हो जाता है, अपने कुल, शील, जाति और धैर्य को मौका पड़ने  
 पर छोड़ने के लिये कटिबद्ध हो जाता है । अधिक क्या कहा जाय ? अज्ञान  
 रूपी अन्धकार से अच्छादित इस लोभरूपी महारात्रि में यह जीव  
 आत्मधन को प्राणातिपातादिकपापरूपी चोरों से सदा चुराता रहता है ।

દે છે. લુબ્ધક રાત દિવસ વ્યાકુળ જ બની રહે છે, 'કયા વખતે કયારે કેવી રીતે  
 ધનાદિકનું અર્જન કરું' આવી આશાથી પ્રેરિત થઈ ઓળંગી ન શકાય તેવા  
 પર્વતોને પણ પાર કરવાની ઇચ્છા કરે છે, અપાર સમુદ્રને તરવાની પણ ભાવના  
 રાખે છે, દુર્ગમ-પહાડી આડીઓમાં પણ ભ્રમણ કરવાની ઇચ્છા રાખે છે, પોતાના  
 ભાઈઓને પણ મારવાના મનોરથો સેવે છે, જ્યાં કોઈ જઈ શકતું નથી તેવા  
 ભયંકર સ્થાનમાં જવાની પણ હિંમત કરે છે, ઘણા ભારે બોજ પણ ઉઠાવે છે,  
 દુઃસહ ભૂખને પણ સહન કરી લે છે, પાપ કરવાને માટે પણ તૈયાર થઈ જાય  
 છે, પોતાનું કુળ, શીલ, જાતિ અને ધૈર્યને પણ વખત મળતાં છોડવાને તૈયાર  
 થઈ જાય છે. અધિક કેટલું કહેવું - અજ્ઞાનરૂપી અંધકારથી આચ્છાદિત આ  
 લોભરૂપી મહારાત્રિમાં આ જીવ આત્મધનને પ્રાણાતિપાતાદિકપાપરૂપી ચોરોથી



“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્ ।

તૃષાર્તો દુઃખમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

અત્ર લોભમલોભેન જુગુપ્સમાનઃ, ઇતિ કથનાત્ પ્રધાનાન્ત્યપસ્તિયાગપ્રદર્શનેન ‘પ્રાધાન્યેન વ્યપદેશઃ’ ઇતિ નિયમાત્ ક્રોધાદીનામપિ હેયતા પ્રદર્શિતા । અન્ય-ત્રાપિ પ્રોક્તમ્—

મોહરૂપી અંધકાર સે યુક્ત લોભી જીવ ચિત્તરૂપી ગહન જંગલ મેં લોભરૂપી પિશાચ કો સદા નચાતા રહતા હૈ । જિસ તરહ જલ મેં જીર્ણપત્ર હતસ્તતઃ ચક્કર કાટા કરતા હૈ, વાયુ કે શ્લોકોં મેં લઘુતૃણ જિસ પ્રકાર ઉડતા રહતા હૈ, આકાશ મેં શરત્કાલીન મેઘમાલા જૈસે યહાં સે વહાં. વહાં સે યહાં ધૂમા કરતી હૈ, ઁસી પ્રકાર લોભાકુલિતચિત્તવાલા પ્રાણી ભી સંસાર મેં યહાં વહાં ભમતા રહતા હૈ । લોભી જન કે સમસ્ત ગુણ દોષ રૂપ મેં હી પરિણત હો જાતે હૈં । જૈસે કહા હૈ—

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્ ।

તૃષાર્તો દુઃખમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ” ॥૧॥

લોભ સે બુદ્ધિ ચલિત હો જાતી હૈ, લોભ તૃષ્ણા કો પૈદા કરતા હૈ, તૃષ્ણા સે પીડિત પ્રાણી હસ લોક મેં ઔર પરલોક મેં દુઃખોં કો પાતા હૈ ॥૧॥ સૂત્ર મેં લોભકષાય કો સંતોષ સે નિગ્રહ કરને કા જો કથન કિયા ગયા હૈ વહ એક ઉપલક્ષણ હૈ, હસસે ક્રોધ, માન, માયા કા ભી

હમેશાં લુટાવતો રહે છે. ભોહરૂપી અંધકારથી યુક્ત લોભી જીવ ચિત્તરૂપી ગહન જંગલમાં લોભરૂપી પિશાચને હમેશાં નચાવતો રહે છે. જેવી રીતે પાણીમાં જીર્ણપાનકા અહીંતહીં ચક્કર ફર્યા કરે છે, વાયુની લહરોમાં લઘુ તૃણ જેમ ઉડતા રહે છે, આકાશમાં શરતકાલીન મેઘમાલા અહીંથી તહીં અને તહીંથી અહીં જેમ ધૂમ્મા કરે છે તે પ્રકારે લોભાકુલિત ચિત્તવાળા પ્રાણી પણ સંસારમાં આંહી તહીં ભમ્યા કરે છે, લોભી જનના સમસ્ત ગુણો દોષરૂપમાં જ પરિણત થાય છે. જેમ કહ્યું છે—

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્

તૃષાર્તો દુઃખમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ” ॥ ૧ ॥

લોભથી બુદ્ધિ ચલિત થાય છે. લોભ તૃષ્ણાને પૈદા કરે છે. તૃષ્ણાથી પીડિત પ્રાણી આ લોકમાં અને પરલોકમાં દુઃખોને પામે છે ॥ ૧ ॥

સૂત્રમાં લોભકષાયને સંતોષથી નિગ્રહ કરવાનું જે કથન કરવામાં આવ્યું છે તે એક ઉપલક્ષણ છે. તેથી ક્રોધ, માન, માયાનો પણ પોતપોતાનાં પ્રતિપક્ષી



“ ત્રિવિધં નરકસ્યેદં, દ્વારં નાશનમાત્મનઃ ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્ત્રયં ત્યજેત્ ” ॥ ૧ ॥

‘ લોભં સન્તોષેણ જયે ’—દિત્યાશયેન લોભમલોભેનેત્યુક્તમ્,  
લોભાદીન્ કેન કેન જયેદિત્યાહ દશવૈકાલિકે—

“ ઉવસમેણ હણે કોહં, માણં મદવયા જિણે ।

માયમજ્જવમાવેણ, લોહં સંતોસઓ જિણે ” ॥ ગાથા ૩૮ ॥

અપને ૨ પ્રતિપક્ષી ભાવોં સે નિગ્રહ કરના સમજ્ઞ લેના ચાહિયે । ક્યોંકિ લોભ કી તરહ મુમુક્ષુઓં કે લિયે વે ક્રોધ આદિ બી હેય હૈં । ચાર કષાયોં મેં અન્તિમ કષાય લોભ હૈ । ઉસકે ત્યાગ કે ઉપદેશ સે ક્રોધાદિ કા ત્યાગ કરના સ્વતઃ સિદ્ધ હો જાતા હૈ । કહા બી હૈ—

ત્રિવિધં નરકસ્યેદં દ્વારં નાશનમાત્મનઃ ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્ત્રયં ત્યજેત્ ॥

હસ શ્લોક સે અન્યત્ર બી કામ, ક્રોધ એવં લોભ કો નરક કા દ્વાર એવં અપને નાશ કા કારણ બતલાયા હૈ ।

શંકા—લોભ કો જિસ તરહ સે સંતોષ સે જીતા જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર ક્રોધાદિકષાયોં કો જીતને કે લિયે કિન ૨ ભાવોં કી જરૂરત હોતી હૈ ?

ઉત્તર—દશવૈકાલિક સૂત્ર મેં હન કષાયોં કો જીતને કે લિયે હન ભાવોં કો પ્રકટ કિયા હૈ—

ભાવોથી નિગ્રહ કરવાનું સમગ્ર લેવું જોઈએ. કારણ કે લોભની માફક મુમુક્ષુ-  
ઓને માટે ક્રોધ માન આદિ પણ હોય છે. ચાર કષાયોમાં અંતિમ કષાય લોભ છે.  
તેના ત્યાગના ઉપદેશથી ક્રોધાદિકનો ત્યાગ કરવો સ્વતઃ સિદ્ધ થઈ જાય છે.  
કહ્યું પણ છે—

“ ત્રિવિધં નરકસ્યેદં, દ્વારં નાશનમાત્મનઃ ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્ત્રયં ત્યજેત્ ” ॥ ૧ ॥

આ શ્લોકથી અન્યત્ર પણ કામ ક્રોધ અને લોભને નરકનું દ્વાર અને પોતાના નાશનું કારણ બતાવ્યું છે.

શંકા—લોભને જેમ સંતોષથી છૂટાય છે તેમ ક્રોધાદિ કષાયોને છૂટવા ક્યા ક્યા ભાવોની જરૂરત હોય છે ?

ઉત્તર—દશવૈકાલિક સૂત્રમાં આ કષાયોને છૂટવા માટે એ ભાવોને પ્રગટ કર્યા છે—

હાયા-ઉપશમેન હન્યાત્ક્રોધં, માનં માર્દવેન જયેત્ ।

માયામાર્જવભાવેન, લોભં સન્તોષતો જયેત્ ॥

इति क्रोधादीनां चतुर्णां त्यागोपायः प्रदर्शितः, असन्तोषरोगस्य लोभपरित्याग एवौषधमिति, उक्तञ्च—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो, ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग,—स्वसन्तोषस्य भेषजम् ” ॥ ૧ ॥

“ ઉવસમેણ હજે કોહં, માણં મદ્વયા જિણે ।

માયમઝ્જવભાવેણ, લોભં સંતોસઓ જિણે ॥”

ઉપશમ સે ક્રોધ કો, માર્દવ-નમ્રભાવ સે માનકો, આર્જવ ભાવ સે માયા કો ઔર સંતોષ સે લોભ કો જીતના ચાહિયે । અસન્તોષરૂપી રોગ કા ઔષધ લોભપરિત્યાગ હૈ । કહા મી હૈ—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो,—ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग,—स्वसन्तोषस्य भेषजम् ॥ ૧ ॥ ”

જૈસે રોગી કે ઝવર કો નષ્ટ કરને કે લિએ આહાર કા પરિત્યાગ દવા કા કામ કરતા હૈ ઉસી તરહ સે અસન્તોષ કો નષ્ટ કરને કે લિએ લોભ કા પરિહાર મી ઉત્તમ ઔષધી કા કામ દેતા હૈ । ઇસ કથન સે યહ સિદ્ધાન્ત મલીભાંતિ પુષ્ટ હો જાતા હૈ કિ જો લોભાદિકોં કો ઉનકે પ્રતિપક્ષી સંતોષાદિકોં કે દ્વારા નષ્ટ કર દેતે હૈં વે હી વાસ્તવ મેં પારગામી હૈં । એસે વ્યક્તિ પ્રાપ્ત હુએ કામ-ભોગોં મેં નહીં ફસતે । ઇસી વાત કી પુષ્ટિ “લબ્ધાન્ કામાન્

“ ઉવસમેણ હજે કોહં, માણં મદ્વયા જિણે ।

માયમઝ્જવભાવેણ, લોભં સંતોષઓ જિણે ” ॥

ઉપશમથી ક્રોધને, માર્દવ-નમ્ર ભાવથી માનને, આર્જવભાવથી માયાને અને સંતોષથી લોભને છુટાય છે. અસંતોષરૂપી રોગનું ઔષધ લોભપરિત્યાગ છે. કહું પણ છે—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो,—ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग,—स्वसन्तोषस्य भेषजम् ” ॥ ૧ ॥

જેમ રોગીના ઝવરને નષ્ટ કરવા માટે આહારનો પરિત્યાગ દવાનું કામ કરે છે તે પ્રકારે અસંતોષને નષ્ટ કરવા માટે લોભનો પરિહાર પણ ઉત્તમ ઔષધીનું કામ આપે છે. આ કથનથી એ સિદ્ધાન્ત મલીભાંતિ પુષ્ટ થાય છે કે—જે લોભાદિકોને તેના પ્રતિપક્ષી સંતોષાદિકોના મારફત નષ્ટ કરે છે તે જ વાસ્તવમાં પારગામી છે. એવી વ્યક્તિ પ્રાપ્ત થયેલ કામભોગોમાં ફસતી નથી, એ વાતની પુષ્ટિ ‘લબ્ધાન્ કામાન્ નામિગાહતે’ એ ઉપદેશથી સૂત્રકારે

સર્વથા યે લોભાદીન્ સંતોષાદિના જયન્તિ ત એવ પારગામિનો ભવન્તીતિ તાત્પર્યમ્ । તતઃ કિમિત્યાહ-લબ્ધાન્=સમધિગતાન્, કામાન્=કામભોગાન્ નાભિ-ગાહતે=ન શ્રયતે, યો હિ પરિત્યક્તલોભાદિસ્તં કામાદયઃ કદાચિદપિ ન પરાજયન્તિ ઇતિ ભાવઃ ।

કોડપિ કેનાપિ હેતુના પરિહીનલોભાદિઃ કૃતચારિત્રગ્રહણો ભવતિ, કદા-ચિત્પુનર્લોભોદયસ્તસ્ય ચેતસિ સ્યાત્તસ્ય હેયતાપ્રદર્શનાય, યશ્ચ સર્વદૈવ લોભાદિરહિતઃ સંયમં ગૃહ્ણતિ સ એવાનગાર ઇતિ પ્રતિપાદનાય ચાહ-‘વિનાપી’-ત્યાદિ, એષઃ=લોભ-મલોભેન નિન્દન્ લોભં=પૂર્વોક્તં વિનાડપિ=લોભરાહિત્યેનાડપિ નિષ્ક્રમ્ય=ચારિત્રં ગૃહીત્વા અકર્મા=ઘાતિકર્મચતુષ્ટયાપનયનેન પ્રાપ્તકેવલજ્ઞાનકેવલદર્શનો ભરતાદિકલ્પો ભૂત્વા જાનાતિ=વિશેષેણાનુભવતિ, પશ્યતિ=સર્વં વસ્તુજાતં યથાર્થરૂપેણાવલોકતે ।

નાભિગાહતે’ હસ ઉપદેશ સે સૂત્રકાર ને કી હૈ । ક્યોંકિ જિસને લોભા-દિક કા પરિહાર કર દિયા હૈ ઉસે કામ-ભોગાદિક કમી મી પરાસ્ત નહીં કર સકતે ।

કોઈ વ્યક્તિ લોભાદિકષાયોં સે હીન હૈ, પરન્તુ કિસી વજહ સે યદિ ઉસને ચારિત્ર ગ્રહણ કર લિયા હૈ તો ઉક્ત વ્યક્તિ કે ચિત્ત મેં કદાચિત્ ફિર સે મી લોભ કા ઉદય હો જાતા હૈ, ઉસકી ઉસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ છોડને યોગ્ય હૈ, યહ દિશ્વાને કે લિયે, તથા જો સર્વદા લોભ રહિત હોકર સંયમ કો ધારણ કરતા હૈ વહી અનગાર-સાધુ હૈ, હસ બાત કા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે આગે સૂત્રાંશ કા અવતરણ કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-જો વ્યક્તિ હસ પૂર્વોક્ત લોભ કે વિના-અર્થાત્ લોભ સે રહિત હોકર ચરિત્ર કો ગ્રહણ કરતે હૈં વે ચાર ઘાતિયા કર્મોં કો નષ્ટ કર ભરતાદિ જૈસે હો-

કરી છે, કારણ કે જેણે લોભાદિકનો પરિહાર કરેલ છે તેને કામભોગાદિક કદી પણ પરાસ્ત કરી શકતા નથી.

કેઈ વ્યક્તિ લોભાદિ કષાયોથી હીન છે, પરંતુ કોઈ કારણથી કદાચ તેણે ચારિત્ર ગ્રહણ કરેલ છે તો તે વ્યક્તિના ચિત્તમાં કદાચ ફરીથી પણ લોભનો ઉદય થાય છે તેની તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ છોડવાયોગ્ય છે. આ દેખાવા માટે, અને જે સર્વદા લોભરહિત થઈ સંયમને ધારણ કરે છે તે અણુગાર-સાધુ છે, આ વાતનું પ્રતિપાદન કરવા માટે આગળના સૂત્રનું અવતરણ કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-જે વ્યક્તિ આ પૂર્વોક્ત લોભ વિના અર્થાત્ લોભથી રહિત થઈને ચારિત્રને ગ્રહણ કરે છે તે ચાર ઘાતિયા કર્મોંને નષ્ટ કરી ભરતાદિ જેવા બનીને કેવળજ્ઞાન



ननु लोभनाशे कुतः कर्माभावो भवितुमर्हतीति चेन्न । लोभनाशान्मोहनीयनाशः, तस्मिंश्च घातिकर्मक्षयः, तस्मिंश्च केवलज्ञानाधिगमः, तेन च भवोपग्राहिकर्मक्षयः, इत्येवंरूपपरम्परया लोभापगमेन अकर्मैतिविशेषणसार्थक्यात् ।

कर केवल ज्ञान और केवल दर्शन को पाकर दुनियां के चर अचर समस्त पदार्थों को स्पष्टरूप से समस्त गुण और समस्त पर्यायों से युक्त जानते हैं और देखते हैं ।

शंका—लोभ के नाश से कर्मों का अभाव कैसे हो सकता है ?

उत्तर—ऐसा नहीं कहना चाहिये; क्योंकि लोभ के क्षय से मोहनीय का क्षय होता है, उसके क्षय होने पर शेष घातिया कर्मों का क्षय होता है, घातिया कर्मों के अभाव होते ही केवल ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है, केवल ज्ञान की प्राप्ति होने से भवोपग्राही अघातिया कर्मों का क्षय हो जाता है । इस प्रकार परम्परा का सम्बन्ध को लेकर लोभ के विनाश से आत्मा अकर्मा हो जाता है, इस विशेषण की सार्थकता सिद्ध हो जाती है । सर्व प्रथम मोहनीय कर्म का क्षय होता है । समस्त कर्मों में मोहनीय कर्म सेनापति है, जिस प्रकार सेनापति के परास्त होने पर सेना अशक्त हो जाती है उसी प्रकार मोहनीय कर्म के क्षय होते ही कर्मों की सेना भी क्षीण हो जाती है । मोहनीय के क्षय से ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय और अन्तराय का क्षय होता है, उस से केवल ज्ञान की प्राप्ति होती है ।

અને કેવળદર્શન પામીને દુનિયાના ચર-અચર સમસ્ત પદાર્થોને સ્પષ્ટ રૂપથી સમસ્ત ગુણ અને સમસ્ત પર્યાયોથી યુક્ત બાણે છે અને દેખે છે.

શંકા—લોભના નાશથી કર્મોનો અભાવ કેવી રીતે થઈ શકે ?

ઉત્તર—એમ કહેવું ન જોઈએ, કારણ કે લોભના ક્ષયથી મોહનીયનો ક્ષય થાય છે. તેનો ક્ષય થવા પછી શેષ ઘાતિયા કર્મોનો ક્ષય થાય છે, ઘાતિયા કર્મોનો અભાવ થતાં જ કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે, કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થવાથી ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા કર્મોનો ક્ષય થાય છે. આ પકાર પરંપરા સંબંધને લઈને લોભના વિનાશથી આત્મા અકર્મા બને છે. આ વિશેષણની સાર્થકતા સિદ્ધ થઈ જાય છે. સર્વ પ્રથમ મોહનીય કર્મનો ક્ષય થાય છે, સમસ્ત કર્મોમાં મોહનીય કર્મ સેનાપતિ છે. જેમ સેનાપતિ પરાસ્ત થવાથી સેના અશક્ત બને છે તે પ્રકારે મોહનીય કર્મનો ક્ષય થતાં જ કર્મોની સેના પણ ક્ષીણ થઈ જાય છે. મોહનીયના ક્ષયથી જ્ઞાનાવરણીય દર્શનાવરણીય અને અંતરાયનો ક્ષય થાય છે, તેનાથી કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે.

કર્મનાશાનન્તરં કિં કુરુતે ? इति दर्शयति—‘प्रत्युपेक्ष्ये’—ति, प्रत्युपेक्ष्य लोभो निखिलानर्थकरो भवति, ‘लोहो सच्चविणासणो’ इतिवचनात्, तं पर्यालोच्य नावकाङ्क्षति=किमपि नेच्छति, यश्चैवंभूतः स एषोऽनगारः=यथाख्यातचारित्रवान् मुनिः प्रोच्यते तत्त्वदर्शिभिरिति शेषः ॥ सू० ३ ॥

यस्तु सत्त्वोपघातिनीं क्रियां विदधानः सकर्मा पापमोक्षकामनयाऽऽशंसया वा यद्यत्करोति तत्तद्दर्शयति—‘अहो य’ इत्यादि ।

मूलम्—अहो य राओ परितप्पमाणे कालाकालसमुट्ठाई संजोग्घी अट्टालोभी आलुंપે सहसक्कारे विणिविट्ठचित्ते एत्थ सत्थे पुणो पुणो, से आयबले, से नाइबले, से मित्तबले, से पिच्चबले, से देवबले, से रायबले, से चोरबले, से अतिहिबले, से किविणबले, से समणबले, इच्चेएहिं विरूवरूवेहिं कज्जेहिं दंडसमायाणं संपेहाए भया कज्जइ, पावमुक्खुत्ति मन्नमाणे, अदुवा आसंसाए ॥ सू० ४ ॥

छाया—अहश्च रात्रिश्च परितप्यमानः कालाकालसमुत्थायी संयोगार्थी अर्था-लोभी आलुम्पः सहसाकारः विनिविष्टचित्तः, अत्र शस्त्रे पुनः पुनः, तदात्मबलं, तज्ज्ञातिबलम्, तन्मित्रबलम्, तत्प्रेत्यबलम्, तद्देवबलम्, तद्राजबलम्, तच्चोरबलम्, तदतिथिबलम्, तत्कृपणबलम् तत् श्रमणबलम्, इत्येतैर्विरूपरूपैः कायैर्दण्डसमादानं सम्प्रेक्ष्य भयात् क्रियते पापमोक्ष इति मन्यमानः अथवा आशंसायै ॥ सू० ४ ॥

‘लोहो सच्चविणासणो’ લોભ સમસ્ત અનર્થોં કી જડ હૈ, ઇસ પ્રકાર પર્યાલોચન કરકે વહ સંયમી કિસીં મી સાંસારિક પદાર્થોં કી ઇચ્છા નહોં કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર જિસકી પ્રવૃત્તિ હૈ વહી સચ્ચા અનગાર હૈ—અર્થાત્ વહી તત્ત્વદર્શિયોં દ્વારા યથાખ્યાત-ચારિત્ર-સમન્વિત મુનિ કહા જાતા હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

જો પ્રાણિયોં કો કષ્ટ દેને વાલી યા અનેક પ્રાણોં કો નાશ કરને વાલી ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ વહ સકર્મા હૈ । વહ પાપોં કો દૂર કરને કી

‘લોહો સચ્ચવિણાસણો’ લોભ સમસ્ત અનર્થોંની જડ છે. એ પ્રકારે પર્યાયલોચન કરીને તે સંયમી કેઈ પણ સાંસારિક પદાર્થની ઇચ્છા કરતા નથી. એ પ્રકારે જેની પ્રવૃત્તિ છે તે જ સાચો અણુગાર છે. અર્થાત્ તે જ તત્ત્વદર્શિયોં દ્વારા યથાખ્યાતચારિત્રસમન્વિત મુનિ કહેવામાં આવે છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

જે પ્રાણિયોંને કષ્ટ દેવાવાળી અને તેના પ્રાણોંનો નાશ કરવાવાળી ક્રિયાઓ કરે છે તે સકર્મા છે, તે પાપોંને દૂર કરવાની ભાવનાથી અને આશંસા-અલભ્ય



ટીકા—‘અહ્યે’—ત્યાદિ, ‘અહો ય રાઓ’ ઇત્યારમ્ય ‘અથ સત્થે પુણો પુણો’ ઇત્યન્તસ્ય વ્યાખ્યા પ્રથમોદેશે પ્રોક્તેતિ તત્ત એવ વિજ્ઞેયા । વિષયાસક્તો રાત્રિન્દિવં પરિતપ્તો ધનાર્થી સત્ત્વોપમર્દને પ્રવૃત્તો ભવતીત્યર્થઃ, અપિ ચ પુનઃ કિં કરોતીત્યાહ— ‘તત્ આત્મબલ’—મિત્યાદિ, આત્મનો=જીવસ્ય બલં=સામર્થ્યમ્ આત્મબલં મેઽવશ્યં સ્યાદિતીચ્છયા બહૂપાયૈઃ સ્વતુષ્ઠ્યર્થં સત્ત્વોપઘાતં કરોતિ, કિન્ન—સ્વમાંસપરિવર્ધનાય માંસાદિકમપ્યશ્નાતિ, તદર્થં પન્નન્દ્રિયાદીનપિ હન્તિ । તત્સ્વજનબલં તન્મિત્રબલં ચ મે ભવિષ્યતિ, યેન સમાપતન્તીમપિ વિપદં મુખેન તરિષ્યામિ । પ્રેત્યબલં=પરલોકબલં કામના સે, અથવા આશંસા-અલભ્ય વસ્તુ કી લાભ કી ઇચ્છા સે જો જો ક્રિયાયે કરતા હૈં ઉન્હેંં ઇસ સૂત્ર મેં પ્રકટ કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં—

‘અહો ય રાઓ’ ઇત્યાદિ । ‘અહો ય રાઓ’ યહાં સે લેકર ‘અથ સત્થે પુણો પુણો’ યહાં તક કે પદોં કા વ્યાખ્યાન પ્રથમ ઉદેશ મેં લિખા જા ચુકા હૈં વહીં સે જાન લેના ચાહિયે । વિષયોં મેં આસક્ત ધન કા ઇચ્છુક પ્રાણી રાત-દિન સંતપચિત્ત હો જીવોં કે ઉપમર્દન કરને મેં પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈં । તથા મુઝે આત્મબલ પ્રાપ્ત હો ઇસ ળ્યાલ સે વહ અપને સન્તોષ કે લિયે પ્રાણિયોં કે પ્રાણોં કા ઉપઘાત કરતા હૈં । અપના માંસ બઢાને કે લિએ માંસ ળાતા હૈં ઓર ઉસકે લિયે વહ પન્નન્દ્રિયાદિક પ્રાણિયોં કી હિંસા કરતા હૈં—‘જો માંસ મુઝે પ્રાપ્ત હુઆ, જિસે મૈં શિકાર કરકે લાયા હૂં ઉસે મૈં હી અકેલા ળાઁ, અપને સગે સમ્બન્ધિયોં મેં તથા મિત્રોં મેં મીં ઉસકા વિતરણ કરૂં, ક્યોંકિ પરસ્પર કે ઇસ પ્રકાર કે આદાન

વસ્તુના લાભની ઇચ્છાથી જે જે ક્રિયાઓ કરે છે તેને આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—

‘અહો ય રાઓ’ ઇત્યાદિ. ‘અહો ય રાઓ’ અહીંયાથી લઈને ‘અથ સત્થે પુણો પુણો’ અહીં સુધીના પદોનું વ્યાખ્યાન પ્રથમ ઉદેશમાં આપવામાં આવેલ છે ત્યાંથી બાણી લેવું જોઈએ. વિષયોમાં આસક્ત ધનનો ઇચ્છુક પ્રાણી રાત દિવસ સંતપચિત્ત બની જીવોના ઉપમર્દન કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરતો રહે છે. અને ‘મને આત્મબળ પ્રાપ્ત થાય’ એવા ખ્યાલથી તે પોતાના સંતોષ માટે પ્રાણિયોના પ્રાણોના ઉપઘાત કરે છે. પોતાનું માંસ વધારવા માટે માંસ ખાય છે અને તેને માટે તે પન્નન્દ્રિયાદિક પ્રાણિઓની હિંસા કરે છે—‘જે માંસ મને પ્રાપ્ત થયું છે, જેને હું શિકાર કરીને લાવ્યો છું તેને હું એકલો જ ખાઉં’. પોતાના સગાસંબંધિઓમાં તથા મિત્રોમાં પણ તેનું વિતરણ કરે, કારણ કે પરસ્પરના આવા પ્રકારના આદાન



મે, ઇત્યાશયા મેષાદિકં હિનસ્તિ । દેવબલં મે સ્યાદિત્યાશયા પચનપાચનાદૌ પ્રવર્તતે । રાજબલં સ્યાદિતીચ્છયા રાજસેવા ક્રિયતે । ચૌરબલં=ચૌરભાગો ભવિષ્યતીતિ ચૌરસમીપે તિષ્ઠતિ । અતિથિબલમ્, “અતિથિઃ” ન વિદ્યતે તિથિરાગ-મનસ્ય यस્ય સોઽતિથિઃ, અતિથિસેવયા મે બલમિતિ સ્પૃહયા તં સેવતે, તદર્થ સચ્ચો-

પ્રદાન સે મુદ્ધે ઉનકા બલ પ્રાપ્ત હોગા, જિસસે કમી મેરે ડુપર યદિ કોઈ આપત્તિ આ જાયગી તો વે ઉસમેં મુદ્ધે મદદગાર બનેંગે, ઉનકી પ્રાપ્ત સહાયતા સે અથવા સહાનુભૂતિ સે મૈં ઉસ આપત્તિ સે વિના કિસી કષ્ટ કે સુરક્ષિત હો જાઝંગા । ‘દેવોં કા બલ મુદ્ધે પ્રાપ્ત હોગા’ ઇસ વિચાર સે વહ નૈવેદ્ય આદિ કે લિયે પચન-પાચનાદિક આરંભ કરતા હૈ । ‘રાજા કી કૃપા મુદ્ધ પર બની રહે’ ઇસ ભાવના સે વહ ઉનકી ઝૂઠી ખુશામદ કરતા હૈ, સેવા કરતા હૈ, ઉસકી પ્રત્યેક ભલી બુરી બાતોં મેં હાં મેં હાં મિલાતા હૈ, ‘ખુશામદ મેં હી આમદ હૈ’ ઇસ તુચ્છ કામના સે વહ હર એક પ્રકાર સે અપને કો કષ્ટ મેં ડાલકર ભી ઉનકી પ્રત્યેક વાત કો શિર-માંથે-કા મુકુટ બનાને મેં ભી સંકોચ નહીં કરતા । ‘મૈં યદિ ચોરોં કી મદદ કરૂંગા, યા ઉન્હેં મદદ પહુંચાઝંગા યા ઉનકા સહવાસ કરૂંગા તો મુદ્ધે ઉનસે છૂટ કે દ્રવ્ય મેં સે હિસ્સા ભી મિલતા રહેગા’ ઇસ ચાહના સે વહ ચોરોં કા ભી બલ પ્રાપ્ત કરતા હૈ । જિસકે આને કી કોઈ નિશ્ચિત તિથિ નહીં હૈ ઉસકા નામ અતિથિ હૈ, એસે અતિથિયોં કી વહ સિર્ફ ‘ઇનકા આશી-

પ્રદાનથી મને તેઓનું બળ પ્રાપ્ત થશે, કદાચ મારા ઉપર કોઈ આપત્તિ આવે તો તેઓ મને મદદગાર બનશે, તેમની સહાયતાથી અને સહાનુભૂતિથી હું આવેલી આપત્તિથી કોઈ પણ બાતના કષ્ટ વગર સુરક્ષિત થઈ જઈશ’ ‘દેવોનું બળ મને પ્રાપ્ત થશે.’ તેથી તે નૈવેદ્ય આદિ માટે પચન-પાચનાદિક આરંભ કરે છે. ‘રાજાની કૃપા મારા ઉપર બની રહે’ તે ભાવનાથી તે તેની જુદી ખુશામત કરે છે, સેવા કરે છે, તેની પ્રત્યેક સારી નકારી વાતોમાં હા માં હા મિલાવે છે. ‘ખુશામતમાં જ આમદ છે’ આવી તુચ્છ કામનાથી તે દરેક પ્રકારથી પોતાને કષ્ટમાં નાખીને પણ તેની પ્રત્યેક વાતને શિરનો મુગટ બનાવવામાં સંકોચ કરતો નથી. ‘હું જો ચોરોને મદદ કરીશ અને તેમને મદદ પહોંચાડીશ અગર તેમનો સહવાસ કરીશ તો મને તેમની હુંટના દ્રવ્યમાંથી હિસ્સો-(ભાગ) મળતો રહેશે’ આ ભાવનાથી તે ચોરોનું પણ બળ પ્રાપ્ત કરે છે. જેની આવવાની કોઈ નિશ્ચિત તિથિ નથી તેનું નામ અતિથિ છે. એવા અતિથિઓની તે ક્ષત ‘તેમના

पमर्दनं करोति । कृपणबलं स्यादित्यभिलाषेण तं परिचरति । 'श्रमणबलं' श्रमणः शाक्यादिस्तस्य बलं स्यादिति वाञ्छया तदर्थं पचनादिसावद्यक्रियामाचरति । अत्रानेकेषां बलप्रदर्शनं यं यं चेतसि स्वाभिमतसाधकतया पश्यति तं तं सम्यगुप-  
चरतीति द्योतनाय बोध्यम् । इत्येतैः=पूर्वोक्तैः, विरूपरूपैः=बहुविधैः कार्यैः दण्ड-  
समादानं, दण्ड्यन्ते=हन्यन्ते सत्त्वानि येन स दण्डस्तस्य सर्वत आदानं ग्रहणं दण्ड-  
समादानम् 'अहमिदं नाकरिष्यं तदात्मबलादिकं मे नाभविष्य'—दिति सम्प्रेक्ष्य=  
पर्यालोच्य भयात्=आत्मबलाद्यलाभभयात् सत्त्वोपघातः क्रियते, अनेकानर्थकरं  
वांटरूप बल मुझे मिले' इस विचार से सेवा करता है, उनके निमित्त प्राणियों की हिंसा भी करता है । कृपण की सेवा भी उनके बल को प्राप्त करने की इच्छा से वह करता है । 'शाक्यादि श्रमणों का सहारा मुझे मिले' इस अभिप्राय से वह उनके लिये पचन-पाचनादि करता है । सूत्र में जो इस प्रकार से अनेकों के बल का कथन किया गया है उसका भाव यही है कि वह जिसे अपने इष्ट अर्थ का साधक समझता है उनका बल प्राप्त करने के लिये उनकी भले प्रकार परिचर्या करता है । जिससे प्राणी की हिंसा होती है उसका नाम दण्ड है, इसका वह अनेक प्रकार के कार्यों से सर्वतः आदान-ग्रहण करता है । व्यर्थ के पापारंभ कार्यों में प्रवृत्त हो-  
कर वह प्राणियों के प्राणों का अपहरण कर पाप का भारी बोझ अपने माथे रखता है । 'यदि मैं इस काम को नहीं करूँगा तो मुझे पूर्वोक्त आत्मबलादिकों का लाभ नहीं होगा' इस बात का विचार कर उनके

आशिर्वादरूप भण भने भणे' એ વિચારથી સેવા કરે છે. તેમના નિમિત્તે પ્રાણીઓની હિંસા પણ કરે છે. કૃપણની સેવા પણ તેનું બળ પ્રાપ્ત કરવાની ઇચ્છાથી કરે છે. 'શાક્યાદિ શ્રમણોનો સાથ મને મળે' તે માટે તે તેમને માટે પચન-પાચનાદિ કરે છે. સૂત્રમાં જે આ પ્રકારથી અनेક બળોનું કથન કરેલ છે તેનો ભાવ એ છે કે-તે જેને પોતાનાં ઇષ્ટ અર્થનો સાધક સમજે છે તેનું બળ પ્રાપ્ત કરવા માટે તેની ભલી પ્રકાર પરિચર્યા કરે છે. જેનાથી પ્રાણીની હિંસા થાય છે તેનું નામ દંડ છે. તેનો તે અनेક પ્રકારના કાર્યોથી સર્વતઃ આદાન-ગ્રહણ કરે છે. વ્યર્થના પાપારંભ કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થઈને તે પ્રાણીઓના પ્રાણોનું અપ-  
હરણ કરી પાપનો ભારી બોજ પોતાના માથે રાખે છે. 'કદાચ હું આ કામને નહિ કરું' તો મને પૂર્વોક્ત આત્મબલાદિકનો લાભ થશે નહિ.' આ વાતનો વિચાર કરી તેના અલાભના ભયથી પ્રાણીઓની હિંસાદિક ક્રિયાઓને-અનેક અનર્થકારી સાવધ વ્યાપારોને તે કરે છે. એ આત્મબલાદિક જે આ જીવને આ લોકમાં દંડ

સાવચવ્યાપારં કરોતીતિ તાત્પર્યમ્ । एतान्यात्मबलादीनि चैहिकदण्डग्रहणकारणानि । न केवलं तदर्थमेवानर्थं करोति किन्तु पारलौकिकार्थमपि परमार्थानभिज्ञो दण्ड-ग्रहणं करोतीत्याह-‘ पापमोक्ष ’ इति, पापमोक्षः-पातयति नरकनिगोदादाविति पापं, तस्मान्मोक्षो मे भविष्यतीति मन्यमानः=चेतसि चिन्तयन्,

अत्र ‘इति’-शब्दो हेतौ, यस्मान्मे पापमोक्षो भवितेति मन्यमानः, इति सम्बन्धः । असौ नानाविधहवनीयद्रव्यैर्जुहोति । तथा पितृतर्पणार्थं दर्भ-तिल-जलादिना समा-रम्भं करोति च । एवंविधसावचव्यापारैर्नानाविधदुर्गतिदायकमनेकजन्मदुर्मोचमधि-कमघमेवार्जयति ।

अलाभ के भय से प्राणियों की हिंसादिक क्रियाओं को-अनेक अनर्थ-कारी सावच व्यापारों को वह करता है । ये आत्मबलादिक जो इस जीव को इस लोक में दण्ड ग्रहण के कारण हैं, केवल उनके निमित्त ही अनर्थों को यह नहीं करता है, किन्तु पारलौकिक कार्यों के लिये भी पर-मार्थ से अनभिज्ञ बना हुआ यह दण्ड का पात्र बनता है । इसी अभि-प्राय को ‘ पापमोक्षः ’ इस पद से सूत्रकार प्रकट करते हैं-नरक नि-गोदादि गतियों को जीव जिसके द्वारा प्राप्त करते हैं उसका नाम पाप है । ‘ पाप से मेरी मुक्ति हो जायगी, अर्थात् मैं पापरहित हो जाऊँगा ’ इस धारणा से ओतप्रोत होकर वह नानाविध हवनीय द्रव्य से हवन करता है, अनेक अनर्थविधायक सावच कार्यों के करने से दण्ड-प्राणा-तिपातादि-का अधिकारी होता है, इन कार्यों से पापमुक्त न होकर उल्टे नरक निगोदादि गतियों में उस जीव का पतन होता है । सूत्र में ‘ इति ’ यह शब्द हेतु-अर्थ का बोधक है, जिसका भाव यह है-वह यह सम-

અહણુનું કારણ છે, કેવળ તેના નિમિત્ત જ અનર્થોને તે નથી કરતો પણ પાર-લૌકિક કાર્યો માટે પણ પરમાર્થથી અનભિજ્ઞ બનીને આ દંડનું પાત્ર બને છે. આ અભિપ્રાયને ‘ પાપમોક્ષઃ ’ આ પદથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે-નરક નિગોદાદિ ગતિઓને જીવ જેના દ્વારા પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ પાપ છે. ‘ પાપથી મારી મુક્તિ થઈ જશે, અર્થાત્ હું પાપરહિત થઈ જઈશ ’ એ ધારણાથી ઓતપ્રોત થઈને તે નાનાવિધ હવનીય દ્રવ્યોથી હવન કરે છે. અनेક અનર્થવિધાયક સાવચ કાર્યોને કરવાથી દંડ-પ્રાણાતિપાતાદિ-નો અધિકારી થાય છે. આવા કાર્યોથી પાપમુક્ત બનતો નથી પણ નરક નિગોદાદિ ગતિઓમાં તે જીવનું પતન થાય છે. સૂત્રમાં ‘ इति ’ એ શબ્દ હેતુ અર્થના બોધક છે, જેનો ભાવ એ છે કે તે એમ સમજે છે કે



અથવા 'આશંસાયૈ' આશંસા ચાલમ્બ્યાભસ્પૃહા તસ્યૈ=તદર્થે દણ્ડં સમારંભતે । મમૈતત્ પરત્પરારિ પરલોકે વા મવિષ્યતીત્યાશયા દણ્ડં સમાદદાતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ. ૪ ॥  
 એવં કટુકવિપાકં દણ્ડસમાદાનં સમ્યગવબુદ્ધ્ય યત્કર્તવ્યં તદાહ—'તં પરિણાય' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તં પરિણાય મેહાવી નેવ સયં એહિં કજ્જેહિં દંડં સમા-  
 રંભિજ્જા, નેવ અન્નં એહિં કજ્જેહિં દંડં સમારંભિજ્જાવિજ્જા, એહિં  
 કજ્જેહિં દંડં સમારંભંતે ત્રિ અન્ને ન સમણુજાણિજ્જા, એસ મગ્ગે  
 આરિણિં પવેઙ્ગ, જહેત્થ કુસલે નોવલિંપિજ્જાસિત્તિવોમિ ॥ સૂ. ૫ ॥

છાયા—તત્પરિણાય મેહાવી નૈવ સ્વયમેતૈઃ કાર્યૈર્દણ્ડં સમારંભત, નૈવાન્યમ્ એતૈઃ  
 કાર્યૈર્દણ્ડં સમારંભયેત્, એતૈઃ કાર્યૈર્દણ્ડં સમારંભમાણાનપ્યન્યાન્ન સમનુજાનીયાત્,  
 એષ માર્ગ આર્યૈઃ પ્રવેદિતઃ, યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પેઃ, ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ. ૫ ॥

જ્ઞાતા હૈ કિ—'પાપોં સી મેરી મુક્તિ હો જાયગી—મૈં નિષ્કલંક બન સ્વર્ગાદિ  
 લાભ કર લૂંગા'—એસા માનકર વહ પારલૌકિક કાર્ય કરને કે લિયે મી  
 છહકાય કા આરંભ કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર કે સાવચ વ્યાપારોં સે નાના-  
 વિધ દુર્ગતિયોં કો દેને વાલે તથા અનેક જન્મ જન્માન્તરોં મૈં મી જો ન  
 નષ્ટ હો સકે એસે પાપ કા હી વહ અર્જન કરતા હૈ । 'આશંસાયૈ' ઇસ  
 પદ સે યહ વાત સૂત્રકાર સૂચિત કરતે હૈં કિ—વહ અલમ્બ્યવસ્તુ કો પાને  
 કી ઇચ્છા સે મી દણ્ડ કા સમારંભ કરતા હૈ "યહ વસ્તુ મેરે પાસ નહીં  
 હૈ, આત્મબલાદિ કાર્યોં કે કરને સે વહ મુઝે આજ નહીં તો કલ, કલ  
 નહીં તો પરસોં મિલ જાવેગી, યદિ યહાં ન મી મિલેગી તો પારલોક મૈં  
 મિલ જાલેગી" ઇસ ભાવ સે દણ્ડ કા સમાદાન (છહકાય કા આરંભ)  
 કરતા હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

'પાપોથી મારી મુક્તિ થઇ જશે, હું નિષ્કલંક બની સ્વર્ગાદિ લાભ કરી લઇશ' એવું માનીને તે પારલોકિક કાર્યો કરવા માટે છ કાયનો આરંભ કરે છે. આ પ્રકારના સાવચ વ્યાપારોથી નાનાવિધ દુર્ગતિઓને દેવાવાળા અને અનેક જન્મ જન્માન્તરોમાં પણ જેનો નાશ ન થાય તેવો પાપનો ભાર જ તે વહે છે. 'આશંસાયૈ' આ પદથી આ બાત સૂત્રકાર સૂચિત કરે છે કે—તે અલમ્બ્ય વસ્તુને પામવાની ઇચ્છાથી પણ દંડનો સમારંભ કરે છે, 'આ વસ્તુ મારી પાસે નથી પણ આત્મબલાદિ કાર્યો કરવાથી તે મને આજ નહિ તો કાલ, કાલ નહિ તો પરમ દિવસ મળી જશે, કદાચ અહીં નહિ મળે તો પરલોકમાં મળશે' આ ભાવથી દંડનું સમાદાન (છ કાયનો આરંભ) કરે છે. ॥ સૂ. ૪ ॥

‘ત’-દિત્યાદિ, મેધાવી=સંયમરતિમાન્ વિદિતસંસારસ્વભાવઃ, તત્=પૂર્વોક્ત-સદ્ગ્રાહકં શસ્ત્રપરિજ્ઞાકથિતમ્ અપ્રશસ્તગુણમૂલસ્થાનં વિષયકષાયાદિકં ચાત્મબલા-દ્યર્થં દળ્ડસમાદાનાદિકં ચ પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા મેધાવી સ્વયમ્=આત્મના એતૈઃ=આત્મબલાદાનાદિકૈઃ કાર્યૈઃ દળ્ડં=પ્રાણિર્હિંસાં નૈવ સમારભેત=દળ્ડગ્રહણારમ્ભં ન કુર્યાત્, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરેદિત્યર્થઃ, અન્યમપિ એતૈઃ કાર્યૈર્દળ્ડં ન સમાર-મ્ભયેદિત્યન્વયઃ, તથા સમારભમાણાનપ્યન્યાન્ ન સમનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેત્, સુ-ધર્મા સ્વામી જમ્બસ્વામિનં પ્રાહ-एष मार्गः मृग्यतेऽन्विष्यते मोक्षपदमनेनेति मार्गः=રત્નત્રયસ્વરૂપઃ,

इस प्रकार कटुक विपाक वाले दण्ड के आदान को अच्छी तरह जानकर क्या करना चाहिये? सो कहते हैं—

‘तं परिणाय’ इत्यादि । संयम में जिसे प्रेम है, संसार का स्वभाव भी जिसने भली प्रकार जान लिया है ऐसा मेधावी मुनि शस्त्रपरिज्ञा में प्रतिपादित अप्रशस्त गुण एवं मूलस्थानस्वरूप विषयकषायादिकों को तथा आत्मबलादिलाभ के लिये दण्डसमादान (आरम्भ समारम्भ) को ज्ञपरिज्ञा से जानकर स्वयं आत्मबल को प्राप्त करने के खोटे अभि-प्राय से आवरित इन पूर्वोक्त कार्यों से प्राणातिपात आदि दण्ड का समारम्भ नहीं करे । क्योंकि इन कार्यों के करने वाले प्राणी को पापा-रंभ के सिवाय अन्य किसी भी प्रशस्त फल का लाभ नहीं होता है । इस बात को जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञा से उनका त्याग कर देवे । इतना ही नहीं किन्तु दूसरे से भी इन पूर्वोक्त कार्यों से वह दण्ड का

આવા પ્રકાર કડવા વિપાકવાળા દંડના આદાનને સારી રીતે જાણીને શું કરવું જોઈએ તે કહે છે—

‘તં પરિણાય’ ઇત્યાદિ. સંયમમાં જેને પ્રેમ છે, સંસારનો સ્વભાવ જેણે ભલી પ્રકારે જાણી લીધો છે એવા મેધાવી મુનિ શસ્ત્રપરિજ્ઞામાં પ્રતિપાદિત અપ્રશસ્ત ગુણ અને મૂળસ્થાનસ્વરૂપ વિષયકષાયાદિકને તથા આત્મબલાદિ લાભ માટે દંડસમાદાન (આરંભ-સમારંભ) ને જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણીને સ્વયં આત્મબળ પ્રાપ્ત કરવાના ખોટા અભિપ્રાયથી આવરિત એ પૂર્વોક્ત કાર્યોથી પ્રા-ણાતિપાત આદિ દંડનો સમારંભ કરવો નહિ, કારણ કે આ કાર્યોના કરનાર પ્રાણીને પાપારંભ સિવાય બીજા કોઈ પ્રશસ્ત ફળનો લાભ થતો નથી. એ વાતને જાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે, એટલું જ નહિ પણ બીજાથી પણ તે પૂર્વોક્ત કાર્યોથી તે દંડનો સમારંભ ન કરાવે, અને આ પ્રકારથી દંડનો સમારંભ



“આર્યૈઃ” આરાદ્યહિર્ગતા હેયધર્મેભ્યો યે તે આર્યાઃ તીર્થઙ્કર-ગણધરાદયઃ, તૈઃ પ્રવેદિતઃ=દ્વાદશવિધપરિષદિ પ્રકર્ષેણોક્તઃ । તદ્ બુદ્ધા કિં કાર્યમિત્યાહ—

“યથાઽન્ન કુશલો નોપલિમ્પે”—રિતિ, હે શિષ્ય! યથા=યેન પ્રકારેનાત્મા કર્મ-ણોપલિમ્પો ન ભવેત્તથા કુશલઃ=ચતુર આત્માર્થી ત્વમન્ન=દ્વંડસમારમ્ભે નોપલિમ્પેઃ= નં સંશ્લિષ્યેઃ, સર્વથા સર્વસમારમ્ભાદાત્માનં પરિરક્ષેદિત્યર્થઃ । કમલપત્રં યથા જલેન સ્પૃષ્ટં ન ભવતિ તથૈવ દ્વંડસમાદાનેનાત્મા યથા સ્પૃષ્ટો ન ભવેત્તથા કુરુષ્વેતિ તાત્પર્યમ્ । इति ब्रवीमीत्यस्यार्थस्तूक्त एव ॥ सू० ५ ॥

॥ इति द्वितीयाध्ययनस्य द्वितीय उद्देशः समाप्तः ॥ २-२ ॥

સમારમ્ભ ન કરાવે, તથા હસ પ્રકાર સે દ્વંડ કા સમારંભ કરને વાલોં કી અનુમોદના ખી ન કરે, અર્થાત્ દ્વંડ સમારંભ કા સર્વથા ત્યાગ કરે ।

હસ પ્રકાર શ્રીસુધર્મા સ્વમી જમ્બૂ સ્વામી કો કહતે હૈં કિ-યહી રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ કા માર્ગ હૈ, મોક્ષ કા અન્વેષણ જિસસે કિયા જાતા હૈ યહી માર્ગ શબ્દ કા વ્યુત્પત્ત્યર્થ હૈ । હસ માર્ગ કા નિરૂપણ આર્ય-તીર્થકર એવં ગણધરાદિકોં ને બારહ પ્રકાર કી પરિષદ મેં કિયા હૈ । વિષય-કષા-યાદિક જો આત્મા કા પતન કરને વાલે હૈં-અનસે જો શીઘ્રાતિશીઘ્ર વિરક્ત હોતે હૈં વે આર્ય હૈં, ઓર વે તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ હૈં, ક્યોંકિ યે સ્વયં અનસે વિરક્ત હોકર દૂસરોં કો ખી અનસે વિરક્ત હોને કા ઉપ-દેશ દેતે હૈં । યે આત્મકલ્યાણકારી મોક્ષ માર્ગ કે અનુપમ પથિક હોતે હૈં, ઓર દૂસરોં કો ખી હસ માર્ગ કે પથિક બનને કે લિયે ઉપાયોં કા પ્રતિપાદન કરતે હૈં । હસ પંચમ કાલ મેં જો મોક્ષમાર્ગ કી પ્રરૂપણા મુનિ

કરવાવાળાની અનુમોદના પણ ન કરે, અર્થાત્ કરવા, કરાવવા, અને અનુમોદવારૂપ, એ દ્વંડસમારંભનો સર્વથા ત્યાગ કરે.

આ પ્રકાર શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે—તે રત્નત્રયરૂપ મોક્ષનો માર્ગ છે, મોક્ષનું અન્વેષણ જેનાથી થાય છે તે માર્ગ શબ્દનો વ્યુત્પત્ત્યર્થ છે. આ માર્ગનું નિરૂપણ આર્ય—તીર્થકર અને ગણધરાદિકોએ બાર પ્રકારની પરિષદમાં કર્યું છે. વિષયકષાયાદિક જે આત્માનું પતન કરવાવાળા છે તેનાથી જે જલદી વિરક્ત થાય છે તે આર્ય છે, અને તે તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ છે. કારણ કે તેઓ સ્વયં તેનાથી વિરક્ત બની બીજાઓને તેનાથી વિરક્ત થવાનો ઉપદેશ આપે છે. તેઓ આત્મકલ્યાણકારી મોક્ષમાર્ગના અનુપમ પથિક હોય છે, અને બીજાઓને પણ તે માર્ગના પથિક બનવા માટે ઉપાયોનું પ્રતિપાદન કરે છે. આ પાંચમા કાળમાં જે મોક્ષમાર્ગની પ્રરૂપણા મુનિ અને આચાર્યોદ્વારા થાય છે તેનું



एवं आचार्यौ द्वारा होती है उसका मूलस्रोत तीर्थकरादि ही है । ऐसा समझकर कुशल आत्मार्थी का कर्तव्य है कि वह अपनी आत्मा को इस दण्डसमारंभ द्वारा आने वाले कर्मों से लिप्त न बनावे । ऐसा उपदेश करते हुए सूत्रकार कहते हैं—“यथाऽत्र कुशलो नोपलिम्पेः” हे भव्य जीव ! तू पूर्वोक्त कथन से यह भली प्रकार जान चुका है कि इन आत्मबलादिक कार्यों से दण्डसमादान होता है, और इससे कर्मबन्ध के सिवाय आत्मा को कोई लाभ नहीं होता है, अतः तू इस बात का विचार कर, आत्मार्थी बन, और जिस प्रकार से तेरी आत्मा कर्मों से लिप्त न बने इस तरह की प्रवृत्ति से इन समारंभों से सर्वथा अपनी रक्षा कर । जैसे जल में रहता हुआ कमल जल से लिप्त नहीं होता है उसी प्रकार दण्डसमादान से आत्मा लिप्त न बने ऐसा कर । ‘इति ब्रवीमि’ इसका अर्थ पहिले किया जा चुका है ॥ सू० ५ ॥

॥ द्वितीय अध्ययन का द्वितीय उद्देश समाप्त ॥ २-२ ॥

મૂળસ્રોત તીર્થકરાદિ જ છે. એવું સમજીને કુશળ આત્માર્થીનું કર્તવ્ય છે. કે-તે પોતાના આત્માને આ દંડસમારંભદ્વારા આવવાવાળા કર્મોથી લિપ્ત ન બનાવે, એવો ઉપદેશ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—

“યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પેઃ” હે ભવ્ય જીવ ! તું પૂર્વોક્ત કથનથી એ ભલી પ્રકારે જાણી ચુક્યો છે કે આ આત્મબલાદિક કાર્યોથી દંડસમાદાન થાય છે, અને તેનાથી કર્મબંધ સિવાય આત્માને કોઈ લાભ થતો નથી, માટે તું એ ખાતનો વિચાર કરી આત્માર્થી બન, અને જે પ્રકારથી તારો આત્મા કર્મોથી લિપ્ત ન બને એવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી તેવા સમારંભોથી સર્વથા પોતાની રક્ષા કર. જેમ પાણીમાં રહેલાં કમળ પાણીથી લિપ્ત નથી થતાં તે પ્રકારે દંડસમાદાનથી આત્મા લિપ્ત ન બને તેવું કર. ‘ઈતિ બ્રવીમિ’ આનો અર્થ પહેલાં કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

બીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત. ૨-૨.

## ॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य तृतीयोद्देशः ॥

कथितो द्वितीयोद्देशोऽधुना तृतीयस्य व्याख्या प्रारभ्यते । द्वितीये संयमे रतिर्विषये चारतिः कर्तव्येति प्रोक्तम् । अत्र च तत्सर्वं कषायनिरसनेनैव स्यात्, तन्निरसनं च मानपरित्यागं धनासारतापरिचिन्तनं विना नैव सम्पद्यते, अत उच्चैर्गोत्रोत्पत्त्यभिमानादिकं मुनिना परित्याज्यमिति प्रतिपादयति ।

अत्रानन्तरसूत्रसम्बन्धः—‘जहेत्थ कुसले नोवलिपेज्जासि’ इति, हे शिष्य ! उच्चैर्गोत्राभिमानादौ त्वं यथा नोपलिप्तो भवेरिति ।

## ॥ आचाराङ्गसूत्र के दूसरे अध्ययन का तृतीय उद्देश ॥

द्वितीय उद्देश का कथन हो चुका, अब तृतीय उद्देश का कथन प्रारंभ होता है । द्वितीय उद्देश में “संयमी को संयम में रति और विषयादिकों में अरति करना चाहिये” यह बात कही गई है । इस उद्देश में यह प्रतिपादन किया जायगा कि गृहीत (ग्रहण किये हुए) संयम में रति और विषयादिकों में अरति संयमी जनको तब ही हो सकती है कि जब वह कषायों को दूर करे । कषायों का परित्याग—जब तक मान का त्याग न कर दिया जावेगा, तथा जब तक धन की असारता का विचार न होगा, तब तक नहीं हो सकता । इसलिये संयमी मुनि को उच्चगोत्र में उत्पन्न होने के अभिमान आदि का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये ।

यहां पर “जहेत्थ कुसले नोवलिपेज्जासि” इस अनन्तर सूत्र के साथ सम्बन्ध है । जिसका भाव यह है कि हे शिष्य ! तू उच्च-गोत्र में

## श्री आचारांगसूत्रना पील अध्ययननो त्रीणे उद्देश

पील उद्देशनुं कथन समाप्त थयुं, डवे त्रीण उद्देशनो प्रारंभ थाय छे. पील उद्देशमां संयमीये संयममां रति अने विषयादिकमां अरति करवी जेधये. ये वात डडेवामां आवी छे. आ उद्देशमां येनुं प्रतिपादन करवामां आवशे डे गृहीत (ग्रहण करेलां) संयममां रति अने विषयादिकमां अरति संयमीजनने त्यारे न थाय छे डे न्यारे कषायो दूर करवामां आवे. कषायोनो परित्याग, न्यां सुधी माननो त्याग अने धननी असारतानो विचार नडि करवामां आवे त्यांसुधी ते भनी शक्तुं नथी. माटे संयमी मुनिअे ‘मारी उत्पत्ति उंच गोत्रमां थयेवी छे’ तेवां अलिमाननो सर्वथा त्याग करवो जेधये.

आ डेकाण्णे “जहेत्थ कुसले नोवलिपेज्जासि” आ अनन्तर सूत्रनी साथे संबन्ध छे, येनो भाव ये छे डे-हे शिष्य ! तू उंच गोत्रमां उत्पत्तिना

પરમ્પરસૂત્રસમ્બન્ધસ્તુ-‘ સે આયબલે ’ ઇત્યાદિના, સ્વસમાનાર્થમાત્મબલાદિ-  
દળ્ડસમારમ્ભો ન ત્વયા કર્તવ્ય ઇતિ ।

ઉચ્ચગોત્રોત્પત્ત્યા માનં, નીચગોત્રોત્પત્ત્યા ચાપમાનં જ્ઞાત્વા હર્ષ-ક્રોધૌ ત્વયા ન  
વિધેયૌ, યતસ્તૌ માનાપમાનોં બહુષુ જન્મસુ પ્રાપ્તપૂર્વાવિતિ દર્શયતિ-“ સે અસઈ ”  
ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે અસઈ ઉચ્ચાગોણ, અસઈ નીઆગોણ, નો હીણે, નો  
અઈરિત્તે, નોડપીહણ, ઇયપરિસંખાય કો ગોયાવાઈ, કો માણાવાઈ,  
કાંસિ વા ણગે ગિજ્ઞે, તમ્હા પંડિણ નો હરિસે નો કુજ્ઞે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા-સોડસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રિડસકૃત્ત્વીચૈર્ગોત્રિ ન હીનો નાતિરિક્તઃ, નો ઈહેતાપિ,  
ઇતિ પરિસંખ્યાય કો ગોત્રવાદી કો માનવાદી, કસ્મિન્ વૈકસ્મિન્ ગૃધ્યેત્, તસ્માત્પ-  
ણ્ડિતો ન હૃધ્યેત્ ન કુધ્યેત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ઉત્પત્તિ કે અભિમાનાદિકોં મેં જિસ તરહ સે ન પૈસે ઇસ પ્રકાર સે  
અપની પ્રવૃત્તિ કર ।

‘ સે આયબલે ’ ઇત્યાદિ પરમ્પરાસૂત્ર કે સાથ મી સંબંધ હૈ, જિસસે  
શિષ્ય કો સંબોધન કરતે હુણ આચાર્ય ઇસ બાત કા ઉપદેશ દેતે હૈં કિ  
અપને માન કે લિયે આત્મબલ આદિ દ્વારા તુજ્ઞે દળ્ડસમારંભ નહીં  
કરના ચાહિયે ।

નીચે કે સૂત્ર કા અવતરણ કરને કે લિયે સૂત્રકાર શિષ્ય સે કહતે  
હૈં કિ-હે શિષ્ય ! ઉચ્ચગોત્ર મેં ઉત્પત્તિ સે માન ઔર નીચ ગોત્ર મેં જન્મ  
લેને સે અપમાન કા વિચાર કર હર્ષ ઔર ક્રોધ કરના તુજ્ઞે યોગ્ય નહીં  
હૈ, ક્યોંકિ કર્મ કે પ્રભાવ સે તૂને પૂર્વ કે અનેક ભવોં મેં ઇન્હેં પ્રાપ્ત કિયા  
હૈ । યહી બાત પ્રકટ કી જાતી હૈ-“ સે અસઈ ” ઇત્યાદિ ।

અભિમાનાદિમાં જેવી રીતે ન ક્ષે તેવી પ્રવૃત્તિ પોતાની કર.

‘ સે આયબલે ’ ઇત્યાદિ પરંપરાસૂત્ર સાથે પણ સંબંધ છે જેથી શિષ્યને  
સંબોધન કરતાં આચાર્ય એ વાતનો ઉપદેશ આપે છે કે પોતાના માન માટે  
આત્મબલ આદિ દ્વારા તારે દંડસમારંભ ન કરવો જોઈએ.

નીચેના સૂત્રનું અવતરણ કરવા માટે સૂત્રકાર શિષ્યને કહે છે કે-હે  
શિષ્ય ! ઉચ્ચ ગોત્રમાં ઉત્પત્તિથી માન, અને નીચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાથી અપ-  
માનનો વિચાર કરી હર્ષ અને ક્રોધ કરવો તને યોગ્ય નથી. કારણ કે કર્મના  
પ્રભાવથી તે પૂર્વના અનેક ભવોમાં તે પ્રાપ્ત કર્યા છે એ વાત પ્રગટ  
કરવામાં આવે છે-‘ સે અસઈ ’ ઇત્યાદિ.



टीका—‘स’ इत्यादि। सः=प्राणी, असकृत्=बहुवारम् उच्चैर्गोत्रे=लोकमान्य उग्रकुलादौ समुत्पन्न इति शेषः, तथा असकृत् नीचैर्गोत्रे काष्ठहारादिकुले चोत्पन्नः, अत्र गोत्रपदस्य कुलपरत्वं विज्ञेयम्। तयोरुभयोर्गोत्रयोरनुभावबन्धाध्यवसाय-स्थानकण्डकानि समानान्येव सन्तीत्याह—‘न हीन’ इति, हीनो=न्यूनो न भवति, एवमतिरिक्तः=अधिकोऽपि न भवति। उच्चनीचगोत्रयोः समसंख्यकान्येवानु-बन्धाध्यवसायस्थानकण्डकानि वर्तन्त इत्याशयः।

जीवात्मा का जन्म-मरण जब तक उसे मुक्ति की प्राप्ति नहीं हुई है तब तक होता रहता है। कभी यह नीच गोत्र के उदय से लोकनिन्दित कुल में जन्म लेता है तो कभी उच्च गोत्र के उदय से लोकपूजित कुल में। यह उच्च-नीच गोत्र में जन्म की प्राप्ति होना कर्म का कार्य है। इसमें किसी की इच्छा काम नहीं करती। अतः उच्च गोत्र में जन्म लेने से हर्षित होना और नीच गोत्र में जन्म लेने से दुःखित होना आत्मा के लिये योग्य नहीं। कारण कि पर्यायों में उलट-फेर होता ही रहता है; क्योंकि संसारी जीव कर्मों से युक्त हैं। अतः जो नीच गोत्र में उत्पन्न होने से अपना अपमान समझता है उसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि—वह तू अनेक बार लोकमान्य उग्रकुल भोगकुल आदि में उत्पन्न हो चुका है। तथा जो उच्चकुल में जन्म लेने से अपना मान-बढ़प्पन समझता है उसके प्रति सूत्रकार कहते हैं कि—भाई तू भी नीचकुल जो काष्ठहार आदि का वंश है, उसमें अनेक बार जन्म ले चुका है। गोत्र

જીવાત્માના જન્મ મરણ જ્યાં સુધી તેને મુક્તિની પ્રાપ્તિ નથી થઈ ત્યાં સુધી થતાં રહે છે, કોઈ વખત તે નીચ ગોત્રના ઉદયથી લોકનિંદિત કુળમાં જન્મ લે છે તો કોઈ વખત ઉચ્ચ ગોત્રના ઉદયથી લોકપૂજિત કુળમાં. આ ઉચ્ચ નીચ ગોત્રમાં જન્મની પ્રાપ્તિ થવી તે કર્મનું કાર્ય છે. તેમાં કોઈની ઇચ્છા કામ કરતી નથી. માટે ઉચ્ચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાથી હર્ષિત થવું, અને નીચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાથી દુઃખી થવું આત્માને માટે તે યોગ્ય નથી, કારણ કે પર્યાયોમાં ઉલટ ફેર થયા જ કરે છે. સંસારી જીવ કર્મોથી યુક્ત છે, માટે જે નીચ ગોત્રમાં ઉત્પન્ન હોવાથી પોતાનું અપમાન સમજે છે તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—તું અनेકવાર લોકમાન્ય ઉગ્રકુળ ભોગકુળ આદિમાં ઉત્પન્ન થઈ ચુકેલ છે, તથા જે ઉચ્ચ કુળમાં જન્મ લેવાથી પોતાનું માન-મોટાપણું સમજે છે તેના પ્રત્યે સૂત્ર-કાર કહે છે કે—ભાઈ તું પણ નીચ કુળ જે કઠીઆરા આદિનો વંશ છે તેમાં અनेકવાર જન્મ લઈ ચુકેલ છે. ગોત્ર શબ્દનો અર્થ કુળ છે. ઉચ્ચ ગોત્રમાં

(કળ્ડકમિતિ કર્મશ ઉચ્યતે) તસ્માત્ ન ઈહેતાપિ=જાતિ-કુલ-બલ-રૂપાદિમદ-સ્થાનેષ્વન્યતમં નો ઇચ્છેદપિ, મનસાડપ્યુચ્ચકુલાદ્યભિમાનં ન ચેષ્ટેતેતિ તાત્પર્યમ્ । તતઃ કિમાયાતમિત્યાહ-‘ ઇતી ’તિ, ઇતિ=પૂર્વોક્તપ્રકારમનન્તવારં પ્રાપ્તપૂર્વોચ્ચનીચ-કુલાદિકં સમાનકર્મશત્વં ચ પરિસંખ્યાય=બુદ્ધ્વા, ‘ગોત્રવાદી’ ગોત્રં વદિતું શીલં યસ્યેતિ સ ગોત્રવાદી=ગોત્રાભિમાની ‘મમૈવૈતાદૃશં પરમસમ્માનનીયં સુન્દરં ગોત્રં, કસ્યાપ્યન્યસ્ય તાદૃશં નાસ્તિ’ ઇતિ કો ભવેત્, કિંચ “માનવાદી” માનં=સ્વગુણોત્કીર્તનમભિમાનં વદિતું શીલં યસ્યેતિ સ માનવાદી=સ્વોત્કર્ષવાદી કો ભવેત્ ? ન કોઽપિ ભવેદિત્યર્થઃ । અપિ ચ-કસ્મિન્ વા એકસ્મિન્ પ્રકૃષ્ટગોત્રા-

શબ્દ કા અર્થ કુલ હૈ । ઉચ્ચ ગોત્ર મેં ઉત્પન્ન હોને સે ન તો આત્મા અધિક બડા હો જાતા હૈ ઓર ન નીચ ગોત્ર મેં જન્મ લેને સે હીન હી । ક્યોંકિ દોનોં ગોત્રોં કે બન્ધાધ્યવસાયસ્થાન કે કળ્ડક એક સરીખે હૈં । ડનકી સંખ્યા સમાન હૈ । (કર્મ કે અંશ કા નામ કળ્ડક હૈ) । ઇસલિયે “નો ઈહેત” જીવ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ જાતિમદ, કુલમદ, બલમદ ઓર રૂપ વગૈરહ કે મદ કરને કી કમી મનસે મી ચેષ્ટા તક ન કરે । ઇસ પ્રકાર જબ યહ જીવ ઉચ્ચ-નીચ ગોત્ર કો અનેક વાર પૂર્વ જન્મોં મેં પ્રાપ્ત કર ચુકા હૈ, ઓર ઇનકે બંધ કે મી જબ સમાન કર્મ કે અંશ હૈં તો એસા કૌન પ્રાણી હોગા જો ઇસ પરિસ્થિતિ કો જાન બૂઝકર મી ગોત્રવાદી-ગોત્રાભિમાની હોગા કિ-“મેરા હી એસા પરમમાનનીય સુન્દર ગોત્ર હૈ કિસી અન્ય કા એસા નહીં હૈ” ઇસ પ્રકાર કહને કા સ્વભાવવાલા-સાહસ કરને વાલા હોગા, તથા અપને ઉત્કર્ષ કો દૂસરોં કે પ્રતિ પ્રકટ કરને કી

ઉત્પન્ન હોવાથી નથી આત્મા અધિક મોટો થઈ જતો અને નથી નીચ ગોત્રમાં ઉત્પન્ન થવાથી નીચો થઈ જતો. કારણ કે બંને ગોત્રોના બન્ધાધ્યવસાય સ્થાનના કંડકો એકસરખા છે. તેઓની સંખ્યા સમાન છે. (કર્મના અંશનું નામ કંડક છે.) માટે “નો ઈહેત” જીવનું કર્તવ્ય છે કે-તે જાતિમદ, કુલમદ, બળમદ અને રૂપ વિગેરેનો મદ કરવાની કદિ પણ મનથી ચેષ્ટા પણ ન કરે. આ પ્રકારે જ્યારે આ જીવ ઉચ્ચનીચ ગોત્રને અનેક વાર પૂર્વ જન્મોમાં પ્રાપ્ત કરી ચુકેલ છે, અને તેના બંધનો પણ જ્યારે સમાન કર્મનો અંશ છે તો એવો કયો પ્રાણી હશે જે આ પરિસ્થિતિને જાણી જોઈને પણ ગોત્રવાદી-ગોત્રાભિમાની થશે કે-“મારું જ એવું પરમ માનનીય સુંદર ગોત્ર છે બીજા કોઈનું તેવું ગોત્ર નથી” આ પ્રકારે કહેવાના સ્વભાવ વાળા-સાહસ કરવાવાળા હશે, અને ઉત્કર્ષને બીજાઓના પ્રતિ પ્રગટ કરવાના ભાવનાવાળા હશે? માટે જ્યારે એ નિશ્ચિત છે



ભાવનાશાલી હોગા? । इसलिये जब यह निश्चित है कि उच्च गोत्र में अथवा नीच गोत्र में अनेक बार जन्म-मरण यह जीव कर चुका है तो फिर “मेरा जन्म उच्चकुल में हो” इस प्रकार वहां पर उत्पन्न होने के लिये अभिलाषी भी कौन होगा? । अतः जो हेयोपादेय के विवेक से युक्त हैं, ऐसे पण्डित-भव्यात्मा जीव उच्चकुल में उत्पन्न होने से न तो हर्ष करें और न नीचकुल में जन्म लेने से विषाद ही करें । इस बात का विद्वान् को कभी अहंकार नहीं करना चाहिये—कि मैं उच्चकुलका हूँ, तथा इसका कभी विषाद भी नहीं करना चाहिये कि मैं नीचकुल का हूँ । क्योंकि इस संसार का प्रवाह अनादिकाल से इसी प्रकार से चल रहा है, आगे भी ऐसा ही चलता रहेगा कि—जो आज उच्चकुल का है कल वही नीचकुल का बन जाता है, तथा दूसरे स्वर्ग के देव जिनके उच्चगोत्र का उदय है वे च्यवकर एकेन्द्रिय पृथिवी पानी वनस्पति जीवों में जन्म लेकर नीच गोत्र के उदय वाले बन जाते हैं । तब उच्च गोत्र और नीच गोत्र ये सदा एक जीव में स्थिर रहने वाले धर्म तो हैं नहीं; फिर इस विषय में हर्ष विषाद करना निष्कारण है । जब अनेक जन्मों में इस जीव को प्रकृष्ट कुलों की एवं अपकृष्टकुलों की अनेक बार प्राप्ति हो चुकी है तब हर्ष और विषाद करने से आत्मा को कौन सा लाभ हो सकता है? । यदि ये

કે ઉંચ ગોત્રમાં અને નીચ ગોત્રમાં અનેકવાર જન્મ મરણ આ જીવે કરેલ છે તો પછી “મારો જન્મ ઉંચ કુળમાં જ હોય” આ પ્રકાર ત્યાં ઉત્પન્ન થવા માટે કોણ અભિલાષી હશે? માટે જે હેયોપાદેયના વિવેકથી યુક્ત છે એવો પંડિત—ભવ્યાત્મા જીવ ઉંચ કુળમાં ઉત્પન્ન થવાથી ન તો હર્ષ કરે, અને નીચ કુળમાં જન્મ લેવાથી ન વિષાદ કરે. આ વાતનો વિદ્વાને કોઈ વખત અહંકાર કરવો ન જોઈએ કે—હું ઉંચ કુળનો છું. અને તેનો પણ વિષાદ નહિ કરવો જોઈએ કે—હું નીચ કુળનો છું. કારણ કે આ સંસારનો આ પ્રવાહ અનાદિ કાળથી આ પ્રકારે ચાલી રહ્યો છે. આગળ પણ એવો જ ચાલશે. જે આજ ઉંચ કુળના છે કાલ તેજ નીચ કુળના બની જાય છે. બીજા સ્વર્ગના દેવ જેનો ઉંચ ગોત્રનો ઉદય છે તે અવિને એકેન્દ્રિય—પૃથિવી—પાણી—વનસ્પતિ જીવોમાં જન્મ લઈ નીચ ગોત્રના ઉદયવાળા બની જાય છે, તો પછી ઉંચ ગોત્ર અને નીચ ગોત્ર એ સદા એક જીવમાં સ્થિર રહેવાવાળો ધર્મ તો છે જ નહિ, પછી આ વિષયમાં હર્ષવિષાદ કરવો નિષ્કારણ છે. અનેક જન્મોમાં આ જીવને પ્રકૃષ્ટ કુલોની અને અપ્રકૃષ્ટ કુલોની અનેકવાર પ્રાપ્તિ થયેલી છે પછી હર્ષ અને શોક કરવાથી આત્માને કયો લાભ મળી શકે



દિકેઽનેકથા પ્રાપ્તપૂર્વે ન ગૃધ્યેત્=નામિલ્પ્યેત્=ઉચ્ચકુલોત્પન્નોઽહમિત્યુત્કર્ષ નેચ્છે-  
 દિત્યર્થઃ । તતઃ કિમિત્યાહ-‘તસ્મા’-દિતિ, યસ્માદનાદિભવે પરિભ્રમતા બહૂનિ  
 પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિ પ્રાપ્તાનિ, તથાઽપકૃષ્ટાનિ ચ લઘ્વાનિ, તસ્માદ્દેતોઃ પણ્ડિતઃ=  
 પરમાર્થજ્ઞો જ્ઞાતહેયોપાદેયો ન હૃષ્યેત્, ‘મમૈવેદશં કુલ’-મિતિ ન મોદેત, ન ક્રુધ્યેત્=  
 ‘મમ કથમધમતરે કુલે જન્માભૂ’-દિતિ સ્વાત્મને ન ક્રુધ્યેત્, ન વિષાદમપિ કુર્યાત્ ।  
 અનેકજનિષુ પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિ પ્રાપ્તાનીતિ કથં હર્ષસમ્ભવઃ?, નીચકુલાનિ બહુશઃ સમ-  
 ધિગતાનીતિ વૃથૈવ ક્રોધઃ । અભૂતપૂર્વયોઃ સુખદુઃસ્વયોરેવ સતોર્હર્ષ-ક્રોધસમ્ભવાદિતિ  
 તાત્પર્યમ્ ।

ઉક્તञ્ચ—

અભૂતપૂર્વ કુલ જીવોં કે પ્રાપ્ત હુણ હોતે તો ડનકી પ્રાપ્તિ મેં હર્ષ વિષાદ  
 કરના ઉચિત માના જાતા, પરંતુ ંસા તો હૈ નહીં । અતઃ ંસા વિચાર  
 કર જ્ઞાની કો ંસ વિષય મેં હર્ષ વિષાદ નહીં કરના ચાહિયે; કિન્તુ સદા  
 ંસા ઁયાલ કરતે રહતા ચાહિયે કિ—

ંસ સંસાર મેં અનાદિકાલ સે નાના યોનિયોં મેં ભ્રમણ કરને વાલે  
 ંસ આત્મા ને અનેક વાર સર્વ સુખ દુઃસ્વ કે સ્થાનભૂત ઉચ્ચ નીચ ગોત્રોં  
 કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ, ફિર ંનકી પ્રાપ્તિ મેં તુઁઁ આશ્ચર્ય હી કૌન સા હૈ ।  
 અનન્ત જન્મજન્માન્તરોં મેં ંસ જીવને અનેક સુખોં કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ,  
 તથા-અપમાન સે, સ્થાન આદિકે ચ્યુત હોને સે વધવંધન ંવં ધનકે  
 નાશ સે અનેક રોગોં કો તથા અનેક પ્રકાર કે દુઃસ્વોં કો ઁલા હૈ ।

કહા ઁી હૈ—

ઁ. કહાય તે અભૂતપૂર્વ કુળ જીવને પ્રાપ્ત થયેલ હોય તો તેની પ્રાપ્તિમાં હર્ષ  
 વિષાદ કરવો ઉચિત મનાત, પરંતુ તેણે તો ઁ નહિ, માટે ંવેલો વિચાર કરી  
 જ્ઞાનીંઁ આ વિષયમાં હર્ષ વિષાદ નહિ કરવો જોઈંઁ. પણ સદા હમેશાં ંવેલો  
 ઁયાલ રાખવો જોઈંઁ કે—

આ સંસારમાં અનાદિ કાળથી અનેક ંયોનિયોમાં ભ્રમણ કરવાવાળા આ આત્માને  
 અનેકવાર સર્વ સુખદુઃખના સ્થાનભૂત ઉચ્ચ નીચ ગોત્રોને પ્રાપ્ત કરેલ ઁ. પછી  
 તેની પ્રાપ્તિમાં તેને આશ્ચર્ય શું ઁ. અનન્ત જન્મ જન્માન્તરોમાં આ જીવે  
 અનેક પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કર્યા ઁ. અને અપમાનથી, સ્થાન આદિના ચ્યુત  
 હોવાથી, વધ બંધન અને ધનના નાશથી અનેક રોગોને તથા અનેક પ્રકારના  
 દુઃખોને સહન કર્યા ઁ.

કહ્યું પણ ઁ—

“સર્વસુખાન્યપિ બહુશઃ, પ્રાપ્તાન્યટતા મયાઽત્ર સંસારે ।

ઉચ્ચૈઃસ્થાનાનિ તથા, તેન ન મે વિસ્મયસ્તેષુ ” ॥૧॥

તથા—“અવમાનાત્પરિશ્રંશાદ્વધ્વન્યધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥૧॥ ઇતિ ।

કિમધિકેન વર્તમાનેઽપિ જન્મનિ નાનાવિધા અવસ્થા અનુભૂયન્તે, અત-  
આત્માર્થિભિર્હર્ષક્રોધૌ ન કાર્યાવિત્યાશયઃ । અત્ર ગોત્રપદમુપલક્ષણં, તેન જાત્યા-  
દીનાં સર્વેષાં મદો ન વિધેય ઇતિ પ્રકરણાર્થઃ ।

“સર્વસુખાન્યપિ બહુશઃ, પ્રાપ્તાન્યટતા મયાઽત્ર સંસારે ।

ઉચ્ચૈઃ સ્થાનાનિ તથા, તેન ન મે વિસ્મયસ્તેષુ ” ॥ ૧ ॥

તથા—“અવમાનાત્પરિશ્રંશાદ્વધ્વન્યધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ, જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અધિક કયા કહા જાય ? જબ વર્તમાન પર્યાય મેં હી ઇસ જીવ કી  
અનેક અવસ્થાઈં હોતી દેહી જાતી હૈં તો જન્મ-જન્માન્તરોં મેં ઇસકી  
અનેક અવસ્થાઈં હુઈ હોં, અનેક વાર ઉચ્ચ નીચ કુલોં મેં જન્મ હુઆ હો  
તો ઇસમેં આશ્ચર્ય કી વાત હી કૌનસી હૈ । એસા દૃઢ વિશ્વાસ કર આ-  
ત્માર્થી કે લિયે ઇન અવસ્થાઓં મેં કમી ભી હર્ષ ઔર વિષાદ કે લિયે  
સ્થાન નહીં હોના ચાહિયે ।

સૂત્ર મેં ગોત્ર પદ ઉપલક્ષણ હૈ ઇસસે આઠ મદોં કા—(૧) જાતિમદ,  
(૨) કુલમદ, (૩) બલમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) લાભમદ, (૬) તપમદ,

“સર્વસુખાન્યપિ બહુશઃ, પ્રાપ્તાન્યટતા મયાઽત્ર સંસારે ।

ઉચ્ચૈઃસ્થાનાનિ તથા, તેન ન મે વિસ્મયસ્તેષુ ” ॥ ૧ ॥

તથા—“અવમાનાત્પરિશ્રંશાદ્વધ્વન્યધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ, જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ

અધિક શું કહેવામાં આવે. જ્યારે વર્તમાન પર્યાયમાં જ આ જીવની અનેક  
અવસ્થાઓ થાય છે તે નજરે દેખાય છે તો જન્મ જન્માન્તરોમાં તેની અનેક  
અવસ્થાઓ થાય, અનેક વાર ઉચ્ચ નીચ ગોત્રમાં જન્મો થાય છે એમાં  
આશ્ચર્યની વાત કંઈ છે. એવો દૃઢ વિશ્વાસ કરી આત્માર્થીને માટે આ અવસ્થા  
ઓમાં કોઈ વખત પણ હર્ષ અને શોકનું સ્થાન હોવું ન જોઈએ.

સૂત્રમાં ગોત્રપદ ઉપલક્ષણ છે માટે આઠ મદોનું—(૧) જાતિમદ, (૨) કુળ  
મદ, (૩) બળમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) લાભમદ, (૬) તપમદ, (૭) સૂત્રમદ,

માનાદિનિરસનેન કષાયવ્યુદાસસ્તેન ચ સંયમે દૃઢતા વિષયે ચાદૃઢતા, તથા ચ સમ્યગ્જ્ઞાનાદધિગમસ્તેન ચ મોક્ષં ઇતિ ક્રમેણ સર્વથા માનાપમાનાદૌ હર્ષક્રોધૌ ત્યાજ્યાવિતિ ભાવઃ ।

યથા દેશદેશાન્તરં ભ્રમન્ પથિકઃ કચિત્ સુખં કચિદ્ દુઃખં લભતે, કચિદ્ ગ્રામે કચિદરણ્યે વસતિ, કચિત્સમભૂમિષુ કચિચ્ચ વિષમભૂમિષુ શેતે, કચિત્સ્વચ્છજલં કચિદ્ દૂષિતજલં ચ પિવતિ, ન ચ સુખદુઃખે ગણયતિ લક્ષ્યગમ્યદેશપ્રાપ્તિકામઃ, તથૈવ પ્રકૃતેઽપિ ઉચ્ચગોત્રાદિપ્રાપ્તૌ ન હર્ષ-શોકૌ મુક્તિપ્રાપ્તુકામેન સંયમિના કાર્યાવિતિ વર્તુલકાર્થઃ ॥ સૂ. ૧ ॥

(૭) સૂત્રમદ, (૮) ऐश्वर्यમદ का ग्रहण हो जाता है । मद भी अहंकार ही है, अतः इनका परित्याग कर देना चाहिये; क्योंकि जाति वगैरह से हीन होने पर भी आत्मा काल लब्धि आदि के प्राप्त होने पर धर्म का अधिकारी बन जाता है । धर्मप्राप्ति में जाति वगैरह बाधक नहीं होते हैं ।

जिस प्रकार देश-देशान्तर में भ्रमण करने वाले प्राणी को कभी किसी स्थान पर सुख, कभी किसी जगह दुःख मिलता है । कभी वह ग्राम में वस जाता है कभी उसे वन में भी वसने का अवसर आता है, कभी प्रशस्त भूमि पर वह सो जाता है कभी कंटकाकीर्ण भूमि में ही पड़ रहता है, कभी मीठा स्वच्छ जल उसे पीने को मिलता है कभी खारा मलिन जल भी वह पी लेता है, तो भी इस विषय में वह सुख और दुःख नहीं मानता । उसे अपने लक्ष्य स्थान पर पहुंचने के लिये यह सब करना पड़ता है । उसी प्रकार प्रकृत में भी मुक्ति को चाहने वाले संयमी मुनि के

(૮) ऐશ્વર્યમદનું ગ્રહણ થાય છે. મદ પણ અહંકાર જ છે માટે તેનો પણ પરિત્યાગ કરી દેવો જોઈએ, કારણ કે જાતિ વિગેરેનું હીનપણું હોવા છતાં પણ આત્મા કાલ લાભિ આદિના પ્રાપ્ત થવાથી ધર્મનો અધિકારી બની જાય છે, ધર્મપ્રાપ્તિમાં જાતિ વિગેરે બાધક થતા નથી.

જેવી રીતે દેશદેશાન્તરમાં ભ્રમણ કરવાવાળા પ્રાણીને કોઈ વખત કોઈ સ્થાન પર સુખ, કોઈ વખત કોઈ જગ્યાએ દુઃખ મળે છે. કોઈ વખત ગામમાં વસે છે કોઈ વખત વગડામાં પણ રહેવાનો પ્રસંગ આવે છે કોઈ વખત પ્રશસ્ત ભૂમિ પર તે સુધ જાય છે કોઈ વખત કાંટાવાળી ભૂમિમાં પણ પડ્યું રહેવું પડે છે. કોઈ વખત મીઠું સ્વચ્છ પાણી પીવા મળે છે કોઈ વખત ખાડું મલિન પાણી પણ પીવા મળે છે તો પણ આ બધા વિષયોમાં તે સુખ અગર દુઃખ માનતો નથી. તેને પોતાના લક્ષ્ય સ્થાને પહોંચવા માટે આ બધું કરવું પડે છે તે પ્રકારે પ્રકૃતમાં પણ મુક્તિને આહવાવાળા સંયમીમુનિ માટે ઉચ્ચ નીચ ગોત્રની



प्राणिनां सातं प्रियं भवतीति विचार्य केषाञ्चिदपि प्राणिनामहितं न कर्त्तव्यम्। तदहिताचरणस्य यत्फलं भवति तदर्शयति—‘भूएहि’ इत्यादि।

मूलम्—भूएहिं जाण पडिलेह सायं, समिए एयाणुपस्सी, तं जहा—अंधत्तं बहिरत्तं मूयत्तं काणत्तं कुंटत्तं खुज्जत्तं वडभत्तं सामत्तं सबलत्तं, सह पमाएणं अणेगरूवाओ जोणीओ संधायइ, विरूवरूवे फासे संपरिवेयइ ॥ सू० २ ॥

छाया—भूतेषु जानीहि सातम् समित एतदनुदर्शी, तद्यथा—अन्धत्वं बधिरत्वं मूकत्वं काणत्वं कुब्जत्वं वडभत्वं श्यामत्वं शबलत्वं सह प्रमादेन अनेकरूपा योनीः सन्दधाति विरूपरूपान् स्पर्शान् परिसंवेदयते ॥ सू० २ ॥

लिये उच्च नीच गोत्र की प्राप्ति में भी हर्ष विषाद करना उचित नहीं है। इस प्रकार के विचार से मान आदि का जब आत्मा से अभाव हो जाता है तब कषाय का अभाव स्वतः सिद्ध होने से संयमी को संयम-भाव में दृढ़ता, और विषयादिकों में अदृढ़ता आ जाती है, इससे सम्यग्ज्ञानादिक सद्गुणों की प्राप्ति होने से संयमी मुनि को मुक्ति का लाभ कालान्तर में या उसी भव में होजाता है। इस पूर्वोक्त कथन से संयमी मुनि को इस बात का भी सदा विचार करते रहना चाहिये कि मान और अपमान के कारण-कलापों की उपस्थिति होने पर मुझे हर्ष और विषाद नहीं करना चाहिये ॥ सू० १ ॥

सांसारिक प्राणियों को सातावेदनीय के उदय से सुख एवं सुख-कारक सामग्री, तथा असातावेदनीय के उदय से दुःख एवं दुःखकारक

प्राप्तिमां पणु दुर्षं शोऽकं करवो उचित नथी. आ प्रकारना विचारथी मान आदिनो न्यारे आत्माथी अभाव थर्ध नय छे त्यारे कषायनो अभाव स्वतः सिद्ध होवाथी संयमीने संयम लावमां दृढता अने विषयादिकोमां अदृढता आवी नय छे. भाटे सम्यग्ज्ञानादिक सद्गुणोनी प्राप्ति होवाथी संयमी मुनिने मुक्तिनो लाभ कालान्तरमां अगर आ लवमां थाय छे.

आ पूर्वोक्त कथनथी संयमी मुनिछे आ बातनो पणु सदा विचार राखवो नैधंछे के—मान अने अपमानना कारणकलापोनी उपस्थिति होवाथी दुर्ष अने विषाद करवुं भाइं कर्त्तव्य नथी. ॥ सू० १ ॥

सांसारिक प्राणियोने सातावेदनीयना उदयथी सुख अने सुखकारक सामग्री, अने असातावेदनीयना उदयथी दुःख अने दुःखकारक सामग्री प्राप्त थाय छे,

टीका—‘भूतेषु’ इति । अत्र मूले ‘भूएहिं’ इति तृतीयान्तपाठः सप्तम्यर्थे, भूतेषु=भवन्ति, भविष्यन्ति, अभूवन् च सत्तारूपेणेति भूतानि=प्राणिनस्तेषु सातं=सुखं तद्विरुद्धं चासातं=दुःखं प्रत्युपेक्ष्य=मूक्षमधिया विचार्य जानीहि=बुध्यस्व । उपयोगलक्षणो जीवः कालत्रयेऽपि सत्तां दधाति, अतः प्राणिनस्त्रैकालिकसत्ताप्रतिपादनायात्र भूतशब्दोपादानं कृतमिति बोध्यम् ।

सामग्री प्राप्त होती है, ऐसा विचार कर किसी भी प्राणी का जरा भी अहित नहीं करना चाहिये । अहित आचरण का जो फल होता है सो कहते हैं—

‘भूएहिं जाण’ इत्यादि । प्रत्येक जीवात्मा—चाहे वह दरिद्री हो; चाहे भिक्षुक हो; चाहे धनी हो; चाहे गुणी हो; कोई भी क्यों न हो; यही चाहता है कि हमको शान्ति लाभ हो, सुख प्राप्त हो । चाहे आस्तिक हो या नास्तिक; सबका एक यही लक्ष्य है । इससे प्रतिकूल कोई भी नहीं मिलेगा । एक भिक्षुक जो दर दर का भिखारी बनकर अपने उदर का निर्वाह करता है उससे भी यदि प्रश्न किया जाय तो वह भी यही कहेगा कि, क्या करूँ; मुझे शाता—सुख नहीं है । अतः इस प्रकार के उसके कथन से यह बात सत्य साबित होती है कि वह भी शाता—सुख पाने का अभिलाषी है । किड़ी को भी कोई छूता है तो वह भय के मारे भागती है । वृक्ष के नीचे किसीने अग्नि जलाई हो तो, वह उसके आताप से मुरझा जाता है । लजवती एक जात की वनस्पति होती है जो छूते ही संकुचित

એવો વિચાર કરી કેઇ પણ પ્રણિનું જરા પણ અહિત નહિ કરવું બોધ્યો. અહિત આચરણનું જે ફળ હોય છે તે કહે છે—

‘ભૂપહિં જાણ’ ઇત્યાદિ. પ્રત્યેક જીવાત્મા ભલે તે દરિદ્રી હોય અગર ભિક્ષુક હોય, ભલે ધની હોય અહિં ગુણી હોય. ભલે કેઇ પણ પ્રકારના હોય પણ ‘અમોને શાંતિનો લાભ થાઓ, સુખ થાઓ’ ભલે નાસ્તિક હોય કે આસ્તિક પણ બધાનું આ એક જ લક્ષ્ય છે. એનાથી પ્રતિકૂળ કેઇ પણ કારણ મળશે નહિ. એક ભિક્ષુક જે ઘરઘરનો ભિખારી બનીને પોતાના પેટનો નિર્વાહ કરે છે તેનાથી પણ એ પ્રશ્ન કરવામાં આવે તો તે પણ એ જ કહેશે કે શું કરું મને શાતા—સુખ નથી, માટે આ પ્રકારના તેના કથનથી એ વાત સત્ય સાબિત થાય છે કે તે પણ શાતા—સુખ મેળવવાનો અભિલાષી છે. કિડીને પણ કેઇ અડે છે તો તે પણ ભયથી દૂર ભાગે છે. વૃક્ષની નીચે કેઇએ અગ્નિ સળગાવી હોય તો તે તેના આ તાપથી સુકાઇ બચ છે. લજવતી એક જાતની વનસ્પતિ હોય છે જે અડકવાથી



હો જાતી હૈ । હન સબકી હન બાહ્ય ચેષ્ટાઓં સે યહી માલૂમ કિયા જા સકતા હૈ કિ-હનકે અન્દર રહને વાલી આત્મા બી શાતા અર્થાત્ સુખ કા અભિલાષી હૈ । મતલબ યહી હૈ કિ-ચાહે કોઈ બી જાત કા જીવ ક્યોં ન હો; સબી હસ શાતા-સુખ કે અભિલાષી હૈ । યહાં પર યહ પ્રશ્ન હો સકતા હૈ કિ વહ શાતા-સુખ કૈસે ઓર કહાં પ્રાપ્ત હો સકતા હૈ ? । ભવા-મિનંદી જીવ હસ બાત કા સહસા ઉત્તર દેંગે કિ-વહ શાતા-સુખ સાંસારિક પદાર્થોં કે સેવન સે હી મિલ સકતા હૈ । પરન્તુ યહ ધારણા ડનકી ગલત હૈ । યદિ ંસા હી હોતા તો ફિર ચક્રવર્તી જૈસે વિશાલ વૈભવ કે ભોક્તા હનકા પરિત્યાગ ક્યોં કરતે ? । કોઈ આર્થિક શાસ્ત્રવેત્તા કહેગા કિ-ધન કી પ્રાપ્તિ મેં હી શાન્તિ-સુખ સમાયા હુઆ હૈ । પરન્તુ યહ વિચાર બી ઠીક નહીં । ક્યોંકિ યદિ યહી સિદ્ધાન્ત સ્વીકૃત કિયા જાય, તો ફિર આજ જો ભીખ માંગકર અપના ગુજારા કરને વાલે દરિદ્રી જીવ હૈ ડનસે જાકર યદિ યહ કહા જાવે કિ હમ તુમ કો દો લાખ રૂપયા દેતે હૈ, તુમ અપને શરીર કા પાવ ભર બી માંસ નિકાલકર હમકો દે દો, તો વહ કમી બી આપકી માંગ કી પૂર્તિ નહીં કરેગા । અતઃ અધિક ક્યા કહા જાય, યહ બાત નિશ્ચિત હૈ કિ-હન ક્ષણિક વિનશ્વર પદાર્થોં મેં સચ્ચી સુખ-

સંકુચિત થઈ બંધ છે. આ બધાની આ બાહ્ય ચેષ્ટાઓથી એ માલુમ થાય છે કે-તેની અંદર રહેવાવાળો આત્મા પણ શાતા અર્થાત્ સુખનો અભિલાષી છે. મતલબ એ છે કે ભલે કોઈ પણ બંધનો જીવ હોય પણ તે શાતા-સુખનો અભિલાષી છે. આ ઠેકાણે એ પ્રશ્ન થાય છે કે તે શાતા-સુખ કેવી રીતે અને કઈ જગ્યાએ પ્રાપ્ત થઈ શકે ? ભવામિનંદી જીવ આ વાતનો સહસા ઉત્તર આપશે કે-તે શાતા-સુખ સાંસારિક પદાર્થોના સેવનથી જ મળી શકે છે. પરંતુ એવું ધારવું તે ગલત છે. બે એ જ પ્રમાણે હોય તો પછી ચક્રવર્તી જેવા વિશાળ વૈભવના ભોક્તા તેનો પરિત્યાગ કેમ કરત ? કોઈ આર્થિકશાસ્ત્રવેત્તા કહેશે કે ધનની પ્રાપ્તિમાં જ શાતા-સુખ સમાયા છે. પરંતુ તે વિચાર પણ ઠીક નથી, કારણ કે કદાચ તે સિદ્ધાંત સ્વીકૃત કરવામાં આવે તો પછી આજ જે ભીખ માંગી પોતાનો ગુબ્બરો કરવા-વાળા દરિદ્રી જીવ છે તેની પાસે જઈને તેને કહેવામાં આવે કે-‘અમે તને એ લાખ રૂપિયા આપીશું તું પોતાના શરીરનું પાશેર માંસ અમને કાપીને આપી દે’ તો તે પણ તમારી આ માંગણી પુરી કરશે નહિ. માટે શું વધારે કહેવું ? એ વાત નિશ્ચિત છે કે આવા ક્ષણિક વિનશ્વર પદાર્થોમાં સાચી સુખશાંતિ પ્રદાન કરવાની



શાન્તિ પ્રદાન કરને કી યોગ્યતા નહીં હૈ । યહ તો હમારી કલ્પના હૈ, જો હમને इनमें सुखशान्ति मान रखी है । जिन जड़ स्थूल वस्तुओं में सुख की कल्पना करके साधारण मनुष्य भी जी-तोड़ परिश्रम कर रहे हैं, उनकी प्राप्ति होने पर भी उन्हें सुख नहीं मिलता, क्योंकि उनमें सुख प्रदान करने की शक्ति है नहीं । इसी से आज सारा संसार, चाहे वैभवसम्पन्न हो; चाहे दरिद्रावस्थापन्न हो; दुःखी ही है । यह दुःख तबतक नहीं मिट सकता जब तक सुख के वास्तविक स्वरूप का पता न लगा लिया जायगा, अथवा उसके स्थान का पूर्ण ज्ञान न हो जावेगा ।

वास्तविक सुख क्या है ? इसका एक मात्र उत्तर है—निराकुलता । क्योंकि संसार में जब कभी इच्छाओं के शांत होने पर यत्-किञ्चित् सुख की अनुभूति होती है तब इससे इस बात का अनुमान भी लगाया जा सकता है कि कोई ऐसी भी अवस्था है कि जहां पर इसका पूर्णरूप से विकाश है । वह निराकुलता के सिवाय और कोई दूसरी अवस्था नहीं है । इस निराकुलता का पूर्णभोक्ता परमात्मा है । इसी का अभिलाषी प्रत्येक संसारी जीव है । इसी अभिप्राय को हृदय में रखकर सूत्रकार कहते हैं कि “भूतेषु जानीहि प्रत्युपेक्ष्य सातम्”—हे भव्य ! प्रत्येक जीवों में व्यक्त और अव्यक्तरूप से शातारूप जो सुख है उसकी अभिलाषा

યોગ્યતા નથી, એ તો અમારી કલ્પના છે, જે અમે તેમાં સુખ શાન્તિ માની રાખેલ છે. જે જડ અને સ્થૂળ વસ્તુઓમાં સુખની કલ્પના કરીને સાધારણ મનુષ્ય પણ જીવતોડ પરિશ્રમ કરે છે. તેના પ્રાપ્તિ થવા છતાં પણ તેને સુખ મળતું નથી. કારણ કે તેમાં સુખ પ્રદાન કરવાની શક્તિ છે જ નહિ. એટલા મટે આજ સારો સંસાર ભલે વૈભવસંપન્ન હોય અગર દરિદ્રાવસ્થાપન્ન હોય, દુઃખી જ છે. એ દુઃખ ત્યાં સુધી મટી શકતું નથી જ્યાં સુધી સુખનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ હાથ ન લાગે, અગર તેના સ્થાનનું પૂર્ણ જ્ઞાન ન થાય.

વાસ્તવિક સુખ શું છે ? તેનો એક માત્ર ઉત્તર છે—નિરાકુળતા. કારણ કે સંસારમાં જ્યારે કોઈ વખત ઇચ્છાઓના શાંત થવાથી જરાક સુખની અનુભૂતિ થાય છે ત્યારે તેથી એ વાતનો અનુમાન કરવામાં આવે છે કે—કોઈ એવી પણ અવસ્થા છે કે જે કેકાણે તેનો પૂર્ણ રૂપથી વિકાશ છે, તે નિરાકુળતા સિવાય બીજી કોઈ અવસ્થા નથી. આ નિરાકુળતાનો પૂર્ણ ભોક્તા પરમાત્મા છે. તેનો અભિલાષી પ્રત્યેક સંસારી જીવ છે. આ અભિપ્રાયને હૃદયમાં રાખીને સૂત્રકાર કહે છે કે—“भूतेषु जानीहि प्रत्युपेक्ष्य सातम्” હે ભવ્ય ! પ્રત્યેક જીવમાં વ્યક્ત અને અવ્યક્ત રૂપથી શાતારૂપ જે સુખ છે, તેનો અભિલાષા છુપાયેલી છે, તે

છુપી હુઈ હૈ, હસ બાત કા તૂં અપની સૂક્ષ્મ બુદ્ધિ સે વિચાર કર। હસ સૂત્ર કૈ અવતરણ મૈં જો સાતવેદનીયજન્ય સુખ કૈ અભિલાષી પ્રત્યેક જીવ કો બતલાયા ગયા હૈ વહ હસી નિરાકુલતારૂપ સુખ કા પરમ્પરાકારણ હોને સે હી પ્રકટ કિયા ગયા હૈ। ક્યોંકિ યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ જો સાતવેદનીય કર્મ કૈ ઉદય સે સાંસારિક વૈભવજન્ય સુખ પ્રાપ્ત હોગા વહ ક્ષણિક-વિનશ્વર હોગા, તથા ઉસકા ઉદય દુઃખોં સે અન્તરિમ-છુપા હુવા હોગા। હસલિયે ઈસે સુખ સે આત્મા સાક્ષાત્ નિરાકુલતારૂપ પરિણતિ કા સદા ભોક્તા નહીં બન સકતા। હાં! સાંસારિક સુખ કી સામગ્રી યદિ જીવોં કૈ પાસ હૈ, ઓર યદિ ઉનકૈ ચિત્ત મૈં હેયોપાદેય કા વિવેક જાગૃત હૈ તો વે ઉસકૈ દ્વારા કુછ અંશોં મૈં સાંસારિક કાર્યોં સે નિરાકુલ બનકર શુભ ધાર્મિક ક્રિયાઓં કા આરાધન ભલીભાંતિ કર સકતે હૈં। હસ અવસ્થા મૈં ઉનકૈ શુભભાવોં કી ક્રમશઃ જાગૃતિ હોતી હૈ, ઓર વહ ઉન્હેં પરમ્પરારૂપ સે આત્મકલ્યાણકારી માર્ગ કા અધિકારી બના દેતી હૈ। જો ભવાભિનંદી હૈ અથવા જિસ કિસી પ્રકાર સે અપના સ્વાર્થ સાધન કરને મૈં હી મસ્ત હૈ, ‘અપને સુખ મૈં હી સબકા સુખ સમાયા હુઆ હૈ’-જો હસ હુર્ભાવના કા વશવર્તી હૈ, “સાતવેદનીય કૈ ઉદય સે જિસ પ્રકાર

વાતનો તું તારી પોતાની સૂક્ષ્મ બુદ્ધિથી વિચાર કર. આ સૂત્રના અવતરણમાં જે સાતવેદનીયજન્ય સુખના અભિલાષી પ્રત્યેક જીવને બતાવવામાં આવ્યા છે, તે આ નિરાકુલતારૂપ સુખના પરંપરાકારણ હોવાથી પ્રકટ કર્યા છે, કારણ કે એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે-જે સાતવેદનીય કર્મના ઉદયથી સાંસારિક વૈભવજન્ય સુખ પ્રાપ્ત થશે તે ક્ષણિક વિનશ્વર હશે, અને તેનો ઉદય દુઃખોથી અન્તરિમ-છુપાયેલો હશે માટે એવા સુખથી આત્મા સાક્ષાત્ નિરાકુલતારૂપ પરિણતિનો સદા ભોક્તા બની શકતો નથી. હાં, સાંસારિક સુખની સામગ્રી કદાચ જીવોની પાસે છે, અને કદાચ તેના ચિત્તમાં હેયોપાદેયનો વિવેક જાગૃત છે તો તે તેના દ્વારા થોડા અંશોમાં સાંસારિક કાર્યોથી નિરાકુળ બનીને શુભ ધાર્મિક ક્રિયાઓનું આરાધન ભલીભાંતિ કરી શકે છે. આ અવસ્થામાં તેના શુભ ભાવોની ક્રમશઃ જાગૃતિ થાય છે, અને તે તેને પરંપરાથી આત્મકલ્યાણકારી માર્ગનો અધિકારી બનાવી દે છે. જે ભવાભિનંદી છે અથવા જેકોઈ પ્રકારથી પોતાનો સ્વાર્થ સાધવામાં જ મસ્ત છે ‘પોતાના સુખમાં જ બધાના સુખ સમાયેલા છે’ જે આવી હુર્ભાવનાને વશવર્તી છે, “સાતવેદનીયના ઉદયથી જેવા પ્રકારે



સમિતઃ=પઞ્ચસમિતિભિઃ સમિતઃ સન્ એતદનુદર્શી=એતત્સુખં દુઃખં વા વક્ષ્ય-  
માણં વાઽન્યત્વાદિકં દ્રઘં=વિલોકિતું શીલં યસ્ય સ એતદનુદર્શી=પ્રાણિશુભાશુભાવ-  
લોકી ત્વં જાતિકુલાદિમદજનિતકટુકર્મવિપાકમન્થત્વાદિકં જ્ઞાત્વા ભૂતેષુ સાતં  
જાનીહિ, ઇતિ સમ્બન્ધઃ । તદેવ દર્શયતિ—‘તદ્યથે’—ત્યાદિના ।

હમ સાંસારિક વૈભવ કે ભોક્તા બને છે, વૈસે હી દીન દુઃખી જીવ અ-  
સાતાવેદનીય કે ઉદય સે દુઃખ દરિદ્રાવસ્થા કે ભોક્તા બને છે, ફિર હમે  
इनके दुःख को दूर करने की और इन्हें सुख पहुंचाने की क्या आवश्य-  
कता है? क्योंकि हम किसी के कर्मोदय को तो मेट सकते नहीं हैं।” इत्यादि  
दुर्भावनाओं से जिनका अन्तःकरण दूषित है—वे ‘प्रत्येक संसारी जीव  
सुखाभिलाषी है’ इस बात को नहीं समझ सकते । इसे समझने के  
लिये सूक्ष्म-सद्ज्ञानरूपी बुद्धि, एवं संयम जीवन की आवश्यकता है ।  
इसीका खुलाशा करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—‘समिण एयाणुपस्सी  
समिंतः एतदनुदर्शी’ । जो समितियों के पालन करने में सावधान है,  
जिसकी चित्तवृत्ति जीवों को दुःखित देखकर द्रवित हो जाती है, जो  
जीवों की रक्षा करने में सदा सावधान रहते हैं, जिनकी प्रत्येक क्रिया  
यतनापूर्वक होती है, ऐसे समितिपालक संयमी मुनि ही ‘एतदनुदर्शी’  
इस बात का अनुभव कर सकते हैं । पांच समितियों के आराधन करने  
का उद्देश्य जीवों की एकमात्र रक्षा करना है, इसमें स्व और पर दोनों  
की रक्षा आजाती है । ईर्यासमिति में लवलीन साधु—झूसराप्रमाण दृष्टि से

અમે સાંસારિક વૈભવનાં ભોક્તા બન્યા છીએ તેવી જ રીતે એ દીન દુઃખી જીવ અસા-  
તાવેદનીયના ઉદયથી દુઃખ દરિદ્રાવસ્થાના ભોક્તા બન્યા છે. પછી અમને તેના દુઃખોને  
દૂર કરવાની અને તેમને સુખ પહોંચાડવાની શું આવશ્યકતા છે? કારણ કે અમે  
કોઈના કર્મોદયને મિટાવી શકતા નથી ” ઇત્યાદિ દુર્ભાવનાઓથી જેનું અંતઃકરણ  
દૂષિત છે તે “પ્રત્યેક સંસારી જીવ સુખાભિલાષી છે” એ વાતને સમજી શકતા  
નથી. તેને સમજવાને માટે સૂક્ષ્મ સદ્જ્ઞાનરૂપી બુદ્ધિ અને સંયમ જીવનની આવ-  
શ્યકતા છે, તેનો ખુલાસો કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—‘સમિણ એયાણુપસ્સી’ સમિતઃ  
એતદનુદર્શી, જે સમિતિઓના પાલન કરવામાં સાવધાન છે, જેની ચિત્તવૃત્તિ જીવોની  
રક્ષા કરવામાં સદા સાવધાન રહે છે, જેની પ્રત્યેક ક્રિયા યતનાપૂર્વક થાય છે, એવા  
સમિતિપાળક સંયમી મુનિ જ ‘એતદનુદર્શી’ એ વાતનો અનુભવ કરી શકે છે.  
પાંચ સમિતિઓનું આરાધન કરવાનો ઉદ્દેશ્ય જીવોની એક માત્ર રક્ષા કરવાની છે.  
તેમાં સ્વ અને પર બંનેની રક્ષા આવી જાય છે. ઈર્યાસમિતિમાં લવલીન સાધુ



માર્ગ કો દેખકર ચલતા હુવા મુનિ સદા હસ બાત કા પક્ષા ધ્યાન રખતા હૈ કિ કહીં કોઈ છોડા મોડા જીવ મેરે પૈર કે નીચે આકર પ્રાણોં સે વ્યુક્ત ન હો જાય । હસમેં પર કે પ્રાણોં કા રક્ષણ કે સાથ ૨ અપને અહિંસારૂપ મહાવ્રત કા સંરક્ષણ અચ્છી તરહ સે હોતા રહતા હૈ । ૧ । ભાષાસમિતિ મેં પ્રવૃત્ત સાધુ સદા હિત-મિત-વચન બોલેગા, દૂસરે જીવોં કો જિસ વચન સે કષ્ટ પૈદા હો, હસ પ્રકાર કે સાવધ વ કઠોર વચન નહીં બોલતા હૈ । હસ સમિતિ સે સત્ય મહાવ્રત કી રક્ષા હોતી હૈ । ૨ । ઇષણાસમિતિ મેં પ્રવૃત્ત સંયમી મુનિ સિર્ફ સંયમ યાત્રા કા નિર્વાહ કે લિયે ભ્રમરભિક્ષા દ્વારા શુદ્ધ-નિર્દોષ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરતા હૈ । ૩ । આદાનનિષેપણ-સમિતિ મેં મુનિ અપને સંયમ કે ઉપકરણોં કી ઉભય-દોનોં કાલ પ્રતિલેખના કર ઉનકે લેને ઓર રખને મેં યતના કરતા હૈ । ૪ । પ્રતિષ્ઠાપના-સમિતિ મેં મુનિ જીવરહિત સ્થાન મેં મલ-મૂત્રાદિક પરિઠવતા હૈ । ૫ । હન સમિતિયોં મેં પ્રવૃત્તિ કરને વાલે સંયમી મુનિ ‘સબ હી જીવ સુખ ચાહતે હૈં’ એસા અનુભવ કરતે હૈં । જો વર્તમાન મેં સત્તારૂપ સે રહતે હૈં, ભવિષ્યત્ કાલ મેં ભી જો સત્તારૂપ સે રહેંગે, એવં ભૂતકાલ મેં જો સત્તારૂપ સે રહે હૈં વે ભૂત હૈં । સૂત્રકાર ને જીવ પ્રાણી આદિ શબ્દોં કા પ્રયોગ ન કર ઉસકી ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે “ભૂત”

જુસરાપ્રમાણુ દૃષ્ટિથી માર્ગને દેખીને ચાલતાં સદા આ વાતનો ખ્યાલ રાખે છે કે-કોઈ નાના મોટા જીવ મારા પગ નીચે આવી પ્રાણોથી વિમુક્ત ન થઈ જાય. તેમાં ખીજના પ્રાણોના રક્ષણની સાથે સાથે પોતાના અહિંસારૂપ મહાવ્રતનું સંરક્ષણ સારી રીતે થાય છે (૧). ભાષાસમિતિમાં પ્રવૃત્ત સાધુ સદા હિત-મિત વચન બોલશે, ખીજ જીવોને જે વચનથી કષ્ટ પેદા થાય તે પ્રકારના સાવધ કઠોર વચન બોલતા નથી, આ સમિતિથી સત્યમહાવ્રતની રક્ષા થાય છે (૨). ઇષણાસમિતિમાં પ્રવૃત્ત સંયમી મુનિ કષ્ટ સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે ભ્રમર-ભિક્ષા દ્વારા શુદ્ધ નિર્દોષ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરે છે (૩). આદાનનિષેપણ સમિતિમાં મુનિ પોતાના સંયમના ઉપકરણોની ઉભય-બંને કાળ પ્રતિલેખના કરી તેના લેવામાં અને રાખવામાં યતના કરે (૪). પ્રતિષ્ઠાપનાસમિતિમાં મુનિ જીવરહિત સ્થાનમાં મળ મૂત્રાદિક પરિઠવે (૫). આ સમિતિઓમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા સંયમી મુનિ ‘બધા જીવો સુખ ચાહે છે’ એવો અનુભવ કરે છે. જે વર્તમાનમાં સત્તા રૂપથી રહે છે, ભવિષ્ય કાળમાં પણ જે સત્તારૂપથી રહેશે અને ભૂતકાળમાં જે સત્તા રૂપથી રહેલા છે તે ભૂત છે. સૂત્રકારે જીવ પ્રાણી આદિ શબ્દોના પ્રયોગ ન કરી તેની ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરવા માટે “ભૂત” એ શબ્દનો સૂત્રમાં પ્રયોગ

અન્ધત્વમ્=ઉપહતનેત્રત્વં દ્રવ્યતો ભાવતોઽપિ ભવતિ, તથૈકેન્દ્રિય-દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિયા દ્રવ્યભાવાન્ધાઃ। ચતુરિન્દ્રિયો મિથ્યાદૃષ્ટિપૃચ્છેન્દ્રિયશ્ચૌભૌ ભાવાન્ધૌ, દ્રવ્યભાવભેદ-મિત્રમન્ધત્વં નિયમતો દુઃસ્વજનકં ભવતિ। एवं बधिरत्वं=कर्णापाटवं, द्रव्यतो बधिरः श्रवणशक्तिरहितः, भावबधिरो जिनवचनश्रवणविकलः। मूकत्वं=वचनविकलत्वं द्रव्यतः, भावतो मूको मिथ्यात्वाद्यभिनिवेशेन स्वदोषापहवाय जिनवचनाप्रतिपादकः।

इस शब्द का सूत्र में प्रयोग किया है। उपयोगलक्षणवाला जीव तीनों काल में भी सत्ता से रहित नहीं होता है, इसलिये प्राणी की त्रैकालिक सत्ता प्रतिपादन करने के लिये सूत्रकारने इस सूत्र में “भूत” शब्द का प्रयोग किया है। अतः जब संसार का प्रत्येक प्राणी सुखाभिलाषी है, तब उसके साथ अत्याचार-अनर्थ कर उन्हें दुःखित करनेवाला प्राणी स्वयं अपने को दुःखित करने की चेष्टा करता है। जाति और कुलादिक के अभिमान से उन्मत्त बनकर जो दूसरों को हीन समझता है, तथा ‘तू अंधा है, तू बहिरा है, तू मूगा है’ इत्यादि प्रकार के कर्कश शब्दों द्वारा जो दूसरों का तिरस्कार करता है वह अपनी कषायपरिणति से आत्मा को मलिन करता हुआ तदुपार्जित कर्म के कटुक विपाक को अवश्य भोगता है। इसी बात का दिग्दर्शन कराते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—“अन्धत्वं मूकत्वं” इत्यादि। देखने की शक्ति की अभिव्यक्ति से रहित होना इसका नाम अन्धत्व है, यह अंधापना द्रव्य और भाव के भेद से २ प्रकारका है। एकेन्द्रिय, जीव दोइन्द्रिय जीव और तीनइन्द्रिय जीवों में दोनों प्रकार से अंधता है। पौद्गलिक द्रव्यइन्द्रियरूप चक्षु-इन्द्रिय की विकलता द्रव्य-अन्धता है,

કરેલ છે. ઉપયોગ લક્ષણવાળા જીવ ત્રણે કાળમાં પણ સત્તાથી રહિત થતા નથી, માટે પ્રાણીની ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં ભૂત શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે. માટે જ્યારે સંસારના દરેક પ્રાણી સુખાભિલાષી છે ત્યારે તેની સાથે અત્યાચાર-અનર્થ કરી તેને દુઃખ દેવાવાળા પ્રાણી સ્વયં પોતાની જાતને જ દુઃખિત કરવાની ચેષ્ટા કરે છે. જાતિ અને કુળાદિકના અભિમાનથી ઉન્મત્ત બનીને જે બીજાને હીન સમજે છે, અને ‘તું આંધળો છે, તું બહેરો છે, તું મુંગો છે’ ઇત્યાદિ પ્રકારનાં કર્કશ શબ્દો દ્વારા જે બીજાનો તિરસ્કાર કરે છે તે પોતાની કષાય પરિણતિથી આત્માને મલિન કરે છે. તદુપાર્જીત કર્મના કટુક વિપાકને અવશ્ય ભોગવે છે. આ વાતનો દિગ્દર્શન કરાવતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—“અન્ધત્વં મૂકત્વં” ઇત્યાદિ. દેખવાની શક્તિની અભિવ્યક્તિથી રહિત થવું તેનું નામ અન્ધત્વ છે. તે અંધાપણું દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે પ્રકાર છે. એકેન્દ્રિય જીવ, બેન્દ્રિય જીવ અને ત્રણેન્દ્રિય જીવોમાં બે પ્રકારથી અંધતા છે. પૌદ્ગલિક દ્રવ્ય-ઇન્દ્રિયરૂપ ચક્ષુ-ઇન્દ્રિયની વિકલતા



किञ्च-काणत्वम्=एकाक्षत्वं द्रव्यतः, भावतः काणत्वं=निश्चयव्यवहारयोर्ज्ञान-  
क्रिययोर्वैकषण्यग्राहित्वम् । कुण्टत्वं=कुटिलहस्तत्वादिकं द्रव्यतः, भावतः कुण्टत्वं  
प्रतिलेखनादिक्रियाराधने वक्रत्वम् । कुब्जत्वं=वक्रशरीरत्वं द्रव्यतः, भावतः कुटिल-  
क्रियत्वम् । वडभत्वं=वक्रपृष्ठत्वादिकं द्रव्यतः, भावतः परमर्मप्रकाशकत्वम् । श्याम-  
त्वं=कालिमा द्रव्यतः, भावतो मलिनाचारत्वम्, शबलत्वम्=श्वेतकुण्डत्वादिकं द्रव्यतः,  
भावतः शबलदोषवचम् । अत्रान्धत्वादिकमुपलक्षणं पङ्क्तत्वादेर्विध्यम् ।

और भावइन्द्रिय की विकलता भाव-अन्धता है । चतुरिन्द्रिय और मिथ्या-  
दृष्टि पंचेन्द्रिय जीव भावान्ध हैं, क्योंकि बाह्य में द्रव्येन्द्रियरूप चक्षुरिन्द्रिय  
होने पर भी ये पदार्थ के यथार्थ स्वरूपावलोकन से रहित होते हैं । दोनों  
प्रकार से अन्धता होनी, यह प्राणी के लिये नियम से दुःखोत्पादक होती  
है । इसी प्रकार बधिरत्व, मूकत्व, काणत्व आदि भी द्रव्य और भाव के  
भेद से दो दो प्रकार के होते हैं । उनमें अपने विषय को ग्रहण करने की  
शक्ति से श्रवणेन्द्रिय की विकलता का नाम बधिरता है । सुनने की  
शक्ति से रहित होना यह द्रव्य-बधिरता, और जिनेन्द्र वचनों को सुनने  
में अप्रेम तथा अनादर भाव का होना, या उनके वचनों को श्रवण करने  
की विकलता होनी यह भाव-बधिरता है । वचन बोलने की शक्ति की  
अभिव्यक्ति से रहित होना इसका नाम मूकत्व है । प्राकृत-संस्कृतादिरूप  
अपनी २ मातृभाषा में बोलने की हीनता का नाम द्रव्य-मूकता, एवं  
मिथ्यात्वादिक के अभिनिवेश के वश से अपने दोषों को छुपाने के लिये

द्रव्यअंधता छे. अने लाव-इन्द्रियनी विकलता लावअंधता छे. चार इन्द्रिय-  
वाणा अने मिथ्यादृष्टि पंचेन्द्रिय एव लावान्ध छे, कारण के बाह्यमां द्रव्येन्द्रिय  
इय चक्षुरिन्द्रिय थवाथी पणु ते पदार्थनुं यथार्थ स्वरूपावलोकनथी रहित होय छे.  
अन्ने प्रकारथी अंधता थवी ते प्राणी माटे नियमथी दुःखोत्पादक थाय छे. आ  
प्रकार अडेरपणुं, मुंगापणुं, आंधलापणुं आदि पणु द्रव्य अने लावना लेहथी अ  
प्रकारे होय छे. तेमां पोताना विषयने अडणु करवानी शक्तिथी श्रवणेन्द्रियनी  
विकलतानुं नाम बधिरता छे. सांलगवानी शक्तिथी रहित थवुं ते द्रव्य-अडेर-  
पणुं, अने एनेन्द्रियने सांलगवामां अप्रेम अने अनादर लाव होवो, अगर  
तेमना वयने सांलगवानी विकलता थवी ते लाव-अधिरता छे. वयन ओलवानी  
शक्तिनी अभिव्यक्तिथी रहित थवुं तेनुं नाम मूकत्व छे. प्राकृतसंस्कृतादिरूप  
पोतपोतानी मातृभाषामां ओलवानी हीनतानुं नाम द्रव्यमूकता, अने मिथ्यात्वादिकना  
अभिनिवेशनावशथी पोताना दोषने छुपावा माटे निनवयनेनुं प्रतिपादन नहि



જિનવચનોં કા પ્રતિપાદન નહીં કરના ઇસકા નામ ભાવ-મૂકત્વ હૈ । એક આંત્ર કા હોના યહ દ્રવ્ય સે કાળત્વ હૈ, ઔર નિશ્ચય એવં વ્યવહાર નય મેં સે, અથવા જ્ઞાન ઔર ચારિત્ર મેં સે કિસી એક કા એકાન્તરૂપ સે પક્ષ ગ્રહણ કરના ભાવ સે કાળત્વ હૈ । હાથ પાંચ આદિ અંગ ઉપાંગોં કી વક્રતા દ્રવ્ય-કુંડત્વ, ઔર પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓં કે કરને મેં અનાદર યા છલ-કપટ કરના યહ ભાવ-કુંડત્વ હૈ । સામાન્યતયા શરીર કા દેહાપન અથવા શરીર મેં કૂબડ વગૈરહ કા નિકલના યહ દ્રવ્ય સે કુબ્જત્વ હૈ । કુટિલક્રિયાપને કા નામ ભાવ સે કુબ્જત્વ હૈ । પૃષ્ઠ ભાગ વગૈરહ કા વક્ર હોના યહ દ્રવ્ય સે વડભત્વ હૈ, દૂસરોં કે ગુપ્ત કાર્યોં એવં અનેક રહસ્યોં કા પ્રકાશન કરના યહ ભાવ સે વડભત્વ હૈ । શરીર મેં કૃષ્ણતા કા હોના યહ દ્રવ્ય સે શ્યામતા-મલિનતા, તથા હીન આચરણી હોના યહ ભાવ સે શ્યામતા હૈ । શરીર મેં સ્પેદ કુષ્ઠ વગૈરહ કા હોના દ્રવ્ય સે શબલતા, તથા દોષવિશિષ્ટતા ભાવ સે શબલત્વ હૈ । સૂત્ર મેં અન્ધત્વાદિ પદ ઉપલક્ષણ રૂપ હૈ, ઇસસે પઙ્ગુપને આદિ કા બી ગ્રહણ કર લેના ચાહિયે । ઇન સબ વાર્તાઓં કો દિશ્વાને કા અભિપ્રાય યહી હૈ કિ પ્રાણી કિસી બી મદ કે આવેશ મેં આકર દૂસરોં કે પ્રતિ એસે કષાયવિશિષ્ટ બનકર અપશબ્દોં યા દૂસરોં કે મર્મસ્થલ કો ભેદને વાલે કઠોર શબ્દોં કા પ્રયોગ ન કરે ।

કરતું તેતું નામ ભાવમૂકત્વ છે. એક આંખનું હોવું તે દ્રવ્યથી કાણત્વ છે, અને નિશ્ચય અને વ્યવહાર નયમાંથી અથવા જ્ઞાન અને ચારિત્રમાંથી કોઈ એકનું એકાન્તરૂપે પક્ષ ગ્રહણ કરવો તે ભાવથી કાણત્વ છે. હાથ-પગ આદિ અંગ ઉપાંગોની વક્રતા દ્રવ્યકુંડત્વ અને પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓ કરવામાં અનાદર અગર છલકપટ કરવું એ ભાવકુંડત્વ છે. સામાન્ય રીતે શરીરનું વાંકાપણું અને શરીરમાં કોઠ વિગેરેનું નિકળવું તે દ્રવ્યથી કુબ્જત્વ છે. કુટિલક્રિયાપણાનું નામ ભાવથી કુબ્જત્વ છે. પૃષ્ઠભાગ વિગેરેનું વક્ર થવું તે દ્રવ્યથી વડભત્વ છે. બીજાના ગુપ્ત કાર્યો અને અનેક રહસ્યોનું પ્રકાશન કરવું તે ભાવથી વડભત્વ છે. શરીરમાં કાળાશ થવી તે દ્રવ્યથી શ્યામતા-મલિનતા, અને હીન આચરણી થવું તે ભાવથી શ્યામતા છે. શરીરમાં સ્પેદ કોઠ નીકળવો તે દ્રવ્યથી શબલતા અને શબલ દોષવિશિષ્ટતા ભાવથી શબલતા છે. સૂત્રમાં અન્ધત્વાદિ પદ ઉપલક્ષણરૂપ છે. તેથી લંગકાપણું આદિનું પણ ગ્રહણ કરી લેવું જોઈએ. આ બધી વાતને દેખાડવાનો અભિપ્રાય એ છે કે-પ્રાણી કોઈ પણ મદના આવેશમાં આવીને બીજાઓના પ્રતિ એવા કષાયવિશિષ્ટ બની અપશબ્દોનો અગર બીજાના મર્મસ્થળને ભેદવા-

दुःखं च कोऽपि नेच्छति परन्तु कर्मवशात्प्रायशः सर्वेऽपि सावद्यक्रियावन्तो नितान्तदुःखिता भवन्तीति भावः ।

अपिच-‘सहे’ति, प्रमादेन=अनवधानेन सह=सार्द्धं समितिविकलोऽनवधानवान् अनेकरूपाः=संवृत-विवृत-रूपा योनीः सन्धाति=सन्धत्ते, चतुरशीतिलक्षयोनि-सम्बन्धाविच्छेदेनात्मना सह संघट्टनं करोति । तासु च योनिषु विरूपरूपान्=बहु-विधान् स्पर्शान्=दुःखानि परिसंवेदयते=जानाति, नानाविधयोनिप्लूतपन्नो जीवो बहुविधां नरकनिगोदादियातनां समनुभूय नितान्तं खिन्नो भवतीति तात्पर्यम् ।

क्यों कि इस प्रकार के वचनों से एक तो बोलनेवालों के लिए भाव-हिंसा का दोष लगता है और दूसरों के चित्त में शोक आदिका उत्पादक होने से द्रव्यहिंसा का भी दोष आता है । इस हिंसा से अनेक अशुभ कर्मों का बंध होता है । आत्मप्रशंसा एवं पर की निंदा करना, तथा अपने दुर्गुणों को सद्गुण का रूप देकर गर्वोन्मत्त बन उन्हें प्रकाशित करना, और दूसरों के सद्गुणों में भी दूषण लगाना या उन्हें दुर्गुणरूप में प्रकट करना इससे नीच गोत्र का बन्ध होता है, इससे जीव अनेक कुयोनियों में जन्म धारण कर हीनआचरणी आदि होता है । किसी धर्मात्मा के ज्ञान एवं दर्शन के विषय में प्रशंसा का नहीं सुहाना, किसी कारण से अपने ज्ञान का छुपाना, मात्सर्य भाव का रखना, किसी के ज्ञान अथवा दर्शन में विघ्न करना, इनसे ज्ञानावरण, तथा दर्शनावरण कर्म का जीव बंध करता है । इसका फल जीवों के ज्ञान एवं दर्शन गुणों का घात होना है ।

વાળા કઠોર શબ્દોનો પ્રયોગ ન કરે, કારણ કે આ પ્રકારે વચનોથી એક તો બોલવાવાળાને ભાવહિંસાનો દોષ લાગે છે, અને બીજાના ચિત્તમાં શોક આદિના ઉત્પાદક થવાથી દ્રવ્યહિંસાનો પણ દોષ લાગે છે. આ હિંસાથી અनेक અશુભ કર્મોનો બંધ થાય છે. આત્મપ્રશંસા અને પારકાની નિંદા કરવી અને પોતાના દુર્ગુણોને સદ્ગુણરૂપે રૂપ આપીને ગર્વોન્મત્ત બની તેને પ્રકાશિત કરવું, અને બીજાના સદ્ગુણોમાં પણ દૂષણ લગાડવું અગર તેને દુર્ગુણ રૂપમાં પ્રકટ કરવું તેનાથી નીચ ગોત્રનો બંધ થાય છે, તેનાથી જીવ અનેક કુયોનિઓમાં જન્મ ધારણ કરી હીનાચરણી આદિ થાય છે. કેઈ ધર્માત્માનાં જ્ઞાન અને દર્શન વિષયમાં થતી પ્રશંસાને સહન નહિ કરવી, કેઈ કારણથી પોતાના જ્ઞાનને છુપાવવું, માત્સર્ય ભાવ રાખવો, કેઈના જ્ઞાન અને દર્શનમાં વિઘ્ન કરવું, તેનાથી જીવ જ્ઞાનાવરણ, અને દર્શનાવરણ કર્મનો બંધ કરે છે. તેનું ફળ જીવોને જ્ઞાન અને દર્શન ગુણોનાં

નિજ ઓર પર કે વિષય મેં દુઃખ, શોક આદિ કરને કરાને સે અસાત-વેદનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવ કો કમી મી સાતા નહીં મિલના હૈ । સંસાર કે સમસ્ત પ્રાણી ઓર વ્રતી-અણુવ્રતી યા મહા-વ્રતી જીવોં કી સેવા કરના, નિજ ઓર પર કે ઉપકાર કે લિધે યોગ્ય વસ્તુ કા દાન દેના, સરાગસંયમ કા પાલન કરના, ક્રોધાદિકષાયોં કી શાન્તિ હોની ઓર લોભ કા ત્યાગ કરના આદિ કાર્યોં સે જીવ કે સાત વેદનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ । સ્કી વજહ સે જીવોં કો સદા સુખકારી વસ્તુઓં કા સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોં કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । કેવલી કા અવર્ણવાદ, શ્રુતકા અવર્ણવાદ, તથા સંઘ આદિ કા અવર્ણવાદ કરના, સ્કસે દર્શનમોહનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ સમકિત ગુણ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી । કષાય કે ઉદય સે પરિણામોં મેં તીવ્રતા રહના, સ્કસે ચારિત્ર મોહનીય કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવ કમી મી ચારિત્ર ધર્મ કો અંગીકાર નહીં કર સકતા । યોગોં કી કુટિલતા કા હોના તથા શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ સે અન્યથા પ્રવૃત્તિ કરના, સ્કસે અશુભ નામ કર્મ કા બંધ હોતા હૈ । સ્કસે જીવ એકેન્દ્રિયાદિ અનેક કુયોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કરતા હૈ । કમી ચક્ષુવિકલ હોતા હૈ, કમી

આધાતરૂપ થાય છે. ખીબ્બના અને પોતાના વિષયમાં દુઃખ શોકાદિ કરવા-કરવવાથી અસાતવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે. જેનાથી જીવને કોઈ વખત પણ સાતા મળતી નથી. સંસારના સમસ્ત પ્રાણી અને વ્રતી-અણુવ્રતી કે મહાવ્રતી જીવોની સેવા કરવી, પોતાના અને પારકાના ઉપકાર માટે યોગ્ય વસ્તુનું દાન દેવું, સરાગસંયમનું પાલન કરવું, ક્રોધાદિ કષાયોની શાંતિ થવી, અને લોભનો ત્યાગ કરવો આદિ કાર્યોથી જીવને સાતાવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે, તેનાથી જીવને સદા સુખકારી વસ્તુઓના સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોની પ્રાપ્તિ થાય છે. કેવળીનો અવર્ણવાદ, શ્રુતનો અવર્ણવાદ, અને સંઘ આદિનો અવર્ણવાદ કરવો, જેનાથી દર્શનમોહનીય કર્મનો બંધ થાય છે. જેનાથી સમકિત ગુણની પ્રાપ્તિ જીવને થતી નથી. કષાયના ઉદયથી પરિણામોમાં તીવ્રતા રહેવી, તેનાથી ચારિત્ર-મોહનીયનો બંધ થાય છે. જેનું ક્ષણ જીવ કોઈ વખત પણ ચારિત્રધર્મને અંગીકાર કરી શકતો નથી.

યોગોમાં કુટિલતા હોવી, અને શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગથી અન્યથા પ્રવૃત્તિ કરવી તેનાથી અશુભ નામકર્મનો બંધ થાય છે, તેનાથી જીવ એક ઇન્દ્રિય આદિ અનેક કુયોનિયોમાં જન્મ ધારણ કરે છે. કોઈ વખત ચક્ષુવિકલ થાય છે,



મુંગા બનતા હૈ, કમી કુબ્જક ઓર કમી બહિરા હોતા હૈ । સૂત્ર મેં જો અન્ધત્વ, બધિરત્વ, મૂકત્વ, કાળત્વ આદિ અનેક શારીરિક દોષ પ્રકટ કિયે ગયે હૈં વે સબ હસી અશુભનામકર્મ કે ઉપાર્જન સે જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં । જિસ પ્રકાર ચિત્રકાર કિસી ચિત્ર કા કમી હાથ ટેડા બના દેતા હૈ, કમી ંક આંખ બના દેતા હૈ, કમી ઉસે છોટા યા કમી બડા અપની ઇચ્છાનુસાર જિસે જૈસા બનાના ંાહે બના દેતા હૈ, હસી પ્રકાર યહ નામકર્મ મી હસ જીવ કો કમી અન્ધા, કમી બહિરા આદિ બના દિયા કરતા હૈ । યોગોં કી વ્રત્તા નહીં હોની, ંવં વિસંવાદ-અન્યથા પ્રવૃત્તિકા અભાવ હોના, હસસે શુભનામકર્મ કા ઉપાર્જન હોતા હૈ, જિસ કા ફલ પ્રત્યેક અંગ કી પૂર્ણતા ંવં સૌષ્ઠવ-સુન્દરતા આદિ કી પ્રાપ્તિ હોના હૈ । ઉત્તમ યોનિયોં મેં જન્મ તથા મુક્તિપ્રાપ્તિ લાયક વજ્રક્રષ્મનારાચ સંહનનાદિ શુભ સંહનનોં કી ંવમ્ સમચતુરસ્રાદિ શુભ સંસ્થાનોં કી પ્રાપ્તિ જીવ કો હસી કે ઉદય સે હોતી હૈ । તીર્થંકર જૈસી પ્રકૃતિ હસી શુભનામકર્મ કા ભેદ હૈ ।

યદ્યપિ પ્રતિ સમય આયુકર્મ કો છોડ શેષ સાત કર્મોં કા બન્ધ હુઆ કરતા હૈ તથાપિ પૂર્વોક્તિ હન ભાવોં દ્વારા જો જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ ૨ કર્મોં કા બન્ધ હોના પ્રકટ કિયા હૈ સો સ્થિતિબન્ધ ંર અનુભાગ-

વખતે મુંગા થાય છે, વળી કુબ્જ અને બહેરા પણ થાય છે. સૂત્રમાં જે અન્ધત્વ, બધિરત્વ, મૂકત્વ, કાણત્વ આદિ અનેક શારીરિક દોષ પ્રગટ કરેલાં છે તે બધા આ અશુભનામકર્મના ઉપાર્જનથી જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. જેમ ચિત્રકાર કોઈ ચિત્રમાં હાથ આડો બતાવે છે, એક આંખ બતાવે છે, કોઈ છોટું કોઈ મોટું પોતાની ઇચ્છાનુસાર જેને જેમ બનાવવા માગે તેમ બનાવે છે. તે પ્રકારે આ નામકર્મ પણ આ જીવને કોઈ વખત આંધળો, બહેરા આદિ બનાવે છે. યોગીની વ્રતા ન થવી અને વિસંવાદ - અન્યથા પ્રવૃત્તિ-નો અભાવ થવો એથી શુભનામકર્મનું ઉપાર્જન થાય છે. જેનું ક્ષણ પ્રત્યેક અંગની પૂર્ણતા અને સૌષ્ઠવ - સુંદરતા આદિની પ્રાપ્તિ થાય છે. ઉત્તમ યોનિયોમાં જન્મ અને મુક્તિપ્રાપ્તિલાયક વજ્રક્રષ્મનારાચ સંહનનાદિ શુભ સંહનનોની અને સમચતુરસ્રાદિ શુભ સંસ્થાનોની પ્રાપ્તિ જીવને આના ઉદયથી થાય છે. તીર્થંકર જેવી પ્રકૃતિ તે શુભનામકર્મનો ભેદ છે.

હજી પ્રતિસમય આયુકર્મને છોડી સાત શેષ કર્મોંના બંધ થયા કરે છે, તથાપિ પૂર્વોક્તિ આ ભાવોંદ્વારા જે જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ વિશેષ કર્મોંના બંધ થવા પ્રકટ કરેલ છે તે સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધની અપેક્ષા સમજવી નોંધવું.

બન્ધ કી અપેક્ષા સમજના ચાહિયે । અર્થાત્ ઉસ સમય પ્રકૃતિ ઔર પ્રદેશબન્ધ તો સબ કર્મોં કા હુઆ કરતા હૈ, કિન્તુ સ્થિતિ ઔર અનુ-ભાગબન્ધ જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ ૨ કર્મોં કા અધિક હોગા । અન્ધા હોના, બહિરા હોના, કાળા ઇત્યાદિ હોના, તથા ઇન્દ્રિયાદિકોં કી પૂર્ણતા હોને પર મી શારીરિક શાંતિ કે લાભ સે વચ્ચિત રહના, દુઃખોત્પાદક સામગ્રી કી પ્રાપ્તિ હોના, ઇષ્ટાનિષ્ટ સંયોગવિયોગજન્ય કષ્ટોં કો ફેલના આદિ કષ્ટોં કો કોઈ મી સાંસારિક પ્રાણી નહોંં ચાહતા હૈ, પરન્તુ કર્મોં કે દ્વારા પરતન્ત્ર હુએ પ્રત્યેક સાંસારિક જીવોં કો અપને ૨ યોગ એવમ્ કષાયોં દ્વારા ઉપાર્જિત કિયે કર્મોં કા ફલ અવશ્ય ૨ ભોગના પડતા હૈ, ઇસ મેં જીવ કી ઇચ્છા કામ નહોંં કરતી । કર્માધીન બન યહ પ્રાણી પ્રાયઃ સાવધ ક્રિયાઓં કે કરને મેં હી દત્તાવધાન રહા કરતા હૈ, જિસકે કારણ રાત દિન દુઃખી કા દુઃખી હી રહા કરતા હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મોં કે ફલોં કો ભોગતે હુએ મી આગે કે લિયે કર્મોં કા બન્ધ નહોંં હો એસા મી કોઈ ઉપાય હૈ ? ઉત્તર—હૈ ।

પ્રશ્ન—ક્યા હૈ ? ઉત્તર—સમતાભાવ । કર્મોં કે ફલોં કા અનુભવ ન કરને વાલા પ્રાણી યદિ ઉનકે ફલોં કો ભોગતે સમય હર્ષ વિષાદ એવમ્ આર્ત-

અર્થાત્ તે વખત પ્રકૃતિ અને પ્રદેશબંધ તો બધા કર્મોના થયા કરે છે પણ સ્થિતિ અને અનુભાગબંધ જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ વિશેષ કર્મોના અધિક થશે. અંધ થવું, બહેરા થવું, કાળા થવું ઇત્યાદિ. તથા ઇન્દ્રિયાદિકોની પૂર્ણતા હોવાથી પણ શારીરિક શાંતિના લાભથી વંચિત રહેવું, દુઃખોત્પાદક સામગ્રીની પ્રાપ્તિ થવી, ઇષ્ટાનિષ્ટ સંયોગવિયોગજન્ય કષ્ટોને સહન કરવા કોઈ પણ સાંસારિક પ્રાણી ચાહતો નથી, પરંતુ કર્મોદ્વારા પરતંત્ર થયેલ દરેક સાંસારિક જીવને પોતપોતાના યોગ અને કષાયોદ્વારા ઉપાર્જિત કરેલા કર્મોના ફળ અવશ્ય અવશ્ય ભોગવવા પડે છે, તેમાં જીવની ઇચ્છા કામ કરતી નથી. કર્માધીન બની તે પ્રાણી પ્રાયઃ સાવધ ક્રિયાઓ કરવામાં જ દત્તાવધાન રહ્યા કરે છે, જેના કારણે રાત દિન દુઃખીના દુઃખી જ રહ્યા કરે છે.

પ્રશ્ન—કર્મોના ફળને ભોગવતાં છતાં પણ આગળ માટે કર્મોના બંધ ન થાય એવો કોઈ ઉપાય છે ? ઉત્તર—છે.

પ્રશ્ન—શું છે ? ઉત્તર—સમતાભાવ. કર્મોના ફળોનો અનુભવ ન કરવાવાળા પ્રાણી કદાચ તેના ફળોને ભોગવતી વખત હર્ષ વિષાદ આદિ અને આર્ત રોદ્રરૂપ પરિણામોથી



રૌદ્રરૂપ પરિણમોં સે યુક્ત નહીં હોના હૈ, ઓર અપને ઉપાર્જિત કર્મોં કા ફલ ભોગે વિના છુટકારા નહીં હૈ અતઃ ઇનકા ફલ અવશ્ય ભોગના હી પડેગા—ચાહે કિસી ખી પરિસ્થિતિ મેં જીવ ક્યોં ન હો । જિસ પ્રકાર અપને ઉપાર્જિત પુણ્ય કા ફલ ભોગતે હુએ વિષાદપરિણતિ આત્મા મેં નહીં હોતી ડસી પ્રકાર અપને ઉપાર્જિત પાપ કર્મ કે ફલ કો ભોગતે હુએ ખી મુઝે વિષાદપરિણતિ નહીં હોની ચાહિયે, ઇત્યાદિ શુભાધ્યવસાય સે પ્રેરિત હોકર સમતાભાવ સે શુભાશુભ કર્મોં કે ફલ કો જો પ્રાણી ભોગતા હૈ ડસકે લિયે નવીન કર્મોં કા બન્ધ નહીં હોતા । નવીન કર્મોં કા બન્ધ કરાને વાલી કષાયપરિણતિ હી હૈ । હર્ષ ઓર વિષાદ યે કષાયપરિણતિ-રૂપ હી હૈ । સમતાભાવ ઇસ કષાયપરિણતિ સે રહિત અવસ્થા હૈ ।

પ્રશ્ન—ઇસ સમતાભાવ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો કૈસે હોતી હૈ ?

ઉત્તર—સમકિત કી પ્રાપ્તિ સે ।

સમકિતશાલી જીવ ઘર મેં-સંસાર મેં રહતા હુઆ ખી અપની વૃત્તિ કમલપત્ર કે, અથવા તસલોહપાદન્યાસ (તપે હુએ લોહે પર પૈર રખને) કે સમાન રખતા હૈ ઇસસે વહ સમભાવી હોતા હૈ ।

યુક્ત બનતા નથી અને પોતાના ઉપાર્જિત કર્મોના ફળ ભોગવ્યા વિના છુટકો નથી માટે તેનું ફળ અવશ્ય ભોગવવું જ પડશે ભલે કેઈ પણ પરિસ્થિતિમાં જીવ કેમ ન હોય, જેવી રીતે પોતાના ઉપાર્જિત પુણ્યનું ફળ ભોગવતી વખતે વિષાદ પરિણતિ આત્મામાં થતી નથી તે પ્રકારે પોતાના ઉપાર્જિત પાપ કર્મના ફળને ભોગવતાં પણ મને વિષાદ પરિણતિ થવી ન જોઈએ. ઇત્યાદિ શુભાધ્યવસાયથી પ્રેરિત થઈ સમતાભાવથી શુભાશુભ કર્મના ફળને જે પ્રાણી ભોગવે છે તેને માટે નવીન કર્મોનો બંધ થતો નથી. નવીન કર્મોના બંધ કરાવવાવાળી કષાયપરિણતિ જ છે, હર્ષ અને વિષાદ એ કષાયપરિણતિરૂપ જ છે. સમતાભાવ આ કષાયપરિણતિથી રહિત અવસ્થા છે.

પ્રશ્ન—આ સમતાભાવની પ્રાપ્તિ જીવને કેવી રીતે થાય છે?

ઉત્તર—સમકિતની પ્રાપ્તિથી.

સમકિતશાળી જીવ ઘરમાં-સંસારમાં રહેવા છતાં પણ પોતાની વૃત્તિ કમલપત્ર અથવા તસલોહપાદન્યાસ (તપેલા લોહા ઉપર પગ રાખવા) સમાન રાખે છે માટે તે સમભાવી છે.



ઇદમત્ર હૃદયમ્—યઃ સ્વોત્કર્ષ સમાસાદ્ય જાત્યાદિમદસમ્પન્નોઽન્યં પ્રતિ ‘અન્ધ-સ્ત્ર’—મિત્યાદિકં પરુષં બ્રવીતિ, મનસા તસ્યાપ્રિયમાચરતિ ચ, સ જન્માન્તરે સ્વય-મેવ નીચગોત્રત્વાદિકમન્ધત્વાદિકં ફલં લભત ઇતિ મયાન્મનોવાક્યાયયોગૈઃ કસ્યા-પ્યપ્રિયમાત્મહિતાર્થી નાચરેદિતિ બોધ્યમ્ ॥ સૂ. ૨ ॥

ઉત્કૃષ્ટકુલોત્પત્તિર્ગર્વોન્મત્તચિત્તોઽધમકુલતયા દીનોઽન્ધત્વાદિકમુપલભમાનો વા કર્તવ્યાર્કર્તવ્યાનભિન્નઃ કર્મવિપાકમવિજ્ઞાય તત્રૈવોચ્ચકુલાદિકે વિપર્યાસં ગચ્છતીતિ દર્શયતિ—‘સે અબુજ્ઞમાણે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે અબુજ્ઞમાણે હઓવહણ જાડમરણં અણુપરિયટ્ટમાણે, જીવિયં પુઢો પિયં ઇહમેગેસિં માણત્રાણં ચિત્તવત્થુમમાયમાણાણં, આરત્તં વિરત્તં મણિ કુંડલં સહ હિરણ્ણેણ ઇત્થિયાઓ પરિગિજ્ઞ તત્થેવ રક્તા, ન ઇત્થ તવો વા દમો વા નિયમો વા દિસ્સઙ્, સંપુણ્ણં બાલે જીવિઉકામે લાલપ્પમાણે મૂઢે વિપ્પરિઆસમુવેઙ્ ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા—સઃ, અબુધ્યમાનો હતોપહતો જાતિમરણમનુપરિવર્તમાનઃ, જીવિતં પૃથક્ પ્રિયમ્ ઇદૈકેષાં માનવાનાં ક્ષેત્રવાસ્તુમમાયમાનાનામ્, આરત્તં વિરત્તં મણિ કુંડલં સહ હિરણ્યેન સ્ત્રીઃ પરિગૃહ્ય તત્રૈવ રક્તાઃ, નાત્ર તપો વા દમો વા નિયમો વા દૃશ્યતે, સમ્પૂર્ણં બાલો જીવિતુકામો લાલપ્યમાનો મૂઢો વિપર્યાસમુપૈતિ ॥ સૂ. ૩ ॥

ઇસ સૂત્ર કા સારાંશ યહી હૈ કિ “જો મનુષ્ય અપને ઉત્કર્ષ કો પ્રાપ્ત કર જાત્યાદિમદાવેશ મેં આકર દૂસરોં કે પ્રતિ “તું અન્ધા હૈ” ઇત્યાદિ કઠોર ભાષા કા પ્રયોગ કરતા હૈ, મનસે બી ઉસકા અપ્રિય કરને કા વિચાર કરતા હૈ વહ દૂસરે જન્મ મેં સ્વયં હી નીચ ગોત્રાદિક અથવા અન્ધત્વાદિક ફલ કા ભોક્તા બનતા હૈ, અતઃ એસા વિચાર કર આત્માર્થી જન કમી બી મન વચન ઓર કાયરૂપ યોગોં સે કિસી કા બી અપ્રિય-અનિષ્ટ ન કરે ॥ સૂ. ૨ ॥

આ સૂત્રનો સારાંશ એ છે કે ‘જે મનુષ્ય પોતાના ઉત્કર્ષને પ્રાપ્ત કરી જાત્યાદિમદાવેશમાં આવીને બીજા પ્રતિ “તું અન્ધો છે” ઇત્યાદિ કઠોર ભાષાનો પ્રયોગ કરે છે, મનથી પણ તેનું અપ્રિય કરવાનો વિચાર કરે છે તે બીજા જન્મમાં સ્વયં જ નીચ ગોત્રાદિક અથવા અન્ધત્વાદિક ફળનો ભોક્તા બને છે, માટે એવો વિચાર કરી આત્માર્થી જન કોઈ વખત પણ મન વચન અને કાયાથી કોઈનું પણ અપ્રિય-અનિષ્ટ નહિ કરે. ॥ સૂ. ૨ ॥

ટોકા—‘સ’ ઇત્યાદિ । સઃ=ઉચ્ચકુલોત્પન્નઃ, અન્ધત્વાદિકમનુભવન, અબુ-  
ધ્યમાનઃ=પૂર્વકૃતકર્મફલમજાનાનઃ, હતોપહતઃ=અન્ધત્વાદિનાનારોગગ્રસ્તત્વેન ક્ષત-  
કાયત્વાદ્ હતઃ, સકલજનનિન્ધત્વેનોપહતઃ;

ઉચ્ચકુલ મેં જન્મ લેને કે ગર્વ સે સંયમી મુનિ અધમકુલ મેં ઉત્પન્ન  
હોકર દીન અથવા અન્ધત્વાદિક ફલ કા ભોક્તા બન કર્ત્તવ્ય ઓર અ-  
કર્ત્તવ્ય સે વિકલ હોતા હુઆ કર્મ કે ફલ કો નહીં જાનકર ઉસી ઉચ્ચ  
ગોત્રાદિક મેં વિપર્યાસ-વિપરીત ભાવ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ, હસી કા વર્ણન  
કરતે હૈ—“સે અબુજ્ઞમાણે” ઇત્યાદિ ।

સૂત્રકાર ને હસ સૂત્ર કે પહિલે યહ વાત અચ્છી તરહ સે ખુલાશા  
કર પ્રકટ કર દી હૈ કિ—“જો સંયમી મુનિ ઉચ્ચગોત્ર મેં જન્મ લેને કે  
અભિમાન સે ઉન્મત્ત બન દૂસરોં કા તિરસ્કાર કરતા હૈ, અથવા મન સે  
ભી ઉનકા અહિત વિચારતા હૈ વહ હસ કર્મ કે કટુક ફલ કા જન્માન્તર  
મેં યા હસી ભવ મેં ભોક્તા બનતા હૈ” હસી વાત કો ફિર સે દ્વઢ કરને  
કે અભિપ્રાય સે દોહરાતે હુઅ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ—વહ સંયમી મુનિ જો  
ઉચ્ચકુલ મેં ઉત્પન્ન હુઆ હૈ ઓર અપને અહંકારજન્ય અન્ધત્વાદિક  
ફલવિશેષ કા ભોક્તા બના હુઆ હૈ, તથા “જો અન્ધત્વાદિક ફલ મુજ્ઞે  
મિલા હૈ વહ મેરે હી દ્વારા ઉપાર્જિત કર્મ કા કટુક ફલ હૈ” હસ બોધ સે  
જો અનભિજ્ઞ હૈ, તથા જો હતોપહત બના હુઆ હૈ—અર્થાત્ અન્ધત્વાદિક

ઉચ્ચ કુળમાં જન્મ લેવાના ગર્વથી સંયમી મુનિ અધમ કુળમાં ઉત્પન્ન  
થઈને દીન અન્ધત્વાદિક ફળનો ભોક્તા બની કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યના ભાનથી  
વિકલ થઈને તેમજ કર્મના ફળને નહિ જાણીને તે જ ઉચ્ચ ગોત્રાદિકમાં વિપર્યાસ-  
વિપરીત ભાવને પ્રાપ્ત કરે છે. તેનું વર્ણન કરે છે—“સે અબુજ્ઞમાણે” ઇત્યાદિ.

સૂત્રકારે આ સૂત્રના પહેલાં આ વાત સારી રીતે ખુલાસો કરીને પ્રગટ  
કરી છે, કે “જે સંયમી મુનિ ઉચ્ચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાના અભિમાનથી ઉન્મત્ત  
બની બીજાઓને તિરસ્કાર કરે છે અથવા મનથી પણ તેનું અહિત કરવા વિચારે  
છે તે આ કર્મના કટુક ફળનો જન્માન્તરમાં અગર આ ભવમાં ભોક્તા બને છે.  
આ વાતને ફરીથી દઢ કરવાના અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર કહે છે કે—તે સંયમી મુનિ  
જે ઉચ્ચ કુળમાં ઉત્પન્ન થયેલ છે, અને પોતાના અહંકારજન્ય અન્ધત્વાદિક ફળ  
વિશેષનો ભોક્તા થયેલ છે, તથા “જે અન્ધત્વાદિક ફળ મને મળ્યું છે તે મારા  
જ દ્વારા ઉપાર્જિત કર્મનું કટુક ફળ છે” એ યોધથી જે અનભિજ્ઞ છે, તથા જે  
હતોપહત બનેલ છે, અર્થાત્ અન્ધત્વાદિક અને નાના રોગોથી જેનું શરીર ક્ષત

યદ્વા-ઉચ્ચગોત્રાદિસમુદ્ભવગર્વાત્કર્તવ્યચ્યુતત્વેનાપવાદવાન જગજ્જનનાનાદરવચ-  
નદળ્ઢેન પટહ ઇવ હતઃ, શ્રુતચારિત્રલક્ષણધર્મરહિતત્વેનોપહતઃ, ઇવં 'જાતિમરણ'  
જાતિશ્ચ મરણં ચ જાતિમરણમ્ અનુપરિવર્તમાનઃ=પારાવારતરલતરતરજ્ઞવત્ પુન-  
ર્જન્મ પુનર્મરણં ચેતિ સંસારસાગરે પરિભ્રમન્ ભૂયો ભૂયો જન્મમરણમુપલભમાનોઽ-  
નિત્યત્વેઽપિ નિત્યત્વમનુભવન્ વિપર્યાસમુપૈતીતિ સમ્બન્ધઃ ।

ઇવમ્ નાના રોગોં સે જિસકા શરીર ક્ષત જીર્ણ શીર્ણ હો રહા હૈ, તથા  
સકલજન જિસકી નિંદા કરતે હૈ, અથવા ઉચ્ચગોત્રાદિક મેં જન્મ પ્રાપ્ત  
કરને કે ગર્વ સે જો કર્તવ્યચ્યુત હો રહા હૈ, “મેરા કયા કર્તવ્ય હૈ” ઇસ  
બાત કો હી જો નહીં સમજતા હૈ, યદ્વાતદ્વા પ્રવૃત્તિ કરને સે લોગોં કે  
અનેક અપવાદોં કા જો પાત્ર બના હુઆ હૈ, તથા જિસ પ્રકાર ઢળ્ઢે સે  
ઢોલ પીટા જાતા હૈ ઁસી પ્રકાર જગત કે જીવોં કે અનાદરકારી વચન-  
રૂપી ઢળ્ઢોં કી ચોટ સે જો આહત-તાડિત હૈ, ઇવમ્ જો વાસ્તવિક અપને  
શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કી આરાધના સે વંચિત હૈ, જિસ પ્રકાર સમુદ્ર કી  
તરલ તરંગોં સમુદ્ર સે ઉઠતી હૈં ઁર સમુદ્ર મેં હી વિલીન હોતી રહતી  
હૈં, ઁસી પ્રકાર જો ઇસ સંસારરૂપી અથાહ સાગર મેં બારંબાર જન્મ મરણ  
કે ગોતે ખાતા રહતા હૈ, અહિતકારી પદાર્થોં કો હિતકારી ઇવમ્ અનિત્ય  
પરપદાર્થોં કો નિત્ય માનકર જો ઁનકે હી અપનાને મેં લગા હુઆ હૈ,  
ઁસા પ્રાણી વિપરીતકલ્પનાવાલા હી માના ગયા હૈ, ઁર વહ અપની ઇસ  
કલ્પના કી વજહ સે હી રાતદિન દુઃખી હોતા રહતા હૈ ।

જીર્ણ શીર્ણ થઈ રહ્યું છે, તથા સકલજન જેની નિંદા કરે છે, અને ઉચ્ચ  
ગોત્રાદિકમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરવાના ગર્વથી જે કર્તવ્યચ્યુત થઈ રહેલ છે, “મારું  
શું કર્તવ્ય છે” એ વાતને પણ પોતે સમજતો નથી, આડી અવળી પ્રવૃત્તિ કર-  
વાથી લોકોના અનેક અપવાદોને જે પાત્ર બનેલ છે, તથા જે પ્રકાર ઢંડાથી ઢોલ  
પીટવામાં આવે છે તે પ્રકાર જગતના જીવોના અનાદરકારી વચનરૂપી ઢંડોની  
ચોટથી જે આહત-તાડિત છે, અને વાસ્તવિક પોતાના શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની  
આરાધનાથી વંચિત છે. જે પ્રકારે સમુદ્રની તરલ તરંગો સમુદ્રથી ઉઠે છે અને  
સમુદ્રમાં જ વિલીન થાય છે તે પ્રકાર જે આ સંસારરૂપી અથાગ સાગરમાં બારં-  
બાર જન્મ મરણના ગોથા ખાતા રહે છે. અહિતકારી પદાર્થોને હિતકારી અને  
અને અનિત્ય પદાર્થોને નિત્ય માનીને જે તેને અપનાવવામાં લાગેલ છે. એવા  
પ્રાણી વિપરીત કલ્પનાવાળા જ માનેલ છે, અને તે પોતાની આવી કલ્પનાના ભેરે  
જ રાતદિવસ દુઃખી થાય છે



કિંચ-इह संसारे 'क्षेत्रवास्तु' क्षेत्रं=धान्याद्युत्पत्तिस्थलं, वास्तु=प्रासादादिकं सर्वं ममेत्येवमाचरन्तो ममायमानास्तेषां क्षेत्रवास्तुप्रभृतिषु ममत्वं कुर्वताम् एकेषाम्=केषाञ्चिद्विपर्यस्तमतीनां मानवानाम्, उपलक्षणात् प्राणिनां जीवितम्=असंयमजीवितम् पृथक्=विभिन्नरूपेण स्वस्वापेक्षया प्रियम्=इष्टम्, भवतीति शेषः ।

જો સંયમી ક્ષેત્ર-ધાન્યાદિક કા ઉત્પત્તિ સ્થાન; વાસ્તુ-મહલ મકાન આદિ બાહ્ય પદાર્થોં મેં મમત્વશાલી બને હુએ હૈં, વે વાસ્તવિક સંયમી નહીં હૈં, ક્યોંકિ જીવોં મેં બાહ્યપદાર્થોં સે મમત્વ હટે વિના સંયમભાવ હી નહીં ઉત્પન્ન હો સકતા હૈ। જિસ પ્રકાર ઝંડ પર નીંદ લેને વાલે વ્યક્તિ કા પ્રાયઃ અધઃપતન હોતા હૈ ડસી પ્રકાર જો સંયમ કા ઢોંગ રચકર બાહ્યપદાર્થોં મેં હી મૂર્ચ્છિત હો રહે હૈં ડનકા ખી અધઃપતન ડસસે અવશ્ય હોતા હૈ। સંયમ શબ્દ કા અર્થ તો યહી હૈ કિ-इन्द्रियों एवम् चित्त की वृत्ति जो बाह्यपदार्थों में आसक्त बनी हुई है उसका निरोध हो जाना, परन्तु जिनकी ममता बाह्य-पर-वस्तुओं में जागृत है कैसे माना जा सकता है कि उनके सत्य संयमभाव है, अतः ऐसे प्राणी संयमभाव से बहुत दूर ही रहा करते हैं, इन्हें अपना असंयम जीवन चाहे ये जिस किसी भी अवस्था में रहें प्रिय होता है, क्योंकि शुरु से इनका अभ्यास ही ऐसा पड़ा हुआ है, अर्थात् संयम जीवन व्यतीत करने लिये चित्तवृत्ति एवम् इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने की बड़ी भारी जरूरत होती है, इस प्रकार का उपदेश इन्हें नहीं मिला है, क्योंकि इनका जीवन तो बकरो

જે સંયમી ક્ષેત્ર-ધાન્યાદિકનું ઉત્પત્તિ સ્થાન, વાસ્તુ-મહેલ, મકાન, આદિ બાહ્ય પદાર્થોંમાં મમત્વશાળી બનેલાં તેઓ વાસ્તવિક સંયમી નથી, કારણ કે જીવોંમાં બાહ્ય પદાર્થોંની મમત્વ દૂર થયા વિના સંયમભાવ જ ઉત્પન્ન થતો નથી. જે પ્રકારે ઝંડ ઉપર ડંધ લેવાવાળી વ્યક્તિનો પ્રાયઃ અધઃપતન થાય છે તે પ્રકારે જે સંયમનો ઢોંગ રચીને બાહ્ય પદાર્થોંમાં જ મૂર્ચ્છિત થાય છે તેનું પણ અધઃપતન તેનાથી અવશ્ય થાય છે. સંયમ શબ્દનો અર્થ તો એ છે કે-इन्द्रियों અને ચિત્તની વૃત્તિ જે બાહ્ય પદાર્થોંમાં આસક્ત બની છે તેનો નિરોધ થઇ જવો. પરંતુ જેની મમતા બાહ્ય પરવસ્તુઓમાં જાગ્રત છે, કેવી રીતે માનવામાં આવે કે તેનો સત્ય સંયમભાવ છે, માટે એવો પ્રાણી સંયમભાવથી જીવન ગમે તે સ્થિતિમાં રહે તેને તે પ્રિય લાગે છે, કારણ કે શરૂઆતથી તેનો અભ્યાસ તેવો થયેલ છે, અર્થાત્ સંયમ જીવન વ્યતીત કરવા માટે ચિત્તવૃત્તિ અને ઇન્દ્રિયો ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની મોટી જરૂરત હોય છે, આ પ્રકારનો ઉપદેશ તેને મળેલ નથી, કારણ કે તેનું જીવન તો બકરાની માફક “મૈ મૈ” કરતાં કરતાં

અન્યચ્ચ-આરક્તમ્=રુચિરરાગરજિતમ્, વિરક્તમ્=વિવિધરાગરજિતં પટાદિકમ્  
'મણિમ્' મણિઃ=પદ્મરાગાદિસ્તં, કુણ્ડલમ્=પ્રસિદ્ધમ્, ઉપલક્ષણમેતત્કટકકેયૂરાદી-  
નામ્, હિરણ્યેન=સુવર્ણેન સહ સ્ત્રીઃ પરિગૃહ્ય=સ્વાયત્તીકૃત્ય તત્રૈવ ક્ષેત્રવાસ્તુવિવિધચક્ષ્-  
મણિકુણ્ડલકામિન્યાદૌ રક્તાઃ=ગૃધ્રનો મૂઢમતયો વિપર્યાસમુપયન્તિ, વદન્તિ ચ-  
અત્ર સંસારે તપો વા=અનશનાદિસ્વરૂપમ્, દમો વા=ઇન્દ્રિયનો ઇન્દ્રિયોપશમરૂપઃ,  
નિયમો વા=અહિંસાવ્રતં ન દૃશ્યતે=ન ફલવદનુભૂયતે, તપોદમનિયમવતાં જનાનાં  
કાયક્લેશ એવાન્યન્ન કિમપિ ફલમ્, અપિ ચ દૃષ્ટસ્ય સુખાદેર્હાનિઃ, અદૃષ્ટસુખસ્ય  
કલ્પનં મહદનુચિતં, ભવાન્તરે ચૈતત્ફલં ભાવીતિ ગ્રહગ્રહિલસ્ય પ્રલાપ એવેતિ વદન્

કી તરહ “મૈં મૈં” કરતા હુઆ પરપદાર્થોં મૈં આસક્તિસંપન્ન હો રહા  
હૈ । અચિત્તપરિગ્રહરૂપ ખંડકીલે રંગ બિરંગે કપડોં કે, પદ્મરાગાદિક  
મણિયોં કે, કટક કેયૂર કુણ્ડલ આદિ કે, સુવર્ણ આદિ ધાતુઓં કે, એવં  
સ્ત્રી આદિ સચિત્ત પરિગ્રહ કે અપનાને, એવમ્ અને રક્ષણાદિ કરને મૈં  
હી इनकी जीवनयात्रा समाप्त हो जाती है, અર્થાત્ સચિત્ત ઔર અચિત્ત  
પરિગ્રહ કે સંગ્રહ એવમ્ રક્ષણ કરને મૈં હી એસે જીવ ગૃહ્થ બને રહતે હૈં,  
ઔર સંયમજીવન કો દોષ દેતે હુએ કહતે હૈં કિ-“इस संसार में  
अनशनादिक तप, इन्द्रिय और मन को वश में करने रूप दम, अहिंसा-  
व्रतादिरूप नियम कुछ भी कार्यकारी नहीं है । क्योंकि इनका आचरण  
करने वाले व्यक्तियों को कायक्लेश के सिवाय और किसी भी फल  
की प्राप्ति नहीं होती है, ऐसा भला संसार में कौन समझदार होगा जो  
प्रत्यक्ष अनुभूत सुखादिकों की कामना से प्रेरित होकर इनका परित्याग

પદાર્થોમાં આસક્તિસંપન્ન હોય છે. અચિત્ત પરિગ્રહરૂપ જાતજાતના રંગબેરંગી  
કપડાના, પદ્મરાગાદિક મણિઓના, કટક, કેયૂર, કુંડલ આદિના, સુવર્ણ આદિ ધાતુ-  
ઓના, અને સ્ત્રી આદિ સચિત્ત પરિગ્રહના અપનાવવામાં અને તેના રક્ષણાદિ કરવામાં  
જ તેની જીવનયાત્રા સમાપ્ત થઈ જાય છે, અર્થાત્ સચિત્ત અને અચિત્ત પરિ-  
ગ્રહના સંગ્રહ અને રક્ષણ કરવામાં જ એવા ગૃહ્થ બની રહે છે, અને સંયમ જીવનને  
દોષ દેતાં દેતાં કહે છે કે “આ સંસારમાં અનશનાદિક તપ, ઇન્દ્રિય અને મનને  
વશ કરવારૂપ દમ, અહિંસાવ્રતાદિરૂપ નિયમ કોઈપણ કાર્યકારી નથી, કારણ કે તેનું  
આચરણ કરવાવાળા વ્યક્તિઓને કાયકલેશ સિવાય બીજા કોઈ પ્રકારનું ફળ મળતું  
નથી. એવો ભલો ! સંસારમાં કોણ સમજદાર હશે જે પ્રત્યક્ષ અનુભૂત સુખા-  
દિકોને છોડીને અદૃષ્ટ સુખાદિકોની કામનાથી પ્રેરિત બનીને તેના પરિત્યાગ કરશે ?



બાલઃ=પરિગ્રહકટુકફલાનભિજ્ઞઃ, સમ્પૂર્ણ યથાસમયપ્રાપ્તકામિન્યાદ્યાસક્તિપૂર્વકં યથા સ્યાત્તથા જીવિતુકામઃ અસંયમેન દીર્ઘકાલજીવનાર્થી લાલપ્યમાનઃ=કામ-ભોગતીવ્રાભિલાષેણ વ્યર્થં પ્રલપન્ મૂઢઃ=વિવેકવિકલઃ પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટઃ, વિપ-ર્યાસમ્=વૈપરીત્યમ્ મિથ્યાત્વમિત્યર્થસ્તદ્યથા-તત્ત્વેऽતત્ત્વબુદ્ધિમ્, અતત્ત્વે તત્ત્વબુદ્ધિમ્, કુદેવ-કુગુરુ-કુધર્મેષુ સુદેવ-સુગુરુ-સુધર્મબુદ્ધિમ્, ઇષ્ટેષ્વનિષ્ટબુદ્ધિમ્, અનિષ્ટેષ્વિ-ષ્ટબુદ્ધિમ્, इत्थम् વિપર્યયમ્ ઉપૈતિ=પ્રાપ્નોતિ । ઉક્તञ्च-

કરેગા?, યહ તો એક હસ પ્રકાર કી કલ્પના હૈ કિ-જિસ પ્રકાર કોઈ વ્યક્તિ અપને ઘર મેં ઝરતે હુઅ અમૃત કો છોડકર કિસી કે બહકાવે મેં આકર “પર્વત મેં અમૃત ઝરતા હૈ” હિસ ઠ્યાલ સે ડસકી છાહના મેં ડસે છોડ વહાં દોડા જાતા હૈ । જો હમારી ઇન્દ્રિયોં કે ગોચર હૈ વહી વાસ્તવિક હૈ, હિસકે પરે સ્વર્ગ નરકાદિ કુછ બી નહીં હૈ, પ્રત્યક્ષ ઇન્દ્રિયોં કે સુખ સિવાય પરોક્ષ સ્વર્ગાદિક સુખ હૈ, યહ સિર્ફ એક શ્રદ્ધા કી હી વસ્તુ હૈ વાસ્તવિક કુછ નહીં હૈ । તથા “તપશ્ચર્યા કા ફલ હિસ ભવ મેં ન મિલે તો ન સહી પરભવ મેં તો મિલેગા હી” હિસ પ્રકાર કી કલ્પના બી ગ્રહગૃહીત પુરુષ કે પ્રલાપ જૈસી હી હૈ । જૈસે ભૂતાદિ કે આવેશ સે યુક્ત પ્રાણી કા પ્રલાપ નિરર્થક હોતા હૈ ડસી પ્રકાર “હિસ ભવ મેં તપ સંયમરૂપ કષ્ટ કો ફેલકર પ્રાણી પરલોકસં-બંધી સુખ સમૃદ્ધિ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ” યહ કહના બી નિરર્થક હૈ । હિસ પ્રકાર કી વિપરીત માન્યતા ડન અજ્ઞાની પુરુષોં કી હૈ જો પરિગ્રહ કે ફલ સે અનભિજ્ઞ હૈ । રાતદિન પરિગ્રહ કે વટોરને એવમ્ ડસકી વૃદ્ધિ કરને મેં દત્તાવધાન પ્રાણી કી દૃષ્ટિ મેં સંયમ જીવન જૈસે સુન્દર સિદ્ધાંત

એ તો એક આ પ્રકારની કલ્પના છે કે-જે પ્રકારે કોઈ વ્યક્તિ પોતાના ઘરમાં ઝરતાં અમૃતને છોડીને કોઈના ભરમાવવાથી “પર્વતમાં અમૃત ઝરે છે” તેવા ખ્યાલથી તેની યાદનામાં તેને છોડીને ત્યાં દોડી જાય છે. જે અમારી ઇન્દ્રિયોને ગોચર છે તે વાસ્તવિક છે. તેના સિવાય સ્વર્ગ નરકાદિ કંઈ પણ નથી, પ્રત્યક્ષ ઇન્દ્રિયોના સુખ સિવાય પરોક્ષ સ્વર્ગાદિક સુખ છે તે ફક્ત એક શ્રદ્ધાની વસ્તુ છે-વાસ્તવિક કંઈ પણ નથી. અને “તપશ્ચર્યાનું ફળ આ ભવમાં નહિ મળે તો નહિ પરભવમાં તો મળશે જ.” આવા પ્રકારની કલ્પના પણ ગ્રહગૃહીત પુરુષના પ્રલાપ જેવી જ છે. જેમ ભૂતાદિકના આવેશથી યુક્ત પ્રાણીનો પ્રલાપ નિરર્થક બને છે તે પ્રકારે “આ ભવમાં તપસંયમરૂપ કષ્ટને ભોગવી પ્રાણી પરલોક સંબંધી સુખ સમૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે” એમ કહેવું પણ નિરર્થક છે. આવી વિપરીત માન્યતા તેવા અજ્ઞાની પુરુષોની છે જે પરિગ્રહના કટુક ફળથી અનભિજ્ઞ છે. રાત દિન પરિગ્રહના વધારવામાં દત્તાવધાન પ્રાણીની દૃષ્ટિમાં સંયમ



કા કોઈ મહત્વ ન હો તો इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है, कारण कि कहावत है—जो नृत्य करने में सिद्धहस्त नहीं है, वह आंगन को टेढ़ा कहता है। परिग्रहादि के बोझ से प्राणी की तमाम शक्तियाँ इतस्ततः बिखर जाती हैं अतः वे बिखरी हुई शक्तियाँ “संयमित जीवन बिखरी हुई शक्तियाँ को केन्द्रित करने वाला है” इस प्रकार कैसे महत्त्व दे सकती हैं। परन्तु यह मानना अवश्य पड़ेगा कि—जिस प्रकार सूर्य की किरणें जब किसी विशेष काच में केन्द्रित करली जाती हैं तो उनसे सहसा अग्नि प्रज्वलित हो उठती है, उसी प्रकार असंयम अवस्था में जो आत्मिक शक्तियाँ इधर उधर विषय कषायों में फँसकर अस्तव्यस्त हो रही थीं—जब वे संयमित जीवन से केन्द्रित करली जाती हैं तो इनसे भी एक ऐसा प्रवाह निकलता है जो प्राणी के जीवन में अपूर्व परिवर्तन कर देता है। लगाम जिस प्रकार स्वच्छंद घोड़े को, अंकुश मदोन्मत्त गजराज को वश में कर देता है, उसी प्रकार संयम भी जीवन को योग्य मार्ग पर पहुँचा देता है। यही एक ऐसा मार्ग है जो असंयम जीवन से प्राणी की रक्षा करता है। अतः ऐसे सुन्दर और हितावह मार्ग का सच्चे भावों से जो आराधन नहीं करते हैं वे प्राणी कैसे इससे उत्पन्न होने वाले लाभ को पा सकते हैं?। माना जा सकता है कि—संयम जीवन को

જીવન જેવા સુંદર સિદ્ધાંતને કોઈ મહત્વ ન હોય તો તેમાં આશ્ચર્ય થાય તેવી કોઈ વાત નથી, કારણ કે કહેવત છે—જે નૃત્ય કરવામાં સિદ્ધહસ્ત નથી તે આંગણને વાકું કહે છે. પરિગ્રહાદિના બોજથી પ્રાણીની તમામ શક્તિઓ આડી અવળી વિખરાઈ જાય છે માટે તે વિખરાયેલી શક્તિઓ “સંયમિત જીવન જે વિખરાઈ ગયેલી શક્તિઓને કેન્દ્રિત કરવાવાળું છે” આ પ્રકારે તે કેવી રીતે મહત્વ દઈ શકે. પરંતુ તે અવશ્ય માનવું પડશે કે જે પ્રકાર સૂર્યની કિરણો જ્યારે કોઈ વિશેષ કાચમાં કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તો તેનાથી સહેજે અગ્નિ પ્રજ્વલિત થાય છે, તેવા પ્રકારે અસંયમ અવસ્થામાં જે આત્મિક શક્તિઓ આડી અવળી વિષય કષાયોમાં ફસાને અસ્તવ્યસ્ત થઈ રહી હતી, જ્યારે તે સંયમિત જીવનથી કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તો તેનાથી પણ એક એવો પ્રવાહ નીકળે છે જે પ્રાણીના જીવનમાં અપૂર્વ પરિવર્તન કરે છે. લગામ જેવી રીતે સ્વચ્છંદ ઘોડાને, અંકુશ મદોન્મત્ત ગજરાજને વશમાં કરે છે તે પ્રકારે સંયમ પણ જીવનને યોગ્યમાર્ગ ઉપર પહોંચાડે છે. તે એક જ માર્ગ છે જે અસંયમ જીવનથી પ્રાણીની રક્ષા કરે છે, માટે આવા સુંદર અને હિતાવહ માર્ગને સાચા ભાવોથી જે આરાધન કરતા નથી તે પ્રાણી કેવી રીતે તેનાથી ઉત્પન્ન થતાં લાભને મેળવી શકે?

“दाराः परिभवकारा, बन्धुजनो बन्धनं विषं विषयाः।

कोऽयं जनस्य मोहो, ये रिपवस्तेषु सुहृदाश्च” ॥ १ ॥ इति ।

पूर्णरूप से व्यतीत करने के लिये, तथा उसके रक्षण के लिये कषायों पर विजय प्राप्त करने की सर्व प्रथम बड़ी भारी जरूरत है। परिग्रह को अपना यह लोभकषाय के उदय में ही होता है। असंयमी जीव असंयम अवस्था में रहते हुए ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं, तथा यह चाहते हैं कि “मैंने जो यह परिग्रहादिक संगृहीत किया है उसके भोगने के लिये मैं अधिक से अधिक जीऊँ”। असंयमी जीव परपदार्थों के उपभोग करने में ही अधिक आसक्तिसंपन्न होते हैं—इन्हें जितनी इन परपदार्थों को भोगने की तीव्र अभिलाषा रहती है उससे शतांश भी आत्मकल्याणमय संयमिजीवन की तर्फ इनकी रुचि नहीं होती। जन्मान्तर से मिथ्यात्व का संसर्ग चला आता है। जैनकुल में उत्पन्न होने पर भी उनके इस मिथ्यात्व का नाश नहीं होता। ऐसे ही जीव अनादिमिथ्यादृष्टि कहलाते हैं। जो वर्तमान भव में कुगुरु कुदेव और कुधर्म की संगति में पड़कर अपने में अतत्त्वरुचि को स्थान देते हैं वे मिथ्यादृष्टि जीव हैं। ये जीव इष्ट पदार्थों को अनिष्टकारी, तथा अनिष्ट पदार्थों को इष्टकारी माना करते हैं। वे यह नहीं विचारते हैं कि—

मानवामां आवे छे के—संयम जवनने पूरुं इपथी व्यतीत करवा माटे तथा तेना रक्षणु माटे कषायो पर विजय प्राप्त करवानी सर्व प्रथम जरूरत छे. परिग्रहने अपनाववो ते लोभकषायना उदयमां जरू थाय छे. असंयमी जव असंयम अवस्थामां रहीने पोतानुं जवन व्यतीत करे छे, तथा ओ याहे छे के “ में जे आ परिग्रहादिक संग्रह कर्यो छे तेने भोगववाने माटे हुं वधारेमां वधारे जवुं ” असंयमी जव परपदार्थोना उपयोग करवामां जरू अधिक आसक्तिसंपन्न होय छे. तेने जेटवी परपदार्थो भोगववानी तीव्र अभिलाषा रहे छे तेनाथी सोमां लागनी आत्मकल्याणमय संयम जवननी तरङ्ग तेनी इची थती नथी. जन्मान्तरथी मिथ्यात्वनो संसर्ग याव्यो आवे छे. जैन कुलमां उत्पन्न थवा छतां पणु तेना आ मिथ्यात्वनो नाश थतो नथी. ओवा जव अनादिमिथ्यादृष्टि कडेवाय छे. जे वर्तमान भवमां कुगुरु कुदेव अने कुधर्मनी संगतिमां पडीने पोतानामां अतत्त्वइयिने स्थान आपे छे ते मिथ्यात्वदृष्टि जव छे. ते जव इष्ट पदार्थोने अनिष्टकारी तथा अनिष्ट पदार्थोने इष्टकारी माने छे. ते ओवुं विचारता नथी के—



સર્વથા વિપર્યસ્તોઽનેકભવેષુ પરિભ્રમન્ ભ્રાન્તઃ સંયમાત્મઘાતમેવ કરોતીતિ તાત્પર્યમ્ । સૂત્રે ઉપૈતીત્યત્રૈકવચનમાર્ષત્વાત્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

યે પુનરવિપર્યસ્તાઃ સંયમિનસ્તેષાં કર્તવ્યમુપદિશતિ—‘ઇળમેવ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઇળમેવ નાવકંઘંતિ, જે જળા ધ્રુવચારિણો । જાડમરણં પરિજ્ઞાય, ચરેઽસંકમણે દઢે ॥ નત્થિ કાલસ્સઽળાગમો ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—ઇદમેવ નાવકાઢ્ઠક્ષન્તિ, યે જના ધ્રુવચારિણઃ । જાતિમરણં પરિજ્ઞાય, ચરેદશક્કમના દઢઃ ॥ નાસ્તિ કાલસ્યાઽળાગમઃ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

“દારાઃ પરિભવકારા, -બન્ધુજનો બન્ધનં વિષં વિષયાઃ ।

કોઽયં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહૃદાશા” ॥ ૧ ॥

યે જો સ્ત્રી આદિક પદાર્થ હૈં વે મેરા તિરસ્કાર કરને વાલે હૈં । બન્ધુ જન એક બન્ધન હૈં । વિષયાદિક વિષ હૈં । એસા ક્યા ઇસ પ્રાણી કા મોહ હૈં જો અપને શત્રુઓં કો ખી મિત્ર સમજ્ઞ રહા હૈં । ઇસ પ્રકાર યહ પ્રાણી વિપરીતબુદ્ધિવાલા બનકર અનેક ભવોં મેં પરિભ્રમણ કર હેયોપાદેય કે વિવેક સે રહિત હોકર સંયમરૂપ અપની આત્મા કા ઘાત કરતા રહતા હૈં । આત્મા કા સ્વભાવ સંયમસ્વરૂપ હૈં, ઇસકો પાલન નહીં કરના, અથવા આત્મા કો સંયમી નહીં બનાના આત્મા કી ઘાત કરના હૈં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જો સચ્ચે ચારિત્ર સે યુક્ત હૈં વે ઇસ અસંયમિજીવન કો પસન્દ નહીં કરતે હૈં, યહ વાત ઇસ સૂત્ર મેં પ્રદર્શિત કરતે હૈં—“ઇળમેવ નાવ-કંઘંતિ” ઇત્યાદિ ।

“દારાઃ પરિભવકારા, બન્ધુજનો બન્ધનં વિષં વિષયાઃ ।

કોઽયં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહૃદાશા” ॥ ૧ ॥

આ જે સ્ત્રી આદિક પદાર્થ છે તે મારે તિરસ્કાર કરવાવાળા છે. બંધુજન એક બંધન છે. વિષયાદિક વિષ છે. એવો કયો આ પ્રાણીનો મોહ છે જે પોતાના શત્રુઓને પણ મિત્ર સમજે છે. આ પ્રકારે આ પ્રાણી વિપરીત બુદ્ધિવાલો બનીને અનેક લેવોમાં પરિભ્રમણ કરી હેયોપાદેયના વિવેકથી રહિત થઈને સંયમરૂપ પોતાના આત્માનો ઘાત કરતા રહે છે. આત્માનો સ્વભાવ સંયમસ્વરૂપ છે તેનું પાલન નહિ કરવું અથવા આત્માને સંયમી નહિ બનાવવો તે આત્માની ઘાત કરવા બરાબર છે. ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જે સાચા ચારિત્રથી યુક્ત છે તે આવા અસંયમિજીવનને પસંદ કરતા નથી. આ વાત આ સૂત્રમાં પ્રદર્શિત કરે છે—“ઇળમેવ નાવકંઘંતિ” ઇત્યાદિ.



‘ઇદ’-મિત્યાદિ । “ધ્રુવચારિણઃ” ધ્રુવતિ=વ્રજતિ આત્મતઃ પૃથગ્ભવતિ કર્મ-ચયો યેન તદ્ ધ્રુવં=ચારિત્રં, તચ્ચરિતું શીલં યેષાં તે ધ્રુવચારિણઃ ।

યદ્વા-ધ્રુવો મોક્ષસ્તદ્દેતુત્વાત્તપોજ્ઞાનક્રિયાદિકં કાર્યકારણયોરભેદાત્, તચ્ચરણ-શીલા ધ્રુવચારિણઃ । યે જના ધ્રુવચારિણઃ, તે ઇદમેવ અસંયમજીવિતં પૂર્વશુક્તભોગાદિકં વા નાવકાઙ્ક્ષન્તિ=નેચ્છન્તિ । ‘જાતિમરણં’ જાતિશ્ચ મરણં ચ જાતિમરણં, જાતિ-મરણં યત્ર સ જાતિમરણઃ=સંસારસ્તં વા જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા ‘અશઙ્કિતમનાઃ’ અશઙ્કિ-તં મનો યસ્ય સોઽશઙ્કિતમનાઃ=તપોદમનિયમવૈફલ્યાશઙ્કાશૂન્યો જિનવચનશ્રદ્ધાવાન, અત એવ દૃઢઃ=વિશ્રોતસિકારહિતઃ, પરીષદોપસર્ગૈર્નિષ્પ્રકમ્પો વા ચરેત્=વિહરેત્ ।

ધ્રુવ શબ્દ કા અર્થ ચારિત્ર હૈ, ક્યોંકિ-“ધ્રુવતિ-વ્રજતિ આત્મનઃ પૃથગ્ભવતિ કર્મચયો યેન તત્ ધ્રુવમ્” કર્મસમૂહ જિસકે દ્વારા આત્મા સે પૃથક્ હોતા હૈ વહ ધ્રુવ હૈ, વહ ચારિત્રસ્વરૂપ આત્મા કા નિજધર્મ હૈ ।

ભાવાર્થ—ચારિત્ર આરાધન કે દ્વારા આત્મા જ્યોં જ્યોં અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય ઓર અશુભ યોગોં કા નિગ્રહ કરતા જાતા હૈ, ત્યોં ત્યોં ઇસ આત્મા મેં અપૂર્વ અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ હોતી જાતી હૈ । ઇસ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ મેં આત્મા સંવર ઓર નિર્જરા કે દ્વારા સમસ્ત કર્મોં કા નાશ કર દેતા હૈ, અર્થાત્ સમસ્ત કર્મ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતે હૈ । તપ શ્રુત ઓર વ્રતોં કા પાલન કરને વાલા આત્મા હી ધ્યાનરૂપ રથ પર આરૂઢ હોકર સંવર ઓર નિર્જરા કે સુંદર મૈદાન મેં આકર અપને અન્તિમ મોક્ષ પુરુષાર્થ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ । સુવર્ણ જૈસે જૈસે અગ્નિ મેં તપાયા જાતા હૈ વૈસે વૈસે વહ બિલકુલ નિર્મલ હોતા જાતા હૈ, ઊસી પ્રકાર કર્મોં કે અનાદિ સંબંધ સે આવૃત યહ આત્મા બી મલિનદશાસંપન્ન હૈ, ઊસકી ઇસ

ધ્રુવ શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે, કારણ કે “ધ્રુવતિ વ્રજતિ આત્મનઃ પૃથગ્ભવતિ કર્મચયો યેન તત્ ધ્રુવમ્” કર્મસમૂહ જે દ્વારા આત્માથી પૃથક્ થાય છે તે ધ્રુવ છે, તે ચારિત્રસ્વરૂપ આત્માનો નિજધર્મ છે.

ભાવાર્થ—ચારિત્ર આરાધનદ્વારા આત્મા જેમ જેમ અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને અશુભ યોગોનો નિગ્રહ કરતા રહે છે તેમ તેમ આ આત્મામાં અપૂર્વ અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિ થાય છે. આ ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિમાં આત્મા સંવર અને નિર્જરાદ્વારા સમસ્ત કર્મોનો નાશ કરે છે, અને સમસ્ત કર્મ આત્માથી પૃથક્ થઈ જાય છે. તપ શ્રુત અને વ્રતોના પાલન કરવાવાળા આત્મા જ ધ્યાનરૂપ રથ પર આરૂઢ થઈ સંવર અને નિર્જરાના સુંદર મેદાનમાં આવીને પોતાના અંતિમ મોક્ષ પુરુષાર્થને પ્રાપ્ત કરી લે છે. સુવર્ણને અગ્નિમાં જેમ જેમ વધારે તપાવવામાં આવે તેમ તેમ તે વધારે નિર્મળ બને છે. તે પ્રકારે કર્મોના અનાદિ સંબંધથી

મલિનતા કો દૂર કરને મેં ચારિત્ર કી અરાધના અગ્નિ કા કામ દેતી હૈ । કર્મોં કા સંબંધ આત્મા કે સાથ આજ કા નહીં હૈ કિન્તુ યહ તો અનાદિકાલ કા હૈ, યહ બાત કહીં બાર લિખી જા ચુકી હૈ । યે કર્મપુદ્ગલ અચેતન હોને સે સ્વયં આત્મા કે પાસ નહીં જાતે કિન્તુ અનાદિકાલ સે બદ્ધરૂપ હસ આત્મા કે યોગરૂપ પરિણામ મેં એસી આકર્ષક શક્તિ હૈ કિ જિસકે દ્વારા વે કર્મરૂપ પુદ્ગલ ઝીંચે જાતે હૈ—અર્થાત્ આત્મા જબ કષાયોં કે દ્વારા અત્યન્ત સંતપ્ત હો જાતા હૈ તબ યોગ દ્વારા કર્મપુદ્ગલોં કો—તપા હુઆ લોહા જિસ તરહ પાની કો ચારોં ઓર સે ઝીંચતા હૈ ઠીક ઉસી તરહ ઝીંચતા હૈ, ઓર વે ઝાંચે હુઅ મોજન કે હસ રુધિરાદિરૂપ કી તરહ અપને હી આપ ભિન્ન-ભિન્ન રૂપ સે પરિણત હો જાતે હૈ । કર્મપુદ્ગલ નવીન-નવીન તયાર નહીં હોતે, કારણ કિ “સતો ન વિનાશઃ અસતશ્ચ ઉત્પત્તિર્ન” સત્ કા વિનાશ ઓર અસત્ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી । આત્મા કષાયોં સે જબ સંતપ્ત હો જાતા હૈ તબ મન, વચન ઓર કાયરૂપ યોગોં કે દ્વારા જિન કાર્મણ વર્ગણાઓં કો ઝીંચતા હૈ ઉન્હીં કી કર્મસંજ્ઞા હો જાતી હૈ ।

પ્રશ્ન—આપને અમી તો યહ કહા હૈ કિ—આત્મા કર્મોં કે સાથ અનાદિકાલ સે બંધ રહા હૈ, ઓર અબ આપ કહતે હૈ કિ—જિન કાર્મણ

આવૃત આ આત્મા પણ મલિનદશાસંપન્ન છે, તેની આ મલિનતાને દૂર કરવામાં ચારિત્રની આરાધના અગ્નિનું કામ આપે છે. કર્મોના સંબંધ આત્માની સાથે આજનો નથી પણ અનાદિ કાળનો છે, એ વાત ઘણી વખત લખાઈ ચુકી છે. આ કર્મ પુદ્ગલ અચેતન હોવાથી પોતે આત્માની પાસે નથી જતાં પણ અનાદિ કાળથી બદ્ધરૂપ આ આત્માને યોગરૂપ પરિણામમાં એવી આકર્ષક શક્તિ છે કે જેના દ્વારા તે કર્મરૂપ પુદ્ગલ ખેંચાઈ જાય છે. અર્થાત્ આત્મા જ્યારે કષાયોદ્વારા અત્યન્ત સંતપ્ત થાય છે ત્યારે યોગદ્વારા કર્મ પુદ્ગલોને—તપેલું લોડું જેવી રીતે પાણીને ચારે બાજુથી ખેંચે છે, ઠીક તે પ્રમાણે ખેંચે છે. અને તે ખવાયેલાં લોજનનું આ રુધિરાદિ રૂપની માફક પોતાની મેળે જ ભિન્ન ભિન્ન રૂપથી પરિણત થાય છે. કર્મપુદ્ગલ નવીન નવીન તૈયાર થતાં નથી. કારણ કે “સતો ન વિનાશઃ અસતશ્ચ ઉત્પત્તિર્ન” સત્નો વિનાશ અને અસત્ની ઉત્પત્તિ થતી નથી. આત્મા કષાયોથી જ્યારે સંતપ્ત થાય છે ત્યારે મન, વચન અને કાયા રૂપ યોગોદ્વારા જે કર્મણ વર્ગણાઓને ખેંચે છે તેની કર્મસંજ્ઞા થઈ જાય છે.

પ્રશ્ન—આપે હમણા તો એ કહ્યું કે આત્મા કર્મોની સાથે અનાદિ કાળથી બંધી રહ્યો છે, અને હવે આપ કહો છો કે જે કર્મણ વર્ગણાઓને ખેંચે છે



વર્ગનાઓં કો સ્ત્રીચતા હૈ ઉન્હીં કી કર્મસંજ્ઞા હો જાતી હૈ । ઇસસે તો આત્મા ઓર કર્મ કા સંબંધ સાદિ સિદ્ધ હોતા હૈ ।

ઉત્તર—અભિપ્રાય કો સમન્ને વિના હી યહ પ્રશ્ન ક્રિયા ગયા હૈ । કહને કા તાત્પર્ય યહી હૈ કિ—યહ જીવાત્મા અનાદિ સે હી કર્મબંધ સહિત હૈ । ઇસકે સાથ કોઈ નિયમિત સમય સે કર્મબંધ નહીં હુઆ । એસા નહીં થા કિ જીવ અલગ-ન્યારા થા ઓર કર્મ ન્યારે થે, પીછે સે ઇન દોનોં કા સંયોગ હુઆ હો । કિન્તુ જિસ પ્રકાર મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોં મેં અનંત પુદ્ગલપરમાણુ અનાદિ સે હી બંધરૂપ હો રહે હૈ, ઓર ઉનમેં પુરાને પુદ્ગલપરમાણુ ભિન્ન હોતે રહતે હૈ, ઓર નવીન આકર મિલતે હૈ । ઇસી પ્રકાર ઇસ સંસાર મેં એક જીવદ્રવ્ય ઓર અનન્ત કર્મરૂપ પુદ્ગલપરમાણુઓં કા પરસ્પર મેં અનાદિકાલ સે સંબંધ હૈ । ઇનમેં સે કઈ કર્મપરમાણુ ભિન્ન હોતે રહતે હૈ ઓર કઈ કર્મપરમાણુ મિલતે રહતે હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇન કર્મપરમાણુઓં મેં પરસ્પર મિલના બિહુડના હોતા રહતા હૈ ।

પ્રશ્ન—પુદ્ગલપરમાણુ તો રાગાદિક કે નિમિત્ત કો પાકર કર્મરૂપ હુઆ કરતે હૈ, ફિર વે અનાદિ સે કર્મરૂપ અવસ્થા વાલે કૈસે માને જા સકતે, કારણ કિ કાર્મણ વર્ગના, જિસસે કર્મપર્યાય ઉત્પન્ન હોતી હૈ વહ સ્વયં પુદ્ગલ દ્રવ્ય હૈ ? ।

તેની કર્મસંજ્ઞા થાય છે તેથી તો આત્મા અને કર્મનો સંબંધ સાદિ સિદ્ધ થાય છે.

ઉત્તર—અભિપ્રાયને સમજ્યા વિના જ પ્રશ્ન કર્યો છે. કહેવાનો તાત્પર્ય એ છે કે—આ જીવાત્મા અનાદિથી જ કર્મબંધસહિત છે. તેની સાથે કોઈ નિયમિત સમયથી કર્મબંધ થયેલ નથી. એવું ન હતું કે જીવ અલગ-બુદ્ધો હતો અને કર્મ પણ બુદ્ધો હતાં, પાછળથી એ બન્નેનો સંયોગ થયો હોય, પણ જેવી રીતે મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમાં અનંત પુદ્ગલપરમાણુ અનાદિથી જ બંધરૂપ થઈ રહેલ છે, અને તેમાં પુરાણા પુદ્ગલપરમાણુ ભિન્ન થતાં રહે છે અને નવા આવીને મળે છે. આ પ્રકાર આ સંસારમાં એક જીવદ્રવ્ય અને અનંત કર્મરૂપ પુદ્ગલપરમાણુઓના પરસ્પરમાં અનાદિ કાળથી સંબંધ છે, તેમાંથી કોઈ કર્મપરમાણુ ભિન્ન થતાં રહે છે અને કોઈ પુદ્ગલપરમાણુ મળતાં રહે છે. આ પ્રકાર આ કર્મપરમાણુઓમાં પરસ્પર મળવું, છુટા થવું વિગેરે થતું જ રહે છે.

પ્રશ્ન—પુદ્ગલપરમાણુ તો રાગાદિકના નિમિત્તને લઈને કર્મરૂપ થયા કરે છે, પછી તે અનાદિથી કર્મરૂપ અવસ્થાવાળા કેવી રીતે માનવામાં આવે. કારણ કે કાર્મણવર્ગણા જેનાથી કર્મપર્યાય ઉત્પન્ન થાય છે તે સ્વયં પુદ્ગલદ્રવ્ય છે ?



ઉત્તર—નિમિત્તની સંભાવના તો નવીન કાર્યની ઉત્પત્તિમાં જ કાર્યકારી માનવામાં આવે છે, અનાદિ અવસ્થામાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે તેની અનાદિતા ઉપર ખટો લગાડવા બરાબર છે. જે ઠેકાણે નિમિત્ત છે ત્યાં અનાદિતા નહીં, અને જ્યાં અનાદિતા છે ત્યાં નિમિત્ત નહિ. નિમિત્તનો સંબંધ સાદિતાની સાથે થયા કરે છે. જેમ નવીન પુદ્ગલપરમાણુના બે ગુણ અધિક બંધ સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષ દ્વારા થાય છે. આ ઠેકાણે નવીન પુદ્ગલ પરમાણુઓના બંધના સંબંધમાં સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષરૂપ નિમિત્તની કલ્પના કરવી પડે છે, પરંતુ મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમાં અનાદિ પુદ્ગલપરમાણુના બંધના સંબંધમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે કોઈ મહત્ત્વ નથી રાખતું નથી. ઠીક તે પ્રકાર નવીન પુદ્ગલપરમાણુઓના કર્મરૂપ હોવા રાગાદિકનિમિત્તાધીન છે, પરંતુ જે પુદ્ગલપરમાણુઓની અનાદિ કાળથી જ કર્મરૂપ અવસ્થા થઈ રહેલ છે, તેમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી કોઈ પણ પ્રયોજનની પુષ્ટિ નથી કરતી. શાસ્ત્રમાં આ વાતનું સમાધાન આમ લખેલ છે—

“ નૈવમ્, અનાદિપ્રસિદ્ધદ્રવ્યકર્મસમ્બન્ધસ્ય તત્ર હેતુત્વેનોપાદાનાત્ ”  
કોઈ વાદી પ્રશ્ન કરતા હોય કે—જ્યારે રાગાદિક ભાવકર્મના કારણે દ્રવ્યકર્મ

ઉત્તર—નિમિત્તની સંભાવના તો નવીન કાર્યની ઉત્પત્તિમાં જ કાર્યકારી માનવામાં આવે છે, અનાદિ અવસ્થામાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે તેની અનાદિતા ઉપર ખટો લગાડવા બરાબર છે. જે ઠેકાણે નિમિત્ત છે ત્યાં અનાદિતા નહીં, અને જ્યાં અનાદિતા છે ત્યાં નિમિત્ત નહિ. નિમિત્તનો સંબંધ સાદિતાની સાથે થયા કરે છે. જેમ નવીન પુદ્ગલપરમાણુના બે ગુણ અધિક બંધ સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષ દ્વારા થાય છે. આ ઠેકાણે નવીન પુદ્ગલ પરમાણુઓના બંધના સંબંધમાં સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષરૂપ નિમિત્તની કલ્પના કરવી પડે છે, પરંતુ મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમાં અનાદિ પુદ્ગલપરમાણુના બંધના સંબંધમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે કોઈ મહત્ત્વ રાખતું નથી. ઠીક તે પ્રકાર નવીન પુદ્ગલપરમાણુઓના કર્મરૂપ હોવા રાગાદિક નિમિત્તાધીન છે, પરંતુ જે પુદ્ગલપરમાણુઓની અનાદિ કાળથી જ કર્મરૂપ અવસ્થા થઈ રહેલ છે, તેમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી કોઈ પણ પ્રયોજનની પુષ્ટિ નથી કરતી. શાસ્ત્રમાં આ વાતનું સમાધાન આમ લખેલ છે—

“ નૈવમ્, અનાદિપ્રસિદ્ધદ્રવ્યકર્મસમ્બન્ધસ્ય તત્ર હેતુત્વે નોપાદાનાત્ ”  
કોઈ વાદી પ્રશ્ન કરે છે કે—જ્યારે રાગાદિક ભાવકર્મનું કારણ દ્રવ્યકર્મ છે,

હૈ, ઔર દ્રવ્યકર્મ કા કારણ રાગાદિક ભાવકર્મ હૈ તો ંસી પરિસ્થિતિ મેં ઈતરેતરાશ્રય દોષ આકર ઉપસ્થિત હોતા હૈ । ઈસ દોષ મેં કિસીકી ંી સ્વતન્ત્ર સત્તા કી સિદ્ધિ નહીં હોતી હૈ । તબ આચાર્ય કહતે હૈ—ંસા મત કહો, કારણ કિ અનાદિ સે હી દ્રવ્યકર્મ કા સમ્બન્ધ સ્વયં સિદ્ધ હૈ, ઔર ઈસી કી વજહ સે જીવ મેં રાગાદિક ભાવોં કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ । અનુભવ સે ંી યહી વાત પ્રતીતકોટિ મેં આતી હૈ કિ—યદિ રાગાદિક ભાવ જીવ કે વિના કિસી નિમિત્ત કે સ્વીકાર કિયે જાવેં તો વે જીવ કે નિજસ્વભાવ હો જાને સે વિભાવ ભાવ કૈસે માને જા સકેંગે ? । ંસી પરિસ્થિતિ મેં જીવ કા નિજભાવ રાગાદિક ંી માનના હોગા । પરન્તુ ંસી માન્યતા શાસ્ત્ર સે બહિર્ભૂત હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મ ઔર આત્મા કા આપ અનાદિ સમ્બન્ધ કહતે હૈ પરન્તુ યહ વાત ઠીક નહીં બૈઠતી, કારણ કિ ઈન દોનોં કા જો સમ્બન્ધ હૈ વહ સંયોગસમ્બન્ધ હી હૈ, તાદાત્મ્યસમ્બન્ધ નહીં । પહિલે દૂધ ઔર પાની કી તરહ ંે દોનોં સ્વતન્ત્ર હોં ઔર ફિર પરસ્પર મિલેં તબ ઈનકા સમ્બન્ધ માનના ઠીક હો સકતા હૈ ।

ઉત્તર—જૈસે જલ ઔર દૂધ કા સુવર્ણ ઔર કિટ્લિક કા તુષ ઔર કણ કા, તિલ ઔર તૈલ કા સમ્બન્ધ જનાદિ કા માના જાતા હૈ, ંસી

દ્રવ્યકર્મનું કારણ રાગાદિક ભાવકર્મ છે તો આવી પરિસ્થિતિમાં ઇતરેતરાશ્રય દોષ આવીને ઉપસ્થિત થાય છે. આ દોષમાં કોઈની પણ સ્વતંત્ર સત્તાની સિદ્ધિ થતી નથી. ત્યારે આચાર્ય કહે છે—એવું ન કહે, કારણ કે અનાદિથી દ્રવ્ય-કર્મનો સંબંધ સ્વયંસિદ્ધ છે. અને એજ કારણથી જીવમાં રાગાદિક ભાવોની ઉત્પત્તિ થાય છે. અનુભવથી પણ એ વાત પ્રતિતીકોટિમાં આવે છે, કે—કદાચ રાગાદિક ભાવ જીવને વિના કોઈ નિમિત્તે સ્વીકાર કરવામાં આવે. તો તે જીવના નિજ ભાવ થઈ જવાથી વિભાવ ભાવ કેવી રીતે માની શકાશે? આવી પરિસ્થિતિમાં જીવનો નિજભાવ રાગાદિક પણ માનવો પડશે, પરંતુ એવી માન્યતા શાસ્ત્રથી બહિર્ભૂત છે.

પ્રશ્ન—કર્મ અને આત્માનો આપ અનાદિ સંબંધ કહે છે પરંતુ એ વાત ઠીક બેસતી નથી, કારણ કે બન્નેનો જે સંબંધ છે તે સંયોગસંબંધ જ છે. તાદાત્મ્યસંબંધ નહિ, પહેલાં દૂધ અને પાણીની માફક બન્ને સ્વતંત્ર હોય અને પછી પરસ્પર મળે ત્યારે સંબંધ માનવો તે ઠીક લાગે છે.

ઉત્તર—જેવી રીતે પાણી અને દૂધ, સુવર્ણ અને કિટ્લિક, ચોખ્ખા અને કૌતરી, તણ અને તેલનો સંબંધ અનાદિનો માનવામાં આવે છે, તે પ્રકારે તેનો

પ્રકાર ઇનકા ખી સમ્બન્ધ અનાદિ કા હી હૈ । નવીન ઇનકા સમ્બન્ધ નહીં હુઆ હૈ । ઇનકા પરસ્પર મેં સંયોગસમ્બન્ધ હી હૈ, ઁસા જો કહા જાતા હૈ વહ આગામી કાલ મેં ઇનકી ભિન્નતા કો દેઁકર હી । અનાદિ સે મિલે હુઁ હોને પર ખી ઁ જુદે-જુદે હો જાતે હૈ, ઇસસે અનુમાન હોતા હૈ કિ ઁ પહિલે સે ખી જુદે હૈ । પરસ્પર સંયોગસંબંધવિશિષ્ટ હોને પર ખી ઁ દોનોં પદાર્થસ્વસ્વરૂપાપેક્ષયા ભિન્ન ભિન્ન હી હૈ । યદિ ભિન્ન ન હોં તો ફિર મુક્તિ ઇન કે પૃથક્ હોને સે જો જીવાત્મા કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ, વહ કૈસે હો સકેગી । અતઃ જીવ ઔર કર્મ કા સંબંધ અનાદિ કા હી હૈ સાદિ નહીં ।

પ્રશ્ન—કર્મ જબ પુદ્ગલપિંડરૂપ હૈ, તબ વે ઘટપટાદિક કી તરહ ઇન્દ્રિયગમ્ય કયોં નહીં હોતે ।

ઉત્તર—સ્થૂલ-સ્થૂલ ૧, સ્થૂલ ૨, સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ ૩, સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ ૪, સૂક્ષ્મ ૫, ઔર સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ ૬, ઇસ પ્રકાર સિદ્ધાન્તકારોં ને પુદ્ગલ કો ઇન છહ વિભાગોં મેં વિભક્ત કિયા હૈ । ઇનમેં કાગજ, લકડી, કલમ, દાવાત આદિ સ્થૂલ-સ્થૂલ પુદ્ગલ હૈ, ઇનમેં કઠોર વસ્તુઓં કા સમાવેશ હૈ । સ્થૂલ-સ્થૂલ વસ્તુઁ આપસ મેં છિન્ન ભિન્ન હોને પર અપને આપ ફિર મિલ નહીં સકતી ૧ ।

પણ સંબંધ અનાદિ કાળનો છે. નવીન તેનો સંબંધ થયો નથી. તેનો પરસ્પરમાં સંયોગસંબંધ જ છે એવું જે કહેવામાં આવે છે તે આગામી કાળમાં તેની ભિન્નતાને દેખીને જ કહેવામાં આવે છે. અનાદિથી તેઓ મળેલ છે છતાં તે જુદા જુદા થઈ જાય છે, તેથી અનુમાન થાય છે કે પહેલાંથી જ જુદા છે. પરસ્પર સંયોગસંબંધવિશિષ્ટ હોવા છતાં પણ એ બંને પદાર્થ સ્વસ્વરૂપાપેક્ષયા ભિન્ન જ રહેલ છે. જે જુદા નહિ હોત તો પછી મુક્તિ તેના પૃથક્ થવાથી જે જીવાત્માને પ્રાપ્ત થાય છે તે કેવી રીતે થઈ શકે, માટે જીવ અને કર્મનો સંબંધ અનાદિ છે સાદિ નહિ.

પ્રશ્ન—કર્મ જ્યારે પુદ્ગલપિંડરૂપ છે, ત્યારે તે ઘટપટાદિકની માફક ઇન્દ્રિયગમ્ય કેમ નથી થતાં.

ઉત્તર—સ્થૂલ-સ્થૂલ ૧, સ્થૂલ ૨, સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ ૩, સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ ૪, સૂક્ષ્મ ૫, અને સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ ૬, આ પ્રકારે સિદ્ધાંતકારોએ પુદ્ગલોને છ વિભાગોમાં વિભક્ત કરેલ છે. તેમાં કાગળ, લાકડી, કલમ, ખડીઓ આદિ સ્થૂલ-સ્થૂલ પુદ્ગલ છે, તેમાં કઠોર વસ્તુઓનો સમાવેશ છે, સ્થૂલ-સ્થૂલ વસ્તુઓ અંદરોઅંદર છિન્નભિન્ન થવાથી પોતાની મેળે ફરી મળી શકતી નથી ૧, સ્થૂલ-વહેવાવાળી ચીજો, જેમ



સ્થૂલ-વહને વાલી चीजें, जैसे पानी दूध घृत वगैरह २। स्थूल-सूक्ष्म-जो देखने में मोटी हों, परन्तु हाथों से पकड़ी न जा सकें, जैसे प्रकाश धूप और छाया आदि ३। सूक्ष्म-स्थूल-जो देखने में न आवें ऐसी सूक्ष्म हों, परन्तु भारी कार्य कर सकें, जैसे हवा शब्द इत्यादि ४। सूक्ष्म-जो पुद्गल-पिंड इतने सूक्ष्म हैं कि वे किसी भी इन्द्रिय से ग्रहण न हो सकें, जैसे कर्मणवर्गणाएँ ५। सूक्ष्म-सूक्ष्म-दो परमाणुओं का स्कंध या एक परमाणु ६। इन छह भेदों में कर्मपुद्गलपिंड सूक्ष्म है, अतः वह इन्द्रिय-गम्य नहीं हो सकता।

प्रश्न—कर्म की सत्ता तब कैसे जानी जाती है ?

उत्तर—उसके कार्य से।

प्रश्न—इन कर्मों का कार्य क्या है ?

उत्तर—आत्मा के ज्ञानादिक गुणों का घात करना, केवलज्ञान की ज्ञानावरण, अनन्त दर्शन की दर्शनावरण, अव्याबाध की वेदनीय, क्षાયिक सम्यक्त्व की मोहनीय, अवगाहनत्व का आयु, सूक्ष्मत्व गुण का नाम, अगुरुलघु गुण का गोत्र और अनन्तवीर्य का अन्तराय घात करता है। तथा एक जीव सुखी है और एक जीव दुःखी है, एक विद्वान् है एक

પાણી, દૂધ, ઘી વિગેરે ૨, સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ-જે દેખવામાં મોટી હોય છે પરંતુ હાથોથી પકડી શકાતી નથી, જેમ પ્રકાશ, ધૂપ, છાયા આદિ ૩, સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ-જે દેખવામાં ન આવે એવી સૂક્ષ્મ હોય પણ ભારી કામ કરી શકે, જેમ હવા, શબ્દ ઇત્યાદિ ૪, સૂક્ષ્મ-જે પુદ્ગલપિંડ એટલા સૂક્ષ્મ છે કે તે કોઈપણ ઇન્દ્રિયથી ંહણ થઈ ન શકે, જેમ કાર્મણવર્ગણાઓ ૫, સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ-જે પરમાણુઓના સ્કંધ અને એક પરમાણુ ૬, આ છ ભેદોમાં કર્મપુદ્ગલપિંડ સૂક્ષ્મ છે, માટે તે ઇન્દ્રિયગમ્ય થઈ શકતા નથી.

પ્રશ્ન—કર્મની સત્તા ત્યારે કેવી રીતે જાણી શકાય ?

ઉત્તર—તેના કાર્યથી.

પ્રશ્ન—તે કર્મોનું કાર્ય શું છે ?

ઉત્તર—આત્માના જ્ઞાનાદિ ગુણોનો ઘાત કરવો, કેવળજ્ઞાનનો જ્ઞાનાવરણ, અનન્તદર્શનનો દર્શનાવરણ, અવ્યાબાધનો વેદનીય, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વનો મોહનીય, અવગાહ તત્ત્વનો આયુ, સૂક્ષ્મત્વ ગુણનો નામ, અગુરુલઘુગુણનો ગોત્ર અને અનન્ત વીર્યનો અન્તરાય ઘાત કરે છે. તેથી એક જીવ સુખી છે અને એક જીવ દુઃખી છે, એક વિદ્વાન છે એક મૂર્ખ છે, એક સખલ છે એક કમજોર છે, એક શત

મૂર્ખ છે, એક સબલ છે એક કમજોર છે, એક રાત્રિનિ સુખ ચેન મેં મસ્ત બના રહતા છે એક દર દર કા મિશ્વરી બના હુઆ છે, યહ સબ કિસ કા કાર્ય છે ? કહના પડેગા કર્મ કા । યહ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મરૂપ પર્યાય કાર્મણવર્ગણાઓં કી હુઈ છે । કાર્મણવર્ગણા પુદ્ગલ દ્રવ્ય છે, જો જીવ કે રાગાદિક ભાવોં કે નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાદિ પર્યાયરૂપ પરિણત હો જાતા છે, જિસ પ્રકાર મૃતિકા મેં નિમિત્તાધાન ઘટપર્યાય હુઆ કરતી છે । ઇસ પ્રકાર કી પર્યાય ડન કાર્મણવર્ગણાઓં મેં અનાદિકાલીન છે- નવીન નહીં છે, ઓર યહ જીવાત્મા ખી ડન કર્મપર્યાયોં સે અનાદિકાલ સે હી પરતન્ત્ર હો રહા છે । ઇસકી ઇસ પરતન્ત્રતારૂપ બંધદશા કા કોઈ નિશ્ચિત સમય નહીં છે, અતઃ અનાદિકાલ સે યહ કર્મોં કે જાલ મેં ફંસા છે, એસા કહા જાતા છે । અનાદિતા ઓર અનંતતા એવં સાદિતા કા સંબંધ છે સિર્ફ અનંતતા કા હી નહીં ।

ચારિત્રારાધન કરને સે આત્મા કે કર્મોં કા નાશ હોતા છે, ઇસકા અભિ- પ્રાય યહી છે કિ-આત્મા કે કર્મપર્યાયોં કા નાશ હો જાતા છે, ક્યોં કિ કર્મદ્રવ્ય કા કર્મી ખી નાશ નહીં હોતા । કર્મપર્યાય કા હી નાશ હોતા છે । જિસ કાર્મણ દ્રવ્ય મેં પહિલે કષાયાદિક કે નિમિત્ત સે કર્મરૂપ પર્યાયોં

દિવસ સુખચેનમાં મસ્ત બન્યો રહે છે, એક ઘરઘરનો લિખારી બનેલ છે. આ બધા કેના કાર્યો છે ? કહેવું પડશે કે કર્મના. આ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મરૂપ પર્યાય કાર્મણ વર્ગણાઓની થયેલી છે. કાર્મણવર્ગણા તે પુદ્ગલદ્રવ્ય છે જે જીવના રાગાદિક ભાવોના નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાદિપર્યાયરૂપ પરિણત થાય છે. જે પ્રકારે મૃત્તિકામાં નિમિત્તાધાન ઘટપર્યાય થાય છે તે પ્રકારની પર્યાય તે કાર્મણ વર્ગણાઓમાં અનાદિ કાલીન છે, નવીન છે નહિ. અને આ જીવાત્મા પણ તે કર્મપર્યાયોથી અનાદિ કાળથી જ પરતંત્ર થઈ રહેલ છે. તેની આ પરતંત્રતારૂપ બંધદશાનો કોઈ નિશ્ચિત સમય નથી, માટે અનાદિ કાળથી આ કર્મોની જાળમાં ફસેલ છે એવું કહેવામાં આવે છે. અનાદિતા અને અનંતતા એવં સાદિતાનો સંબંધ છે ફક્ત અનંતતાનો જ નહિ.

ચારિત્રારાધન કરવાથી આત્માના કર્મોનો નાશ થાય છે. તેનો અભિપ્રાય એ છે કે આત્માના કર્મપર્યાયોનો નાશ થાય છે, કારણ કે કર્મદ્રવ્યનો કોઈ વખત નાશ થતો નથી, કર્મપર્યાયોનો જ નાશ થાય છે. કાર્મણ દ્રવ્યમાં પહેલાં કષાયાદિકના નિમિત્તથી કર્મરૂપ પર્યાયો બની હતી, તે નિમિત્ત દૂર થવાથી તે દ્રવ્ય અકર્મરૂપ પર્યાયથી સ્થિત થાય છે, કાર્મણવર્ગણારૂપ દ્રવ્ય સામાન્ય છે. તેમાં



હોતી થીં, ઉસ નિમિત્તકે હટ જાને પર વહી દ્રવ્ય અકર્મરૂપ પર્યાય સે સ્થિત હો જાતા હૈ । કાર્મણવર્ગણારૂપ દ્રવ્ય સામાન્ય હૈ, ઉસ મેં જ્ઞાનાવરણાદિરૂપ કર્મપ્રકાર નહીં હૈ । જબ વહ કર્મરૂપ બનતા હૈ, તબ ઉસમેં જ્ઞાનાવરણાદિ પ્રકાર હોતે હૈં । જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મપ્રકાર કી સ્થિતિ જબ પૂર્ણ હો જાતી હૈ, અથવા તપ સંયમ કે દ્વારા જબ ઉસકા વિનાશ કિયા જાતા હૈ તબ વહ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતા હૈ, ઇસ કા ભાવ યહી હૈ કિ વહ કાર્મણ દ્રવ્ય ઉનરે પર્યાયોં સે રહિત હોકર અપને મૂલ સ્વભાવ સે વહાં સ્થિત રહતા હૈ, દ્રવ્ય કા કમી ભી વિનાશ નહીં હોતા । સુવર્ણ અથવા મણિ સે જિસ પ્રકાર ઉનકે મલ કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ, ઉસી પ્રકાર આત્મા સે ભી કર્મપર્યાય કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ । એસા હોને પર જીવ કી આત્યન્તિક શુદ્ધિ હો જાતી હૈ । સકલકર્મપર્યાય કે વિનાશ હોને પર મૂલ દ્રવ્ય કા વિનાશ નહીં હોતા હૈ । જિસ પ્રકાર ઘટપર્યાય કે વિનાશ હોને પર મૃત્તિકા અઘટ પર્યાય સે સ્થિત રહતી હૈ, ઇસી પ્રકાર સકલપર્યાય કે વિનાશ હોને પર ભી કર્મદ્રવ્ય અકર્મપર્યાય સે આક્રાન્ત હો જાતા હૈ, દ્રવ્ય અનન્ત પર્યાયવાલા હૈ । જિસ પ્રકાર કાર્મણ દ્રવ્ય કી પર્યાય કર્મ હૈ ઉસી પ્રકાર અકર્મ ભી ઉસકી એક પર્યાય હૈં । વિવક્ષિત જીવ કી અપેક્ષા સે હી ઉસમેં કર્મ ઓર અકર્મ પર્યાય રહતી હૈ । સંસારી

જ્ઞાનાવરણાદિરૂપ કર્મપ્રકાર નથી. ન્યારે તે કર્મરૂપ બને છે ત્યારે તેમાં જ્ઞાનાવરણાદિ પ્રકાર થાય છે. જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મપ્રકારની સ્થિતિ ન્યારે પૂર્ણ થાય છે, અથવા તપ સંયમ દ્વારા ન્યારે તેનો વિનાશ કરવામાં આવે છે ત્યારે તે આત્માથી પૃથક્ થાય છે. તેનો ભાવ એ છે કે તે કાર્મણ દ્રવ્ય તે તે પર્યાયથી રહિત થઈને પોતાના મૂલ સ્વભાવમાં ત્યાં સ્થિત રહે છે. દ્રવ્યનો કોઈ વખત પણ વિનાશ થતો નથી. સુવર્ણ અથવા મણિથી જે પ્રકારે તેના મલની નિવૃત્તિ થાય છે તે પ્રકારે આત્માથી પણ કર્મપર્યાયની નિવૃત્તિ થાય છે. એવું બનવાથી જીવની આત્યન્તિક શુદ્ધિ થાય છે. સકલ કર્મપર્યાયનો વિનાશ થવાથી મૂલ દ્રવ્યનો વિનાશ થતો નથી. જે પ્રકારે ઘટપર્યાયનો વિનાશ થવાથી મૃત્તિકા અઘટપર્યાયથી સ્થિત રહે છે તે પ્રકારે સકલ પર્યાયનો વિનાશ થવાથી કર્મ દ્રવ્ય અકર્મપર્યાયથી આક્રાન્ત થાય છે. દ્રવ્ય અનન્ત પર્યાયવાલા છે.

જે પ્રકારે કાર્મણ દ્રવ્યની પર્યાય કર્મ છે તે પ્રકારે અકર્મપર્યાય પણ તેની એક પર્યાય છે. વિવક્ષિત જીવની અપેક્ષાથી જ તેમાં કર્મ અને અકર્મપર્યાય



જીવોં મેં હસ વર્ગણા કા કર્મરૂપ પર્યાય સે પરિણમન હૈ, ઓર શુદ્ધ આત્મદ્રવ્ય કી અપેક્ષા અકર્મપર્યાયરૂપસે ।

જિસ પ્રકાર સુવર્ણ સે ઉસકે કિટ્કાદિરૂપ મૈલ કા સંબંધ પુટપાકાદિ દ્વારા દૂર હોતા હુઆ દેખા જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર આત્મા મેં અનાદિકાલ સે સંબંધિત હન કર્મોંકા વિયોગ મી તપ સંયમ રૂપ સાધન દ્વારા દૂર હો જાતા હૈ । હસ મૈલ કે પૃથક્ હોને પર શુદ્ધ સુવર્ણ કી તરહ યહ આત્મા મી શુદ્ધ હોકર અપની અસલી સ્વરૂપ કો પાતા હૈ ।

સંયમી મુનિ કે લિયે ઉપદેશ દેતે હૈ—‘ઈણમેવ’ ઇત્યાદિ । કર્મોં કો આત્મા સે પૃથક્ કરનેવાલે ચારિત્ર કી જો આરાધના કરતે હૈં વે ધ્રુવચારી કહલાતે હૈં । અથવા ધ્રુવ નામ મોક્ષ કા હૈ । કાર્ય ઓર કારણ મેં અભેદ સંબંધ હોને સે મોક્ષ કે કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, તપ, જ્ઞાન ઓર ક્રિયા આદિ મી ધ્રુવ હૈં । હનકો મી પાલન કરને કે સ્વભાવવાલે ધ્રુવચારી હૈં । જો મુનિ ધ્રુવચારી હૈં વે અસંયમ જીવન કી, અથવા પૂર્વ મેં ભોગે હુણ વિષયાદિક ભોગોં કી કમી મી ઇચ્છા નહીં કરતે હૈં । જ્ઞ-પરિજ્ઞા સે સંસારકા સ્વરૂપ અથવા હસ બાત કો જાન કર કિ—‘અસંયમ જીવન ત્ર્યતીત કરને સે જીવ કો હસ સંસાર મેં વારંવાર જન્મ ઓર મરણ કે ચક્કર મેં

રહે છે. સંસારી જીવોમાં આ વર્ગણના કર્મરૂપ પર્યાયથી પરિણમન છે, અને શુદ્ધ આત્મદ્રવ્યની અપેક્ષા અકર્મપર્યાય રૂપથી.

જેવી રીતે સુવર્ણથી તેના કિટ્કાદિરૂપ મેલને સંબંધ પુટપાકાદિદ્વારા દૂર થતો હોવામાં આવે છે તેવી રીતે આત્મામાં અનાદિ કાળથી સંબંધિત આ કર્મોનાં વિયોગ પણ તપસંયમરૂપ સાધનદ્વારા દૂર થાય છે, આ મેલના પૃથક્ થવાથી શુદ્ધ સુવર્ણની માફક આ આત્મા પણ શુદ્ધ બની પોતાના અસલ સ્વરૂપને મેળવે છે.

સંયમી મુનિ માટે ઉપદેશ આપે છે—‘ઈણમેવ’ ઇત્યાદિ. કર્મોને આત્માથી પૃથક્ભૂત કરવાવાળા ચારિત્રની જે આરાધના કરે છે તે ધ્રુવચારી કહેવાય છે. અને ધ્રુવ નામ મોક્ષનું છે. કાર્ય અને કારણમાં અભેદ સંબંધ હોવાથી મોક્ષના કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન તપ જ્ઞાન અને ક્રિયા આદિ પણ ધ્રુવ છે. તેનું પણ પાલન કરવાવાળા સ્વભાવી ધ્રુવચારી છે. જે મુનિ ધ્રુવચારી છે તે અસંયમ જીવનની અથવા પૂર્વમાં ભોગવેલા વિષયાદિક ભોગોની કદી પણ ઇચ્છા કરતા નથી. જ્ઞ પરિજ્ઞાથી સંસારનું સ્વરૂપ અથવા તે વાતને બાણીને પણ અસંયમ જીવન ત્ર્યતીત કરવાથી જીવને આ સંસારમાં વારંવાર જન્મ અને મરણના ચક્કરમાં પડવું પડે છે.

યદ્વા—‘સહક્રમણે’ ઇતિચ્છાયા, તત્ર સહક્રમ્યતે=પ્રાપ્યતે મોક્ષોડનેનેતિ સહક્રમણ=જ્ઞાનાદિત્રિકં, તત્રૈવ ચરેત્=તત્પરો ભવેત્, આત્મહિતાર્થિભિઃ સંયમે દૃઢૈ-પઢના પઢતા હૈ, ઇસ લિયે તપ, સંયમ ઓર નિયમોં કા પાલન સર્વ શ્રેયસ્કર હૈ, ઇનકા પાલન કમી મી વિફલ નહીં હો સકતા’ ઇસ પ્રકાર જિસકા મન ડનકે પાલન કરને મેં અડોલ ઓર અંકપ હૈ, મનકી લગન સે જો તપ સંયમ આદિ કે પાલન કરને મેં દત્તાવધાન હૈ, તથા જિસ કે હૃદયમેં જિનેન્દ્રવચનોં કે પ્રતિ દૃઢ આસ્થા હૈ, જો યે અચ્છી તરહ સે સમજતા હૈ કિ—‘મગવાન્ વીતરાગ પ્રભુ કા બનાયા હુઆ યહ માર્ગ હૈ કિસી છદ્મસ્થ કા નહીં, સંયમ કી આરાધના સે કર્મોંકી નિર્જરા હોતી હૈ, અતઃ મુજે ઇસકા પરિપાલન સમ્યક્ રીતિ સે હી કરના ચાહિયે અન્યથા અનન્ત સંસાર કા પથિક બનના પડેગા, યદિ મુજે અપને ગૃહીત માર્ગ સે ચ્યુત કરને કે લિયે પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ મી આડે આવેં તો મુજે ડનકી મી કુછ પર્વાહ નહીં હૈ, મેં અંકપ બન ડનકા મી સામના કરને કે લિયે તૈયાર હૂં’ ઇસ પ્રકાર અશંકિતમન ઓર દૃઢપ્રતિજ્ઞ હોકર અપને ગૃહીત માર્ગકો સંયમી આરાધના કરે ।

સૂત્ર મેં “સંક્રમણે” ઇસ શબ્દ કી છાયા ટીકાકાર ને ઁક તો “અશંકમનાઃ” યદ્ કી હૈ જિસકા અર્થ ‘નિઃશંકિતમન હો કર તપ સંયમ કા પાલન કરે’ યદ્ હોતા હૈ । ડૂસરી “સંક્રમણે” કી છાયા

માટે તપ—સંયમ અને નિયમોંનું પાલન સર્વ શ્રેયસ્કર છે. તેનું પાલન કોઈ વખત પણ વિક્ષણ થતું નથી. આ પ્રકારથી જેનું મન તેના પાળવામાં મક્કમ અને અકંપ છે, મનની લગનથી જે તપ સંયમ આદિના પાલન કરવામાં દત્તાવધાન છે, તથા જેના હૃદયમાં જિનેન્દ્રવચનો પ્રતિ દૃઢ આસ્થા છે, જે સારી રીતે જાણે છે કે ભગવાન વીતરાગ પ્રભુનો બનાવેલો આ માર્ગ છે, કોઈ છદ્મસ્થનો નથી. સંયમની આરાધનાથી કર્મોની નિર્જરા થાય છે, માટે મારે તેનું પરિપાલન સમ્યક્ રીતિથી જ કરવું જોઈએ, અન્યથા અનંત સંસારનો પથિક બનવો પડશે, જે મારે પોતાના ગૃહીત માર્ગથી ચ્યુત કરવા માટે પરીષદ અને ઉપસર્ગ પણ આડા આવે તો મને તેની પણ કોઈ પરવાહ નથી. હું અકંપ બની તેનો પણ સામનો કરવા તૈયાર છું, તેવા પ્રકારે અશંકિતમન અને દૃઢપ્રતિજ્ઞ બનીને પોતાના ગૃહીત માર્ગની સંયમી આરાધના કરે.

સૂત્રમાં “સંક્રમણે” આ શબ્દની ટીકાકારે એક તો “અશંકમનાઃ” છાયા કરી છે જેનો અર્થ ‘નિઃશંકિતમન થઈ, તપ સંયમનું પાલન કરે’ તેમ થાય છે.

ર્થાવ્યમ્ । વર્ધક્યે પરત્પરારિ વા ધર્મ કરિષ્યામીતિ ચેતસિ ન ચિન્તયેદિત્યર્થઃ, યતઃ ‘કાલસ્ય’ કાલઃ=મૃત્યુસ્તસ્ય, અનાગમઃ=અપ્રાપ્તિર્નાસ્તિ=ન વર્તત, યતઃ કોઽપિ ક્ષણો ન તાદૃગ્ યસ્મિન્મૃત્યોરાગમનસમ્ભવો નાસ્તિ, તસ્માદહિંસાદિષુ સાવધાનેન ક્ષણ-લવમુહૂર્તાદિસમયેષ્વપ્રતિબન્ધવિહારિણાઽઽત્મૌપમ્યેન ભવિતવ્યમિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ. ૦૪ ॥

“સંક્રમણે” એસી બી હતી છે । જિસકે દ્વારા મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો હતી છે ઉસકા નામ સંક્રમણ છે । વહ સમ્યગ્દર્શનાદિક રત્નત્રય છે । इनके द्वारा ही जीव मुक्ति का लाभ करता है, अतः सावधान मन हो कर इनके परिपालन करने में संयमी मुनि को तत्पर रहना चाहिये, यह सूत्रकार का आदेश वचन है । ‘पर परार जब समय आवेगा तब धर्माचरण करूंगा, अभी समय नहीं है’ इस प्रकार का धर्माचरण के लिये बहाना नहीं करना चाहिये । ऐसा बहाना आत्महितार्थी के लिये उचित नहीं है । पहले कहा गया है कि-“ नास्ति कालस्यानागमः ” ऐसा कोई भी समय नहीं है कि जिसमें मृत्युके आने की संभावना न हो, अतः यह समझ कर कि-“काल पीछे लगा हुआ है, कब यहां से जाना पड़ेगा ” धर्माचरण के लिये प्रमादी न बनें । जो भी जितना भी समय मिले-धर्म की आराधना करता रहे । संयमी मुनि अपने गृहीत अहिंसादिव्रतों में सावधान होकर एक क्षण एक लव एक मुहूर्त भी प्रतिबन्धविहारी न बने, अर्थात् अप्रतिबन्धविहारी होकर विचरे ॥ सू. ० ४ ॥

જેના દ્વારા જીવને મુક્તિની પ્રાપ્તિ થાય છે. તેનું નામ સંક્રમણ છે. તે સમ્ય-ગ્દર્શનાદિક રત્નત્રય છે. તેના દ્વારા જ જીવ મુક્તિનો લાભ કરે છે માટે સાવધાન મન રાખીને તેનું પરિપાલન કરવામાં સંયમીમુનીએ તત્પર રહેવું જોઈએ, એ સૂત્ર-કારનું આદેશ વચન છે. ‘આવતી કે તેની આગલની શાલ જ્યારે સમય આવશે ત્યારે ધર્મ કરીશ, હમણા સમય નથી’ આવા પ્રકારનું ધર્માચરણ માટે બહાનું કરવું જોઈએ નહિ. એવું બહાનું આત્મહિતાર્થી માટે ઉચિત નથી. પહેલાં કહેવામાં આવેલ છે કે-“ નાસ્તિ કાલસ્યાનાગમઃ ” એવો કોઈ પણ સમય નથી જેમાં મૃત્યુને આવવાની સંભાવના ન હોય, માટે એવું સમજીને કે “ કાળ પછવાડે જ લાગેલો છે, ક્યારે અહીંથી જવું પડશે ” ધર્માચરણ માટે પ્રમાદી ન બને. જેટલો પણ વખત મળે તેટલો વખત ધર્મની આરાધના કરતો જ રહે.

સંયમી મુનિ પોતાના ગૃહીત અહિંસાદિ વ્રતોમાં સાવધાન બનીને એક ક્ષણ એક લવ એક મુહૂર્ત પણ પ્રતિબન્ધવિહારી ન બને, અર્થાત્ અપ્રતિબન્ધ-વિહારી બનીને વિચરે ॥ સૂ. ૦ ૪ ॥



उक्तं संयमिजीवनस्वरूपम्, अथासंयमिजीवनस्वरूपमाह—‘सव्वे पाणा’ इत्यादि ।  
मूलम्—सव्वे पाणा पियाउया सुहसाया दुक्खपडिकूला अप्पि-  
यवहा पियजीवणा जीविउकामा सव्वेसिं जीवियं पियं, तं परि-  
गिज्झ दुपयं चउप्पयं अभिजुंजियाणं संसिंचियाणं तिविहेण  
जाऽवि से तत्थ मत्ता भवइ अप्पा वा बहुया वा से तत्थ गट्ठिण  
चिट्ठइ भोयणाए ॥ सू० ५ ॥

छाया—सर्वे प्राणाः प्रियायुषः सुखास्वादाः दुःखप्रतिकूला अप्रियवधाः प्रियजीवना जीवितुकामाः सर्वेषां जीवितं प्रियम्, तत्परिग्रहं द्विपदं चतुष्पदमभियुज्य खलु संसिच्य खलु त्रिविधेन याऽपि तस्य तत्र मात्रा भवत्यल्पा वा बहुका वा स तत्र गृह्यस्तिष्ठति भोजनाय ॥ सू० ५ ॥

टीका—‘ सर्वे ’ इत्यादि, सर्वे=निखिलाः, प्राणाः=प्राणिनः संसारिणः, प्रिया-  
युषः=प्रियजीविता भवन्ति, यो जीवो यत्रोच्चनीचयोर्नौ जन्म गृह्णाति तत्रैव रमते  
जीवितुमिच्छति च विषकृमिन्यायेन; उक्तञ्च—

“ अमेज्जमज्झे कीडस्स, सुरिंदस्स सुरालए ।

समाणा जीवियाकंवा, तेसिं मच्चुभयं समं ॥ ” इति ।

छाया-“अमेध्यमध्ये कीटस्य, सुरेन्द्रस्य सुरालये ।

समाना जीविताकाङ्क्षा, तयोर्मृत्युभयं समम् ॥ ”

संयमजीवन का स्वरूप प्रकट किया, अब असंयमजीवन का स्वरूप प्रकट करते हैं—‘सब्बे पाणा पियाउया’ इत्यादि।

समस्त संसारी जीवों को जीवन प्रिय है, कोई भी जीव ऐसा नहीं है, जिसे अपने जीवन से ममता न हो, विष्ठा का कीड़ा भी अधिक से अधिक जीने की इच्छा रखता है। जो जीव जिस पर्याय में वर्तमान है उसे वही पर्याय प्रिय है। विष्ठा के कीड़े की ममता को देखिये—वह यदि उस स्थान से अलग किया जाता है तो वह वहां से अलग होकर

સંયમ જીવનનું સ્વરૂપ પ્રકટ કર્યું, હવે અસંયમ જીવનનું સ્વરૂપ પ્રગટ કરે છે-- 'સર્વે પાણા પિયાડયા' ઇત્યાદિ.

સમસ્ત સંસારી જીવને જીવન પ્રિય છે, કોઈ પણ જીવે એવો નથી જેને પોતાના જીવનથી મમતા ન હોય. વિદ્યાનો કીડો પણ વધારેમાં વધારે જીવવાની ઇચ્છા રાખે છે. જે જીવ જે પર્યાયમાં વર્તમાન છે તેને તે જ પર્યાય પ્રિય છે. વિદ્યાના કીડાની મમતાને જુઓ—તે કદાચ તે સ્થાનથી અલગ કરવામાં આવે તો

भी वहीं पर फिर से प्रविष्ट हो जाता है । वह अपने स्थान को जरा भी नहीं छोड़ना चाहता । इसका कारण सिर्फ एक यही है कि-उसे उसी अवस्था में रह कर अपना जीवन व्यतीत करना इष्ट है । विशाल वैभव के भोक्ता को जिस प्रकार जीने की इच्छा रहा करती है, तथा जिस प्रकार उसे अपना जीवन सबसे अधिक प्रिय है उसी प्रकार समस्त संसारी जीवों की यही हालत है-चाहे वे संज्ञी हों चाहे असंज्ञी । कोई भी प्राणी ऐसा नहीं मिलेगा-जिसे अपने जीवन में अधिकसे अधिक ममता न हो । एक भिखारी को जितना अपने जीवन से मोह है उतना ही मोह चक्रवर्ती को भी अपने जीवन से है । कोई अपना अनिष्ट नहीं चाहता । इस बात की पुष्टि करते हुए टीकाकार कहते हैं-“यो जीवो यत्रोच्चनीचयोर्नौ जन्म गृह्णाति तत्रैव रमते-जीवितुमिच्छति च विष कृमिन्यायेन ” जो जीव जिस ऊँच नीच योनिमें जन्म धारण करता है उसे वही योनि प्रिय बन जाती है-वहीं पर वह आनंद मानता है । जैसे विषके कीड़े को विषमें ही मजा आता है बात भी सत्य है कहा भी है—

“ अमेज्जमज्झे कीडस्स, सुरिदस्स सुरालए ।

समाणा जीवियाकंखा, तेसिं मच्चुभयं समं ” ॥ १ ॥

પણ તે ત્યાંથી અલગ થઈને પણ ત્યાં જ ફરીથી પ્રવિષ્ટ થાય છે, તે પોતાના સ્થાનને જરા પણ છોડવા ચાહતો નથી. તેનું કારણ ફક્ત એક એ જ છે કે તેની તે અવસ્થામાં રહીને પોતાનું જીવન વ્યતીત કરવું ઇષ્ટ છે. વિશાળ વૈભવના ભોક્તાને જે પ્રકારે જીવવાની ઇચ્છા રહ્યા કરે છે તથા જે પ્રકારે તેને પોતાનું જીવન અધાથી અધિક પ્રિય છે, તે પ્રકારે સમસ્ત સંસારી જીવોની તે જ હાલત છે, ભલે તે સંજ્ઞી હોય કે અસંજ્ઞી. કોઈ પણ પ્રાણી એવો નહિ મળે જેને પોતાના જીવનમાં અધિકથી અધિક મમતા ન હોય. એક ભિખારીને જેટલો પોતાનો જીવ વહાલો છે તેટલો જીવનનો મોહ ચક્રવર્તીને પણ હોય છે. કોઈ પોતાનું અનિષ્ટ ચાહતું નથી. આ વાતની પુષ્ટિ કરતાં ટીકાકાર કહે છે કે—

“યો જીવો યત્રોચ્ચનીચયોર્નો જન્મ ગૃહ્ણાતિ તત્રૈવ રમતે જીવિતુમિચ્છતિ ચ વિષકૃમિ-ન્યાયેન ” જે જીવ જે ઉંચ નીચ યોનિમાં જન્મ ધારણ કરે છે તેની તે જ યોનિ પ્રિય બની બસ છે, ત્યાં જ તે આનંદ માને છે, જેમ વિષના કીડાને વિષમાં જ મજા આવે છે, વાત પણ સત્ય છે. કહ્યું પણ છે.

“ અમેજ્જમજ્જે કીડસ્સ, સુરિદસ્સ સુરાલપ ।

સમાણા જીવિયાકંખા, તેસિં મચ્ચુભયં સમં ” ॥ ૧ ॥



ધ્રુવનત્રયાધિપત્યપ્રાપ્ત્યપેક્ષયાપિ સ્વાયુષ્કસ્યેષ્ટતરત્વાત્, અપિ ચ સુખા-  
સ્વાદાઃ=સુખામિલાષિણઃ, અમૃતપાનાદપિ સ્વસુખાનુભવસ્ય શ્રેષ્ઠત્વાત્, દુઃગ્વપ્રતિ-  
કૂલાઃ=દુઃસ્વાનમિલાષુકાઃ, વિષમક્ષણાદપિ દુઃસ્વં પ્રત્યધિકદ્વેષવત્ત્વાત્, કિન્ન-અપ્રિ-  
યવધાઃ=અપ્રિયઃ=અનિષ્ટઃ-વધો=મરણં યેષાં તે તથા । પ્રિયજીવનાઃ=પ્રિયં જીવનં  
યેષાં તે તથા, અનિશં તદર્થં પ્રવૃત્તત્વાત્, અત એવ જીવિતુકામાઃ જીવિતું કામઃ=  
સ્પૃહા યેષાં તે જીવિતુકામાઃ, વર્ષશતાયુષ્કસ્યાન્તિમાવસ્થાયામપિ જીવિતેચ્છયા  
નાનાવિધમણિમન્ત્રયન્ત્રૌષધાદ્યર્થં પ્રવૃત્તિર્દર્શનાત્ ।

વિષ્ણુ કે કીડેકી ઓર સ્વર્ગ કે અપાર વૈભવ કે ખોત્તા ઇન્દ્રકી ખી  
જીને કી ઇચ્છા ઓર મરણકા ભય સમાન હૈ, કોઈ નહીં ચાહતા કિ હમેં  
કરાલકાલ કે ગાલકા કવલ ( ગ્રાસ ) બનના પડે । ક્યોં કિ ત્રીન લોક  
કે અધિપતિ બનને કી અપેક્ષા અપના જીવન અધિક પ્રિય હૈ ।

લોક મેં અમૃત કા પાન કરના સબસે અધિક સુખકારી સમજા  
જાતા હૈ, પરંતુ લોક ઇસસે ખી અધિક સુખ અપને સુખી હોને મેં માનતે  
હૈ । અપને કો સુખી બનાને કે લિયે લોગ હર એક પ્રકાર કે સાધનોં કો  
જુટાને મેં કસર નહીં કરતે । કિસી સે ખી યદિ યહ પ્રશ્ન કિયા જાય  
કિ-તુમ અપને જીવન મેં ક્યા ચાહતે હો ? તો શીઘ્ર હી વહાં સે યહી ઉત્તર  
મિલેગા કિ-હમ અપને જીવન મેં શાંતિ ઓર સુખ કો ચાહતે હૈ । “ દુઃસ્વ-  
પ્રતિકૂલાઃ ” જગત મેં કોઈ ખી પ્રાણી દુઃસ્વકો નહીં ચાહતા હૈ, પ્રત્યેક  
પ્રાણી દુઃસ્વકો પ્રતિકૂલ માનતા હૈ, વિષ મક્ષણ કર લેગા કિન્તુ દુઃસ્વ

વિષ્ણુના કીડાની અને સ્વર્ગના અપાર વૈભવના લોકતા ઇન્દ્રની બન્નેની જીવવાની  
ઇચ્છા અને મરણનું ભય બન્ને સમાન છે, કોઈ ચાહતું નથી કે હું કરાલકાલના  
ગાલનો ગ્રાસ બનું, કારણ કે ત્રણ લોકના અધિપતિ બનવાની અપેક્ષા પોતાનું  
જીવન અધિક પ્રિય છે.

લોકમાં અમૃતનું પાન કરવું તેને બધાથી અધિક સુખકારી માનવામાં  
આવે છે, પરંતુ લોક તેનાથી પણ અધિક સુખ પોતાને સુખી હોવામાં માને છે.  
પોતાને સુખી બનાવવા માટે લોક દરેક પ્રકારનાં સાધનોને અજમાવવામાં કસર  
કરતાં નથી. કોઈથી એ પ્રશ્ન કરવામાં આવે કે-તમે તમારા જીવનમાં શું ચાહો  
છો, તો ત્યાંથી તરત જ એવો ઉત્તર મળશે કે-અમે અમારા જીવનમાં શાંતિ  
અને સુખને ચાહીએ છીએ. “ દુઃસ્વપ્રતિકૂલાઃ ” પ્રત્યેક પ્રાણી દુઃખને ચાહતું  
નથી, પ્રત્યેક પ્રાણી દુઃખને પ્રતિકૂલ માને છે, એરનું પાન કરી લેશે પણ દુઃખ



ભોગના નહીં ચાહતા। “અપ્રિયવધાઃ પ્રિયજીવનાઃ” સંસાર મેં જીવોં કો મરણ અપ્રિય હોતા હૈ ઓર જીવન પ્રિય હોતા હૈ। જીવોં કો અપના જીવન સર્વ પ્રકાર સે પ્રિય હૈ। ચાહે જિસ કિસી મી ઉપાય સે યે અપને જીવનકે સંરક્ષણ કરનેમેં હી ભાવનાશીલ રહતે હૈં। ઉસ સમય ન્યાય યા અન્યાય, ધર્મ યા અધર્મ આદિ કી इन्हें થોડી સી મી ચિન્તા નહીં હોતી। ઇસકા મી કારણ યહ હૈ કિ યે “જીવિતુકામાઃ” હૈં। શત વર્ષ કી આયુવાલે કો મી અન્તિમ ક્ષણતક જીવન કી इच्छा બની હી રહતી હૈ। ચાહે ધની હો યા નિર્ધન હો, રાજા હો યા રંક હો, વિદ્વાન હો યા મૂર્ખ હો, દીર્ઘાયુષ્ક હો યા અલ્પાયુષ્ક હો કોઈ મી ક્યોં ન હો કોઈ યહ નહીં ચાહતા કિ મેરી મૃત્યુ હો જાય, અર્થાત્ મૈં મરજાઁં। સબ હી અધિક સે અધિક જીને કે અભિલાષી રહા કરતે હૈં। થોડા સા મી શારીરિક કષ્ટ આને પર “કહીં મૈં મર ન જાઁં” ઇસ ય્યાલ સે અનેક પ્રકાર કે મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર ઓર ઔષધિ વગૈરહ કે ઉપચાર મેં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરને મેં લગ જાતે હૈં।

યહ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમી જીવોં કી અપેક્ષા સે હી કિયા ગયા સમજના ચાહિયે, ક્યોં કિ ઉન્હેં હી અપને પ્રાણ વગૈરહ પ્રિય હોતે હૈં। વેહી અપની જીવનયાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે યદ્રા તદ્રા પ્રવૃત્તિ કિયા

ભોગવધું ચાહતા નથી. “અપ્રિયવધાઃ પ્રિયજીવનાઃ” સંસારમાં જીવેને મરણ અપ્રિય લાગે છે. જીવેને પોતાનું જીવન બધા પ્રકારે પ્રિય છે, ભલે કોઈ પણ કોઈ ઉપાયથી પોતાના જીવનનું સંરક્ષણ કરવામાં જ ભાવનાશીલ રહે છે. તે સમય ન્યાય અન્યાય ધર્મ અધર્મ આદિની તેને જરા પણ ચિન્તા થતી નથી, તેનું પણ કારણ એ છે કે તે “જીવિતુકામાઃ” છે, સો વર્ષની આયુષ્યવાળાને પણ અન્તિમ ક્ષણ સુધી જીવનની ઇચ્છા બની રહે છે, ભલે તવંગર હોય અગર નિર્ધન હોય, રાજા હોય કે રંક હોય, વિદ્વાન હોય, કે મૂર્ખ હોય, દીર્ઘાયુષ્ક હોય કે અલ્પાયુષ્ક હોય કોઈ પણ કેમ ન હોય પણ કોઈ એ નથી ચાહતા કે માંડે મોત થાય, અર્થાત્ હું મરી જાઉં, બધા જ અધિકથી અધિક જીવવાના અભિલાષી રહ્યા કરે છે. થોડુંક શારીરિક કષ્ટ આવવાથી “કહાય હું મરી ન જાઉં” એવાં ખ્યાલથી અનેક પ્રકારના મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર અને ઔષધિ વિગેરેના ઉપચારમાં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરવામાં લાગી જાય છે.

આ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમી જીવેની અપેક્ષાથી જ કરેલ સમજવાનું છે, કારણ કે તેને જ પોતાનો પ્રાણ વિગેરે પ્રિય હોય છે, તે જ પોતાના જીવન-યાત્રાના નિર્વાહ માટે યદ્રા તદ્રા પ્રવૃત્તિ કરે છે, હુઃખોથી ગભરાય છે, અને સદા

યતઃ સર્વેષાં પ્રાણિનાં ગુરુકર્મણાં જીવિતમ્=અસંયમજીવિતં પ્રિયમ્=ઇષ્ટં ભવતિ, ન તુ લઘુકર્મણામ્, તતઃ કિમિત્યાહ-‘ત’-દિત્યાદિ, તત્તસ્માત્કારણાદ્ દ્વિપદં=દાસી-દાસકર્મકરાદિ, ચતુષ્પદં=હસ્તિહયગોમહિષ્યાદિ પરિગ્રહ=સ્વાયત્તીકૃત્ય તતસ્તદેવ દ્વિપદં ચતુષ્પદમ્ ઉપલક્ષણાદન્યદપિ હિરણ્ય-સુવર્ણ-ધન-ધાન્યાદિકં ત્રિવિધેન કરણભૂતેન યોગત્રિક-કરણત્રિકેણ, અથવાડડત્મના પરેણોભયેન, ચેતનાચેતનમિ-શ્રુરૂપેણ વા અભિયુજ્ય, અભિ=આભિમુખ્યેન યુક્તવા=બન્ધરોધાદિના તત્તત્કલ્પિત-સંજ્ઞયા કશાદિપ્રહારેણ વાહયિત્વા=તેષુ તેષુ કર્મસુ નિયુજ્ય શિક્ષયિત્વેત્યર્થઃ । અપિ ચ-તદેવ સંસિચ્ય ક્રયવિક્રયાદિવ્યવહારેણાભિવદ્ધર્થ, અત્રાપિ ‘ત્રિવિધેને’-ત્યસ્ય કરતે હૈં । દુઃસ્વોં સે વે ઘબડાતે હૈં । ઓર સદા સાંસારિક સુસ્વોંકે અભિ-લાષી રહતે હૈં । સંયમી જીવોં મેં યે સબ પ્રવૃત્તિયાં ઘટિતં નહીં હોતીં । યદ્યપિ ઉન્હેં ભી અપને પ્રાણ પ્રિય હોતે હૈં પરન્તુ જબ સંયમ મેં કોઈ ઘોર પરીષહ ઉપસર્ગ આકર ઉપસ્થિત હો જાતે હૈં તબ વે અપને સંયમ કી રક્ષા કે લિયે અપને પ્રાણોં કી ભી પરવાહ નહીં કરતે હૈં । અસંયમી જીવોં કો હી અપના અસંયમ જીવન પ્રિય હોતા હૈ, કારણ કિ યે ગુરુકર્મીં હૈં । લઘુકર્મીં સંયમી જીવોં કો એસા જીવન પ્રિય નહીં હોતા । ઇનકી વિચાર-ધારા સદા આત્મકલ્યાણકારી માર્ગ કી ઓર હી ઝુકતી રહતી હૈ । અસંયમજીવી રાત દિન પરિગ્રહ-દાસીદાસ, નૌકરચાકર, હાથીઘોડા, ગાયબૈંસ, હિરણ્યસુવર્ણ, આદિ કે બઢાને કી ઓર હી અધિકાધિક લાલાયિત હોતે રહતે હૈં । વે ચેતન અચેતન તથા મિશ્ર રૂપ પરિગ્રહ કી જિતની ભી માત્રા પ્રાપ્ત કરતે હૈં-ચાહે વહ થોડી હો યા અધિક હો ડસી

સાંસારિક સુખના અભિલાષી રહે છે. સંયમી જીવોમાં આ બધી પ્રવૃત્તિઓ ઘટિત થતી નથી. જો કે તેને પણ પોતાનો પ્રાણ પ્રિય હોય છે પરંતુ જ્યારે સંયમમાં કોઈ ઘોર પરિષદ ઉપસર્ગ આવીને ઉપસ્થિત થાય છે ત્યારે તે પોતાના સંયમની રક્ષા માટે પોતાના પ્રાણોની પણ પરવાહ કરતા નથી.

અસંયમી જીવોને પોતાનું અસંયમ જીવન પ્રિય હોય છે, કારણ કે તે શુદ્ધકર્મી છે. લઘુકર્મી સંયમી જીવોને એવું જીવન પ્રિય નથી હોતું, તેની વિચાર-ધારા સદા આત્મકલ્યાણકારી માર્ગની તરફ જ લાગેલ રહે છે. અસંયમજીવી રાતદિન પરિગ્રહ-દાસીદાસ, નૌકરચાકર, હાથીઘોડા, ગાયબૈંસ, હિરણ્યસુવર્ણ આદિને વધારવામાં અધિકમાં અધિક મગ્ન રહે છે. તે ચેતન, અચેતન તથા મિશ્રરૂપ પરિગ્રહની જેટલી પણ માત્રા પ્રાપ્ત કરે છે-ચાહે ભલે થોડી હોય કે



સમ્બન્ધઃ, તસ્ય=અર્થારમ્ભિણઃ, તત્ર દાસીદાસહસ્તિહયાદિપરિગ્રહે, યા=યાવત્પરિ-  
માણા માત્રા=પરિગ્રહાંશઃ, સા અલ્પા વા=સ્તોકા અચિરકાલભોગક્ષમા વા, બહુકાવા=  
દીર્ઘકાલભોગક્ષમા વા, યદ્વા પ્રમાણતો મૂલ્યતો વાડલ્પા બહુકા, અલ્પત્વ-બહુત્વે  
ચાપેક્ષિકે, અતઃ સર્વસ્યાડપ્યલ્પત્વ-બહુત્વયોઃ સમ્ભવાત્, અલ્પા બહુકા વાડર્થાદિમાત્રા  
યસ્ય, તત્ર=અર્થાદૌ અસંયમજીવી ગૃહઃ=મૂર્ચ્છિતઃ, કૃતાકૃતલઙ્ઘાલઙ્ઘાધાશાપાશૈ-  
ર્ગ્રથિતઃ સન્ ભોજનાય=ભવિષ્યદુપભોગાય તદ્દનં સ્વાયત્તીકૃત્ય તિષ્ઠતિ=તત્રૈવાસક્તો  
ભવતિ, ન તતો મનસાડપ્યુપરમત ઇત્યર્થઃ, આરમ્ભપરિગ્રહાસક્તઃ કેવલિમ્મજ્જન્તં  
ધર્મં ન શૃણોતિ, ધર્મશ્રવણમન્તરેણ ન સમ્યગ્દર્શનમ્, તદ્ભાવે સમ્યગ્જ્ઞાનાભાવઃ,  
તદ્ભાવે મિથ્યાત્વાભિવૃદ્ધિસ્તથા ચ સંસારપરિભ્રમણં પ્રાણિનાં ભવતીતિ પરિગ્રહ-  
ગૃહો નાત્મહિતૈષી ભવતીતિ વર્તુલકાર્યઃ ॥ મૂ૦ ૫ ॥

મેં अपनी आवश्यकता की पूर्ति न समझ कर उसके बढ़ाने में ही मग्न बने  
रहते हैं। परिग्रह में अल्पता और बहुता यहां पर दो तरह से प्रकट की  
गई है—एक काल की अपेक्षासे और दूसरी मूल्य या प्रमाण की अपेक्षा  
से। थोड़ेसमय तक, अथवा अधिक समय तक परिग्रह का जीवों के भोग  
और उपभोग करने के काम में जो आना वह काल की अपेक्षा से परिग्रह  
में अल्पता या बहुता है, या जिनका मूल्य कम ज्यादा हो अथवा प्रमाण  
से जिनमें कमती बढ़तीपना हो यह मूल्य या प्रमाण की अपेक्षा से उन  
में अल्पता तथा बहुता है, क्योंकि अल्पत्व, बहुत्व, ये दोनों सापेक्ष हैं।

चार नौकर चाकरों एवं चार चतुष्पदादि कों की अपेक्षा दो नौकर  
चाकरों एवं दो चतुष्पदादिकों में प्रमाण की अपेक्षा से, उनके अधिक समय  
तक रहने की अपेक्षा से थोड़े समय तक रहनेवालों में काल की अपेक्षा से,

વધારે હોય તેમાં તે પોતાની આવશ્યકતાની પૂર્તિ ન સમજીને તેના વધારવામાં જ  
મગ્ન બની રહે છે. પરિગ્રહમાં અલ્પતા અને બહુતા આ ઠેકાણે બે પ્રકારે પ્રગટ કરેલા  
છે. એક કાળની અપેક્ષાથી અને બીજી મૂલ્ય અને પ્રમાણની અપેક્ષાથી. થોડા  
સમય સુધી અથવા અધિક સમય સુધી પરિગ્રહતું જીવેને ભોગ અને ઉપભોગ  
કરવાના કામમાં જે આવડું તે કાળની અપેક્ષાથી પરિગ્રહમાં અલ્પતા અને  
બહુતા છે, અને જેનું મૂલ્ય ઓછું અધિક હોય, અથવા પ્રમાણથી જેમાં  
વધઘટ પાડું હોય એ મૂલ્ય અગર પ્રમાણની અપેક્ષાથી તેમાં અલ્પતા અને બહુતા  
છે, કારણ કે અલ્પત્વ, બહુત્વ, એ બંને સાપેક્ષ છે.

ચાર નોકર ચાકરો અને ચાર ચતુષ્પદાદિકોની અપેક્ષા બે નોકર ચાકરો અને  
બે ચતુષ્પદાદિકોમાં પ્રમાણની અપેક્ષાથી, તેના અધિક સમય સુધી રહેવાની અપેક્ષાથી





યોઽસંયમજીવી ગૃહ્દોઽનર્થકરમર્થમુપાર્જયન્નર્થપરિરક્ષણં કરોતિ કિન્તુ તસ્ય તદ્દનમનેકપ્રકારેણ નશ્યતીતિ દર્શયતિ-‘તઓ સે’ ઇત્યાદિ ।

વીતરાગપ્રણીત ધર્મ મેં સર્વથા સાવધ પ્રવૃત્તિ કરને કા નિષેધ હૈ । ઇસ વાત કો તબ હી સમજા જા સકતા હૈ કિ જબ વીતરાગપ્રણીત ધર્મ કો સુનને જાનને ઓર ઉસકે મનન કરને કા અવસર મિલે, પરન્તુ જબ વે સિદ્ધાન્ત કો સુનતે હી નહીં હૈ તબ ઇસ સિદ્ધાન્ત કો જાન ભી કૈસે સકતે હૈં । અતઃ જહાં પર ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ ચાલૂ હૈ, જિન્હેં અપને કર્તવ્ય કા ખાન હી નહીં હૈ, ઓર જો જાન વૃદ્ધ કર ભી ટવડ્ડે મેં પડ રહે હૈ, વે કેવલિપ્રણીત ધર્મ કે સિદ્ધાન્ત કો અભી તક સમજે હી નહીં હૈં । જિન સિદ્ધાન્ત કે સમજે વિના સમકિત જૈસી સુંદર વસ્તુ કમી ભી ઉનકે હાથમેં નહીં આસકતી । ઇસકે અભાવ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન કા અભાવ ઓર ઉસકે અભાવ સે મિથ્યાત્વ કી વૃદ્ધિ, ઉસકી વૃદ્ધિ સે સંસાર મેં પરિભ્રમણ એસે જીવોં કા અનિવાર્ય હૈ, અતઃ જો આત્મહિત કી કામના કરનેવાલે હૈં ઉનકા યહ ધર્મ હૈ કિ-વે પરિગ્રહ મેં ગૃહ્ધ ન બનેં । તમી સંસારસાગર સે ઉનકા આત્મોદ્ધાર હો સકતા હૈ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

જો અસંયમજીવી હૈ ઓર પરિગ્રહ મેં હી આસક્તપરિણતિવાલા બના હુઆ હૈ વહ અનેક અનર્થોંકા ઉત્પાદક દ્રવ્ય કે સંગ્રહ કરને મેં હી લલલીન રહતા હૈ । વહ યદ્યપિ કમાયે હુઅ અપને ઇસ દ્રવ્ય કી હર એક

વીતરાગપ્રણીત ધર્મમાં સર્વથા સાવધ પ્રવૃત્તિ કરવાનો નિષેધ છે. એ વાતને ત્યારે જ સમજી શકાય છે કે જ્યારે વીતરાગપ્રણીત ધર્મને સાંભળવા બાંધવા અને તેનું મનન કરવામાં અવસર મળે. પરંતુ જ્યારે તે સિદ્ધાંતને સાંભળતો જ નથી ત્યારે તે સિદ્ધાંતને બાંધી પણ કેવી રીતે શકે, માટે જે કેકાણે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ચાલુ છે, જેને પોતાના કર્તવ્યનું પણ ભાન નથી અને જે બાંધી બેઠને પણ ખાડામાં પડે છે તે કેવલિપ્રણીત ધર્મના સિદ્ધાંતને હંબુ સુધી સમજ્યા જ નથી. જે સિદ્ધાંતને સમજ્યા વિના સમકિત જેવી સુંદર વસ્તુ કોઈ વખત પણ તેના હાથમાં આવી શકતી નથી. તેના અભાવમાં સમ્યગ્જ્ઞાનનો અભાવ, અને તેના અભાવથી મિથ્યાત્વની વૃદ્ધિ, તેની વૃદ્ધિથી સંસારમાં પરિભ્રમણ એવા જીવોને અનિવાર્ય છે. અતઃ જે આત્મહિતની કામના કરવાવાળા છે, તેનો એ ધર્મ છે કે તે પરિગ્રહમાં ગૃહ્ધ ન બને. ત્યારે જ સંસારસાગરથી તેનો આત્મોદ્ધાર થાય છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

જે અસંયમજીવી છે અને પરિગ્રહમાં જ આસક્તપરિણતિવાળા બનેલ છે તે અનેક અનર્થોના ઉત્પાદક દ્રવ્યોના સંગ્રહ કરવામાં જ તલલીન રહે છે. તે જો કે પોતાના



મૂલમ—તઓ સે ઇગયા વિવિહં પરિસિટ્ટં સંભૂયં મહોવગરણં  
ભવઈ, તંપિ સે ઇગયા દાયાયા વા વિભયંતિ, અદત્તહારો વા સે  
અવહરઈ, રાયાણો વા સે વિલુપંતિ, નસ્સઈ વાસે, વિનસ્સઈ વા  
સે, અગારદાહેણ વા સે ડઙ્ગઈ, ઇય સે પરસ્સઽટ્ટાણ કૂરાઈં કમ્માઈં  
વાલે પકુવ્વમાણે તેણ દુક્ખેણ સંમૂઢે વિપ્પરિઆસમુવેઈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—તતસ્તસ્યૈકદા વિવિધં પરિશિષ્ટં સમ્ભૂતં મહોપકરણં ભવતિ, તદપિ  
તસ્યૈકદા દાયાદા વા વિભજન્તે, અદત્તહારો વા તસ્યાપહરતિ, રાજાનો વા તસ્ય  
વિલુમ્પન્તિ, નશ્યતિ વા તસ્ય, વિનશ્યતિ વા તસ્ય, અગારદાહેન વા તદ્દહ્યતે, ઇતિ  
સ પરસ્યાર્થાય કૂરાણિ કર્માણિ વાલઃ પ્રકુર્વાણસ્તેન દુઃખેન સમ્મૂઢો વિપર્યાસ-  
મુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘તત’ ઇત્યાદિ, તતઃ સંગૃહીતધનાત્, સઙ્ગ્રહકાલાદ્રા, એકદા =  
એકસ્મિન્ કાલે ન સર્વદા કદાચિદિવા વા રાત્રૌ વા । યદ્વા લાભાન્તરાયકર્મક્ષયો-  
પશમે ચેત્યર્થઃ, તસ્ય=અર્થસઙ્ગ્રહશીલસ્ય વિવિધમ્=અનેકપ્રકારમ્ પરિશિષ્ટમ્ ઉપ-  
ભોગોર્વરિતમ્ સમ્ભૂતં સમ્=સમ્યગ્રક્ષણાય ભૂતં સચ્ચિતં, સંવૃતં વા ભૂમ્યાદિનિસ્વા-  
પ્રકાર સે રક્ષા કરતા હૈ તો ખી ઉસકા વહ દ્રવ્ય અનેક પ્રકાર સે નષ્ટ  
હો હી જાતા હૈ, ઇસ વાત કો પ્રકટ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘તઓ  
સે ઇગયા’ ઇત્યાદિ ।

લાભાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હી જીવોં કો દ્રવ્યાદિકકા લાભ  
હોતા હૈ, યહ શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત હૈ । ઇસકે અભાવ મેં અનેક પ્રકાર કે  
કિયે ગયે પ્રયત્ન ખી દ્રવ્યલાભ કરાને મેં કારણ નહીં હોતે હૈ । ઇસ  
લાભાન્તરાય કર્મ કે ઉદય મેં સંગૃહીત દ્રવ્ય ખી નષ્ટ હો જાતા હૈ । ઇસ  
કી સ્થિતિ રહના ખી ઇસી કર્મ કે ક્ષયોપશમાધીન હૈ । જબ ઇસકા ઉદય

કમાએલાં દ્રવ્યની ઢરેક પ્રકારે રક્ષા કરે છે, તો પણ તેનું દ્રવ્ય અનેક પ્રકારથી  
નષ્ટ થઈ જાય છે, આ વાતને પ્રગટ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘તઓ સે’ ઇત્યાદિ.

લાભાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી જ જીવોને દ્રવ્યાદિક લાભ થાય છે, તે  
શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત છે. તેના અભાવમાં અનેક પ્રકારના કરેલા પ્રયત્ન પણ દ્રવ્ય  
લાભ કરાવવામાં કારણ નથી થતાં. આ લાભાન્તરાય કર્મના ઉદયમાં સંગૃહીત  
દ્રવ્ય પણ નષ્ટ થાય છે, તેની સ્થિતિ રહેવી પણ તે કર્મને ક્ષયોપશમાધીન છે.



તમિત્યર્થઃ, મહોપકરણં=દ્વિપદચતુષ્પદાદિસમૂહો ભવતિ । તસ્ય સ ધનસમૂહોऽ-  
પ્યુપભોગાય ન ભવતીત્યાહ-‘તદપી’-તિ, એકદા=દુર્ભાગ્યોદયે, યદ્વા કદાચિત્  
‘દાયાદાઃ’ દાયં=વિભાજ્યદ્રવ્યમાદદતિ=ગૃહ્ણન્તીતિ દાયાદાઃ=સગોત્રાઃ, તસ્ય  
ધનાર્જનકષ્ટમનુભવતો જનસ્ય તદપિ દ્વીપાન્તરગમન-દુરારોહપર્વતારોહણ-સ્વન્યા-  
દિત્વનન-રાજસેવા-કૃષિવાણિજ્યાદિરૂપસાવધવ્યાપારૈઃ સ્વપરસન્તાપકૈરુપભોગાય  
સમુપાર્જિતસશ્વિતવિવર્દિતં ધનમ્ વિભજન્તે=સ્વસ્વભાગગ્રહણાય વિભાગં કુર્વન્તિ,  
પૃથક્કુર્વન્તીત્યર્થઃ, અથવા અદત્તહારઃ, અદત્તમેવ હરતીત્યદત્તહારશ્ચૌરો વા તસ્ય  
ધનમપહરતિ=ચોરયતિ ।

રહતા હૈ તબ અનેક પ્રકારકે દ્રવ્યનાશ હોને કે ઉપાય મી જીવોં કો  
સ્વયમેવ પ્રાપ્ત હોતે રહતે હૈં । ઉસ સમય બુદ્ધિ મેં મી કુછ એસી વિપરી-  
તતા આજાતી હૈ જિસસે દ્રવ્ય કે વ્યય હોને કે ઉપાય મી અચ્છે ઔર  
ઉપાદેય પ્રતીત હોને લગતે હૈં । સંસાર મેં કૌન યહ ચાહતા હૈ કિ મેરા  
યહ દ્રવ્યાદિક નષ્ટ વિનષ્ટ હો જાય ? પરન્તુ સબ કુછ વિચારતે હુએ મી  
યા ઉસકી રક્ષા કે ઉપાય કરતે હુએ મી જો જીવ રાજા સે રંક હો જાતે  
હૈં વે હસી બાત કે પ્રબલ પ્રમાણ હૈં ।

હસ કર્મ કે ક્ષયોપશમ હોને પર જિસ પ્રકાર જીવોંકો દ્રવ્ય કે  
આને કે અનેક ઉપાય એવં દ્વાર પ્રાપ્ત હોતે હૈં ઉસી પ્રકાર હસકે ઉદય મેં  
ઉસકે વિનાશ કે અનેક દ્વાર મી ઉન્હેં મિલ જાતે હૈં, યહી બાત સૂત્રકાર  
હસ સૂત્ર મેં પ્રકટ કર રહે હૈં—

ઉસ અર્થસંગ્રહશીલ વ્યક્તિ કે પાસ લાભાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ

બ્યારે તેનો ઉદય રહે છે ત્યારે અનેક પ્રકારના દ્રવ્યનાશ હોવાના ઉપાયો પણ  
જીવોને સ્વયમેવ પ્રાપ્ત થાય છે. તે સમય બુદ્ધિમાં પણ કોઈ એવી વિપરીતતા  
આવી જાય છે જેનાથી દ્રવ્યનો વ્યય હોવાના ઉપાયો પણ સારા અને ઉપાદેય  
પ્રતીત થવા લાગે છે. સંસારમાં કોણ એ ચાહે છે કે મારું આ દ્રવ્યાદિક નષ્ટ  
વિનષ્ટ થાય, પરન્તુ ચારે બાજુથી વિચારતાં પણ તેની રક્ષાના ઉપાયો કરવા છતાં  
પણ જે જીવ રાજાથી રંક થાય છે તે આ વાતનું પ્રબલ પ્રમાણ છે.

આ કર્મના ક્ષયોપશમ થવાથી જે પ્રકારે જીવોને દ્રવ્ય આવવાના અનેક  
ઉપાય અને દ્વાર પ્રાપ્ત થાય છે તે પ્રકારે તેના ઉદયમાં તેના વિનાશના અનેક  
દ્વાર પણ તેને મળી રહે છે, એ વાત સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરે છે—

તે અર્થસંગ્રહશીલ વ્યક્તિની પાસે લાભાન્તરાય કર્મનો ક્ષયોપશમ થવાથી

હોને પર અનેક પ્રકાર કા ભોગ ઉપભોગ સે બાકી બચા હોને કૅ કારણ ધનાદિ કા સંગ્રહ હો જાતા હૈ “ ધનકો ધન કમાતા હૈ ” હમ લોકોક્તિ કૅ અનુસાર ઉસકૅ સંગૃહીત દ્રવ્ય સે ફિર અનેક ઉપાયોં દ્વારા ઉસે દ્રવ્યાદિકકી પ્રાપ્તિ હોને લગતી હૈ । ભોગ ઓર ઉપભોગ કી આવશ્યકતાઈં બી જૈસા જૈસા લાભ હોતા હૈ વૈસે ર બઢતી જાતી હૈ, ઓર ઉનકી પૂર્તિ કરનેમૈં બી દ્રવ્યાદિક કા વ્યય હોને લગતા હૈ । ભોગવિલાસ કી સામગ્રી જુટાને મૈં તથા મૌજ મજા કરને મૈં લાભાનુસાર દ્રવ્ય કા વ્યય હોતા હૈ । આવશ્યકતા કી પૂર્તિ સે અથવા લેન-દેન કૅ વ્યવહાર સે અવશિષ્ટ દ્રવ્ય કો લોગ, યા તો કિસી બેંક મૈં જમા કરા દેતે હૈ, યા જમીન મૈં ઉસે ગાઢ કર રખ દેતે હૈ । જમીન મૈં ન ગાઢે તો ઉસે તિજોરિયોં મૈં ભર કર બી ઇક જગહ રખદેતે હૈ । ઉન્હેં ઇસે અપને સગોત્રિયોં કા સમાગમ મિલતા હૈ જો ઇન્હેં રાત દિન દુઃખી કિયા કરતે હૈ । અવિભક્ત કુદુમ્બ હોનેસે કિસી વાતકો લેકર પરસ્પર મૈં જબ કુછ અનબનસી હો જાતી હૈ તબ આપસ મૈં અલગર હોને કી પરિસ્થિતિ આતી હૈ । જબ વિભક્ત હોતે હૈ તબ વે સમસ્ત ધનકો બટવા લેતે હૈ । સગોત્રિયોં કા સમાગમ ધની વ્યક્તિયોં કો કદાચિત્ અનુકૂલ પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા બી મિલ જાવે ઓર વે ધન કો અર્જન કરને મૈં કષ્ટ કા અનુભવ કરનેવાલે ઉસ વ્યક્તિ કૅ ઉસ દ્રવ્ય કો

અનેક પ્રકારના ભોગ અને ઉપભોગથી બાકી બચવાને કારણે ધનાદિનો સંગ્રહ થાય છે. “ ધનથી ધન પ્રાપ્ત થાય છે ” આ લોકોક્તિને અનુસાર તેના સંગૃહીત દ્રવ્યથી પછી અનેક ઉપાયો દ્વારા તેને દ્રવ્યાદિકની પ્રાપ્તિ થવા લાગે છે. ભોગ અને ઉપભોગની આવશ્યકતાઓ પણ જેમ જેમ લાભ થાય છે તેમ તેમ વધતી જાય છે. અને તેની પૂર્તિ કરવામાં પણ દ્રવ્યાદિકનો વ્યય થવા લાગે છે. ભોગ-વિલાસની સામગ્રી મેળવવામાં તથા મૌજમજા કરવામાં લાભાનુસાર દ્રવ્યનો વ્યય થાય છે. આવશ્યકતાની પૂર્તિથી અથવા લેણદેણના વ્યવહારથી અવશિષ્ટ દ્રવ્યને લોક અગર કોઈ બેંકમાં જમા કરાવે છે અગર જમીનમાં તેને દાટીને રાખે છે. જમીનમાં ન દાટે તો તેને તિજોરીઓમાં ભરીને પણ એક જગ્યાએ રાખે છે. તેને એવા પોતાના સગોત્રિઓનો સમાગમ મળે છે જે તેને રાતદિવસ દુઃખી કરે છે. અવિભક્ત કુટુંબ હોવાથી કોઈ વાતને લઈને પરસ્પરમાં જ્યારે કોઈકે અણુ બનાવ થાય છે ત્યારે આપસ આપસમાં અલગ અલગ થવાની તૈયારી બને છે. જ્યારે વિભક્ત થાય છે ત્યારે તે સમસ્ત ધનને વહેંચી લે છે. સગોત્રિઓનો સમાગમ ધની વ્યક્તિઓને કદાચિત્ અનુકૂળ પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા પણ મળી આવે,



જો ઘડી કઠિનતા સે उसने द्वीपान्तरगमन से, दुरारोह पर्वतों के उल्लंघनसे, खानि में पड़े हुए उसके खोदने से, राजा की सेवासे, और अपने एवं पर को सन्ताप करनेवाले कृषि-वाणिज्यादि रूप सावध व्यापारों से पैदा किया है सञ्चित किया है और व्याज आदि द्वारा जिस को वृद्धि की है भले ही विभाजित न करें; परन्तु चोरों से द्रव्य की रक्षा करना एक मुश्किल कार्य है। धनी व्यक्तियों के अनेक मित्र और शत्रु हो जाते हैं। जिनका उससे काम निकलता रहता है वे उसके मित्र, और जिनका उससे काम नहीं निकलता वे उसके शत्रु हो जाते हैं। जो मित्र होते हैं वे भी कालान्तर में शत्रु, और जो शत्रु होते हैं वे भी कालान्तर में मित्र बनते हुए देखे जाते हैं। अतः जो पहिले मित्र बन कर शत्रु बन जाते हैं वे सब इसका भेद भाव जान कर चोरों को गुप्त रीति से सब प्रकार की इसकी प्रवृत्ति से परिचित करा देते हैं और अन्त में इसे लुटवा देते हैं। क्षण भर में यह अमीर से गरीब बन जाता है। यदि पुण्योदय से चोरोंको भी इसके द्रव्यको चुराने का साहस न जाग्रत हो और वे इसके ऊपर धाड़ न भी पाडे तो भी अधर्मी राजा की नजर से द्रव्यकी रक्षा करना मुश्किल ही है।

અને તે ધનને ઉપાર્જન કરવામાં કષ્ટનો અનુભવ કરવાવાળા તે વ્યક્તિએ તે દ્રવ્યને જે ઘણી મુશ્કેલીથી દરિયાપારથી, મહાન પર્વતોના ઉદ્ધાનથી, ખાણમાં પડેલાને તેના ખોદવાથી, રાજાની સેવાથી અને પોતાને તેમજ બીજાને સંતાપ કરવાવાળી ખેતી-વાણિજ્યાદિરૂપ સાવધ વ્યાપારથી પેદા કરેલ છે, સંચિત કરેલ છે, અને વ્યાજ આદિ દ્વારા જેની વૃદ્ધિ કરેલ છે, ભલે તે વિભાજિત ન કરે, પરંતુ ચોરોથી દ્રવ્યની રક્ષા કરવી એક મુશ્કેલ કાર્ય છે. પૈસાદાર વ્યક્તિઓના અનેક મિત્રો અને શત્રુઓ થાય છે. જેનાથી જેનું કામ થાય છે તે મિત્ર, અને જેનાથી જે કામ બનતું નથી તે શત્રુ બની જાય છે. જે મિત્ર હોય છે તે પણ કાલાન્તરમાં શત્રુ, અને જે શત્રુ હોય છે તે પણ કાલાન્તરમાં મિત્ર બને છે તેમ દેખવામાં આવે છે. માટે જે પહેલાં મિત્ર બનીને શત્રુ બને છે તે બધા તેનો ભેદભાવ જણીને ચોરોને ગુપ્ત રીતિથી સર્વ પ્રકારની તેની પ્રવૃત્તિથી પરિચિત કરી આપે છે, અને અન્તમાં તેને લુટાવે છે. ક્ષણભરમાં તે અમીરથી ગરીબ બની જાય છે. કદાચ પુણ્યોદયથી ચોરો તરફથી તેનું દ્રવ્ય ચોરાવાનું કદાચ સાહસ ન બને, અને તેઓ તેની તરફ ધાડ પણ ન પાડે તો પણ અધર્મી રાજાની નજરથી દ્રવ્યની રક્ષા થવી મુશ્કેલ છે.



અથવા રાજાનઃ=વૃષાસ્તસ્ય ધનં વિલુપ્તન્તિ=વિલુપ્તન્તિ અભિયોગદ્વારેણ બલા-  
લાત્તદ્ધનં ગૃહ્ણન્તીત્યર્થઃ । અથવા તસ્યાર્થગૃહ્ણસ્ય ધનં સ્વયમેવ નશ્યતિ, વાણિજ્યાદૌ  
બહુમૂલ્યેન ક્રયણાદરૂપેન વિક્રયણાદિત્યર્થઃ । ‘વિનશ્યતિ’ રાજકોશે ‘વૈક્ર’  
પદવાચ્યે સંસ્થાપિતં, ભૂમ્યાદૌ વા નિશ્વાતં તસ્ય રાજઃ પરિવર્તનેનાપગતાત્, ભૂમૌ યત્ર  
નિશ્વાતં દીર્ઘકાલેન તતોડપગમાદ્વા વિનશ્યતિ=સ્વયમેવ નષ્ટં ભવતીત્યર્થઃ ।

રાજા કી જબ લોલુપ દષ્ટિ હસકે ધન પર પડતી હૈ તબ વહ જબર્દસ્તી  
કોઈ એસા અભિયોગ લગા દેતા હૈ કિ જિસસે उस विचारे का वह धन  
देखतेर लुटवा लिया जाता है ।

યદિ ધાર્મિક રાજાકે રાજ્ય મેં વસને કા ધનીકો સૌભાગ્ય મિલતા  
હૈ ઔર उसकी वजह से उसके धनकी हर एक प्रकार से रक्षा भी होती  
रहती है तो भी अधिक संग्रह की लालसा से या उसकी वृद्धि की तीव्र  
भावनासे जब धनी उसे किसी व्यापार में लगा देता है तो तेजी मंदी के  
समय क्रय विक्रय करने से अचानक जब व्यापार में घाटा आ जाता है  
तब वह कमाया हुआ द्रव्य सहसा हाथ से निकल जाता है, और वह  
धनी व्यक्ति फिर हाथ मलते ही रह जाता है । व्यापार में यदि पुण्य  
कर्म के उदय से अच्छा लाभ भी हो जाता है, तो लोग उसे बैंकों में  
जमा कर देते हैं या उसे जमीन वगैरह में गाड़ देते हैं । वहां उसकी  
सुरक्षा होती हो तो भी जब राज्य का परिवर्तन होता है तब बैंके भी  
प्रायः लुट जाती हैं, अथवा जब वह उस भूमि से बहुत समय के बाद गाड़े

રાજાની જ્યારે લોલુપ દષ્ટિ તેના ધન ઉપર પડે છે ત્યારે તે જળશય્થી  
કેઈ એવો અભિયોગ લગાવે છે કે જેનાથી તે બિચારાનું તે ધન દેખતા  
દેખતામાં લુંટાવી લઈ જાય છે.

કદાચ ધાર્મિક રાજાના રાજ્યમાં વસવાનો ધનીને સૌભાગ્ય મળે છે, અને  
તેના તરફથી તેના ધનની દરેક પ્રકારે રક્ષા પણ થાય છે તો પણ અધિક સંગ્ર-  
હની લાલસાથી અગર તેની વૃદ્ધિની તીવ્ર ભાવનાથી જ્યારે પૈસાદાર તે ધનને  
કેઈ વ્યાપારમાં લગાવી દે છે તો તેજી મંદીના સમયમાં કય વિક્રય કરવાથી  
અચાનક જ્યારે વ્યાપારમાં નુકસાન આવે છે ત્યારે તે કમાએલું ધન સહસા હાથથી  
ગુમાવી દે છે, અને પછી તે પૈસાદાર વ્યક્તિ હાથ ધસતો થઈ જાય છે, વ્યાપારમાં  
કદાચ પુણ્ય કર્મના ઉદયથી સારો લાભ પણ મળે છે તો લોક તેને બેંકોમાં જમા  
કરાવી દે છે, અગર તેને જમીન-વિગેરેમાં ઘાટી દે છે. તે જગોએ તેની સુરક્ષા  
બને તો પણ જ્યારે રાજ્યનું પરિવર્તન થાય છે ત્યારે બેંકોને પણ લુંટવામાં  
આવે છે, અથવા જ્યારે તે ભૂમિથી બહુ સમય બાદ ઘાટેલાં સ્થાનથી સ્થાનાન્તરિત

કથંચિત્સુરક્ષિતમપિ તદ્ધનં કાંસ્યદ્રવ્યસુવર્ણરજતાદિકમ્ અગારદાહેન=મેહદાહેન દહ્યતે, इत्यादिकारणैरुपार्जितस्याप्यर्थस्य बहुविधो नाशो भवति, अन्तराय-कर्मप्राबल्येनोपार्जयितुरूपभोगाय नैव भवतीत्यर्थः। उक्तञ्च—

“ चत्वारो धनदायादा, धर्माग्निनृપतस्कराः ॥

तत्र ज्येष्ठाપમાનેन, ત્રયઃ કુપ્યન્તિ સોદરાઃ ” ॥ ૧ ॥ इति ।

હુણ સ્થાન સે સ્થાનાન્તરિત હો જાતા હૈ તબ ઉસકા મિલના ખી મુશ્કિલ હો જાતા હૈ । ઇસ તરહ સે ખી ઉસકા વિનાશ હોતે દેર નહીં લગતી ।

કથંચિત્ કાંસા; દ્રવ્ય, સુવર્ણ, રજતાદિ રૂપ વહ ધન ઘર મેં સુરક્ષિત ખી રહે તો ખી અચાનક ઘરમેં આગ લગજાને સે ઉસકા ખી વિનાશ હો જાતા હૈ । ઉસ સમય વહુમૂલ્ય વસ્તુએં સ્વાકમેં મિલ જાતી હૈં । આગ કો બુઝાને કે લિયે આયે હુણ લોગોં કે હાથ ખી ઉસ સમય જો ખી વસ્તુ લગતી હૈ વે ઉસે ઉઠાકર લે જાતે હૈં । ઇસ પ્રકાર ઇન પૂર્વોક્ત કારણોં સે ઉપાર્જિત દ્રવ્ય કા અન્તરાય કર્મ કે પ્રબલ ઉદયમેં અનેક રીતિ સે વિનાશ હોતે દેર નહીં લગતી । નીતિકાર ખી યહી વાત કહતે હૈં—

“ ચત્વારો ધનદાયદાઃ, ધર્માગ્નિનૃપતસ્કરાઃ ।

તત્ર જ્યેષ્ઠાપમાનેન, ત્રયઃ કુપ્યન્તિ સોદરાઃ ॥ ૧ ॥ ”

ધન કે હિસ્સેદાર ચાર હૈં । ૧ ધર્મ, ૨ અગ્નિ, ૩ રાજા, ઔર ૪ ચોર । જિસ ધનકા સદુપયોગ ધર્મ મેં નહીં હોતા હૈ ઉસ ધનકા અગ્નિ, રાજા ઔર ચોરોં કે દ્વારા વિનાશ ઔર અપહરણ હોતા હૈ ॥ ૧ ॥

થાય છે ત્યારે તેનું મળવું પણ મુશ્કેલ બની જાય છે. આવી રીતે પણ તેના વિનાશ હોવામાં વાર લાગતી નથી.

કોઈ પણ પ્રકારે કાંસા, દ્રવ્ય, સુવર્ણ, રજતાદિ રૂપ તે ધન ઘરમાં સુરક્ષિત રહે તો પણ અચાનક ઘરમાં આગ લાગવાથી તેનો પણ વિનાશ થઈ જાય છે. તેવા વખતે બહુમૂલ્ય વસ્તુઓ ખાક થાય છે. આગને ઓલવવા આવેલા લોકોના હાથમાં પણ તે વખતે જે વસ્તુ પડે છે તે પણ ઉઠાવી લઈ જાય છે. આ પ્રકારે આ પૂર્વોક્ત કારણોથી ઉપાર્જિત દ્રવ્યનો અન્તરાય કર્મના પ્રબલ ઉદયમાં અનેક રીતિથી વિનાશ થવામાં વાર લાગતી નથી. નીતિકાર પણ એ વાત કહે છે—

“ ચત્વારો ધનદાયદાઃ, ધર્માગ્નિનૃપતસ્કરાઃ ।

તત્ર જ્યેષ્ઠાપમાનેન, ત્રયઃ કુપ્યન્તિ સોદરાઃ ॥ ૧ ॥ ”

ધનના હિસ્સેદાર ચાર છે. ૧ ધર્મ, ૨ અગ્નિ, ૩ રાજા અને ૪ ચોર. જે ધનનો સદુપયોગ ધર્મમાં નથી થતો તે ધનનો અગ્નિ, રાજા અને ચોરા દ્વારા વિનાશ અને અપહરણ થાય છે. ॥ ૧ ॥



વહુપ્રકારૈઃ સ ધનસશ્ચયકારી પરસ્યાર્થાય=અન્યાર્થમ્, દાયાદાર્થમેવ, કૂરાણિ=શિરઃછેદ-ગલકર્તનાદીનિ કર્માણિ=દુરાચરણાનિ બાલઃ=કર્તવ્યશૂન્યચેતાઃ પ્રકુર્વાણઃ=પ્રકર્ષેણ વિદધાનઃ સન્, તેન કટુકર્મવિપાકોદયેન દુઃસ્વેન સંમૂઢઃ=પરિ-હતમતિઃ રાગદ્વેષાભિભૂતતયા કાર્યાકાર્યમજાનન્ વિપર્યાસમ્=વૈપરીત્યં મિથ્યાત્વમ્ ઉપૈતિ=પ્રાપ્નોતિ, અર્થાર્થમનર્થકારી ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

મૂઢાઃ સુસ્વેપ્સવો દુઃસ્વમવાપ્નુવન્તીતિ ન મયા સ્વબુદ્ધ્યોચ્યતે, इति सुधर्मा स्वामी कथयति-‘मुणिणा’ इत्यादि ।

મૂઢમ્-મુણિણા હુ એયં પવેદ્યં, અણોહંતરા એ, નો ય ઓહં તરિત્તે, અતીરંગમા એ નો ય તીરં ગમિત્તે, અપારં-ગમા એ, નો ય પારં ગમિત્તે, આયાણિજ્જં ચ આયાય તંમિ ઠાણે ન ચિટ્ઠિ વિતહં પપ્પડ્ધેયન્ને તંમિ ઠાણંમિ ચિટ્ઠિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

હાયા—મુનિના હુ એતત્પવેદિતમ્, અનોઘન્તરા એતે ન ચૌયં તર્તુમ્, અતીરંગમા એતે, ન ચ તીરં ગન્તુમ્, અપારંગમા એતે, ન ચ પારં ગન્તુમ્, આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ, વિતથં પ્રાપ્યાસ્વેદગ્નસ્તસ્મિન્ સ્થાને તિષ્ઠતિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

જિસ ધનકા અન્તિમ યહ પરિણામ હોતા હૈ ઉસ ધનકો સંચિત કરનેવાલે અજ્ઞાન મેં પડે હુએ હૈં “પરસ્યાર્થાય” સિર્ફ દાયાદ વગૈરહ દૂસરોં કે ઉપભોગ કે લિયે હી ઉસકે સંગ્રહાર્થ ભયંકર સે ભયંકર ગલ-કર્તન, શિરઃછેદન જૈસે નિંદિત દુરાચારોં કો કરતા હુઆ તજ્જન્ય કટુક કર્મકે વિપાકજનિત દુઃસ્વ સે સંતસચિત્ત બન કર્તવ્યાકર્તવ્ય કે વિવેક સે રહિત હોકર મિથ્યાત્વભાવરૂપ વિપર્યાસપને કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ અર્થાત્ વહ ધનકે લિયે અનેક અનર્થ કરતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

બાલ અજ્ઞાની સુખની ચાહના કરતે હૈં પરન્તુ ઉન્હેં દુઃસ્વની હી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ, ઇસ વિષય મેં શ્રીસુધર્મા સ્વામી અપની નિજી કલ્પના કા નિષેધ

જે ધનનો અન્તિમ આ પરિણામ થાય છે તે ધનનો સંચિત કરવાવાળા અજ્ઞાનમાં પડેલા છે. “પરસ્યાર્થાય” કહ્યું દાયાદ વિગેરે ખીજાના ઉપભોગ માટે જ તેના સંગ્રહાર્થ ભયંકરથી ભયંકર ગલકર્તન, શિરઃછેદન જેવા નિંદિત દુરાચારોને કરીને તજ્જન્ય કટુક કર્મના વિપાકજનિત દુઃખથી સંતસચિત્ત બની કર્તવ્યાકર્તવ્યના વિવેકથી રહિત બની મિથ્યાત્વભાવરૂપ વિપર્યાસપણાને પ્રાપ્ત થાય છે, અર્થાત્ તે ધન માટે અનેક અધર્મ કરે છે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

બાલ અજ્ઞાની સુખની ચાહના કરે છે પરંતુ તેને દુઃખની જ પ્રાપ્તિ થાય છે. આ વિષયમાં શ્રી સુધર્માસ્વામી પોતાની નિજી કલ્પનાનો નિષેધ કરીને કહે છે—



ટીકા—‘મુનિને’-ત્યાદિ । ‘મુનિના’ સંસારસ્ય ત્રિકાલાવસ્થાં મનુતે યઃ સ મુનિઃ=વાતિકર્મચતુષ્ટયક્ષયસમુદ્ભૂતાત્મસ્વરૂપસ્તીર્થદ્વરગણધરાદિઃ, તેન, હુ=નિશ્ચયેન એતત્=પૂર્વોક્તં વક્ષ્યમાણં વા, તત્ર પૂર્વોક્તં પરિગ્રહાસક્તિજનિતસંસારપરિભ્રમણ-સ્વરૂપમ્, અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રોત્પત્ત્યાદિકં ચ પ્ર=પ્રકર્ષેણ વેદિતં=દ્વાદશપર્ષદિ પ્રરૂપિતમ્ ભિન્નભિન્નસ્વરૂપેણ કથિતમિત્યર્થઃ । વક્ષ્યમાણં પ્રવેદિતમાહ—‘અનોઘન્તરા’ ઇત્યાદિ, કરતે હુએ કહતે હૈં—‘મુણિણા’ ઇત્યાદિ ।

“મુનિ” યહ શબ્દ ‘મન’ ધાતુ સે નિષ્પન્ન હુઆ હૈ । ‘મન’ ધાતુ કા અર્થ જાનના હૈ । જો સંસારી કી ત્રિકાલસંબંધી સમસ્ત ગુણ-પર્યાયરૂપ અવસ્થાઓં કો જાનતા હૈ ઉસકા નામ મુનિ હૈ, ઘાતિયા કર્મોં કૈ ક્ષય હોને સે જિન્હોં કો કેવલજ્ઞાન સ્વરૂપ આત્મા કૈ નિજરૂપ કી પ્રાપ્તિ હો ચુકી હૈ એસે તીર્થકર, ગણધરાદિ દેવ યહાં ‘મુનિ’ શબ્દ સે લિયે ગયે હૈ । અપની નિજી કલ્પના કા પરિહાર કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ-પૂર્વોક્ત પરિગ્રહમેં અત્યાસક્તિવશ જીવ સંસાર મેં હી પરિભ્રમણ કરતા હૈ, તથા “અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રે અસકૃત્તીચૈર્ગોત્રે” ઇત્યાદિ સૂત્રોં (હસી ઉદ્દેશ કૈ પ્રથમાદિ સૂત્રોં) મેં જો કહા ગયા હૈ યહ સમસ્ત વિષય, અથવા જો ખી કુછ આગે કહા જાવેગા વહ સવ મૈને અપની નિજબુદ્ધિ સે કલ્પિત કર નહીં કહા હૈ, કિન્તુ તીર્થકરાદિક દેવોં ને અપની ૨ પરિષદ્ મેં પૃથક્ પૃથક્ રૂપ સે એસાહી કહા હૈ । ઉનકી પરંપરા સે જિસ પ્રકાર યહ વિષય ચલા

‘મુણિણા’ ઇત્યાદિ.

“મુનિ” આ શબ્દ ‘મન’ ધાતુથી નિષ્પન્ન થયો છે. ‘મન’ ધાતુનો અર્થ જાણવું થાય છે. જે સંસારીની ત્રિકાલસંબંધી સમસ્ત ગુણપર્યાયરૂપ અવસ્થાઓને જાણે છે તેનું નામ મુનિ છે. ઘાતિયા કર્મનો ક્ષય હોવાથી જેને કેવળ જ્ઞાનસ્વરૂપ આત્માના નિજરૂપની પ્રાપ્તિ થયેલ છે એવા તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ આ ઠેકાણે મુનિ-શબ્દથી દેવામાં આવેલ છે. પોતાની નિજ કલ્પનાનો પરિહાર કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-પૂર્વોક્ત પરિગ્રહમાં અત્યાસક્તિવશ જીવ સંસારમાં જ પરિભ્રમણ કરે છે. તથા “અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રે અસકૃત્તીચૈર્ગોત્રે” ઇત્યાદિ સૂત્રો (આ ઉદ્દેશના પ્રથમાદિ સૂત્રો)માં જે કહેવામાં આવેલ છે તે સમસ્ત વિષય, અને જે આગળ કહેવામાં આવશે તે બધા મેં પોતાની નિજ બુદ્ધિથી કલ્પના કરી કહેલ નથી, પણ તીર્થકરાદિક દેવોએ પોતાપોતાની પરિષદમાં પૃથક્ પૃથક્ રૂપથી એમ-જ-કહેલ છે, તેની પરંપરાથી જે પ્રકારે આ વિષય આદ્યો





ન ચૌધમિતિ, ઓઘં તર્તું ન ચ સમર્થા ભવન્તીત્યર્થઃ સ્પષ્ટઃ । કિં ચ-એતે ‘અતીરંગમાઃ’ તીરં ન ગચ્છન્તીત્યતીરંગમાઃ, એતે વીતરાગપ્રણીતરત્નત્રયસમારાધનાભાવાત્ તીરં ગન્તું સમર્થા ન ભવન્તીત્યર્થઃ, અપિ ચ-‘અપારંગમાઃ’ પારસ્તટસ્તં ગચ્છન્તીતિ પારંગમાઃ, ન પારંગમા અપારંગમાઃ, સમ્યગુપદેશાભાવાત્પારગમનમનસોઽપિ ઉત્સૂત્રપ્રરૂપણાત્, હૈ । સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર વિકલ જીવોં કો હી મિથ્યાદૃષ્ટિ કહા ગયા હૈ । સમ્યક્જ્ઞાન કે અભાવ સે સમ્યગ્દર્શન કા અભાવ ભી સ્વતઃ સિદ્ધ હૈ, અતઃ ઉસે યહાં પ્રથક્ રૂપસે નહીં કહા ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ યદ્યપિ ઓઘ કો પાર કરને કે લિયે લાલાયિતમન રહતે હૈં પરંતુ ઉનકે પાસ પાર કરનેકા ઉપાયસ્વરૂપ વિવેકકા અભાવ હોને સે વે ઉસે પાર નહીં કર સકતે । યહીં વાત “ન ચૌધં તર્તુ” ઇસ પદ સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં । સંસારરૂપ સમુદ્ર સે પાર હોને કે લિયે સર્વ પ્રથમ સમકિત કી જરૂરત પડતી હૈ । શાસ્ત્ર મેં સમકિત કો લેવટિયા કી ઉપમા દી ગઈ હૈ । જિસ પ્રકાર વિના લેવટિયા કે નૌકા જીવોં કો જલાશય સે પાર નહીં ઉતાર સકતી, ઉસી પ્રકાર ઇસ સંસારરૂપ સમુદ્ર સે જીવ વિના સમકિત કો પાવે કબી ભી પાર નહીં ઉતર સકતા । સમકિત કે વિષય મેં પીછે વિવેચન કિયા જા ચુકા હૈ ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સંસારરૂપી સમુદ્ર કે તીર કો ઓર પાર કો પાનેકે લિયે અસમર્થ ઇસલિયે હૈં કિ-યે “અતીરંગમ” ઓર “અપારંગમ” હૈં ।

સમ્યક્ચારિત્ર વિકલ જીવો ને મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ કહેલ છે. સમ્યક્જ્ઞાનના અભાવથી સમ્યગ્દર્શનનો અભાવ પણ સ્વતઃ સિદ્ધ છે માટે તેને આ ઠેકાણે પૃથક્ રૂપથી કહેલ નથી.

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ યદ્યપિ ઓઘનો પાર કરવા માટે લાલાયિત મન રાખે છે પરંતુ તેની પાસે પાર કરવાના ઉપાયસ્વરૂપ વિવેકનો અભાવ હોવાથી પાર કરી શકતા નથી. તે વાત “ન ચૌધં તર્તુ” એ પદથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે. સંસાર રૂપ સમુદ્રનો પાર કરવા માટે સર્વ પ્રથમ સમકિતની જરૂર પડે છે. શાસ્ત્રમાં સમકિતને જેવટિયાની ઉપમા આપેલ છે. જે પ્રકારે જેવટિયા વગર નૌકા જીવોને જલાશયથી પાર નહિ ઉતારી શકે, તે પ્રકારે આ સંસારરૂપ સમુદ્રથી જીવ વિના સમકિત મેળવ્યે કોઈ વખત પાર ઉતરી શકતા નથી. સમકિતના વિષયમાં પાછળ વિવેચન કરવામાં આવેલ છે.

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સંસારરૂપી સમુદ્રના તીરનો પાર કરવાને માટે અસમર્થ એ માટે છે કે તે “અતીરંગમ” અને “અપારંગમ” છે. વીતરાગપ્રણીત રત્ન-



તત્રૈવ પ્રવૃત્તત્વાત્, ઉન્માર્ગપ્રચારકત્વાચ્ચ પારં ગન્તું પ્રભવો ન ભવન્તીત્યર્થઃ । ‘અતીરંગમાઃ’ ‘અપારંગમાઃ’ इत्युभयत्रापि नञो ‘भवन्ती’—त्यत्र भवनक्रियायामन्वये आर्ष-  
ત્વાદસમર્થસમાસો बोध्यः । ते तीरं तितीर्षवोऽपि पारं पिपारयिषवोऽपि स्वाभिमत-  
शास्त्रप्रवृत्तयो नैव तीरं गच्छन्ति, नापि पारं प्राप्नुवन्ति । लोके तीरपारयोरेकार्थत्वेऽ-  
पि अत्र तीरपदेन मोहनीयक्षयः, पारपदेन घातिकर्मक्षयो गृह्यत इति विशेषान्न पौन-  
रुक्त्यम् । ओषं तितीर्षवोऽपि कुतो न तीरपारगामिनो भवन्तीत्याह—‘आदानीय’—

वीतरागप्रणीत रत्नत्रय की आराधना का इनमें अभाव होने से ये ‘अती-  
रंगम’ और सम्यक् उपदेश की प्राप्ति का अभाव होने से पार प्राप्त करने  
के लिये अभिलाषी होते हुए भी ये उत्सूत्र के प्ररूपक और उन्मार्ग के  
प्रचारक होने की वजह से ‘अपारंगम’ हैं । लोक में तीर और पार शब्द  
का एक ही वाच्यार्थ होता है फिर भी सूत्र में जो इन दो शब्दों का प्रयोग  
किया है, उससे यह बात ज्ञात होती है कि—तीर शब्द से घाती कर्मों का  
क्षय और पार शब्द से अघातिया कर्मों का अभाव अर्थ होता है ।

“आदानीयं चादाय तस्मिन् स्थाने न तिष्ठति” आदानीय शब्द का  
अर्थ मुक्ति जिससे प्राप्त की जाती है ऐसा चारित्र्य है । मिथ्यादृष्टि जीव  
परिग्रह में मूर्च्छित होने से अपनी कल्पनानुसार चारित्र्य का आराधन  
करते हैं । मुक्ति तो सम्यक्चारित्र्य के आराधन से प्राप्त होती है । जिसमें  
सावद्य प्रवृत्तिका लेश नहीं है उसका नाम सम्यक्चारित्र्य है । जैसे २  
जीव गुणस्थानों की प्राप्ति करता जाता है वैसे २ गृहीतचारित्र्यमें उज्ज्वलता

ત્રયની આરાધનાનું તેમાં અભાવ હોવાથી તે ‘અતીરંગમ’ અને સમ્યક્ ઉપદેશની  
પ્રાપ્તિનો અભાવ હોવાથી પાર પ્રાપ્ત કરવા માટે અભિલાષી હોવા છતાં તે ઉત્સૂ-  
ત્રના પ્રરૂપક અને ઉન્માર્ગના પ્રચારક હોવાથી ‘અપારંગમ’ છે. લોકમાં તીર  
અને પાર શબ્દનો એક જ વાચ્યાર્થ થાય છે તો પણ સૂત્રમાં જે બે શબ્દોનો  
પ્રયોગ કર્યો છે. તેનાથી એ વાત જ્ઞાત થાય છે કે—તીર શબ્દથી ઘાતિયા કર્મોનો  
ક્ષય અને પાર શબ્દથી અઘાતિયા કર્મોનો અભાવ અર્થ થાય છે.

“આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ”

આદાનીય શબ્દનો અર્થ મુક્તિ જેનાથી પ્રાપ્ત થાય છે એવું ચારિત્ર્ય છે.  
મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહમાં મૂર્છિત હોવાથી પોતાની કલ્પનાનુસાર ચારિત્ર્યનું આરા-  
ધન કરે છે, મુક્તિ તો સમ્યક્ચારિત્ર્યના આરાધનથી પ્રાપ્ત થાય છે. જેમાં સાવધ  
પ્રવૃત્તિનો લેશ પણ નથી તેનું નામ સમ્યક્ચારિત્ર્ય છે. જેમ જેમ જીવ ગુણસ્થાનોની  
પ્રાપ્તિ કરતો જાય છે તેમ તેમ ગૃહીત ચારિત્ર્યમાં ઉજ્જવલતા આવતી જાય છે,

મિત્યાદિ, સ તીરપારજિગમિષુઃ આદાનીયમ્=આદીયતે=પ્રાપ્યતે મોક્ષોડનેત્યા-  
દાનીયં=ચારિત્રં, તદાદાય=સમારાધનજ્ઞાનવિષયીકૃત્ય તસ્મિન્=ચારિત્રસ્થાને ન  
તિષ્ઠતિ પરિગ્રહમૂર્ચ્છિતત્વાત્,

યદ્વા—આદાનીયં=દાસીદાસહસ્ત્યશ્વરથધનધાન્યસુવર્ણાદિકં, તદ્ આદાય=  
ગૃહીત્વા તત્ર વિમુહ્ય, અથવા મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકષાયયોગૈરાદાનીયં=કર્મ ગૃહી-  
ત્વા રત્નત્રયાત્મકે મોક્ષમાર્ગે ન તિષ્ઠતિ=આત્માને ન સ્થાપયતિ। ન સ કેવલં સર્વજ્ઞો-  
પદેશસ્થાને તિષ્ઠતિ, પ્રત્યુત વિપરીતાચારમાચરતીત્યાહ—‘વિતથ’—મિતિ, અલેદજ્ઞઃ  
=પરપીડાનભિજ્ઞઃ, વિતથં=મિથ્યાત્વમોહનીયં પ્રાપ્ય=લબ્ધ્વા તત્રૈવ સ્થાને=પરિગ્રહા-  
દિમૂર્ચ્છાયાં તિષ્ઠતિ, તત્રૈવ જીવનં યાપયતીત્યર્થઃ। શબ્દાદિકામગુણાસક્તસજ્જી-  
વજીવનિકાયસમારમ્ભવાન્ પરિગ્રહમૂર્ચ્છિતો જ્ઞાનાવરણીયાદિક્ષણકર્માણિ સ-  
મુપાર્જયન્નજન્નં નરકનિગોદાદિવ્યપદેશં લભત इत्याशयः ॥ सू० ७ ॥

આતી જાતી હૈ। મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સમકિત કે અભાવ મેં પ્રથમ ગુણસ્થાન-  
વર્તી હોતા હૈ અતઃ વહ સમકિતસહિત ચારિત્ર કા આરાધન નહીં કર  
સકતા, હસલિયે તીર ઓર પારકે લાભ સે સદા વંચિત રહા કરતા હૈ।

અથવા—આદાનીય શબ્દ કા અર્થ—દાસી, દાસ, હસ્તિ, અશ્વ, રથ, ધન,  
ધાન્ય ઓર સુવર્ણાદિક પરિગ્રહ મી હૈ। મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હસી પરિગ્રહ  
મેં અત્યન્ત આસક્ત રહતા હૈ હસ લિયે વહ રત્નત્રયાત્મક મોક્ષમાર્ગ મેં  
કમી મી સ્થિતિ કા લાભ નહીં કર સકતા। આદાનીય શબ્દ કા અર્થ કર્મ  
મી હૈ, હસ કર્મ કો વહ મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કષાય, પ્રમાદ ઓર યોગોં  
દ્વારા ગ્રહણ કરતા હૈ। કર્મકે સદ્ભાવ મેં જીવ શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપરૂપ મુક્તિ  
કી પ્રાપ્તિ સે દૂર હી રહતા હૈ। હસ વિષય મેં પહિલે લિખા જા ચુકા હૈ। જબ

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સમકિતના અભાવમાં પ્રથમગુણસ્થાનવર્તી થાય છે, માટે તે  
સમકિતસહિત ચારિત્રનું આરાધન કરી શકતા નથી, માટે તીર અને પારના  
લાભથી વંચિત રહે છે.

અથવા—આદાનીય શબ્દનો અર્થ — દાસી, દાસ, હસ્તિ, અશ્વ, રથ, ધન,  
ધાન્ય અને સુવર્ણાદિક પરિગ્રહ પણ છે, મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ આ પરિગ્રહમાં  
અત્યન્ત આસક્ત રહે છે, જેથી તે રત્નત્રયાત્મક મોક્ષમાર્ગમાં કંઈ વખત  
પણ સ્થિતિનો લાભ કરી શકતો નથી. આદાનીય શબ્દનો અર્થ કર્મ પણ  
છે. આ કર્મને તે મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કષાય, પ્રમાદ અને યોગોદ્વારા ગ્રહણ  
કરે છે, કર્મના સદ્ભાવમાં જીવ શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપરૂપ મુક્તિની પ્રાપ્તિથી  
દૂર જ રહે છે. આ વિષયમાં પહેલાં લખવામાં આવેલું છે. — જ્યાં સુધી મુક્તિના



યો નરકાદિવ્યપદેશભાગૂ ન ભવતિ, યથ્ચ ભવતિ તં દર્શયતિ—‘ઉદ્દેસો’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઉદ્દેસો પાસગસ્સ નત્થિ, બાલે પુણ નિહે કામસમ-  
ગુણે અસમિયદુક્ખે દુક્ખી દુક્ખાણમેવ આવહં અણુપરિયટ્ટહિત્તિ  
વેમિ ॥ સૂ. ૮ ॥

છાયા—ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ, બાલઃ પુનઃ સ્નિહઃ કામસમનુજ્ઞોઽશ્મિત-  
દુઃખો દુઃખી દુઃખાનામેવાઽઽવર્તમનુપરિવર્તતે । ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘ઉદ્દેશ’ ઇત્યાદિ, પશ્યતીતિ પશ્યઃ, પશ્ય એવ પશ્યકઃ=પરિજ્ઞાત-  
સકલહેયોપાદેયસ્તીર્થક્કરગણધરાદિસ્તસ્ય વિદિતવેદિતવ્યસ્ય, ઉદ્દિશ્યતે ઇત્યુ-  
દ્દેશઃ=નરકાદિવ્યપદેશો નારકાદિપર્યાયવ્યવહાર ઇતિ યાવત્, અત્ર વ્યપદેશાર્થકો-  
દેશશબ્દકથનેન નામકર્મણઃ સકલાપ્યુત્તરપ્રકૃતિગ્રાહ્યા । નાસ્તિ=નૈવ વર્તતે તસ્ય  
સર્વજ્ઞત્વાત્, ન તસ્ય વ્યપદેશાપેક્ષા, તસ્મિન્નેવ ભવે તસ્ય મોક્ષપ્રાપ્તેઃ ।

તક મુક્તિ કે કારણોં કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી તબ તક મુક્તિ નહીં મિલ  
સકતી હૈ । મુક્તિકા કારણ રત્નત્રય હૈ । જબ તક જીવ કો ઇન તીનોં કી  
પૂર્ણતા પ્રાપ્ત નહીં હોતી તબ તક મુક્તિકા માર્ગ ઉસકે હાથમેં નહીં આતા ।  
મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ જબ ઇસ માર્ગ કી પ્રાપ્તિ સે હી રહિત હૈ તબ વહ મુક્તિ  
કા લાભ ભી કૈસે કર સકતા હૈ? યહી સર્વજ્ઞ કા ઉપદેશ હૈ । ઇસ સર્વજ્ઞ  
કે ઉપદેશ કી ઓર ઉસ કી જરા ભી રુચિ જાગ્રત નહીં હોતી હૈ, યહી  
મિથ્યાત્વ કા જોર હૈ । ઇસ જોર સે વહ અપની મનમાની પ્રવૃત્તિ કરને મેં  
લગા રહતા હૈ, ઓર ઇસી કી વજહ સે વહ પરિગ્રહમેં મૂર્છિત હોતા  
રહતા હૈ । પરિગ્રહ કે સંગ્રહ કરને મેં ‘જીવોં કા વિઘાત મેરે દ્વારા હોતા હૈ’  
ઇસકી ઓર ઉસકા લક્ષ્ય હી નહીં જાતા, ઓર અપના સમસ્ત જીવન  
અવિરત અવસ્થા મેં હી વ્યતીત કર દેતા હૈ ।

કારણોની પ્રાપ્તિ થતી નથી ત્યાં સુધી મુક્તિ મળી શકતી નથી. મુક્તિનું કારણ  
રત્નત્રય છે. જ્યાં સુધી જીવને આ ત્રણેની પૂર્ણતા પ્રાપ્ત થતી નથી ત્યાં સુધી  
મુક્તિનો માર્ગ તેના હાથમાં આવતો નથી. મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ જ્યારે આ માર્ગની  
પ્રવૃત્તિથી જ રહિત છે તો પછી તે મુક્તિનો લાભ પણ કેવી રીતે મેળવી શકે  
એ જ સર્વજ્ઞનો ઉપદેશ છે. આ સર્વજ્ઞના ઉપદેશ તરફ તેની જરા પણ રૂચિ  
જાગ્રત નથી થતી તે જ મિથ્યાત્વનું જોર છે. તે જોરથી તે પોતાની મનમાની  
પ્રવૃત્તિ કરવામાં લાગ્યો રહે છે, અને તેના પ્રભાવે તે પરિગ્રહમાં પણ મૂર્છિત  
થતો રહે છે. પરિગ્રહનો સંગ્રહ કરવામાં ‘જીવોનો વિઘાત મારા દ્વારા થાય છે’  
તે તરફ તેનું લક્ષ્ય પણ જતું નથી, અને પોતાનું સમસ્ત જીવન અવિરત અવ-  
સ્થામાં જ વ્યતીત કરે છે.



इस सूत्र का सारांश यही है कि मिथ्यादृष्टि जीव सांसारिक विषय भोगों में आसक्त बन कर परिग्रह का संग्रह करता रहता है। इस प्रवृत्ति में उसके द्वारा षट्काय के जीवों का विघात भी होता है परन्तु उसकी वह प्रवृत्ति संयमयुक्त न होनेसे ज्ञानावरण आदि चिक्कण कर्मों के तीव्र अनुभागबंध में और तीव्र स्थितिवंध में प्रधान कारण बनती है, अतः वह मुक्तिसुख के लाभ से वंचित रहता है, इतना ही नहीं प्रत्युत चतुर्गति रूप संसार में नरकनिगोदादि के कष्टों का ही भोक्ता बनता है ॥ सू० ७ ॥

नरकनिगोदादि कष्टोंका भोक्ता कौन होता है और कौन नहीं होता है? इसी विषय को फिर से इस सूत्र में अन्वयव्यतिरेकसुख से प्रतिपादन करते हैं—“उद्देशो पासगस्स नत्थि” इत्यादि।

देखनेवाले का नाम पश्य है, स्वार्थ में ‘क’ प्रत्यय होने से पश्यक शब्द बन जाता है। पश्य शब्द का जो अर्थ है वही पश्यक का है।

प्रश्न—संसार के संज्ञी और असंज्ञी चतुरिन्द्रियादि जितने भी जीव हैं वे सब देखनेवाले हैं अतः ये भी पश्यक हो जायेंगे, परन्तु इस सूत्र में इन पश्यकों का तो ग्रहण किया ही नहीं गया है, क्यों कि “उद्देशः पश्यकस्य नास्ति” इस कथन से उनमें उद्देश का अभाव नहीं है, वहां पर तो यह मनुष्यजातीय है, यह चतुरिन्द्रिय जातीय है, इत्यादि व्यवहार

આ સૂત્રનો સારાંશ એ છે કે—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સાંસારિક વિષયભોગોમાં આસક્ત બની પરિગ્રહનો સંગ્રહ કરતો રહે છે. આ પ્રવૃત્તિમાં તે દ્વારા ષટ્કાય જીવોનો ઘાત પણ થાય છે, પરંતુ તેની તે પ્રવૃત્તિ સંયમયુક્ત ન હોવાથી જ્ઞાનાવરણ આદિ ચિક્કણા કર્મોના તીવ્ર અનુભાગબંધમાં પ્રધાન કારણ બને છે, માટે તે મુક્તિસુખના લાભથી વંચિત રહે છે, આટલું જ નહિ પ્રત્યુત ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં નરકનિગોદાદિના કષ્ટોનો પણ ભોક્તા બને છે. ॥ સૂ. ૭ ॥

નરકનિગોદાદિ કષ્ટોનો ભોક્તા કોણ બને છે? અને કોણ બનતો નથી? તે વિષયને ફરીથી આ સૂત્રમાં અન્વયવ્યતિરેકમુખથી પ્રતિપાદન કરે છે—“ઉદ્દેશો પાસગસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ.

દેખવાવાળાનું નામ પશ્ય છે. સ્વાર્થમાં ‘ક’ પ્રત્યય હોવાથી પશ્યક શબ્દ બને છે, પશ્ય શબ્દનો જે અર્થ છે તેજ પશ્યકનો છે.

પ્રશ્ન—સંસારના સંજ્ઞી અને અસંજ્ઞી ચતુરિન્દ્રિયાદિ જેટલા પણ જીવ છે તે બધા દેખવાવાળા છે માટે તે પણ પશ્યક થઈ જશે. પરંતુ આ સૂત્રમાં આ પશ્યકોનો તો ગ્રહણ કરવામાં આવેલ નથી, કારણ કે “ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” આ કથનથી તેમાં ઉદ્દેશનો અભાવ નથી, તે જગ્યોએ તો એ મનુષ્યજાતીય છે,

હોતા હી હૈ । ઉદ્દેશ શબ્દ કા વ્યુત્પત્ત્યર્થ—“ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશઃ, નર-કાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્” યહ નારકી હૈ, અર્થાત્ યહ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ જીવ હૈ, ઇત્યાદિ વ્યવહાર કો હી ઉદ્દેશ કહા હૈ । ઇસ ઉદ્દેશ કા અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી જીવોં મેં નહીં આતા હૈ, અતઃ “ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” યહ કૈસે કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—યહાં પર પહિલે યહ જો કહા ગયા હૈ કિ—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહ મેં આસક્ત બન કર ષટ્કાય કે જીવોં કે ઉપમર્દન કરનેવાલા હોને સે જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોંકા બંધ કર નરકનિગોદાદિ ગતિયોં કે અનન્ત દુઃખોં કા ભોક્તા બનતા હૈ, પરન્તુ જો પરિગ્રહ મેં આસક્ત નહીં હૈં વે ષટ્કાય કે જીવોં કે રક્ષક હોને સે કર્મોં કે બંધ કરનેવાલે નહીં હોતે, ઓર ક્રમશઃ કેવલજ્ઞાન કો પાકર મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કર લેતે હૈં, એસે જીવ હી યહાં પશ્યક શબ્દ સે ગ્રહણ કિયે હૈં । વે સાક્ષાત્ તીર્થંકર ગણધરાદિ દેવ હૈં । જબ તક વે મુક્તિ નહીં પ્રાપ્ત કર લેતે તબ તક નામ કર્મ કી કુછ પ્રકૃતિયોં કા સદ્ભાવ હોને સે અનમેં ભી મનુષ્યપર્યાય વિશિષ્ટ આદિ કા વ્યવહાર હોતા હી હૈ, પરન્તુ ભવિષ્ય મેં અસ પ્રકાર કા વ્યવહાર અનમેં સર્વથા નહીં હોનેવાલા હૈ, ઇસ ભવિષ્યત્પ્રજ્ઞાપનનય કી

એ ચતુરિન્દ્રિયજ્ઞાતીય છે, ઇત્યાદિ વ્યવહાર થાય જ છે. ઉદ્દેશશબ્દનો વ્યુત્પત્ત્યર્થ “ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશઃ—નરકાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્” આ નારકી છે અર્થાત્ એ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ જીવ છે, ઇત્યાદિ વ્યવહારને જ ઉદ્દેશ કહ્યો છે. આ ઉદ્દેશનો અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી જીવોમાં આવતો નથી, માટે “ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” એ કેમ કહેવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર—આ જગ્યાએ પહેલાં એ કહેવામાં આવેલ છે કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહમાં આસક્ત બની ષટ્કાય જીવોના ઉપમર્દન કરવાવાળા હોવાથી જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોનો બંધ કરી નરકનિગોદાદિ ગતિયોના અનંત દુઃખોના ભોક્તા બને છે, પરંતુ જે પરિગ્રહમાં આસક્ત નથી તે ષટ્કાય જીવોના રક્ષક હોવાથી કર્મોના બંધ કરવાવાળા નથી બનતા, અને ક્રમશઃ કેવળજ્ઞાનને મેળવી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરી લે છે. એવા જીવ જ અહીં પશ્યક શબ્દથી ગ્રહણ કરેલ છે. તે સાક્ષાત્ તીર્થંકર ગણધરાદિ દેવ છે. જ્યાં સુધી તે મુક્તિ પ્રાપ્ત નથી કરી લેતાં ત્યાં સુધી નામકર્મની થોડી પ્રકૃતિયોનો સદ્ભાવ હોવાથી તેમાં પણ મનુષ્યપર્યાયવિશિષ્ટ આદિનો વ્યવહાર થાય છે, પરંતુ ભવિષ્યમાં તે પ્રકારનો વ્યવહાર તેમાં સર્વથા નહિ બનવાવાળો છે. આ ભવિષ્યત્પ્રજ્ઞાપનનયની અપેક્ષાથી



અપેક્ષા સે યહાં પર મી “પશ્યકસ્ય ઉદ્દેશો નાસ્તિ” પશ્યક કો ઉદ્દેશ નહીં હૈ, યહ કથન સુસંગત સમજના ચાહિયે ।

પ્રશ્ન—કૈસે જાના જાતા હૈ કિ-ઉનમેં આગે ચલકર સમસ્ત અવશિષ્ટ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયાં સર્વથા ક્ષય હો જાનેવાલી હૈ? પ્રત્યક્ષ સે તો યહ વાત જ્ઞાત હો નહીં સકતી, ક્યોં કિ પ્રત્યક્ષ તો વર્તમાનસંબંધી પદાર્થ કો હી ગ્રહણ કરતા હૈ । ઉસ પ્રકાર કી પર્યાયસંબંધી વર્તમાન તો હૈ નહીં । અનુમાન મી ઇસ વિષય કો નહીં જાન સકતા, ક્યોં કિ તદવિનાભાવી કોઈ મી ઇસા હેતુ નહીં હૈ જો ઇસ વાત કા અનુમાપક હો, જિસકે વિના જો ન હો ઉસકો અવિનાભાવી કહતે હૈં ।

ઉત્તર—યહ તો હમ મી માનતે હૈં કિ-ચક્ષુરાદિદિન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાન રૂપ પ્રત્યક્ષ (સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ) ઇસ પ્રકાર કી અવસ્થાકો નહીં જાન સકતા, પરંતુ અનુમાનપ્રમાણ સે ઇસ વાત કી સિદ્ધિ હોતી હૈ કિ-અવશિષ્ટ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયોં કા વહાં પર સર્વથા ક્ષય હોગા । યહ કૈસે કહા કિ તદવિનાભાવી હેતુ વહાં પર નહીં હૈ । “તસ્ય સર્વજ્ઞત્વાત્” અર્થાત્ “વે સર્વજ્ઞ હૈં” યહી તદવિનાભાવી હેતુ હૈ । જિસ પ્રકાર ધૂમ વહ્નિ કા અવિનાભાવી હેતુ હૈ ઉસી પ્રકાર ઘાતિયા કર્મોં કે અભાવ સે ઉત્પન્ન

તે જ્યોએ પણ “પશ્યકસ્ય ઉદ્દેશો નાસ્તિ” પશ્યકને ઉદ્દેશ નથી, એ કથન સુસંગત સમજવું જોઈએ.

પ્રશ્ન—કેવી રીતે જાણવામાં આવે કે તેમાં આગળ સમસ્ત અવશિષ્ટ નામકર્મની પ્રકૃતિયો સર્વથા ક્ષય થઈ જવાવાળી છે? પ્રત્યક્ષથી તો એ વાત જ્ઞાત થઈ શકતી નથી, કારણ કે પ્રત્યક્ષ તો વર્તમાનસંબંધી પદાર્થને જ અહણ કરે છે. તેવા પ્રકારની પર્યાયસંબંધી વર્તમાન તો છે નહિ. અનુમાનથી પણ આ વિષયને જાણી શકાતો નથી, કારણ કે તદવિનાભાવી કોઈ પણ એવો હેતુ નથી જે આ વાતનો અનુમાપક હોય. જેના વિના જે ન હોય તેને અવિનાભાવી કહે છે.

ઉત્તર—એ તો અમે પણ માનીએ છીએ કે-ચક્ષુરાદિદિન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાનરૂપ પ્રત્યક્ષ (સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ) આ પ્રકારની અવસ્થાને જાણી શકતા નથી, પરંતુ અનુમાનપ્રમાણથી આ વાતની સિદ્ધિ થાય છે કે-અવશિષ્ટ નામકર્મની પ્રકૃતિઓનો ત્યાં સર્વથા ક્ષય થશે. એમ કેમ કહેવાય કે તદવિનાભાવી હેતુ ત્યાં નથી. “તસ્ય સર્વજ્ઞત્વાત્” અર્થાત્ “તે સર્વજ્ઞ છે” એજ તદવિનાભાવી હેતુ છે, જેવી રીતે ધુમાડો આગનો । અવિનાભાવી હેતુ છે, તેવી રીતે



સર્વજ્ઞ અવસ્થા મી શેષ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયોં કા ભવિષ્ય મેં વહાં વિલય-  
હોનેરૂપ સાધ્ય કી સિદ્ધિ કરાને મેં અવિનાભાવી હેતુ હૈ અતઃ ઇસ અવિના-  
ભાવી હેતુ સે વહાં પર સાધ્યકી સિદ્ધિ હોને મેં કોઈ મી બાધા નહીં આતી ।

પ્રશ્ન—અપને સાધ્ય કો સિદ્ધ કરને મેં હેતુ કી સિદ્ધિ પ્રધાન માની  
જાતી હૈ । જિસ સાધ્ય કા હેતુ સિદ્ધ નહી હોતા વહ અપને સાધ્યકી સિદ્ધિ  
નહીં કર સકતા । સાધ્ય અસિદ્ધ હોતા હૈ, હેતુ તો સિદ્ધ હોના ચાહિયે ।

ઉત્તર—હેતુ સિદ્ધ હી હૈ—અસિદ્ધ નહીં, ભૂત ભવિષ્યત્ ઓર વર્તમાન  
કાલીન સમસ્ત દ્રવ્ય ઓર ઉનકી અનન્તાનન્તપર્યાયોં કો હસ્તામલકવત્  
ઐકકાલાવચ્છેદેન ( ઐક કાલમેં ) જાનનેવાલા હોને સે તીર્થંકરાદિ પ્રભુ  
સર્વજ્ઞ હૈ । જ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિયાકર્મોં કે સર્વથા વિનષ્ટ હોને સે  
ઉન્હેને અપની જીવન્મુક્ત અવસ્થા મેં કેવલજ્ઞાનરૂપી સૂર્ય કો પ્રાપ્ત કરલિયા  
હૈ । ઇસ પ્રશસ્તતમ ઓર અસાધારણ જ્ઞાન કે દ્વારા હી યે વિશ્વ કે સમસ્ત  
પદાર્થસાર્થકો જાનતે રહતે હૈ । ઉનકા જ્ઞાન સમસ્ત પદાર્થોં કા જ્ઞાતા હૈ,  
યહ વાત અનુમાન પ્રમાણ સે સિદ્ધ હોતી હૈ, ક્યોં કિ જબ છદ્મસ્થ જીવોં  
કે જ્ઞાનગુણ મેં જાનને કી હીનાધિકતા પાઈ જાતી હૈ તો ઉસસે યહ વાત

ઘાતિયા કર્મોના અભાવથી ઉત્પન્ન સર્વજ્ઞ અવસ્થા પણ શેષ નામકર્મની પ્રકૃતિ-  
યોના ભવિષ્યમાં ત્યાં વિલયહોવારૂપ સાધ્યની સિદ્ધિ કરાવવામાં અવિનાભાવી  
હેતુ છે માટે આ અવિનાભાવી હેતુથી ત્યાં સાધ્યની સિદ્ધિ થવામાં કોઈ અડ-  
ચાણ આવતી નથી.

પ્રશ્ન—પોતાના સાધ્યને સિદ્ધ કરવામાં હેતુની સિદ્ધિ પ્રધાન માનવામાં  
આવે છે. જે સાધ્યનો હેતુ સિદ્ધ થતો નથી ને પોતાના સાધ્યની સિદ્ધિ કરી  
શકતો નથી. સાધ્ય અસિદ્ધ થાય છે, હેતુ તો સિદ્ધ થવો જોઈએ.

ઉત્તર—હેતુ સિદ્ધ જ છે. અસિદ્ધ નહિ. ભૂત ભવિષ્યત્ અને વર્તમાન  
કાલીન સમસ્ત દ્રવ્ય અને તેની અનન્તાનન્ત પર્યાયોને હસ્તામલકવત્  
ઐકકાલાવચ્છેદેન ( એક કાળમાં ) બાણવાવાળા હોવાથી તીર્થંકરાદિ પ્રભુ સર્વજ્ઞ  
છે. જ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિયા કર્મોનો સર્વથા વિનષ્ટ થવાથી તેને પોતાની  
જીવન્મુક્ત અવસ્થામાં કેવળજ્ઞાનરૂપી સૂર્યને પ્રાપ્ત કરેલ છે. આ પ્રશસ્તતમ અને  
અસાધારણ જ્ઞાનદ્વારા વિશ્વના સમસ્ત પદાર્થોને બાણતા રહે છે. તેનું જ્ઞાન સમસ્ત  
પદાર્થોનું જ્ઞાતા છે. એ વાત અનુમાન પ્રમાણથી સિદ્ધ થાય છે. કારણ કે જ્યારે  
છદ્મસ્થ જીવોને જ્ઞાનગુણમાં બાણવાની હીનાધિકતા મેળવી શકાય છે તો તેનાથી

યદ્વા—પશ્યકસ્ય=સર્વજ્ઞસ્ય ઉદ્દેશઃ=ઉપદેશઃ ‘સુચં મે આસં તેણ’—મિત્યાદિઃ ‘તંમિ ઠાણંમિ ચિદ્દુ’ इत्यन्तः पूर्वोक्तस्वरूपः, ‘વાલે પુણ નિહે’ इत्यारभ्य ‘आणाए आराहिया वि भवइ’ इतिपर्यन्तवक्ष्यमाणस्वरूपो वा नास्ति=न तस्य प्रयोजनं वर्तत इत्यर्थः, सकललोकालोकपदार्थसार्थस्य हस्तामलकवत्केवलालोकविषयीभूतत्वात्। कं प्रत्युपदेशः? इत्याह—‘वालः’ इत्यादि। यः पुनः बालः=परिग्रह-गृहो ज्ञानक्रियाविकलः, स्निह्यते इति स्निहः=विषयानुरागी, कामसमनुज्ञः—कामान् भी सिद्ध होती है कि एक ज्ञान ऐसा भी है कि जहां पर त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थों का अवलोकन-ज्ञान युगपत् होता है। जिस प्रकार परिमाण की तरतमता आकाश में अनन्त हो कर ठहर जाती है इसी प्रकार ज्ञान की अनन्तता भी इनमें स्थित होकर अपना स्थान प्राप्त करती है। संसार में अनन्त पदार्थ हैं, उनमें कई सूक्ष्म हैं, कई बादर हैं, कई अन्तरित हैं, कई अनन्तरित हैं, कई निकट हैं, कई दूर हैं। इन सब का यथार्थ रूप से प्रतिपादन करना बिना सर्वज्ञता के नहीं हो सकता, और इन अनन्त पदार्थों को जाननेवाला ज्ञान भी अनन्त ही होता है। जैनशास्त्र में ऐसे ज्ञान को ही केवलज्ञान कहा है, और इस ज्ञानसंपन्न आत्मा को सर्वज्ञ कहा है।

यह व्याख्या “नरक निगोदादि पर्यायों के दुःख सर्वज्ञ नहीं प्राप्त करते? तथा वे इस प्रकार के व्यपदेश से रहित होते हैं?” इस प्रकार के व्यतिरेकमुखसे की गई है। अब उद्देश की समाप्ति करते हुए सूत्रकार अन्वयमुख से व्याख्या करते हैं—

તે જાત સિદ્ધ થાય છે કે એક જ્ઞાન એવું પણ છે કે જ્યાં ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત પદાર્થોનું અવલોકન-જ્ઞાન યુગપત્ થાય છે. જે પ્રકારે પરિણામની તરતમતા આકાશમાં અનન્ત બનીને અટકી બાય છે તે પ્રકારે જ્ઞાનની અનન્તતા પણ તેમાં સ્થિત બનીને પોતાનું સ્થાન પ્રાપ્ત કરે છે. સંસારમાં અનન્ત પદાર્થ છે, તેમાં કેઈ સૂક્ષ્મ છે, કેઈ બાદર છે, કેઈ અન્તરિત છે, કેઈ અનન્તરિત છે, કેઈ નિકટ છે, કેઈ દૂર છે. આ બધાનું યથાર્થરૂપથી પ્રતિપાદન કરવું સર્વજ્ઞતા વિના બની શકતું નથી, અને આ અનન્ત પદાર્થોને જાણવાવાળું જ્ઞાન પણ અનન્ત જ થાય છે. જૈનશાસ્ત્રમાં તેવા જ્ઞાને જ કેવળજ્ઞાન કહે છે, અને આ જ્ઞાનસંપન્ન આત્માને સર્વજ્ઞ કહે છે.

આ વ્યાખ્યા “નરકનિગોદાદિ પર્યાયોના દુઃખ સર્વજ્ઞ નથી પ્રાપ્ત કરતાં? તથા તે આ પ્રકારના વ્યપદેશથી રહિત હોય છે?” આ પ્રકારે વ્યતિરેકમુખથી કહેવામાં આવેલ છે. હવે ઉદ્દેશની સમાપ્તિ કરતાં સૂત્રકાર અન્વયમુખથી વ્યાખ્યા કરે છે—



=સ્પૃહા-મદનરૂપાન્ સમ્=સમ્યક્, અનુ=અનુકૂલં જાનાતીતિ કામસમનુજ્ઞ=કામ-  
ગુણાનુમોદકઃ, અત એવ અશમિતદુઃસ્વઃ-અશમિતમ્=અક્ષીણં દુઃસ્વમ્=અલબ્ધલાભાય  
લબ્ધપરિરક્ષણાય ચ વ્યગ્રતયા નિરન્તરચિન્તનરૂપં યસ્ય સોઽશમિતદુઃસ્વઃ=વિષય-  
કષાયાસક્તત્વેન નિતાન્તઃક્રાન્તસ્વાન્તઃ, અત એવ દુઃસ્વી=શારીરિક-માનસિક-પીડા-  
પીડિતઃ, દુઃસ્વાનામ્=એહિક-પારત્રિક-નાનાવિધાનામેવ, આવર્ત=સંસારચક્રમ્-

“બાલે પુણ ણિહે” ઇત્યાદિ । “સુયં મે આડસં તેણં” યહાં સે લેકર  
“તંમિ ઠાણંમિ ચિદ્દહ” યહાં તક કા પૂર્વોક્તસ્વરૂપવાલા ઉપદેશ તથા  
“બાલે પુણ ણિહે” યહાં સે લેકર “આણાપ આરાહિયા વિ ભવહ” યહાં  
તક વક્ષ્યમાણ-આગે કહા જાનેવાલા-ઉપદેશ સર્વજ્ઞની અપેક્ષા સે  
નહીં કહા ગયા હૈ । ક્યોં કિ વે કૃતકૃત્ય હૈ, ઉન્હેં કિસી ખી વસ્તુસે  
પ્રયોજન નહીં રહા હૈ, કેવલજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ હોનેસે વે સમસ્ત પદાર્થોં કો  
હસ્તામલકવત્ સાક્ષાત્ જાનતે હૈ, અતઃ યહ ઉપદેશ બાલજીવોંની  
અપેક્ષા સે હૈ । બાલ જીવ વે હૈ જો પરિગ્રહ મેં આસક્ત હૈ, જ્ઞાનક્રિયા સે  
વિકલ હૈ, વિષયાનુરાગી હૈ, કામગુણોંકે અનુમોદક હૈ, અલબ્ધ કો પ્રાપ્ત  
કરને કે લિયે તથા લબ્ધની રક્ષા કરને કે લિયે જો વ્યગ્રચિન્તિ હોને સે સદા  
ચિન્તાશીલ બને રહતે હૈ, વિષયકષાયોં મેં આસક્ત હોનેની વજહ સે  
જિનકા અન્તઃકરણ અત્યન્ત દુઃસ્વિત હોતા રહતા હૈ । ઇસ લિયે જો રાત-  
દિન શારીરિક એવં માનસિક કષ્ટોંકા અનુભવ કિયા કરતે હૈ તથા

‘બાલે પુણ ણિહે’ ઇત્યાદિ. ‘સુયં મે આડસં તેણં’ અહીંથી લઈ ‘તંમિઠાણં-  
મિચિદ્દહ’ સુધીનો પૂર્વોક્તસ્વરૂપવાળો ઉપદેશ, તથા “બાલે પુણ ણિહે” અહીંથી  
લઈને “આણાપ આરાહિયા વિ ભવહ” અહીં સુધી વક્ષ્યમાણ-આગળ કહેવામાં  
આવનાર-ઉપદેશ આ સર્વજ્ઞની અપેક્ષાથી કહેવામાં આવેલ નથી, કારણ કે તે  
કૃતકૃત્ય છે, તેને કોઈ પણ વસ્તુથી પ્રયોજન રહ્યું નથી. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ હોવાથી  
તે સમસ્ત પદાર્થોંને હસ્તામલકવત્ સાક્ષાત્ જાણે છે. માટે આ ઉપદેશ બાલ  
જીવોંની અપેક્ષાથી છે. બાલ જીવ તે છે જે પરિગ્રહમાં આસક્ત છે, જ્ઞાનક્રિયાથી  
વિકલ છે, વિષયાનુરાગી છે, કામગુણોંના અનુમોદક છે, અલબ્ધને પ્રાપ્ત કરવા,  
લબ્ધની રક્ષા કરવા માટે જે વ્યગ્રચિન્તિ હોવાથી સદા ચિન્તાશીલ બની રહે છે,  
વિષયકષાયોંમાં આસક્ત હોવાથી જેનું અંતઃકરણ અત્યંત દુઃખિત થતું રહે છે.  
માટે જે રાત દિન શારીરિક અને માનસિક કષ્ટોંનો અનુભવ કર્યા કરે છે, તથા



અનુપરિવર્તે=વટીયન્ત્રન્યાયેન મુહુર્મુહુઃ પર્યટતિ, યથા જલાવર્તે પતિતસ્તૃણાદિસ્ત-  
દાવર્તમેવાનુધાવતિ પરાધીનતયા નોન્મજ્જતિ ચ, તથૈવ વિષયૈકતાનચિત્તો વીતરાગો-  
પદેશપરાઙ્મુખો ગુરુકર્મા જીવઃ સંસારસાગરસ્ય દુઃસ્વાવર્તનિમગ્નઃ સન્ ન કદાપ્યુ-  
દ્ભૂતો ભવતીતિ બાલસ્ય સંસારપરિભ્રમણં વિજ્ઞાય તત્કારણપરિગ્રહવિષયાદિષુ ગૃદ્ધો મા  
ભૂદિતિ શિષ્યં પ્રત્યુપદેશં ઇતિ તાત્પર્યમ્ । ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તુક્ત એવ ॥ સૂ. ૮ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય તૃતીયોદેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૩ ॥

જિસ પ્રકાર રહટ ધૂમતા રહતા હૈ ઉસી પ્રકાર જો નાના પ્રકાર કે એહ-  
લૌકિક એવં પારલૌકિક દુઃખોંકો ભોગતે હુએ હસ સંસારચક્રમેં પરિ-  
ભ્રમણ કર રહે હૈં ।

એસે બાલજીવ કિ જિનકા મન વિષયોં મેં લવલીન હો રહા હૈ, વીત-  
રાગ પ્રભુ કે ઉપદેશ સે જો સર્વથા પરાઙ્મુખ હો રહે હૈં, ગુરુકર્મી હૈં, પાની  
કે આવર્ત મેં પડે હુએ તૃણકી તરહ હસ સંસારસાગર કે દુઃસ્વરૂપી  
આવર્ત મેં નિમગ્ન બન કમી ભી વહાંસે છુટકારા નહીં પા સકતે હૈં । જિસ  
તરહ પાની કે આવર્ત મેં પડે હુએ તૃણકી દશા હોતી હૈ ઉસી પ્રકાર કી  
હનકી ભી દશા હોતી હૈ । જૈસે વહ તૃણ ઉસસે બાહર નહીં નિકલને પાતા  
પ્રત્યુત ઉસમેં હધર-ઉધર ચક્કર કાટા કરતા હૈ-કમી ઉસમેં ઢૂબતા હૈ  
ઔર કમી ઉસી મેં ઉપર તૈર આતા હૈ, ઠીક હસી પ્રકાર સે હન બાલ-  
જીવોંકા ભી હસ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારચક્રમેં પરિભ્રમણ હોતા રહતા હૈ ।  
એસા સમજ કર સંયમી મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ સંસારપરિભ્રમણ કા

જે પ્રકાર રેંટ ધુમતો રહે છે તે પ્રકારે જે નાના પ્રકારનાં ઐહલૌકિક અને  
પારલૌકિક દુઃખોને ભોગવતાં આ સંસારચક્રમાં પરિભ્રમણ કરે છે.

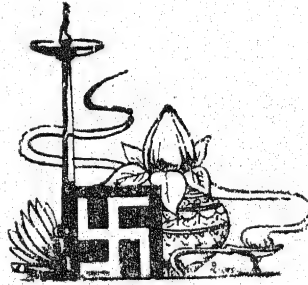
આવા બાલ જીવો કે જેના મન વિષયોમાં લવલીન રહે છે, વીતરાગ પ્રભુના  
ઉપદેશથી જે સર્વથા પરાઙ્મુખ રહે છે, ગુરુકર્મી છે. પાણીમાં પડેલા તૃણ માફક  
આ સંસારસાગરના દુઃખરૂપી આવર્તમાં નિમગ્ન બની કોઈ વખત પણ ત્યાંથી  
છુટકારો મેળવી શકતા નથી. જેવી રીતે પાણીના આવર્તમાં પડેલા તૃણની દશા  
થાય છે તે પ્રકારે તેની પણ દશા થાય છે. જેવી રીતે તે તણખલુ તેનાથી બહાર  
નીકળી શકતું નથી પણ તેમાં ચક્કર લગાવ્યા કરે છે-કોઈ વખત તેમાં ડુબે  
છે તો કોઈ વખત ઉપર તરી આવે છે, ઠીક તે પ્રકારે આ બાલ જીવોના પણ  
ચાર ગતિરૂપ સંસાર ચક્રમાં પરિભ્રમણ થયા કરે છે. એવું સમજીને સંયમી  
મુનિત્વું કર્તવ્ય છે કે તે સંસારપરિભ્રમણનું કારણ જે વિષય અને પરિસ્થિતિ

कारण जो विषय और परिग्रहादिक हैं उनमें गृह्य न बने। इस प्रकार से सूत्रकार का शिष्य के प्रति यह उपदेश है। 'ब्रवीमि' इस पद का पहिले के प्रकरणों में अर्थ कहा जा चुका है ॥ सू० ८ ॥

॥ दूसरे अध्ययनका तृतीय उद्देश संपूर्ण ॥

छे तेमां गृह्य न बने. आ प्रकारे सूत्रकारनो शिष्य प्रति आ उपदेश छे.  
इति ब्रवीमि आ पहनो पड़ेला प्रकरणेमां अर्थ करवामां आवेल छे.

॥ भीन अध्ययननो त्रीनो उद्देश संपूर्ण २-३ ॥



॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य चतुर्थोद्देशः ॥

तत्र पूर्वस्मिन्नुद्देशे 'उच्चैर्गोत्रोत्पत्त्यभिमानादिर्न कार्यः' इति प्रतिपादितम्, अत्र च 'भोगेष्वभिष्वङ्गो न कार्यः, तत्र रोगस्यावश्यं सद्भावा'—दिति दर्शयिष्यते ।

अत्रानन्तरसूत्रसम्बन्धः—'दुःखी दुःखाणमेव आवहं अणुपरिचट्ट' इति, तानि च दुःखानि रोगकारणानि भवन्त्यतो रोगानेव दर्शयति ।

॥ आचाराङ्गसूत्र के दूसरे अध्ययन का चौथा उद्देश ॥

तृतीय उद्देश का कथन हो चुका; अब चतुर्थ उद्देश का कथन प्रारंभ होता है । तृतीय उद्देश में संयमी मुनि को अपने संयम की रक्षा के लिए उच्च गोत्रमें उत्पत्ति होने का अभिमान आदि नहीं करना चाहिये यह भली भाँति समझा दिया गया है । इस चतुर्थ उद्देश में यह समझाया जायगा कि भोगों में संयमी मुनि के लिये अपने संयम की रक्षा करने के लिये अभिष्वंग-रागपरिणति-नहीं करना चाहिये । क्यों कि "भोग बुरे भवरोग बढ़ावै बैरी हैं जग जी के" इस वाक्यके अनुसार एक तो वे भवरोग बढ़ाते हैं, दूसरे उनके सेवन से अनेक शारीरिक रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं ।

इस प्रकरण का "दुःखी दुःखाणमेव आवहं अणुपरिचट्ट" इस तृतीय उद्देश के अन्तिम सूत्र से संबंध है, इसलिये सूत्रकार उन्हीं रोगों का यहां पर वर्णन करेंगे, क्यों कि दुःख रोग के कारण हुआ करते हैं ।

આચારાંગસૂત્રના બીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ.

ત્રીજા ઉદ્દેશનું કથન સમાપ્ત થયું. હવે ચોથા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ થાય છે, ત્રીજા ઉદ્દેશમાં સંયમી મુનિએ પોતાના સંયમની રક્ષા માટે ઉચ્ચ ગોત્રમાં ઉત્પત્તિ થવાને કારણે અભિમાન આદિ નહિ કરવું જોઈએ, એ સારી રીતે સમજાવી દેવામાં આવેલ છે. આ ચતુર્થ ઉદ્દેશમાં એ સમજાવવામાં આવશે કે—ભોગોમાં સંયમી મુનિએ પોતાના સંયમની રક્ષા માટે અભિષ્વંગ-રાગપરિણતિ નહિ કરવી જોઈએ, કારણ કે "ભોગ બુરે ભવરોગ બઢાવે વૈરી હૈ જગજી કે" આ વાક્ય અનુસાર એક તો તે ભવરોગ વધારે છે, બીજું તેના સેવનથી અનેક શારીરિક રોગ પણ ઉત્પન્ન થાય છે.

આ પ્રકરણના "દુઃખી દુઃખાણમેવ આવહં અણુપરિચટ્ટ" આ ત્રીજા ઉદ્દેશના અંતિમ સૂત્રથી સંબંધ છે માટે સૂત્રકાર તે રોગોના આ ઠેકાણે વર્ણન કરશે, કારણ કે રોગોના કારણથી દુઃખ થયા કરે છે.



કામભોગસેવનાદાસક્તિઃ, તથા ચાર્તૃરૌદ્રધ્યાનં, તતશ્ચ કર્મરજઃસમુપાર્જનમ્, તેન ચાત્મમાલિન્યં ભવતિ, તતો જ્ઞાનાદિગુણપ્રણાશઃ, તેનોન્માર્ગપ્રવૃત્તિઃ, તથા ચૈદ્ધિક-પારત્રિકદુઃસ્વાનિ જાયન્તે, દુઃસ્વાનિ ચ રોગાદિના ભવન્તિ, તત્ર દુઃસ્વહેતૂન્ રોગાનુપદર્શયતિ—‘ તઓ સે ’ ઇત્યાદિ ।

કામભોગોં કે સેવન સે જીવકી ઉસમેં આસક્તિ બઢતી હૈ । આસક્તિ સે આર્ત્ત ઔર રૌદ્રધ્યાન ઉત્પન્ન હોતે રહતે હૈ । ઉન ધ્યાનોં સે જીવ અશુ-ભકર્મપરમાણુઓં કા બંધ કરતા હૈ । ઉસસે આત્મા મેં મલિનતા આતી હૈ । મલિનતા કે સંબંધ સે જ્ઞાનાદિક ગુણોંકા આવરણ હોને સે જીવોં કી ઉન્માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । ઉસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે જીવ ઇહલોક ઔર પરલોક-સંબંધી અનંત યાતનાઓં કો ભોગતા હૈ । ઇસ પ્રકાર પરંપરા-સંબંધ સે કામભોગસેવન તથા ઉસ વિષય કી આસક્તિ જીવકો અનેક અનન્ત કષ્ટોં કો દેનેવાલી હોતી હૈ । પરલોકસંબંધી દુઃસ્વ જીવોં કો અશુભ કર્મોદય સે પ્રાપ્ત હોતા હૈ । વહાં પર ભી અનેક પ્રકાર કે શારીરિક તથા માનસિક દુઃસ્વ ઇસ જીવ કો ફેલને પઢતે હૈ ।

ઇસલોકસંબંધી દુઃસ્વોં કી ભી યહી પરિસ્થિતિ હૈ, ફિર ભી વ્યવહારી જીવોં કી દૃષ્ટિમેં દુઃસ્વાદિક રોગાધીન હોતે હૈ; ઇસ અભિપ્રાય સે સૂત્રકાર ઉન દુઃસ્વોં કે કારણભૂત રોગોં કા વર્ણન કરતે હુએ કહતે હૈ—“ તઓ સે ” ઇત્યાદિ ।

કામભોગોના સેવનથી જીવની તેમાં આસક્તિ વધે છે. આસક્તિથી આર્ત્ત અને રૌદ્ર ધ્યાન ઉત્પન્ન થાય છે. તે ધ્યાનોથી જીવ અશુભ કર્મ પરમાણુઓનો બંધ કરે છે, તેથી આત્મામાં મલિનતા આવે છે. મલિનતાના સંબંધથી જ્ઞાનાદિક ગુણોનું આવરણ હોવાથી જીવોની ઉન્માર્ગમાં પ્રવૃત્તિ થાય છે. આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી જીવ આલોક અને પરલોક સંબંધી યાતનાઓને ભોગવે છે. આ પ્રકાર પરંપરાસંબંધથી કામભોગસેવન, તથા તે વિષયની આસક્તિ જીવને અનેક અનંત કષ્ટોને દેવાવાળી હોય છે. પરલોકસંબંધી દુઃખ જીવોને અશુભ કર્મોદયથી પ્રાપ્ત થાય છે. ત્યાં પણ અનેક પ્રકારના શારીરિક તથા માનસિક દુઃખ આ જીવને ભોગવવા પડે છે.

આલોકસંબંધી દુઃખોની પણ એ જ પરિસ્થિતિ છે તો પણ વ્યવહારી જીવોની દૃષ્ટિમાં દુઃખાદિક રોગાધીન થાય છે. આ અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર આ દુઃખોના કારણભૂત રોગોના વર્ણન કરતાં કહે છે—“ તઓ સે ” ઇત્યાદિ.

મૂલમ—‘ તઓ સે ઇગયા રોગસમુપ્પાયા સમુપ્પજાંતિ જેહિં સદ્ધિં સંવસઈ તે વા ણં ઇગયા નિયયા પુઠ્ઠિં પરિવયંતિ, સો વા તે નિયગે પચ્છા પરિવહજ્ઞા, નાલં તે તવ તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાણ વા સરણાણ વા, જાણિત્તુ દુક્ખં પત્તેયં સાયં, ભોગામેવ અનુસોયંતિ, ઇહમેગેસિં માણવાણં ॥ સૂ. ૧ ॥

છાયા—તતસ્તસ્યૈકદા રોગસમુત્પાદાઃ સમુત્પદ્યન્તે યૈર્વા સાર્દ્ધં સંવસતિ તે વા સ્વલુ એકદા નિજકાઃ પૂર્વં પરિવદન્તિ, સ વા તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિવદતિ, નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા, ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા, જ્ઞાત્વા દુઃખં પ્રત્યેકં સાતં ભોગાનેવાનુશોચતિ, ઇહૈકેષાં માનવાનામ્ ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકા—‘તત’ ઇત્યાદિ । ઇદં સૂત્રં પ્રથમોદ્દેશે વૃદ્ધાવસ્થાપ્રસન્ને પ્રોક્તમ્, ઇહ ચ યૌવનેઽપિ ભોગાસક્ત્યા નાનારોગાઃ સમુત્પદ્યન્તે ઇતિ દર્શયતિ નાતઃ પુનરુક્તિઃ ।

રોગા યથા—(૧)શ્વાસ(૨)કાસ(૩)જ્વર(૪)દાહ(૫)કુક્ષિશૂલ(૬)ભગન્દરા—(૭)ઽર્શો(૮)—ઽઝીરક(૯)દૃષ્ટિશૂલ(૧૦)મૂર્ધશૂલ(૧૧)—ઽરુચિ(૧૨)નેત્રવેદના(૧૩)—કર્ણવેદના(૧૪)કણ્ઠવેદનો(૧૫)દરવેદના(૧૬)કુષ્ઠાશ્લેષાઃ પોઢશ વિજ્ઞેયાઃ ।

સર્વેઽપિ જીવાઃ સ્વકૃતકર્મફલભોગિન ઇતિ વિભાવ્ય વિવેકી શુક્તપૂર્વાન્ ભોગાન્નાનુસ્મરેત્, પ્રાપ્તાન્ સેવેત, અલબ્ધાન્નાભિવાઙ્છેદિતિ ભાવઃ ।

યૌવન અવસ્થા મેં જીવોં કી ભોગાદિકોં મેં અધિક આસક્તિ બઢતી હૈ, ઉસસે ઇસ અવસ્થા મેં ખી અનેક પ્રકાર કે રોગ ઉત્પન્ન હોતે હૈં । ઇસ લિયે રોગોં કે નામ કહતે હૈં—૧ શ્વાસ—૨ કાસ ત્વાંસી ૩ જ્વર ૪ દાહ ૫ કુક્ષિ-શૂલ ૬ ભગન્દર ૭ અર્શ—બવાસીર ૮ અઝીરક ૯ દૃષ્ટિશૂલ ૧૦ મૂર્ધશૂલ ૧૧ અરુચિ ૧૨ નેત્રવેદના ૧૩ કર્ણવેદના ૧૪ કણ્ઠપીડા ૧૫ ઉદરપીડા ઓર ૧૬ કુષ્ઠ । યે ૧૬ રોગોં કે નામ હૈં ।

યૌવન અવસ્થામાં જીવોની ભોગાદિકોમાં અધિક આસક્તિ વધે છે, તેથી તે અવસ્થામાં પણ અનેક પ્રકારના રોગ ઉત્પન્ન થાય છે, માટે રોગોના નામ કહે છે.—૧ શ્વાસ, ૨ કાસ—ખાંસી, ૩ તાવ, ૪ દાહ, ૫ કુક્ષિશૂલ, ૬ ભગન્દર, ૭ અર્શ—હરસ, ૮ અજીરક, ૯ દૃષ્ટિશૂલ, ૧૦ મૂર્ધશૂલ, ૧૧ અરુચિ, ૧૨ નેત્રવેદના, ૧૩ કાતની વેદના, ૧૪ કંઠપીડા, ૧૫ ઉદરપીડા, અને ૧૬ કોઠ, એ રોગોના સોલ નામ છે.



गृहस्तु भोगस्यैवानुचिन्तनं करोतीत्याह—‘भोगानेव’—ति, भोगानेव=शब्दादि-विषयानेव अनुशोचति=सततं परिचिन्तयति । सूत्रे बहुवचनमार्पत्वात् । यद्यहं सर्वस्वव्ययसाध्यभैषज्यादिना नीरोगः स्यां तदाऽवश्यमजस्रं भोगान् भुञ्जीय, नाना-विधानि सुखान्यनुभवेयमित्यादिनानाविधपरिचिन्तनादशान्तस्वान्तः सन्ततमनु-तप्तो भवतीति तात्पर्यम् । एवंविधभोगानुचिन्तनं किं सर्वेषां भवति ? नेत्याह—‘इहैकेषा’—मित्यादि, इह=संसारे एकेषाम्=अपरिज्ञातविषयकदुविपाकानां कति-पयानां मानवानाम्, ब्रह्मदत्तसदृशानां भवति । इहामुत्र दुःखकारणत्वाद् भोगासक्तिः परिहरणीयेति सूत्राशयः ॥ सू० १ ॥

इस अवस्थामें जिनके साथ यह रहता है वे पुत्रकलत्रादिक पहले इसका अनादर करते हैं और तिरस्कारजनक वचन बोलते हैं, फिर यह भी उनका अनादर करता हुआ अपशब्द बोलता है, परन्तु हे जीव ! नहीं तो वे तेरे त्राण और शरण के लिये समर्थ हो सकते हैं और न तू भी उन को त्राण और शरण देनेके लिए समर्थ हो सकता है । समस्त संसारी जीव अपने२ किये हुए कर्म के अनुसार सुखदुःखादिक फल के भोगने-वाले होते हैं । ऐसा विचार कर विवेकी संयमी मुनि पूर्व में भोगे हुए उन भोगों की स्मृति न करे, तथा प्राप्त हुए उन भोगों का सेवन न करे और अलब्ध भोगों को भोगने की इच्छा तक भी न करे ।

जो विषयादिकों में गृह होता है वह उनका ही निरन्तर बारंबार चिन्तवन-स्मरण करता रहता है; ऐसा जीव जब विषयादिकों के सेवन करने में किसी रोगादिक के पराधीन बन अपने को असमर्थ पाता

આ અવસ્થામાં જેની સાથે તે રહે છે તે પુત્ર કલત્રિક પહેલાં તેનો અનાદર કરે છે અને તિરસ્કારજનક વચન બોલે છે, પછી તે પણ તેનો અનાદર કરીને અપશબ્દ બોલે છે, પરંતુ હે જીવ ! તે તારા તારણહાર નથી અને શરણુ દેવામાં પણ સમર્થ નથી, અને તું પણ તેનો તારણહાર નથી અને શરણુ દેવામાં પણ સમર્થ નથી. સમસ્ત સંસારી જીવ પોતાપોતાના કરેલા કર્મ અનુસાર સુખદુઃખાદિક ફળના ભોગવવાવાળા હોય છે. એવો વિચાર કરી વિવેકી સંયમી મુનિ પૂર્વમાં ભોગવેલાં તે ભોગોની સ્મૃતિ પણ ન કરે, તથા પ્રાપ્ત થયેલાં ભોગોનું પણ સેવન ન કરે અને અલબ્ધ ભોગોને ભોગવવાની ઇચ્છા સુદ્ધાં પણ ન કરે.

જે વિષયાદિકોમાં ગૃહ થાય છે તે તેનું જ નિરંતર ચિન્તવન સ્મરણ કરતા રહે છે. એવા જીવ જ્યારે વિષયાદિકોનું સેવન કરવામાં કોઈ રોગાદિકથી પરાધીન બને અને અસમર્થ બની જાય ત્યારે તે વિચારે છે કે—“જ્યારે હું નિરોગી બની



હૈ તવ યહ વિચારતા હૈ કિ-જવ મૈ નિરોગ હો જાઝંગા તવ નિયમ સે નિરન્તર ઇન વિષયાદિકોં કા મનમાફિક સેવન કરૂંગા। યદિ મુઝે નીરોગતા પ્રાપ્ત કરને મૈં અપના સર્વસ્વ ભી અર્પણ કર દેના પડે તો ભી કોઈ ચિન્તા કી બાત નહીં। જીવન રહેગા તો ફિર ધન હો જાયગા। ધન હૈ ભી કિસ લિયે? યદિ સાંસારિક મૌજ મજા ન દેખી તો ઇસ દ્રવ્ય કી પ્રાપ્તિ સે લાભ હી ક્યા હુઆ? ઇત્યાદિ અનેક પ્રકાર કે સંકલ્પ-વિકલ્પોં સે અશાન્ત-ચિત્ત બન નિરન્તર સંતપ્ત હોતા રહતા હૈ। ઇસ પ્રકાર કી સંતપ્તતા કા કારણ સિર્ફ ઇસ જીવ કી વિષયસંબંધી આસક્તિ હી હૈ। વે સંયમી મુનિ ધન્ય હૈં જો વિષયાદિક સેવન કે કટુકવિપાક કો જાનકર ઇસસે સર્વદા અપની રક્ષા કરતે રહતે હૈં। પરન્તુ જો ઇસકે કટુક વિપાક સે અનભિજ્ઞ બને હુએ હૈં એસે કિતનેક બ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તીં જૈસે મનુષ્ય હી ઇસ વિષયજાલ મૈં ફંસ કર અપના ઇહલોક ઓર પરલોક દોનોં કા બિગાડ કર નાના પ્રકાર કે કષ્ટોં કા અનુભવ કરનેવાલે હોતે હૈં। ઇસ લિયે વિષયોં કો દોનોં ભવોં મૈં કષ્ટકારક જાન કર સંયમી મુનિ કો ભોગાસક્તિ સે સર્વદા અપની રક્ષા કરને મૈં સાવધાન રહના ચાહિયે। યહી ઇસ સૂત્ર કા આશય હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

બાઈશ ત્યારે નિયમથી નિરંતર આ વિષયાદિકોનું મનમાફક સેવન કરીશ. કદાચ મને નિરોગતા પ્રાપ્ત કરવામાં પોતાનું સર્વસ્વ પણ અર્પણ કરી દેવું પડે તો કોઈ ચિંતા નહિ, જીવન રહેશે તો પછી ફરીથી ધન થાશે. ધન કેના માટે છે? જો સાંસારિક મોજમજા ન કરી તો આ દ્રવ્યની પ્રાપ્તિથી લાભ પણ શો?" ઇત્યાદિ અનેક પ્રકારના સંકલ્પ વિકલ્પોથી અશાન્તચિત્ત બની નિરંતર સંતપ્ત રહ્યા કરે છે, આ પ્રકારની સંતપ્તતાનું કારણ ફક્ત આ જીવની વિષયસંબંધી આસક્તિ જ છે.

તે સંયમી મુનિ ધન્ય છે જે વિષયાદિકસેવનના કટુક વિપાકને બાણીને તેનાથી સર્વદા પોતાની રક્ષા કરે છે, પરંતુ જે તેના કટુક વિપાકથી અનભિજ્ઞ બનેલા છે એવા કેટલાક બ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તીં જેવા મનુષ્ય જ આ વિષયબળમાં ફસીને પોતાનો આલોક અને પરલોક બન્નેને બંગાડીને નાના પ્રકારના કષ્ટોનો અનુભવ કરવાવાળાં થાય છે. વિષયોને બન્ને ભવોમાં કષ્ટકારક બાણીને સંયમી મુનિએ ભોગાસક્તિથી સર્વદા પોતાની રક્ષા કરવામાં સાવધાન રહેવું જોઈએ, એ જ આ સૂત્રનો આશય છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

ભોગસાધનસ્ય ધનસ્ય વિનશનશીલતાં દર્શયતિ—‘તિવિહેણ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—તિવિહેણ જાવિ સે તત્થ મત્તા ભવઙ્ અપ્પા વા  
બહુયા વા, સે તત્થ ગહિઢ્ઠા ચિઢ્ઠિઢ્ઠિ મોયણાણ, તઓ સે ઇગયા  
વિપરિસિઢ્ઠિ સંભૂયં મહોવગરણં ભવઙ્, તં પિ સે ઇગયા દાયાયા  
વિભયંતિ, અદત્તહારો વા સે અવહરઙ્, રાયાણો વા સે વિહુંપંતિ,  
ણસ્સઙ્ વા સે, વિણસ્સઙ્ વા સે અગારદાહેણ વા સે હજ્જઙ્,  
ઇય સે પરસ્સ અટ્ટાણ કૂરાણિ કમ્માણિ બાલે પકુવ્વમાણે તેણ  
દુઃખેણ વિપ્પરિયાસમુવેઙ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ત્રિવિધેન યાવિ તસ્ય તત્ર માત્રા ભવતિ—અલ્પા વા બહુકા વા, સ  
તત્ર ગૃહસ્થિષ્ઠતિ ભોજનાય, તતસ્તસ્યૈકદા વિપરિશિષ્ટં સમ્ભૂતં મહોપકરણં ભવતિ  
તદપિ તસ્યૈકદા દાયાદા વિભજન્તે, અદત્તહારો વા તસ્ય દરતિ, રાજાનો વા તસ્ય  
વિહુમ્પન્તિ, નશ્યતિ વા તસ્ય, વિનશ્યતિ વા તસ્ય, અગારદાહેન વા દહ્યતે તદ્,  
ઇતિ સ પરસ્યાર્થાય કૂરાણિ કર્માણિ બાલઃ પ્રકુર્વાણસ્તેન દુઃખેન મૂઢો વિપર્યા-  
સમુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—‘ત્રિવિધેને’—ત્યાદિ, એતસ્ય વ્યાખ્યા તુ તૃતીયોદ્દેશે પ્રોક્તા । પ્રાગ્  
ધનસ્ય નિસ્સારતા પ્રદર્શિતા, અત્ર તુ ભોગસાધનસ્ય ધનસ્ય ક્ષીણમાણતયા તદ-  
ભાવાદપિ ન ભોગો ભવિતુમર્હતીતિ દર્શિતમ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ભોગ કે સાધનભૂત ધનની વિનશ્વરતા દિશ્વલાતે હુણ સૂત્રકાર કહતે  
હૈ—“તિવિહેણ જાવિ” इत्यादि ।

હસ સૂત્રની વ્યાખ્યા તૃતીય ઉદ્દેશ મેં અચ્છી તરહ સે કી જા ચુકી  
હૈ । વહાં પર સામાન્યતયા ધનની અસારતા પ્રકટ કી હૈ, યહાં પર ભોગ ઔર  
ઉપભોગ મેં કામ આનેવાલે સાધનભૂત ધનની અસારતા બતલાઈ ગઈ હૈ;  
કારણ કિ સાંસારિક ભોગ ઔર ઉપભોગ કા કારણ ધન હોતા હૈ । હસકે

ભોગોના સાધનભૂત ધનની વિનશ્વરતા દેખાડતાં સૂત્રકાર કહે છે—  
“તિવિહેણ જાવિ” इत्यादि.

આ સૂત્રની વ્યાખ્યા ત્રીજા ઉદ્દેશમાં સારી રીતે આપવામાં આવેલ છે. તે  
જગ્યોએ સામાન્યતયા ધનની અસારતા પ્રગટ કરેલ છે. આ ઠેકાણે ભોગ અને  
ઉપભોગમાં કામ આવવાવાળા સાધનભૂત ધનની અસારતા બતાવવામાં આવેલ છે,  
કારણ કે સાંસારિક ભોગ અને ઉપભોગનું કારણ ધન જ છે. તેના સદ્ભાવમાં



एवं 'भोगे रोगः' इति प्रोक्तम् । अथ च भोगसाधनं धनमपि नश्वरं ततः किं विधेयमिति दर्शयति—'आसं च' इत्यादि ।

સજ્જાવ મેં જીવ સાંસારિક મૌજ-મજા ભોગને મેં અપની શક્તિઅનુસાર કસર નહીં રાખતે; કિન્તુ ભોગ સદા દુઃખદાયી હોતે હૈં । કહા બી હૈ—

ભોગ બુરે ભવ રોગ બઢાવૈ, બૈરી હૈં જગ જી કે ।  
 બેરસ હોય વિપાક સમય અતિ, સેવત લાગૈ નીકે ॥  
 વજ્ર અગનિ વિષ સે વિષધર સે, યે અધિકે દુઃખદાઈ ।  
 ધર્મરતન કે ચોર ચપલ અતિ, દુર્ગતિપંથસહાઈ ॥  
 મોહ-ઉદય યહ જીવ અજ્ઞાની, ભોગ ભલે કર જાને ।  
 જ્યોં કોઈ જન જાય ધતૂરા, સો સબ કંચન માને ॥  
 જ્યોં જ્યોં ભોગ સંજોગ મનોહર, મનવાંછિત જન પાવૈ ।  
 તૃષ્ણા નાગિન ત્યોં ત્યોં ડંકૈ, લહર જહર કી આવૈ ॥

उन भोगों की आशा से बाल अज्ञानी जीव प्राणातिपातादिक अनेक प्रकार के क्रूर कर्मों को करता हुआ विपरीतपने को प्राप्त होता है, अर्थात् मोक्षमार्ग से विमुख हो जाता है ॥ सू० २ ॥

इस प्रकार जब भोग में रोग है और भोग का साधनभूत धन विनश्वर है तब क्या करना चाहिये? इसका प्रत्युत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं—“आसं च” इत्यादि ।

છવ સાંસારિક મોજ-મજા ભોગવવામાં પોતાની શક્તિઅનુસાર કસર રાખતા નથી પણ ભોગ સદા દુઃખદાયી થાય છે. કહું પણ છે—

“ભોગ બુરે ભવ રોગ બઢાવૈ, બૈરી હૈં જગજીકે ।  
 બેરસ હોય વિપાક સમય અતિ, સેવત લાગૈ નીકે ॥  
 વજ્ર અગનિ વિષસે વિષધર સે, યે અધિકે દુઃખદાઈ ।  
 ધર્મરતનકે ચોર ચપલ અતિ, દુર્ગતિપંથસહાઈ ॥  
 મોહ ઉદય યહ જીવ અજ્ઞાની, ભોગ ભલે કર જાને ।  
 જ્યોં કોઈ જન જાય ધતૂરા, સો સબ કંચન માને ॥  
 જ્યોં જ્યોં ભોગ સંજોગ મનોહર, મનવાંછિત જન પાવૈ ।  
 તૃષ્ણા નાગિન ત્યોં ત્યોં ડંકૈ, લહર જહર કી આવૈ ॥”

આવા ભોગોની આશાથી બાલ અજ્ઞાની છવ પ્રાણાતિપાતાદિક અनेक प्रकारનાં ક્રूर કર્મો કરીને વિપરીતપણાને પ્રાप्त થાય છે, અર્થાત્ મોક્ષમાર્ગથી વિમુખ થાય છે. ॥ સૂ० ૨ ॥

આ પ્રકારે જ્યારે ભોગમાં રોગ છે. અને ભોગના સાધનભૂત ધન વિનશ્વર છે. ત્યારે શું કરવું જોઈએ? તેનો પ્રત્યુત્તર આપતાં સૂત્રકાર કહે છે—“આસં ચ” ઇત્યાદિ.



મૂલમ—આસં ચ છંદં ચ વિગિંચ ધીરે, તુમં ચેવ તં સહ-  
માહટ્ટુ, જેણ સિયા તેણ નો સિયા, ઇણમેવ નાવબુજ્ઞાંતિ જે જણા  
મોહપાડા, થીલોભપવ્વહિણે તે ભો વયંતિ ણ્યાઈં આયત-  
ણાઈં, સો દુક્ખાણ મોહાણ મારાણ નરગાણ નરગતિરિક્ખાણ  
સયયં મૂઢે ધમ્મં નાભિજાણઈં ઉદાહુ વીરે, અપ્પમાઓ મહામોહે,  
અલં કુસલસ્સ પમાણં સંતિ મરણં સંપેહાણ ભિદુરધમ્મં  
સંપેહાણ નાલં પાસ અલં તે ણ્ણહિં ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા—આશાં ચ છન્દશ્ચ વેવિક્ષ્વ ધીર ! ત્વમેવ તત્ શલ્યમાહત્ય યેન સ્યાત્  
તેન નો સ્યાત્, ઇદમેવ નાવબુધ્યન્તે યે જના મોહપ્રાવૃતાઃ, સ્ત્રીલોકપ્રવ્યથિતઃ,  
તે ભો વદન્તિ, ઇત્યાન્યાયતનાનિ, તત્ (તેષાં) દુઃખાય મોહાય મારાય નરકાય  
નરકાત્, તિરશ્ચ, સતતં મૂઢો ધર્મં નાભિજાનાતિ, ઉદાહ વીરઃ, અપ્રમાદો મહામોહે અલં  
કુશલસ્ય પ્રમાદેન શાન્તિમરણં સંપ્રેક્ષ્ય ભિદુરધર્મં સંપ્રેક્ષ્ય નાલં પશ્યાલં તે ણૈતૈઃ ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકા—‘આશાં ચે’ત્યાદિ । હે ધીર ! ધિયા=ચારિત્રારાધનરૂપયા મત્યા  
રાજત ઇતિ ધીરસ્તત્સંબોધને હે ધીર ! =હે સંયમિન્ ! યદ્વા-ધિયં=બુદ્ધિમ્  
ઈરયતિ=પ્રેરયતિ પરીષહોપસર્ગવિજયાર્થં યઃ સ ધીરસ્તત્સંબોધને હે ધીર ! હે  
સંયમિન્ ! અથવા હે પરીષહોપસર્ગૈરક્ષોભ્ય ! આશાં=શબ્દાદિવિષયસ્પૃહાં,  
છન્દઃ=ભોગસ્યાભિપ્રાયં ચ વેવિક્ષ્વ=પૃથક્કુરુ-પરિત્યજેત્યર્થઃ । હે શિષ્ય ! ત્વમેવ

ચારિત્ર કો આરાધન કરનેવાલી બુદ્ધિ સે જો શોભિત હોતા હૈ  
અથવા પરીષહ ઔર ઉપસર્ગ કો જીતને કે લિયે જો બુદ્ધિ કો પ્રેરિત  
કરતા હૈ યહાં ઉસકા નામ ધીર હૈ । સંબોધન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે  
હૈં કિ-હે ધીર ! હે સંયમી ! અથવા પરીષહ ઔર ઉપસર્ગ કો જીતને-  
વાલે શિષ્ય ! તુમ શબ્દાદિ વિષય કી ઇચ્છા ઔર ભોગ કી ચાહના કો  
અપને સે પૃથક્ કરો-છોડો; કારણ કિ વ્રતી કા લક્ષણ “નિઃશલ્યો વ્રતી”  
શલ્યરહિત હોના બતલાયા હૈ । સંયમ કો લેકર મી જો શબ્દાદિવિષયોં

ચારિત્રનું આરાધન કરવાવાળી બુદ્ધિથી જે શોભિત થાય છે, અથવા પરિ-  
ષદ અને ઉપસર્ગને જીતવા માટે જે બુદ્ધિને પ્રેરિત કરે છે; આ ઠેકાણે તેનું નામ  
ધીર છે. સંબોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-હે ધીર ! હે સંયમી ! અથવા પરિષદ  
અને ઉપસર્ગને જીતવાવાળા શિષ્ય ! તમે શબ્દાદિ વિષયની ઇચ્છા અને ભોગની  
ચાહનાઓને તમારાથી દૂર કરો-છોડો, કારણ કે-વ્રતીના લક્ષણ “નિઃશલ્યો વ્રતી”  
શલ્યરહિત થવું બતાવેલ છે. સંયમને લક્ષને પણ જે શબ્દાદિ વિષયને ભોગ-

કે ભોગને કી ચાહના કે વશવર્તી બના રહતા હૈ વહ દંભકા સેવન કરનેવાલા હૈ । વે શબ્દાદિવિષયોંકો ન ભી ભોગતે હોં તો ભી ઉનકી પરિણતિ તન્દુલમત્સ્ય કે સમાન ઉસ ઓર લાલસાવાલી હોને સે સંયમ કા નાશ કરનેવાલી માની ગઈ હૈ । સંયમ કો મૂલ સે નાશ કરનેવાલા શલ્ય હૈ । માયાશલ્ય કે સદ્ભાવ સે હી અવ્રત ભી વ્રત જૈસે માલૂમ પડતે હૈ । અતઃ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ-હે શિષ્ય ! તૂં ઇસ શલ્ય કો દૂર કર, વ્યર્થ ક્યોં ઇસકે ફંદે મેં પડકર અપને કો દુઃખી બના રહા હૈ । દૂસરે ચાહે કુછ ભી કરતે હોં યહ તુજે નહીં દેખના હૈ, તૂં અપની હી ઓર દેખ “તૂં તારું રે સંભાલ તને બીજાની શી પડી ” તૂં કયા કર રહા હૈ ? ઇસી લિયે સૂત્રકાર “ત્વમેવ” ઇસ પદ પર જોર દેકર શિષ્ય સે કહ રહે હૈ ।

અથવા-શલ્ય શબ્દકા અર્થ-અષ્ટવિધ કર્મ ભી હૈ, યહ પહિલે બત-લાયા જા ચુકા હૈ કિ-“તપસા નિર્જરા ચ” તપ, સંયમ પાલન કરને સે સંવર તો હોતા હી હૈ પરન્તુ સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા ભી હોતી હૈ । ચારિ-ત્રારાધન કે દ્વારા આત્મા જ્યોં ૨ અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય, ઓર અશુભ યોગોં કા નિગ્રહ કરતા જાતા હૈ ત્યોં ૨ ઇસ આત્મા મેં અપૂર્વ ૨ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ હોતી જાતી હૈ । ઇસ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ મેં આત્મા સંવર ઓર નિર્જરા કે દ્વારા કર્મોંકા ક્રમશઃ નાશ કરતા હુઆ આગે ૨ કે ગુણ-

વવાની ચાહનાને વશવર્તી બની રહે છે, તે શબ્દાદિ વિષયોને ભલે નહિ ભોગવતા હોય તો પણ તેની પરિણતિ તન્દુલમત્સ્યસમાન તે તરફ લાલસાવાળી હોવાથી સંયમનો નાશ કરવાવાળી માનવામાં આવે છે. સંયમને મૂળથી નાશ કરવાવાળા શલ્ય છે. માયાશલ્યના સદ્ભાવથી અવ્રત પણ વ્રત જેવા માલુમ પડે છે. માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-હે શિષ્ય ! તું આ શલ્યને દૂર કર, વ્યર્થ શા માટે તેના ફંદામાં પડીને પોતાને દુઃખી બનાવે છે ? બીજા ભલે કોઈ પણ કાર્ય કરતા હોય એ તારે જોવાનું નથી, તું ફક્ત તારી જ તરફ દેખ, “તું તારું રે સંભાળ, તને બીજાની શી પડી ? ” તું શું કરી રહ્યો છે ? તે માટે સૂત્રકાર “ત્વમેવ” આ પદ ઉપર જોર દઈને શિષ્યને કહે છે.

અથવા શલ્ય શબ્દનો અર્થ અષ્ટવિધ કર્મ પણ છે, એ પહેલાં બતાવવામાં આવેલ છે કે-“તપસા નિર્જરા ચ” તપ, સંયમ પાલન કરવાથી સંવર તો થાય જ છે, પરંતુ સંચિત કર્મોની નિર્જરા પણ થાય છે. ચારિત્રારાધનદ્વારા આત્મા જેમ જેમ અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય, અને અશુભ યોગોનો નિગ્રહ કરતો જાય છે તેમ તેમ આ આત્મામાં અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિ થતી જાય છે. આ ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિમાં આત્મા સંવર અને નિર્જરાદ્વારા કર્મોનો ક્રમશઃ નાશ કરીને આગળ આગળના ગુણસ્થાનોમાં ચઢતો જાય છે. એક સમય એવો



સ્થાનોં મેં ચઢતા ચલા જાતા હૈ । એક સમય એસા બી આતા હૈ કિ જિસમેં  
 હસ કી આત્યંતિક શુદ્ધિ હો જાતી હૈ । હસ પ્રકાર કર્મોચ્છેદ મેં ચારિત્ર કો  
 સર્વપ્રથમ સ્થાન પ્રાપ્ત હુઆ હૈ । અતઃ હે શિષ્ય ! નિર્દોષ ચારિત્રારાધન  
 કર ઔર ઇન કર્મોં પર ક્રમશઃ અથવા યુગપત્ વિજય પ્રાપ્ત કર । વિષય  
 ભોગોં કી ચાહ સે એસે સુન્દરતમ ચારિત્ર કો બિગાડને કે લિયે ક્યોં  
 વ્યર્થ મેં ચેષ્ટા કરતા હૈ ? ક્યોં હસે નષ્ટ બ્રષ્ટ કરતા હૈ ? એસા કરને સે  
 ઉલ્ટે અનન્ત સંસાર વર્ધન કરનેવાલે ઇન કર્મોંકા બંધન દૃઢ હી હોગા,  
 જો તુજે ભવર મેં દુઃસ્વદાતા હોગા । અપને કો દુઃસ્વી કરને મેં તેરા હી  
 અપરાધ હૈ, હસમેં ઔર કોઈ નિમિત્ત નહીં । હસી બાત કી પુષ્ટિ “ અષ્ટ  
 વિધં કર્મ વા આહૃત્ય-પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃસ્વમુત્પાદયસિ ” ટીકાકારને  
 હસ પંક્તિસે કી હૈ । યહ દૃઢ વિશ્વાસ રખ-જિસ ભોગાદિક કી ચાહના  
 મેં પડકર તૂં સંયમ જૈસે અમૂલ્ય રત્ન કો કલંકિત કરને મેં સંકોચ નહીં  
 કરતા હૈ । ક્યા ઁન ભોગાદિકોં કો ભોગને કી તેરી યહ ભાવના સફલ  
 હો જાયગી ? । માન લિયા સંયમરત્ન કો વેંચ કર તૂંને ભોગાદિક વસ્તુઓંકો  
 સ્વીરદ બી લિયા, પરન્તુ યદિ તેરે પ્રબલ અન્તરાય-ભોગાન્તરાય કા ઉદય  
 હૈ તો પ્રાપ્ત હુએ ઁન ભોગાદિકોં કો તૂ નહીં ભોગ સકતા । અથવા સંયમ

પણ આવે છે કે જેમાં તેની આત્યંતિક શુદ્ધિ થઈ જાય છે. આ પ્રકારે કર્મો-  
 ચ્છેદમાં ચારિત્રને સર્વપ્રથમ સ્થાન પ્રાપ્ત થયેલ છે. માટે હે શિષ્ય ! નિર્દોષ  
 ચારિત્રારાધન કર, અને એ કર્મોં ઉપર ક્રમશઃ અથવા યુગપત્ વિજય પ્રાપ્ત કર.  
 વિષય ભોગોની આહનાથી એવા સુંદરતમ ચારિત્રને બગાડવા શા માટે વ્યર્થ  
 ચેષ્ટા કરે છે ? શા માટે તેને નષ્ટ બ્રષ્ટ કરે છે ? આવું કરવાથી ઉલ્ટા અનંત  
 સંસારને વધારવાવાળા તે કર્મોના બંધન દૃઢ જ થશે, જે તેને ભવભવમાં દુઃખ  
 દાતા થશે, પોતાને દુઃખી કરવામાં તારોજ અપરાધ છે, તેમાં કોઈ બીજું નિમિત્ત  
 નથી. આ વાતની પુષ્ટિ “ અષ્ટવિધં કર્મ વા આહૃત્ય પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃસ્વ-  
 મુત્પાદયસિ ” ટીકાકારે આ પંક્તિથી કહ્યું છે. એ દૃઢ વિશ્વાસ રાખ, જે ભોગા-  
 દિકની આહનામાં પડીને તું સંયમ જેવા અમુલ્ય રત્નને કલંકિત કરવામાં સંકોચ  
 કરતો નથી. શું તે ભોગાદિકોને ભોગવવાની તારી એ ભાવના સફળ થશે ? માની  
 લ્યે કે-આ સંયમરત્નને વેચીને તે ભોગાદિક વસ્તુઓને ખરીદી લીધી, પરંતુ  
 કદાચ તારા પ્રબળ અંતરાય-ભોગાન્તરાયનો ઉદય હોય તો પ્રાપ્ત થયેલ તે ભોગા-  
 દિકોને તું ભોગવી શકતો નથી, અથવા સંયમની ઓટમાં બેસીને ભોગાદિકની



નાન્યઃ, શલ્યં=માયાદિરૂપમ્ અષ્ટવિધં કર્મ વા આહૃત્ય=પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃસ્વમુત્પા-  
દયસિ । યતો યેનાર્થાદિના ભોગપ્રાપ્તિઃ સ્યાત્ તેનૈવ કદાચિન્નો સ્યાત્, અન્તરાય-  
કર્મપરિણામસ્યાઘટિતઘટનાઘટકત્વાત્ । અન્તરાયકર્મવૈચિત્ર્યમિદં મોહપ્રાવૃતા ન  
જાનન્તીત્યાહ-‘ઇદમેવે’-તિ, ‘મોહપ્રાવૃતાઃ’ મોહેન=અજ્ઞાનેન પ્રાવૃતાઃ=સમ્યગવ-  
ગુણિતાઃ, અજ્ઞાનતમસાઽઽચ્છાદિતા इत्यर्थः, ये जनाः तीर्थङ्करगणधराज्ञाविराधकाः  
इदमेव=ભોગસાધનમપ્યભોગસાધનં ભવતીતિ કારણવૈચિત્ર્યમેવ નાવબુદ્ધ્યન્તે=ન  
જાનન્તિ । મોગાન્તરાયોદયાદજ્ઞાનાન્ધા વિપરીતમતયો હેતુવૈચિત્ર્યં ન મન્યન્તે ।  
દૃશ્યતે હિ લોકે મોગાય સમવર્હિતોઽપિ કારણકલાપોઽન્તરાયોદયાદનર્થાય ભવતિ ।

કી ઓટ મેં બેઠ કર મોગાદિક કી ચાહના સે તૂને અન્ય પ્રાણિયોં કો  
રિજ્ઞાકર કિસી દૂસરે બહાને સે મોગાદિક સામગ્રી કો જુટાને મેં સાધન-  
ભૂત દ્રવ્યાદિક કા સંગ્રહ મી કરલિયા તો તુજે યહ કૈસે વિશ્વાસ હૈ કિ  
હસ દ્રવ્યાદિક સે મુજે ઉસ મનોનુકૂલ સામગ્રી કા લાભ અવશ્યર હો  
હી જાયગા । વિપરીત મી હો સકતા હૈ, કારણ કિ અઘટિત ઘટના કો  
ઘટાને મેં પદુ અન્તરાય કર્મ કા ઉદય અમી તેરે બના હુઆ હૈ, ઉસકા  
જબ તક નાશ નહીં હોતા તબ તક પ્રાણી મનોઽનુકૂલ મોગાદિકોં કો  
મોગને મેં સર્વથા અસમર્થ રહતા હૈ, યહી બાત “જેણ સિયા તેણ જો  
સિયા” ઇન પદોં સે વ્યક્ત કી હૈ । જિસ દ્રવ્યાદિક સાધન સે મોગપ્રાપ્તિ  
હોતી હૈ અન્તરાય કે ઉદય હોને પર ઉસી સે મી સંભવ હૈ કિ ન મી હો ।  
યહ સબ અન્તરાય કર્મ કી હી વિચિત્રતા હૈ, પરન્તુ જિન કી આત્મા મોહ  
કે ઉદય સે આચ્છાદિત હો રહી હૈ, તથા તીર્થંકર એવં ગણધરાદિકોં કી  
આજ્ઞા કે વિરાધક હૈં વે અન્તરાય કી હસ વિચિત્રતા કો નહીં જાનતે ।

આહતાથી તું અન્ય પ્રાણીઓને રીઝાવી કોઈ બીજા બહાનાથી ભોગાદિક સામગ્રી  
મેળવવામાં સાધનભૂત દ્રવ્યાદિકને સંગ્રહ પણ કરી લે તો પણ તને એવો  
વિશ્વાસ કેમ છે કે-આ દ્રવ્યાદિકથી મને તે મનોનુકૂળ સામગ્રીનો લાભ અવશ્ય  
થઈ જ નશે? વિપરીત પણ બની શકે છે, કારણ કે અઘટિત ઘટનાને ઘટાડવામાં  
પદુ અન્તરાય કર્મનો ઉદય હોય પણ તારે વિદ્યમાન છે. તેનો જ્યાં સુધી નાશ  
થશે નહિ ત્યાં સુધી પ્રાણી મનોઽનુકૂળ ભોગાદિકોને ભોગવવામાં સર્વથા અસમર્થ  
રહે છે. આ વાત “જેણ સિયા તેણ જો સિયા” આ પદોથી વ્યક્ત કરી છે.  
જે દ્રવ્યાદિકસાધનથી ભોગપ્રાપ્તિ થાય છે, અન્તરાયનો ઉદય થતાં તેનાથી પણ સંભવ  
છે કે કદાચ ન પણ બને, આ બધી અન્તરાય કર્મની જ વિચિત્રતા છે, પરંતુ  
જેની આત્મા મોહના ઉદયથી આચ્છાદિત થઈ રહી છે, તથા જે તીર્થંકર અને  
ગણધરાદિકોની આજ્ઞાના વિરાધક છે તે અન્તરાયની આ વિચિત્રતાને બોણતા નથી.

યથા સ્વભોગાર્થ વિપુલવિભવસમ્પાદિતં સકલજનાર્થકારિકારુકલાકલાપનિર્મા-  
યિતં સકલેન્દ્રિયસુખાવલમ્બિ-ગગનચુમ્બિ-પ્રાસાદમવલોકિતુમ્પરિત્તનભાગમુપગતો  
ભવનશોભાવલોકનનિમગ્નો ભવનાધિપતિરોહમાર્ગેણાવતરન્ કર્મવૈચિત્ર્યાત્પાદસ્વ-  
લ્લનેન તતો નિપત્ય મૃતિમવાપ । અહો ! પદ્યન્તુ મહામોહમહિમાનમ્ ।

સચ્ચ વાત હૈ ભોગાન્તરાય કે ઉદય સે જો અજ્ઞાન સે અન્ધ હો રહે હૈ, એવં  
જિનકી મતિ વિપરીત બની હુઈ હૈ વે इस अन्तराय की विचित्रता को  
कि-जो पदार्थ भोगसामग्री का साधन है वही कालान्तर में अन्तरायादि  
निमित्त को पाकर उसका साधन नहीं होता है-नहीं माना करते हैं, परन्तु  
उनकी मान्यता या अमान्यता से कुछ भी नहीं हो सकता है। हम  
व्यवहार में यह बात प्रत्यक्ष देखते हैं कि-भोग के लिये एकत्रित किये  
गये कारणकलाप-साधन अन्तराय के उदय से अनर्थकारी हो जाते हैं।

जैसे किसी धनिक व्यक्तिने अपने उपभोग करने के लिये पूर्ण उपभोग  
की सामग्रीसमन्वित एक सर्वसुन्दर गगनतलचुम्बी प्रासाद बहुत  
चतुर कारीगरों द्वारा बनवाना प्रारंभ किया। धीरे २ वह बनकर पूर्ण  
तैयार हो गया। मकानमालिक उसकी शोभा का निरीक्षण करने लिये  
वहाँ गया। सब से ऊँचे खण्ड पर चढ़ कर उसने उसकी शोभा का  
सर्वाङ्गनिरीक्षण किया। पूर्ण शोभा से युक्त उसे देखकर वह आनन्द  
मग्न भी हुआ। कुछ देर बाद वह वहाँसे वापिस लौटकर नीचे आने लगा,

સાચી વાત છે કે ભોગાન્તરાયના ઉદયથી જે અજ્ઞાનથી અન્ધ થઈ રહેલ છે, અને  
જેની મતિ વિપરીત અનેલ છે તે આ અંતરાયની વિચિત્રતાને કે-જે પદાર્થ ભોગ  
સામગ્રીનું સાધન છે તે કાલાન્તરમાં અંતરાયાદિક નિમિત્તને મેળવી તેનું સાધન  
બનતું નથી-માનતા પણ નથી, પરંતુ તેની માન્યતા અગર અમાન્યતાથી  
કોઈ પણ બની શકતું નથી. અમે વ્યવહારમાં આ વાત પ્રત્યક્ષ દેખીએ છીએ  
કે-ભોગ માટે એકત્રિત કરવામાં આવેલ કારણકલાપ-સાધન અંતરાયના ઉદયથી  
અનર્થકારી બની જાય છે.

જેવી રીતે કોઈ ધનિક વ્યક્તિએ પોતાના ઉપભોગને માટે પૂર્ણ  
ઉપભોગની સામગ્રીસમન્વિત એક સર્વસુંદર ગગનચુંબી મહેલ ઘણા ચતુર  
કારીગરો દ્વારા બનાવવાનો પ્રારંભ કર્યો. ધીરે ધીરે તે બનીને પૂર્ણ તૈયાર  
બની ગયો. મકાનમાલિક તેની શોભાનું નિરીક્ષણ કરવા ત્યાં ગયો. સૌથી  
ઉંચા ખંડ ઉપર ચડીને તેણે તેની શોભાનું સર્વાંગ નિરીક્ષણ કર્યું. પૂર્ણ શોભાથી  
યુક્ત તેને દેખીને તે આનંદમગ્ન પણ થયો, થોડા વખત પછી તે ત્યાંથી પાછો  
ફરીને નીચે આવવા લાગ્યો. પરંતુ વચમાં જ અશુભ ઉદયથી કોઈ એક સીડીના



મોહનીયે કામપ્રાધાન્યેન સ્ત્રિયાઃ પ્રાધાન્યમિતિ દર્શયતિ-‘સ્ત્રી’-તિ, સ્ત્રીલોકૈઃ= કામિનીજનૈઃ, પ્રવ્યથિતઃ=પ્રકર્ષેણ વ્યથિતઃ=અધીનીકૃતઃ ભોગાશાપાશબદ્ધઃ સાવ-  
ધાનુષ્ઠાયાં જનઃ । તે લન્યાનપિ મુદુરુપદેશાદિના સંસારાધોગર્તે પાતયન્તીત્યાહ  
-‘તે ભો’ इत्यादि । તે વનિતાવશવર્તિનો વદન્તિ=કથયન્તિ ‘ભો’ इति संबोधने  
हे जनाः ! एतानि=कामिन्यादीन्येव आयतनानि=भोगाधिष्ठानानि सुखकारणानी-  
त्यर्थः । कामिन्यो हि कमनीयसुखकारणीभूताः सकलजगतो ललामरूपा निखिल-  
लोकामन्दानन्दसन्दोहदायिन्यो भवन्ति, किं भोगस्ताभिर्विना?, इत्यादि ब्रुवन्ति ।

પરન્તુ બીચ હી મેં અશુભોદય સે કિસી એક સીઢી પર સે ઉસકા પૈર  
ફિસલ ગયા ઓર વહ વહાં સે નીચે ગિર કર મર ગયા । ઇસ દૃષ્ટાન્ત સે  
યહી ફલિતાર્થ નિકલતા હૈ કિ-જો સામગ્રી ભોગ કે નિમિત્ત હોતી હૈ  
વહી ભોગાન્તરાય કે ઉદય સે કાલાન્તર મેં અનર્થ કે લિયે જીવોં કો હો  
જાતી હૈ । પરન્તુ કર્મ કી બલવત્તા હી કુછ એસી હૈ, જો ઇસ જીવ કો  
બાહિરી વસ્તુઓં મેં ઉન્મત્ત બના રહી હૈ ।

इसी मोहनीय के उदयमें भोगों की आशारूपपाश से बंधे  
हुए जीवों में काम की प्रधानता होने से वे स्त्रियों के द्वारा व्यथित  
किये जाते हैं, अधीन किये जाते हैं । शास्त्रकार कहते हैं कि-ऐसे  
जीव “ इतो भ्रष्टस्ततो भ्रष्टः ” हो तो कोई अचरज की बात नहीं  
है, परन्तु ये स्वयं बिगड़कर दूसरों को भी बिगाड़ने की बातें करते  
हैं, यही एक बड़ा आश्चर्य है । ये दूसरों से यही कहते हैं कि-“अरे  
भाई! इन स्त्री आदि पदार्थों के सेवन करने में ही संसार का सर्व सुख

પગથીયા ઉપરથી તેનો પગ લપસી ગયો; અને તે ત્યાંથી નીચે પડીને મરી ગયો.  
આ દાખલાથી એવું તાત્પર્ય નીકળે છે કે-જે સામગ્રી ભોગને નિમિત્ત હોય છે  
તે ભોગાન્તરાયના ઉદયથી કાલાન્તરમાં જીવોને અનર્થરૂપ પણ બની જાય છે.  
પરંતુ કર્મની બલવત્તા જ કોઈ એવી છે કે, જે આ જીવને બહારની વસ્તુઓમાં  
ઉન્મત્ત બનાવે છે.

આ મોહનીયતા ઉદયમાં ભોગોની આશારૂપ પાશથી બંધાયેલા જીવોમાં  
કામની પ્રધાનતા હોવાથી તે સ્ત્રિઓદ્વારા વ્યથિત કર્યો જાય છે. અધીન કર્યો જાય  
છે. શાસ્ત્રકાર કહે છે કે-એવો જીવ ઇતો ભ્રષ્ટસ્તતો ભ્રષ્ટઃ થાય તો કોઈ અચ-  
રજની વાત નથી. પરંતુ તે પોતે બગડીને બીજાને પણ બગાડવાની વાતો કરે  
છે. એ પણ એક મોટું આશ્ચર્ય છે. તે બીજાઓને એમ કહે છે કે-“અરે ભાઈ  
આ સ્ત્રી આદિ પદાર્થોનું સેવન કરવામાં જ સંસારનું સર્વ સુખ સમાએલું છે



કિન્તુ નૈવ, પ્રત્યુત દુઃસ્વાદ્યર્થમેવેત્યાહ—‘તદિ’—ત્યાદિ, તેષાં તત્=કામિની-વશવર્તનં તાસાં સુખાયતનકથનં ચોભયમેવ દુઃસ્વાય=એહિકપારત્રિકાઽકલ્યાણાય ભવતિ । એવં સર્વત્ર ચતુર્થ્યન્તે યોજ્યમ્ । અપિ ચ મોહાય=અજ્ઞાનાય । કિં ચ—મારાય=મરણં મારસ્તસ્મૈ ચરમકામદશર્થમ્, કામસ્ય દશવિધા અવસ્થાઃ સમુત્પદ્યન્તે, તાસુ દશમાવસ્થા મરણાલ્યા ભવતિ । ઉક્તञ्च—

સમાયા હૈ, યે હી સુખ કે કારણ હૈ ” । મોહાભિભૂત જીવોં કી દૃષ્ટિ મેં સ્ત્રી હી ઉત્તમ સે ઉત્તમ આનંદ પ્રદાન કરનેવાલી વસ્તુ પ્રતિભાસિત હોતી હૈ । જગત કે અનેક સુન્દર પદાર્થોં સે ભી વહ અધિક સુન્દર ઉન્હેં માલૂમ દેતી હૈ । ઇસકે વિના સંસાર કા મજા ભી ઉનકી દૃષ્ટિ મેં ફીકા રહતા હૈ, પરન્તુ ઇસ પ્રકાર કી ઉનકી માન્યતા કેવલ એક મોહ કા હી વિલાસ હૈ । જિસ પ્રકાર અશુચિ પદાર્થ કા સેવન કરનેવાલા વરાહ અપને કો સુખી માનતા હૈ ઉસી પ્રકાર “નારીજઘનરન્ધ્રસ્થવિષ્ણુમૂત્રમયચર્મણા” નારીકે જઘન કે છિદ્રસ્થ ચમડે કે સેવન સે અજ્ઞાની મનુષ્ય ભી અપને કો સુખી માનતા રહતા હૈ, પરન્તુ જ્ઞાનિયોં કી દૃષ્ટિ મેં ઇસ પ્રકાર કે જીવોં કા વ્યવહાર ગર્હિત એવં નિન્દિત હૈ । ઇસી વાત કો ખુલાશા કરતે હુએ કહતે હૈ કિ—“તત્ તેષાં દુઃસ્વાય મોહાય” ઇત્યાદિ । સ્ત્રિયોં કે અધીન રહના ઔર ઉન્હેં સુખ કા સ્થાન સમજના યે દોનોં વાતેં માનવ જગત કો ઇસ લોક ઔર પરલોક મેં અકલ્યાણપ્રદ હૈ, અજ્ઞાન કો દેનેવાલી હૈ ઔર કામ કી

તે જ સુખતું કારણ છે ” મોહવશ ઊવોની દૃષ્ટિમાં સ્ત્રી જ ઉત્તમમાં ઉત્તમ આનંદ આપવાવાળી વસ્તુ પ્રતિભાસિત થાય છે. જગતના અનેક સુંદર પદાર્થોથી પણ તે અધિક સુંદર તેને માલૂમ પડે છે. તેના વિના સંસારની મજા પણ તેની દૃષ્ટિમાં ફીકી રહે છે, પરંતુ આ પ્રકારનો તેનો કેવળ એક મોહનો જ વિલાસ છે. જે પ્રકારે અશુચિ પદાર્થનું સેવન કરવાવાળા ભૂંડ પ્રાણી પોતાને સુખી માને છે તેજ પ્રકારે “નારીજઘનરન્ધ્રસ્થવિષ્ણુમૂત્રમય-ચર્મણા” નારીના જઘના છિદ્રસ્થ ચામડાનું સેવન કરવાથી અજ્ઞાની મનુષ્ય પણ પોતાને સુખી માનતો રહે છે, પરંતુ જ્ઞાનીયોની દૃષ્ટિમાં આ પ્રકારના ઊવોનો વ્યવહાર ગર્હિત અને નિન્દિત છે. આ વાતનો ખુલાસો કરીને કહે છે કે— તત્ તેષાં દુઃસ્વાય મોહાય ઇત્યાદિ. સ્ત્રિયોના આધીન રહેવું, અને તેને સુખનું સ્થાન સમજવું, એ બન્ને વાતો માનવજગતને આલોક અને પરલોકમાં અકલ્યાણપ્રદ છે. અજ્ઞાનને દેવાવાળી છે. અને કામની અન્તિમ દશાને પહોંચાડવાવાળી છે.

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા, દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।  
 તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥  
 પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, ષષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।  
 સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥  
 નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।  
 કામિનાં મદનોદ્વેગા, જાયન્તે દશ તે હ્યમી ” ॥ ૩ ॥ ઇતિ ॥

અત એવોક્તં ‘મારાયે’-તિ । કિંચ-મૃત્વા નરકાય=દશવિધક્ષેત્રયાતનાસ્થાનાય, તથા ચ-‘નરકતિરથે’ અત્ર ‘નરક’ ઇતિ લુપ્તપશ્ચમી, તેન નરકાન્નિર્ગત્ય યદિ સ જન્મ લભતે તર્હિ પ્રાયસ્તિર્યગ્યોનિશ્વેત્યર્થઃ ।

અન્તિમ દશા મેં પહુંચાનેવાલી હૈં । કામ કી દશ અવસ્થાઈ બતલાઈ હૈં, ઉનમેં મરણ યે કામ કી અન્તિમ અવસ્થા હૈ । કહા મી હૈ—

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।  
 તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥  
 પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, ષષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।  
 સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥  
 નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।  
 કામિનાં મદનોદ્વેગા જાયન્તે દશ તે હ્યમી ” ॥ ૩ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ હૈ । સ્ત્રિયોં કે સંગમ સે જીવ અનેક અસાધ્ય રોગોંકા ઘર બન કર આર્ત રૌદ્ર ધ્યાન કી વજહ સે મર કર નરક મેં જા પડતા હૈ । વહાં પર દશ પ્રકાર કી ક્ષેત્રીય યાતના કો ભોગતા હૈ । નરક इन યાતનાઓં કે

કામની દશ અવસ્થાઓ અતાવેલ છે. તેમાં મરણ એ કામની અન્તિમ અવસ્થા છે. કહું પણ છે—

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।  
 તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥  
 પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, ષષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।  
 સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥  
 નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।  
 કામિનાં મદનોદ્વેગા, જાયન્તે દશ તે હ્યમી ” ॥ ૩ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ છે. સ્ત્રિયોનો સંગમ છોવોને નરકનું હુઃખ આપે છે, અને અંતમાં તેનાથી છુવ અનેક અસાધ્ય રોગોનું ઘર બનીને આર્તરૌદ્ર ધ્યાનથી મરીને નરકમાં જાય છે. તે ઠેકાણે દશ પ્રકારની ક્ષેત્રીય યાતનાઓ ભોગવે છે. નરક આ યાતનાઓના



एवम्भूतः स्वात्महितं न जानातीत्याह—‘सतत’—मित्यादि । सततं=नित्यं, मूढः=दर्शनमोहचारित्रमोहकर्मणा युक्तः धर्म=जिनोक्तं श्रुतचारित्रलक्षणं न जानाति । एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु—‘उदाहे’—ति, वीरः=परिज्ञातसकलहेयो पादेयस्तीर्थङ्करादिः, उत्=प्राबल्येन आह=कथितवान् । अवार्षत्वाद् भूते लट् । कि-मित्याह—‘अप्रमाद’ इति, महामोहे=स्त्रीपुंनपुंसकवेदरूपे अप्रमादः=प्रमाद आसक्तिः

પ્રધાન સ્થાન હૈં । વહાં સે નિકલ કર જીવ પ્રાયઃ તિર્યંચ યોનિ મેં હી જન્મ ધારણ કરતા હૈ । “નરક-તિરિક્ષ્વાણ” અર્થાત્ નરક સે નિકલ કર જીવ જબ જન્મ ધારણ કરતા હૈ તો વહ પ્રાયઃ તિર્યંચ યોનિ મેં હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ, યહ અર્થ હસ પદ સે પ્રતીત હોતા હૈ ।

जिनकी आत्मा नित्य चारित्रमोहनीय के उदयसे मलिन बनी है वे जिनेन्द्र भगवान् द्वारा प्रतिपादित इस श्रुतचारित्र रूप धर्म को नहीं जानते हैं । इस प्रकार का कथन श्री अन्तिम तीर्थंकर महावीर स्वामीका है, जिन्होंने जगत के समस्त हेयोपादेय तत्त्वों को अच्छी तरह जान लिया है । इस कथन में सूत्रकार महावीर स्वामी की प्ररूपणा प्रकट करने से तथा अपनी कल्पना का निषेध करने से उसमें प्रमाणता प्रकट करते हुए कहते हैं—“एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु उदाह वीरः” । यह समस्त पूर्वोक्त कथन तथा जो कुछ आगे कहा जाता है वह सब मैंने नहीं किया है, किन्तु वीर भगवान् ने कहा है । भगवान् का उपदेश है कि जीवों को “अप्पमाओ महामोहे” स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसक वेद

પ્રધાન સ્થાન છે. ત્યાંથી નીકળીને જીવ પ્રાયઃ તિર્યંચ યોનિમાં જ જન્મ ધારણ કરે છે. “નરકતિરિક્ષ્વાણ” નરકમાંથી નીકળી જીવ ત્યારે જન્મ ધારણ કરે છે ત્યારે તે તિર્યંચ યોનિયોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે. એ પૂર્વોક્ત અર્થ આ પદથી પ્રતીત થાય છે.

જેનો આત્મા કાયમ ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયથી મલિન બનેલ છે તે જીનેન્દ્ર ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત આ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને જાણતો નથી. આ પ્રકારનું કથન શ્રી અંતિમ તીર્થંકર મહાવીર સ્વામીનું છે જેણે જગતના સમસ્ત હેયોપાદેય તત્ત્વોને સારી રીતે જાણી લીધા છે. આ કથનમાં સૂત્રકાર મહાવીર સ્વામીની પ્રરૂપણા પ્રગટ કરવાથી, તથા પોતાની કલ્પનાનો નિષેધ કરવાથી તેમાં પ્રમાણતા પ્રગટ કરતાં કહે છે. “एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु उदाहवीरः” આ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન અને જે આગળ કહેવામાં આવશે તે બધા મેં કરેલ નથી પણ વીર ભગવાને કરેલ છે. ભગવાનનો ઉપદેશ છે કે જીવોને “अप्पमाओ महामोहे” સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ



ન પ્રમાદોઽપ્રમાદઃ, સ વિધેયઃ, ન તત્ર પ્રમાદપ્રમત્તેન ભાવ્યમ્ । અન્યદપ્યાહ-‘અલ’-મિત્યાદિ, ‘કુશલસ્ય’ કુશાન્=ભાવકુશાન્ અષ્ટવિધકર્માણિ લુનાતિ=છિન્નીતીતિ કુશલઃ=કર્મવિદારણપરસ્તસ્ય પ્રમાદેન=મઘ-વિષય-કષાય-નિદ્રા-વિકથારૂપેણ અલં=વ્યર્થ, તત્ર કુશલે પ્રમાદસ્યાસમ્ભવાત્ । કિં કૃત્વા પ્રમાદં ન કરોતીત્યાહ-‘શાન્તી’-ત્યાદિ, શાન્તિમરણં, શમનં શાન્તિઃ=સકલકર્મનાશઃ, અત એવ શાન્તિઃ=

રૂપ મહામોહ મેં આસક્તિ નહીં કરની ચાહિયે । પ્રમાદ સે સંસાર ઔર અપ્રમાદ સે મુક્તિ કા લાભ હોતા હૈ । સૂત્ર મેં શાન્તિ ઔર મરણ ઇન્ શબ્દોં કા વાચ્ય અર્થ ક્રમશઃ અવ્યાબાધસુખલક્ષણ મોક્ષ ઔર ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર હૈ, ક્યોં કિ “શમનં શાન્તિઃ” શમન કા નામ શાંતિ હૈ, વહ સમસ્ત કર્મોં કા અભાવસ્વરૂપ અવસ્થા હૈ । ઇસ્કા દૂસરા નામ અવ્યાબાધસુખલક્ષણ મોક્ષ ખી હૈ । વારંવાર ચતુર્ગતિયોં મેં પ્રાણી જહાં પર મરતે રહતે હૈં ઉસ કા નામ મરણ-સંસાર હૈ । ભાવકુશરૂપ અષ્ટવિધ કર્મોંકા જો છેદન કરતા હૈ વહ કુશલ હૈ, ક્યોં કિ-“કુશાન્ લુનાતીતિ કુશલઃ” । અષ્ટ પ્રકાર કે કર્મોં કો વિદારણ કરનેવાલે કા નામ કુશલ હૈ । “અલં કુશલસ્ય પ્રમાદેન” અર્થાત્ કુશલ કે લિયે પ્રમાદ હોતા હી નહીં હૈ । મઘ વિષય કષાય નિદ્રા ઔર વિકથા કે ભેદસે પ્રમાદ પાંચ પ્રકારકા હોતા હૈ । જો કર્મોં કો નાશ કરને મેં પ્રયત્નશાલી હો રહે હૈં, વે કખી પ્રમત્તદશાસંપન્ન નહીં હોતે હૈં । કારણ કિ વે જાનતે હૈં કિ-પ્રમાદ સે સંસાર મેં પરિભ્રમણ તથા અપ્રમાદ સે શાંતિ-અવ્યાબાધસુખ-

અને નપુંસકવેદ ૩૫ મહામોહમાં આસક્તિ કરવી જોઈએ નહિ. પ્રમાદથી સંસાર અને અપ્રમાદથી મુક્તિનો લાભ થાય છે. સૂત્રમાં શાંતિ અને મરણ આ શબ્દોનો વાચ્ય અર્થ ક્રમશઃ અવ્યાબાધસુખલક્ષણ મોક્ષ અને ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર છે કારણ કે “શમનં શાન્તિઃ” શમનનું નામ શાંતિ છે. તે સમસ્ત કર્મોની અભાવ સ્વરૂપ અવસ્થા છે. તેનું બીજું નામ અવ્યાબાધસુખલક્ષણ મોક્ષ પણ છે. વારંવાર ચતુર્ગતિમાં પ્રાણી જ્યાં મરતા રહે છે તેનું નામ મરણ-સંસાર છે. ભાવકુશ ૩૫ અષ્ટવિધ કર્મોનું જે છેદન કરે છે. તે કુશલ છે કારણ કે “કુશાન્ લુનાતીતિ કુશલઃ” આઠ પ્રકારના કર્મોનું વિદારણ કરવાવાળાનું નામ કુશલ છે. “અલં કુશલસ્ય પ્રમાદેન” અર્થાત્ કુશલને માટે પ્રમાદ થતો જ નથી. મઘવિષય કષાય નિદ્રા અને વિકથાના લેદથી પ્રમાદ પાંચ પ્રકારનો હોય છે; જે કર્મોનો નાશ કરવામાં પ્રયત્નશાળી હોય છે તે કોઈ વખત પ્રમત્તદશાસંપન્ન બનતાં નથી. કારણ કે તેઓ જાણે છે કે-પ્રમાદથી સંસારમાં પરિભ્રમણ અને અપ્રમાદથી શાંતિ

અવ્યાબાધસુખલક્ષણો મોક્ષઃ, ‘મરણ’ ત્રિયન્તે મુહુર્મુહુશ્ચતુર્ગતિષુ પ્રાણિનો યત્રેતિ તન્મરણં=સંસારઃ, શાન્તિશ્ચ મરણં ચ શાન્તિમરણં, તત્ સંપ્રેક્ષ્ય=‘અપ્રમાદેન સંસારો-પરમઃ, પ્રમાદેન સંસારપરિભ્રમણં ભવતીતિ સમ્યગાલોચ્ય । અપિ ચ-‘ભિદુરધર્મ’-મિતિ, પ્રમાદો વિષયાભિષ્વજ્ઞઃ, સ ચ શરીરે ભવતિ તતો ભિદુરો=મદ્ગ્રશીલો ધર્મઃ=સ્વભાવો યસ્ય તદ્ ભિદુરધર્મં શરીરં, સ્વત એવ વિનશનશીલત્વાત્, સમ્પ્રેક્ષ્ય=વિચાર્ય સ્વરૂપ મુક્તિ કા લાભ હોતા હૈ । ઇસ લિયે ઇસ અવ્યાબાધ-સુખ-સ્વરૂપ શાન્તિ કે લાભ સે જો વંચિત કરાનેવાલા હૈ ઉસ પ્રમાદ સે લાભ હી કયા હો સકતા હૈ, એસા વિચાર કર સંયમી કો પ્રમાદ કમી નહીં કરના ચાહિયે । “ ભિદુરધર્મં સંપ્રેક્ષ્ય નાલં પશ્યાલં તે ઐતૈઃ ” ભંગ હોના જિસકા સ્વભાવ હો ઉસકા નામ ભિદુરધર્મ હૈ, એસા યહ શરીર હૈ; ક્યોં કિ યહ સ્વતઃ હી વિનાશશીલ હૈ । સંયમી મુનિકો ઇસ બાત કા દૃઢ વિશ્વાસ કરના ચાહિયે કિ યહ મેરા શરીર અવશ્ય હી વિનશ્વર હૈ, ક્યોં કિ યહ પૌદ્ગલિક પર્યાય હૈ, જો પર્યાય હોતી હૈ વહ ઉત્પાદ-વ્યય-ધર્મ-વિશિષ્ટ હોતી હૈ । પુદ્ગલ કા સ્વભાવ હી પૂરન-ગલન-સ્વરૂપ હૈ । અતઃ ઇસ વિનશ્વર વસ્તુ કે મોહ મેં ફંસ કર જો સંયમી અપને સંયમરૂપી ધન કો પ્રમાદ-રૂપી ચોરોં કે જરિયે લુટવા દેતે હૈં વે મહાપ્રમાદી હૈં । સંયમ કી આરાધના કરતે હુઅ યદિ ઇસ શરીર કા પતન હોગા, તો ઉસ દશા મેં કમી ન કમી અવશ્ય અવ્યાબાધ-સુખ-રૂપ મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ હોગી; અન્યથા-ઇસ સંસાર

અવ્યાબાધસુખસ્વરૂપ મુક્તિનો લાભ થાય છે માટે આ અવ્યાબાધસુખસ્વરૂપ શાન્તિના લાભથી જે દૂર રખાવે છે તે પ્રમાદથી લાભ પણ કંઈ થતો નથી. એવો વિચાર કરી સંયમીએ પ્રમાદ કદી પણ કરવો નોંધ્યો નહિ. “ ભિદુરધર્મં સંપ્રેક્ષ્ય નાલં પશ્યાલં તે ઐતૈઃ ” ભંગ થયું જેનો સ્વાભાવ છે તેનું નામ ભિદુરધર્મ છે, એવું આ શરીર છે, કારણ કે તે સ્વતઃ વિનાશશીલ છે. સંયમી મુનિએ આ વાતનો દૃઢ વિશ્વાસ કરવો નોંધ્યો કે આ માટે શરીર અવશ્ય જ વિનશ્વર છે. કારણ કે આ પૌદ્ગલિક પર્યાય છે, જે પર્યાય હોય છે તે ઉત્પાદ વ્યય ધર્મ વિશિષ્ટ હોય છે. પુદ્ગલનો સ્વભાવ જ પૂરન-ગલન-સ્વરૂપ છે, માટે આ વિનશ્વર વસ્તુના મોહમાં ફસીને જે સંયમી પોતાના સંયમરૂપી ધનને પ્રમાદરૂપી ચોરા મારફત લુંટાવી દે છે તે મહાપ્રમાદી છે. સંયમની આરાધના કરતાં કરતાં કદાચ આ શરીરનું પતન થશે તો તેવી દશામાં કોઈને કોઈ વખત અવશ્ય અવ્યાબાધ સુખરૂપ મોક્ષની પ્રાપ્તિ થશે. અન્યથા આ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરતાં અનન્ત



પ્રમાદો ન વિધેય ઇતિ સમ્બન્ધઃ । મોગાસ્તુ શુક્તપૂર્વા અપિ ન વૃત્તિજનકાઃ, ઇત્યાહ-  
‘નાલ’ મિતિ મોગાઃ પરિશુક્તા અપિ સ્પૃહાનિવૃત્તયે નાલં=ન સમર્થા ભવન્તિ । ઉક્તશ્ચ—

“ નગ્ની તિષ્પઙ્ કઢેહિં, નાવગાહિં મહોદહી ।

ન જમો સવ્વભૂણ્હિં, ઇત્થીહિં પુરિસો તહા ” ॥ ૧ ॥

મેં પરિભ્રમણ કરતે હુણ અનન્ત કષ્ટોં કો મોગના પડેગા । શરીર કા નાશ અવશ્યંભાવી હૈ, તો મેં સંયમ કી વિરાધના કરકે ઇસે અવિનશ્વર અમર તો કર નહીં સકતા ! અતઃ ઇસ વિનશ્વર વસ્તુ સે જો મુજે પરંપરા રૂપ સે અવિનશ્વર વસ્તુકી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ તો યહ સબ સે વડા મારી લાભ મુજે મિલતા હૈ; ફિર ક્યોં પ્રમાદી બન કર ઇસ શરીર કે મોહ મેં પડ અપને સંયમ કી વિરાધના કરૂં ? । ઢોનોં હાલત મેં શરીર કા નાશ સ્વયં સિદ્ધ હૈ; ફિર મી ઇક હાલત અનંત આનંદપ્રદ ઓર ઢૂસરી હાલત અનંત કષ્ટપ્રદ હૈ, ઇસા વિચાર કર સંયમી કો કમી મી પ્રમાદ નહીં કરના ચાહિયે । ઇસી લિયે સૂત્રકાર ને “ મિદુરધર્મ સંપ્રેક્ષ્ય ” ઇસ વાક્ય કે ઢ્વારા સંયમી જનકો શિક્ષા ઢી હૈ । તથા આગે મી શિક્ષા ઢેતે હુણ વે પ્રકટ કર રહે હૈં કિ જિન પંચેન્દ્રિયોં કે મોગ તુમને પહિલે મોગ લિયે હૈં વે મી તુમ્હારી ઇચ્છા કી શાંતિ કરને કે લિયે સમર્થશાલી નહીં હૈં, કહા મી હૈ—

“ નગ્ની તિષ્પઙ્ કઢેહિં, નાવગાહિં મહોદહી ।

ન જમો સવ્વભૂણ્હિં, ઇત્થીહિં પુરિસો તહા ” ॥ ૧ ॥

કષ્ટોને ભોગવવા પડશે, શરીરનો નાશ અવશ્યંભાવી છે, તો હું સંયમની વિરાધના કરીને તેને અવિનશ્વર અમર તો કરી શકતો નથી, માટે આ વિનશ્વર વસ્તુથી જે મને પરંપરારૂપથી અવિનશ્વર વસ્તુની પ્રાપ્તિ થાય છે તો આ બધાથી મોટો લાભ મને મળે છે તો પછી શા માટે પ્રમાદી બનીને આ શરીરના મોહમાં પડી પોતાના સંયમની વિરાધના કરું, બંને હાલતમાં શરીરનો નાશ સ્વયં સિદ્ધ છે તો પણ એક હાલત અનંત આનંદપ્રદ અને બીજી હાલત અનંત કષ્ટપદ છે. એવો વિચાર કરી સંયમીએ કોઈ વખત પણ પ્રમાદ નહિ કરવો જોઈએ, માટે સૂત્રકારે “ મિદુરધર્મ સંપ્રેક્ષ્ય ” આ વાક્યદ્વારા સંયમી જનને શિક્ષા આપી છે. તથા આગળ પણ શિક્ષા આપતાં તે પ્રગટ કરે છે કે—જે પાંચ ઇન્દ્રિયોના ભોગ તમે પહેલાં ભોગવી લીધા છે તે પણ તમારી ઇચ્છાની શાંતિ કરવા માટે સમર્થશાળી નથી, કહ્યું પણ છે—

“ નગ્ની તિષ્પઙ્ કઢેહિં, નાવગાહિં મહોદહી ।

ન જમો સવ્વભૂણ્હિં, ઇત્થીહિં પુરિસો તહા ” ॥ ૧ ॥



छाया—नाग्निस्तृप्यति काष्ठैः=नापगाभिर्महोदधिः ।

न यमः सर्वभूतैश्च, स्त्रीभिः पुरुषस्तथा ॥ १ ॥ इति

तत्सर्वं पश्य=बुध्यस्व, दृशेर्ज्ञानसामान्यार्थकत्वात्, अतो हे मेधाविन् ! ते=तव सदुपदेशजिघृक्षोः एभिः=प्रमादमयैर्दुःखजनकैर्विषयोपभोगैः अलं=व्यर्थम्, एभिरात्मकल्याणं साध्यं नास्तीत्यर्थः ।

यद्वा—एतैर्विषयोपभोगैरव्याबाधसुखम्, अलम्=पर्याप्तं विशिष्टतरमित्यर्थः, अतर्कितोपनतमरणे संसारे सुखलवस्याऽसम्भवादव्याबाधसुखमेव सुखमिति तात्पर्यम् ॥ सू० ३ ॥

जिस प्रकार अग्नि काष्ठों से, समुद्र नदियों से, काल प्राणियों की मृत्यु से तृप्त नहीं होता है, उसी प्रकार मनुष्य भी स्त्रीसंभोग से कभी भी तृप्त नहीं होता है ॥ इसलिये हे मेधावी शिष्य ! तुम भी यह अपने मन में दृढ़ धारणा कर लो कि प्रमाद-भय-दुःखजनक इन विषयभोगों से कभी भी आत्मकल्याण साध्य नहीं हो सकता, अतः इनकी चाह की दाह में क्यों अपने संयमरूपी पवित्र धर्म की आहुति करने के लिये संकल्प विकल्प करते हो । यह तुमसे इसलिये कहा जाता है कि तुम सदुपदेश को ग्रहण करने की इच्छा रखते हो ।

अथवा—यह समझो कि इस वैषयिक सुख की अपेक्षा अव्याबाध-सुख विशिष्टतर है । कारण कि संसारदशा भयवाली है, इसमें निर्भय अवस्था तो हो ही नहीं सकती । यदि थोड़ी देर के लिये यह असंभव भी संभवित कल्पित कर लिया जाय कि—“यहां प्राणी भयरहित है” तो भी

वे प्रकारे अग्नि काष्ठोत्थी, समुद्र नदिओत्थी, काल प्राणियोनी मृत्युत्थी तृप्त थतो नथी, ते प्रकारे मनुष्य पणु स्त्री संभोगथी डेढ वणत पणु तृप्त थतो नथी. माटे छे मेधावी शिष्य ! तमो पणु ये, पोताना मनमां द्रढ करी द्यो के प्रमाद-भय-दुःखजनक आ विषयभोगोत्थी डेढ वणत पणु आत्म-कल्याण साध्य थछ शकतुं नथी, माटे तेनी आहुतानी दाढमां शा माटे पोताना संयमरूपी पवित्र धर्मनी आहुति करवा संकल्प विकल्प करे छे. आ तमने ओटला माटे कहेवामां आवे छे के तमे सदुपदेशने अडण करवानी इच्छा राखनार छे.

अथवा ये समझे के आ वैषयिक सुखनी अपेक्षा अव्याबाध सुख विशिष्टतर छे, कारण के संसारदशा भयवाणी छे. तेमां निर्भय अवस्था तो थछ शकती नथी. कहाय थोडा वणत माटे आ असंभव पणु संभवित भानी दछ ये के “आंही प्राणी भयरहित छे” तो पणु ठीक नछि, कारण के—ये

મોગામિષઘૃદ્ધાનાં મોગસ્યાધિગમેઽનધિગમેઽપિ મહાદુઃસ્વમેવેત્યુપદિશતિ—  
'અયં પસ્સ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—અયં પસ્સ મુણી, મહઙ્ગમયં નાદવાદ્ઙ્જ કંચણં, એસ  
વીરે પસંસિએ, જે ન નિવિજ્ઞા આયાણાએ ન મે દેહ ન કુપ્પિજ્ઞા,  
થોવં લહ્હું ન ચિંસાએ, પહિસેહિઓ પરિણમિજ્ઞા, અયં મોણં  
સમણુવાસિજ્ઞાસિ-ત્તિવેમિ ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—એતત્પશ્ય મુને ! મહઙ્ગયં નાતિપાતયેત્ કચ્ચન એષ વીરઃ પ્રસંસિતઃ  
યો ન નિર્વિદ્યેત આદાનાય ન મે દદાતિ ન કુપ્યેત્, સ્તોકં લબ્ધ્વા ન નિન્દેત્,  
પ્રતિષિદ્ધઃ પરિણમેત્, એતન્મૌનં સમનુવાસયેઃ, ॥ ઇતિ બ્રવીતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—'એત'—દિત્યાદિ । હે મુને ! = હે અનગાર ! એતત્=કામમોગાસેવનં,  
મહઙ્ગયં=મયજનકતયા મહાદુઃસ્વરૂપમ્, મરણકારણત્વેન દુઃસ્વે મહત્ત્વમ્, પશ્ય=  
સર્વથા દુઃસ્વજનકં જાનીહિ । ઉક્તચ્ચ—

ઠીક નહીં; કારણ કિ-ન માલૂમ કાલકા ગ્રાસ હો કબ જાના પડે ।  
મૃત્યુ કા જબર્દસ્ત મય પ્રમાદી પ્રત્યેક પ્રાણી કો લગા હી રહતા હૈ ।  
કાલ બાજે બજાતા તો આતા નહીં હૈ કિ જિસસે ઉસસે સચેત હો  
જાય । યહ તો વિના વિચાર કરનેવાલે પ્રત્યેક જીવાત્મા કો અપને પંજે મેં  
ફેંસા લેતા હૈ । અતઃ સંસારદશા મયવાલી હૈ ઓર યહાં પર નિર્ભયદશા  
રૂપ સુખ કા અંશ માત્ર મી પ્રાપ્ત હોના સર્વથા અસંભવ હૈ; અતઃ અવ્યા-  
બાધ સુખ હી વાસ્તવિક સુખ હૈ । ઇસકી પ્રાપ્તિ સંયમારાધન સે હી જીવોં  
કો હોતી હૈ । એસા વિચાર કર સંયમી મુનિ કો સંયમભાવ મેં કમી  
મી પ્રમત્તદશાયુક્ત નહીં હોના ચાહિયે ॥ સૂ. ૩ ॥

ખબર નથી કે કાળનો ગ્રાસ ખની કયારે જીવું પડે. આ પ્રકારે મૃત્યુનો  
ભય પ્રમાદી પ્રત્યેક પ્રાણીને લાગેલો જ રહે છે. કાળ વાળુ વગાડતો તો આવતો  
જ નથી કે જેનાથી પ્રાણી ચેતી જાય, એ તો વિચાર નહિ કરવાવાળા પ્રત્યેક  
જીવાત્માને પોતાના પંજામાં ફસાવે છે. માટે સંસારદશા ભયવાળી છે, અને આ  
ઠેકાણે નિર્ભયદશા રૂપ સુખનો અંશમાત્ર પણ પ્રાપ્ત થવો સર્વથા અસંભવ છે.  
માટે અવ્યાબાધસુખ જ વાસ્તવિક સુખ છે. તેની પ્રાપ્તિ સંયમારાધનથી જ  
જીવોને થાય છે. એવો વિચાર કરી સંયમી મુનીએ સંયમભાવમાં કોઈ વખત  
પણ પ્રમત્તદશાયુક્ત થવું જોઈએ નહિ. ॥ સૂ. ૩ ॥



“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, डज्झइ किर चंदकिरणेहिं ” ॥ १ ॥ इति ।

છાયા—एतस्मादुष्णतरा अन्याः का वेदना गण्यन्ते ।

यत्कामव्याधिगृहीतो, दह्यते किल चन्द्रकिरणैः ॥ १ ॥

भोग रूपी માંસ મેં ગૃહ બને પ્રાણિયોં કો ભોગોં કી પ્રાપ્તિ હોને પર અથવા નહીં હોને પર બહા ભારી દુઃખ હી હોતા હૈ । इस बात का सूत्रकार उपदेश देते हुए कहते हैं—“ एयं पस्स मुणी ” इत्यादि ।

હે મુને ! કામભોગ-વિષયસેવન કો તુમ બહુત ભારી ભય-સ્વરૂપ-અર્થાત્ મરણરૂપ ભય કા કારણ હોને સે મહાદુઃખરૂપ હી માનો । ભાવાર્થ—કામભોગ કા સેવન સદા ભય એવં દુઃખદાયી માના ગયા હૈ । વિષયસેવન સે જીવોં કો અનેક દુઃખ હોને કા સદા ભય બના રહતા હૈ । તથા અનેક પ્રકાર કે દુઃખ અન્હેં ભોગને ભી પડતે હૈ । મહાકષ્ટોં કો ભોગતેર જીવ જવ અત્યન્ત દુઃખી હો જાતે હૈ, તવ વે આત્મઘાત તક કર લિયા કરતે હૈ । इसलिये विषयसेवन सदा महादुःखदायी ही है, ऐसा समझ कर कभी भी अनगार को उस तरफ लालसापरिणति नहीं करनी चाहिये । कहा भी है—

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, डज्झइ किर चंदकिरणेहिं ॥ ” इति ॥

ભોગરૂપી માંસમાં ગૃહ અનેક પ્રાણિઓને ભોગોની પ્રાપ્તિ થવાથી અથવા નહિ મળવાથી ઘણું ભારી દુઃખ જ થાય છે. આ વાતનો સૂત્રકાર ઉપદેશ આપી કહે છે—“ एयं पस्स मुणी ” ઇત્યાદિ.

હે મુનિ ! કામભોગ-વિષયસેવનને તમે ઘણો ભયસ્વરૂપ અર્થાત્ મરણરૂપ ભયનું કારણ હોવાથી મહાદુઃખરૂપ જ માનો.

ભાવાર્થ—કામભોગનું સેવન સદા ભય અને દુઃખદાયી જ માનવામાં આવે છે. વિષયસેવનથી જીવોને અનેક દુઃખ થવાનો સદા ભય રહ્યા કરે છે, તથા અનેક પ્રકારના દુઃખ તેને ભોગવવા પણ પડે છે, મહાકષ્ટો ભોગવી ભોગવી જીવ જ્યારે અત્યંત દુઃખી થાય છે ત્યારે તે આત્મઘાત પણ કરે છે માટે વિષયસેવન સદા મહાદુઃખદાયી જ છે, એવું સમજીને કોઈ વખત પણ અણુગારે તે તરફ લાલસાપરિણતિ નહિ રાખવી જોઈએ. કહ્યું છે—

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, डज्झइ किर चंदकिरणेहिं ॥ इति ॥



યદ્વા યત્કામભોગાસક્ત આસ્રવદ્વારૈર્હિંસાદિષુ પ્રવર્તતે તસ્યેહ પરત્ર ચ મહદ્ભયં ભવતીતિ પશ્ય । ઇહ લોકે પુરુષવધકાઽલીકવાદિચોરપારદારિકાણાં મારદણ્ડન-જિહ્વાચ્છેદનબંધઘાતાદિકં ચ પશ્ય, પરલોકે નરકાદિષૂપપાતં પશ્યેતિ તાત્પર્યમ્ । એવં તર્હિં કિં વિધેયમ્ ? ઇત્યાહ—‘નાતિપાતયે’—દિત્યાદિ । મુનિઃ કશ્ચન=કમપિ પ્રાણિનં નાતિપાતયેત્=ન પ્રાણૈર્વ્યપરોપયેત્ ; ઉપલક્ષણં મૃષાવાદાદ્યાસ્રવાણામેતત્ ।

કામભોગ સે અધિક સંસાર મેં ઓર કોઈ વેદના ઉષ્ણતર નહીં હૈ, ક્યોં કિ હસ વ્યાધિ કા રોગી શીતલચંદ્રકિરણોં સે મી અત્યંત સંતપ્ત હો જાતા હૈ ।

અથવા—કામભોગસેવન હસ જીવ કો હસ લોક મેં ઓર પરલોક મેં મહાભયકારી હોતા હૈ । ક્યોં કિ કામભોગ મેં આસક્ત પ્રાણી હિંસા-દિક પાપોં મેં પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ । હિંસાદિકોં મેં પ્રવૃત્તિ હોને સે જીવ અશુભ કર્મોં કો બાંધતા હૈ, ઓર હસકે ફલ કો વહ નરકાદિ યોનિયોં મેં ભોગતા હૈ । જો પ્રાણી હિંસક, શૂઠા, ચોર ઓર પરદારલંપટ હોતે હૈં ઉન્હેં હસી લોક મેં ફાંસી, રાજદણ્ડ, જિહ્વાચ્છેદન, બંધ ઓર ઘાતાદિક અનેક કષ્ટ ભોગને પડતે હૈં, તથા પરલોક મેં નરકાદિ ગતિયોં મેં ઉનકો જન્મ ધારણ કરના પડતા હૈ । એસા સમજ કર હે મુને ! તુમ હસ ઓર અપની માનસિક પરિણતિ કો લાલસાવાલી મત કરો, કિન્તુ સદા હસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ કરો કિ જિસસે કિસી મી જીવ કી વિરાધના ન હો । સૂત્ર મેં “નાતિપાતયેત્” યહ પદ શૂઠ, ચોરી આદિ આસ્રવોં કા ઉપલક્ષક હૈ,

કામભોગથી અધિક આ સંસારમાં બીજી કોઈ વેદના ઉષ્ણતર નથી, કારણકે, આ વ્યાધિના રોગી શીતલ ચંદ્રકિરણોથી પણ અત્યંત સંતપ્ત થાય છે.

અથવા કામભોગસેવન આ જીવને આલોકમાં અને પરલોકમાં મહા ભય-કારી થાય છે. કારણ કે કામભોગમાં આસક્ત પ્રાણી હિંસાદિક પાપોમાં પ્રવૃત્તિ કરતા રહે છે. હિંસાદિકોમાં પ્રવૃત્તિ હોવાથી જીવ અશુભ કર્મો બાંધે છે, અને તેના ફળને તે નરકાદિ યોનિઓમાં ભોગવે છે. જે પ્રાણી, હિંસક, શૂઠા, ચોર અને પરદારલંપટ હોય છે તેને આ લોકમાં ફાંસી, રાજદંડ, જીહ્વાચ્છેદન, બંધ અને ઘાતાદિક અનેક કષ્ટો ભોગવવા પડે છે, તથા પરલોકમાં નરકાદિ ગતિઓમાં તેને જન્મ ધારણ કરવો પડે છે. એવું સમજીને હે મુનિ ! તમે આ તરફ પોતાની માનસિક પરિણતિને લાલસાવાળી બનાવો નહિ, પણ સદા એવી પ્રવૃત્તિ કરો કે જેનાથી કોઈ પણ જીવની વિરાધના ન થાય. સૂત્રમાં “નાતિપાતયેત્” આ પદ શૂઠ, ચોરી આદિ આસ્રવોનું ઉપલક્ષક છે, અર્થાત્ સંયમી જીવોને પોતાની પ્રવૃત્તિ

परित्यक्तभोगाभिलाषस्य षट्कायपरिपालकस्य गुणाधिगमो भवतीत्याह-‘एष’ इत्यादि । एषः=कामभोगस्पृहाभिप्रायविवेचनचतुर एक एव प्रमादपञ्चकरहितः, वीरः=कर्मरिपोर्नाशनाद्वीर इव वीरः, प्रशंसितः=तीर्थङ्करगणधरादिभिरभिनन्दितः । वीरस्वभावमाह-‘यो ने’-त्यादि । यो वीरः, ‘आदानाय’ आदीयते=अधिगम्यते निखिलकर्मक्षयसञ्जातसर्वविषयज्ञानं येन तदादानं=चारित्रानुष्ठानं, तस्मै न निर्विद्येत=न स्विद्येत-‘अन्ये लभन्तेऽशनवसनादिकं वराकोऽहं न लभे किमेतया

अर्थात्-संयमी जीवों को अपनी प्रवृत्ति इस प्रकार की करनी चाहिये कि जिससे उन्हें हिंसा, झूठ, चोरी आदि आस्रवों का बंध नहीं हो । जो संयमी मुनि इस प्रकार की शुभप्रवृत्तिवाला तथा कामभोग की इच्छा से रहित होता है, तथा पांच प्रमाद के वशवर्ती नहीं होता है वह वीर है और प्रशंसा का पात्र है । ऐसे मुनि की प्रशंसा तीर्थंकर गणधरादि देव भी किया करते हैं । प्रशंसा पाने का कारण यह है कि वह सदा अपनी इस प्रकार की प्रवृत्ति से क्रमशः भविष्य में कर्मशत्रुओं पर विजय प्राप्त करनेवाला हो जावेगा । धन्य हैं वे जो चारित्र अंगीकार करके किसी भी निमित्त के उपस्थित होने पर उस चारित्र से विरक्तिभाव पैदा नहीं करते । यहां “आशन” शब्द का अर्थ चारित्र का अनुष्ठान है, क्योंकि इस से ही सकल कर्मों के क्षय से उद्भूत सर्वपदार्थविषयक बोध-केवल-ज्ञान जीवों को प्राप्त होता है । “अशनवसनादिक दूसरों को तो प्राप्त हो रहे हैं मैं ऐसा अभाग्य हूं जो मुझे कोई पूछता भी नहीं है, इस चारित्र

એવા પ્રકારની કરવી જોઈ એ કે જેનાથી તેને હિંસા જુઠ ચોરી આદિ આશ્રવોનો બંધ ન થાય.

જે સંયમી મુનિ આ પ્રકારની શુભ પ્રવૃત્તિવાળા તથા કામભોગની ઇચ્છાથી રહિત હોય છે. તથા પાંચ પ્રમાદને તાબે થતા નથી તે વીર છે. અને પ્રશંસા-પાત્ર છે. એવા મુનિની પ્રશંસા તીર્થંકરગણધરાદિ દેવ પણ કરે છે. પ્રશંસા મળવાનું કારણ એ છે કે-તે સદા પોતાની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી ક્રમશઃ ભવિષ્યમાં કર્મશત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાવાળા થઈ જશે. ધન્ય છે તેઓને જે ચારિત્ર અંગીકાર કરીને પછી કોઈ પણ કારણ ઉપસ્થિત થવા છતાં પણ તે ચારિત્રથી વિરક્તિભાવ પેદા કરતા નથી. આહીં “આશન” શબ્દનો અર્થ ચારિત્રનું અનુષ્ઠાન છે, કારણ કે તેનાથી જ સકલ કર્મોના ક્ષયથી ઉદ્ભૂત સર્વપદાર્થ-વિષયક બોધ-કેવળજ્ઞાન જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે. “અશનવસનાદિક બીજાને તો પ્રાપ્ત થતાં જ રહે છે અભાગી હું છું જે મને કોઈ પૂછતું પણ નથી. આ ચારિત્રને



પરિગૃહીતયા દુર્લભલાભયા પ્રવ્રજ્યયા' इत्येवं 'ढंढणाऽनगारवन्न स्वयमवमन्येते-  
ति तात्पर्यम् । “ वहुं परधरे अत्थि, विविहं खाइमसाइमं, ण तत्थ पंडिओ कुप्पे,  
इच्छा दिज्ज परो ण वा ” ॥ इत्यादि भगवद्वचनात् ।

अपि च—लाभालाभसमभावः सन् स्तोकम्=अल्पं भैक्षं लब्ध्वा=प्राप्य दातारम्  
अन्नादिकञ्च न निन्देत्=न जुगुप्सेत्, किन्त्वेवं चिन्तयेत्, ममैवान्तरायोदयप्राव-  
ल्यमेतत् । किञ्च—प्रतिषिद्धः=निषिद्धः सन् परिणमेत्=निवर्तेत किञ्चिदपि दौर्मनस्यं  
न कुर्यात्, तं गृहस्थं परुषवाग्भिर्न तिरस्कुर्यात्, तंतनाटादिशब्दं न कुर्यादित्यर्थः ।

કે કિ જિસમેં લાભ દુર્લભ હૈ અંગીકાર કરને સે મુજ્હે લાભ હી ક્યા હુઆ ”  
इस प्रकार ढंढण अनगार की तरह स्वयं अपने ग्रहण किये हुए चारित्र की  
उपेक्षा न करे । यह भी स्वप्न में विचार न करे कि—“ देखो तो सही, इन  
गृहस्थों के यहां अशन पान खाद्य स्वाद्य आदि विविध वस्तुएँ मौजूद हैं  
परन्तु ये कितने अविनयी, अश्रद्धालु एवं लोभी हैं जो इनमेंसे मुझे कुछ  
भी नहीं देते हैं ” । चाहे कुछ मिले या न मिले, अथवा थोड़ा मिले, साधु  
का यही परम कर्तव्य है कि वह इन अवस्थाओं में समभावशाली  
रहे । दाता की अथवा उसके दिये हुए अन्नादि की कभी भी निंदा न करे ।  
अल्पलाभ होने पर यही एक मात्र विचार करे कि मेरा ही यह अन्तराय  
का प्रबल उदय है, जो यथेच्छ लाभ नहीं हो रहा है, अथवा नहीं हुआ है ।  
आहारादिक के निमित्त परधरप्रवेश करते समय यदि वहां पर आहा-  
रादिक की याचना करने पर उस के लिये कोई निषेध भी करे तो उस  
समय मन में कोई जात का दुर्भाव न आने देवे, और न उस गृहस्थ का  
“ तू अधर्मात्मा है ” इत्यादि कठोर शब्दों से तिरस्कार ही करे ।

જેમાં લાભ દુર્લભ છે, અંગીકાર કરવાથી મને લાભ શું થયો.” આ પ્રકારે ઢંढણ  
અણુગાર ભાક્ષક સ્વયં પોતાના ગ્રહણ કરેલાં ચારિત્રની ઉપેક્ષા કરે નહિ. એવું  
પણ સ્વપ્નથી વિચાર ન કરે કે—“બુઝો ! તે ગૃહસ્થોને ત્યાં અશન પાન ખાદ્ય  
સ્વાદ્ય આદિ વિવિધ વસ્તુઓ મૌજુદ છે. પરંતુ એ બધા કેટલા અવિનયી અશ્ર-  
દ્ધાળુ અને લોભી છે જે તેમાંથી મને કંઈ પણ દેતા નથી.” ભલે મળે, ભલે ન  
મળે, ભલે જરાક મળે, સાધુનું એ પરમ કર્તવ્ય છે કે તે બંને અવસ્થામાં સમભાવી  
રહે. દાતાની અથવા તેનાથી અપાયેલા અન્નાદિની કોઈ વખત પણ નિંદા ન કરે.  
અલ્પલાભ થવાથી એ એક જ માત્ર વિચાર કરે કે—મારો આ અંતરાયનો પ્રબલ ઉદય  
છે કે જેથી મને યથેચ્છ લાભ થતો નથી, અથવા થયો નથી, આહારાદિક નિમિત્તે  
પરધર પ્રવેશ કરતી વખતે કદાચ આહારિકની યાચના કરવાથી કોઈ તેને માટે નિષેધ



ઉપસંહરન્નાહ-‘એત’-દિત્યાદિ । એતત્=પ્રવ્રજ્યાનિર્વેદરૂપમ્-આદાનાકોપનમ્, અલ્પા-નિન્દનમ્, પ્રતિષિદ્ધિનિવર્તનં મૌનં-મુનેરિદં મૌનમ્-અનગારાચરણં જ્ઞાનાચારાદિક-મિત્યર્થઃ, હે શિષ્ય ! ‘સમનુવાસયેઃ’ સમ્-સમ્યક્પ્રકારેણ પૂજા-સત્કાર-ગૌરવ-નિદાનરાહિત્યેન અનુવાસયેઃ-અનુપાલયેરિત્યર્થઃ, ગણધરાદિસેવિતં નિરતિચારં ચારિત્રં પરિપાલયેરિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તુત્ત એવ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય ચતુર્થોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૪ ॥

અન્ત મેં ઉપસંહાર કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં-યે જો પૂર્વોક્ત સાધુ કા આચાર પ્રકટ કિયા હૈ કિ-વહ અપને ગ્રહણ કિયે હુણ ચારિત્ર કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ન રખે, અલ્પલાભ મેં બી સંતુષ્ટ રહે, નિષેધ કરને પર પરઘર સે શાંતિપૂર્વક વાપિસ હો જાવે । અતઃ હે શિષ્ય ! તુમ અચ્છી તરહ સે અર્થાત્ પૂજા, સત્કાર, ગૌરવ ઓર નિદાન કી ભાવના સે રહિત હોકર ગણધરાદિ-સેવિત ઇસ નિરતિચાર ચારિત્ર કા પાલન કરો । “ઇતિ બ્રવીમિ” ઇન પદોં કા અર્થ પહિલે સ્પષ્ટ કર દિયા ગયા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીય અધ્યયન કા ચૌથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૪ ॥

પણુ કરે તો તે વખતે મનમાં કોઈ પણ જાતનો દુર્ભાવ લાવે નહિ, તેમજ તે ગૃહસ્થનો “તું અધર્માત્મા છે” ઇત્યાદિ ખરાબ શબ્દોથી તિરસ્કાર પણ ન કરે.

અંતમાં ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે-આ જે પૂર્વોક્ત સાધુનો આચાર પ્રગટ કરેલ છે કે-તે પોતાનાં ગ્રહણ કરેલ ચારિત્ર પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રાખે નહિ. અલ્પ લાભમાં પણ સંતુષ્ટ રહે. નિષેધ કરવાથી ઘરથી શાંતિપૂર્વક પાછા ફરી જાય. માટે હે શિષ્ય ! તમે સારી રીતે અર્થાત્ પૂજા, સત્કાર, ગૌરવ અને નિદાનની ભાવનાથી રહિત થઈને તીર્થંકર ગણધરાદિકથી સેવિત નિરતિચાર ચારિત્રનું પાલન કરો. “ઇતિ બ્રવીમિ” આ પદોનો અર્થ પહેલાં સ્પષ્ટ કરેલ છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ઇતિ બીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૪ ॥

## ॥ આચારાઙ્ગસૂત્રે દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય પશ્ચમોદ્દેશઃ ॥

અભિહિતચતુર્થોદ્દેશોઽધુના પશ્ચમસ્ય વ્યાખ્યા પ્રારમ્ભ્યતે । પૂર્વે ભોગાભિષ્વજ્ઞં વિહાય લોકનિશ્રયા શરીરરક્ષણાર્થં વિચરણીયમિત્યુક્તમ્ । અત્રાપિ તદેવ પ્રતિપાદયિષ્યતે । તથા ચ વિષયકષાયકરાલજ્વાલાજટિલસંસારદાવાનલત્રસ્તો બાલકુરજ્ઞઃ સ્વપ્લાયમાનો નિર્વાધશાન્તિપ્રાપ્તયે પરિહૃતભોગસ્પૃહો ગૃહીતપશ્ચમહાવ્રતો નિરવધાનુષ્ઠાનપરઃ કાયનિર્વહણાર્થં લોકનિશ્રયા વિહરતિ, આશ્રયરહિતસ્ય દેહસાધનાઽસમ્ભવાત્, દેહસ્યાસદ્ભાવે ધર્મોઽપિ ભવિતું નર્હતિ । દેહસદ્ભાવશ્ચ નિશ્રયા ભવતિ । નિશ્રા હિ પશ્ચધા, ઉક્તશ્ચ—

## ॥ આચારાંગસૂત્રકે દૂસરે અધ્યયનકા પાંચવાં ઉદ્દેશ ॥

ચતુર્થ ઉદ્દેશ કી વ્યાખ્યા સમાપ્ત હો ચુકી, અવ યહાં પંચમ ઉદ્દેશ કી વ્યાખ્યા પ્રારમ્ભ હોતી હૈ । પહિલે જો યહ કહા ગયા હૈ કિ—ભોગોં સે ચિત્તવૃત્તિ કો હટાકર શરીરરક્ષા કે લિયે સંયમી કો લોક કી નેસરાય સે વિચરના ચાહિયે; યહી વિષય યહાં પર સ્પષ્ટ કિયા જાયગા । મૃગ કે બચ્ચે કી તરહ જો સંયમીજન ઇસ સંસારરૂપી દાવાનલ સે—કિ જો વિષય—કષાય—રૂપી ભયંકર જ્વાલા સે વ્યાપ્ત હૈ—ત્રસ્ત હોકર નિરાબાધ શાંતિ લાભ કે લિયે ઇતસ્તતઃ દૌડા ફિરતા હૈ, જિસને ભોગોં કી ઇચ્છા કા પરિત્યાગ કર દિયા હૈ, પશ્ચમહાવ્રતોં કા જો આરાધક હૈ, ઓર નિર્દોષ અનુષ્ઠાન કે આચરણ કરને મેં જો સર્વથા સાવધાન હૈ વહ અપને શરીરનિર્વાહ કે લિયે લોક-નિશ્રા (નેસરાય) સે વિચરતા હૈ; ક્યોંકિ વિના આશ્રય કે દેહ

## આચારાંગ સૂત્રના બીજા અધ્યયનનો પાંચમો ઉદ્દેશ.

ચોથા ઉદ્દેશની વ્યાખ્યા સમાપ્ત થઈ. હવે પાંચમા ઉદ્દેશની વ્યાખ્યા શરૂ થાય છે, પહેલાં જે એમ કહેવામાં આવેલ છે કે—ભોગોથી ચિત્તવૃત્તિને હટાવી શરીરરક્ષા માટે સંયમીએ લોકની નેસરાયથી વિચરવું જોઈએ. આ જ વિષય આ ઠેકાણે સ્પષ્ટ કરવામાં આવશે.

મૃગના બચ્ચા માફક જે સંયમી જન આ સંસારરૂપી દાવાનલથી કે જે વિષયકષાયરૂપી ભયંકર જ્વાલાથી વ્યાપ્ત છે, ત્રાસીને નિરાબાધ શાંતિ લાભ માટે અહીં તહીં ક્યાં કરે છે. જેણે ભોગોની ઇચ્છાનો પરિત્યાગ કર્યો છે. પંચમહાવ્રતોના જે આરાધક છે, અને નિર્દોષ અનુષ્ઠાનનું આચરણ કરવામાં જે સર્વથા સાવધાન છે તે પોતાના શરીરના નિર્વાહ માટે લોક-નિશ્રા (નેસરાય)થી વિચરે છે. કારણ કે આશ્રય વિના દેહની સાધના બની શકતી નથી. દેહની સાધના વિના ધર્મનું



“ ધમ્મં ણં ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઢાણા પળ્ણત્તા;  
તં જહા-છક્કાયા, ગળો, રાયા, ગાહાવર્હ, સરીરં ॥

( સ્થાનાઙ્ગ૦ સ્થાન ૫ । ૩૦ ૩ । )

છાયા—ધર્મ સ્વલુ ચરતઃ પશ્ચ નિશ્રાસ્થાનાનિ પ્રજ્ઞાનિ, તદ્વથા-ષટ્કાયાઃ, ગળો, રાજા, ગાથાપતિઃ, શરીરમ્, ઇતિ ।

યદ્યપિ દેહસ્ય સાધનાનિ—વસતિવસ્ત્રપાત્રાશનશયનાસનાદીનિ સન્તિ, તથાપિ તેષુ પ્રત્યહમાહારસ્યાઽઽવશ્યકતયા તસ્ય પ્રાધાન્યં, સ ચ ગૃહપતેઃ સકાશાદ્ગવેષયિ-તવ્યો ભવતિ । સ હિ ગૃહસ્થો નિજપરિવારપોષણાર્થમન્નાદિકં સમુત્પાદયત્યેવ, તતઃ સંયમજીવનરક્ષણાય વૃત્તિરેષ્ટવ્યા ભવતીતિ ।

કી સાધના નહીં હો સકતી, દેહ કી સાધના કે વિના ધર્મ કા આરાધન નહીં હો સકતા; અતઃ ધર્મ કી આરાધના કરને કે લિયે દેહ કી સાધના, ઓર દેહ કી સાધના કે લિયે લોક કી નેસરાય સંયમી કો આવશ્યકીય હૈ । નેસરાય પાંચ પ્રકાર કી હૈ ? કહા ભી હૈ—

“ ધમ્મં ણં ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઢાણા પળ્ણત્તા;

તંજહા-છક્કાયા, ગળો, રાયા, ગાહાવર્હ, સરીરં ”

અર્થાત્ ધર્મારાધન કરનેવાલે સંયમીજન કે પાંચ નિશ્રા-સ્થાન હૈ—ષટ્કાયા, ગળ, રાજા, ગાથાપતિ ઓર શરીર । યદ્યપિ દેહ કી સાધના કે સાધન—વસતિ, વસ્ત્ર, પાત્ર, ભોજન, શયન ઓર આસનાદિક હૈ તો ભી ડન સવમેં આહાર કી હી મુખ્યતા હૈ । સંયમીજન ત્રીન કરણ ત્રીનયોગ પૂર્વક સાવધ વ્યાપાર સે રહિત હોતે હૈ, અતઃ ડસ આહાર કી ગવેષણા ગૃહસ્થોં કે યહાં કરની ચાહિયે, ક્યોંકિ વે ગૃહસ્થ અપને પરિવાર કે પોષણ કે લિયે

આરાધન બની શકતું નથી. અને ધર્મની આરાધના કરવા માટે દેહની સાધના, અને દેહની સાધના માટે લોકની નેસરાય સંયમીને આવશ્યક જ છે. નેસરાય પાંચ પ્રકારની છે. કહું પણ છે—

“ ધમ્મં ણં ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઢાણા પળ્ણત્તા, તં જહા-છક્કાયા, ગળો, રાયા, ગાહાવર્હ, સરીરં ”

અર્થાત્ ધર્મારાધન કરવાવાળા સંયમી જનો માટે પાંચ નિશ્રા-સ્થાન છે. ષટ્કાયા, ગળ, રાજા, ગાથાપતિ અને શરીર. કહાય દેહની સાધનાના સાધન—વસતિ, વસ્ત્ર, પાત્ર, ભોજન, શયન અને આસનાદિક છે તો પણ એ સધનામાં આહારની મુખ્યતા છે. સંયમીજન સાવધ વ્યાપારથી ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી રહિત હોય છે. માટે તેવા આહારની ગવેષણા ગૃહસ્થોને ત્યાં કરવી જોઈએ, કારણ કે



અત્રાનન્તરસૂત્રસમ્બન્ધો યથા-‘એયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ’ ઇતિ । તત્ર નિરતિચારચારિત્રપાલનં તુ લોકનિશ્રયા ભવતીતિ કથિતમ્, અત્રાપિ મુનિના સમ્યગાહારશુદ્ધિર્વિચિન્તનીયેતિ દર્શયિષ્યતે ।

ગૃહપતયો હિ સ્વીયપુત્રદુહિત્રાદ્યર્થે શસ્ત્રસમારમ્ભં કુર્વન્તીતિ દર્શયતિ-‘જમિણં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ-‘જમિણં વિરૂવરૂવેહિં સત્થેહિં લોગસ્સ કમ્મસમારમ્ભા કજ્જંતિ તં જહા-અપ્પણો સે પુત્તાણં ધૂયાણં સુણ્હાણં નાઈણં ધાઈણં રાઈણં દાસાણં દાસીણં કમ્મકરાણં કમ્મકરીણં આ-સા-પુઢોપહેણા-સામાસા-પાયરાસા-સંનિહિસંનિચઓ કજ્જઈ, ઇહમેગોસિં માણવાણં ભોયણા- ॥ સૂ. ૧ ॥

અશનાદિક પ્રતિદિન તૈયાર કરતે હૈં । સંયમી મુનિ સંયમજીવન કી રક્ષા કે લિયે અપની આવશ્યકતાનુસાર ગૃહસ્થ કે યહાં સે આહાર આદિ લેકર સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ કરતે હૈં ।

યહાં પર “એયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ” ઇસ અનન્તર સૂત્ર કે સાથ સંબંધ હૈ-વહાં ‘નિરચિતાર ચારિત્ર કા પાલન લોક-નિશ્રા સે હોતા હૈ’ યહ કહા હૈ । ઇસમેં મી ‘સંયમી મુનિ કો આહાર કી શુદ્ધિ કા અચ્છી તર સે ધ્યાન રખના ચાહિયે’ યહ વાત આગે ચલકર પ્રકટ કી જાયગી ।

ગૃહસ્થ અપને પુત્ર-પુત્રી આદિ કે નિમિત્ત શસ્ત્ર-ષટ્કાયસમારંભરૂપ સાવચ વ્યાપારોં એવં ભોજનાદિ સાધનોં કે આરમ્ભોં કો કિયા કરતે હૈં, યહી વાત સૂત્રકાર કહતે હૈં-“જમિણં” ઇત્યાદિ ।

ગૃહસ્થ પોતાના પરિવારના પોષણ માટે અશનાદિક પ્રતિદિન તૈયાર કરે છે. સંયમી મુનિ સંયમજીવનની રક્ષા માટે પોતાની આવશ્યકતાનુસાર ગૃહસ્થને ત્યાંથી આહાર આદિ લાવીને સંયમયાત્રાનો નિવાહ કરે છે.

આ ઠેકાણે “એયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ” એ અનન્તરસૂત્ર સાથે સંબંધ છે. ત્યાં ‘નિરચિતાર ચારિત્રનું પાલન લોકનિશ્રાથી થાય છે’ એમ કહેલ છે. તેમાં પણ સંયમી મુનિએ આહારની શુદ્ધિનો સારી રીતે ધ્યાન રાખવો જોઈએ. એ વાત આગળ ઉપર પ્રગટ કરવામાં આવશે.

ગૃહસ્થ પોતાના પુત્ર પુત્રી આદિ નિમિત્તે શસ્ત્ર-ષટ્કાય સમારંભરૂપ સાવચ વ્યાપારો અને ભોજનાદિ સાધનોનો આરંભ કર્યા કરે છે તેજ વાત સૂત્રકાર કહે છે-“જમિણં” ઇત્યાદિ.

छाया—यदिदं विरूपरूपैः शस्त्रैर्लोकाय कर्मसमारम्भाः क्रियन्ते, तद्यथा—  
आत्मने तस्य पुत्रेभ्यो दुहितृभ्यः स्नुषाभ्यो ज्ञातिभ्यो धात्रीभ्यो राजभ्यो दासेभ्यो  
दासीभ्यः कर्मकरेभ्यः कर्मकरीभ्य आदेशाय पृथक्प्रहेणकाय श्यामाशाय प्रातराशाय  
सन्निधिसंनिचयं क्रियते, इहैकेषां मानवानां भोजनाय ॥ सू० १ ॥

टीका—‘यदिदं’—मित्यादि । यद् इदम्=सुखदुःखप्राप्तिपरिहाररूपं प्रयोजन-  
मुद्दिश्य विरूपरूपैः=बहुप्रकारैः शस्त्रैः=षट्कायसमारम्भरूपैः लोकाय=असंयतलोकाय-  
स्वशरीरपुत्रकलत्रादिरूपाय कर्मसमारम्भाः=षट्कायोपमर्दनरूपाः पचनपाचनादिसाव-  
द्यव्यापाराः क्रियन्ते, यद्वा कर्मणोऽष्टप्रकारकस्य समारम्भाः=उपार्जनोपायाः क्रियन्ते ।

सुखप्राप्ति और दुःखपरिहार के प्रयोजन से गृहस्थीजन जपने शरीर  
पुत्रकलत्रारूप लोक के लिये अनेक प्रकार के षट्कायसमारंभरूप पचन-  
पाचनादि सावद्य व्यापार करते हैं, उनका दिग्दर्शन कराते हुए सूत्र-  
कार कहते हैं—

गृहस्थ जीवन भोजन-कृषि-वाणिज्य आदि सावद्य व्यापार के बिना  
चलता नहीं है । इसमें इस तरह के अनेक प्रकार का आरम्भ जीवों को  
करना ही पड़ता है । जहां आरंभ-समारंभ है वहां जीवों की हिंसा  
अवश्यंभावी है । हिंसा से आस्रव होता है, और इससे जीवों का संसार  
बंधन से छुटकारा होना बड़ा कठिन होता है । इसीलिये आत्मा को  
सावद्यनिवृत्तिरूप चारित्र आराधन करने की आवश्यकता है ।

गृहस्थ लोक अपने लिये तथा पुत्रों के लिये पुत्रियों के लिये पुत्र-  
वधुओं के लिये, जाति-भाईयों, सगे संबंधियों एवं कुटुम्बियों के लिये,

सुखप्राप्ति અને દુઃખપરિહારના પ્રયોજનથી ગૃહસ્થી જન પોતાનું શરીર  
પુત્ર કલત્રાદિરૂપ લોક માટે અનેક પ્રકારના ષટ્કાયસમારંભરૂપ પચનપાચનાદિ  
સાવધ વ્યાપાર કરે છે તેનું દિગ્દર્શન કરાવીને સૂત્રકાર કહે છે—

ગૃહસ્થ જીવન ભોજન-કૃષિ-વાણિજ્ય આદિ સાવધ વ્યાપાર વિના ચાલતું  
જ નથી. તેમાં આવા પ્રકારનાં અનેક પ્રકારે આરંભ જીવોને કરવાં જ પડે છે.  
જ્યાં આરંભ-સમારંભ છે ત્યાં જીવોની હિંસા અવશ્યંભાવી છે. હિંસાથી આસ્રવ  
થાય છે, અને તેનાથી જીવોનો સંસારબંધનથી છુટકારો થવો ઘણું કઠિન થઈ પડે  
છે, માટે આત્માને સાવધનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરવાની આવશ્યકતા છે.

ગૃહસ્થલોક પોતાના માટે તથા પુત્રો માટે, પુત્રિયો માટે, પુત્રવધુ માટે,  
જાતિભાઈઓ, સગાં-સંબંધિઓ અને કુટુંબિઓ માટે, માતા-પિતા, સાસુ-સસરા



અથવા 'લોગસ્સે'—તિ તૃતીયાર્થે ષષ્ઠી, લોકેન કર્મસમારમ્ભાઃ ક્રિયન્તે इति ।  
 અત્રેદં તત્ત્વમ્, 'તં જહા' इति મૂળપાઠેન લોકાયેતિ ચતુર્થ્યેવ સાધીયસી-  
 યદર્થં સમારમ્ભસ્તં પૂર્વં સામાન્યતો લોકપદેનોપદર્શ્ય વિશેષતો દર્શયિતું 'તં જહા'  
 इत्यस्य प्रतिपादनम् ।

यदि च तृतीयार्थेऽपि षष्ठी, साऽपि सामान्यतः समारम्भा लोकेन क्रियन्त इत्युपदर्श्य किमर्थमिति जिज्ञासायां 'तंजहा' इत्यपि कथञ्चित्समाधानं भवितुमर्हति ।

यदर्थं पाककृषિवाणिज्यादिसावद्यव्यापारमारभन्ते तान् दर्शयति—'तद्यथેતિ' તસ્ય સમારમ્ભશીલસ્ય આત્મને=સ્વશરીરાર્થમ્, આત્મશબ્દોઽત્ર શરીરવાચકઃ, સ્વાર્થં સ્વયમેવ સમારમત્ इत्यर्थः ।

માતા-પિતા સાસુ-સસુર આદિ કે લિયે, સ્વજનોં કે લિયે, ધાયમાતા કે લિયે, રાજા કે લિયે દાસી-દાસ નૌકર ચાકર ઔર પાહુનોં કે લિયે, પૃથક્-પ્રહેળક કે લિયે, અર્થાત્ કન્યાવિવાહ કે ઉત્સવ કા ભોજન, પ્રસ્થાન કે સમય રાસ્તે મેં સુબહ-શામ યાને કે લિયે સાથ મેં દિયે જાને વાલા ભોજન, તથા કાંસા પરોસા આદિ પૃથક્પ્રહેળક કહલાતા હૈ, ઉસકે લિયે પચન-પાચનાદિરૂપ અનેક સાવધ વ્યાપાર કરતે હૈં ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર યહાં પર યહ વાત સ્પષ્ટ કર રહે હૈં કિ—ગૃહસ્થ લોગ અપને તથા અપને સગે સંબંધિયોં એવં બાલ-બચોં વગેરહ કે લિયે ભોજન વગેરહ આરમ્ભોં કો નિતપ્રતિ કરતે રહતે હૈં । સર્વવિરતિ મુનિ કે શરીર કી યાત્રા કા નિર્વાહ ઉનકે યહાં સે માત્રાનુસાર પ્રાપ્ત ભોજન સે અચ્છી તરહ હો સકતા હૈ, ઇસલિયે મુનિ કો સાવધ વ્યાપાર કરને કી આવશ્ય-

આદિ માટે, સ્વજનો માટે, ધાયમાતા માટે, રાજા માટે, દાસી-દાસ નૌકર-ચાકર માટે, મહેમાનો માટે, પૃથક્પ્રહેળકને માટે, અર્થાત્ કન્યાવિવાહના ઉત્સવનું ભોજન, મુસાફરી સમય રસ્તામાં સવારસાંજ ખાવા માટે સાથે આપવામાં આવતું ભોજન, અને કાંસા પિરસણું આદિ પૃથક્પ્રહેળક કહેવાય છે, તેને માટે પચન-પાચનાદિરૂપ અનેક સાવધ વ્યાપાર કરે છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ ઠેકાણે એ વાત સ્પષ્ટ કરે છે કે—ગૃહસ્થ લોક પોતાના તથા પોતાના સગાસંબંધિયો અને છોકરાં-છૈયાં વિગેરે માટે ભોજન વિગેરે આરભો હરહમેશ કરતાં જ રહે છે. સર્વવિરતિ મુનિના શરીરની યાત્રાનો નિર્વાહ તેને ત્યાંથી માત્રાનુસાર પ્રાપ્ત ભોજનથી સારી રીતે થઈ શકે છે, માટે મુનિને સાવધ વ્યાપાર કરવાની આવશ્યકતા જ નથી, સાવધ વ્યાપારથી હિંસા થવાના



किञ्च-पुत्रेभ्यः, दुहितृभ्यः=पुत्रीभ्यः, स्नुषाभ्यः=पुत्रवधूभ्यः, ज्ञातिभ्यः=पूर्वपश्चात्सम्बन्धिभ्यः, माता-पितृ-श्वश्रू-श्वशुरादिभ्य इत्यर्थः, स्वजनेभ्यः, धात्रीभ्यः=उपमातृभ्यः, राजभ्यः, दासेभ्यः=भृत्येभ्यः, दासीभ्यः, कर्मकरेभ्यः=परिचारकेभ्यः, कर्मकरीभ्यः=परिचारिकाभ्यः, आदिश्यते=आज्ञाप्यते परिजनः सत्कारार्थं यस्मिन्नागते स आदेशः=प्रावृण्णकादिस्तस्मै, पृथक्प्रहेणकाय ' पृथक्=विभिन्नरूपेण प्रहेणकः=कस्मिंश्चिदुत्सवे भोजनोपायनं लोकेभ्यो दीयमानं पृथक्प्रहेणक इत्युच्यते ।

कता ही नहीं है। सावद्य व्यापारों से हिंसा होने के कारण उस अवस्था में सर्वविरति संयम की आराधना हो ही नहीं सकती, इसलिये मुनि का संयम निर्दोष रीति से पल सके इस आशय से यह अवस्था परम्परा से की गई है।

मूल सूत्र में—“लोगस्स कम्मसमारंभा कज्जंति” यह पाठ है, इसकी संस्कृत छाया—“लोकाय कर्मसमारंभाः क्रियन्ते” होती है। जिसका अर्थ लोकों-असंयतों के लिये षट्काय के उपमर्दनरूप सावद्य व्यापारों का आरम्भ किया जाता है। अथवा लोक के द्वारा कर्मसमारम्भ किये जाते हैं, यह अर्थ भी होता है। पहिले सूत्रकार सावद्यव्यापाररूप कर्मसमारम्भ का निमित्त कारण सामान्यतया असंयत लोकों को बतलाते हुए इसी बात को विशेष रीति से खुलाशा करने के अभिप्राय से “तं जहा” इस पद से व्यक्त करते हैं। तथा “लोकों के द्वारा जो सावद्य-व्यापाररूप कर्मसमारम्भ किया जाता है वह किस लिये किया जाता है”

कारण आ अवस्थाभां सर्वविरति संयमनी आराधना भनी न शकती नथी. भाटे मुनि संयमने निर्दोष रीतिथी पाणी शके आ आशयथी आ अवस्था परंपराथी करवाभां आवेल छे.

भूणसूत्रभां—“लोगस्स कम्मसमारंभा कज्जंति” आ पाठ छे. तेनी संस्कृत छाया—“लोकाय कर्मसमारंभाः क्रियन्ते” छे. जेनो अर्थ बोडो—असंयतोने भाटे षट्कायना उपमर्दनरूप सावद्य व्यापारोने आरंभ करे जय छे, अथवा बोडद्वारा कर्मसमारंभ कराय छे. आ पणु अर्थ थाय छे. पडेलो सूत्रकार सावद्यव्यापाररूप कर्मसमारंभना निमित्त कारण सामान्यतया असंयत लोकोंने भतावीने ते बातने विशेष रीतिथी खुलासो करवाना अभिप्रायथी “तंजहा” आ पहथी स्पष्ट करे छे. तथा “लोको द्वारा जे सावद्यव्यापाररूप कर्म समारंभ

યદ્વા કન્યાપરિણયોત્સવે કન્યાપિતૃગૃહે વિભિન્નરૂપેણ યદ્ભોજ્યં સ પૃથક્પ્રહેણકઃ ।  
અથવા પ્રસ્થાનસમયે જામાતૃભ્યો વિભિન્નરૂપેણ દીયમાનં પ્રાથેયં પૃથક્પ્રહેણકપદેન  
કથ્યતે, તસ્મૈ । ‘શ્યામાશાય’ શ્યામાયાં રાગ્યામ્, અશનમાશઃ=શ્યામાશસ્તસ્મૈ ।  
‘પ્રાતરાશાય’ પ્રાતઃ=પ્રાતઃકાલે આશો=ભોજનં પ્રાતરાશસ્તસ્મૈ કર્મસમારમ્ભાઃ  
ક્રિયન્તે । તમેવ વિશિનષ્ટિ-‘સન્નિધિસન્નિચયમ્’ इत्यादि, સન્નિધાનં સન્નિધિઃ=અલ્પ-  
કાલસ્થાયિદ્રવ્યાણાં સંગ્રહકરણમ્, દધિ-ભક્ત-કૃશર-વ્યજ્ઞનાદીનાં સ્થાપનમ્ ।

અપિ ચ-‘સન્નિચયઃ’ સમ્યગ્ નિચયનં=સંગ્રહણં સન્નિચયઃ=ચિરસ્થાયિનાં ઘૃત-  
તૈલ-ગુડાદિદ્રવ્યાણાં સદ્ગ્રહઃ, સન્નિધિશ્ચ સન્નિચયશ્ચ સન્નિધિ-સન્નિચયમ્, તત્  
ક્રિયતે । સૂત્રે પુંસ્વમાર્ષત્વાત્ । યદ્વા-સન્નિધેઃ=અશનવશનાદેઃ સન્નિચયઃ=સદ્ગ્રહઃ  
ક્રિયતે । કિમર્થં સદ્ગ્રહઃ ક્રિયતે? इत्याह-‘इहे’-ति । इह=संसारे एकेषां  
=कृतिपयानां मानवानां=सम्बन्धिजनानां भोजनाय=भविष्यदुपभोगाय, विरूपरूपैः  
शैलैः कर्मसमारम्भाः क्रियन्त इति ।

લોકાઃ પુત્રાદ્યર્થે કર્માણિ સમારમન્ત એવ, તેભ્યઃ સંયમયાત્રાં નિર્વોદું માત્ર-  
યાઽન્નાદિકમાદાય મુનિના વર્તિતવ્યમિતિ સૂત્રતાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

इस प्रकार की जिज्ञासा होने पर उसका समाधान सूत्रकार ने “तं जहा” पद से किया है ।

“સન્નિધિસન્નિચય” યહાં દો પદ હૈં-૧ ‘સન્નિધિ’ ઓર દૂસરા ‘૨ સન્નિચય’ । દહી, ખાત, કૃશર-સ્વીચડી, વ્યજ્ઞન-શાક આદિ ‘સન્નિધિ’ પદસે ગ્રહણ કિયે ગયે હૈં । ઘૃત, તૈલ, ગુડ આદિ પદાર્થ ‘સન્નિચય’ પદ સે ગૃહીત હુએ હૈં । અથવા સન્નિધિ-અશન વશન આદિ કા સન્નિચય-સંગ્રહ કરના વહ સન્નિધિસન્નિચય હૈ । કિતનેક ગૃહસ્થ અપને વ સંબંધિજનોં કે નિમિત્ત ભવિષ્યત્કાલ મેં ઉપભોગ કે અભિપ્રાય સે ધાન્યાદિ અનેક પદાર્થોં કા સંગ્રહ કર લિયા કરતે હૈં । ઇસ સંગ્રહ મેં

થાય છે” તે શા માટે કરવામાં આવે છે, આ પ્રકારની જિજ્ઞાસા થવાથી તેનું સમાધાન સૂત્રકારે “તંજહા” પદથી કર્યું છે.

“સન્નિધિસન્નિચય” આંહી બે પદ છે. ૧ ‘સન્નિધિ’ અને બીજું ૨ ‘સન્નિચય’ ઢહી, ખાત, ખીચડી, શાક આદિ ‘સન્નિધિ’ પદથી લેવામાં આવેલ છે. ઘી, તેલ, ગોળ આદિ પદાર્થ ‘સન્નિચય’ પદથી લેવામાં આવેલ છે. અથવા ‘સન્નિધિ’ અશન વસન આદિનો ‘સન્નિચય’ સંગ્રહ કરવો તે સન્નિધિસન્નિચય છે. કેટલાક ગૃહસ્થ પોતાને અને સંબંધીજનોને નિમિત્તે ભવિષ્ય કાળમાં ઉપભોગના અભિપ્રાયથી ધાન્યાદિ અનેક પદાર્થોનો સંગ્રહ કરે છે. આ સંગ્રહમાં



ભવિષ્યદુપભોગાય સન્નિધિ-સન્નિચયપ્રવૃત્તે લોકે સંયમિના કિં વિધેયમિત્યાહ-  
'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સમુદ્વિષ્ટ અણગારે આરિષ આરિયપત્ને આરિયદંસી  
અયં સંધિ-ત્તિ અદક્ષૂ , સે નાઈષ નાઈયાવણ ન સમણુજાણણ  
સઠ્ઠામગંધં પરિજ્ઞાય નિરામગંધો પરિવ્વણ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—સમુત્થિતોડનગાર આર્ય આર્યપત્ન આર્યદર્શી અયં સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્,  
સ નાદદીત નાદાપયેત્ ન સમણુજાનીયાત્, સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરામગન્ધઃ  
પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—'સમુત્થિત' ઇત્યાદિ । સમુત્થિતઃ=સમ્=સમીચીનં ચારિત્રાચરણે  
ઉત્થિતઃ=સમુત્થિતઃ-સંયમારાધનસમુદ્યત ઇત્યર્થઃ, અનગારઃ=અવિદ્યમાનમગારં  
ગૃહં યસ્ય સોડનગારો દ્રવ્યભાવગૃહરહિતઃ, આર્યઃ=આરાદ્ દૂરં ગતો હેયધર્મેભ્યો યઃ  
અનેક પ્રકાર સે સાવધ વ્યાપાર મેં પ્રવૃત્તિ હોને કી વજહ સે ત્રસ એવં  
સ્થાવર જીવોં કી હિંસા હોતી હી હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય કે લિયે અપને-અપને યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન-  
સમૂહ કે સંગ્રહ કરને મેં તત્પર રહે હુએ જનસમુદાય કે વીચ મેં સંયમી  
મુનિ કો કયા કરના ચાહિયે? હિસકે પ્રત્યુત્તર મેં સૂત્રકાર કહતે હૈ—  
'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ ।

જો નિર્મલ ચારિત્ર કે આચરણ મેં ઉત્થિત હૈ, અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્ર  
કે આરાધન કરને મેં જો અચ્છી તરહ સે પ્રયત્નશીલ હૈ ઉસકા નામ  
સમુત્થિત હૈ । જિસકે ઘર નહીં હૈ ઉસકા નામ અનગાર હૈ । અગાર કે દો

અનેક પ્રકારથી સાવધ વ્યાપારમાં પ્રવૃત્તિ થાય છે જેથી તેમાં ત્રસ અને સ્થાવર  
જીવોની હિંસા થાય છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય માટે પોતપોતાના યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન સમૂહનો સંગ્રહ  
કરવામાં તત્પર રહેલા જનસમુદાયની વચમાં સંયમી મુનિએ શું કરવું જોઈએ,  
તેના પ્રત્યુત્તરમાં સૂત્રકાર કહે છે—'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ.

જે નિર્મળ ચારિત્રના આચરણમાં ઉત્થિત છે અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્રના  
આરાધન કરવામાં જે સારી રીતે પ્રયત્નશીલ છે તેનું નામ સમુત્થિત છે. જેને અગાર-  
ઘર નથી તેનું નામ અનગાર છે. અગારના બે પ્રકાર છે. એક દ્રવ્ય-અગાર અને બીજો



સ આર્યઃ=શ્રુતચારિત્રરૂપધર્મારાધનયોગ્યઃ । યદ્વા-વિષય-કષાય-કાષ્ટચ્છેદ-  
કત્વેનાઽઽરાસાદૃશ્યાદારા=રત્નત્રયં, તાં યાતિ=પ્રાપ્નોતિ યઃ સ આર્યઃ=સર્વથા સકલ-  
કલ્મષરાશિકલુષિતવૃત્તિરહિત इत्यર્થઃ । ‘આર્યપ્રજ્ઞઃ’ આર્યા=શ્રેષ્ઠા પ્રજ્ઞા=મતિ-  
ર્યસ્ય સ આર્યપ્રજ્ઞઃ હેયોપાદેયવિવેકવાન્ । એવમાર્યદર્શી=આર્ય-યુક્તિયુક્તં દ્રષ્ટું શીલં  
યસ્યેત્યાર્યદર્શી=આરમ્ભજન્યકટુવિપાકદર્શી । ય એવમ્ભૂતઃ પુનઃ ‘અયં સન્ધિ’-રિતિ  
અયં=પ્રત્યક્ષોપલભ્યમાનઃ સન્ધિઃ-પારગમનાધઃપતનયોર્મધ્યે સન્ધિરિવ સન્ધિઃ-  
આર્યક્ષેત્ર-સુકુલોત્પત્તી-ન્દ્રિયનિર્વૃત્તિ-શ્રદ્ધા-સંવેગ-રત્નત્રયપ્રાપ્તિલક્ષણં સન્ધિસ્થાનમ્,  
इति=इत्येवम् અદ્રાક્ષીત્=અજ્ઞાસીત્ । યદ્વા-અયં પ્રત્યક્ષનિર્દિષ્ટઃ સન્ધિઃ-પ્રતિલેખન-

પ્રકાર હૈં । એક દ્રવ્ય-અગાર ઓર દૂસરા ભાવ-અગાર । અનગાર ઇન દોનોં  
પ્રકાર કે અગારોં સે રહિત હોતા હૈ । જો હેય ધર્મોં સે સદા દૂર રહતા  
હૈ ઉસકા નામ આર્ય હૈ । આર્ય-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કે આરાધન કરને  
યોગ્ય હોતા હૈ, અથવા વિષયકષાયરૂપ કાષ્ટ કા છેદક હોને સે આરા-  
કરોંત કે સદૃશ રત્નત્રયરૂપ ધર્મ કો જો પ્રાપ્ત કરતા હૈ વહ આર્ય હૈ, અર્થાત્  
જિસકી સકલ કલ્મષ-પાપરાશિ સે કલુષિત પરિણતિ નહીં હૈ ઉસકા  
નામ આર્ય હૈ । ઉત્તમ જિસકી મતિ હૈ, હેય ઓર ઉપાદેય કે વિવેક સે  
જિસકા અન્તઃકરણ યુક્ત હૈ ઉસકા નામ આર્યપ્રજ્ઞ હૈ । યુક્તિયુક્ત દેખને  
કા જિસકા સ્વભાવ હૈ ‘આરમ્ભજન્ય પાપોં કા વિપાક ભયંકર કષ્ટપ્રદ  
હોતા હૈ’ ઇસ વાત કો ભલી-ભાંતિ સે જાનતા સમજતા હૈ વહ આર્યદર્શી  
હૈ । સંસાર સે પાર હોના એવં ઉસમેં અધઃપતન હોના, ઇન દોનોં કે બીચ  
મેં સન્ધિ કે સમાન આર્યક્ષેત્ર, સુકુલ મેં જન્મ, ઇન્દ્રિયાદિકોં કી પૂર્ણતા  
શ્રદ્ધા, સંવેગ ઓર રત્નત્રય કી પ્રાપ્તિરૂપ સંધિસ્થાન હૈ । જો પ્રત્યક્ષ

ભાવ-અગાર. અનગાર આ બન્ને પ્રકારના અગારોથી રહિત હોય છે. જે હેય  
ધર્મોથી સદા દૂર રહે છે તેનું નામ આર્ય છે. આર્ય-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું  
આરાધન કરવા યોગ્ય હોય છે. અથવા વિષયકષાયરૂપ કાષ્ટના છેદક હોવાથી આરા-  
કરવતના સદૃશ રત્નત્રયરૂપ ધર્મને જે પ્રાપ્ત કરે છે તે આર્ય છે. અર્થાત્ જેની  
સકલકલ્મષ-પાપરાશિ થી કલુષિત પરિણતિ નથી તેનું નામ આર્ય છે. ઉત્તમ  
જેની મતિ છે. હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી જેનું અન્તઃકરણ યુક્ત છે તેનું નામ  
આર્યપ્રજ્ઞ છે. યુક્તિયુક્ત દેખવું એવો જેનો સ્વભાવ છે ‘આરમ્ભજન્ય પાપોનો  
વિપાક ભયંકર કષ્ટપ્રદ થાય છે.’ આ વાતને જે ભલીભાંતિથી બાંધે છે, તેમજ  
સમજે છે તે આર્યદર્શી છે, સંસારથી પાર થવું અને તેમાં અધઃપતન થવું, એ  
બન્નેની વચ્ચેના સન્ધિસમાન આર્યક્ષેત્ર, સારા કુળમાં જન્મ, ઇન્દ્રિયોની પૂર્ણતા,  
શ્રદ્ધા, સંવેગ અને રત્નત્રયની પ્રાપ્તિરૂપ સંધિસ્થાન છે. જે આ પ્રત્યક્ષ

પ્રતિક્રમણાદિક્રિયાયા યઃ સમુચિતઃ કાલ ઇતિ યોઽજ્ઞાસીદિત્યર્થઃ । એવંભૂતઃ સઃ અનગારો નાદદીત=અકલ્પનીયમાહારાદિકં ન ગૃહ્ણીયાત્ , શાસ્ત્રે તસ્ય પ્રતિષિદ્ધત્વાત્, ષટ્કીવનિકાયારમ્ભદોષસ્ય મુનિના પૂર્વે પરિત્યક્તત્વાચ્ચ, નાઽઽદાપયેત્=નાન્યં ગ્રાહયેત્ , ન સમનુજાનીયાત્=નાપીતરં સાધું ગૃહ્ણન્તમનુમોદયેત્ । યદ્વા-નાઽઘાન્નાઽઽદયેદિતિચ્છાયા, સ મુનિરિજ્ઞાલધૂમાદિપશ્ચવિધદોષદૂષિતમાહારં નાઘાત્=નાશ્નીયાત્ , નાદયેત્=નાન્યં ભોજયેત્ અદન્તમન્યં ન સમનુજાનીયાત્ ।

અપિ ચ કિં કુર્યાદિત્યાહ-‘સર્વામગન્ધ’-મિત્યાદિ । સર્વામગન્ધમ્, આમં ચ ગન્ધશ્ચાનયોઃ સમાહારદ્વન્દ્વે આમગન્ધં, સર્વં ચ તદામગન્ધમિતિ સર્વામગન્ધમ્=અશુ-પ્રતિભાસિત વાત કો અચ્છી તરહ્ સે જાનતા હૈ, અથવા પ્રતિલેખન, પ્રતિક્રમણાદિ ક્રિયાઓં કે યુચિત અવસર કા જો જ્ઞાતા હૈ, યહ વાત “અયં સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્” ઇસ પદ સે પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ । ઇસ પ્રકાર કા જો અનગાર હૈ વહ અકલ્પનીય આહારાદિક કો ન સ્વયં ગ્રહણ કરતા હૈ, ક્યોંકિ સદોષ આહાર કા ગ્રહણ કરના અનગાર કે લિયે શાસ્ત્ર મેં નિષિદ્ધ બતલાયા ગયા હૈ, ઇસકા કારણ-ષટ્કાય કે જીવોં કા આરમ્ભ અનગાર ને પહિલે સે હી છોડ દિયા હૈ, વહ સદોષ આહાર સ્વયં ન ગ્રહણ કરતા હૈ, ન દૂસરોં સે ગ્રહણ કરવાતા હૈ, ઓર ન ઇસ પ્રકાર કે આહાર કો ગ્રહણ કરને વાલે અન્ય કિસી કી અનુમોદના ખી કરતા હૈ ।

અથવા “સે નાઈપ નાઈયાવપ” ઇન પદોં કી સંસ્કૃત છાયા “સ ન અઘાત્ ન આદયેત્” યહ ખી હૈ, ઇસકા અર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ-ઈજ્ઞાલ ધૂમ આદિ પાંચ પ્રકારં કે દોષોં સે દૂષિત આહાર કો ન સ્વયં કરે ઓર ન

પ્રતિભાસિત વાતને સારી રીતે જાણે છે, અથવા પ્રતિલેખન, પ્રતિક્રમણાદિ ક્રિયાઓના ઉચિત અવસરનો જો જ્ઞાતા છે, એ વાત “અયં સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્” આ પદથી પ્રદર્શિત કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારના જો અણુગાર છે તે અકલ્પનીય આહારાદિકને સ્વયં ગ્રહણ કરતા નથી, કારણ કે સદોષ આહારનું ગ્રહણ કરવું અણુગાર માટે શાસ્ત્રમાં નિષિદ્ધ બતાવેલ છે. તેનું કારણ ષટ્કાયના જીવોના આરંભ અણુગારે પહેલાંથી જ છોડી આવેલ છે. તે સદોષ આહાર પોતે ગ્રહણ નથી કરતા. ખીજાથી ગ્રહણ નથી કરાવતા, અને આ પ્રકારના આહાર ગ્રહણ કરવાવાળા અન્ય કોઈની અનુમોદના પણ નથી કરતા.

અથવા “સે નાઈપ નાઈયાવપ” આ પદોની સંસ્કૃત છાયા “સ ન અઘાત્ ન આદયેત્” એ પણ છે. એનો અર્થ આ પ્રકારે છે. ઇંજાલ, ધૂમ આદિ પાંચ પ્રકારના દોષોથી દૂષિત આહારને ન સ્વયં કરે અને ખીજાથી કરાવે નહિ, તથા



દ્વાહારં પરિજ્ઞાય=જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા નિરામગન્ધઃ, આમગન્ધાદશુદ્ધાહારાન્નિર્ગતો  
યઃ સ નિરામગન્ધઃ=ઉદ્ગમોત્પાદનૈષણાગતદ્વિચત્વારિંશદોષદૂષિતાહારાગ્રાહકઃ સન્  
'પરિવ્રજેત્'—પરિ=સમન્તાદ્ વ્રજેત્=વિહરેત્ રત્નત્રયસમારાધનતત્પરો ભવેદિતિ  
ભાવઃ । તીર્થંકરનિર્દિષ્ટે સમુચિતાવસરે પ્રતિલેખન-પ્રતિક્રમણાદિક્રિયાં કુર્વન્ન-  
નગાર આર્યદેશોત્તમકુલાદિકં મોક્ષકારણં પ્રાપ્ય સંસારપારાવારમુત્તીર્ય ચ સન્ધિ-  
સ્થાનીયે તત્તીરે વર્તમાનો નિઃશિલકર્મક્ષયં કૃત્વા તતો નિષ્ક્રમિતુકામોઽસ્મીત્યેવં  
પરિજ્ઞાવાન્ 'અધઃકર્માદિદોષદૂષિતાહારો વિષમક્ષણમિવાત્મગુણઘાતકઃ' इति  
સમ્યગ્લોચ્ય તાદૃશમાહારં ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પરિત્યજ્ય પરિશુદ્ધમાહારાદિકં  
મિક્ષમાણો વિહરેદિતિ સમુદિતાર્થઃ ॥ સૂ. ૨ ॥

દૂસરો કો કરાવે, તથા કરને વાલે કિસી અન્ય કી અનુમોદના મી ન  
કરે । “સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરામગન્ધઃ પરિવ્રજેત્” ઇસકા અર્થ હૈ  
અશુદ્ધઆહાર, અર્થાત્ જ્ઞ-પરિજ્ઞાદ્વારા ઇસ પ્રકાર કે આહાર કો અશુદ્ધ  
જ્ઞાનકર ‘નિરામગન્ધઃ’—અશુદ્ધ આહાર સે મિત્ર શુદ્ધ આહાર કો કિ જો  
ઉદ્ગમ (૧૬) ઉત્પાદન (૧૬) ઇષણા (૧૦) સંબંધી બયાલીસ (૪૨) દોષો  
સે રહિત હોતા હૈ ગ્રહણ કરે । યદિ ઇસ પ્રકાર કે આહાર કા લાભ સંયમી  
કો નહીં હોતા હૈ તો વહ ઇસ દૂષિત આહાર કો છોડકર અપને રત્નત્રય  
કી આરાધના મેં તત્પર રહે । તીર્થંકર પ્રભુને પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓં કા  
જો સમય નિશ્ચિત કર દિયા હૈ ઇસ સમય મેં ઇન ૨ ક્રિયાઓં કો કરને  
વાલા, તથા આર્ય ક્ષેત્ર કા લાભ, ઉત્તમ કુલ મેં જન્મ, રત્નત્રય કી પ્રાપ્તિ  
આદિ મોક્ષ કે કારણભૂત સંધિસ્થાનોં કો જિસને પાયા હૈ ઇસા અનગાર

કરવાવાળા બીજા કોઈની અનુમોદના પણ ન કરે. “સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરા-  
મગન્ધઃ પરિવ્રજેત્” આનો અર્થ છે અશુદ્ધ આહાર અર્થાત્ જ્ઞ-પરિજ્ઞાદ્વારા  
આ પ્રકારના આહારને અશુદ્ધ બાણીને નિરામગન્ધઃ અશુદ્ધ આહારથી ભિન્ન  
શુદ્ધ આહારને કે જે ઉદ્ગમ (૧૬) ઉત્પાદન (૧૬) ઇષણા (૧૦) સંબંધી ૪૨  
બેતાલીસ દોષોથી રહિત હોય છે તેને ગ્રહણ કરે છે. કદાચ આ પ્રકારના આહાર-  
નો લાભ સંયમીને ન થાય તો તે આવા દૂષિત આહારને છોડીને પોતાના  
રત્નત્રયની આરાધનામાં તત્પર રહે.

તીર્થંકર પ્રભુએ પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓનો જે સમય નિશ્ચિત કરી આપ્યો  
છે તે સમયમાં તે તે ક્રિયાઓને કરવાવાળા, તથા આર્યક્ષેત્રનો લાભ, ઉત્તમ  
કુળમાં જન્મ રત્નત્રયની પ્રાપ્તિ આદિ મોક્ષના કારણભૂત સંધિસ્થાનોને જેણે



निरामगन्ध इति निषेधे आमपदेन हननकोटित्रिकं, गन्धपदेन पचनकोटि-  
त्रिकं च प्रतिषिध्य क्रयणकोटित्रिकं निषेधयितुमुपदर्शयति—‘आदिस्समाणे’ इत्यादि।

मूलम्—आदिस्समाणे कयविक्रयसे न किणे न किणावए  
किणंतं न समणुजाणए ॥ सू० ३ ॥

छाया—आदिश्यमानः क्रयविक्रययोः स न क्रीणीयात्, न क्रापयेत्, क्रीणन्तं  
न समनुजानीयात् ॥ सू० ३ ॥

टीका—‘आदिश्यमान’ इति। क्रयविक्रययोः, क्रयश्च विक्रयश्चानयोरितरेतर-  
योगद्वन्द्वे क्रयविक्रयौ, तयोः—आदिश्यमानः=व्यपदेशमलभमानः—‘अयं क्रयविक्रय-  
कर्ते’—ति व्यपदेशभागे न भवतीत्यर्थः ॥

‘सकल कर्म को नाश कर मैं इस संसारसमुद्र से पार होने की दृढ़  
भावना वाला हूँ’ इस प्रकार के संसारसमुद्र के पार जाने के अभि-  
प्राय से जो समन्वित हो रहा है वह अनगार आधाकर्मादि दोष से  
दूषित आहार को विषभक्षण की तरह आत्मगुण का घातक जानकर  
तीन करण और तीन योग से उसका परित्याग ही कर देवे, और शुद्ध  
निर्दोष आहार की प्राप्ति से अपने शरीर की यात्रा का निर्वाह करता  
हुआ संयममार्ग में विचरे ॥ सू० २ ॥

‘निरामगन्ध’ इस निषेध में ‘आम’ पद से हननकोटित्रिक तथा  
‘गन्ध’ पद से पचनकोटित्रिक का प्रतिषेध करके क्रयणकोटित्रिक का  
निषेध करने के लिये सूत्रकार कहते हैं—‘आदिस्समाणे’ इत्यादि।

क्रय शब्द का अर्थ खरीदना और विक्रय शब्द का अर्थ बेचना

મેળવ્યા છે એવા અણુગાર “સકલ કર્મનો નાશ કરી હું આ સંસારસમુદ્રથી  
પાર થવાની દૃઢ ભાવનાવાળો છું” આ પ્રકારે જે સંસાર સમુદ્રથી પાર જવાના  
અભિપ્રાયથી જે સમન્વિત થયેલ છે તે અણુગાર આધાકર્માદિ દોષથી દૂષિત  
આહારને વિષભક્ષણની માફક આત્મગુણના ઘાતક બાણીને ત્રણ કરણ અને ત્રણ  
યોગથી તેનો પરિત્યાગ કરે, અને શુદ્ધ નિર્દોષ આહારની પ્રાપ્તિથી પોતાના શરીરની  
યાત્રાનો નિર્વાહ કરીને સંયમ માર્ગમાં વિચરે ॥ સૂ० ૨ ॥

નિરામગન્ધ આ નિષેધમાં આમ-પદથી હનનકોટિત્રિક તથા ગંધ-પદથી  
પચનકોટિ ત્રિકનો પ્રતિષેધ કરીને કયણકોટિત્રિકનો નિષેધ કરવાને માટે  
સૂત્રકાર કહે છે—‘અદિસ્સમાણે’ ઇત્યાદિ

કય શબ્દનો અર્થ ખરીદવું, અને વિક્રય શબ્દનો અર્થ વેચવું, જે કય

યદ્વા-‘અદૃશ્યમાનઃ’ ઇતિચ્છાયા, ક્રય-વિક્રયયોઃ અદૃશ્યમાનઃ=દ્રવ્યાદ્યભાવા-  
ત્ક્રયવિક્રયવ્યવહારેઽદૃશ્યમાનોઽકિશ્ચનઃ સઃ=અનગારઃ આહારાદિકં ન ક્રીणीયાત્  
નાન્યં ક્રાપયેત્, ક્રીણન્તમન્યં ન સમનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેત્ । एतेन हननादि-  
नवकोटिपरिशुद्धमाहारादिकं परिगृह्याङ्गारधूमादिदोषरहितं मुनिर्मुञ्जीतेति निगूढार्थः ।  
अत्र क्रयपदेनोद्गमदोषाणां ग्रहणं, तेन चोत्पादनैषणादोषाः संगृहीता इति सूत्र-  
तात्पर्यम् ॥ सू० ३ ॥

है । जो क्रय-विक्रयरूप व्यापार को करता है वह व्यवहार में बेचने-  
खरीदने वाला कहा जाता है । मुनि, जो सर्वसावद्य क्रियाओं के त्यागी हो  
चुके हैं वे, क्रय-विक्रय रूप सावद्य व्यापार को नहीं कर सकते हैं । इस  
लिये सूत्रकार यहां इस बात का प्रदर्शन करते हुए कहते हैं कि-अनगार  
शुद्ध आहार के न मिलने पर आहारादिक अन्य से न खरीदे, और मिले  
हुए को अन्य किसी को न बेचे । क्योंकि इस प्रकार के व्यवहार करने  
से उसमें क्रय विक्रय का दोष लागू होता है, जो सिद्धान्तदृष्टि से मुनि  
के आचार से सर्वथा निषिद्ध है । अथवा “अदिस्समाणे” इस पद की  
संस्कृत छाया “अदृश्यमानः” यह भी होती है । इसका भाव यह है  
कि-अनगार अपने पास किसी भी प्रकार का द्रव्यादिक तो रखते ही  
नहीं हैं, क्योंकि वे सकल परिग्रह के त्यागी होते हैं, सचित्त अचित्त  
आदि समस्त परिग्रह के छोड़ने से ही उनमें अपरिग्रहता आती है ।  
इसीको सूत्रकार यहां पर प्रकट करते हुए कहते हैं कि-जब मुनिके पास

વિક્રય રૂપ વ્યાપાર કરે છે તે વ્યવહારમાં વેચવાખરીદવાવાળા કહેવાય છે. મુનિ  
જે સર્વ સાવધ ક્રિયાઓના ત્યાગી બનેલ છે તે ક્રય-વિક્રયરૂપ સાવધ વ્યાપારને  
કરી શકતા નથી, માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે આ વાતનું પ્રદર્શન કરીને કહે છે કે-  
અણુગાર શુદ્ધ આહાર ન મળવાને કારણે આહારાદિક બીજાથી ખરીદાવી શકે  
નહિ, અને મળેલ હોય તે એનાથી બીજાને વેચી શકાય નહિ. કારણ કે આ  
પ્રકારનો વ્યવહાર કરવાથી તેમાં ક્રય-વિક્રયનો દોષ લાગુ પડે છે, જે સિદ્ધાન્ત-  
દૃષ્ટિથી મુનિના આચારથી સર્વથા નિષિદ્ધ છે. અથવા “અદિસ્સમાણે” આ  
પદની સંસ્કૃત છાયા “અદૃશ્યમાનઃ” એ પણ થાય છે. તેનો ભાવ એ છે  
કે-અણુગાર પોતાની પાસે કોઈપણ પ્રકારનું દ્રવ્યાદિક તો રાખતા જ નથી, કારણ  
કે તે સકળ પરિગ્રહના ત્યાગી હોય છે. સચિત્ત અચિત્ત આદિ સમસ્ત પરિગ્રહના  
છોડવાથી જ તેનામાં અપરિગ્રહતા આવે છે માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે પ્રગટ  
કરતાં કહે છે કે-જ્યારે તની પાસે લેણદેણનો વ્યવહાર કરવામાં સહાયક બાહ્ય



लेन-देन के व्यवहार करने में सहायक बाह्य द्रव्यादिक सामग्री नहीं है तो वह उस प्रकार के व्यवहार करने में सर्वथा अकिञ्चित्कर है। तब शुद्ध निर्दोष आहार के न मिलने पर वह उस प्रकार की आहारादिक सामग्री को न तो स्वयं खरीदता है, और न दूसरों से खरीद करवाता है, और खरीद करते हुए अन्य को न भला जानता है, अतः नवकोटि-विशुद्ध आहार की ही उसे गवेषणा करनी चाहिये, और उसके प्राप्त होने पर मात्रानुसार उसे ग्रहण कर अपने संयम की रक्षा करने में ही सावधान रहना चाहिये। इसी को प्रकट करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—

वह अनगार द्रव्यादिक के अभाव से क्रय विक्रय के व्यवहार में अकिञ्चन है, इसलिये आहारादिक को न स्वयं खरीदे और न दूसरों से उसे खरीदवावे, तथा इसे खरीदने वाले अन्य किसी की अनुमोदना भी न करे। इससे इस बात की पुष्टि की है कि—अनगार मन वचन काया से कृत, कारित एवं अनुमोदना द्वारा हननादि तीन, पचनादि तीन क्रयणादि तीन, एवं नवकोटि से विशुद्ध आहारादिक प्राप्त कर शरीर की पुष्टि के अभिप्राय से नहीं, किन्तु संयम की रक्षा के अभिप्राय से ही अंगारधूमादिदोषरहित हो उसका सेवन करे। सूत्र में कहे हुए क्रय विक्रय

द्रव्यादिक सामग्री नहीं तो ते अे प्रकारने व्यवहार करवाभां सर्वथा अकिञ्चित्कर छे, भाटे शुद्ध निर्दोष आहारना न भणवाथी ते अेवा प्रकारनी आहारादिक सामग्रीने पोते नथी भरीही शकता, अने भीलथी भरीहावी पणु शकता नथी, अने भरीह करवावाणा भीलने लखो पणु लणुता नथी, भाटे नवकोटिविशुद्ध आहारनी न तेणु गवेषणा करवी लेछे अे, अने तेना प्राप्त थवाथी मात्रानुसार तेने ग्रहण करीने पोतानी संयमनी रक्षा करवाभां न सावधान रहेवुं लेछे अे. तेने प्रकट करीने सूत्रकार कहे छे के—

ते अणुगार द्रव्यादिना अभावथी क्य-विक्रयना व्यवहारभां अकिञ्चन छे, भाटे आहारादिकने पोते न भरीहे अने भीलथी भरीहावे नछि, तथा ते भरीहावाणा भील कोछनी अनुमोदना पणु न करे. आथी आ वातनी पुष्टि करी छे के—अणुगार मन, वचन कायाथी कृत कारित अगर अनुमोदना द्वारा हननादि त्रणु, पचनादि त्रणु, क्यणादि त्रणु, अेम नव कोटिथी विशुद्ध आहारादिक प्राप्त करी शरीरनी पुष्टिना अभिप्रायथी नछि पणु संयमनी रक्षाना अभिप्रायथी अंगारधूमादिदोषरहित थछे तेनुं सेवन करे. सूत्रभां कहेला क्य विक्रय पदथी उद्गम



પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટોઽનગારઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—‘સે મિક્ષૂ’ ઇત્યાદિ।

મૂલમ્—સે મિક્ષૂ કાલજ્ઞે બલજ્ઞે માયજ્ઞે સ્વેયજ્ઞે સ્વણયજ્ઞે વિણયજ્ઞે સસમયજ્ઞે પરસમયજ્ઞે ભાવજ્ઞે પરિગ્ગ્રહં અસમાયમાણે કાલાણુદ્ઘર્ષે અપહિણ્ણે દુહઓ હેત્તા નિયાઈ ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—સ મિશ્નુઃ કાલજ્ઞો બલજ્ઞો માત્રાજ્ઞઃ સ્વેદજ્ઞઃ ક્ષણકજ્ઞો વિનયજ્ઞઃ સ્વસમયજ્ઞઃ પરસમયજ્ઞો ભાવજ્ઞઃ પરિગ્રહમસમાયમાનઃ કાલાનુષ્ઠાયી, અપતિજ્ઞઃ, દ્વિધાતશ્ચિત્ત્વા નિયાતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—‘સ મિશ્નુ’-રિત્યાદિ। સઃ—પૂર્વોક્તઃ સમુત્થિતેત્યાદિમુનિગુણગણયુક્તો મિશ્નુઃ=ચારિત્રવાન્ કાલજ્ઞઃ—કાલં=પ્રતિલેખનાદિસમયં જાનાતીતિ કાલજ્ઞઃ।

અથવા કાલં=મિશ્નાકાલં જાનાતીતિ કાલજ્ઞઃ, અકાલે મૈક્ષાચરણેનાત્મનઃ ક્લેશાધિગમો ગ્રામનિન્દા ચ જાયતે, તત્તથ્થ મગવદાજ્ઞાવિરાધકત્વેન સ્વેદપ્રકટનેન ચ ચારિત્રમાલિન્યં ભવત્યતોઽનુચિતકાલે મૈક્ષાદિકં નાચરણીયમિત્યાદ્યભિજ્ઞ ઇત્યર્થઃ। યદ્વા કાલં=સુમિશ્નં દુર્મિશ્નં દિનપ્રમાણં રાત્રિપ્રમાણં વા જાનાતીતિ કાલજ્ઞઃ।

પદ સે ઉદ્ગમ દોષોં કા ગ્રહણ હોતા હૈ, ઉસસે ઉત્પાદન ઓર ઇષણા દોષોં કા મી ગ્રહણ હો જાતા હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

इन पूर्वोक्त विशेषणों से युक्त अनगार कैसा होता है? इसका खुलाशा करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘से मिक्षू’ इत्यादि।

वह चारित्रवान् अनगार कि जिसका वर्णन ‘समुद्दिष्ट’ इस द्वितीय सूत्र में किया जा चुका है वह; कालज्ञ-प्रतिलेखनादि क्रियाओं के अवसर का ज्ञाता होता है। अथवा ‘कालज्ञ’-शब्द का अर्थ-काल का जानने वाला-ऐसा है। इससे यह बात सूत्रकार प्रकट करते हैं कि-साधु को भिक्षाचरण के काल में ही भिक्षा के लिये गमन करना चाहिये; क्योंकि अकाल में उसके निमित्त

દોષોનું પ્રહણ થાય છે તેનાથી ઉત્પાદન અને એષણાદિ દોષોનો પણ પ્રહણ થઈ જાય છે. (સૂ. ૩)

એવા પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત અણુગાર કેવા હોય છે? તેનો ખુલાસો કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘સે મિક્ષૂ’ ઇત્યાદિ.

તે ચારિત્રવાન અણુગાર કે જેનું વર્ણન ‘સમુદ્દિષ્ટ’ આ બીજા સૂત્રમાં કરવામાં આવેલ છે. તે ‘કાલજ્ઞ’—‘પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓના અવસરના જ્ઞાતા’ હોય છે, અથવા ‘કાલજ્ઞ’ શબ્દનો અર્થ ‘કાળના બાણુવાવાળા’ હોય છે. એથી આ વાત સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે કે—સાધુઓ ભિક્ષાચરણના કાલમાં જ ભિક્ષા માટે જવું જોઈએ,

‘બલજ્ઞઃ’ બલં=સ્વશક્તિં પરશક્તિં વા યો જાનાતિ સ બલજ્ઞઃ=સ્વ-પરબલામિજ્ઞઃ,  
 ‘માત્રાજ્ઞઃ’ માત્રાં જાનાતિ યઃ સ માત્રાજ્ઞઃ, યાવત્પ્રમાણાહારાદિગ્રહણેન ગૃહસ્થો ન  
 પુનરારમ્ભે પ્રવર્તેતે । યદ્વા—સ્વસંયમયાત્રાનિર્વાહો યાવતાઽઽહારેણ ભવતિ, તાવન્મા-  
 ત્રાજ્ઞાનકુશલઇત્યર્થઃ । ‘ચેદજ્ઞઃ’ ચેદમ્=અભ્યાસં, સંસારપરિભ્રમણજન્યં શ્રમં વા  
 ક્રિયા ગયા ગમન એક તો અપને લિયે કલેશકારક હોતા હૈ, દૂસરે ઇસ  
 પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે ગામ મેં ડસ સાધુ કી નિંદા બી હોતી હૈ । ઇસલિયે  
 આહાર લેને કે લિયે જો માર્ગ શાસ્ત્રાનુસાર વિહિત હૈ ડસસે વિપરીત  
 પ્રવૃત્તિ કરને વાલે સંયમી-સાધુ કે ચારિત્ર મેં ભગવાન્ કી આજ્ઞા કા  
 વિરાધક હોને કી વજહ સે, ઓર અપને મેં ચેદ ઉત્પન્ન કરને કે નિમિત્ત  
 સે મલિનતા આતી હૈ, ઇસલિયે અકાલ મેં ભિક્ષાવૃત્તિ નહીં કરની ચાહિયે ।  
 ‘કાલજ્ઞ’ શબ્દ કા અર્થ યહ બી હોતા હૈ—જો સુભિક્ષ-દુર્ભિક્ષ, દિનપ્રમાણ  
 એવં રાત્રિ કે પ્રમાણ કો જાનતા હૈ ।

અપની શક્તિ એવં પરકી શક્તિ કો જો જાનતા હૈ વહ બલજ્ઞ હૈ ।  
 જિતને પ્રમાણ કા આહાર લેને સે ગૃહસ્થ ફિર દુબારા આરમ્ભ ન કરે,  
 અથવા જિતને આહાર કે ગ્રહણ સે અપની સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ હો  
 સકતા હૈ, ડતની હી માત્રા મેં આહાર લેના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કી વિધિ  
 મેં જો કુશલ હોતા હૈ ડસકા નામ માત્રાજ્ઞ હૈ ।

અભ્યાસ, અથવા સંસાર મેં પરિભ્રમણ સે ઉત્પન્ન હુએ કલેશ યા ષડ્-

કારણુ કે અકાળે તે નિમિત્તે થએલું ગમન એક તો પોતાને માટે કલેશકારક થાય  
 છે, બીજું આવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી ગામમાં તે સાધુની નિંદા પણ થાય છે. માટે  
 આહાર લેવા માટે જે માર્ગ શાસ્ત્રાનુસાર વિહિત છે તેનાથી વિપરીત પ્રવૃત્તિ  
 કરવાવાળા સંયમી સાધુના ચારિત્રમાં ભગવાનની આજ્ઞાના વિરાધક હોવાના મતલબથી,  
 અને પોતાનામાં ખેદ ઉત્પન્ન કરવાના નિમિત્તથી મલિનતા આવે છે માટે અકા-  
 લમાં ભિક્ષાવૃત્તિ કરવી જોઈએ નહિ.

કાળજ્ઞ શબ્દનો અર્થ એ પણ થાય છે—જે સુભિક્ષ-દુર્ભિક્ષ દિનપ્રમાણ  
 અને રાત્રિના પ્રમાણને જાણે છે.

પોતાની તેમજ બીજાની શક્તિને જે જાણે છે તે બલજ્ઞ છે, જેટલા પ્રમા-  
 ãણમાં આહાર લેવાથી ગૃહસ્થ ફરીથી બીજી વાર આરંભ ન કરે, અથવા જેટલા  
 આહારના પ્રાપ્તિથી પોતાની સંયમયાત્રાનો નિર્વાહ થાય છે એટલી જ માત્રામાં  
 આહાર લેવો જોઈએ. આ પ્રકારની વિધિમાં જે કુશળ છે તેનું નામ માત્રાજ્ઞ છે.

અભ્યાસ અથવા સંસારમાં પરિભ્રમણથી ઉત્પન્ન થતાં કલેશ, અગર ષડ્કારિક



યો જાનાતિ સ ખેદજ્ઞઃ, યદ્વા-ખેદં=પડ્જીવનિકાયદુઃખં જાનાતીતિ ખેદજ્ઞઃ । યદ્વા-‘ ક્ષેત્રજ્ઞ ’ ઇતિ-ચ્છાયા, ક્ષેત્રમુત્તમકુલાદિરૂપં જાનાતિ યઃ સ ક્ષેત્રજ્ઞઃ । યદ્વા-મૈક્ષાદિક્ષેત્રપરિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । ‘ ક્ષણકજ્ઞઃ ’ ક્ષણ એવ ક્ષણકઃ પ્રતિલેખન-મૈક્ષાદિકર્તવ્યકાલસ્તં જાનાતીતિ ક્ષણકજ્ઞઃ=નમસ્કારપૌરુષ્યાદિદશવિધપ્રત્યાખ્યાના-વસરજ્ઞઃ । ‘ વિનયજ્ઞઃ ’ વિનયં દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવપેક્ષયા ગુરુસમીપે યથોક્તપ્રતિ-પત્તિલક્ષણં જાનાતિ યઃ સ વિનયજ્ઞઃ । યદ્વા-વિનયજ્ઞઃ=અભ્યુત્થાનાદ્યભિવન્દ-નાઙ્ગલિકરણાદિવિજ્ઞાતા । યદ્વા-ગુરુસમીપે ગર્વં ન કુર્યાન્ન દીનો ભવેત્, ન મિથો-કાયિક જીવોં કે દુઃખોં કા જો જ્ઞાતા હૈ ઉસકા નામ ખેદજ્ઞ હૈ । અથવા-“ સ્થેયન્ને ” ઇસકી સંસ્કૃત છાયા “ ક્ષેત્રજ્ઞઃ ” યહ ભી હોતી હૈ, જો ઉત્તમ કુલાદિકરૂપ ક્ષેત્ર કા જ્ઞાતા, અથવા મિક્ષાદિક લાભ કે ક્ષેત્ર કો જો જાનતા હૈ વહ ક્ષેત્રજ્ઞ હૈ ।

પ્રતિલેખન એવં મિક્ષા કરને યોગ્ય કાલ કા નામ ક્ષણ હૈ, ઇસકો જો જાનને વાલા હૈ ઉસકા નામ ક્ષણજ્ઞ હૈ । નમસ્કાર, પૌરુષ્યાદિ દશ પ્રકાર કે પ્રત્યાખ્યાન કે અવસર કો જાનના યહ ઇસકા ફલિતાર્થ હૈ । દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કી અપેક્ષા સે ગુરુ કા આદર સત્કાર કરના જો જાનતા હૈ ઉસકા નામ વિનયજ્ઞ હૈ । ગુરુ જિસ સમય અપની તરફ આવેં યા યહ હોં ઉસ સમય યહ હો જાના, નમસ્કાર કરના, હાથ જોડના આદિ ભી વિનય હૈ, ઇસ પ્રકાર કે વ્યવહાર કો જાનને વાલા ભી વિનયજ્ઞ કહલાતા હૈ । અથવા-ગુરુ મહારાજ કે સમીપ અહંકાર ન કરના, દીનતા જાહિર નહીં કરની, ન ઉનકી ગુસ્સ વાત કિસી કો કહની, ઇત્યાદિરૂપ ભી

જીવોના દુઃખોનો જે જ્ઞાતા છે તેનું નામ ખેદજ્ઞ છે. અથવા “ સ્થેયન્ને ” તેની સંસ્કૃત છાયા ‘ ક્ષેત્રજ્ઞઃ ’ એ પણ થાય છે. જે ઉત્તમકુલાદિરૂપ ક્ષેત્રનો જ્ઞાતા, અથવા મિક્ષાદિક લાભના ક્ષેત્રનો જે બાણકાર છે તે ક્ષેત્રજ્ઞ છે.

પ્રતિલેખન અને મિક્ષા કરવાયોગ્ય કાલનું નામ ક્ષણ છે, તેના જે બાણકાર છે તેનું નામ ક્ષણજ્ઞ છે. નમસ્કાર પૌરુષ્યાદિ દશ પ્રકારના પ્રત્યાખ્યાનના અવસરને બાણવો તે તેનું ફલિતાર્થ છે. દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની અપેક્ષાથી ગુરુનો આદર સત્કાર કરવો જે બાણ છે તેનું નામ વિનયજ્ઞ છે, ગુરુ જે વખતે પોતાની તરફ આવે અગર ઉભા હોય તે વખતે ઉભા થવું, નમસ્કાર કરવો, હાથ જોડવા આદિ પણ વિનય છે. આ પ્રકારના વ્યવહારને બાણવાવાળા પણ વિનયજ્ઞ કહેવાય છે. અથવા ગુરુ મહારાજની સમીપ અહંકાર ન કરવો, દીનતા બાહર ન કરવી, તેની કોઈ ગુસ્સ વાત બીજાને ન કહેવી, ઇત્યાદિરૂપ પણ વિનય છે. જે આ પ્રકારના



રહસ્યાદિ બ્રુવીતેત્યાદિરૂપો વિનયસ્તદભિજ્ઞ इत्यर्थः । ‘स्वसमयज्ञः’ स्वं=निजं समयं=सिद्धान्तं जानाति यः स स्वसमयज्ञः, एवं परसमयज्ञः-अन्यदीयसिद्धान्तज्ञाननिपुणः, ‘स्वसिद्धान्ते तत्परता परसिद्धान्ते चोपेक्षा कार्या’ इत्याद्यभिज्ञः, यथा परसमये स्नानादेरवश्यकर्तव्यत्वेन प्रतिपादितेऽपि स्वसमये तस्य मददर्पकरत्वेन मुनिना तत्परित्याज्यमेवेति यो वेत्तीत्यर्थः । उक्तञ्च—

स्नानं मददर्पकरं, कामाङ्गं प्रथमं स्मृतम् ।

तस्मात्કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ । ૧ । इति

વિનય હૈ । જો ઇસ પ્રકાર કે વિનય કા જ્ઞાતા હોતા હૈ ઉસકા નામ બી વિનયજ્ઞ હૈ । અપને સિદ્ધાન્ત ઓર પર કે સિદ્ધાન્ત કે જ્ઞાતા કો સ્વસમયજ્ઞ એવં પરસમયજ્ઞ કહતે હૈ । જો સ્વસિદ્ધાન્ત કા જ્ઞાતા હોગા ઉસકે હૃદય મેં પરસિદ્ધાન્ત કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રહેગા—દ્વેષ ઉત્પન્ન નહીં હોગા । સ્વસિદ્ધાન્ત કે બોધ સે યુક્ત સાધુ કે હૃદય મેં પરસિદ્ધાન્તપ્રતિપાદિત તત્ત્વોં કે પ્રતિ ન રાગ હોગા ઓર ન દ્વેષ હી—ઉનકે પ્રતિ ઉસકી સદા માધ્યસ્થ્ય ભાવના હી રહેગી । સમકિતી કે લિયે પરસિદ્ધાન્ત કે તત્ત્વોં કા બોધ હી અપને સિદ્ધાન્ત મેં પ્રતિપ્રાદિત તત્ત્વોં કે સ્વરૂપ કે પ્રતિ અધિક શ્રદ્ધા કા કારણ બનતા હૈ । અન્ય સિદ્ધાન્તકારોં ને સાધુ અવસ્થા મેં બી સ્નાન વગેરહ કરના કર્તવ્ય બતલાયા હૈ, તબ જૈનસિદ્ધાન્ત મેં ઇસે ઉસ અવસ્થા મેં મદ ઓર દર્પકારી માના ગયા હૈ, ઇસલિયે હી સાધુ ઇસ પ્રવૃત્તિ સે સદા દૂર રહતે હૈ । કહા બી હૈ—

“સ્નानં મદદર્પકરં, કામાઙ્ગં પ્રથમં સ્મૃતમ્ ।

તસ્માત્કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ ॥ ૧ ॥”

વિનયના જ્ઞાતા હોય છે તેનું નામ પણ વિનયજ્ઞ છે. પોતાના સિદ્ધાંતનો અને બીજાના સિદ્ધાંતનો જે જ્ઞાતા છે તેને સ્વસમયજ્ઞ અને પરસમયજ્ઞ કહે છે. જે સ્વસિદ્ધાન્તના જ્ઞાતા હશે તેના હૃદયમાં પરસિદ્ધાંત પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રહેશે—દ્વેષ ઉત્પન્ન થશે નહિ. સ્વસિદ્ધાન્તના બોધથી યુક્ત સાધુના હૃદયમાં પરસિદ્ધાન્તપ્રતિપાદિત તત્ત્વો પ્રતિ રાગ અને દ્વેષ થતો નથી. તેના પ્રતિ તેની સદા માધ્યસ્થ ભાવના જ રહેશે, સમકિતી માટે પરસિદ્ધાન્તના તત્ત્વોનો બોધ પોતાના સિદ્ધાંતમાં પ્રતિપ્રદિત તત્ત્વોના સ્વરૂપ પ્રતિ અધિક શ્રદ્ધાનું કારણ બને છે. અન્ય સિદ્ધાન્તકારોએ સાધુ અવસ્થામાં પણ સ્નાન વિગેરે કરવું, કર્તવ્ય બતાવ્યું છે, ત્યારે જૈનસિદ્ધાન્તમાં તેને તે અવસ્થામાં મદ અને દર્પકારી માનેલ છે. માટે સાધુ આવી પ્રવૃત્તિથી સદા દૂર રહે છે. કહ્યું પણ છે—

પરસમયનિરસનવીતરાગસમયસ્થાપનચતુર ઇતિ યાવત્ । 'ભાવજ્ઞઃ' ભાવમન્તઃ- કરણાશયં સ્ત્રીયં પરકીયં વા યો જાનાતિ સ ભાવજ્ઞઃ=સ્વપરાશયવેત્તા, એવં 'પરિગ્રહં' પરિગ્રહ્યતે યઃ સ પરિગ્રહઃ, યાવદાહારવસ્ત્રપાત્રાદિગ્રહણેન સંયમમાત્રા નિર્વહતિ, તતોઽધિકસ્યૈષણીયસ્યાપિ મૂર્છાભાવેન ગ્રહણં પરિગ્રહસ્તમ્ અમમાયમાનઃ=અમમી-કુર્વન્, તં મનસાઽપ્યનાદદાન ઇત્યર્થઃ ।

કિંચ-કાલાનુષ્ઠાયી=શાસ્ત્રવિહિતકાલે કર્તવ્યકરણશીલઃ । પૂર્વે 'કાલજ્ઞઃ' ઇતિ કાલં જાનાતીતિ જ્ઞપરિજ્ઞયા પ્રોક્તમ્, અત્ર ચાવસરેઽનુષ્ઠાનવિધાયીતિ આસેવન

અર્થ સ્પષ્ટ છે । હવે આ પ્રકારના સાધુ પરસિદ્ધાન્તના નિરસન અને સ્વસિદ્ધાન્તના સંસ્થાપન કરવામાં બહુ ચતુર રહે છે । પોતાના અને બીજાના માનસિક અભિપ્રાયના જ્ઞાતાના નામ ભાવજ્ઞ છે । જિતને આહાર, વસ્ત્ર, અને પાત્રાદિકોં સંયમયાત્રા નિભ સકતી છે તેને પરિગ્રહ કહેવાય છે । પરિગ્રહના જે સર્વથા ત્યાગી હોય છે, મનથી પણ તે ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છા નથી કરતા તે પરિગ્રહની ભમતા નહિ કરવાવાળા કહેવાય છે । જે પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયા કરવાનો સમય શાસ્ત્રમાં નિયત કરેલ છે તે અનુસાર પોતાના આવશ્યક કાર્યોને કરવાવાળા સાધુ કાલાનુષ્ઠાયી કહેવાય છે । કાલજ્ઞ અને કાલાનુષ્ઠાયી એ બે ભેદ છે કે-કાલજ્ઞ તો ભિક્ષાદિ આચરણના સમયના જ્ઞાતા હોય છે, અને કાલાનુષ્ઠાયી તે કાલમાં પોતાના કર્તવ્ય કર્મોના કરવાવાળા હોય છે । જ-પરિજ્ઞાની અપેક્ષા

“સ્નાનં મદદર્પકરં, કામાઙ્ગં પ્રથમં સ્મૃતમ્ ।

તસ્માત્કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ” ॥ ૧ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ છે. આ પ્રકારનો સાધુ પરસિદ્ધાન્તનું નિરસન અને સ્વસિદ્ધાન્તનું સંસ્થાપન કરવામાં ઘણું ચતુર રહે છે. પોતાના અને બીજાના માનસિક અભિપ્રાયના જ્ઞાતાનું નામ ભાવજ્ઞ છે. જેટલો આહાર, વસ્ત્ર અને પાત્રાદિકોથી સંયમ-યાત્રા નહીં શકે છે તેનાથી અધિક મૂર્છાભાવથી ગ્રહણ કરવું તે પરિગ્રહ છે. આ પરિગ્રહના જે સર્વથા ત્યાગી હોય છે, મનથી પણ તે ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છા નથી કરતા તે પરિગ્રહની ભમતા નહિ કરવાવાળા કહેવાય છે. જે પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયા કરવાનો સમય શાસ્ત્રમાં નિયત કરેલ છે તે અનુસાર પોતાના આવશ્યક કાર્યોને કરવાવાળા સાધુ કાલાનુષ્ઠાયી કહેવાય છે. કાલજ્ઞમાં અને કાલાનુષ્ઠાયીમાં એ ભેદ છે કે-કાલજ્ઞ તો ભિક્ષાદિ આચરણના સમયના જ્ઞાતા હોય છે, અને કાલાનુષ્ઠાયી તે કાલમાં પોતાના કર્તવ્ય કર્મોના કરવાવાળા હોય છે. જ-પરિજ્ઞાની અપેક્ષા



પરિજ્ઞા પ્રતિપાદિતમ્ । ‘ અપિ ચાપ્રતિજ્ઞઃ ’ અવિદ્યમાના પ્રતિજ્ઞા યસ્ય સોઽપ્રતિજ્ઞઃ પ્રતિજ્ઞા ચ કષાયપ્રાબલ્યેન ભવતિ । યથા ક્રોધાવિર્ભાવાન્નાસ્તિકમતાનુયાયિના પાલકબ્રાહ્મણેન સ્કન્દકાચાર્યસ્ય પશ્ચશતશિષ્યાન્ તૈલયન્ત્રે નિષ્પીડ્યમાનાનવલોક્ય સ્કન્દકઋષિણા સકલરાજધાન્યા વિનાશપ્રતિજ્ઞા કૃતા । માનોદયાદ્વાહુબલિના ‘ યજ્જ્યે- છોઽહં પૂર્વં પ્રવ્રજિતાનષ્ટનવતિસંખ્યકાન્ કનીયસઃ સ્વધ્રાતૃન્ ન વન્દે ’ ઇતિ પ્રતિજ્ઞા વ્યધાયિ । માયોદયાન્મહીસ્વામિજીવેન પૂર્વભવેઽન્યમુનીન્ પ્રતાર્ય પ્રત્યાખ્યાનપ્રતિ- જ્ઞાઽકારિ । લોભોદયાત્સુભૂમચક્રવર્તિના સપ્તમખંડસાધનપ્રતિજ્ઞા વિહિતા । એવમાદિ-

और आसेवन-परिज्ञा की अपेक्षा कालानुष्ठायी समझना चाहिये । “अ- प्रतिज्ञः” जिसके प्रतिज्ञा विद्यमान नहीं है उसका नाम अप्रतिज्ञ है । प्रतिज्ञा, कषाय की प्रबलता से होती है, जैसे क्रोध के आवेश से नास्ति- कमतानुयायी पालक ब्राह्मण ने स्कन्दकाचार्य के पांच सौ शिष्यों को तैल के यन्त्र में पेल दिया था । इस बात को देखकर स्कन्दकऋषि ने समस्त राजधानी को नष्ट करने की प्रतिज्ञा की थी । मानकषाय के उदय से बाहुबली महाराज ने दीक्षित अपने से छोटे (९९) निन्यानवे भाइयों को इस ख्याल से वन्दन नहीं किया था कि ‘ मैं इनसे बड़ा हूं-और ये मुझ से छोटे हैं ’ । मायाकषाय के उदय से मल्ली स्वामी के जीवने पूर्वभव में अन्य मुनियों के साथ माया करके प्रत्याख्यान की प्रतिज्ञा की थी । लोभ- कषाय के उदय से सुभूमचक्रवर्ती ने सप्तम खंड को साधने की प्रतिज्ञा की, इत्यादि । इस प्रकार की कषायोदयजनित प्रतिज्ञा मुनियों को नहीं करनी चाहिये, इसीलिये यहां ‘ अप्रतिज्ञः ’ यह विशेषण दिया है । अथवा

કાલજ્ઞ અને આસેવન-પરિજ્ઞાની અપેક્ષા કાલાનુષ્ઠાયી સમજવું જોઈએ. “ અપ્રતિજ્ઞઃ ” જેની પ્રતિજ્ઞા વિદ્યમાન નથી તેનું નામ અપ્રતિજ્ઞ છે. પ્રતિજ્ઞા, કષાયની પ્રબલતાથી થાય છે. જેમ ક્રોધના આવેશથી નાસ્તિકમતાનુયાયી પાલક બ્રાહ્મણ સ્કન્દકાચાર્યના પાંચસો શિષ્યોને તેલના યંત્રમાં પિલ્યા હતા, તે વાતને દેખીને સ્કન્દકઋષિએ સમસ્ત રાજધાનીને નષ્ટ કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરી હતી. માન- કષાયના ઉદયથી બાહુબલિ મહારાજે દીક્ષિત પોતાનાથી નાના ( ૯૯ ) નવાણું ભાઈઓને તેવા ખ્યાલથી વંદન ન કર્યું કે “ હું તેમનાથી મોટો છું ” અને એ મારાથી નાના છે. ” માયાકષાયના ઉદયથી મલ્લી સ્વામીના જીવે પૂર્વ ભવમાં અન્ય મુનિઓ સાથે માયા કરીને પ્રત્યાખ્યાન પ્રતિજ્ઞા કરી હતી. લોભકષાયના ઉદયથી સુભૂમચક્રવર્તીએ સાત ખંડ સાધવાની પ્રતિજ્ઞા કરી, ઇત્યાદિ. આવા પ્રકારની કષાયોદયજનિત પ્રતિજ્ઞા મુનિઓએ કરવી જોઈએ નહિ, મોટે અહીંઆ



પ્રતિજ્ઞા મુનિના ન કાર્યેતિ તાત્પર્યમ્ । યદ્વા-ભૈક્ષાચરણાદૌ ‘મમૈવાહારાદિકં સ્યા’-  
દિત્યાદિપ્રતિજ્ઞા ન સાધીયસી । અથવા-યથા સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્તે ‘જ્ઞાનક્રિયાભ્યાં  
મોક્ષઃ’ इत्यस्ति तत्र एकतरेणैव तदधिगम इत्यादिप्रतिज्ञा न विधेयेत्यर्थः, पञ्च-  
મહાવ્રતાતિરિક્તે કસ્મિંશ્ચિદપિ વિષયે પ્રતિજ્ઞા ન કર્તવ્યા મુનિના । યદિવા અપ્ર-  
તિજ્ઞઃ=અનિદાનઃ માયાશલ્યાદિરહિત इत्यर्थः । ईदृशोऽनगारः किं कृत्वा विहरती-  
ત્યાહ—‘દ્વિધાતઃ’ इत्यादि, द्विधातः=उभौ रागद्वेषावित्यर्थः छित्त्वा=व्यपनीय  
નિયાતિ=નિ=નિશ્ચયેન યાતિ=મોક્ષમાર્ગે પ્રાપ્નોતિ, પૂર્વગુણસમ્પન્નોઽપિ રાગવાન્  
દ્વેષવાંશ્ચ ન મોક્ષં લભત इति भावः ।

ભિક્ષા કે સમય મેં ‘મુઝે હી આહારાદિક મિલે’ એસી પ્રતિજ્ઞા નહીં  
કરની चाहिये, क्योंकि मुनि के लिये इस प्रकार की प्रतिज्ञा करना उचित  
नहीं है । જ્ઞાન ઓર ક્રિયા ઇન દોનોં સે મુક્તિ કા લાભ સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્ત  
મેં પ્રતિપાદિત કિયા ગયા હૈ, પરન્તુ ઇસ પ્રકાર કી પ્રતિજ્ઞા કરના કિ-  
‘સિર્ફ જ્ઞાનમાત્ર સે યા ક્રિયામાત્ર સે હી મુક્તિ હોતી હૈ’ ઉચિત નહીં હૈ ।  
મુનિયોં કો પંચમહાવ્રતોં કે આરાધન કરને કે સિવાય અન્ય કિસી ભી  
વિષય મેં પ્રતિજ્ઞા નહીં કરની चाहिये ।

અથવા “અપ્રતિજ્ઞઃ” ઇસ શબ્દ કા અર્થ-‘માયાદિ ત્રીન શલ્યોં રહિત’  
હોતા હૈ । અનગારોં કા સર્વ સંયમ શલ્યત્રય સે રહિત હોકર હી નિર્મલ હો  
સકતા હૈ । ઇન પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટ અનગાર હી રાગ ઓર દ્વેષોં કા  
ઉન્મૂલન કર “નિયાતિ” નિશ્ચય સે મોક્ષ કે માર્ગ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ।  
રાગદ્વેષ કે ઉન્મૂલન કે અભાવ મેં ઇન પૂર્વોક્તગુણસમ્પન્ન ભી અનગાર

“અપ્રતિજ્ઞઃ” એ વિશેષણ આપેલ છે. અથવા—ભિક્ષાસમયમાં ‘મને જ  
આહારાદિક મળે’ એવી પ્રતિજ્ઞા કરવી બેઠાં એ નહિ, કારણ કે મુનિ માટે આવા  
પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરવી ઉચિત નથી. જ્ઞાન અને ક્રિયા આ બંનેથી મુક્તિનો  
લાભ સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્તમાં પ્રતિપાદિત કરેલ છે, પરંતુ એવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા  
કરવી કે ‘ફક્ત જ્ઞાનમાત્રથી અગર ક્રિયામાત્રથી જ મુક્તિ થાય છે’ તે ઉચિત  
નથી. મુનિયોએ પંચ મહાવ્રતોનું આરાધન કરવા સિવાય બીજા કોઈ પણ વિષયમાં  
પ્રતિજ્ઞા નહિ કરવી બેઠાં છે.

અથવા “અપ્રતિજ્ઞઃ” આ શબ્દનો અર્થ ‘માયાદિ ત્રણ શલ્યોથી રહિત’  
થાય છે. અણુગારોનો સર્વ સંયમ શલ્યત્રયથી રહિત બનીને જ નિર્મળ  
થઈ શકે છે. આ પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટ અણુગાર જ રાગ અને દ્વેષનું ઉન્મૂલન કરી  
“નિયાતિ” નિશ્ચયથી મોક્ષના માર્ગને પ્રાપ્ત કરે છે. રાગ દ્વેષના ઉન્મૂલનના

નનુ શાસ્ત્રે નાનાવિધાભિગ્રહરૂપા પ્રતિજ્ઞાઽભિહિતાઽત્ર તુ ‘મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવે’-  
દિતિ કથિતં તત્કથમ્ ? इत्यत्राह—द्विधेति, अत्र पक्षे द्विधेतिच्छाया, द्विधा=  
द्विप्रकारेण रागेण द्वेषेण च प्रतिज्ञां छित्त्वा=अकृत्वा नियाति=नियतं याति=संयमे  
विहरति, रागद्वेषवशेन मुनिरनेषणीयमयि गृह्णाति भुङ्क्ते चेति रागद्वेषवती प्रतिज्ञा  
मुनिना न विधेयेति भावः ॥ सू० ४ ॥

આચારવિશેષં પુનરપિ દર્શયતિ—‘વત્થં’ इत्यादि ।

મૂલમ્—વત્થં પડિગ્ગહં કંબલં પાયપુંછણં ઉગ્ગહં ચ કડાસણં  
एएसु चेव जाएज्जा ॥ सू० ५ ॥

छाया—वस्त्रं पतद्ग्रहं कम्बलं पादप्रोच्छन्नमवग्रहं च कटासनमेतेषु चैव  
याचयेत् ॥ सू० ५ ॥

मुक्ति के लाभ से वंचित माना गया है ।

પ્રશ્ન—શાસ્ત્ર મેં અનેક પ્રકાર કી અભિગ્રહરૂપ પ્રતિજ્ઞાઓં કા કથન  
ક્રિયા ગયા હૈ, ફિર યહાં પર “મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવેત્” મુનિ કો પ્રતિજ્ઞા-  
સંપન્ન નહીં હોના ચાહિયે, યહ કૈસે કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—રાગ ઓર દ્વેષ સે જો પ્રતિજ્ઞા કી જાતી હૈ વહ સંયમી મુનિ  
કે લિયે ઉચિત નહીં હૈ । તમી વહ અપને સંયમ માર્ગ મેં વિચર સકતા  
હૈ । રાગ ઓર દ્વેષ કે વશ હોકર કી ગઈ પ્રતિજ્ઞા સે મુનિ અનેષણીય  
મી આહારાદિક કો ગ્રહણ કર લેતા હૈ, ઇસલિયે રાગદ્વેષવાલી પ્રતિ-  
જ્ઞાઓં કે કરને કા નિષેધ ક્રિયા ગયા હૈ । યહ ભાવ “દુહઓ છેત્તા નિયાઈ”  
इन पदों से प्रकट होता है अतः इस प्रकार की प्रतिज्ञा मुनिजनों को  
नहीं करनी चाहिये ॥ सू० ४ ॥

અભાવમાં આ પૂર્વોક્તગુણસંપન્ન પણ અણુગાર મુક્તિના લાભથી વંચિત માનેલ છે.

પ્રશ્ન—શાસ્ત્રમાં અનેક પ્રકારની અભિગ્રહરૂપ પ્રતિજ્ઞાતું કથન કરેલ છે,  
વળી આ ઠેકાણે “મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવેત્” મુનિએ પ્રતિજ્ઞાસંપન્ન નહિ બનવું  
જોઈએ, એ કેમ કહેવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર—રાગ અને દ્વેષથી જે પ્રતિજ્ઞા કરવામાં આવે છે, સંયમી મુનિએ  
તેવી પ્રતિજ્ઞા નહિ કરવી જોઈએ. તો જ તે પોતાના સંયમ માર્ગમાં વિચરી શકે  
છે. રાગ અને દ્વેષથી કરેલી પ્રતિજ્ઞાથી મુનિ અનેષણીય પણ આહારાદિક ગ્રહણ  
કરી લે છે. માટે રાગ દ્વેષવાળી પ્રતિજ્ઞાઓ કરવાનો નિષેધ કરેલ છે. આ ભાવ  
“દુહઓ છેત્તા નિયાઈ” એ પદોથી પ્રગટ થાય છે. માટે આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા  
મુનિજનોએ નહિ કરવી જોઈએ. ॥ સૂ૦ ૪ ॥



ટીકા—‘વસ્ત્ર’-મિત્યાદિ । મુનિર્યથાઽઽહારં યાચયેત્ ગૃહસ્થેભ્યસ્તથૈવ એતેષુ ચૈવ =ગૃહપતિષ્વેવ વસ્ત્રં=વસનં પતદ્ગ્રહં=પાત્રં વસ્ત્રગ્રહણેન વસ્ત્રૈષણા પતદ્ગ્રહગ્રહણેન ચ પાત્રૈષણા ચ સઙ્ગૃહીતા, કમ્બલં=રહકાદિકમ્, એતેનોર્ણાવસ્ત્રગ્રહણમ્, પાદપ્રોઞ્છનં=રજોપહરણમ્, અવગ્રહમ્=અવગૃહ્યતે યઃ સોઽવગ્રહો વસતેરાજા, શક્રેન્દ્રરાજગૃહસ્થ-શય્યાતરસાધર્મિકભેદેનાવગ્રહઃ પશ્ચથા, એતેનાવગ્રહપ્રતિજ્ઞાઃ સર્વાઃ સઙ્ગૃહીતાઃ, તમ-વગ્રહમ્, અપિ ચ કટાસનં કટશ્ચ=સંસ્તારશ્ચ આસનં ચ=પીઠફલકાદિકં ચાનયોઃ સમાહારદ્વન્દસ્તત્કટાસનમ્, આસ્યતેઽત્રેત્યાસનં શય્યા વા, સંસ્તારઃ સાર્દ્ધસ્તદ્વય-પ્રમાણઃ, શય્યા ચ શરીરપ્રમાણા, એતત્સર્વં યાચયેત્=ગવેષયેત્, એષણીયં વસ્ત્રાદિકં યાચયેત્ નાનેષણીયમ્, ઇતિ ॥ સૂ. ૫ ॥

સંયમી મુનિ કે વિશેષ આચાર કો પુનરપિ પ્રદર્શિત કરતે હુણ સૂત્ર-કાર કહતે હૈ—‘વત્થં’ ઇત્યાદિ ।

અનગાર જિસ પ્રકાર ગૃહસ્થોં સે આહાર કી યાચના કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર ઉનસે વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, રજોહરણ, રહને કે લિયે વસતિ-સ્થાન કી ઔર કટાસન કી ભી યાચના કરે । સૂત્ર મેં વસ્ત્ર કે ગ્રહણ સે વસ્ત્રૈષણા ઔર પાત્ર કે ગ્રહણ સે પાત્રૈષણા કા ગ્રહણ ક્રિયા ગયા હૈ । કંબલ સે ઝની કંબલ જાનના ચાહિયે, રેશમી આદિ કમ્બલ નહીં । અવગ્રહ શબ્દ કા અર્થ-વસતિ-સ્થાન મેં ઠહરને કી આજ્ઞા । અવગ્રહ, શક્રેન્દ્ર, રાજા, ગૃહસ્થ, શય્યાતર, ઔર સાધર્મિક કે ભેદ સે ૫ પ્રકાર કા હૈ । અવગ્રહ (આજ્ઞા) શબ્દ સે અવગ્રહસમ્બન્ધી સમસ્ત પ્રતિજ્ઞાઓં કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । કટ સે સંસ્તારક એવં આસન સે પીઠફલકાદિ જાનના ચાહિયે । આસન સે અપને શરીરપ્રમાણ શય્યા, તથા સંસ્તાર સે (૨૧) ઢાઈ હાથકા

સંયમી મુનિના વિશેષ આચારને પુનરપિ પ્રદર્શિત કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘વત્થં’ ઇત્યાદિ.

અણુગાર જેવી રીતે ગૃહસ્થોથી આહારની યાચના કરે છે તે પ્રકારે તેનાથી વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, રજોહરણ, રહેવાને મકાનની અને કટાસનની પણ યાચના કરે. સૂત્રમાં વસ્ત્રના ગ્રહણથી વસ્ત્રૈષણા અને પાત્રના ગ્રહણથી પાત્રૈષણાનું ગ્રહણ કહેવાય છે. કંબલથી ઉનની કંબલ બાણુવી જોઈએ, રેશમી આદિ કંબલ નહિ. અવગ્રહ શબ્દનો અર્થ—વસતિ-સ્થાનમાં રહેવાની આજ્ઞા. અવગ્રહ—શક્રેન્દ્ર, રાજા, ગૃહસ્થ, શય્યાતર, અને સાધર્મિઓના લેહથી ૫ પ્રકારના છે. અવગ્રહ (આજ્ઞા) શબ્દથી અવગ્રહસંબંધી સમસ્ત પ્રતિજ્ઞાઓનું ગ્રહણ છે. કટથી સંસ્તારક અને આસનથી પીઠ—ફલકાદિ બાણુવું જોઈએ. આસનથી પોતાના શરીર પ્રમાણ શય્યા, તથા સંસ્તારથી અહીં હાથનું બિછાનું—ખિસ્તર સમજાવે.



मुनिर्मात्रयैवाहारादिकं गृहीयात्, लाभालाभादौ च मध्यस्थतामवलम्बेतेति दर्शयति—‘लब्धे’ इत्यादि ।

मूलम्—लब्धे आहारे अणगारो मायं जाणिज्जा से जहेयं भगवया पवेइयं लाभुत्ति न मज्जिज्जा, अलाभुत्ति न सोइज्जा बहुंपि लद्धुं न निहे परिग्गहाओ अप्पाणं अवसक्किज्जा अन्नहा ण पासए परिहरिज्जा ॥ सू० ६ ॥

छाया—लब्धे आहारेऽनगारो मात्रां जानीयात्, तद्यथेदं भगवता प्रवेदितम्, लाभ इति न माचेत्, अलाभ इति न शोचेत्, बह्वपि लब्ध्वा न स्निह्यात्, परिग्रहादात्मानमवष्यकेत्, अन्यथानपश्यकः परिहरेत् ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘लब्धे’ इत्यादि । अनगारः=मुनिः, लब्धे=सम्प्राप्ते आहारे उपलक्षणादन्यस्मिन्नपि वस्त्रपात्रशय्यासंस्तारकादावधिगते सति ‘मात्रा’ यावद्ग्रहणेन विछौना-विस्तर समझना चाहिये । अनगार इन समस्त एषणीय वस्तुओं की ही गृहस्थों से याचना करे, अनेषणीयों की नहीं ॥ सू० ५ ॥

अनगार मात्राप्रमाण ही आहारादिकों को लेवे । उनके लाभ और अलाभ में मध्यस्थ भाव रखे, इस बात को सूत्रकार कहते हैं—‘लब्धे आहारे’ इत्यादि ।

इस सूत्र में ‘आहार’ यह शब्द उपलक्षण है, इससे वस्त्र, पात्र, शय्या, संस्तारक आदि का भी ग्रहण हो जाता है । आहार एवं वस्त्रादिक वस्तुओं को गृहस्थ के पास उतनी ही मात्रा में बोरना चाहिये कि जिससे बोराने वाले गृहस्थ को दुवारा आरंभ नहीं करना पड़े । तथा इतनी ही लेनी चाहिये कि जिनके लेने से अपनी संयमयात्रा का

जेधं ओ. अणुगार आ समस्त ओषणीय वस्तुओनी गृहस्थोथी याचना करे, अनेषणीयोनी नहि. ॥ सू० ५ ॥

अणुगार मात्राप्रमाणुथी आहारादि ले, तेना लाभ-अलाभमां मध्यस्थ भाव राखे, आ वातने सूत्रकार कहे छे—लब्धे आहारे इत्यादि.

आ सूत्रमां ‘आहार’ आ शब्द उपलक्षण छे. तेनाथी वस्त्र, पात्र, शय्या, संस्तारक आदिनुं ग्रहण थाय छे. आहार अने वस्त्रादिक वस्तुओने गृहस्थोने पासोथी ओटली मात्रामां लेवी जेधंओ के जेनाथी देवावाणा गृहस्थने इरीथी भीछ वार आरंभ करवो न पड़े, तथा ओटली न मात्रा लेवी जेधंओ के जे देवाथी पोतानी संयमयात्रा नुं पालन थर्छ शके, अर्थात् जे संयमयात्रा नो निर्वाड

ગૃહપતિર્ન પુનરાસ્મભે પ્રવર્તેત, યાવતા ચાત્મનઃ સંયમયાત્રાનિર્વાહો ભવતિ, યથા ચ પરિષ્ઠાપનીયં ન ભવેત્ તાવતી માત્રા, તાં જાનીયાત્=બુદ્ધ્યેત માત્રાતોઽધિકગ્રહણે સંયતમર્યાદાસ્વલનાત્ । એતત્સર્વં 'જમિણં વિરૂવરૂવેર્હિં' ઇત્યુદ્દેશસ્યાદિમસૂત્રમારભ્યૈ-તાવત્પર્યન્તં ન મયા સ્વબુદ્ધ્યા પ્રોક્તમિતિ દર્શયતિ—'તદ્યથેત્યાદિ । તદ્યથા—ઇદમ્-ઉદ્દેશારમ્ભતોઽવ્યવહિતસૂત્રપર્યન્તમભિવ્યાપ્ય યદભિહિતં તત્સર્વં ભગવતા પ્રવેદિતમ્=ઉક્તમ્ । એતેન પૂર્વોક્તસૂત્રાદભિહિતાર્થેઽવશ્યકર્તવ્યતા પ્રદર્શિતા, અન્યથા ભગવદાજ્ઞા વિરાધકત્વમાપદ્યેતેતિ સંમૂચિતમ્ । અપિ ચાનગારઃ કિં કુર્યાદિતિ દર્શયતિ—'લાભ ઇતી'-તિ, લાભઃ=અશનવસનાદર્મમૈવાધિગમ ઇતિ ચેતસિ પરિચિન્ત્ય ન માદ્યેત=ન મોદેત નાભિમાનં કુર્યાદિત્યર્થઃ ।

નિર્વાહ હો સકે, અર્થાત્ જો સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કરને મેં કિસી તરહ સે બાધક ન બન સકે । લેતે સમય યહ ધ્યાન અવશ્ય રાખના ચાહિયે, એસા ન હો કિ-અધિક લેને પર પરિષ્ઠાપન કરના પડે । ઇતના ધ્યાન રાખના હી માત્રા હૈ । ઇસ માત્રા કી મર્યાદા કા ઉલ્લંઘન કરને સે યથાવત્સંયમ કા નિર્વાહ નહીં હો સકતા ।

શ્રીસુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ-યહ સબ કુછ જો ઇસ ઉદ્દેશ કે પ્રથમ સૂત્ર સે લગા કર યહાં તક કહા ગયા હૈ વહ મૈને અપની નિજ કલ્પના સે નહીં કહા હૈ, કિન્તુ વીતરાગ પ્રભુ ને યહ સબ પ્રકટ કિયા હૈ । ઇસલિયે જો કુછ યહાં તક કહા ગયા હૈ સંયમી મુનિ કા કર્તવ્ય હૈ કિ ઉસ પર પૂર્ણ ધ્યાન રાખે, ઓર ઉસકા અપને સંયમ કો નિર્મલ બનાને કે લિયે અવશ્ય પાલન કરે, નહીં તો ભગવાન કી આજ્ઞા કા વિરાધક બનના પડેગા ।

કરવામાં કોઈ પણ પ્રકારે બાધક ન બની શકે. લેતી વખત એ ધ્યાન અવશ્ય રાખવું જોઈએ, એવું ન બને કે અધિક લેવાથી પરિષ્ઠાપન કરવું પડે. આટલું ધ્યાન રાખવું તે માત્રા છે. આ માત્રાની મર્યાદાનું ઉલ્લંઘન કરવાથી બરોબર સંયમનો નિર્વાહ બની શકતો નથી.

શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે:—આ બધું જે એ ઉદ્દેશના પ્રથમ સૂત્રથી લઈને અહીં આ સુધી કહ્યું છે તે મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી કહેલ નથી. પણ વીતરાગ પ્રભુએ જ આ બધું પ્રગટ કરેલ છે. માટે જે કંઈ અહીં આ સુધી કહ્યું છે તે ઉપર સંયમી મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તેના ઉપર પુરેપુરું ધ્યાન આપે, અને તેનું પોતાના સંયમને નિર્મળ બનાવવા માટે અવશ્ય પાલન કરે. નહિ તો ભગવાનની આજ્ઞાના વિરાધક બનવું પડશે.



અથવા ‘લાભે’ इति-જ્ઞાયા, લાભે સતિ વસ્ત્રાહારાદેરધિગમે ચ ન માઘેત ।  
 એવમલાભે વસ્ત્રપાત્રાદેરપ્રાપ્તૌ ‘ધિગ્ હતભાગ્યં માં યદન્યૈર્લભ્યતે અન્તરાયોદયાન્મયા  
 ન લભ્યતે’ इति=एवं न शोचेत् शोकं न विदध्यात्, લાભાલાભયોર્મધ્યસ્થભાવમવ-  
 લમ્બેતેત્યર્થઃ । ઉક્તञ्च —

“લાભો વરમલાભોઽપિ, મુનિરુભયસ્મિન્દધાતિ માધ્યસ્થ્યમ્ ।

લાભે પ્રાણપરિસ્થિતિરથચાલાભે તપોવૃદ્ધિઃ ” ॥ ૧ ॥ इति ।

ऐसा कभी भी भाव न रखे कि-अशनादि-आहारवस्त्रादिक का लाभ मुझे ही होता है अन्य को नहीं । क्यों कि इस प्रकार की भावना से आत्मा में एक प्रकार का अहंकार उत्पन्न होता है जो संयम जीवन में सफेद वस्त्र में धब्बे की तरह बाधक होता है, अतः इस प्रकार का अहंकार कभी नहीं करना चाहिये । अथवा “लाभ इति न माघेत” इसका अभिप्राय यह भी होता है कि आहार वस्त्रादिक का लाभ होने पर संयमी को हर्षित नहीं होना चाहिये, और अलाभ होने पर उसे “मुझ हतभागी-अभागे को धिक्कार है, दूसरों को तो सब कुछ मिलता है मुझे अन्तराय के उदय से कुछ भी नहीं मिलता ” इस प्रकार का शोक भी नहीं करना चाहिये, क्योंकि संयमजीवन की शोभा लाभ और अलाभ में मध्यस्थ भाव रखने से ही है । कहा भी है—

“લાભો વરમલાભોઽપિ, મુનિરુભયસ્મિન્ દધાતિ માધ્યસ્થ્યમ્ ।

લાભે પ્રાણપરિસ્થિતિ-રથ ચાલાભે તપોવૃદ્ધિઃ ॥ ૧ ॥ ” इति ॥

એવો લાવ કોઈ વખત ન રાખે કે-‘અશનાદિ-આહારવસ્ત્રાદિકનો લાભ મને જ થાય છે. બીજાને નહિ.’ કારણ કે આ પ્રકારની લાવનાથી આત્મામાં એક પ્રકારનો અહંકાર ઉત્પન્ન થાય છે જે સંયમ જીવનમાં સફેદ વસ્ત્રમાં ડાઘાની માફક બાધક થાય છે. માટે આ પ્રકારનો અહંકાર કોઈ વખત કરવો ન જોઈએ. અથવા “લાભ इति न माघेत” એનો અભિપ્રાય એ પણ થાય છે કે-આહારનો લાભ થવાથી સંયમીએ હર્ષિત નહિ થવું જોઈએ, અને અલાભ થવાથી તેણે “હું હતભાગી-અભાગીને ધિક્કાર છે, બીજાઓને સઘળું મળે છે, મને અંતરાયના ઉદયથી કાંઈ પણ મળતું નથી.” આવા પ્રકારનો શોક પણ નહિ કરવો જોઈએ, કારણ કે સંયમજીવનની શોભા લાભ અને અલાભમાં મધ્યસ્થલાવ રાખવામાં જ છે. કહ્યું પણ છે—

“લાભો વરમલાભોઽપિ, મુનિરુભયસ્મિન્ દધાતિ માધ્યસ્થ્યમ્ ।

લાભે પ્રાણપરિસ્થિતિ-રથ ચાલાભે તપોવૃદ્ધિઃ ॥ ૧ ॥ ” इति ।



किं च-बहुपि=केनापि कारणेन पुष्कलं लब्ध्वा=प्राप्य न स्निह्यात्=अन्नादौ गृहपतौ वा स्नेहं न कुर्यात्, अपि च परिग्रहात्संयमयात्रानिर्वाहमात्रातो मूर्च्छाभावे-  
नैषणीयस्याप्यधिकस्यानादानात् आत्मानम् अवष्वक्केत्=अपगमयेत्, तत आत्मानं  
निवर्तयेदित्यर्थः ।

નનુ સંયમયાત્રાનિર્વાહાર્થમાવશ્યકવસ્ત્રપાત્રાદીનામપિ ગ્રહણં પરિગ્રહપદેન વક્તુ-

આહારાદિક વસ્તુએ મિલે તો મી ઠીક, ન મિલે તો મી ઠીક, મુજે તો દોનોં અવસ્થાઓં મેં સમતા હૈ । લાભ મેં પ્રાણોં કા રક્ષણ ઓર અલાભ મેં તપ કી વૃદ્ધિ હોગી । એસા વિચાર કરના ચાહિયે ।

કિસી કારણવશ યદિ આહારાદિક સામગ્રી કિસી એક હી જગહ સે અધિક મિલ જાવે તો અન્નાદિક સામગ્રી પર તથા દેને વાલે દાતા-ગૃહસ્થ પર રાગભાવ ન કરે-મધ્યસ્થ ભાવ રાખે । ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ નહીં રાખને સે સંયમી મુનિ મેં દીનતા, તથા સિંહવૃત્તિ કે અભાવ હોને કા પ્રસંગ આજાતા હૈ । સંયમયાત્રા કા નિર્વાહમાત્રાવાલી આહારાદિક સામગ્રી કે અતિરિક્ત અન્ય સામગ્રી સે અપને કો દૂર રાખે, કારણ કિ ઇષણીય હોને પર મી મૂર્છાભાવ સે અધિક ગ્રહણ કરને સે ડસ મેં પરિગ્રહ કા દોષ આતા હૈ, અતઃ ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિરૂપ પરિગ્રહ સે સદા અપની રક્ષા કરતા રહે ।

પ્રશ્ન—સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે જો આપ આવશ્યક વસ્ત્ર પાત્રાદિકોં કા ગ્રહણ કરના સંયમી મુનિ કે લિયે કહ રહે હો સો યહ

આહારાદિક વસ્તુઓ મળે તો પણ ઠીક છે, ન મળે તો પણ ઠીક છે, એમ મને તો બંને અવસ્થાઓમાં સમતા છે. લાભમાં પ્રાણનું રક્ષણ અને અલાભમાં તપની વૃદ્ધિ થશે. એવો વિચાર કરવો જોઈએ.

કોઈ કારણવશ કદાચ આહારાદિક સામગ્રી કોઈ એક જગ્યાથી અધિક મળી જાય તો અન્નાદિક સામગ્રી પર તથા દેવાવાળા દાતા ગૃહસ્થ પર રાગભાવ ન કરે-મધ્યસ્થભાવ રાખે. આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ નહિ રાખવાથી સંયમી મુનિમાં દીનતા, તથા સિંહવૃત્તિનો અભાવ હોવાનો પ્રસંગ આવી જાય છે. સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માત્રાવાળી આહારાદિક સામગ્રીથી અતિરિક્ત અન્ય સામગ્રીથી પોતાને દૂર રાખે, કારણ કે ઇષણીય હોવા છતાં પણ મૂર્છાભાવથી અધિક ગ્રહણ કરવાથી તેમાં પરિગ્રહનો દોષ આવી જાય છે, માટે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિરૂપ પરિગ્રહથી સદા પોતાની રક્ષા કરતા રહે.

પ્રશ્ન—સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે જો આપ આવશ્યક વસ્ત્ર પાત્રાદિકોનું ગ્રહણ કરવું સંયમી મુનિ માટે કહી રહ્યા છે તો તે કહેવું બ્યાજબી નથી,

મુચિતમ્, યતશ્ચાનુકૂલે વસ્તુનિ રાગઃ પ્રતિકૂલે દ્વેષશ્ચ સઙ્ગાયતે, એવશ્ચ રાગદ્વેષ-યોરવશ્યંભાવાન્મૂર્છાં, સૈષા પરિગ્રહઃ ‘મુચ્છા પરિગ્ગહો વુત્તો’ ઇતિ વચનાત્, તત્સદ્ભાવે ચ કર્મબન્ધ ઇતિ કથં સંયમોપકરણસ્ય ન પરિગ્રહત્વમિતિ ચેદુચ્યતે-ધર્મોપકરણે મુનીનાં ‘મમેદ’-મિતિ ન મોહો ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

“અવિ અપ્પણોડવિ દેહંમિ નાયરંતિ મમાહયં” ઇતિ । (દશ. અ. ૬ ગા. ૨૨)

ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ યહ બી પરિગ્રહ હી હૈ, ઔર પરિગ્રહ કા ત્યાગ કિયે વિના સર્વથા સંયમારાધકતા હોતી નહીં હૈ । પરિગ્રહરૂપતા इनमें इसलिये હૈ કિ અનુકૂલ इनकी પ્રાપ્તિ મેં પ્રાપ્તકર્તા કો હર્ષ, ઔર પ્રતિકૂલ પ્રાપ્તિ મેં પાનેવાલે કો દ્વેષ હોતા હૈ । જહાં પર રાગ ઔર દ્વેષ હૈ વહાં પર મૂર્છાં હૈ, ઔર મૂર્છાં કા હોના હી પરિગ્રહ હૈ । “મુચ્છા પરિગ્ગહો વુત્તો” મૂર્છાં હી પરિગ્રહ હૈ, એસા ભગવાન કા કથન હૈ, જહાં इसका સદ્ભાવ હૈ વહાં કર્મબન્ધ અવશ્ય હૈ, અતઃ વસ્ત્રપાત્રાદિક ઉપકરણ કો પરિગ્રહ ક્યોં નહીં કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—સામાન્યતયા વસ્ત્રપાત્રાદિકોં મેં પરિગ્રહતા કા હમ નિષેધ નહીં કરતે હૈં, કિન્તુ જો સંયમ કે ઉપકારક હૈં વે પરિગ્રહરૂપ નહીં હૈ । યહ એક વિશેષ વિધિ હૈ, કારણ કિ મુનિયોં કો उनमें “મમ હદં” “યહ મેરે હૈં” ઇસ પ્રકાર કી મમત્વભાવરૂપ મૂર્છાં નહીં હોતી હૈ । કહા બી હૈ—  
“અવિ અપ્પણોવિ દેહંમિ, નાયરંતિ મમાહયં” ઇતિ । (દશ. અ. ૬ ગા. ૨૨)

કારણ કે તે પણ પરિગ્રહ જ છે. અને પરિગ્રહનો ત્યાગ કર્યા વિના સર્વથા સંય-મારાધકતા થતી નથી. પરિગ્રહરૂપતા તેમાં એ માટે છે કે અનુકૂળ તેની પ્રાપ્તિમાં પ્રાપ્તકર્તા ને હર્ષ અને પ્રતિકૂળ પ્રાપ્તિમાં લેનારને દ્વેષ થાય છે, જે જગ્યાએ રાગ અને દ્વેષ છે ત્યાં મૂર્છા છે, અને મૂર્છાનું હોવું તે પરિગ્રહ છે. “મુચ્છા પરિ-ગ્ગહો વુત્તો” મૂર્છા એ જ પરિગ્રહ છે, એવું ભગવાનનું કથન છે, જ્યાં તેનો સદ્ભાવ છે ત્યાં કર્મબન્ધ અવશ્ય છે, માટે વસ્ત્રપાત્રાદિક ઉપકરણને પરિગ્રહ કેમ માનેલ નથી ?

ઉત્તર—સામાન્ય રીતે વસ્ત્રપાત્રાદિકોમાં પરિગ્રહતાનો અમે નિષેધ કરતા નથી. જે સંયમના ઉપકારક છે તે પરિગ્રહરૂપ નથી. એ એક વિશેષ વિધિ છે, કારણ કે મુનિયોને તેમાં “મમ હદં” એ ભાસ છે, એ પ્રકારની મમત્વ ભાવરૂપ મૂર્છા થતી નથી. કહું પણ છે—

“અવિ અપ્પણો વિ દેહંમિ નાયરંતિ મમાહયં” ઇતિ (દશ. અ. ૬ ગા. ૨૨)



હાયા—અપ્યાત્મનોડપિ દેહે નાચરન્તિ મમાયિતમ્ । ઇતિ । તેષાં કર્મનિર્જરણાર્થં સ્વીકારાત્ , યશ્ચ મૂર્છ્યા પરિગ્રહ્યતે તસ્ય પરિગ્રહપદેનાભિધેયત્વાચ્ચ । તત્પરિહારે ચ સંયમયાત્રાયા અપિ નિર્વોદમશક્યત્વાત્ ।

કિન્ન—અન્યથાનપશ્યકઃ—પશ્યતીતિ પશ્યઃ, સ એવ પશ્યકઃ, અન્યથા=અન્ય-પ્રકારેણ ન પશ્યકઃ=અન્યથાનપશ્યકઃ=ધર્મોપકરણાપરિગ્રહદર્શી સન્ પરિગ્રહં પરિહરેત્ । યથા ગૃહસ્થો વસ્ત્રાદિકં શરીરાદિસુખસાધનં મન્યતે ન તથા મુનિઃ । સ ચૈતદ્ધર્મોપકરણં મમ ધર્મસાધનમેવ, ન શરીરાદિસુખસાધનમિતિ મન્યમાનઃ પરિગ્રહં

સાધુઓં કો જબ અપને નિજ શરીર મેં હી મોહ મમત્વ નહીં હોતા હૈ, ત્વ શરીર સે સર્વથા ભિન્ન ઉપકરણાદિકોં મેં મમત્વભાવ કૈસે હો સકતા હૈ । મુનિ અવસ્થા મેં માત્રાનુસાર ગ્રહણ કિયે હુએ વસ્ત્ર પાત્રાદિક સંયમ કે ઉપકારક હોને સે કર્મોં કી નિર્જરા કે હી સાધક હોતે હૈં, ઇસીલિયે વે સંયમ અવસ્થા મેં સ્વીકાર કિયે જાતે હૈં । પરિગ્રહ વહીં પર હૈ કિ જહાં પર મૂર્છાભાવ સે અપનાના હોતા હૈ । ઇન પાત્રાદિકોં કા ગ્રહણ મૂર્છાભાવ સે નહીં કિયા જાતા હૈ, અતઃ યે પરિગ્રહરૂપ નહીં હૈં, પ્રત્યુત ઇનકે અભાવ મેં સંયમયાત્રા કા યથાવત્ નિર્વાહ નહીં હો સકતા, ઇસીલિયે ઇનકા ગ્રહણ કરના આવશ્યક બતલાયા ગયા હૈ । ઇસી બાત કી પુષ્ટિ સૂત્રકારને “અન્યથાનપશ્યકઃ પરિહરેત્” ઇસ વાક્ય સે કી હૈ । વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મોપકરણ હૈં, ઇનકે વિના સંયમ કા યથાવત્ નિર્વાહ નહીં હો સકતા, ઇસલિયે ઇનકા રાખના આવશ્યક હૈ । ઇસ પ્રકાર ડનકો પરિગ્રહરૂપ નહીં દેખતા હુઆ અનગાર ઇનસે અતિરિક્ત ધન-

સાધુઓને જ્યારે પોતાના શરીર ઉપર જ મોહ અને મમત્વ નથી થતો તો પછી શરીરથી સર્વથા ભિન્ન ઉપકરણાદિકોમાં મમત્વભાવ કેવી રીતે હોઈ શકે. મુનિ અવસ્થામાં માત્રાનુસાર ગ્રહણ કરેલા વસ્ત્રપાત્રાદિક સંયમના ઉપકારક હોવાથી કર્મોની નિર્જરાના જ સાધક બને છે, માટે તે સંયમ અવસ્થામાં સ્વીકાર કરવામાં આવે છે. પરિગ્રહ તે જગ્યા ઉપર છે કે જ્યાં મૂર્છા ભાવથી લેવામાં આવે છે. આ પાત્રાદિકોનું ગ્રહણ મૂર્છાભાવથી કરવામાં આવતું નથી, માટે તે પરિગ્રહરૂપ નથી પ્રત્યુત તેના અભાવમાં સંયમયાત્રાનો યથાવત્ નિર્વાહ થઈ શકતો નથી, માટે તેનું ગ્રહણ કરવું આવશ્યક બતાવ્યું છે. આ વાતની પુષ્ટિ સૂત્રકારે “અન્યથાનપશ્યકઃ પરિહરેત્” આ વાક્યથી કરેલ છે. વસ્ત્રપાત્રાદિક ધર્મોપકરણ છે, તે વિના સંયમનો યથાવત્ નિર્વાહ થઈ શકતો નથી, માટે તેનું રાખવું આવશ્યક છે. એ પ્રકારે તેને પરિગ્રહરૂપ નહિ દેખતા



પરિત્યજેત્, ન તત્ર મમત્વં કુર્યાદિત્યર્થઃ। સમુચિતમાત્રયાઽઽહારાદિગ્રાહી મુનિર્લાભ-  
લાભહર્ષવિષાદવર્જિતઃ પરિગ્રહાગ્રહનિવૃત્તો રત્નત્રયસમારાધનતત્પરો ભવેદિતિ  
તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કેન દર્શિતોઽયં માર્ગં ઇતિ દર્શયતિ—‘એસ મગ્ગે’ ઇત્યાદિ।

મૂલમ્—એસ મગ્ગે આરિયહિં પવેઙ્ગે જહેત્થ કુશલો નોપલિં-  
પેજ્જાસિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—એષ માર્ગં આર્યૈઃ પ્રવેદિતઃ યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પયેઃ। ઇતિ  
બ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—‘એષ માર્ગ’ ઇત્યાદિ। એષઃ=પૂર્વોક્તરૂપઃ માર્ગઃ શ્રુતચારિત્રલક્ષણઃ  
આર્યૈઃ=તીર્થઙ્કરગણધરાદિભિઃ પ્રવેદિતઃ—પ્ર=પ્રકર્ષેણ=દ્વાદશપરિષદિ કથિતઃ।

ધાન્યાદિ કો પરિગ્રહ સમજ્ઞકર છોડુ દેતા હૈ। ગૃહસ્થ જિસ પ્રકાર વસ્ત્રા-  
દિકોં કો શારીરિક સુખાદિ કા કારણ માનકર ઉન્હેં ગ્રહણ કરતા હૈ  
ઉસ પ્રકાર કી ભાવના સે મુનિ નહીં। ધર્મોપકરણ સે ધર્મ કા હી સાધન  
હોતા હૈ—અન્ય શરીરસુખાદિક કા નહીં। એસા માનકર હી મુનિ ગ્રહણ  
કરતા હૈ, ઓર ઉનમેં મમત્વભાવ સે રહિત હોતા હૈ। તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-  
અનગાર કો સમુચિત માત્રા મેં આહારાદિક ગ્રહણ કરને વાલા, લાભ ઓર  
અલાભ મેં સમભાવી; પરિગ્રહ સે વિરત, ઓર રત્નત્રય કી આરાધના મેં  
નિમગ્ન હોના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ઇસ માર્ગ કે પ્રદર્શક કૌન હૈં? ઇસ વાત કો દિશ્વલાતે હુએ સૂત્રકાર  
કહતે હૈં—‘એસ મગ્ગે’ ઇત્યાદિ।

યહ પૂર્વોક્ત શ્રુતચારિત્રરૂપ માર્ગ તીર્થકર ગણધરાદિક આર્ય પુરુષોને

અણુગાર તેનાથી અતિરિક્ત ધનધાન્યાદિને પરિગ્રહ સમજીને છોડી દે છે. ગૃહસ્થ  
જેવી રીતે વસ્ત્રાદિકોને શારીરિક સુખાદિકનું કારણ માનીને તેને ગ્રહણ કરે છે  
તે પ્રકારની ભાવનાથી મુનિ નહિ. ધર્મોપકરણથી ધર્મનું જ સાધન થાય છે—અન્ય  
શરીરસુખાદિકનું નહિ. એવું માનીને જ મુનિ તેને ગ્રહણ કરે છે, અને તેમાં  
મમત્વભાવથી રહિત થાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે—અણુગારે સમુચિત માત્રામાં  
આહારાદિક ગ્રહણ કરવાવાળા, લાભ અને અલાભમાં સમભાવી, પરિગ્રહથી વિરત,  
અને રત્નત્રયની આરાધનામાં નિમગ્ન થવું જોઈ એ. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

આ માર્ગનો પ્રદર્શક કોણ છે, આ વાતને બતાવતાં સૂત્રકાર કહે છે—  
‘એસ મગ્ગે’ ઇત્યાદિ.

આ પૂર્વોક્ત શ્રુતચારિત્રરૂપ માર્ગ તીર્થકર ગણધરાદિક આર્ય પુરુષોએ ખાતર

હે શિષ્ય ! યથા=યેન પ્રકારેણ ત્વં કુશલઃ સન્ આર્યક્ષેત્રસુકુલજન્માદિકં, સંસારાર્ણવતરિં બોધિં, સકલકર્મક્ષપણસમર્થં ચારિત્રં ચ લબ્ધ્વા અત્ર=ઇહ તીર્થઢ્કરનિર્દિ-  
ષ્ટમાર્ગેઽષ્ટવિધકર્મહેતુભૂતેન પાપકર્મણા નોપલિમ્પયેઃ=નોપલિમ્પો ભવેસ્તથા કુરુષ્વ,  
એતસ્મિન્માર્ગે સ્થિત એવ મુનિઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિકં લભતિતિ ભાવઃ । ઇતિ-શબ્દોઽધિ-  
કારસમાપ્ત્યર્થઃ, સ ચાહારાદિગવેષણારૂપઃ । યન્મયા ભગવત્સમીપે શ્રુતં તત્સર્વં ત્વાં  
બ્રવીમિ=વચ્મિ । ઇતિ ॥સૂ. ૭॥

પરિગ્રહાદાત્મનિવૃત્તિશ્ચ તત્કારણોન્મૂલનં વિના ન સમ્ભવતિ, તત્કારણં ચ શબ્દા-  
દયઃ પશ્ચ કામગુણાઃ, તેષામુન્મૂલનં ચ દુષ્કરમિતિ દર્શયતિ-‘કામા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કામા દુરઙ્ગકમા, જીવિયં દુષ્પડિબૂહગં, કામકામી  
ખલુ અયં પુરિસે, સે સોયઙ્ જૂરઙ્ તિષ્પઙ્ પિટ્ઙ્ પરિતષ્પઙ્ ।સૂ. ૮॥

બારહ પ્રકાર કી સભા મેં પ્રકટ કિયા હૈ । ડન્હોને કહા હૈ કિ-જો મનુષ્ય  
આર્યક્ષેત્ર, સુકુલ મેં જન્મ; સંસારરૂપી સમુદ્ર કે પાર પહુંચને કે લિયે નૌકા  
સ્વરૂપ બોધિ, એવં સકલ કર્મોં કે વિનાશક ચારિત્ર કો પ્રાપ્તકર તીર્થકરાદિ  
પ્રદર્શિત ઇસ માર્ગ કા અવલંબન કરતા હૈ-ઇસમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ  
પાપકર્મ સે-જો અષ્ટ પ્રકાર કે કર્મોં કે આસ્રવ કા હેતુ હૈ-કમી મી ઉપ-  
લિપ્ત નહીં હોતા હૈ, ઇસલિયે હે શિષ્ય ! તુમ મી અપની પ્રવૃત્તિ કો  
ઇસ પ્રકાર કી બનાઓ, તાકિ તુમ મી ઇસ વિષય મેં કુશલ બન પાપકર્મ  
સે ઉપલિપ્ત ન હો સકો । સૂત્ર મેં ‘ઇતિ’ શબ્દ ઇસ અધિકાર કી સમાપ્તિ  
કા સૂચક હૈ, અર્થાત્ હે શિષ્ય ! આહારાદિક કી ગવેષણારૂપ યહ અધિ-  
કાર જૈસે મૈને ભગવાન્ કે નિકટ સુના હૈ વૈસા હી યહાં તુમ સે  
પ્રકટ કિયા હૈ, મેરી નિજી કલ્પના ઇસ વિષય મેં કુછ મી નહીં હૈ ॥સૂ. ૭॥

પ્રકારની સભામાં પ્રગટ કરેલ છે. તેઓએ કહ્યું છે કે-જે મનુષ્ય આર્યક્ષેત્ર, સુકુળમાં  
જન્મ. અવ્યાબાધ સુખરૂપી સમુદ્રના પાર સ્વરૂપ બોધિ અને સકલ કર્મોના વિનાશક  
ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરી તીર્થકરાદિપ્રદર્શિત આ માર્ગનું અવલંબન કરે છે-આમાં  
પ્રવૃત્તિ કરે છે તે પાપકર્મથી જે આઠ પ્રકારના કર્મોના આસ્રવનો હેતુ છે-કોઈ  
વખત પણ ઉપલિપ્ત થતો નથી. માટે હે શિષ્ય ! તમે પણ તમારી પ્રવૃત્તિને  
એવા પ્રકારની બનાવો કે તમે પણ આ વિષયમાં કુશળ બની પાપ કર્મથી ઉપ-  
લિપ્ત ન થઈ શકો. સૂત્રમાં ‘ઇતિ’ શબ્દ આ અધિકારની સમાપ્તિનો સૂચક છે,  
અર્થાત્ હે શિષ્ય ! આહારાદિકની ગવેષણારૂપ આ અધિકાર જેવા મેં ભગ-  
વાન પાસેથી સાંભળ્યો છે તેવો હું તને કહું છું, મારી પોતાની કલ્પના આ  
વિષયમાં કોઈ પણ નથી. ॥ સૂ. ૭ ॥



છાયા—કામા દુરતિક્રમાઃ, જીવિતં દુષ્પ્રતિબુંહણીયં, કામકામીં ચ્વલુ અયં પુરુષઃ, સ શોચતિ જૂર્યતે તેપતે પીડ્યતે પરિતપ્યતે ॥ મૂં ૮ ॥

ટીકા—‘કામા’ ઇત્યાદિ । કામાઃ—ઈચ્છામદનભેદાદ્વિવિધાઃ । તત્ર-ઈચ્છાકામાઃ-હિરણ્યાદિવાઙ્છારૂપાઃ, મદનકામાઃ=શબ્દાદિરૂપાઃ, પૂર્વસ્ય કારણં મોહનીયભેદૌ હાસ્યરતી, પરસ્ય ચ કારણં મોહનીયભેદવેદોદયઃ । તત્ત્વોભયોરપિ કામયોઃ પ્રાદુર્ભાવો મોહનીયાદેવ, એવમ્ચ કારણસત્ત્વે કાર્યભૂતસ્ય કામસ્યોન્મૂલનમશ્કયમ્ ।

પરિગ્રહ સે નિવૃત્તિ, ઉસકે કારણોં કા નાશ કિયે વિના નહીં હો સકતી । ઉસકે કારણ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણ હૈં । ઉનકા ઉન્મૂલન કરના બડા કઠિન હૈ, ઇસી વાત કો પ્રદર્શિત કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—“કામા દુરતિક્રમા” ઇત્યાદિ ।

ઈચ્છા ઓર મદન કે ભેદ સે કામ દો પ્રકાર કા હૈ । હિરણ્યાદિક કી વાઙ્છારૂપ ઈચ્છાકામ હૈ । ઇસકા કારણ મોહનીય કર્મ કા ભેદ હાસ્ય ઓર રતિ હૈ । શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોં કે વિષય મદનકામ હૈ । ઇનકા ભી કારણ—મોહનીય કર્મ કા ભેદ—વેદ—નોકષાય કા ઉદય હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇન દોનોં કામોં કી ઉત્પત્તિ મોહનીયકર્મ કે ઉદય સે હી હોતી હૈ । કારણ કે સદ્ભાવ મેં કાર્ય કા સદ્ભાવ અવશ્યંભાવી હૈ, ઇસીલિયે સૂત્ર મેં સૂત્રકાર ને “દુરતિક્રમાઃ” ઇસ પદ સે ઇનકા ઉન્મૂલન દુષ્કર બતલાયા હૈ । જબતક મોહનીયરૂપ કારણ કા ઉદય હૈ તબ તક ઇનકા અભાવ હો હી નહીં સકતા, અતઃ ઇનકા પ્રતીકાર કરના દુઃશ્કય હૈ । જીવન કા ભી પ્રતિ-

પરિગ્રહથી નિવૃત્તિ તેના કારણનો નાશ કર્યા વગર બની શકતી નથી. તેનું કારણ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણ છે. તેનું ઉન્મૂલન કરવું ઘણું કઠિન છે આ વાતને પ્રદર્શિત કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘કામા દુરતિક્રમા’ ઇત્યાદિ.

ઈચ્છા અને મદનના ભેદથી કામ બે પ્રકારના છે. હિરણ્યાદિકની વાઙ્છારૂપ ઈચ્છાકામ છે, તેનું કારણ મોહનીય કર્મના ભેદ—હાસ્ય અને રતિ છે. શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોનો વિષય મદન કામ છે, તેનું પણ કારણ—મોહનીય કર્મના ભેદ—વેદ—નોકષાયનો ઉદય છે. આ પ્રકારે બન્ને કામોની ઉત્પત્તિ મોહનીય કર્મના ઉદયથી જ થાય છે, કારણ સદ્ભાવમાં કાર્યનો સદ્ભાવ અવશ્યભાવી છે, માટે સૂત્રમાં સૂત્રકારે “દુષ્કર” આ પદથી તેનું ઉન્મૂલન દુષ્કર બતાવ્યું છે. જ્યાં સુધી મોહનીયરૂપ કારણનો ઉદય છે ત્યાં સુધી તેનો અભાવ થઈ જ શકતો નથી, માટે તેનો પ્રતિકાર કરવો દુઃશ્કય છે. જીવનનો પણ પ્રતિદિન



અતે એવ દ્વિવિધા અપિ કામા 'દુરતિક્રમાઃ' દુઃ=દુઃખેનાતિક્રમઃ=ઉન્મૂલનં=વિનાશો  
યેષાં તે દુરતિક્રમાઃ । અથવા-દુઃખેનાતિક્રમ્યન્તે=ઉન્મૂલ્યન્તે યે તે દુરતિક્રમાઃ=  
દુઃશક્યપ્રતીકારા દુષ્પરિહરા इति યાવત્ ।

કિં ચ-જીવિતં=ભવગ્રહાયુષ્કં પ્રતિદિનમપચીયમાનતયા દુષ્પરિબૃંહણીયં=વર્દ્ધ-  
યિતુમશક્યં પરિજીર્ણચ્છિન્નવસ્ત્રવત્સન્ધાતુમનર્હમિત્યર્થઃ ।

યદ્વા-જીવિતં-સંયમજીવિતં દુષ્પરિબૃંહણીયં, સંયમિનશ્ચારિત્રાન્તરાયોદયા-  
ત્કામાભિષ્વજ્ઞે સતિ સંયમજીવિતસ્ય પ્રત્યહં ક્ષીયમાણત્વાત્ ।

દિન હાસ હો રહ્યા છે । આયુકર્મના શાસ્ત્રકારોં ને અપકર્ષણ તો બતલાયા  
હૈ કિન્તુ ઉત્કર્ષણ નહીં, ઇસલિયે આયુઃકર્મના પ્રતિસમય અપચય હોને સે  
જીવન મી અપચય કી ઓર હી બઢ રહ્યા હૈ । એસા કોઈ મી કારણ નહીં હૈ  
જો જીવન કો સ્થિર, અથવા ભુજ્યમાન આયુ મેં એક સમય મી વૃદ્ધિ કર  
સકે, ઇસલિયે જિસ પ્રકાર બિલકુલ જીર્ણ ફટે હુવ વસ્ત્રના કા સીના  
અશક્ય હોતા હૈ ઁસી પ્રકાર આયુકર્મની વૃદ્ધિ હોની મી અશક્ય  
હૈ । એસા સમજકર આત્મહિતૈષી કે લિયે ઇન વિષયાદિકોં મેં વાંચ્છા નહીં  
કરની ચાહિયે । જીવનના જિતના અંશ ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે સુર-  
ક્ષિત રહ સકે એસા હી પ્રયત્ન કરતે રહના ચાહિયે ।

અથવા-જીવન શબ્દના અર્થ સંયમજીવન હૈ । યહ દુષ્પરિબૃંહણીય  
(બઢાના મુશ્કિલ) ઇસલિયે બતલાયા જા રહ્યા હૈ કિ યદિ સંયમી કો  
ચારિત્રમોહનીય કે ઉદય સે કામગુણોં મેં વાંચ્છા ઉત્પન્ન હો જાવે તો

હાસ થઈ રહ્યો છે, આયુકર્મના શાસ્ત્રકારોંએ અપકર્ષણ તો બતાવેલ છે, પણ  
ઉત્કર્ષણ નહિ, માટે આયુઃકર્મ પ્રતિસમય અપચય હોવાથી જીવન પણ અપ-  
ચયની તરફ જ વધી રહ્યું છે. એવું કોઈ પણ કારણ નથી જે જીવનને સ્થિર  
અથવા ભુજ્યમાન આયુમાં એક સમય પણ વૃદ્ધિ કરી શકે, માટે જે પ્રકારે  
બિલકુલ ફાટેલા વસ્ત્રનું શીવણું અશક્ય થાય છે તે પ્રકારે આયુકર્મની વૃદ્ધિ થવી  
પણ અશક્ય છે. એવું સમજીને આત્મહિતૈષી માટે આ વિષયાદિકોમાં વાંચ્છના નહિ  
કરવી જોઈએ. જીવનનો જેટલો પણ અંશ આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી સુરક્ષિત રહી  
શકે તેવો જ પ્રયત્ન કરતા રહેવો જોઈએ.

અથવા-જીવિત શબ્દનો અર્થ સંયમ જીવન છે. આ દુષ્પરિબૃંહણીય  
(વધારણું મુશ્કેલ) છે. એટલા માટે બતાવવામાં આવેલ છે કે કદાચ સંયમીને ચારિત્ર  
મોહનીયના ઉદયથી કામગુણોમાં વાંચ્છના ઉત્પન્ન થઈ જાય તો તેવું તે સંયમ-

यतः कामा दुरतिक्रमा अत एव अयं पुरुषः खलु=निश्चयेन कामकामी=कामं द्विप्रकारं कमितुं शीलं यस्य स कामकामी=कामस्पृहाशीलो भवति, य ईदृशः सः= पूर्वोक्तप्रकारः अपहतमनःसंकल्पः सन् किं करोतीत्याह-शोचतीति । शोचति= इष्टविषयाप्राप्तौ तन्नाशे वा शोकं करोति । अपि च-स एव जूर्यते=जूरणां करोति— अन्तर्दुःखेन शरीरं शोषयतीत्यर्थः, दीनः सन् बहु विलपति, तथाहि—

उसका वह संयमजीवन बिल्कुल ही नष्ट हुआ समझना चाहिये । ऐसा तो हो नहीं सकता कि संयमजीवन बना रहे और कामगुणों की वाञ्छा भी अपना काम करती रहे । इसलिये ऐसी परिस्थिति में संयम-जीवन का पालन अशक्य ही है ।

जब ये कामगुण दुरतिक्रम हैं तब ही तो प्राणी इनके अधीन बन इनकी ओर स्पृहाशील होकर आकृष्ट होता है । आकृष्ट होने पर भी जब इसका मानसिक संकल्प पूर्ण नहीं होता, अथवा इसकी मनचाही वस्तु इसे नहीं मिलती तब यह प्राणी शोकाकुल होता रहता है । यदि इसे मनचाही वस्तु मिल भी जाती है परन्तु ज्यों ही इसका वियोग हो जाता है तो इसके हृदय में अपार शोक का समुद्र उमड़ने लगता है । अनभीष्ट संयोग होने पर उसे दूर करने के लिये इसके चित्त में अनेक प्रकार के अशुभ संकल्प उठते रहते हैं । अनिष्ट वस्तु के संयोग में ऐसा ही होता है । प्राणी उस समय अन्तर्दुःख से अपने तक को भी सुखा देता है । कामी पुरुष स्वतः ही दीन बनकर प्रलाप करने लग जाता है ।

જીવન બિલકુલ જ નષ્ટ થયેલ સમજવું જોઈએ. એવું તો બની જ શકતું નથી કે સંયમજીવન બની રહે અને કામગુણોની વાંછના પણ પોતાનું કામ કરતી રહે. માટે આવી પરિસ્થિતિમાં સંયમજીવનનું પાલન અશક્ય જ છે.

ન્યારે એ કામગુણ દુરતિક્રમ છે ત્યારે જ તો પ્રાણી તેના આધીન બની તેની તરફ સ્પૃહાશીલ બનીને આકૃષ્ટ થાય છે. આકૃષ્ટ થવા છતાં પણ ન્યારે તેનો માનસિક સંકલ્પ પૂર્ણ નથી થતો, અથવા તેની મનપસંદ વસ્તુ તેને નથી મળતી ત્યારે તે પ્રાણી શોકાકુલ થઈ રહે છે. કદાચ તેને મનપસંદ વસ્તુ મળી પણ જાય પરન્તુ ન્યાં તેનો વિયોગ થઈ જાય છે તો તેના હૃદયમાં અપાર શોકનો સમુદ્ર ઉભરાવા લાગે છે. અનભીષ્ટ સંયોગ બનવાથી તેને દૂર કરવા માટે તેના ચિત્તમાં અनेક પ્રકારના અશુભ સંકલ્પ વિકલ્પ ઉઠતા રહે છે, અનિષ્ટ વસ્તુના સંયોગમાં એવું જ થાય છે. પ્રાણી તે વખતે અંતરદુઃખથી પોતાની જાતને પણ સુકાવી નાંખે છે. કામી પુરુષ સ્વતઃ દીન બની પ્રલાપ કરવા લાગી જાય છે, આ બાત આ શ્લોકથી પ્રકટ કરવામાં આવે છે.



પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,-

બહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ॥

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીબ ! સંતપ્યસે કિં,

નહિ જહ ! ગતતોયે સેતુબન્ધાઃ ક્રિયન્તે ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અપિ ચ=તેપતે કુલાદિમર્યાદાતઃ સંચલતિ-નિર્મર્યાદો ભવતીત્યર્થઃ । તથા પીઞ્યતે=શારીરમાનસદુઃખૈઃ ક્ષિયતે । કિં ચ-પરિતપ્યતે-પરિ=સર્વતો બાહ્યમન્તશ્ચ

યહ બાત ઇસ શ્લોક સે પ્રકટ કી જાતી હૈ—

“પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,

બહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ।

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીબ ! સંતપ્યસે કિં,

નહિ જહ ! ગતતોયે સેતુબન્ધાઃ ક્રિયન્તે ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

કામિયોં કી દશા હી કુછ એસી વિલક્ષણ હોતી હૈ કિ જિસ કી વજહ સે વે અપની કુલ કી મર્યાદા તક કો ખી છોડ દેતે હૈં । શારીરિક એવં માનસિક દુઃખોં સે વે સદા સંતપ્ત રહા કરતે હૈં । રાતદિન પશ્ચાત્તાપ હી પશ્ચાત્તાપ કિયા કરતે હૈં કિ “યદિ એસા ઉપાય કરતે તો યહ બાત બન જાતી, એસા ઉપાય કરતે તો યહ કામના ફલીભૂત હો જાતી, અબ ક્યા કરેં ?, એસા નહીં હુઆ ” ઇત્યાદિ પશ્ચાત્તાપ સે બાહર ખીતર જલા કરતે હૈં । મન મેં પશ્ચાત્તાપ કરના ખીતરી પશ્ચાત્તાપ હૈ, ઓર ઉસે શબ્દ સે પ્રકટ કરના બાહ્ય પશ્ચાત્તાપ હૈ । મનોહ પદાર્થોં કી અપ્રાપ્તિ મેં અથવા પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોં કે વિનાશ મેં દુઃખી હોના ખી પરિતાપ હૈ । યે જો

પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,-

બહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ।

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીબ ! સંતપ્યસે કિં,

નહિ જહ ! ગતતોયે સેતુબન્ધાઃ ક્રિયન્તે ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

કામીઓની દશા જ કંઈ એવી વિલક્ષણ થાય છે કે જે તે પોતાના કુળની મર્યાદાને પણ છોડી દે છે, શારીરિક અને માનસિક દુઃખોથી તે સદા સંતપ્ત રહ્યા કરે છે. રાતદિન પશ્ચાત્તાપ જ કર્યા કરે છે કે—“કદાચ એવો ઉપાય કરત તો એ વાત બની જાત, આવો ઉપાય કરત તો તેમાં મારી કામના ફળીભૂત થાત, હવે શું કરું એવું બન્યું નહિ” ઇત્યાદિ પશ્ચાત્તાપથી બહારથી તેમજ અંદરથી બળ્યા કરે છે, મનમાં પશ્ચાત્તાપ કરવો અંતરનો પશ્ચાત્તાપ છે, અને તેને શબ્દથી પ્રગટ કરવો તે બાહ્ય પશ્ચાત્તાપ છે. મનોહ પદાર્થોની અપ્રાપ્તિમાં અથવા પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોના વિનાશમાં દુઃખી થવું પણ પરિ-



તપ્યતે=પશ્ચાત્તાપસંતપ્તો ભવતિ । અથવા-હિતાપ્રાપ્તૌ પુત્રકલત્રાદિનાશે ચ પરિતપ્યતે ।  
નિઃશિલમિદં હિ શોચનાદિકં વિષયાસક્તેન કલુષિતાન્તઃકરણસ્ય દુઃસ્વાવસ્થાદ્યોતકમ્ ।

યદિ વા યૌવનધનમદમોહાભિભૂતઃ કાશ્ચનકામિન્યાદીન્યુપશુજ્ય વૃદ્ધાવસ્થાયાં નિકટમરણકાલે શોચતિ-‘ ધિગ્ માં હતભાગ્યં, યદવસરે સકલસુખદો ધર્મો મયા શોચનાદિક અવસ્થાઈ યહાં કામી પુરુષોં કી પ્રકટ કી ગઈ હૈં ; વે સમસ્ત હી વિષય કે સમ્બન્ધ સે કલુષિત-અન્તઃકરણવાલે વ્યક્તિયોં કી દુઃસ્વાવસ્થા કી દ્યોતક હૈં ।

અથવા-‘ શોચતિ ’ આદિ પદોં કે અર્થ કા સમન્વય વૃદ્ધાવસ્થા કે સાથ ભી હસ પ્રકાર સે હોતા હૈ-યૌવન ઓર ધન કે મદ સે ઉન્મત્ત તથા મોહ કે નશો સે અચેત બના હુઆ યહ પ્રાણી કંચન કામિની કા ઉપભોગ કરતે ૨ જબ વૃદ્ધાવસ્થા કા મેહમાન હોતા હૈ ઓર અપના મરણકાલ નિકટ દેખતા હૈ તબ વહ શોકાકુલ હો વિચારતા હૈ-મુક્ત અભાગે કો ધિક્કાર હૈ કિ મૈને યોગ્ય અવસર કે પ્રાપ્ત હોને પર ભી સકલ સુખદાયી ધર્મ કા અરાધન નહીં કિયા, રાત દિન યૌવન ઓર ધન કે મદ સે ઉન્મત્ત હોકર અશુભ કા હી સંગ્રહ કિયા, હસકા ફલ ક્યા હોગા ? હસ વાત કા જરા ભી વિચાર નહીં કિયા; અબ વૃદ્ધાવસ્થા આચુકી હૈ, હસમેં જિન ૨ કષ્ટોં કા મૈ અનુભવ કર રહા હૂં યે સબ પૂર્વ

તાપ છે. આ જે શોચનાદિક અવસ્થાઓ આ ઠેકાણે કામી પુરુષોની પ્રગટ કરેલ છે તે સમસ્ત વિષયના સંબંધથી કલુષિત અન્તઃકરણવાળી વ્યક્તિઓની દુઃસ્વાવસ્થાની દ્યોતક છે.

અથવા—‘ શોચતિ ’ આદિ પદોના અર્થનો સમન્વય વૃદ્ધાવસ્થામાં પણ આ પ્રકારે થાય છે—યૌવન અને ધનના મદથી ઉન્મત્ત તથા મોહના નશાથી અચેત બનેલ તે પ્રાણી કંચન કામિનીનો ઉપભોગ કરતો કરતો જ્યારે વૃદ્ધાવસ્થાનો મહેમાન થાય છે અને પોતાનો મરણકાળ નિકટ આવેલો જાણીને શોકાતુર બની વિચારે છે કે ‘ મને અભાગીને ધિક્કાર છે કે મેં યોગ્ય અવસરની પ્રાપ્તિ હોવા છતાં પણ સુખદાયી ધર્મનું આરાધન ન કર્યું. રાત્રિન યૌવન અને ધનના મદથી ઉન્મત્ત બની અશુભનો જ સંગ્રહ કર્યો, તેનું ફળ શું મળશે ? એ વાતનો જરા પણ વિચાર ન કર્યો. હવે વૃદ્ધાવસ્થા આવી તેમાં જે જે કષ્ટોનો હું અનુભવ કરી રહ્યો છું તે બધા પૂર્વમાં ઉપાર્જિત અશુભ પરિણતિનું જ

નાચરિતઃ' ઇતિ શોકં કરોતિ । અશુભસ્ય પરિણતિમનવધાયૈવ તત્ર યા પ્રવૃત્તિર્વિહિતા સા વાર્ધક્યે દુઃસ્વદા ભવતિ । ઉક્તञ્ચ—

“ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,  
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।  
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,  
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥

‘જૂર્યતે’ ઇત્યાદેરર્થસ્તુ પૂર્વવત્ । અતો મેધાવિના પૂર્વં કાર્યં પરિણતિમાલોચ્યૈવ કરણીયં, યેન પશ્ચાત્ પશ્ચાત્તાપો ન ભવેત્ । ઉક્તञ્ચ—

મેં ઉપાર્જિત અશુભ-પરિણતિ કે હી ફલરૂપ હૈં । નીચે કે શ્લોક મેં યહી બાત પ્રકટ કી ગઈ હૈ, જૈસે—

“ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,  
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।  
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,  
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

વૃદ્ધ અપને કો દુઃસ્વી દેશ્વકર સ્મરતા હૈ, માનસિક એવં શારીરિક અનેક કષ્ટોં કા અનુભવ કરતા હૈ । દુઃસ્વી હોને પર અપની કુલમર્યાદા કા બી ધ્યાન નહીં રખતા । ઇસલિયે બુદ્ધિમાન્ પુરુષ કા કર્તવ્ય હૈ કિ પ્રત્યેક કાર્ય કે પ્રારમ્ભ-કાલ મેં ઉસકે ફલાફલ કા વિચાર કર ઉસ કાર્ય કે કરને મેં પ્રવૃત્તિ કરે । વિના વિચારે તથા ઉસકી સારતા એવં અસારતા કી પૂરી વિચારણા કિયે વિના કોઈ બી કાર્ય નહીં કરના ચાહિયે, નહીં તો પશ્ચાત્તાપ કે સિવાય ઓર કોઈ ફલ હાથ નહીં લગતા

ફળરૂપ છે. નીચેના શ્લોકમાં એજ વાત પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. જેમ—

“ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,  
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।  
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,  
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ.

વૃદ્ધ પોતાને દુઃખી દેખીને બુરે છે, માનસિક અને શારીરિક અનેક કષ્ટોનો અનુભવ કરે છે. દુઃખી થવાથી પોતાની કુલમર્યાદાનો પણ ખ્યાલ રાખતો નથી. તેથી બુદ્ધિમાન પુરુષનું કર્તવ્ય છે કે પ્રત્યેક કાર્યના પ્રારંભકાળમાં તેના ફળાફળનો વિચાર કરી તે કાર્યમાં પ્રવૃત્તિ કરે. વિચાર્યા વગર તથા તેની સારતા અને અસારતાની પૂરી તપાસ કર્યા વિના કોઈ પણ કાર્ય કરવું બેઠું એ નહિ. નહિ તો પશ્ચાત્તાપ સિવાય



“उचितमनुचितं वा कुर्वता कार्यमादौ  
परिणतिरवधार्या यत्नतः पण्डितेन ।  
अतिरभसकृतानां कर्मणामाफलाप्ते,—  
भवति हृदयदाही शल्यतुल्यो विपाकः” ॥ १ ॥ इति ।

अतः परिग्रहकारणं शब्दादिकामगुणोऽवश्यमुन्मूलनीयो मुनिनेति  
तात्पर्यम् ॥ सू० ८ ॥

कः शोकादिकं न प्राप्नोतीति दर्शयति—‘आययचक्खू’ इत्यादि ।

मूलम्—आययचक्खू लोगविपस्सी लोगस्स अहोभागं जाणइ,  
उड्डं भागं जाणइ, तिरियं भागं जाणइ, गड्ढिए लोए अणु-  
परियट्टमाणे संधिं विइत्ता इह मच्चिएहि, एस वीरे पसंसिए जे  
बद्धे पडिमोयए, जहा अंतो तहा बाहिं, जहा बाहिं तहा अंतो,  
अंतो अंतो पूइदेहंतराणि पासइ पुढो वि सवताइं पंडिए  
पडिलेहए ॥ सू० ९ ॥

है । नीचे के पद्य में यही बात दिखलाई गई है, जैसे—

“उचितमनुचितं वा कुर्वता कार्यमादौ,  
परिणतिरवधार्या यत्नतः पण्डितेन ।  
अतिरभसकृतानां कर्मणामाफलाप्ते,—  
भवति हृदयदाही शल्यतुल्यो विपाकः” ॥ १ ॥

इसलिये मुनिजन का कर्तव्य है कि वे जैसे भी हो सके परिग्रह  
के कारणभूत इन पूर्वोक्त कामगुणों का उन्मूलन करें ॥ सू० ८ ॥

भीष्मं कांश्च पशु क्षण भणतुं नथी. नीथेना पद्यमां आञ् वात अताववामां आवी  
छे, जेम—

“उचितमनुचितं वा कुर्वता कार्यमादौ,  
परिणतिरवधार्या यत्नतः पण्डितेन ।  
अतिरभसकृतानां कर्मणामाफलाप्ते,—  
भवति हृदयदाही शल्यतुल्यो विपाकः” ॥ १ ॥ इति ।

भाटे मुनितुं कर्तव्य छे के न्यां सुधी अने न्यां सुधी परिश्रुना. कारणभूत  
आ पूर्वोक्त कामगुणेतुं उन्मूलन करे. ॥ सू. ८ ॥



છાયા—આયતચક્ષુર્લોકવિદર્શી લોકસ્યાધોભાગં જાનાતિ, ऊर्ध्व ભાગં જાનાતિ, તિર્યશ્ચં ભાગં જાનાતિ, ગૃદ્ધો લોકોઽનુપરિવર્તમાનઃ સન્ધિં વિદિત્વા ઇહ મર્ત્યેષુ, एष वीरः प्रशंसितो यो बद्धान् परिमोचयति, यथाऽन्तस्तथा बाह्वं, यथा बाह्वं तथाऽन्तः, अन्तः अन्तः पूतिदेहान्तराणि पृथगपि स्रवन्ति पण्डितः प्रत्युपेक्षेत । ૧।

ટીકા—‘આયતચક્ષુરિત્યાદિ । આયતચક્ષુઃ=આયતં=દીર્ઘ ચક્ષુઃ=જ્ઞાનચક્ષુર્યસ્ય સ આયતચક્ષુઃ=એહિકપારત્રિકદુઃસ્વદર્શી—‘કામા નિયમતોઽનર્થબહુલાઃ’ ઇત્યવધાર્ય તાન્ વિદ્યાયાઽઽત્મસુખાનુભવીત્યર્થઃ । કિંચ લોકવિદર્શી, લોકં વિષયાસન્ને ક્લિષ્ટમાનં જનં વિ=વિશેષેણ=કામાભિષ્વજ્ઞેન લોકે દુઃસ્વાધિક્યં, તત્યાગેન ચ પ્રશમસુખં ભવતિ ’ ઇત્યેવંરૂપેણ દ્રષ્ટું શીલં યસ્ય સ લોકવિદર્શી—લોકદુઃસ્વાભિજ્ઞઃ,

શોકાદિકોં કો કૌન પ્રાપ્ત નહીં કરતા ? ઇસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘આયયચક્ષુ’ ઇત્યાદિ ।

ઇહલોકસમ્બન્ધી ઔર પરલોકસમ્બન્ધી દુઃખોં કા જ્ઞાન જિસસે હોતા હૈ એસે જ્ઞાનચક્ષુ કા હી યહાં પર ચક્ષુ-શબ્દ સે ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । ઉભયલોકસમ્બન્ધી દુઃખોં કે જ્ઞાન સે હી ઉસ ચક્ષુ મેં આયતતા પ્રકટ કી ગઈ હૈ । ઇસી આભ્યન્તર ચક્ષુ સે યહ જાના જાતા હૈ કિ કામગુણ નિયમ સે અનર્થકારી હૈ । અતઃ ઇનકા પરિત્યાગ કર આત્મસુખ કા અનુભવશાલી હોના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કે પવિત્ર વિચાર સે જો ઉસ સુખ કા અનુભવી હૈ, તથા જો લોકવિદર્શી હૈ—અર્થાત્ જો ઇસ વાત કો જાનતા હૈ કિ યહ લોક વિષયોં કે સમ્બન્ધ સે હી અધિક દુઃખી હો રહા હૈ, યદિ પ્રશમ સુખ યહાં પર હો સકતા હૈ તો ઉનકે સચ્ચે ત્યાગ સે હી હો સકતા હૈ । ઇસ પ્રકાર સે જિસકે દેખને કા સ્વભાવ હૈ ઉસકા

શોકાદિકને કેાણુ પ્રાપ્ત નથી કરતા તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘આયય-ચક્ષુ’ ઇત્યાદિ.

આ લોકસંબંધી અને પરલોકસંબંધી દુઃખોનું જ્ઞાન બેને થાય છે એવા જ્ઞાનચક્ષુને આ કેાણુ ચક્ષુ-શબ્દથી ગ્રહણ કરેલ છે. બન્ને લોકસંબંધી દુઃખોના જ્ઞાનથી જ તે ચક્ષુમાં આયતતા પ્રગટ કરેલ છે. આ આભ્યન્તર ચક્ષુથી એમ બાણવામાં આવે છે કે કામચુણ નિયમથી અનર્થકારી છે, માટે તેનો પરિત્યાગ કરી આત્મસુખના અનુભવશાળી બનવું બેઠાયો. આવા પ્રકારના પવિત્ર વિચારથી જ તેવા સુખના અનુભવી છે, તથા જ લોકવિદર્શી છે અર્થાત્ જ આ વાતને બાણ છે કે આ લોક વિષયોના સંબંધથી જ અધિક દુઃખી બની રહેલ છે. કદાચ પ્રશમ સુખ અહીં બની શકતું હોય તો તેના સાચા ત્યાગથી જ બની શકે છે. આવા પ્રકારથી બેને દેખવાનો સ્વભાવ છે તેનું નામ લોક-

યદ્વા લોકસ્ય=પશ્ચાસ્તિકાયરૂપસ્ય વિ=વિશેષમ્ ઉર્ધ્વાધસ્તિર્યગ્ગતિસુખદુઃસ્વાયુઃ-  
કારણકર્મરૂપં દ્રષ્ટું શીલં यस્ય સ લોકવિદર્શી । તદેવાહ-‘લોકસ્યે-’ ત્યાદિ । લોકસ્ય  
અધોભાગં=નિમ્નભાગં ભવનપતિનારકાદિનિવાસસ્થાનરૂપં જાનાતિ=જ્ઞાનવિષયી-  
કરોતિ, એવમ્, ઉર્ધ્વ ભાગમ્=ઉપરિતનભાગં સૌધર્મકલ્પાદિરૂપં જાનાતિ, તથા  
તિર્યગ્ ભાગં=મધ્યભાગં પશુપક્ષિ-મનુષ્યાદિનિવાસસ્થાનરૂપં જાનાતિ, લોકવિ-  
દર્શી યેન કર્મવિપાકેન યસ્મિંલોકે યસ્ય પ્રાણિનો જન્મ ભવતિ તત્સર્વ જાનાતીત્યર્થઃ ।

યદ્વા—‘લોકવિદર્શી’ લોકં=પરિગ્રહાદ્યર્જનતત્પરં ગૃહં વિશેષેણ દ્રષ્ટું શીલં  
યસ્ય સ લોકવિદર્શી । તદેવ દર્શયતિ ‘ગૃહઃ’ इत्यादि । ‘ગૃહઃ’=કામભોગમૂર્ચ્છિતો  
લોકઃ=જનઃ અનુપરિવર્તમાનઃ=ચતુર્ગતિષુ ભૂયો ભૂયો જન્મમરણે પ્રાપ્નુવન્ વર્તતે’

નામ લોકવિદર્શી હૈ । અથવા પશ્ચાસ્તિકાયરૂપ ઇસ લોક કે ઉર્ધ્વલોક,  
અધોલોક એવં તિર્યગ્લોક કે સુખ દુઃખ ઓર આયુબંધ કે કારણરૂપ કર્મ  
કો જાનને કા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ બી લોકવિદર્શી હૈ । લોકવિદર્શી  
ભવનપતિ ઓર નારકી આદિ કે નિવાસસ્થાનભૂત અધોભાગ કો,  
તથા સૌધર્મકલ્પાદિ રૂપ ઉર્ધ્વભાગ કો ઓર પશુ, પક્ષી, મનુષ્યાદિકા  
નિવાસસ્થાનરૂપ મધ્ય લોક કો જાનતા હૈ । કહને કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ  
લોકવિદર્શી જિસ કર્મકે વિપાક સે જિસ લોક મેં જિસ જીવ કા જન્મ  
હોતા હૈ ઇસ સબ વિષય કો ભલીભાંતિ જાનતા હૈ ।

અથવા પરિગ્રહાદિક કે ઉપાર્જન તથા સંગ્રહ કરને મેં તત્પર ઓર  
કામભોગ મેં મૂર્ચ્છિત એસે ઇસ લોક કો વિશેષ રીતિ સે દેખને કા જિસ  
કા સ્વભાવ હૈ વહ બી લોકવિદર્શી હૈ । વહ યહ બાત બી જાનતા હૈ કિ  
જો પ્રાણી કામભોગોં મેં આસક્ત હૈં વે ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ સંસાર મેં વારં-

વિદર્શી છે, અથવા પશ્ચાસ્તિકાયરૂપ આ લોકને, ઉર્ધ્વલોક, અધોલોક અને તિર્યગ્-  
લોકના સુખદુઃખ અને આયુબંધના કારણરૂપ કર્મને જાણવાનો જેનો સ્વભાવ  
છે તે પણ લોકવિદર્શી છે. લોકવિદર્શી ભવનપતિ અને નારકી આદિના નિવા-  
સસ્થાનભૂત અધોભાગને, તથા સૌધર્મકલ્પાદિરૂપ ઉર્ધ્વભાગને, અને પશુ, પક્ષિ,  
મનુષ્યાદિના નિવાસસ્થાનરૂપ મધ્યલોકને જાણે છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે-  
લોકવિદર્શી જે કર્મના વિપાકથી જે લોકમાં જે જીવનો જન્મ થાય છે તે અથવા  
વિષયને સારી રીતે જાણે છે.

અથવા પરિગ્રહાદિકનું ઉપાર્જન, તથા સંગ્રહ કરવામાં તત્પર અને કામ-  
ભોગોમાં મૂર્ચ્છિત એવા આ લોકને વિશેષ-રીતિથી દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે  
પણ લોકવિદર્શી છે. તે એ વાત પણ જાણે છે કે-જે પ્રાણી કામભોગોમાં  
આસક્ત છે તેનું ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમાં વારંવાર જન્મ અને મરણ થયા કરે છે.



इत्यादिकमपि जानातीति सम्बन्धः । इह=अर्द्धतृतीयद्वीपरूपे लोके मर्त्येषु=मनुष्य-जन्मसु सन्धि=भावसन्धि-ज्ञानादिरत्नत्रयसमाराधनावसरं विदित्वा=ज्ञात्वा शब्दा-दिविषयान् यो जहाति स एषः=पूर्वोक्त आयतचक्षुर्लोकविदर्शी सन्धिपरिज्ञाता वीरः=कर्मविदारणसमर्थः प्रशंसितः=तीर्थङ्करादिभिरभिनन्दितः, य ईदृशः स एव परान् मोचयितुं समर्थ इत्याह-‘जे बद्धे’ इत्यादि । यः स्वयं द्रव्यभावरूपेण बन्धनेन विमुक्तः स एव बद्धान्=कर्मपाशनिगडितान् इतरानपि प्रतिमोचयति=संसार-सारताप्रदर्शनरूपसदुपदेशेन संसारकारागृहादपनयति । यः स्वयं मुक्तः स एव पर-मोचको भवतीति भावः ।

बार जन्म और मरण करते रहते हैं । इस अर्द्धाई द्वीप में मनुष्य-जन्म में ही जीवों को ज्ञानादिकरत्नत्रय की आराधना करने का अवसर मिलता है-अन्यत्र नहीं, अतः शब्दादिक विषयों का जो परित्याग करता है ऐसा वह पूर्वोक्त आयतचक्षुसंपन्न लोकविदर्शी और संधिपरि-ज्ञाता वीर कर्मों के विनाश करने में शक्तिशाली होता है, और ऐसे ही वीर पुरुष की तीर्थकरादि महापुरुषों ने प्रशंसा की है । ऐसे मनुष्य ही द्रव्य और भाव-बंधन से रहित होते हुए अन्य-दूसरे कर्मरूपी पाश से जकड़े हुए संसारी जीवों को भी संसार की असारता प्रदर्शन करनेवाले अपने उपदेशों से प्रतिबोधित कर इस संसाररूपी कारागार के बंधन से रहित कर देते हैं । बात भी ठीक है; जो स्वयं मुक्त होता है वही दूसरों को मुक्त करनेवाला होता है ।

જ્ઞાની, અપને તથા પર કો હસ સંસારરૂપી કારાગાર કે બંધન સે કૈસે

આ અઢી દ્વીપમાં મનુષ્ય-જન્મમાં જ જીવોને જ્ઞાનાદિક રત્નત્રયની આરા-ધના કરવાનો અવસર મળે છે, અન્યત્ર નહિ. માટે શબ્દાદિક વિષયોનો જે પરિ-ત્યાગ કરે છે, એવા તે પૂર્વોક્ત આયતચક્ષુસંપન્ન, લોકવિદર્શી અને સંધિ-પરિજ્ઞાતા, વીર - કર્મોનો વિનાશ કરવામાં શક્તિશાળી થાય છે. અને એવા જ વીર પુરુષની તીર્થંકરાદિ મહાપુરુષોએ પ્રશંસા કરેલ છે. એવા મનુષ્ય જ દ્રવ્ય અને ભાવબંધનથી રહિત થઈને અન્ય-બીજા કર્મરૂપી પાશથી જકડાયેલાં સંસારી જીવોને પણ સંસારની અસારતા પ્રદર્શિત કરવાવાળા પોતાના ઉપદેશોથી પ્રતિબોધિત કરી આ સંસારરૂપી કારાગારના બંધનથી રહિત કરી દે છે. વાત પણ ઠીક છે, જે સ્વયં મુક્ત બને છે તે જ બીજાને મુક્ત કરવાવાળા બને છે. જ્ઞાની પોતાને તથા બીજાને આ સંસારરૂપી કારાગારના બંધનથી કેવી રીતે



કેન પ્રકારેણ સ્વપરાત્માનં પ્રતિમોચયતીતિ જિજ્ઞાસાયાં શરીરામેધ્યત્વ-નિસ્સાર-ત્વ-પ્રદર્શનપુરસ્સરં નિર્વેદ-જનનેનેત્યાહ—‘યથાઽન્તઃ’ ઇત્યાદિ । યથા=યેન પ્રકારેણ અન્તઃ=શરીરસ્યાભ્યન્તરે શુક્રશોણિતમેદોમજ્જાવસાસ્થ્યાદિપૂર્ણતયા નિઃસારતાઽસ્તિ તથૈવ બહિઃ=શરીરસ્ય બહિર્ભાગેઽપિ શ્લેષ્મશિઙ્ગાણમૂત્રપુરીષાદયો મલાઃ નિઃસરન્તિ, ઇતિ નિઃસારતા દ્રષ્ટવ્યા । एवं યથા—યાદૃશા=બહિર્નવભિદ્વારૈર્મલા નિઃસરન્તિ તથા=તાદૃશાસ્તે મલા અન્તરપિ વર્તન્તે । શરીરં હિ—અતિજુગુપ્સિતશુક્રશોણિતસંયોગાદુત્પન્નત્વેનાતિઘૃણિતમૂત્રપુરીષપૂત્યાદેર્નિષ્પન્દમાનતયા ચાન્તર્બહિરત્યન્તામેધ્યમેવ ।

હુડાતા હૈ? इस प्रकार की जिज्ञासा का समाधान करने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि—‘यथान्तस्तथा बाह्य’—मिति । संसार में समस्त अज्ञानी जीवों को जितना मोह अपने शरीर पर होता है उतना किसी पर भी नहीं होता । अपने शरीर की संभाल के लिये प्रत्येक प्राणी अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु तक की भी उपेक्षा कर दिया करता है । अतः जिस शरीर पर अज्ञानी का इतना अधिक मोह होता है, ज्ञानी जीव उसी की असारता प्रकट कर उससे मोही जीवों का अनुराग घटाने के लिये कहते हैं कि—जिस प्रकार यह शरीर भीतर से शुक्र, शोणित, मेद, मज्जा, वशा और अस्थ्यादि अशुचि पदार्थों से युक्त है—अर्थात् इस शरीर के भीतर इन अपवित्र वस्तुओं का जमघट है उसी प्रकार बाहर में भी यह शरीर श्लेष्म-कफ, मूत्र, पुरीषादि से सदा घृणित बना रहता है । इन अपवित्र पदार्थों को बहाने के लिये जैसे इसमें नवद्वार हैं, उसी तरह भीतर भी हैं । यह अतिजुगुप्सित-घृणित शुक्र और शोणित के संयोग

છોડાવે છે? તે પ્રકારની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—‘યથાન્તસ્તથા બાહ્ય’—મિતિ । સંસારમાં સમસ્ત અજ્ઞાની જીવોને જેટલો મોહ પોતાના શરીર ઉપર હોય છે એટલો બીજા ઉપર હોતો નથી. પોતાના શરીરની સંભાળ માટે પ્રત્યેક પ્રાણી પોતાની પ્રિયમાં પ્રિય વસ્તુની પણ ઉપેક્ષા કરી દે છે. માટે જે શરીર ઉપર અજ્ઞાનીનો આટલો અધિક મોહ હોય છે, જ્ઞાની જીવ તેનીજ અસારતા પ્રગટ કરી તેનાથી મોહી જીવોનો અનુરાગ ઘટાડવા માટે કહે છે કે—જે પ્રકારે આ શરીર બીતરથી શુક્ર, લોહી, મેદ, મજ્જા, વસા અને અસ્થિ આદિ અશુચિ પદાર્થોથી યુક્ત છે, અર્થાત્ આ શરીરની બીતર એ અપવિત્ર વસ્તુઓનો જમાવ છે તે પ્રકારે બહાર પણ આ શરીર શ્લેષ્મ-કફ, મૂત્ર, પુરીષાદિથી સદા ઘૃણિતજ બન્યું રહે છે. આ અપવિત્ર પદાર્થોને બહાર નિકળવા જેમ તેનાં નવ દ્વાર છે તે પ્રકારે બીતરમાં પણ છે. એ અતિજુગુપ્સિત-ઘૃણિત

યથા શલ્યહસ્તવૈદ્યોઽનાથમૃતકં તૃણૈર્વેષ્ટયિત્વા સપ્તાહં યાવજ્જલે સંસ્થાપ્ય શ્નેઃ શ્નેસ્તસ્ય કથિતમાંસમપાકૃત્ય દર્શયતિ-પશ્યન્તુ ભવન્તઃ, શરીરમિદં યથાઽન્તસ્તથા બહિર્યથા વહિસ્તથાઽન્તઃ, સર્વં ચ શરીરં ત્વદ્માંસશોણિતજાઠરાન્નમૂત્રપુરીષાઘશુચિ-પિણ્ડરૂપમેવાતઃ શરીરે કઃ શુચિવાદઃ? । અશુચૌ ચ શરીરે મુધૈવ મોહોઽજ્ઞાનિનામ્ । યદ્વા-કુષ્ઠાદિના જાયમાનાં તસ્ય દુર્દશાં દર્શયતિ-‘યથાઽન્તઃ’ ઇત્યાદિ ।

ગલત્કુષ્ઠિનો યથા અન્તઃ=શરીરમધ્યે મૂત્રપુરીષખેલશિઙ્ગાણપિત્તશોણિત-સે ઉત્પન્ન હોને કી વજહ સે, તથા અતિમલિન મૂત્ર, પુરીષ આદિ કો બહાને વાલા હોને સે ખીતર ઓર બાહર સદા અત્યન્ત અપવિત્ર હી હૈ ।

જેસે કોઈ ડૉક્ટર અનાથ મૃતક કો તૃણો સે લપેટ કર સાત દિન તક જલ મેં ઉસે રાખ દેતા હૈ ઓર જબ ઉસકા ચમડા ધીરે ૨ સડ-ગલ જાતા હૈ તબ ઉસ ચમડે કો વહ ઉસકે ઉપર સે નિકાલકર ઉસકે અસ્થિપંજર કો દિશ્વલાકર કહતા હૈ કિ-દેલિયે, યહ શરીર જિસ પ્રકાર ખીતર હૈ ઉસી પ્રકાર બાહર હૈ । યહ સમસ્ત શરીર ચમડા, માંસ, શોણિત, પેટ સંબંધી આતે, મૂત્ર ઓર પુરીષાદિ અશુચિ પદાર્થોં કા પિણ્ડ-રૂપ હી હૈ ; અતઃ ઇસ શરીર મેં શુચિતા કી માન્યતા કહાં તક શોભા-સ્પદ માની જા સકતી હૈ ? અશુચિ શરીર મેં વ્યર્થ હી અજ્ઞાની જન મોહ કરતે હૈ । તથા-કુષ્ઠાદિક સે જિસ સમય ઇસ શરીર કી દુર્દશા હોતી હૈ ઉસ સમય કી પરિસ્થિતિ કા ધ્યાન દિલાતે હુઅ ખી યહ કહા જાતા હૈ કિ “યથાન્તસ્તથા બાહ્ય”-મિતિ ।

एक ऐसा भी कोढ़ होता है कि जिससे शरीर के प्रत्येक अंग उपांग

શુક અને લોહીના સંયોગથી ઉત્પન્ન થવાથી તથા અતિમલિન મૂત્ર, પુરીષ આદિને વહાવવાવાળા હોવાથી ભીતર અને બહાર સદા અત્યંત અપવિત્ર જ છે.

જેમ કોઈ ડૉક્ટર અનાથ મૃતકને ઘાસથી લપેટી સાત દિવસ સુધી જળમાં તેને રાખે છે અને જ્યારે તેનું ચામડું ધીરે ધીરે સડી સડી ગળી જાય છે ત્યારે તે ચામડીને તેના ઉપરથી કાઢીને તેના અસ્થિપિંજરને દેખાડી કહે છે કે-દેખો, આ શરીર જેવી રીતે ભીતર છે તેવી રીતે બહાર છે, જે પ્રકારે બહાર છે તે પ્રકારે ભીતર છે. આ સમસ્ત શરીર-ચામડી, માંસ, શોણિત, પેટસંબંધી આંતરડા, મૂત્ર અને પુરીષાદિ અશુચિ પદાર્થોના પિંડરૂપ જ છે, માટે આ શરીરમાં શુચિતાની માન્યતા ક્યાં સુધી શોભાસ્પદ માની લેવામાં આવે ? અશુચિ શરીરમાં વ્યર્થ જ અજ્ઞાનીજન મોહ કરે છે.

તથા-કુષ્ઠાદિકથી જે વખતે આ શરીરની દુર્દશા થાય છે તે સમયની પરિસ્થિતિનું ધ્યાન આપીને પણ એ કહેવામાં આવે છે કે “યથાન્તસ્તથા બાહ્ય”-મિતિ.

એક એવો પણ કોઢ થાય છે કે જેનાથી શરીરના પ્રત્યેક અંગ ઉપાંગ



कृम्यादीनि भवन्ति तथा बहिः=शरीरबहिर्भागोऽपि पूयपूतिशोणितकृम्यादीनि स्रवन्ति भवन्ति । तदुपरि 'भिनभिनेति' शब्दं कुर्वाणैर्मक्षिकासहस्रैराक्रान्तं स्वशरीरं विज्ञाय स्वयमपि स्वात्मानं जुगुप्सते उद्विजते च । यच्छरीरदौर्गन्ध्येन सङ्क्रामकरोगभिया च यत्पाश्वं परिजनोऽपि नोपवेष्टुमुत्सहते ।

‘जहा अंतो तद्वा बाहिः’ इत्यादिना गूढतयोक्तमेवार्थं प्रकटीकुर्वन्नाह—‘अंतो अंतो’ इत्यादि । स आयतचक्षुर्लोकविदर्शी अन्तः अन्तः=शरीरस्य मध्ये मध्ये पूतिदेहान्तराणि—पूत्यन्तराणि=पूतिविशेषान्, तथा देहान्तराणि=देहावस्थाविशेषान् मांसरुधिरमेदोमज्जादिरूपाणि पूत्यन्तरदेहान्तराणीत्यर्थः, पश्यति=ज्ञानचक्षुषा विलोकयति,

गलने लग जाते हैं, इस रोगी को गलत्कुष्टी कहते हैं । इसके शरीर के भीतर जैसे मूत्र, पुरीष, खेल-कान का मैल, शिङ्घाण-नाक का मैल, पित्त, शोणित और कृम्यादिक होते हैं वैसे ही शरीर के बाहिरी भागों में भी पीब, शोणित और कीड़े वगैरह निकलते रहते हैं, हजारों मक्खियां भी भिन्-भिन् शब्द करती हुई उसके ऊपर मंडराती रहती हैं । ऐसी अपनी दशा देखकर वह स्वयं भी अपने से घृणा करने लग जाता है, और दुःखी भी होता रहता है । उसी समय उसके पास उस रोग के लग जाने के भय से तथा उसकी दुर्गंध से उसके परिजन तक भी बैठने की इच्छा तक भी नहीं करते । अतः इस शरीर की जब यह हालत हो तो फिर उसमें मोह करना ही व्यर्थ है ।

ज्ञानी जन तो इस शरीर को सदा अपवित्र जानकर राग करने का स्थान ही नहीं मानते, उनकी दृष्टि में तो इस देह के समस्त भाग ही अति

गणवा लागे છે, આ રોગીને ગલત્કુષ્ટી કહે છે. તેના શરીરની બીતર જેમ મૂત્ર-પુરીષ, બળખાં, કાનનો મેલ, શિઙ્ઘાણ-નાકનો મેલ, પિત્ત, શોણિત અને ચર-મીઠા આદિ થાય છે તેવી જ રીતે શરીરના બહારના ભાગમાં પણ પડ, શોણિત અને કીડા વિગેરે નીકળતા રહે છે. હજારો માખીઓ પણ બણ-બણ શબ્દો કરતી તેના ઉપર ફરતી રહે છે. એવી પોતાની દશા દેખીને તે પોતે પોતાની બાતની ઘૂણા કરવા લાગી બાથ છે, અને દુઃખી પણ બને છે. તે વખતે તે રોગના લાગી જવાના ભયથી તથા તેની દુર્ગંધથી તેના પરિજન પણ તેની પાસે બેસવાની ઇચ્છા કરતા નથી. માટે આ શરીરની તેવી સ્થિતિ બનતી હોય તો પછી તે શરીર ઉપર મોહ રાખવો વ્યર્થ છે.

જ્ઞાનીજન તો આ શરીરને સદા અપવિત્ર બાણીને રાગ કરવાનું સ્થાનજ માનતા નથી, તેની દૃષ્ટિમાં તો આ દેહના સમસ્ત ભાગ અતિ દુર્ગંધથી ઘૂણિતતર જ



તથા 'પુઢો વિ' પૃથગપિ=દેહાદ્ બહિરપિ 'સવંતાઈં' સ્વવન્તિ=નિઃસરન્તિ=સ્યન્દ-  
માનાનિ પૂતિદેહાન્તરાણિ-પૂત્યન્તરાણિ=વિકૃતદુર્ગન્ધરુધિરાણિ, દેહાન્તરાણિ=  
શ્લેષ્માદીનિ, કુષ્ઠરોગિણાં માંસાદીનિ ચ પશ્યતિ । યદ્યેવં તતઃ કિં કુર્યાત્ ?  
इत्याह—' पण्डितः ' इत्यादि । पण्डितः=परिज्ञातहेयोपादेयः, प्रत्युपेक्षेत=यथा-  
वस्थितरूपेण जानीयात् । एतत्सर्वं विदित्वाऽत्यन्ताशुचौ यौवनरूपसम्पन्नेऽपि  
शरीरे रागं न विदध्यादिति भावः । उक्तञ्च—

“ મંસદ્વિરુહિરળ્હારુવળદ્ધકલમલયમેયમજ્જાહિં ।

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે, દુગ્ગંધે અસુદ્ધીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુદ્ધેહમ્મિ ” ॥ ૨ ॥ इति ॥

દુર્ગંધ સે ઘૃણિતતર હૈં । યદિ ઉન ભાગોં કે દુર્ગંધ કી યાદ કી જાવે તો  
વમન તક ભી હો જાવે । તથા હસ દેહ મેં અપને ૨ સ્થાન મેં રહી હુઈ  
જો જો માંસ, રુધિર, મજ્જા, શુક્ર, વસા- (ચરબી) તથા હઢી વગેરહ  
ધાતુઈ ઉપધાતુઈ હૈં વે સબ હી, તથા કુષ્ઠાદિ-અવસ્થા મેં સમસ્ત હી  
ઇન્દ્રિયાં ગલ જાતી હૈં । અતઃ જ્ઞાની જન હસ ક્ષણવિનશ્વર એવં નિત્ય  
અશુચિ શરીર મેં મમતાશાલી નહીં હોતે હૈં । કહા ભી હૈ—

“ મંસદ્વિરુહિરળ્હારુવળદ્ધકલમલયમેયમજ્જાહિં,

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે, દુગ્ગંધે અસુદ્ધીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ, ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુદ્ધેહમ્મિ ” ॥ ૨ ॥ इति

ભાવાર્થે હસકા યહી હૈ કિ યહ દેહ માંસાદિક પદાર્થોં સે યુક્ત

છે. કહાચ તે ભાગોની દુર્ગંધની યાદ કરવામાં આવે તો ઉલટી પણ થાય છે.  
તથા આ દેહમાં પોતપોતાના સ્થાનમાં રહેલા જે જે માંસ, રુધિર, મેદ, મજ્જા,  
શુક્ર, ચરબી તથા હાડકાં વિગેરે ધાતુઓ, ઉપધાતુઓ છે તે બધી, તથા  
કુષ્ઠાદિ-અવસ્થામાં સમસ્ત ઇન્દ્રિયો પણ ગળી જવા માંડે છે, તેથી જ્ઞાનીજન  
આ ક્ષણવિનશ્વર અને નિત્ય અશુચિ શરીરમાં મમતાશાળી થતાં નથી. કહું પણ છે—

“ મંસદ્વિરુહિરળ્હારુવળદ્ધકલમલયમેયમજ્જાહિં ।

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે, દુગ્ગંધે અસુદ્ધીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુદ્ધેહમ્મિ ” ॥ ૨ ॥ इति,

ભાવાર્થે એ છે કે આ દેહ માંસાદિક પદાર્થોથી યુક્ત હોવાથી અશુચિ

છાયા—માંસાસ્થિરુધિરસ્નાયવનદ્વકલમલકમેદોમજ્જાભિઃ ।

પૂર્ણે ચર્મકોશે દુર્ગન્ધેઽશુચિવીભત્સે ॥ ૧ ॥

સંચારિમયન્ત્રગલદ્વર્ચોમૂત્રાન્ત્રસ્વેદપૂર્ણે ॥

દેહે ભવેત્તિકિ રાગકારણમ્ અશુચિહેતૌ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ॥ સૂ૦ ૯ ॥ સૂ૦

ઉક્તસ્વરૂપં શરીરં નિર્વર્ણ્ય કિં કરોતીતિ દર્શયતિ—‘સે મઇમં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે મઇમં પરિજ્ઞાય મા ચ હુ લાલપચ્ચાસી, મા તેસુ તિરિચ્છમપ્પાણમાવાયેઃ કાસંકસે સ્વલુ અયં પુરિસે, બહુમાઈ ક-  
ડેણ મૂઢે પુણો તં કરેઈ લોહં વેરં વડ્ઢેઈ અપ્પણો, જમિણં પરિક-  
હિજ્જઈ ઇમસ્સ ચેવ પરિવૂહણયાણ, અમરાયઈ મહાસડ્ઢી અટ્ટમેયં  
તુ પેહાણ અપરિણ્ણાણ કંદઈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—અથ મતિમન્ ! પરિજ્ઞાય મા ચ હુ લાલાપત્યાસી, મા તેષુ તિરશ્ચીન-  
માત્માનમાપાદયેઃ, કાસંકષઃ સ્વલુ અયં પુરુષઃ, બહુમાયી કૃતેન મૂઢઃ પુનસ્તત્કરોતિ  
લોભં વૈરં ચ વર્દ્ધયતિ આત્મનઃ, યદિદં પરિકથ્યતેઽસ્ય ચૈવ પરિવૂહણાય અમરાયતે  
મહાશ્રદ્ધી આર્તમેતં તુ પ્રેક્ષ્યાપરિજ્ઞાય ક્રન્દતિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

હોને કી વજહ સે અશુચિ, દુર્ગન્ધયુક્ત, વીભત્સ હૈ । ઇસમેં કોઈ બી એસી  
ચીજ નહીં હૈ જો જ્ઞાનીજન કે રાગ કા કારણ હો સકે, અતઃ જો હેયો-  
પાદેય કે જ્ઞાતા હૈં ઉનકા કર્તવ્ય હૈ કિ વે ઇસ શરીર કો જૈસા ઇસકા  
સ્વભાવ હૈ ઉસી રૂપ સે જાનેં । ઇસ સબકે કહને કા તાત્પર્ય યહી હૈ  
કિ યૌવન સે મદમાતે રૂપ સે યુક્ત બી ઇસ અત્યન્ત અપવિત્ર દેહ મેં  
પૂર્વોક્ત રીતિ સે કથિત ઇસ શરીર કા સ્વરૂપ સમજ્ઞકર જ્ઞાની-સંયમી  
મુનિ કો રાગ નહીં કરના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ॥ ૧ ॥

દુર્ગન્ધયુક્ત વીભત્સ છે. તેમાં એવી કોઈ પણ ચીજ નથી કે જેને માટે જ્ઞાની-  
જનો રાગનું કારણ માની શકે, માટે જે હેયોપાદેયના જ્ઞાતા છે તેનું કર્તવ્ય છે  
કે આ શરીરને જેવો તેનો સ્વભાવ છે તેવા રૂપમાં જ માને. આ સંધર્મ  
કહેવાનો મતલબ એ છે કે—યૌવનના મદમાતા રૂપથી યુક્ત પણ આ અત્યન્ત  
અપવિત્ર દેહમાં પૂર્વોક્ત રીતિથી કથિત આ શરીરનું સ્વરૂપ સમજીને જ્ઞાની  
સંયમી મુનિએ રાગ નહિ કરવો જોઈએ ॥ સૂ૦ ૬ ॥



ટીકા—‘અથ મતિમન્નિ’-ત્યાદિ । અથ કાયકામસ્વરૂપપરિજ્ઞાનાનન્તરં મતિ-મન્=હે મેધાવિન્ ! પરિજ્ઞાય=અશુચિ અશુચિસમ્ભવં ક્ષણમઙ્ગુરં ચ શરીરં કટુવિપાકં શબ્દાદિવિષયસ્વરૂપં ચ જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞયા પરિત્યજ્ય ‘ચ’ સમુચ્ચયે ‘હુ’—વાક્યાલઙ્કારે ‘લાલાપ્રત્યાશી’ લાલા=પ્રક્ષરદત્તુટનમુલસલિલં, તાં પ્રત્યશિતું=પુનરશિતું શીલં यस્ય સ લાલાપ્રત્યાશી=લાલાભક્ષી મા ભવ । યથા વિવે-કકલાવિકલો બાલો મુલનિસ્સૃતામધઃપતન્તીં લાલાં પુનઃ પુનરાસ્વાદયતિ તથૈવ ત્વમપિ પરિત્યક્તાનાં કામભોગાનાં પુનરભિલાષં મા કુરુષ્વેતિ તાત્પર્યમ્ । અપિ ચ તેષુ મિથ્યાત્વાવિરત્યાદિસંસારસ્રોતસ્સુ આત્માનં તિરશ્ચીનં=પ્રતિકૂલગામિનં પતન-શીલં મા આપાદયેઃ=મા કુરુ, જન્મ-મરણપ્રવાહે સ્વાત્માનં મા પાતયેત્યર્થઃ, શ્રુત-ચારિત્રલક્ષણપરમાનન્દે સ્થાપયેતિ ભાવઃ ।

જ્ઞાનીજન દેહ કા ઉક્ત સ્વરૂપ જાનકર કયા કરતે હૈં ? સો કહતે હૈં—‘સે મઙ્ગમં’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય કા સંબોધન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે મેધાવી શિષ્ય ! તુમ શરીર ઔર કામગુણ કે વર્ણિત સ્વરૂપ સે પરિચિત હો ચુકે હો, તથા યહ ભી જાન ચુકે હો કિ યહ શરીર સ્વયં અશુચિ તથા અશુચિ-કારણોં સે પૈદા હુઆ હૈં ; ઔર ક્ષણમઙ્ગુર હૈં, યે શબ્દાદિ વિષય ભી કટુકવિપાકવાલે હૈં, ઇસલિયે ઇન સબ વાતોં કો જ્ઞપરિજ્ઞા સે જાનકર ઔર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા સે ઇનકા પરિત્યાગ કર અબ લાલાપ્રત્યાશી-લાર ચાટને વાલા મત બનો । અર્થાત્ જિસ પ્રકાર વિવેકવિકલ બાલક મુલસે નીચે ગિરતી હુઈ અપની લાર કો બારંબાર ચાટતા હૈં ઁસી તરહ તુમ ભી પરિત્યક્ત ઇન કામભોગોં કો ફિર સે ભોગને કી અભિલાષા મત કરો । તથા મિથ્યાત્વ, ઔર અવિરતિ આદિ

જ્ઞાનીજન દેહનું ઉક્તસ્વરૂપ બાણીનેશું કરે છે, તે કહે છે ‘સે મઙ્ગમં’ ઇત્યાદિ.

શિષ્યને સંબોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે શરીર અને કામગુણના વર્ણિત સ્વરૂપથી પરિચિત બની ચૂકેલ છે, તથા એ પણ બાણી ચૂક્યા છે કે-આ શરીર સ્વયં અશુચિ તથા અશુચિ કારણોથી પેદા થયેલ છે, અને ક્ષણભંગુર છે. એ શબ્દાદિ વિષય પણ કટુકવિપાકવાલા છે, માટે આ સંઘળી વાતોને જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી બાણીને પ્રત્યાખ્યાત-પરિજ્ઞાથી તેનો પરિ-ત્યાગ કરી હવે લાલાપ્રત્યાશી-લાળચાટનારા ન બનો. અર્થાત્ જેવી રીતે વિવેકવિકલ બાળક મુખથી નીચે ટપકતી પોતાની લાળને વારંવાર ચાટે છે તે માફક તમે પણ પરિત્યક્ત આ કામભોગોને ફરીથી ભોગવવાની અભિલાષા ન કરો. તથા મિથ્યાત્વ અને



न प्रमादवतः शान्तिरिति दर्शयति=‘कासंकषः’ इत्यादि । अयं प्रमादी पुरुषः कासंकषः—कस्यते=पीड्यते प्राणी यैस्ते कासाः शब्दादिविषयास्तान् कषति=तदभिमुखं गच्छतीति ‘कासंकषः’ शब्दादिविषयलोलुपः । स हि समुदीयमान-भोगस्पृहोऽहर्निशं ‘कृतवानमुं करिष्ये चेमम्’ इत्यादिनानाविधसंकल्पविकल्पवशतः पदे पदे विषीदन्न कदाचिदपि शान्तिमुपलभमान इत्यर्थः । किं च बहुमायी=माया-जो संसार के स्रोत-कारण हैं, उनमें अपनी आत्मा को पतनशील मत बनाओ ; कारण कि ऐसा करने से जन्म और मरण के प्रवाह का कभी भी अंत नहीं आ सकेगा । अतः जो इस प्रवाह को रोकने की चाहना हो तो मिथ्यात्व आदि सांसारिक कारणों में अपने को मत फँसाओ, श्रुतचारित्ररूप परम आनन्द में ही अपने को स्थित करो ।

प्रमादी आत्मा को शांति नहीं मिलती है यह मानी हुई बात है; क्योंकि प्रमादी मनुष्य शब्दादि विषयों की ओर झुकता रहता है, उनमें लोलुपी बना रहता है, इसके चित्त में भोगों की इच्छा निरन्तर रहा करती है, “मैंने इसको किया, इसको अब करूँगा” इत्यादि अनेक संकल्प-विकल्पों के तांतों में फँसकर यह कभी भी सच्ची शांति का अनुभव नहीं कर सकता । क्षण-क्षण में विषादी बनता है, कारण कि इसका एक संकल्प पूरा होता है और दूसरे को पूर्ण करने के लिये आकुल-व्याकुल हो उठता है । जो शब्दादि-विषयों में लोलुप है उसका नाम कासंकष है । “कास्यते पीड्यते प्राणी यैस्ते कासास्तान् कषति=तदभि-

अविरति आदि જે સંસારના સ્રોત-કારણ છે તેમાં પોતાના આત્માને પતનશીલ બનાવો નહિ. કારણ કે એવું કરવાથી જન્મ અને મરણના પ્રવાહનો કોઈ વખત પણ અંત આવી શકશે નહિ. માટે જે આ પ્રવાહને રોકવાની આહવા લેાય તો મિથ્યાત્વ આદિ સાંસારિક કારણોમાં પોતાની જાતને ફસાવો નહિ. શ્રુતચારિત્ર-રૂપ પરમ આનંદમાં જ પોતાને સ્થિર કરો.

પ્રમાદી આત્માને શાંતિ મળતી નથી, એ માનેલી વાત છે, કારણ કે પ્રમાદી મનુષ્ય શબ્દાદિ વિષયોની તરફ ઝુકતા રહે છે, તેમાં લોલુપી બની રહે છે, તેના ચિત્તમાં ભોગોની ઇચ્છા નિરન્તર રહ્યા કરે છે. “મેં આ બનાવ્યું, આ વસ્તુને હમણા કંઈ છું અગર કરીશ” ઇત્યાદિ અनेક સંકલ્પ વિકલ્પોના તાંતામાં ફસીને તે સાચી શાંતિનો અનુભવ ક્યારેય પણ કરી શકતો નથી. ક્ષણે ક્ષણે વિષાદી બની રહે છે, કારણ કે તેનો એક સંકલ્પ પુરો થાય છે ત્યાં બીજાને પુરો કરવામાં આકુલ-વ્યાકુલ થઈ જાય છે. જે શબ્દાદિક વિષયોમાં લોલુપ છે તેનું નામ કાસંકષ છે, “કાસ્યતે પીડ્યતે પ્રાણીયૈસ્તે કાસાઃ, તાન્ કષતિ=તદભિમુખં

बहुलः नानाविधोपायैः परप्रतारणचतुर इत्यर्थः । शब्दादिविषयासक्तस्य कषायो-  
दयोऽवश्यम्भावी ततो 'बहुमायी'—त्युपलक्षणं क्रोधादीनां त्रयाणां, तेन 'बहुक्रोधी'  
इत्यादि भवति । अपि च 'कृतेन मूढः' कृतेन=कर्तव्येन मूढः=विकलः, कार्य-  
व्याकुलचित्तत्वेन भोजनादिसमये भोक्तुमप्यशक्नुवन् स पुनस्तन्मायादिकं तथा  
मुखं गच्छति-इति कासंकषः" अर्थात् जिनके द्वारा प्राणी दुःखित होते  
हैं उनका नाम कास है, और वे शब्दादि विषय हैं, इनकी ओर जो  
प्रवृत्ति करता है उसका नाम कासंकष है ।

शब्दादिक-विषयों में आसक्त प्राणी मायाबहुल होते हैं । अनेक  
प्रपंच रचकर दूसरों की प्रतारणा (ठगाई) करने का उनका ध्येय बना  
रहता है । इस कार्य में ये इतने चतुर होते हैं कि—भोले-भाले प्राणी इन  
की मायाचारी में बहुत जल्दी फँस जाते हैं । 'बहुमायी' पद अन्य क्रोध  
मान लोभ का उपलक्षक है । इससे शब्दादि-विषयों में फँसे हुए प्राणी  
बहुक्रोधी, बहुमानी, बहुलोभी होते हैं, ऐसा अर्थ भी इसी एक पद से  
गृहीत हो जाता है, कारण कि शब्दादिक विषयों में आसक्त प्राणियों के  
कषाय का उदय अवश्य होता है तथा ऐसे प्राणी कर्तव्य से भी विकल  
होते हैं अर्थात्—समयानुसार जो कर्म उन्हें करना चाहिये उनको नहीं  
करते । अन्य कार्यों में व्याकुलचित्त होने से, अधिक क्या कहा जाय ?;  
उनको खाने तक की भी फुरसत नहीं मिलती । रातदिन उन्हीं मायादिक

गच्छति-इति काસંકષઃ " અર્થાત્ જે દ્વારા પ્રાણી દુઃખિત થાય છે તેનું નામ કાસ  
છે અને તે શબ્દાદિ વિષય છે, તેની તરફ જે પ્રવૃત્તિ કરે છે તેનું નામ કાસંકષ છે.

શબ્દાદિક વિષયોમાં આસક્ત પ્રાણી માયાબહુલ હોય છે, અનેક પ્રપંચ  
રચીને બીજાને ઠગાવના તેનો ધ્યેય બની રહે છે. તે કાર્યમાં તે એટલો  
ચતુર હોય છે કે ભોળા પ્રાણી તેની માયાબળમાં બહુ જલ્દી ફસી જાય છે.  
બહુમાયીપદ અન્ય ક્રોધ માન લોભનો પણ ઉપલક્ષક છે, તેથી શબ્દાદિ વિષ-  
યોમાં ફસેલાં પ્રાણી બહુક્રોધી, બહુમાની અને બહુલોભી હોય છે, એવો  
અર્થ પણ તેના એક પદથી ગ્રહિત થઈ જાય છે, કારણ કે શબ્દાદિ વિષયોમાં  
આસક્ત પ્રાણિયોને કષાયનો ઉદય અવશ્ય થાય છે, તથા એવો આત્મા કર્તવ્યથી  
પણ વિકલ થાય છે, સમયાનુસાર જે કર્મ તેણે કરવું જોઈએ તેતો કરતો નથી,  
અન્ય કાર્યોમાં વ્યાકુળચિત્ત હોવાથી તેને અધિક શું કહેવું ?; ખાવાપીવાની પણ  
ફુરસદ મળતી નથી. રાતદિન તેવા માયાદિક કાર્યોમાં જ ફસી રહે છે, લોભ



કરોતિ યેન આત્મનો લોભં વૈરં ચ વર્દ્યયતે । શબ્દાદિવિષયાઽપ્રાપ્તિદુઃસ્વપીડિતો  
હિ કદાચિચ્છબ્દાદિવિષયાન્ પ્રાપ્નોત્યપિ કિન્તુ પરિણતિવિરસત્વાત્સેવિતા અપિ તે  
ચિરકાલદુઃસ્વદા એવ ભવન્તિ । ઉક્તઞ્ચ—

“ સ્વળમિત્તસુક્ષ્મા બહુકાલદુઃસ્વદા ” ઇતિ । યદર્થમાત્મનોઽનન્તસંસારજનકં  
વૈરમુત્પાદયતિ । તદાહ—‘ યદિદ ’—મિત્યાદિ । યદ્ યસ્માત્ અસ્યૈવ ક્ષણમહુરસ્ય  
શરીરસ્ય પરિબુંહણાય=પરિવર્દ્ધનાય—પુષ્ટ્યર્થે હિંસાઘનેકસાવધવ્યાપારાન્ કરોતિ,  
કાર્યોં કે કરને મેં હી ફેસે રહતે હૈં, લોભ ઓર વૈરભાવ કો બઢાતે રહતે  
હૈં । લોભ સે હી માયાચાર કરને મેં જીવોં કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । માયા-  
ચાર સે વૈરભાવ કી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । થોડી દેર કે લિયે માન લિયા જાય  
કિ શબ્દાદિવિષયોં કી અપ્રાપ્તિજન્ય દુઃસ્વોં સે પીડિત હુઆ પ્રાણી  
કદાચિત્ ઉન શબ્દાદિકવિષયોં કો પ્રાપ્ત કર મી લે, તો મી સેવન કિયે  
ગયે વે શબ્દાદિવિષય પરિણામ મેં વિરસ હોને સે ભવિષ્યકાલ મેં જીવોં  
કો ચિરકાલ તક દુઃસ્વદાયી હી હોતે હૈં । “ સ્વળમિત્તસુક્ષ્મા બહુકાલ-  
દુઃસ્વદા ”—યે વિષય ક્ષણમાત્ર સુસ્વરૂપ ભાસતે હુએ મી અનન્ત દુઃસ્વોં  
કે દેનેવાલે હોતે હૈં । જિનકે લિયે જીવ અનન્ત સંસાર કે જનક વૈર  
કો ઉત્પન્ન કરતા હૈ । ઉસી બાત કો સૂત્રકાર “ જમિણ ” ઇત્યાદિ સે સ્પષ્ટ  
કરતે હુએ કહતે હૈં—સંસાર મેં જીવોં દ્વારા હિંસાદિક અનેક સાવધ વ્યા-  
પારોં કે કરને મેં જો પ્રવૃત્તિ કી જાતી હૈ ઉસકા પ્રધાન કારણ એક નિજ  
શરીર કી પુષ્ટિ કરને કા મોહ હી હૈ । ઇસ પ્રકાર કે મોહ કે આધીન  
બના હુઆ જીવ સ્વયં અપને આપકો અનેક કષ્ટોં કો શેલતા હુઆ મી

અને વેરભાવને વધારતા રહે છે. લોભથી જ માયાચાર કરવામાં જીવોની પ્રવૃત્તિ  
થાય છે, માયાચારથી વેરભાવની વૃદ્ધિ થાય છે. થોડા વખતને માટે માની લ્યો  
કે શબ્દાદિ-વિષયોની અપ્રાપ્તિજન્ય દુઃખોથી પીડિત થયેલ પ્રાણી કદાચ તે  
શબ્દાદિક-વિષયોને પ્રાપ્ત કરી લે તો પણ ભોગવવામાં આવેલા તે શબ્દાદિ વિષય  
પરિણામમાં વિરસ થવાથી ભવિષ્યકાળમાં જીવોને ચિરકાલ સુધી દુઃખદાયી જ  
થાય છે. કેમ કે—“ સ્વળમિત્તસુક્ષ્મા બહુકાલદુઃસ્વદા ” આ વિષય ક્ષણમાત્ર સુખરૂપ  
લાગે છે પણ અનંત દુઃખોના દેવાવાળા હોય છે, જેના માટે જીવ અનંતસંસાર-  
જનક વૈરને ઉત્પન્ન કરે છે, આ વાતને સૂત્રકાર “ જમિણ ” ઇત્યાદિ પદોથી  
સ્પષ્ટ કરીને કહે છે—સંસારમાં જીવો હિંસાદિક અનેક સાવધ વ્યાપારો  
કરવામાં જે પ્રવૃત્તિ કરે છે તેનું પ્રધાન કારણ એક પોતાના શરીરની  
પુષ્ટિ કરવાનો મોહ જ છે. આવા પ્રકારના મોહને આધીન બનેલા જીવ પોતે  
પોતાની બાતને અનેક કષ્ટોથી દુઃખી બનાવતાં છતાં પણ સુખી માને છે, અને



સ્વયં ક્ષિયતે ચ । इदमपरं कथ्यते—‘अमरायते’ इत्यादि, ‘महाश्रद्धी’ महती वासौ श्रद्धाऽर्थकामविषया महाश्रद्धा, साऽस्ति यस्य स महाश्रद्धी—भोगेषु तत्साधनेषु चाति-श्रद्धावान् सन् अमरायते भोगवाञ्छयाऽर्थोपार्जनपर आत्मानममरमिव मन्यते । एतम्=अमरायमाणम् महाश्रद्धिनम् आर्तम्=शारीरमानसिकपीडापीडितं प्रेक्ष्य विवेकबुद्ध्या विचार्य, हे शिष्य ! शब्दादिविषये मनो न निधेयमिति भावः । यश्च भोगगृहः

सुखी मानता रहता है, और अर्थ, काम और विषयों एवं उनके साधनों के जुटाने में ही रात-दिन वह तल्लीन बना रहता है । उसके हृदय में सदा यही दृढ़ विश्वास काम करता रहता है कि—‘अर्थ कामादिक एवं उनके साधनों की प्राप्ति से ही जीवन सुखमय होता है, इनके बिना जीवन का कोई मूल्य नहीं । शारीरिक साता ही जीवन की साता है, यह बिना भोगों के होती नहीं, भोगों का भोगना भी बिना अर्थोपार्जन किये बनता नहीं, अतः वे भोगों की वाञ्छा से प्रेरित होकर अर्थोपार्जन करने में तत्पर होते रहते हैं और सब कुछ साधनसंपन्न हो जाने पर अपने आपको अमर मानने लग जाते हैं । इस प्रकार भोग और उनके साधनों में श्रद्धासंपन्न तथा अपने आपको अमर मानने वाले प्राणियों को हे शिष्य ! तुम कभी भी सुखी न समझो । वे तो सदा शारीरिक एवं मानसिक पीडाओं से व्यथित ही रहते हैं । ऐसा जानकर तुम शब्दादि-विषयों में अपने मनको कभी भी आसक्तियुक्त न करो ।

અર્થ, કામ તથા વિષયો અને તેના સાધનોને મેળવવામાં જ રાત દિવસ તટ્થીન બની રહે છે. તેના હૃદયમાં સદા એ જ વિશ્વાસ કામ કરતો રહે છે કે ‘અર્થ-કામાદિક અને તેના સાધનોની પ્રાપ્તિથી જ જીવન સુખમય થાય છે. તેના વિના જીવનનું કોઈ મૂલ્ય નથી. શારીરિક સાતા જ જીવનની સાતા છે. એના વિના ભોગો થતા નથી. ભોગોનું ભોગવવું અર્થ ઉપાર્જન કર્યા વિના થતું નથી, તેથી તે ભોગોની વાંછનાથી પ્રેરિત થઈને અર્થ ઉપાર્જન કરવામાં તત્પર રહ્યા કરે છે. અને બધાસાધનસંપન્ન બનવાથી ખોતે પોતાની બાતને અમર માનવા લાગી બાથ છે. આ પ્રકારે ભોગ અને તેના સાધનોમાં શ્રદ્ધાસંપન્ન તથા ખોતે પોતાની બાતને અમર માનવાવાળા પ્રાણીને હે શિષ્ય ! તમે કોઈ વખત પણ સુખી ન માનો. એ તો સદા શારીરિક અને માનસિક પીડાઓથી વ્યથિત જ રહે છે. એવું સમજીને તમે શબ્દાદિ વિષયોથી પોતાના મનને કોઈ વખત પણ આસક્તિ-યુક્ત ન કરો.

સોઽપરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયાઽનર્થકામં તદ્વિપાકં ચાબુદ્ધ્વા, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા ચ તમ-  
પરિત્યજ્ય ચ ક્રન્દતિ=ઇષ્ટવિષયાપ્રાપ્તૌ સ્પૃહાં, તન્નાશે શોકં ચાનુભૂયોચ્ચૈ રોદિતિ ।  
કામભોગાસક્તશ્ચતુર્ગતિકસંસારે ભ્રામં ભ્રામં નરકનિગોદાદિષ્વનન્તયાતનાં પ્રાપ્નો-  
તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામકટુવિપાકમુપદર્શ્ય સામ્પ્રતમુપસંહરતિ-‘સે તં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે તં જાણહ જમહં બેમિ, તેઝ્છં પંડિણ પવયમાણે  
સે હંતા છેત્તા મેત્તા લુંપિતા વિલુંપિતા ઉદ્ધવિતા, અકટં કરિસ્સા-  
મિત્તિ મન્નમાણે, જસ્સ વિય ણં કરેઝ્, અલં બાલસ્સ સંગેણં, જે વા  
સે કારઝ્ બાલે, ન એવં અણગારસ્સ જાયઝ્-ત્તિ બેમિ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા—તત્ (તસ્માત્) તજ્જાનીત યદહં બ્રવીમિ, ચૈકિત્સ્યં પષ્ટિતઃ પ્રવદન્  
સ હન્તા છેત્તા મેત્તા લુમ્પયિતા વિલુમ્પયિતા અપદ્રાવયિતા, અકૃતં કરિષ્યામિ—ઇતિ  
મન્યમાનઃ, યસ્મૈ અપિ ચ સ્વલુ કરોતિ, અલં બાલસ્ય સજ્ઞેન, યો વા તત્કારયતિ  
બાલઃ, ન એવમનગારસ્ય જાયતે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥ ઇતિ બ્રવીમિ ॥

“અપરિજ્ઞાય ક્રન્દતિ”—જો વિષય-ભોગોં મેં ગૃહ્ બને હુણે હૈં વે હન  
અર્થકામરૂપ ભોગોં કો ઓર હનકે વિપાક કો જ્ઞ-પરિજ્ઞા સે નહીં જાન-  
કર ઓર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા સે હનકા પરિત્યાગ નહીં કર, ઇષ્ટ વિષય  
કો પ્રાપ્તિ કો ઇચ્છા સે ઓર હસકે વિયોગ મેં શોક સે સદા આકુલ-  
વ્યાકુલ બને રહતે હૈં । કામ-ભોગોં મેં આસક્ત વે પ્રાણી ચતુર્ગતિરૂપ હસ  
સંસાર મેં બારંબાર ભ્રમણ કર નરક-નિગોદાદિ કો અનન્ત વેદનાઓં કો  
પાતે રહતે હૈં । ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામ કે કટુક વિપાક કો સ્પષ્ટકર અબ હસકા ઉપસંહાર કરતે  
હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘સે તં’ ઇત્યાદિ ।

“અપરિજ્ઞાય ક્રન્દતિ” જે વિષય ભોગોમાં ગૃહ્ બનેલા છે, તેઓ આ  
અર્થકામ-રૂપ ભોગોને અને તેના વિપાકને જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી નહિ જાણીને અને  
પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેનો પરિત્યાગ નહિ કરીને ઇષ્ટ વિષયની પ્રાપ્તિની ઇચ્છાથી  
તેના વિયોગમાં શોકથી સદા આકુળ-વ્યાકુળ બની રહે છે. કામભોગોમાં આસક્ત  
પ્રાણી ચતુર્ગતિ-રૂપ આ સંસારમાં વારંવાર ભ્રમણ કરી નરકનિગોદાદિની અનંત  
વેદનાઓને ભોગવતા રહે છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામના કટુક વિપાકને સ્પષ્ટ કરીને હવે તેનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર  
કહે છે—‘સે તં’ ઇત્યાદિ.



ટીકા—‘તદિત્યાદિ । યસ્માત્કામા દુઃખમૂલાઃ તત્તસ્માત્કારણાત્ યત્પૂર્વોક્તં વક્ષ્યમાણં વા અહં વ્રતીમિ તત્સર્વં યથાવસ્થિતં યૂયં જાનીત—‘કામભોગા હેયાઃ’ ઇતિ મદીયોપદેશમવશ્યં શૃણુતેત્યર્થઃ ।

નનુ ભવદુપદેશે કિં વૈલક્ષણ્યં યદુપદેશં વયં શૃણુમઃ, અન્યોપદેશાદપિ કામ-નિવૃત્તિર્ભવિતુમર્હતીતિ चेदाह—‘चैकित्स्य’—मित्यादि, पण्डितः=पण्डितस्मन्यः केवलं शब्दज्ञानी चैकित्स्यं कामचिकित्सामुत्पन्नरोगचिकित्सामिव कामसेवनमेव

हे शिष्य ! काम सदा दुःखों के मूल-कारण हैं, इसलिये इस विषय में पहिले जो कुछ कहा गया है, अथवा आगे भी जो कुछ कहा जावेगा वह सब यथार्थ है; इसमें थोड़ा सा भी संदेह के लिये स्थान नहीं है, ऐसा तुम विश्वास रखो । ‘कामभोग सदा हेय हैं’ यही हमारा उपदेश है । इस उपदेश की पुष्टि इस प्रकार से कामभोगों में हेयता के प्रदर्शन से भलीभांति हो जाती है । अतः मोक्षाभिलाषीजन को इस उपदेश का श्रवण करना चाहिये । इस प्रकार से शिष्यों के प्रति सूत्रकार का आदेश है ।

प्रश्न—इस आपके उपदेशमें ही ऐसी क्या विलक्षणता है जिसके लिये यह उपदेश अवश्य सुना जाय, अन्य के उपदेश से भी कामादिक की निवृत्ति हो सकती है ? ।

उत्तर—जो सिर्फ शब्दज्ञानी हैं, अपने आपको विद्वान् मानते हैं

હે શિષ્ય ! કામ સદા દુઃખોનું મૂળ કારણ છે. માટે આ વિષયમાં પહેલાં જે કાંઈ કહેવામાં આવેલ છે અથવા આગળ પણ કહેવામાં આવશે તે સઘળું યથાર્થ છે. તેમાં જરા પણ સંદેહનું સ્થાન નથી. એવો તમે વિશ્વાસ રાખો. કામભોગ સદા હેય—ત્યાજ્ય છે. એજ અમારો ઉપદેશ છે. આ ઉપદેશની પુષ્ટિ આ પ્રકારથી કામભોગોમાં હેયતાના પ્રદર્શનથી ભલી ભાંતિ થાય છે. માટે પ્રત્યેક મોક્ષાર્થીએ આ ઉપદેશનું શ્રવણ કરવું જોઈએ. આ પ્રકારથી શિષ્યો પ્રતિ સૂત્રકારનો આદેશ છે.

પ્રશ્ન—આ આપના ઉપદેશમાં એવી કઈ વિલક્ષણતા છે જેના માટે આ ઉપદેશ અવશ્ય સાંભળવો પડે. બીજાના ઉપદેશથી પણ કામાદિકની નિવૃત્તિ થઈ શકે છે ?

ઉત્તર—જે ફક્ત શબ્દજ્ઞાની છે, પોતે પોતાને વિદ્વાન માને છે એવી વ્યક્તિ



તચ્ચિકિત્સાં પ્રવદન્ સઃ=મિથ્યોપદેષ્ટા પરતીર્થિકો વિવિધસાવધવ્યાપારપ્રવૃત્તો ભવતિ । તદેવાહ—‘હન્તે’ત્યાદિ । હન્તા દણ્ડાદિના, હેત્તા સ્વઙ્ગાદિના, મેત્તા મહાકાદિના, હુમ્પયિતા ગ્રન્થિચ્છેદાદિના, વિહુમ્પયિતા આક્રમણાદિના, અપદ્રાવયિતા પ્રાણાતિપાતાદિના ભવતિ । કિં કૃત્વૈતાદૃક્સાવધવ્યાપારકારી ભવતીત્યાહ—‘અકૃતં’ યદન્યેન કેનાપિ પૂર્વે કામચિકિત્સનં ન કૃતં તદહં કરિષ્યે, इति=इत्थं मन्यमानः सः, यस्यै चोपदिशति सः, तदुभयमपि न केवलमुपदेष्टैव हननच्छेदन-

ऐसे व्यक्ति ‘कामभोगादिकों की निवृत्ति उनके सेवन करने से ही होती है’ ऐसा मानते हैं और कहते भी हैं—जैसे उत्पन्न हुए रोग की चिकित्सा दवाई से होती है उसी प्रकार कामादिकों की चिकित्सा भी उनके सेवनरूप दवा से ही होती है । इस प्रकार की मान्यतावाले सच्चे उपदेशक न होकर उल्टे मिथ्या उपदेशक ही हैं । ये पत्थर की नाव के समान हैं । जिस प्रकार पत्थर की नौका स्वयं डूब जाती है और साथ में बैठे हुए मनुष्यों को भी डुबा देती है, ठीक इसी प्रकार ये स्वयं एक तो सावध व्यापार में प्रवृत्त बने रहते हैं और जो इनकी मान्यता के अनुयायी होते हैं वे भी इन्हीं की मान्यता के पथिक बन जाते हैं, अर्थात्—ये स्वयं डूबते हैं और अपने अनुयायियों को भी डुबाते हैं, अतः इनके उपदेश से कामादिक की निवृत्ति नहीं हो सकती, किन्तु वीतराग के उपदेश से ही होती है । इसलिये इस उपदेश के सुनने की जरूरत है । यह उपदेश भी साक्षात् वीतराग प्रभु के ही मुख से निकला हुआ है । हे जम्बू ! भगवान् से जैसा मैंने सुना है वैसा ही मैं तुझे कहता हूँ । पर-

‘કામભોગાદિકની નિવૃત્તિ, તેનું સેવન કરવાથીજ થાય છે’ એવું માને છે. અને કહે પણ છે કે—‘જેવી રીતે ઉત્પન્ન થયેલ રોગની ચિકિત્સા દવાથીજ થાય છે તે પ્રકારે કામાદિકની ચિકિત્સા પણ તેના સેવનરૂપ દવાથીજ થાય છે. એવી માન્યતાવાળા સાચા ઉપદેશક ન બનીને ઉલ્ટા મિથ્યા ઉપદેશક જ છે. એઓ પત્થરની નાવ સમાન છે. જેવી રીતે પત્થરની નૌકા પોતે ડૂબી જાય છે અને તેમાં બેઠેલા મનુષ્યોને પણ ડુબાવે છે, તે પ્રકારે આ પોતે પણ એકતો સાવધ વ્યાપારમાં પ્રવૃત્ત રહે છે અને જે એની માન્યતાના અનુયાયી હોય છે તે પણ એની માન્યતાનાજ પથિક બની જાય છે. તે પોતે ડૂબે છે અને પોતાના અનુયાયિઓને પણ ડુબાવે છે. માટે તેના ઉપદેશથી કામાદિકની નિવૃત્તિ થતી નથી, વીતરાગના ઉપદેશથી જ થાય છે, જેથી તે ઉપદેશને સાંભળવાની આવશ્યકતા છે. આ ઉપદેશ પણ સાક્ષાત્ વીતરાગ પ્રભુના મુખથી નિકળેલ છે. હે જમ્બૂ ! ભગવાન પાસેથી જેવું મેં સાંભળ્યું છે તેવું જ કહું છું.’

તીર્થિકોં કા ઉપદેશ મિથ્યા ઇસલિયે હૈ કિ ઉનકે ઉપદેશ સે જીવોં કી સાવધ ક્રિયાઓં મેં પ્રવૃત્તિ હો જાતી હૈ। ઇસકા કારણ મી યહી હૈ કિ વે સ્વયં ઉન સાવધ ક્રિયાઓં સે વિરક્ત નહીં હોતે હૈ, હનન-છેદન-ભેદન-લુમ્પન ઓર વિલુમ્પનાદિક અનેક અકૃત્યોં મેં ઉનકી પ્રવૃત્તિ બની રહતી હૈ। ઢણ્ઢાદિક સે તાડન કરને કા નામ હનન હૈ, ઇસ ક્રિયા કે કર્તા હોને સે વે હનતા કહે જાતે હૈ। સ્વઙ્ગાદિક સે વિદારણ કરને કા નામ છેદન હૈ, ભાલે વગૈરહ સે ભેદને કા નામ ભેદન, ગાંઠ વગૈરહ કે છેદનાદિક કરને કા નામ લુમ્પન ઓર આક્રમણાદિક કરને કા નામ વિલુમ્પન તથા પ્રાણાતિપાત આદિ કરને કા નામ અપદ્રાવણ હૈ। ઇન ૨ ક્રિયાઓં કે કર્તા હોને સે વે છેત્તા, ભેત્તા, લુમ્પયિતા, વિલુમ્પયિતા ઓર અપદ્રાવયિતા કહે જાતે હૈ। ઇન ૨ ક્રિયાઓં કે કરને મેં ઉનકી પ્રવૃત્તિ ઇસલિયે હોતી હૈ કિ-વે યહ વિચાર કરતે હૈ કિ કામ કી યહ ચિકિત્સા પૂર્વ મેં કિસી ને નહીં કી હૈ હમ ઇસે કરેંગે। ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા સે પ્રેરિત હોકર વે જિનકે લિયે ઉપદેશ કરતે હૈ વે ઓર સ્વયં ઉપદેશ્ટા, યે દોનોં પૂર્વોક્ત હનન ઓર છેદનાદિક વ્યાપારોં કો કરતે હૈ, ઇસલિયે કરને વાલે કરાને વાલે તથા ઉસકા અનુમોદન કરને વાલે મી અજ્ઞાની માને ગયે હૈ। અર્થાત્ એસે જીવોં કા જ્ઞાન સિર્ફ શાબ્દિક હી હૈ।

પરતીર્થિઓના ઉપદેશ મિથ્યા તેટલા માટે છે કે તેઓના ઉપદેશથી જીવોની સાવધ વ્યાપારોમાં પ્રવૃત્તિ થઈ જાય છે. તેનું કારણ એ છે કે તેઓ પોતે તેવા સાવધ વ્યાપારોથી વિરક્ત બનેલ નથી. હણ્ણુ, છેદ્ણુ, ભેદ્ણુ, લુમ્પન, અને વિલુમ્પનાદિક અનેક અકૃત્યોમાં તેઓની પ્રવૃત્તિ બની રહે છે. ઢંડાદિકથી તાડન કરવાનું નામ હણ્ણુ છે. આ ક્રિયાનો કર્તા હોવાથી તે કર્તા હણ્ણુનાર કહેવાય છે. તલવાર આદિથી વિદારણ કરવાનું નામ છેદન છે, ભાલા વિગેરેથી ભેદ્ણુ તેનું નામ ભેદન, ગાંઠ વિગેરેનું છેદ્ણુ તેનું નામ લુમ્પન અને આક્રમણાદિક કરવાનું નામ વિલુમ્પન તથા પ્રાણાતિપાત આદિ કરવાનું નામ અપદ્રાવણ છે. આ બધી ક્રિયાઓના કર્તા બનવાથી તે છેત્તા, ભેત્તા, લુમ્પયિતા, વિલુમ્પયિતા અને અપદ્રાવયિતા કહેવામાં આવે છે. આવી ક્રિયાઓના કરવામાં તેઓની પ્રવૃત્તિ તેટલા માટે થાય છે કે-તે એવા વિચાર કરે છે કે આ કામની ચિકિત્સા પૂર્વમાં કોઈએ કરેલ નથી, અમે તે કરીશું. આવા પ્રકારની માન્યતાથી પ્રેરિત થઈને તે જોના માટે ઉપદેશ કરે છે તે અને સ્વયં ઉપદેશ્ટા એ બંને પૂર્વોક્ત હનન અને છેદનાદિક વ્યાપારો કરે છે, માટે કરનાર, કરાવનાર તથા તેની અનુમોદના કરનાર પણ અજ્ઞાની માનવામાં આવે છે. અર્થાત્ એવા જીવોનું જ્ઞાન ફક્ત શાબ્દિક જ છે.



भेदनादिसावद्यव्यापारान् करोति । यो वा तत् हननादिकं कारयति 'वा' शब्दात्तदनुमोदकोऽपि, बालः=अज्ञानी शब्दज्ञानमात्रावलम्बी भवति, अतो बालस्य= एतादृशस्य कर्तुः कारयितुरनुमोदयितुरज्ञानिनः संगेन=संसर्गेण, अलं=व्यर्थम् । अज्ञानिनः संसर्गोऽपि सर्पसंसर्ग इव सर्वथा परिवर्जनीय इति भावः । तस्मात्परतीर्थिकोपदेशः शब्दादिविषयकषायकलुषितत्वेन हननादिसावद्यक्रियासु प्रवृत्तिजनकतया च हेय एव, न चैतादृशो मदीयोपदेशः वीतरागभगवन्मुखात्साक्षाच्छ्रुतस्यैव परिकथ्यमानत्वादिति तात्पर्यम् । कस्यैवं न भवतीत्याह-'नैव'-मित्यादि ।

इसलिये जिस प्रकार सर्प का संसर्ग सर्वथा त्याज्य होता है उसी प्रकार ऐसे अज्ञानी जीवों का संसर्ग भी सदा छोड़ने योग्य शास्त्रकारों ने बतलाया है, अतः इसे अवश्य ही छोड़ देना चाहिये । इससे यह भाव निकलता है कि परतीर्थिकों का उपदेश शब्दादिक-विषय-कषायों से कलुषित होने की वजह से, तथा हननादिक सावद्यक्रियाओं में प्रवृत्ति का जनक होने से सदा हेय-त्याज्य है । जिस प्रकार का इनका उपदेश होता है ऐसा उपदेश मेरा नहीं है । क्योंकि यह जो उपदेश दिया गया है, वह साक्षात् वीतराग प्रभु के मुख से ही सुना हुआ दिया गया है, मनः कल्पित नहीं । जो द्रव्य एवं भाव दोनों प्रकार के अगार से रहित हैं, तथा शब्दादिक विषयों के कटुक फल से परिचित हैं ऐसे संयमी मुनि कभी भी इस प्रकार से काम की चिकित्सा का उपदेश नहीं देते हैं,

भाટે જેવી રીતે સર્પનો સંસર્ગ સર્વથા ત્યાજ્ય હોય છે, તે પ્રકારે આવા અજ્ઞાની જીવોનો સંસર્ગ પણ સદા છોડવા યોગ્ય શાસ્ત્રકારોએ બતલાવેલ છે, માટે તેને અવશ્ય છોડી દેવો જોઈએ. આથી સાર એ નિકળે છે કે પરતીર્થિઓનો ઉપદેશ શબ્દાદિક-વિષય-કષાયોથી કલુષિત હોવાથી, તથા હણવું આદિ સાવધ વ્યાપારની પ્રવૃત્તિનો જનક હોવાથી સદા હેય-ત્યાજ્ય છે. જેવી રીતે તેઓનો ઉપદેશ હોય છે, તે પ્રકારે મારો ઉપદેશ નથી. કારણકે આ જે ઉપદેશ આપવામાં આવેલ છે તે સાક્ષાત વીતરાગ પ્રભુના મુખથી સાંભળેલો જે છે તેજ આપવામાં આવેલ છે. મનકલ્પિત નહિ. જે દ્રવ્ય અને ભાવ બન્ને પ્રકારના અગાર-ઘરથી રહિત છે, તથા શબ્દાદિક વિષયોના કટુક ફળથી પરિચિત છે એવા સંયમી મુનિ કોઈ વખત પણ આ પ્રકારથી કામની ચિકિત્સાનો ઉપદેશ દેતા નથી,



अनगारस्य=द्रव्यभावागाररहितस्य परिज्ञातशब्दादिविषयकदुविपाकस्य संयतस्य एवं कामचिकित्सोपदेशदानं तत्कारणं च न जायते=न कल्पते 'इति ब्रवीमि' इति पूर्ववद् व्याख्येयम् ॥ सू० ॥ सू० ११ ॥

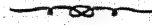
इत्याचाराङ्गसूत्रस्याचारचिन्तामणिटीकायां द्वितीयाध्ययनस्य  
पञ्चमोद्देशः समाप्तः ॥ २-५ ॥

और न उसके कारण ही बनते हैं। "इति ब्रवीमि" इन पदों की व्याख्या पहिले की जा चुकी है ॥ सू० ११ ॥

॥ आचाराङ्गसूत्रके द्वितीय अध्ययन का  
पंचम उद्देश समाप्त ॥ २-५ ॥

तेभज तेतुं कारणु पणु जनता नथी. "इति ब्रवीमि" आ पढोनी व्याख्या  
पढेलां आपवामां आवेल छे. ॥ सू० ११ ॥

आचाराङ्गसूत्रना भील अध्ययनने।  
पांचमे उद्देशे समाप्त २-५.



## ॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य षष्ठोद्देशः ॥

अभिहितः पञ्चमोद्देशः, साम्प्रतं षष्ठ आरभ्यते । इहानन्तरोद्देशके शरीरपरि-  
रक्षणाय लोकनिश्चया विहरन्नासक्तिरहितोऽनगारो लोके ममत्वं न कुर्यादित्यर्थोऽ-  
भिहितः, स एवात्र प्रतिपाद्यते—‘ सेतं ’ इत्यादि ।

पूर्वोद्देशस्यान्तिमसूत्रे ‘ न हु एवं अणगारस्स जायइ ’ संयमिन एवं न कल्पते,  
इति कथितम्, तस्यैव विशदीकरणायाह—‘ से तं ’ इत्यादि ।

मूलम्—से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाय तम्हा  
पावकम्मं नेव कुज्जा न कारवेज्जा ॥ सू० १ ॥

छाया—स तत् सम्बुद्धयमान आदानीयं समुत्थाय तस्मात्पापकर्म नैव  
कुर्यात् न कारयेत् ॥ सू० १ ॥

## ॥ आचारांगसूत्रके दूसरे अध्ययनका छठा उद्देश ॥

द्वितीय अध्ययन का पंचम उद्देश संपूर्ण हुवा; अब यहां उसका  
छठा उद्देश प्रारंभ किया जाता है। पंचम उद्देश में ‘ शरीर की रक्षा करने  
के लिये आसक्तिरहित होकर लोक की निश्चा से संयममार्ग में विचरना  
चाहिये, संयमी मुनि को लोक के साथ कभी भी ममत्व नहीं करना  
चाहिये ’—यह बात कही गई है। इसी विषय की पुष्टि इस उद्देश में की  
जायगी ‘ सेतं ’ इत्यादि ।

पंचम उद्देश के “ न हु एवं अणगारस्स जायइ ” इस अन्तिम सूत्र  
में “ संयमी को ऐसा नहीं कल्पता है ” जो यह कहा है उसी को विशद  
करने के लिये कहते हैं—‘ से तं ’ इत्यादि ।

## आचारांगसूत्रना બીજા અધ્યયનનો છઠો ઉદ્દેશ.

બીજા અધ્યયનનો પાંચમો ઉદ્દેશ સમાપ્ત થયો. હવે છઠો ઉદ્દેશનો આરંભ  
થાય છે. પાંચમાં ઉદ્દેશમાં શરીરની રક્ષા કરવા માટે આસક્તિ રહિત બનીને  
લોકની નિશ્ચયથી સંયમીએ સંયમ માર્ગમાં વિચરવું જોઈએ. સંયમી મુનિએ  
લોકોની સાથે કોઈ વખત પણ મમત્વ નહિ કરવું જોઈએ. આ વાત કહેવામાં  
આવેલ છે. તે વિષયની પુષ્ટિ આ ઉદ્દેશમાં કરવામાં આવશે.—‘ સેતં ’ ઇત્યાદિ.

પાંચમાં ઉદ્દેશમાં “ ન હુ एवं અણગારસ્સ જાયइ ” આ અંતિમ સૂત્રમાં  
“ સંયમીને એવું કલ્પતું નથી. એમ કહેલ છે તેનું વિશદ કરવાને માટે કહે  
છે—‘ સે તં ’ ઇત્યાદિ.

टीका—‘स त-’दित्यादि । यः षड्जीवनिकायोपघातजनकं चिकित्सोपदेशं तदाचरणं च न करोति स पूर्वोक्तरूपोऽनगारः, तत्=चिकित्सोपदेशादिकं सम्बुद्धयमानः, सम्=सम्यक्प्रकारेण बुध्यमानः=ज्ञ-परिज्ञया ज्ञेयत्वेन, प्रत्याख्यान-परिज्ञया च हेयत्वेन जानानः आदानीयं=रत्नत्रयं समुत्थाय=गृहीत्वा ।

यद्वा—सः पूर्वोक्तोऽनगारस्तदादानीयं=ज्ञानादिकं मोक्षैककारणमस्तीत्येवं सम्बुद्धयमानः=सम्यग् जानानः समुत्थाय=सम्यक्संयमाचरणेनोत्थाय ‘सर्वसावद्य-व्यापारं न करिष्यामी’-ति प्रतिज्ञाय, तं कदापि न कुर्यादित्यादि । यतः सर्वसाव-

जो अनगार षट्काय के जीवों का विराधक चिकित्सा के उपदेश को और उसके आचरण को नहीं करता है ऐसा पूर्वोक्त स्वरूपवाला वह अनगार ज्ञ-परिज्ञा से ज्ञेयपने और प्रत्याख्यान परिज्ञा से हेयपने उस चिकित्सोपदेशादिक को अच्छी तरह से जानता हुआ आदानीय-रत्न-त्रय को ग्रहण कर प्राणानिपातादिरूप अठारह प्रकार के पापकर्मों को कभी भी न करे, न दूसरों से करावें, करने वाले एवं कराने वाले की अनुमोदना भी न करे ।

अथवा—सूत्रमें आये हुए ‘आदानीय’ शब्द का अर्थ ज्ञानादिक भी है । जिसका अभिप्राय यह होता है कि—“मोक्ष के प्रधानकारण ज्ञानादिक हैं” इस बात को अच्छी तरह से जानने वाला वह अनगार “मैं समस्त सावद्य व्यापारों को नहीं करूंगा” इस प्रकार की प्रतिज्ञा करके अच्छी तरह से संयम की आराधना करता हुआ उस सावद्य व्यापार को कभी भी न करे । क्योंकि इस प्रकार की जब वह प्रतिज्ञा

ने अनगार षट्काय लुपेना विराधक चिकित्सानो उपदेश, अने तेनुं आचरणु नथी करता, येवा पूर्वोक्त स्वरूपवाणा ते अनगार ज्ञ-परिज्ञाथी ज्ञेयपणुं, अने प्रत्याख्यान-परिज्ञाथी हेयपणुं, ते चिकित्सोपदेशादिकने सारी रीते ळणीने आदानीय-रत्नत्रयने ग्रहणु करी प्राणानिपातादि रूप अठार प्रकारना पाप कर्मने क्यारेय पणु न करे. न भीनथी करावे. करनार अने करावनारनी अनु-मोदना पणु न करे.

अथवा—सूत्रमां आवेला ‘आदानीय’ शब्दने अर्थ ज्ञानादिक पणु छे. नेनो अभिप्राय ये थाय छे के—“मोक्षना प्रधान कारण ज्ञानादिक छे.” आ वातने सारी रीते ळणुवावाणा ते अणुगार “हुं समस्त पापना व्यापारो नही करीश” आवा प्रकारनी प्रतिज्ञा करीने सारी रीते संयमनी आराधना करता थका तेवा सावद्य व्यापारो केछ वभत पणु न करे. कारणुके न्यारे ते आवा प्रकारनी



ઘવ્યાપારાકરણપ્રતિજ્ઞાકારી તસ્માત્કારણાત્ પાપકર્મ=પાપજનકત્વાત્પાપરૂપમેવ કર્મ પ્રાણાતિપાતાદિરૂપાઘાદશપ્રકારકં નૈવ કુર્યાત્=ન કદાચિદપિ સમાચરેત્, ન કારયેત્ 'એવે-ત્યસ્ય નિશ્ચયાર્થકત્વાત્ કુર્વન્તં કારયન્તં વા નાનુમોદયેત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

પ્રાણાતિપાતાદિષ્વેકં પાપકર્મ કુર્વન્નન્યસ્યાપિ કર્તા ભવતીતિ દર્શયતિ—'સિયા તત્થ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સિયા તત્થ ઇગયરં વિપ્પરામુસઙ્ગં છસુ અન્નયરંમિ કપ્પઙ્ગ, સુહટ્ઠી લાલપ્પમાણે સણ્ણ દુક્ખેણ મૂઢો વિપ્પરિયાસ-મુવેઙ્ગ, સણ્ણ વિપ્પમાણે પુઢો વયં પકુવ્વઙ્ગ, જંસિમે પાણા પવ્વહિયા, પઢિલેહાણ નો નિકરણાણ એસ પરિન્ના પવુચ્ચઙ્ગ, કમ્મોવસંતી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—સ્યાત્તત્રૈકતરં વિપરામૃશતિ, ષટ્સ્વન્યતરસ્મિન્ કલપતે, સુઘર્થી લાલ-પ્યમાનઃ સ્વકેન દુઃખેન મૂઢો વિપર્યાસમુપૈતિ, સ્વકેન વિપ્રમાદેન પૃથગ્વ્રતં પ્રકુરુતે, યસ્મિન્નિમે પ્રાણાઃ પ્રવ્યથિતાઃ પ્રત્યુપેક્ષ્ય નો નિકરણાય, એષા પરિજ્ઞા પ્રોચ્યતે કર્મોપશાન્તિઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

કર ચુકા હૈ તબ વહ કૈસે પ્રાણાતિપાતાદિક અઠારહ પ્રકાર કે પાપ કર્મોં કો કર સકતા હૈ । જબ નહીં કર સકતા હૈ તબ વહ ઉન પાપકર્મોં કો કરને વાલોં કી તથા ઉન્હેં કરાને વાલોં કી અનુમોદના બી કૈસે કર સકતા હૈ? અર્થાત્ નહીં કર સકતા । સૂત્ર મેં 'એવ' શબ્દ નિશ્ચય અર્થ મેં પ્રયુક્ત હૈ, અતઃ યહ નિશ્ચિત્ત હૈ કિ અનગાર કમ્મી બી ન સ્વયં ૧૮ અઠારહ પ્રકાર કે પાપસ્થાનોં કો કરેગા, ન કરાવેગા ઔર ન ઉન્ કરને કરાને વાલોં કી કમ્મી અનુમોદના હી કરેગા ॥ સૂ૦ ૧ ॥

પ્રતિજ્ઞા લીધેલ છે ત્યારે તે પછી પ્રાણાતિપાતાદિક અઠાર પ્રકારનાં પાપકર્મોં કેવી રીતે કરી શકે? જો નથી જ કરી શકે તો પછી તેવા પાપ કર્મોંના કરનારની તેને કરાવનારની અનુમોદના પશુ કેવી રીતે કરી શકે? અર્થાત્ કરી શકતા નથી. સૂત્રમાં પણ શબ્દ નિશ્ચય અર્થમાં પ્રયુક્ત છે, માટે એ નિશ્ચિત છે કે અણુગાર કેઈ વખત પણ ૧૮ અઠાર પ્રકારના પાપસ્થાનોને કરે નહિ, કરાવે નહિ તેમજ તેઓની-કરનારાઓની અને કરાવનારાઓની અનુમોદના પણ કરે નહિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—'સ્યા—' દિત્યાદિ । યઃ પુરુષઃ સ્યાત્=કદાચિત્ પ્રમાદવશેન તત્ર=પ્રાણાતિપાતાદિરૂપપાપકર્મસુ એકતરં પ્રાણાતિપાતાદિરૂપં વિપરામૃશતિ=સમારમ્ભતે, યથ્વ ષટ્સુ મધ્યે અન્યતરસ્મિન્ પૃથિવીકાયાદિકે એકસ્મિન્નપિ સમારમ્ભતે સ ષટ્સુ જીવનિકાયેષુ કલ્પતે=સમારમ્ભતે, યથા કુલાલશાલાયા ઉદકેન પ્લાવને એકજીવનિકાયારમ્ભે ષડ્જીવનિકાયારમ્ભો ભવતિ તથૈવાત્રૈકજીવનિકાયવિરાધનાયાં ષડ્જીવનિકાયવિરાધનાઽવશ્યમ્ભાવિની । ઉક્તશ્ચ—

“ જત્ય જલં તત્થ વળં, જત્ય વળં તત્ય નિસ્સિઓ અગ્ની ।

અગ્ની વાઉસહગયા, તસા ય તન્નિસિયા ચેવ ” ॥૧॥

છાયા—યત્ર જલં તત્ર વળં યત્ર વળં તત્ર નિઃશ્રિતોઽગ્નિઃ ।

અગ્નિર્વાયુસહગતસ્ત્વસાથ તન્નિઃશ્રિતાશ્ચૈવ ॥ ઇતિ ।

પ્રાણાતિપાતાદિક ૧૮ પ્રકાર કે પાપસ્થાનોં મેં સે જો કિસી એક મ્હી પાપસ્થાન કા કરનેવાલા હોતા હૈ વહ અન્ય પાપસ્થાનોં કા મ્હી કરનેવાલા હૈ । ઇસી વિષય કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—“ સિયા તત્થ ” ઇત્યાદિ । જો પુરુષ કદાચિત્ પ્રમાદ કે વશવર્તીં હોકર પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોં મેં સે કિસી એક પાપ કર્મ કો કરતા હૈ, છહકાય કે જીવોં કી વિરાધના મેં સે કિસી એક કાયકે જીવોં કી વિરાધના કરતા હૈ, વહ સમસ્ત પાપ-કર્મોં કા, એવં છહકાય કે જીવોં કી વિરાધના કા કર્ત્તા માના જાતા હૈ । જૈસે કુંભકાર કી શાલા કો જલ સે સીંચને પર એક જીવનિકાય કે આરંભ હોને પર ષડ્જીવનિકાય કા આરંભ હોતા હૈ, ઉસી તરહ યહાં પર મ્હી એક જીવનિકાય કી વિરાધના મેં ષટ્કાય કે જીવોં કી વિરાધના મ્હી અવશ્ય હોતી હૈ । કહા મ્હી હૈ—

પ્રાણાતિપાતાદિક ૧૮ અઠાર પ્રકારના પાપસ્થાનોમાંથી જે કોઈ એક પણ પાપસ્થાનના કરનાર હોય છે તે અન્ય પાપસ્થાનોના કરનાર હોય છે. આ વિષયને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—“ સિયા તત્થ ” ઇત્યાદિ.

જે પુરુષ કદાચિત્ પ્રમાદને વશ બની પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોમાંથી કોઈ એક પાપકર્મને કરે છે. છકાય જીવોની વિરાધનામાંથી કોઈ એક કાયના જીવોની વિરાધના કરે છે, તેને સમસ્ત પાપકર્મોનો અને છ કાય જીવોની વિરાધનાનો કર્તા માનવામાં આવે છે. જેવી રીતે કુંભારના ઘરને જલથી સીંચવાથી એક જીવનિકાયનો આરંભ થવાથી ષટ્જીવનિકાયનો આરંભ થાય છે. તેવી રીતે આ ઠેકાણે પણ એક જીવનિકાયની વિરાધનામાં ષટ્કાય જીવોની વિરાધના પણ અવશ્ય થાય છે. કહ્યું પણ છે—



एवं षट्सु व्रतेष्वाद्यव्रतविराधनायां षण्णामपि व्रतानां विराधना भवति, तद्यथा—संयमी प्राणातिपाते प्रवृत्तिं कुर्वन् हिंसादिदोषं स्पृशति, तेन प्रतिज्ञाभङ्गजन्यो मृषावादः । उक्तञ्च—

“न करेमिति भणित्वा, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

પચ્ચક્કમુસાવાઈ, માયાનિયડીપસંગો ય । ” इति ।

छाया—न करोमीति भणित्वा, तदेव निषेवते स तु ।

પ્રત્યક્ષમૃષાવાદી, માયાનિકૃતિપ્રસન્નશ્ચ ॥

कश्चिज्जीवं घ्नतो घातयतो वा स जीवो नैव स्वशरीरं तस्मै हननाय ना-  
दात्, अतोऽदत्तादानमपि । सर्वं सावद्यं कर्मापरिग्राह्यं, तस्य ग्रहणात्परिग्रहोऽपि । यत्र

“जत्थ जलं तत्थ वणं, जत्थ वणं तत्थ निस्सिओ अग्गी ।

અગ્ગી વાડસહગયા, તસા ય તન્નિસ્સિયા ચેવ ॥ ૧ ॥ ” इति ।

“जहां जल है वहां वनस्पति है, जहां वनस्पति है वहां उसके निश्चित  
अग्नि होती है, जहाँ अग्नि होती है वहां वायुकाय है, जहां वायुकाय है  
वहां त्रसकाय नियम से होते हैं ॥ १ ॥” इसी प्रकार छह ६ व्रतों में से  
प्रथम व्रत की विराधना होने पर छही व्रतों की विराधना होती है । संयमी  
जब प्राणातिपात में प्रवृत्ति करता है उस समय हिंसादिदोषजन्य पाप का  
भागी होता हुआ प्रतिज्ञाभंगजन्य मृषावाद का भागी होता है । कहा भी है—

“न करेमिति भणित्वा, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

પચ્ચક્કમુસાવાઈ, માયાનિયડીપસંગો ય ॥ ૧ ॥ ” इति ।

‘मैं हिंसादिक पापों को नहीं करूंगा’ इस प्रकार की प्रतिज्ञा करने

“जत्थ जलं तत्थ वणं, जत्थ वणं तत्थ निस्सिओ अग्गी ।

અગ્ગી વાડસહગયા, તસા ય તન્નિસ્સિયા ચેવ ” ॥૧॥ इति ।

“જ્યાં જળ છે ત્યાં વનસ્પતિ છે. જ્યાં વનસ્પતિ છે ત્યાં તેને નિશ્ચિત  
અગ્નિ હોય છે. જ્યાં અગ્નિ છે ત્યાં વાયુકાય છે, જ્યાં વાયુકાય છે ત્યાં ત્રસકાય  
નિયમથી થાય છે ॥ ૧ ॥” આ પ્રકાર છ વ્રતોમાંથી પ્રથમ વ્રતની વિરાધના હોવાથી  
છ વ્રતોની વિરાધના થાય છે. સંયમી જ્યારે પ્રાણાતિપાતમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તે  
વખતે હિંસાદિ દોષજન્ય પાપનો ભાગી બનતો થકો પ્રતિજ્ઞાભંગજન્ય મૃષાવાદનો  
ભાગી થાય છે. કહ્યું પણ છે—

“ન કરેમિત્તિ ભણિત્તા, તં ચેવ નિસેવણ પુણો સો ઉ ।

પચ્ચક્કમુસાવાઈ, માયાનિયડીપસંગો ય ” ॥ ૧ ॥ इति ।



પરિગ્રહસ્ત્ર મૈથુનં રાત્રિભોજનં ચ જાયત એવ । તતશ્ચ ષટ્સ્વન્યતરસ્મિન્ પ્રવૃત્તો જનઃ સર્વેષ્વપિ પ્રવર્તત એવ । યદ્વા-એકતરમ્=એકમપિ પાપારમ્ભં ય આચરતિ સ સર્વમપિ સમારમ્ભં કરોત્યેવ, ઉન્માર્ગપ્રવૃત્તસ્ય તસ્યૈકકરણે સર્વત્ર પ્રવૃત્તિસદ્ભાવાત્ ।

વાલા સંયમી મુનિ યદિ उसी प्रत्याख्यात विषय में प्रवृत्ति करता है तो इस प्रकार की उसकी प्रवृत्ति से एक तो उसके ग्रहीतव्रत का भंग होता ही है, दूसरा उसका मृषावाद का दोष भी लगता है; क्योंकि उसने अपनी प्रतिज्ञा भंग करनेरूप मृषावाद का सेवन किया । जिस जीव की हिंसा करने में वह प्रवृत्त हो रहा है उस जीवने उसके लिये अपने शरीर को घात करने के निमित्त तो दिया नहीं है, अतः अदत्त का ग्रहीता होने से उसके लिये अदत्तादान का दोष भी लगता है । जितने भी सावद्यकर्म हैं वे अपरिग्राह्य हैं; उन अपरिग्राह्यों को ग्रहण करनेवाला होने से उसे परिग्रह के ग्रहण करने का दोष भी लागू होता है । जहां पर परिग्रह है वहां पर मैथुन एवं रात्रिभोजनजन्य दोष भी लगता ही है । इसलिये छह ६ व्रतों में से अन्य एक भी व्रत की विराधना करने वाला मुनि समस्त व्रतों की विराधना करता है, यह बात भलीभांति सिद्ध हो जाती है । इसी प्रकार छह व्रतों में से एक भी व्रत का निर्दोष रीति से पालन करने वाला मुनि अन्य और भी व्रतों का पालक माना जाता है ।

‘હું હિંસાદિક પાપોને કરીશ નહિ.’ આ પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરવાવાળા સંયમી મુનિ કહાય તે પ્રત્યાખ્યાત વિષયમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તો આ પ્રકારની તેની પ્રવૃત્તિથી એક તો તેના લીધેલા વ્રતનો ભંગ થાય છે. બીજું તેને મૃષાવાદનો દોષ પણ લાગે છે. કારણ કે તેણે પોતાની પ્રતિજ્ઞા ભંગ કરવારૂપ મૃષાવાદનું સેવન કર્યું. જે જીવની હિંસા કરવામાં તે પ્રવૃત્ત થઈ રહ્યા છે, તે જીવો તેના માટે પોતાનું શરીર ઘાત કરવાને નિમિત્તે તો આપેલ જ નથી. માટે અદત્તનો પણ ગ્રહીતા હોવાથી તેને માટે અદત્તાદાનનો દોષ પણ લાગે છે. જેટલા પણ સાવધ કર્મ છે તે અપરિગ્રાહ્ય છે. તે અપરિગ્રાહ્યોના ગ્રહણ કરવાવાળા હોવાથી તેને પરિગ્રહને ગ્રહણ કરવાનો દોષ પણ લાગુ થાય છે. જ્યાં પરિગ્રહ છે ત્યાં મૈથુન અને રાત્રિ ભોજનજન્ય દોષ પણ લાગે જ છે માટે છ વ્રતોમાંથી અન્ય એક પણ વ્રતની વિરાધના કરવાવાળા મુનિ સમસ્ત વ્રતોની વિરાધના કરે છે. આ વાત ભલીભાંતિ સિદ્ધ થઈ જાય છે. તે પ્રકારે છ વ્રતોમાંથી એક પણ વ્રતને નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરવાવાળા મુનિ અન્ય બીજા પણ વ્રતોના પાલક માનવામાં આવે છે.

કિમર્થમયં પાપકર્મણિ પ્રવર્તતે ? इत्याह—‘सुखार्थी—’त्यादि । सुखार्थी=पौद्गलिक-सुखाभिलाषी लालप्यमानः=अत्यर्थं मुहुर्मुहुर्वा लपतीति लालप्यमानः, सुखार्थमुन्मत्तवन्मोहवशेन यद्वा तद्वा मुहुर्मुहुर्ब्रुवन्, नानाप्रकारान् धावनवल्लगनादिकान् व्यापारान् विदधत्, सुखकारणानि च चेतसि चिन्तयन्, कृष्यादिव्यापारैः पृथिवी-कायमुपमर्दयन्, तत्सेवनाद्यर्थमप्यायं, पाकाद्यर्थं तैजसकायं, ग्रीष्मसन्तापोप-

અથવા-કિસી એક મી પાપારમ્મ કા જો આચરણ કરતા હૈ વહ અન્ય સમસ્ત પાપારમ્મોં કા આચરણ કરનેવાલા હોતા હી હૈ; ક્યોંકિ જિસકી પ્રવૃત્તિ ઉન્માર્ગ મેં ચાલૂ હૈ વહ યદિ એક મી પાપારમ્મ કો કરતા હૈ તો ઉસ એક કે કરને મેં અન્ય સબ પાપારમ્મ કે કરને કા સદ્ભાવ આ હી જાતા હૈ ।

પાપકર્મ મેં પ્રવૃત્તિ હોને કા કારણ એક કેવલ ઉસકી પૌદ્ગલિક સુખ પ્રાપ્ત કરને કી અભિલાષા હી હૈ । અતઃ સુખાર્થી હોને કે કારણ સે હી ઇસકી પ્રવૃત્તિ પાપકાર્યોં મેં હોતી હૈ । જિસ પ્રકાર ઉન્મત્ત પ્રાણી નશા કે આવેશ સે યદ્વા-તદ્વા બારંબાર બોલતા હૈ ઓર વ્યર્થ મેં ઇધર-ઉધર દોડતા ફિરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર યહ મી મોહ કે આવેશ સે યદ્વા-તદ્વા બારંબાર બોલતા હુઆ અનેક પ્રકાર કી યહાં સે વહાં દોડ-ધૂપ કિયા કરતા હૈ, ‘મુઝે ઇન કામોં કે કરને સે સુખ પ્રાપ્ત હોગા’ ઇસ પ્રકાર કી વિચારધારા સે પ્રેરિત હોકર કૃષિ આદિ અનેક પૃથિવીકાયિક જીવોં કે ઉપમર્દન કરને વાલે વ્યાપારોં કો કરતા હૈ, ઉસકે સિંચન કે લિયે અપ્કાય જીવોં કી વિરાધના કરતા હૈ, રસોઈ આદિ બનાને કે લિયે

અથવા—કોઈ એક પણ પાપારમ્મનો જે આચરણ કરે છે તે અન્ય સમસ્ત પાપારમ્મોનું આચરણ કરવાવાળા હોય જ છે. કારણ કે જેની પ્રવૃત્તિ ઉન્માર્ગમાં લાગેલી છે તે કદાચ એક પણ પાપારમ્મ કરે તો તે એક કરવામાં અન્ય બધા પાપારમ્મ કરવાનો સદ્ભાવ આવી જ નાય છે.

પાપકર્મમાં પ્રવૃત્તિ હોવાનું કારણ એક કેવળ તેની પૌદ્ગલિક સુખ પ્રાપ્ત કરવાની અભિલાષા જ છે. અતઃ સુખાર્થી હોવાના કારણથી જ તેની પ્રવૃત્તિ પાપ કાર્યોમાં થાય છે. જેવી રીતે ઉન્મત્ત પ્રાણી નશાના આવેશથી જેમ તેમ વારંવાર બોલે છે અને વ્યર્થમાં અહીં તહીં દોડતા ફરે છે, તે પ્રકારે તે પણ મોહના આવેશથી જેમ તેમ વારંવાર બોલતાં અનેક પ્રકારની ત્યાંથી અહીં અને અહીંથી ત્યાં દોડધામ કરતા રહે છે. ‘મને એ કામો કરવાથી સુખ પ્રાપ્ત થશે’ આવા પ્રકારની વિચારધારાથી પ્રેરિત થઈને કૃષિ આદિ અનેક પૃથિવીકાયિક જીવોનું ઉપમર્દન કરવાવાળા વ્યાપારોને કરે છે, તેના સિંચન માટે અપ્કાય



શાન્તયે વાયુકાયમ્, આહારાદ્યથે વનસ્પતિકાયં, કાષ્ઠાદિનિશ્ચિતં ત્રસકાયં ચ વિરાધયન્ સ્વકેન સ્વકૃતકર્મજનિતેન પૂર્વભવે જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટવિધકર્મરૂપં દુઃસ્વ-તસ્વીજં તથોક્તવાન્ યથાઽસ્મિન્ ભવે સ દુઃસ્વતરુઃ પ્રરોહત્યેવ । તાદૃશેન દુઃસ્વેન શારીરિકમાનસિકેન મૂઢઃ=વ્યાકુલિતઃ પરમાર્થમજાનન્ હિતાહિતપ્રાપ્તિપરિહાર-વિકલઃ વિપર્યાસમુપૈતિ પ્રાણિપીડનાદિકં સાવધવ્યાપારમાચરન્ સુસ્વસ્ય વિપરીતં દુઃસ્વમેવ ફલં પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ ।

યદ્વા-અલ્પસુખદં સાવધાનુષ્ઠાનમનુતિષ્ઠન્, સુસ્વસ્થાનેઽનન્તકાલિકં શારીરિક-માનસિકદુઃસ્વમેવ પ્રાપ્નોતીતિ ભાવઃ । પુનરપ્યાહ-‘સ્વકેને-’ત્યાદિ । સ્વકેન=અથવા સ્વેતી આદિ કી રક્ષા કરને કે લિયે અગ્નિ કા સહારા લેતા હૈ, ઇસમેં અગ્નિકાયિક એવં ઉસે પ્રજ્વલિત કરને કે લિયે વનસ્પતિકાય તથા ઉસમેં રહે હુણ ત્રસકાય જીવોં કી ખી વિરાધના કરતા હૈ, ગર્મીજન્ય સંતાપ કે શમન કે લિયે વાયુકાય કે જીવોં કા ખી ઘાત કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર યહ જીવ ષટ્કાય કે જીવોં કી વિરાધના કરતા હુઆ તજ્જન્ય પાપ-કર્મોં કે ઉદય સે દુઃસ્વિત બન હિતાહિત કે વિવેક સે વિકલ હોકર સદા વિપર્યાસ-મિથ્યાત્વ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । જીવ પૂર્વભવ મેં જિસ પ્રકાર કે તીવ્ર, મન્દ, મધ્યમાદિ પરિણામોં સે જ્ઞાનાવરણીયાદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કો બાંધતા હૈ ઉસી પ્રકાર સે ઉનકા ફલ ખી ઉસી ભવ મેં અથવા આગામી ભવ મેં ભોગતા હૈ, યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ । દુઃસ્વ ભોગના ખી ઇન્હીં કર્મોં કે ઉદયા-ધીન હૈ । જિસ પ્રકાર વિના બીજ કે વૃક્ષ નહીં હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર વિના

જીવોની વિરાધના કરે છે. રસોઈ આદિ બનાવવા માટે અથવા ખેતી આદિની રક્ષા કરવા માટે અગ્નિનો આશ્રય લે છે, તેમાં અગ્નિકાયિક અને તેને પ્રજ્વલિત કરવા માટે વનસ્પતિકાય તથા તેમાં રહેલા ત્રસકાય જીવોની પણ વિરાધના કરે છે. ગર્મીજન્ય સંતાપને શમાવવા માટે વાયુકાયના જીવોનો પણ ઘાત કરે છે. આ પ્રકાર આ જીવ ષટ્કાય જીવોની વિરાધના કરતાં તજ્જન્ય પાપકર્મોના ઉદયથી દુઃખિત બની હિતાહિતના વિવેકથી વિકલ બનીને સદા વિપર્યાસ-મિથ્યાત્વને પ્રાપ્ત કરે છે. જીવ પૂર્વભવમાં જેવા પ્રકારે તીવ્ર, મન્દ, મધ્યમાદિ પરિણામોથી જ્ઞાનાવર-ણીયાદિ આઠ પ્રકારના કર્મોને બાંધે છે. તે પ્રકારે તેનું ફળ પણ તે ભવમાં અથવા આગામી ભવમાં ભોગવે છે, એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે. દુઃખ ભોગવવું પણ તેના કર્મોના ઉદયાધીન છે. જે પ્રકારે બીજ વિના વૃક્ષ થતું નથી તે પ્રકારે અશુભ કર્મોદય વિના દુઃખ પણ જીવોને પ્રાપ્ત થતું નથી. પરભવના બાંધેલા કર્મ આગામી ભવમાં પણ



નિજાર્જિતેન વિપ્રમાદેન વિ=વિવિધેન પञ्चप्रकारेण प्रमादेन पृथक् जिनोक्तेषु षट्सु व्रतेषु छिन्नभिन्नरूपेण जिनशासनोक्तविपरीतं वा व्रतं प्रकुरुते ।

इदमत्र तत्त्वम्-षट्सु व्रतेषु प्रथमस्याचरणे द्वितीयस्यानाचरणं, तृतीयस्य चाचरण-मित्येवं छिन्नभिन्नरूपेण व्रतकरणम् ।

અશુભ કર્મોદય કે દુઃખ મી જીવોં કો પ્રાપ્ત નહીં હોતા । પરમ્ભવ કે બાંધે હુએ કર્મ અગામી ભવ મેં મી ઉદય મેં આતે રહતે હૈં । ઇસીલિયે જીવ ઉન અશુભ કર્મોદયજન્ય દુઃખોં સે હિતાહિત કે વિવેક સે રહિત હોકર વ્યથિત હોતા રહતા હૈ । કમી શારીરિક કષ્ટોં કા અનુભવ કરતા હૈ તો કમી માનસિક પીડા સે દુઃખી હોતા રહતા હૈ । વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ સે અજાન બનકર “સાવધ વ્યાપારોં કે આચરણ સે હી મૈં સુખી હોઁગા” ઇસ પ્રકાર કી અપની વિપરીત કલ્પના સે સુખ કે સ્થાન મેં દુઃખ કો હી પ્રાપ્ત કરતા રહતા હૈ । અથવા-સાવધ વ્યાપારોં કા કરના સદા સુખદાયી નહીં હોતા । અપની આવશ્યકતા કી પૂર્તિ હોને પર જીવોં કો ઉસકી પૂર્તિજન્ય કાલ્પનિક અલ્પસુખ ભલે હી મિલ જાવે પરંતુ વહ સદા સ્થાયી નહીં । જિસ સુખ કી આશા સે ઇન સાવધ વ્યાપારોં મેં જીવ પ્રવૃત્તિ કિયા કરતે હૈં ઉનસે તો ઉન્હેં ઉલ્ટે ઉસ સુખ કે સ્થાન મેં અનન્તકાલ તક ભોગને યોગ્ય શારીરિક એવં માનસિક દુઃખ હી પ્રાપ્ત હોતે હૈં । એસા સમજકર સંયમી કો કમી મી કિસી મી પ્રાણાતિપાતાદિક મેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરના ચાહિયે ।

ઉદયમાં આવે છે, માટે જીવ એ અશુભ કર્મોદયજન્ય દુઃખોથી હિતાહિતના વિવેકથી રહિત થઈને વ્યથિત થતા રહે છે. કેઈ વખત શારીરિક કષ્ટોનો અનુભવ કરે છે તો કેઈ વખત માનસિક પીડાથી દુઃખી થતા રહે છે. વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિથી અજાણ બનીને “સાવધ વ્યાપારોના આચરણથીજ હું સુખી થઈશ” એવા પ્રકારની પોતાની વિપરીત કલ્પનાથી સુખના સ્થાને દુઃખને જ પ્રાપ્ત કરે છે. અથવા—સાવધ વ્યાપારોનું કરવું સદા સુખદાયી થતું નથી. પોતાની આવશ્યકતાની પૂર્તિ થવાથી જીવોને તેની પૂર્તિજન્ય કાલ્પનિક અલ્પ સુખ ભલે મળી જાય પરંતુ તે સદા સ્થાયી નહિ. જે સુખની આશાથી આ સાવધ વ્યાપારોમાં જીવ પ્રવૃત્તિ કરે છે, તેનાથી તો તેને ઉલ્ટા તે સુખના સ્થાનમાં અનન્ત કાળ સુધી ભોગવવા યોગ્ય શારીરિક અને માનસિક દુઃખ જ પ્રાપ્ત થાય છે. એવું સમજીને સંયમીએ કેઈ વખતે પણ કેઈ પણ પ્રાણાતિપાતાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવી બેધએ નહિ.

इसी प्रकार जो अपने द्वारा उपार्जित मद्यादि पांच प्रकार के प्रमाद के वशवर्ती होकर जिनोक्त छह प्रकार के व्रतों का पालन छिन्न-भिन्नरूप से करते हैं, अथवा जिन भगवानने इन व्रतों के पालन करने की जो विधि बतलाई है उस विधि-विधान से विपरीत विधि-विधान को लेकर जो व्रतों का आराधन करते हैं, अथवा जिनशासनप्रतिपादित व्रतों से विपरीत व्रतों को जो पालते हैं, वे संसार में परिभ्रमण किया करते हैं। संयमी के लिये छह व्रतों का पालन आवश्यक बतलाया है, वह यदि पांच प्रकार के प्रमाद में पतित होकर अपनी इच्छानुसार प्रथम व्रत का आचरण करे और द्वितीय का आचरण न करे तथा तृतीय का आचरण करे अन्य का नहीं; तो इस प्रकार के व्रताराधन से उसके संसार के बंधन का अन्त नहीं आ सकता। अतः व्रतों के पालन करने की विधि जिस प्रकार शास्त्रों में वर्णित है उसी विधि से व्रतों की आराधना करनी चाहिये। जिन व्रतों का पालन संयमी के लिये बतलाया गया है उनके सिवाय यदि वह अन्य व्रतों की आराधना करता है तो इस प्रकार की उसकी स्वच्छंदवृत्ति उसके भव का अन्त करने वाली न होकर उल्टी उसके अनन्त संसार की बढ़ाने वाली ही होगी; क्यों कि इस प्रकार की निजमान्यता में वीतराग प्रभु की आज्ञा का भंग होता है। यह

આ પ્રકારે જે પોતાના દ્વારા ઉપાર્જિત મદ્યાદિ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદને વશ બનીને જીનોક્ત છ પ્રકારના વ્રતોના પાલનને છિન્નભિન્ન રૂપમાં કરી નાંખે છે. અથવા જિન ભગવાને આ વ્રતોના પાલન માટે જે વિધિ બતાવી છે તે વિધિ-વિધાનથી વિપરીત વિધિ-વિધાન લઈને જે વ્રતોનું આરાધન કરે છે, અથવા જિન-શાસન પ્રતિપાદિત વ્રતોથી વિપરીત વ્રતોને જે પાળે છે તે સંસારમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે. સંયમી માટે છ વ્રતોનું પાલન આવશ્યક બતાવ્યું છે, તે કદાચ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદમાં પતિત થઈને પોતાની ઇચ્છાનુસાર પ્રથમ વ્રતનું આચરણ કરે અને બીજાનું આચરણ ન કરે, તથા ત્રીજાનું આચરણ કરે અન્યનું નહિ. તે આ પ્રકારના વ્રતારાધનથી તેના સંસારના બંધનનો અંત આવી શકતો નથી. માટે વ્રતોના પાલન કરવાની વિધિ જે પ્રકારે શાસ્ત્રોમાં વર્ણિત છે તેવી વિધિથી વ્રતોની આરાધના કરવી જોઈએ. જે વ્રતોનું પાલન સંયમી માટે બતાવ્યું છે તેના સિવાય કદાચ તે અન્ય વ્રતોની આરાધના કરે છે તો આવા પ્રકારની તેની સ્વચ્છંદવૃત્તિ તેના ભવનો અંત કરવાવાળી નથી બનતી. ઉલ્ટી તેને અનંત સંસાર વધારવાવાળી થશે, કારણ કે આ પ્રકારની તેની માન્યતામાં વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાનો



યદ્વા-‘વયં’ ઇત્યસ્ય ‘વય-’ મિતિચ્છાયા, તત્ર વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ સંસારસ્તં પ્રકુરુતે-સંસારે પરિભ્રમતીત્યર્થઃ ।

અથવા ‘વયઃ’ ઇતિચ્છાયા, કારણસ્ય-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણઃ કાર્યેણ-પ્રમાદેન સહાભેદાત્ સ્વકેન વિપ્રમાદેન=નિજાર્જિતેનાનેકવિધેન મદ્યાદિરૂપપ્રમાદજનકેન કર્મણા વયઃ=અવસ્થાવિશેષમેકેન્દ્રિયાદિકં, પશ્ચેન્દ્રિયેષુ કલલાર્બુદાદિરૂપં, દારિદ્ર્ય-દૌર્ભાગ્યાદ્યાત્મકં ચ પ્રકુરુતે ।

ભંગ હી મહાન્ અનર્થ કા ઔર ભવ કી અનન્ત પરંપરા કા બઢાનેવાલા કારણ માના ગયા હૈ ।

અથવા-જો સંયમી પાંચ પ્રકાર કે પ્રમાદોં કા આસેવન કરતા હૈ વહ અપને સંસાર કો બઢાતા હૈ, યહ ભી “વયં પકુવ્વહ” હસ પદ સે પ્રકટ હોતા હૈ । “વયં” હસકી છાયા “વ્રતં” જબ હોતી હૈ તબ પૂર્વોક્ત-રૂપ સે ઉસકા અર્થ સંગત હોતા હૈ । પરન્તુ જબ “વયં” હસકા અર્થ “વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ” હસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર કિયા જાવેગા તો ઉસકા અર્થ સંસાર હોગા; ક્યોં કિ પ્રાણી અપને ઉપાર્જિત કર્મોં કે દ્વારા સંસાર મેં હી પરિભ્રમણ કરતે રહતે હૈ ।

અથવા—“વયં” કી છાયા “વયઃ” જબ હોગી તબ હસકા યહ ભી અર્થ હોગા કિ નિજાર્જિત મદ્યાદિકરૂપપ્રમાદજનક કર્મ સે એકેન્દ્રિયાદિકરૂપ અવસ્થાઈ, તથા પંચેન્દ્રિયોં મેં ગર્ભ કે અન્દર કલલ અર્બુદાદિરૂપ, તથા

ભંગ થાય છે તે ભંગ જ મહાન અનર્થનો, અને ભવની અનંત પરંપરાને વધારવાના કારણ રૂપ બને છે.

અથવા—જે સંયમી પાંચ પ્રકારના પ્રમાદોનું આસેવન કરે છે તે પોતાના સંસારને વધારે છે તે પણ “વયં પકુવ્વહ” એ પદથી પ્રકટ થાય છે. “વયં” તેની છાયા “વ્રતં” બ્યારે હોય છે ત્યારે પૂર્વોક્ત રૂપથી તેનો અર્થ સંગત થાય છે. પરંતુ બ્યારે “વયં” તેનો અર્થ “વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર કરવામાં આવે તો તેનો અર્થ સંસાર થશે; કારણ કે પ્રાણી પોતાના ઉપાર્જિત કર્મો દ્વારા સંસારમાં જ પરિભ્રમણ કરતા રહે છે.

અથવા “વયં” ની છાયા “વયઃ” બ્યારે થશે ત્યારે તેનો એ પણ અર્થ થશે કે પોતાના ઉપાર્જિત મદ્યાદિકરૂપ પ્રમાદજનક કર્મથી ભવોની એકેન્દ્રિયાદિકરૂપ અવસ્થાઓ, તથા પંચેન્દ્રિયોના ગર્ભની અંદર કલલ અર્બુદાદિકરૂપ, તથા દારિ-



તત્ર જન્તવઃ ક્લિશ્યન્ત ઇત્યાહ-‘ યસ્મિ-’ ત્રિત્યાદિ । યસ્મિન્નિજાર્જિતપ્રમાદ-જન્યકટુકર્મકે, ભવોપગ્રાહિચતુર્ગતિકે સંસારેઽવસ્થાવિશેષે વા, ઇમે=પ્રત્યક્ષનિર્દિષ્ટાઃ પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ પ્રવ્યથિતાઃ=બહુવિધવ્યસનસમ્પાતેન પીડિતા ભવન્તિ । તતઃ કિં કુર્યાદિત્યાહ-‘ પ્રત્યુપેક્ષ્યે ’-ત્યાદિ । તદેતત્સર્વં સ્વકૃતકર્મવિપાકેન વિવિધપ્રમાદેન વા પ્રાણિનાં પ્રવ્યથનં પ્રત્યુપેક્ષ્ય=સમાલોચ્ય નિકરણાય-નિતરાં ક્રિયન્તે નાનાદુઃસ્વાવસ્થાવન્તો જન્તવો યેન તન્નિકરણં દુઃસ્વોત્પાદનં, યેન કર્મણા પ્રાણિનો દુઃસ્વનિવહ-મનુભવન્તિ તત્કર્મ નિકરણં, તસ્મૈ=તદર્થ-કર્મ ન કુર્યાત્, પ્રાણિપીડાજનકં કર્મ સર્વથા દારિદ્ર્ય ઓર દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઈં હોતી હૈં । પ્રમાદ કા કારણ કર્મ હૈં ઓર પ્રમાદ ઉસકા કાર્ય હૈં । ઇન દોનોં મેં અભેદ સંબંધ સે યહ અર્થ ઘટિત હો જાતા હૈં । અર્થાત્ જીવોં કી એકેન્દ્રિયાદિક તથા કલલ અર્બુદાદિરૂપ ંવં દારિદ્ર્ય-દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઈં કર્મકૃત માની જાતી હૈં । પરન્તુ જો યહાં પર પ્રમાદકૃત ઉન્હેં બતલાયા ગયા હૈં ઉસકા કારણ પ્રમાદ મેં ઉસકે કારણભૂત કર્મ કા અભેદ-સંબંધ માનકર હી પ્રકટ કિયા ગયા હૈં । ઇસ પ્રકાર પ્રમાદજન્ય ઇન અવસ્થાવિશેષોં મેં, અથવા ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ સંસાર મેં યે સમસ્ત પ્રાણી અનેક પ્રકાર કે કષ્ટોં કે પડુને સે રાતદિન પીડિત હોતે રહતે હૈં । ઇસલિયે જીવોં કી સ્વકૃત કર્મ કે વિપાક સે અથવા અનેક પ્રકાર કે પ્રમાદ સે દુઃખિત અવસ્થાઓં કા અચ્છી પ્રકાર વિચાર કર સંયમી મુનિ કો પ્રાણિપીડાજનક કાર્ય સર્વથા છોડ દેના ચાહિયે । અનેક પ્રકાર કી અવસ્થાઓં સે યુક્ત પ્રાણી જિસકે દ્વારા કિયે જાતે હૈં, ંસે દુઃખોં કો ઉત્પાદન કરનેવાલે કાર્યોં સે જીવ સદા દુઃખોં કી પરંપરા કા હી અનુભવ કરતે રહતે હૈં । ંસે કાર્ય સંયમી મુનિ કો

દ્રવ્ય અને દુર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઓ થાય છે. પ્રમાદનું કારણ કર્મ છે અને પ્રમાદ તેનું કાર્ય છે. આ બંનેમાં અભેદ સંબંધથી તેવો અર્થ ઘટિત થઈ બાક છે. અર્થાત્ જીવોની એકેન્દ્રિયાદિક તથા કલલ અર્બુદાદિરૂપ અવસ્થાઓ કર્મકૃત માનવામાં આવે છે, પરંતુ જે તેને આ જગ્યાએ પ્રમાદકૃત બતાવેલ છે તેનું કારણ પ્રમાદમાં તેના કારણભૂત કર્મનો અભેદ-સંબંધ માનીને જ પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકાર પ્રમાદજન્ય આ અવસ્થા-વિશેષોમાં અથવા ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમાં એ સમસ્ત પ્રાણી અનેક પ્રકારના કષ્ટો પડવાથી રાતદિન પીડિત થયા કરે છે. માટે જીવોના સ્વકૃત કર્મના વિપાકથી અથવા અનેક પ્રકારના પ્રમાદથી દુઃખિત અવસ્થાઓનો સારી રીતે વિચાર કરી સંયમી મુનિએ પ્રાણિ પીડાજનક કાર્ય સર્વથા છોડી દેવું બોધ્યું. અનેક પ્રકારની દુઃખિત અવસ્થાઓથી

વર્જયેદિત્યર્થઃ । તતોઽપિ કિમિત્યાહ ‘એષે’-ત્યાદિ । એષા=પૂર્વોક્તા સર્વારંભ-  
નિવૃત્તિરૂપા પરિજ્ઞા=તત્ત્વવિચારણા જ્ઞપ્રત્યાખ્યાનરૂપા પ્રોચ્યતે=પ્રકર્ષેણ ઉચ્યતે=  
કથ્યતે મયા । સર્વારંભપરિત્યાગે કિમિત્યાહ-‘કર્મોપશાન્તિ-’રિતિ । કર્મોપશા-  
ન્તિઃ=કર્મણામષ્ટવિધાનામુપશાન્તિઃ=ઉપશમઃ કર્મક્ષયો વા ભવતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

સદા છોડ દેના યાગ્ય છે । આ પ્રકારનાં કાર્યોનાં પરિત્યાગથી આઠ  
કર્મોનાં ઉપશાન્તિ-ઉપશમ અથવા તેનાં નાશ થાય છે । આ પ્રકાર  
થી જ્યાં જ્યાં સંયમી મુનિનાં કાર્યોનાં સર્વારંભનિવૃત્તિરૂપ જ્ઞપરિજ્ઞા અને  
પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા કહી ગઈ છે, તેનાં કારણ આ છે કે સંયમી મુનિ  
તેનાં પ્રવૃત્તિનાં પ્રમાદથી સદા સુરક્ષિત રહે । પ્રમાદ કરવાથી નવીન  
કર્મોનાં બંધન અને તેનાં ફિર પ્રમાદ આ પ્રકારનાં પરસ્પરમાં કાર્ય-  
કારણભાવનાં પરંપરા ચલે છે, જેનાં સંયમી તેનાં લક્ષ્યનાં સિદ્ધિ  
થી વંચિત રહે છે । અતઃ તે તેનાં લક્ષ્યનાં સિદ્ધિ કરવાનાં કારણ  
ગ્રહણ કરે છે જ્યાં સંયમમાર્ગનાં કાર્યોનાં ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ કરવાનાં અગ્ર-  
સર થતા રહે । આ વિચારણાથી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે આ જો  
સર્વારંભનિવૃત્તિરૂપ પરિજ્ઞાનાં કથન મેં કર્યું છે તેનાં સંયમી મુનિ  
તેનાં અષ્ટવિધ કર્મોનાં નિરાકરણ કરવાનાં લક્ષ્યનાં સિદ્ધિ કર  
લે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

યુક્ત પ્રાણી જે દ્વારા કરવામાં આવે છે, એવા હુઃખોને ઉત્પન્ન કરનાર કાર્યોનું  
નામ નિકરણ છે. એવા કાર્યોથી જીવ સદા હુઃખોની પરંપરાનો જ અનુભવ કરે  
છે. એવું કાર્ય સંયમી મુનિએ સદા છોડી દેવું જોઈએ. આવા પ્રકારના કાર્યના  
પરિત્યાગથી આઠ કર્મોની ઉપશાન્તિ-ઉપશમ અથવા તેનો નાશ થાય છે. આ  
પ્રકારે આ જગ્યાએ જે સંયમી મુનિ માટે સમારંભનિવૃત્તિરૂપ જ્ઞ-પરિજ્ઞા  
અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા કહેલ છે તેનું કારણ એ છે કે સંયમી મુનિ પોતાની  
પ્રવૃત્તિને પ્રમાદથી સદા સુરક્ષિત રાખે. પ્રમાદ કરવાથી નવીન કર્મોનો બંધ અને  
તેનાથી પછી પ્રમાદ એ પ્રકારની પરસ્પરમાં કાર્યકારણ-ભાવની પરંપરા ચાલે છે.  
જેનાથી સંયમી પોતાના લક્ષ્યની સિદ્ધિથી વંચિત રહે છે. માટે તે પોતાના લક્ષ્યની  
સિદ્ધિ કરવા માટે ગ્રહણ કરેલા સંયમ-માર્ગની તરફ ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ કરીને  
અગ્રસર થતા રહે, એવી વિચારણાથી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે આ જો સર્વારંભ-  
નિવૃત્તિરૂપ પરિજ્ઞાનું કથન મેં કર્યું છે તેનાથી સંયમી મુનિ પોતાના અષ્ટ-  
વિધ કર્મોનું નિરાકરણ કરી પોતાના લક્ષ્યની સિદ્ધિ કરી લે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥



શારીરિક-માનસિક-દુઃખોત્પાદનકારણં મમત્વબુદ્ધિરેવ, તન્નિવૃત્ત્યા મુનિર્ભવ-  
તીતિ દર્શયતિ-‘ જે મમાઇયમઈ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ-જે મમાઇયમઈ જહાઈ, સે ચયઈ મમાઇયં,

સે હુ દિટ્ઠપહે મુળી, જસ્સ નત્થિ મમાઇયં ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા-યો મમાયિતમતિં જહાતિ સ ત્યજતિ મમાયિતમ્ । સ હુ દૃષ્ટપથો મુનિ-  
ર્યસ્ય નાસ્તિ મમાયિતમ્ ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકા-‘ યો મમાયિતમતિ ’-મિત્યાદિ । યઃ પરિગ્રહજન્યકટુવિપાકજ્ઞો  
‘ મમાયિતમતિ ’ મમેત્યેવંરૂપો મમાયિતઃ પરિગ્રહસ્તસ્ય મતિર્મમાયિતમતિસ્તાં મમા-  
યિતમતિં જહાતિ=ત્યજતિ, સ એવ મમાયિતં દ્રવ્યતઃ પુત્રકલત્રહિરણ્યસુવર્ણૈશ્વર્યા-

શારીરિક એવં માનસિક દુઃખોં કી ઉત્પત્તિ કા કારણ એક મમત્વ-  
બુદ્ધિ હી હૈ । ઉસકા જબતક પરિહાર નહીં કિયા જાવેગા તબતક વાસ્ત-  
વિક મુનિપના નહીં આસકતા હૈ । ઇસલિયે મુનિ હોને કે લિયે ઉસકી  
નિવૃત્તિ હોના આવશ્યક હૈ । ઇસ વાત કો દિશ્વાતે હુએ સૂત્રકાર કહતે  
હૈ-‘ જે મમાઇયમઈ ’ ઇત્યાદિ ।

જો યહ સમજતા હૈ કિ ‘ પરિગ્રહ કા સંગ્રહ મહાદુઃખદાયી હૈ, તથા  
ઇસકા ફલ ભી કટુક હી હૈ ’ વહ કમી ભી પરિગ્રહ કે ઉપાર્જન કરને મેં  
નહીં પૈસતા હૈ, તથા જો ઇસ વાત કો ભી ભલીભાંતિ જાન ચુકા હૈ કિ  
‘ પરિગ્રહ માત્ર હી દુઃખપ્રદ એવં પરિણામ મેં અનેક અનર્થોં કા મૂલ  
હૈ ’ વહ તો ઉસ પરિગ્રહ કી અભિલાષા તક ભી નહીં કરતા હૈ,  
ચાહે વહ દ્રવ્ય સે પુત્ર, કલત્ર, હિરણ્ય, સુવર્ણ, ऐश्वर्यादिरूप પરિગ્રહ હો,

શારીરિક અને માનસિક દુઃખોની ઉત્પત્તિનું કારણ એક મમત્વ-બુદ્ધિ જ  
છે. તેનો જ્યાં સુધી પરિહાર નહિ કરવામાં આવે ત્યાં સુધી વાસ્તવિક મુનિપણું  
આવી શકતું નથી. માટે મુનિ હોવાથી તેની નિવૃત્તિ આવશ્યક છે. એ વાતને  
દેખાડીને સૂત્રકાર કહે છે-‘ જે મમાઇયમઈ ’ ઇત્યાદિ.

જે એમ સમજે છે કે ‘ પરિગ્રહનો સંગ્રહ મહા દુઃખદાયી છે, તથા તેનું  
ફળ પણ કટુ જ છે ’ તે કોઈ વખત પણ પરિગ્રહનો ઉપાર્જન કરવામાં ફસતા  
નથી, તથા જે આ વાતને ભલીભાંતિથી જાણે છે કે ‘ પરિગ્રહમાત્ર દુઃખપ્રદ અને  
પરિણામમાં અનેક અનર્થોનું મૂળ છે ’. તે તો તે પરિગ્રહની અભિલાષા સુધ્ધાં  
કરતા નથી, ભલે તે દ્રવ્યથી પુત્ર, કલત્ર, હિરણ્ય, સુવર્ણ, ऐश्वર્યાદિરૂપ પરિગ્રહ



દિરૂપં ભાવતો મૂર્છારૂપમાત્મપરિણામં ત્યજતિ=પરિહરતિ-પરિગ્રહબુદ્ધિપરિત્યાગેન પરિગ્રહઃ સુત્યજો ભવતિ । યસ્ય=અનિર્દિષ્ટનામધેયસ્ય મમાયિતં નાસ્તિ સ હુ સ એવ 'દૃષ્ટપથઃ' દૃષ્ટો રત્નત્રયરૂપઃ પન્થાઃ=મોક્ષમાર્ગો યેન સ દૃષ્ટપથઃ પરિજ્ઞાતમોક્ષ-માર્ગો મુનિઃ=અનગારો ભવતિ । મમાયિતમતિપરિત્યાગેનાવશ્યં મમાયિતઃ પરિત્યક્તો ભવતિ, તત્પરિત્યાગે ચ દ્રવ્યભાવરૂપો મમાયિતવ્યવદાર્થસાર્થો હિરણ્યાદિરૂપોઽપિ નિયતં પરિહતો ભવતિ । એવં પશ્ચાનુપૂર્વ્યા મૈથુનમતિપરિત્યાગેન મૈથુનં સુતરાં પરિ-ત્યક્તં ભવતિ । इत्थं शेषत्रतेष्वपि योजनीयम् ।

चाहे भाव से मूर्च्छारूप हो; इन दोनों प्रकार के परिग्रह का परित्याग करता है । जहां परिग्रहबुद्धि का परित्याग है वहां परिग्रह का परित्याग करना कोई कठिन कार्य नहीं है । यह तो अनायास ही हो जाता है । परिग्रह का अपनाना या बाह्यपदार्थों में परिग्रहरूपता लाना इच्छा के अधीन है । जब उस प्रकार की इच्छा ही नहीं है, तब बाह्यपदार्थों में परिग्रहता ही नहीं आसकती है । जिस व्यक्ति के पास इस प्रकार का परिग्रह नहीं है वही रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग का द्रष्टा मुनि कहा गया है ।

इसका सारांश यही है कि जिसने परिग्रह की बुद्धि का परित्याग कर दिया है उसके परिग्रह का त्याग अवश्य होता है । इसके परित्याग से द्रव्यभावरूप हिरण्यादि तथा मूर्च्छारूप परिग्रह नियम से दूर हो जाते हैं । यहां पर परिग्रहमति के त्याग से जो परिग्रह का त्याग करना बत-लाया गया है वह पश्चानुपूर्वी को लेकर कहा गया है । इससे यह भी समझ लेना चाहिये कि मैथुनमति के परित्याग से मैथुन का तथा चोरी

હોય, ભલે ભાવથી મૂર્છારૂપ હોય, આ બંને પ્રકારના પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરે છે. જ્યાં પરિગ્રહ-બુદ્ધિનો પરિત્યાગ છે, ત્યાં પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરવો કાંઈ કઠિન કાર્ય નથી. એ તો અનાયાસ જ બની શકે છે. પરિગ્રહને અપનાવવો અગર બાહ્ય પદાર્થોમાં પરિગ્રહરૂપતા લાવવી ઇચ્છાને આધીન છે. જ્યારે આવા પ્રકારની ઇચ્છા જ નથી ત્યારે બાહ્ય પદાર્થોમાં પરિગ્રહતા આવી શકતી નથી. જે વ્યક્તિની પાસે આવા પ્રકારનો પરિગ્રહ નથી તે જ રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ માર્ગનો દ્રષ્ટા મુનિ કહેવાય છે.

તેનો સારાંશ એ છે કે જેણે પરિગ્રહની બુદ્ધિનો પરિત્યાગ કરેલ છે તેનાથી પરિગ્રહનો ત્યાગ અવશ્ય થાય છે. તેના પરિત્યાગથી દ્રવ્ય-ભાવરૂપ હિરણ્યાદિ તથા મૂર્છારૂપ પરિગ્રહ નિયમથી દૂર થઈ જાય છે. આ કેટલાં પરિગ્રહમતિના ત્યાગથી જે પરિગ્રહનો ત્યાગ કરવો બતાવેલ છે તે પશ્ચાનુપૂર્વીને લઈને કહેલ છે. તેથી એ પણ સમજી લેવું જોઈએ કે મૈથુનમતિના પરિત્યાગથી મૈથુનનો, તથા ચોરી કરવાની

દણ્ડિશાક્યાદયઃ પરતૈર્થિકા યદ્યપિ કિશ્ચિત્સચિત્તાદિપરિત્યાગિનોઽપિ સ્વ-  
માનપૂજાદિમૂર્છાવત્ત્વાદધઃકર્મૌદેશિકાદિભોજિત્વાદ્રાગદ્વેષાનુગતત્વાચ્ચ સપરિગ્રહા  
એવ દરીદ્રશ્યન્તે । સર્વથા પરિગ્રહપરિત્યાગી મુનિરેવ મોક્ષમાર્ગ સમારોહતિ નાન્ય  
ઇતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

પુનર્મુનિકર્ત્તવ્યમાહ—‘તં પરિણાય’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તં પરિણાય મેઘાવી વિદિત્તા લોકં વંતા લોકસન્નં  
સે મદ્મં પરક્રમિજ્જા--ત્તિવેમિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—તં પરિણાય મેઘાવી વિદિત્તા લોકં વાન્તા લોકસંજ્ઞાં સ મતિમાન  
પરાક્રમેત । ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટોકા—‘ત’-મિત્યાદિ । મેઘાવી=વિદિતપરિગ્રહકટુવિપાકઃ તં મમાયિતં  
પરિણાય=જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાતા પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞયા પરિહૃત્ય ચ લોકં ષડ્જીવનિ-  
કરને કી મતિ કે ત્યાગ સે ચોરી કા તથા જૂઠ બોલને કી મતિ કા ત્યાગ  
કરને સે જૂઠ આદિ કા બી સહજ મેં ત્યાગ હો જાતા હૈ । ઇસ કથન સે  
દણ્ડી, શાક્યાદિ પરમતાવલંબી સાધુ યદ્યપિ કુછર સચિત્તાદિ પદાર્થો  
કે પરિત્યાગી હોતે હૈ, પરન્તુ અપની માનપ્રતિષ્ઠા આદિ મેં મૂર્છા રાખને  
સે, આધાકર્મ ઔદેશિક આદિ આહાર કે ભોગને સે ઔર રાગદ્વેષ-  
સહિત હોને સે વે પરિગ્રહધારી હી હૈ । જો પરિગ્રહ કે સર્વથા પરિત્યાગી  
હૈ વે હી મુનિ હૈ ઔર વે હી મોક્ષમાર્ગ પર ચલને વાલે હૈ, અન્ય નહીં;  
એસા સમજના ચાહિયે । યહી ઇસ સૂત્ર કા ભાવાર્થ હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ફિર બી મુનિ કા કર્તવ્ય કહતે હૈ—‘તં પરિણાય’ ઇત્યાદિ ।

જિસને પરિગ્રહ કે કટુકવિપાક કો જાન લિયા હૈ એસા મેઘાવી  
મુનિ જ્ઞપરિજ્ઞા સે પરિગ્રહ કો જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ઉસકા

મતિના ત્યાગથી ચોરીનો તથા જુઠ બોલવાની મતિના ત્યાગથી જુઠ આદિનો  
સહજમાં ત્યાગ થઈ શકે છે. આ કથનથી દંડી, શાક્યાદિ પરમતાવલંબી સાધુ  
જોકે કોઈ કોઈ સચિત્તાદિ પદાર્થોના પરિત્યાગી હોય છે પરંતુ પોતાની માન  
પ્રતિષ્ઠા આદિમાં મૂર્છા રાખવાથી આધાકર્મ ઔદેશિક આદિ આહારના ભોગવ-  
વાથી અને રાગદ્વેષ-સહિત હોવાથી તે પરિગ્રહધારી જ છે, જે પરિગ્રહના સર્વથા  
પરિત્યાગી છે તે જ મુનિ છે અને તે જ મોક્ષમાર્ગ પર ચાલવાવાળા છે, બીજા નહિ;  
એવું સમજવું જોઈએ. એ જ આ સૂત્રનો ભાવાર્થ છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ફરી પણ મુનિનું કર્તવ્ય કહે છે—‘તં પરિણાય’ ઇત્યાદિ.

જેણે પરિગ્રહના કટુ વિપાકને બાણી લીધા છે એવા મેઘાવી મુનિ જ્ઞપરિજ્ઞાથી  
પરિગ્રહને બાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો સર્વથા પરિત્યાગ કરી આપે છે. ‘પરિ-



कायरूपं परिग्रहाग्रहिणं=परिग्रहजनितकटुविपाकमनुभवन्तं, यद्वा-लोकं कषायलो-  
कमधःपतनशीलम् “अहो वयइ कोहेणं, माणेणं अहमा गई। माया गईपडिग्घाओ,  
लोहाओ दुहओ भयं” ॥ (उत्तरा० अ० ९ गा. ५४) इतिवचनात् ।  
अथवा-लोकम् आपातसुखदं परिणामकटुकं यथा—

“किंपाकफलसमाना विषया हि निषेव्यमाणरमणीयाः ।

पश्चाद्भवन्ति कटुकास्त्रपुषिफलनिबन्धनैस्तुल्याः ” इति ॥ १ ॥

सर्वथा परित्याग कर देवे । ‘परिग्रह में आसक्त बना हुआ यह षड्जीव-  
निकायरूप लोक परिग्रह से उत्पन्न हुए कटुक-विपाक का ही हमेशा  
अनुभव करता रहता है’ ऐसा समझकर लोकसंज्ञा-लोक की आहारादिक-  
मूर्च्छारूप संज्ञा का परित्याग कर हेयोपादेयविवेक से युक्त अन्तः-  
करण वाला बन वह मुनि संयम के अनुष्ठान करने में पुरुषार्थ करे ।

सूत्र में “लोकं” इस पद का अर्थ एक तो षड्जीवनिकायरूप  
लोक होता है, दूसरा अर्थ-कषायलोक, तथा आपाततः सुन्दर-थोड़े  
समय के लिये अच्छा लगने वाला परन्तु परिणाम में दुःखप्रद विषय-  
भोगादिक भी होता है । क्रोधादिकषाय जीवों को कभी भी किसी भी  
अवस्था में सुखदायी नहीं हैं । इनके सेवन से जीवों का सदा अधःपतन  
ही होता है । कहा भी है—“अहो वयइ कोहेणं, माणेणं अहमा गई”  
इत्यादि । अर्थात् क्रोध से आत्मा का अधःपतन होता है और मान से  
अधमगति होती है । माया से शुभगति का प्रतिघात होता है और लोभ

अहमां आसक्तानीने ते षड्जीवनिकायरूप लोक परिग्रहस्थी उत्पन्न थयेस कटुक विपा-  
कनो ऽहमेशां अनुभव करता रहे ।’ એવું સમજીને લોકસંજ્ઞા-લોકની આહાર-  
શક્તિક મૂર્ચ્છારૂપ સંજ્ઞાનો પરિત્યાગ કરીને હેયોપાદેયવિવેકથી યુક્ત અંતઃકરણવાળા  
બની તે મુનિ સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવામાં પુરુષાર્થ કરે.

સૂત્રમાં “લોક” આ પદનો અર્થ એક તો ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોક  
થાય છે, બીજો અર્થ કષાયલોક, તથા આપાતતઃ સુંદર-થોડા વખત માટે સારું  
લાગનાર પરંતુ પરિણામમાં દુઃખરૂપ વિષયભોગાદિક પણ થાય છે. ક્રોધાદિ કષાય  
જીવોને કોઈ વખત પણ કોઈ પણ અવસ્થામાં સુખદાયી થતા નથી. તેના સેવનથી  
જીવોનું સદા અધઃપતન જ થાય છે. કહ્યું છે “અહો વયઈ કોહેણં, માણેણં અહમા ગઈ”  
ઈત્યાદિ. અર્થાત્ ક્રોધથી આત્માનું અધઃપતન થાય છે અને માનથી અધમગતિ  
થાય છે. માયાથી શુભગતિનો પ્રતિઘાત થાય છે. અને લોભથી ઇહલોક અને



વિદિત્વા=જ્ઞાત્વા લોકસંજ્ઞાં લોકસ્ય=પ્રાણિગણસ્ય સંજ્ઞા=આહારાદિમૂર્ચ્છારૂપા,  
તાં લોકસંજ્ઞાં વાન્ત્વા=ઉદીર્ય પરિત્યજ્યેત્યર્થઃ, સ મતિમાન્ વિદિતદેયોપાદેયઃ  
પરાક્રમેત=સંયમાનુષ્ઠાને પરાક્રમં કુર્યાત્ । ઇતિ-શબ્દોઽધિકારસમાપ્ત્યર્થકઃ । બ્રવી-  
મીત્યસ્યાર્થસ્તૂત્ત એવ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

સંયમાવરણે પરાક્રમમાણઃ પરિહૃતમમાયિતોઽનગારઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—  
'નારં સહઈ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—નારં સહઈ વીરે, વીરે ન સહઈ રં ।

જમ્હા અવિમણે વીરે તમ્હા વીરે ન રજ્જઈ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—નારં સહતે વીરો, વીરો ન સહતે રતિમ્ ।

યસ્માદવિમના વીરસ્તસ્માદ્વીરો ન રજ્જયતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

સે ઇહ લોક એવં પરલોક સમ્બન્ધી ભય રહતા હૈ । તથા વિષયભોગાદિક  
મી કિંપાકફલ કે સમાન ડપર સે હી મનોહર માલૂમ પડતે હૈં પરન્તુ  
પરિણામ મેં જીવોં કે લિયે નરક-નિગોદાદિ ગતિયોં કે કારણ બનતે હૈં ।  
કિંપાકફલ કા સેવન જિસ પ્રકાર પ્રાણોં કા હરણ કરને વાલા હોતા હૈ  
ઉસી પ્રકાર યે મી ભવર મેં જીવોં કો અનન્ત યાતનાઓં કે દેનેવાલે હોતે  
હૈં । એસા સમજ્ઞકર ઉસ કષાયલોક કા સંયમી મુનિ સદા ત્યાગ કર દેવે ।

યહાં “ઈતિ” શબ્દ અધિકાર કી પરિસમાપ્તિ કા સૂચક હૈ  
“બ્રવીમિ” પદ કા અર્થ પહેલે કહા જા ચુકા હૈ । ॥ સૂ૦ ૪ ॥

સંયમ કે પાલન કરને મેં પરાક્રમશાલી ઔર પરિગ્રહ કા ત્યાગી  
અનગાર કૈસા હોતા હૈ ? સો કહતે હૈં—‘નારં સહઈ’ ઇત્યાદિ ।

પરલોક સંબન્ધી ભય રહે છે તથા વિષય ભોગાદિક પણ કિંપાક ફળ સમાન  
ઉપરથી જ મનોહર માલૂમ પડે છે પરંતુ પરિણામમાં જોવા માટે નરક નિગોદાદિ  
ગતિઓનું કારણ બને છે. કિંપાક ફળનું સેવન જે પ્રકારે પ્રાણોનું હરણ કરે છે  
તે પ્રકારે આ પણ ભવોભવમાં જોવાને અનંત યાતનાઓ દેનાર બને છે, એવું  
સમજીને તે કષાયલોકનો તથા વિષયલોકનો સંયમી મુનિ સદા ત્યાગ કરે.

અહીં “ઈતિ” શબ્દ અધિકારની પરિસમાપ્તિનો સૂચક છે. “બ્રવીમિ”  
પદનો અર્થ પહેલાં કરવામાં આવેલ છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

સંયમનું પાલન કરવામાં પરાક્રમશાલી અને પરિગ્રહના ત્યાગી અણુગાર  
કેવા હોય છે તે કહે છે—“નારં સહઈ” ઇત્યાદિ.

ટીકા—‘નારતિ—’ મિત્યાદિ । વીરઃ=કર્મવિદારણસમર્થઃ પરિહૃતપુત્રકલત્રાદિઃ સંયમી કદાચિન્મોહનીયોદયાત્સમુત્પન્નામ્, અરતિમ્=ચારિત્રવિષયામપ્રીતિ ન સહતે=ન ક્ષમતે, એવમેવ વીરઃ=પૂર્વોક્તઃ રતિ=વિષયાનુરાગં ચ ન સહતે=ન ક્ષમતે, ધર્મધ્યાનપરા-યણો મુનિઃ સમુત્પન્નમાત્રામપિ રતિમરતિં ચ નિષ્કાસયતીત્યર્થઃ । વીરો=યસ્માત્કારણાત્ રત્યરતિપરિત્યાગાત્ અવિમનાઃ=તત્રાનાસક્તઃ, તસ્માત્ વીરઃ શબ્દાદિકામગુણેષુ ન રજ્યતિ=મૂર્છાં ન પ્રાપ્નોતિ । અત્ર વીર-શબ્દસ્ય પુનઃ પુનરુપાદાનં કર્મરિપુરવશ્યં વિજેતવ્યં ઇતિ ઘોતનાયેતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૫ ॥

“નારતિં સહતે વીરઃ” અર્થાત્ કર્મોં કે વિનાશ કરને મેં જો શક્તિસંપન્ન હૈ, એવં જિસને પુત્રકલત્રાદિ પરિગ્રહ કા સર્વથા પરિહાર કર દિયા હૈ એસા વીર સંયમી મુનિ કદાચિત્ મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે ચારિત્ર મેં ઉત્પન્ન હુએ અરતિ-પરિણામ કો કમીં મી સહન નહીં કર સકતા હૈ, ઓર ન વિષયોં કી તરફ ઝીંચને વાલી રતિ કો કમીં હૃદય મેં સ્થાન દે સકતા હૈ; કારણ કિ યે દોનોં પ્રકાર કે પરિણામ સંયમ એવં ધર્મધ્યાન કે વિઘાતક હૈં । સંયમી કા અન્તઃકરણ સદા ધર્મધ્યાન મેં મગ્ન રહતા હૈ । કદાચિત્ કર્મ કી પ્રબલતા સે ઇસ તરહ કે પરિણામ ઉસકે ચિત્ત મેં આ મી જાવેં તો વહ મુનિ એસે પરિણામોંકો અપને ધર્મધ્યાન કે પ્રભાવ સે શીઘ્રાતિશીઘ્ર દૂર કર દેતા હૈ । ઇન પરિણામોં કે પ્રતિ ઉસ સંયમી કી આસક્તિ નહીં હોતી । ઇસીલિયે ઇસ પ્રકાર કે રતિ-અરતિરૂપ પરિણામ, વિના કિસી રુકાવટ કે ઉસકી આત્મા સે બહુત શીઘ્ર દૂર હો જાતે હૈં । જૈસે સૂઝે ઘડે પર આઈ હુઈં વાલુ વિના કુછ કિયે ઉસ ઘડે

નારતિં સહતે વીરઃ અર્થાત્ કર્મોના વિનાશ કરવામાં જે શક્તિસંપન્ન છે અને જેણે પુત્ર કલત્રાદિ પરિગ્રહનો સર્વથા ત્યાગ કરેલ છે એવા વીર સંયમી મુનિ કદાચિત્ મોહનીય કર્મના ઉદયથી ચારિત્રમાં ઉત્પન્ન થયેલ અરતિ પરિણામને કોઈ વખત પણ સહન કરી શકતા નથી, અને વિષયોની તરફ ઝેંચવાવાળી રતિને પણ હૃદયમાં કોઈ વખત પણ સ્થાન ન આપે, એટલે આપી શકતા નથી. કારણ કે એ બન્ને પ્રકારના પરિણામ સંયમ અને ધર્મધ્યાનના વિઘાતક છે. સંયમીનું અંતઃકરણ સદા ધર્મધ્યાનમાં જ મગ્ન રહે છે. કદાચ કર્મની પ્રબલતાથી આવા પ્રકારનું પરિણામ તેના હૃદયમાં આવી જાય તો તે મુનિ આવા પરિણામોને પોતાના ધર્મધ્યાનના પ્રભાવથી જલ્દી દૂર કરી નાંખે છે. આ પરિણામો તરફ તે સંયમીની આસક્તિ થતી નથી, માટે આ પ્રકારના રતિઅરતિરૂપ પરિણામ કોઈ જાતની રુકાવટ વિના તેના આત્માથી જલ્દી દૂર થઈ જાય છે. જેવી રીતે સુકા ઘડા ઉપર ઉડીને આવેલી ઘુડ કાંઈ પણ કર્યા વિના તે ઘડાથી દૂર થઈ જાય છે તે પ્રકારે



તતઃ કિમાયાતમિતિ દર્શયતિ—‘સદે’ ઇત્યાદિ,

મૂલમ્—સદે ય ફાસે અહિયાસમાણે, નિર્વિંદ નંદિં ઇહ જીવિ-  
યસ્સ । મુળી મોળં સમાયાય, ધુળે કમ્મસરીરગં । પંતં લૂહં ચ  
સેવંતિ, વીરા સંમત્તદંસિણો । એસ ઓહંતરે મુળી તિન્ને મુત્તે વિરણ  
વિયાહિણ--ત્તિવેમિ ॥ સૂ. ૬ ॥

છાયા—શબ્દાન્ ચ સ્પર્શાનધિસહમાનો, નિર્વિંદ નન્દિમિહ જીવિતસ્ય, મુનિમૌનં  
સમાદાય ધુનીત કર્મશરીરકં, પ્રાન્તં રૂક્ષં ચ સેવન્તે વીરાઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ, એ  
ઓઘન્તરો મુનિસ્તીર્ણો મુક્તો વિરતો વ્યાખ્યાત ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકા—‘શબ્દા’—નિત્યાદિ, શબ્દાન્ સ્પર્શાંશ્ચ—ઇષ્ટાનનિષ્ઠાંશ્ચ, આઘન્તગ્રહણાદિ-  
તરેષાં મધ્યવર્તિનાં રૂપાદીનામપિ ગ્રહણમ્ । અધિસહમાનઃ=સમ્યક્ સહમાનઃ રાગ-  
સે દુર હો જાતી હૈ, ઇસી પ્રકાર ઇન પરિણામોં કી ખી યહી સ્થિતિ હોતી  
હૈ । ઇસીલિયે સંયમી મુનિ શબ્દાદિક કામગુણોં મેં મૂછાંભાવ કો પ્રાપ્ત  
નહીં હોતે હૈં । સૂત્ર મેં સૂત્રકાર ને બારં જો ‘વીર’ શબ્દ કા પ્રયોગ કિયા  
હૈ, ઉસસે યહી ધ્વનિત હોતા હૈ કિ કર્મરૂપી શત્રુ એસે સંયમીજનોં કે  
દ્વારા અવશ્ય જીતને કે યોગ્ય હૈ ॥ સૂ. ૬ ॥

ઇસસે કયા સિદ્ધ હોતા હૈ ?—ઇસ બાતકો દિખલાતે હૈ—“સદે ય  
ફાસે” ઇત્યાદિ ।

સૂત્ર મેં અન્તકી કર્ણ-ઇન્દ્રિય કે વિષય શબ્દ કા ઓર આદિ કી  
સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય કે વિષય સ્પર્શ કા નિર્દેશ કિયા હૈ । ઇસસે મધ્યવર્તી  
ઇતર ઇન્દ્રિયોં કે વિષય-રૂપાદિકોં કા ખી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । શિષ્ય કો  
સંબોધન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે મેધાવી શિષ્ય ! ઇન્દ્રિયોં  
કે ઇષ્ટ ઓર અનિષ્ટ વિષયોં મેં તુમ સર્વથા રાગદ્વેષ મત કરો । શાસ્ત્ર

આ પરિણામોની પણ તે સ્થિતિ છે. માટે સંયમી મુનિ શબ્દાદિક કામગુણોમાં  
મૂર્છાભાવને પ્રાપ્ત થતાં નથી. સૂત્રમાં સૂત્રકારે વારંવાર જે વીર શબ્દનો પ્રયોગ  
કર્યો છે તેથી એ નક્કી થાય છે કે કર્મરૂપી શત્રુ એવા સંયમીજનોથી અવશ્ય  
હતવા યોગ્ય છે ॥ સૂ. ૬ ॥

આથી શું સિદ્ધ થાય છે ? એ વાતને બતાવે છે.—“સદે ય ફાસે” ઇત્યાદિ.

સૂત્રમાં અન્તની કર્ણ ઇન્દ્રિયના વિષય-શબ્દનો અને આદિની સ્પર્શન  
ઇન્દ્રિયના વિષય-સ્પર્શનો ગ્રહણ થયેલ છે, આથી મધ્યવર્તી બીજા ઇન્દ્રિયોનો  
વિષય-રૂપાદિકોનો પણ ગ્રહણ થાય છે. શિષ્યને સંબોધન કરીને સૂત્રકાર કહે  
છે કે હે મેધાવી શિષ્ય ! ઇન્દ્રિયોના ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ વિષયોમાં તમે સર્વથા રાગ



દ્રેષાવકુર્વાણઃ સન્, इह=તિર્યગ્લોકે જીવિતસ્ય=અસંયમજીવિતસ્ય નન્દિ=પ્રમોદં  
'મમેદં ધનાદિ ભવતિ, ભવિષ્યતિ, અમૂચ્ચ' इत्यादिविकल्परूपां मनस्तुष्टिं निर्विन्द=  
અનાદ્રિયસ્વ=અપાકુર્વિત્યર્થઃ, ऐश्वर्यरूपवलादिषु सर्वत्र मनःसंकल्पविकल्पजालं मह-  
दनर्थकरमिति तात्पर्यम् ।

કા યહ ઉપદેશ હૈ કિ “ સદેસુ ય ભદ્યપાવણસુ સોયવિસયમુવગણસુ  
તુદ્દેણ વા રુદ્દેણ વા સમણેણ સયા ન હોયઞ્વં ” શબ્દ કર્ણપ્રિય હોં યા કર્ણ-  
કટુક હોં, ઇન્દ્રિયોં કે વિષય યાહે મનોજ્ઞ હોં, યાહે અમનોજ્ઞ હોં,  
સંયમી કો ડનમેં કમી મી નતુષ્ટ હોના યાહિયે ઓર નરુષ્ટ હી હોના  
યાહિયે । સંસાર મેં સમી પ્રકાર કી સામગ્રી હૈ । બુદ્ધિમાન્ સંયમી વહી હૈ  
જો ઇનમેં સે કિસી મેં મી ન ફૈસે ઓર સબમેં સમતાભાવસંપન્ન બન  
અપને લક્ષ્ય કી સિદ્ધિ મેં તત્પર રહે । અસંયમજીવન કી જો યહ  
આત્મપરિણતિ હૈ કિ ‘મેરે પાસ પહિલે ઇતના ધનાદિ થા, અબ ઇતના હૈ,  
આગે ઓર હો જાવેગા,’-ઇન સબ કા પરિત્યાગ કર દો । ઢાઈ દ્વીપ મેં  
હી સંયમમાર્ગ કી આરાધના કરને કા સુવર્ણ અવસર હાથ આતા હૈ;  
બાકી ઇસ તિર્યગ્લોક મેં ઇસ સંયમભાવ કી આરાધના હો હી નહીં સકતી ।  
ઇસલિયે મમત્વરૂપ સંકલ્પવિકલ્પમય માનસિક તુષ્ટિ કા પરિહાર કરો,  
કારણ કિ ઇન ऐश्वर्य, रूप और बल आदि में किया गया मानसिक संकल्प-  
विकल्प का जाल आत्मा के लिये महान् अनर्थकर होता है । ये पदार्थ हों

દ્રેષ ન કરો. શાસ્ત્રનો એ ઉપદેશ છે કે “ સદેસુ ય ભદ્યપાવણસુ સોયવિસય-  
મુવગણસુ, તુદ્દેણ વા રુદ્દેણ વા સમણેણ સયા ન હોયઞ્વં ” ઇન્દ્રિયોનો વિષય ભલે  
મનોજ્ઞ હોય અગર અમનોજ્ઞ હોય, શબ્દ ભલે કર્ણપ્રિય હોય, અગર કર્ણકટુક  
હોય, સંયમીએ તેમાં કોઈ વખત પણ ન આનંદ માનવો જોઈએ કે ન રૂષ્ટ  
થવું જોઈએ. સંસારમાં બધી સામગ્રી છે. બુદ્ધિમાન્ સંયમી તે જ છે જે આમાંથી  
કોઈમાં પણ ન ફૈસે અને બધામાં સમતાભાવસંપન્ન બની પોતાના લક્ષ્યની  
સિદ્ધિમાં તત્પર રહે. અસંયમ જીવનની જે આ આત્મપરિણતિ છે કે ‘મારી  
પાસે પહેલાં આટલું ધન હતું, હવે આટલું છે, આગળ વળી વધારે થઈ જશે’  
આ સંધાના પરિત્યાગ કરી આપો. અહીંદ્વીપમાં જ સંયમમાર્ગની આરાધના  
કરવાનો સુઅવસર હાથ આવે છે. બાકી આ તિર્યગ્લોકમાં આ સંયમભાવની  
આરાધના બની જ શકતી નથી, માટે મમત્વરૂપ સંકલ્પવિકલ્પમય માનસિક  
તુષ્ટિનો પરિહાર કરો, કારણ કે એ ऐश्वर्य, रूप અને બલ આદિમાં કરેલા માન-  
સિક સંકલ્પ વિકલ્પની બાલ આત્મા માટે મહાન અનર્થકારી છે. એ પદાર્થો

યદ્વા-ઇહ=મનુષ્યજીવિતે વા પશ્ચવિધવ્રતાતીચારાણાં મધ્યે વ્યતીતં નિન્દ, સંજાયમાનં સંવૃણુ, ભવિષ્યન્તં ચાતીચારં પ્રત્યાખ્યાહીત્યાશયઃ । કિમાશ્રિત્ય નર્ન્દિ નિર્વિન્દેદિત્યાહ-‘મુનિ-’રિત્યાદિ । મુનિઃ=કર્મવિપાકજ્ઞો યતિઃ, ‘મૌનં’ મુનેરયં મૌનઃ સંયમો વાક્સંયમો વા ઉપલક્ષણતયા કાય-મનસોરપિ સંયમસ્તં તો આત્મા કો ઇનસે કોઈ લાભ નહીં, નહીં હોં તો ઇનકે અભાવ મેં આત્મા કો કોઈ હાનિ નહીં । આત્મા કી જો નિજ चीज है वह इनके संयोग और वियोग में न अच्छी होती है और न बिगड़ती ही है । ऐसा ख्यालकर बाह्य वस्तु में संयमी को अपना अन्तःकरण आसक्तियुक्त नहीं करना चाहिये ।

અથવા—શિષ્ય કો સમજાતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે મેધાવી ! અપને મનુષ્ય જીવન કો સફલિત કરને કે લિયે જો સંયમજીવન તુમને અંગીકાર કિયા હૈ, ઉસમેં જો યે પાંચ મહાવ્રતોં કી તુમ આરાધના કર રહે હો સો યહ સદા ધ્યાન રખો કિ ઇનમેં જો પહિલે અતીચાર લગ ચુકે હૈં ઉનકી નિંદા કરો, વર્તમાન મેં અતીચાર ન લગને પાવેં ઇસકી સંભાલ રખો, તથા આગામીકાલ મેં લગને વાલે અતીચારોં કા પ્રત્યાખ્યાન કરો । કર્મ કે વિપાક કા જ્ઞાતા મુનિ વાચિક સંયમ કો, ઉપલક્ષણ સે કાયિક ઔર માનસિક સંયમ કો ભલીપ્રકાર ગ્રહણ કર કાર્મણ-શરીર સે અથવા કર્મજન્ય ઇસ ઔદારિક શરીર સે રહિત હો જાતા હૈ અર્થાત્ મોક્ષ કા ભોક્તા બન જાતા હૈ ।

હોય તો આત્માને એનાથી કોઈ લાભ નહિ. ન હોય તો તેના અભાવમાં આત્માને કોઈ હાનિ નહી. આત્માની જે નિજ ચીજ છે તે તેના સંયોગ અને વિયોગમાં નથી સારી બનતી અને બગડતી પણ નથી. એવો ખ્યાલ કરી બાહ્ય વસ્તુમાં સંયમીએ પોતાનું અંતઃકરણ આસક્તિયુક્ત નહિ કરવું જોઈએ.

અથવા શિષ્યને સમજાવતાં સૂત્રકાર કહે છે કે હે મેધાવી ! પોતાના મનુષ્ય જીવનને સફળ બનાવવા માટે જે સંયમ જીવન તમે અંગીકાર કર્યું છે, તેનાં જે આ પાંચ મહાવ્રતોની તમે આરાધના કરી રહ્યા છો તો એ સદા ધ્યાનમાં રાખો કે તેમાં જે પહેલાં અતિચાર લાગી ચુકેલ છે તેની નિંદા કરો. વર્તમાનમાં અતિચાર ન લાગી બધે તેની સંભાળ રાખો અને આવતા કાળમાં લાગવાવાળા અતિચારોનું પ્રત્યાખ્યાન કરો. કર્મના વિપાકના જ્ઞાતા મુનિ વાચિક સંયમને ઉપલક્ષણથી કાયિક અને માનસિક સંયમને ભલી પ્રકારે ગ્રહણ કરી કાર્મણશરીરથી અથવા કર્મજન્ય આ ઔદારિક શરીરથી રહિત થઈ બધે છે, અર્થાત્ મોક્ષનો ભાગી બની બધે છે.



‘समादाय’ सम्=सम्यक् आदाय=गृहीत्वा कर्मशरीरकं कर्मणशरीरमौदारिकं वा धुनीत=परिशातयेदपनयेदित्यर्थः, अथवा-‘मुणी’ इत्यस्य ‘हे मुने!’ इतिच्छाया, हे सम्यक्त्वदर्शिन! मौनं=संयमं समादाय=सम्यग् गृहीत्वा कर्मशरीरकं धुनीहि पृथक्कुरु, तत्र ममत्वं न कुर्वेत्यर्थः। यतः कर्मशरीरे मुनेर्ममत्वं न भवति तस्मादेवाह-‘प्रान्त-’मित्यादि। सम्यक्त्वदर्शिनः=वस्तुतत्त्वपरिज्ञानकुशलाः, यद्वा ‘समत्तदंसिणो’ इत्यस्य ‘समत्वदर्शिनः’ इतिच्छाया, समत्वदर्शिनः=रागद्वेषवर्जिताः,

अथवा—“मुणी” इस शब्द की छाया ‘मुने!’ यह भी होती है। जिसका भाव यह है कि हे सम्यक्त्वदर्शी! तुम संयम को अच्छी तरह ग्रहण कर कर्मशरीर को अपने से पृथक् करो, अर्थात् यह समझो कि यह कर्मशरीर पुद्गल, जड, मूर्तिक है और मैं ज्ञाता द्रष्टा शुद्ध ज्ञानादिमय हूँ। इस शरीर के बिगड़ने में मेरा कुछ नहीं बिगड़ता है, मैं इससे भिन्न हूँ। इसलिये इसमें ममत्वबुद्धि करना ही व्यर्थ है। इसके पोषण के लिये जो वस्तुतत्त्वके परिज्ञान में कुशलमति हैं वे अन्त, प्रान्त, एवं ठंढा और रुक्ष आहार से इस कर्मशरीर की उचित संभाल करते हुए अपने संयमभाव की वृद्धि करने में सावधान रहते हैं, ऐसे मुनि ही वीर कहलाते हैं। परीषद् और उपसर्ग आने पर भी वे अपने पथ संयममार्ग में रंचमात्र भी विचलित नहीं होते हैं। जहाँ पर समताभाव का स्रोत बहता है वहाँ पर आत्मा अत्यन्त बलिष्ठ होती है। इसी बातका ख्यालकर टीकाकारने “समत्तदंसिणो” की दूसरी छाया “समत्व-

अथवा “मुणी” आ शब्दनी छाया “मुने” ओ पणु थाय छे, जेनो भाव ओ छे के हे सम्यक्त्वदर्शी! तमे संयमने सारी रीते ग्रहण करी कर्म शरीरने पोताथी पृथक् करो, अर्थात् ओम समने के आ कर्मशरीर पुद्गल, जड मूर्तिक छे, अने हुं ज्ञाता, द्रष्टा, शुद्ध ज्ञानादिमय छुं. आ शरीरना अगडवाभां भाइं कंઈ पणु अगडतुं नथी. हुं तेनाथी भिन्न छुं. तेथी तेभां ममत्वबुद्धि करवी व्यर्थ छे. तेना पोषण भाटे जे वस्तुतत्त्वना परिज्ञानभां कुशलमति छे, ते अन्त प्रान्त, ठंढा अने रुक्ष आहारथी आ कर्मशरीरनी उचित संभाल करतां करतां पोताना संयमभावनी वृद्धि करवाभां सावधान रहे छे. ओवा मुनि ज वीर कहेवाय छे. परिषद् अने उपसर्ग आववा छातां पणु पोते संयममार्गभां रंचमात्र पणु विचलीत थता नथी. जे ठंढाणे समताभावना प्रवाड ज पडे छे त्यां आत्मा अत्यंत बलिष्ठ अने छे. आ वातना ख्याल करीने टीकाकारे “समत्तदंसिणो” नी भीछ छाया “समत्वदर्शिनः” लभी छे. प्रान्त अने रुक्ष, द्रव्य तथा



વીરાઃ પરીષહોપસર્ગસહનસમર્થા મુનયઃ, પ્રાન્તં=દ્રવ્યતઃ સ્વાભાવિકરસરહિતં શીતલ-પુરાણકુલત્થાદિકં સ્તોકં વા, રુક્ષં=દ્રવ્યત આગન્તુકઘૃતાદિરસવર્જિતં, ભાવતઃ પ્રાન્તં દ્વેષવિકલં ધૂમદોષવર્જિતમ્, ભાવતો રુક્ષમ્=રાગરહિતમઙ્ગારદોષવર્જિતમાહારં ચ સેવન્તે=અશ્નન્તિ । યથ્વ પ્રાન્તરુક્ષભોજી સ કિમાપ્નોતીત્યાહ-‘ એષ ’ ઇતિ, એષઃ=પરિશુદ્ધપ્રાન્તરુક્ષાહારસેવનેન કર્મશરીરં ધુન્વાનો મુનિઃ=અનગારઃ, ‘ ઓઘન્તરઃ ’ દર્શિનઃ ” લિખી છે । પ્રાન્ત ઓર રુક્ષ, દ્રવ્ય તથા ભાવ કે ભેદ સે દો-દો પ્રકાર કે હૈં, ઉનમેં દ્રવ્યપ્રાન્ત સ્વાભાવિકરસવર્જિત ઠંઢા પુરાના કુલત્થ આદિ, તથા પ્રમાણ મેં થોડા । ભાવપ્રાન્ત દ્વેષરહિત ધૂમદોષવર્જિત । દ્રવ્ય-રુક્ષ-ઘૃત આદિ રસવર્જિત, ઓર ભાવરુક્ષ-રાગરહિત અઙ્ગારદોષવર્જિત આહાર । મુનિ ઇસ પ્રકાર કા આહાર કરતે હૈં । ઇસ પ્રકાર કે આહાર કો અપને ઉપયોગ મેં લેનેવાલા અનગાર કર્મશરીર ક્ષીણ કરતા હુવા ‘ ઓઘન્તરઃ ’ સંસારરૂપી ભાવ ઓઘકો “ કઢેમાણે કઢે ” ઇસ વાક્ય કે અનુસાર પાર કરને વાલા હો જાતા હૈં । યદ્યપિ સંસારરૂપી સમુદ્ર કો અમી ઉસને પાર નહીં કિયા હૈં પરન્તુ પાર કરનેરૂપ ક્રિયા અમી ઉસકી ચાલૂ હૈં-પાર કરને કે સન્મુખ હો રહા હૈં, ભવિષ્ય મેં ઉસે પાર કરેગા ફિર મી સૂત્ર મેં “ તિણ્ણે-તીર્ણઃ ” જો ઇસ ભૂતકૃદન્ત કા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈં વહ “ ક્રિયમાણં કૃતં ” ઇસ વાક્ય કે અનુસાર કિયા હુઆ સમજના ચાહિયે । જૈસે કિસી કાર્ય કી સમાપ્તિ અમી હુઈ નહીં હૈં, સમાપ્તિ કી ઓર વહ અગ્રસર હો રહા હૈં ઓર ભવિષ્ય મેં પાર હોગા; પરન્તુ વ્યવહાર મેં

ભાવ ભેદથી બે પ્રકારે છે. તેમાં દ્રવ્યપ્રાન્ત-સ્વાભાવિક રસવર્જિત ઠંઢા પુરાણા કુલત્થ આદિ, તથા પ્રમાણમાં થોડું. ભાવપ્રાન્ત-દ્વેષરહિત-દોષરહિત, દ્રવ્યરુક્ષ-ધી આદિ રસ વર્જિત, અને ભાવરુક્ષ-રાગરહિત અંગારદોષવર્જિત આહાર, મુની આવા પ્રકારનો આહાર કરે છે. આવા પ્રકારના આહારને પોતાના ઉપયોગમાં લાવવાવાળા અણગાર કર્મ-શરીરને ક્ષીણ કરીને “ ઓઘન્તર. ” સંસારરૂપી ભાવ ઓઘને “ કઢેમાણે કઢે ” આ વાક્ય અનુસાર પાર કરવાવાળા થઈ જાય છે, જે કે સંસારરૂપી સમુદ્રને હળુ તેમણે ઓળંગેલ નથી પરંતુ ઓળંગવારૂપ કિયા હળુ તેમની ચાલુ છે. ઓળંગવા માટે સન્મુખ થતાં જાય છે. ભવિષ્યમાં તેનો પાર કરશે તો પણ સૂત્રમાં “ તિણ્ણે-તીર્ણઃ ” જે આ ભૂત કૃદંતનો ઉપયોગ કર્યો છે તે “ ક્રિયમાણં કૃતં ” આ વાક્ય અનુસાર કરેલું સમજવું જોઈએ. જેમ કોઈ કાર્યની સમાપ્તિ હળુ થયેલ નથી પણ સમાપ્તિના માર્ગ ઉપર છે અને ભવિષ્યમાં સમાપ્ત કરશે, પણ વ્યવહારમાં તે “ થઈ ગયેલ

ઓઘં=ભાવોઘં સંસારં તરતીત્યોઘન્તરઃ, ‘કહેમાણે કહે’ ઇતિ વચનાત્તીર્ણઃ, મુક્તઃ=વાહ્યાભ્યન્તરમમત્વરહિતો ભવતિ, કિશ્ચ-સ એવ વિરતઃ=વિષયકષાયસંજ્ઞવર્જિતઃ, વ્યાખ્યાતઃ=મુનિત્વેન પ્રસિદ્ધઃ । ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તૂત્ત એવ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

યથ પૂર્વોક્તવિપરીતવર્તી સ કીદૃશો ભવતીત્યાહ-‘દુઘ્વસુમુણી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-દુઘ્વસુમુણી અણાણાણ તુચ્છણ ગિલાઈ વત્તણ એસ વીરે પસંસિણ, અચ્છઈ લોગસંજોગં એસ નાણ પમુચ્છઈ ॥સૂ૦ ૭॥

છાયા-દુર્વસુમુનિરનાજ્ઞયા તુચ્છો ગ્લાયતિ વર્તયેત્ એષ વીરઃ પ્રસંસિતઃ અત્યેતિ લોકસંયોગમ્, એષ ન્યાયઃ પ્રોચ્યતે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા-‘દુર્વસુમુનિ’ રિત્યાદિ, દુર્વસુમુનિઃ, વસુ=દ્રવ્યં ભવ્યં કલ્યાણમિતિ યાવત્, તત્ત્વ દુર્=દુષ્ટં વિપરીતં દૂરે સ્થિતં વા યસ્ય દુર્વસુઃ, સ ચાસૌમુનિશ્ચ દુર્વસુ-વહ “હોચુકા” એસા કહા જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર યહાં પર મી યહી સમજ્ઞકર “તીર્ણઃ” ઇસ પદકા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ । જો ‘ઓઘન્તર’ હોતે હૈં વે વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર પરપદાર્થોં સે મમત્વરહિત હોતે હૈં ઓર વિષયકષાયોં કે સંગસે રહિત હોકર મુનિરૂપસે પ્રસિદ્ધ કોટિ મેં આતે હૈં । “ઇતિ બ્રવીમિ” ઇન પદોં કા ભાવાર્થ પહિલે લિખા જા ચુકા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જો સંયમી પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ સે વિપરીતવર્તી હૈ વહ કૈસા હોતા હૈ ? ઇસ વિષય કો સમજ્ઞાતે હૈ-‘દુઘ્વસુમુણી’ ઇત્યાદિ ।

વહ દુર્વસુ મુનિ હૈ જો વીતરાગ પ્રભુ કી આજ્ઞા સે રહિત હોતા હુઆ સ્વચ્છન્દ આચારવિચારવાલા હોતા હૈ । વસુ શબ્દ કા અર્થ દ્રવ્ય હૈ, દ્રવ્ય સે મતલબ ધન સે નહીં કિન્તુ ભવ્ય અર્થાત્ કલ્યાણ સે હૈ ।

છે” એમ કહેવામાં આવે છે, તે પ્રકારે આ ઠેકાણે પણ તેવું સમજીને “તીર્ણઃ” આ પદનો ઉપયોગ કરવામાં આવેલ છે. જે ઓઘન્તર અને છે તે બાહ્ય અને આભ્યન્તરમાં પરપદાર્થોથી મમત્વરહિત અને છે, અને વિષય કષાયોના સંગથી રહિત અને મુનિરૂપથી પ્રસિદ્ધ કોટિમાં આવે છે. “ઇતિ બ્રવીમિ” આ પદોનો ભાવાર્થ પહેલાં લખાઈ ચૂકેલ છે. ॥સૂ૦ ૬ ॥

જે સંયમી પૂર્વોક્ત સ્વરૂપથી વિપરીતવર્તી છે, તે કેવા હોય છે ? આ વિષયને સમજાવતાં સૂત્રકાર કહે છે-‘દુઘ્વસુમુણિ’ ઇત્યાદિ.

તે દુર્વસુ મુનિ છે કે જે વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાથી રહિત થઈને સ્વચ્છન્દ આચાર વિચારવાળા અને છે. વસુ શબ્દનો અર્થ દ્રવ્ય છે. દ્રવ્યનો તાત્પર્ય ધન નહિ પણ ભવ્ય અર્થાત્ કલ્યાણ છે. આ ભવ્ય-કલ્યાણ જેનાથી દૂર છે અથવા



મુનિઃ=મોક્ષાનર્હો રત્નત્રયવિરાધક इत्यर्थः, કુત इत्यमित्याह—‘અનાજ્ઞયે’ત્યાદિ । અનાજ્ઞયા વર્તમાનઃ=વીતરાગોપદેશવિકલઃ સ્વચ્છન્દાચારી । નનુ વીતરાગોપદેશાનુસારેણ કુતો ન વર્તતે યેન સ્વૈરિત્વં સ્યાદિતિ चेन्न, લોકેऽમમીકારો, રત્યરત્યોર્વિરોધઃ, શબ્દાદિવિષયે તટસ્થતા ચ, इत्येवंरूपतीक्ष्णासिधाराकल्पसदुपदेशपरिसेवनस्याति-  
 दुष्करत्वेन स्वच्छन्दचारित्वस्य सुलभत्वात् । यश्चैतादृशः स तुच्छः=ભાવતુચ્છો જ્ઞાના-  
 દિકલાવિકલઃ સન્ ગ્લાયતિ=સંદેહવિષયં પૃષ્ઠવન્તં કંચિત્ સ વસ્તુતત્ત્વસ્યાપરિજ્ઞાનાત્ત-

યહ ભવ્ય-કલ્યાણ જિસસે દૂર હૈ, અથવા જો ભવ્યભાવ સે દુષ્ટ-વિપરીત હૈ, વહ દુર્વસુ હૈ । મુક્તિ પ્રાપ્તિ કે અયોગ્ય એસા રત્નત્રયકા વિરાધક મુનિ હી યહાં દુર્વસુ શબ્દ કા વાચ્યાર્થ હૈ । વીતરાગ પ્રભુ કે ઉપદેશ કા નામ આજ્ઞા હૈ । ઇસ આજ્ઞા સે ભિન્ન અનાજ્ઞા હૈ । દુર્વસુ મુનિ વીતરાગ પ્રભુ કી આજ્ઞા સે વિકલ હોતા હૈ અર્થાત્ સ્વેચ્છાચારી હોતા હૈ । સ્વેચ્છાચારિતા ઇસમેં ઇસલિયે આતી હૈ કિ યહ જો પ્રભુકા ઉપદેશ હૈ કિ—“ કિસી ભી પદાર્થ મેં મમત્વ નહીં રખના । રતિ અરતિ નહીં કરના, તથા ઇન્દ્રિયોં કે શબ્દાદિવિષયોં મેં તટસ્થ રહના ” ઇસે રુચિકર નહીં હોતા, કારણ કિ યહ તીક્ષ્ણ અસિધારાસદૃશ ઉનકે સદુપદેશ કે સેવન કો અતિદુષ્કર માનતા હૈ । ઇસીલિયે વહ તુચ્છ-ભાવતુચ્છ હૈ, અર્થાત્-જ્ઞાનાદિક કલાસે વિકલ હૈ । યદિ વહ સમ્યગ્ જ્ઞાનસંપન્ન હોતા તો કમી ભી વીતરાગ પ્રભુ કે ઉપદેશ સે બાહ્યમતિવાલા ન હોતા । જ્ઞાનકલા સે વિકલ હોકર હી તો વહ દુઃસ્થિત હોતા હૈ । જબ કોઈ ઉસકી સ્વચ્છન્દ

જે લબ્ય ભાવથી દુષ્ટ-વિપરીત છે તે દુર્વસુ છે. મુક્તિપ્રાપ્તિના માટે અયોગ્ય એવા રત્નત્રયના વિરાધક મુનિ જ આંહી દુર્વસુ શબ્દનો વાચ્યાર્થ છે. વીતરાગ પ્રભુના ઉપદેશનું નામ આજ્ઞા છે. આ આજ્ઞાથી ભિન્ન અનાજ્ઞા છે. દુર્વસુ મુનિ વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાથી વિકળ બને છે અર્થાત્ સ્વેચ્છાચારી થાય છે. સ્વચ્છન્દપણું તેઓમાં આ માટે આવે છે કે એવો જે પ્રભુનો આદેશ છે કે “કોઈપણ પદાર્થમાં મમત્વ રાખવું” નહિ, રતિ અરતિ કરવી નહિ, તથા ઇન્દ્રિયોના શબ્દાદિ વિષયોમાં તટસ્થ રહેવું. ” આ તેઓને રુચિકર થતું નથી. કારણ કે આ તીક્ષ્ણ તલવારની ધાર સમાન તેના સદુપદેશને માનવું ઘણું કઠીન સમજે છે, તેથી તે તુચ્છ-ભાવતુચ્છ છે, અર્થાત્ જ્ઞાનાદિક કલાથી વિકળ છે. કદાચ તેઓ સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હોત તો કદિ પણ વીતરાગ પ્રભુના ઉપદેશથી વિમુખ ન થાત. જ્ઞાનકળાથી વિકળ બની તે દુઃખી થાય છે. જ્યારે કોઈ પણ તેની સ્વચ્છન્દ પ્રવૃત્તિ દેખી વાસ્તવિક મુનિના



દુત્તરં કર્તુમ્ અસમર્થો ભવતીત્યર્થઃ । યદ્વા-જ્ઞાનવાનપિ ચારિત્રશૂન્યઃ પૂજાસત્કારમયાદ્ મોક્ષમાર્ગનિરૂપણાવસરે યથાવસ્થિતં વોધયિતું લજ્જત ઇવેત્યર્થઃ, યથ તીર્થઙ્કરાજ્ઞા-  
પ્રવૃત્તિ દેશ્વકર વાસ્તવિક મુનિકે આચારવિષયક પ્રશ્ન ઉસસે પૂછતા હૈ તો વહ વસ્તુતત્ત્વ કા વાસ્તવિક જ્ઞાતા ન હોને સે ઉસકે પ્રશ્નકા યથાર્થ ઉત્તર નહીં દે સકતા હૈ, યા જો કુછ કહતા હૈ વહ સ્વકપોલકલ્પિત હી કહતા હૈ જિસે લોગ માનને કો તૈયાર નહીં હોતે । ઇસ પ્રકાર વહ અપની માન્યતા મેં બટા લગને કે અથવા પોલ ખુલને કે ડર સે સદા દુઃખી હી બના રહતા હૈ । અથવા-જ્ઞાનકલાસમ્પન્ન હો તો બી યથાર્થ ચારિત્ર સે વહ શૂન્ય હૈ ઇસલિયે જિસ સમય વહ મોક્ષ માર્ગ કી પ્રરૂપણ કરતા હૈ ઉસ સમય વહ ઉસકી યથાર્થ પ્રરૂપણા કરને મેં લજ્જિત જૈસા હોતા હૈ, ક્યોંકિ વહ સમજ્ઞતા હૈ કિ મૈ સ્વયં યથાર્થ ચારિત્રશાલી નહીં હૂં, યદિ મૈ વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ કા પરિચય લોગોં કો કરા દૂંગા તો લોગોં કો દૃષ્ટિમેં મેરી માન્યતા ગિર જાવેગી, લોગ કહેંગે કિ-મહારાજ ! જૈસી આપ પ્રરૂપણા કરતે હૈં ઉસ પ્રકાર કી ક્રિયા આપ ક્યોં નહીં પાલતે ? । ઇસ પ્રકાર અપના માન-સમ્માન કે જાને કે ભય સે વહ લોગોં કો અન્ધ-કાર મેં હી રખતા હૈ, પરન્તુ ઉસે યહ ભય સદા લગા રહતા હૈ કિ કહીં કોઈ યથાર્થ વક્તા આકર વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ કા પ્રતિપાદન ન કરદે ।

આચારવિષયનો પ્રશ્ન પૂછે છે તો તે વસ્તુતત્ત્વનો વાસ્તવિક જ્ઞાતા ન હોવાથી તેના પ્રશ્નનો ઉત્તર યથાર્થરૂપે આપી શકતો નથી. અગર જો કંઈ પણ જવાબ આપે છે તો તે સ્વકપોલકલ્પિત જ આપે છે, જે માનવાને લોક તૈયાર થતા નથી. આવા પ્રકારથી તે પોતાની માન્યતામાં ડાઘ લાગવાના ભયથી અથવા પોલ ખુલ્લી થવાના ભયથી સદા દુઃખી બની રહે છે, અથવા જ્ઞાનકલાસમ્પન્ન હોય તો પણ યથાર્થ ચારિત્રથી તે શૂન્ય છે, તેથી જે વખતે મોક્ષમાર્ગની પ્રરૂપણા કરે તે વખતે તે તેની યથાર્થ પ્રરૂપણા કરવામાં લજ્જિત બને છે, કારણ કે તે સમજે છે કે હું સ્વયં યથાર્થચારિત્રશાળી નથી, કદાચ હું વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિનો પરિચય લોકોને કરાવી આપીશ તો લોકોની દૃષ્ટિમાં મારી માન્યતા નીચી પડશે, લોક બોલવા માંડશે કે-મહારાજ ! જેવી આપ પ્રરૂપણા કરો છો તેવા પ્રકારની ક્રિયા આપ કેમ પાળતા નથી ? આવા પ્રકારે પોતાનું માન સન્માન જવાના ભયથી તે લોકોને અધારામાં જ રાખે છે, પરંતુ તેને સદા તે ભય લાગ્યો જ રહે છે કે કદાચ કોઈ યથાર્થવક્તા આવીને વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિનું પ્રતિ-પાદન ન કરી નાંખે.

નુયાયી સ રત્નત્રયસમારાધકઃ સુવસુમ્નિર્વસ્તુતત્ત્વપરિજ્ઞાનાન્ન કદાચિદપિ ગ્લાયતિ ।  
 एषः=सुवसुमुनिः वीरः=संयमानुष्ठानकुशलः प्रशंसितः=गणधरादिभिरभिनन्दितः,  
 स एव च लोकसंयोगं-लोकेन=असंयमिलोकेन सह संयोगः=सम्बन्धो ममीकार इति  
 यावत् लोकसंयोगस्तं, यद्वा-लोकसंयोगं-लोकैर्बाह्यभूतैर्हिरण्यसुवर्णधनधान्यमाता-  
 पितृपुत्रकलत्रदुहित्रादिभिराभ्यन्तरै रागद्वेषादिभी रागद्वेषजन्यैरष्टविधकर्मभिर्वा  
 सह संयोगं=सम्बन्धम् अत्येति=अतिक्राम्यति स मुनिर्ममत्त्वादिभिः परिमुक्तो भवती-

ये लक्षण दुर्वसु मुनि के हैं, अब सुवसु मुनि के सम्बन्ध का वर्णन करते हैं—

वे सुવસુ મુનિ હૈં જો વીતરાગ પ્રભુ કી આજ્ઞા કે આરાધક હૈં-રત્ન-ત્રયમાર્ગ કે પાલને મેં સાવધાન હૈં । વે વસ્તુતત્ત્વ કે વાસ્તવિક જ્ઞાતા હોને સે કમી બી અન્યથા પ્રરૂપણા નહીં કરતે । પ્રરૂપણા કે અનુ-સાર હી અપની પ્રવૃત્તિ રખતે હૈં । જૈસા કહતે હૈં વૈસા સ્વયં પાલન કરતે હૈં, ઇસલિયે ઇનકો કિસી બી પ્રકાર કા ભય બી નહીં હોતા; યે વીર હોતે હૈં । ગણધરાદિક દેવોને ઇસે હી સુવસુ મુનિયોં કી પ્રશંસા કી હૈ । ઇન્હેં વીર ઇસલિયે કહા ગયા હૈ કિ-યે નિર્દોષ સંયમ કે અનુષ્ઠાન કરને મેં કુશલ હોતે હૈં । અસંયમી લોગોં કે સાથ યદિ કદાચિત્ ઇનકા સંયોગ હો જાતા હૈ તો બી યે અપને મોક્ષમાર્ગ સે ચલિત નહીં હોતે હૈં । અથવા બાહ્યપરિગ્રહ-હિરણ્ય સુવર્ણ ધનધાન્ય માતા-પિતા પુત્ર કલત્ર આદિ કે સાથ ઇનકા સમ્બન્ધ હો જાતા હૈ તો યે ડસ સમ્બન્ધસે સદા બહિર્ભૂત

આ લક્ષણ દુર્વસુ મુનિના છે, હવે સુવસુ મુનિના સંબંધનું વર્ણન કરે છે:-

તે સુવસુ મુનિ છે જે વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાના આરાધક છે. રત્નત્રય માર્ગનું પાલન કરવામાં સાવધાન છે. તે વસ્તુતત્ત્વના વાસ્તવિક જ્ઞાતા હોવાથી જે કોઈ વખત અન્યથા પ્રરૂપણા કરતા નથી. પ્રરૂપણા અનુસાર જ પોતાની પ્રવૃત્તિ રાખે છે. જેવું કહે છે તેવું સ્વયં પાલન કરે છે, તેથી તેને કોઈ પણ પ્રકારનો ભય રહેતો નથી. તે વીર બને છે. ગણધરાદિક દેવોએ એવા જ સુવસુ મુનિઓની પ્રશંસા કરી છે, તેમને વીર એટલા માટે કહેવામાં આવેલ છે કે તે નિર્દોષ સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવામાં કુશળ હોય છે. અસંયમી લોકોનો સંગ કદાચ સંયોગથી બને તો પણ તે પોતાના મોક્ષમાર્ગથી ચલિત થતા નથી, અને બાહ્ય પરિગ્રહરૂપ સુવર્ણ ધન ધાન્ય માતા પિતા પુત્ર કલત્ર આદિની સાથે તેનો સંબંધ થાય તો પણ તે તેવા સંબંધમાં સદા તે બહિર્ભૂત રહે છે. તેમાં તેની મમતા લાગતી નથી. આભ્યંતર પરિગ્રહ રાગ દ્વેષ આદિ, અથવા તેનાથી



ત્યર્થઃ, કિં તેનેત્યાહ—‘एष’ इत्यादि, एषः=लोकसंयोगातिक्रमो न्यायः=सन्मार्गः प्रोच्यते=कथ्यते, यद्वा—‘नायः’ इतिच्छाया, ‘नायः’ आत्मानं मोक्षं नयतीति नायः=मुमुक्षुरनगारः, आर्षत्वात्कर्तरि घञप्रत्ययः, भगवदाज्ञानुयायी सुवसुमुनिरेव मोक्षं लभत इति तात्पर्यम् ॥ सू० ७ ॥

સામ્પ્રતં ભગવદુપદેશમેવ દર્શયતિ—‘જં દુઃખં’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જં દુઃખં પવેદ્યં इह माणवाणं तस्स दुःखस्स कुसला परिन्नमुदाहरन्ति, इय कम्मं परिन्नाय सव्वसो, जे अणन्नदंसी से अणन्नारामे, जे अणन्नारामे से अणन्नदंसी, जहा पुणस्स कत्थइ तहा तुच्छस्स कत्थइ, जहा तुच्छस्स कत्थइ तहा पुणस्स कत्थइ, अवि य हणे अणाइयमाणे ॥ सू० ८ ॥

રહતે હૈં, ઉનમૈં ઇનકી મમતા નહીં હોતી હૈ । આભ્યન્તર પરિગ્રહ-રાગદ્વેષ આદિ યા ઇનસે ઉત્પન્ન આઠ કર્મોં કે સાથ કે સમ્બન્ધ કો સદા યે નાશ કરને મૈં ઉચિત રહતે હૈં । યે કોઈં મીં એસા કાર્ય યા પ્રયત્ન નહીં કરતે કિ જિસસે રાગદ્વેષાદિક યા ઉનકી પરમ્પરા બઢે યા ઇનસે ઉત્પન્ન કર્મોંં કા બન્ધ દૃઢ હોતા રહે । સદા યે વૈસા હી પ્રયત્ન કરતે હૈં કિ જિસસે રાગ-દ્વેષાદિક કા સમ્બન્ધ છૂટે ઓર સંચિત કર્મોંં કી નિર્જરા એવં આગામી કર્મોંં કા સંવર અર્થાત્ બન્ધ કા અભાવ હોતા રહે । ઇસ પ્રકાર કા યહ ઇનકા લોકસંયોગ-માતાપિતાદિ કા સમ્બન્ધ-કા ત્યાગ હી સન્માર્ગ હૈ । અથવા “ नाए ” की छाया “ नाय ” भी है । आत्मा को जो मोक्ष प्राप्त कराता है वह नाय है, अर्थात् भगवान की आज्ञानुसार प्रवृत्ति करने वाला, ऐसा सुवसु मुनि ही मोक्ष का प्रापक होता है, अन्य नहीं ॥ सू० ७ ॥

ઉત્પન્ન થતાં આઠ કર્મોના સંબંધનો નાશ કરવામાં સદા તે ઉદ્યમી રહે છે. તે કોઈ પણ એવું કાર્ય કે પ્રયત્ન નથી કરતા કે જેનાથી રાગ દ્વેષાદિક અગર તેની પરંપરા વધે, અગર તેનાથી ઉત્પન્ન કર્મોના બંધ દૃઢ થતાં રહે. સદા તે એવો જ પ્રયત્ન કરે છે કે જેનાથી રાગદ્વેષાદિકનો સંબંધ છૂટે, અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા અને આગામી કર્મોનો સંવર અર્થાત્ બંધનો અભાવ થતો રહે. આવા પ્રકારનો તેનો લોકસંયોગ-માતા પિતાદિકના સંબંધનો ત્યાગ જ સન્માર્ગ છે. અથવા “ नाए ” नी छाया “ नाय ” પણ છે. આત્માને જેનાથી મોક્ષ પ્રાપ્ત થાય તે નાય છે, અર્થાત્ ભગવાનની આજ્ઞાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા એવા સુવસુ મુનિ જ મોક્ષના પ્રાપક બને છે, અન્ય નહિ ॥ સૂ० ૭ ॥



છાયા-યદ્દુઃસ્વં પ્રવેદિતમિહ માનવાનાં તસ્ય દુઃસ્વસ્ય કુશલાઃ પરિજ્ઞામુદાહરન્તિ-  
 इति कर्म परिज्ञाय सर्वशः, योऽनन्यदर्शी सोऽनन्यारामः, योऽनन्यारामः सोऽनन्यदर्शी,  
 यथा पुण्याय कथ्यते तथा तुच्छाय कथ्यते, यथा तुच्छाय कथ्यते तथा पुण्याय  
 कथ्यते, अपि च हन्यादनाद्रियमाणः ॥ सू० ८ ॥

टीका-‘યદ્દુઃસ્વ’ મિત્યાદિ, યત્=અનિર્દિષ્ટં દુઃસ્વં=શારીરિકમાનસિકં, દુઃસ્વ-  
 जनकं कर्म वा यथा यत्र येन प्रकारेण कर्म बध्यते मुच्यते वा, यथा च विपाको भवति  
 यथा च न भवति तत्सर्वं प्रवेदितं=तीर्थङ्करगणधरैः प्ररूपितम् । इह=अस्मिन् लोके  
 कुशलाः=द्रव्यक्षेत्रકાલભાવપરિજ્ઞાનનિપુણાઃ સ્વસમયપરસમયજ્ઞાઃ પરીષહોપસર્ગ-  
 सहनक्षमाः, कर्ममहासुभटघटाविघटनोपायघटकाः रागद्वेषमहोरगविषमविषशमन-  
 विषवैद्याः, कषायानलसन्तापप्रशमनप्रवीणाः, विकटभवाटवीपारगमननिष्णाताः  
 भावकुशलाः, मानવાનાં તસ્ય દુઃસ્વસ્ય પૂર્વોક્તસ્ય પ્રાણાતિપાતાદ્યુપાર્જિતસ્ય કર્મણો  
 वा परिज्ञाम्=કર્મોપાજનતન્નિરોધકારણપરિજ્ઞાનમ્ ઉદાહરન્તિ=ઉપદિશન્તિ-બન્ધો

अब फिर भी भगवान के उपदेश को कहते हैं-‘जं दुस्स्वं’ इत्यादि ।

इस चतुर्गतिक रूप संसार में ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है जो किसी  
 ન કિસી તરહ સે દુઃસ્વી ન હો । કોઈ શારીરિક તો કોઈ માનસિક  
 દુઃસ્વ સે હર સમય દુઃસ્વી હી બને રહતે હૈ । इन दुःस्वों का प्रदाता जीवों  
 કો અપને કિયે હુએ કર્મ કે સિવાય ઓર કોઈ નહીં હૈ । यह बात हमें  
 હમારે તીર્થઢ્કર ગણધરાદિ મહાપુરુષોં ને અચ્છી તરહ સે શાસ્ત્રોં મેં બત-  
 લાઈ હૈ । साथ में यह भी बतलाया है कि जिन कर्मों से हमें सुखदुःख  
 પ્રાપ્ત હોતા હૈ उन कर्मों को यह जीव किस प्रकार से कैसे बांधता है ?,  
 તથા उन કર્મોં કે ઉદય ક્ષય ક્ષયોપશમાદિ કેસે હોતે હૈ ? કેસે નહીં  
 હોતે હૈ ? । उन्हीं के सिद्धान्तानुसार आचार्य आदि महर्षिगण भी-

હવે ફરીથી પણ ભગવાનનો ઉપદેશ કહે છે-‘જં દુસ્સ્વં’ ઇત્યાદિ.

આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં એવું કોઈ પણ પ્રાણી નથી જે કોઈને  
 કોઈ પ્રકારે દુઃખી ન હોય. કોઈ શરીરથી તો કોઈ મનથી દુઃખી તેવા પ્રકારે  
 સદા દુઃખી બની રહે છે. આ દુઃખોનો પ્રદાતા જીવોને પોતાના કરેલા કર્મો સિવાય  
 બીજું કોઈ પણ નથી. આ વાત અમને અમારા તીર્થંકરોએ તથા ગણધરાદિકે ઘણી  
 સારી રીતે શાસ્ત્રોમાં બતાવી છે. સાથે એ પણ બતાવેલ છે કે જે કર્મોથી અમોને  
 સુખદુઃખ પ્રાપ્ત થાય છે તેવા કર્મોને આ જીવ કેવા પ્રકારે કેવી રીતે બાંધે  
 છે ? તથા તેવા કર્મોના ઉદય ક્ષય ક્ષયોપશમાદિ કેમ થાય છે ? કેવી રીતે થતા  
 નથી ? તેના સિદ્ધાન્તાનુસાર આચાર્ય આદિ મહર્ષિગણ પણ-જે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર,

બન્ધહેતુસ્તન્મોક્ષો મોક્ષહેતુશ્ચ ભવતીતિ સતતં કથયન્તીત્યર્થઃ, અપિ ચ ઇતિ=યત્પૂર્વોક્તં કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિકં તજ્જન્યં યદ્દુઃખં તદ્, યચ્ચ પ્રાણિદુઃસ્વપરિજ્ઞાતારઃ કુશલા ઉદાહરન્તિ તદપિ ચ સર્વશઃ=સર્વપ્રકારેણ પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યા-  
હ્યાનપરિજ્ઞયા યોગત્રિકકરણત્રિકૈઃ પરિહૃત્ય ચાસ્રવદ્વારેષુ ન વર્તેત, યદ્વા સર્વશઃ=  
ભેદપ્રભેદપૂર્વકં પરિજ્ઞાય કથયતિ, અથવા સર્વશઃ=સર્વસ્માત્ કેવલિનશ્ચતુર્દશપૂર્વવિદો  
વા સકાશાત્ પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્વા, યદિવા સર્વશઃ=આક્ષેપણ્યાદિભિશ્ચતુર્વિધાભિઃ  
કથાભિઃ કથયતિ ।

જો દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કે પરિજ્ઞાન મેં નિપુણ હોતે હૈં, સ્વ-  
સિદ્ધાન્ત ઓર પરસિદ્ધાન્ત કે જો વેત્તા હોતે હૈં, પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ કે  
સહને મેં જો શક્તિશાલી હોતે હૈં, કર્મરૂપી મહાસુખટોં કી ઘટાકો હટાને  
કે ઉપાયોં કે જુટાને મેં પ્રવીણ હોતે હૈં, રાગ ઓર દ્રેવરૂપી શ્વેત ઓર  
કાલે નાગ કે ભયઢૂર વિષ કો શમન કરને મેં જો વિષવૈદ્ય કે સમાન હૈં,  
કષાયરૂપી અગ્નિ કે જ્વાલાજન્ય સન્તાપ કો શાન્ત કરને મેં જો કુશલ  
હૈં, ઓર જો ભયઢૂર ઇસ સંસારરૂપી અટવી સે પાર હોને મેં અદ્વિતીય  
નિપુણ હોતે હૈં વે મનુષ્યોં કે ઉસ પૂર્વોક્ત દુઃખકી, અથવા પ્રાણાતિપાતાદિ  
સે ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોં કી પરિજ્ઞા કો નિરન્તર  
પ્રકટ કરતે રહતે હૈં । વે અપને દિવ્ય ઉપદેશોં દ્વારા “કર્મ કિસ તરહ  
બંધતે હૈં ?, બંધ કે કૌન-કૌન સે કારણ હૈં ?, બંધ કા અભાવ કૈસે હોતા  
હૈં ? ઓર મોક્ષકે કારણ ક્યા હૈં ?” ઇન સબ વાતોંકો સ્પષ્ટ કર સમ-  
જ્ઞાતે હૈં । ઉનકે દિવ્ય ઉપદેશરૂપ શાસ્ત્રકા ધર્મોપદેશકકે નિકટ શ્રવણ

કાળ અને ભાવના પરિજ્ઞાનમાં નિપુણ હોય છે, સ્વસિદ્ધાન્ત અને પરસિદ્ધાન્તના  
જે બાણકાર છે પરીષદ અને ઉપસર્ગ સહન કરવામાં જે શક્તિશાળી હોય છે,  
કર્મરૂપી મહાસુખટોની ઘટાને હટાવવામાં ઉપાયો યોજવામાં જે નિપુણ હોય  
છે, રાગ અને દ્રેવરૂપી ધોળા અને કાળા નાગના ભયંકર વિષનું શમન કરવામાં  
જે વિષવૈદ્યસમાન છે, કષાયરૂપી અગ્નિની જ્વાલાજન્ય સંતાપને શાન્ત કરવામાં  
કુશળ છે અને જે ભયંકર આ સંસારરૂપી અટવીથી પાર થવામાં અદ્વિતીય  
નિપુણ હોય છે.—મનુષ્યોના તે પૂર્વોક્ત દુઃખોની, અથવા પ્રાણાતિપાતાદિથી  
ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોની પરિજ્ઞાને નિરંતર પ્રકટ કરતા રહે છે  
તે પોતાના દિવ્ય ઉપદેશોદ્વારા “કર્મ કેવી રીતે બંધાય છે ? બંધ શું છે ?  
બંધના ક્યા ક્યા કારણો છે ? બંધ કેવી રીતે થાય ? અને મોક્ષનું કારણ  
શું છે ?” આ બધી બાબતો સ્પષ્ટ રીતે સમજાવે છે. તેના દિવ્ય ઉપદેશરૂપ  
શાસ્ત્રના ધર્મોપદેશક નિકટ શ્રવણ કરવાવાળા તથા તેના મતાનુસાર ચાલનાર



ધર્મોપદેશકઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—‘યોડનન્યે’—ત્યાદિ, યઃ કશ્ચિત્ અનન્યદર્શી-અન્યં દ્રષ્ટું શીલં યસ્ય સોડન્યદર્શી, ન અન્યદર્શી=અનન્યદર્શી=અન્યદર્શનશ્રદ્ધાનરહિતઃ-ભગવદુપદિષ્ટવસ્તુતત્ત્વરુચિશીલો ભવતિ સ એવ અનન્યારામઃ=રત્નત્રયાતિરિક્ત-વસ્તુરમણવિરતો ભવતિ । મિથ્યાદૃષ્ટિશાસ્ત્રસ્યાનામ્પ્રણીતત્વાત્તત્ર ન રમત ઇત્યાશયઃ ।

કરનેવાલે, તથા અનેકે મતાનુસાર ચલનેવાલે વ્યક્તિકા યહ પ્રધાન કર્તવ્ય હૈ કિ ઘહ અનેકે ઇસ પ્રકારકે દિવ્ય ઉપદેશકો—કિ જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોંકો યહ જીવ ઇસ પ્રકાર બાંધતા હૈ ઓર તડજન્ય ઇન દુઃખોં કો નિતપ્રતિ ભોગતા રહતા હૈ, ઇન સમી બાતોંકો—જ્ઞ-પરિજ્ઞાસે જ્ઞાનકર ઓર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાસે ત્રીન કરણ ત્રીન યોગોંદ્વારા અને સબકા ત્યાગ કરે, તથા ‘ફિરસે નવીન કર્મોંકા આશ્રવ ન હો’ ઇસ પ્રકારસે અપની પ્રવૃત્તિકો સંભાલકર રહે ।

ધર્મોપદેશક કૈસા હોતા હૈ? ઇસ બાતકા ખુલાસા કરતે હુએ કહતે હૈ—‘જે અણન્નદંસી’ ઇત્યાદિ, તીર્થઙ્કરાદિદ્વારા પ્રતિપાદિત સિદ્ધાન્તકે સિવાય અન્ય સિદ્ધાન્તમેં જિસકી ઉપાદેયરૂપસે આસ્થા નહીં હોતી હૈ ઉસકા નામ અનન્યદર્શી હૈ । અન્ય સિદ્ધાન્તકો ગ્રહણ કરનેકી જિસકી દૃષ્ટિ હોતી હૈ વહ અન્યદર્શી હૈ, ઇસસે વિપરીત અનન્યદર્શી હૈ । જો અનન્યદર્શી હૈ વહી અનન્યારામ હૈ, અર્થાત્ જિસકી રુચિ વીતરાગ પ્રતિપાદિત તત્ત્વોંમેં હી એકતાનરૂપસે તલ્લીન હૈ । વહ અનેકે અતિરિક્ત મિથ્યાદૃષ્ટિયોંકે શાસ્ત્રોંમેં કમી મી રતિશાલી નહીં હોતા હૈ પ્રત્યુત અનેકે

વ્યક્તિનું એ પ્રધાન કર્તવ્ય છે કે તેના આવા પ્રકારના દિવ્ય ઉપદેશને કે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોંને એ જીવ આ પ્રકારે બાંધે છે અને તત્ત્વજન્ય તેવા દુઃખોંને નિત્ય ભોગવતા રહે છે. આ સઘળી વાતોંને—જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી બાળીને, અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી ત્રણ કરણ ત્રણ યોગદ્વારા તે સઘળાનો ત્યાગ કરે, તથા ‘ફરીથી નવીન કર્મોંનો આશ્રવ ન અને’ તેવા પ્રકારથી ચેતાની પ્રવૃત્તિને સંભાળી રાખે.

ધર્મોપદેશક કેવા હોય છે? એ વાતનો ખુલાસો કરતાં કહે છે—‘જે અણન્નદંસી’ ઇત્યાદિ.

તીર્થઙ્કરાદિદ્વારા પ્રતિપાદિત સિદ્ધાંત સિવાય અન્ય સિદ્ધાંતમાં જેની ઉપાદેય રૂપથી આસ્થા થતી નથી તેનું નામ અનન્યદર્શી છે. બીજા સિદ્ધાંતને ગ્રહણ કરવાની જેની દૃષ્ટિ થાય છે તે અન્યદર્શી છે, તેનાથી વિપરીત અનન્યદર્શી છે. જે અનન્યદર્શી છે તે અનન્યારામ છે. અર્થાત્ જેની રૂચી વીતરાગપ્રતિપાદિત તત્ત્વોંમાં જ એકતાન રૂપથી તલ્લીન છે, તે તેથી અતિરિક્ત મિથ્યાદૃષ્ટિઓના શાસ્ત્રોંમાં કદી પણ રતિશાળી થતા નથી, બલકે તેના સિદ્ધાંતોની



સિદ્ધાન્તકા આલોડનકર જલ વહ ઁનકી માન્યતાઓંકો તર્કણાકી કસોટી પર કસતા હૈ ઁર જલ લે અપની યથાર્થતાસે શૂન્ય સાલિત હોતી હૈ તલ ઁસકી દષ્ટિમૈં જિનપ્રતિપાદિત તત્લ્લોંકી ઁર હી સન્તોષ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । વહ અપનેકો ધન્ય ઁસલિલે માનતા હૈ કિ મુલ્લે ત્રિલોકીનાથ દ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મકી શીતલ છત્રછાયા મિલી હૈ । સત્લ્લે મણિકી કીમત કાચલ્લણડકે દેલ્લનેસે હી હોતી હૈ । ઉપદેશક જલ તલ અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ શ્રદ્ધાલા નહીં હોગા તલ તલ વહ દૂસરોંકે લિલે અપને સિદ્ધાન્તકા રહસ્ય હૃદયંગમ નહીં કરા સકતા । ઉપદેશક ગુરુકા કર્ત્ત્વ્ય હૈ કિ વહ પહિલે અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ રૂપસે જ્ઞાતા હો, શ્રોતાઓંકી ચિત્તલ્લત્તિકો પરલ્લનેલા હો, ઁનકી શંકાઓંકા યુક્તિ ઁર આગમકે અનુસાર સમાધાન કરનેલા હો, સદાચારી હો, અપને ઉપદેશમૈં શંકા સમાધાનકે સાથ અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ વ્યવસ્થાપક હો । ઁસ પ્રકારકે ઉપદેશકકા શ્રોતાઓંકે ઉપર અસર જિતના પડતા હૈ ઉતના ઁર કિસીકા નહીં પડતા, ઁસલિલે સૂત્રકારને ઁસકી પ્રશંસા-અનન્યારામ ઁર અનન્યદર્શી, ઁન પદોંસે કી હૈ । ઉપદેશક અપને વિષયકા પ્રતિપાદન આલ્લેપણી વિલ્લેપણી સંલ્લેગિની ઁર નિલ્લેદની આદિ ચાર પ્રકારકી કથાઓંમૈંસે જિસ કથાકી જહાં આવશ્યકતા હોતી હૈ ઁસી કથાકા

આલોચના કરી જ્ઞારે તે તેમની માન્યતાઓંને તર્કણાની કસોટી ઉપર કસે છે અને જ્ઞારે તે પોતાની યથાર્થતાથી શૂન્ય સાલિત થાય છે ત્વારે તેની દષ્ટિમાં જિનપ્રતિપાદિત તત્લ્લોની તરફ જ સંતોષ ઉત્પન્ન થાય છે. તે પોતાને ધન્ય તેટલા માટે માને છે કે મને ત્રિલોકીનાથદ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મની શીતળ છત્રછાયા મળી છે. સાચા મણિની કીમત કાચના ટુકડા દેખવાથી થાય છે. ઉપદેશક જ્ઞાં સુધી પોતાના સિદ્ધાંતનો પૂર્ણ શ્રદ્ધાવાળો નહિ અને ત્વાં સુધી તે બીજાઓંને પોતાના સિદ્ધાંતનું રહસ્ય હૃદયંગમ કરાવી શકતો નથી. ઉપદેશક શુદ્ધનું કર્ત્ત્વ્ય છે કે તે પહેલાં પોતાના સિદ્ધાંતના પૂર્ણ જ્ઞાતા હોય, શ્રોતાઓંની ચિત્તલ્લત્તિને પારખનાર હોય, તેની શંકાઓંનું યુક્તિ અને આગમ અનુસાર સમાધાન કરવાવાળા હોય, સદાચારી હોય, પોતાના ઉપદેશમાં શંકા સમાધાન સાથે પોતાના સિદ્ધાંતને પૂર્ણ વ્યવસ્થાપક હોય. આવા પ્રકારથી ઉપદેશકની શ્રોતાઓં ઉપર અસર જેટલી પડે છે તેટલી બીજા કશાથી થતી નથી. સૂત્રકારે તેની પ્રશંસા ‘અનન્યારામ અને અનન્યદર્શી’ આ પદોથી કરેલ છે. ઉપદેશક પોતાના વિષયનું પ્રતિપાદન આલ્લેપણી વિલ્લેપણી સંલ્લેગિની અને નિલ્લેદની આદિ ચાર પ્રકારની કથાઓંમાંથી જે કથાની જ્ઞાં આવશ્યકતા હોય છે,

एवमुपदेशकस्वरूपमुपदर्श्य सर्वेभ्यः समान एव भगवदुपदेश इति दर्शयति-‘यथे’त्यादि ।

यथा=येन प्रकारेण पुण्याय=पुण्यवते भव्यजीवाय सुरेश्वरचक्रवर्तिमाण्डलिकाय च कथ्यते=उपदिश्यते, तथा=एवमेव तुज्जाय=द्रमककाष्ठहारकाय कथ्यते,

अवलम्बन करके उपदेश देते हैं । इसी बातको प्रकट करनेके लिये “संव्वसो” पदका सूत्रकारने सूत्रमें ग्रहण किया है । जिस विषयमें उपदेशक अकुशल होता है, अथवा जहां पर उसे सन्देह होता है उस विषयको वह स्वयं केवली अथवा श्रुतज्ञानीके पाससे जानकर बादमें उसका प्रतिपादन करता है । जिस समय केवलियोंका यहां पर अस्तित्व था उस समय भी धर्मोपदेशक थे । धर्मोपदेशकोंको जिस विषयमें शंका होती थी वे अपनी शंकाओंका समाधान उनके निकट करते थे, और उस विषयमें पूर्ण निष्णात बनते थे । यद्यपि वर्तमानकालमें इस क्षेत्रमें साक्षात् केवली विद्यमान नहीं हैं फिर भी उनके स्थानापन्न उनका उपदेश शास्त्रोंमें अब भी विद्यमान है । उपदेशक गुरु उन्हीं उपदेशोंका अब भी अपनी प्रवृत्ति तदनुकूल बनाकर प्रचार करते रहते हैं ।

वीतराग प्रभुद्वारा प्रतिपादित विषय—चाहे वह दरिद्री हो, धनी हो, इन्द्र हो, चक्रवर्त्ती हो, माण्डलिक राजा हो, कोई भी क्यों न हो—सबके लिये समानरूपसे है, इसमें किसीभी जातिविशेष या वर्ण-विशेषका भेद नहीं रक्खा गया है । भगवानका उपदेश पक्षपातसे

તેવી કથાનું અવલંબન કરીને ઉપદેશ આપે છે. આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે “સંવ્વસો” પદનું સૂત્રકારે સૂત્રમાં ગ્રહણ કરેલ છે. જે વિષયમાં ઉપદેશક અકુશળ હોય છે અથવા જે ઠેકાણે તેને સંદેહ થાય છે, તે વિષયને તે સ્વયં કેવળી અથવા શ્રુતજ્ઞાની પાસેથી જાણી લે છે, બાદમાં તેનું પ્રતિપાદન કરે છે. જે વખતે કેવળીઓનું અહીં અસ્તિત્વ હતું તે સમય પણ ધર્મોપદેશક હતા. ધર્મોપદેશકોને જે વિષયમાં શંકા થતી હતી તેઓ પોતાની શંકાઓનું સમાધાન તેમની પાસે કરતા હતા. અને તે વિષયમાં પૂર્ણ નિષ્ણાત બનતા હતા. જે કે વર્તમાનકાળમાં આ ક્ષેત્રમાં સાક્ષાત્ કેવળી વિદ્યમાન નથી તે પણ તેના સ્થાનાપન્ન તેમનો ઉપદેશ શાસ્ત્રોમાં હજી પણ વિદ્યમાન છે, ઉપદેશક ગુરુ તેઓના ઉપદેશોનો હજી પણ પોતાની પ્રવૃત્તિ તદનુકૂળ બનાવી પ્રચાર કરતા રહે છે.

વીતરાગ પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત વિષય—ચાહે કોઈ દરિદ્રી હોય, ધનીક હોય, ઇન્દ્ર હોય કે ચક્રવર્તી હોય, માંડલિક રાજા હોય, બીજા કોઈ પણ હોય—બધાને માટે સમાનરૂપે જ છે. તેમાં કોઈ પણ જાતિવિશેષ અગર વર્ણ વિશેષનો ભેદ રાખવામાં આવેલ નથી. ભગવાનનો ઉપદેશ પક્ષપાતથી રહિત હોય



एवं यथा तुच्छाय कथ्यते तथा पुण्याय कथ्यते । मेघो यथा स्थले जले च सम-  
भावेन वर्षति तथैवोपदेष्टाऽपि निरपेक्षमुच्चाववेभ्यः सर्वेभ्योऽनुग्रहबुद्ध्या समा-  
नमेवोपदिशति । अत्रायं विवेकः—उपदेशको हि द्रव्यक्षेत्रकालभावमनुसृत्य 'यथा-  
ऽयं नृपादिरभिगृहीतमिथ्यादृष्टिरनभिगृहीतमिथ्यादृष्टिर्वेत्यादि पूर्वमवधार्यैवोप-  
विहीन होता है । जिस प्रकार मेघकी धारा जलमें और स्थलमें समान-  
रूपसे बरसती है, उसे यह पक्षपात नहीं होता कि मुझे यहां बरसना  
चाहिये अथवा यहां नहीं बरसना चाहिये, इस प्रकारकी निरपेक्ष वृत्तिसे  
ही वह एकरूपसे मेघधारा बरसती है । इसी प्रकार भगवानके उपदेशमें  
भी भेदभावकी वृत्ति नहीं होती कि 'यह पुण्यात्मा है अतः इसके लिये  
मेरा यह उपदेश है, और यह पापी है इसके लिये मेरा यह उपदेश  
नहीं है ' । पुण्यात्मासे लगाकर पापात्मा तक, और धनीसे लगा कर  
काष्ठहार-लकड़हारे तक, तथा राजासे लगा कर रंक तक सबके लिये  
प्रभुका उपदेश एक रससे सना हुआ होता है फिर भी उपदेशकका  
कर्त्तव्य है कि वह उस उपदेशको द्रव्य क्षेत्र काल और भावके अनुसार  
श्रोताओं तक पहुंचावे । यह उपदेशककी ही कुशलता है । अन्यथा वह  
उस उपदेशसे अपने स्वयंकी हानि करनेवाला हो जाता है । जैसे राज-  
सभामें बैठ कर धर्मोपदेश देनेवाला उपदेष्टा पहिले इस बातका अपने  
मनमें निर्णय कर लेवे कि यह राजा अभिगृहीतमिथ्यादृष्टि है या अन-  
भिगृहीत मिथ्यादृष्टि है ? फिर अपने उपदेशका प्रवाह चलावे । विना

છે. જેવી રીતે મેઘની ધારા જળમાં અને સ્થળમાં સમાન રૂપથી વરસે છે તેને  
એવો પક્ષપાત થતો નથી કે મારે આંહી જ વરસવું અને ત્યાં વરસવું નહિ. એવા  
પ્રકારની નિરપેક્ષ વૃત્તિથી તે એકરૂપથી મેઘધારા વરસે છે. તેવા પ્રકારે ભગવાનના  
ઉપદેશમાં પણ ભેદભાવની વૃત્તિ હોતી નથી કે ' આ પુણ્યાત્મા છે માટે તેના માટે  
મારો આ ઉપદેશ છે, અને આ પાપી છે માટે તેના માટે મારો આ ઉપદેશ નથી.'  
પુણ્યાત્માથી લઈને પાપાત્મા સુધી અને ધનવાનથી લઈને કઠીયાણ સુધી, રાજાથી  
રંક સુધી દરેકને માટે પ્રભુનો ઉપદેશ એક રસથી સરખો જ હોય છે, તો પણ  
ઉપદેશકનું કર્તવ્ય છે કે તે તે ઉપદેશને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ, અનુસાર શ્રોતા-  
ઓને સંભળાવે, તે ઉપદેશકની જ કુશળતા છે. અન્યથા તે તેવા ઉપદેશથી પોતાની  
જ હાનિ કરવાવાળા બની જાય છે. જેવી રીતે રાજસભામાં બેસીને ધર્મોપદેશ  
દેનાર ઉપદેશક પહેલાં એ વાતનો પોતાના મનમાં નિર્ણય કરી લે કે આ રાજા  
અભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે અગર અનભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે ? પછી પોતાના



દિશેત્, અન્યથોપદેશે વહ્નપાયસમ્ભવાત્, તદેવાહ-અપિ ચેત્યાદિ, અનાદ્રિયમાણઃ= અવમન્યમાનો ભૂપાદિઃ, ઉપદેશકવિહિતનિન્દઃ સન્ હન્યાદપિ=સદુપદેશકં નાશયેદપિ, 'અપિ' સમ્ભાવને, 'ચ'-શબ્દાદન્યદપિ દણ્ડ-કશાતાડનાદિકમપિ કુર્યાત્,

“દશસૂનાસમશ્રક્રી, દશચક્રિસમો ધ્વજઃ ॥

દશધ્વજસમા વેશ્યા, દશવેશ્યાસમો નૃપઃ ॥ ૧ ॥”

इत्यादिनिन्दासूचिकामरुन्तुदां वाचमभिदधतमुपदेष्टारं प्रति राजा-‘एष मुनिः सर्वधर्मबाह्यो राजधर्मानभिज्ञो नीतिधर्ममपि न जानाति, मोक्षधर्मस्तावद्दूराद-  
पेतः’ इत्येवं ब्रुवन् क्रुध्यमानो यष्टिमुष्टिभिस्ताडयन् ततो निःसारयन् तत्र रुन्धन्  
वस्त्रादिकं लुण्ठयन् चर्मादिच्छेदं कारयन् प्राणानप्यपहरेदतस्तादृशं नोपदिशे-  
दित्याशयः ॥ सू० ८ ॥

વિચારે જો ઉપદેશ દિયા જાયગા ઉસમેં અનેક કષ્ટોંકા ઉસે સામના કરના પડેગા । ઉપદેશમેં યદિ કિસીં મી પ્રકારસે રાજાકી શાનકે વિરુદ્ધ કોઈ શબ્દ ઉસસે નિકલ જાતા હૈ, અથવા રાજધર્મકે પ્રતિપાદનમેં કોઈ એસી વાત આ જાતી હૈ જો ઉસકી પ્રતિષ્ઠાકે વિરુદ્ધ પડતી હો, તો ઇસસે રાજા અપના અપમાન સમજ્જકર ઉસ ઉપદેષ્ટાકા પ્રાણઘાત તક કર દેતા હૈ । યદિ એસા ન મી કરે તો વહ ઉસે દણ્ડવિધાન કરતા હૈ, કોડોંસે મી પિટવાતા હૈ । ઇસ શ્લોકમેં રાજવિરુદ્ધ વાત પ્રગટ કી ગઈ હૈ, જૈસે-

“દશસૂનાસમશ્રક્રી, દશચક્રિસમો ધ્વજઃ ।

દશધ્વજસમા વેશ્યા, દશવેશ્યાસમો નૃપઃ ॥ ૧ ॥”

इस प्रकार राजनिन्दासूचक उपदेश यदि उपदेष्टा राजसभामें बैठ कर करे तो इससे राजाके हृदयमें अपार कष्ट होगा । ऐसे उपदेशसे

ઉપદેશનો પ્રવાહ થતાવે. વગર વિચારે જે ઉપદેશ આપવા માંડશે તો તેમાં તેને અનેક કષ્ટોનો સામનો કરવો પડશે. ઉપદેશમાં કદાચ કોઈ પણ પ્રકારથી રાજાની શાનની વિરુદ્ધ કોઈ શબ્દ તેનાથી નિકળી જાય, અથવા રાજધર્મ પ્રતિ-  
પાદનમાં કોઈ એવી વાત આવી જાય જે તેની પ્રતિષ્ઠાની વિરુદ્ધ પડે છે તો તેનાથી રાજા પોતાનું અપમાન સમજી તેવા ઉપદેશકનો પ્રાણઘાત પણ કરી નાંખે છે. કદાચ એવું ન પણ કરે તો તેને ઢાંડ કરે છે, કોરડાથી માર મારે છે. આ શ્લોકમાં રાજવિરુદ્ધ વાત પ્રગટ કરવામાં આવી છે. જેમ—

“દશસૂનાસમશ્રક્રી, દશચક્રિસમો ધ્વજઃ ।

દશધ્વજસમા વેશ્યા, દશવેશ્યાસમો નૃપઃ ॥ ૧ ॥”

આ પ્રકાર રાજનિન્દાસૂચક ઉપદેશ કદાચ ઉપદેશક રાજસભામાં બેસીને કરે તેથી રાજાના હૃદયમાં અપાર કષ્ટ થશે. તેવા ઉપદેશથી મુનિ રાજાના ક્રોધનો

શ્રોતારં પરીક્ષ્યોપદેષ્ટા હિંસાદિના નોપલિપ્તો ભવતીતિ દર્શયતિ-‘અથ’  
 इत्यादि ।

મૂલમ્—અથં પિ જાણ સેયંતિ નત્થિ, કેયં પુરિસે કં ચ નણ,  
 एस वीरे पसंसिए जे बद्धे परिमोयए, उड्डं अहं तिरियं दिसासु, से  
 सब्बओ सब्बपरिन्नाचारी, न लिप्पइ छणपण वीरे, से मेहावी  
 जे अणुग्घायणखेयन्ने, जे य बंधपमुखमन्नेसी कुसले पुण नो  
 बद्धे नो मुक्के ॥ सू० ९ ॥

મુનિ રાજાકા કોપભાજન હો જાયગા । રાજા યહ સમજ્ઞ લેગા કિ યહ  
 મુનિ સર્વધર્મસે બાહ્ય હૈ, રાજધર્મ કયા હૈ ? ઇસે ખી યહ નહીં  
 જાનતા હૈ । અરે ! જબ યહ નીતિધર્મ તક નહીં જાનતા હૈ તો મોક્ષધર્મ  
 કી વાત હી કયા કહની ? યહ બિલકુલ જડ-અબુધ હૈ । એસે વ્યક્તિયોં કે  
 અસ્તિત્વકી કયા આવશ્યકતા હૈ ? ઇસ પ્રકાર રાજા દ્વારા ઉપેક્ષિત બન યષ્ટિ-  
 મુષ્ટિ આદિજન્ય અનેક કષ્ટોંકો ભોગતા હુઆ વહ મુનિ વહાંસે નિકાલ  
 દિયા જાતા હૈ; અથવા કારાગારમં બંદ કર દિયા જાતા હૈ । ડસકે વસ્ત્રાદિક  
 ખી છીન લિયે જાતે હૈ । શરીરકા છેદન કર ડસકે પ્રાણ તક ખી લે  
 લિયે જાતે હૈ । ઇસલિયે ઉપદેષ્ટાકા યહ સર્વપ્રથમ કર્તવ્ય હૈ કિ વહ  
 દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઔર ભાવકા અચ્છી તરહ વિચાર કર અપને ઉપદેશકા  
 પ્રવાહ બહાવે । એસા ઉપદેશ ન કરે કિ જિસસે સ્વયંકો અનેક કષ્ટોંકા  
 યા પ્રાણોંકે વિનાશકા સામના કરના પડે ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ભોગ બનશે. રાજા એવું સમજી લેશે કે આ મુનિ સર્વ ધર્મથી બાહ્ય છે,  
 રાજધર્મ શું છે ? તે પણ આ બાણુતો નથી. અરે ! જ્યારે આ નીતિધર્મ સુધી  
 પણ બાણુતો નથી તો મોક્ષધર્મની વાત જ શું કરવી ? આ બિલકુલ જડ-  
 અબુધ છે, આવી વ્યક્તિઓના અસ્તિત્વની શું આવશ્યકતા છે ? આવા પ્રકારે  
 રાજાદ્વારા ઉપેક્ષિત બની યષ્ટિ-મુષ્ટિ આદિ જન્ય અનેક કષ્ટોને ભોગવતાં તે  
 મુનિને ત્યાંથી હાંકી કાઢે છે, અગર કારાગારમાં મોકલી દેવામાં આવે છે. તેના  
 વસ્ત્રો પણ આંચકી દેવામાં આવે છે. તેના શરીરનું છેદન કરી તેનો પ્રાણ પણ  
 લઈ દેવામાં આવે છે. માટે જ ઉપદેષ્ટાનું એ સર્વપ્રથમ કર્તવ્ય છે કે દ્રવ્ય ક્ષેત્ર  
 કાળ અને ભાવનો સારી રીતે વિચાર કરી પોતાના ઉપદેશનો પ્રવાહ ચલાવે.  
 એવો ઉપદેશ ન આપે કે જેનાથી પોતાને અનેક કષ્ટોનો સામનો કરવો પડે  
 અને પ્રાણ પણ ગુમાવે ॥ સૂ. ૮ ॥



છાયા — અત્રાપિ જાનીહિ શ્રેય ઇતિ નાસ્તિ, કોડયં પુરુષઃ કંચ નતઃ, એષ વીરઃ પ્રશંસિતઃ, યો વદ્ધાન્ પરિમોચયતિ, ઝર્ધ્વમધસ્તિર્યક્ષુ દિશાસુ, સ સર્વતઃ સર્વપરિજ્ઞાચારી, ન લિપ્યતે ક્ષણપદેન વીરઃ, સ મેધાવી યઃ અણોદ્ધાતનચ્ચેદજ્ઞઃ, યશ્ચ બન્ધ-પ્રમોક્ષાન્વેષી કુશલઃ પુનર્નો વદ્ધો નો મુક્તઃ ॥ સૂ. ૯ ॥

ટીકા—‘અત્રાપી’—ત્યાદિ, અત્ર=ધર્મકથાયાં શ્રેયઃ=કલ્યાણમ્ ઇતિ અપિ=નિશ્ચયેન નાસ્તિ=ન વિદ્યતે પ્રત્યુત્ત કર્મબન્ધો ભવતીતિ જાનીહિ=બુદ્ધ્યસ્વ ત્વમિતિ શેષઃ, इहैव तावन्नानिष्टमपि च परत्रापि तत्प्रसज्येतेत्यर्थः ।

જો ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓનો સમજાવતો દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવકે અનુસાર ઉપદેશ કરતા હૈ વહ કિસીકે મી કોપકા અથવા દુષ્ટાદિકકા પાત્ર નહીં હોતા હૈ, યહ સમજાતે હૈ—“ एत्थंपि जाण ” इत्यादि ।

વક્તાકો યહ એકાન્તરૂપસે માનના ચાહિયે કિ ધર્મકથા કરનેમેં નિશ્ચયસે કલ્યાણ હી હોતા હૈ, પરન્તુ વિના દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ભાવકા ધ્યાન રાખે ધર્મકથા કરે તો વહ કર્મબન્ધકા કારણ મી હો જાતી હૈ । વીતરાગ-ભાવસે જહાં જય-પરાજય હોનેકા કુછ મી જ્યાલ નહીં હૈ, સિર્ફ; યે પ્રાણી કૈસે સદ્ધર્મકા આશ્રય કરે? ઇસી સંભિપ્રાયસે જો કથા કી જાતી હૈ, અથવા ઉપદેશ દિયા જાતા હૈ વહી ધર્મકથા હૈ । દ્રવ્ય ક્ષેત્રાદિકકા વિચાર કિયે વિના હી જો ઉપદેશ કિયા જાયગા ડસસે સંભવતઃ ઉપદેષ્ટા કો અનેક અનર્થોકા સામના મી કરના પડેગા, ઇસલિયે ધર્મકથાકે કરનેમેં શ્રેયકા ધ્યાન રાખના ચાહિયે, ક્યોં કિ અપની પ્રકૃતિકે અનુસાર જીવોં કો

જે ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓને સમજાવે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ અનુસાર ઉપદેશ કરે છે તે કોઈના પણ કોઈના તેમજ દંડાદિકના પાત્ર થતા નથી. તે સમજાવે છે—“ एत्थंपि जाण ” इत्यादि.

વક્તાએ એકાંત રૂપથી માનવું જોઈએ કે ધર્મકથા કરવામાં નિશ્ચય કલ્યાણ જ થાય છે. પરંતુ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવનો જ્યાં રાખ્યા વિના ધર્મકથા કરે તો કર્મબન્ધનું કારણ પણ બની જાય છે.

વીતરાગ ભાવથી જ્યાં જય પરાજય હોવાનો જરા પણ જ્યાં નથી, ફક્ત આ પ્રાણી કેવી રીતે સદ્ધર્મનો આશ્રય કરે? એવા પ્રકારના સદ્ અભિપ્રાયથી જે કથા કરવામાં આવે છે, અથવા ઉપદેશ આપવામાં આવે છે તે જ ધર્મકથા છે. દ્રવ્યક્ષેત્રાદિકનો વિચાર કર્યા વિના જે ઉપદેશ આપવામાં આવે તો વિના સંદેહ ઉપદેષ્ટાને અનેક અનર્થોનો સામનો જ કરવો પડે, મોટે ધર્મકથા કરવામાં શ્રેયનું ધ્યાન રાખવું જોઈએ. કારણ કે પોતાની પ્રકૃતિ અનુસાર પોતાને જે જે



યદ્વા—અત્રાપિ યદ્વદ્વિધિજલ્પનં હિંસકોડયં રાજેત્યાલોચ્ય પશુવધાદિરૂપ હિં-  
સાધર્મમણ્ડનાત્મકં ચાર્વાકાદિમતસ્થાપનં ચ, તત્ર સર્વત્રાપિ શ્રેયો નાસ્તિ શાસ્ત્રપ્રતિ-  
ષિદ્ધત્વાત્ । તર્હિ કથમુપદિશેદિત્યાહ—‘કોડય’—મિત્યાદિ, શ્રોતારં સમીક્ષ્યોપ-  
દેષ્ટા ચેતસિ ચિન્તયેત્, કોડયં પુરુષઃ કં ચાયં ધર્મં પરિપૃચ્છતિ, સોડયં કઃ કિં  
પુણ્યવાન્ ઉત તુચ્છઃ ? । યદ્વા—અયં વક્રો વા જહો વા વક્રજહો વા પુરુષઃ, કં  
ચ=દેવવિશેષં નતઃ=પ્રણતઃ કં દેવમુપાસ્તે વા ? ।

જો હિતાવહ-દૃષ્ટ હોતા હૈ વહ અન્ય જીવોંકે લિયે મી હિતાવહ હોગા,  
યહ નહીં માના જા સકતા । સમ્યગ્દૃષ્ટિ અથવા મન્યપુરુષકે લિયે જિસ  
ઉપદેશસે આત્મકલ્યાણ કરનેકી ઓર સતર્કતા જાગૃત હોતી હૈ ઉસી  
ઉપદેશસે મિથ્યાદૃષ્ટિમેં સતર્કતા જાગૃત ન હોકર પ્રત્યુત કલુષતા જાગૃત  
હો સકતી હૈ ।

અથવા—“યહ રાજા હિંસક હૈ” એસા વિચાર કર પશુવધાદિરૂપ  
હિંસાધર્મકા મણ્ડન, તથા ચાર્વાકાદિક નાસ્તિક મતકા સ્થાપનરૂપ કથન  
કરના મી ઉપદેશકકે લિયે કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નહીં હૈ । ઇસસે અનેક  
અનર્થોંકી પરમ્પરા વહતી હૈ । તથા ઇસ પ્રકારકી માન્યતા મી શાસ્ત્રપ્રતિ-  
ષિદ્ધ હૈ । અતઃ દૂસરોંકી માન્યતાનુસાર અપની માન્યતાકો દવાકર ઉસકી  
હાં મેં હાં મિલા કર જો ઉપદેશક ઉપદેશ કરતા હૈ વહ કલ્યાણકારી  
માર્ગ નહીં હૈ । ઇસ સમસ્ત કથનસે યે દો બાતેં ફલિતાર્થ હોતી હૈ—એક તો  
અવસર દેખે વિના ધર્મકથા કરનેમેં એકાન્તરૂપસે કલ્યાણ નહીં હૈ તથા  
દૂસરોંકી માન્યતાનુસાર અપની માન્યતા બનાકર ઉપદેશ દેના, યહ મી

હિતાવહ-દૃષ્ટ થાય છે તે તે અન્ય જીવો માટે પણ હિતાવહ થશે તેમ માની શકાતું  
નથી. સમ્યગ્દૃષ્ટિ અથવા ભવ્ય પુરુષો માટે જે ઉપદેશથી આત્મકલ્યાણ કરવાની  
તરફ સતર્કતા જાગૃત થાય છે તે જ ઉપદેશથી મિથ્યાદૃષ્ટિમાં સતર્કતા જાગૃત  
થતી નથી બલકે કલુષતા જાગૃત થાય છે, અથવા “રાજા હિંસક છે” એવો  
વિચાર કરી પશુવધાદિરૂપ હિંસાધર્મનું મંડન તથા ચાર્વાકાદિક નાસ્તિકમતનું  
સ્થાપન રૂપ કથન કરવું તે પણ ઉપદેશક માટે કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નથી. તેનાથી  
અનેક અનર્થોની પરંપરા વધે છે. તથા આ પ્રકારની માન્યતા પણ શાસ્ત્રપ્રતિ-  
ષિદ્ધ છે, માટે બીજાઓની માન્યતાનુસાર પોતાની માન્યતાઓને દબાવીને તેની  
હા માં હા મેળવી જે ઉપદેશક ઉપદેશ કરે છે તે કલ્યાણકારી માર્ગ નથી.  
આ સમસ્ત કથનથી એ બે વાતો સિદ્ધ થાય છે કે—એક તો અવસર દેખ્યા  
વિના ધર્મકથા કરવામાં એકાન્તરૂપથી કલ્યાણ નથી તથા, બીજાઓની માન્યતા-  
નુસાર પોતાની માન્યતા બનાવીને ઉપદેશ આપવો એ પણ કલ્યાણકારી માર્ગ

યદ્વા-કં=કતરં ધર્મ=સાહ્યં બૌદ્ધમન્યં વા નતઃ=પ્રતિપન્નઃ, ઉપલક્ષણાત્, કિમયં મિથ્યાદૃષ્ટિરુત્ત સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ કેન વાઽઽશયેનાહં પૃષ્ઠઃ?, इत्यादिकमपि समालोच्य धर्ममुपदिशेदित्यर्थः, चक्षन्दादेशकालादीनां समालोचना कर्तव्या । यश्चैवं विचार्योपदिशति, एषः=उपदेश बादिमानमर्दनपूर्वकप्रवचनपरिमण्डन-समर्थः, प्रशंसितः=गणधरादिभिः श्लाघितः, यो बद्धान्=अष्टविधपाशनिगडितान्

કલ્યાણપદ માર્ગ નહીં છે । યદિ એસા છે તો ઉપદેશ કેસા હોના ચાહિયે ? ઇસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ સર્વપ્રથમ ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓંકો ભલી પ્રકાર દેખ કર ચિત્તમેં યહ વિચાર કરે કિ જો યહ મુક્તિસે ધર્મકો પૂછતા હૈ, વહ પુણ્યાત્મા હૈ યા તુચ્છાત્મા હૈ? અથવા વક્ત્ર હૈ યા જડ હૈ? અથવા વક્ત્ર-જડ દોનોં સ્વભાવવાલા હૈ? કિસ દેવકા ઉપાસક હૈ? કિસ મતકા અનુયાયી હૈ—સાંખ્યમતકા યા બૌદ્ધધર્મકા? । ઉપલક્ષણસે યહ મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ અથવા સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ? યહ ભી જાન લેના ચાહિયે । યહ જો મુક્તિસે ધર્મવિષયક પ્રશ્ન પૂછતા હૈ સો કિસ અભિપ્રાયસે પૂછતા હૈ? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાતોંકા વિચાર કર ઉપદેશકકો ધર્મકા ઉપદેશ દેના ચાહિયે । સાથમેં દેશકાલાદિકકા ભી વિચાર કરના આવશ્યક હૈ । જો ઉપદેશક ઇસ પ્રકારકી સમસ્ત વાતોંકા વિચાર કર ઉપદેશ કરતા હૈ વહ વાદિયોંકે માનકા મર્દન કરતા હુઆ અપને સિદ્ધાન્તકી સ્થાપના કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર ગણધરાદિકોંસે પ્રશંસિત વહ ઉપદેશક આઠ પ્રકારકે કર્મરૂપી પાશસે જકડે હુએ પ્રાણિયોંકો અપને ધર્મોપદેશસે

નથી. હવે આવું છે તો ઉપદેશ કેવો હોવો જોઈએ? તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—સર્વ પ્રથમ ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓને ભલી પ્રકાર રીતીને ચિત્તમાં એ વિચાર કરે કે જે આ મને ધર્મ વિષે પૂછે છે તે પુણ્યાત્મા છે યા તુચ્છાત્મા છે? અથવા વક્ત્ર છે યા જડ છે? અગર વક્ત્ર અને જડ બન્ને સ્વભાવવાળા છે? કયા દેવના ઉપાસક છે? કયા મતના અનુયાયી છે—સાંખ્યમતના યા બૌદ્ધધર્મના? ઉપલક્ષણથી મિથ્યાદૃષ્ટિ છે યા સમ્યગ્દૃષ્ટિ? એ પણ બાણી દેવું જોઈએ આ જે મને ધર્મવિષયક પ્રશ્ન પૂછે છે તે કયા અભિપ્રાયથી પૂછે છે? ઇત્યાદિ સર્વ વાતોનો વિચાર કરી ઉપદેશકેએ ધર્મનો ઉપદેશ દેવો જોઈએ. સાથમાં દેશ-કાળાદિકનો પણ વિચાર કરવો આવશ્યક છે. જે ઉપદેશક આ પ્રકારની સમસ્ત વાતોનો વિચાર કરી ઉપદેશ આપે છે તે વાદિઓના માનનું મર્દન કરીને પોતાના સિદ્ધાંતની સ્થાપના કરવામાં સમર્થ થાય છે. આ પ્રકારે ગણધરાદિકોથી પ્રશંસિત તે ઉપદેશક આઠ પ્રકારના કર્મરૂપી પાશથી જકડાયેલાં પ્રાણીઓને પોતાના ધર્મ



प्राणिनो धर्मोपदेशेन परिमोचयति=संसारकारागाराब्निष्काशयति स एव ऊर्ध्वमध-  
स्तिर्यङ्मु लोकेषु सर्वतः=सर्वासु दिशासु दशसु दिक्ष्वित्यर्थः, सर्वपरिज्ञाचारी-सर्वा-  
चासौ परिज्ञा सर्वपरिज्ञा तथा ज्ञप्रत्याख्यानरूपया द्विविधयाऽऽचरितुं शीलं यस्य  
स सर्वपरिज्ञाचारी-समस्तहेयोपादेयकुशलः। अत्रायं विवेकः-ज्ञपरिज्ञा द्विविधा-  
छाद्यस्थिकी कैवलिकी च, तत्र छाद्यस्थिकी मतिश्रुत्यवधिमनःपर्यवभेदेन चतुर्विधा,  
कैवलिकी केवलज्ञानरूपैकैव, मूलोत्तरगुणभेदेन प्रत्याख्यानपरिज्ञाऽपि द्विविधा,  
यद्वा सर्वपरिज्ञाचारी यो विधिकथनगुणान् ज्ञपरिज्ञया ज्ञात्वाऽविधिकथनदोषांश्च  
संसाररूपी कारागारसे मुक्त कर देता है। ऐसा उपदेशक ही उर्ध्वदिशा  
अधोदिशा तथा इस तिर्यग्लोकमें और समस्त दिशाओंमें सर्वपरिज्ञा-  
चारी होता है। समस्तपरिज्ञाका नाम सर्वपरिज्ञा है। सर्वपरिज्ञासे जिस  
का आचरण करनेका स्वभाव है उसका नाम सर्वपरिज्ञाचारी है। परिज्ञा  
दो प्रकारकी है (१) ज्ञपरिज्ञा और (२) प्रत्याख्यानपरिज्ञा। इन दोनों  
प्रकारकी परिज्ञासे वह युक्त होता है, अर्थात् समस्त हेय और उपा-  
देयमें वह कुशल हो जाता है। इसका भाव यह है कि-ज्ञपरिज्ञा दो  
प्रकारकी है-(१) छाद्यस्थ-सम्बन्धी और (२) केवलज्ञानी-सम्बन्धी।  
छाद्यस्थ-सम्बन्धी परिज्ञा-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनः  
पर्यवज्ञानके भेदसे चार प्रकारकी है। केवलज्ञानी-सम्बन्धी परिज्ञा एक  
केवलज्ञानरूप ही है, उसके भेद नहीं है। प्रत्याख्यानपरिज्ञा भी मूलगुण  
और उत्तरगुणके भेदसे दो प्रकारकी है। जो उपदेशक विधिके कथनके  
गुणों को ज्ञपरिज्ञासे जान कर अविधि के कथनके दोषोंको प्रत्याख्यान-

उपदेशधी संसाररूपी कारागारधी मुक्त करे छे. तेवा उपदेशक ज उर्ध्वदिशा  
अधोदिशा तथा आ तिर्यग्लोकमां अने समस्त दिशाओमां सर्व परिज्ञाचारी  
थाय छे. समस्तपरिज्ञानुं नाम सर्वपरिज्ञा छे. सर्वपरिज्ञाधी जेतुं आचरण करवानो  
स्वभाव छे तेनुं नाम सर्वपरिज्ञाचारी छे. परिज्ञा जे प्रकारनी छे. (१) ज्ञ-परिज्ञा  
अने (२) प्रत्याख्यान-परिज्ञा, आ अने प्रकारनी परिज्ञाधी ते युक्त अने छे.  
अर्थात् समस्त हेय अने उपादेयमां ते कुशल अनी जाय छे. तेना भाव जे छे  
ज्ञ-परिज्ञा जे प्रकारनी छे. (१) छाद्यस्थसंबंधी अने (२) केवलज्ञानी संबंधी  
छाद्यस्थसंबंधी परिज्ञा-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान अने मनःपर्यवज्ञानना  
बेदधी चार प्रकारनी छे. केवलज्ञानीसंबंधी परिज्ञा जेक केवलज्ञानरूप ज छे,  
तेना बेद नहीं. प्रत्याख्यान-परिज्ञा पण मूलगुण अने उत्तरगुणना बेदधी जे  
प्रकारनी छे. जे उपदेशक विधिना कथनना गुणोने ज्ञ-परिज्ञाधी जाणुने अने



પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરતિ, અત એવ સર્વેતિ કથનં સંગતમ્ । એવંભૂતોઽસૌ કિમાસાદયતીત્યાહ-‘ ન લિપ્યત ’ ઇત્યાદિ, વીર:-પ્રત્યાત્મપ્રદેશધર્મપ્રભાવપ્રચાર-શક્તિસમ્પન્નઃ ક્ષણપદેન હિંસાસ્થાનેનાત્મસંયમવિરાધનારૂપેણ ન લિપ્યતે=નોપલિપ્તો ભવતિ આક્રોશનોદ્ધ્વંસનવધાદિનાઽઽત્મવિરાધકો જ્ઞાનાદિપશ્ચાચારાનાચરણેન

પરિજ્ઞાસે છોડ દેતા હૈ વહ ઉપદેશક ભી સર્વપરિજ્ઞાચારી કહલાતા હૈ । હિસ અપેક્ષાસે પરિજ્ઞાકે સાથ ‘ સર્વ ’ યહ વિશેષણ સંગત બેઠતા હૈ । હિસ પ્રકારકા ઉપદેશક કિ જો આત્માકે પ્રત્યેક પ્રદેશમેં ધર્મકા પ્રચાર કરને કી શક્તિસે સમ્પન્ન હૈ વહ હિંસાકે સ્થાનભૂત અપની આત્માકી વિરાધના સે તથા સંયમકી વિરાધનાસે કમી ભી ઉપલિપ્ત નહીં હોતા હૈ । તાત્પર્ય યહ કિ વહ ઉપદેશક-આક્રોશન, ઉદ્ધ્વંસન ઓર વધાદિકસે અપની આત્માકી વિરાધના કરનેવાલા નહીં હોતા હૈ, ઓર ન જ્ઞાનાચાર દર્શનાચાર ઓર તપઆચાર આદિ પાંચ પ્રકારકે આચારોંકે અનાચરણસે સંયમકા હી વિરાધક હોતા હૈ, ક્યોં કિ વહ હિન દોનોં પ્રકારકી વિરાધના કે કટુક ફલકો મલી પ્રકાર જાનતા હૈ । હસે યહ પૂર્ણ રૂપસે વિશ્વાસ હૈ કિ જો હિન દોનોં પ્રકારકી યા કિસી ભી એક પ્રકારકી વિરાધનાકા કરનેવાલા હોતા હૈ હસે સંસારમેં હી ભ્રમણ કરના પડતા હૈ, કારણ કિ હિસ પ્રકારકી વિરાધનાસે જીવ અશુભ કર્મોંકા હી બંધ કરતા હૈ ઓર હિનકા ફલ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમેં ભ્રમણ કરના હૈ । હિસ સંસારકે

અવિધિના કથનના દોષોને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી છોડી આપે છે તે ઉપદેશક પણ સર્વપરિજ્ઞાચારી કહેવાય છે. આ અપેક્ષાથી ‘ પરિજ્ઞા ’ની સાથે ‘ સર્વ ’ આ વિશેષણ સંગત બેસે છે. આ પ્રકારના ઉપદેશક જે આત્માના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં ધર્મનો પ્રચાર કરવાની શક્તિથી સંપન્ન છે, તે હિંસાના સ્થાનભૂત પોતાના આત્માની વિરાધનાથી તથા સંયમની વિરાધનાથી કદિ પણ ઉપલિપ્ત થતા નથી. તાત્પર્ય એ છે કે તે ઉપદેશક-આક્રોશન ઉદ્ધ્વંસન અને વધાદિકથી પોતાના આત્માની વિરાધના કરવાવાળા થતા નથી, તેમજ જ્ઞાનાચાર, દર્શનાચાર અને તપઆચાર આદિ પાંચ પ્રકારના આચારોના અનાચરણથી સંયમના વિરાધક બનતા નથી, કારણ કે તે એ બંને પ્રકારની વિરાધનાના કટુ ફળને સારી રીતે બાણે છે. તેને પૂર્ણ રીતે વિશ્વાસ છે કે જે આ બંને પ્રકારની અગર કોઈપણ એક પ્રકારની વિરાધનાના કરવાવાળા હોય છે, તેને સંસારમાં જ ભ્રમણ કરવું પડે છે. કારણ કે આ પ્રકારની વિરાધનાથી જીવ અશુભ કર્મોના જ બંધ કરે છે, અને તેનું ફળ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ભ્રમણ થાય છે, ‘ આ સંસારના કારણભૂત કર્મોના નાશ

સંયમવિરાધકો ન ભવતીત્યભિપ્રાયઃ । અન્યદપિ વીરકર્તવ્યમાહ—‘સ મેધાવી’-  
ત્યાદિ, સઃ=મુનિઃ મેધાવી=વિદિતાત્મસંયમવિરાધનકટુકફલો યઃ અણોદ્ઘાતનખેદજ્ઞઃ-  
અણતિ=ગચ્છતિ યેન પ્રાણિગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારં તદણં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાબલ્યેન  
ઘાતનમ્=અપનયનમ્ અણોદ્ઘાતનં, તસ્ય તત્ર વા ખેદજ્ઞઃ=નિપુણઃ, યશ્ચ બન્ધપ્રમો-  
ક્ષાન્વેષી-બન્ધસ્ય=પ્રકૃતિસ્થિત્યનુભાવપ્રદેશરૂપસ્ય પ્રમોક્ષઃ=પ્રકર્ષેણ મોક્ષસ્તદુપાયો  
વા રત્નત્રયરૂપસ્તમન્વેષ્ટું=ગવેષયિતું શીલં યસ્ય સ બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી, યોઽણો-  
દ્ઘાતનખેદજ્ઞો યશ્ચ બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી સ એવ મેધાવી ભવતીતિ સમ્બન્ધઃ ।

કારણભૂત કર્મકો નાશ કરનેકે લિયે હી તો મૈને યહ મુનિવેષ ધારણ  
કિયા હૈ । હસી અભિપ્રાયકી પુષ્ટિ સૂત્રકાર—“અણુઘાયણચેયન્ને”  
‘અણોદ્ઘાતનખેદજ્ઞઃ’ હસ પદસે કી હૈ—“અણતિ=ગચ્છતિ યેન પ્રાણિ-  
ગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારે તદ્ અણં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાબલ્યેન ઘાતનમ્=  
અપનયનં, તસ્ય તત્ર વા ખેદજ્ઞઃ” હિતિ । અર્થાત્—જિસકે દ્વારા પ્રાણિ-  
સમૂહ ચતુર્ગતિરૂપ હસ સંસારમેં ભ્રમણ કરતા હૈ વહ અણ-કર્મ હૈ,  
ઉસ કર્મકે વિનાશ કરનેમેં જો નિપુણ હૈ વહ અણોદ્ઘાતનખેદજ્ઞ હૈ । જો  
બંધકે નાશ કરનેકા અથવા ઉસકે નાશ કરનેકે ઉપાયોંકે અન્વેષણ કરને  
કા સ્વભાવવાલા હોતા હૈ વહ સંસારકે કારણભૂત કર્મકે વિનાશ કરનેમેં  
કુશલ હોતા હૈ ।

શાસ્ત્રમેં બન્ધકે ચાર ભેદ બતલાયે ગયે હૈ—(૧) પ્રકૃતિબન્ધ, (૨)  
સ્થિતિબન્ધ, (૩) અનુભાગબન્ધ, (૪) પ્રદેશબન્ધ । હનકા અત્યન્ત અભાવ  
હોના વહ બન્ધપ્રમોક્ષ હૈ । અથવા હનકે અત્યન્ત અભાવ હોનેમેં કારણભૂત

કરવા માટે જ મેં મુનિપણાનો વેશ લીધો છે. આ અભિપ્રાયની પુષ્ટિ સૂત્રકાર  
“અણુઘાયણચેયન્ને” અણોદ્ઘાતનખેદજ્ઞઃ એ પદથી કરેલ છે. “અણતિ-  
ગચ્છતિ યેન પ્રાણિગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારે તદ્ અણં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાબલ્યેન  
ઘાતનમ્=અપનયનં, તસ્ય તત્ર વા ખેદજ્ઞઃ, હિતિ, અર્થાત્ જેના દ્વારા પ્રાણીસમૂહ  
ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમાં ભ્રમણ કરે તે અણ=કર્મ છે. તે કર્મનો વિનાશ કરવામાં  
જે નિપુણ છે તે અણોદ્ઘાતનખેદજ્ઞ છે. જે બંધનો નાશ કરવાના, અથવા તેનો  
નાશ કરવાના ઉપાયોતું અન્વેષણ કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે તે સંસારના  
કારણભૂત કર્મનો વિનાશ કરવામાં કુશલ હોય છે.

શાસ્ત્રમાં બંધના ચાર ભેદ બતાવેલ છે. (૧) પ્રકૃતિબંધ (૨) સ્થિતિબંધ  
(૩) અનુભાગબંધ, અને (૪) પ્રદેશબંધ. તેનો અત્યંત અભાવ થવો તે બંધપ્રમોક્ષ  
છે અથવા તેના અત્યંત અભાવ હોવાના કારણભૂત જે રત્નત્રયાદિક ઉપાય છે

નનુ ય એવ અણોદ્ધાતનલેદજ્ઞઃ સ એવ બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી ચેતિ પૌનરુક્ત્યં સ-  
માપતિતમિતિ ચેન્ન-‘અણોદ્ધાતનલેદજ્ઞઃ’ ઇત્યનેન મૂલોત્તરપ્રકૃતિભેદવિશિષ્ટસ્ય  
યોગનિમિત્તેન પ્રાપ્તસ્ય કષાયસ્થિતિમતઃ કર્મણો વદ્વસ્પૃષ્ટનિધત્તનિકાચિતરૂપબધ્ધમા-  
માનાવસ્થાયાસ્તદ્દૂરીકરણોપાયસ્ય ચ સમ્યગ્જ્ઞાતેત્યસ્યાર્થસ્યાભિહિતત્વાદ્ બન્ધપ્ર-  
મોક્ષેત્યાદિના ચ કેવલં તદ્દૂરીકરણાનુષ્ઠાનસ્યાભિહિતત્વાત્ ।

જો રત્નત્રયાદિક ઉપાય હૈં ઉન્હેં ખી ‘બન્ધપ્રમોક્ષ’ શબ્દસે ગ્રહણ કર લિયા  
ગયા હૈં । બન્ધપ્રમોક્ષકા અથવા ઇનકે ઉપાયોંકા અન્વેષણ કરનેકા જિસકા  
સ્વભાવ હૈં વહ બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં । જો અણોદ્ધાતનકુશલ ઓર બન્ધ-  
પ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં વહી મેધાવી હોતા હૈં ।

શઙ્કા—જો અણોદ્ધાતનમેં કુશલ હૈં વહી તો બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં ।  
ફિર ઇસ પ્રકારકે કથનસે તો દોનોં શબ્દોંકે અર્થોંમેં પરસ્પરમેં સમાનતા  
આજાનેસે પુનરુક્તિદોષકા પ્રસન્ન આતા હૈં ।

ઉત્તર—યહ બાત નહીં હૈં—“અણોદ્ધાતનલેદજ્ઞ” ઇસ શબ્દસે “મૂલ  
ઓર ઉત્તરભેદ વિશિષ્ટ યોગકે નિમિત્તસે ગૃહીત ઓર કષાયસે સ્થિતિ-  
યુક્ત, એસે કર્મોંકી વદ્વ, સ્પૃષ્ટ, નિધત્ત ઓર નિકાચિતરૂપ બધ્ધમાન  
અવસ્થાઓંકા ઓર કર્મોંકો દૂર કરનેવાલે ઉપાયોંકા વહ સમ્યગ્જ્ઞાતા  
હૈં” યહ અર્થ પ્રતિપાદિત કિયા ગયા હૈં । ‘બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી’ ઇસ શબ્દ  
સે સિર્ફ ઇનકો દૂર કરનેવાલે અનુષ્ઠાનકા પ્રતિપાદન કિયા ગયા હૈં ।

તેને પણ બંધપ્રમોક્ષ શબ્દથી ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. બંધપ્રમોક્ષનું, અથવા  
તેના ઉપાયોનું અન્વેષણ કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે.  
જે અણોદ્ધાતનકુશળ અને બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે તે જ મેધાવી હોય છે.

શંકા—જે અણોદ્ધાતનમાં કુશળ છે તે જ બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે, એ  
પ્રકારના કથનથી તો બંને શબ્દોના અર્થોમાં પરસ્પરમાં સમાનતા આવવાથી  
પુનરુક્તિ દોષનો પ્રસંગ આવે છે.

ઉત્તર—એ વાત નથી “અણોદ્ધાતનલેદજ્ઞ” આ શબ્દથી “મૂલ અને  
ઉત્તરભેદવિશિષ્ટ યોગના નિમિત્તથી ગૃહીત અને કષાયથી સ્થિતિયુક્ત એવા  
કર્મોની બદ્ધ, સ્પૃષ્ટ, નિધત્ત અને નિકાચિતરૂપ બધ્ધમાન અવસ્થાઓના, અને તેવા  
કર્મોને દૂર કરવાવાળાં ઉપાયોના તે સમ્યગ્જ્ઞાતા છે” આ અર્થ પ્રતિપાદિત કરેલ  
છે. તથા ‘બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી’ આ શબ્દથી ક્રૂર તેને દૂર કરનાર અનુષ્ઠાનનું  
પ્રતિપાદન કરેલ છે.



નનુ યથૈતાદશઃ સ કેવલી છદ્મસ્થો વા ? પ્રોચ્યતે—કેવલિનોઞ્જોદ્ધાતેત્યાદિ-વિશેષણાસમ્ભવાચ્છદ્મસ્થસ્ય ગ્રહણમ્ । કેવલિનસ્તર્હિં કિં સ્યાદિતિ દર્શયતિ—‘કુશલ’ इत्यादि । कुशलः=केवली तीर्थङ्करः सामान्यकेवली वा पुनः न बद्धः घातिकर्मणो नाशात्, न मुक्तः=भवोपग्राहिकर्मसत्त्वात् । बाह्याभ्यन्तरसावधानुष्ठानैश्च मुक्तः, भवोपग्राहिकर्मणः सत्त्वेन बद्धोऽपि ।

यद्वा छद्मस्थ एव कुशलपदेनोच्यते, तेन कुशलः=प्राप्तरत्नत्रयः, न बद्धः=अनन्तानुबन्ध्यादिकषायानलोपशमादिसत्त्वात्, न मुक्तः=इदानीमपि तत्कर्मसत्त्वात्, अज्ञानाविरतिमिथ्यात्वैश्च मुक्तः, प्रशस्तैस्तु चारित्रतपोविनयादिभिर्वा न मुक्तः ॥सू० ९॥

શક્કા—જો એસા હોતા હૈ વહ કૌન હૈ? કેવલી હૈ યા છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવલીમેં “ અળોદ્ધાતનસ્વેદજ્ઞ ” ઇત્યાદિ વિશેષણ સંભવિત નહીં હોતે હૈ, ઇન દોનોં વિશેષણોંસે તો કેવલ છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । હાં “ કુશલ ” ઇસ શબ્દસે કેવલીકા ગ્રહણ હોતા હૈ, વે ચાહે સામાન્યકેવલી હોં ચાહે તીર્થઙ્કર હોં । વે ન તો બદ્ધ હૈં; ક્યોં કિ ઉનકે ઘાતી કર્મોંકા અભાવ હો ચુકા હૈ, ઓર ન મુક્ત હી હૈં, કારણ કિ ભવોપગ્રાહી કર્મોંકા ઉનકે સદ્ભાવ હૈ । યદ્યપિ બાહ્ય ઓર આભ્યન્તર સાવધ કર્મોંસે વે મુક્ત-રહિત-હૈં તો ખી ભવોપગ્રાહી કર્મોંકી સત્તા હોનેસે વે બદ્ધ ખી હૈં ।

અથવા—‘કુશલ’ ઇસ પદસે છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । જિસને રત્ન-ત્રયકો પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ વહ કુશલ હૈ । વહ બદ્ધ નહીં હૈ, ક્યોં કિ ઇસકે અનન્તાનુબન્ધી આદિ કષાયરૂપ અગ્નિકા ઉપશમાદિ હો ચુકા હૈ ।

શંકા—જે એવા છે તે કેણુ છે ? કેવળી છે કે છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવળીમાં “ અળોદ્ધાતનસ્વેદજ્ઞઃ ” ઇત્યાદિ વિશેષણો સંભવિત થતા નથી. આ અન્ને વિશેષણોથી તો કેવળ છદ્મસ્થનું જ ગ્રહણ થયેલ છે. હા “ કુશલ ” આ શબ્દથી કેવળીનું ગ્રહણ થાય છે તે ભલે સામાન્ય કેવળી હોય કે તીર્થંકર હોય. તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેઓને ઘાતી કર્મોંનો અભાવ થયેલ છે, અને મુક્ત પણ નથી. કારણ કે ભવોપગ્રાહી કર્મોંનો તેને સદ્ભાવ છે. જો કે બાહ્ય અને આભ્યંતર સાવધ કર્મોંથી તેઓ મુક્ત-રહિત છે તો પણ ભવોપગ્રાહી કર્મોંની સત્તા હોવાથી તેઓ બદ્ધ પણ છે.

અથવા “ કુશલ ” આ પદથી છદ્મસ્થનું જ ગ્રહણ થયેલ છે. જેણે રત્નત્રય પ્રાપ્ત કરેલ છે તે કુશલ છે. તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેના અનંતાનુબંધી આદિ કષાયરૂપ અગ્નિનું ઉપશમાદિ થઈ ચુકેલ છે. મુક્ત એટલા માટે નથી કે આ

યશ્વેતાદશઃ કેવલી છદ્મસ્થો વા સ યદનુષ્ઠિતવાન્ યચ્ચાનુતિષ્ઠતિ વા તદ-  
ન્યેનાપિ સાધુનાઽનુષ્ઠેયમિતિ દર્શયતિ—‘સે જં ચ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે જં ચ આરભે જં ચ નારભે , અનારબ્ધં ચ ન  
આરભે છળં છળં પરિણાય લોકસન્નં ચ સઘ્વસો ॥ સૂ. ૧૦ ॥

છાયા—સ યચ્ચારભતે યચ્ચ નારભતે, અનારબ્ધં ચ નારભતે ક્ષણં ક્ષણં  
પરિજ્ઞાય લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

ટીકા—‘સ ય’-દિત્યાદિ, સઃ=તીર્થઙ્કરઃ સામાન્યકેવલી પ્રાપ્તરત્નત્રયો મુનિર્વા  
જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્માપનયનાય યત્કર્મ તપઃસંયમવિનયાદિકં ચ આરભતે=વિદધાતિ  
ઘટતે=પરાક્રમતે, યતતે વા, યચ્ચ તદ્વિપરીતં સંસારહેતું મિથ્યાત્વાવિરત્યાદિકં

મુક્ત ઇસલિયે નહીં હૈ કિ ઇસ સમય મી ઉસકે ઉસ ઉસ કર્મકા સઙ્ગાવ  
હૈ । અજ્ઞાન, અવિરતિ ઓર મિથ્યાત્વ, ઇનસે વહ મુક્ત-રહિત હૈ; પરન્તુ  
પ્રશસ્ત ચારિત્ર, તપ ઓર વિનયાદિસે મુક્ત-રહિત નહીં હૈ ॥ સૂ. ૯ ॥

ઇસ પ્રકારકે ચાહે કેવલી હોં યા છદ્મસ્થ, પરન્તુ ઉન્હોંને જિસકા  
આચરણ કિયા ઓર જો આચરણ કર રહે હૈં વહ અન્ય સાધુકો મી  
કરના ચાહિયે, ઇસ વાતકો કહતે હૈં—‘સે જં ચ’ ઇત્યાદિ ।

તીર્થઙ્કર સામાન્યકેવલી અથવા રત્નત્રયકે ધારી મુનિ, જે “સે”  
ઇસ શબ્દસે ગ્રહણ કિયે ગયે હૈં । ઇન્હોંને જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોંકે  
નાશ કરનેકે લિયે જિન તપ સંયમ ઓર વિનયાદિકોંકા અનુષ્ઠાન-  
પાલન કિયા હૈ, ઇનકે પાલન કરનેમ્ જો પરાક્રમ દિખલાયા હૈ, તથા  
ઇનકી આરાધના કરનેમ્ જો પ્રયત્ન કિયે હૈં, ઓર ઇનસે વિપરીત સંસાર

સમયે પણુ તેઓને તે તે કર્મોંના સદ્ભાવ છે. અજ્ઞાન, અવિરતિ અને મિથ્યાત્વ,  
તેનાથી તે મુક્ત-રહિત છે પરંતુ પ્રશસ્ત ચારિત્ર, તપ અને વિનયાદિથી મુક્ત-  
રહિત નથી. ॥ સૂ. ૯ ॥

આવા પ્રકારના ભલે કેવળી હોય કે છદ્મસ્થ પરંતુ તેઓએ જેનું આચ-  
રણ કર્યું અને જે આચરણ કરે છે તે બીજા સાધુઓએ પણ કરવું બોધ્યો.  
આ વાત કહે છે—‘સે જં ચ’ ઇત્યાદિ.

તીર્થઙ્કર, સામાન્યકેવળી અથવા રત્નત્રયધારી મુનિ, જે “સે” શબ્દથી  
બ્રહ્મ કરવામાં આવેલ છે. તેઓએ જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોંના નાશ કરવા  
માટે જે તપ સંયમ અને વિનયાદિનું અનુષ્ઠાન-પાલન કરેલ છે, તેનું  
પાલન કરવામાં જે પરાક્રમ બતાવેલ છે, તથા તેની આરાધના કરવામાં જે પ્રયત્ન  
કરેલ છે, અને તેનાથી વિપરીત સંસારના કારણભૂત મિથ્યાત્વ તેમજ અવિરતિ

प्राणातिपातादिरूपाष्टादशपापस्थानानि च नारभते=न करोति न घटते न यतते न पराक्रमते वा । तद्विपरीतमाचरतीत्यर्थोऽपि । संयतैः पञ्चमहाव्रतपालनं विधेयं, संसारकारणं मिथ्यात्वाविरत्यादिकं च नासेवनीयमित्यभिप्रायः । तदेवाह—‘अनारब्ध’-मित्यादि, अनारब्धं केवलिभिः प्राप्तस्त्रयैश्छद्मस्थैर्वा अनारब्धम्=अनाचीर्णं च द्विपञ्चाशत्प्रकारं नारभेत=न सेवेत, च शब्दाद्यदारब्धं तत्कुर्यादित्यर्थोऽपि । अनाचरणीयमेवाह—‘क्षण’-मित्यादि, क्षणं क्षणं, क्षणनं क्षणः=हिंसनं, कार्यकारणयोरभेदाद् येन कर्मणा कारणभूतेन हिंसा कार्यरूपा समुत्पद्यते तत्कर्म क्षणः, तम्,

के कारणभूत मिथ्यात्व एवं अविरति आदि तथा प्राणातिपातादिरूप अठारह (१८) पापस्थानों का जिस प्रकारसे इन्होंने परित्याग किया है, उनके छोड़नेमें जो अपनी शक्ति प्रकट की है, और जिस प्रकारका प्रयत्न किया है, तथा इन अविरति आदिकोंसे विपरीत अपनी प्रवृत्ति बनाई है, संयतोंका कर्तव्य है कि वे भी पांच महाव्रतोंका इसी लगनके साथ पालन करें, और संसारके कारण-मिथ्यात्व अविरति आदि-का परित्याग करें, स्वप्नमें भी इनका सेवन न करें । केवलियोंने अथवा रत्नत्रयको प्राप्त हुए छद्मस्थ मुनियोंने जिनका सेवन नहीं किया, अर्थात् (५२) प्रकारके जिन अनाचीर्णों-अनाचारों-का अनुष्ठान नहीं किया उनका संयति कभी भी सेवन न करे ।

सूत्रमें आये हुए “ च ” शब्दसे इस प्रकार अर्थ होता है कि जो उन्होंने पालन किया है वही वह पालन करे । उन्होंने क्या आचरण नहीं किया ? इसको प्रकट करते हैं—‘क्षणं क्षणं’ इत्यादि । ‘क्षण’ शब्दका अर्थ हिंसा है । कार्य और कारणमें अभेद सम्बन्धकी विवक्षासे कारणभूत

आदि तथा प्राणातिपातादिइष्ट अठार (१८) पापस्थानोंको के प्रकारे तेषु परित्याग करेले छे, ते छोड़वाओं के पोतानी शक्ति प्रगट करेले छे, अने के प्रकारे प्रयत्न करेले छे, तथा आ अविरति आदिथी विपरीत पोतानी प्रवृत्ति अनावी छे संयतोंनुं कर्तव्य छे के ते पण पांच महाव्रतोंनुं तेवी लावनाथी पालन करे अने संसारनां कारण मिथ्यात्व अविरति आदिनो परित्याग करे. स्वप्नमां पण तेनुं सेवन न करे. केवलीओओ, अथवा रत्नत्रयप्राप्त छद्मस्थ मुनीओओ तेनुं सेवन नथी कर्तुं अर्थात् लावन प्रकारना के अनाचारोंनुं अनुष्ठान नथी कर्तुं तेनुं केछि पण संयती सेवन न करे.

सूत्रमां आवेलां “ च ” शब्दथी ओ प्रकारे अर्थ थाय छे के के तेओओ पालन करेले छे ते के ते पालन करे. तेओओ शुं आचरण नथी कर्तुं ? ते प्रगट करे छे—‘क्षणं क्षणं’ इत्यादि. ‘क्षण’ शब्दको अर्थ हिंसा छे. कार्य अने कारणमां अलेहसंभन्धनी विवक्षाथी कारणभूत कर्मद्वारा के हिंसाइप कार्य उत्पन्न थाय छे



તસ્ય વીપ્સાયાં ક્ષણં- ક્ષણં, હિંસાજનકં સકલં કર્મેત્યર્થઃ, પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહૃત્ય ચ । યદ્વા—ક્ષણઃ સંયમાચારાવસરઃ, તસ્ય વીપ્સાયાં ક્ષણઃ ક્ષણસ્તં પરિજ્ઞાય જ્ઞપરિજ્ઞયા વિદિત્વા, આસેવનપરિજ્ઞયા ચાઽઽસેવ્ય વિચરેત્ । અપિ ચ લોકસંજ્ઞાં ચ લોકસ્ય=અસંયતલોકસ્ય સંજ્ઞા=સંજ્ઞાનં શબ્દાદિવિષયાસજ્ઞજન્ય-સુખસ્પૃહા પરિગ્રહાદિસંજ્ઞા વા, તાં સર્વશઃ=સર્વપ્રકારેણ યોગત્રિકરણત્રિકેણ પરિજ્ઞાય પરિહૃત્ય, યદ્વા—ચશબ્દાદાત્મૌપમ્યેન ક્ષણનં ન વિદ્ધ્યાત્ “જહ મમ ણ પિયં દુઃખં જાણિય એમેવ સવ્વજીવાણં” ઇત્યાદિવચનાત્ । સર્વથા પ્રાણાતિપાતાદૌ ન પ્રવર્તેત

જિસ કર્મકે દ્વારા હિંસારૂપ કાર્ય ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઉસ કર્મકા નામ ક્ષણ હૈ । યહાં પર વીપ્સા મેં ‘ક્ષણં ક્ષણં’ યહ દ્વિરુક્તિ હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ હિંસાત્મક સકલકર્મોં કો સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનકર ઔર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઇનકા પરિત્યાગ કર વિચરણ કરે ।

અથવા-સંયમકે આચરણ કરનેકે પ્રત્યેક અવસરકો ભી સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનકર ઔર આસેવનપરિજ્ઞાસે ઇસકા સેવન કરે ।

તથા લોકસંજ્ઞાકા સર્વ પ્રકારસે પરિત્યાગ કરે । અસંયત લોકોંકો શબ્દાદિક વિષયોંકે સમ્બન્ધસે ઉત્પન્ન સુખકી જો ચાહના હોતી હૈ ઉસકા નામ લોકસંજ્ઞા હૈ । અથવા પરિગ્રહાદિકસંજ્ઞાકા નામ ભી લોકસંજ્ઞા હૈ । સંયમી ઇસ લોકસંજ્ઞાકા સર્વ પ્રકારસે અર્થાત્ ત્રીન કરણ ત્રીન યોગસે ત્યાગ કરે ।

“લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ” યહાં પર જો “ચ” આયા હૈ ઉસસે યહ વાત પ્રકટ કી ગઈ હૈ કિ સંયમી સમસ્ત જીવોંકો અપને સમાન સમજ્ઞ કર કમી ભી હિંસાદિક કાર્યોંમેં પ્રવૃત્તિ ન કરે, ક્યોંકિ આગમકા

તે કર્મનું નામ ક્ષણુ છે. અહીં વીપ્સાથી ‘ક્ષણં ક્ષણં’ આ દ્વિરુક્તિ છે એટલે હિંસાજનક સકલ કર્મોને સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાથી બાણીને અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો પરિત્યાગ કરી વિચરણુ કરે.

અથવા સંયમનું આચરણુ કરવાના પ્રત્યેક અવસરને પણ સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાથી બાણી અને આસેવનપરિજ્ઞાથી તેનું સેવન કરે.

તથા લોકસંજ્ઞાનો સર્વ પ્રકારથી પરિત્યાગ કરે, અસંયત લોકોને શબ્દાદિક વિષયોના સંબંધથી ઉત્પન્ન સુખની જે ચાહના થાય છે તેનું નામ લોકસંજ્ઞા છે. અથવા પરિગ્રહાદિકસંજ્ઞાનું નામ પણ લોકસંજ્ઞા છે, સંયમી આ લોકસંજ્ઞાનો સર્વ પ્રકારથી અર્થાત્ ત્રણુ કરણુ ત્રણુ યોગથી ત્યાગ કરે.

“લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ” આ ઠેકાણે જે ‘ચ’ શબ્દ આવેલ છે તેનાથી એ વાત પ્રગટ કરી આવેલ છે કે સંયમી સમસ્ત જીવોને પોતાના સમાન સમજ્ઞ કોઈ વખત પણ હિંસાદિક કાર્યોમાં પ્રવૃત્તિ ન કરે, કારણુ કે આગમનું વાક્ય

સંયમાચરણાદૌ ચ પ્રવર્તેતેતિ સૂત્રાશયઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

યથા પૂર્વોક્તસકલગુણવિશિષ્ટસ્તસ્ય કિં ભવતીત્યાહ—‘ઉદેસો’ इत्यादि ।

મૂલમ્—ઉદેશો પાસગસ્સ નત્થિ, બાલે પુણ નિહે કામસમણુન્ને અસ-  
મિયદુક્ખે દુક્ખી દુક્ખાણમેવ આવટ્ટં અણુપરિયટ્ટइत्तिवेमि । સૂ૦ ૧૧ ।

॥ इय वीयज्जयणस्स छट्ठो उद्देशो समत्तो ॥ २-६ ॥

છાયા—ઉદેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ, બાલઃ પુનઃ સ્નિહઃ કામસમણુજ્ઞોડશમિત-  
દુઃખો દુઃખી દુઃખાનામેવાવર્તમણુવર્તતે, इति ब्रवीमि ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ इति द्वितीयाध्ययनस्य षष्ठ उद्देशः समाप्तः ॥ २-६ ॥

ટીકા—‘ઉદેશ’ इत्यादि । सूत्रमिदं तृतीयोद्देशे व्याख्यातमिति । इति ब्रवीमीत्यस्यार्थस्तु प्रथमाध्ययनोक्तदिशाऽवसेयः ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

વાક્ય હૈ કિ—“ જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં, જાણિય એમેવ સવ્વજીવાણં”  
જિસ પ્રકાર દુઃખ હમેં અપ્રિય હૈ ડસી પ્રકાર વહ સમસ્ત જીવોંકો ઢી  
અપ્રિય હૈ । હિંસાદિક કાર્યોં મેં જીવોંકો દુઃખ પહુંચતા હૈ, એસા સમજ  
કર સંયમી જન કમી ઢી પ્રાણાતિપાતાદિક કાર્યોં મેં પ્રવૃત્તિ ન કરે,  
ઑર ન સંયમાચરણસે મુખ મોડે, અર્થાત્ સંયમ મેં પ્રવૃત્તિશાલી બને, યહી  
સૂત્રકા આશય હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જો સંયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોંસે યુક્ત હોતા હૈ ડસકે ક્યા હોતા  
હૈ ? ડસકા ઁલાસા કરતે હૈ—‘ઉદેસો પાસગસ્સ નત્થિ’ इत्यादि ।

ડસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન ડસી અધ્યયનકે તીસરે ઉદેશમેં લિખા જા  
ચુકા હૈ । ‘इति ब्रवीमि’ ડસકા અર્થ પ્રથમ ઉદેશકે અનુસાર જાન  
લેના ઁહિયે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ आचाराङ्ग सूत्रके लोकविजयनामक दूसरे अध्ययनके छठे उद्देशका  
हिन्दी-भाषानुवाद समाप्त ॥ २-६ ॥

છે કે “ જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં જાણિય એમેવ સવ્વજીવાણં” જે પ્રકારે દુઃખ  
અમને અપ્રિય છે તે પ્રકારે તે સમસ્ત જીવોંને પણ અપ્રિય છે. હિંસાદિક  
કાર્યોંમાં જીવને દુઃખ પહોંચે છે, એવું સમજીને સંયમી જન કદિ પણ પ્રાણા-  
તિપાતાદિક કાર્યોંમાં પ્રવૃત્તિ ન કરે, અને સંયમાચરણથી દૂર રહે નહિ, અર્થાત્  
સંયમમાં પ્રવૃત્તિશાળી બને, એ જ સૂત્રનો આશય છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જે સંયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોંથી યુક્ત બને છે. તેને શું થાય છે ? તેનો  
ખુલાસો કરે છે—‘ઉદેસો પાસગસ્સ નત્થિ’ इत्यादि.

આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ અધ્યયનના ત્રીજા ઉદેશમાં લખાઈ ગયેલ છે.  
‘इति ब्रवीमि’ તેનો અર્થ પ્રથમ ઉદેશ અનુસાર બાણી લેવો ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥



ઉપસંહાર:-

અસ્મિન્નધ્યયને હિ લોકવિજયે સજ્જો ન કાર્યો બુધે-  
માત્રાદૌ ચ મહાવ્રતેઽપ્યદૃઢતા માનોઽપિ હેયસ્તથા ॥  
વૈરાગ્યં વિષયે મુનેર્વિહરણં લોકેઽપિ નિશ્રાણ્યયા  
પુત્રાદૌ મમતાં ત્યજેન્નિગદિતં તૂદેશપટ્કાન્વિતે ॥ ૧ ॥  
इत्याचाराङ्गसूत्रस्य लोकविजयाख्यद्वितीयाध्ययनस्य आचारचिन्तामणि-  
टीकायां षष्ठ उद्देशः समाप्तः ॥ २-६ ॥

इतिश्री-विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलित-  
ललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मायक-वादिमानमर्दक-  
श्रीशाहूछत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त - 'जैनशास्त्राचार्य'-पद-  
भूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्म-  
दिवाकर-पूज्यश्री-घासीलाल-व्रतिविरचितायाम् आचा-  
राङ्गसूत्रस्याचारचिन्तामणिटीकायां लोकविजयाख्यं  
द्वितीयमध्ययनं सम्पूर्णम् ॥ २ ॥

ઉપસંહાર:-

લોકવિજય નામક હસ પ્રકરણ, મેં યે છે ઉદ્દેશ ભરે,  
માતાદિકમેં સંગ અદૃઢતા, મહાવ્રતોમેં બુધ ન કરે ।  
માન તજન વૈરાગ્ય વિષયમેં, હો વિહાર જગનિશ્રાસે,  
પુત્રાદિકસે મમતા હરની છ ઉદ્દેશ હસ નિશ્રાસે ॥ ૧ ॥  
॥ इति आचाराङ्गसूत्रके लोकविजय-नामक दूसरे अध्ययनकी  
आचारचिन्तामणि-टीकाका हिन्दीभाषानुवाद संपूर्ण ॥ २ ॥

—: ઉપસંહાર :-

લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનમાં આ છ ઉદ્દેશો બતાવ્યા છે:-જ્ઞાનીએ  
માતા વગેરેનો સંગ ત્યજવો. મહાવ્રતોમાં દૃઢતા રાખવી. અભિમાન ત્યજવું.  
વિષયોથી વિરક્ત થવું. સંસારીઓને આશ્રયે વિહરવું. અર્થાત્ પયનપાયનાદિક  
સાવધ ક્રિયાઓને ટાળતો થકો ગૃહસ્થોએ પોતાને માટે કરેલ નિરવધ આહાર  
પાણીથી સંયમ-યાત્રાનો નિર્વાહ કરવો. તથા પુત્ર વગેરેની મમતા ત્યજવી.  
એ છ ઉદ્દેશો તેમાં છે. ॥૧॥

આચારાંગ સૂત્રના લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનના છઠ્ઠા ઉદ્દેશનો  
ગુજરાતી અનુવાદ સમાપ્ત. ૨-૬.

આ આચારાંગસૂત્રના લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનની આચાર-  
ચિન્તામણિ-ટીકાનો ગુજરાતી અનુવાદ સંપૂર્ણ. ॥૨॥



। અથાચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય શીતોષ્ણીયનામકં તૃતીયમધ્યયનમ્ ।

દ્વિતીયાધ્યયનકથનાનન્તરં શીતોષ્ણીયં નામ તૃતીયમધ્યયનમભિધીયતે ।  
 અસ્ય દ્વિતીયાધ્યયનેન સહાયમભિસમ્બન્ધઃ—શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામકાધ્યયનનિર્દિષ્ટવિશિ-  
 ષ્ટવ્રતમારધારિણો લોકવિજયાસ્થ્યદ્વિતીયાધ્યયનોક્તસંયમમનુતિષ્ઠતોઽપાસ્તસમસ્ત-  
 કષાયાદિલોકસ્ય પરમપદમારુરુક્ષોરકસ્માત્ શીતોષ્ણાઃ=અનુકૂલપ્રતિકૂલાઃ પરી-  
 ષહાઃ સમુત્પદ્યન્તે । તેષુ સ્ત્રીપરીષહસત્કારપરીષહાવેવાનુકૂલાવન્યે વિંશતિસંખ્યકાઃ  
 પરીષહાઃ પ્રતિકૂલાઃ । તેષાં હર્ષવિષાદપરિત્યાગપૂર્વકં પ્રસહનં કર્તવ્યમિતિ સમ્બન્ધા-  
 ભિધાયકમિદમધ્યયનમ્ । અત્ર ચત્વાર ઉદ્દેશાઃ સન્તિ । તત્ર—

આચારાઙ્ગસૂત્રકા શીતોષ્ણીયનામક તૃતીય અધ્યયન

દ્વિતીય અધ્યયનકે બાદ અબ્ હસ શીતોષ્ણીય નામક તૃતીય અધ્ય-  
 યન પ્રારમ્ભ હોતા હૈ । દ્વિતીય અધ્યયનકે સાથ હસ અધ્યયનકા હસ  
 પ્રકારસે સમ્બન્ધ હૈ કિ શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામક અધ્યયનમેં જિન વિશિષ્ટ  
 વ્રતોંકે ધારણ કરનેકા વિધાન કિયા ગયા હૈ ડન વ્રતોંકે પાલનેવાલે,  
 તથા લોકવિજય નામક દ્વિતીય અધ્યયનમેં પ્રતિપાદિત સંયમકે અનુષ્ઠાન  
 કરનેવાલે, સમસ્ત કષાયલોકકે નિરાકરણ કરનેવાલે ઓર પરમપદ જો  
 મોક્ષ ડસમેં પહુંચનેકી ઇચ્છાવાલે એસે સંયમી મુનિ અકસ્માત્ ઉત્પન્ન શીત-  
 ઉષ્ણ અર્થાત્ અનુકૂલ પ્રતિકૂલ પરીષહોંકો સહન કરતે હૈ । પરીષહ ૨૨  
 બાઈસ પ્રકારકે હૈ, ડનમેં સ્ત્રીપરીષહ ઓર સત્કારપરીષહ હી અનુકૂલ હૈ,  
 બાકીકે ૨૦ બીસ પરીષહ પ્રતિકૂલ હૈ । ડન સબ પરીષહોંકો હર્ષ વિષાદ

આચારાંગ સૂત્રનું શીતોષ્ણીયનામનું ત્રીજું અધ્યયન.

બીજા અધ્યયન બાદ હવે શીતોષ્ણીય નામના ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રારંભ  
 થાય છે. બીજા અધ્યયનની સાથે આ અધ્યયનનો એ પ્રકારે સંબંધ છે કે શસ્ત્ર-  
 પરિજ્ઞા નામના અધ્યયનમાં જે વિશિષ્ટ વ્રતો ધારણ કરવાનું વિધાન કરેલ છે,  
 તે વ્રતોના પાળવાવાળાં, તથા લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનમાં પ્રતિપાદિત  
 સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવાવાળાં, સમસ્ત કષાયલોકનું નિરાકરણ કરવાવાળાં અને  
 પરમપદ જે મોક્ષ તેમાં પહોંચવાની ઇચ્છાવાળાં એવાં સંયમી મુનિ અકસ્માત્ ઉત્પન્ન  
 શીત-ઉષ્ણ અર્થાત્ અનુકૂળ પ્રતિકૂલ પરિષહો સહન કરે છે. પરીષહ બાવીસ  
 પ્રકારના છે. તેમાં સ્ત્રીપરીષહ અને સત્કારપરીષહ, એ બે પરીષહ જ અનુકૂળ  
 છે. બાકીના ૨૦ બીસ પરીષહો પ્રતિકૂળ છે. આ સઘળાં પરીષહોને હર્ષ વિષાદ

પ્રથમોદ્દેશે ભાવસુપ્તાનાં દોષા જાગ્રતાં ચ ગુણાઃ પ્રદર્શિતાઃ ॥ ૧ ॥

દ્વિતીયે ભાવનિદ્રાવતાં દુઃસ્વાનુભવઃ પ્રદર્શિતઃ ॥ ૨ ॥

તૃતીયે સંયમાચરણમન્તરેણ કેવલં દુઃસ્વસહનાદેવ શ્રમણો ન ભવતીતિ કથિતમ્ ॥ ૩ ॥

ચતુર્થે તુ વાન્તવત્ કષાયાસ્ત્યાજ્યાઃ, પાપકર્મણશ્ચ વિરતિઃ, તથા વિદિત-  
વેદ્યસ્ય સંયમઃ પ્રતિબોધિતઃ, તથા ક્ષપકશ્રેણિપ્રવિષ્ટાનાં ચ સંયમિનાં મોક્ષો  
ભવતીત્યાવેદિતમ્ ॥ ૪ ॥

છોડ કર સંયમીકો સહન કરના चाहिये। इस प्रकारके सम्बन्धका  
प्रतिपादन करनेवाला यह अध्ययन है। इसमें ४ चार उद्देश हैं। उनमें—

प्रथम उद्देशमें भावसुप्त संयमियोंके दोष और जगते हुए संयमियोंके  
गुण दिखलाये गये हैं १।

द्वितीय उद्देशमें—‘भावनिद्रावाले संयमियोंको दुःस्वोंका अनुभव  
करना पड़ता है’ यह बात दिखलाई गई है २।

तृतीय उद्देशमें—‘संयमाचरणके बिना केवल दुःस्वोंके सहन करने  
मात्रसे साधु नहीं होता है’ यह विषय प्रतिपादित किया गया है ३।

चतुर्थ उद्देशमें—‘व्रमन-छर्दित किये हुए अन्नके समान कषाय त्याग  
करने योग्य हैं, पापकर्म परिहरणीय है, तथा पदार्थोंके स्वरूपको जानने-  
वाले संयमी मुनिके लिये संयम आराधनीय है, एवं क्षपकश्रेणिमें प्राप्त  
हुए साधुजनों को मुक्तिका लाभ अवश्यंभावी है’ आदि सब विषय  
प्रकट किये गये हैं ४।

છોડીને સંયમીઓએ સહન કરવા જોઈએ. આ પ્રકારના સંબંધનું પ્રતિપાદન  
કરવાવાળું આ અધ્યયન છે. તેમાં ચાર ઉદ્દેશ છે. તેમાં—

પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુપ્ત સંયમીઓના દોષ અને જાગતા સંયમીઓના  
ગુણ બતાવવામાં આવેલ છે. ૧.

બીજા ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાળા સંયમીઓને દુઃખોનો અનુભવ કરવો પડે  
છે, એ વાત બતાવવામાં આવી છે. ૨.

ત્રીજા ઉદ્દેશમાં ‘સંયમાચરણ બિના કેવળ દુઃખો સહન કરવા માત્રથી  
કોઈ સાધુ બની શકતો નથી’ એ વિષય પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે. ૩.

ચોથા ઉદ્દેશમાં—‘વ્રમન-છર્દિત કરેલા અન્ન સમાન કષાય ત્યાગ કરવા યોગ્ય છે,  
પાપકર્મ પરિહરણીય છે તથા પદાર્થોના સ્વરૂપને જાણવાવાળા સંયમી મુનિ માટે  
સંયમ આરાધનીય છે, તેમજ ક્ષપકશ્રેણિમાં પ્રાપ્ત થયેલાં સાધુજનોને મુક્તિનો  
લાભ અવશ્યંભાવી છે’ આદિ સઘળા વિષય પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. ૪.



દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય ચરમસૂત્રેણાસ્યૈવમભિસમ્બન્ધઃ—તત્ર “.....દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે” ઇત્યુક્તં, તદિદાપિ “ભાવસુપ્તા દુઃસ્વિનો દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુવર્તન્તે” ઇતિ પ્રતિબોધયિતુમાહ—‘સુત્તા અમુણી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સુત્તા અમુણી, સયા મુણિણો જાગરંતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—સુપ્તા અમુનયઃ, સદા મુનયો જાગ્રતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—અમુનયઃ=ગૃહસ્થાઃ સુપ્તાઃ=ભાવતઃ સુપ્તાઃ મિથ્યાત્વાજ્ઞાનમયનિદ્રાવ્યામોહિતાઃ હિંસાદ્યાસ્રવદ્વારેષુ સતતં પ્રવૃત્તાઃ સન્તિ । સુપ્તા હિ દ્વિવિધા ભવન્તિ દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ । તત્ર નિદ્રાપ્રમાદવન્તો દ્રવ્યસુપ્તાઃ, યદ્વા-શિથિલિતનયનપ્રચારા-જ્ઞોપાજ્ઞાવિસ્પષ્ટચેતનાવસ્થાપનાઃ દ્રવ્યસુપ્તાઃ । ભાવસુપ્તાસ્ત્વભિહિતા એવ ।

દ્વિતીય અધ્યયનકે અન્તિમ સૂત્રકે સાથે હસ અધ્યયનકા હસ પ્રકાર સમ્બન્ધ હૈ—ઉસ અધ્યયનકા અન્તિમ સૂત્ર “.....દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવ આવદં અણુપરિયદૃઢ” (દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે) યહ હૈ, હસકા ભાવ યહ હૈ કિ—દુઃસ્વી દુઃસ્વોંકી પરંપરાકા હી અનુવર્તન કરતે હૈ । જિસ પ્રકાર યહ બાત ઉસ અધ્યયનમેં કહી ગઈ હૈ ઉસી પ્રકાર યહાં પર ભી—‘જો ભાવસુપ્ત દુઃસ્વી હૈં બે દુઃસ્વોંકી હી પરંપરાકા અનુભવ કરતે હૈં’ હસ વિષયકો સમજાનેકે લિયે કહતે હૈં—‘સુત્તા અમુણી’ ઇત્યાદિ ।

અમુનિ શબ્દકા અર્થ ગૃહસ્થ હૈ । યે ભાવસે સુપ્ત-સોયે હુએ હૈં । મિથ્યાત્વ અજ્ઞાનમય નિદ્રાસે વ્યામોહિત મતિવાલે હોતે હુએ યે પ્રાણાતિપાતાદિક જો કર્મોંકે આનેકે દ્વાર હૈં ઉનમેં નિરન્તર પ્રવૃત્તિશાલી હૈં । સુપ્ત દો પ્રકારકે હોતે હૈં—(૧) દ્રવ્યસે ઓર (૨) ભાવસે । નિદ્રાપ્રમાદ-

બીજા અધ્યયનના અંતિમ સૂત્રની સાથે આ અધ્યયનનો આ પ્રકારે સંબંધ છે, તે અધ્યયનનું અંતિમ સૂત્ર “.....દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવ આવદં અણુપરિયદૃઢ” (.....દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે) એ છે. તેનો ભાવ એ છે કે દુઃખી દુઃખોની પરંપરાનું જ અનુવર્તન કરે છે, જેવી રીતે આ વાત તે અધ્યયનમાં કહેવામાં આવેલ છે તેવી રીતે આ ઠેકાણે પણ ‘જે ભાવસુપ્ત દુઃખી છે તેઓ પણ દુઃખોની જ પરંપરાનો અનુભવ કરે છે.’ આ વિષયને સમજાવવા માટે કહે છે—‘સુત્તા અમુણી’ ઇત્યાદિ.

અમુનિ શબ્દનો અર્થ ગૃહસ્થ છે. એ ભાવથી સુપ્ત-સુતેલા છે. મિથ્યાત્વ અજ્ઞાનમય નિદ્રાથી વ્યામોહિત મતિવાળા હોવા છતાં પ્રાણાતિપાતાદિક જે કર્મોના આવવાના દ્વાર છે તેમાં નિરંતર પ્રવૃત્તિશાળી છે. સુપ્ત એ પ્રકારના હોય છે.—



દ્રવ્યસુપ્તાસ્તસ્કરાદિના મણિમાણિક્યરત્નાદ્યપહારેણ યથાઽન્તર્દાહદારિદ્ર્ય-  
દૌર્ભાગ્યાદિલક્ષણપરિતાપકલાપમનુભવન્તિ તથા ભાવસુપ્તા અપિ પ્રમાદાદિના સમ્ય-  
ગ્જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાદ્યાત્મકરત્નાપહારાદીર્ઘસંસારપરિભ્રમણેન જન્મજરામરણાદિલક્ષણ-  
વિવિધપરિતાપકલાપમનુભવન્તિ ।

મુનયઃ=મોક્ષમાર્ગાદવિચલન્તો લબ્ધસમ્યગ્બોધાઃ અનગારાઃ, સદા=અનવરતં  
જાગ્રતિ=મિથ્યાત્વાદિનિદ્રાપગમેન ઇષ્ટાનિષ્ટપ્રાપ્તિપરિહારાર્થં યતનયા ગમનાદિ  
શાલી જો હૈં વે દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈં । અથવા જિસમેં નેત્રોંકા પ્રચાર શિથિલ  
હો જાતા હૈં તથા અન્ન-ઉપાન્નોં કી ક્રિયા ભી જહાં શિથિલ હો જાતી હૈં,  
એસી અસ્પષ્ટ ચેતનાકી અવસ્થાસે જો યુક્ત હૈં વે ભી દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈં,  
અર્થાત્ નિદ્રાવસ્થાવાલે પ્રાણી દ્રવ્યસુપ્ત હૈં । યે દ્રવ્યસુપ્ત જીવ જિસ પ્રકાર  
ચોરોં વગૈરહકે દ્વારા મણિ માણિક્ય ઓર રત્નાદિક દ્રવ્યકે ચુરાયે જાને  
સે અન્તર્દાહ એવં દારિદ્ર્ય દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અનેક સન્તાપોંકા અનુભવ  
કરતે હૈં ઉસી પ્રકાર ભાવસુપ્ત પ્રાણી ભી પ્રમાદ આદિકે દ્વારા સમ્યગ્જ્ઞાન  
સમ્યગ્દર્શન ઓર સમ્યક્ચારિત્રરૂપ રત્નોંકે ચુરાયે જાનેસે દીર્ઘ સંસારમેં  
પરિભ્રમણજન્ય જન્મ જરા ઓર મરણ આદિ રૂપ અનેક સન્તાપોંકો  
ભોગતે રહતે હૈં ।

મુનિ સદા જગતે હૈં । મોક્ષમાર્ગસે જો વિચલિત નહીં હોતે હૈં ઉનકા  
નામ મુનિ હૈં । યે નિરન્તર સચેત રહતે હૈં, અર્થાત્ મિથ્યાત્વાદિ નિદ્રાકે  
વિનાશ હોનેસે ઇષ્ટકી પ્રાપ્તિ ઓર અનિષ્ટ કે પરિહારકે લિયે યતનાસે

(૧) દ્રવ્યથી અને (૨) ભાવથી. નિદ્રાપ્રમાદશાળી જે છે તેઓ દ્રવ્યથી સુપ્ત છે,  
અથવા જેમાં આંખોનો પ્રચાર શિથિલ થઈ જાય છે તથા અંગ ઉપાંગોની ક્રિયા  
પણ ન્યાં શિથિલ થઈ જાય છે, એવી અસ્પષ્ટ ચેતનાની અવસ્થાથી જે યુક્ત  
છે તેઓ પણ દ્રવ્યથી સુપ્ત છે. અર્થાત્ નિદ્રાવસ્થાવાળા પ્રાણી દ્રવ્યસુપ્ત છે.  
એ દ્રવ્યસુપ્ત જીવ જે પ્રકારે ચોરો વિગેરે દ્વારા મણિ-માણિક્ય-રત્નાદિકે દ્રવ્ય  
આદિના ચોરાઈ જવાથી અન્તર્દાહ અને દારિદ્ર્ય દુર્ભાગ્યાદિરૂપ અનેક સંતા-  
પોનો અનુભવ કરે છે તે પ્રકારે ભાવસુપ્ત પ્રાણી પણ પ્રમાદ આદિ દ્વારા સમ્ય-  
ગ્જ્ઞાન સમ્યગ્દર્શન અને સમ્યક્ચારિત્રાદિરૂપ રત્નો ચોરાઈ જવાથી દીર્ઘ સંસારમાં  
પરિભ્રમણજન્ય જન્મ જરા અને મરણ આદિરૂપ અનેક સંતાપોને ભોગવતાં રહે છે.

મુનિ સદા જાગતા રહે છે. મોક્ષમાર્ગથી જે વિચલિત થતા નથી, તેનું  
નામ મુનિ છે. એઓ નિરંતર સચેત રહે છે, અર્થાત્ મિથ્યાત્વાદિ નિદ્રાના  
વિનાશ થવાથી ઇષ્ટની પ્રાપ્તિ અને અનિષ્ટના પરિહાર માટે યતનાથી ગમનાદિકે

કુર્વન્તઃ સમ્યગ્જ્ઞાનચારિત્રોપાર્જને પ્રવૃત્તાઃ સન્તીત્યર્થઃ । યદ્યપિ ક્વચિદાચાર્યાનુજ્ઞયા પ્રથમપૌરુષ્યામ્ ઉત્સર્ગતશ્ચ દ્વિતીયતૃતીયપૌરુષ્યોર્દીર્ઘસંયમાધારભૂતસ્ય શરીરસ્ય સ્થિત્યર્થં નિદ્રાં ભજન્તિ તથાપિ મુનયઃ સદા ભાવતો જાગરુકા એવ । ધર્માપેક્ષયા સુપ્તજાગ્રદવસ્થે હ્ર પરિગૃહીતે ।

મુનયો દ્વિધા ભવન્તિ દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ । તત્ર દ્રવ્યમુનયસ્તાવત્-લિંગમાત્રધારિણઃ, અસંયમપરિણામપરિણતાઃ, અવસન્નપાશ્વસ્થાદિકાઃ । એવાં નાત્રાધિકારઃ, અમુનિકોટૌ તેષાં સમાવિષ્ટત્વાત્ । અધિકારશ્ચાત્ર ભાવમુનીનામ્ । તે ચ ભાવમુનયઃ

ગમનાદિક ક્રિયાઈ કરતે હુઈ મી સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્રકે ઉપાર્જન કરનેમેં હી પ્રવૃત્તિશીલ રહા કરતે હૈં । યદ્યપિ કમી ૨ આચાર્ય મહારાજ કી આજ્ઞાસે યે રાત્રિકી પ્રથમ પૌરુષી મેં, ઓર ઉત્સર્ગ સે દ્વિતીય તૃતીય પૌરુષી મેં દીર્ઘ સંયમકે આધારભૂત શરીરકી સ્થિતિકે લિયે નિદ્રા લેતે હૈં તો મી યે સદા ભાવસે જાગરુક-જગતે હુઈ-હી રહતે હૈં । સુપ્ત અવસ્થા ઓર જાગ્રત અવસ્થા કા સમ્બન્ધ યહાં ધર્મકી અપેક્ષાસે ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ ।

મુનિ દો પ્રકારકે હોતે હૈં-(૧) દ્રવ્યસે ઓર (૨) ભાવસે । લિંગમાત્રકો ધારણ કરનેવાલે દ્રવ્યમુનિ હૈં । ઇનકા પરિણામ અસંયમમેં પરિણત રહા કરતા હૈં । અવસન્ન પાસત્થાદિક ઇસી શ્રેણિકે હૈં । ઇનકા યહાં પ્રકરણ નહીં હૈ, ક્યોં કિ યે દ્રવ્યલિંગી અમુનિયોંકી કોટિમેં આતે હૈં । યહાં પર ભાવમુનિયોંકા પ્રકરણ ચલ રહા હૈ અતઃ ઉન્હીંકા યહાં પર વિચાર હોગા । વે ભાવમુનિ ચારિત્રમોહનીય કર્મકે ક્ષયોપશમસે તથા

ક્રિયાઓ કરતાં કરતાં પણ સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રનું ઉપાર્જન કરવામાં જ પ્રવૃત્તિશીલ રહ્યા કરે છે. ભેડે ક્યારેક આચાર્ય મહારાજની આજ્ઞાથી એ રાત્રિની પ્રથમ પોરસીમાં, અને ઉત્સર્ગથી દ્વિતીય તૃતીય પોરસીમાં દીર્ઘ સંયમના આધારભૂત શરીરની સ્થિતિ માટે નિદ્રા લે છે તો પણ મુનિ સદા ભાવથી જાગરુક-જગતાં જ રહે છે. સુપ્ત અવસ્થા અને જાગ્રત અવસ્થાનો સંબંધ આંહી ધર્મની અપેક્ષાથી ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે.

મુનિ બે પ્રકારના હોય છે. (૧) દ્રવ્યથી અને (૨) ભાવથી. લિંગ માત્રને ધારણ કરવાવાળા દ્રવ્યમુનિ છે. તેનું પરિણામ અસંયમમાં પરિણત રહ્યા કરે છે. અવસન્ન પાસત્થાદિક તેવી શ્રેણિના છે. તેનું આંહી પ્રકરણ નથી, કારણ કે એ દ્રવ્યલિંગી અમુનિઓની કોટિમાં આવે છે. આ ઠેકાણે ભાવમુનિઓનું પ્રકરણ આંહી રહ્યું છે. માટે તેઓનો આ ઠેકાણે વિચાર થશે. તે ભાવમુનિ ચારિત્રમોહનીય



ચારિત્રમોહનીયક્ષયોપશમક્ષયસમુત્પન્નસ્વરૂપપરાયણાઃ, કષાયોદ્ધેરહિતાઃ, સમર-  
સકન્દાયમાનાઃ, સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્રારાધકાઃ, પ્રશસ્તયોગસાધકાઃ, સમિતિ-  
ગુપ્તિધારકાઃ, નિશ્ચયવ્યવહારપ્રચારકાઃ, આસ્રવવર્જિતાઃ સંવેગાદિલક્ષણયુક્તાઃ,  
યથાર્થોપયોગેન દ્રવ્યાર્થિકપર્યાયાર્થિકનયેન સ્વરૂપવેદિનઃ, કર્મરજોહારકાઃ,  
મુખોપરિ સદોરકમુખવસ્ત્રિકાધારકાઃ, વિંશતિસ્થાનકસમારાધકાઃ, દેવાસુરનરજ-  
નિતત્રિવિધોપસર્ગસહનશીલાઃ, શાસ્ત્રોક્તાચારવિચારપરિપાલકાઃ, જ્ઞાતપરમાર્થા  
ભવન્તિ । ત એવ સદા=નિરન્તરં જાગ્રતિ=પ્રબુદ્ધ્યન્તે-હેયોપાદેયવિવેકપૂર્વકં સકલ-  
પરિષદ્સહનં પ્રકુર્વાણાઃ સંયમાનુષ્ઠાનં સમાચરન્તીત્યર્થઃ ।

ક્ષયસે સમુત્પન્ન નિજ આત્મસ્વરૂપમેં લવલીન રહતે હૈં । કષાયોંકે ઉદ્રેક  
સે રહિત હોતે હૈં । સમતારૂપી રસકે કન્દ હોતે હૈં । પાંચ સમિતિ ઔર  
ત્રીન ગુપ્તિકે ધારક હોતે હૈં । નિશ્ચય ઔર વ્યવહારકે પ્રચારક હોતે હૈં ।  
આસ્રવદ્વારોંસે રહિત તથા સંવેગાદિક-લક્ષણોંસે યુક્ત હોતે હૈં । જિસ  
નયકા જહાં ઉપયોગ હોતા હૈ વહાં ઉસી નયકા ઉપયોગ કરનેવાલે હોતે  
હૈં, અર્થાત્ જહાં દ્રવ્યાર્થિક નયકી પ્રધાનતાસે વસ્તુતત્ત્વકા નિર્ણય હોતા  
હો વહાં પર્યાયાર્થિક નયકી ગૌણતા કર ઉસી નયસે ઉસકે સ્વરૂપકા  
નિર્ણય કરતે હૈં, જહાં પર્યાયાર્થિક નયસે વસ્તુકે સ્વરૂપકા નિર્ણય હોતા હો  
વહાં ઉસ નયસે ઇતર-દ્રવ્યાર્થિક નયકો ગૌણકર વસ્તુકે સ્વરૂપકા નિર્ણય  
કરતે હૈં; કિન્તુ અપને આગ્રહસે કિસી ખી વસ્તુકા ઇકાન્તરૂપસે નિર્ણય  
યા પ્રતિપાદન નહીં કરતે હૈં । આત્માકે ડપર અનાદિ કાલસે ચઢી હુઈ  
કર્મરૂપી ધૂલિકો નાશ કરનેવાલે હોતે હૈં । મુખપર દોરાસહિત મુખ-

કર્મના ક્ષયોપશમથી તથા ક્ષયથી સમુત્પન્ન નિજ આત્મસ્વરૂપમાં આનંદિત રહે  
છે. કષાયોના ઉદ્રેકથી રહિત હોય છે. સમતારૂપી રસના કંદ હોય છે. પાંચ  
સમિતિ અને ત્રણ ગુપ્તિના ધારક હોય છે. નિશ્ચય અને વ્યવહારના પ્રચારક હોય  
છે. આસ્રવદ્વારોથી રહિત અને સંવેગાદિક લક્ષણોથી સહિત હોય છે. જે નયનો  
બધાં ઉપયોગ થાય છે, ત્યાં તે નયનો ઉપયોગ કરવાવાળા હોય છે. અર્થાત્ બધાં  
દ્રવ્યાર્થિક નયની પ્રધાનતાથી વસ્તુતત્ત્વનો નિર્ણય થતો હોય ત્યાં પર્યાયાર્થિક  
નયની ગૌણતા કરી તે નયથી તેના સ્વરૂપનો નિર્ણય કરે છે. બધાં પર્યાયાર્થિક  
નયથી વસ્તુ સ્વરૂપનો નિર્ણય થતો હોય ત્યાં તે નયથી બીજા-દ્રવ્યાર્થિક-નયને  
ગૌણ કરી વસ્તુના સ્વરૂપનો નિર્ણય કરે છે, પણ પોતાના આગ્રહથી કેઈ પણ  
વસ્તુનો ઇકાન્તરૂપથી નિર્ણય અગર પ્રતિપાદન કરતા નથી. આત્માની ઉપર  
અનાદિ કાળથી ચઢેલી કર્મરૂપી ધૂળનો નાશ કરવાવાળા હોય છે. મુખ ઉપર



તે હિ દર્શનાવરણીયકર્મવિપાકોદયાત્ સંયમાધારશરીરસ્થિત્યર્થ નિદ્રોપગતા દ્રવ્યતઃ સુપ્તા અપિ દર્શનમોહનીયરૂપમહાનિદ્રાપગમાત્ સમ્યગ્જ્ઞાનદર્શનચારિત્રારાધકત્વેન સદા જાગરૂકા એવ । તત્ર જિનકલ્પિનો રાત્રી પ્રહરમેકં સ્થવિરકલ્પિનસ્તુ-ત્સર્ગતઃ પ્રહરદ્વયં સ્વપન્તિ ।

વસ્ત્રિકા-મુંહપત્તીકે ધારક હોતે હૈં । બીસ સ્થાનોંકી અચ્છી તરહ આરાધના કરનેવાલે હોતે હૈં । દેવ, અસુર તથા મનુષ્ય, इन तीनों द्वारा किये गये तीन प्रकारके उपसर्गों को सहनेके स्वभाववाले होते हैं । शास्त्रोंमें जिन २ आचार-विचारोंका पालना बतलाया है उन २ आचार-विचारोंको पालनेवाले होते हैं । परमार्थके ज्ञाता होते हैं । ऐसे ये भावमुनि ही सदा जागरूक होते हैं, अर्थात् हेय और उपादेयके विवेकपूर्वक सकल परीषहों को जीतते हुए संयमके आराधनमें सदा दत्तावधान रहते हैं ।

यद्यपि ये दर्शनावरणीय कर्मके विपाकोदयसे संयमके आधारभूत शरीरकी स्थितिके लिये निद्रा लेते हैं, इस अपेक्षासे ये द्रव्यसे सुप्त हैं, तो भी दर्शनमोहनीयरूप महानिद्राके विनाशसे उत्पन्न सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्रके आराधक होनेसे ये सदा जागरूक ही रहते हैं । जिनकल्पी मुनि रात्रिमें एक प्रहर सोते हैं, क्यों कि इनका इसी प्रकारका कल्प है । स्थविरकल्पी मुनि उत्सर्गसे दो प्रहर सोते हैं ।

દોરાસહિત મુખવસ્ત્રિકા-મુંહપત્તીના ધારક હોય છે. વીસ સ્થાનોની સારી રીતે આરાધના કરનારા હોય છે. દેવ, અસુર તથા મનુષ્ય એમ ત્રણે દ્વારા કરવામાં આવેલાં ત્રણ પ્રકારના ઉપસર્ગોને સહન કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે. શાસ્ત્રોમાં જે જે આચાર વિચારોનું પાલન કરવાનું બતાવેલ છે તે તે આચાર વિચારોના પાળવાવાળાં હોય છે. પરમાર્થના જ્ઞાતા હોય છે. એવા એ ભાવમુનિ જ સદા જાગરૂક હોય છે, અર્થાત્ હેય અને ઉપાદેયના વિવેકપૂર્વક સકળ પરીષદોને જીતતાં સંયમના આરાધનમાં સદા દત્તાવધાન રહે છે.

જો કે તેઓ દર્શનાવરણીય કર્મના વિપાકના ઉદયથી સંયમના આધારભૂત શરીરની સ્થિતિ માટે નિદ્રા લે છે, આ અપેક્ષાથી એ દ્રવ્યથી સુપ્ત છે તો પણ દર્શનમોહનીયરૂપ મહાનિદ્રાના વિનાશથી ઉત્પન્ન સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રના આરાધક હોવાથી સદા જાગરૂક જ રહે છે. જનકલ્પી મુનિ રાત્રિમાં એક પ્રહર સુવે છે, કારણ કે તેનો આ પ્રકારનો કલ્પ છે. સ્થવિરકલ્પી મુનિ ઉત્સર્ગથી બે પ્રહર સુવે છે.

શયનં જાગરણં ચાત્ર ધર્મારાધનમધિકૃત્યાભિધીયતે, અતો દ્રવ્યભાવભેદેન સુપ્તાનાં જાગ્રતાં ચ મધ્યે કસ્ય ધર્મારાધનં ભવતિ કસ્ય નેતિ ભક્ષતુષ્ટ્યં પ્રદર્શ્યતે—

- (૧) દ્રવ્યતઃ સુપ્તઃ, ભાવતો જાગર્તિ ।
- (૨) ભાવતઃ સુપ્તઃ, દ્રવ્યતો જાગર્તિ ।
- (૩) દ્રવ્યતોઽપિ જાગર્તિ, ભાવતોઽપિ જાગર્તિ ।
- (૪) દ્રવ્યતોઽપિ સુપ્તઃ, ભાવતોઽપિ સુપ્તઃ ।

અત્ર પ્રથમભક્ષવતો ધર્મારાધનં ભવતિ ૧ । દ્વિતીયસ્ય ન ભવતિ ૨ ।

સોના ઓર જાગના, યે દોનોંં બાતેં ધર્મકે આરાધન કરનેકી અપેક્ષાસે યહાં કહી ગઈ હૈં । ઇસલિયે દ્રવ્ય ઓર ભાવકે ભેદસે સોનેવાલોંકે તથા જાગનેવાલોંકે વીચમેં કૌન ધર્મકા આરાધક હોતા હૈ, કૌન નહીં હોતા હૈ ? ઇસ બાતકો ચાર ભંગોંસે દિખલાતે હૈ—

- (૧) દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈ પર ભાવસે જાગ્રત હૈ ।
- (૨) ભાવસે સુપ્ત હૈ પર દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ।
- (૩) દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ઓર ભાવસે ભી જાગ્રત હૈ ।
- (૪) દ્રવ્યસે ભી સુપ્ત હૈ ઓર ભાવસે ભી સુપ્ત હૈ ।

ઇન ચાર ભંગોંકો લેકર જબ વિચાર કિયા જાતા હૈ તો જો દ્રવ્યસે તો સુપ્ત હૈ પર ભાવસે જાગ્રત હૈ, એસે પ્રથમ ભંગવાલેકો ધર્મકા આરાધન હોતા હૈ । દ્વિતીય ભંગવાલેકો નહીં હોતા હૈ, કારણ કિ યહ ભાવસે હી સુપ્ત હૈ, દ્રવ્યજાગરૂકતા તો ધર્મારાધનમેં કાર્યકારી હી નહીં હૈ ।

સુપ્તું અને જાગૃતું એ બન્ને વાતો ધર્મનું આરાધન કરવાની અપેક્ષાથી અહીં કહેવામાં આવેલ છે, જેથી દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી સુવાવાળાની તથા જાગવાવાળાની વચ્ચે ધર્મનું આરાધન કેને થાય છે ? અને કેને થતું નથી ? આ વાતને ચાર ભંગોથી ભતાવે છે.

- (૧) જે દ્રવ્યથી સુપ્ત છે પણ ભાવથી જાગૃત છે.
- (૨) જે ભાવથી સુપ્ત છે પણ દ્રવ્યથી જાગૃત છે.
- (૩) જે દ્રવ્યથી જાગૃત છે અને ભાવથી પણ જાગૃત છે.
- (૪) જે દ્રવ્યથી પણ સુપ્ત છે અને ભાવથી પણ સુપ્ત છે.

આ ચાર ભંગોને લઈને ન્યારે વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે જે દ્રવ્યથી તો સુપ્ત છે પણ ભાવથી જાગૃત છે, એવા પ્રથમ ભંગવાળાને ધર્મનું આરાધન થાય છે, બીજા ભંગવાળાને નહિ, કારણ કે તે ભાવથી જ સુપ્ત છે. દ્રવ્ય જાગૃકતા ધર્મારાધનમાં કાર્યકારી નથી.



તૃતીયમજ્જવતો દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ જાગ્રતઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપો ધર્મઃ સુચારુરૂપેણ સમ્પદ્યતે । મુનિના સદા તૃતીયમજ્જવતૈવ ભાવ્યમતો ભગવતા કથિતમ્—“ સુત્તા અમુણી સયા મુણિણો જાગરંતિ ”—સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ—ઈતિ । ચતુર્થમજ્જવતશ્ચ સર્વથા ધર્મારાધનં ન ભવતિ, તસ્ય મિથ્યાત્વોદયપ્રાવલ્યાત્ ૪ ।

દ્રવ્યસુપ્તો હિ નિદ્રયા ભવતિ । સા ચ પશ્ચવિધા (૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા (૪) પ્રચલાપ્રચલા (૫) સ્ત્યાનર્દિઃ ।

તાસુ નિદ્રાનિદ્રા-પ્રચલાપ્રચલા-સ્ત્યાનર્દિરૂપં નિદ્રાત્રિકં દુરન્તમ્ । એતત્રિકો-દયે ભવસિદ્ધિકોઽપિ સમ્યક્ત્વં ન લભતે । અસ્ય વન્ધો હિ મિથ્યાદૃષ્ટિગુણસ્થાને

તૃતીય મંગવાલેકો સુચારુરૂપસે સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ ધર્મકી આરાધના હોતી હૈ; કારણ કિ યહ દ્રવ્યસે ઓર ભાવસે-દોનોં પ્રકારસે સદા જાગરૂક હૈ । મુનિકો સદા ઇસ તૃતીય-મંગવાલા હી હોના ચાહિયે । ઇસીલિયે ભગવાનને કહા હૈ કિ—“ સુત્તા અમુણી, સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” ( સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ ) । ચતુર્થ મંગવાલેકે ધર્મકા આરાધન સર્વથા હૈ હી નહીં; ક્યોં કિ યહ દ્રવ્ય ઓર ભાવ, ઇન દોનોં પ્રકારસે સોયા હુઆ હૈ, અર્થાત્ ઇસમેં મિથ્યાત્વકે ઉદયકી પ્રવલતા હૈ ।

દ્રવ્યકી અપેક્ષાસે સુપ્તાવસ્થા નિદ્રાસે હોતી હૈ । વહ નિદ્રા પાંચ પ્રકાર કી હૈ—(૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દિ ।

ઇનમેં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, ઓર સ્ત્યાનર્દિ, યે ત્રીન નિદ્રાઈ જીવોંકો બહુત દુઃખદાયી હૈ । ઇન ત્રીનોંકે ઉદયમેં ભવસિદ્ધિક (મુક્તિગામી)

ત્રીભ લંગવાળાને સુચારૂપથી સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ ધર્મની આરાધના થાય છે, કારણ કે તે દ્રવ્યથી અને ભાવથી-બન્ને પ્રકારથી સદા બગરૂક છે. મુનિએ સદા આ ત્રીભ લંગવાળા બનવું જોઈએ. માટે ભગવાને કહ્યું છે કે “ સુત્તા અમુણી સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” ( સુપ્તાઃ અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ ) એથી લંગવાળાને ધર્મનું આરાધન સર્વથા છે જ નહિ, કારણ કે એ દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બન્ને પ્રકારથી પણ સુતેલ છે, અર્થાત્ તેમાં મિથ્યાત્વના ઉદયની પ્રબળતા છે.

દ્રવ્યની અપેક્ષાથી સુપ્તાવસ્થા નિદ્રાથી થાય છે તે નિદ્રા પાંચ પ્રકારની છે,— (૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દિ.

તેમાં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, અને સ્ત્યાનર્દિ, એ ત્રણ નિદ્રાઓ જીવોને ઘણી દુઃખદાયી છે, આ ત્રણના ઉદયમાં ભવસિદ્ધિક (મુક્તિગામી) જીવ પણ



સાસ્વાદનગુણસ્થાને ચાનન્તાનુબન્ધિકષાયબન્ધેન સહ ભવતિ, ક્ષયસ્તુ નવમાઽનિવૃત્તિ-  
વાદરગુણસ્થાનસ્ય નવસુ ભાગેસુ મધ્યે પ્રથમભાગસ્થકાલસ્ય કિયત્સુ સંખ્યેયાંશેષુ  
ગતેષુ સત્સુ જાયતે । નિદ્રાપ્રચલયોરુદયઃ સામાન્યદર્શનાવરણીયકર્મોદયાદ્ભવતિ ।  
બન્ધોપરમોઽપૂર્વકરણનામકાષ્ટમગુણસ્થાનકાલસ્ય સંખ્યેયભાગાન્તે જાયતે, તત્પ-  
શ્ચાન્નૂતનબન્ધાભાવાત્ । ક્ષયશ્ચ ક્ષીણમોહાખ્યદ્વાદશગુણસ્થાનસ્ય ચરમસમયદ્વયેઽવ-  
શિષ્ટે સતિ ભવતિ । એતયોરુદયસ્તુ ઉપશાન્તક્રોધોપશાન્તમોહયોરપિ ભવતીતિ નિદ્રા-  
પ્રમાદસ્ય દુરન્તત્વં વિજ્ઞેયમ્ ।

જીવ મી સમ્યક્ત્વકો પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હૈ । ઇનકા બન્ધ મિથ્યાદૃષ્ટિ  
નામક પ્રથમ ગુણસ્થાનમ્મૈં ઓર સાસ્વાદન નામક દ્વિતીય ગુણસ્થાનમ્મૈં  
અનન્તાનુબન્ધી કષાયકે બન્ધકે સાથ જીવોંકો હોતા હૈ, ઓર ક્ષય નવમ્મૈં  
અનિવૃત્તિવાદર ગુણસ્થાનકે નૌ ૯ ભાગોંમ્મૈંસે પ્રથમ ભાગકે કાલકે જબ  
કિતનેક સંખ્યાત અંશ વ્યતીત હો જાતે હૈં તવ હોતા હૈ ।

નિદ્રા ઓર પ્રચલાકા ઉદય સામાન્ય દર્શનાવરણીય કર્મકે ઉદયસે  
હોતા હૈ । ઇનકે બન્ધકા અભાવ અપૂર્વકરણ નામકે આઠવેં ગુણસ્થાનકે  
સંખ્યાતવેં ભાગકે અન્તમ્મૈં હોતા હૈ । ઉસકે બાદ ઇનકે નૂતન બન્ધકા  
અભાવ હો જાતા હૈ । ઇનકા ક્ષય મી ક્ષીણમોહ નામકે બારહવેં ગુણસ્થાનકે  
અન્તિમ દો સમયોં કે અવશિષ્ટ રહને પર હોતા હૈ । ઇન દોનોંકા ઉદય  
દસવેં ઓર ગ્યારહવેં ગુણસ્થાનક તકકે જીવોંમ્મૈં મી હોતા હૈ । ઇસી લિયે  
નિદ્રાપ્રમાદકી દુરન્તતા હૈ, અર્થાત્ ઇસકા અન્ત હોના બડા કઠિન હૈ ।

સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેનો અંધ મિથ્યાદૃષ્ટિ નામના પ્રથમ ગુણ  
સ્થાનમાં, અને સાસ્વાદન નામના બીજા ગુણસ્થાનમાં અનન્તાનુબંધી કષાયના  
અંધની સાથે જીવોને થાય છે, અને ક્ષય નવમાં અનિવૃત્તિવાદરગુણસ્થાનના નવ  
ભાગોમાંથી પ્રથમ ભાગના કાળના અંતરે કેટલાક સંખ્યાત અંશ વ્યતીત થઈ  
જાય છે ત્યારે થાય છે.

નિદ્રા અને પ્રચલાનો ઉદય સામાન્ય દર્શનાવરણીય કર્મના ઉદયથી થાય  
છે. તેના અંધનો અભાવ અપૂર્વકરણ નામના આઠમા ગુણસ્થાનના સંખ્યાતમાં  
ભાગના અંતમાં થાય છે. ત્યારબાદ તેને નૂતન અંધનો અભાવ થઈ જાય છે.  
તેનો ક્ષય પણ ક્ષીણમોહ નામના બારમા ગુણસ્થાનના અંતિમ બે સમયોના અવ-  
શિષ્ટ રહેવા પર થાય છે. એ બન્નેનો ઉદય દશમા અને અગીયારમા ગુણસ્થાન  
સુધીના જીવોમાં પણ થાય છે, માટે નિદ્રાપ્રમાદની દુરન્તતા છે, અર્થાત્  
તેનો અંત થવો ઘણું કઠિન છે.

દ્રવ્યભાવસુષ્પ્તવિષયે વિવેકદક્ષઃ સુખમનુભવતિ । યથા પથિ તસ્કરાદિભયે સમુપસ્થિતે વિવેકી સ્વાત્મનઃ સાપાયનિરપાયવિષયકં વિવેકમાલમ્બ્ય પલાયનાદિકાં ક્રિયાં કુર્વાણઃ સુખભાગ્ભવતિ । एवं मुनिरपि सम्यग्ज्ञानात्मकविवेकवत्त्वेन सदा प्रमादादिभयाद् ज्ञानाचारादिसमाराधनावधानरूपां जाग्रदवस्थां विभ्राणः शिवसुखभाग्भवति । उक्तञ्च—

દ્રવ્યસુષ્પ્ત ઓર ભાવસુષ્પ્તકે વિષયમેં વિવેકદક્ષ પ્રાણી સુખકા અનુભવ કરતા હૈ, અર્થાત્ જો મુનિ હસ વાતકો સમજતા હૈ કિ દ્રવ્યસુષ્પ્ત અવસ્થા ઓર ભાવસુષ્પ્ત-અવસ્થા આત્માકે લિયે સદા દુઃખદાયી હૈ, હસલિયે હન અવસ્થાઓંકા સદા પરિહાર કરના ચાહિયે, હન અવસ્થાઓંમેં વર્તમાન પ્રાણીકા કમી મી કલ્યાણ નહીં હોતા હૈ । હસ તરહ કા વિવેક જિસ આત્મામેં હન દોનોં અવસ્થાઓંકે પ્રતિ જાગ્રત હો જાતા હૈ વહ હનસે સદા દૂર રહતા હૈ । જિસ પ્રકાર માર્ગ મેં ચૌરાદિકોંકા ભય ઉપસ્થિત હોનેપર વિવેકી વ્યક્તિ હસ વાતકા વિચાર કરતા હૈ કિ હસ ઓર ભય હૈ હસ ઓર ભય નહીં હૈ । ઁસા વિચાર કર નિર્ભય સ્થાનકી ઓર ભાગતા હૈ ઓર સુખકી સાંસ લેતા હૈ । ઁસી પ્રકાર મુનિ મી સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મક-વિવેકશાલી હોનેસે સદા પ્રમાદાદિકોંકે ભયસે જ્ઞાનાચારાદિકોંકી સમ્યક્ આરાધનામેં અવધાનરૂપ જાગરૂક અવસ્થાકો ધારણ કરતા હુઆ મોક્ષ સુખકા ભાગી હોતા હૈ । કહા મી હૈ—

દ્રવ્યસુષ્પ્ત અને ભાવસુષ્પ્તના વિષયમાં વિવેકદક્ષ પ્રાણી સુષ્પ્તનો અનુભવ કરે છે, અર્થાત્ મુનિ આ વાતતે સમજે છે કે ‘દ્રવ્યસુષ્પ્ત અવસ્થા અને ભાવસુષ્પ્ત અવસ્થા આત્મા માટે સદા દુઃખદાયી છે માટે તેવી અવસ્થાઓનો સદા પરિહાર કરવો જોઈએ, તેવી અવસ્થાઓમાં વર્તમાન પ્રાણીનું કદિ પણ કલ્યાણ થતું નથી’ એવા પ્રકારનો વિવેક જે આત્મામાં એ બંને અવસ્થાઓ પ્રતિ જાગૃત થઈ જાય છે તે તેનાથી સદા દૂર રહે છે. જે પ્રકારે માર્ગમાં ચોર આંદિનો ભય ઉપસ્થિત હોવા છતાં વિવેકી વ્યક્તિ એ વાતનો વિચાર કરે છે કે, આ બાબુ ભય છે, આ બાબુ ભય નથી. પછી નિર્ભય સ્થાનની તરફ ભાગે છે અને સુષ્પ્તો થાય છે. તે પ્રકારે મુનિ પણ સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મક-વિવેકશાળી હોવાથી સદા પ્રમાદાદિકોના ભયથી જ્ઞાનાચારાદિકોની સમ્યક્ આરાધનામાં અવધાનરૂપ જાગરૂક અવસ્થાને ધારણ કરીને મોક્ષ સુષ્પ્તના ભાગી થાય છે. કહ્યું છે:—



“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં જાગરમાણસ્સ વડ્ઢણ બુદ્ધી ।

જો સુયઇ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગઇ સો સયા ધન્નો ” । ઇતિ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદશ્ચાજ્ઞાનાદ્ભવતિ, તચ્ચ પ્રાણિનામહિતાયેતિ શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂ-  
સ્વામિનમાહ—‘લોયંસિ જાણ, ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—લોયંસિ જાણ અહિયાય દુઃખં, સમયં લોગસ્સ  
જાણિત્તા ઇત્થ સત્થોવરણ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—લોકે જાનીહિ અહિતાય દુઃખં, સમયં લોકસ્ય જ્ઞાત્વા અત્ર શસ્ત્રોપરતઃ॥૨॥

ટીકા—હે જમ્બૂ ! લોકે=ષડ્જીવનિકાયરૂપે જિનશાસને વા, દુઃખં=દુઃખ-

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં, જાગરમાણસ્સ વડ્ઢણ બુદ્ધી ।

જો સુયઇ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગઇ સો સયા ધન્નો ॥૧॥ ” ઇતિ ।

ગાથાકા અર્થ યહ હૈ કિ—‘હે ભવ્યો ! તુમ સદા જાગતે રહો । ક્યોં  
કિ જાગનેવાલોંકી બુદ્ધિ બઢતી હૈ । જો સોતા હૈ વહ ધન્ય નહીં હૈ, જો  
જાગતા હૈ વહ સદા ધન્ય હૈ ’ ॥૧॥

યહ પહિલે કહા જા ચુકા હૈ કિ સુપ્ત ઓર જાગ્રત અવસ્થા ધર્મારા-  
ધનકી અપેક્ષાસે હી સમજના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનસે હોતા હૈ, ઓર અજ્ઞાન પ્રાણિયોંકા સદા અહિ-  
તકારી હૈ, એસા વિચાર કર શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીસે કહતે હૈ—  
“ લોયંસિ જાણ ” ઇત્યાદિ ।

હે જમ્બૂ ! ષડ્જીવનિકાયસ્વરૂપ હસ લોકમેં, અથવા જિનશાસનમેં,

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં, જાગરમાણસ્સ વડ્ઢણ બુદ્ધી ।

જો સુયઇ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગઇ સો સયા ધન્નો ” ॥૧॥ ઇતિ ।

ગાથાનો અર્થ આ છે કે—હે ભવ્યો ! તમે સદા જાગતા રહો, કારણ કે  
જાગવાવાળાની બુદ્ધિ વધે છે. જે સુતેલા છે તે ધન્ય નથી જે જાગતા છે તે  
જ સદા ધન્ય છે.

એ પહેલાં કહેવામાં આવ્યું છે કે સુપ્ત અને જાગૃત અવસ્થા ધર્મારાધનની  
અપેક્ષાથી જ સમજવી જોઈએ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનથી થાય છે, અને અજ્ઞાન પ્રાણિઓ માટે સદા અહિત-  
કારી છે. એવો વિચાર કરી શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે—‘લોયંસિ  
જાણ ’ ઇત્યાદિ.

હે જમ્બૂ ! ષડ્જીવનિકાયસ્વરૂપ આ લોકમાં અથવા જિનશાસનમાં દુઃખ



યતિ=પીડયતીતિ દુઃખમ્, इह दुःखशब्देनाज्ञानं प्राणातिपातादिरूपं कर्म वा गृह्यते  
 दुઃખજનકત્વાત્, તત્ અહિતાય=એહિકપારત્રિકદુઃખાય જાયતે । તત્રૈહિકં દુઃખં  
 પ્રાણાતિપાતાદિસાવધાનુષ્ઠાનપ્રવૃત્તાનાં ભાવસુપ્તાનાં ભૂપાદિકૃતં બન્ધવધતાડનશૂ-  
 લારોપણાદિકમ્, પારત્રિકશ્ચ દુઃખં નરકનિગોદાદિયાતનારૂપમિતિ એહિકપારત્રિક-  
 દુઃખદેતુભૂતમજ્ઞાનં કર્મ વાઽસ્તીતિ ત્વં જાનીહિ=જ્ઞપરિજ્ઞયા બુધ્યસ્વ । એતસ્ય ફલશ્ચ

દુઃખ-અજ્ઞાન અથવા પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ કાર્ય જીવોંકે લિયે હસ લોકમેં  
 તથા પરલોકમેં અહિતકારી માને ગયે હૈં । યહાં ‘દુઃખ’ શબ્દકા અર્થ-  
 “દુઃખયતિ=પીડયતીતિ દુઃખમ્” જો જીવોંકો પીડા પહુંચાવે એસા અજ્ઞાન,  
 અથવા હિંસાદિક પાપકર્મ-હૈ । અજ્ઞાન અથવા હિંસાદિક, જીવોંકો સદા  
 દુઃખદાયી હોતે હૈં, હસ અપેક્ષાસે અજ્ઞાનાદિક દુઃખકે કારણ હૈં । ફિર  
 મી યહાં પર હન્હેં જો દુઃખરૂપ કહા ગયા હૈ વહ કારણમેં કાર્યકે ઉપ-  
 ચારસે કહા ગયા હૈ । હન પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ સાવધ અનુષ્ઠાનોમેં  
 પ્રવૃત્તિ કરનેવાલે ભાવસુપ્ત જીવોંકો હસ લોકમેં રાજા આદિકે દ્વારા  
 કિયે ગયે બન્ધ, વધ, તાડન ઓર શૂલારોપણ આદિ અનેક કષ્ટ ભોગને  
 પડતે હૈં, તથા પરલોકમેં નરકનિગોદાદિકકી યાતનાઈ સહની પડતી હૈં ।  
 હસલિયે જમ્બૂસ્વામીકો ઉદેશ કરકે સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં—

હે જમ્બૂ ! હસ લોક ઓર પરલોકસમ્બન્ધી અનેક દુઃખોંકે કારણ  
 પ્રાણાતિપાતાદિક કર્મ તથા અજ્ઞાન હૈં, એસા તુમ જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનો ।

=અજ્ઞાન અથવા પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ કાર્ય આ લોકમાં તથા પરલોકમાં જીવોં માટે  
 અહિતકારી માનવામાં આવેલ છે. અહીં દુઃખ શબ્દનો અર્થ—“ દુઃખયતિ પીડ-  
 યતીતિ દુઃખમ્ ” જે જીવોંને પીડા આપે એવું અજ્ઞાન અને હિંસાદિક પાપકર્મ છે.  
 અજ્ઞાન અથવા હિંસાદિક કર્મ જીવોંને સદા દુઃખદાયી થાય છે. આ અપેક્ષાથી અજ્ઞા-  
 નાદિક, દુઃખના કારણ છે તે પણ આ ઠેકાણે તેને જે દુઃખરૂપ કહેવામાં આવેલ  
 છે તે કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી કહેવામાં આવેલ છે. આ પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ  
 સાવધ અનુષ્ઠાનોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા ભાવસુપ્ત જીવોંને આ લોકમાં રાજા આદિ  
 દ્વારા કરવામાં આવેલ બંધ વધ તાડન અને શુળી આદિ અનેક કષ્ટોને ભોગ-  
 વવા પડે છે, તથા પરલોકમાં નરકનિગોદાદિકની યાતનાઓ સહન કરવી પડે  
 છે. એથી જમ્બૂસ્વામીને ઉદેશ કરીને સુધર્માસ્વામી કહે છે:—

હે જમ્બૂ ! આ લોક અને પરલોક સંબંધી અનેક દુઃખોંતું કારણ પ્રાણા-  
 તિપાતાદિક કર્મ તથા અજ્ઞાન છે, એવું જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણો. એ જાણવારૂપ

દુઃસ્વહેતોરજ્ઞાનરૂપાદ્ દ્રવ્યભાવસ્વાપાન્નિવર્તનમિતિ । તતઃ કિં કુર્યાદિત્યાહ-લોક-  
સ્થે-ત્યાદિ 'લોકસ્ય=પ્રાણિસહસ્ય સમયમ્=આચારં જ્ઞાત્વા=દુઃસ્વહેતું વિચાર્ય,  
લોકો હિ ભોગેચ્છયા પ્રાણિપીડનાદિજનિતં કર્મ પરિગૃહ્ય નરકેષૂત્પદ્યતે, તતઃ કથં  
ચિન્નિષ્ક્રાન્તો ધર્મોપાર્જનહેતુભૂતં મનુષ્યજન્માવાપ્ય પુનરપિ તત્તદેવ કર્મ કરોતિ યેન  
યેન પુનરધોઽધઃ સ્થાનં વ્રજતિ, ન કદાચિત્સંસારદાવાનલાદ્ બહિર્યાતીતિ લોકાચારઃ ।

इस जाननेरूप क्रियाका फल अज्ञानरूप द्रव्यनिद्रा और भावनिद्रा से  
जीवका निवृत्त होना है । जीव जब इनसे निवृत्तिसंपन्न हो जाता है तब  
वह यह समझने लगता है कि-यह लोक भोगोंकी इच्छासे प्राणिपीडन  
आदि कृत्य करता है, और इस प्रकारके कृत्य करनेसे वह अशुभ क-  
र्मोंका आश्रय कर बन्धक बनता है । उनके उदयमें इसको नरकादि अनेक  
कुगतियोंमें जन्म मरण करना पड़ता है । वहांसे निकलने पर यदि इसको  
किसी शुभ कर्मके उदयसे मनुष्यभवकी-जिसमें कि इसको धर्मोपार्जन  
करनेका अवसर मिलता है-प्राप्ति हो जाती है तो भी यह जीव बारंबार  
उन्हीं कुकृत्योंको करता है, जिनकी वजहसे इसको पुनः नरकादि गतियों  
में जाना पड़ता है । इस तरहसे इस जीवका कभी भी संसाररूपी दावा-  
नलसे बाहर आना नहीं हो सकता है । यही इस लोकका आचार है । इस  
आचारको-जिससे कि इसको अनेक अनेक संकटोंका सामना करना पड़ता  
है-जान कर तुम इस द्रव्यरूप एवं भावरूप शस्त्रसे सदा निवृत्त होओ ।

ક્રિયાનું ક્ષણ દુઃખનું કારણ જે અજ્ઞાનરૂપ દ્રવ્યનિદ્રા અને ભાવનિદ્રા છે તેનાથી  
જીવને નિવૃત્ત થવું છે. જીવ જ્યારે તેનાથી નિવૃત્તિસંપન્ન થઈ જાય છે ત્યારે તે  
એવું સમજવા લાગે છે કે આ લોક, ભોગોની ઇચ્છાથી પ્રાણિ-પીડન આદિ કૃત્ય  
કરે છે અને આવા પ્રકારનું કૃત્ય કરવાથી તે અશુભ કર્મોના આશ્રય કરી બંધક  
બને છે. તેના ઉદયમાં તેને નરકાદિ અનેક કુગતિઓમાં જન્મ મરણ કરવું પડે  
છે. ત્યાંથી નિકળીને કદાચ કોઈ શુભ કર્મના ઉદયથી મનુષ્યભવની-કે જેમાં  
તેને ધર્મોપાર્જન કરવાનો અવસર મળે છે-પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે તો પણ તે જીવ  
વારંવાર તેજ કુકૃત્યો કરે છે કે જેનાથી તેને પુનઃ નરકાદિ ગતિઓમાં જવું  
પડે છે. આવી રીતે આ જીવને કદિ પણ સંસારરૂપી દાવાનળથી બહાર આવવાનું  
બની શકતું નથી. એ જ આ લોકનો આચાર છે. આવા આચારને-કે જેનાથી  
તેને અનેક સંકટોનો સામનો કરવો પડે છે-બાણીને તમે આ દ્રવ્યરૂપ તેમજ  
ભાવરૂપ શસ્ત્રથી સદા નિવૃત્ત થાઓ.



યદ્વા લોકસ્ય=જિનશાસનસ્ય સમયમ્=આચારં જ્ઞાનાચારાદિરૂપં પશ્ચવિધં જ્ઞાત્વા=મોક્ષસુખહેતુભૂતં સમ્યગવબુધ્ય, અત્ર=ષડ્જીવનિકાયે શસ્ત્રોપરતઃ=શસ્ત્રાત્ દ્રવ્યભાવભેદભિન્નાત્ ઉપરતઃ=નિવૃત્તો ભવ । ધર્મજાગરણેન જાગૃહીત્યર્થઃ ।

સર્વોં હિ લોકઃ શબ્દાદિવિષયભોગેચ્છયા પ્રાણાતિપાતાદિકં નાનાવિધં કર્મ કરોતિ, તેન નરકાદિયાતનાસ્થાનેષુ ઘોરતરં દુઃસ્વમાપ્નોતિ, અતઃ ષડ્જીવનિકાયે શસ્ત્રોપરતો ભવેતિ ભાવઃ ।

અથવા લોકસ્યેતિ ષષ્ટ્યાઃ સપ્તમ્યર્થે વિધાનાત્ લોકે=પ્રાણિસદ્ધે ‘સમયં’ इत्यस्य समतामितिच्छाया तेन समतां स्वकीयदुःखादिना परदुःखादेस्तुल्यतां,

“સમયં લોગસ્સ જાણિત્તા इत्थ सत्थोवरए” इसका यह भी अर्थ होता है कि-‘हे जम्बू ! तुम जिनशासनके ज्ञानाचार आदिरूप पांच प्रकारके आचारको मोक्षसुखका कारण अच्छी तरहसे जानकर षड्जीवनिकायके विषयमें द्रव्य और भावरूप शस्त्रसे निवृत्त होओ, अर्थात्-सदा धर्मका आचरण करनेमें सतर्क रहो । भावनिद्रासे युक्त न बनो । सारांश इसका यही है कि-यह समस्त लोक शब्दादिक विषय भोगों की इच्छासे प्राणातिपातादिक अनेक प्रकारके दुष्कार्योंको करता है, उन से नरकादिक जो अनेक यातनाके स्थान हैं उनमें घोरातिघोर दुःखोंको भोगता है । इसलिये हे जम्बू ! षड्जीवनिकायके विषयमें शस्त्रसे सदा अलग रहो ।

અથવા “લોગસ્સ” इस षष्ठी विभक्तिके स्थानमें “लोके” इस सप्तमी विभक्तिका पाठ, तथा ‘समयं’की छाया “समतां” मान कर ऐसा अर्थ हो जाता है कि-हे जम्बू ! तुम सदा इस बातका भली प्रकार

“સમયં લોગસ્સ જાણિત્તા इत्थ सत्थोवरए” એનો એ પણ અર્થ થાય છે કે-હે જમ્બૂ ! તમે જિનશાસનના જ્ઞાનાચાર આદિરૂપ પાંચ પ્રકારના આચારને મોક્ષ-સુખનું કારણ સારી રીતે જાણીને ષડ્જીવનિકાયના વિષયમાં દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ શસ્ત્રથી નિવૃત્ત થાઓ. અર્થાત્ સદા ધર્મનું આચરણ કરવામાં સતર્ક રહો. ભાવ નિદ્રાથી યુક્ત ન બનો. સારાંશ તેનો એ છે કે-આ સમસ્ત લોક, શબ્દાદિક વિષય-ભોગોની ઇચ્છાથી પ્રાણાતિપાતાદિક અनेक प्रकारના दुष्कार्यों કરે છે, તેનાથી નરકાદિક જે અનેક यातनाना स्थान છે તેમાં ઘોરાતિઘોર दुःખો ભોગવે છે. તે માટે હે જમ્બૂ ! ષડ્જીવનિકાયના વિષયમાં શસ્ત્રથી સદા અલગ રહો.

અથવા “લોગસ્સ” આ છઠ્ઠી વિભક્તિના સ્થાનમાં “લોકે” આ સપ્તમી વિભક્તિનો પાઠ તથા ‘સમયં’ની છાયા “સમતાં” માનીને એવો અર્થ થઈ જાય છે કે-હે જમ્બૂ ! તમે સદા આ વાતનો ભલી પ્રકારે વિચાર કરો કે જે પ્રકારે



‘યથા મમ દુઃસ્વાદિકં ભવતિ તથૈવાન્યેષામપ્યેકેન્દ્રિયાદીનાં મૃત્યુમીરૂણાં સુખેચ્છનાં તદુત્પદ્યતે’ इत्यनुभवसिद्धामात्मोपमां ज्ञात्वा अत्र=अस्मिन् षड्जीवनिकायरूपे लोके शस्त्रोपरतो भवेत्यर्थः ॥ सू० २ ॥

षड्जीवनिकायलोके शस्त्रોપરતઃ સન્ યથા મુનિત્વં પ્રાપ્નોતિ તદાહ—  
‘જસ્સિમે’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જસ્સિમે સદા ય રૂવા ય રસા ય ગંધા ય ફાસા ય અભિસમન્નાગયા ભવંતિ, સે આયવં નાણવં વયવં ધમ્મવં વંભવં પન્નાણેહિં પરિયાણઈ લોયં, મુણીતિ વુચ્ચે, ધમ્મવિઝ્ઞ ઉઝ્ઞૂ, આવટ્સોયસંગમભિજાણઈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

વિચાર કરો કિ જિસ પ્રકાર હમેં હિંસાદિક કારણોંકે ઉપસ્થિત હોનેપર કષ્ટકા અનુભવ હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર દૂસરે એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિયોંકો—જો સદા મૃત્યુસે ડરતે હૈં ઓર સુખકે અમિલાષી હૈં—હિંસાદિક કારણોંકે ઉપસ્થિત હોને પર દુઃખ હોતા હૈં । ઇસ પ્રકાર અનુભવસિદ્ધ—“આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ પરેષાં ન સમાચરેત્” ઇસ વાક્યકો અપને હૃદયપટલ પર ઉતાર કર કમી મી કિસી મી જીવકો કષ્ટ ન પહુંચે એસી પ્રવૃત્તિ કરો । પરકે દુઃખોંકા અપને દુઃખોંકે સાથ મિલાન કર સદા જ્ઞાનીકો ઇસ વાતકા દૃઢ વિચાર કરના ચાહિયે કિ સંસારકે એકેન્દ્રિયસે લગા કર પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત સમસ્ત જીવ મૃત્યુસે ડરતે હૈં ઓર સુખકો ચાહતે હૈં, ઇસલિયે ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકમેં અપની પ્રવૃત્તિ સદા યતનાશાલી બનાની ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

અમને હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી કષ્ટનો અનુભવ થાય છે તે પ્રકારે ખીજા એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણીઓને—કે જે સદા મૃત્યુથી ડરે છે અને સુખના અભિલાષી છે—હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી દુઃખ થાય છે, આવા પ્રકારે અનુભવસિદ્ધ—“આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ પરેષાં ન સમાચરેત્” આ વાક્યને પોતાના હૃદયમાં ઉતારીને કોઈ વખત કોઈ પણ જીવને કષ્ટ ન પહોંચે તેવી પ્રવૃત્તિ કરે. પારકાના દુઃખોને પોતાના દુઃખોની સાથે મેળવી સદા જ્ઞાનીએ એ વાતનો દૃઢ નિશ્ચય કરવો જોઈએ કે સંસારના એકેન્દ્રિયથી લઈ પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત સમસ્ત જીવ મૃત્યુથી ડરે છે અને સુખને ચાહે છે માટે ષડ્જીવનિકાય રૂપ લોકમાં પોતાની પ્રવૃત્તિ સદા યતનાશાળી બનાવવા જોઈએ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

छाया—यस्येमे शब्दाश्च रूपाणि च रसाश्च गन्धाश्च स्पर्शाश्चाभिसमन्वागता भवन्ति, स आत्मवान् ज्ञानवान् वेदवान् धर्मवान् ब्रह्मवान् प्रज्ञानैः परिजानाति लोकम्, मुनिरित्युच्यते, धर्मविद् ऋजुः, आवर्तस्रोतःसङ्गमभिजानाति ॥ सू० ३॥

टीका—यस्य मुनेः, इमे=प्रत्यक्षमनुभूयमानाः, शब्दाः रूपाणि रसा गन्धाः स्पर्शाश्च अनुकूलप्रतिकूलरूपाः, अभिसमन्वागताः—अभि=आभिमुख्येन, सम्यग्=इष्टानिष्टावधारणेन, अनु=शब्दादिस्वरूपावगमात् पश्चात्, आगताः=विज्ञाताः, भवन्ति—शब्दादिविषयाः परमार्थतः संसारकारणतयाऽऽत्मकल्याणाय न भवन्ति,

षडजीवनिकायरूप इस लोकमें द्रव्य और भावरूप शस्त्रसे उपरत होता हुआ जीव जिस प्रकारसे मुनिपनेको पाता है उसीका प्रतिपादन करते हैं—‘जस्सिमे’ इत्यादि ।

जिस मुनिके लिये प्रत्यक्ष अनुभूत शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्श, ये पौद्गलिक गुण अनुकूल और प्रतिकूल होते हुए इष्ट और अनिष्टकी कल्पनाके कारण नहीं बनते हैं, अर्थात् वे शब्दादिक विषय पुद्गलके गुण हैं, इनसे मेरी आत्माका कोई भी उपकार या अपकार नहीं हो सकता है । इनमें इष्टानिष्टकी कल्पना करनेसे ये मेरे लिये संसारका कारण बनेंगे, क्यों कि ये स्वयं संसारके ही कारण हैं—मुक्तिके नहीं । मुक्तिके कारण वे ही होते हैं जिनसे इस आत्माका कल्याण होता है । इनसे तो मेरी आत्माका कुछ भी कल्याण नहीं हो सकता है, अतः इनमें इष्टानिष्टकी कल्पना कर मैं क्यों अपना बिगाड़ करूँ । इनके स्वरूपको जाननेके बाद इस प्रकारके दृढ़ अध्यवसायसे इन शब्दादिकों

षड्जीवनिकायरूप आ लोकमां द्रव्य आने भावरूप शस्त्रथी उपरत भनीने एव जे प्रकारे मुनिपण्णाने प्राप्त थाय छे तेनुं प्रतिपादन करे छेः—‘जस्सिमे’ इत्यादि.

जे मुनिना भाटे प्रत्यक्ष अनुभूत—शब्द, रूप, रस, गंध आने स्पर्श, जे पौद्गलिक गुण अनुकूल आने प्रतिकूल होवा छतां छिट आने अनिष्टनी कल्पनाना कारण भनता नथी. अर्थात् ते शब्दादिक विषय पुद्गलने गुण छे. तेनाथी भारा आत्माने कोछ पणु उपकार या अपकार भनी शकतो नथी. तेमां छिटानिष्टनी कल्पना करवाथी जे भारा भाटे संसारनुं कारण भनशे. कारण के जे स्वयं ज संसारनुं ज कारण छे, मुक्तिनुं नहि. मुक्तिनुं कारण ते भने छे जेनाथी आ आत्मानुं कल्याण थाय छे, आनाथी तो भारा आत्मानुं कोछ पणु कल्याण भनी शकतुं नथी. भाटे तेमां छिटानिष्टनी कल्पना करीने शा भाटे पोतानो भगाड कइ. तेना स्वरूपने ज्ञाय आह आ प्रकारना दृढ़ अध्यवसायथी ते शब्दादिकोमां



અતસ્તત્ર મનોજ્ઞાનનોજ્ઞવિષયેષુ યસ્ય રાગદ્વેષૌ નોત્પદ્યેતે इत्यर्थः, સ આત્મવાન્= જ્ઞાનાદિગુણસમ્પન્નઃ, યદ્વા-આત્મહિતાચરણપ્રવૃત્તઃ, શબ્દાદિવિષયેષુ પ્રવર્તમાનમાત્માનં તેભ્યઃ પૃથક્કૃત્ય તુષાદ્ ધાન્યમિવ રક્ષિતેત્યર્થઃ । જ્ઞાનવાન્=હેયોપાદેયવિવેકવાન્, શબ્દાદિવિષયે રાગદ્વેષૌ કારણં, રાગદ્વેષતઃ કર્મબન્ધઃ, તસ્માત્ સંસારપરિભ્રમણં ભવતીત્યેવં વિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । તથા વેદવાન્ વેદ્યતે જ્ઞાયતે જીવાજીવાદિસ્વરૂપમનેનેતિ વેદઃ=આચારાજ્ઞાધ્યાગમઃ, સોઽસ્યાસ્તીતિ વેદવાન્-આચારાધ્યાગમાધિગન્તેત્યર્થઃ, તથા-ધર્મવાન્-દુર્ગતૌ પ્રપતન્તં જીવં ધારયતિ રક્ષતીતિ ધર્મઃ-શ્રુતચારિત્રલક્ષણઃ મેં-ચાહે યે અનુકૂલ હોં ચાહે પ્રતિકૂલ હોં-જિસ પ્રાણીકો રાગ ઔર દ્વેષ નહીં હોતે હૈં વહી પ્રાણી આત્મવાન્ હૈ, અર્થાત્ જ્ઞાનાદિ ગુણોંસે સંપન્ન હૈ, અથવા આત્મહિતકારી આચરણમેં લવલીન હૈ । જિસ પ્રકાર તુષસે ધાન્ય અલગ કિયા જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર શબ્દાદિ વિષયોંમેં પ્રવર્તમાન અપની આત્માકો ઉનસે અલગ કર વહ ઉસકી રક્ષા કરનેવાલા હૈ । જ્ઞાનવાન્ હૈ-હેય ઔર ઉપાદેયકે વિવેકવાલા હૈ । ઇષ્ટ ઔર અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોંમેં પ્રવૃત્તિ ઔર નિવૃત્તિકે કારણ રાગ ઔર દ્વેષ હૈ । રાગ ઔર દ્વેષસે નવીન કર્મોંકા બન્ધ, ઔર ઇસસે જીવોંકા સંસારમેં પરિભ્રમણ હોતા હૈ । વેદવાન્ હૈ-જીવાદિક પદાર્થોંકા સ્વરૂપ જિસસે જાના જાતા હૈ ઉસકા નામ વેદ હૈ, વે આચારાજ્ઞ આદિ આગમ હૈ, ઇનકા જો જાન-નેવાલા હૈ ઉસકા નામ વેદવાન્ હૈ । ધર્મવાન્ હૈ-દુર્ગતિમેં પડતે હુए જીવોં કી રક્ષા કરતા હૈ ઉસકા નામ ધર્મ હૈ, વહ ધર્મ શ્રુતચારિત્રરૂપ હૈ, યહ

લલે તે અનુકૂળ હોય કે પ્રતિકૂળ હોય, જે પ્રાણીને રાગ અને દ્વેષ થતો નથી. તે પ્રાણી જ આત્મવાન છે. અર્થાત્ જ્ઞાનાદિ ગુણોથી સંપન્ન છે, અથવા આત્મ-હિતકારી આચરણમાં લવલીન છે. જેવી રીતે તુષથી ધાન્ય અલગ કરવામાં આવે છે તેવી રીતે શબ્દાદિક વિષયોમાં પ્રવર્તમાન પોતાના આત્માને તેનાથી અલગ કરી તે તેની રક્ષા કરવાવાળા છે, જ્ઞાનવાન્ છે-હેય અને ઉપાદેયતા વિવેકવાળા છે-ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોમાં પ્રવૃત્તિ અને નિવૃત્તિના કારણ રાગ અને દ્વેષ છે, રાગ અને દ્વેષથી નવીન કર્મોના બંધ અને તેનાથી જીવોનું સંસારમાં પરિભ્રમણ થાય છે. આવા પ્રકારના જ્ઞાનથી તે સંપન્ન છે. વેદ-વાન્ છે-જીવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપ જેનાથી જાણી શકે છે તેનું નામ વેદ છે. તે આચારાંગ આદિ આગમ છે. તેના જે જાણનાર છે તેનું નામ વેદવાન્ છે. ધર્મવાન્ છે-દુર્ગતિમાં પડતા જીવોની જે રક્ષા કરે છે તેનું નામ ધર્મ છે. તે ધર્મ શ્રુતચારિત્રરૂપ છે. તે જેની પાસે છે અર્થાત્ જે આ ધર્મનો પાલક છે, તેનું



સોડસ્યાસ્તીતિ ધર્મવાન્ । તથા બ્રહ્મવાન્-બ્રહ્મ=મોક્ષસુખં, તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્-મોક્ષસુખાભિજ્ઞાનમિત્યર્થઃ, યદ્વા બ્રહ્મ=અષ્ટાદશવિધં બ્રહ્મચર્યં, તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્, યદ્વા-બ્રહ્મ=કામસેવનપરિત્યાગઃ તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્, इत्थंभूतः संयमी प्रज्ञानैः=પ્રકર્ષેણ જ્ઞાયતે જ્ઞેયં જીવાજીવાદિ યથાવસ્થિતસ્વરૂપં યૈસ્તાનિ પ્રજ્ઞાનાનિ-મત્યાદીનિ, તૈર્લોકં=ષડ્જીવનિકાયસ્વરૂપં પરિજાનાતિ । યદ્વા લોકં=શબ્દાદિવિષયલોકં પરિજાનાતિ=જ્ઞપરિજ્ઞયા બન્ધકારણત્વેન વિજ્ઞાય પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરતીત્યર્થઃ ।

યઃ સ્વભવાત્મવાન્ જ્ઞાનવાન્ વેદવાન્ ધર્મવાન્ બ્રહ્મવાન્ સ એવ ચ મુનિરિત્યુચ્યતે ।  
કિં ચ-ધર્મવિત્=જીવાજીવદ્રવ્યસ્વભાવાભિજ્ઞઃ, ઋજુઃ=ઋજુમાર્ગસ્ય સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાન-  
જિસકે પાસ હૈ, અર્થાત્ જો હિસ ધર્મકા પાલક હૈ ઉસકા નામ ધર્મવાન્  
હૈ । બ્રહ્મવાન્ હૈ-બ્રહ્મ શબ્દકા અર્થ મોક્ષસુખ હૈ, વહ જિસકો હૈ ઉસકા  
નામ બ્રહ્મવાન્ હૈ અર્થાત્ મોક્ષસુખકા જ્ઞાતા હૈ, અથવા ૧૮ અઠારહ  
પ્રકારકે બ્રહ્મચર્યકા જો પાલક હોતા હૈ વહ બી બ્રહ્મવાન્ હૈ, અથવા જો  
મૈથુનકા સર્વથા પરિત્યાગી હોતા હૈ વહ બી બ્રહ્મવાન્ હૈ । હિસ પ્રકારકા  
સંયમી અચ્છી તરહસે જીવાદિક પદાર્થોંકે સ્વરૂપકો પ્રકાશિત કરનેવાલે  
પ્રજ્ઞાનોં-મત્યાદિક જ્ઞાનોં-કે દ્વારા લોક-ષડ્જીવનિકાય-કે સ્વરૂપકો  
જાનતા હૈ । અથવા લોક-શબ્દાદિકવિષયરૂપ લોકકો જ્ઞપરિજ્ઞાસે  
બન્ધકા કારણ જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઉનકા પરિહાર-ત્યાગ કર  
દેતા હૈ । જો આત્મવાન્, જ્ઞાનવાન્, વેદવાન્, ધર્મવાન્ ઓર બ્રહ્મવાન્ હૈ  
વહી મુનિ કહા જાતા હૈ ।

કિંચ-જો ધર્મવિત્=જીવ-અજીવ દ્રવ્યકે સ્વરૂપકા જ્ઞાતા હૈ, તથા

નામ ધર્મવાન્ છે, બ્રહ્મવાન્ છે-બ્રહ્મ શબ્દનો અર્થ મોક્ષસુખ છે. જે તેને છે  
તેનું નામ બ્રહ્મવાન્ છે. અર્થાત્ મોક્ષસુખનો જ્ઞાતા છે, અથવા ૧૮ અઠાર  
પ્રકારના બ્રહ્મચર્યનો પાલક છે તે પણ બ્રહ્મવાન્ છે. અથવા જે મૈથુનનો  
સર્વથા પરિત્યાગી થાય છે તે પણ બ્રહ્મવાન્ છે. આવા પ્રકારનો સંયમી સારી  
રીતે જીવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપને પ્રકાશિત કરવાવાળાં પ્રજ્ઞાન-મત્યાદિક જ્ઞાનોદ્વારા  
લોક-ષડ્જીવનિકાય-ના સ્વરૂપને જાણે છે, અથવા લોક-શબ્દાદિકવિષયરૂપ  
લોકને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બંધનું કારણ જાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો પરિહાર-  
ત્યાગ કરે છે. જે આત્મવાન્, જ્ઞાનવાન્, વેદવાન્, ધર્મવાન્ અને બ્રહ્મવાન્ છે  
તેને જ મુનિ કહેવામાં આવે છે.

વળી-જે ધર્મવિત્=જીવ-અજીવ દ્રવ્યનો સ્વરૂપનો જ્ઞાતા છે તથા ઋજુઃ

ચારિત્રલક્ષણસ્યાવલમ્બનાદકુટિલઃ, યદ્વા-સરલચિત્તઃ, આવર્તસ્રોતઃસજ્જમ્=આવર્તો-  
ભાવાવર્તો જન્મજરામરણાધિવ્યાધિવ્યસનોપનિપાતરૂપઃ સંસારઃ-ઉક્તञ्च—

“રાગદ્વેષવશાવિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે મૃશમ્” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

સ્રોતશ્ચાત્ર ભાવસ્રોતઃ-શબ્દાદિવિષયામિલાષઃ, આવર્તશ્ચ સ્રોતશ્ચાવર્તસ્રોત-  
સી, તયોઃ સજ્જમ્=રાગદ્વેષકૃતઃ સમ્બન્ધઃ, તમ્ અભિજાનાતિ । સંસારસ્રોતઃસજ્જો  
રાગદ્વેષકૃતો ભવતીતિ વિજ્ઞાય યસ્તં પરિહરતિ, સ એવાવર્તસ્રોતસોઃ સજ્જં વિજાના-  
તીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૩ ॥

ઋજુઃ=સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્રરૂપ મોક્ષકે સરલ  
માર્ગકે અવલમ્બનસે ઋજુપરિણામી-અકુટિલ, અથવા સરલચિત્ત હૈ  
વહી હસ બાતકો જાન સકતા હૈ કિ-આવર્ત ઓર સ્રોતકા સમ્બન્ધ  
રાગદ્વેષકૃત હૈ । આવર્ત્ત દો પ્રકારકા હૈ-એક દ્રવ્ય-આવર્ત્ત ઓર દૂસરા  
ભાવ-આવર્ત્ત, જલપ્રવાહમેં ભંવર ઉઠતા હૈ વહ દ્રવ્ય-આવર્ત્ત હૈ । જન્મ,  
જરા, મરણ, આધિ, વ્યાધિ આદિ અનેક ઉપદ્રવોંકા સ્થાનરૂપ સંસાર  
ભાવ-આવર્ત્ત હૈ । કહા મી હૈ—

“રાગદ્વેષવશાવિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે મૃશમ્” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અર્થાત્—યહ જગત્ રાગ ઓર દ્વેષસે વ્યાપ્ત હૈ, મિથ્યા દર્શનસે  
યુક્ત હોનેકે કારણ યહ દુસ્તર હૈ, જન્મરૂપી આવર્ત્તમેં પડા હુઆ હૈ ઓર  
પ્રમાદસે હતસ્તતઃ ચારોં ગતિયોંમેં ચક્કર કાટતા ફિરતા હૈ ॥ ૧ ॥

સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રરૂપ મોક્ષના સરલ માર્ગના અવલં-  
બનથી ઋજુપરિણામી-અકુટિલ અથવા સરલચિત્ત છે તે જ આ વાતને બાણી  
શકે છે કે-આવર્ત્ત અને સ્રોતનો સંબંધ રાગદ્વેષકૃત છે. આવર્ત્ત બે પ્રકારના  
છે. એક દ્રવ્ય-આવર્ત્ત અને બીજું ભાવ-આવર્ત્ત. જળ પ્રવાહમાં જે ભંવર પડે  
છે તે દ્રવ્ય-આવર્ત્ત છે. જન્મ, જરા, મરણ, આધિ, વ્યાધિ આદિ અનેક ઉપદ્રવોના  
સ્થાનરૂપ સંસાર ભાવ-આવર્ત્ત છે. કહ્યું છે—

“રાગદ્વેષવશાવિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે મૃશમ્” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્ આ જગત રાગ અને દ્વેષથી વ્યાપ્ત છે. મિથ્યાદર્શનથી યુક્ત  
હોવાને કારણે તે દુસ્તર છે. જન્મરૂપી આવર્ત્તમાં પડેલ છે અને પ્રમાદથી  
ચારે ગતિઓમાં પરિભ્રમણ કરે છે ॥ ૧ ॥



આવર્તસ્રોતસોઃ સજ્જમભિજાનન્ કં ગુણં પ્રાપ્નોતીત્યાહ-‘ સીઝસિણચ્ચાઈ’  
 ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સીઝસિણચ્ચાઈ સે નિગ્ગન્થે અરઙ્ગરઙ્ગસહે ફરુસયં  
 નો વેણ્ઙ, જાગર વેરોવરણ વીરે, એવં દુઃખા પમુક્ખસિ ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા-શીતોષ્ણત્યાગી સ નિર્ગ્રન્થઃ અરતિરતિસહઃ પરુષતાં નો વેત્તિ, જાગરો  
 વૈરોપરતઃ, વીર એવં દુઃખાત્ પ્રમોક્ષ્યસે ॥ ૩ ॥

ટીકા-સ નિર્ગ્રન્થઃ=વાહ્યાભ્યન્તરગ્રન્થરહિતો નિષ્પરિગ્રહ ઇતિ યાવત્, શીતો-  
 ણ્ણત્યાગી=અનુકૂલપ્રતિકૂલપરિષદ્ સહમાનઃ, અનુકૂલેઽનભિલાષી, પ્રતિકૂલે  
 ચાનુદ્વેગીત્યર્થઃ । અરતિરતિસહઃ=અરતિં સંયમે, રતિમસંયમે સહમાનઃ-સંયમારાધને  
 પરીષદોપસર્ગતઃ કદાચિદરતિરુત્પદ્યતે, કદાચિચ્ચાસંયમે રતિરુત્પદ્યતે, તામરતિં રતિં

સ્રોત મી દ્રવ્ય ઔર ભાવકે ભેદસે દો પ્રકારકા હૈ । નદી આદિકા  
 પ્રવાહ દ્રવ્યસ્રોત હૈ । શબ્દાદિક વિષયોંકી અભિલાષા ભાવસ્રોત હૈ ।  
 ઇન દોનોંકા સમ્બન્ધ રાગ એવં દ્વેષસે હુઆ હૈ, ઇસ વાતકો જાન કર  
 જો ઁનકે ઁસ સમ્બન્ધકા પરિહાર-ત્યાગ કર દેતા હૈ વહી આવર્ત ઔર  
 સ્રોતકે સંગકા પરિજ્ઞાતા કહા જાતા હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

જો મુનિ ઇસ આવર્ત ઔર સ્રોતકે સમ્બન્ધકો જાન લેતા હૈ વહ  
 કિસ ગુણકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? સો કહતે હૈ-‘ સીઝસિણચ્ચાઈ’ ઇત્યાદિ ।

વાહ્ય ઔર આભ્યન્તર પરિગ્રહસે રહિત-નિષ્પરિગ્રહી મુનિ અનુકૂલ  
 ઔર પ્રતિકૂલ પરીષદોંકો સહન કરતા હુઆ અર્થાત્-અનુકૂલ પરીષદહેં  
 અભિલાષી ઔર પ્રતિકૂલ પરીષદહેં ઉદ્વેગી ન બનતા હુઆ રતિ ઔર અરતિ

સ્રોત પણુ દ્રવ્ય અને ભાવના લેદથી બે પ્રકારનું છે. નદી આદિનો પ્રવાહ  
 દ્રવ્યસ્રોત છે. શબ્દાદિક વિષયોની અભિલાષા ભાવસ્રોત છે. એ બન્નેનો સંબંધ  
 રાગ અને દ્વેષથી થયેલ છે. તે વાતને બાણી બે તેના તે સંબંધનો પરિહાર-  
 ત્યાગ કરે છે તે આવર્ત અને સ્રોતના સંગનો પરિજ્ઞાતા કહેવાય છે ॥ સૂ. ૩ ॥

બે મુનિ આવર્ત અને સ્રોતના સંબંધને બાણી લે છે તે કેવા ગુણોને પ્રાપ્ત  
 કરે છે ? તે કહે છે-‘ સીઝસિણચ્ચાઈ’ ઇત્યાદિ.

વાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહથી રહિત-નિષ્પરિગ્રહી મુનિ અનુકૂળ અને પ્રતિ-  
 કૂળ પરીષદો સહન કરતાં થકાં અર્થાત્ અનુકૂળ પરીષદમાં અભિલાષી અને પ્રતિકૂળ  
 પરીષદોમાં ઉદ્વેગી ન બનીને રતિ અને અરતિની ઉપેક્ષા કરી પરીષદોને કષ્ટનક



ચ કર્મબન્ધહેતુત્વાદુપેક્ષમાણ इत्यर्थः । परुषतां=परीषहाणां पारुष्यं कष्टजनकत्वरूपं नो वेत्ति—न तान् पीडाकारित्वेन गृह्णाति, अपि तु कर्मबन्धोच्छेदार्थमुद्यतः संसारादुद्विग्नमनास्तान् साहाय्यकारित्वेनानुमन्यते इत्यर्थः ।

किंच—स जागरः=मिथ्यात्वाविरतिप्रमादनिद्रापगमाज्जागर्तीति जागरः—श्रुत-  
चारित्रधर्मारोधने सदा जागरूक इत्यर्थः । वैरोपरतः—वैरं परापकारचिन्तनं, तस्मा-  
दुपरतः, अत एव—वीरः=कर्मवैरिविदारणसमर्थो भवति । हे शिष्य ! एवम्=इत्थंभूतः  
श्रुतचारित्रधर्मारोधने सदा जागरूकः परापकाराध्यवसायरहितः सन् दुःखात्=  
दुःखकारणात् कर्मणः प्रमोक्ष्यसे=मुक्तो भविष्यसि ॥ सू० ४ ॥

કી ઉપેક્ષા કર પરીષહોંકો કષ્ટજનક નહીં માનતા હૈ, કિન્તુ કર્મબન્ધ  
કે વિનાશ કરનેકી ઓર ઉદ્યમી વહ અનગાર ડન પરીષહોંકો ડસ કર્મ  
વિનાશરૂપ કાર્ય મેં અપને સહાયક માનતા હૈ ।

ભાવાર્થ—પરિગ્રહમેં આસક્તિસંપન્ન વ્યક્તિ હી અનુકૂલ પરીષહોંમેં  
અભિલાષી ઓર પ્રતિકૂલ પરીષહોંમેં ઉદ્દેગી બનતા હૈ । જિસકે પાસ  
પરિગ્રહ હી નહીં હૈ એસે સંયમી મુનિકે લિયે કયા પ્રતિકૂલ પરીષહ કયા  
અનુકૂલ પરીષહ સબ એક સમાન હૈ । અનુકૂલમેં ઇસ્કી લાલસા નહીં  
ઓર પ્રતિકૂલમેં ઇસ્કો દ્વેષ નહીં, કારણ કિ ઇસ સિદ્ધાન્તકો ખલીખાંતિ  
જાન ચુકા હૈ કિ—સંસારકે મૂલ કારણ રાગ ઓર દ્વેષ હૈ । અનુકૂલમેં  
અભિલાષા હોની યહ રાગકી પર્યાય હૈ, ઓર પ્રતિકૂલમેં ઉદ્દેગ હોના દ્વેષ  
કી પર્યાય હૈ, અતઃ વહ ડોનોં પ્રકારકે પરીષહોંકો સમભાવસે સહન  
કરતા હૈ । પરીષહો એવં ઉપસર્ગોસે કદાચિત્ ઇસ્કે ચિત્તમેં સંયમપરિ-

માનતા નથી, પણ કર્મબન્ધને વિનાશ કરવાની તરફ ઉદ્યમી તે અણુગાર તેવા  
પરીષહોને તે કર્મવિનાશરૂપ કાર્યમાં પોતાના સહાયક માને છે.

ભાવાર્થ—પરિગ્રહમાં આસક્તિસંપન્ન વ્યક્તિ જ અનુકૂળ પરીષહોમાં અભિ-  
લાષી અને પ્રતિકૂળ પરીષહોમાં ઉદ્દેગી બને છે. જેની પાસે પરિગ્રહ જ નથી  
એવા સંયમી મુનિ માટે શું પ્રતિકૂળ પરીષહ અને શું અનુકૂળ પરીષહ ? સઘળા  
એકસમાન છે. અનુકૂળમાં તેની લાલસા નહિ અને પ્રતિકૂળમાં તેને દ્વેષ નહિ,  
કારણ કે એ આ સિદ્ધાંતને સારી રીતે જાણી ચુકેલ છે કે સંસારનું મૂળ કારણ રાગ  
અને દ્વેષ છે. અનુકૂળમાં અભિલાષા થવી તે રાગની પર્યાય છે અને પ્રતિકૂળમાં  
ઉદ્દેગ થવો તે દ્વેષની પર્યાય છે, માટે સંયમી મુનિ તે બંને પ્રકારના પરીષ-  
હોને સમભાવથી સહન કરે છે. પરીષહો તેમજ ઉપસર્ગોથી કોઈ વખત તેના  
ચિત્તમાં સંયમપરિણામ તરફ અસ્તિ અને અસંયમપરિણામ તરફ રતિ થઈ

ગામકે પ્રતિ અરતિ ઔર અસંયમપરિણામકે પ્રતિ રતિ હો જાતી હો સો ભી વાત નહીં હૈ । ક્યોં કિ યહ્ ઇન દોનોં પ્રકારકી પરિણતિયોંકો ભી કર્મબન્ધકા કારણ જાન કર ઁનકી તર્ફસે ઉપેક્ષિત રહતા હૈ । પરીષહોં કો યહ્ અપને લિયે કષ્ટકારી નહીં માનતા હૈ પ્રત્યુત ઁન્હેં અપને લક્ષમેં અધિકરૂપ જુટાનેવાલે હોનેસે અપના સહાયક હી માનતા હૈ । સંસાર શરીર ઔર ભોગોંસે જો નિર્વિણ્ણ-ઉદાસ હોતા હૈ ઉસે પરીષહ ઔર ઉપસર્ગ અપને લક્ષ્યસે નહીં ગિરા સકતે હૈ । ઁસે વ્યક્તિ વિવ્રકારક કારણકલાપોંકો-પરીષહોંકો કર્મબન્ધકે ઉચ્છેદન કરનેમેં સુવર્ણમેં શુદ્ધિ લાનેકે લિયે અગ્નિરૂપ સહાયકકી તરહ અપના સહાયક માના કરતે હૈ ઔર ઁનકા સહર્ષ સ્વાગત કરતે હૈ ।

નિર્ગ્રન્થ મુનિ મિથ્યાત્વ અવિરતિ ઔર પ્રમાદરૂપ નિદ્રાકે અભાવસે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકે આરાધનમેં સદા જાગરૂક રહતા હૈ, ઁવં પરકે અપકાર કરનેકે વિચારરૂપ વૈરસે વિરક્ત હોતા હુઆ કર્મરૂપી વૈરીકો નિવારણ કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ । ઇસલિયે હે શિષ્ય ! તુમ ભી શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેમેં સદા જાગરૂક બન પરકે અપકાર કરનેકે અધ્યવસાયસે રહિત હોકર દુઃખ ઁવં દુઃખકે કારણ કર્મોંસે રહિત હો જાઓગે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જતી હોય તે પણ વાત નથી. કારણ કે તે આ બંને પ્રકારની પરિણતિઓને પણ કર્મબંધનું કારણ બાણીને તેની તરફથી ઉપેક્ષિત રહે છે. પરિષદોને તે પોતાને માટે કષ્ટકારી માનતો નથી પ્રત્યુત તેને પોતાના લક્ષમાં અધિકરૂપ બેડવાવાળા હોવાથી પોતાના સહાયક જ માને છે. સંસાર, શરીર અને ભોગોથી જે ઉદાસ થાય છે તેને પરીષદ અને ઉપસર્ગ પોતાના લક્ષથી દૂર કરી શકતા નથી. એવી વ્યક્તિ વિવ્રકારક કારણકલાપોને-પરીષદોને કર્મબંધનું ઉચ્છેદન કરવામાં સુવર્ણમાં શુદ્ધિ લાવવા માટે અગ્નિરૂપ સહાયકની માફક પોતાના સહાયક માન્યા કરે છે, અને તેઓનું સહર્ષ સ્વાગત કરે છે.

નિર્ગ્રન્થ મુનિ મિથ્યાત્વ અવિરતિ અને પ્રમાદરૂપ નિદ્રાના અભાવથી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનાં આરાધનમાં સદા જાગરૂક રહે છે અને પરના અપકાર કરવાના વિચારરૂપ વૈરથી વિરક્ત બનીને કર્મરૂપી વૈરીનું નિવારણ કરવામાં સમર્થ થાય છે. માટે હે શિષ્ય ! તમે પણ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામાં સદા જાગરૂક બની પરના અપકાર કરવાના અધ્યવસાયથી રહિત થઈ દુઃખ અને દુઃખના કારણ કર્મોથી રહિત બની જશો. ॥ સૂ૦ ૪ ॥



यश्चावर्तस्रोतसोः सङ्गादजागरः, स तु संसारदुःखान्न विमुच्यत इत्याशयेनाह—  
'जरामच्चु०' इत्यादि ।

मूलम्—जरामच्चुवसोवणीए नरे सययं मूढो धम्मं नाभि-  
जाणइ ॥ सू० ५ ॥

छाया—जरामृत्युवशोपनीतो नरः सततं मूढो धर्मं नाभिजानाति ॥ सू० ५ ॥

टीका—जरामृत्युवशोपनीतः=जरामरणपराधीनः, नरः=मनुष्यः, सततं=सर्वदा,  
मूढः=मोहनीयोदयाद् विवेकरहितः धर्मः=श्रुतचारित्रलक्षणं नाभिजानाति । भाव-  
सुप्तः संसारी मोक्षमार्गमप्राप्य पुनः पुनर्जरामृत्युवशंगतो दुःखान्तं नोपयातीति  
भावः ॥ सू० ५ ॥

ननु जरामृत्युपारवश्यादेव दुःखान्तो न भवति चेत्तर्हि तत्पारवश्यवारणाय  
मुमुक्षुणा किं कर्तव्यमिति जिज्ञासायामाह—'पासिय आउरपाणे' इत्यादि ।

मूलम्—पासिय आउरपाणे अप्पमत्तो परिव्वए । मंता एयं  
मइमं पास ॥ सू० ६ ॥

छाया—दृष्ट्वा आतुरप्राणान् अप्रमत्तः परिव्रजेत् । मत्वा एतत् मतिमन्  
पश्य ॥ सू० ६ ॥

जो आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धसे जागरूक नहीं है वह संसारके  
दुःखोंसे छूट नहीं सकता । इस विषयमें कहते हैं—'जरामच्चु०' इ० ।

जो आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धसे जागरूक नहीं हैं ऐसे मनुष्य  
जरा और मरणके आधीन होकर निरन्तर मोहनीय कर्मके उदय  
से विवेकरहित हो श्रुतचारित्ररूप धर्मको नहीं जानते हैं । इसका भाव  
यही है कि भावसुप्त संसारी मोक्षमार्गको नहीं प्राप्त कर बारंबार जरा  
और मृत्युके आधीन होकर कभी भी दुःखोंसे छुटकारा नहीं पाते हैं । ५।

वे आवर्त्त अने स्रोतना संभंधथी जगइक नथी ते संसारना दुःखोथी  
छुटी शकता नथी. ते विषयमां कडे छे—'जरामच्चु०' इत्यादि.

वे आवर्त्त अने स्रोतना संभंधथी जगइक नथी तेवा मनुष्य जरा  
अने मरणने आधीन अनी निरंतर मोहनीय कर्मना उदयथी विवेकरहित थई  
श्रुतचारित्ररूप धर्मने ज्ञातता नथी. आने लाव अे छे के लावसुप्त संसारी मोक्ष-  
मार्गने प्राप्त कर्या बिना बारंवार जरा अने मृत्युने आधीन अनी कदि पणु दुःखोथी  
छुटकारो भेजवता नथी. ॥ सू० ५ ॥



ટીકા—આત્મકલ્યાણાર્થી મનુષ્યઃ આતુરપ્રાણાન્=ભાવસ્વાપજનિતજરામરણ-પારવશ્યોપનીતદુઃસ્વસાગરાન્તઃપાતિપ્રાણિનઃ, દૃષ્ટ્વા, અપ્રમત્તઃ=ભાવજાગરૂકઃ સન્ પરિવ્રજેત્=સંયમારાધનતત્પરો ભવેત્ । મતિમન્=હે મેધાવિન્ શિષ્ય ! ત્વમપિ એતત્=સુપ્તદૂષણં જરામૃત્યુપારતન્ન્યમ્, મત્વા=જ્ઞાત્વા પશ્ય=ચક્ષુરુન્મીલય-સંયમ-ધર્મં જાગૃહીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

યદિ જરા ઓર મૃત્યુકી પરવશતાસે જીવોંકે દુઃસ્વોંકા અન્ત નહીં હોતા હૈ તો ફિર ઉનકી પરવશતાકો દૂર કરનેકે લિયે સુમુક્ષુ પ્રાણિયોંકો કયા ઉપાય કરના ચાહિયે ? હિસ પ્રકારકી જિજ્ઞાસાકા સમાધાન કરનેકે લિયે કહતે હૈ—‘ પાસિય આઝરપાણે ’ ઇત્યાદિ ।

“આત્મકલ્યાણકા અભિલાષી મનુષ્ય ભાવનિદ્રાસે ઉત્પન્ન, જરા ઓર મરણકી પરવશતાસે પ્રાપ્ત દુઃસ્વરૂપી સાગરમેં પડે હુણ પ્રાણિયોંકો દેખ કર ભાવનિદ્રાકા પરિત્યાગ કરકે સંયમકી આરાધના કરનેમેં સદા તત્પર રહે ” પ્રભુકે હિસ સર્વોત્તમ ઉપદેશસે હે મેધાવી શિષ્ય ! તુમ મી ભાવનિદ્રાજન્ય જરા ઓર મરણકી પરવશતારૂપ દૂષણકો જાનકર સદા સંયમરૂપ ધર્મમેં જાગરૂક રહો ।

ભાવાર્થ—પ્રભુકા ઉપદેશ હૈ કિ—આત્મકલ્યાણકી કામના કરનેવાલા મનુષ્ય ભાવનિદ્રાકા પરિત્યાગ કરે, કયોંકિ નિદ્રાકે સદ્ભાવમેં જરા ઓર મરણજન્ય અનેક દુઃસ્વોંકા કમી મી અન્ત નહીં આ સકતા હૈ । હિન દુઃસ્વોંસે છુટકારા કરનેવાલા યદિ કોઈ હૈ તો વહ ભાવનિદ્રાકા અભાવ

કહાય જરા અને મૃત્યુની પરવશતાથી જીવોના દુઃખનો અંત થતો નથી તો પછી તેની પરવશતાને દૂર કરવા માટે સુમુક્ષુ પ્રાણિઓએ શો ઉપાય કરવો જોઈએ ? આવા પ્રકારની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરવા માટે કહે છે—‘ પાસિય આઝરપાણે ’ ઇત્યાદિ.

“આત્મકલ્યાણના અભિલાષી મુનિ ભાવનિદ્રાથી ઉત્પન્ન જરા અને મરણની પરવશતાથી પ્રાપ્ત દુઃખરૂપી સાગરમાં પડેલાં પ્રાણીઓને દેખીને ભાવનિદ્રાનો પરિત્યાગ કરીને સંયમની આરાધના કરવામાં સદા તત્પર રહે ” પ્રભુના આ સર્વોત્તમ ઉપદેશથી હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે પણ ભાવનિદ્રાજન્ય જરા અને મરણની પરવશતારૂપ દૂષણને જાણીને સદા સંયમરૂપ ધર્મમાં જાગરૂક રહો.

ભાવાર્થ—પ્રભુનો ઉપદેશ છે કે—આત્મકલ્યાણની કામના કરવાવાળા મુનિ ભાવનિદ્રાનો પરિત્યાગ કરે, કારણ કે આ નિદ્રાના સદ્ભાવમાં જરા અને મરણ જન્ય અનેક દુઃખોનો કદિ પણ અંત આવી શકતો નથી. આ દુઃખોથી છુટકારો કરાવનાર જે કોઈ હોય તો તે ભાવનિદ્રાનો અભાવ છે. સંસારી પ્રાણી જે

કિંચ—

મૂલમ્—આરંભજં દુઃખમિગંતિગચ્છા, માયી પમાઈ પુનરેઈ ગબ્મં।

उवेहमाणो सद्वृत्तेषु अंजू, माराभिसंकी मरणा पमुच्चइ॥सू० ७॥

છાયા—આરમ્ભજં દુઃખમિદમિતિ જ્ઞાત્વા, માયી પ્રમાદી પુનરેતિ ગર્ભમ્ । ઉપેક્ષમાણઃ શબ્દરૂપેષુ (યઃ) ઋજુઃ, મારાભિશક્તી (સઃ) મરણાત્ પ્રમુચ્યતે ॥સૂ० ૭॥

ટોકા—ઈદં=સંસારપરિભ્રમણરૂપં દુઃખમ્, આરમ્ભજમ્=સાવધક્રિયાનુષ્ઠાન-ફલભૂતમ્, ઇતિ જ્ઞાત્વા આત્મકલ્યાણાય જાગૃહિ । ભાવસુપ્તઃ કિં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—‘માયી’ ઇત્યાદિ । માયી=ક્રોધાદિકષાયયુક્તઃ, કષાયમધ્યવર્તિમાયાગ્રહણેન પૂર્વાપરકષાયાણા-મપિ ગ્રહણમ્ । પ્રમાદી=મદ્યાદિસેવી પુનઃ=વારં વારં, ગર્ભમેતિ=નરકાદિયાતનામનુ-ભૂય સકલદુઃખદેતુભૂતં ગર્ભં પ્રાપ્નોતિ ।

है । संसारी प्राणी जो जन्म मरणके अनन्त कष्टोंको भोग रहे हैं उसका कारण भावनिद्राका सद्भाव ही है, ऐसा समझकर और प्रभुके उपदेश पर ध्यान देकर हे मतिमान् शिष्य ! तुम अनर्थात्पादक इस निद्राका परित्याग करो, अर्थात् संयमधर्ममें सदा जागरूक रहो, जिससे जरा-मरणजन्य कष्टोंसे तुम्हें छुटकारा मिले ॥ सू० ६ ॥

फिर भी कहते हैं—‘आरंभजं’ इत्यादि ।

‘સાવધ ક્રિયાઓંકે અનુષ્ઠાનકા ફલ હી યહ સંસારકા પરિભ્રમણરૂપ દુઃખ હૈ’ એસા જાનકર હે શિષ્ય ! તુમ આત્મકલ્યાણકી ઓર અપની પ્રવૃત્તિ કરો । યહાં કષાયોંકે મધ્યવર્તી માયાકા ગ્રહણ કરનેસે અન્ય કષાયોંકા ભી ગ્રહણ હો જાતા હૈ અતઃ ભાવસુપ્ત પ્રાણીકે યે ચિહ્ન હૈં કિ વહ ક્રોધાદિક કષાયોંસે યુક્ત હોતા હૈ । પ્રમાદસેવી-મદ્યાદિકકા સેવન

જન્મ મરણના અનંત કષ્ટોને ભોગવી રહ્યા છે તેનું કારણ ભાવનિદ્રાને સદ્ભાવ જ છે. એવું સમજીને અને પ્રભુના ઉપદેશ ઉપર ધ્યાન આપીને હે મતિમાન શિષ્ય ! તમે અનર્થોત્પાદક આ નિદ્રાને પરિત્યાગ કરો, અર્થાત્ સંયમધર્મમાં સદા જાગરૂક રહો, જેથી તમને જરામરણજન્ય દુઃખોથી છુટકારો મળે. ॥ સૂ० ૬ ॥

ફરી કહે છે—‘આરંભજં’ ઇત્યાદિ.

સાવધ ક્રિયાઓના અનુષ્ઠાનનું ફળ જ આ સંસારના પરિભ્રમણરૂપ દુઃખ છે. એવું જાણીને હે શિષ્ય ! તમે આત્મકલ્યાણની તરફ પોતાની પ્રવૃત્તિ કરો. અહીં કષાયોના મધ્યવર્તી માયાનું ગ્રહણ કરવાથી અન્ય કષાયોનું પણ ગ્રહણ થાય છે, માટે ભાવસુપ્ત પ્રાણીનું એ ચિહ્ન છે કે તે ક્રોધાદિ કષાયોથી યુક્ત બને છે, પ્રમાદસેવી-મદ્યાદિકનું સેવન કરવાવાળા બને છે “પુનરપિ જનનં પુનરપિ



एवं भावसुप्तस्य दोषं पर्यालोच्य यः शब्दरूपेषु=इदमुपलक्षणं, तेन शब्दरूप-  
रसगन्धस्पर्शेषु विषयेषु इत्यर्थः, उपेक्षमाणो=रागद्वेषरहितः ऋजुः=अवक्रहृदयो  
मायाप्रमादपरिवर्जितः, माराभिशङ्की=पुनः पुनर्मरणदुःखाभ्यागमशङ्कया भीरुः,  
तद्दुःखपरिहारार्थं श्रुतचारित्रधर्मे जागरूक इति यावत्, स मरणात् प्रमुच्यते ॥सू० ७॥  
किञ्च—

મૂલમ્—અપ્પમત્તો કામેહિ, ઉવરઓ પાવકમ્મેહિં, વીરે આ-  
યગુત્તે જે સ્વેયન્ને ॥ સૂ૦ ૮ ॥

करनेवाला होता है “पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे  
शयनम्” बारंवार जन्म मरण और गर्भमें आगमन; इनसे उसका  
छुटकारा नहीं होता है। सावद्य क्रियाओंमें तत्पर प्राणी नरकनिगोदा-  
दिककी अनन्त यातनाओंको भोगता हुआ इनसे भी अधिक कष्टोंके  
स्थानभूत गर्भमें जाकर बसेरा करता है।

इस प्रकार भावसुप्त प्राणीकी जब यह दशा होती है तब संयमी  
मुनिका कर्तव्य है कि वह इस भावनिद्राका परिहार करे और पांच  
इन्द्रियोंके विषयों-शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्श-में रागद्वेषरहित  
होकर मायाप्रमादसे अपनी प्रवृत्तिको सुरक्षित रखता हुआ बारंवार  
जन्म मरणके दुःखोंको प्राप्त होनेकी आशङ्कासे भयभीत होकर सांसा-  
रिक दुःखोंसे छुटकारा पानेके लिये श्रुतचारित्ररूप धर्ममें सदा जागरूक  
रहे। इस प्रकारकी प्रवृत्तिसे ही प्राणी मरणसे छूट सकता है, अन्यथा  
नहीं ॥ सू० ७ ॥

मरणं पुनरपि जननीजठरे शयनम्” वारंवार जन्म मरण અને गर्ભમાં આગ-  
મન, તેનાથી તેનો છુટકારો થતો નથી. સાવધ ક્રિયાઓમાં તત્પર પ્રાણી નરક-  
નિગોદાદિકની અનન્ત યાતનાઓને ભોગવતાં તેનાથી પણ અધિક કષ્ટોના સ્થાનભૂત  
ગર્ભમાં સ્થાન લે છે.

આવા પ્રકારે ભાવસુપ્ત પ્રાણીની જ્યારે આવી દશા થાય છે ત્યારે સંયમી  
મુનિનું એ કર્તવ્ય છે કે તે આ ભાવનિદ્રાનો પરિત્યાગ કરે. અને પાંચ ઈન્દ્રિ-  
યોના વિષયો-શબ્દ, રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શો-માં રાગદ્વેષ રહિત બનીને માયા  
પ્રમાદથી પોતાની પ્રવૃત્તિને સુરક્ષિત રાખીને વારંવાર જન્મ મરણના દુઃખોને  
પ્રાપ્ત થવાની આશંકાથી ભયભીત બની સાંસારિક દુઃખોથી છુટકારો મેળવવા  
માટે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમાં સદા જાગરૂક રહે. આવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી જ  
પ્રાણી મરણથી છુટી શકે છે, અન્યથા નહિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥



છાયા—અપ્રમત્તઃ કામૈઃ, ઉપરતઃ પાપકર્મભ્યઃ, વીરો ગુપ્તાત્મા યઃ સ્વેદજ્ઞઃ ॥૮॥

ટીકા—યઃ સ્વેદજ્ઞઃ=સંસારિણાં દુઃસ્વાભિજ્ઞઃ, સ કામૈરપ્રમત્તઃ=કામભોગકૃત-પ્રમાદરહિતઃ, પાપકર્મભ્ય ઉપરતઃ=મનોવાકાયૈઃ સાવધવ્યાપારેભ્યો નિવૃત્તઃ, અતઃ વીરઃ=કર્મવિદારણસમર્થઃ, ગુપ્તાત્મા=આત્મરક્ષણપરાયણઃ આત્મોદ્ધારકારીત્યર્થઃ ॥૮॥

સ્વેદજ્ઞસ્ય ગુણમાહ—‘ જે પજ્જવજ્જાયસત્થસ્સ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જે પજ્જવજ્જાયસત્થસ્સ સ્વેયણ્ણે, સે અસત્થસ્સ સ્વેયન્ને, જે અસત્થસ્સ સ્વેયણ્ણે, સે પજ્જવજ્જાયસત્થસ્સ સ્વેયન્ને ॥૯॥

છાયા—યઃ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય સ્વેદજ્ઞઃ, સઃ અશસ્ત્રસ્ય સ્વેદજ્ઞઃ, યઃ અશસ્ત્રસ્ય સ્વેદજ્ઞઃ, સ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય સ્વેદજ્ઞઃ ॥ સૂ. ૯ ॥

ફિર ખી કહતે હૈં—‘ અપ્પમત્તો ’ ઇત્યાદિ ।

જો સંસારી જીવોંકે દુઃસ્વોંકા જ્ઞાતા હૈં વહ કામભોગજન્ય પ્રમાદસે રહિત હોકર મન વચન ઓર કાયસે હોનેવાલે સાવધ વ્યાપારોંસે દૂર રહતા હુઆ કર્મોંકે નાશ કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈં, યહી આત્મરક્ષા હૈં । ઇસ અપની રક્ષા કરને મેં વહ તત્પર રહતા હૈં, અર્થાત્ અપની આત્માકા ઉદ્ધાર કરનેવાલા હોતા હૈં ॥ સૂ. ૮ ॥

જો ઇસ પ્રકારસે નિષ્ણાત બન જાતા હૈં ઉસે ક્યા લાભ હોતા હૈં ? સો બતાતે હૈં—‘ જે પજ્જવજ્જાયં ’ ઇત્યાદિ ।

‘ પર્યવ ’ શબ્દકા અર્થ—શબ્દાદિ વિષયોંકે ભેદ-પ્રકાર, ‘ શસ્ત્ર ’ શબ્દકા અર્થ—પ્રાણિપીડનાદિ સાવધકર્મ, ‘ સ્વેદજ્ઞ ’ શબ્દકા અર્થ—પ્રાણિયોંકે સાવધક્રિયાજન્ય દુઃસ્વોંકા જ્ઞાતા, હોતા હૈં ।

ફરીથી કહે છે—‘ અપ્પમત્તો ’ ઇત્યાદિ.

જે સંસારી જીવોના દુઃખોનો જ્ઞાતા છે તે કામભોગજન્ય પ્રમાદથી રહિત બનીને મન વચન અને કાયથી બનનારા સાવધ વ્યાપારોથી દૂર રહીને કર્મોનો નાશ કરવામાં સમર્થ થાય છે. તે જ આત્મરક્ષા છે. આ પોતાની રક્ષા કરવામાં તત્પર રહે છે, અર્થાત્ પોતાના આત્માનો ઉદ્ધાર કરવાવાળો થાય છે. ॥ સૂ. ૮ ॥

જે આવા પ્રકારથી નિષ્ણાત બની જાય છે તેને શું લાભ થાય છે ? તે બતાવે છે—‘ જે પજ્જવજ્જાયં ’ ઇત્યાદિ.

‘ પર્યવ ’ શબ્દનો અર્થ—શબ્દાદિક વિષયોના ભેદ-પ્રકાર, ‘ શસ્ત્ર ’ શબ્દનો અર્થ—પ્રાણિપીડનાદિ સાવધ કર્મ, ‘ સ્વેદજ્ઞ ’ શબ્દનો અર્થ—પ્રાણિયોના સાવધ ક્રિયાજન્ય દુઃખોનો જ્ઞાતા, થાય છે.

टीका—यः पर्यवजातशस्त्रस्य-पर्यवाः=शब्दादिविषयप्रकाराः तेषु=तन्निमित्तं जातं शस्त्रं=पर्यवजातशस्त्रं=शब्दादिविषयविशेषोपभोगार्थं यत् प्राणिनां पीडनादिरूपं सावद्यकर्म, तस्य खेदज्ञः=सावद्यक्रियासमुत्पादितप्राणिदुःखाभिज्ञः, सः अशस्त्रस्य=निरवद्यक्रियारूपस्य संयमस्य खेदज्ञः=अभ्यासज्ञः, संयमाराधने यावदधिकदुःखसहनं तावदधिककर्मनिर्जरा भवतीत्यभिज्ञातेत्यर्थः। यश्चाशस्त्रस्य=संयमस्य खेदज्ञः, स पर्यवजातशस्त्रस्यापि खेदज्ञः।

भावार्थ—संसारी जीव शब्दादिक पांच इन्द्रियोंके विषयोंका उपभोग करनेकी लालसाके अधीन बनकर ही अपनी प्रवृत्तिको असंयमित बनाते हैं। उनकी इस असंयमित प्रवृत्तिसे त्रस-स्थावर प्राणियोंको अनेक प्रकारके कष्ट भोगने पड़ते हैं। असंयमी जीवोंकी अनर्गल प्रवृत्ति ही अन्य जीवोंके लिये अनेक प्रकारके कष्टोंको देनेवाली होती है। संयमी जीव इस बातका सदा विशेष ध्यान रखता है कि कहीं मेरी प्रवृत्तिसे प्राणियोंको दुःख न पहुँचे। इसलिये वह अपनी प्रवृत्तिको इतनी संयमित रखता है कि कोई भी प्राणी उससे दुःखी नहीं हो पाता। वह अपनी इस प्रकारकी प्रवृत्तिको उत्तरोत्तर बढ़ानेका इतना अधिक से अधिक अभ्यास करता है कि यह कभी न कभी वीतराग पदका धारक हो जाता है। वह जानता है कि मैं संयमके आराधनमें जितने अधिक दुःखोंको सहूँगा उतनी ही अधिक मेरे कर्मोंकी निर्जरा होगी, यही वीतरागपद तक पहुँचनेकी उत्तम सीढ़ी है। इस प्रकार जो निरवद्य क्रिया

भावार्थ—संसारी જીવ શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોના ઉપભોગ કરવાની લાલસાને આધીન બનીને જ પોતાની પ્રવૃત્તિને અસંયમિત બનાવે છે. તેની આ અસંયમિત પ્રવૃત્તિથી ત્રસ સ્થાવર પ્રાણીઓને અનેક પ્રકારના કષ્ટ ભોગવવા પડે છે. અસંયમી જીવોની સ્વચ્છંદ પ્રવૃત્તિ જ અન્ય જીવો માટે અનેક પ્રકારના કષ્ટોને દેવાવાળી બને છે. સંયમી જીવ આ બાબતનું સદા વિશેષ ધ્યાન રાખે છે કે કદાચ મારી પ્રવૃત્તિથી પ્રાણીઓને દુઃખ ન પહોંચે. તેટલા માટે તે પોતાની પ્રવૃત્તિને આટલી સંયમિત રાખે છે કે કોઈપણ પ્રાણી તેનાથી દુઃખી થતો નથી. તે પોતાની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિને ઉત્તરોત્તર વધારવાનો એટલો અધિકથી અધિક અભ્યાસ કરે છે કે તે કોઈને કોઈ વખત વીતરાગપદનો ધારક બને છે, તે બધું છે કે હું જેટલું સંયમ આરાધનમાં દુઃખ સહત કરીશ તેટલી જ મારે કર્મોની નિર્જરા થશે, આજ વીતરાગપદ સુધી પહોંચવાની ઉત્તમ સીડી છે. આ પ્રકારે જે નિરવધક્રિયારૂપ સંયમનો અભ્યાસ કરવામાં કર્મઠ-કુશળ છે તે



અર્થ ભાવ:—યોડનુકૂલપ્રતિકૂલશબ્દાદિવિષયપ્રાપ્તિપરિહારાર્થ સાવચકર્માનુ-  
ષ્ઠાનં શસ્ત્રરૂપં વેત્તિ સ સંયમમપિ સર્વજીવોપકારકમશસ્ત્રરૂપં જાનાતિ । શસ્ત્રાશસ્ત્રરૂ-  
પતાં વિદંસ્તત્ર નિવર્તતે પ્રવર્તતે ચ । સકલસાવચવ્યાપારેભ્યો નિવૃત્ત્યા સંયમારાધને  
પ્રવૃત્ત્યા ચ મુનેઃ કર્મક્ષયો ભવતીતિ ।

યદ્વા—યઃ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય=પર્યવજાતસ્ય=શબ્દાદિપર્યાયજનિતસ્યાષ્ટવિધકર્મણઃ  
શસ્ત્રં=તપઃ તદ્દહનજનકત્વાત્, તસ્ય યઃ સ્વેદઙ્ગઃ, સોડશસ્ત્રસ્ય સંયમસ્યાપિ સ્વેદઙ્ગઃ ।

રૂપ સંયમકે અભ્યાસ કરનેમેં કર્મઠ-કુશલ-હૈ વહ જિન ૨ કાર્યોંસે  
પ્રાણિયોંકે પ્રાણોંકો કષ્ટ પહુંંચે એસી સાવચ ક્રિયાઓંસે સદા વિરક્ત  
હી રહતા હૈ ।

વિસ્તરાર્થ—જો અનુકૂલ ઓર પ્રતિકૂલ શબ્દાદિક વિષયોંકી પ્રાપ્તિ  
એવં પરિહારકે લિયે સાવચ ક્રિયાકો શસ્ત્રરૂપ માનતા હૈ, વહ યહ ભી  
સમજતા હૈ કિ સંયમ સર્વ જીવોંકા ઉપકારક હોનેસે અશસ્ત્રરૂપ હૈ । ઇસ  
પ્રકાર વહ સાવચ ક્રિયામેં શસ્ત્રરૂપતા ઓર સંયમમેં અશસ્ત્રરૂપતા જાન  
કર અશસ્ત્રરૂપ સંયમમેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ ઓર શસ્ત્રરૂપ સાવચ ક્રિયાઓંકે  
અનુષ્ઠાનસે વિરક્ત હોતા હૈ । યહ માની હુઈ બાત હૈ કિ-મુનિકે, કર્મોંકા  
નાશ સકલ સાવચ વ્યાપારોંકી નિવૃત્તિસે ઓર સંયમકી આરાધનામેં  
પ્રવૃત્તિ કરનેસે હી હોતા હૈ ।

અથવા—‘પર્યવ’ શબ્દકા અર્થ-‘શબ્દાદિ પર્યાય’ હૈ, ‘જાત’ શબ્દ કા  
અર્થ-‘ઉત્પન્ન’ હૈ, ‘શસ્ત્ર’ શબ્દકા અર્થ ‘તપ’ હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ-  
શબ્દાદિ પર્યાયોંસે ઉત્પન્ન હોનેવાલે આઠ પ્રકારકે કર્મોંકા શસ્ત્ર તપ હૈ,

જે જે કાર્યોંથી પ્રાણીઓના પ્રાણોંને કષ્ટ પહોંચે એવી સાવચ ક્રિયાઓંથી સદા  
વિરક્ત જ રહે છે.

વિસ્તરાર્થ—જે અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ શબ્દાદિક વિષયોંની પ્રાપ્તિ તેમજ  
પરિહાર માટે સાવચ ક્રિયાને શસ્ત્રરૂપ માને છે તે એ પણ સમજે છે કે સંયમ  
સર્વ જીવોંનો ઉપકારક હોવાથી અશસ્ત્રરૂપ છે, આ પ્રકારે તે તેમાં શસ્ત્ર અને  
અશસ્ત્રરૂપતા જાણીને અશસ્ત્રરૂપ સંયમમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, અને શસ્ત્રરૂપ સાવચ  
ક્રિયાઓંના અનુષ્ઠાનથી વિરક્ત થાય છે. એ માનેલી વાત છે કે મુનિને કર્મોંનો  
નાશ સકલ સાવચ વ્યાપારોંની નિવૃત્તિથી અને સંયમની આરાધનામાં પ્રવૃત્તિ  
કરવાથી જ થાય છે.

અથવા—‘પર્યવ’ શબ્દનો અર્થ શબ્દાદિ પર્યાય છે; ‘જાત’ શબ્દનો  
અર્થ ‘ઉત્પન્ન’ છે. ‘શસ્ત્ર’ શબ્દનો અર્થ ‘તપ’ છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે  
શબ્દાદિ પર્યાયોંથી ઉત્પન્ન હોવાવાળા આઠ પ્રકારના કર્મોંનું શસ્ત્ર તપ છે, કારણ



યોઽશસ્ત્રસ્ય સ્વેદજ્ઞઃ, સ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્યાપિ સ્વેદજ્ઞઃ । સંયમતપઃસ્વેદજ્ઞસ્યાસ્રવનિરો-  
ધાદનાદિભવોપાર્જિતકર્મણાં ક્ષયો ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

સ્વેદજ્ઞસ્ય મુનેઃ કર્મક્ષયાત્ કિં ફલં ભવતીત્યાહ-‘અકમ્મસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-અકમ્મસ્સ વ્યવહારો ન વિજ્ઞઙ્, કમ્મુણા ઉવાહી  
જાયઙ્ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા-અકર્મણો વ્યવહારો ન વિદ્યતે । કર્મણા ઉપાધિર્જાયતે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા-અકર્મણઃ=અષ્ટવિધકર્મરહિતસ્ય વ્યવહારઃ=નારકતિર્યગ્દેવમનુષ્યાદિ-  
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ કર્મબન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશભાગ્ ભવતી-  
ક્યોં કિ તપ કર્મોંકો જલા કર નાશ કર દેતા હૈ । ઇસ શસ્ત્ર-તપ-કા જો  
સ્વેદજ્ઞ-જાનકાર હૈ વહ મુનિ અશસ્ત્ર-સંયમ-કા મી જાનકાર હૈ । જો  
અશસ્ત્ર-સંયમકા જાનકાર હૈ વહ શબ્દાદિપર્યાયજનિત આઠ પ્રકારકે  
કર્મોંકે વિનાશ કરવાલે શસ્ત્ર-તપ-કા મી જાનકાર હૈ । ઇન દોનોંકો  
જાનનેવાલે મુનિ કે આશ્રવકા નિરોધ હોનેસે અનાદિ ભવોંસે સંચિત  
કર્મોંકા ક્ષય હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

સ્વેદજ્ઞ મુનિકો કર્મોંકા ક્ષય હોનેસે ક્યા લાભ હોતા હૈ ? ઇસકા  
ખુલાસા કરતે હૈ-‘અકમ્મસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

‘અકર્મણઃ વ્યવહારો ન વિદ્યતે’ જો આઠ પ્રકારકે કર્મોંસે રહિત  
હો જાતા હૈ ઉસકે ચારોં પ્રકારકી ગતિયોંકે સર્વથા અભાવ હો જાનેસે  
ઉસકે લિયે નારક, તિર્યચ્ચ, મનુષ્ય ઓર દેવ, ઇત્યાદિ શબ્દોંકા વ્યવ-

કે તપ કર્મોંનિ બાળીને નાશ કરી નાંખે છે. આ શસ્ત્ર-તપનો જે ખેદજ્ઞ બાણકાર છે  
તે મુનિ અશસ્ત્ર-સંયમનો પણ બાણકાર છે, જે અશસ્ત્ર-સંયમનો બાણકાર છે તે  
શબ્દાદિપર્યાયજનિત આઠ પ્રકારના કર્મોંનો વિનાશ કરવાવાળા શસ્ત્ર-તપનો  
પણ બાણકાર છે. એ બન્નેને બાણવાળા મુનિના આશ્રવનો નિરોધ હોવાથી  
અનાદિ ભવોંથી સંચિત કર્મોંનો ક્ષય થાય છે ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ખેદજ્ઞ મુનિને કર્મોંનો ક્ષય થવાથી શું લાભ થાય છે ? તેનો ખુલાસો કરે  
છે-‘અકમ્મસ્સ’ ઇત્યાદિ.

‘અકર્મણઃ વ્યવહારો ન વિદ્યતે’ જે આઠ પ્રકારના કર્મોંથી રહિત થાય છે  
તેને ચારે પ્રકારની ગતિઓનો સર્વથા અભાવ થઈ જવાથી નારક તિર્યચ્ચ મનુષ્ય  
અને દેવ, ઇત્યાદિ શબ્દોંનો વ્યવહાર થતો નથી. આ પ્રકારના વ્યવહારનું કારણ

ત્યાહ-‘કર્મણા’ इत्यादि । उपाधीयते व्यपदिश्यते येन स उपाधिः=विशेषणम्, यद्वा-उपाधिः=संसारपरिभ्रमणरूपः, कर्मणा=ज्ञानावरणीयादिना जायते । जीवस्य यावत् कर्मसंबन्धस्तावदुपाधिर्जायते-इत्यर्थः ।

उपाधिस्त्रिधा-आत्मशरीरकर्मभेदात् । तत्रात्मोपाधिः-आत्मनो दुष्पयुक्तत्वम्, ततः कर्मोपाधिर्जायते । स एव शरीरोपाधित्वेन व्यपदिश्यते । नारकादिशरीरो-  
हार नहीं होता है । इस प्रकारके व्यवहारका कारण कर्मबन्ध था, वह उसका नष्ट हो चुका है । कर्मबन्धसहित जीवके लिये ही यह व्यवहार घटित होता है, उससे रहित जीवके लिये नहीं । ‘उपाधि’ शब्दका अर्थ विशेषण है, कर्मबन्धसहित जीवके ही नारकी, मनुष्य आदि विशेषण संगत बैठते हैं । क्यों कि मनुष्यगति-नामकर्मके उदयसे जीव मनुष्य-विशेषणवाला होता है, नरकगति-नामकर्मके उदयसे जीव ‘नारकी’ इस विशेषणवाला होता है, इत्यादि । तात्पर्य यह कि-कर्मबन्धसहित जीवके तत्तत्कर्मोदयमें तत्तद्व्यपदेशता घटित होती है । अथवा संसारपरिभ्रमणका नाम भी उपाधि है । यह संसारपरिभ्रमणरूप उपाधि ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंके संबन्धसे ही जीवको प्राप्त होती है । जीवको जब तक कर्मका सम्बन्ध रहता है तब तक ही उपाधिका सद्भाव रहता है ।

आत्मा शरीर और कर्मके भेदसे उपाधि तीन प्रकारकी है । अशुभ वृत्ति-खोटा प्रणिधान आत्माकी उपाधि है । आत्मा जब अशुभ क्रियाओंमें प्रवृत्ति करता है या अशुभ प्रणिधानवाला

કર્મબંધ હતું તે તેને નાશ થઈ ચુકેલ છે. કર્મબંધસહિત જીવનો જ આ વ્યવહાર ઘટિત થાય છે. તેનાથી રહિત જીવનો નહિ.

‘ઉપાધિ’ શબ્દનો અર્થ વિશેષણ છે. કર્મબંધસહિત જીવને જ નારકી, મનુષ્ય આદિ વિશેષણ સંગત બેસે છે, કારણ કે મનુષ્યગતિ-નામકર્મના ઉદયથી જ મનુષ્યવિશેષણવાળા થાય છે, નરકગતિ-નામકર્મના ઉદયથી જ ‘નારકી’ એવા વિશેષણવાળા થાય છે, ઇત્યાદિ. તાત્પર્ય એ કે-કર્મબંધસહિત જીવને તત્તત્કર્મોદયમાં તત્તદ્વ્યપદેશતા ઘટિત થાય છે. અથવા સંસારપરિભ્રમણનું નામ પણ ઉપાધિ છે. આ સંસારપરિભ્રમણરૂપ ઉપાધિ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સંબંધથી જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. જીવને જ્યાં સુધી કર્મનો સંબંધ રહે છે ત્યાં સુધી જ ઉપાધિનો સદ્ભાવ રહે છે.

આત્મા, શરીર અને કર્મના ભેદથી ઉપાધિ ત્રણ પ્રકારની છે. અશુભવૃત્તિ-ખોટા પ્રણિધાન-વિચાર આત્માની ઉપાધિ છે. આત્મા જ્યારે અશુભ ક્રિયાઓમાં



પાધિના નારકાદિરિત્યુચ્યતે, યથા-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણઃ સદ્ભાવાત્ સંસારિષુ ક-  
શ્ચિન્મતિશ્રુતાવધિમનઃપર્યયવાન, કશ્ચિન્મન્દમતિઃ, કશ્ચિચ્છુદર્શની કશ્ચિદચ્છુદર્શની,  
કશ્ચિત્ સુખી કશ્ચિદ્દુઃખી, કશ્ચિન્મિથ્યાદૃષ્ટિઃ કશ્ચિત્ સમ્યગ્દૃષ્ટિરિત્યાદિવ્યવહારો  
ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

હોતા હૈ તબ હસકે કર્મરૂપ ઉપાધિ હોતી હૈ । હસસે હી જીવ શરીર  
ઉપાધિવાલા હોતા હૈ । કર્મ-ઉપાધિસે હી જીવોંકો શરીર-ઉપાધિ  
પ્રાપ્ત હોતી હૈ । અશરીરીકે કોઈ ઉપાધિ નહીં હોતી । નારક આદિ શરી-  
રકી ઉપાધિસે જીવ નારક આદિ નામોંસે વ્યવહત હોતા હૈ । ઉસ-ઉસ  
શરીરકી ઉપાધિસે જીવ ઉસ-ઉસ નામવાલા, યા ઉસ-ઉસ પર્યાયવાલા  
હોતા હૈ । જૈસે-જવ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મકે સદ્ભાવસે સંસારી જીવોંમેં  
કોઈ મતિશ્રુતજ્ઞાની, કોઈ મતિશ્રુતઅવધિજ્ઞાની, કોઈ મતિ, શ્રુત,  
અવધિ, ઔર મનઃપર્યયજ્ઞાની હોતા હૈ, કોઈ મન્દબુદ્ધિ હોતા હૈ; કોઈ  
ચક્ષુદર્શનવાલા, કોઈ અચક્ષુદર્શનવાલા, કોઈ સુખી, કોઈ દુઃખી, કોઈ  
મિથ્યાદૃષ્ટિ ઔર કોઈ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોતા હૈ તબ ઉનમેં 'યહ મતિશ્રુતજ્ઞાની  
હૈ, યહ મતિશ્રુતઅવધિજ્ઞાની હૈ, યહ મતિ-શ્રુત-અવધિ-મનઃપર્યયજ્ઞાની  
હૈ, યહ ચક્ષુદર્શની હૈ, યહ અચક્ષુદર્શની હૈ, યહ સુખી હૈ, યહ દુઃખી હૈ,  
યહ મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ ઔર યહ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ' ઇત્યાદિ વ્યવહાર  
હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

પ્રવૃત્તિ કરે છે અગર અશુભ પ્રણિધાનવાળા થાય છે ત્યારે તેને કર્મરૂપ ઉપાધિ થાય  
છે, તેનાથી જીવ શરીરઉપાધિવાળા થાય છે. કર્મઉપાધિથી જ જીવોને શરીર-  
ઉપાધિ પ્રાપ્ત થાય છે. અશરીરીને કોઈ ઉપાધિ હોતી નથી. નારક આદિ શરીરની  
ઉપાધિથી જીવ નારક આદિ નામોથી વ્યવહત થાય છે. તે તે શરીરની ઉપાધિથી  
જીવ તે તે નામવાળા અગર તે તે પર્યાયવાળા બને છે. જેવી રીતે જ્ઞાનાવરણીયાદિ  
કર્મના સદ્ભાવથી સંસારી જીવોમાં જ્યારે કોઈ મતિ શ્રુત અને મનઃપર્યવજ્ઞાની  
થાય છે. કોઈ મન્દબુદ્ધિ હોય છે. કોઈ ચક્ષુદર્શનવાળા કોઈ અચક્ષુદર્શનવાળા,  
કોઈ સુખી કોઈ દુઃખી, કોઈ મિથ્યાદૃષ્ટિ અને કોઈ સમ્યગ્દૃષ્ટિ થાય છે ત્યારે  
તેમાં 'આ મતિશ્રુતજ્ઞાની છે, આ મતિ-શ્રુત-અવધિજ્ઞાની છે, આ મતિશ્રુત-અવધિ-  
મનઃપર્યવજ્ઞાની છે, આ ચક્ષુદર્શની છે, આ અચક્ષુદર્શની છે, આ સુખી છે,  
આ દુઃખી છે, આ મિથ્યાદૃષ્ટિ છે, અને આ સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે' ઇત્યાદિ વ્યવહાર  
થાય છે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥



યદ્યેવં ભવતિ, તર્હિ મુનિના કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘કમ્મં ચ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્=કમ્મં ચ પડિલેહાણ, કમ્મમૂલં ચ જં ય્વણં ॥૧૧॥

છાયા—કર્મ ચ પ્રતિલેખ્ય, કર્મમૂલં ચ યત્ ક્ષણમ્ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ટીકા—કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ, યદ્વા—પ્રકૃતિસ્થિત્યાદિબન્ધ, પ્રતિલેખ્ય=સંસારસ્ય કારણમિતિ પર્યાલોચ્ય કર્મમૂલં=પ્રાણિષુ સાવચ્છવ્યાપારકરણં રાગદ્વેષમોહરૂપં વા કર્મણઃ કારણમિતિ ચ પર્યાલોચ્ય યત્ ક્ષણં=ક્ષણનં—હિંસનં—પ્રાણાતિપાતાદિ, તત્ પરિત્યજેદિત્યર્થઃ । ઉક્તञ્ચ—

યદિ એસા હૈ તો મુનિકો ક્યા કરના ચાહિયે ? સો કહતે હૈ—  
‘કમ્મં ચ’ ઇત્યાદિ ।

જવ યહ નિશ્ચિત હો ચુકા કિ કર્મરૂપ ઉપાધિસે હી જીવોંમેં નારકાદિ વ્યવહાર હોતા હૈ તો મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકો, અથવા ઉનકે પ્રકૃતિબન્ધ, સ્થિતિબન્ધ આદિ બન્ધોંકો સંસારકા કારણ જાનકર કર્મોંકે મૂલ કારણ સાવચ્છ વ્યાપારકો, અથવા રાગ દ્વેષ મોહકો જાન કર પ્રાણાતિપાતાદિક જો કાર્ય હૈ ઉનકા સર્વથા પરિત્યાગ કરે ।

ભાવાર્થ—જીવોંમેં નારકાદિ વ્યવહાર કર્મકૃત હૈ, કર્મ સંસારકા કારણ હૈ । કર્મ જીવોંકી શુભાશુભરૂપ પ્રવૃત્તિસે ઉત્પન્ન હોતે હૈ । અશુભાદિ કર્મોં સે નારકાદિ વ્યવહાર હોતા હૈ । અશુભાદિ કર્મોંકા મૂલ કારણ હિંસાદિ પાપ યા રાગ દ્વેષ ઓર મોહ હૈ । ઇસ લિએ જ્ઞાની મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઉનકે મૂલ કારણોંકા સર્વથા ત્યાગ કરે । કહા મી હૈ—

ને આમ જ હોય તો મુનિએ શું કરવું બેઠએ ? તે કહે છે—‘કમ્મં ચ’ ઇત્યાદિ.

ન્યારે એ નિશ્ચય થયો કે કર્મરૂપ ઉપાધિથી જ જીવોમાં નારકાદિ વ્યવહાર થાય છે તો મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંને અથવા તેના પ્રકૃતિબન્ધ, સ્થિતિબન્ધ આદિ બન્ધોંને સંસારનું કારણ બાણીને તે કર્મોંનું મૂલ કારણ સાવચ્છ વ્યાપારને, અને રાગદ્વેષ મોહને બાણીને પ્રાણાતિપાતાદિક જે કાર્ય છે તેનો સર્વથા પરિત્યાગ કરે.

ભાવાર્થ—જીવોમાં નારકાદિ વ્યવહાર કર્મકૃત છે, કર્મ સંસારનું કારણ છે. કર્મ જીવોની શુભાશુભરૂપ પ્રવૃત્તિથી ઉત્પન્ન થાય છે. અશુભાદિ કર્મોંથી નારકાદિ વ્યવહાર થાય છે. અશુભાદિ કર્મોંનું મૂળ કારણ હિંસાદિ પાપ, અથવા રાગદ્વેષ અને મોહ છે. માટે જ્ઞાની મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે તેના મૂળ કારણનો સદા ત્યાગ કરે. કહ્યું છે—

“कर्मणो जायते कर्म, ततः संजायते भवः ।

भवाच्छरीरदुःखं च, ततश्चान्यतरो भवः” ॥१॥ इति ॥ सू० ११ ॥

अपरं च मुनिकर्तव्यमाह—‘पडिलेहिय’ इत्यादि ।

मूलम्—पडिलेहिय सव्वं समायाय दोहिं अंतोहिं अदि-  
स्समाणे ॥ सू० १२ ॥

छाया—प्रतिलेख्य सर्व समादाय द्वाभ्यामन्ताभ्यामदृश्यमानः ॥ सू० १२ ॥

टीका—प्रतिलेख्य=कर्मस्वरूपं पर्यालोच्य सर्वम्=सर्वज्ञप्रणीतमुपदेशं संयमं  
वा समादाय=गृहीत्वा अन्ताभ्याम्=अन्तकृद्भ्यां-कारणे कार्योपचारात्, आत्मनो  
ज्ञानादिगुणविधातकाभ्यां द्वाभ्यां=रागद्वेषाभ्याम् अदृश्यमानः=अनुपलक्ष्यमाणो  
वीतराग शब्दव्यपदेश्यो भवति ॥ सू० १२ ॥

“कर्मणो जायते कर्म, ततः संजायते भवः ।

भवाच्छरीरं दुःखं च, ततश्चान्यतरो भवः ॥१॥ ” इति ।

जीवोंको कर्मसे ही कर्मका बन्ध होता है। उससे भव-संसार होता है। भवसे शरीर, शरीरसे दुःख और दुःखोंसे फिर अन्य भव उन्हें मिलता रहता है ॥ १ ॥ सू० ११ ॥

फिर भी मुनिके कर्तव्य को कहते हैं—‘पडिलेहिय’ इत्यादि ।

कर्म के स्वरूपकी पर्यालोचना करके सर्वज्ञकथित उपदेशको अर्थात् संयमको ग्रहण कर आत्माके ज्ञानादिगुणोंके विधातक राग और द्वेष से रहित होता हुआ मुनि-आत्मा वीतराग शब्दका वाच्य हो जाता है ।

भावार्थ—मुनिके अन्य कर्तव्य को प्रकट करनेके लिये सूत्रकार कहते हैं कि—वह कर्मके स्वरूपका विचार करे। कर्म के स्वरूपका विचार करनेसे

“कर्मणो जायते कर्म, ततः संजायते भवः ।

भवाच्छरीरं दुःखं च, ततश्चान्यतरो भवः ॥१॥ ” इति ।

જીવોને કર્મથી જ કર્મનો બંધ થાય છે. તેથી ભવ-સંસાર થાય છે. ભવથી શરીર, શરીરથી દુઃખ અને દુઃખોથી વળી અન્યભવ તેને મળતો રહે છે ॥ સૂ. ૧૧ ॥

વળી પણ મુનિના કર્તવ્ય બાબત કહે છે—‘પડિલેહિય’ ઇત્યાદિ.

કર્મના સ્વરૂપની પર્યાલોચના કરીને સર્વજ્ઞકથિત ઉપદેશને અર્થાત્ સંયમને ગ્રહણ કરી આત્માના જ્ઞાનાદિ ગુણોના વિધાતક રાગ અને દ્વેષથી રહિત બનીને મુનિ-આત્મા વીતરાગ શબ્દનો વાચ્ય થઈ જાય છે.

ભાવાર્થ—મુનિના બીજા કર્તવ્યને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—તે કર્મના સ્વરૂપનો વિચાર કરવાથી તેને તેવો દૃઢ વિશ્વાસ થઈ જશે કે આત્માના



મૂલમ્—તં પરિન્નાય મેહાવી વિજ્ઞાતા લોગં વંતા લોગસન્નં સે મહમં પરક્કમિજ્જાસિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

છાયા—તત્ પરિજ્ઞાય મેધાવી વિદિત્વા લોકં વાન્ત્વા લોકસંજ્ઞાં સ મતિમાન પરાક્રમેત—ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ટીકા—તત્=કર્મણઃ કારણં રાગદ્વેષરૂપં પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા કર્મબન્ધહેતું વિજ્ઞાય પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિત્યજ્ય લોકં વિષયકષાયવ્યામોહિતં સંસારિણં

उसे यह दृढ़ विश्वास हो जावेगा कि—आत्माके ज्ञानादिक गुणोंका घातक यदि कोई हैं तो ये कर्म ही हैं, रागद्वेषको जो ज्ञानादिक गुणोंका घातक सूत्रकारने प्रकट किया है वह कारणमें कार्यके उपचारसे किया है । क्योंकि राग-द्वेषसे जीवोंके नवीन कर्मोंका बन्ध होता है, अतः राग द्वेष उनके बन्धमें कारण हैं, और कर्मोंका बन्ध कार्य है । इन कर्मोंका अभाव जब तक सर्वज्ञ प्रभुके उपदेशानुसार जीव अपनी प्रवृत्ति नहीं बनायेगा तब तक नहीं कर सकता, अर्थात् संयमकी आराधना बिना इनका अभाव नहीं हो सकता । यदि उसे वीतराग बनना है तो उसका कर्तव्य है कि वह राग द्वेषका अन्त करनेके लिये उक्त विधिका पालन करे ॥सू० १२॥

इसी बातको सूत्रकार फिर पुष्ट करते हैं—‘तं परिन्नाय’ इत्यादि ।

સાધુ કર્મોંકે બન્ધમેં મૂલ કારણ રાગ દ્વેષકો જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાન કર ઔર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઁનકા ત્યાગ કરે । ‘સમસ્ત સંસારી જીવ વિષય-કષાયોંસે વ્યામોહિત હો રહે હૈં ઁસ લિયે ઁન વિષયોંકી વાંછાકો

ज्ञानादिक गुणोना घातक जे कोइ होय तो ते कर्म न छे. राग द्वेषने जे ज्ञानादिक गुणोना घातक सूत्रकारे प्रकट कर्या छे ते कारणमां कार्यना उपचारथी करेन छे. कारण के राग-द्वेषथी लोवने नवीन कर्मोना अंध थाय छे, भाटे राग-द्वेष तेना अंधमां कारण छे, अने कर्मोना अंध कार्य छे. ते कर्मोना अभाव ज्यां सुधी सर्वज्ञ प्रभुना उपदेशानुसार लव पोतानी प्रवृत्ति नहि अनावे त्यां सुधी करी शकतो नथी, अर्थात् संयमनी आराधना बिना तेनो अभाव थय शकतो नथी, कदाच तेने वीतराग बनवानुं छे तो तेनुं कर्तव्य छे के ते राग द्वेषनो अंत करवा भाटे कडेली विधितुं पालन करे. ॥ सू० १२ ॥

આ વાતને સૂત્રકાર ફરીથી પુષ્ટ કરે છે—‘તં પરિન્નાય’ ઇત્યાદિ.

સાધુ કર્મોના અંધમાં મૂલ કારણ રાગ દ્વેષને જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે. ‘સમસ્ત સંસારી જીવ વિષય કષાયોથી વ્યામોહિત થઈ રહેલ છે ભાટે તેવા વિષયોની વાંછાને સદા દૂર કરવી જોઈએ.’



વિદિત્વા, લોકસંજ્ઞાં=વિષયવાઙ્છારૂપાં વાન્ત્વા=દૂરીકૃત્ય સ મતિમાન્=સાધુ-  
મર્યાદારક્ષણતત્પરઃ સન્ પરાક્રમેત=સંયમારાધને ઉદ્ધુક્તો ભવેત્ । યદ્વા-અષ્ટ-  
વિધં કર્મ ક્ષપયિતુમુત્સહેત । સંયમં ગૃહીત્વા ન પશ્ચાત્તાપમવલમ્બેત, સિંહત્વેન નિષ્ક્ર-  
મ્ય શૃગાલત્વેન ન વિહરેત્ । અત્ર ચતુર્ભજ્ઞી વાચ્યા । ઇતિ બ્રવીમિ પૂર્વવત્ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

તૃતીયાધ્યયનસ્ય પ્રથમોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૩-૧ ॥

સદા દૂર કરના चाहिये' ऐसा विचार कर उसका सदा परिहार करे,  
और मुनिपनेकी मर्यादाकी रक्षा करनेमें तत्पर वह मतिमान् मुनि संयम  
की आराधना करनेमें दत्तावधान रहे; क्योंकि संयमकी आराधनाके बिना  
कर्मोंका नाश नहीं हो सकता, इस लिये आठ कमका नाश करनेके  
अभिप्राय से संयमकी आराधना करे। संयमको ग्रहण कर फिर पश्चात्ताप  
न करे, अर्थात्-सिंहवृत्तिसे संयमकी आराधना करे किन्तु इसकी आरा-  
धनामें शृगालवृत्तिको स्थान न दे। यहां इस विषयमें चतुर्भज्जी समझनी  
चाहिये, वह इस प्रकार—

(१) सिंहवृत्तिसे निकले सिंहवृत्तिसे पाले । (२) सिंहवृत्तिसे निकले  
शृगालवृत्तिसे पाले । (३) शृगालवृत्तिसे निकले सिंहवृत्तिसे पाले ।  
(४) शृगालवृत्तिसे निकले शृगालवृत्तिसे पाले ।

इनमें पहला और तीसरा भंग श्रेष्ठ है ॥ 'इति ब्रवीमि' इसका  
अर्थ पहले कहा जा चुका है ॥ सू. १३ ॥

॥ तृतीय अध्ययनका प्रथम उद्देश समाप्त ॥ ३-१ ॥

એવો વિચાર કરી તેનો સદા પરિહાર કરે અને મુનિપણની મર્યાદાની રક્ષા કર-  
વામાં તત્પર તે મતિમાન્ મુનિ સંયમની આરાધના કરવામાં સાવધાન રહે;  
કારણ કે સંયમની આરાધના વિના કર્મોનો નાશ થઈ શકતો નથી, માટે આઠ  
કર્મોનો નાશ કરવાના અભિપ્રાયથી સંયમની આરાધના કરે, સંયમને ગ્રહણ કરી  
પછી પશ્ચાત્તાપ ન કરે, અર્થાત્ સિંહવૃત્તિથી સંયમની આરાધના કરે પણ તેની  
આરાધનામાં શિયાળવૃત્તિને સ્થાન ન આપે. આ ઠેકાણે આ વિષયમાં ચતુર્ભજી  
સમજવી જોઈએ. તે આ પ્રકારે—

(૧) સિંહવૃત્તિથી નિકળે, સિંહવૃત્તિથી પાળે. (૨) સિંહવૃત્તિથી નિકળે  
શૃગાલવૃત્તિથી પાળે. (૩) શૃગાલવૃત્તિથી નિકળે, સિંહવૃત્તિથી પાળે. (૪) શૃગાલ-  
વૃત્તિથી નિકળે, શૃગાલવૃત્તિથી પાળે.

તેમાં પહેલો અને ત્રીજો ભંગ ઉત્તમ છે. 'ઇતિ બ્રવીમિ' એનો અર્થ પહેલાં  
કહેવામાં આવેલ છે. ૧૩

ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રથમ ઉદ્દેશ સમાપ્ત ૩-૧.

## તૃતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ ॥

તૃતીયાધ્યયનસ્ય પ્રથમોદ્દેશકે ભાવસુપ્તાઃ પ્રતિબોધિતાઃ, અથ તેષાં સ્વાપસ્ય ફલં દુઃખં ભવતીત્યાવેદયિતું દ્વિતીયોદ્દેશકં પ્રસ્તુવન્નાહ—‘જાઈં ચ વુડ્ઢિં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જાઈં ચ વુડ્ઢિં ચ ઇહજ્જ પાસે, ભૂણ્હિં જાણે પહિ-  
લેહ સાયં । તમ્હાજ્જિતિવિજ્જો પરમંતિ ણચ્ચા, સમ્મત્તદંસી ન  
કરેહ પાવં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—જાર્તિં ચ વૃદ્ધિં ચ ઇહ અથ પશ્ય, ભૂતૈર્જાનીહિ પ્રતિલેખ્ય સાતમ્ ।  
તસ્માત્ અતિવિદ્યઃ પરમમ્ ઇતિ જ્ઞાત્વા, સમ્યક્ત્વદર્શી ન કરોતિ પાપમ્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—ઇહ=સંસારે અદ્યૈવ=અસ્મિન્નેવ દિવસે, અલં કાલક્ષણેનેતિ ભાવઃ;  
જાતિમ્=ગર્ભોત્પત્તિં વૃદ્ધિં=બાલાદિવૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તં વર્ધનં પ્રાણિનાં, પશ્ય=ગર્ભોત્પત્તિ-

## ત્રીસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ ॥

તૃતીય અધ્યયનકે પ્રથમ ઉદ્દેશમેં ભાવસુપ્ત પ્રાણિયોંકા નિરૂપણ  
અચ્છી તરહસે કિયા જા ચુકા હૈ । ઇસ દ્વિતીય ઉદ્દેશમેં યહ સમજાયા  
જાવેગા કિ ઉનકી ઇસ નિદ્રાકા ફલ ઉન્હેં દુઃખકે સિવાય કુછ નહીં  
હોતા હૈ । ઇસી વિષયકો સ્પષ્ટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર ઇસ દ્વિતીય ઉદ્દેશ  
કા પ્રારંભ કરતે હુણ પ્રથમ સૂત્ર કહતે હૈ—‘જાઈં ચ વુડ્ઢિં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્યકો સંબોધન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ હે શિષ્ય ! આજ  
હી તુમ ઇસ બાતકા જ્ઞાનદષ્ટિસે વિચાર કરો, કલ પરસોંકી બાત જાને  
દો, સમય બીતાનેસે કયા ફાયદા ? સંસારમેં પ્રાણિયોંકી ગર્ભોત્પત્તિસે

## ત્રીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ.

ત્રીજા અધ્યયનના પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુપ્ત પ્રાણીઓ વિષે સારી રીતે  
સમજાવેલ છે. આ બીજા ઉદ્દેશમાં એ સમજાવવામાં આવશે કે તેની આ નિદ્રાનું  
ફળ તેને દુઃખ સિવાય બીજું કંઈ થતું નથી. આ વિષયને સ્પષ્ટ કરવા માટે  
સૂત્રકાર આ બીજા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ કરીને પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—‘જાઈં ચ  
વુડ્ઢિં ચ ’ ઇત્યાદિ.

શિષ્યને સંબોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્ય ! આજ જ તમે  
આ બાબતનો જ્ઞાનદષ્ટિથી વિચાર કરો, કાલ પરમદિવસની વાત જવા દો. સમય  
વીતાવવામાં શું ફાયદો ? સંસારમાં પ્રાણીઓની ગર્ભોત્પત્તિથી લગાવી બાલાદિ-



વૃદ્ધિશ્ચ પ્રાણિનાં દુઃસ્વસહમાવિન્યેવ ભવતીતિ જ્ઞાનદૃષ્ટ્યાઽવલોકયેત્યર્થઃ । ઉક્તશ્ચ—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુહાઝ નિપ્પિહ્હ ૧ ।

માઝુણ અપ્પણોઽવિ અ વેઅણમઝલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ”

લગાકર બાલાદિ-વૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તકી સઘ અવસ્થાએ દુઃખોંકે સાથ ૨ હી રહનેવાળી હૈં । સંસારી પ્રાણીકી એસી કોઈં બી અવસ્થા નહીં હૈ જિસમેં દુઃખોંકા સમ્બન્ધ ન હો । ગર્ભમેં આના ઓર વહાં રહના યહ એક મહા દુઃસ્વમય હૈ । યહ પ્રાણી યેન કેન પ્રકારેણ વહાં સે સુરક્ષિત દશા મેં ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ ઓર બાલ-યુવા-વૃદ્ધાવસ્થા તક પહુંચ બી જાતા હૈ તો બી ઇન અવસ્થાઓમેં ઇસ જીવકો રંચમાત્ર બી સાતા નહીં મિલતી હૈ । દુઃખોંકે સિવાય યહાં સુખોંકા નામ બી નહીં હૈ । અતઃ ગર્ભોત્પત્તિ ઓર બાલાદિ વૃદ્ધાવસ્થા તક કી સમસ્ત દશાએ દુઃખોંકે સાથ ૨ હી રહને વાલી હૈં । અન્યત્ર બી યહી વાત કહી હૈ—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુહાઝ નિપ્પિહ્હ ૧ ।

માઝુણ અપ્પણોઽવિ ય, વેયણમઝલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

વૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તની સઘણી અવસ્થાઓ દુઃખોની સાથે ને સાથે રહેવાવાળી છે. સંસારી પ્રાણીની એક પણ અવસ્થા એવી નથી કે જેમાં દુઃખોનો સંબંધ ન હોય. ગર્ભમાં આવવું અને ત્યાં રહેવું એ એક મહાન દુઃખ છે. તે પ્રાણી કોઈ પકારે ત્યાંથી સુરક્ષિત દશામાં ઉત્પન્ન થઈ જાય છે અને બાળ-યુવા-વૃદ્ધાવસ્થા સુધી પહોંચી પણ જાય છે તો પણ આ અવસ્થાઓમાં આ જીવને ૨૪ માત્ર પણ સાતા મળતી નથી. દુઃખો સિવાય આંહી સુખોતું નામ પણ નથી. માટે ગર્ભોત્પત્તિ અને બાળાદિ વૃદ્ધાવસ્થા સુધીની સમસ્ત દશાઓ દુઃખોની સાથે જ રહેવાવાળી છે. અન્યત્ર પણ આ વાત કહેલ છે:—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુહાઝ નિપ્પિહ્હ ૧ ।

માઝુણ અપ્પણોઽવિ ય, વેયણમઝલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ



તથા—“ હીણભિષ્ણસ્સરો દીણો, વિવરીઓ વિચિત્તઓ ।

દુબ્બલો દુઃખિઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં ” ॥૩॥ इत्यादि ।

છાયા—જાયમાનસ્ય યદ્દુઃખં મ્રિયમાણસ્ય જન્તોઃ ।

તેન દુઃખેન સંતપ્તો ન સ્મરતિ જાતિમાત્મનઃ ॥ ૧ ॥

વિરસરસિતં રસન્ તતઃ સ યોનિમુખાદ નિસ્સરતિ ।

માતુરાત્મનોઽપિ ચ વેદનામતુલાં જનયન્ ॥ ૨ ॥

હીનમિન્નસ્વરો દીનો વિપરીતો વિચિત્તકઃ ।

દુર્બલો દુઃખિતો વસતિ સંપ્રાપ્તઃ ચરમાં દશામ્ ॥ ૩ ॥

તથા—“ હીણભિષ્ણસ્સરો દીણો, વિવરીઓ વિચિત્તઓ ।

દુબ્બલો દુઃખિઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં ” ॥૧॥ ” इति

ઉત્પન્ન હોનેવાલે એવં મરનેવાલે પ્રાણીકો જો દુઃખ હોતા હૈં ઉસ દુઃખસે સંતપ્ત બના હુઆ પ્રાણી અપની ઉત્પત્તિકા સ્મરણ તક નહીં કરતા ॥ ૧ ॥ जिस समय यह जीव योनिमुख-गर्भस्थानसे निकलता है उस समय बहुत बुरी तरहसे रोता है, क्योंकि कि उस समय वह अपनी माता के और अपने लिये अतुल-वर्णनातीत-वेदनाका कारण बनता है ॥२॥

તથા—ફિર વહ જબ વૃદ્ધાવસ્થામેં પહુંચતા હૈં તબ હીન બન જાતા હૈં । હસકા સ્વર અસ્પષ્ટ-ગરગર શબ્દવાલા હો જાતા હૈં, દશા હસકી દયનીય હો જાતી હૈં । તરુણાવસ્થામેં હસકી જો હાલત થી ઉસસે ભિન્ન હી હસકી હાલત હો જાતી હૈં । ચિત્ત ભી હસકા ટિકાને નહીં રહતા । ઉસ સમય યહ દુર્બલ ઓર સદા દુઃખિત હી રહા કરતા હૈં ॥ ૩ ॥

તથા—“ હીણભિષ્ણસ્સરો હીણો, વિવરીઓ વિચિત્તઓ ।

દુબ્બલો દુઃખિઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં ” ॥ ૩ ॥ इति ।

ઉત્પન્ન થનાર અને મરનાર પ્રાણીને જે દુઃખ થાય છે તે દુઃખથી સંતપ્ત બનેલ પ્રાણી પોતાની ઉત્પત્તિનું સ્મરણ પણ કરતો નથી ॥૧॥ જે વખતે આ જીવ યોનિમુખ-ગર્ભસ્થાનથી નીકળે છે તે સમય ઘણી જ બુરી રીતે રડે છે; કારણ કે તે વખત તે પોતાને માટે તેમ જ પોતાની માતા માટે અતુલ-વર્ણનાતીત-વેદનાનું કારણ બને છે ॥ ૨ ॥

તથા વળી તે જ્યારે વૃદ્ધાવસ્થામાં પહોંચે છે ત્યારે હીન બની જાય છે. તેનો સ્વર અસ્પષ્ટ-ગરગર શબ્દવાળો બની જાય છે. તેની દશા દયાજનક થઈ પડે છે તરુણ-અવસ્થામાં જે તેની હાલત હતી તે હાલતથી બીલકુલ ભિન્ન તેની હાલત થઈ જાય છે. ચિત્ત પણ તેનું ઠેકાણું રહેતું નથી. આ વખતે તે દુર્બળ અને સદા દુઃખી જ રહ્યા કરે છે. ॥ ૩ ॥

किञ्च—भूतैः=उच्चारादिचतुर्दशसु जीवोत्पत्तिस्थानेषु जातैर्भूतग्रामैः सह स्वात्मनः सातं=सुखं प्रतिलेख्य=पर्यालोच्य जानीहि । यथा तव सुखं प्रियमस्ति, तथाऽन्येषामपीति, यथा च तव दुःखे द्वेषः तथाऽन्येषामपीति ज्ञात्वा कस्यापि जीवस्य दुःखं नोत्पादनीयम्, एवं कृते दुःखं न प्राप्स्यसीति भावः ।

तस्मात्—प्राणिनां सुखदुःखपर्यालोचनात्, अतिविद्यः=अतीव विद्या यस्य सः अतिविद्यः=तत्त्वपरिच्छेदविद्याविभूषितः, परमं=परमश्रेयस्करं निर्वाणपदं तत्प्रापकं सम्यग्दर्शनादिकं वाऽस्ति, इति ज्ञात्वा सम्यक्त्वदर्शी=परमार्थदर्शी सन् पापं न करोति, सावद्यक्रियां न समाचरतीत्यर्थः ॥ सू० १ ॥

तथा हे शिष्य ! जीवोंकी उत्पत्तिके जो उच्चार ( विष्टा ) प्रस्रवण (मूत्र) आदि चौदह स्थान हैं उनमें उत्पन्न हुए जीवोंके साथ अपने सुख की पर्यालोचना करो, अर्थात् इस बातका सदा विचार करो कि जिस प्रकार सुख हमें प्रिय है उसी प्रकार अन्य जीवोंको भी वह प्रिय है, दुःख जिस प्रकार हमें अप्रिय-अनिष्ट है उसी प्रकार वह अन्य जीवोंको भी अनिष्ट है । ऐसा विचार कर या जानकर किसी को भी दुःख नहीं देना चाहिये । इस प्रकारसे विचार करने पर तुम स्वयं दुःख न पाओगे ।

इस प्रकार प्राणियों के सुख और दुःखकी पर्यालोचनासे वास्तविक तत्त्वका प्रकाशक ज्ञान जीवको प्राप्त होता है । उस ज्ञानसे युक्त वह मुक्तिपदको अथवा उसको प्राप्त करानेवाले सम्यग्दर्शनादिको परम-परमकल्याणकारी जानकर समदर्शी हो जाता है और सावद्य क्रियाओं को नहीं करता है ॥ सू० १ ॥

तथा हे शिष्य ! જીવોની ઉત્પત્તિના જે ઉચ્ચાર=વિષ્ટા પ્રસ્રવણ-મૂત્ર આદિ ચૌદ સ્થાન છે, તેમાં ઉત્પન્ન થયેલા જીવોની સાથે આપણા સુખની પર્યાલોચના કરો. અર્થાત્ એ વાતનો સદા વિચાર કરો કે જે પ્રકારે સુખ અમોને પ્રિય છે તે પ્રકારે અન્ય જીવોને પણ પ્રિય છે. દુઃખ જે પ્રકારે અમોને અપ્રિય-અનિષ્ટ છે તે પ્રકારે તે અન્ય જીવોને પણ અનિષ્ટ છે. એવો વિચાર કરી અગર બાણીને કોઈને પણ દુઃખ ન આપવું બેઈએ. આ પ્રકારનો વિચાર કરવાથી તમે સ્વયં દુઃખ પામશો નહિ.

આ પ્રકારે પ્રાણીઓના સુખ અને દુઃખોની પર્યાલોચનાથી વાસ્તવિક તત્ત્વનું પ્રકાશક જ્ઞાન જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. તે જ્ઞાનથી યુક્ત તે મુક્તિપદને અથવા તેને પ્રાપ્ત કરાવનાર સમ્યગ્દર્શનાદિને પરમ-પરમકલ્યાણકારી બાણીને સમદર્શી થઈ બચે અને સાવધ ક્રિયાઓ કરતા નથી ॥ સૂ. ૧ ॥



મૂલમ્—ઉમ્મુંચ પાસંં ઇહ મચ્ચિણ્ણિં આરંભજીવી ઉભયાણુ-  
પસ્સી । કામેસુ ગિદ્ધા નિચયં કરેંતિ, સંસિચ્ચમાણા પુણેંતિ  
ગઘ્મં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ઉન્મુશ્ચ પાશમ્ ઇહ મત્યૈઃ આરમ્ભજીવી ઉભયાનુદર્શી । કામેષુ ગૃદ્ધાઃ  
નિચયં કુર્વન્તિ, સંસિચ્ચમાનાઃ પુનર્યન્તિ ગર્ભમ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—‘ઉમ્મુંચ’ ઇત્યાદિ । ઇહ=મનુષ્યલોકે, મત્યૈઃ=મનુષ્યૈઃ સાકં, પાશં=  
બન્ધનહેતું કલત્રાદિસમ્બન્ધમ્, ગદ્ધા-પાશં દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધં, દ્રવ્યતો રજ્જ્વા-  
દિકં, ભાવતો વિષયકષાયાદિરૂપમ્, ઉન્મુશ્ચ=ઉત્-ઉત્કર્ષતઃ-અતિશયેન નિરાકુરુ ।  
પાશયુક્તો હિ કામભોગેચ્છયા પ્રાણિહિંસાદિકં કરોતીત્યાહ-‘આરમ્ભજીવી’ ઇત્યાદિ ।

‘ઉમ્મું ચ પાસં’ ઇત્યાદિ । ઇસ મનુષ્યલોકમેં મનુષ્યોંકે સાથ પાશ-  
-બન્ધનકે હેતુ પુત્રકલત્રાદિ સમ્બન્ધ-કા હે શિષ્ય ! તુમ સર્વથા પરિહાર  
કરો । અથવા દ્રવ્ય ઓર ભાવકે ભેદસે પાશ-બન્ધન દો પ્રકારકા હૈ । રસ્સી  
આદિ પદાર્થ દ્રવ્યસે, વિષયકષાયાદિક ભાવસે બન્ધન હૈ, ઇન દોનોં પ્રકાર  
કે બન્ધનોંકા સર્વથા ત્યાગ કરો ।

ભાવાર્થ—સંસારમેં જીવોંકે લિયે સબસે પ્રબલ બંધનકા કારણ પુત્ર-  
કલત્રાદિકા સમ્બન્ધ હૈ । આત્માર્થી ઇસ બન્ધનકે હેતુકા જવતક ત્યાગ નહીં  
કરતા તબ તક વહ આત્મકલ્યાણકે માર્ગપર આરુઢ નહીં હો સકતા, ઇસી-  
લિયે ઉસકા સર્વથા ત્યાગ કરનેકા યહાં ઉપદેશ દિયા ગયા હૈ । ઇસ પાશસે  
યુક્ત પ્રાણી કામભોગકી ઇચ્છાસે પ્રાણિહિંસાદિરૂપ આરંભોંકો કરતા હૈ ।

‘ઉમ્મુંચ પાસં’ ઇત્યાદિ. આ મનુષ્યલોકમાં મનુષ્યોની સાથે પાશ-બંધનના  
હેતુ પુત્રકલત્રાદિક સંબંધ-નો હે શિષ્ય ! તમે સર્વથા પરિત્યાગ કરો. અથવા દ્રવ્ય  
અને ભાવના ભેદથી પાશ-બંધન બે પ્રકારના છે. રસ્સી આદિ પદાર્થ દ્રવ્યથી, વિષય-  
કષાયાદિક ભાવથી બંધન છે. એ બંને પ્રકારના બંધનનો સર્વથા ત્યાગ કરો.

ભાવાર્થ—સંસારમાં જીવો માટે બંધાથી પ્રબળ બંધનનું કારણ પુત્રકલ-  
ત્રાદિકનો સંબંધ છે. આત્માર્થી આ બંધનના હેતુનો ન્યાં સુધી ત્યાગ નથી  
કરતો ત્યાં સુધી તે આત્મ-કલ્યાણના માર્ગ ઉપર આગળ વધી શકતો નથી.  
માટે તેનો સર્વથા ત્યાગ કરવાનો આ ઠેકાણે ઉપદેશ આપેલ છે. આ પાશથી  
યુક્ત પ્રાણી કામભોગની ઇચ્છાથી પ્રાણિહિંસાદિરૂપ આરંભો કરે છે.



યસ્તુ-આરમ્ભજીવી=આરમ્ભેણ જીવિતું શીલમસ્યેતિ સઃ, આરમ્ભપ્રકલ્પિત-જીવિકઃ, સ ઉમયાનુદર્શી=એહિકપારત્રિકદુઃસ્વભોગી ભવતીત્યર્થઃ ।

કામેષુ=વિષયોપભોગેષુ, ગૃદ્ધાઃ=લોલુપાઃ, નિચયમ્=અષ્ટવિધકર્મસંચયં કુર્વન્તિ । સંસિચ્યમાનાઃ=કામભોગાદિજન્યકર્મરજસા શ્લિષ્યમાણાઃ પુનઃ=વારં વારં ગમી-યન્તિ=ઉપયાન્તિ, સંસારચક્રે ઘટીયન્ત્રવદ્ બ્રામ્યન્તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

મૂલમ્-અવિ સે હાસમાસજ્જ, હંતા નંદીતિ મન્નઇ ।

અલં વાલસ્સ સંગેણ, વેરં વડ્ઢઇ અપ્પણો ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—અપિ સ હાસમાસાદ્ય, હત્વા નન્દીતિ મન્યતે ।

અલં વાલસ્ય સજ્જેન, વૈરં વર્ધયતિ આત્મનઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—‘ અવિ સે ’ इत्यादि । सः=अज्ञः—विषयलोलुपो हासम्=मनोविनोदम् आसाद्य=स्वीकृत्य, हत्वाऽपि=प्राणिनो निहत्याऽपि नन्दी=‘ क्रीडा ’ इति मन्यते ।

આરંભસે જીનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ આરંભજીવી હૈ । મહાન્ આરંભો દ્વારા જો અપની આજીવિકા કરતે હૈં વે હસ લોક ઓર પરલોક-દોનોં-કે દુઃસ્વોંકો ભોગતે હૈં । કારણ કિ વિષયભોગોંમેં ગૃદ્ધ-લોલુપી પ્રાણી અષ્ટવિધકર્મોંકા સંચય કરતે હૈં ઓર હન કામભોગોંસે ઉપાર્જિત કર્મરૂપી ધૂલિસે લિપ્ત હોકર વે વારંવાર અરહટકે ઘટમાલકી તરહ હસ સંસારરૂપી ચક્રમેં ઘૂમતે રહતે હૈં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

‘ અવિ સે ’ इत्यादि ।

વહ વિષયી પ્રાણી મનોવિનોદકો પાકર, અર્થાત્ મનોવિનોદ કરને કે અભિપ્રાયસે પ્રેરિત હોકર પ્રાણિયોંકી હિંસા કરકે ખી આનન્દિત હોતા હૈ । ઉસ હિંસાકો યહ અપને મનોવિનોદકા સાધન માન ક્રીડા સમજતા હૈ

આરંભથી જીવવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે આરંભજીવી છે. મહાન આરંભોદ્વારા જે પોતાની આજીવિકા કરે છે તે આ લોક અને પરલોક બન્નેના દુઃખો ભોગવે છે, કારણ કે વિષયભોગોમાં ગૃદ્ધ-લોલુપી પ્રાણી અષ્ટવિધ કર્મોના સંચય કરે છે, અને આ કામભોગથી ઉપાર્જિત કર્મરૂપી ધૂળથી લિપ્ત બનીને તે વારંવાર રેંટના ઘટમાલની માફક આ સંસારરૂપી ચક્રમાં ઘૂમતો રહે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥ ‘ અવિ સે ’ इत्यादि.

તે વિષયી પ્રાણી મનોવિનોદ માટે અર્થાત્ મનોવિનોદ કરવાના અભિપ્રાયથી પ્રેરિત બનીને પ્રાણીઓની હિંસા કરીને પણ આનંદિત થાય છે. તેવી હિંસાને તે પોતાના મનોવિનોદનું સાધન માની ક્રીડા સમજે છે. જુદું જોલે છે, કહે છે

બ્રૂતે ચ મૃષાવાદં યથા-મૃગાદયશ્ચૈતે મૃગયાર્થં ધાત્રા સૃષ્ટાઃ, મૃગયા ચ ક્રીડાર્થં ભવતીતિ । યદિ મનોવિનોદાર્થમપિ પ્રાણિનો હત્વા મોદતે તર્હિ માંસાદ્યુપભોગાર્થં પ્રાણિનો નિહત્ય પ્રમુદિતો ભવતીત્યત્ર કિમાશ્ચર્યમ્ । એવમદત્તાદાનાદિદોષાનપિ સ ઉપાદત્તે । એવં ચેત્તર્હિ કિં કર્તવ્યં મુનિના ? इत्याह--‘अलम्’ इत्यादि । बालस्य=अज्ञस्य संगेन=हास्यादिसङ्गेन प्राणातिपातादिरूपेण वा अलं=व्यर्थम्, अज्ञस्य यः संगो हास्यादिरूपः प्राणातिपातादिरूपो वा स सर्वथा वर्जनीय इत्यर्थः । बालस्य सङ्गकरणे दोषं दर्शयति-‘वैरम्’ इत्यादि । बालस्य सङ्गः आत्मनो वैरं=द्वेषं वर्द्धयति, नूतनभवानुषङ्गिवैरानुबन्धिकर्मणा बध्यते इत्यर्थः ॥ सू० ३ ॥

और झूठ ही कहता है कि ये मृगादिक पशु शिकारके लिये ही विधाताने बनाये हैं । शिकार क्रीडा करनेके निमित्तसे ही की जाती है । शिकार करनेसे मनोविनोद होता है । यदि मनोविनोदके लिये भी प्राणियोंकी हिंसा कर जो आनन्द मानता है वह मांसादिक खानेके लिये यदि उनकी हिंसा कर हर्षित होता है तो इसमें कौनसी अचरजकी बात है ? । इसी प्रकार विषयोंमें लंपट बना हुआ प्राणी चोरी कुशील आदि पापोंको भी करता है । इसलिये मुनिजनका कर्तव्य है कि वह ऐसे बाल-अज्ञानी की संगतिसे, मनोविनोदके कारण हास्यादिकोंसे, अथवा हिंसादिक पापोंसे दूर रहे । बाल-अज्ञानियोंकी संगति, मनोविनोदके कारण हास्यादिक एवं प्राणातिपातादिकपाप, मुनिके लिये सर्वथा वर्जनीय इस लिये हैं कि इनका संग वैर-द्वेषका वर्धक होता है । इस वैरभावकी वृद्धिसे नूतनभवानुषङ्गा और वैरानुबन्धी कर्मका बन्ध होता है ॥ सू० ३ ॥

કે-આ મૃગાદિક પશુ શિકાર માટે જ વિધાતાએ બનાવેલ છે. શિકાર ક્રીડા કરવાના નિમિત્તથી જ કરવામાં આવે છે. શિકાર કરવાથી મનોવિનોદ થાય છે. કદાચ મનોવિનોદ માટે પ્રાણીઓની હિંસા કરી જે આનંદ માને છે તે માંસાદિક ખાવા માટે પણ કદાચ હિંસા કરી હર્ષિત થાય તો તેમાં કંઈ અચરજ નથી. આ પ્રકારે વિષયોમાં લંપટ બનેલ પ્રાણી ચોરી કુશીલ આદિ પાપો પણ કરે છે. તેથી મુનિજનનું કર્તવ્ય છે કે તે આવા બાલ-અજ્ઞાનીની સંગતિથી, મનોવિનોદના કારણ હાસ્યાદિકથી, અથવા હિંસાદિ પાપોથી દૂર રહે. બાલ-અજ્ઞાનીઓની સંગતિ, મનોવિનોદના કારણ હાસ્યાદિક અને પ્રાણાતિપાતાદિક પાપ, મુનિ માટે સર્વથા વર્જનીય આ માટે છે કે તેનો સંગ વૈર-દ્વેષનો વર્ધક થાય છે. આ વૈરભાવની વૃદ્ધિથી નૂતનભવાનુષંગી અને વૈરાનુબન્ધી કર્મનો બંધ થાય છે. ॥ સૂ० ૩ ॥



યથેવં તર્હિ મુનિના કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તમ્હાઽતિવિજ્ઞો પરમંતિ ણચ્ચા, આયંકદંસી ન કરેઙ્ગ પાવં । અગ્ગં ચ મૂલં ચ વિગિંચ ધીરે, પલિચ્છિદિયા ણં નિક્કમ્મદંસી ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—તસ્માત્ અતિવિદ્યઃ પરમમ્ ઇતિ જ્ઞાત્વા, આતઙ્કદર્શી ન કરોતિ પાપમ્ । અગ્રં ચ મૂલં ચ વિવિચ્ય ધીરઃ, પરિચ્છિદ્ય સ્વલુ નિષ્કર્મદર્શી ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ । તસ્માદ્=બાલસંગેન વૈરવર્ધનાદ્, અતિવિદ્યઃ=સમ્યગ્જ્ઞાનવાન્, પરમં=સર્વોત્કૃષ્ટં—સિદ્ધિગતિનામધેયં પદં, સર્વવિરતિલક્ષણં ચારિત્રં વા અસ્તીતિ જ્ઞાત્વા, આતઙ્કદર્શી=નરકનિગોદાદિનાનાદુઃસ્વદર્શકઃ, પાપં=પાપાનુ-બન્ધિ કર્મ ન કરોતિ । અત્ર કરોતીત્યુપલક્ષણમ્, ન ચ પરેણ કારયતિ, નાપિ કુર્વન્ત-મન્યમનુમોદયતિ ।

યદિ એસા હૈ તો મુનિ કો કયા કરના ચાહિયે? સો કહતે હૈ—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

બાલ-અજ્ઞાનીકે સંગસે વૈરભાવકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । ઇસલિયે જો અતિવિદ્ય-સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હૈ વહ-‘સિદ્ધિગતિનામક પરમપદ અથવા ડસકો પ્રાપ્ત કરાનેવાલા સર્વવિરતિલક્ષણ ચારિત્ર પરમ શ્રેયસ્કર હૈ’ એસા જાનકર નરકનિગોદાદિકકે અનેક દુઃસ્વોંકા જ્ઞાતા, અર્થાત્ ‘નરક નિગોદાદિકોંકે દુઃસ્વ જીવોંકો તથ તક ભોગને પડતે હૈં કિ જબ તક સિદ્ધિપદકી પ્રાપ્તિ ડન્હેં નહીં હોતી’ ઇસ પ્રકારકા દૃઢશ્રદ્ધાવાલા હોતા હુઆ પાપાનુબન્ધી કર્મ નહીં કરતા હૈ । “કરોતિ” યહ ક્રિયા અન્ય ક્રિયાઓંકી ઉપલક્ષક હૈ, ઇસસે યહ ઘટિત હોતા હૈ કિ વહ ન દૂસરોંસે પાપકર્મ કરાતા હૈ ઓર ન પાપકર્મ કરનેવાલોંકી અનુમોદના હી કરતા હૈ ।

જો આ પ્રમાણે છે તો મુનિએ શું કરવું જોઈએ? તે કહે છે—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ.

બાલ-અજ્ઞાનીના સંગથી વૈરભાવની વૃદ્ધિ થાય છે, માટે જે અતિવિદ્ય-સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન છે તે ‘સિદ્ધિગતિનામક પરમપદ અથવા તેને પ્રાપ્ત કરાવનાર સર્વવિરતિલક્ષણ ચારિત્ર પરમ શ્રેયસ્કર છે’ એવું જાણીને નરકનિગોદાદિકના અનેક દુઃખોના જ્ઞાતા અર્થાત્ ‘નરક નિગોદાદિકોના દુઃખ જીવોને ત્યાં સુધી ભોગવવા પડે છે જ્યાં સુધી સિદ્ધિપદની પ્રાપ્તિ તેને થતી નથી’ આ પ્રકારના દૃઢ શ્રદ્ધાવાળા બનીને પાપાનુબન્ધી કર્મ કરતા નથી. “કરોતિ” આ ક્રિયા અન્ય ક્રિયાઓની ઉપલક્ષક છે, તેથી એ ઘટિત થાય છે કે તે બીજાઓથી પાપકર્મ કરાવતા નથી અને પાપકર્મ કરવાવાળાઓની અનુમોદના પણ કરતા નથી.



કિંચ-અગ્રં=ભવોપગ્રાહિકર્મચતુષ્ટયં કેવલિકર્મેત્યર્થઃ, મૂલં=ચતુર્વિધં ધાતિકર્મ, યદ્વા મૂલં=મોહનીયં કર્મ, અગ્રં=તદવશિષ્ટસપ્તકર્માણિ, મોહનીયક્ષયેણ વિનાઽન્યેષાં કર્મણાં ક્ષયો ન ભવતિ, તસ્માન્મોહનીયસ્ય મૂલત્વં સિદ્ધ્યતિ । ઉક્તञ्च—

“નાયગમ્મિ હૃષ સંતે, જહા સેના વિગસ્સહ ।

એવં કમ્માણિ ણસ્સંતિ, મોહણિજ્જે સ્વયં ગણ” ॥ ૧ ॥

છાયા—નાયકે હતે સતિ, યથા સેના વિનશ્યતિ ।

એવં કર્માણિ નશ્યન્તિ, મોહનીયે ક્ષયં ગતે ॥

પરીષદ્ એવં ઉપસર્ગોં સે અવિચલિત્ત્વે હોકર વહ્ પૃથક્ પૃથક્ ભેદ પ્રભેદોં સહિત-વિસ્તારપૂર્વકં ઇસ વાતકી પર્યાલોચના કરતા હૈ કિ અગ્ર ઓર મૂલ તપસંયમકે વિના આત્માસે પૃથક્-અલગ નહીં હો સકતે હૈં । ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા ચાર કર્મ કિ જો કેવલિકર્મ કહે જાતે હૈં, વે ચાર પ્રકારકે ઘાતિયા કર્મ મૂલ હૈં । અથવા મોહનીય કર્મકા નામ મૂલ હૈ । ઇસસે અવશિષ્ટ સાત કર્મોંકા નામ અગ્ર હૈ । મોહનીયકે ક્ષય હુઅ વિના અન્ય કર્મોંકા ક્ષય નહીં હોતા હૈ ઇસલિયે મોહનીયમેં મૂલતા સિદ્ધ હોતી હૈ । કહા ભી હૈ—

“નાયગમ્મિ હૃષ સંતે, જહા સેના વિગસ્સહ ।

એવં કમ્માણિ ણસ્સંતિ, મોહણિજ્જે સ્વયં ગણ” ॥ ૧ ॥

જૈસે સેનાપતિકે મારે જાને પર સેના તિતર-વિતર હોકર ભાગ જાતી હૈ ઊસી પ્રકાર મોહનીયકે ક્ષય હોને પર અન્ય કર્મ ભી નષ્ટ હો જાતે હૈં ॥ ૧ ॥

પરીષદ્ અને ઉપસર્ગોંથી અવિચલિત્ત્વે બનીને તે પૃથક્ પૃથક્ ભેદપ્રભેદો સહિત-વિસ્તારપૂર્વકં આ વાતની પર્યાલોચના કરે કે અગ્ર અને મૂલ તપ સંયમ વિના આત્માથી પૃથક્-અલગ થઈ શકતા નથી. ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા ચાર કર્મોં કે જે કેવલિકર્મ કહેવાય છે તે ચાર પ્રકારના ઘાતિયા કર્મ મૂલ છે. અથવા મોહનીય કર્મનું નામ મૂલ છે. તેનાથી અવશિષ્ટ સાત કર્મોંનું નામ અગ્ર છે. મોહનીયનો ક્ષય થયા વિના અન્ય કર્મોંનો ક્ષય થતો નથી. મારે મોહનીયમાં મૂલતા સિદ્ધ થાય છે. કહ્યું છે—

“નાયગમ્મિ હૃષ સંતે, જહા સેના વિગસ્સહ ।

એવં કમ્માણિ ણસ્સંતિ, મોહણિજ્જે સ્વયં ગણ” ॥ ૧ ॥

જેવી રીતે સેનાપતિના મરવાથી સેના છિન્નભિન્ન થઈ ભાગી બન્ય છે તે પ્રકારે મોહનીયનો ક્ષય થવાથી અન્ય કર્મ પણ નષ્ટ થઈ બન્ય છે. ॥ ૧ ॥

યદ્વા-મૂલ=મિથ્યાત્વમ્, અગ્રં તુ અષ્ટવિધકર્મપ્રકૃતિરૂપં તેષાં મિથ્યાત્વમૂલક-  
ત્વાત્। ઉક્તઞ્ચ—“.....મિચ્છત્તેણં ઉદિણ્ણેણં એવં સ્વલુ જીવે અદ્ધ-  
કમ્મપગડીઓ બંધઈ” ઇતિ। ધીરઃ=પરીપહોપસર્ગૈરક્ષોભ્યઃ સન્ વિવિચ્ય=  
પૃથક્ પૃથક્ મેદોપમેદૈઃ સવિસ્તરં પર્યાલોચ્ય, પરિચ્છિદ્ય=કર્માણિ તત્કારણીભૂત-  
મિથ્યાત્વાદીનિ તપઃ-સંયમાભ્યાં સર્વથા છિત્વા=સ્વાત્મનઃ પૃથક્કૃત્ય, પૌદ્ગલિકસ્ય  
જ્ઞાનાવરણીયાદેઃ કર્મણશ્છેદનં દ્વૈધીકરણરૂપં ન સંભવતિ, કિંત્વાત્મનઃ પૃથક્કરણ-  
મેવેતિ ભાવઃ। નિષ્કર્મદર્શી=સ્વાત્માનં નિષ્કર્માણં દ્રષ્ટું શીલમસ્યેતિ તથાવિધો  
ભવતીત્યર્થઃ। જ્ઞાનાવરણીયદર્શનાવરણીયકર્માપગમાત્ સર્વદર્શી ભવતીતિ ભાવઃ॥૪॥

અથવા-‘મૂલ’ નામ મિથ્યાત્વકા હૈ। ‘અગ્ર’ નામ આઠ પ્રકારકે  
કર્મોંકા હૈ, ક્યોં કિ આઠોં કર્મોંકા મૂલકારણ મિથ્યાત્વ હૈ। હસી-  
લિએ મિથ્યાત્વકો મૂલ-શબ્દસે કહા હૈ। કહા મી હૈ—“.....મિચ્છ-  
ત્તેણં ઉદિણ્ણેણં એવં સ્વલુ જીવે અદ્ધ કમ્મપગડીઓ બંધઈ।” ઇતિ।  
મિથ્યાત્વકે ઉદયસે જીવ આઠ કર્મપ્રકૃતિયોંકો બાંધતા હૈ।

હસલિયે કર્મોંકે કારણભૂત મિથ્યાત્વ આદિકો તપસંયમદ્વારા  
સર્વથા અપની આત્માસે અલગ કર વહ નિષ્કર્મદર્શી હો જાતા હૈ।

સૂત્રમેં “પરિચ્છિદ્ય” પદ આયા હૈ, જિસકા અર્થ-“છેદન કરકે”  
એસા હોતા હૈ। પરન્તુ પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકા તો છેદન હો  
નહીં સકતા; અતઃ-‘જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકો અપની આત્માસે “પરિ-  
ચ્છિદ્ય”-અલગ કરકે’ એસા અર્થ કરના ચાહિયે, ક્યોં કિ કર્મોંકો  
આત્માસે પૃથક્ કરના હી ઉનકા છેદન હૈ। આત્માસે કર્મોંકે અલગ હોને

અથવા ‘મૂલ’ નામ મિથ્યાત્વનું છે. ‘અગ્ર’ નામ આઠ પ્રકારના કર્મોંનું છે,  
કારણ કે આઠ કર્મોંનું મૂલ કારણ મિથ્યાત્વ છે. માટે મિથ્યાત્વને મૂલ શબ્દથી કહેલ  
છે. કહ્યું છે “...મિચ્છત્તેણં ઉદિણ્ણેણં એવં સ્વલુ જીવે અદ્ધ કમ્મપગડીઓ બંધઈ।”  
ઇતિ। મિથ્યાત્વના ઉદયથી જીવ આઠ કર્મપ્રકૃતિઓ બાંધે છે. માટે કર્મોંના  
કારણભૂત મિથ્યાત્વ આદિને તપસંયમદ્વારા સર્વથા પોતાના આત્માથી જુદા કરી  
તે નિષ્કર્મદર્શી થઈ જાય છે.

સૂત્રમાં “પરિચ્છિદ્ય” પદ આવેલ છે. તેનો અર્થ “છેદન કરીને” એમ  
થાય છે. પરંતુ પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંનું તો છેદન બની શકતું નથી  
માટે જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંને પોતાના આત્માથી “પરિચ્છિદ્ય”-જુદા કરીને, એવો  
અર્થ કરવો જોઈએ. કારણ કે કર્મોંને આત્માથી પૃથક્ કરવા તે જ તેનું છેદન



અન્યદપિ ફલં નિષ્કર્મદર્શિનો ભવતીત્યાહ—‘ એસ મરણા પમુચ્ચઈ ’ ઇત્યાદિ.

મૂલમ્—એસ મરણા પમુચ્ચઈ, સે હુ દિદ્ધમણ મુણી, લોગંસિ પરમદંસી વિવિત્તજીવી ઉવસંતે સમિણ સહિણ સયા જણ કાલ-કંઠી પરિવણ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—એષ મરણાત્ પ્રમુચ્યતે, સ એવ દૃષ્ટમયો મુનિઃ, લોકે પરમદર્શી વિવિત્ત-જીવી ઉપશાન્તઃ સમિતઃ સહિતઃ સદા યતઃ કાલાકાઙ્ક્ષી પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—એષઃ=નિષ્કર્મદર્શી મરણાત્=આયુઃક્ષયાત્ પ્રમુચ્યતે, આયુષ્યકર્મબન્ધા-પગમાદિતિ ભાવઃ । યદ્રા—આવીચિમરણાત્ આવીચિ=અનુસમયં નિરન્તરં મરણં=મૃત્યુઃ સંસારો વા, તસ્માત્ પ્રમુચ્યતે । કેવલી ભૂત્વા અન્યાન્ વા મોચયતિ દેશનાદિના । સ પર જીવ નિષ્કર્મદર્શી—અર્થાત્ કર્મરહિત અપની આત્માકો દેખનેકે સ્વ-ભાવવાલા હો જાતા હૈ । ઇસ પ્રકારકા સ્વભાવ જીવકે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે વિનાશસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ઇસી અવસ્થામેં જીવ સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જો નિષ્કર્મદર્શી હૈ ઉસે ઓર ખી દૂસરા લાભ હોતા હૈ, ઇસ બાતકો પ્રકટ કરતે હૈ—‘ એસ મરણા પમુચ્ચઈ ’ ઇત્યાદિ ।

યહ નિષ્કર્મદર્શી આયુકર્મકે બન્ધકે અભાવ હોનેપર મરણસે રહિત હો જાતા હૈ । અથવા વહ આવીચિમરણસે છૂટ જાતા હૈ । અનુસમય અર્થાત્ નિરન્તર મરણકો આવીચિમરણ કહતે હૈ । અથવા મરણ નામ સંસારકા હૈ । કેવલી હો જાનેસે આત્મા સંસારબન્ધનસે રહિત હો જાતા હૈ । સિદ્ધસ્થાનમેં વિરાજનેકે નિશ્ચયસે ઉસી ભવમેં અઘાતિયા કર્મોંકા

છે. આત્માથી કર્મોના અલગ થવાથી જીવ નિષ્કર્મદર્શી—અર્થાત્ કર્મરહિત પોતાના આત્માને જોવાના સ્વભાવવાળો થઈ જાય છે. આ પ્રકારનો સ્વભાવ જીવને જ્ઞાનાવરણીય અને દર્શનાવરણીય કર્મોના વિનાશથી ઉત્પન્ન થાય છે. આ અવસ્થામાં જીવ સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી થાય છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જે નિષ્કર્મદર્શી છે તેને બીજો પણ લાભ થાય છે. તે વાતને પ્રગટ કરે છે— ‘ એસ મરણા પમુચ્ચઈ ’ ઇત્યાદિ.

આ નિષ્કર્મદર્શી આયુકર્મના બંધનો અભાવ થવાથી મરણથી રહિત થાય છે અને તે આવીચિમરણથી છુટી જાય છે. અનુસમય અર્થાત્ નિરન્તર મરણને આવીચિમરણ કહે છે. અથવા મરણ નામ સંસારનું છે, કેવળી થઈ જવાથી આત્મા સંસારબંધનથી રહિત થાય છે, સિદ્ધસ્થાનમાં વિરાજવાના નિશ્ચયથી તેજ ભવમાં



દૃષ્ટભય એવ, દૃષ્ટ ભયમ્ इहलोकादि सप्तविधं येन स एव मुनिर्भवति । किं च लोके=उच्चारदिचतुर्दशस्थानसमुत्पन्ने जीवसमूहात्मके परमः=आत्मनः समुत्कर्षकारित्वात् संयमः, तं द्रष्टुं शीलमस्येति परमदर्शी, तथा-विविक्तं रागद्वेषरहितत्वादक्लिष्टं जीवितुं शीलमस्येति विविक्तजीवी, अत एव उपशान्तः=उपशमसमन्वितः, अत एव समितः मोक्षमार्गं सम्यग् इतः=प्राप्तः, तथा सहितः ज्ञानचारित्र्ययुक्तः, अत एव सदा यतः=अनवरतं प्रमादरहितः । उक्तगुणधारणं कियत्कालपर्यन्तमावश्य-

અભાવ કર સિદ્ધપદકા અધિકારી હો જાતા હૈ । કેવલી હોકર યહ અન્ય જીવોંકો ભી સદેશના દ્વારા સંસારપરિભ્રમણ સે છુડા દેતા હૈ । इहलोक-भय आदि सात प्रकारका भय जिसने देख लिया है वह दृष्टभय है । दृष्टभय ही मुनि होता है । तथा उच्चारदि चौदह स्थानोंमें समुत्पन्न जीवसमूहरूप लोकमें आत्माका उत्कर्षकारी होनेसे परम जो संयम उसको देखनेका जिसका स्वभाव है वह परमदर्शी है । तथा रागद्वेष-रहित होनेसे अक्लिष्ट जीनेका जिसका स्वभाव है वह विविक्तजीवी है । यह निष्कर्मदर्शी विविक्तजीवी होता है । इसीलिये वह 'उवसंते' 'उपशान्तः'—उपशमसे युक्त होता है । कषायोंके उद्रेकका अभाव उपशम है । जब कषायोंमें बिलकुल मन्दता आ जाती है तब वह 'समिष्ट' समितः—मोक्षके मार्गको प्राप्त हुआ कहलाता है । तथा 'सहिष्ट' सहितः ज्ञान और चारित्रसे युक्त होनेसे वह 'सयाजष्ट' सदायतः—निरन्तर यतनावान् अर्थात् प्रमादरहित होता है । इन पूर्वोक्त गुणोंके धारण करने

અધ્યાતિયા કર્મેના અભાવ કરી સિદ્ધપદનો અધિકારી થાય છે. કેવળી બની તે અન્ય જીવોને પણ સદેશનાદ્વારા સંસારપરિભ્રમણથી છોડાવે છે. इहलोक ભય આદિ સાત પ્રકારનો ભય જેણે જોઈ લીધેલ છે તે દૃષ્ટભય છે, દૃષ્ટભય જ મુનિ થાય છે. તથા ઉચ્ચારાદિ ચૌદ સ્થાનોમાં સમુત્પન્ન જીવસમૂહરૂપ લોકમાં આત્માના ઉત્કર્ષકારી થવાથી પરમ જે સંયમ તેને દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે પરમ-દર્શી છે. તથા રાગદ્વેષરહિત થવાથી અક્લિષ્ટ જીવવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે વિવિક્તજીવી છે. તે નિષ્કર્મદર્શી વિવિક્તજીવી થાય છે. તેથી તે 'ઉવસંતે' ઉપશાન્તઃ—ઉપશમથી યુક્ત થાય છે. કષાયોના ઉદ્રેકનો અભાવ ઉપશમ છે, બીજા રે કષાયોમાં બિલકુલ મંદતા આવી જાય છે ત્યારે તે 'સમિષ્ટ' સમિતઃ—મોક્ષના માર્ગને પ્રાપ્ત કરેલો કહેવાય છે. તથા 'સહિષ્ટ' સહિતઃ—જ્ઞાન અને ચારિત્રથી યુક્ત થવાથી તે 'સયાજષ્ટ' સદાયતઃ—નિરંતર યતનાવાન અર્થાત્ પ્રમાદ રહિત થાય છે. આ પૂર્વોક્ત ગુણોને ત્યાં સુધી ધારણ કરવાની આવશ્યકતા છે

કમિત્યાહ-કાલાકાઙ્ક્ષીતિ । કાલં=મૃત્યુકાલમાકાઙ્ક્ષિતું શીલમસ્યેતિ કાલાકાઙ્ક્ષી, તથાવિધઃ સન્ પરિવ્રજેત્=યાવત્ પર્યાયાગતં પણ્ડિતમરણં તાવદાકાઙ્ક્ષમાણો વિવિ-  
ક્તજીવિત્વાદિગુણસમન્વિતઃ સંયમારાધને સમુદ્યુક્તો ભવેદિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

મૂલમ-બહું ચ खलु पावकर्मं पण्डितं । सच्चमि धिइं कुवहा ।  
एत्थोवरणं मेहावी सव्वं पापकर्मं झोसइ ॥ सू० ६ ॥

ઢાયા—બહુ ચ खलु पापकर्म प्रकृतम् । सत्ये धृतिं कुरुष्व । अत्र उपरतो  
मेधावी सर्वं पापकर्म झोषयति ॥ सू० ६ ॥

ટીકા—‘બહું ચ’ ઇત્યાદિ । खलु=निश्चयेन पापकर्म बहु=बन्धस्थानापे-  
क्षया बहुविधं प्रकृतम्=प्रकथितं, प्रतिबोधितमित्यर्थः । यद्येवं तर्हि तद्व्यपगमार्थं  
किमाचरणीयमित्यत आह—‘सत्ये’ इत्यादि । हे शिष्य ! सत्ये-सद्ब्रह्मो भव्ये-  
की आवश्यकता तभी तक है जब तक कि उसे पण्डितमरण प्राप्त नहीं  
होता । यही बात सूत्रकार प्रकट करते हैं—‘कालकंखी’ इति, काल शब्द  
का अर्थ मृत्युकाल है, इसकी आकाङ्क्षा रखनेवालेको कालाकाङ्क्षी  
कहते हैं । जब तक पर्यायागत पण्डितमरण प्राप्त नहीं होता तब तक  
उसकी चाहना करता हुआ इन पूर्वोक्त गुणोंसे युक्त होकर वह निष्कर्म-  
दर्शी संयमकी आराधनामें प्रयत्नशाली या लवलीन रहे ॥ सू० ५ ॥

‘बहुं च’ इत्यादि ।

પાપકર્મ બન્ધસ્થાનકી અપેક્ષાસે બહુત પ્રકારકા કહા ગયા હૈ । વીત-  
રાગ પ્રમુને બારહ પ્રકારકી પરિષદ્-સભામેં અપની દિવ્ય દેશનાસે બન્ધ-  
સ્થાનોંકી અપેક્ષાસે કર્મોંકે અનેક ભેદ ભવ્ય જીવોંકો સમજાયે હૈ । સાથ  
મેં યહ બી પ્રકટ કિયા હૈ કિ इन कर्मोंको आत्मासे दूर करनेका उपाय

કે જ્યાં સુધી તેને પંડિતમરણ પ્રાપ્ત નહિ થાય. આ વાત સૂત્રકાર પ્રગટ કરે  
છે—‘કાલકંક્ષી’ ઇતિ. કાલ શબ્દનો અર્થ મૃત્યુકાળ છે. તેની આકાંક્ષા રાખવા-  
વાળાને કાલાકાંક્ષી કહે છે. જ્યાં સુધી પર્યાયાગત પંડિતમરણ પ્રાપ્ત નથી થતું  
ત્યાં સુધી તેની ચાહના કરીને પૂર્વોક્ત ગુણોથી યુક્ત થઈને તે નિષ્કર્મદર્શી  
સંયમની આરાધનામાં પ્રયત્નશાળી અગર લવલીન રહે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

“बहुं च” इत्यादि.

પાપકર્મ બન્ધસ્થાનની અપેક્ષાથી ઘણા પ્રકારના કહેલ છે. વીતરાગ પ્રભુએ  
બાર પ્રકારની પરિષદ્-સભામાં પોતાની દિવ્યદેશનાથી બંધસ્થાનોની અપેક્ષાથી  
કર્મોના અનેક ભેદ ભવ્ય જીવોને સમજાવેલ છે. સાથે એ પણ પ્રગટ કરેલ છે  
કે આ કર્મોના આત્માથી દૂર કરવાનો ઉપાય છે—“सच्चमि धिइं कुवहा” सत्ये



મ્યો હિતઃ સત્યઃ=સંયમસ્તસ્મિન્ ધૃતિં કુરુષ્વ । યદ્વા-સત્યઃ=વીતરાગપ્રણીતાગમઃ  
યથાવસ્થિતતત્ત્વસ્વરૂપપ્રતિબોધનાત્ , તત્ર ભગવદાજ્ઞારૂપે પ્રવચને ધૃતિં=ચિત્તસ્થૈર્ય  
કુતર્કપરિત્યાગેન કુરુષ્વ । કિંચ-અત્ર=અસ્મિન્ સંયમે ભગવત્પ્રવચને વા, ઉપરતઃ=  
ઉપ=સામીપ્યેન રતઃ=વ્યવસ્થિતઃ-પરાયણઃ, મેધાવી=હેયોપાદેયવિવેકનિપુણઃ, સર્વ-  
નિરવશેષં પાપકર્મ શ્લોષયતિ=શોષયતિ-ક્ષપયતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કષાયાદિપ્રમાદયુક્તઃ કિંગુણો ભવતીત્યાહ-‘અણેગચિત્તે’ ઇત્યાદિ ।

હૈ-“સત્ત્વમ્મિ ધિદ્ કુઠ્ઠ્વહા” સત્યે ધૃતિં કુરુષ્વ, સત્ય-સંયમમેઝ્ઘૈર્ય ધારણ  
કરો, ઇસલિયે શિષ્યકો સમ્બોધિત કરતે હુણ કહતે હૈં કિ હે શિષ્ય !  
તુમ યદિ ઇન કર્મો પર વિજય કરના ચાહતે હો તો-‘સદ્મ્યો હિતઃ સત્યઃ-  
-સંયમઃ’ સત્પુરુષોંકે લિયે હિતકારી જો સંયમ હૈં ઉસમેઝ્ઘ અટલ રહો ।  
ઉપસર્ગ એવં પરીષદોંકે આને પર મી ઇસ માર્ગસે કમી મી વિચલિતચિત્ત  
ન બનો । અથવા સત્ય નામ વીતરાગપ્રણીત આગમકા હૈં, ક્યોં કિ ઇસ  
સે હી જીવાદિક તત્ત્વોંકે યથાર્થસ્વરૂપકી પ્રરૂપણા હોતી હૈં । ભગવાનકે  
ઇસ આજ્ઞાસ્વરૂપ પ્રવચનમેઝ્ઘ કુતર્કોંકા પરિહાર કર ચિત્તકો સ્થિર કરો ।  
કારણ કિ-ઇસ સંયમમેઝ્ઘ અથવા વીતરાગપ્રણીત આગમમેઝ્ઘ અચ્છી તરહસે  
લવલીન ચિત્તવાલા મનુષ્ય હેય ઓર ઉપાદેયકે વિવેકસે નિપુણમતિ બન  
કર સમ્પૂર્ણ પાપકર્મોંકો નષ્ટ કર દેતા હૈં । સૂ૦ ૬ ॥

કષાયાદિક પ્રમાદસે યુક્ત પ્રાણી કિસ ૨ ગુણવાલે હોતે હૈં ? ઇસકે  
લિયે કહતે હૈં-‘અણેગચિત્તે’ ઇત્યાદિ ।

ધૃતિ કુરુષ્વ, સત્ય-સંયમમાં ધૈર્ય ધારણ કરો. એ માટે શિષ્યને સંયોધન કરીને  
કહે છે કે હે શિષ્ય ! તમે જો આ કર્મો ઉપર વિજય કરવા માંગતા હો તો-  
‘સદ્મ્યો હિતઃ સત્યઃ-સંયમઃ’ સત્પુરુષોને માટે હિતકારી જે સંયમ છે તેમાં  
અટલ રહો. ઉપસર્ગ અને પરીષદો આવવા છતાં પણ આ માર્ગથી કોઈ વખત  
પણ વિચલિત ન બનો. અથવા સત્ય નામ વીતરાગપ્રણીત આગમનું છે, કારણ  
કે તેનાથી જ જીવાદિક તત્ત્વોના યથાર્થ સ્વરૂપની પ્રરૂપણા થાય છે. ભગવાનના  
આ આજ્ઞાસ્વરૂપ પ્રવચનમાં કુતર્કનો પરિહાર કરી ચિત્તને સ્થિર કરો, કારણ કે  
આ સંયમમાં અને વીતરાગપ્રણીત આગમમાં સારી રીતે લવલીન ચિત્તવાળા  
મનુષ્ય હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી નિપુણમતિ બનીને સંપૂર્ણ પાપકર્મો નષ્ટ  
કરી નાંખે છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કષાયાદિ પ્રમાદથી યુક્ત પ્રાણી કયા કયા ગુણવાળા થાય છે ? તેને માટે  
કહે છે-‘અણેગચિત્તે’ ઇત્યાદિ.



મૂલમ્—અણેગચિત્તે સ્વલુ અયં પુરિસે, સે કેયણં અરિહણ પૂરિત્તણ, સે અણ્ણવહાણ અણ્ણપરિયાવાણ અણ્ણપરિગ્ગહાણ જણવયવહાણ જણવયપરિયાવાણ, જણવયપરિગ્ગહાણ ॥ સૂ. ૭ ॥

છાયા—અનેકચિત્તઃ સ્વલુ અયં પુરુષઃ, સ કેતનમ્ અર્હતિ પૂરયિતુમ્ । સોડન્ય-વધાય, અન્યપરિતાપાય, અન્યપરિગ્રહાય, જનપદવધાય, જનપદપરિતાપાય જન-પદપરિગ્રહાય ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકા—અયં પ્રત્યક્ષવિષયઃ સંસારી પુરુષઃ સ્વલુ=નિશ્ચયેન અનેકચિત્તઃ=કૃષિ-વાણિજ્યસેવાદ્યનેકકૃત્યાશ્રિતચિત્તો ભવતિ । સંસારસુખાભિલાષિણશ્ચિત્તમેકાગ્રં ન ભવતીતિ ભાવઃ । અનેકચિત્તઃ કિં કુર્યાદિત્યાહ—‘સ કેતનમ્’ इत्यादि । सोऽनेकचित्तः केतनं=भावकेतनम् इच्छां पूरयितुम् अर्हति ? काकुवचनमेतत् ; नार्हतीत्यर्थः । केतनं द्विविधं द्रव्यतो भावतश्च । तत्र द्रव्यकेतनं चालिनी, समुद्रो

यह संसारी पुरुष निश्चयसे कृषि वाणिज्य सेवा आदि अनेक कार्यों के करनेमें व्यग्रचित्तवाला बना रहता है । क्यों कि संसारी जीवोंकी अभिलाषा सांसारिक अनेक सुखोंको प्राप्त करनेकी ओर सदा लगी रहती है, इसीलिये वे कृषि वाणिज्य आदि अनेक प्रकारके आजीविकोपयोगी कार्योंके संपादनमें रातदिन जुटे रहते हैं, अतः सांसारिक सुखोंके अभिलाषी पुरुषोंका मन किसी एक विषयमें एकाग्र नहीं होता है । इस पर सूत्रकार कहते हैं कि—‘से केयणं अरिहण पूरित्तण’ स केतनमर्हः पूरयितुम्, अर्थात् उसकी इस प्रकारकी ये चेष्टाएँ क्या उस केतन-मानसिक अभिलाषाकी पूर्ति कर सकती हैं ? कदापि नहीं । सूत्रकारने यहां काकुवचनका प्रयोग किया है । केतन दो प्रकारका है—(१) द्रव्य-केतन

આ સંસારી પુરુષ નિશ્ચયથી કૃષિ, વાણિજ્ય, સેવા આદિ અનેક કાર્યો કરવામાં વ્યગ્રચિત્તવાળા બની રહે છે. કારણકે સંસારી જીવોની અભિલાષા સાંસારિક અનેક સુખો પ્રાપ્ત કરવાની તરફ સદા લાગી રહે છે તેથી તે ખેતી, વાણિજ્ય આદિ અનેક પ્રકારના આજીવિકાના ઉપયોગી કાર્યોના સંપાદનમાં રાત-દિવસ લાગ્યા રહે છે. માટે સાંસારિકસુખોના અભિલાષી પુરુષોનું મન કોઈ એક વિષયમાં એકાગ્ર બનતું નથી. આ ઉપર સૂત્રકાર કહે છે—‘સે કેયણં અરિહણ પૂરિત્તણ’—સ કેતનમર્હઃ પૂરયિતુમ્, અર્થાત્ તેની આ પ્રકારની આ ચેષ્ટાઓ થી તેના કેતન=માનસિક અભિલાષાની પૂર્તિ કરી શકે છે ? કદાપિ નહિ. સૂત્રકારે આ ઠેકાણે કાકુવચનનો પ્રયોગ કરેલ છે. કેતન બે પ્રકારના છે.

વા । ભાવકેતનમ્ ઇચ્છા, લોભઃ । અત્ર ભાવકેતનાપેક્ષયા કેતનશબ્દઃ પ્રયુક્તઃ ।  
ઉક્તં ચ ભગવતા—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ ” ઇત્યાદિ ।

અપરં ચ—“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્જાનો જયેત્ ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશમ્યતિ ” ॥ ૧ ॥

(૨) ભાવ-કેતન । દ્રવ્ય-કેતન ચાલિની અથવા સમુદ્ર હૈ, ઓર ઇચ્છા, લોભ, યે ભાવ-કેતન હૈ । યહાં ભાવ-કેતનકી અપેક્ષાસે ‘કેતન’ શબ્દકા પ્રયોગ હુઆ હૈ । ભગવાનને યહી બાત કહી હૈ—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ । ”

અર્થાત્—જૈસે જૈસે લાભ હોતા હૈ વૈસે વૈસે લોભ મી બઢતા હૈ । લાભસે લોભકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । જો અનેક કાર્યોમં વ્યગ્રચિત્ત બના રહતા હૈ વહ કયા ભાવ-કેતનરૂપ અપની ઇચ્છાઓંકી પૂર્તિ કર સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં કર સકતા ? કહા મી હૈ—

“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્જાનો જયેત્ ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશમ્યતિ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

જિસ પ્રકાર સોનેસે નિદ્રા નહીં જીતી જા સકતી હૈ, ઓર खानેસે મૂઝ નહીં જીતી જા સકતી હૈ, ઁસી પ્રકાર કામ-ઇચ્છાઓંમં ફંસા હુવા મનુષ્ય ઇચ્છાકે અનુસાર ઇષ્ટ વસ્તુઓંકા લાભ હોને પર મી ઁનસે શાન્તિલાભ પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હૈ । ફિર મી કહા હૈ—

(૧) દ્રવ્યકેતન, (૨) ભાવકેતન. દ્રવ્યકેતન ચાલિની અથવા સમુદ્ર છે, અને ઇચ્છા અને લોભ, એ ભાવકેતન છે. આ ઠેકાણે ભાવકેતનની અપેક્ષાથી ‘કેતન’ શબ્દનો પ્રયોગ થયેલ છે. ભગવાને એ જ વાત કહી છે—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ । ”

અર્થાત્ જેમ જેમ લાભ થાય છે તેમ તેમ લોભ વધે છે. લાભથી લોભની વૃદ્ધિ થાય છે. જે અનેક કાર્યોમાં વ્યગ્રચિત્ત બની રહે છે. તે શું ભાવકેતનરૂપ પોતાની ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરી શકે છે ? અર્થાત્ કરી શકતા નથી. કહ્યું પણ છે—

“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્જાનો જયેત્ ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશમ્યતિ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જેવી રીતે સુષ્પ રહેવાથી નિદ્રા છૂટી શકતી નથી અને ખાવાથી ભૂખ છૂટી શકતી નથી તે પ્રકારે કામ-ઇચ્છાઓમાં ફસેલો પ્રાણી-મનુષ્ય ઇચ્છાનુસાર ઇષ્ટવસ્તુઓનો લાભ થતાં છતાં પણ તેનાથી શાન્તિલાભ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. વળી પણ કહ્યું છે—



किं च—“ न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।

हविषा कृष्णवर्त्मैव, भूय एवाभिवर्धते ” ॥ २ ॥ इति ।

इच्छાપૂરણાર્થે વ્યાકુલિતચિત્તઃ કિં કરોતીત્યાહ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ, યદ્વા—‘ સે કે ય ણં અરિહણ પૂરિત્તણ ’ ઇત્યસ્ય ‘ સ કશ્ચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ’ ઇતિચ્છાયા । સ ઇતાદૃશો જનઃ કો વર્તેતે યઃ તમ્=અનેકચિત્તં પુરુષં પૂરયિતુમ્ અર્હઃ સમર્થો ભવેત્, કસ્તદિચ્છાં પૂરયેત્, ન કોડપીતિ ભાવઃ, યતઃ સોડનેકચિત્તઃ પુરુષઃ અન્યવધાદ્યર્થં પર્યુત્સુકો ભવતિ, તદેવાહ સૂત્રકારઃ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

“ ન જાતુ કામઃ કામાનામુપભોગેન શામ્યતિ ।

હવિષા કૃષ્ણવર્ત્મૈવ, ભૂય એવાભિવર્ધતે ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

કામવિકાર વિષયભોગોંકે સેવન કરનેસે શાન્ત નહીં, હોતા હૈ । પ્રત્યુત જૈસે ઘૂતકે ડાલને સે અગ્નિકી જ્વાલા બઢતી હૈ ઉસી પ્રકાર વિષયોંકે સેવનસે વિષયવાસનાકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । અપની ઇચ્છાકી પૂર્તિકે લિયે જીવ ક્યા કરતા હૈ ? હસીં બાતકો કહતે હૈ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

અથવા “ સે કે ય ણં અરિહણ પૂરિત્તણ ” હસ વાક્યકી છાયા “ સ કશ્ચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ” એસીં બીં હોતી હૈ । જિસકા અર્થ હસ પ્રકાર હોતા હૈ—કૌન એસા વ્યક્તિ હો સકતા હૈ કિં જો અનેક ચિત્તવાલે મનુષ્યકી ઇચ્છાઓંકી પૂર્તિ કરનેમ્ સમર્થ હો સકે ? કારણ કિં વહ અનેકચિત્ત પુરુષ અન્યવધ—દૂસરેકો મારના આદિ અનેક સાવધ ક્રિયાઓંકે કરનેમ્ ઉત્સુક બના રહતા હૈ । હસીં બાતકો સૂત્રકાર સ્વયં દિશ્વલાતે હૈ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

“ ન જાતુ કામઃ કામાનામુપભોગેન શામ્યતિ ।

હવિષા કૃષ્ણવર્ત્મૈવ, ભૂય એવાભિવર્ધતે ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

કામવિકાર વિષયભોગનું સેવન કરવાથી શાંત થતો નથી, પણ જેમ ધી નાંખવાથી અગ્નિની જ્વાળા વધે છે તે પ્રકારે વિષયોના સેવનથી વિષયવાસનાની વૃદ્ધિ થાય છે. પોતાની ઇચ્છાની પૂર્તિ માટે જીવ જીવ કરે છે ? આ વાતને સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ.

અથવા “ સે કે ય ણં અરિહણ પૂરિત્તણ ” આ વાક્યની છાયા “ સ કશ્ચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ” એમ પણ થાય છે. જેનો અર્થ આ પ્રકારે થાય છે—કોણ એવો પ્રાણી થઈ શકે છે કે જે અનેક ચિત્તવાળા મનુષ્યની ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરવામાં સમર્થ હોય ? કારણ કે તે અનેકચિત્ત પુરુષ અન્યવધ—ખીજને મારવું—આદિ અનેક સાવધ ક્રિયાઓ કરવામાં ઉત્સુક બની રહે છે. આ વાતને બતાવે છે—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ.



સ ઇચ્છાપૂરણાર્થં પ્રવર્તમાનઃ અન્યવધાય=અન્યેષાં પ્રાણિનાં વધાય ભવતિ । યથા-  
ચૌરઃ સાહસિકો વા ધનાપહરણાર્થં ધનિનં હન્તિ, इत्यादि । तथा-अन्यपरितापाय=  
अन्येषां जीवानां परितापाय=शारीरमानसक्लेशाय भवति । तथा-अन्यपरिग्रहाय  
=अन्येषां=दासदासीनां गोमहिष्यादीनां च परिग्रहाय=स्वायत्तीकरणाय भवति ।  
तथा-जनपदवधाय-मगधादयो जनपदास्तेषां वधाय । यथा-म्लेच्छा भूपतयो  
म्लेच्छधर्ममस्वीकुर्वन्तं जनपदं धनन्तीत्यादि । तथा-जनपदपरितापाय-जनपदानां

મનુષ્ય જબ અપની ઇચ્છાકી પૂર્ત્તિકે લિયે પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ તબ ઉસ  
કી ઉસ પ્રવૃત્તિસે અન્ય પ્રાણિયોંકી હિંસા હોતી હૈ, અતઃ વહ ઉસકી  
પ્રવૃત્તિ અન્ય જીવોંકી હિંસાકા કારણ બનતી હૈ । જૈસે ચોર અથવા સાહ-  
સિક-ડાકૂ-મનુષ્ય ધનીકે ધનકો ચુરાનેકે લિયે ધનીકો માર ડાલતા હૈ ।  
ઉસકી પ્રવૃત્તિસે અન્ય જીવોંકો શારીરિક તથા માનસિક પરિતાપ-ક્લેશ  
ભોગના પડતા હૈ । ફિર વહ અપની અભિલાષાઓંકી પૂર્ત્તિકે લિયે દાસી  
દાસ આદિકો તથા ગાય ભૈસ આદિકો કહીંસે ચુરા લાકર ઉનકા સંગ્રહ  
કરનેમૈં વ્યસ્ત રહા કરતા હૈ । જનપદ-મગધાદિ દેશોંકો વહ અપની પ્ર-  
વૃત્તિસે ત્રસ્ત-દુઃખિત કર દિયા કરતા હૈ । જૈસે મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છ  
ધર્મકો અસ્વીકાર કરનેવાલી પ્રજાકો માર ડાલતે હૈ । ઉસકી પ્રવૃત્તિ  
લોકોંકે પરિતાપકે લિયે-પ્રાણિયોંકો માર્મિક કષ્ટ પહુંચાનેકે લિયે હોતી  
હૈ । અનુચિત કર-ટૈક્સકા લેના, અનુચિત દણ્ડ દેના, इत्यादिका नाम  
भी परिताप है । अधार्मिक भूपति अपनी इच्छाकी पूर्त्तिके लिये धन-

મનુષ્ય જ્યારે પોતાની ઇચ્છાની પૂર્ત્તિ માટે પ્રવૃત્તિ કરે છે ત્યારે તેની તે  
પ્રવૃત્તિથી અન્ય પ્રાણીઓની હિંસા થાય છે, માટે તે તેની પ્રવૃત્તિ બીજા જીવોની  
હિંસાનું કારણ બને છે; જેમ ચોર અથવા સાહસિક-ડાકૂ પૈસાવાળા માણસના ધન  
ચોરી જવા માટે પૈસાવાળાને મારી નાંખે છે. તેની પ્રવૃત્તિથી અન્ય જીવોને શારી-  
રિક તથા માનસિક પરિતાપ-ક્લેશ ભોગવવો પડે છે. તેમજ તે પોતાની અભિ-  
લાષાઓની પૂર્ત્તિ માટે દાસી-દાસ આદિ તથા ગાય-ભૈસ આદિ કયાંયથી ચોરી  
લાવીને તેના સંગ્રહ કરવામાં વ્યસ્ત રહ્યા કરે છે. જનપદ-મગધાદિ દેશોને તે  
પોતાની પ્રવૃત્તિથી ત્રસ્ત-દુઃખિત કર્યા કરે છે. જેમ મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છધર્મને  
અસ્વીકાર કરનારી પ્રજાને મારી નાંખે છે. તેની પ્રવૃત્તિ લોકોના પરિતાપ માટે-  
પ્રાણીઓને માર્મિક કષ્ટ પહોંચાડવા માટે હોય છે. અનુચિત કરઓળ-ટૈક્સ  
લેવો, અનુચિત દંડ આપવો, इत्यादितुं नाम પણ પરિતાप છે, अधार्मिक राजा  
પોતાની ઇચ્છાની પૂર્તિ માટે ધનસંગ્રહ કરવા નિમિત્ત પોતાની પ્રજાથી અનીતિ-

ક્લેશાય, યથાઽનુચિતકરગ્રહણદણ્ડાદિભિરધાર્મિકા ભૂપતયઃ । તથા-જનપદપરિ-  
ગ્રહાય=મગધાદિજનપદાનાં પરિગ્રહાય ભવતિ-સ્વસ્વત્વોત્પાદનેન સ્વાયત્તીકરણાય,  
યુદ્ધાદિકં કરોતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

મૂલમ્-આસેવિત્તા એમદંદ્રં ઇચ્છેવેગે સમુદ્વિયા, તમ્હા તં  
બીયં નો સેવે, નિસ્સારં પાસિય નાળી ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા-આસેવ્ય એતમ્ અર્થમ્ इत्येव एके समुत्थिताः, तस्मात्तं द्वितीयं नो  
सेवते निःसारं दृष्ट्वा ज्ञानी ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા-—‘ આસેવિત્તા ’ इत्यादि । इत्येव=इच्छापूर्णाथमेव एतम्=अर्थम्

સંગ્રહ કરનેકે નિમિત્ત અપની પ્રજાસે અનીતિદ્વારા ધનકા સંગ્રહ કરતે  
હैं । કિસીપર કરકી વૃદ્ધિ કરતે હैं; કિસીકો અભિયોગमें ફંસા કર ઉસ  
પર અધિક સે અધિક દણ્ડ ભી કર દિયા કરતે હैं । ઇસ પ્રકારકે ભૂપતિ  
અપની પ્રજાકે લિયે અપને અધિકૃત દેશકે લિયે ક્લેશકારક યા પરિ-  
તાપદાયક હુઆ કરતે હैं । જનપદપરિગ્રહ-અર્થાત્ દૂસરે રાજાઓ પર  
ચઢાઈ કર વહા ઉનકે દેશકો અપને આધીન કરનેકા પ્રયત્ન-ચેષ્ટા કરતે  
રહતે હैं । મૌકા પાકર જબ વહા ચઢાઈ કર દેતે હैं તબ ઉસ સમય વ્યર્થमें  
નરસંહાર જૈસા ભયઢૂર કાળ ઉપસ્થિત હો જાતા હૈ । ઉનકી ઇસ પ્રકારકી  
પ્રવૃત્તિ ધાર્મિક નીતિસે ઠીક નહીં હૈ । ક્યોં કિ ઇનકી ઇસ પ્રવૃત્તિસે  
અન્ય જીવોંકો યા જનપદકો ક્લેશ તથા સન્તાપ હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

‘ આસેવિત્તા ’ इत्यादि ।

इच्छाकी पूर्तिके लिये सातवें सूत्रमें प्रतिपादित दूसरे जीवोंका

દ્વારા ધનનો સંગ્રહ કરે છે. કોઈ ઉપર કરબોજની વૃદ્ધિ કરે છે. કોઈને અભિ-  
યોગમાં ફસાવી તેની ઉપર અધિકમાં અધિક દંડ પણ કરી નાંખે છે. આ પ્રકારનો  
રાજા પોતાની પ્રજા માટે અગર પોતાના અધિકૃત દેશ માટે ક્લેશકારક અને પરિતા-  
પદાયક થયા કરે છે. જનપદ પરિગ્રહ અર્થાત્ બીજા રાજાઓ ઉપર ચઢાઈ કરી  
તેના દેશને પોતાના અધિન કરવાના પ્રયત્નમાં રહે છે સમય મળતાં જ બ્યારે તે  
ચઢાઈ કરે છે ત્યારે તે વખત વ્યર્થમાં નરસંહાર જેવું ભયંકર કાંડ ઉપસ્થિત થાય છે,  
તેની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ધાર્મિક નીતિથી ઠીક નથી. કારણ કે તેની આ પ્રવૃત્તિથી  
અન્ય જીવોને અને જનપદને ક્લેશ તથા સન્તાપ ઉત્પન્ન થાય છે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

‘ આસેવિત્તા ’ इत्यादि.

इच्छानी पूर्ति માટે सातवां सूत्रમાં प्रतिपादित બીજા જીવોનો વધ પરિ-



અન્યવધપરિતાપપરિગ્રહાદિકમ્ આસેવ્ય પશ્ચાત્ તૃપ્તિહેતુત્વાભાવાન્નિઃસારં વિજ્ઞાય, એકે=ભરતાદયઃ સમુત્થિતાઃ=સંયમારાધને પ્રવૃત્તાસ્તેનૈવ ભવેન સિદ્ધિં લબ્ધવન્તઃ । તસ્માદ્ યતો વાન્તવદ્ભોગં પરિત્યજ્ય પ્રતિજ્ઞા કૃતા 'પુનર્ભોગાર્થં મયા ન પ્રવર્તિષ્યતે' इति, તસ્માદ્ જ્ઞાની=સમ્યગ્જ્ઞાનવાન્ વિષયભોગં નિસ્સારં દૃષ્ટ્વા, વિષયભોગે કૃતેઽપિ તૃપ્ત્યભાવાદિતિ ભાવઃ; ભોગલિપ્સયા તં દ્વિતીયં=દ્વિતીયવારં નો સેવતે, ન પુનસ્ત્રાસક્તો ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ન મનુષ્યાણામેવ ભોગો નિઃસારઃ કિંતુ દેવાનામપીત્યાહ 'ઉવચાયં' इत्यादि।

મૂલમ્—ઉવચાયં ચવણં ચ ણચ્ચા અણણં ચર માહણે ॥સૂ૦ ૯॥

છાયા—ઉપપાતં ચ્યવનં ચ જ્ઞાત્વા અનન્યં ચર માહન ! ॥ સૂ૦ ૯ ॥

વધ પરિતાપ એવં પરિગ્રહાદિકા સેવન કરકે મી જબ ઇચ્છાકી તૃપ્તિ નહીં હોતી હૈ તબ કોઈ ભરતાદિક જૈસે મહાપુરુષ સંયમકે આરાધન કરનેમેં પ્રવૃત્ત હોતે હૈં ઓર ઉસી ભવમેં મુક્તિકા લાભ મી કર લિયા કરતે હૈં । હસ લિયે જો છર્દિત-વમન કિયે હુએ અન્નકે સમાન ભોગોંકા પરિત્યાગ કર “ ફિર અબ મૈં ભોગોંકે સેવન કરનેમેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરૂંગા ” હસ પ્રકારકી પ્રતિજ્ઞા કર લિયા કરતે હૈં, સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન બે જ્ઞાની પુરુષ વિષયભોગોંમેં નિસ્સારતા જાન કર, અર્થાત્ “ વિષયભોગોંકે સેવન કરને પર મી જીવોંકો તૃપ્તિ નહીં હોતી હૈ ” હસ પ્રકાર સમજ કર ફિર ભોગોં કે સેવન કરનેકી ઇચ્છાસે દૂસરે મૃષાવાદ રૂપ પાપકા અથવા અસંયમ કા સેવન નહીં કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

મનુષ્યોંકે વિષયભોગ હી નિસ્સાર નહીં હૈં, કિન્તુ દેવોંકે મી વિષયભોગ નિસ્સાર હૈં; હસી વાતકો સમજાતે હૈં—'ઉવચાયં' इत्यादि ।

તાપ તેમજ પરિગ્રહાદિનું સેવન કરીને પણ બ્યારે ઈચ્છાની તૃપ્તિ થતી નથી ત્યારે કેઈ ભરતાદિક જેવો મહાપુરુષ સંયમનું આરાધન કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે અને તેજ ભવમાં મુક્તિનો લાભ પણ કરી લે છે. માટે વમન કરેલા અન્ન સમાન ભોગોનો પરિત્યાગ કરી “ હવે પછી હું ભોગનું સેવન કરવામાં પ્રવૃત્તિ નહિ કરું ” એવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરી લે છે. સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન તે જ્ઞાની પુરુષ વિષય-ભોગોમાં નિસ્સારતા બાળીને અર્થાત્ “ વિષયભોગોનું સેવન કરવા છતાં જીવોને તૃપ્તિ થતી નથી ” એવા પ્રકારે સમજીને પછી ભોગોનું સેવન કરવાની ઈચ્છાથી ખીબ મૃષાવાદરૂપ પાપનું અને અસંયમનું સેવન કરતા નથી. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

મનુષ્યોના જ વિષયભોગ નિસ્સાર છે, એમ નહિ; કિન્તુ દેવોના પણ વિષય-ભોગ નિસ્સાર છે. આ વાતને સમજાવે છે—'ઉવચાયં' इत्यादि.



ટીકા—હે માહન ! = હે મુને ! ઉપપાતં = દેવજન્મ, ચ્યવનં = દેવમરણં ચ જ્ઞાત્વા  
અનન્યં = અન્યો = મોક્ષમાર્ગાદિતરઃ અસંયમઃ, નાન્યોઽનન્યઃ અસંયમાદ્વિન્નઃ શ્રુતચારિ-  
ત્રાત્મકો ધર્મસ્તં ચર = સમાચર ॥ સૂ. ૮ ॥

હે મુનિ ! દેવોંકે ઉપપાત-જન્મ, ચ્યવન-મરણકો જ્ઞાનકર તુમ  
અનન્ય-જો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ હૈં ઉસકા સેવન કરો. ભાવાર્થ—દેવોંકી  
આયુ સાગરોંકી હોતી હૈં. ઇતની ઘડી આયુ હોતે હુએ મીં વિષયભોગોંસે  
તૃપ્તિ નહીં હોતી. ઉન દેવોંકો વહ આયુ ક્ષણસદૃશ હીં લગતી હૈં ઓર  
વ્યતીત હો જાતી હૈં. વહાં કે વિષયભોગ મીં સદા સ્થિર નહીં હૈં, વે મીં  
વિનશ્વર હૈં. જન્મ-મરણકા ચક્રર દેવગતિમેં દેવોંકો મીં ભોગના પડતા  
હૈં. અતઃ સંબોધન કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે મુનિ ! ‘મનુષ્ય-  
લોકકે વિષયભોગ હીં અસાર હૈં’ યહ વાત નહીં હૈં, કિન્તુ દેવલોકકે  
મીં વિષયભોગ ઇસી તરહ અસાર હૈં. ઇસ ગતિમેં સંયમકી આરાધના  
નહીં હોતી હૈં, સંયમકી આરાધના મનુષ્યગતિકે સિવાય અન્ય કિસી  
મીં ગતિમેં નહીં હો સકતી હૈં, અતઃ ઇસ દુર્લભ મનુષ્યજન્મકો વિષય-  
ભોગોંકી ઇચ્છનામેં અથવા ઉનકે સેવન કરનેમેં નષ્ટ કર દેના યહ બુદ્ધિ-  
માન કા કર્તવ્ય નહીં હૈં. યહ મત સમજો કિ—‘સંયમકી આરાધનાસે  
હમ દેવપર્યાય પ્રાપ્ત કર વહાંકે વિષયભોગોંકો ભોગતે હુએ સુખી હો

હે મુનિ ! દેવોના ઉપપાત-જન્મ, ચ્યવન-મરણને જાણીને તમે અનન્ય  
જે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ છે તેનું સેવન કરો.

ભાવાર્થ—દેવોનું આયુષ્ય સાગરોનું હોય છે. આટલું મોટું આયુષ્ય હોવા  
છતાં પણ વિષયભોગોથી તૃપ્તિ થતી નથી. તે દેવોને તે આયુ ક્ષણસદૃશ જ  
લાગે છે અને વ્યતીત થઈ જાય છે. ત્યાંના વિષયભોગ પણ સદા સ્થિર નથી.  
તે પણ વિનશ્વર છે. જન્મ મરણનું ચક્રર દેવગતિમાં દેવોને પણ ભોગવવું પડે છે,  
માટે શિષ્યને સંબોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે—

હે મુનિ ! મનુષ્યલોકના વિષયભોગ જ અસાર છે એ વાત નથી પણ  
દેવલોકના પણ વિષયભોગ આ માફક અસાર છે. આ ગતિમાં સંયમની આરાધના  
થતી નથી. સંયમની આરાધના મનુષ્યગતિ સિવાય અન્ય કોઈ પણ ગ-  
તિમાં બની શકતી નથી. માટે આ દુર્લભ મનુષ્ય જન્મને વિષયભોગોની ઇચ્છનામાં  
અને તેનું સેવન કરવામાં નષ્ટ કરી નાખવો તે બુદ્ધિમાનનું કર્તવ્ય નથી. એમ  
ન સમજશો કે ‘સંયમની આરાધનાથી એમ દેવપર્યાય પ્રાપ્ત કરી ત્યાંના વિષય.

કિં ચ--'સે જ છણે' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે જ છણે જ છણાવણ છણંતં જાણુજાણણ ॥સૂ૦ ૧૦॥

હાયા-સ ન ક્ષણુયાત્, ન ક્ષણયેત્, ક્ષણવન્તં નાનુજાનીયાત્ ॥ ૧૦ ॥

ટીકા-સઃ=શ્રુતચારિત્રધર્મારાધનપરો મુનિઃ, પ્રાણિનો ન ક્ષણુયાત્=ન હન્યાત્, ન ક્ષણયેત્=ન ઘાતયેત્, ક્ષણવન્તં=ધનન્તમન્યં નાનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેદિત્યર્થઃ ॥

અથ ચતુર્થવ્રતસિદ્ધચર્યમુપદિશતિ-'નિર્વિવદ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-નિર્વિવદ નંદિં, અરણ પયાસુ, અણોમદંસી નિસણ્ણે પાવેહિં કમ્મેહિં ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

હાયા-નિર્વિવદસ્વ નન્દીમ્, અરક્તઃ પ્રજાસુ, અનવમદર્શી નિષણ્ણઃ પાપેભ્યઃ કર્મભ્યઃ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા-પ્રજાસુ=પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ=સ્ત્રિયસ્તાસુ, અરક્તઃ=અનાસક્તઃ, તથા-અવમં=નીચં નીચફલોત્પાદકત્વાદ મિથ્યાદર્શનાદિ, તદ્વિન્નમ્ અનજાયેંગે' કારણ કિ વહાંકે વિષયભોગ મી અસાર હી હૈં, અતઃ નિદાન રહિત હો કર હી તુમ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરો ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ફિર મી કહતે હૈં-'સે જ છણે' ઇત્યાદિ ।

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેમ્ તત્પર હુઆ મુનિ કમી મી સ્વયં પ્રાણીઓંકી હિંસા ન કરે, દૂસરોંસે હિંસા ન કરાવે ઓર હિંસા કરનેવાલોંકી અનુમોદના મી ન કરે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

હસકે બાદ ચતુર્થવ્રત (બ્રહ્મચર્યવ્રત) કી સિદ્ધિ કે લિયે ઉપદેશ કરતે હૈં-'નિર્વિવદ નંદિં' ઇત્યાદિ ।

'પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ' પુત્રાદિ સન્તાન જિનમ્ ઉત્પન્ન

લોગોને લોગવતાં સુખી થઈ જશું.' કારણ કે ત્યાંના વિષયભોગ પણ અસાર જ છે. માટે નિદાનરહિત બનીને જ તમે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરો. ॥સૂ૦ ૯॥

ફરી પણ કહે છે--'સે જ છણે' ઇત્યાદિ.

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામાં તત્પર બનેલ મુનિ કદિ પણ સ્વયં પ્રાણીઓની હિંસા ન કરે, બીજા પાસે હિંસા ન કરાવે અને હિંસા કરવાવાળાની અનુમોદના પણ ન કરે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ત્યાર બાદ ચતુર્થવ્રત (બ્રહ્મચર્યવ્રત)ની સિદ્ધિ માટે ઉપદેશ કરે છે- 'નિર્વિવદ નંદિં' ઇત્યાદિ.

'પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ'—

પુત્રાદિ સન્તાન જેમાં ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ પ્રજા-સ્ત્રી છે. તથા અવમનામ



વમં, તદ્ દ્રષ્ટું શીલમસ્યેતિ—અનવમદર્શી=સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્રારાધનપરઃ, અત એવ  
પાપેભ્યઃ=પાપકારણેભ્યઃ કર્મભ્યઃ=અષ્ટાદશવિધમૈથુનેભ્યઃ નિષ્ણઃ=નિવૃત્તઃ સન્  
નન્દી=વૈષયિકં સુખં નિર્વિન્દસ્વ=જુગુપ્સસ્વ । કામિનીકાયસ્યાતિનિન્દ્યત્વાત્તત્સજ્જ-  
નિતસુખસ્ય હિંસાદિપાપહેતુત્વાચ્ચ ચતુર્થવ્રતારાધને સાવધાનો ભવેત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

કિં ચ—‘કોહાઈ’ ઇત્યાદિ ।

હોતી હૈં उनका नाम प्रजा-स्त्री है । तथा अवम नाम मिथ्यादर्शन आदिका  
है । उससे भिन्न सम्यग्दर्शनादिक अनवम है । इस अनवमको देखनेका  
जिसका स्वभाव हो वह अनवमदर्शी है । शिष्योंको ब्रह्मचर्यव्रतके पालन  
करनेकी शिक्षा देते हुए सूत्रकार कहते हैं कि हे शिष्य ! तुम स्त्रियोंके  
विषयमें आसक्तचित्त न बनो, स्वप्नमें भी उनका ध्यान न करो । तथा  
जघन्य फलके उत्पादक होनेसे मिथ्यादर्शनादिक अवम हैं । उनसे वि-  
परीत अनवम—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र हैं ।

इन सम्यग्दर्शनादिककी आराधनासे तुम्हें भ्रष्ट बनानेवाले जो  
पापके कारणभूत अठारह प्रकारके मैથુન हैं, उनसे निवृत्त हुए तुम नन्दी-  
वૈષયિક सुखोंकी ओर सदा घृणादृष्टि रखो ।

भावार्थ—स्त्रियोंका शरीर सदा अतिनिन्द્ય होता है । उसके सेवन  
से उत्पन्न हुआ वैषयिक सुख हिंसादिक पापोंका कारण होता है । ऐसी  
दृढश्रद्धा कर तुम चतुर्थ व्रतकी आराधनामें सावधान रहो ॥ सू. ११ ॥

फिर कहते हैं—‘कोहाइमाण’ इत्यादि ।

મિથ્યાદર્શન આદિનું છે. તેનાથી ભિન્ન સમ્યગ્દર્શનાદિક અનવમ છે. આ અનવમને  
દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે અનવમદર્શી છે. શિષ્યોને બ્રહ્મચર્યવ્રતનું પાલન  
કરવાની શિક્ષા દેતાં સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્ય ! તમે સ્ત્રીઓ માટે આસક્ત-  
ચિત્ત ન બનો. સ્વપ્નમાં પણ તેનું ધ્યાન ન કરો. તથા મિથ્યાદર્શનાદિક જઘન્ય ફલના  
ઉત્પાદક હોવાથી અવમ છે. તેનાથી વિપરીત અનવમ સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન  
અને સમ્યક્ચારિત્ર છે. તેની આરાધનાથી તમને બ્રષ્ટ બનાવનાર પાપના કારણભૂત  
અઠાર પ્રકારના મૈથુન છે. તેનાથી નિવૃત્ત બનીને તમે નન્દી-વૈષયિક સુખોની  
તરફ સદા ઘૃણાદૃષ્ટિ રાખો.

ભાવાર્થ—સ્ત્રીઓનું શરીર સદા અતિનિન્દ્ય હોય છે. તેના સેવનથી ઉત્પન્ન  
થયેલ વૈષયિક સુખ હિંસાદિક પાપોનું કારણ બને છે. એવી દૃઢ શ્રદ્ધા કરી  
તમે એવા વ્રતની આરાધનામાં સાવધાન રહો ॥ સૂ. ૧૧ ॥

વળી કહે છે—‘કોહાઈમાણ’ ઇત્યાદિ.



मूलम्—कोहाइमाणं हणिया य वीरे, लोभस्स पासे निरयं  
महंतं । तम्हा य वीरे विरए वहाओ, छिन्दिज्ज सोयं लहु-  
भूयगामी ॥ सू० १२ ॥

छाया—क्रोधादिमानं हन्यात् च वीरः लोभस्य पश्य निरयं महान्तम् । त-  
स्माच्च वीरो विरतो वधात् छिन्द्यात् शोकं लघुभूतगामी ॥ सू० १२ ॥

टीका—वीरः=कर्मविदारणसमर्थः, क्रोधादिमानं=क्रोधादीनां मानम् अनन्तानु-  
बन्ध्यादिविशेषं हन्यात्=निवारयेत् । यद्वा—क्रोध आदिर्यस्य स क्रोधादिः, स चासौ  
मानश्च क्रोधादिमानः—क्रोधहेतुको गर्वस्तं हन्यादित्यर्थः । लोभस्यानन्तानुबन्ध्यादेर्वि-  
पाकं महान्तं=दुस्तरं निरयं=नरकं पश्य । उक्तञ्च—‘मच्छा मणुआ य सत्तमिं पुढविं’  
इति । अतिलोभाविष्टा मनुष्यास्तन्दुलमत्स्यादयश्च सप्तमपृथिवी भाजो भवन्तीति भावः ।

कर्माँके विनाश करनेकी शक्तिसे संपन्न वीर क्रोधादिक कषायों  
के अभिमानको अर्थात् अनन्तानुबन्धी आदि क्रोध मान माया और  
लोभको दूर करे । अथवा—क्रोध है आदिमें जिसके वह क्रोधादि है ।  
क्रोधादिरूप जो मान उसका नाम क्रोधादिमान है । जिस गर्वका हेतु  
क्रोध है उस क्रोधादिकारणक मानको वह नष्ट करे । अनन्तानुबन्धी  
आदि कषाय सम्बन्धी लोभके विपाकको सदा दुस्तर नरक ही समझना  
चाहिये । कहा भी है—“ मच्छा मणुआ य सत्तमिं पुढविं ” अति लोभसे  
युक्त मनुष्य और मत्स्य—तन्दुलमत्स्य आदि मरकर सातवें नरकमें जाते  
हैं । जब यह निश्चित सिद्धान्त है कि लोभसे युक्त प्राणी हिंसादिक  
पापकर्माँमें प्रवृत्तियुक्त होनेसे मरकर नरक गतिमें जाते हैं तो जो कर्माँको  
नाश करनेवाली शक्तिसे युक्त वीर हैं उन्हें प्राणियोंकी हिंसासे सदा

कर्माँना विनाश करवानी शक्तिथी संपन्न वीर मुनि, क्रोधादिक कषायोना अलि-  
मानने अर्थात् अनन्तानुबन्धी आदि क्रोध, मान, माया अने दोलने दूर करे.  
अथवा क्रोध छे आदिमां जेने ते क्रोधादि छे. क्रोधादिश्य जे मान तेनुं नाम  
क्रोधादिमान छे. जे गर्वने हेतु क्रोध छे, ते क्रोधादिकारणक मानने ते नाश  
करे, अनन्तानुबन्धी आदि कषाय संबन्धी दोलना विपाकने सदा दुस्तर नरक ज  
समजबुं जेछंये, कहूं छे—“ मच्छा मणुआ य सत्तमिं पुढविं ” अति दोलथी  
युक्त मनुष्य अने मत्स्य—तन्दुलमत्स्य आदि मरीने सातमी नरकमां जाय छे.  
अथारे जे निश्चित सिद्धांत छे जे दोलथी युक्त प्राणी हिंसादिक पाप कर्माँमां प्रवृत्ति-  
युक्त दोलथी मरीने नरक गतिमां जाय छे तो जे कर्माँना नाश करवावाणी शक्तिथी  
युक्त वीर छे तेने प्राणीओनी हिंसाथी सदा सर्व रीतिथी दूर जे रहवुं जेछंये.

યથેવં તતઃ કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘તસ્માત્’ ઇત્યાદિ । લોભાવિષ્ટાઃ પ્રાણિ-  
હિંસનાદૌ પ્રવૃત્ત્યા નરકં પ્રાપ્નુવન્તિ, તસ્માદ્ વીરઃ=કર્મવિદારણોત્સાહયુક્તો વધાત્=  
પ્રાણિનાં હિંસનાદ્ વિરતઃ સર્વથા નિવૃત્તઃ સ્યાત્ । કિંચ—લઘુભૂતગામી=લઘુભૂત  
આત્મા યેન સ લઘુભૂતો મોક્ષઃ, તં ગન્તું શીલમસ્યેતિ લઘુભૂતગામી, યદ્વા—‘લઘુ-  
ભૂતકામી’ ઇતિચ્છાયા, તત્ર આત્માનં લઘુભૂતં કામયતે ઇતિ લઘુભૂતકામી=મોક્ષા-  
ભિલાષી, મોક્ષમાર્ગારૂઢઃ શોકં, ‘સ્રોત’ ઇતિચ્છાયાપક્ષે સ્રોતો=ભાવસ્રોતોવા કર્મ-  
કારણં, છિન્દ્યાત્=વ્યપનયેત્ ॥ સુ૦ ૧૨ ॥

સર્વરીતિસે દૂર હી રહના ચાહિયે । હિંસાદિક પાપકર્મોસે સદા ત્રીન કરણ  
ત્રીન યોગસે અર્થાત્ મન, વચન ઔર કાય, એવં કૃત કારિત ઔર અનુ-  
મોદના સે જો દૂર રહતા હૈં વહ કર્મબન્ધકે ભારસે ભારી નહીં હોતા હૈ ।  
એસે વ્યક્તિકી આત્મામેં સ્વાભાવિક રીતિસે લાઘવ ગુણકા આવિર્ભાવ  
હોતા હૈ ઔર ઉસસે ઊર્ધ્વગતિકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ‘લઘુભૂત’ શબ્દકા  
અર્થ મોક્ષ હૈ, ક્યોં કિ મુક્તિકા લાભ ઉસી આત્માકો હોતા હૈ કિ જિસ  
સે કર્મકા ભાર ઉતર જાતા હૈ । કર્મકા ભાર ઉતર જાનેસે આત્મા સ્વા-  
ભાવિક રીતિસે લઘુ-હલ્કા હો જાતા હૈ । જો ચીજ વજનમેં હલ્કી હોતી  
હૈ વહ સ્વભાવસે હી ઊપરકી ઔર ઉઠતી હૈ । આત્મા ભી જબ કર્મબ-  
ન્ધનસે રહિત હો જાતી હૈ તબ હસકા ભી સ્વભાવ સ્વતઃ ઊર્ધ્વગમન કરને  
કા હો જાતા હૈ । સકલ કર્મોંકા ક્ષય હોના હી આત્માકી મુક્તિ હૈ । હસ  
મુક્તિકો પ્રાપ્ત કરનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ લઘુભૂતગામી હૈ । અથવા  
‘લઘુભૂતગામી’ હસ પદકી છાયા ‘લઘુભૂતકામી’ એસી ભી હોતી હૈ ।

હિંસાદિક પાપકર્મોંકી સદા ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી અર્થાત્ મન વચન કાય  
અને કૃત કારિત અને અનુમોદનાથી જે દૂર રહે છે તે કર્મબંધના ભારથી ભારી  
થતા નથી. એવી વ્યક્તિના આત્મામાં સ્વાભાવિક રીતથી લાઘવ ગુણનો આવિ-  
ર્ભાવ થાય છે અને તેનાથી ઊર્ધ્વગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે. ‘લઘુભૂત’ શબ્દનો અર્થ  
મોક્ષ છે. કારણ કે મુક્તિનો લાભ તે આત્માને થાય છે કે જેથી કર્મનો ભાર  
ઉતરી જાય છે. કર્મનો ભાર ઉતરી જવાથી આત્મા સ્વાભાવીક રીતથી લઘુ-  
હલકો બને છે. જે ચીજ વજનમાં હલકી થાય છે તે સ્વભાવથી જ ઉપરની  
તરફ ઉઠે છે. આત્મા પણ જ્યારે કર્મબંધનથી રહિત થઈ જાય છે ત્યારે તેનો  
પણ સ્વભાવ સ્વતઃ ઊર્ધ્વગમન કરવાનો થઈ જાય છે. સકલ કર્મોંનો ક્ષય થવો  
તે જ આત્માની મુક્તિ છે. તેવી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે  
લઘુભૂતગામી છે. અને ‘લઘુભૂતગામી’ આ પદની છાયા ‘લઘુભૂતકામી’ એમ પણ



કિંચ—‘ ગંથં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ગંથં પરિણાય ઇહજ્જ ધીરે, સોયં પરિણાય ચરિજ્જ દંતે । ઉમ્મજ્જ લદ્ધું ઇહ માણુસેહિં, નો પાણિણં પાણે સમારભિજ્જાસિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

છાયા—ગ્રન્થં પરિજ્ઞાય ઇહાગ્ર ધીરઃ, સ્ત્રોતઃ પરિજ્ઞાય ચરેદ્ દાન્તઃ । ઉન્મજ્જનં લબ્ધ્વા ઇહ માનુષ્યેષુ નો પ્રાણિનાં પ્રાણાન્ સમારભેથાઃ । ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

ટીકા—ઇહ સંસારે મનુષ્યલોકે વા, અથૈવ=કાલાનતિક્રમેણ, ધીરઃ સન્ ગ્રન્થં =બાહ્યાભ્યન્તરભેદાદ્ દ્વિવિધં પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા બન્ધકારણત્વેન વિજ્ઞાય, પ્રત્યા-  
ઘ્યાનપરિજ્ઞયા પરિવર્જયેત્ । કિં ચ સ્ત્રોતઃ=ભાવસ્ત્રોતો વિષયાસક્તિરૂપં સંસારં પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્વા દાન્તઃ=ઇન્દ્રિયનોન્દ્રિયદમનશીલઃ ચરેત્=સંયમમાચરેત્ ।

હસકા અર્થે યહ હોતા હૈ કિ મોક્ષકા જો અભિલાષી હૈ વહ લઘુભૂત-  
કામી હૈ । મોક્ષાભિલાષી મોક્ષમાર્ગપર આરુઢ હોતા હુઆ શોક કો,  
અથવા કર્મોકે આસ્રવકે કારણભૂત ભાવસ્ત્રોતકો અપની આત્માસે સદા  
દૂર કરે ॥ સૂ. ૧૨ ॥

और भी कहते हैं—‘ गंथं परिणाय ’ इत्यादि ।

इस संसार अथवा मनुष्यलोकमें आत्मार्थी को समय बिताना  
व्यर्थ है । जहां तक हो सके जल्दी से जल्दी धैर्यशाली बन कर बाह्य  
और आभ्यन्तर परिग्रहको ज्ञपरिज्ञासे बन्धका कारण जानकर प्रत्या-  
ख्यानपरिज्ञासे उसका त्याग करे । तथा विषयोंमें आसक्तिरूप संसार  
को जान कर पांच इन्द्रिय एवं मनका दमन करता हुआ संयमकी आ-  
राधनामें अपनेको लगावे ।

થાય છે. તેનો અર્થ એ થાય છે કે મોક્ષનો જે અભિલાષી છે તે લઘુભૂતકામી  
છે. મોક્ષાભિલાષી મોક્ષ માર્ગ ઉપર આડૂઠ થઈને શોકને અથવા કર્મોના આસ્ર-  
વના કારણભૂત ભાવસ્ત્રોતને પોતાના આત્માથી સદા દૂર કરે. ॥ સૂ. ૧૨ ॥

ફરી કહે છે—‘ ગંથં પરિણાય ’ ઇત્યાદિ.

આ સંસાર અને મનુષ્ય લોકમાં આત્માર્થી માટે સમય વિતાવવો વ્યર્થ  
છે. જ્યાં સુધી બની શકે જલ્દીમાં જલ્દી ધૈર્યશાળી બનીને બાહ્ય અને આભ્યન્તર  
પરિગ્રહને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બંધનું કારણ બાણી પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે.  
તથા વિષયોમાં આસક્તિરૂપ સંસારને બાણીને પાંચ ઇન્દ્રિય અને મનનું દમન કરીને  
સંયમની આરાધનામાં પોતાને લગાડે.



इह संसारहूदे मानुष्येषु=मनुष्यभवेषु, उन्मज्जनं=जन्मरूपं लब्ध्वा, मनुष्य-  
भवादन्यत्र संपूर्णमोक्षमार्गप्राप्त्यसंभवादिदं दुर्लभमिति भावः; प्राणिनां=जीवानां

इस संसारमें मनुष्यभवकी प्राप्ति दुर्लभ है। यदि कोई पुण्यानुबन्धी पुण्यके उदयसे इस मनुष्यभवकी प्राप्ति तुम्हें हुई है तो तुम इस अमूल्य जीवनको व्यर्थ हिंसादिक कार्यों में लगाकर नष्ट न करो। इसी बात को समझाते हुए सूत्रकार शिष्योंके प्रति कहते हैं—मनुष्यभवके सिवाय अन्य किसी भी भवमें संपूर्ण मोक्षमार्गकी प्राप्ति जीवको नहीं होती है इसीलिये ज्ञानियोंने इसकी प्राप्ति दुर्लभ बतलाई है। इसे प्राप्तकर जीवोंके दस द्रव्य प्राणों (५ इन्द्रिय, ३ बल, १ आयु और १ श्वासोच्छ्वास-१०) का वियोग करनेमें ही इसे व्यर्थ गंवा देना यह बुद्धिमान मनुष्यका काम नहीं है। इस मनुष्यभवकी प्राप्तिकी सफलता तो जब ही है कि इससे संयमका आराधन किया जाय और मुक्तिमार्गका पथिक बना जाय। इसलिये हे शिष्य ! तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम इस दुर्लभतम मनुष्यभवको पाकर व्यर्थ हिंसादिक कार्यों में न फंसकर मोक्षमार्गके पथिक बनो और अपने इस मनुष्यभवको सफल बनाओ, यही सूत्रका आशय है। अर्थात्—मनुष्यभवमें जन्म प्राप्त कर तुम प्राणियोंके प्राणोंका

આ સંસારમાં મનુષ્ય ભવની પ્રાપ્તિ મહા દુર્લભ છે. કદાચ કેઈ પુણ્યાનુબંધી પુણ્યના ઉદયથી આ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ તમોને મળી છે તો તમો આ અમૂલ્ય જીવનને વ્યર્થ હિંસાદિક કાર્યોમાં લગાવી નષ્ટ ન કરો. આ વાતને સમજાવતાં સૂત્રકાર શિષ્યો પ્રતિ કહે છે—મનુષ્ય ભવ સિવાય બીજા કોઈ પણ ભવમાં સંપૂર્ણ મોક્ષમાર્ગની પ્રાપ્તિ જીવને થતી નથી. માટે જ્ઞાનીઓએ તેની પ્રાપ્તિ દુર્લભ બતાવી છે. તેને પ્રાપ્ત કરી જીવેના દસ દ્રવ્ય પ્રાણો (૫ ઇન્દ્રિય, ૩ બળ, ૧ આયુ અને ૧ શ્વાસોચ્છ્વાસ-૧૦)નો વિયોગ કરવામાં જ તેને વ્યર્થ ગુમાવવો તે બુદ્ધિમાન મનુષ્યનું કામ નથી.

આ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિની સફળતા તો ત્યારે જ છે કે તેનાથી સંયમનું આરાધન કરવામાં આવે અને મુક્તિ માર્ગનો પથિક બની જાય, તેથી હે શિષ્ય ! તમારું કર્તવ્ય છે કે તમે આ દુર્લભ મનુષ્ય ભવ મેળવીને વ્યર્થ હિંસાદિક કાર્યોમાં ન ફસતાં મોક્ષમાર્ગના પથિક બનો, અને પોતાનાં આ મનુષ્યભવને સફળ બનાવો. એ જ સૂત્રનો આશય છે. અર્થાત્ મનુષ્યભવમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરી તમે પ્રાણીઓના

પ્રાણાન્=પશ્ચેન્દ્રિયબલત્રયોચ્છ્વાસનિઃશ્વાસાયુષ્કરૂપાન્ દશવિધાન્ નો સમારભેથાઃ  
=નાતિપાતયેરિત્યર્થઃ । પ્રાણિનાં પ્રાણાતિપાતં મા કૃથા ઇતિ ભાવઃ । ઇતિ બ્રવીમિ-  
ઇતિશબ્દઃ ઉદ્દેશપરિસમાસિબોધકઃ, બ્રવીમિ=યથા ભગવન્મુખાન્મયા શ્રુતં તથા  
કથયामीત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

॥ ઇતિ તૃતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ સમ્પૂર્ણઃ ॥ ૩-૨ ॥

વ્યપરોપણ મત કરો । ‘ઇતિ’ શબ્દ ઇસ ઉદ્દેશકી સમાસિકા સૂચક છે ।  
“બ્રવીમિ” યહ પદ બતલાતા છે કે જૈસા મૈને ભગવાનકે મુખસે સુના  
હૈ વૈસાહી તુમસે કહા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

॥ ત્રીસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ સમાસ ॥ ૩-૨ ॥

પ્રાણુનો ધાત ન કરો. “ઇતિ” શબ્દ આ ઉદ્દેશની સમાસિનું સૂચક છે. “બ્રવીમિ”  
આ પદ બતાવે છે કે જેવું મેં ભગવાનના મુખથી સાંભળ્યું છે તેવું જ તમોને  
કહ્યું છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ સમાસ ॥ ૩-૨ ॥

## ॥ अथ तृतीयाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः ॥

इहानन्तरद्वितीयोद्देशके जात्या वृद्ध्या च दुःखं, तद्ध्याच्च शीतोष्णपरीषहसहनं च प्रतिबोधितम् । अथ तत्सहनमात्रेण पापकर्मानाचरणमात्रेण वा चारित्र्याचरणरहितः श्रमणो न भवतीति प्रतिबोधयितुं तृतीयोद्देशकं प्रस्तुवन् प्रथमं सूत्रमाह—  
'संधिं लोगस्स' इत्यादि ।

मूलम्—संधिं लोगस्स जाणित्ता ॥ सू० १ ॥

छाया—सन्धि लोकस्य ज्ञात्वा ॥ सू० १ ॥

### । तीसरे अध्ययनका तीसरा उद्देश ।

इसके द्वितीय उद्देशमें प्राणियोंकी गर्भसे लगा कर बालादि वृद्धावस्था पर्यन्त सब ही अवस्थाएँ दुःखोंसे समन्वित हैं, उन दुःखोंसे भयभीत प्राणियोंको आत्मकल्याणके मार्गस्वरूप संयमकी आराधना करनी चाहिये, इस आराधनामें उन्हें शीत-उष्ण परीषहोंको सहन करना चाहिये, यह सब विषय बतलाया जा चुका है, अर्थात् मोक्षाभिलाषीके लिये यह सब समझाया जा चुका है । अब इस तीसरे उद्देशमें यह समझाया जायगा कि जो चारित्र्यके आचरणसे रहित है वह भले ही शीत उष्ण परीषहोंको सहे, पापकर्मोंको न भी करे तो भी वह श्रमण नहीं है । इसी अभिप्रायको लेकर सूत्रकार प्रथम सूत्रको कहते हैं—'संधिं' इत्यादि।

### ત્રીજા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ

અગાઉના બીજા ઉદ્દેશમાં પ્રાણીઓની ગર્ભથી માંડી બાલાદિ વૃદ્ધાવસ્થા પર્યન્ત સઘળી અવસ્થાઓ દુઃખોથી ભરેલી છે, તે દુઃખોથી ભયભીત પ્રાણીઓને આત્મકલ્યાણના માર્ગસ્વરૂપ સંયમની આરાધના કરવી જોઈએ. આ આરાધનામાં તેણે શીત અને ઉષ્ણ પરીષદો સહન કરવા જોઈએ. આ સઘળા વિષયો બતાવવામાં આવેલ છે. અર્થાત્ મોક્ષાભિલાષીએ માટે આ સઘળું સમજાવવામાં આવેલ છે. હવે આ ત્રીજા ઉદ્દેશમાં એ સમજાવવામાં આવશે કે જે ચારિત્રના આચરણથી રહિત છે તે ભલે શીત અને ઉષ્ણ પરીષદો સહન કરે, પાપકર્મો પણ ભલે ન કરે, તો પણ તે શ્રમણ નથી. આ અભિપ્રાયને લઈને સૂત્રકાર પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—  
'સંધિં લોગસ્સ' ઇત્યાદિ.



સંધાનં સન્ધિઃ=ત્રુચ્યતઃ પુનઃ સંમીલનં, સ દ્વિધા-દ્રવ્યસન્ધિર્ભાવસન્ધિશ્ચેતિ । તત્ર દ્રવ્યસન્ધિઃ=કુડ્યવસ્ત્રાદેઃ સંધાનં, ભાવસન્ધિઃ=ચારિત્રમોહનીયક્ષયોપશમઃ, તં જ્ઞાત્વા=વિદિત્વા જ્ઞાતવત્ इत्यर्थः, લોકસ્ય=ક્ષાયોપશમિકાદિભાવલોકસ્ય પ્રમાદઃ શ્રેયસે ન ભવતિ । યદ્વા-સન્ધિઃ=શ્રુતચારિત્રલક્ષણો ધર્મારાધનાવસરઃ, તં જ્ઞાત્વા લોકસ્ય=ષડ્જીવનિકાયરૂપસ્ય દુઃસ્વોત્પાદનં ન કુર્યાત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સર્વત્રાત્મૌપમ્યેન સુખં દુઃખં વા જાનીયાદિત્યાહ-‘આયઓ’ इत्यादि ।

મૂલમ-આયઓ બહિયા પાસ, તમ્હા ન હંતા ન વિધાયણ ॥૨॥

છાયા-આત્મતો બહિઃ પશ્ય । તસ્માન્ન હન્તા ન વિધાતયેત્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા-આત્મતઃ યથાऽऽત્મનઃ સુખં પ્રિયં, દુઃખમપ્રિયમ્, તથા-બહિઃ=આત્મવ્યતિરિક્તાનાં પ્રાણિનામપિ પશ્ય=જાનીહિ । આત્મતુલ્યં સુખં દુઃખં સર્વપ્રાણિનાં વિજ્ઞાય કિં કર્તવ્યમિત્યાહ-‘તસ્માદ્’ इत्यादि ।

ટૂટી વસ્તુકો જોડનાં હસકા નામ સંધિ હૈ । વહ દો પ્રકારકી હૈ—

(૧) દ્રવ્યસન્ધિ, (૨) ભાવસન્ધિ । ભીંત ઓર વસ્ત્ર આદિકા જોડના-યહ દ્રવ્યસન્ધિ, ઓર ચારિત્રમોહનીયકા ક્ષયોપશમ ભાવસન્ધિ હૈ । હસ સન્ધિકે જ્ઞાતા મુનિકો ક્ષાયોપશમિકાદિ ભાવલોકકે વિષયમેં પ્રમાદ કરના ઉચિત નહીં હૈ । અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકે આરાધનકા અવસર મી સન્ધિ હૈ । હસકો જાનકર ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકો દુઃખ ઉત્પન્ન ન કરે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

‘સમસ્ત સંસારી જીવોંકો સુખ તથા દુઃખ મેરે હી સમાન પ્રિય ઓર અપ્રિય હૈ’ એસા જાનનાં ચાહિયે, હસે સ્પષ્ટ કરતે હૈ—‘આયઓ’ इ०

સંયમી જીવ સદા હસ વાતકા પૂર્ણ ધ્યાન રહે કિ-જિસ પ્રકાર મુક્તે સુખ પ્રિય ઓર દુઃખ અપ્રિય હૈ હસી પ્રકાર મુક્તસે ભિન્ન અન્ય સમસ્ત

ભાંગી ગયેલ વસ્તુને જોડવી તેનું નામ સંધિ છે. તે બે પ્રકારની છે. (૧) દ્રવ્યસંધિ (૨) ભાવસંધિ. ભીંત અને વસ્ત્ર આદિનું જોડવું તે દ્રવ્યસંધિ અને ચારિત્રમોહનીયનો ક્ષયોપશમ ભાવસંધિ છે. આ સંધિના જ્ઞાતા મુનિને ક્ષાયોપશમિકાદિ ભાવલોકના વિષયમાં પ્રમાદ કરવો ઉચિત નથી. અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનાં આરાધનનો અવસર પણ સંધિ છે. તેને જાણીને ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકને દુઃખ ઉત્પન્ન ન કરે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સમસ્ત સંસારી જીવોને સુખ અને દુઃખ મારી જ માફક પ્રિય અને અપ્રિય છે, એવું જાણવું જોઈએ, તેને સ્પષ્ટ કરે છે—‘આયઓ’ इ०

સંયમી જીવ સદા એ વાતનું પૂર્ણ ધ્યાન રાખે કે જે પ્રકારે મને સુખ પ્રિય અને દુઃખ અપ્રિય છે તે પ્રકારે મારાથી ભિન્ન અન્ય સમસ્ત સંસારી જીવોને

યતઃ સર્વેષાં પ્રાણિનાં સુખેઽભિલાષો દુઃખે દ્વેષઃ, તસ્માત્ તેષાં ન હન્તાન પ્રાણાતિપાતકઃ સ્યાત્ । અન્યૈરપિ તાન્ ન વિઘાતયેત્, ઘનન્તમન્યં નાનુમોદયેત્ । યદ્યપિ કુતીર્થિકા ઉદ્દિષ્યભોજિનો દ્રવ્યલિઙ્ગિનો દણ્ડિનથ્ સ્વયં પાકાદિભિઃ સ્થૂલાન્ પ્રાણિનો ન ઘનન્તિ, તથાપ્યન્યૈર્ઘાતયન્તિ ॥ સૂ. ૨ ॥

સંસારી જીવોંકો ભી યહ સુખ પ્રિય ઓર દુઃખ અપ્રિય હૈ । હસ લિયે ઉન જીવોંકે પ્રાણોંકો મૈં કિસી ભી રૂપમેં કષ્ટ ન પહુંચાઝું, દૂસરોંસે ભી ઉન્હેં મૈં કષ્ટ ન પહુંચવાઝું, કષ્ટ દેનેવાલે યા ઘાત કરનેવાલે અન્યકી મૈં અનુમોદના ભી ન કરૂં । યદ્યપિ કુતીર્થિક-અન્યમતાવલમ્બી સાધુ સન્યાસી, ઉદ્દિષ્ટભોજી, દ્રવ્યલિઙ્ગી, તથા દણ્ડી આદિ સ્વયં રસોઈ આદિ પકાકર નહીં खाते पीते हैं, હસ પ્રકાર વે સ્વયં સ્થૂલ જીવોંકી હિંસા નહીં કરતે હૈં ફિર ભી દૂસરોંસે અપને લિયે જીવોંકી હિંસા કરાતે હી હૈં, ક્યોં કિ વે અપને નિમિત્ત પાકાદિ આરંભ દૂસરોંસે કરાતે હૈં, ઉસ આરંભ મૈં જો હિંસા હોતી હૈં ઉસકા નિમિત્ત ઉન્હેં હોના પડતા હૈં ।

ભાવાર્થ—સચ્ચે મુનિ હોનેકે લિયે પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોંકા ત્યાગ મન વચન ઓર કાયસે, એવં કૃત કારિત ઓર અનુમોદનાસે કરના ચાહિયે તમી આત્મામેં સાધુતા આતી હૈં । ડપર-ડપરસે હિંસાદિ પાપ છોડનેસે અથવા હિંસાદિક પાપ સ્વયં ન કરને સે મુનિપના નહીં આતા હૈં । ઉસકી પ્રાપ્તિકે લિયે જિસ પ્રકાર જીવ સ્વયં હિંસાકા ત્યાગ કરતા હૈં, ઉસી પ્રકાર વહ દૂસરોંસે અપને નિમિત્ત હિંસાદિક નહીં કરા સકતા હૈં, ઓર

પણુ આ સુખ પ્રિય અને દુઃખ અપ્રિય છે. માટે તે જીવોને હું કેઈ પણ પ્રકારે દુઃખ ન પહોંચાડું, બીજાથી પણ તેઓને દુઃખ ન પહોંચાડવું, કષ્ટ દેવાવાળા અને ઘાત કરવાવાળા બીજાઓની હું અનુમોદના પણ ન કરું. કદાચ કુતીર્થિક-અન્યમતાવલમ્બી સાધુ સંન્યાસી ઉદ્દિષ્ટભોજી દ્રવ્યલિંગી તથા દંડી વિગેરે સ્વયં રસોઈ આદિ પકાવીને ખાતા પીતા નથી, તે પ્રકારે તેઓ સ્વયં સ્થૂલ જીવોની હિંસા કરતા નથી તો પણ બીજાથી પોતાને માટે જીવોની હિંસા કરાવે છે જ. કારણ કે તેઓ પોતાના નિમિત્ત પાકાદિ આરંભ બીજાઓથી કરાવે છે. તે આરંભમાં જે હિંસા થાય છે તેનું નિમિત્ત તેને થવું પડે છે

ભાવાર્થ—સાચા મુનિ થવા માટે પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોનો ત્યાગ મન વચન અને કાયાથી તેમજ કૃત કારિત અને અનુમોદનાથી કરવો જોઈએ, ત્યારે જ આત્મામાં સાધુતા આવે છે. ઉપર-ઉપરથી હિંસાદિ પાપ છોડવાથી અને હિંસાદિક પાપ સ્વયં ન કરવાથી મુનિપણું આવતું નથી. તેની પ્રાપ્તિ માટે જે પ્રકારે જીવ સ્વયં હિંસાનો ત્યાગ કરે છે તે પ્રકારે તે બીજાઓથી પણ પોતાને નિમિત્ત હિંસાદિક



પાપકર્માનાચરણમાત્રેણ શ્રમણો ન ભવતિ કિં તુ સમ્યગાસ્રવનિરોધેનેત્યાહ-  
'જમિણં' ઇત્યાદિ।

મૂલમ્—જમિણં અન્નમન્નવિતિગિચ્છાણ પઢિલેહાણ ન કરેહ  
પાવં કમ્મં, કિં તત્થ મુણી કારણં સિયા ?, સમયં તત્થુવ્વેહાણ  
અપ્પાણં વિપ્પસાયણ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

હાયા—યદિદમ્ અન્યોન્યવિચિકિત્સયા પ્રત્યુપેક્ષ્ય ન કરોતિ પાપં કર્મ ।  
કિં તત્ર મુનિઃ કારણં સ્યાત્ ? સમયં તત્રોત્પેક્ષ્ય આત્માનં વિપ્રસાદયેત્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—યદિદં પાપં=પાપાનુવન્ધિ કર્મ=પચનપાચનપરિગ્રહાદિલક્ષણમ્ અન્યો-  
ન્યવિચિકિત્સયા-વિચિકિત્સા=આશંકા ભયં લજ્જા વા, અન્યોન્યસ્ય=પરસ્પરસ્ય યા  
વિચિકિત્સા=આશંકા, યદ્વા-અન્યોન્યસ્માત્=પરસ્પરતો ભયં લજ્જા વા, તયા પ્રત્યુ-

ન અપને લિયે હિંસા કરનેવાલોંકી અનુમોદના હી કર સકતા હૈ । યદિ  
એસા કરતા હૈ તો વહ સાધુ નહીં કહલા સકતા । જો સાધુ હો કર  
જીવહિંસાકે ભયસે સ્વયં પાકાદિક ક્રિયા તો નહીં કરતે હૈં પરન્તુ ઉદિષ્ટ  
ભોજન લેતે હૈં, તથા અપને લિયે દૂસરોંસે ભોજન તૈયાર કરવાતે હૈં વે નવ  
કોટિસે હિંસા કે ત્યાગી નહીં હૈં, અતઃ વે સાધુ ભી નહીં હૈં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

પાપ કર્મ નહીં કરને માત્રસે પ્રાણી મુનિ નહીં હોતા હૈં કિન્તુ કર્મો  
કે આસ્રવકો ભલી પ્રકાર રોકનેસે હી વહ મુનિ હોતા હૈં, અબ હસી  
વાતકો સ્પષ્ટ કરતે હૈં—'જમિણં' ઇત્યાદિ ।

જો મુનિ-અવસ્થામૈં પાપકર્મોં કે નહીં કરનેકે કારણ હૈં વે પ્રત્યક્ષ  
હૈં । વે યે હૈં—આશંકા, ભય અથવા લજ્જા । અર્થાત્ મુનિ હો કર ભી જો  
પાપ નહીં કરતા હૈં ઉસમૈં પ્રધાન કારણ પરસ્પરકી અથવા એક દૂસરેસે

કરાવતા નથી, અને પોતાને માટે હિંસા કરવાવાળાઓની અનુમોદના પણ કરતા  
નથી. કદાચ એવું કરે તો તેને સાધુ કહેવામાં આવતો નથી. જે સાધુ બની  
છેવ હિંસાના ભયથી સ્વયં પાકાદિક ક્રિયા નથી કરતા પરંતુ ઉદિષ્ટ ભોજન લે છે.  
તથા પોતાને માટે બીજાઓથી ભોજન તૈયાર કરાવે છે તેઓ નવ કોટિથી હિંસાના  
ત્યાગી નથી તેમજ તેઓ સાચા સાધુ પણ નથી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

પાપકર્મ નહિ કરવા માત્રથી મુનિ બનતા નથી પણ કર્મોના આસ્રવને ભલી  
પ્રકાર રોકવાથી જ મુનિ થાય છે, તે વાતને સ્પષ્ટ કરે છે—'જમિણં' ઇત્યાદિ.

જે મુનિ અવસ્થામાં પાપકર્મો નહિ કરવાના કારણે છે તે પ્રત્યક્ષ છે. તે  
આ છે—આશંકા ભય અથવા લજ્જા. અર્થાત્ મુનિ બનીને પણ જે પાપ કરતા નથી  
તેમાં પ્રધાન કારણ પરસ્પરની અથવા એક બીજાઓથી પરસ્પરમાં આશંકા ભય



પેક્ષ્ય=મનસિ વિચાર્ય ન કરોતિ । તત્ર=પાપકર્માનાચરણે તસ્ય કિં મુનિઃ=મુનિત્વં  
કારણં સ્યાત્ ? ન, યતસ્તત્ર પાપકર્માનાચરણે અન્યોન્યવિચિકિત્સૈવ કારણં, ન તુ  
મુનિત્વમ્ । યસ્તુ મુનિર્ભવતિ તસ્યૈવ મુનિત્વં પાપકર્માનાચરણે કારણં ભવતીતિ ।  
યદ્વા-‘કિમ્’-ઇતિ કાક્વા નિર્દેશઃ । ‘મુળી’ ઇતિ સમ્મ્યન્તમ્, તતથ-‘મુનો’-  
ઇતિચ્છાયા । તત્ર=તસ્મિન્ મુનો=મુનિત્વે કિં પાપકર્માનાચરણમેવ કારણમ્ ? અપિ  
તુ ન, નહિ અન્યોન્યવિચિકિત્સયા પાપમનનુતિષ્ઠન્ મુનિર્ભવતીતિ । તર્હિ કથં મુનિર્ભ-  
વતિ ? ઇત્યાહ-‘સમયં તત્થુવ્વેહાણ્’ ઇત્યાદિ । તત્ર સમયમ્=આગમમ્ ઉત્પેક્ષ્ય=  
પર્યાલોચ્ય આત્માનં વિપ્રસાદયેત્, જિનપ્રવચનરહસ્યપર્યાલોચનેનાત્માનમપ્રમાદ-  
શુભભાવનાદિભિર્વિવિધૈરુપાયૈઃ પ્રસન્નં કુર્યાદિત્યર્થઃ । શુભાધ્યવસાયપૂર્વકમાગમો-  
ક્તાનુસારેણ યદનુષ્ઠાનં તત્સર્વં મુનિત્વે કારણમિતિ ભાવઃ । इदं निश्चयनयाभिप्रायेण ।

પરસ્પરમેં આશઙ્કા, ભય અથવા લજ્જા હૈ, ન કિ મુનિત્વ । વહ તો ઇન્હીં  
સબ બાતોંકો મનમેં વિચાર કર પાપાનુબન્ધી કર્મ જો પચન પાચન એવં  
પરિગ્રહ આદિ હૈં ઉન્હેં નહીં કરતા હૈ ।

અથવા-પરસ્પરકી આશઙ્કા યા મયાદિસે પાપકર્મોંકા નહીં કરના કયા  
યહી મુનિપનાકા કારણ હૈ ? હસ પ્રકારકી આશઙ્કાકા ઉત્તર દેતે હૈ-  
‘સમયં તત્થુવ્વેહાણ્’ ઇત્યાદિ । સમય શબ્દકા અર્થ ‘આગમ’ તથા  
‘ઉત્પેક્ષ્ય’ શબ્દકા અર્થ ‘વિચાર કર’ હૈ, અર્થાત્-જિનપ્રતિપાદિત આ-  
ગમકે રહસ્યકા વિચાર કર ‘અપ્પાણં વિપ્પસાયણ્’ આત્માનં વિપ્રસાદયેત્,  
મુનિ અપની આત્માકો અપ્રમાદ એવં શુભ ભાવનાદિક વિવિધ ઉપાયોંસે  
પ્રસન્ન કરે । શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક આગમપ્રતિપાદિત વિધિકે અનુસાર જો  
અનુષ્ઠાન મુનિ-અવસ્થામેં કરનેયોગ્ય કહે ગયે હૈંવે સબ કરે, યે હી અનુ-  
ષ્ઠાન મુનિપનામેં કારણ હૈ । યહ કથન નિશ્ચય નયકે અભિપ્રાયસે કિયા હૈ ।

અથવા લક્ષણ છે, ન કે મુનિત્વ. તેઓ (મુનિઓ) તો આ સઘળી વાતોનો મનમાં વિચાર  
કરી પાપાનુબન્ધી કર્મ જે પચન-પાચન અને પરિગ્રહ આદિ છે તેને કરતા નથી.

અથવા-પરસ્પરની આશંકા અથવા ભયાદિથી પાપકર્મોંનું નહિ કરવું તે  
શું મુનિપણું કારણ છે ? આ પ્રકારની આશંકાનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે-‘સમયં  
તત્થુવ્વેહાણ્’ ઇત્યાદિ. સમય શબ્દનો અર્થ ‘આગમ’ તથા ‘ઉત્પેક્ષ્ય’ શબ્દનો  
અર્થ ‘વિચાર કરી’ છે અર્થાત્ જિનપ્રતિપાદિત આગમના રહસ્યનો વિચાર કરી  
‘અપ્પાણં વિપ્પસાયણ્’ આત્માનં વિપ્રસાદયેત્-મુનિ પોતાના આત્માને અપ્રમાદ અને શુભ  
ભાવનાદિક વિવિધ ઉપાયોથી પ્રસન્ન કરે. શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક આગમપ્રતિપાદિત વિધિ-  
અનુસાર જે અનુષ્ઠાન મુનિ અવસ્થામાં કરવાયોગ્ય કહેવામાં આવેલ છે તે સઘળા કરે  
તે જ અનુષ્ઠાન મુનિપણું કારણ છે. આ કથન નિશ્ચયનયના અભિપ્રાયથી કરેલ છે.

યદ્વા-પરસ્પરાશઙ્કયા ભયેન લજ્જયા વા યદાધાકર્માદીનિ પરિહરતિ, યથા-કાલં પ્રતિલેખનાદીનિ કરોતિ, માસક્ષણાનિ, આતાપનાદિકં ચ સમાચરતિ, તદિદં સર્વં કિં મુનિત્વે કારણં સ્યાન્ન વા? इति शिष्याशङ्कानिराकरणाय कथयति-‘जमिणं’ इत्यादि । अत्रोच्यते-जिनशासने पदार्थतत्त्वाधिगमाय नयद्वयमुपादीयते । तत्र तावन्निश्चयनयमाश्रित्य अन्योपाध्यनावेशेन परिवर्जिताऽकल्पनीयव्यापारत्वमेव मुनित्वे कारणम् । मुनित्वं हि शुभान्तःकरणपरिणामेन प्रवचनोक्तविधिनाऽनुष्ठित-क्रियस्यैव भवति, नान्यस्य ।

અથવા-પરસ્પરકી આશઙ્કાસે ભયસે યા લજ્જાસે જો આધાકર્માદિક દોષોંકા પરિહાર કરતા હૈ, ઓર સમયાનુસાર પડિલેહનાદિક ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ, માસખમણ ઓર આતાપના આદિ યોગોંકા અનુષ્ઠાન કરતા હૈ, યે સબ ક્રિયાઈ કયા મુનિપનેમેં કારણ હૈં યા નહીં? इस प्रकार की शिष्यकी आशङ्काका परिहार करनेके लिये सूत्रकारने “जमिणं” इत्यादि सूत्र कहा है । जिनशासनमें पदार्थके स्वरूपको जाननेके लिये दो नयोंका विधान है-(१) निश्चय नय और (२) व्यवहार नय । इनमें प्रथम निश्चयनयकी अपेक्षासे जो अन्य किसी सांसारिक उपाधिके संसर्गसे रहित हो कर अकल्पनीय व्यापारसे दूर हो चुका है, इस प्रकारका उसका रहन-सहन ही उसके मुनिपनेमें कारणभूत है, क्योंकि कि शुभ अन्तःकरणके परिणामसे शास्त्रोक्त विधिके अनुसार अपनी क्रियाओंको करनेवाले व्यक्तिके ही मुनिपना होता है, अन्यको नहीं ।

અથવા-પરસ્પરની આશંકાથી ભયથી, લજ્જાથી જે આધાકર્માદિક દોષોનો પરિહાર કરે છે, અને સમયાનુસાર પડિલેહનાદિક ક્રિયાઓ કરે છે, માસખમણ અને આતાપના આદિ યોગોનું અનુષ્ઠાન કરે છે, એ સઘળી ક્રિયાઓ શું મુનિપણનું કારણ છે યા નહિ? આ પ્રકારની શિષ્યની આશંકાનો પરિહાર કરવા માટે સૂત્રકાર “જમિણ” ઇત્યાદિ સૂત્ર કહેલ છે. જીનશાસનમાં પદાર્થના સ્વરૂપને જાણવા માટે બે નયોનું વિધાન છે. (૧) નિશ્ચયનય અને (૨) વ્યવહારનય. તેમાં પ્રથમ નિશ્ચયનયની અપેક્ષાથી જે અન્ય કોઈ સાંસારિક ઉપાધિના સંસર્ગથી રહિત થઈને અકલ્પનીય વ્યાપારથી દૂર થયેલ છે, આ પ્રકારનું તેનું રહન-સહન જ તેના મુનિપણનું કારણભૂત છે. કારણ કે શુભ અંતઃકરણના પરિણામથી શાસ્ત્રોક્ત વિધિ-અનુસાર પોતાની ક્રિયાઓને કરવાવાળી વ્યક્તિને જ મુનિપણ થાય છે. બીજાને નહિ.

વ્યવહારનયે તુ યઃ પરસ્પરાશઙ્કયા ભયાદિના વા કેનચિત્ કારણેનાઽઽધા-  
કર્માદિ પરિવર્જયતિ, પ્રતિલેખનાદિકં કરોતિ, માસક્ષપણાદિતપશ્ચાચરતિ, તસ્ય  
મુનિત્વે તદનુષ્ઠાનં કારણં ભવત્યેવ, તાદૃશાનુષ્ઠાનસ્ય નિશ્ચયનયાશ્રિતમુનિત્વહેતુ-  
શુભાધ્યવસાયજનકત્વાત્ । નિશ્ચયમુપલબ્ધું વ્યવહારઃ શરણીકરણીયો ભવતિ, યથા  
નદ્યાદિતરણં કરચરણપ્રચાલનાદિવ્યવહારેણ વિના નોપપદ્યતે. યથા વા રજ્જુ-  
સોપાનાદ્યાલમ્બનેન વિના પ્રસાદાંશિખરારોહણં ન સંજાયતે ॥ સૂ. ૩ ॥

આત્મનઃ પ્રસન્નતા સંયમારાધનતત્પરસ્ય ભવતિ, અતસ્તત્ર પ્રમાદો ન કાર્ય  
ઇત્યાહ—‘અણ્ણપરમં’ ઇત્યાદિ ।

વ્યવહાર નયકી અપેક્ષાસે તો જો પરસ્પરકી આશઙ્કા અથવા ભયા-  
દિક કિસી કારણકે વશસે આધાકર્માદિક દોષોંકા પરિહાર કરતા હૈ,  
સમયાનુસાર પ્રતિલેખનાદિક ક્રિયાઓંકો, એવં માસક્ષપણાદિક તપકો  
આચરતા હૈ, ઉસ વ્યક્તિકે મુનિપનેમેં યે સબ બાતેં કારણ હોતી હૈં । વ્ય-  
વહાર, નિશ્ચયકા હેતુ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકારકે વ્યાવહારિક અનુષ્ઠાન  
નિશ્ચયનયકી અપેક્ષાસે મુનિપનેકે કારણભૂત શુભ અધ્યવસાયકે ઉત્પાદક  
હોતે હૈં । નિશ્ચયકો પાનેકે લિયે વ્યવહારકા અવલમ્બન કરના હી પડતા  
હૈ । જૈસે નદી આદિકા તૈરના હાથ પૈર આદિકે ચલાનેરૂપ વ્યવહાર ક્રિયા  
કે વિના, અથવા રજ્જુ-રસ્સી યા સીદી આદિકે અવલમ્બન વિના મકાન  
કે ઉપર ચઢના નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

આત્મામેં પ્રસન્નતા સંયમકે આરાધનમેં તત્પર મુનિકો હી હોતી હૈ ।  
ઇસ લિયે સંયમકે આરાધનમેં મુનિકો પ્રમાદ નહીં કરના ચાહિયે, ઇસ  
બાતકો પ્રગટ કરતે હૈં—‘અણ્ણપરમં’ ઇત્યાદિ ।

વ્યવહારનયની અપેક્ષાથી તો જે પરસ્પરની આશંકા અને ભયાદિક કોઈ  
કારણના વશથી આધાકર્માદિક દોષોનો પરિહાર કરે છે, સમયાનુસાર પ્રતિલેખ-  
નાદિ ક્રિયાઓને તેમજ માસક્ષપણાદિક તપને આચરે છે, તે વ્યક્તિના મુનિપણામાં  
એ સમગ્રી વાતો કારણ બને છે. વ્યવહાર, નિશ્ચયનો હેતુ થાય છે. આ પ્રકારના  
વ્યાવહારિક અનુષ્ઠાન નિશ્ચયનયની અપેક્ષાથી મુનિપણના કારણભૂત શુભ અધ્ય-  
વસાયના ઉત્પાદક બને છે. નિશ્ચય મેળવવા માટે વ્યવહારનું અવલંબન લેવું જ  
પડે છે. જેમ નદી આદિનું તરવું હાથપગ આદિના ચલાવવારૂપ વ્યવહાર કર્યા  
બગર, અને રજ્જુ-રસ્સી અગર સીડી આદિના અવલંબન વિના મકાન ઉપર  
ચઢવું બની શકતું નથી ॥ સૂ. ૩ ॥

આત્મામાં પ્રસન્નતા સંયમ આરાધનમાં તત્પર મુનિને જ થાય છે, માટે  
સંયમ આરાધનમાં મુનિએ પ્રમાદ નહિ કરવો જોઈ એ. એ વાતને પ્રગટ કરે  
છે—‘અણ્ણપરમં’ ઇત્યાદિ.



મૂલમ્—અણ્ણપરમં નાણી, નો પમાયણ કયાઈ વિ ।

આયગુત્તે સયા વીરે, જાયામાયાઈ જાવણ ॥સૂ૦ ૪॥

છાયા—અનન્યપરમં જ્ઞાની નો પ્રમાદયેત્ કદાચિદપિ ।

આત્મગુપ્તઃ સદા વીરઃ યાત્રામાત્રયા યાપયેત્ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—જ્ઞાની=સમ્યગ્દષ્ટિઃ, અનન્યપરમં=નાન્યત્ પરમમ્ ઉત્કૃષ્ટં યસ્માત્-અનન્યપરમં=ચારિત્રં, તત્ કદાચિદપિ નો પ્રમાદયેત્=કસ્મિન્નપિ કાલે ચારિત્રે પ્રમાદં ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । કેનોપાયેન પ્રમાદો વારણીયઃ? इत्यत आह—“आत्मगुप्त” इत्यादि । आत्मगुप्तः=आत्मना=इन्द्रियनोइन्द्रियेण गुप्तः, इन्द्रियनोइन्द्रियनिग्रही-

જ્ઞાની-સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્ય ચારિત્રમ્નેં કિસીં મી સમય પ્રમાદ ન કરે । ‘અનન્યપરમ’ શબ્દકા અર્થ ચારિત્ર હૈ, ક્યોં કિ “અન્યત્ પરમં યસ્માત્ ન” જિસસે દૂસરી કોઈ વસ્તુ ઉત્કૃષ્ટ નહીં હૈ વહ અનન્યપરમ હૈ । શાસ્ત્રમ્નેં સાક્ષાત્ મોક્ષકી પ્રાપ્તિ કરાનેવાલા ચારિત્ર હી બતલાયા ગયા હૈ અતઃ વહી સર્વોત્કૃષ્ટ હૈ । પ્રમાદ ચારિત્રકા વિઘાતક હોતા હૈ હસી લિયે વહ સમ્યગ્દષ્ટિકે લિયે વર્જનીય કહા હૈ । પ્રમાદકો દૂર કરનેકા ઉપાય બતલાનેકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘આયગુત્તે’ इत्यादि, अर्थात् मुनि को सदा आत्मगुप्त-इन्द्रिय और नोइन्द्रिय-मनका विजयी बनना चाहिये । इन पर जब तक विजयरूपी अङ्कुश वह प्राप्त नहीं कर लेता है तब तक इनके आधीन बना हुआ साधु प्रमादसे रहित नहीं हो सकता । जिह्वा-इन्द्रियकी लोलुपतासे वह मात्रासे भी अधिक आहार ले लेता है । इस से प्रमादकी वृद्धि होती है । तथा अधिक सरस-रसीला आहार लेनेसे

જ્ઞાની-સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્ય ચારિત્રમાં કોઈ પણ સમય પ્રમાદ ન કરે । ‘અનન્યપરમ’ શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે કારણ કે “અન્યત્ પરમં યસ્માત્ ન” જેનાથી બીજી કોઈ વસ્તુ ઉત્કૃષ્ટ નથી તે અનન્યપરમ છે. શાસ્ત્રમાં સાક્ષાત્ મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરાવનાર ચારિત્ર જ બતાવવામાં આવેલ છે માટે તે જ સર્વોત્કૃષ્ટ છે. પ્રમાદ ચારિત્રનો વિઘાતક બને છે, માટે તે સમ્યગ્દષ્ટિ માટે વર્જનીય કહેલ છે. પ્રમાદને દૂર કરવાનો ઉપાય બતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘આયગુત્તે’ इत्यादि. अर्थात् मुनिचे सदा आत्मगुप्त-इन्द्रिय અને नोइन्द्रिय-मनना विजयी बनवुं जेछये. तेना उपर ज्यांसुधी विजयरूपी अङ्कुश ते प्राप्त नही करी लेता त्यांसुधी तेना आधीन बनेला साधु प्रमादથી रहित बनी शकता नही. लुलुप इन्द्रियनी लोलुपताથી ते मात्राથી પણ अधिक आहार લઈ લે છે. તેનાથી પ્રમાદની વૃદ્ધિ થાય છે, તથા અધિક સરસ-રસીલા આહાર લેવાથી ઇન્દ્રિયોને પણ

ત્યર્થઃ, સદા=સર્વસ્મિન્ કાલે, વીરઃ=કર્મવિદારણોત્સાહવાન્, યાત્રામાત્રયા=યાત્રા-સંયમયાત્રા તદર્થ યા માત્રા=જિનપ્રવચનોક્તમાહારાદિપ્રમાણં તયા, શરીરં યાપ-યેત્=નિર્વહેત્-ગમયેદિત્યર્થઃ ।

પ્રમાણાધિકેનાહારેણ રાજપિણ્ડાદિના વા ઇન્દ્રિયનિગ્રહો ન ભવતિ, તસ્માદ્ ધર્મોપાર્જનસહાયભૂતસ્ય શરીરસ્ય ધારણાર્થં પ્રમાણોપેતમાહારમઙ્ગીકુર્યાત્ । एवं કૃતે સતિ પ્રમાદો ન ભવતીતિ ભાવઃ । ઉક્તञ्च—

“ આહારાર્થં કર્મ કુર્યાદનિન્દ્યં, સ્યાદાહારઃ પ્રાણસંધારણાર્થમ્ ।

પ્રાણા ધાર્યાસ્તત્ત્વજિજ્ઞાસનાર્થં, તત્ત્વં જ્ઞેયં યેન દુઃસ્વાદ્ વિમુચ્યેત્ ” ॥૧॥૩૮॥

ઇન્દ્રિયોંકો ભી ઉત્તેજના મિલતી હૈ, હસસે ચતુર્થ વ્રતકી રક્ષામૈં ભી બાધા ઉપસ્થિત હોતી હૈ । હસી બાતકા વિચારકર સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘જાયા-માયા’ યાત્રામાત્રયા, ઇતિ, અર્થાત્-સંયમયાત્રાકે નિર્વાહયોગ્ય આહારાદિકકા ઉચિત પ્રમાણમૈં લેના બતલાતે હૈ । મુનિ કી સદા યહી ભાવના રહની ચાહિયે કિ-મૈં જૈસે ભી બને વૈસે નિર્દોષ ચારિત્રકી આરાધના કરતા હુઆ કર્મોંકો નષ્ટ કરૂં । હસ તરહકે ઉત્સાહસે સંપન્ન વહ મુનિ અપની સંયમરૂપી યાત્રાકી નિર્વિઘ્ન પરિસમાપ્તિકે લિયે જિનપ્રવચનમૈં પ્રતિપાદિત પ્રમાણકે અનુરૂપ આહારાદિ ગ્રહણ કરે । હસસે હી અપને શરીરકા નિર્વાહ કરે । પ્રમાણસે અધિક આહારકે લેનેસે અથવા અકલ્પનીય રાજપિણ્ડાદિકસે ઇન્દ્રિયોંકા નિગ્રહ નહીં હોતા હૈ । હસલિયે ધર્મકે ઉપાર્જનમૈં સહાયક શરીરકી રક્ષાકે લિયે શાસ્ત્રમૈં પ્રતિપાદિત માત્રાનુસાર આહાર લેના ચાહિયે । કહા ભી હૈ—

ઉત્તેજના મળે છે. તેથી ચતુર્થ વ્રતની રક્ષામાં પણ બાધા ઉપસ્થિત થાય છે. આ વાતનો વિચાર કરી સૂત્રકાર કહે છે—“ જાયામાયા ” યાત્રામાત્રયા, ઇતિ. અર્થાત્-સંયમયાત્રાના નિર્વાહયોગ્ય આહારાદિકનું ઉચિત પ્રમાણમાં લેવું બતાવેલ છે. સદા મુનિની એ ભાવના રહેલી જોઈએ કે હું જ્યાંસુધી અને ત્યાં સુધી નિર્દોષ ચારિત્રની આરાધના કરીને કર્મોનો નાશ કરું, આવા પ્રકારના ઉત્સાહથી સંપન્ન તે મુનિ પોતાની સંયમરૂપી યાત્રાની નિર્વિઘ્ન પરિસમાપ્તિ માટે જનપ્રવચનમાં પ્રતિપાદિત પ્રમાણને અનુરૂપ આહારાદિ ગ્રહણ કરે, તેનાથી જ પોતાના શરીરનો નિર્વાહ કરે. પ્રમાણથી અધિક આહાર લેવાથી અને અકલ્પનીય રાજપિણ્ડાદિકથી ઇન્દ્રિયોનો નિગ્રહ બનતો નથી માટે ધર્મના ઉપાર્જનમાં સહાયક શરીરની રક્ષા માટે શાસ્ત્રમાં પ્રતિપાદિત માત્રાનુસાર આહાર લેવો જોઈએ, કહ્યું પણ છે—



આત્મગુપ્તઃ કથં સ્યાદિતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ-‘વિરાગં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-વિરાગં રૂવેસુ ગચ્છિજ્ઞા મહયા યુદ્ધુર્હિં વા ॥સૂ૦ ૫॥

છાયા-વિરાગં રૂપેષુ ગચ્છેત્ મહત્સુ ક્ષુલકેષુ વા ॥ સૂ૦ ૫ ॥

“આહારાર્થં કર્મ કુર્યાદનિન્દ્યં, સ્યાદાહારઃ પ્રાણસંધારણાર્થમ્ ।

પ્રાણા ધાર્યાસ્તત્ત્વજિજ્ઞાસનાર્થં, તત્ત્વં જ્ઞેયં યેન દુઃસ્વાદ્ વિમુચ્યેત્ ॥૧॥”

આહારકે લિયે અનિન્દ્ય કર્મ કરે । આહારકા ગ્રહણ પ્રાણોંકી રક્ષા કે નિમિત્ત હૈ । પ્રાણોંકી રક્ષા તત્ત્વોંકી જિજ્ઞાસાકે લિયે હૈ, ઔર તત્ત્વ-જ્ઞાન અપનેકો ( જીવકો ) સાંસારિક દુઃસ્વોંસે છુડાનેકે લિયે હોતા હૈ ॥

ઇસલિયે સાધુકો આહારકી પ્રાપ્તિકે લિયે અનિન્દ્ય કર્મ ( એષણા-સમિતિયુક્ત પ્રવૃત્તિ ) કરના ચાહિયે નિન્દ્ય કર્મ નહીં । પ્રાણોંકી રક્ષાકે લિયે હી આહાર ગ્રહણ કરના ચાહિયે, વિષયાદિકોંકી યા પ્રમાદકી પુષ્ટિ કે લિયે નહીં । તત્ત્વોંકી વિચારણા કરનેકે લિયે હી પ્રાણોંકી રક્ષા કરની ચાહિયે, દૂસરે જીવોંકી હિંસાદિકકે લિયે નહીં । તત્ત્વજ્ઞાનકા વિચાર મી સાંસારિક દુઃસ્વોંસે છૂટનેકે લિયે કરના ચાહિયે, માન માયા આદિ કષાયકી પુષ્ટિકે લિયે નહીં । ઇસલિયે સંયમયાત્રાકા નિર્વાહકે લિયે માત્રાનુસાર આહાર લેના ચાહિયે જિસસે પ્રમાદ નહીં હો ॥ સૂ૦ ૪ ॥

મુનિ-આત્મગુપ્ત-ઇન્દ્રિય ઔર મનકા નિગ્રહ કરનેવાલા કૈસે બને ? એસી શિષ્યકી જિજ્ઞાસાકા સમાધાન કરતે હૈ-‘વિરાગં’ ઇત્યાદિ ।

“આહારાર્થં કર્મ કુર્યાદનિન્દ્યં, સ્યાદાહારઃ પ્રાણસંધારણાર્થમ્ ।

પ્રાણા ધાર્યાસ્તત્ત્વજિજ્ઞાસનાર્થં, તત્ત્વં જ્ઞેયં યેન દુઃસ્વાદ્ વિમુચ્યેત્” ॥૧॥

આહાર માટે અનિન્દ્ય કર્મ કરે. આહારનું ગ્રહણ પ્રાણોની રક્ષા નિમિત્ત છે. પ્રાણોની રક્ષા તત્ત્વોની જિજ્ઞાસા માટે છે, અને તત્ત્વજ્ઞાન પોતાને ( જીવને ) સાંસારિક દુઃખોથી છોડાવવા માટે થાય છે.

માટે સાધુએ આહારની પ્રાપ્તિ માટે અનિન્દ્ય કર્મ (એષણાસમિતિયુક્ત પ્રવૃત્તિ) કરવું જોઈએ, નિન્દ્ય કર્મ નહિ. પ્રાણોની રક્ષા માટે જ આહાર ગ્રહણ કરવો જોઈએ, વિષયાદિકોની અને પ્રમાદની પુષ્ટિ માટે નહિ. તત્ત્વોની વિચારણા કરવા માટે જ પ્રાણોની રક્ષા કરવી જોઈએ - ખીજા જીવોની હિંસાદિક માટે નહિ. તત્ત્વજ્ઞાનનો વિચાર પણ સાંસારિક દુઃખોથી છુટવા માટે કરવો જોઈએ - માન માયા આદિ કષાયની પુષ્ટિ માટે નહિ. માટે સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે માત્રાનુસાર આહાર લેવો જોઈએ જેથી પ્રમાદ ન થાય. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

મુનિ, આત્મગુપ્ત-ઇન્દ્રિય અને મનનો નિગ્રહ કરનાર કેવી રીતે બને ? એવી શિષ્યની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરે છે-‘વિરાગં’ ઇત્યાદિ.



ટીકા—રૂપેષુ=ચક્ષુર્વિષયીભૂતેષુ મનોજ્ઞેષુ રૂપેષુ વિરાગં ગચ્છેત્, રૂપં હિ શબ્દાદ્યપેક્ષયાઽતીવાક્ષિપતિ ચિત્તં, તસ્માદિહ રૂપગ્રહણમ્ । રૂપેષુ વૈરાગ્યસદ્ભાવે સતિ શેષવિષયેષ્વપિ તસ્ય સુતરાં સંભવાદિતિ ભાવઃ । મહત્સુ=દિવ્યભાવેન યાન્યવસ્થિતાનિ રૂપાણિ તેષુ, સૂત્રે આર્પણાદેકવચનમ્, ક્ષુલ્લકેષુ=ક્ષુદ્રેષુ રૂપેષુ યથા તિરસ્કાં, મનુષ્યાણાં તુ મધ્યમાનિ રૂપાણિ, તેષ્વપિ વિરાગં ગચ્છેદિતિ સમ્બન્ધઃ । આદ્યન્તરૂપગ્રહણેન મધ્યમાનામપિ ગ્રહણમ્ । અત્ર સપ્તમ્યર્થે તૃતીયા પ્રાકૃતત્વાત્ । યદ્વા-एकैकं રૂપં ત્રિવિધં-દિવ્યમધ્યમક્ષુદ્રભેદાત્ । કુબ્જાદીનાં ક્ષુદ્રાણિ, અન્યેષાં મધ્યમાનિ, કેષાંચિત્ પૂર્વભવસુકૃતિનાં દિવ્યાનિ રૂપાણિ ભવન્તિ ॥ સૂ. ૫ ॥

સાધુકા કર્તવ્ય છે કે જો વહ ચક્ષુરિન્દ્રિયકે વિષયભૂત જબ જબ સુંદર રૂપ હોં તબ-તબ ડનમેં અસારતા કી ભાવના ભા કર ડન સે વિરક્ત હોવે । સૂત્રમેં ‘રૂવેસુ-રૂપેષુ’ જો યહ પદ દિયા હૈ ડસસે સૂત્રકાર ડસ વાતકો વતલાતે હૈં કિ રૂપ હી શબ્દાદિક વિષયોંકી અપેક્ષા ચિત્તકો અપની ઓર અધિક આકૃષ્ટ કિયા કરતે હૈં । મુનિકો જબ રૂપમેં વૈરાગ્યકી જાગૃતિ હો જાવેગી તબ અન્ય રસાદિક વિષયોંમેં તો સ્વતઃ હી ડસકે ચિત્તમેં વૈરાગ્ય જાગૃત હો જાવેગા । ડસ લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ જો વહુત હી જ્યાદા સુંદર સ્વરૂપવાન્-દિવ્ય રૂપવાલા હૈ, જૈસે વિશિષ્ટ રૂપ દેવતાઓંમેં મધ્યમ રૂપ મનુષ્યોંમેં ઓર સામાન્ય રૂપ તિર્યચ્ચોંમેં હોતે હૈં-ડનમેં કમી મી ઇષ્ટ-અનિષ્ટકી કલ્પના સે અપને ચિત્તકો વાસિત ન કરે, સદા ડનમેં વિરક્ત બુદ્ધિ હી રખે । દિવ્ય, મધ્યમ ઓર ક્ષુદ્રકે ભેદસે રૂપ ત્રીન પ્રકાર કે હૈં । કુબ્જ આદિમેં ક્ષુદ્રરૂપ, ડનસે અન્યમેં મધ્યમ રૂપ ઓર કિન્હીં પુણ્યાત્માઓંમેં દિવ્યરૂપ હોતે હૈં ॥ સૂ. ૫ ॥

સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે ચક્ષુરિન્દ્રિયના વિષયભૂત જ્યાં જ્યાં સુંદર રૂપ હોય ત્યાં ત્યાં તેમાં અસારતાની ભાવના ભાવીને તેનાથી વિરક્ત બને. સૂત્રમાં ‘રૂવેસુ-રૂપેષુ’ જે આ પદ આપેલ છે તેનાથી સૂત્રકાર એ વાતને સમજાવે છે કે રૂપજ શબ્દાદિક વિષયોની અપેક્ષા ચિત્તને પોતાની તરફ અધિક આકૃષ્ટ કર્યા કરે છે, મુનિને જ્યારે રૂપમાં વૈરાગ્યની જાગૃતિ થઈ જશે ત્યારે અન્ય રસાદિક વિષયોમાં તો સ્વતઃ જ તેના ચિત્તમાં વૈરાગ્ય જાગૃત થઈ જશે. માટે સૂત્રકાર કહે છે કે જે ઘણા જ સુંદર સ્વરૂપવાન દિવ્ય સ્વરૂપવાળા છે-જેવી રીતે વિશિષ્ટ રૂપ દેવતાઓમાં, મધ્યમરૂપ મનુષ્યોમાં, અને સામાન્ય રૂપ તિર્યચોમાં હોય છે તેમાં કોઈ વખત પણ ઇષ્ટ-અનિષ્ટની કલ્પનાથી પોતાના ચિત્તને વાસિત ન કરે, સદા તેમાં વિરક્ત બુદ્ધિ જ રાખે. દિવ્ય મધ્યમ અને ક્ષુદ્રના ભેદથી રૂપ ત્રણ પ્રકારના છે. કુબ્જ આદિમાં ક્ષુદ્રરૂપ, તેનાથી અન્ય મધ્યમ રૂપ અને કોઈ પુણ્યાત્માઓમાં દિવ્ય રૂપ હોય છે ॥ સૂ. ૫ ॥

किमालम्ब्यैतत् कर्तव्यमित्याह—‘आगइ’ इत्यादि ।

मूलम्—आगइं गइं परिणाय दोहि वि अंतेहिं अदिस्स-  
माणे । से न छिज्जइ न भिज्जइ न डज्जइ न हम्मइ कंचणं  
सव्वलोए ॥ सू० ६ ॥

छाया—आगतिं गतिं परिज्ञाय द्वाभ्यामन्ताभ्यामदृश्यमानः । स न छिद्यते  
न भिद्यते न दह्यते न हन्यते केनचित् सर्वलोके ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘आगतिं गति’—मिति, आगतिः=आगमनं, गतिर्गमनं, तत्र तिरश्चां  
मनुष्याणां चागतिश्चतुर्विधा भवति, नरकादिचतुर्विधगतितस्तेषामागमनसद्भावात् ।

क्या विचार कर रूपादिकों में विरक्त बुद्धिवाला बने ? सो कहते  
हैं—‘आगइ’ इत्यादि ।

दूसरी गतिसे आनेका नाम आगति और दूसरी गतिमें जानेका  
नाम गति है । मनुष्य और तिर्यश्चोंकी आगति चार प्रकारसे होती है,  
अर्थात् चारों गतियोंसे आकर जीव मनुष्य और तिर्यश्च गतिमें जन्म  
लेते हैं । देव और नारकियोंकी आगति दो प्रकारसे होती है, अर्थात्  
तिर्यश्च और मनुष्य गतिसे आ कर ही जीव देवगति और नरकगतिमें  
उत्पन्न होते हैं । गति भी उन सबकी इसी तरहसे होती है । मनुष्य  
एवं तिर्यश्च गतिके जीव चारों गतियों में उत्पन्न हो सकते हैं परन्तु देव-  
गति एवं नरक गतिके जीव मनुष्य और तिर्यश्च गतिके सिवाय अन्य  
गतियोंमें जन्म नहीं लेते । देव च्यवकर दूसरे भवमें देवगतिमें और

शुं विचार करी इपाद्धिकोमां विरक्तबुद्धिवाणा जने ? ते कळे छे—‘आगइ’  
इत्यादि.

भील गतिथी आववानुं नाम आगति अने भील गतिमां जवानुं नाम  
गति छे. मनुष्य अने तिर्य्योनी आगति चार प्रकारनी होय छे. अर्थात् चार  
गतिथी आवीने लव मनुष्य अने तिर्य्य गतिमां जन्म दे छे. देव अने  
नारकीयोनी आगति दो प्रकारनी होय छे, अर्थात् तिर्य्य अने मनुष्य गतिथी  
आवीने लव देवगति अने नरकगतिमां उत्पन्न थाय छे. गति पणु ते सधणा-  
योनी आ प्रकारे ज होय छे. मनुष्य अने तिर्य्य गतिनो लव चार गतियोमां  
उत्पन्न थछ शके छे परंतु देवगति अने नरकगतिना लव मनुष्य अने तिर्य्य  
गतिना सिवाय अन्य गतियोमां जन्म देता नथी. देव अवीने भील लवमां



देवानां नारकिणां चागतिर्द्विविधैव, तेषां तिर्यग्मनुष्यगतिभ्यामेवाऽऽगमनात् । गतिरप्येवं भवति, केवलं मनुष्याणां गतिः पञ्चविधा प्रोक्ता, तेषां मोक्षगतिसंभवात् । तामागतिं गतिं च, परिज्ञाय=संसारचक्रे घटीयन्त्रवत् परिभ्रमणरूपामागतिं गतिं च बुद्ध्वा मनुष्याणां मोक्षगतिसंभवं चावगत्य स आगतिगतिस्वरूपाभिज्ञः, यद्वा-संसारदुःखभीतो मोक्षगतिसुखगवेषी, रूपादिषु विषयेषु अन्ताभ्याम्=स्वसत्तायां मुक्तेरन्तकारित्वादन्तौ=रागद्वेषौ ताभ्याम् द्वाभ्यामपि=रागद्वेषाभ्याम् अदृश्यमानः=अवर्तमानः, रागद्वेषरहित इत्यर्थः, न छिद्यते केनचित्=खड्गादिना, न मिद्यते कण्टकसूचीशूलादिना, न दह्यते दहनादिना, न हन्यते कशादिना नरकगत्यानुपू-  
नरकगतिमें उत्पन्न नहीं होता । इसी प्रकार नारकी जीव भी नरकसे निकल कर दूसरे भवमें देवगति या नरकगतिमें उत्पन्न नहीं होता । मनुष्य एवं तिर्यश्च तो मर कर दूसरे भवमें मनुष्य, तिर्यश्च, देव और नरकगतिमें जन्म ले सकता है । मनुष्योंकी गति मुक्तिप्राप्तिकी अपेक्षासे पांच प्रकारकी भी कही गई है । इस प्रकार संसारचक्रमें घटी यन्त्रके समान परिभ्रमणरूप आगति और गति, एवं मनुष्योंमें मोक्ष-  
गतिकी संभवताको जानकर उनके स्वरूपका ज्ञाता, अथवा संसारके दुःखों से भयभीत हो कर मोक्षगतिके सुखका गवेषी वह साधु रूपादि विषयो में राग और द्वेषसे रहित हो कर सर्वलोकमें न किसीके द्वारा तलवार आदिसे हाथ पैर आदि में कभी छेदा जाता है, न कण्टकसूची शूलादिसे भेदा जाता है, न अग्नि आदिसे जलाया जाता है और न कोड़े आदिसे मारा जाता है और न उसके नरकगत्यानुपूर्वी आदिका उदय

देवगतिमां अने नरकगतिमां उत्पन्न थतां नथी. ते प्रकारे नारकी एव पणु नरकथी नीकणी भीज्ज लवमां देव गति अगर नरक गतिमां उत्पन्न थतां नथी. मनुष्य अने तिर्यथ तो मरीने भीज्ज लवमां मनुष्य तिर्यथ देव अने नरकगतिमां जन्म लथ शके छे. मनुष्योनी गति मुक्तिप्राप्तिनी अपेक्षाथी पांच प्रकारनी पणु कडेवामां आवेल छे. आ प्रकारे संसारचक्रमां घटी-  
यन्त्रनी समान परिभ्रमणरूप आगति अने गति तेमज्ज मनुष्योमां मोक्षगतिनी संलवताने पणुने तेना स्वप्नना ज्ञाता अने संसारना दुःखोथी लयलीत अनीने मोक्षगतिना सुप्पना गवेषी ते साधु, रूपादि विषयोमां राग अने द्वेषथी रहित अनीने सर्वलोकां कडेवामां पणु तलवार आदिथी हाथ पण आदिमां कट्ठिपणु छेदवामां आवता नथी. तेमज्ज कण्टक सूची शूलादिथी लेदवामां आवता नथी. तेमज्ज नथी अग्निथी आणवामां आवतां, तेमज्ज नथी डोरडा आदिथी मारवामां



વ્યાદિના વા । અયં ભાવઃ-તિર્યગ્મનુષ્યાદીનામાગતિગતિપરિજ્ઞાનેન રાગદ્વેષ-  
નિવૃત્તિઃ, તયોરભાવાચ્ચ છેદનાદિના સંસારદુઃસ્વાનિ ન ભવન્તીતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

હોતા હૈ । ‘અન્ત’ શબ્દકા અર્થ રાગ દ્વેષ હૈ, ક્યોં કિ યે દોનોં “અન્ત-  
કારિત્વાત્” અપની સત્તામેં જીવકી મુક્તિકા અન્ત-નિરોધ-કરનેવાલે  
હોતે હૈં, ઇન દોનોંકે સદ્ભાવમેં જીવકો સચ્ચે સ્વરૂપ-મોક્ષકી પ્રાપ્તિ નહીં  
હોતી હૈ । ઇસકા ભાવાર્થ યહ હૈ—તિર્યચ્ચ અથવા મનુષ્યાદિકોંકી ગતિ  
ઔર આગતિકે પરિજ્ઞાનસે સાધુકો અચ્છે એવં બુરે રૂપાદિકોંમેં રાગદ્વેષ  
ન હો કર પ્રત્યુત ડનમેં મધ્યસ્થતા હી ડસે રહતી હૈ । રાગદ્વેષકી નિવૃત્તિ  
સે, છેદનભેદનાદિદ્વારા સાંસારિક દુઃસ્વોંકા જો ડસે અનુભવ હોતા થા  
વહ ફિર નહીં હોતા । ક્યોં કિ દુઃસ્વોંકા અનુભવ કરાનેવાલી જો રાગ-  
પરિણતિ થી વહ ડસકી દૂર હો ચુકી હૈ । દૂસરા ઇસકા ભાવ યહ ભી  
હો સકતા હૈ કિ જબ મુનિકી આત્માસે રાગ દ્વેષકા અભાવ હો જાતા હૈ  
તો ડસકી આત્મા અત્યન્ત નિર્મલ એવં વિશિષ્ટ પ્રભાવશાલી હો જાતી  
હૈ । ઇસ અવસ્થામેં કોઈ ભી ઈસી શક્તિ નહીં હૈ જો ડસે છેદન ભેદન  
એવં તાડનાદિજન્ય દુઃસ્વ પહુંચા સકે । ‘ન હન્યતે નરકગત્યાનુપૂર્વ્યાદિના  
વા’ ઇસ ટીકાકા ભાવ યહ હૈ કિ-સર્વસંયમીકે લિયે નરકગતિ એવં  
તિર્યચ્ચ ગતિકા બન્ધ નહીં હોતા હૈ ઇસ લિયે ડસકી આનુપૂર્વીકા ભી ડસે  
ડદય નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

આવતાં. અને નહિ તેને નરકગત્યાનુપૂર્વી આદિનો ઉદય થાય છે. ‘અન્ત’ શબ્દનો  
અર્થ રાગ દ્વેષ છે. કારણ કે એ બન્ને “અન્તકારિત્વાત્” પોતાની સત્તામાં  
જીવની મુક્તિનો અંત કરવાવાળા હોય છે. એ બન્નેના સદ્ભાવમાં જીવને સચ્ચા  
સ્વરૂપ-મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી. તેનો ભાવાર્થ એ છે કે તિર્યચ અથવા મનુ-  
ષ્યાદિકોની ગતિ અને આગતિના પરિજ્ઞાનથી સાધુને સારા તેમજ ખરાબ રૂપા-  
દિકોમાં રાગ દ્વેષ ન થઈને પ્રત્યુત તેમાં મધ્યસ્થતા જ તેને રહે છે. રાગદ્વેષની  
નિવૃત્તિથી, છેદન-ભેદનાદિ દ્વારા સાંસારિક દુઃખોનો જે તેને અનુભવ થતો હતો  
તે પછી થતો નથી. કારણ કે દુઃખોનો અનુભવ કરાવનારી જે રાગપરિણતિ  
હતી તે તેની દૂર થઈ ચૂકેલ છે. બીજું તેનો ભાવ એ પણ થઈ શકે છે કે  
જ્યારે મુનિના આત્માથી રાગ દ્વેષનો અભાવ થઈ જાય છે તો તેની આત્મા  
અત્યન્ત નિર્મળ અને વિશિષ્ટ પ્રભાવશાળી બની જાય છે. આ અવસ્થામાં એવી  
કોઈ પણ શક્તિ નથી કે જે તેને છેદન-ભેદન તેમજ માર મારવો આદિ દુઃખ  
પહોંચાડી શકે. ‘ન હન્યતે નરકગત્યાનુપૂર્વ્યાદિના વા’ આ ટીકાનો ભાવ એ છે  
કે સકલસંયમી માટે નરકગતિ અને તિર્યચગતિનો બંધ થતો નથી તેથી તેને  
તેની આનુપૂર્વીનો પણ ઉદય થતો નથી ॥ સૂ૦ ૬ ॥

મિથ્યાદૃષ્ટીનામાગતિગતિજ્ઞાનાભાવ ઇત્યાહ—‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—અવરેણ પુઠ્ઠે ન સરંતિ એગે કિમસ્સ તીયં ? કિં વાઽઽગમ્મિસ્સં ? ભાસંતિ એગે ઇહ માણવા ડ જમસ્સ તીયં તં આગમિસ્સં ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—અપરેણ પૂર્વં ન સ્મરન્તિ એકે કિમસ્ય અતીતં ? કિં વા આગમિષ્યત્ ? માપન્તે એકે ઇહ માનવાસ્તુ યદસ્ય અતીતં તદ્ આગમિષ્યત્ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

એકે=અન્યે મિથ્યાદૃષ્ટયઃ, અપરેણ=પશ્ચાત્કાલભાવિના સહ, પૂર્વં=પૂર્વકાલિકં ન સ્મરન્તિ, યથા—અસ્ય જીવસ્ય કિમ્=અનેન જીવેન કીદૃશં દુઃખં સુખં વાઽનુભૂત?—મિતિ ન સ્મરન્તિ । તથા—કિં વા આગમિષ્યત્=ભવિષ્યત્કાલિકે નરકાદિભવે કીદૃશં દુઃખં સુખં વાઽસ્ય જીવસ્ય ભાવીતિ ન સ્મરન્તિ । યદિ પુનરસ્ય જીવસ્યાતીતાના-ગતગતિચિન્તનં કુર્યાત્તર્હિ વૈરાગ્યં સુતરામુદ્ભવેત્ । ઉક્તઞ્ચ—

મિથ્યાદૃષ્ટિયોંકો જીવોંકી ગતિ ઓર આગતિકા જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ, ઇસ બાતકો કહતે હૈ—‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોંકે ભવિષ્યત્ કાલમેં હોનેવાલી અવસ્થાઓંકે સાથ પૂર્વકાલિક અવસ્થાઓંકી તથા ભવિષ્યત્કાલમેં હોનેવાલી સુખદુઃખાદિકોં કે સાથ પૂર્વકાલિક સુખદુઃખાદિકોંકી સ્મૃતિ નહીં હોતી હૈ । જૈસે ઇસ જીવકા સમય પૂર્વ મેં કૈસેર સુખદુઃખાદિકોંસે બીતા હૈ ? અર્થાત્ નરક આદિ પર્યાયોંમેં ઇસ જીવને કિસર પ્રકારકે દુઃખ અથવા સુખ ભોગે હૈ ? એવં આગામી કાલમેં નરકાદિક પર્યાયોંમેં યહ જીવ કિસર પ્રકારકે દુઃખ અથવા સુખ ભોગેગા ? ઇસકા ઉન્હેં સ્મરણ તક નહીં હોતા । યદિ ઇસ જીવકી અતીત એવં અનાગત કાલ સમ્બન્ધી ગતિકા વાર-વાર વિચાર કિયા જાય તો જીવકો વૈરાગ્ય સ્વતઃ ઉત્પન્ન હો જાવે । કહા બી હૈ—

મિથ્યાદૃષ્ટિએને જીવોની ગતિ અને આગતિનું જ્ઞાન થતું નથી. એ વાતને કહે છે—‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ.

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોના ભવિષ્યકાળમાં બનવાવાળી અવસ્થાઓની સાથે પૂર્વ-કાલિક અવસ્થાઓની તથા ભવિષ્યકાળમાં થવાવાળા સુખદુઃખાદિકોની સાથે પૂર્વકાલિક સુખદુઃખાદિકોની સ્મૃતિ થતી નથી. આ જીવનો સમય પૂર્વમાં કેવા કેવા પ્રકારે સુખદુઃખોમાં વીત્યો છે ? અર્થાત્ નરક આદિ પર્યાયોમાં આ જીવે કયા કયા પ્રકારના દુઃખ અથવા સુખ ભોગવ્યા છે ? તેમજ આગામી કાળમાં નરકાદિ પર્યાયોમાં આ જીવ કેવા કેવા પ્રકારના દુઃખ અથવા સુખ ભોગવશે ? તેનું તેને સ્મરણ સુદૃઢ હોતું નથી. કહાય આ જીવની અતીત તેમજ અનાગત કાળ સંબન્ધી ગતિનો વાર વાર વિચાર કરવામાં આવે તો જીવને વૈરાગ્ય સ્વતઃ ઉત્પન્ન થઈ જાય. કહ્યું છે—

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્મતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ” ॥ ૧ ॥

વિધૂતકલ્પઃ=વિધૂતો=વિશુદ્ધઃ કલ્પઃ=આચારો યસ્ય સઃ, યદ્વા-વિધૂતઃ=અપ-  
નીતઃ કલ્પઃ=અતીતાનાગતસંકલ્પો યેન સઃ, મહર્ષિઃ=મહામુનિઃ, નિર્જુણ્ય=સંયમં  
નિરતિચારં સમારાધ્ય, ક્ષપયેત્=પૂર્વોપાર્જિતકર્માણિ નાશયેત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

કર્મક્ષપણાર્થં સમુદ્યતસ્ય મહર્ષેર્ધર્મધ્યાનતઃ શુક્લધ્યાનતો વા યત્ ફલં ભવતિ  
તદાહ—‘કા અરઈ’ ઇત્યાદિ ।

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્મતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ॥ ૧ ॥ ”

અર્થાત્—‘ગઈ વાત સોચે નહીં, આગમ ચિંતે નાંહિ ।

વર્તમાન વરતે સહી, સો જ્ઞાની ઘટમાંહિ ॥ ’

જો વીતી હુઈ વાતોં પર ધ્યાન નહીં દેતા, ભવિષ્યકી વાતોંકી ચાહના  
નહીં કરતા, કિન્તુ વર્તમાન અવસ્થા પર હી સંભલ કર રહતા હૈ, વહી  
જ્ઞાની કહલાતા હૈ ॥

ઇસ શ્લોકસે ટીકાકાર ઇસ વાતકી પુષ્ટિ કર રહે હૈં કિ તત્ત્વજ્ઞાની  
ભૂત ભવિષ્યત્ કાલકે સાંસારિક સુખોંકી સ્મૃતિ એવં ઇચ્છા ન કર  
વર્તમાન કાલમેં શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેરૂપ અપની અવ-  
સ્થામેં હી તત્પર રહતા હૈ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

કર્મોં કો નાશ કરનેમેં કટિબદ્ધ મહર્ષિ કો ધર્મધ્યાન યા શુક્લધ્યાન  
સે જો ફલ હોતા હૈ ઉસકો બતલાતે હૈં—‘કા અરઈ’ ઇત્યાદિ ।

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્મતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ॥ ૧ ॥ ”

એટલે—‘ગઈ વાત સોચે નહીં, આગમ ચિંતે નાંહિ ।

વર્તમાન વરતે સહી, સો જ્ઞાની ઘટમાંહિ ॥

જે વીતી ગએલી વાતો ઉપર ધ્યાન નથી દેતા, ભવિષ્યની વાતોની ચાહના  
નથી કરતા, પણ વર્તમાન અવસ્થા ઉપર જ સંભાળીને રહે છે તે જ જ્ઞાની કહેવાય છે.

આ શ્લોકથી ટીકાકાર આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે કે તત્ત્વજ્ઞાની ભૂત ભવિષ્ય  
કાળના સાંસારિક સુખોની સ્મૃતિ તેમ જ ઇચ્છા ન કરી વર્તમાનકાળમાં શ્રુતચા-  
રિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવારૂપ પોતાની અવસ્થામાં જ તત્પર રહે છે. ॥સૂ૦ ૮॥

કર્મોના નાશ કરવામાં કટિબદ્ધ મહર્ષિના ધર્મધ્યાન યા શુક્લધ્યાનથી જે  
ફળ થાય છે તે કહે છે—‘કા અરઈ’ ઇત્યાદિ.



મૂલમ્—કા અરઈ ? કે આણંદે ?, इत्थं पि अगगहे चरे ।

સવ્વં હાસં પરિચ્ચજ્ઞ, આલીણગુત્તો પરિવ્વણ ॥સૂ૦ ૧॥

છાયા—કા અરતિ : ? ક આનન્દ : ? અત્રાપિ અગ્રહશ્ચરેત્ ।

સર્વં હાસ્યં પરિત્યજ્ય આલીનગુપ્ત : પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—ઈપ્સિતસ્યાપ્રાપ્ત્યા વિનાશેન વા, તથા—અનિષ્ટપ્રાપ્ત્યા વા યન્મનોદુઃખં સા અરતિઃ, અભિલષિતાર્થસ્ય પ્રાપ્તૌ સત્યાં યો હર્ષઃ સુખં વા સ આનન્દઃ, एतद्द्वयं धर्मशुक्लध्यानलग्नचित्तस्य महर्षेर्न भवति, तत्कारणाभावात् । इममेवार्थं कथयति—કા અરતિઃ ક આનન્દ ઇતિ । મહર્ષેઃ કા અરતિઃ ? ક આનન્દઃ ? । મિથ્યાદૃષ્ટેરિવારતિરાનન્દશ્ચ મહર્ષેર્ધર્મશુક્લધ્યાનાવેશાન્ન સમુદ્ભવત ઇતિ ભાવઃ । અત્રાપિ=અરતાવાનન્દે ચ, અગ્રહઃ=અવિચલિતઃ સન્ ચરેત્=ધ્યાનમાર્ગે વિહરેત્ ।

इच्छित पदार्थकी अप्राप्ति से, अथवा उसके विनाशसे या अनिष्ट पदार्थके समागमसे जो मानसिक दुःख होता है उसका नाम अरति है । इष्ट पदार्थकी प्राप्ति होने पर जो हर्ष या सुख होता है उसका नाम आनन्द है । ये दोनों धर्मध्यान या शुक्लध्यानमें लवलीन चित्तवाले महर्षिके नहीं होते हैं, क्योंकि अरति और आनन्दके कारणोंका वहां अभाव हो चुका है । महर्षिके लिये, क्या अरति ? क्या आनन्द ? , दोनों सम हैं । मिथ्यादृष्टिको जिस प्रकार अरति और आनन्द होते हैं उस प्रकार महर्षिके वे दोनों धर्मध्यान और शुक्लध्यानके प्रभावसे नहीं होते हैं । इसलिये अरति और आनन्दमें चञ्चलचित्त न बन कर महर्षिको अपने ध्यानके मार्गमें लवलीन रहना चाहिये ।

ઇચ્છિત પદાર્થની અપ્રાપ્તિથી અથવા તેના વિનાશથી અગર અનિષ્ટ પદાર્થના સમાગમથી જે માનસિક દુઃખ થાય છે તેનું નામ અરતિ છે. ઇષ્ટ પદાર્થની પ્રાપ્તિ થવાથી જે હર્ષ અથવા સુખ થાય છે તેનું નામ આનંદ છે. એ બન્ને ધર્મધ્યાન અગર શુક્લ ધ્યાનના લવલીન ચિત્તવાળા મહર્ષિને થતાં નથી. કારણ કે અરતિ અને આનંદના કારણોનો ત્યાં અભાવ થઈ ચુકેલ છે. મહર્ષિ માટે શું અરતિ કે શું આનંદ ? બન્ને સરખાં છે. મિથ્યાદૃષ્ટિને જેવી રીતે અરતિ અને આનંદ થાય છે, તે પ્રકારે મહર્ષિને તે બન્ને ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાનના પ્રભાવથી થતા નથી. માટે અરતિ અને આનંદમાં ચંચળચિત્ત ન બનીને મહર્ષિએ પોતાના ધ્યાનના માર્ગમાં લવલીન રહેવું જોઈએ.

“ કેળ મમેત્યુપ્પત્તી ?, કહં ઇઓ તહ પુળોડવિ ગંતવ્વં ।

જો ઇત્તિયંપિ ચિંતઇ, ઇત્થં સો કો ન નિચ્ચિણ્ણો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

ઇહ=અસ્મિન્ મનુષ્યલોકે, એકે પુનર્મહામિથ્યાદૃષ્ટ્યો માનવાઃ=મનુષ્યાઃ ભાષન્તે=કર્મવિપાકજ્ઞાનાભાવાદેવં વદન્તિ-અસ્ય જીવસ્ય યદ્ અતીતં=બ્રાહ્મણ-ક્ષત્રિય-વૈશ્ય-શૂદ્ર-ગવા-ડશ્વ-ભવાદિ, તત્સંસ્કારવશાત્તદેવ પુનરન્યસ્મિન્ ભવેડપિ આગમિષ્યત્=ભાવીતિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

યે તુ સંસારસિન્ધુમુત્તીર્ણાસ્તે પૂર્વાપરગતિવેદિનઃ સર્વજ્ઞા નૈવં વદન્તિ । તસ્માત્ કર્મક્ષપ્પનાર્થં સંયમઃ સેવનીય ઇત્યાહ-‘નાર્હય ’૦ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-નાર્હયમટ્ઠં ન ય આગમિસ્સં, અટ્ઠં નિચ્છંતિ તહા-ગયા ડ । વિહૂયકપ્પે ઇયાણુપસ્સી, નિજ્ઞોસઇત્તા સ્વવણ મહેસી ॥ સૂ૦ ૮ ॥

“ કેળ મમેત્યુપ્પત્તી ? કહં ઇઓ તહ પુળોડવિ ગંતવ્વં ? ।

જો ઇત્તિયં પિ ચિંતઇ, ઇત્થં સો કો ન નિચ્ચિણ્ણો ॥૧॥ ” ઇતિ ।

અર્થાત્ કિસ કારણસે મેરી ઇસ પર્યાય મેં ઉત્પત્તિ હુઈ હૈ ? કયા મુક્કે યહાંસે ફિર અબ દૂસરી પર્યાયમેં જાના પડેગા ? । જો ઇતના બી વિચાર કરે તો કૌનસા એસા જીવ હૈ જિસે વૈરાગ્ય જાગ્રત ન હો જાય ॥

ઇસ સંસારમેં એસે બી મહામિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હૈ જો કર્મોંકે વિપાક કે જ્ઞાનસે શૂન્ય હો કર એસા કહતે હૈ કિ-ઇસ જીવકા જો ભવ, ચાહે વહ બ્રાહ્મણ સમ્બન્ધી હો, ચાહે ક્ષત્રિય સમ્બન્ધી હો, ચાહે વૈશ્ય, શૂદ્ર, ગો ઓર અશ્વ-ઘોડા-સમ્બન્ધી હો; વ્યતીત હો ચુકા હૈ, વહી ભવ ડનર ભવોંકે સંસ્કારકે વશસે આગામી કાલમેં ફિરસે ઇસે પ્રાપ્ત હોગા ॥૭॥

“ કેળ મમેત્યુપ્પત્તી; કહં ઇઓ તહ પુળોડવિ ગંતવ્વં ? ।

જો ઇત્તિયંપિ ચિંતઇ, ઇત્થં સો કો ન નિચ્ચિણ્ણો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અર્થાત્ કયા કારણથી મારી આ પર્યાયમાં ઉત્પત્તિ થઈ છે ? શું મને અહીંયાથી ફરીથી હવે બીજી પર્યાયમાં જવું પડશે ? . જો એટલો પણ વિચાર કરે તો કયો એવો જીવ છે જેને વૈરાગ્ય જાગ્રત ન થાય ?

આ સંસારમાં એવા પણ મહામિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ છે જે કર્મના વિપાકના જ્ઞાનથી શૂન્ય બનીને એવું કહે છે કે-આ જીવનો જે ભવ મલે તે બ્રાહ્મણ સંબંધી હોય, ભલે ક્ષત્રિય સંબંધી હોય, ભલે વૈશ્ય, શૂદ્ર, ગાય અને અશ્વ-ઘોડા સંબંધી હોય-વ્યતીત થઈ ગયેલ છે તે જ ભવ તે તે ભવોના સંસ્કારના વશથી આગામી કાળમાં ફરીથી તેને પ્રાપ્ત થશે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥



છાયા—નાતીતમર્થ ન ચ આગમિષ્યન્તમ્ અર્થ નિચ્છન્તિ તથાગતાસ્તુ ।  
વિધૂતકલ્પ એતદનુદર્શી નિર્જુષ્ય ક્ષપયેત્ મહર્ષિઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—તથાગતાઃ=યથા તીર્થઢ્કરેણ ભાષિતં તથૈવ ગતં-જ્ઞાનં યેષાં તે તથાગતા-  
સ્તત્ત્વજ્ઞાનિનસ્તુ-અતીતમર્થ ન નિચ્છન્તિ=ચેતસિ નાનયન્તિ, આગમિષ્યન્તમર્થ-  
મપિ ન નિચ્છન્તિ । કિં તુ કર્મપરિણામવૈચિત્ર્યાત્ કર્માનુસારિ સુખં દુઃખં વા  
પ્રાણિનાં ભવતીત્યેવં નિર્ણયન્તિ । તસ્માત્-એતદનુદર્શી=વર્તમાનાર્થાનુદર્શી વર્તમાન-  
ભવસંપ્રાપ્તશ્રુતચારિત્રધર્મારાધનપર इत्यर्थः, અતીતાનાગતસ્વર્ગાદિસુખાનભિચિન્તક  
इति यावत्, તથાચોક્તમ્-

જો સંસારસાગરસે પાર હો ચુકે હૈં વે જીવોંકી પૂર્વાપર-ગતિકે  
જ્ઞાતા સર્વજ્ઞ ભગવાન એસા નહીં કહતે હૈં, इसलिये कर्मोंको नाश करने  
के लिये संयमकी आराधना करनी चाहिये, इस बातको कहते हैं—  
' नाईयमद्वं ' इत्यादि ।

જૈસા તીર્થઢ્કર પ્રભુને કહા હૈં ઉસીકે અનુસાર જિનકા જ્ઞાન હૈં વે  
તથાગત-તત્ત્વજ્ઞાની અતીત અર્થ-અવસ્થા-કો ચિત્તમેં નહીં લાતે હૈં ઓર  
ન આગામી અર્થ કો હી ચિત્તમેં લાતે હૈં, किंतु ' प्राणियोंके सुख अथवा  
दुःख कर्मोंके अनुसार होते हैं ' ऐसा ही वे निर्णय करते हैं । इसलिये  
वर्तमान भवमें प्राप्त श्रुतचारित्ररूप धर्मकी आराधनामें तत्पर-अर्थात्  
अतीत और अनागत काल सम्बन्धी स्वर्ग आदिके सुखोंका चिंतवन नहीं  
करनेवाला तथा विशुद्ध आचारवाला, अथवा अतीत एवं अनागतके संक-  
ल्पको दूर करनेवाला महामुनि निरतिचार संयमका आराधना करके  
पूर्वोपाजित कर्मों का नाश करे । ज्ञानी का स्वरूप इस प्रकार कहा है—

જે સંસારસાગરથી પાર થઇ ચુકેલ છે તે જીવોની પૂર્વાપર ગતિના જ્ઞાતા  
સર્વજ્ઞ ભગવાન એવું કહેતા નથી. માટે કર્મોનો નાશ કરવા માટે સંયમની  
આરાધના કરવી જોઈએ. એ વાતને કહે છે—' નાઈયમદ્વં ' ઇત્યાદિ.

જેવું તીર્થઢ્કર પ્રભુએ કહ્યું છે તેના અનુસાર જેનું જ્ઞાન છે તે તથાગત-  
તત્ત્વજ્ઞાની અતીત અર્થ-અવસ્થા-ને ચિત્તમાં લાવતા નથી. ન આગામી અર્થને  
ચિત્તમાં લાવે છે. પણ ' પ્રાણિયોના સુખ અથવા દુઃખ કર્મોના અનુસાર બને  
છે ' એવો જ તે નિર્ણય કરે છે. માટે વર્તમાન ભવમાં પ્રાપ્ત જે શ્રુત ચારિ-  
ત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં તત્પર અર્થાત્ અતીત અને અનાગત કાળ સંબંધી  
સ્વર્ગ આદિના સુખોનું ચિતવન નહિ કરવાવાળા, તથા વિશુદ્ધ આચારવાળા, અથવા  
અતીત અને અનાગતના સંકલ્પને દૂર કરવાવાળા મહામુનિ નિરતિચાર સંયમની  
આરાધના કરીને પૂર્વોપાર્જીત કર્મોનો નાશ કરે. જ્ઞાનીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે કહ્યું છે—



परिव्रजेत्-परि=समन्ताद् व्रजेत्=विहरेत्-संयमानुष्ठानविधायी भवेदित्यर्थः॥सू०९॥

स्वात्मनो वीर्यगुणावलम्बनेनैव मोक्षः प्राप्यते न तु परसाहाय्याश्रयणेनेति दर्शयितुं कथयति-‘पुरिसा’ इत्यादि ।

मूलम्-पुरिसा ! तुममेव तुमं मित्रं, किं बहिया मित्र-मिच्छसि ॥ सू० १० ॥

छाया—पुरुष ! त्वमेव तव मित्रं, किं बहिर्मित्रमिच्छसि ॥ सू० १० ॥

टीका—हे पुरुष ! =पुरुषार्थसाधनसमर्थ ! शिष्य ! तव मित्रं त्वमेव=आत्मनः कल्याणार्थं समुद्यतस्य-गृहीतसंयमभारस्य तव सहायस्तवात्मैवास्तीत्यर्थः । श्रुत-चारित्रधर्माचरणकरणेनैकान्ततोऽत्यन्ततश्च परमसुखजनकत्वात्प्रमादरहित आत्मै-वात्मनो मित्रमुपकारी परमार्थतो, न त्वन्य इति भावः । बहिः=बाह्यं स्वात्मनो व्य-तिरिक्तं, मित्रं=हितकारिणं सहायं, किम्=कुतः, इच्छसि=अन्वेषयसि ।

कमठ-कच्छपके समान संवृतशरीर होते हुए वे महर्षि संयमकी आराधना करनेमें सावधान रहे ॥ सू० ९ ॥

अपनी आत्माके वीर्यगुणके अवलम्बन से ही मोक्ष प्राप्त होता है किन्तु दूसरोंकी सहायताके सहारे नहीं । इस बातको दिखलाने के लिये कहते हैं-‘पुरिसा’ इत्यादि ।

पुरुषार्थ साधन करनेमें समर्थ हे पुरुष=हे शिष्य ! तुम ही स्वयं अपने मित्र हो-अपनी आत्माके कल्याण करनेमें उद्यत हो कर जो तुमने यह संयमका भार अंगीकार किया है उसमें तुम्हारी आत्मासे अतिरिक्त और दूसरा कोई सहायक नहीं है । श्रुतचारित्ररूप धर्म के आचरण करने से आत्मा अप्रमादी बनता है । प्रमाद से रहित आत्मा ही आत्माका ऐकान्तिक

अने कायार्थी सदा सावध क्रियायोगी रहित थकने, अथवा कमठ-कच्छपना समान संवृतशरीर थकने से महर्षि संयमकी आराधना करवाया सावधान रहे ॥सू०९॥

पोताना आत्माना वीर्यगुणना अवलंबनथी न मोक्ष प्राप्त थाय छे, पण भीलयोगी सहायताना सहायार्थी थतो नथी. आ वातने अतलाववा भाटे कडे छे—‘पुरिसा’ इत्यादि.

पुरुषार्थ साधन करवाया समर्थ छे पुरुष=हे शिष्य ! तमे पोते न तमारी अतना मित्र छे. पोताना आत्मानुं कल्याण करवाया उद्योगी अनी न तमे संयमना लार अंगीकार करेव छे, तेमां तमारी आत्माथी अतिरिक्त भील मोक्ष सहायक नथी. श्रुतचारित्ररूप धर्मनुं आचरण करवाथी आत्मा अप्रमादी

સ્વાત્મવ્યતિરિક્તસ્ય સંસારકાર્યે સાહાય્યકારિણઃ પુત્રકલત્રાદેઃ સંસારિણસ્તથા હિરણ્યસુવર્ણાદેશ્ચ જન્મમરણાદિબહુવિધાનન્તવ્યસનોપનિપાતસંસારસાગરાન્તઃપતન-કારિત્વાદમિત્રં મિત્રં મન્યમાનઃ કિં મોહાર્ણવે સ્વાત્માનં નિપાતયસિ ?, પરમાર્થતઃ શ્રુતચારિત્રધર્માનુષ્ઠાનાત્સ્વાત્મૈવ મિત્રં, તદ્વિરોધિસાવધક્રિયાનુષ્ઠાનાદમિત્રં ચ સ્વાત્મૈવાસ્તીતિ ભાવઃ । ઉક્તશ્ચ—

“અપ્યેકં મરણં કુર્યાત્, સંકુદ્ધો વલવાનરિઃ ।

મારણાનિ લનન્તાનિ, જન્માનિ ચ કરોત્યયમ્ ॥” ઇતિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

તથા આત્યન્તિક પરમ સુખકા જનક હોનેસે ઉત્કૃષ્ટ બન્ધુ હૈ । સિલિયે જલ આત્માકા આત્માસે અતિરિક્ત ઇસ અલસ્થામે કોઈ લાસ્તલિક દષ્ટિ સે બન્ધુ-સહાયક હૈ હી નહીં; તો ફિર હે આત્મન્ ! અપને સે સદા ભિન્ન રહે હુઓંકો તુમ અપના સહાયક માનને કી લાહના ક્યોં કરતે હો ? ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-આત્માસે સદા ભિન્ન રહે હુએ યે સાંસારિક સમસ્ત પદાર્થ, લે લાહે સ્ત્રી, પુત્ર, મિત્ર આદિ હોં, લાહે હિરણ્ય, સુવર્ણ આદિ હોં; તુજે સાંસારિક કાર્યોંમેં હી સહાયક હોતે હૈં, પારમાર્થિક કાર્યોંમેં નહીં । આત્માકો ઇનકે મમત્લસે નિરન્તર હી જન્મ જરા ઓર મરણાદિક અનેક પ્રકારસે અનેક કષ્ટોં કા સામના કરના પડતા હૈ । ઇન કષ્ટોંકે સ્થાનભૂત ઇસ સંસારસમુદ્રમેં ડસે લારંલાર ગોતે લાને પડતે હૈં । સિલિયે ઇન્હેં અપના સહાયક માનના શત્રુકો સહાયક માનને જૈસા હૈ । અતઃ હે શિષ્ય ! યહ નિશ્ચય લિશ્લાસ રલ્લકર અપની સંયમયાત્રા કા નિર્લાહ કરો ઓર

અને છે. પ્રમાદથી રહિત આત્મા જ આત્માને એકાંતિક તથા આત્યન્તિક પરમ સુખનો જનક હોવાથી ઉત્કૃષ્ટ બંધુ છે. માટે જ્યારે આત્માનો આત્માથી અતિ-રિક્ત આ અલસ્થામાં કોઈ લાસ્તલિક દષ્ટિથી બંધુ-સહાયક છે જ નહિ, તો પછી હે આત્મન્ ! પોતાનાથી સદા ભિન્ન રહેલાઓને તું પોતાના સહાયક માનવાની આહના શા માટે કરે છે ?

લાલાર્થ—આત્માથી સદા ભિન્ન રહેલા એ સાંસારિક સમસ્ત પદાર્થ—લલે સ્ત્રી પુત્ર મિત્ર આદિ હોય, આહે હિરણ્ય સુવર્ણ આદિ હોય. તને સાંસારિક કાર્યોંમાં જ સહાયક અને છે પરમાર્થિક કાર્યોંમાં નહિ. આત્માને તેના મમત્લથી નિરંતર જ જન્મ, જરા અને મરણાદિક અનેક પ્રકારના અનંત કષ્ટોંનો સામનો કરવો પડે છે. તે કષ્ટોંના સ્થાનભૂત આ સંસારસમુદ્રમાં તેને લારંલાર ગોથા ખાલા પડે છે માટે તેના પોતાના સહાયક માનલા તે શત્રુને સહાયક માનલા બરાબર છે. માટે હે શિષ્ય ! એ નિશ્ચય લિશ્લાસ રાખીને પોતાની સંયમ યાત્રાનો નિર્લાહ



યદ્વા-સંયમારાધનપરાયણસ્ય મહર્ષેઃ કા અરતિઃ ? ક આનન્દઃ ? । અયંભાવઃ-સંયમારાધનતત્પરસ્ય કુતશ્ચિત્ કારણાત્ પ્રતિકૂલપરીષદોપસર્ગોપસ્થિતૌ અરતિર્ન-ભવતિ । સ હિ તદાનીમેવં ચિન્તયતિ-અનેનાત્મના પૂર્વભવેષુ નરકનિગોદાદૌ ક્ષુત્પિ-પાસાદિજનિતં વધવન્ધનાદિજનિતં ચ યદ્ ઘોરતરં દુઃસ્વમનન્તવારં પ્રાપ્તં તત્પુસ્તઃ કિમેભિરલ્પદુઃસ્વજનકૈઃ પરીષદોપસર્ગૈરિતિ । તથા-ઋદ્ધિ-રસ-શાતાદ્યુપસ્થિતૌ હર્ષઃ સુખં વા નોત્પદ્યતે ।

સ હિ તદાનીમેવં વિભાવયતિ-અનેનાત્મના પૂર્વ દેવભવેષુ નરલોકદુર્લભં નાનાવિધઋદ્ધ્યાદિસુસ્વમનન્તશોઽનુભૂતં, તસ્ય સમુદ્રસદૃશસ્ય દિવ્યસુખસ્ય પુરતઃ

અથવા-સંયમકી આરાધના કરનેમેં દત્તાવધાન મહર્ષિકો અરતિ ઓર આનન્દસે કોઈ પ્રયોજન નહીં હૈ ।

તાત્પર્ય યહ હૈ-સંયમકી આરાધના કરનેમેં તત્પર મહર્ષિકે જબ કિસી કારણસે પ્રતિકૂલ પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગકી ઉપસ્થિતિ હોતી હૈ ઉસ સમય ઉસે ઉસસે અરતિ નહીં હોતી હૈ, કિન્તુ ઉસે ઉસ સમય યહી વિચાર આતા હૈ કિ હિસ આત્માને પૂર્વભવમેં નરકનિગોદાદિ ગતિયોમેં ક્ષુધા-તૃષ્ણા-આદિ-જનિત એવં વધ ઓર વન્ધન આદિસે ઉત્પન્ન હુએ જો ઘોરતર દુઃસ્વ અનન્ત વાર પાચે હૈં ઉનકે આગે અલ્પદુઃસ્વજનક યે પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ ક્યા ચીજ હૈં ? તથા ઋદ્ધિ, રસ, શાતા આદિકી ઉપસ્થિતિ હોને પર મો ઉસે હર્ષ યા સુખ નહીં હોતા હૈ, ક્યોં કિ ઉસ સમય મો વહ યહી વિચાર કરતા હૈ કિ હિસ આત્માને પૂર્વ-દેવભવોમેં, મનુષ્યલોકમેં દુર્લભ એસે અનેક પ્રકારકે ઋદ્ધિ-આદિજન્ય સુખોંકો અનન્ત વાર મોગા હૈ તો સમુદ્ર

અથવા સંયમની આરાધના કરવામાં દત્તાવધાન મહર્ષિને અરતિ અને આ-નંદથી કોઈ પ્રયોજન જ નથી.

તાત્પર્ય એ છે કે-સંયમની આરાધના કરવામાં તત્પર મહર્ષિને જ્યારે કોઈ કારણથી પ્રતિકૂળ પરીષદ અને ઉપસર્ગની ઉપસ્થિતિ થાય છે તે વખત તેને તેનાથી અરતિ થતી નથી. પણ તેને તે વખત તેવો વિચાર આવે છે કે આ આત્માએ પૂર્વભવમાં નરક નિગોદાદિ ગતિયોમાં ક્ષુધા તૃષ્ણા આદિ જનિત તેમજ વધ અને બંધન આદિથી ઉત્પન્ન થયેલ જે ઘોરતર દુઃખ અનન્ત વાર ભોગવેલ છે તેની અપેક્ષા અલ્પ દુઃખજનક આ પરીષદ અને ઉપસર્ગ કઈ ચીજ છે ? તથા ઋદ્ધિ રસ, શાતા આદિની ઉપસ્થિતિ હોવા છતાં પણ તેને હર્ષ અગર સુખ થતું નથી. કારણ કે તે સમય પણ તે એજ વિચાર કરે છે કે આ આત્માએ પૂર્વ દેવભવોમાં, મનુષ્યલોકમાં દુર્લભ એવા અનેક પ્રકારના ઋદ્ધિ આદિ જન્ય સુખોને



કિમનેન વિન્દુતુલ્યેન ઋદ્ધ્યાદિસુખેન? इति । उक्तञ्च—

“ न तृप्तोऽसि यदा कामैः, सेवितैरप्यनेकशः ।

स नाम तेषु वृत्तोऽन्तो, यतो वैराग्यमाप्नुहि ” ॥ १ ॥ इति ।

તસ્માત્-અત્રાપિ=અસ્મિન્ અરત્યાનન્દકારણેઽપિ અગ્રહઃ=તદનપેક્ષમાણઃ-મધ્યસ્થભાવમુપગતઃ સન્ ચરેત્=સંયમમાર્ગે વિહરેત્ ।

તથા-સર્વ=સમસ્તં હાસ્યં=હાસં, તત્સ્થાનં વા પરિત્યજ્ય, આલીનગુપ્તઃ-તત્ર-આલીનઃ-આહ્=મર્યાદયા-ઇન્દ્રિયનિરોધાદિરૂપયા લીનઃ, ગુપ્તઃ-મનોવાકાયકર્મભિઃ, યદ્વા-ગુપ્તઃ=કૂર્મવત્સંવૃતગાત્રઃ, આલીનશ્ચાસૌ ગુપ્તશ્ચેત્યાલીનગુપ્તઃ, એવંભૂતઃ સન્ કે તુલ્ય ઉસ સુખકે સામને વિન્દુતુલ્ય ઇસ ઋદ્ધિ રસ આદિકે સુખકી કયા ગિનતી હૈ । કહા મી હૈ—

“ न तृप्तोऽसि यदा कामैः, सेवितैरप्यनेकशः ।

स नाम तेषु वृत्तोऽन्तो, यतो वैराग्यमाप्नुहि ॥ १ ॥ ”

હે આત્મન્ ! જબ તૂં અનન્તવાર સેવન કિયે ગયે ઇન કામોંસે તૃપ્ત નહીં હુઆ; ઉલ્ટા ઇનકે ભાગને સે તેરા હી અન્ત હુઆ તો ફિર ઇન કે ભોગને સે તુજે કયા લાભ હૈ? અતઃ અબ ઇન સે વૈરાગ્ય હી લેના સર્વશ્રેયસ્કર હૈ ।

इसलिये उस संयमी को चाहिये कि वह अरति और आनन्द के कारणों में भी अग्रह-अनपेक्षावाला बन कर अर्थात् माध्यस्थ्यभाव रखता हुआ संयममार्ग में विचरे ।

તથા—સમસ્ત હાસ્ય અથવા હાસ્યકે સ્થાનભૂત-જિનકી તીર્થઢૂરા-દિકોને નિન્દા કી હૈ એસે-વિષયકષાયોંકા પરિત્યાગ કર ઇન્દ્રિયનિગ્રહી એવં મન, વચન ઔર કાયસે સદા સાવચક્રિયાસે રહિત હોતે હુએ અથવા

અનંતવાર ભોગવેલ છે તો સમુદ્રના તુલ્ય તે સુખની સામે બિંદુ તુલ્ય આ ઋદ્ધિ આદિના સુખની શું ગણના છે. કહું પણ છે:—

“ न तृप्तोऽसि यदा कामैः, सेवितैरप्यनेकशः ।

स नाम तेषु वृत्तोऽन्तो, यतो वैराग्यमाप्नुहि ॥ १ ॥ ”

હે આત્મા ! જ્યારે અનંત વાર સેવી ચુકેલા તે કામોથી જ્યારે તું તૃપ્ત ન થયો, ઉલ્ટું તેના ભોગવવાથી તારોએ અંત થયો, તો પછી તેના ભોગવવાથી તને શું લાભ છે? માટે તે વસ્તુથી વૈરાગ્ય જ લેવો સર્વ શ્રેયસ્કર છે.

તેથી તે સંયમીને જોઈએ કે તે અરતિ અને આનંદના કારણોમાં પણ અગ્રહ-અનપેક્ષાવાળા બની અર્થાત્ માધ્યસ્થ ભાવ રાખીને સંયમ માર્ગમાં વિચરે.

તથા-સમસ્ત હાસ્ય અથવા હાસ્યના સ્થાનભૂત કે જેની તીર્થકરોએ નિંદા કરેલ છે, એવા વિષયકષાયોના પરિત્યાગ કરી ઇન્દ્રિયનિગ્રહી તેમજ મન, વચન

આત્મા યસ્ય મિત્રં સ કથં જ્ઞાતવ્યઃ ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘ जं जाणिज्जा ’ इत्यादि ।

સોચો કિં ઇસ યાત્રામેં મેરા સહાયક મેરી આત્મા હી હૈ, અન્ય-આત્મ-  
બાહ્ય-કોઈં ખી પદાર્થ નહીં । જો ઇનકી સહાયતાકી અપેક્ષાવાલે બનોગે  
તો અપની આત્માકો મોહરૂપી સમુદ્રમેં ડુબોનેવાલે હોઓગે । ઇસલિયે  
ઇનકે મોહમેં ફંસ કર આત્માકો મોહરૂપી સમુદ્રમેં ડાલનેકી ચેષ્ટા ન કરો  
ઔર પરમાર્થસે યહ સમજ્જતે હુએ ઇસ યાત્રામેં આગે બઢતે રહો કિં શ્રુત-  
ચારિત્રરૂપ ધર્મકે અનુષ્ઠાનસે આત્માકા સહાયક આત્મા હી હૈ ઔર તદ્વિ-  
રોધી સાવચક્રિયાઓંકે કરનેસે આત્મા હી આત્માકા શત્રુ હૈ । કહા ખી હૈ—

“ અપ્યેકમરણં કુર્યાત્, સંકુદ્ધો બલવાનરિઃ ।

મરણાનિ ત્વનન્તાનિ, જન્માનિ ચ કરોત્યયમ્ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

અર્થ-બલવાન સે બલવાન ખી શત્રુ અગર કુદ્ધ હો કર મારે તો એક  
હી જન્મમેં મારતા હૈ, પરંતુ સાવચ ક્રિયામેં પ્રવૃત્ત આત્મા સ્વયં શત્રુ બન  
કર અનન્તવાર અપને આપકો મારતા હૈ ઔર જન્મ લેતા હૈ । અર્થાત્  
આત્મા હી અપના શત્રુ બન કર ચતુર્ગતિ સંસારમેં જન્મ મરણ કરતા રહતા  
હૈ, કિન્તુ કબી ખી મોક્ષકો પ્રાપ્ત નહીં હોતા ॥ ૧ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

કરો, અને વિચારો કે-આ યાત્રામાં મારો સહાયક મારો આત્મા જ છે. બીજું  
બાહ્ય કોઈં પણ પદાર્થ નહિ. જો તેની સહાયતાની અપેક્ષાવાળા બનશો તો પોતાના  
આત્માને મોહરૂપી સમુદ્રમાં ડુબાવનારા બનશો, માટે તેના મોહમાં ફસીને  
આત્માને મોહરૂપી સમુદ્રમાં નાંખવાની ચેષ્ટા ન કરો, અને પરમાર્થથી એ  
સમજીને આ યાત્રામાં આગળ વધતા રહો. શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના અનુષ્ઠાનથી  
આત્માનો સહાયક આત્મા જ છે, અને તેના વિરોધી સાવચ ક્રિયાઓના કરવાથી  
આત્મા જ આત્માનો શત્રુ છે. કહું છે—

“ અપ્યેકમરણં કુર્યાત્, સંકુદ્ધો બલવાનરિઃ ।

મરણાનિ ત્વનન્તાનિ, જન્માનિ ચ કરોત્યયમ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અર્થ:—બળવાનથી બળવાન પણ શત્રુ કોઈં થઈને મારે તો એક જ  
જન્મમાં મારે છે, પરંતુ સાવચ ક્રિયામાં પ્રવૃત્ત આત્મા સ્વયં શત્રુ બનીને અનંત  
વાર પોતે પોતાને મારે છે, અને જન્મ લે છે. અર્થાત્ આત્મા જ પોતાનો શત્રુ  
બનીને ચતુર્ગતિ સંસારમાં જન્મ મરણ કરતો રહે છે, કિન્તુ કદી પણ મોક્ષ  
પ્રાપ્ત કરતો નથી ॥ ૧ ॥ સૂ. ૧૦ ॥



મૂલમ્—જં જાણિજ્જા ઉચ્ચાલઇયં, તં જાણિજ્જા દૂરાલઇયં ।

જં જાણિજ્જા દૂરાલઇયં, તં જાણિજ્જા ઉચ્ચાલઇયં ॥સૂ૦ ૧૧॥

છાયા—યં જાનીયાત્ ઉચ્ચાલયિકં તં જાનીયાત્ દૂરાલયિકમ્ ।

યં જાનીયાત્ દૂરાલયિકં તં જાનીયાત્ ઉચ્ચાલયિકમ્ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા—યં પુરુષમ્ ઉચ્ચાલયિકમ્—ઉચ્ચઃ=કર્માપનયનભાવસંપન્નઃ, આલયઃ—આ=સમન્તાત્ લીયન્તે વિચારા યસ્મિન્ સ આલયઃ=અન્તઃકરણમ્, ઉચ્ચઃ આલયઃ ઉચ્ચાલયઃ, સોડસ્યાસ્તીતિ—ઉચ્ચાલયિકસ્તમ્ કર્મણામપનેતારં જાનીયાત્, તં દૂરાલયિકં=કઠિનતરતપઃસંયમારાધનપ્રાપણીયત્વેન દૂરે આલયઃ દૂરાલયઃ=મોક્ષ-સ્થાનં, સોડસ્યાસ્તીતિ દૂરાલયિકસ્તં મોક્ષગામિનં જાનીયાત્ । પરસ્પરકાર્યકારણભા-વપ્રદર્શનાયોક્તમર્થં ગત-પ્રત્યાગતરૂપેણ કથયતિ—‘યં જાનીયાત્ દૂરાલયિકમ્’

જિસકા આત્મા હી મિત્ર હૈ એસે પુરુષકી પહિચાન કૈસે હોતી હૈ? હસપ્રકારકી શિષ્યકી જિજ્ઞાસા હોને પર સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘જં જાણિજ્જા’ ઇત્યાદિ ।

કર્મોંકા જો અપનેતા હૈ ઉસકા નામ ઉચ્ચાલયિક, તથા મોક્ષગામી કા નામ દૂરાલયિક હૈ । અર્થાત્—જો ઉચ્ચાલયિક=કર્મોંકા નાશ કરને-વાલા હૈ વહ દૂરાલયિક=મોક્ષગામી હૈ, એસા સમજો । કઠિનતર તપ ઓર સંયમકી આરાધના સે પ્રાપ્ત હોનેવાલા હોને કે કારણ દૂર જો આલય-સ્થાન હૈ ઉસકા નામ દૂરાલય-મોક્ષ હૈ । યહ જિસકે હોતા હૈ વહ દૂ-રાલયિક અર્થાત્ મોક્ષગામી હૈ । પરસ્પરમેં કાર્ય-કારણ ભાવકા પ્રદર્શન કરાનેકે લિયે ઉક્ત અર્થકો સૂત્રકાર ગત-પ્રત્યાગત (હેર-ફેર) રૂપસે કહતે હૈ—જો દૂરાલયિક=મોક્ષગામી-અર્થાત્ મુક્તિકે માર્ગપર આરૂઢ હૈ, ઉસકો

જેનો આત્મા જ મિત્ર છે એવા પુરુષની ઓળખાણ કેવી રીતે થાય? આ પ્રકારની શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી સૂત્રકાર કહે છે—‘જં જાણિજ્જા’ ઇત્યાદિ.

કર્મોના જે અપનેતા છે તેનું નામ ઉચ્ચાલયિક તથા મોક્ષગામીનું નામ દૂરાલયિક છે. અર્થાત્—જે ઉચ્ચાલયિક=કર્મોના નાશ કરવાવાળા છે તે દૂરાલયિક=મોક્ષગામી છે, એમ સમજો. કઠિનતર તપ અને સંયમની આરાધનાથી પ્રાપ્ત થવાવાળા હોવાના કારણે દૂર જે આલય-સ્થાન છે. તેનું નામ દૂરાલય-મોક્ષ છે. તે જેને થાય છે તે દૂરાલયિક અર્થાત્ મોક્ષગામી છે. પરસ્પરમાં કાર્યકારણ ભાવનું પ્રદર્શન કરાવવા માટે ઉક્ત અર્થને સૂત્રકાર ગત-પ્રત્યાગત (હેર-ફેર) રૂપથી કહે છે—જે દૂરાલયિક-મોક્ષગામી અર્થાત્ મુક્તિના માર્ગ ઉપર આરૂઢ છે



ઇત્યાદિ । યં પુરુષં દૂરાલયિકં મોક્ષગામિનં મોક્ષમાર્ગારૂઢં જાનીયાત્, તમુચ્ચાલ-  
યિકં=કર્મણાં તદાસ્રવદ્વારાણાં ચાપનેતારં કર્મણિ દૂરીકર્તુ કૃતનિશ્ચયં સોત્સાહં બદ્ધ-  
પરિકરમિતિ યાવત્ જાનીયાત્ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

સ્વાત્મૈવ યેન મિત્રતયાઽઙ્ગીકૃતઃ સ કિં ફલં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ।

ઉચ્ચાલયિક = કર્મ ઓર ડનકે આસ્રવોંકે દ્વારોંકા નાશ કરનેવાલા સમઘ્નો । ક્યોં કિ વહ કર્મોં કો દૂર કરનેકે લિયે કૃતનિશ્ચય ંવં ઉત્સા-  
હસંપન્ન હોતા હૈ । કર્મોં કે નાશ કરનેમેં વહ કિસી ખી પ્રકારસે પીછે  
પૈર નહીં રલ્વતા હૈ, અર્થાત્ કટિબદ્ધ હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—શિષ્યને જો યહ પ્રશ્ન કિયા થા કિ આત્માકો હી જો  
સંયમયાત્રામેં સહાયક માનતા હૈ ડસકી પહિચાન ક્યા હૈ ? ડસકા  
સમાધાન સૂત્રકારને ડસ સૂત્રસે કિયા હૈ । લે કહતે હૈં કિ જો સંયમી  
ડસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ કર્મોંકે દૂર કરનેમેં સદા કટિબદ્ધ  
રહતા હૈ । ડસી રૂપસે વહ દૃષ્ટિપથ હોતા હૈ । ડસકી પ્રત્યેક ક્રિયાૈ  
ંસી હોતી હૈં કિ જિનસે કર્મોંકા આસ્રવ રુકતા હૈ ઓર સંચિત કર્મોં  
કી નિર્જરા હોતી રહતી હૈ । ંસા સંયમી મુનિ હી મોક્ષમાર્ગ પર આરૂઢ  
માના જાતા હૈ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

અપની આત્મા કો હી જિસને મિત્રરૂપસે અંગીકાર કિયા હૈ વહ  
સંયમી કિસ ફલકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? ડસકેલિયે કહતે હૈં—‘પુરિસા’  
ઇત્યાદિ ।

તેને ઉચ્ચાલયિક-કર્મ અને તેના આસ્રવદ્વારોનો નાશ કરવાવાળા સમજો. કારણ  
કે તે કર્મોને દૂર કરવા માટે કૃતનિશ્ચય તેમજ ઉત્સાહસંપન્ન બને છે. કર્મોનો  
નાશ કરવામાં તે કોઈપણ પ્રકારે પાછળ પગલું ભરતાં નથી, અર્થાત્ કટિબદ્ધ થાય છે.

ભાવાર્થ—શિષ્યે જે આ પ્રશ્ન કરેલ હતો કે આત્માનેજ જે સંયમયાત્રામાં  
સહાયક માને છે તેની ઓળખાણ શું છે ? તેનું સમાધાન સૂત્રકારે આ સૂત્રથી  
કરેલ છે, તે કહે છે કે જે સંયમી આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે કર્મોને દૂર  
કરવામાં સદા કટિબદ્ધ રહે છે. તેવા રૂપથી તે દૃષ્ટિપથ થાય છે. તેની દ્વરેક  
ક્રિયાઓ એવી હોય છે કે જેનાથી કર્મોનો આસ્રવ રોકાય છે, અને સંચિત  
કર્મોની નિર્જરા થતી રહે છે, એવા સંયમી મુનિ જ મોક્ષ માર્ગ પર આરૂઢ  
માનવામાં આવે છે. ॥ સૂ. ૧૧ ॥

પોતાના આત્માને જ જેણે મિત્રરૂપથી અંગીકાર કરેલ છે તે સંયમી કેવા  
રૂપને પ્રાપ્ત કરે છે તેને માટે કહે છે—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ.

મૂલમ્—પુરિસા! અત્તાળમેવ અભિણિગિજ્ઞ એવં દુઃસ્વા  
પમુચ્ચસિ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

છાયા—પુરુષ ! આત્માનેવાભિનિગૃહ્ય એવં દુઃસ્વાત્ પ્રમોક્ષ્યસે ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ટીકા—હે પુરુષ ! પરમપુરુષાર્થસાધનસમર્થ ! ભવ્ય ! આત્માનેવ=સ્વસ્વ-  
રૂપાવલોકનં શ્રુતચારિત્રધર્મારાધનં વા પરિત્યજ્યાઽનાદિમિથ્યાત્વાવિરત્યાદિ-  
વાસનાવશાદ્ વિષયસંગાર્થં વહિર્ધાવમાનં સ્વાત્માનેવ અભિનિગૃહ્ય=મોક્ષસાધકધ-  
ર્માનુષ્ઠાનપ્રવલતરસંસ્કારેણ તતઃ પ્રતિનિવર્ત્ય, એવં=પુનઃપુનરનેન પ્રકારેણ સ્વાત્માનં  
જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાત્મનિષ્ઠં કુર્વન્, દુઃસ્વાત્=દુઃસ્વકારણાત્ જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મબ-  
ન્ધાત્ પ્રમોક્ષ્યસે=પુત્કો ભવિષ્યસિ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

હે પુરુષ—અર્થાત્ પરમ પુરુષાર્થ—મોક્ષકે સાધનમેં સમર્થ હે ભવ્ય !  
અપની આત્માકો વૈષયિક માર્ગ સે હટા કર આત્મનિષ્ઠ કરો, इसીસે  
તુમ્હારે દુઃસ્વોંકા અન્ત હોગા ।

ભાવાર્થ—જો સંયમી અપની આત્માકો હી સંયમ-માર્ગકે સાધનમેં  
સહાયી માનતા હૈ ઉસે મુક્તિકા લાભરૂપ ફલ પ્રાપ્ત હોતા હૈ । સંસાર-  
દશામેં ફંસે હુએ વ્યક્તિયોંસે, અથવા સંયમકી આરાધનામેં સાંસારિક  
પરપદાર્થ કી સહાયતાકી હી અપેક્ષા રાખનેવાલે સંયમી સે સ્વરૂપકા અવ-  
લોકન, અથવા શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મકા આરાધન નહીં હો સકતા હૈ । જબ  
તક ઇસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ સંયમી મેં ઉત્પન્ન નહીં હોતી હૈ તબ તક વહ  
અપને કર્તવ્ય-માર્ગસે અલગ હી રહતા હૈ । ઉસકી આત્મા અનાદિકાલસે  
સંસક્ત ( લગા હુઆ ) મિથ્યાત્વ અવિરતિ આદિકી ભાવનાકે વશસે

હે પુરુષ ! અર્થાત્ પરમપુરુષાર્થ—મોક્ષના સાધનમાં સમર્થ હે ભવ્ય !  
પોતાના આત્માને વૈષયિક માર્ગથી હટાવી આત્મનિષ્ઠ કરો, તેનાથી તમારા  
હુઃખોનો અંત આવશે.

ભાવાર્થ:—જે સંયમી પોતાના આત્માને જ સંયમ માર્ગના સાધનમાં  
સહાયક માને છે. તેને મુક્તિના લાભરૂપ ફળ પ્રાપ્ત થાય છે. સંસારદશામાં  
ફંસેલી વ્યક્તિયોથી, અથવા સંયમની આરાધનામાં સાંસારિક પરપદાર્થની સહા-  
યતાની જ અપેક્ષા રાખવાવાળા સંયમીથી સ્વરૂપનું અવલોકન, અથવા શ્રુતચા-  
રિત્રરૂપ ધર્મનું આરાધન બની શકતું નથી. જ્યાં સુધી આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ  
સંયમીમાં ઉત્પન્ન નથી થતી ત્યાં સુધી તે પોતાના કર્તવ્ય માર્ગથી અલગ જ  
રહે છે. તેની આત્મા અનાદિ કાળથી સંસક્ત ( લાગેલા ) મિથ્યાત્વ અવિરતિ



अपि च—‘पुरिसा’ इत्यादि ।

—पुरिसा ! सच्चमेव समभिजाणाहि, सच्चस्स आ-  
णाए से उवट्ठिए मेहावी मारं तरइ । सहिओ धम्ममायाय सेयं  
समणुपस्सइ ॥ सू० १३ ॥

विषयों की ओर चक्कर काटा करता है और मोक्षके साधक धार्मिक अनु-  
ष्ठानके संस्कारों से वञ्चित रहता है । इस बातका ख्याल कर सूत्रकार  
शिष्यजन के शिक्षार्थ कहते हैं कि—हे शिष्य ! यदि तुम परमपुरुषार्थ  
मोक्ष के साधन करने में अपनेको शक्तिशाली समझते हो तो तुम  
स्वरूपका अवलोकन में, या श्रुतचारित्ररूप धर्मकी आराधना में अपनेको  
विसर्जित कर दो । जो ऐसा नहीं करते, वे अनादिकालिक मिथ्यात्व  
एवं अविरति आदिकी लगी हुई वासनाके वश से विषयोंके संगके लिये  
बाहिरी पदार्थों में प्रवृत्ति करनेवाली अपनी आत्मा को उस ओर से हटा  
नहीं सकते । इसलिये तुम मोक्षके साधक धार्मिक अनुष्ठानके संस्कार  
को अपने आपमें प्रबलतर करो, ताकि विषयमार्ग की ओर बढ़ती हुई  
यह तुम्हारी आत्मा उस ओर न जा सके—उस तरफसे निवृत्त हो जावे ।  
इस प्रकारके बार२ के अभ्यास से आत्माको अपने निजरूप—सम्यग्दर्शन  
सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र—में स्थापित करते हुए तुम दुःखों के  
कारणभूत ज्ञानावरणीयादिक कर्मों के बन्धन से मुक्त हो जाओगे ॥ १२ ॥

આદિ ભાવનાના વશથી વિષયોની તરફ જ લાગ્યો રહે છે, અને મોક્ષના  
સાધક ધાર્મિક અનુષ્ઠાનના સંસ્કારોથી વંચિત રહે છે. આ વાતનો ખ્યાલ કરી  
સૂત્રકાર શિષ્યજનના શિક્ષાર્થ કહે છે કે:—હે શિષ્ય ! જો તું પરમપુરુષાર્થ  
મોક્ષનું સાધન કરવામાં પોતાને શક્તિશાળી સમજતો હોય તો તું સ્વરૂપના  
અવલોકનમાં અગર શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં પોતાને વિસર્જિત કરી દે.  
જો આમ નથી કરતા તે અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ અને અવિરતિ આદિની લાગેલી  
વાસનાના વશથી વિષયોના સંગ માટે બહારના પદાર્થોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા  
પોતાના આત્માને તે તરફથી હટાવી શકતા નથી, માટે તમે મોક્ષના સાધક ધાર્મિક  
અનુષ્ઠાનના સંસ્કારને પોતે પોતામાં પ્રબલતર કરો, જેથી વિષયમાર્ગની તરફ  
વધતો એ તમારો આત્મા એ તરફ જઈ શકે નહિ—તે તરફથી નિવૃત્ત થઈ જાય.  
આ પ્રકારના વારંવારના અભ્યાસથી આત્માને—પોતાને નિરૂપ—સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્-  
જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્ર—માં સ્થાપિત કરીને તમે દુઃખોના કારણભૂત જ્ઞાનાવર-  
ણીયાદિક કર્મોના બંધનથી મુક્ત થઈ જશો ॥ સૂ० ૧૨ ॥



છાયા—પુરુષ ! સત્યમેવ સમભિજાનીહિ, સત્યસ્યાજ્ઞયા સ ઉપસ્થિતો મેધાવી મારં તરતિ । સહિતો ધર્મમાદાય શ્રેયઃ સમનુપશ્યતિ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

ટીકા—હે પુરુષ ! સત્યમેવ સમભિજાનીહિ—ગુરુદેવં સાક્ષીકૃત્ય યા શ્રુતચારિત્ર-ધર્મસ્ય ગ્રહણી તથાઽઽસેવની ચ શિક્ષા પરિગૃહીતા, તામ્ અવિસ્મરન્ પરિપાલયે-ત્યર્થઃ । યદ્વા—સત્યઃ=આગમસ્તમેવ સમભિજાનીહિ=ચરણકરણરૂપમાગમોક્તમર્થ પ્ર-તિપાલયેત્યર્થઃ । एतत् किमर्थमित्याह—‘સત્યસ્ય’ इत्यादि । सत्यस्य=गुरुदेवं सा-क्षीकृत्य परिगृहीतायाः श्रुतचारित्रधर्मस्य ग्रहण्या आसेवत्याश्च शिक्षायाः जिनप्र-वचनस्य वा आज्ञया=अनुसरणेन उपस्थितः सन् मेधावी=हेयोपादेयविवेककुशलः, मारं=संसारार्णवं तरति=समुत्तीर्णो भवति । किं च=सहितः=हितेन ज्ञानादिना युक्तः धर्ममादाय=श्रुतचारित्रलक्षणं धर्मं गृहीत्वा श्रेयः=शुभं मोक्षपदं समनुपश्यति, तीर्थङ्क-रादिभिर्दृष्टं सम्यगवलोकयतीत्यर्थः ॥ सू. ૧૩ ॥

ફિર કહતે હૈ—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

હે પુરુષ=પરમપુરુષાર્થ કે સાધન કરને મેં સમર્થ ભવ્ય ! ભગવાન તથા ગુરુકો સાક્ષી કરકે જો તુમને ગ્રહણી-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકો અંગીકાર કરનેવાલી એવં આસેવની=ઉસ ધર્મકો નિર્દોષ રીતિસે પાલન કરનેવાલી શિક્ષા ગ્રહણ કી હૈ, ઉસે તુમ સ્વપ્ન મેં બી મત ભૂલો । હસકા અન્તઃ-કરણસે પાલન કરો । અથવા ચરણકરણરૂપ આગમોક્ત અર્થ-(ચરણ-સત્તરી ઓર કરણસત્તરી) કા પાલન કરો । જિનપ્રવચનકી આજ્ઞા કે અનુસાર જો અપની પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ હેય ઓર ઉપાદેય કે વિવેકસે કુશલ હો જાતા હૈ । હસ કુશલતાકા યહ ફલ હૈ કિ-વહ સંસારસમુદ્ર સે પાર હો જાતા હૈ । તથા—આત્માકે હિતકારી હોનેસે હિતરૂપ

કરીથી કહે છે—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ.

હે પુરુષ ! = પરમપુરુષાર્થનું સાધન કરવામાં સમર્થ ભવ્ય ! ભગવાન તથા ગુરુને સાક્ષી કરીને જે તમે ગ્રહણી-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને અંગીકાર કરવાવાળી, અને આસેવની-તેને નિર્દોષ રીતિથી પાળવાવાળી શિક્ષા ગ્રહણ કરી છે તેને તમે સ્વપ્નમાં પણ ભૂલો નહિ. તેનું અંતઃકરણથી પાલન કરો. અને ચરણકરણરૂપ આગમોક્ત અર્થ (ચરણસત્તરી અને કરણસત્તરી)નું સેવન કરો. જિનપ્રવચનની આજ્ઞાનુસાર જે પોતાની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી કુશળ બની જાય છે. તે કુશળતાનું એ ફળ છે કે તે સંસારસમુદ્રથી પાર થઈ જાય છે, તેમજ આત્માના હિતકારી હોવાથી હિતરૂપ જ્ઞાનાદિ શુભોથી યુક્ત

પ્રમાદરહિતસ્ય મહર્ષેર્ગુણા ઉક્તાઃ, અથ પ્રમાદવતો દોષાન્ દર્શયિતુમાહ-  
'દુહઓ' इत्यादि ।

મૂલમ-દુહઓ જીવિયસ્સ પરિવંદનમાળણપૂયણાણ, જંસિ  
एगे पमायंति ॥ सू० १४ ॥

છાયા-દ્વિહતો જીવિતસ્ય પરિવન્દનમાનનપૂજનાર્થ, યસ્મિન્ એકે પ્રમાદ્યન્તિ ॥

ટીકા-દ્વિહતઃ=દ્વાભ્યાં રાગદ્વેષાભ્યાં હતઃ રાગદ્વેષવશીભતઃ જીવિતસ્ય=ચપ-  
લાવિલાસચશ્ચલસ્ય ક્ષણભંગુરસ્ય જીવનસ્ય, સુખાર્થ, તથા પરિવન્દનમાનનપૂજ-  
નાર્થ-પરિવન્દન=સંસ્તવઃ, યથા-'શ્રીમાન્ આયુષ્માન્ ભવે'-ત્યાદિ, તદર્થ, તથા  
માનન=જનસત્કારઃ, યથા-'અભ્યુત્થાનાસનદાનાદિભિર્જના માં માનયિષ્યન્તી'-તિ  
તદર્થ, તથા પૂજનં, યથા-'સમુપાર્જિતગ્રામજનપદસ્ય મમ દાનમાનપ્રણામસેવાદિભિ-  
ર્જનાઃ પૂજનં કરિષ્યન્તી'-તિ, તદર્થ પ્રાણાતિપાતાદિષુ પ્રવર્તતે । એવમ્-એકે=યે કે

જ્ઞાનાદિ ગુણોંસે યુક્ત વહ સંયમી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કર શુભ  
एवं तीर्थङ्करादिद्वारा दृष्ट ऐसे मुक्तिस्थानका दर्शक होता है ॥ सू० १३॥

પૂર્વ સૂત્રમે પ્રમાદરહિત મહર્ષિકે ગુણોંકા કથન કિયા હૈ, અવ પ્રમા-  
दसंपन्न प्राणीके दोषोंको दिखलाते हैं-'दुहओ' इत्यादि ।

જો મનુષ્ય, રાગ એવં દ્વેષ, ઇન દોનોંસે યુક્ત હૈ વહ બિજલીકે ચમકારે કે  
समान क्षणभंगुर इस जीवनको सुखी करनेके लिये 'आप लक्ष्मीवान् हों,  
चिरंजीवी हों' इत्यादि रूपसे अपनी स्तुति करानेके लिये, 'लोग मुझे देख  
कर खड़े होंगे, आसनादिकके प्रदानसे मेरा सन्मान करेंगे' इस प्रकार  
अन्य जनोंसे सत्कार प्राप्तिके लिये, तथा 'मुझे ग्रामाधिपति या नगराधि-  
पति दान, मान, प्रणाम और सेवा-शुश्रूषा आदिसे प्रतिष्ठित करेंगे' इस  
प्रकार अपनी पूजाके लिये प्राणातिपातादिक अकृत्योंमें प्रवृत्ति करता है ।

તે સંયમી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરી શુભ તેમજ તીર્થંકરાદિદ્વારા દૃષ્ટ  
એવા મુક્તિસ્થાનના દર્શક બને છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

પૂર્વ સૂત્રમાં પ્રમાદરહિત મહર્ષિના ગુણોનું કથન કરેલ છે, હવે પ્રમાદ-  
संपन्न प्राणीના દોષો કહે છે-'દુહઓ' इत्यादि.

જે મનુષ્ય રાગ અને દ્વેષ, એ બન્નેથી યુક્ત છે તે વીજળીના ચમકારા સમાન  
क्षणभंगुर या लवणने सुधी करवा भाटे 'तमे लक्ष्मीवान् थाय्मे चिरंजीवी थाय्मे'  
इत्यादि रूपથી પોતાની સ્તુતિ કરાવવા માટે, તથા 'લોક મને દેખીને ઉભા થશે, આસ-  
नादिकना प्रदानथी माई सन्मान करेशे' या प्रकारे अन्य जनोथी सत्कार प्राप्ति भाटे, तथा  
'मने ग्रामाधिपति अगर नगराधिपति दान, मान, प्रणाम અને सेवा-शुश्रूषा आदिथी  
प्रतिष्ठित करेशे.' या प्रकारे પોતાની પૂજા માટે પ્રાણાતિપાતાદિક અકૃત્યોમાં પ્રવૃત્તિ



ચન રાગદ્વેષાભિભૂતાઃ અસંયમરતાઃ સ્વાર્થ પરાર્થ વા યસ્મિન્=પરિવન્દનાદૌ પ્રમાદ્યન્તિ= આર્તરૌદ્રધ્યાનલગ્નેન ચેતસા પરિવન્દનાદિરૂપસાવધવ્યાપારેષુ પ્રવૃત્તિરૂપં પ્રમાદં કુર્વન્તિ । તે પ્રમાદકારિણઃ સ્વલુ નિજાત્મનો દુઃખં ન ક્ષપયન્તિ; કિન્તુ કર્મોપચયેન સ્વાત્માનં દુઃખાર્ણવે નિપાતયન્તીતિ ભાવઃ । યદ્વા-‘પમોયંતિ’ इति पाठपक्षे ‘प्रमोदन्ते’ इति ज्ञाया । तस्यायमर्थः - ‘जंसि’ यस्मिन् परिवन्दनादौ ‘एगे’ एके= केचित् प्रमोदन्ते=हृष्यन्ति-हर्षं प्राप्नुवन्ति, न तत्तस्य हितायेति भावः ॥ सू० १४॥  
एतत्प्रतिपक्षभूतस्त्वप्रमादो यत् फलं प्राप्नोति तदाह-‘सहिओ’ इत्यादि ।

इस प्रकारकी चाहनावाले जो कोई भी मुनि हैं वे राग और द्वेषसे युक्त हैं और असंयममें आसक्त हैं । ऐसे प्राणी स्वार्थ अथवा परमार्थका कुछ भी ख्याल न कर सिर्फ अपनी ख्यातिलाभ पूजादिककी चाहनाके आधीन हो आर्त और रौद्र ध्यानमें संलग्नचित्त रहा करते हैं और सावध व्यापारोंमें प्रवृत्ति करनेरूप प्रमादका सेवन करते रहते हैं । ये प्रमादकारी प्राणी निश्चित ही अपनी आत्माके दुःखोंको दूर न कर प्रत्युत कर्मोंके संचयसे स्वयं अपनी आत्माको दुःखरूपी समुद्रमें धकेलते हैं । अथवा सूत्रमें ‘पमायंति’ के स्थानमें कहीं ‘पमोयंति’ ऐसा भी पाठ है । उसका अर्थ इस प्रकार होता है-जिस परिवन्दन आदिमें कितनेक प्राणी हर्ष मनाते हैं किन्तु वह उसकी आत्मा के हितके लिये नहीं होता ॥ सू० १४॥  
इससे भिन्न प्रवृत्ति करनेवाला अप्रमादी मुनि जिस फलको पाता है वह दिखलाते हैं—‘सहिओ’ इत्यादि ।

કરે છે. આ પ્રકારની ચાહનાવાળા જે કોઈ મુનિ છે તે રાગ અને દ્વેષથી યુક્ત છે. અને અસંયમમાં આસક્ત છે. એવા પ્રાણી સ્વાર્થ અથવા પરાર્થનો જરા પણ ખ્યાલ કરતા નથી, ફક્ત પોતાની ખ્યાતિલાભ અને પૂજાદિકની ચાહનાને આધીન થઈ આર્ત અને રૌદ્ર ધ્યાનમાં સંલગ્નચિત્ત રહ્યા કરે છે, અને સાવધ વ્યાપારોમાં પ્રવૃત્તિ કરવારૂપ પ્રમાદનું સેવન કરતા રહે છે. એ પ્રમાદકારી પ્રાણી નિશ્ચિત જ પોતાના આત્માને દુઃખોથી દૂર ન કરતાં પ્રત્યુત કર્મોના સંચયથી સ્વયં પોતાના આત્માને દુઃખરૂપી સમુદ્રમાં નાંખે છે. અથવા સૂત્રમાં ‘પમાયંતિ’ ના સ્થાનમાં ક્યાંક ‘પમોયંતિ’ એવા પણ પાઠ છે, તેનો અર્થ આ પ્રકારે થાય છે-જે પરિવંદન આદિમાં કેટલાક પ્રાણી હર્ષ મનાવે છે, પણ તે તેના આત્માના હિત માટે હોતું નથી ॥ સૂ० ૧૪ ॥

તેનાથી ભિન્ન પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અપ્રમાદી મુનિ જે ફળને પામે છે તે બતાવે છે—‘સહિઓ’ ઇત્યાદિ.



મૂલમ્--સહિઓ દુઃખમાત્રયા સ્પૃષ્ટો નો જ્ઞાણાતિ, પાસિમં  
દવિષ્ લો ગાલોગપવંચાઓ મુચ્ચઈ-ત્તિવેમિ ॥ સૂ૦ ૧૫ ॥

છાયા—સહિતો દુઃખમાત્રયા સ્પૃષ્ટઃ ન જ્ઞઞાયાતિ, પશ્યેમં દ્રવિકો લોકાઽલોક-  
પ્રપશ્ચાન્મુચ્યતે—ઈતિ વ્રવીમિ ॥ મૂ૦ ૧૫॥

ટીકા—સહિતઃ=જ્ઞાનચારિત્રયુક્તઃ, દુઃખમાત્રયા શીતોષ્ણપરીષહસમુત્પન્નયા  
વ્યાધ્યુપસર્ગજનિતયા વાઽલ્પયા મહત્યા વા સ્પૃષ્ટો સન્ ન જ્ઞઞાયાતિ=ન વ્યાકુલીભવતિ,  
કષાયં ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । કિંચ—હે શિષ્ય ! ઇમં=વક્ષ્યમાણમર્થ, યદ્વા—ઇમમુક્તમર્થ  
'સંધિં લોગસ્સ જાણિત્તા' ઇત્યારમ્ય 'ળો જ્ઞાણાતિ' ઇત્યન્તેન પ્રતિબોધિતં,  
પશ્ય=હેયોપાદેયવિવેકેન સમ્યગ્ જાનીહિ । તમેવાર્થ દર્શયિતુમાહ—'દ્રવિક'

જ્ઞાન એવં ચારિત્રસંપન્ન સંયમી મુનિ શીત-ઉષ્ણ પરીષહસે ઉત્પન્ન  
અથવા કોઈ વ્યાધિ યા ઉપસર્ગસે જનિત દુઃખકી થોડી યા વહુત માત્રાસે  
સ્પૃષ્ટ હોતા હુઆ મી કમી મી આકુલિતચિત્ત નહીં હોતા હૈ । ઇસ લિયે  
હે શિષ્ય ! ઇસ આગે કહે જાનેવાલે અર્થકો અથવા "સંધિં લોગસ્સ"  
યહાં સે લગાકર "ળો જ્ઞાણાતિ" યહાં તક જો કુછ અમી તક અર્થ  
પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ઉસકો હેય ઔર ઉપાદેયકે વિવેકસે વાસિતઅન્તઃ-  
કરણ હો તુમ પૂર્ણરૂપસે અપને ધ્યાનમ્મેં રલ્લો । "સંધિં લોગસ્સ" યહાંસે  
પ્રારંભકર "ળો જ્ઞાણાતિ" યહાં તક જો કુછ મી વિષય કહા ગયા હૈ  
ઉસકા નિચોડ અર્થ યહી હૈ કિ-રાગદ્વેષસે રહિત મુનિ ચૌદહ ( ૧૪ )  
રાજુપ્રમાણ ઇસ લોકમ્મેં પ્રત્યક્ષસે દિલ્લતે હુએ ચતુર્ગતિ મ્મેં ભ્રમણરૂપ  
વ્યવહારસે સદાકે લિયે મુક્ત હો જાતા હૈ ।

જ્ઞાન અને ચારિત્ર-સંપન્ન સંયમી મુનિ, શીત, ઉષ્ણ પરીષહથી ઉત્પન્ન થયેલ,  
અથવા કોઈ વ્યાધિ અગર ઉપસર્ગથી જનિત થોડી અગર વધારે દુઃખની માત્રાથી  
સ્પૃષ્ટ બનવા છતાં પણ કદિ પણ આકુલિતચિત્ત નથી થતાં. માટે હે શિષ્ય !  
આગળ કહેવામાં આવશે તે અર્થને અથવા "સંધિં લોગસ્સ" અહીંયાથી  
લઈને 'ળો જ્ઞાણાતિ' ત્યાં સુધી જે કંઈ અત્યાર સુધી અર્થ પ્રગટ કરેલ  
છે તેને હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી વાસિતઅન્તઃકરણ બની તમે પૂર્ણરૂપથી  
પોતાના ધ્યાનમાં રાખો. "સંધિં લોગસ્સ" ત્યાંથી પ્રારંભ કરી "ળો જ્ઞાણાતિ"  
ત્યાં સુધી જે કંઈ પણ વિષય કહેવામાં આવેલ છે તેનો નિચોડ અર્થ એ છે  
કે-રાગદ્વેષથી રહિત મુનિ ચૌદ (૧૪) રાજુ પ્રમાણ આ લોકમાં પ્રત્યક્ષથી દેખાતાં  
ચતુર્ગતિમાં ભ્રમણરૂપ વ્યવહારથી સદાને માટે મુક્ત થઈ જાય છે.

इत्यादि। द्रविकः=रागद्वेषविनिर्मुक्तः मुनिरित्यर्थः, लोकाऽऽलोकप्रपञ्चात् चतुर्दश-  
रज्ज्वात्मकलोके आलोकात्=दृश्यमानात् प्रपञ्चात्=चतुर्गतिभ्रमणरूपाद् व्यवहाराद्  
मुच्यते=मुक्तो भवतीत्यर्थः। ' इति ब्रवीमि ' अस्य व्याख्यानं प्राग्वत् ॥सू० १५॥

॥ तृतीयाध्ययनस्य तृतीयोद्देशः संपूर्णः ॥ ३-३ ॥

भावार्थ—“ સંધિ લોગસ” ઇસ સૂત્રસે લગાકર “જો જ્ઞાણાણિ”  
યહાં તક મુનિકે સમ્બન્ધમેં જો કુછ સૂત્રકારને પ્રકટ કિયા હૈ ઉસ પર  
વહ મુનિ યદિ હૃદયકી લગનસે પ્રવૃત્તિયુક્ત હોતા હૈ તો યહ નિશ્ચિત હૈ  
કિ વહ અવશ્ય હી રાગ ઓર દ્વેષસે રહિત હોતા હુઆ ઇસ ચૌદહ (૧૪)  
રાજૂ પ્રમાણ લોકમેં ચારોં ગતિયોંકે ભ્રમણસે મુક્ત હો જાતા હૈ। ‘તિવેમિ’  
ઇતિ બ્રવીમિ, ઇસ પદકા વ્યાખ્યાન પહિલેકે સમાન હૈ ॥ સૂ. ૧૫ ॥

॥ તૃતીય અધ્યયનકા તૃતીય ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૩ ॥

ભાવાર્થ:—“ સંધિ લોગસ” એ સૂત્રથી લગાવી “જો જ્ઞાણાણિ” ત્યાં  
સુધી મુનિના સંબંધમાં જે કંઈ સૂત્રકારે પ્રગટ કરેલ છે તે ઉપર તે મુનિ  
જે હૃદયના ભાવથી પ્રવૃત્તિયુક્ત થાય છે તે એ નિશ્ચિત છે કે તે અવશ્ય જ  
રાગ અને દ્વેષથી રહિત બનીને આ ચૌદ (૧૪) રાજૂ પ્રમાણલોકમાં ચાર ગતિ-  
ઓના ભ્રમણથી મુક્ત થઈ બચે છે. ‘તિવેમિ’ ઇતિ બ્રવીમિ—આ પદનું વ્યાખ્યાન  
પહેલા સમાન છે. ॥ સૂ. ૧૫ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૩ ॥

## । तृतीयाध्ययनस्य चतुर्थ उद्देशः ।

इहानन्तरतृतीयोद्देशके “न केवलं पापकर्मानाचरणेन मुनिर्भवति, किन्तु-अप्रमादशुभभावनापूर्वकसंयमानुष्ठानादेवे”-ति प्रतिबोधितं, तत्र शुभभावना=शुभाध्यवसायः, स च कषायवमनाद् भवति । तस्माद् वान्तवत् कषायास्त्याज्या इति बोधयितुं चतुर्थमुद्देशकं कथयन्नाद्यं सूत्रमाह ‘से वंता’ इत्यादि ।

यद्वा-श्रुतचारित्रलक्षणधर्मे जागरूको वैरोपरतः सन् जातिं वृद्धिं च विदित्वा निष्कर्मदर्शी यो लोकालोकप्रपञ्चात् प्रमुच्यते, स पुनरेवं प्रमुच्यते इति बोधयितुमाह-‘से वंता’ इत्यादि ।

## तृतीय अध्ययनका चतुर्थ उद्देश ।

तीसरे अध्ययनके तीसरे उद्देशमें “केवल पापकर्मके नहीं करनेसे मुनि नहीं होता है किन्तु अप्रमाद तथा शुभभावनापूर्वक संयमके अनुष्ठानसे ही मुनि-अवस्था प्राप्त होती है ” यह विषय समझाया गया है । अब-“शुभभावना शुभअध्यवसायरूप है । उस शुभअध्यवसायकी प्राप्ति कषायोंके त्यागसे ही होती है । इसलिये “वान्त-वमन किये हुए अन्नकी तरह कषाय छोड़ने योग्य हैं” -इस विषय को समझानेके लिये इस चतुर्थ उद्देशककी प्ररूपणा करते हुए सूत्रकार कहते हैं-‘से वंता’ इत्यादि ।

अथवा—जो श्रुतचारित्ररूप धर्ममें जागरूक संयमी वैरसे रहित होकर तथा जन्म और बाल्यादि-अवस्थाओंको दुःखसहभाविनी जान कर निष्कर्मदर्शी होता है वह लोग में दृश्यमान चतुर्गतियों में भ्रमणरूप प्रपञ्च

## ત્રીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ.

ત્રીજા અધ્યયનના ત્રીજા ઉદ્દેશમાં “કેવલ પાપ કર્મ નહિ કરવાથી મુનિ થતાં નથી. પણ અપ્રમાદ તથા શુભભાવનાપૂર્વક સંયમના અનુષ્ઠાનથી જ મુનિ અવસ્થા પ્રાપ્ત થાય છે.” આ વિષય સમજાવવામાં આવેલ છે. હવે શુભ ભાવના શુભ અધ્યવસાયરૂપ છે. તે શુભ અધ્યવસાયની પ્રાપ્તિ કષાયોના ત્યાગથી થાય છે. માટે વાન્ત-વમન કરેલા અન્નની માફક કષાય છોડવા યોગ્ય છે. આ વિષયને સમજાવવા માટે આ ચોથા ઉદ્દેશની પ્રરૂપણા કરતાં સૂત્રકાર કહે છે-‘સે વંતા’ ઇત્યાદિ.

અથવા—જે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમાં જાગરૂક સંયમી વૈરથી રહિત બનીને તથા જન્મ અને બાલ્યાદિ અવસ્થાઓને દુઃખસહભાવિની ગણીને નિષ્કર્મદર્શી થાય છે તે લોકમાં દૃશ્યમાન ચતુર્ગતિઓમાં ભ્રમણરૂપ પ્રપંચથી છુટી બચ છે.



મૂલમ્—સે વંતા કોહં ચ માણં ચ માયં ચ લોભં ચ, એયં પાસગસ્સ  
દંસણં, ઉવરયસત્થસ્સ પલિયંતકરસ્સ, આયાણં સગહાભિ ॥ સૂ. ૧ ॥

છાયા—સ વમિતા ક્રોધં ચ માનં ચ માયાં ચ લોભં ચ । એતત્ પચ્ચકસ્ય દર્શનં  
ઉપરતશસ્ત્રસ્ય પર્યન્તકરસ્ય, આદાનં સ્વકૃતમિત્ ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકા—સઃ=શુભાધ્યવસાયપૂર્વકસંયમારાધનપરાયણઃ શ્રમણઃ, ક્રોધં માનં  
માયાં લોભં ચ વમિતા=અપનેતા ભવતિ । અત્રૈકપદેન ક્રોધમાનમાયાલોભાનિતિ  
વક્તવ્યે પૃથક્ પૃથગુપાદાનમેકૈકસ્ય ક્રોધાદેરનન્તાનુબન્ધ્યાદિભેદેન ચતુર્વિધત્વં  
દર્શયતિ । તેપામુપશમો યુગપન્ન સંભવતિ, તસ્માદેકૈકસ્યોપશમાર્થં પૃથક્ પૃથક્ પ્રયત્નો

સે છૂટ જાતા હૈ । યે સબ બાતેં તીસરે ઉદ્દેશકકે અન્તિમ સૂત્રોંમેં પ્રકટ કર  
દી ગઈ હૈં । પરન્તુ વહ છૂટતા કેસે હૈ ? સો કહતે હૈં—‘સે વંતા’ ઇત્યાદિ ।

શુભાધ્યવસાયપૂર્વક સંયમકી આરાધનામેં તત્પર શ્રમણ-મુનિ  
ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભકા વમિતા-અપનેતા-નાશક હોતા હૈ ।

સૂત્રમેં “ક્રોધં માનં માયાં લોભં” ઇસ પ્રકાર ઇન દ્વિતીયાન્ત પદોંકા  
અલગ અલગ સ્વતંત્ર પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ, ઉસકા કારણ ક્રોધાદિકોંમેં  
એકએકકે અનન્તાનુબન્ધી આદિકે ભેદસે ચાર-ચાર ભેદોં કો દિખાના હૈ ।  
અર્થાત્-સમાસ કરને પર-“ક્રોધમાનમાયાલોભાન્”-એસા એક પદ બન  
જાતા હૈ, ફિર મી ઇસ એક પદકા પ્રયોગ ન કર જો પ્રત્યેક પદ સૂત્રમેં સ્વતંત્ર  
વિભક્તિવાલે રખે હૈં ઉસકા કારણ ક્રોધ આદિ, અનન્તાનુબન્ધી, અપ્રત્યા-  
ખ્યાન; પ્રત્યાખ્યાનાવરણ એવં સંજ્વલનકે ભેદસે ચાર ૨ પ્રકારકે હૈં, યહ  
બતલાના હૈ । તથા ઇનકા ઉપશમ એક સાથ એક હી જગહ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ

એ સઘળી વાતો ત્રીજા ઉદ્દેશના અન્તિમ સૂત્રમાં તથા આ ઉદ્દેશના અન્ય સૂત્રોમાં  
પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. પરન્તુ તે છુટે છે કેવી રીતે ? તે કહે છે—સે વંતા ઇત્યાદિ.

શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક સંયમની આરાધનામાં તત્પર શ્રમણ-મુનિ ક્રોધ,  
માન, માયા અને લોભના વમિતા-અપનેતા-નાશક બને છે.

સૂત્રમાં “ક્રોધં, માનં, માયા, લોભં” આ પ્રકારે આ દ્વિતીયાન્ત પદોના અલગ  
અલગ સ્વતંત્ર પ્રયોગ કરેલ છે. તેનું કારણ ક્રોધાદિકોમાં એક-એકના અનન્તાનુબન્ધી  
આદિના ભેદથી ચાર ચાર ભેદ બતાવવાના છે. અર્થાત્ સમાસ કરવાથી “ક્રોધમાન-  
માયાલોભાન્” એવું એક પદ બને છે. તો પણ આ એક પદનો પ્રયોગ ન કરીને  
જે પ્રત્યેક પદ સૂત્રમાં સ્વતંત્ર વિભક્તિવાળા રાખેલ છે તેનું કારણ ક્રોધ આદિ-  
અનન્તાનુબન્ધી, અપ્રત્યાખ્યાન, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ અને સંજ્વલનના ભેદથી ચાર ચાર  
પ્રકારે છે, તે બતાવવાનું છે. તથા તેનો ઉપશમ એક સાથે એક જ જગ્યા ઉપર

વિધેય इति भावः । किं च-परमार्थतो मुनित्वं क्रोधादिकषायवमनादेव संपद्यते, नान्यथेति स्वबुद्ध्या नाहं कथयामि । किंतु तीर्थंकरस्य श्रीवर्धमानस्वामिनो निरावरणज्ञानत्वाद् दृष्टिपथावतीर्णमिति बोधयितुमाह-‘एतत् पश्यकस्य दर्शनम्’ इत्यादि । एतत्=यदुक्तं क्रोधादिवमनकर्ता मुनिर्भवतीति, तदेतत् पश्यकस्य=पश्यति निरावरणज्ञानत्वाद् जानातीति पश्यः, स एव पश्यकस्तीर्थंकरः श्रीवर्धमानस्वामी, तस्य दर्शनम्=केवलालोकेनावलोकनम्, तदुपदेशान्मया ज्ञातमेतदिति भावः ।

भिन्न २ समयमें भिन्न २ गुणस्थानोंमें होता है । इस कारण इनके प्रत्येक का उपशम करनेके लिये पृथक्-पृथक्-रूपसे प्रयत्न करना पड़ता है । इस समस्त अभिप्रायको स्पष्ट करनेके लिये सूत्रमें क्रोधादिक पदोंको असमा-सरूपसे स्वतन्त्र विभक्तिमें रखा है ।

तथा-परमार्थ दृष्टिसे मुनिपना क्रोधादिकषायों का निग्रह करनेसे ही प्राप्त होता है, अन्य रीतिसे नहीं । इस बातको सुधर्मा स्वामी कहते हैं-हे जम्बू ! मैं अपनी निजी कल्पनासे नहीं कहता हूँ किन्तु तीर्थङ्कर श्री वर्धमान स्वामीने कि जिनका ज्ञान निरावरण है इस बातका साक्षात्कार किया है, अतः उन्हींके कथनानुसार कहता हूँ । इस अपने अभिप्रायको प्रकट करनेके लिये सूत्रमें-“एयं पासगस्स दंसणं” पद रखा है । क्रोधादिक कषायोंका वमन करनेवाला ही मुनि होता है, यह सिद्धान्त भगवान् वर्धमान स्वामीका है । “पश्यति=निरावरणज्ञानत्वात् जानातीति पश्यः, स एव पश्यकः” निरावरणज्ञानशाली होने से जो समस्त त्रिकालवर्त्ती पदार्थोंको

થતો નથી. પણ ભિન્ન ભિન્ન સમયમાં ભિન્ન ભિન્ન ગુણસ્થાનોમાં થાય છે. આથી પ્રત્યેકના ઉપશમ કરવા માટે પૃથક્-પૃથક્-રૂપથી પ્રયત્ન કરવો પડે છે. આ તેમાંના સમસ્ત અભિપ્રાયને સ્પષ્ટ કરવા માટે સૂત્રમાં ક્રોધાદિક પદોને અસમાસ-રૂપથી સ્વતંત્ર વિભક્તિમાં રાખેલ છે.

અને પરમાર્થ દૃષ્ટિથી મુનિપણું ક્રોધાદિક કષાયોનો નિગ્રહ કરવાથી પ્રાપ્ત થાય છે. અન્ય રીતિથી નહિ. આ વાત માટે શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહે છે-હે જમ્બૂ ! મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી આ કહ્યું નથી પણ તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામી કે જેનું જ્ઞાન નિરાવરણ છે. તેમણે આ વાતનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે, માટે તેમના કથનનુસાર કહું છું. આ પોતાના અભિપ્રાયને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રમાં-“એયં પાસગસ્સ દંસણં” પદ રાખેલ છે. ક્રોધાદિક કષાયોનું વમન કરનારા જ મુનિ અને છે. એ સિદ્ધાંત ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીનો છે. “પશ્યતિ=નિરાવરણજ્ઞાનત્વાત્ જાનાતીતિ પશ્યઃ, સ એવ પશ્યકઃ” નિરાવરણજ્ઞાનશાળી હોવાથી જે સમસ્ત



પશ્યકસ્ય વિશેષણમાહ-‘ ઉપરતશસ્ત્રસ્ય ’ ઇત્યાદિ । ઉપરતશસ્ત્રસ્ય=ઉપરતમ્-અપ-  
ગતં દ્રવ્યશસ્ત્રં સ્વરૂપાદિ, ભાવશસ્ત્રં કષાયરૂપં ચ યસ્માત્ સ્કાશાત્ સ ઉપરતશસ્ત્ર-  
સ્તસ્ય, અયં ભાવઃ-ક્રોધાદિકષાયવમનમન્તરેણ તીર્થકરસ્યાપિ સર્વપદાર્થાવભાસકં  
નિરાવરણજ્ઞાનં ન ભવતિ, एवं તદુપદેશાનુસારિણાઽન્યેન મુમુક્ષુણાઽપિ ક્રોધાદિકષા-  
યવમનં કરણીયમિતિ । અપરવિશેષણમાહ-‘ પર્યન્તકરસ્ય ’ ઇતિ । પર્યન્તં=સર્વથા  
વિનાશં કર્મણાં કરોતિ તચ્છીલશ્ચેતિ પર્યન્તકરસ્તસ્યૈતદ્ દર્શનમિતિ સમ્બન્ધઃ ।

યુગપત્-એકસાથ-જાનતે હૈં વે પશ્ય હૈં, પશ્યકો હી પશ્યક કહતે હૈં ।  
‘પશ્યક’ શબ્દ તીર્થહ્રુર વર્ધમાન સ્વામીકા વાચક હૈ । કેવલજ્ઞાનરૂપી આલોક  
( પ્રકાશ ) સે દેખનેકા નામ દર્શન હૈ । ભગવાને યહ સમસ્ત વિષય  
અપને કેવલજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશસે પ્રત્યક્ષ દેખા હૈ । શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે  
હૈં કિ ઉન્હીકે ઉપદેશસે ઇસકો મૈને જાના હૈ અતઃ ઇસમેં અન્યથાપનકી  
આશંકા હો હી નહીં સકતી હૈ । ભગવાનકા જ્ઞાન નિરાવરણ કૈસે હુઆ ?  
ઇસ વાતકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર ‘ ઉપરતશસ્ત્રસ્ય ’ ઇસ વિશેષણ  
કા પ્રયોગ કરતે હૈં । શસ્ત્ર દો પ્રકારકે હૈં-(૧) દ્રવ્યશસ્ત્ર ઓર (૨)  
ભાવશસ્ત્ર । તલવાર આદિ દ્રવ્યશસ્ત્ર હૈં । ક્રોધાદિક કષાય ભાવશસ્ત્ર  
હૈં । જબ તક આત્માસે ભાવશસ્ત્રોંકા અભાવ-ઉચ્છેદ નહીં હોતા હૈ તબ  
તક જ્ઞાનમેં નિરાવરણતા નહીં આ સકતી । ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીને  
ઇનકા અપની આત્માસે સર્વથા વિનાશ કર દિયા હૈ, ઇસીલિયે ઉનકા  
જ્ઞાન નિરાવરણ હૈ । દ્રવ્યશસ્ત્ર ઓર ભાવશસ્ત્ર જિસસે સર્વથા દૂર હો ચુકે

ત્રિકાળવર્તી પદાર્થોને યુગપત્-એક સાથે જાણે છે તે પશ્ય છે. પશ્યને જ પશ્યક  
કહેવામાં આવે છે. ‘પશ્યક’ શબ્દ તીર્થકર વર્ધમાન સ્વામીનો વાચક છે.  
કેવળજ્ઞાનરૂપી આલોક ( પ્રકાશ ) થી દેખવાનું નામ દર્શન છે. ભગવાને આ  
સમસ્ત વિષય પોતાના કેવળજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશથી પ્રત્યક્ષ દેખેલ છે. શ્રી સુધર્મા  
સ્વામી કહે છે કે “તેમના ઉપદેશથી તે જ્ઞાન મેં જાણેલ છે. માટે તેમાં અન્યથા-  
પણુની આશંકા બની શકતી જ નથી. ભગવાનનું જ્ઞાન નિરાવરણ કેવી રીતે થયું ?  
આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રકાર ‘ ઉપરતશસ્ત્રસ્ય ’ આ વિશેષણનો પ્રયોગ  
કરે છે. શસ્ત્ર બે પ્રકારના છે. (૧) દ્રવ્યશસ્ત્ર અને (૨) ભાવશસ્ત્ર. તલવાર આદિ  
દ્રવ્યશસ્ત્ર છે. ક્રોધાદિક કષાય ભાવશસ્ત્ર છે. જ્યાં સુધી આત્માથી ભાવશસ્ત્રોનો  
અભાવ-ઉચ્છેદ નથી થતો ત્યાં સુધી જ્ઞાનમાં નિરાવરણતા આવી શકતી નથી.

ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીએ પોતાના આત્માથી તેનો સર્વથા વિનાશ કરી  
નાખેલ છે, માટે તેમનું જ્ઞાન નિરાવરણ છે. દ્રવ્યશસ્ત્ર અને ભાવશસ્ત્ર બેનાથી



યથા તીર્થંકરઃ કષાયશસ્ત્રવિનિવર્તનાત્ સકલકર્મણાં ક્ષપયિતા, એવમન્યોઽપિ તદુપદેશાનુસારી ભવ્યો ભવતીત્યાહ—‘આદાનમ્’ ઇત્યાદિ। આદાનમ્=આદીયતે =ગૃહ્યતે—આત્મપ્રદેશૈઃ સહ શ્લિષ્યતેઽષ્ટવિધં કર્મ યેન તદાદાનમષ્ટાદશપાપસ્થાનમ્, તત્સ્થિતિહેતુત્વાત્ કષાયા વાઽઽદાનં તદ્વમિતા સ્વકૃતભિદ્ ભવતિ। યઃ સ્વલુકર્મ-ણામાદાનં કષાયાદિ નિરાકરોતિ, સ સ્વકૃતકર્મણાં ભેત્તા ભવતીત્યર્થઃ ॥ મૂ.૦૧ ॥

હૈં उसका नाम उपरतशस्त्र है। जब तक आत्मासे कषायोंका वमन नहीं होगा तब तक, चाहे वे कोई भी क्यों न हों; निरावरणशाली नहीं हो सकते। ज्ञानमें जब तक निरावरणता नहीं आती है तब तक किसी भी पदार्थका साक्षात्कार नहीं हो सकता है। अतः समस्त पदार्थोंको हस्तामलकवत् प्रकट करनेवाला ज्ञान सर्वज्ञको कषायोंके वमनसे ही प्राप्त होता है। जब यह सिद्धांत निश्चित है तो उन्हींके उपदेशानुसार प्रवृत्ति करनेवालेअन्य मोक्षाभिलाषीजनको भी क्रोधादिक कषायोंका वमन करना आवश्यक है। क्रोधादिक कषायोंके वमन किये बिना ज्ञानमें निरावरणता नहीं आती है। इसकी पुष्टि—‘पलियंतकरस्स-पर्यन्तकरस्य’ इस पदसे करते हैं। यद्यपि यह पद षष्ठ्यन्त है और पश्यकके विशेषणरूपसे ही प्रयुक्त हुआ है, परन्तु यह इस बातकी घोषणा करता है कि तीर्थङ्कर कषायरूप भाव-शस्त्रोंके नाशसे ही सकल कर्मोंके नाशक हुए हैं। अतः क्रोधादिक कषायोंका नाश सकल कर्मोंके नाश होनेमें तथा घातियाके नाशमें एवं केवलज्ञानरूपी निरावरण ज्ञानकी प्राप्तिमें कारण है। इस प्रकार परम्परासम्ब-

સર્વથા દૂર થઈ ચૂકેલ છે તેનું નામ ઉપરતશસ્ત્ર છે, જ્યાં સુધી આત્માથી કષાયોનું વમન નહિ થાય ત્યાં સુધી, ભલે તેઓ કોઈ પણ કેમ ન હોય, નિરાવરણજ્ઞાનશાળી બની શકતા નથી. જ્ઞાનમાં જ્યાં સુધી નિરાવરણતા નથી આવતી ત્યાં સુધી કોઈ પણ પદાર્થનો સાક્ષાત્કાર થતો નથી. માટે સમસ્ત પદાર્થોને હસ્તામલકવત્ પ્રગટ કરવાવાળું જ્ઞાન સર્વજ્ઞને કષાયોના વમનથી જ પ્રાપ્ત થાય છે. જ્યારે આ સિદ્ધાંત નિશ્ચિત છે તો તેના ઉપદેશાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અન્ય મોક્ષાભિલાષીજનને પણ ક્રોધાદિક કષાયોનું વમન કરવું આવશ્યક છે. ક્રોધાદિક કષાયોનું વમન કર્યા વગર જ્ઞાનમાં નિરાવરણતા આવતી નથી. તેની પુષ્ટિ ‘પલિયંતકરસ્સ-પર્યન્તકરસ્ય’ આ પદથી કરે છે, જે કે આ પદ ષષ્ઠ્યન્ત છે, અને પશ્યકના વિશેષણરૂપથી જ પ્રયુક્ત થયેલ છે. તો પણ આ એ વાતની ઘોષણા કરે છે કે તીર્થંકર કષાયરૂપ ભાવશસ્ત્રોના નાશથી જ સકળ કર્મોના નાશક બનેલ છે. માટે ક્રોધાદિક કષાયોના નાશ સકળ કર્મોના નાશમાં તથા ઘાતિયાના નાશમાં તેમજ કેવળજ્ઞાન રૂપી નિરાવરણ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિમાં કારણ છે. આ પ્રકારે પરંપરા-સંબંધથી કષાયોનું

નન્વસ્તુ હેયોપાદયોપદેશેન પરોપકારકરણાત્ તીર્થકરત્વમ્, કથમેતાવતા સર્વજ્ઞતા તસ્યેતિ ચેન્ન, યતઃ સમ્યગ્જ્ઞાનરહિતો યથોચિતં હેયોપાદયોપદેશં કર્તુ ન પ્રભવતિ, યથાવસ્થિતૈકપદાર્થજ્ઞાનમપિ ન ભવતિ સર્વજ્ઞતામન્તરેણેતિ પ્રતિબોધયિતુ-  
માહ-‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ ।

યદ્વા-નનુ ‘ એતત્ પદ્યકસ્ય દર્શનમ્ ’ ઇતિ યદુક્તં તત્ર સ પશ્યકઃ કિમે-  
કમેવ પદાર્થ જ્ઞાનાતિ, આહોસ્વિત્-અનેકમ્ ? ઇતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયામાહ-  
‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ ।

ન્ધસે કષાયોંકા વમન નિરાવરણ જ્ઞાનકા ઉત્પાદક માના જાતા હૈ । જો સકલ કર્મોંકા વિનાશ કરતા હૈ, અથવા કર્મોંકે વિનાશ કરનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ ઉસકા નામ-“ પર્યન્તકર ” હૈ, ઉસકા યહ સિદ્ધાન્ત હૈ । જૈસે તીર્થઙ્કર કષાયશસ્ત્રકી નિવૃત્તિસે સકલ કર્મોંકે વિનાશક હુએ હૈં ઉસી તરહસે ઉનકે ઉપદેશાનુસાર અપની પ્રવૃત્તિ રાખનેવાલા અન્ય ભવ્યજન ભી સકલ કર્મોંકા વિનાશક હોતા હૈ । ઇસી અભિપ્રાયકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રમેં ‘ આદાનમ્ ’ પદ રખા હૈ । આત્માકે પ્રદેશોંકે સાથ અષ્ટવિધ કર્મ જિનસે દૂધ-પાણીકી તરહ એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ હોકર ઠહરતે હૈં ઉનકા નામ આદાન હૈ । બે અઠારહ પાપસ્થાન હૈં । અથવા કર્મોંમેં સ્થિતિબન્ધકા કારણ હોનેસે કષાયેં ભી આદાન હૈં, ઇનકા વમન કરનેવાલા ‘ સગડબ્ધિ ’ સ્વ-  
કૃતભિદ્-હોતા હૈ, અર્થાત્ જો ભવ્ય કર્મોંકે આદાનભૂત કષાયાદિકોંકા નિરાકરણ-વિનાશ કરતા હૈ વહ અપને કિયે હુએ કર્મોંકા વિનાશક હોતા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

વમન નિરાવરણ જ્ઞાનનું ઉત્પાદક માનવામાં આવે છે. જે સકળ કર્મોંના વિનાશ કરે છે અથવા કર્મોંના વિનાશ કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તેનું નામ “ પર્યન્તકર ” છે. તેનો એ સિદ્ધાંત છે. જેમ તીર્થંકર કષાયશસ્ત્રની નિવૃત્તિથી સકળ કર્મોંના વિનાશક બને છે તે માફક તેના ઉપદેશાનુસાર પોતાની પ્રવૃત્તિ રાખવાવાળા અન્ય ભવ્યજન પણ સકળ કર્મોંના વિનાશક બને છે. આ અભિપ્રાયને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રમાં ‘ આદાનમ્ ’ પદ રાખેલ છે. આત્માના પ્રદેશોની સાથે અષ્ટવિધ કર્મોં જેનાથી દૂધ-પાણીની માફક એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ બનીને રહે છે તેનું નામ આદાન છે. તે અઠાર પાપસ્થાનક છે. અથવા કર્મોંમાં સ્થિતિબંધનું કારણ હોવાથી કષાયો પણ આદાન છે. તેનું વમન કરવાવાળા ‘ સગડબ્ધિ ’ સ્વકૃતભિદ્ થાય છે. અર્થાત્ જે ભવ્ય કર્મોંના આદાનભૂત કષાયાદિકોંનું નિરાકરણ-વિનાશ કરે છે તે પોતાના કરેલા કર્મોંના વિનાશક બને છે. ॥ સૂ. ૧ ॥



मूलम्—जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ, जे सव्वं जाणइ  
से एगं जाणइ ॥ सू० २ ॥

छाया—य एकं जानाति स सर्वं जानाति, यः सर्वं जानाति स एकं जानाति ॥ सू० २ ॥

तीर्थङ्कर भगवान् जीवोंको हेय और उपादेयका उपदेश देते हैं। एतावता परके उपकारके कर्तृत्वसे उनमें तीर्थङ्करपना भले ही आ जावे इसमें हमें कोई विवाद नहीं है। परन्तु इससे उनमें सर्वज्ञता कैसे सिद्ध हो सकती है? ऐसी शङ्का नहीं करनी चाहिये। क्यों कि जब तक आत्मा में पदार्थोंका सम्यग्-वास्तविक ज्ञान नहीं हो जाता है तब तक तीर्थङ्कर भगवान् उपदेश नहीं देते हैं। जीवोंको उपदेश देना सम्यग्ज्ञान अर्थात् केवलज्ञानके आधीन है। केवलज्ञान उत्पन्न होनेपर त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थोंका वास्तविक स्वरूप दर्पणमें प्रतिबिम्बकी तरह प्रतिभासित होने लगता है। केवलज्ञानकी प्राप्ति ही सर्वज्ञता है। इस सर्वज्ञताके बिना एक पदार्थका भी वास्तविक स्वरूप ज्ञात नहीं हो सकता है। इस बात को समझानेके लिये कहते हैं—‘जे एगं’ इत्यादि।

अथवा—यह जो अभी कहा है कि—‘एयं पासगस्स दंसणं—एतत् पश्यकस्य दर्शनम्’ सो शिष्य यहां पर यह प्रश्न करता है कि—सर्वज्ञ क्या एक ही पदार्थ को जानता है या अनेक पदार्थोंको? इस प्रकारके शिष्यके प्रश्नका उत्तर देते हैं—‘जे एगं’ इत्यादि।

तीर्थङ्कर भगवान् जेवने हेय अने उपादेयने उपदेश आपे छे. एतावता ओज्जना उपकारना कर्तृत्वथी तेमां तीर्थङ्करपणुं भवे आवी नय तेमां अभने केछ विवाद नथी, परंतु तेथी तेमां सर्वज्ञता केवी रीते सिद्ध थाय छे? ओवी शङ्का करवी नेछ ओ नहि. कारण के न्यां सुधी आत्मां पदार्थानुं सम्यग्-वास्तविक ज्ञान थतुं नथी त्यां सुधी तीर्थङ्कर भगवान् उपदेश आपता नथी. जेवने उपदेश आपवो सम्यग्ज्ञान अर्थात् केवलज्ञानने आधीन छे. केवलज्ञान उत्पन्न थवाथी त्रिकाणवर्ती समस्त पदार्थानुं वास्तविक स्वरूप दर्पणमां प्रतिबिम्बनी भाइक प्रतिभासित थवा भांछे छे. केवलज्ञाननी प्राप्ति न सर्वज्ञता छे. आ सर्वज्ञता बिना ओक पणु पदार्थानुं वास्तविक स्वरूप ज्ञात थछ शकतुं नथी. आ वातने समजववा भाटे कहे छे—‘जे एगं’ इत्यादि.

अथवा ओ ने डमण्ठा कहुं के ‘एयं पासगस्स दंसणं—एतत् पश्यकस्य दर्शनम्’ नेथी शिष्य आ केछाणे ओ प्रश्न करे छे के—सर्वज्ञ शुं ओक न पदार्थने ज्ञाछे के अनेक पदार्थने? आ प्रकारना शिष्यना प्रश्नने उत्तर आपे छे ‘जे एगं’ इत्यादि.



ટીકા—યઃ એકં=જીવદ્રવ્યમ્ અજીવદ્રવ્યં વા દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવતઃ, અતીતાનાગ-  
તવર્તમાનૈઃ સર્વપર્યાયૈશ્ચ જાનાતિ, સ સર્વ જાનાતિ । સકલપદાર્થસમ્યગ્જ્ઞાનમન્તરેણ-  
કસ્ય કસ્યચિત્ પદાર્થસ્ય દ્રવ્યક્ષેત્રાદિનાઽતીતાનાગતવર્તમાનસર્વપર્યાયતશ્ચ જ્ઞાનં ન  
સંભવતીતિ ભાવઃ । ઇમમેવાર્થં बोधयितुं कार्यकारणभावं प्रदर्शयन्नाह—‘ यः सर्व  
जानाति ’ इत्यादि । यः सर्व=लोकान्तर्वर्ति सकलं पदार्थजानं जानाति, स एकं  
द्रव्यं घटादिकं जानाति । अतीतानागतवर्तमानसर्वपर्यायैस्तत्तत्स्वभावप्राप्त्याऽना-

જો એક જીવ દ્રવ્યકો, અથવા અજીવ દ્રવ્યકો દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઔર  
ભાવસે એવં અતીત અનાગત ઔર વર્તમાનકાલ-સમ્બન્ધી પર્યાયોંસે યુક્ત  
જાનતા હૈ વહ સમસ્ત પદાર્થોં કો જાનતા હૈ । સમસ્ત પદાર્થોં કૈ સમ્ય-  
ગ્જ્ઞાન હુએ વિના કોઈ એક વિવક્ષિત પદાર્થ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઔર ભાવસે  
એવં અતીત અનાગત ઔર વર્તમાન સમસ્ત પર્યાયોં સે નહીં જાના જા સકતા  
હૈ । ઇસી અભિપ્રાયકો સમજ્ઞાનેકૈ લિયે કાર્યકારણભાવ દિખલાતે હુએ  
સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘ જે સર્વ જાણહ ’ ‘ યઃ સર્વ જાનાતિ ’ ઇતિ । જો ઇસ  
લોકકૈ ખીતરકૈ સમસ્ત પદાર્થોં કો જાનતા હૈ વહ એક ઘટાદિક દ્રવ્યકો  
ખી જાનતા હૈ । ભૂત ભવિષ્યત્ ઔર વર્તમાનકાલ-સમ્બન્ધી જિતની ખી  
ઉસ દ્રવ્યકી પર્યાયોં હૈ વે સમસ્ત ઉસ દ્રવ્યકૈ સ્વભાવ હૈ । ઇન પર્યાયોંસે  
પરિણત દ્રવ્ય તત્તત્સ્વભાવવાલા હોતા રહતા હૈ । ઇસ પ્રકાર દ્રવ્યમેં ઉનર  
પર્યાયોંસે તત્તત્સ્વભાવકી પ્રાપ્તિ હોનેસે વહ દ્રવ્ય અપને અનાદિ અનન્ત-  
કાલપનેસે ( ઇસ રૂપસે હુઆ, ઇસ રૂપસે હો રહા હૈ ઔર ઇસ રૂપસે

જે એક જીવદ્રવ્યને, અથવા અજીવદ્રવ્યને દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી  
તેમજ અતીત અનાગત અને વર્તમાનકાળ-સંબંધી સમસ્ત પર્યાયોંથી યુક્ત  
જાણે છે તે સમસ્ત પદાર્થોંને જાણે છે, સમસ્ત પદાર્થોંનું સમ્યગ્જ્ઞાન થયા વિના  
કોઈ એક વિવક્ષિત પદાર્થનું જ્ઞાન દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી અને અતીત  
અનાગત અને વર્તમાન સમસ્ત પર્યાયોંથી થઈ શકતું નથી, આ અભિપ્રાય સમ-  
જાવવા માટે કાર્ય-કારણ ભાવ દર્શાવતાં સૂત્રકાર કહે છે—“ જે સર્વ જાણહ-  
યઃ સર્વ જાનાતિ ” ઇતિ. જે આ લોકના ખીતરના સમસ્ત પદાર્થોંને જાણે છે  
તે એક ઘટાદિક દ્રવ્યને પણ જાણે છે. ભૂત ભવિષ્ય અને વર્તમાનકાળ સંબંધી  
જેટલી પણ તે દ્રવ્યની પર્યાયોં છે તે સમસ્ત, દ્રવ્યનો સ્વભાવ છે. તે પર્યાયોંથી  
પરિણત દ્રવ્ય તત્તત્સ્વભાવવાળા બનતા રહે છે. આ પ્રકારે દ્રવ્યમાં તે તે પર્યા-  
યોંથી તત્તત્સ્વભાવની પ્રાપ્તિ થવાથી તે દ્રવ્ય પોતાના અનાદિ અનન્તકાળપણથી  
( આ રૂપથી બન્યા; આ રૂપથી બને છે અને હવે આ રૂપથી બનશે ) તે તે

घनन्तकालतया समस्तवस्तुस्वभावपरिज्ञानादित्यर्थः । एकस्य वस्तुनः समग्रस्वरूपं सर्वज्ञ एव जानातीति भावः ॥ सू० २ ॥

एवं जानन् सर्वज्ञ एव सर्वजीवोपकारकमुपदेशं ददातीत्याह—‘सव्वओ’ इत्यादि । यद्वा—सर्वज्ञः शिष्येभ्यः प्रमाददोषान् अप्रमादगुणांश्च कथयति—‘सव्वओ’ इत्यादि ।

मूलम्—सव्वओ पमत्तस्य अत्थि भयं, सव्वओ अप्पमत्तस्य नत्थि भयं ॥ सू० ३ ॥

छाया—सर्वतः प्रमत्तस्य अस्ति भयं, सर्वतोऽप्रमत्तस्य नास्ति भयम् ॥ सू० ३ ॥

टीका—प्रमत्तस्य=मद्यादिप्रमादयुक्तस्य सर्वतः=द्रव्यक्षेत्रकालभावतः भयं=भयकारित्वात् कर्म अस्ति । प्रमादवान् खलु ज्ञानावरणीयादिकमष्टविधं कर्मोपचिनो-होगा ) उन उन स्वभावोंवाला जान लिया जाता है । अर्थात् एक वस्तुका समस्त स्वरूप सर्वज्ञ ही जानते हैं ॥ सू० २ ॥

इस प्रकार समस्त द्रव्योंको जाननेवाले सर्वज्ञ ही समस्त जीवोंके लिये हितकारी उपदेश देते हैं । इस बातको सूत्रकार दिखलाते हैं—‘सव्वओ’ इत्यादि ।

अथवा—सर्वज्ञ स्वयं अपने शिष्योंके प्रति प्रमादके दोषोंको और अप्रमादके गुणोंको प्रदर्शित करते हैं—‘सव्वओ’ इत्यादि ।

मद्यादिप्रमादसेवी व्यक्ति, द्रव्य क्षेत्र काल और भावसे भय-भयकारी होनेसे कर्म-का बन्ध करता है । ‘भय’ शब्दका अर्थ कर्म है, क्योंकि कर्म जीवोंको सदा भयकारी होते हैं इसलिये यहां कार्यमें कारण का उपचार किया गया है । भय, कर्मों का कार्य है और कर्म, भय के कारण हैं । प्रमादवाला व्यक्ति निश्चयसे ज्ञानावरणीयादिक आठ प्रकार

સ્વભાવોવાળા બાણી લેવામાં આવે છે. અર્થાત્ એક વસ્તુનું સમસ્ત સ્વરૂપ સર્વજ્ઞ જ બાણી છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

આ પ્રકારે સમસ્ત દ્રવ્યોને બાણીવાળા સર્વજ્ઞ જ સમસ્ત જીવોને માટે હિતકારી ઉપદેશ દે છે. આ વાતને સૂત્રકાર બતાવે છે—‘સવ્વઓ’ ઇત્યાદિ.

અથવા સર્વજ્ઞ સ્વયં પોતાના શિષ્યો પ્રતિ પ્રમાદના દોષોને અને અપ્રમાદના ગુણોને પ્રદર્શિત કરે છે—‘સવ્વઓ:’ ઇત્યાદિ.

મદ્યાદિપ્રમાદસેવી જીવ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી ભય-ભયકારી હોવાથી કર્મનો બંધ કરે છે. ‘ભય’ શબ્દનો અર્થ કર્મ છે. કારણ કે કર્મ જ જીવોને સદા ભયકારી હોય છે. માટે આ ઠેકાણે કાર્યમાં કારણનો ઉપચાર કરેલ છે. ભય, કર્મોનું કાર્ય છે અને કર્મ, ભયનું કારણ છે. પ્રમાદવાળો જીવ



તિ । સ ચ દ્રવ્યતઃ સર્વેરાત્મપ્રદેશૈઃ કર્મ ગૃહ્ણાતિ, ક્ષેત્રતઃ=ષટ્સુ દિશ્વ, કાલતોઽનુ-  
સમયં, ભાવતોઽષ્ટાદશભિઃ સ્થાનૈઃ, પશ્ચવિધેન વા પ્રમાદેન, एवं કર્મ સર્વતઃ પ્રમાદિનં  
બધ્નાતીત્યર્થઃ । યદ્વા-‘સર્વતઃ’ इत्यस्य ‘सर्वत्र’ इत्यर्थः । यथा चौरस्य  
करच्छेदन-शूलादिभेदन-कशादिताडन-कठिनतरराजकीययन्त्रणादिभयमस्मिन् लोके,  
परलोकेऽपि नरकनिगोदादियातनाभयं भवति, तथा-प्रमत्तस्य सर्वत्र भय-  
मित्यर्थः । प्रमादरहितस्य तु नास्ति भयमित्याह-‘सर्वतोऽप्रमत्तस्य’ इत्यादि ।  
अप्रमत्तस्य=प्रमादरहितस्य आत्मकल्याणाय संयमाराधने जाग्रत इत्यर्थः, सर्वतः=  
ऐहिकामुष्मिकदुःखकारणात् संसाराद् भयं नास्ति । प्रमादरहितस्य संसारो न  
भवतीत्यर्थः ॥ सू० ३ ॥

કે કર્મોંકા બન્ધક હોતા હૈ । વહ દ્રવ્યકી અપેક્ષા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોંસે  
કર્મોંકા ગ્રહણ કરનેવાલા હોતા હૈ । ક્ષેત્રકી અપેક્ષા ષટ્-છહ-દિશાઓં  
મેં, કાલકી અપેક્ષા પ્રત્યેક સમયમેં, ભાવકી અપેક્ષા અઠારહ (૧૮) પાપ  
સ્થાનોંસે, અથવા પાંચ પ્રકારકે પ્રમાદસે કર્મોંકા બન્ધક હોતા હૈ । ઇસ  
પ્રકાર ડસકે સબ તરફસે કર્મોંકા બન્ધ હોતા રહતા હૈ । અથવા ‘સર્વતઃ’  
‘સર્વ પ્રકારસે’ ઇસકે સ્થાનમેં ‘સર્વત્ર’ એસા અર્થ કરને પર-પ્રમાદી કે  
લિયે ‘સર્વત્ર’-સબ જગહ-ભય હોતા હૈ, એસા અર્થબોધ હોતા હૈ । યહાં  
“ભય” શબ્દકા અર્થ ‘ડર’ હૈ જિસ પ્રકાર ચોરકે લિયે ઇસ લોકમેં  
હાથોંકે કટને, શૂલાદિસે મિદને, કશા-ચાણુક આદિસે તાડને આદિ રૂપસે  
કઠિનતર રાજકીય યન્ત્રણાઓં-કઠ્ઠોં-કે ભોગને કા ભય હોતા હૈ, તથા  
પરલોકમેં ભી નરક-નિગોદાદિકકે અનેક કઠ્ઠોંકે સહનેકા ભય હોતા  
હૈ, ઇસીતરહસે પ્રમાદી પ્રાણીકો સર્વત્ર ભય હી ભય હૈ । આત્મકલ્યાણ

નિશ્ચયથી જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકારના કર્મોના બંધક થાય છે. તે દ્રવ્યની  
અપેક્ષા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોથી કર્મોના ગ્રહણ કરવાવાળા બને છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષા  
ષટ્-છ દિશાઓમાં, કાળની અપેક્ષા પ્રત્યેક સમયમાં, ભાવની અપેક્ષા અઠાર  
પાપસ્થાનોથી અથવા પાંચ પ્રકારના પ્રમાદથી કર્મોના બંધક થાય છે, આ પ્રકારે  
તેને સર્વત્ર બાબતથી કર્મોના બંધ થતો રહે છે. અથવા ‘સર્વતઃ=સર્વપ્રકારથી’તેના  
સ્થાનમાં ‘સર્વત્ર’ એવો અર્થ કરવાથી પ્રમાદી માટે ‘સર્વત્ર’ દરેક જગ્યાએથી  
ભય થાય છે, એવો અર્થબોધ થાય છે. આ ઠેકાણે ભય શબ્દનો અર્થ ‘ડર’ છે.  
કે પ્રકારે ચોર માટે આ લોકમાં ખડગાદિથી હાથોનું કાપવું, શૂલાદિથી ભેદાવું,  
કશા-ચાણુક આદિથી માર ખાવો આદિરૂપ કઠિનતર રાજકીય યન્ત્રણાઓ-કઠો-ને  
ભોગવવાનો ભય હોય છે, તથા પરલોકમાં પણ નરકનિગોદાદિક અનેક કઠ્ઠોને  
ગ્રહીતકરવાનો ભય હોય છે. તેવી રીતે પ્રમાદી પ્રાણીને સર્વત્ર ભય જ ભય છે.



ઇહ કષાયાધિકારો વર્તેતે, તદ્વમનં દ્વિવિધમ્-ઉપશમનવમનં, ક્ષપણવમનં ચ । તત્રોપશમનવમનં નામનમિતિ પર્યાયસ્તદભિપ્રાયેણાહ—‘ જે એગં નામે ’ इत्यादि ।

यद्वा-कषायाभावात् प्रमादाभावः, तदभावाच्च सकलमोहनीयाऽभावः, तस्मात् सकलकर्मक्षयः, तदेवमेकाभावे सति बहूनामभावः, बहूनामभावे सति एकाभावः; इत्येवं गतप्रत्यागतरूपेण कार्यकारणभावं दर्शयितुमाह—‘ જે એગં ’ इत्यादि ।

करनेके लिये जो संयमकी आराधनामें जागरूक हैं ऐसे अप्रमादी प्राणीको कहीं भी भय नहीं होता है । वे न इस लोकमें दुःखी होते हैं और न परलोकमें । अधिक क्या कहा जाय? वे इस संसारके भयसे ही निर्मुक्त हो जाते हैं । इहलोकसम्बन्धी और परलोकसम्बन्धी दुःखका कारण यह संसार ही उन्हें फिरसे प्राप्त नहीं होता, अर्थात् वे सदा के लिये मुक्त हो जाते हैं ॥ सू० ३ ॥

यहां पर कषायका अधिकार है । कषायका वमन दो प्रकारका है—(१) उपशमनवमन, (२) क्षपणवमन । कषायोंका उपशम होना यह उपशमनवमन है, तथा कषायोंका क्षय होना यह क्षपणवमन है । उपशमन-वमनका पर्यायान्तर शब्द नामन है । इस अभिप्रायसे कहते हैं—‘ જે એગં ’ इत्यादि ।

अथवा—कषायोंके अभावसे प्रमादका अभाव, प्रमादके अभावसे समस्त मोहनीयका अभाव, उससे सकल कर्मोंका क्षय होता है । इस प्रकार एकका अभाव होने पर बहुतोंका अभाव, बहुतोंका अभाव होने

આત્મકલ્યાણ કરવા માટે જે સંયમની આરાધનામાં જાગરૂક છે એવા અપ્રમાદી પ્રાણીઓને કાંઈ પણ ભય હોતો નથી. તેઓ નથી આ લોકમાં દુઃખી થતાં. નથી પરલોકમાં દુઃખી થતાં. અધિક શું કહેવું? તેઓ આ સંસારના ભયથી જ નિર્મુક્ત થઈ જાય છે. આ-લોકસંબંધી અને પરલોકસંબંધી દુઃખનું કારણ આ સંસાર જ તેને ફરીથી પ્રાપ્ત થતો નથી, અર્થાત્ તે સદાને માટે મુક્ત થઈ જાય છે ॥ સૂ. ૩ ॥

આ ઠેકાણે કષાયનો અધિકાર છે. કષાયોનું વમન બે પ્રકારે છે. (૧) ઉપશમવમન (૨) ક્ષપણવમન. કષાયોનું ઉપશમ થવું તે ઉપશમવમન છે. તથા કષાયોનું ક્ષય થવું તે ક્ષપણવમન છે. ઉપશમવમનનો પર્યાયાન્તર શબ્દ નામન છે. આ અભિપ્રાયથી કહે છે—‘ જે એગં ’ इत्यादि.

अथवा-कषायोना अलावथी प्रमादोना अलाव, प्रमादना अलावथी समस्त मोहनीयाना अलाव, तेनाथी सकल कर्मोना क्षय थाय છે. આ પ્રકારે એકનો અલાવ થવાથી બહુનો અલાવ, બહુનો અલાવ થવાથી એકનો અલાવ થાય છે.

મૂલમ—જે એગં નામે સે બહું નામે, જે બહું નામે સે એગં નામે ॥ સૂ. ૪ ॥

હાયા—યઃ એકં નામયતિ સ બહૂન્ નામયતિ, યો બહૂન્ નામયતિ, સ એકં નામયતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—યઃ એકમ્=અનન્તાનુબન્ધિનં ક્રોધં નામયતિ=ઉપશમયતિ સ બહૂન્=અપ્રત્યાખ્યાનાદીન્ તદ્ભેદાન્ માનાદીન્ વા નામયતિ ।

યદ્વા—યઃ એકં સપ્રકૃતિકં મોહનીયં નામયતિ=ઉપશમયતિ, સ બહૂનિ=તદવશિષ્ટાનિ સપ્રકૃતિકાનિ જ્ઞાનાવરણીયાદિકાનિ સર્વાણ્યપિ નામયતિ=ઉપશમયતિ । યો બહૂન્=સ્થિતિશેષાન્ નામયતિ=ઉપશમયતિ, સ એકમ્=અનન્તાનુબન્ધિનં ક્રોધં મોહનીયં વા નામયતિ=ઉપશમયતિ । અત્ર નામનમ્-ઉપશમઃ ક્ષપણં વા । તથા ચાયમપ્યર્થઃ—

પર એકકા અભાવ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર ગત-પ્રત્યાગત ( હેર-ફેર ) સે કાર્ય-કારણ ભાવકો દિશ્વાનેકે લિયે કહતે હૈ—‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ ।

જો અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કષાયોંકા એવં અનન્તાનુબન્ધી લોભાદિકોંકા ઉપશમ કરતા હૈ । યદ્વા—જો એક મોહનીય કર્મકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ ઉસસે અવશિષ્ટ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સમસ્ત કર્મપ્રકૃતિયોંકા ભી ઉપશમ કરતા હૈ । જો સ્થિતિસે અવશિષ્ટ કર્મોંકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ એક અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધ અથવા મોહનીયકા ભી ઉપશમ કરતા હૈ । યહાં નામન શબ્દકા અર્થ ઉપશમન અથવા ક્ષપણ હૈ । ઉપશમનકી અપેક્ષાસે યહ વ્યાખ્યા કી હૈ । ક્ષપણકી અપેક્ષાસે વ્યાખ્યા ઇસ પ્રકાર હૈ—

આ પ્રકારે ગત-પ્રત્યાગત ( હેર-ફેર ) થી કાર્ય કારણ ભાવને બતાવવા માટે કહે છે—‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ.

જે અનન્તાનુબન્ધી કષાયોનો અને અનન્તાનુબન્ધી લોભાદિનો ઉપશમ કરે છે, આ ઠેકાણે જે એક મોહનીય કર્મનો ઉપશમ કરે છે તે તેનાથી અવશિષ્ટ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સમસ્ત કર્મપ્રકૃતિયોનો પણ ઉપશમ કરે છે. જે સ્થિતિથી અવશિષ્ટ કર્મોનો ઉપશમ કરે છે તે એક અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધ અથવા મોહનીયનો પણ ઉપશમ કરે છે. આ ઠેકાણે નામન શબ્દનો અર્થ ઉપશમ અથવા ક્ષપણ છે. ઉપશમની અપેક્ષાથી આ વ્યાખ્યા કરેલ છે. ક્ષપણની અપેક્ષાથી વ્યાખ્યા આ પ્રકારે છે—



यः एकम्-नामयति=क्षपयति, स बहून्पि नामयति=क्षपयति । एकस्यानन्तानु-  
बन्धिनः क्रोधस्य क्षपको बहूनां=तद्भेदानामप्रत्याख्यानादीनां मानादीनां वा कषा-  
याणां क्षपको भवतीति । यद्वा-एकस्य मोहनीयस्य क्षपकः, बहूनां तदवशिष्टानां सर्वासां  
प्रकृतीनां क्षपको भवतीति । तथा-यो बहूनां क्षपकः, स एकस्य क्षपक इति ॥ सू० ४ ॥

बहुकर्म्मोपशमेनैककर्म्मोपशमेन वा विना मोहनीयस्योपशमो न भवति, तथा बहु-  
कर्म्माभावमन्तरेण एककर्म्माभावमन्तरेण वा मोहनीयकर्मणः क्षयो न भवति । त-  
स्मादेव कारणाज्जन्तूनां बहुविधदुःखसमुद्भव इत्याह-‘दुःखं’ इत्यादि ।

मूलम्-दुःखं लोगस्स जाणित्ता वंता लोगस्स संजोगं जंति  
धीरा महाजाणं, परेण परं जंति, नावकं खंति जीवियं ॥ सू० ५ ॥

छाया-दुःखं लोकस्य ज्ञात्वा वान्त्वा लोकस्य संयोगं यान्ति धीरा महायानं,  
परेण परं यान्ति, नावकाङ्क्षन्ति जीवितम् ॥ सू० ५ ॥

जो एकका क्षय करता है वह बहुतोंका क्षय करता है । एक अन-  
न्तानुबन्धी क्रोधका क्षपक अप्रत्याख्यान आदि कषायोंका अथवा अपने  
भेदस्वरूप मानादि-कषायोंका क्षपक होता है । अथवा-एक मोहनीय  
कर्मका क्षपक बहुत-तदवशिष्ट ( मोहनीय कर्मसे बाँकी रही ) सब कर्म-  
प्रकृतियोंका क्षपक होता है । इसी प्रकार जो बहुतोंका क्षपक होता है वह  
एकका भी क्षपक होता है ॥ सू० ४ ॥

बहुत कर्मोंके उपशम विना अथवा एक कर्मके उपशम विना मोह-  
नीय कर्मका उपशम नहीं होता है, तथा बहुत कर्मोंके अभाव-क्षय-हुए  
विना मोहनीय कर्मका क्षय नहीं होता है । इसी कारणसे प्राणियोंको  
अनेक प्रकारके दुःखोंकी उत्पत्ति होती है । इसी बातको सूत्रकार प्रकट  
करते हैं-‘दुःखं’ इत्यादि ।

એકને ક્ષય કરે છે તે બહુનો ક્ષય કરે છે. એક અનંતાનુબંધી  
ક્રોધનો ક્ષપક અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કષાયોનો અથવા પોતાના ભેદસ્વરૂપ માનાદિ  
કષાયોનો ક્ષપક થાય છે. અથવા એક મોહનીય કર્મના ક્ષપક બહુ-તદવશિષ્ટ  
( મોહનીય કર્મથી બાકી રહી ) સઘળી કર્મપ્રકૃતિયોનો ક્ષપક થાય છે. આ  
પ્રકારે બહુનો ક્ષપક થાય છે તે એકનો પણ ક્ષપક થાય છે. ॥ સૂ. ૪ ॥

બહુ કર્મોના ઉપશમ વિના અથવા એક કર્મના ઉપશમ વિના મોહનીય  
કર્મનો ઉપશમ થતો નથી. તથા બહુ કર્મોનો અભાવ-ક્ષય વિના, અથવા એક  
કર્મનો અભાવ થયા વિના મોહનીય કર્મનો ક્ષય થતો નથી. તે કારણથી પ્રાણી-  
યોને અनेક પ્રકારના દુઃખોની ઉત્પત્તિ થાય છે, આ વાતને સૂત્રકાર પ્રકટ કરે  
છે-‘દુઃખં’ ઇત્યાદિ.



ટીકા—લોકસ્ય=ષડ્જીવનિકાયસ્ય દુઃસ્વ=દુઃસ્વકારણં કર્માસ્તીતિ જ્ઞાત્વા લોકસ્ય=પુત્રકલત્રાદેસ્તથા હિરણ્યસુવર્ણાદેશ્ચ સંયોગં=મમત્વલક્ષણં સમ્બન્ધં પરિગ્રહં વાઽષ્ટવિધકર્મહેતું વાન્ત્વા=પરિત્યજ્ય ધીરાઃ=કર્મવિદારણસમર્થાં મહાયાનં=યાન્ત્ય-નેન મોક્ષમિતિ યાનં ચારિત્રમ્, તચ્ચ ભવકોટિદુર્લભતયા મહદસ્તીત્યાશયેન મહાયાનમિત્યુચ્યતે । યાન્તિ=ગચ્છન્તિ પ્રાપ્નુવન્તીત્યર્થઃ ।

નનુ પ્રાપ્તચારિત્રસ્ય કિમેકેનૈવ ભવેન મોક્ષઃ, ઉત પારંપર્યેનેતિ શિષ્યજિ-જ્ઞાસાયામુભયથાઽપિ મોક્ષો ભવતીતિ બોધયિતુમાહ—‘પરેણ પરં યાન્તિ’ ઇતિ ।

“ઇસ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકે દુઃસ્વકા કારણ કર્મ હૈ” એસા જાન કર કર્મોં કે નાશ કરનેમેં શક્તિશાલી ધીર મુનિ, પુત્ર સ્ત્રી આદિ સે, તથા હિરણ્ય સુવર્ણ આદિસે ‘મમેદં’-મમત્વભાવરૂપ સંયોગકા અથવા અષ્ટપ્રકારકે કર્મોંકે આસ્રવકે કારણરૂપ પરિગ્રહકા સર્વથા ત્યાગ કર ચારિત્ર કો અંગીકાર કરતે હૈં । “યાન” શબ્દકા અર્થ ચારિત્ર હૈ—“યાન્તિ અનેન મોક્ષમિતિ યાનમ્” અર્થાત્-જિસકે દ્વારા મોક્ષકો પ્રાપ્ત કરે ઉસ કા નામ “યાન” હૈ, ક્યોંકિ ઇસકી પ્રાપ્તિસે જીવોંકો મુક્તિકા લાભ હોતા હૈ । “યાન” કે સાથ જો “મહા” વિશેષણ લગા હુઆ હૈ વહ ઇસમેં મહત્તાકા ઘોતક હૈ । ચારિત્રમેં મહત્તા ઇસી લિયે હૈ કિ જીવોંકો ઇસકી પ્રાપ્તિ કરોડોં ભવોંમેં બી દુર્લભ હૈ । ઇસી અભિપ્રાયસે ચારિત્રકો મહાયાન કહા હૈ ।

જિસકો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હો ચુકા હૈ એસે મુનિકી મુક્તિ ઉસી ભવસે હો સકતી હૈ ? અથવા ભવપરમ્પરાસે ?, ઇસ પ્રકારકી શિષ્યકી આશંકાકા

‘આ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકના દુઃખનું કારણ કર્મ છે.’ એવું બાણીને કર્મોના નાશ કરવામાં શક્તિશાળી ધીર મુનિ, પુત્ર સ્ત્રી આદિથી, તથા હિરણ્ય સુવર્ણ આદિથી ‘મમેદં’-મમત્વભાવરૂપ સંયોગોનો, અથવા અષ્ટ પ્રકારના કર્મોના આશ્રવના કારણરૂપ પરિગ્રહનો સર્વથા ત્યાગ કરી ચારિત્રને અંગીકાર કરે છે. “યાન” શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે. “યાન્તિ અનેન મોક્ષમિતિ યાનમ્” અર્થાત્ જેના દ્વારા મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે તેનું નામ “યાન” છે, કારણ કે તેની પ્રાપ્તિથી જીવોને મુક્તિનો લાભ થાય છે. “યાન”ની સાથે જે “મહા” વિશેષણ લાગેલ છે. તે તેની મહત્તાનો ઘોતક છે, ચારિત્રમાં મહત્તા એ માટે છે કે જીવોને તેની પ્રાપ્તિ કરોડો ભવોમાં પણ દુર્લભ છે. તે અભિપ્રાયથી ચારિત્રને મહાયાન કહેલ છે.

જેને ચારિત્રપ્રાપ્ત થઈ ચુકેલ છે તેવા મુનિની મુક્તિ તે ભવથી થઈ શકે છે ? અથવા ભવપરંપરાથી ?, આ પ્રકારની શિષ્યની આશંકાનું સમાધાન કરતાં

તથોગ્યક્ષેત્રકાલપ્રાપ્ત્યા લઘુકર્મણસ્તેનૈવ ભવેન મોક્ષઃ, અન્યસ્ય તુ પારમ્પર્યેણ ભવતિ, इह तदेवोच्यते—

यथा—यथाशक्तिसमाराधितसंयमा आयुषोऽन्ते सति कर्मावशेषेण सौधर्मा-  
दिदेवलोकं गच्छन्ति, ततः परं पुनः कर्मभूमावार्यक्षेत्रे सुकुले जन्म लब्ध्वा श्रद्धासंय-  
मादिधर्मापराधनेन सौधर्मादिदेवलोकादपि विशिष्टतरं स्वर्गमनुत्तरोपपातिकं यावत्  
प्रयान्ति । ततः परं पुनरपि ततश्च्युतास्तत्समुचितमहाविदेहादिक्षेत्रं प्राप्य संपूर्ण-  
श्रुतचारित्रधर्मसमाराधनेन कृत्स्नकर्मक्षयादपुनरावृत्तिकं मोक्षमुपगच्छन्ति ।

समाधान करते हुए सूत्रकार कहते हैं—उस मुनिकी मुक्ति दोनों प्रकार से होती है, इसी बातको स्पष्ट करते हैं—‘ परेण परं जंति-परेण परं यान्ति ’ मुक्तिप्राप्तिके योग्य क्षेत्र और कालकी प्राप्तिसे लघुकर्मी जीवों की उसी भवसे, और अन्य जीवोंकी परम्परासे-अन्य-अन्य भवोंसे मुक्ति होती है । इसी बातको टीकाकार स्पष्ट करते हैं—जैसे कितनेक जीव अपनी शक्तिके अनुसार संयमका आराधन करते हैं और संयमका आराधन करते ही वे उस भव सम्बन्धी आयु का अन्त होने पर काल कर कर्मावशेषसे सौधर्मादि देवलोकोंमें उत्पन्न होते हैं । वहांकी ऋद्धिका गृद्धिरहित हो भोग करते २ उस भव सम्बन्धी आयुका भी अन्त करके वे कर्मभूमि आर्यक्षेत्र और सुकुलमें जन्म पा कर फिरसे श्रद्धा संयमादिक की आराधना करनेमें लवलीन होने के प्रभावसे आयुके अवसानमें सौधर्मादिक देवलोकोंसे भी आगे विशिष्टतर अनुत्तरोपपातिक विमानमें देव हो जाते हैं । वहां से च्यव कर

સૂત્રકાર કહે છે કે તે મુનિની મુક્તિ બંને પ્રકારથી થાય છે. આ વાતને સ્પષ્ટ કરે છે—‘ પરેણ પરં જંતિ-’ ‘પરેણ પરં યાન્તિ ’ મુક્તિ પ્રાપ્તિને યોગ્ય ક્ષેત્ર અને કાળની પ્રાપ્તિથી લઘુકર્મી જીવોની તે લવથી, અને અન્ય જીવોની પરંપરાથી—અન્ય લવથી મુક્તિ થાય છે, આ વાતને ટીકાકાર સ્પષ્ટ કરે છે—જેવી રીતે કેટલાક જીવો પોતાની શક્તિ—અનુસાર સંયમનું આરાધન કરે છે અને સંયમનું આરાધન કરતાં કરતાં જ તેલવસંબંધી આયુનો અંત થવાથી તે મરીને કર્માવશેષથી સૌધર્માદિ દેવલોકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. ત્યાંની ઋદ્ધિનો ગૃદ્ધિરહિત થઈ ભોગ કરતાં કરતાં તેલવસંબંધી આયુનો પણ અંત કરીને તે કર્મભૂમિ આર્યક્ષેત્ર અને સુકુલમાં જન્મ પામીને ફરીથી શ્રદ્ધાસંયમાદિકની આરાધના કરવામાં લવલીન થવાના પ્રભાવથી આયુના અવસાનમાં સૌધર્માદિક દેવલોકોથી પણ આગળ વિશિષ્ટતર અનુત્તરોપપાતિક વિમાનમાં દેવ બને છે. ત્યાંથી ચ્યવને સંયમ આરાધનાને યોગ્ય મહાવિદેહાદિ



યદ્વા-પરેણ=ચતુર્થગુણસ્થાનેન, પરં=ચતુર્દશગુણસ્થાનં યાવત્, યાન્તિ=અધિતિષ્ઠન્તિ ।

યદ્વા—પરેણ અનન્તાનુબન્ધિકષાયક્ષયેણ, પરં=મોહનીયક્ષયં ઘાતિ-ભવોપગ્રાહિ-કર્મણાં વા ક્ષયં યાન્તિ ।

एवंभूता धीराः, जीवितं=आयुः, नावकाङ्क्षन्ति=कियद् व्यतीतं, कियदव-  
शिष्टमिति न विभावयन्ति-दीर्घजीवित्वमसंयमजीवित्वं वा नेच्छन्तीत्यर्थः ॥सू०५॥

સંયમ આરાધનાકે યોગ્ય મહાવિદેહાદિ ક્ષેત્રોંમેં જન્મ પ્રાપ્ત કર ફિર સમ્પૂર્ણ શ્રુતચારિત્રધર્મકી આરાધનાકે પ્રભાવસે સમસ્ત કર્મોંકા ક્ષયકર અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ મોક્ષસ્થાન મેં જા વિરાજતે હેં ।

ભાવાર્થ—‘ ચારિત્રપ્રાપ્ત મુનિ ડસી ભવસે અથવા અન્યભવ-સે ખી કયા મોક્ષ જાતે હેં ? ’ ઁસી શિષ્યકી આશઙ્કાકા શાસ્ત્રકાર ઉત્તર દેતે હેં કિ-જો સંયમકી આરાધના કરતે હેં વે જીવ ડસી ભવમેં, અથવા ડસ ભવમેં મોક્ષ ન જા કર અન્ય ભવોંસે ખી મુક્તિકા લાભ કર લેતે હેં । જવ તક વે મુક્તિકા લાભ નહીં કર લેતે તવ તક વે ઉત્તમ મનુષ્ય-પર્યાય ઁવં દેવપર્યાયમેં ઉત્પન્ન હોતે રહતે હેં । મુક્તિયોગ્ય ક્ષેત્ર ઁર કાલ કી પ્રાપ્તિ હોતે હી પૂર્ણ સંયમકી આરાધનાકે પ્રભાવસે ઘાતિયા ઁર અઘાતિયા કર્મોંકા સર્વથા વિનાશ કર પંચમગતિ-મુક્તિકા લાભ કર લેતે હેં ।

અથવા—“ પરેણ પરં યાન્તિ ” ઁસકા યહ ખી અર્થ હોતા હૈ કિ-જો કર્મોંકે નાશ કરનેકી શક્તિસે સમ્પન્ન વીર હેં વે ‘ પરેણ ’ ચતુર્થ ગુણ-

ક્ષેત્રોમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરી ફરીથી શ્રુતચારિત્ર ધર્મની આરાધનાના કારણથી સમસ્ત કર્મોના ક્ષય કરી અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ મોક્ષસ્થાનમાં જઈ બિરાજે છે.

ભાવાર્થ—‘ ચારિત્રપ્રાપ્ત મુનિ તે ભવથી અથવા અન્ય ભવથી પણ શું મોક્ષ ભાવે છે ? ’ ઁવી શિષ્યની આશંકાનો શાસ્ત્રકાર ઉત્તર દે છે કે જે સંયમની આરાધના કરે છે-તે ભવ તેજ ભવમાં અથવા તે ભવથી મોક્ષ ન જતાં અન્ય ભવોથી પણ મુક્તિનો લાભ કરી લે છે. જ્યાં સુધી તે મુક્તિનો લાભ નથી કરી લેતા ત્યાં સુધી તે ઉત્તમ મનુષ્યપર્યાય તેમજ દેવપર્યાયમાં ઉત્પન્ન થતા રહે છે, મુક્તિયોગ્ય ક્ષેત્ર અને કાળની પ્રાપ્તિ થતાં જ પૂર્ણ સંયમની આરાધનાના ભાવથી તે ઘાતિયા અને અઘાતિયા કર્મોના સર્વથા વિનાશ કરી પંચમગતિ-મુક્તિનો લાભ કરી લે છે.

અથવા—“ પરેણ પરં યાન્તિ ” તેનો ઁ પણ અર્થ થાય છે કે જે કર્મોના નાશ કરવાની શક્તિથી સંપન્ન વીર છે તે ‘ પરેણ ’ ઁથા ગુણસ્થાનથી લગાવી



स्थानसे लगा कर 'परं' चौदहवें गुणस्थानतक जाते हैं, अर्थात्—  
“ अ-इ-उ-ऋ-लृ ” इन पांच ह्रस्व अक्षरोंके उच्चारण करनेमें जितना समय लगता है उतने समय प्रमाण उस चौदहवें गुणस्थानमें उनकी स्थिति होती है, बादमें वे मुक्तिको प्राप्त करते हैं ।

अथवा-प्रथम 'पर' शब्दका अर्थ अनन्तानुबन्धी कषायका क्षय भी है । द्वितीय 'पर' शब्दका अर्थ-मोहनीयका नाश, अथवा घाति अघाति कर्मोंका विनाश है । इसका यह फलितार्थ होता है कि-अनन्तानुबन्धी कषायके क्षयसे वे मोहनीय का क्षय, अथवा घाति और अघाति कर्मों का क्षय करते हैं ।

भावार्थ—वीरोंको चतुर्थ गुणस्थानसे लगा कर जो चौदहवें गुणस्थान तककी प्राप्ति बतलाई गई है उसका यह तात्पर्य है कि समकितकी प्राप्ति जीवोंको चौथे गुणस्थानमें हो जाती है । समकितका लाभ ही जीवोंको साक्षात् (भावचरित्र की अपेक्षासे) या परम्परारूपसे मुक्तिका कारण होता है । जिस व्यक्तिको समकितका लाभ हो जाता है उस भव्यात्माका अर्द्धपुद्गल परावर्त्तनमात्र काल संसारमें रहनेका रहता है, उससे अधिक नहीं । धीरे-धीरे वह अपनी उन्नति करता हुआ आगे २ के गुणस्थानों पर आरोहण कर परिणामोंकी विशुद्धिके प्रभावसे घातिया और अघातिया कर्मोंके नाश

'परं' चौदहवां गुणस्थानतक सुधीं जाय છે, અર્થાત્ “ અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ ” આ પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણ કરવામાં જેટલો સમય લાગે છે તેટલા સમય પ્રમાણે તે ચૌદમાં ગુણસ્થાનમાં તેની સ્થિતિ થાય છે, બાદમાં તે મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે છે.

અથવા પ્રથમ “ પર ” શબ્દનો અર્થ અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષય પણ છે. બીજો ' પર ' શબ્દનો અર્થ મોહનીયનો નાશ અથવા ઘાતિ અઘાતિ કર્મોનો વિનાશ છે. તેનો એ ફલિતાર્થ થાય છે કે અનંતાનુબંધી કષાયના ક્ષયથી મોહનીયનો ક્ષય, અથવા ઘાતિ અને અઘાતિ કર્મોનો ક્ષય તે કરે છે.

ભાવાર્થ:—વીરોને ચોથા ગુણસ્થાનથી લઈને જે ચૌદમાં ગુણસ્થાન સુધીની પ્રાપ્તિ ખતાવવામાં આવી છે તેનો એ તાત્પર્ય છે કે સમકિતની પ્રાપ્તિ હોવોને ચોથા ગુણસ્થાનમાં થઈ જાય છે. સમકિતનો લાભ જ હોવોને સાક્ષાત્ (ભાવચારિત્રની અપેક્ષાથી) અગર પરંપરા-રૂપથી મુક્તિનું કારણ થાય છે. જે વ્યક્તિને સમકિતનો લાભ થઈ જાય છે તે ભવ્યાત્માનો અર્દ્ધપુદ્ગલપરાવર્તનમાત્ર કાલ સંસારમાં રહેવાનું રહે છે, તેનાથી અધિક નહિ. ધીરે ધીરે તે પોતાની ઉન્નતિ કરતાં કરતાં આગળ આગળના ગુણસ્થાનો ઉપર આરોહણ કરી પરિણામોની વિશુદ્ધિના પ્રભા-

સે પ્રાપ્ત હોનેવાલી મુક્તિકા સ્વામી હો જાતા હૈ । હસી અભિપ્રાયકો લે કર “અનન્તાનુબન્ધી કષાયકે ક્ષયસે મોહનીયકા અથવા ઘાતી અઘાતી કર્મોંકા નાશ કર વે મુક્તિકો પાતે હૈ ” યહ બાત કહી ગઈ હૈ, ક્યોં કિ અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ક ઓર દર્શનમોહનીયત્રિકકા જબ તક આત્મામેં ક્ષય આદિ નહીં હોતા હૈ તબ તક સમકિત ગુણકી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ । હસ લિયે અનન્તાનુબન્ધી કષાયકા ક્ષય આદિ હી મોહનીયકર્મકે નાશ આદિમેં કારણ હોતે હૈ । મોહનીયકે અભાવ હોતે હી શેષકર્મ ભી બહુત શીઘ્રતાસે નષ્ટ હો જાતે હૈ । ટીકાકારને-“પરેણ ” હસ પદકા અર્થ જો ‘અનન્તાનુબન્ધિકષાયક્ષયેણ’ અર્થાત્-અનન્તાનુબન્ધી કષાયકા ક્ષય રૂપ કિયા હૈ, ઉસકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ શિષ્યને જો યહ પ્રશ્ન કિયા હૈ કિ-“પ્રાપ્તચરિત્રવાલેકી મુક્તિ એક હી ભવસે હોતી હૈ યા અન્ય ભવોં સે હોતી હૈ ?” સો હસકા સમાધાન “અન્ય ભવોંસે હોતી હૈ” એસા તો પહિલે કિયા જા ચુકા હૈ । યહાં પર તો “ક્યા એક ભવસે હોતી હૈ ?” હસકા સમાધાન કિયા ગયા હૈ, ક્યોં કિ અનન્તાનુબન્ધિકષાયચતુષ્ક એવં દર્શનમોહનીયત્રિકકે ક્ષયસે જીવોંકો ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકા લાભ હોતા હૈ । ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી યદિ ક્ષપકશ્રેણિ પર આરૂઢ હોતે હૈ તો નિયમસે ઉસી ભવસે મુક્તિ પ્રાપ્ત કર લેતે હૈ ।

વધી ઘાતિયા અને અઘાતિયા કર્મોંના નાશથી પ્રાપ્ત થવાવાળી મુક્તિનો સ્વામી થઈ જાય છે. આ અભિપ્રાયને લઈને ‘અનન્તાનુબન્ધી કષાયના ક્ષયથી મોહનીયનો અથવા ઘાતી અઘાતી કર્મોંના નાશ કરી તે મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે છે.’ એ વાત કહેવાઈ ગઈ છે. કારણ કે અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ક અને દર્શનમોહનીયત્રિકનો જ્યાં સુધી આત્મામાં ક્ષય આદિ નથી થતો ત્યાં સુધી સમકિત-ગુણની પ્રાપ્તિ થતી નથી. તેથી અનન્તાનુબન્ધી કષાયનો ક્ષય આદિ મોહનીય કર્મના નાશ આદિમાં કારણ થાય છે. મોહનીયનો અભાવ થતાં જ શેષ કર્મ પણ બહુ શીઘ્રતાથી વિનષ્ટ થઈ જાય છે. ટીકાકારે “પરેણ ” આ પદનો અર્થ જે “અનન્તાનુબન્ધિકષાયક્ષયેણ”-અર્થાત્ અનન્તાનુબન્ધી કષાયનો ક્ષયરૂપ કરેલ છે તેનો અભિપ્રાય છે કે શિષ્યે જે એ પ્રશ્ન કરેલ છે કે-“પ્રાપ્તચરિત્રવાળાની મુક્તિ એક જ ભવથી થાય છે ?” અથવા અન્ય ભવથી થાય છે. તે તેનું સમાધાન ‘અન્ય ભવોથી થાય છે’ એવું તો પહેલાં કહી ચુકેલ છે. આ ટીકાણે તો ‘શું એક ભવથી થાય છે ?’ તેનું સમાધાન કરવામાં આવેલ છે. કારણ કે અનન્તાનુબન્ધિકષાયચતુષ્ક અને દર્શનમોહનીયત્રિકના ક્ષયથી જીવોને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે. ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી જે ક્ષપકશ્રેણી ઉપર આરૂઢ થાય છે તો તે નિયમથી તે ભવમાં મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે.



યશ્વાનન્તાનુબન્ધ્યાદિક્ષણપ્રવૃત્તઃ, સ કિમેકસ્યૈવ ક્ષયે પ્રવર્તતે ઉતાનેકસ્યેત્યાહ  
-‘ એગં વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-એગં વિગિંચમાણે પુઢો વિગિંચઈ, પુઢો વિગિંચમાણે  
એગં વિગિંચઈ ॥ સૂ. ૬ ॥

એસે વીર “ નાવકાઢ્ઢક્ષન્તિ જીવિતમ્ ” ઇસ વાતકા વિચાર નહીં કરતે હૈં કિ મેરી આયુ કિતની વ્યતીત હો ગઈ હૈં ઓર કિતની અવ બાકી હૈં ? । ક્યોં કિ દીર્ઘ આયુષ્ય ખી મિલા ઓર ઉસમેં અસંયમ જીવન રહા તો આત્માકા ઇસસે કોઈ હિત નહીં હો સકતા હૈં । અતઃ ઉન્હેં જો કુછ ખી જીવન પ્રાપ્ત હોતા હૈં ઉસીમેં વે સન્તુષ્ટ રહ કર અપને જીવનકો સફલ બનાનેકા પ્રયત્ન કરતે રહતે હૈં । જિતની ખી આયુ ઉનકી વ્યતીત હો ચુકી હૈં વહ, તથા આગે ખી જો વ્યતીત હોતી હૈં વહ સબ આત્મોદ્ધાર કે સદુપાયોંકે સેવન કરતેર હી વ્યતીત હોતી હૈં । અસંયમજીવનકી ચાહના ઇનમેં હોતી નહીં હૈં । અતઃ એસે જીવ અપની આયુકે વ્યતીત હોનેકા ઓર ઉસકે અવશિષ્ટ રહનેકા વિચાર નહીં કરતે હૈં, અર્થાત્ યે અસંયમ જીવન ઓર દીર્ઘ જીવનકી ચાહના નહીં કરતે હૈં ॥ સૂ. ૫ ॥

જો અનન્તાનુબન્ધી આદિકે ક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્ત હૈં વહ ક્યા એકકે હી ક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈં ? અથવા અન્યકે ખી ક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈં ? ઇસ આશઢ્ઢાકા સમાધાન કરનેકે લિયે કહતે હૈં-‘ એગં વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ ।

આવા વીર “ નાવકાઢ્ઢક્ષન્તિ જીવિતમ્ ” એ વાતનો વિચાર નથી કરતા કે મારી આયુ કેટલી વ્યતીત થઈ ગઈ છે અને હવે કેટલી બાકી છે ? કારણ કે દીર્ઘ આયુષ્ય પણ મળે અને તેમાં અસંયમ જીવન રહ્યું તો આત્માનું તેમાં હિત કોઈ પ્રકારે થતું નથી. માટે તેને જે કાંઈ જીવન પ્રાપ્ત થાય છે તેમાં તે સંતુષ્ટ રહી પોતાના જીવનને સફળ બનાવવા માટે પ્રયત્ન કરતા રહે છે. જેટલી પણ આયુ તેની વ્યતીત થવાવાળી છે તે સઘળી આત્મોદ્ધારના સદુપાયોનું સેવન કરતાં કરતાં વ્યતીત થાય છે, અસંયમ જીવનની ચાહના તેમાં થતી નથી. માટે તેવા જીવ પોતાની આયુના વ્યતીત થવાનો તથા તેના અવશિષ્ટ રહેવાનો વિચાર કરતા નથી. અર્થાત્ તે અસંયમ જીવન અને દીર્ઘ જીવનની ચાહના કરતા નથી. ॥ સૂ. ૫ ॥

જે અનન્તાનુબન્ધી આદિને ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત છે તે શું એકનો જ ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે ? અથવા અન્યનો પણ ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરે છે. આ શંકાનું સમાધાન કરવા માટે કહે છે-‘ એગં વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ.



છાયા—एकं विवेचयन् पृथक् वेवेक्ति, पृथग् विवेचयन् एकं वेवेक्ति ॥सू०६॥

ટોકા—एकम्=अनन्तानुबन्धिनं क्रोधं, विवेचयन्=क्षपयन् क्षपकश्रेणिसमारूढः संयतः, पृथक्=अन्यदपि अनन्तानुबन्धिचतुष्टयं, मिथ्यात्व-मिश्र-सम्यक्त्व-मोहनी-यत्रयं चेति मिथ्यात्वसप्तकं, वेवेक्ति=नियमतः क्षपयति । यो बद्धायुष्कः, सोऽपि त्रीन् भवान् नातिक्रामति । तृतीये भवे नियमतो मोक्षं प्राप्नोति । अबद्धायुष्कस्तु-मोह-नीयस्य सप्तविंशतिं कर्मांशान् नियमतः क्षपयति, चत्वारि घातिकर्माणि वा, सिध्यन् वा चत्वारि केवलिकर्माणि क्षपयति ।

અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધકા ક્ષય કરનેવાલા ક્ષપકશ્રેણિમેં આરૂઢ સંયત નિયમસે અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ટય એવં મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય ઓર સમ્યક્ત્વમોહનીય, ઇન સાત પ્રકૃતિયોંકા ક્ષય કરતા હૈ । જો બદ્ધાયુષ્ક ( આયુર્કર્મકા પહેલે બંધ કર ચુકા હૈ ) વહ મી ત્રીન ભવોં કો ઉલ્લંઘન નહોં કરતા, અર્થાત્ તૃતીય ભવમેં નિયમસે મુક્તિકા લાભ કર લેતા હૈ । અબદ્ધાયુષ્ક—( જિસને પહેલે આયુર્કર્મકા બન્ધ નહોં કિયા હૈ વહ ) જીવ મોહનીય કર્મકી ૨૭ સત્તાઈસ પ્રકૃતિયોંકા નિયમસે નાશ કરતા હૈ । અથવા ચાર ઘાતિયા કર્મોંકા નાશ કર કે અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોંકા મી નાશ કર દેતા હૈ ।

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત સાત પ્રકૃતિયોં કે ક્ષયસે જિસને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકા લાભ કિયા હૈ, ઓર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકો લે કર ક્ષપકશ્રેણિ પર ચઢા હૈ ઉસ જીવકી મુક્તિ નિયમતઃ ઉસી ભવસે હો જાતી હૈ । પરંતુ એસા જીવ યદિ બદ્ધાયુષ્ક હૈ તો વહ ઉસ ભવસે મુક્તિકા લાભ ન કર

અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધનો ક્ષય કરવાવાળા ક્ષપકશ્રેણિમાં આરૂઢ સંયત નિયમથી અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ટય અને મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વ-મોહનીય, એ સાત પ્રકૃતિઓનો ક્ષય કરે છે. જે બદ્ધાયુષ્ક ( આયુર્કર્મનો જે પહેલાં બંધ કરી ચુકેલ છે ) તે પણ ત્રણ ભવોનું ઉલ્લંઘન નથી કરતા, અર્થાત્ ત્રીજા ભવમાં નિયમથી મુક્તિનો લાભ કરી લે છે. અબદ્ધાયુષ્ક ( જેણે પહેલાં આયુર્કર્મનો બંધ નથી કર્યો તે ) જીવ મોહનીય કર્મની ૨૭ સત્તાવીસ પ્રકૃતિઓનો નિયમથી નાશ કરે, છે અથવા ચાર ઘાતિયા કર્મોનો નાશ કરીને અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોનો પણ નાશ કરી નાખે છે.

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત સાત પ્રકૃતિઓના ક્ષયથી જેણે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ કરેલ છે, અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વને લઈને ક્ષપકશ્રેણિ ચઢેલ છે તે જીવની મુક્તિ નિયમતઃ તે ભવથી થઈ જાય છે, પરંતુ તેવા જીવ કદાચ બદ્ધાયુષ્ક છે તો તે, તે

યદ્વા-પૃથક્=અન્યદપિ મિથ્યાત્વસપ્તકં વિવેચયન્=ક્ષપયન્, એકમ્=અનન્તાનુબન્ધિક્રોધં વેવેક્તિ=નિયમતઃ ક્ષપયતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કેન ગુણેન ક્ષપકશ્રેણિયોગ્યતાં પ્રાપ્નોતીતિ બોધયિતું કર્મક્ષપણોદ્યતસ્ય વિશેષણાન્યાહ-‘સડ્ઢી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સડ્ઢી આણાએ મેહાવી ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—શ્રદ્ધી આજ્ઞયા મેધાવી ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—શ્રદ્ધી=મોક્ષાભિલાષરૂપા જિનમતાભિરુચિઃ શ્રદ્ધા, સાડસ્યાસ્તીતિ તથાવિધઃ; સ હિ કેવલિનો ભાવિતાત્મનોઽનગારસ્ય વા સમીપે ધર્મે શ્રુત્વા સંયમં પ્રતિપદ્યતે । આજ્ઞયા=આર્હતાગમાનુસારેણ પ્રવર્તમાનઃ, મેધાવી=અપ્રમત્તસંયમી ક્ષપકશ્રેણિયોગ્યો ભવતિ, નાન્ય ઇત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

દસરે અથવા તીસરે ભવમેં તો નિયમસે મુક્તિકો પ્રાપ્ત કરનેવાલા હોતા હૈ । યદિ અવદ્વાયુષ્ક હૈ તો વહ ઉસી ભવસે મુક્તિ પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ ।

इसी तरह—“ पुढो विगिंचमाणे एगं विगिंचइ ” अर्थात् मिथ्यात्व-सप्तकका क्षय करनेमें प्रवृत्त संयत एक अर्थात् अनन्तानुबन्धी क्रोधका नियमसे क्षय करता है ॥ सू० ६ ॥

કિસ ગુણસે મુનિ ક્ષપકશ્રેણિકી યોગ્યતાકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? ઇસ વાતકો સમજાનેકે લિયે કર્મોંકે ક્ષય કરનેમેં ઉદ્યત મુનિકે વિશેષણોં કો કહતે હૈ—‘સડ્ઢી’ ઇત્યાદિ ।

મોક્ષકી અભિલાષારૂપ જિનમતકી ઓર અભિરુચિકા નામ શ્રદ્ધા હૈ । ઇસ પ્રકારકી શ્રદ્ધાસે સમ્પન્નકા નામ શ્રદ્ધી-શ્રદ્ધાવાન્ હૈ । શ્રદ્ધાવાન્ વ્યક્તિ કેવલી અથવા અન્ય કિસી ભાવિતાત્મા સાધુકે સમીપ ધર્મકા શ્રવણ કર સંયમકો ગ્રહણ કરતા હૈ । અરિહન્તદેવદ્વારા પ્રતિ-

ભવમાં મુક્તિનો લાભ ન પામીને ખીજ અથવા ત્રીજ ભવમાં તો નિયમથી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવાવાળા થાય છે. જો અબદ્વાયુષ્ક છે તો તે તેજ ભવથી મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે.

આવી રીતે “ પુહો વિગિંચમાણે એગં વિગિંચइ ” અર્થાત્ મિથ્યાત્વસપ્તકનો ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત સંયત એક અર્થાત્ અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધનો નિયમથી ક્ષય કરે છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કયા ગુણથી મુનિ ક્ષપક શ્રેણીની યોગ્યતાને પ્રાપ્ત કરે છે ? આ વાતને સમજાવવા માટે કર્મોના ક્ષય કરવામાં ઉદ્યત મુનિના વિશેષણોને કહે છે—‘સડ્ઢી’ ઇત્યાદિ.

મોક્ષની અભિલાષારૂપ જિનમતની તરફ અભિરુચિનું નામ શ્રદ્ધા છે, આ પ્રકારની શ્રદ્ધાથી સંપન્નનું નામ શ્રદ્ધી-શ્રદ્ધાવાન્ છે. શ્રદ્ધાવાન્ વ્યક્તિ કેવળી અથવા અન્ય કોઈ પણ ભાવિતાત્મા સાધુની સમીપે ધર્મનું શ્રવણ કરી સંયમને ગ્રહણ

કિંચ—‘લોગં ચ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—લોગં ચ આણાઁ અભિસમિચ્ચ અકુતોભયમ્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—લોકં ચાઽઽજ્ઞયા અભિસમેત્ય અકુતોભયમ્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—ચ-શબ્દઃ સમુચ્ચયાર્થઃ । લોકં=ષડ્જીવનિકાયરૂપમ્, આજ્ઞયા=જિન-પ્રવચનેન, અભિસમેત્ય=વિદિત્વા, અકુતોભયમ્=કુતશ્ચિત્ કારણાદુત્પદ્યમાનસ્ય ભય-સ્યામાવો યથા ભવતિ ષડ્જીવનિકાયલોકસ્ય, તથારૂપં સંયમં કુર્યાદિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥  
પાદિત આગમકે અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા અપ્રમત્ત સંયમી જીવ ક્ષપ-કશ્રેણિકે યોગ્ય હોતા હૈ, અન્ય નહીં ।

ભાવાર્થ—શ્રદ્ધાસંપન્ન વ્યક્તિ સંયમકી આરાધના કર જવ સપ્તમ-ગુણસ્થાનવર્તી હો જાતા હૈ તમી વહ ક્ષપકશ્રેણિપર આરૂઢ હોનેકે યોગ્ય માના જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ઔર મી કહતે હૈ—“લોગં ચ” ઇત્યાદિ ।

યહાં “ચ” શબ્દ સમુચ્ચય અર્થમૈં હૈ । મુનિ હસ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકોં જિનપ્રવચન-આગમ-સે જાન કર ‘જિસ પ્રકાર ભવિષ્યમૈં ડસ ષડ્-જીવનિકાયરૂપ લોકકો અપનેદ્વારા ભયકા અભાવ હો’ હસ પ્રકાર સંયમ કી આરાધના કરતા રહે ।

ભાવાર્થ—સંયમકી આરાધના કરનેકી આવશ્યકતા હસી લિયે હૈ કિ જિસસે અન્ય જીવોંકી રક્ષા હોતી રહે । અસંયમ પ્રવૃત્તિસે જીવોંકા ઘાત હોતા હૈ । ંસે વ્યક્તિયોંકો હસ લોક ઔર પરલોકમૈં સદા ભયકા

કરે છે. અરિહંતદ્વારા પ્રતિપાદિત આગમ-અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અપ્રમત્ત સંયમી જીવ ક્ષપકશ્રેણીને યોગ્ય થાય છે-અન્ય નહિ.

ભાવાર્થ—શ્રદ્ધાસંપન્ન વ્યક્તિ સંયમની આરાધના કરી જ્યારે સાતમા ગુણસ્થાનવર્તી થઈ જાય છે ત્યારે તે ક્ષપક શ્રેણી પર આરૂઢ હોવાના યોગ્ય માનવામાં આવે છે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

વળી બીજી પંથુ કહે છે—“લોગં ચ” ઇત્યાદિ.

આ ઠેકાણે “ચ” શબ્દ સમુચ્ચય અર્થમાં છે. મુનિ આ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકને જીનપ્રવચન-આગમથી જાણીને જે પ્રકારે ભવિષ્યમાં તે ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકને પોતાના દ્વારા ભયનો અભાવ હોય એ પ્રકારે સંયમની આરાધના કરતા રહે.

ભાવાર્થ—સંયમની આરાધના કરવાની આવશ્યકતા એટલા માટે છે કે જેનાથી અન્ય જીવોની રક્ષા થતી રહે, અસંયમ પ્રવૃત્તિથી જીવોનો ઘાત થાય છે. એવી



તદપિ ભયં ષડ્જીવનિકાયલોકસ્ય શસ્ત્રાદેવ ભવતિ । તસ્ય શસ્ત્રસ્ય કિં પ્રકર્ષ-  
પરમ્પરાઽસ્તિ ? નાસ્તિ વા ? ઇતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયામ્ ‘અસ્તી’-તિ બોધયિતુમાહ—  
‘અત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

યદ્વા-શસ્ત્રતો ભયં ભવતિ, અતસ્તત્ પરિહર્તવ્યમિત્યાશયેન-શસ્ત્રં કથયતિ-  
‘અત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—અત્થિ સત્થં પરેણ પરં, નત્થિ અસત્થં પરેણ પરં ॥સૂ૦ ૯॥

છાયા—અસ્તિ શસ્ત્રં પરેણ પરમ્, નાસ્તિ અશસ્ત્રં પરેણ પરમ્ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ટીકા—શસ્ત્રં=દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધં; તત્ર દ્રવ્યશસ્ત્રં સ્વડ્ગાદિકં, તત્ પરેણ પરમ  
સ્તિ, લોહકર્તૃસંસ્કારાનુસારેણ દ્રવ્યશસ્ત્રં તીવ્રાત્ તીવ્રતરમસ્તીત્યર્થઃ । યદ્વા-યત્ પીડા-  
સામના કરના પડતા હૈ । સંયમી જીવ હસ પ્રકારકે ભયસે સદા નિર્મુક્ત  
રહતે હૈ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

હસ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકે લિયે ભય શસ્ત્રસે હી હોતા હૈ । યહ  
વાત જબ નિશ્ચિત હૈ તો કયા ઉસ શસ્ત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરા હૈ યા નહીં ? હસ  
પ્રકાર કી શિષ્યકી આશઙ્કાકા ઉત્તર કહતે હૈ—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ ।

અથવા-શસ્ત્રસે ભય હોતા હૈ; અતઃ ઉસકા પરિહાર કરના ચાહિયે,  
હસ આશયસે શસ્ત્રકો કહતે હૈ—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ ।

શસ્ત્ર, દ્રવ્ય ઔર ભાવકે ભેદસે દો પ્રકારકા હૈ । તલવાર વગૈરહ દ્રવ્ય  
શસ્ત્ર હૈ । હનમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરા, શસ્ત્રકો બનાનેવાલે લુહારકે સંસ્કાર  
કે અનુસાર આતી હૈ । કોઈ તલવાર અત્યન્ત તીક્ષ્ણ હોતી હૈ ઔર કોઈ  
ઉસસે મી અધિક । અથવા જો જીવકો પીડાકારક હોતા હૈ વહી શસ્ત્ર

વ્યક્તિઓને આ-લોક અને પરલોકમાં સદા ભયનો સામનો કરવો પડે છે. સંયમી  
જીવ આ પ્રકારના ભયથી સદા નિર્મુક્ત રહે છે. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

આ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકના માટે ભય શસ્ત્રથી જ થાય છે. એ વાત જ્યારે  
નિશ્ચિત છે તો શું તે શસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા છે યા નહિ ? આ પ્રકારે શિષ્યની  
આશંકાનું ઉત્તર કહે છે—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ.

અથવા શસ્ત્રથી ભય થાય છે; માટે તેનો પરિહાર કરવો જોઈએ; એ આશ-  
યથી શસ્ત્રને કહે છે—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ.

શસ્ત્ર દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે પ્રકારે છે. તલવાર વિગેરે દ્રવ્ય-શસ્ત્ર  
છે. તેમાં પ્રકર્ષની પરંપરા, શસ્ત્રના બનાવવાળા લુહારના સંસ્કાર અનુસાર આવે  
છે, કોઈ તલવાર અત્યંત તીક્ષ્ણ હોય છે અને કોઈ તેનાથી પણ અધિક. અથવા  
જો જીવને પીડાકારક થાય છે તે શસ્ત્ર છે, પીડાકારક એક જ વસ્તુથી અન્ય

કારકં તદેવ શસ્ત્રમિત્યુચ્યતે । એકસ્માત્ પીડાજનકાદન્યત્ પીડાજનકં પ્રાદુર્ભવતિ ।  
યથા-સ્વદ્ગામિઘાતેન શિરઃપીડા, તતો જ્વરઃ, તતોઽપિ મૂર્ચ્છાદય ઇતિ ।  
ભાવશસ્ત્રસ્ય પારમ્પર્યં ત્વત્રૈવોદ્દેશકે 'જે કોહદંસી' ઇત્યાદિનાઽનુપદં વક્ષ્યતિ ।

યથા શસ્ત્રસ્ય પારમ્પર્યમસ્તિ, ન તથા પારમ્પર્યમશસ્ત્રસ્યાસ્તીત્યાહ—'નાસ્તિ'  
ઇત્યાદિ । અશસ્ત્રં સંયમઃ, તત્ પરેણ પરં નાસ્તિ-પ્રકર્ષપરમ્પરાયુક્તં ન ભવતીત્યર્થઃ ।  
યથા પૃથિવ્યાદિજીવેષુ સ્વાત્મના સમભાવઃ કર્તવ્યઃ, તત્ર—'એગે આયા' ઇતિ  
ભગવદ્વચનાદ્ મન્દતીવ્રભેદો નાસ્તિ, તસ્માત્ તત્ર સમત્વસદ્ભાવાત્ સામાયિકસ્ય ન  
પ્રકર્ષપારમ્પર્યમ્ । યદ્વા-શૈલશ્યવસ્થાસંયમાત્પરઃ સંયમો નાસ્તિ, તદૂર્ધ્વં ગુણસ્થાના-  
ભાવાદિતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૧ ॥

હૈ । પીડાકારક એક હી વસ્તુસે અન્ય અનેક વાતેં ઉત્પન્ન હોતી હૈં, જૈસે  
તલવારદ્વારા મારનેસે લગનેવાલેકે શિરમેં પીડા, ઉસસે જ્વર, ઉસસે  
ભી ઉસે મૂર્છા આદિ દુઃખ હોતે હૈં । યે સવ વાતેં દ્રવ્યશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષ  
પરમ્પરાકી દ્યોતક હૈં ।

ભાવશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરા હસી ઉદ્દેશમેં હસીકે આગે . "જે કો-  
હદંસી" ઇસ સૂત્રમેં કહેંગે । જિસ પ્રકાર શસ્ત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરા હૈ ઉસ  
પ્રકાર અશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષપરમ્પરા નહીં હૈ, ઇસ વાતકો "નત્થિ" ઇસ વાક્ય  
સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—અશસ્ત્ર નામ સંયમકા હૈ, વહ "પરેણ પરં  
નાસ્તિ" પ્રકર્ષપરમ્પરાસે યુક્ત નહીં હોતા હૈ । જૈસે-પૃથિવીકાયિકાદિ  
જીવોમેં સંયમીકો આત્મતુલ્યતાકી ભાવના રખની ચાહિયે, ક્યોં કિ યહ  
વચન હૈ "એગે આયા" આત્મા એક હૈ । ઇસ પ્રકારકી ભાવનારૂપ સંયમ  
મેં મન્દ ઓર તીવ્ર ભેદ નહીં હૈ । ઇસ કારણ સમસ્ત પૃથિવીકાયિકાદિ

અનેક વાતો ઉત્પન્ન થાય છે. જેમ-તલવાર દ્વારા મારવાથી લાગવાવાળાના માંથામાં  
પીડા, તેનાથી જ્વર, તેનાથી તેને મૂર્છા આદિ દુઃખ થાય છે. એ સંઘળી વાતો  
દ્રવ્યશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરાની દ્યોતક છે.

ભાવશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા આ જ ઉદ્દેશમાં એનાથી આગળના "જે  
કોહદંસી" એ સૂત્રમાં કહેવામાં આવશે. જે પ્રકારે શસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા છે  
તે પ્રકારે અશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરા નથી. એ વાતને "નત્થિ" ઇત્યાદિ વાક્યથી  
સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે. અશસ્ત્ર નામ સંયમનું છે, તે "પરેણ પરં નાસ્તિ" પ્રકર્ષ-  
પરંપરાથી યુક્ત થતું નથી. જેમ-પૃથિવીકાયાદિ જીવોમાં સંયમીએ આત્મ  
તુલ્યતાની ભાવના રાખવી જોઈએ, કારણ કે ભગવાનનું એ વચન છે—'એગે આયા'  
આત્મા એક છે. આ પ્રકારની ભાવનારૂપ સંયમમાં મન્દ અને તીવ્ર ભેદ નથી.  
એ કારણથી સમસ્ત પૃથિવીકાયાદિક જીવોમાં સમતાશાળી સંયમીના સામાયિક



ભાવશસ્ત્રં કથં પરેણ પરમસ્તીત્યાહ—‘ જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—જે કોહદંસી સે માણદંસી, જે માણદંસી સે માયા-  
દંસી, જે માયાદંસી સે લોહદંસી, જે લોહદંસી સે પેજદંસી,  
જે પેજદંસી સે દોસદંસી, જે દોસદંસી સે મોહદંસી, જે મોહદંસી  
સે ગબ્બદંસી, જે ગબ્બદંસી સે જમ્મદંસી, જે જમ્મદંસી સે  
મારદંસી, જે મારદંસી સે નરયદંસી, જે નરયદંસી સે તિરિયદંસી,  
જે તિરિયદંસી સે દુક્ખદંસી ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જીવોંમેં સમતાશાલી સંયમીકે સામાયિકરૂપ ચારિત્રમેં તીવ્રમન્દરૂપ  
પ્રકર્ષકી પરમ્પરા નહીં હૈ । અથવા—શૈલેશી અવસ્થાકે સંયમસે આગે ગુણ-  
સ્થાનકા અભાવ હોનેસે ઓર કોઈ પર-ઉત્કૃષ્ટ-સંયમ નહીં હૈ ।

ભાવાર્થ—શૈલેશી અવસ્થા ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં હોતી હૈ, કયોં કિ  
હસી ગુણસ્થાનમેં ચારિત્રકી પૂર્ણતા હોતી હૈ । યથાખ્યાત—ચારિત્રસે ઓર  
કોઈ ચારિત્ર તો એસા ઉત્કૃષ્ટ હૈ નહીં જો હસસે મી અધિક ઉત્કૃષ્ટ હો,  
હસ લિયે હસ અવસ્થાકે ચારિત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરાકા નિષેધ હૈ । ચારિત્ર  
કે મેદોંમેં પરસ્પર પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ મલે હી હો પરન્તુ કિસી મી ચારિત્ર  
મેં નિજમેં પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ નહીં હૈ । યથાખ્યાત—ચારિત્ર સ્વયં પ્રકર્ષકી  
અવધિસ્વરૂપ હૈ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

દ્રવ્યશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષપરમ્પરાકો સ્પષ્ટ કર અબ ‘ભાવશસ્ત્રમેં વહ પ્રકર્ષ-  
પરમ્પરા કૈસે હૈ?’ હસે સ્પષ્ટ કરનેકે લિયે કહતે હૈ—‘જે કોહદંસી’ ઇત્યાદિ ।

રૂપ ચારિત્રમાં તીવ્રમન્દરૂપ પ્રકર્ષની પરંપરા નથી. અથવા શૈલેશી અવસ્થાના  
સંયમથી આગળ ગુણસ્થાનનો અભાવ થવાથી બીજો કોઈ ઉત્કૃષ્ટ સંયમ નથી.

ભાવાર્થ—શૈલેશી અવસ્થા ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં થાય છે, કારણ કે તે  
ગુણસ્થાનમાં ચારિત્રની પૂર્ણતા થાય છે. યથાખ્યાત—ચારિત્રથી બીજા કોઈ ચારિત્ર  
તો એવું ઉત્કૃષ્ટ છે નહિ કે જે એનાથી પણ અધિક ઉત્કૃષ્ટ હોય. માટે આ અવસ્થાના  
ચારિત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરાનો નિષેધ કરે છે. ચારિત્રના લેહોમાં પરસ્પર પ્રકર્ષ-  
પ્રકર્ષ વૃત્તિ ભડે હોય પરંતુ કોઈ પણ ચારિત્રમાં પોતામાં પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ  
નથી. યથાખ્યાત—ચારિત્ર સ્વયં પ્રકર્ષની અવધિસ્વરૂપ છે. ॥ સૂ૦ ૯ ॥

દ્રવ્યશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરાને સ્પષ્ટ કરીને હવે ‘ભાવશસ્ત્રમાં તે પ્રકર્ષ  
પરંપરા કેવી રીતે છે?’ તેને સ્પષ્ટ કરવા માટે કહે છે—‘જે કોહદંસી’ ઇત્યાદિ.



છાયા—યઃ ક્રોધદર્શી સ માનદર્શી, યઃ માનદર્શી સ માયાદર્શી, યો માયાદર્શી સ લોભદર્શી, યો લોભદર્શી સ પ્રેમદર્શી, યઃ પ્રેમદર્શી સ દ્વેષદર્શી, યો દ્વેષદર્શી સ મોહદર્શી, યો મોહદર્શી સ ગર્ભદર્શી, યો ગર્ભદર્શી સ જન્મદર્શી, યો જન્મદર્શી સ મારદર્શી, યો મારદર્શી સ નરકદર્શી, યો નરકદર્શી સ તિર્યગ્દર્શી, યસ્તિર્યગ્દર્શી સ દુઃસ્વદર્શી ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—યઃ ક્રોધદર્શી ક્રોધં પશ્યતિ-ભાવયતિ ક્રુધ્યતીત્યર્થઃ, ક્રોધં દર્શયતીતિ યાવત્ । યથા ક્રુદ્ધસ્ય દૃષ્ટિસ્તીવ્રા, પ્રસન્નચિત્તસ્ય તુ સિતકમલવદ્ભવલા ભવતિ । સ માનદર્શી માનં પશ્યતિ-ભાવયતિ, ગર્વં દર્શયતીતિ યાવત્ । એવમગ્રેઽપિ યોજનીયં યાવત્-‘સ મોહદર્શી’તિ । યો મોહદર્શી-મોહાઽઽક્રાન્તઃ, સ ગર્ભદર્શી ગર્ભં પશ્યતિ-ગર્ભવાસોદ્ભૂતદુઃસ્વાનુભવી ભવતીત્યર્થઃ । એવં-‘સ તિર્યગ્દર્શી’-તિ

જો ક્રોધદર્શી હૈ અર્થાત્ ક્રોધકો દેખતા હૈ-ક્રોધ કરનેકી ભાવના કરતા હૈ-ક્રુદ્ધ હોતા હૈ, દૂસરે વ્યક્તિ પર ક્રોધ દિશ્વલાતા હૈ, જૈસે-‘ક્રુદ્ધ વ્યક્તિકી દૃષ્ટિ તીવ્ર હોતી હૈ, પ્રસન્નચિત્તવાલેકી સફેદ કમલ જૈસી ધવલ હોતી હૈ’ । ઇસ પ્રકારસે જો દૂસરોંકે લિયે દૃષ્ટિ વગૈરહ ચિહ્નોંસે અપની ક્રોધપરિણતિ દિશ્વલાતા હૈ-પ્રકટ કરતા હૈ વહ માનદર્શી હોતા હૈ-માનકો દેખતા હૈ-માન કરનેકી ભાવના કરતા હૈ, માન કરતા હૈ-અન્યકે લિયે વહ અપની માનપરિણતિ પ્રકટ કરતા હૈ । ઇસી પ્રકાર જો માનદર્શી હૈ વહ માયાદર્શી હોતા હૈ । જો માયાદર્શી હૈ વહ લોભદર્શી હૈ । જો લોભદર્શી હૈ વહ રાગદર્શી હૈ । જો રાગદર્શી હૈ વહ દ્વેષદર્શી હૈ । જો દ્વેષદર્શી હૈ વહ મોહદર્શી હૈ । જો મોહદર્શી હોતા હૈ વહ ગર્ભદર્શી હોતા હૈ । ઇસકા ભાવ યહ હૈ કિ-મોહદર્શી પ્રાણી ગર્ભા-

જે ક્રોધદર્શી છે અર્થાત્ ક્રોધને દેખે છે-ક્રોધ કરવાની ભાવના કરે છે-ક્રુદ્ધ થાય છે, બીજી વ્યક્તિના ઉપર ક્રોધ દેખાડે છે. જેમ-‘ક્રુદ્ધ વ્યક્તિની દૃષ્ટિ તીવ્ર હોય છે. પ્રસન્ન ચિત્તવાળાની સદેહ કમળ જેવી ધવળ હોય છે.’ એવા પ્રકારથી જે બીજાઓને માટે દૃષ્ટિ વિગેરે ચિન્હોથી પોતાની ક્રોધ-પરિણતિ દેખાડે છે-પ્રકટ કરે છે તે માનદર્શી થાય છે-માનને દેખે છે-માન કરવાની ભાવના રાખે છે, માન કરે છે-બીજાને માટે તે પોતાની માન-પરિણતિ પ્રગટ કરે છે. એ પ્રકારે માનદર્શી છે તે માયાદર્શી હોય છે. જે માયાદર્શી છે તે લોભદર્શી છે, જે લોભદર્શી છે તે રાગદર્શી છે. જે રાગદર્શી છે તે દ્વેષદર્શી છે, જે દ્વેષદર્શી છે તે મોહદર્શી છે. જે મોહદર્શી છે તે ગર્ભદર્શી છે. તેનો ભાવ એ છે કે-મોહદર્શી પ્રાણી ગર્ભાવાસથી ઉત્પન્ન અનન્ત

યાવદવગન્તવ્યમ્ । યસ્તિર્યગ્દર્શી=તિર્યગ્ભવનિગોદસમ્બન્ધિદુઃખદર્શી, સ દુઃખદર્શી-  
-ઇહ દુઃખશબ્દેન સર્વતઃ સમુત્કૃષ્ટતમં નિગોદભવસમ્બન્ધિ દુઃખં પરિગ્રહ્યતે, તત્  
પર્યતિ=અનુભવતીત્યર્થઃ । એતેન ગર્ભદર્શીત્યાદાવપિ દુઃખદર્શિત્વેન તિર્યગ્દર્શિન  
એવ દુઃખદર્શિત્વકથનમયુક્તમિતિ શક્તાવસરો નાસ્તીતિ બોધ્યમ્ । અનેન-પારમ્પર્યા-  
પન્નસ્ય સર્વસ્ય ભાવશસ્ત્રસ્ય નિદાનં ક્રોધઃ, તથા સર્વતઃ સમુત્કૃષ્ટદુઃખં નિગોદભ-  
વેઽસ્તીતિ ધ્વનિતમ્ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

વાસસે ઉત્પન્ન અનન્ત યાતનાઓનો ભોગતા હૈ । इसी प्रकार जो गर्भ-  
दर्शी है वह जन्मदर्शी है । जो जन्मदर्शी है वह मरणदर्शी है । जो मर-  
णदर्शी है वह नरकदर्शी है । जो नरकदर्शी है वह तिर्यग्दर्शी है, जो  
तिर्यग्दर्शी है अर्थात् तिर्यग्भगतिस्वरूप निगोदके दुःखोंका अनुभवकर्त्ता  
है वह वहां के सर्वोत्कृष्ट दुःखोंका अनुभव करता है । यही भाव  
“स दुःखदर्शी” इस पदसे सूत्रकारने प्रकट किया है । यहां दुःख-  
शब्दसे सर्वोत्कृष्ट निगोदसम्बन्धी दुःखों का ही ग्रहण किया है । इस  
लिये “यो गर्भदर्शी” इत्यादि पद हैं उनमें भी दुःखदर्शित्व तो आता  
ही है, फिर भी जो तिर्यग्दर्शी में ही दुःखदर्शित्व स्वतन्त्र रूपसे प्रकट  
किया गया है वह अयुक्त है । इस प्रकारकी शङ्का करनेका यहां अवसर  
ही नहीं प्राप्त होता है । इस समस्त कथनसे यह ध्वनित होता है कि  
इस प्रकर्षपरम्पराप्राप्त भावशस्त्रका निदान-मूल कारण-क्रोध है और  
सबसे उत्कृष्ट दुःख निगोदभवमें है ।

યાતનાઓને ભોગવે છે. એ પ્રકારે જે ગર્ભદર્શી છે તે જન્મદર્શી છે. જે જન્મ-  
દર્શી છે તે મરણદર્શી છે, જે મરણદર્શી છે તે નરકદર્શી છે. જે નરકદર્શી છે  
તે તિર્યગ્દર્શી છે. જે તિર્યગ્દર્શી છે અર્થાત્ તિર્યગ્ભગતિસ્વરૂપ નિગોદના દુઃખોનો  
અનુભવકર્તા છે, તે ત્યાંના સર્વોત્કૃષ્ટ દુઃખોનો અનુભવ કરે છે. એ જ ભાવ.  
“સ દુઃખદર્શી” એ પદથી સૂત્રકારે પ્રગટ કરેલ છે. અહીં દુઃખ-શબ્દથી  
સર્વોત્કૃષ્ટ નિગોદસંબંધી દુઃખોનું જ ગ્રહણ કરેલ છે. માટે જે “ગર્ભદર્શી” ઇત્યાદિ  
પદ છે તેમાં પણ દુઃખ-દર્શિત્વ તો આવે જ છે તો પણ જે તિર્યગ્દર્શીમાં જ  
દુઃખ-દર્શિત્વ સ્વતંત્ર રૂપથી પ્રગટ કરેલ છે તે અયુક્ત છે. આ પ્રકારની શંકા  
કરવાનો આ ઠેકાણે અવસર જ પ્રાપ્ત થતો નથી, આ સમસ્ત કથનથી એ ધ્વનિત  
થાય છે કે આ પ્રકર્ષપરંપરાપ્રાપ્ત ભાવશસ્ત્રનું નિદાન-મૂલ કારણ-ક્રોધ છે. અને  
અધાથી ઉત્કૃષ્ટ દુઃખ નિગોદભવમાં છે.



યસ્તુ મુમુક્ષુઃ, સ ક્રોધાદિકં પરિહરેદિત્યાહ—‘સે મેહાવી’ इत्यादि ।

મૂલમ—સે મેહાવી અભિણિવદ્વિજ્ઞા કોહં ચ માણં ચ માયં ચ લોહં ચ પેજ્ઞં ચ દોસં ચ મોહં ચ ગબ્ધં ચ જમ્મં ચ મારં ચ નરયં ચ તિરિયં ચ દુક્ખં ચ । ઇયં પાસગસ્સ દંસણં ઉવરયસ-ત્થસ્સ પલિયંતકરસ્સ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

છાયા—સ મેધાવી અભિનિવર્તયેત્ ક્રોધં ચ માનં ચ માયાં ચ લોભં ચ પ્રેમ ચ દ્વેષં ચ મોહં ચ ગર્મં ચ જન્મ ચ મારં ચ નરકં ચ તિર્યશ્ચં ચ દુઃખં ચ । એતત્ પશ્ય-કસ્ય દર્શનમ્, ઉપરતશસ્ત્રસ્ય પર્યન્તકરસ્ય ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ટીકા—સ મેધાવી ક્રોધાદિમોહાન્તં ભાવશસ્ત્રં, તથા—ગર્ભાદિદુઃખાન્તં તત્પ્રયો-ગફલભૂતમ્, અભિનિવર્તયેત્=પરિહરેત્—અપનયેદિત્યર્થઃ । ક્રોધાદિમોહાન્તં ભાવશસ્ત્રં સર્વથા પરિવર્જયેત્, યેન ગર્ભદુઃખાદારમ્ય નિગોદદુઃખં યાવત્ સર્વમપિ દુઃખં ન પ્રાપ્નુયાદિતિ ભાવઃ ।

ભાવાર્થ—એ ક્રોધાદિક પર-ભાવ હી ભાવશસ્ત્ર હૈં ઓર ક્રોધસે માન, માનસે માયા, માયાસે લોભ, इत्यादि रूपसे उनमें प्रकर्षपरम्परा है; यह बात प्रकट की गई है ॥ સૂ. ૧૦ ॥

જો મુમુક્ષુ—મોક્ષ જાનેકી ઇચ્છા રાખનેવાલા હો ઉસકો ક્રોધાદિકકા પરિહાર કર દેના ચાહિયે, ઇસ વાતકો પ્રકટ કરતે હૈં—‘સે મેહાવી’ इत्यादि ।

વહ મેધાવી મુનિ ક્રોધસે લગાકર મોહ તક ભાવશસ્ત્રકા તથા ઉન કે પ્રયોગસે ઉત્પન્ન ઉનકે ફલસ્વરૂપ ગર્ભાવાસકે દુઃખોસે લેકર નિગોદકે દુઃખોં તકકા પરિહાર કરે, અર્થાત્—બુદ્ધિમાનકા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ ક્રોધા-દિક કષાયરૂપ ભાવશસ્ત્રકા પરિત્યાગ કરે । ક્યોંકિ ક્રોધાદિકષાયોંકે કરને સે કર્ત્તાકો અનેક પ્રકારકે દુઃખોંકો ભોગના પડતા હૈં । ગર્ભાવાસકે દુઃખોં

ભાવાર્થઃ—એ ક્રોધાદિક પર-ભાવ જ ભાવશસ્ત્ર છે, અને ક્રોધથી માન, માનથી માયા, માયાથી લોભ, इत्यादि રૂપથી તેમાં પ્રકર્ષપરંપરા છે; એ વાત પ્રગટ કરી છે. ॥ સૂ. ૧૦ ॥

જે મુમુક્ષુ—મોક્ષ જવાની ઇચ્છા રાખનારા હોય તેને ક્રોધાદિકનો પરિહાર કરી દેવો જોઈએ, આ વાતને પ્રગટ કરે છે—‘સે મેહાવી’ इत्यादि.

તે મેધાવી મુનિ ક્રોધથી લઈ મોહ સુધી ભાવશસ્ત્રને તથા તેના પ્રયોગથી ઉત્પન્ન તેના ફળસ્વરૂપ ગર્ભાવાસના દુઃખોથી લઈને નિગોદના દુઃખો સુધીનો પરિહાર કરે; અર્થાત્ બુદ્ધિમાનનું કર્તવ્ય છે કે તે ક્રોધાદિકકષાયરૂપ ભાવશસ્ત્રનો પરિત્યાગ કરે, કારણ કે ક્રોધાદિક કષાયોના કરવાથી કર્તાને તેનાથી અનેક પ્રકારના દુઃખો ભોગવવા



एतच्च मया न स्वबुद्धिकल्पनया कथ्यते, किंतु भगवतस्तीर्थकरस्य समीपे त-  
दुपदेशवचनं यथा मया श्रुतं तथा निगद्यते, इत्याशयेनाह—‘ एतत् पश्यकस्य दर्श-  
नम् ’ इत्यादि । अत्रैवोद्देशे कृतव्याख्यानमेतत् ॥ सू० ११ ॥

असौ तीर्थकरः कथंभूतः ? इत्यत आह—‘ आयाणं ’ इत्यादि ।

मूलम्—आयाणं निसिद्धा सगडबिभ ॥ सू० १२ ॥

छाया—आदानं निषेद्धा स्वकृतमित् ॥ सू० ૧૨ ॥

સે મી અનન્તગુને કષ્ટ નિગોદમેં જીવ ઇનકે કરનેકે હી ફલસ્વરૂપ મોગતા  
હૈ । અતઃ મુનિકે લિયે ક્રોધાદિ કષાયોંકા પરિહાર કરના હી સર્વશ્રેયસ્કર  
હૈ । ઇનકા પરિહાર કરનેસે ફિર ડસકો ગર્ભવાસાદિક તથા નિગોદકે અનન્ત  
કષ્ટોંકો નહીં સહના પડતા હૈ । ઇનકા ત્યાગ કરના હી ડન દુઃખોંકે  
અભાવકા હેતુ હૈ । શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીસે કહતે હૈ—હે જમ્બૂ!  
યહ જો કુછ મી મૈને યહાં તક પ્રતિપાદન કિયા હૈ વહ અપની બુદ્ધિસે  
કલ્પિત કર નહીં કિયા હૈ; કિન્તુ ભગવાન્ તીર્થંકર શ્રીવર્ધમાનસ્વામીકે  
સમીપ ડનકે ઉપદેશરૂપ વચન જૈસા મૈને સુના હૈ ડસી તરહસે કહા હૈ ।  
इसी आशयसे श्री सुधर्मास्वामी “ एयं पासगस्स दंसणं ” इत्यादि सूत्र  
की साक्षी देते हैं । इस सूत्रका व्याख्यान इसी उद्देशके पहले सूत्रमें  
किया जा चुका है ॥ सू० ११ ॥

जिनका यह दर्शन है वे तीर्थंकर भगवान् कैसे होते हैं ? सो कहते  
हैं—‘ आयाणं ’ इत्यादि ।

પડે છે. ગર્ભાવાસના દુઃખોથી અનંતગણા કષ્ટ નિગોદમાં જીવ તેના કરવાના ઇળ  
સ્વરૂપ ભોગવે છે, અતઃ મુનિ માટે ક્રોધાદિ કષાયોના પરિહાર કરવો જ સર્વશ્રેયસ્કર  
છે. તેનો પરિત્યાગ કરવાથી ફરીથી તેને ગર્ભાવાસાદિકના તથા નિગોદના અનંત દુઃખોને  
સહન કરવા પડતા નથી. તેનો ત્યાગ કરવું જ તે દુઃખોના અભાવનો હેતુ છે.

શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીથી કહે છે—હે જમ્બૂ ! આ જે કંઈ પણ મેં  
અહીંયા સુધી પ્રતિપાદન કરેલ છે તે પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પિત કરી કહેલ નથી, પણ  
ભગવાન તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીના સમીપે તેના ઉપદેશરૂપ વચન જેવું મેં  
સાંભળેલ છે તે જ મેં કહેલ છે. તે આશયથી શ્રી સુધર્માસ્વામી “એયં પાસગસ્સ દંસણં”  
ઈત્યાદિ સૂત્રની સાક્ષી આપે છે. આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ ઉદ્દેશના પહેલા સૂત્રમાં  
કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

જેનું આ દર્શન છે તે તીર્થંકર ભગવાન કેવા હોય છે ? તે કહે છે—‘આયાણં’ ઇત્યાદિ.

ટીકા— આદાનમિતિ—આદાનં કર્મોપાદાનં ક્રોધં, નિષેદ્ધા=અપનેતા સ્વકૃત-  
મિત્ત=પૂર્વોપાર્જિતકર્મક્ષપયિતા ભવતીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

જમ્બૂસ્વામી પૃચ્છતિ—‘ કિમત્થિ ઉવાહી ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ !, ન વિજ્ઞઇ નત્થિત્તિ  
વેમિ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

છાયા—કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય, ન વિદ્યતે નાસ્તીતિ બ્રવીમિ ॥ ૧૩ ॥

ટીકા—પશ્યકસ્ય=કેવલિનઃ, ઉપાધિઃ ઉપાધીયતે ઇત્યુપાધિઃ, તત્ર દ્રવ્યો-  
પાધિર્હિરણ્યસુવર્ણાદિઃ, ભાવોપાધિર્જ્ઞાનાવરણીયાદિકં કર્મ, યદ્વા-ઉપાધીયતે વ્યપ-

આદાન=કર્મોંકે ઉપાદાન-ગ્રહણ કરનેમેં પ્રધાનકારણ એસે ક્રોધકા  
જો પરિહાર કરતા હૈ વહ અપને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોંકા વિનાશક હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—અષ્ટવિધ કર્મોંકા મૂલ કારણ ક્રોધ હૈ, એસા સમજકર  
તીર્થંકર ભગવાનને ઇસકા સર્વથા પરિહાર કિયા હૈ । અતઃ ઇસકે પરિ-  
હારસે વે નવીન કર્મોંકે બન્ધક નહીં હુએ, ઇતના હી નહીં; ઉનકી આત્મામેં  
જો કુછ પૂર્વસંચિત કર્મ થે ઉનકો ભી સંવરકી પ્રાપ્તિસે ઉન તીર્થંકર પ્રભુને  
નષ્ટ કર દિયે । ઇસલિયે મોક્ષાભિલાષી મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ વીતરાગ  
તીર્થંકરપ્રભુકા આદર્શ સામને રખંકર ઉસ માર્ગકા અનુસરણ કરે ॥સૂ. ૧૨॥

અબ ઉપાધિ કે વિષયમેં કહતે હૈ—‘ કિમત્થિ ’ ઇત્યાદિ ।

જમ્બૂસ્વામી શ્રી સુધર્માસ્વામીસે પૂછતે હૈ કિ—હે ભદન્ત ! કેવલી  
ભગવાનકે ઉપાધિ હૈ કયા ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈ કિ ઉનકે કિસી  
ભી પ્રકારકી ઉપાધિ નહીં હૈ । હિરણ્યસુવર્ણાદિરૂપ દ્રવ્ય-ઉપાધિ ઔર

આદાન=કર્મોંના ઉપાદાન-ગ્રહણ કરવામાં પ્રધાન કારણ જે ક્રોધ છે તેનો જે  
પરિહાર કરે છે તે પોતાના પૂર્વોપાર્જિત કર્મોંના વિનાશક બને છે.

ભાવાર્થ—અષ્ટવિધ કર્મોંનું મૂલ કારણ ક્રોધ છે, એવું સમજીને તીર્થંકર ભગ-  
વાને તેનો સર્વથા પરિહાર કરેલ છે, માટે તેના પરિહારથી તે નવીન કર્મોંના બંધક  
નથી થયાં, એટલું જ નહિ, જેટલા કંઈ તેની આત્મામાં પૂર્વ સંચિત કર્મ હતા  
તે સંવરની પ્રાપ્તિથી તે તીર્થંકર પ્રભુએ નષ્ટ કરી નાખ્યા. માટે મોક્ષાભિલાષી  
મુનીનું કર્તવ્ય છે કે તે વીતરાગ પ્રભુનો આદેશ સામે રાખીને તે માર્ગનું  
અનુસરણ કરે ॥ સૂ. ૧૨ ॥

હવે ઉપાધિના વિષયમાં કહે છે—‘ કિમત્થિ ’ ઇત્યાદિ.

જમ્બૂસ્વામી સુધર્માસ્વામીને પૂછે છે કે હે ભદન્ત ! કેવળી ભગવાનને  
ઉપાધિ છે કે નહિ ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે તેને કોઈ પણ પ્રકારની ઉપાધિ  
નથી, હિરણ્ય સુવર્ણાદિરૂપ દ્રવ્ય-ઉપાધિ અને જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મ ભાવ-ઉપાધિ આ



દિશ્યતે યેનેત્યુપાધિઃ-કર્મજનિતો નરકાદિભવઃ, અસ્તિ કિમ્ ? । શ્રીસુધર્માસ્વામી ઉત્તરયતિ-ન વિદ્યતે । ‘નાસ્તિ’ ઇતિ-ઉત્તરવાક્યાર્થસ્ય દાઢ્યવોધનાય, અધ્યયન-સમાપ્તિસૂચનાય વાડ્યતઃ પુનઃ કથનમ્ । યદ્વા-‘ન વિદ્યતે’ ઇત્યન્તં પ્રશ્નવાક્યમ્ । પશ્યકસ્યોપાધિઃ કિમસ્તિ, ઉત ન વિદ્યતે ? અત્રોત્તરમાહ-નાસ્તીતિ । અષ્ટવિધં કર્મ, કર્મજનિતનરકાદિભવો વા કેવલિનો ન ભવતીત્યર્થઃ । તથા ચોક્ત્—

જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મ ભાવ-ઉપાધિ, હસ પ્રકારસે ઉપાધિકે દો ભેદ હૈં; હનમેંસે કોઈ મી ઉપાધિ હનકે નહીં હૈ । અથવા કર્મજનિત જો નરકાદિ પર્યાય હૈ વહ મી ઉપાધિ હૈ, યહ ઉપાધિ મી હનમેં નહીં હૈ । પ્રશ્ન ઓર ઉત્તરકે રૂપમેં યહ સૂત્ર હૈ, જૈસે-“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ” કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય ?, યહાં તક પ્રશ્નવાક્ય હૈ “ન વિજ્જહ નત્થિ”-ન વિદ્યતે નાસ્તિ, યહ ઉત્તર વાક્ય હૈ । અર્થાત્ સર્વજ્ઞ-તીર્થઙ્કર ભગવાનકે ઉપાધિ હૈ કિ નહીં ? નહીં હૈ । યહાં પર “ન વિદ્યતે” હસ ક્રિયાકી પર્યાયવાચી ક્રિયા જો “નાસ્તિ” બતલાઈ હૈ, સો ઉત્તરવાક્યકે અર્થકી દઢતા સમજ્ઞાનેકે લિયે, ઓર અધ્યયનકી સમાપ્તિ સૂચન કરનેકે લિયે ।

અથવા-“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ ન વિજ્જહ” યહાં તક પ્રશ્ન-વાક્ય હૈ, ઓર “નત્થિ” યહ ઉત્તરવાક્ય હૈ । અર્થાત્-સર્વજ્ઞ-તીર્થઙ્કરકો ઉપાધિ હૈ કિ નહીં ? યહાં તક શિષ્યકા પ્રશ્ન હૈ । ગુરુકા ઉત્તર હૈ—‘નત્થિ’-નહીં હૈ ।

ભાવાર્થ—કેવલી તીર્થઙ્કર ભગવાનકે ન અષ્ટવિધ કર્મરૂપ ઉપાધિ હૈ ઓર ન કર્મજન્ય-નરકાદિપર્યાયરૂપ ઉપાધિ હી હૈ, બે ઉપાધિસે નિર્મુક્ત

પ્રકારે ઉપાધિના યે ભેદ છે. તેમાંથી કોઈ પણ ઉપાધિ તેને નથી. અથવા કર્મજનિત જે નરકાદિ પર્યાય છે તે પણ ઉપાધિ છે, તે ઉપાધિ પણ તેમનામાં નથી. પ્રશ્ન અને ઉત્તરના રૂપમાં એ સૂત્ર છે, જેમ-“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ”-કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય ? આંહી સુધી પ્રશ્નવાક્ય છે. “ન વિજ્જહ નત્થિ”-નવિદ્યતે નાસ્તિ એ ઉત્તર વાક્ય છે. અર્થાત્ સર્વજ્ઞ તીર્થઙ્કર ભગવાનને ઉપાધિ છે કે નહિ ?, નથી. આ ઠેકાણે “ન વિદ્યતે” આ ક્રિયાની પર્યાયવાચી ક્રિયા જે “નાસ્તિ” બતાવી છે તે ઉત્તરવાક્યના અર્થની દઢતા સમજાવવા માટે, અને અધ્યયનની સમાપ્તિ સૂચન કરવા માટે. અથવા—“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ ન વિજ્જહ” આંહી સુધી પ્રશ્નવાક્ય છે, અને ‘નત્થિ’ આ ઉત્તરવાક્ય છે. અર્થાત્ સર્વજ્ઞ તીર્થઙ્કરને ઉપાધિ છે કે નહિ ? આંહી સુધી શિષ્યનો પ્રશ્ન છે. ગુરુનો ઉત્તર છે-‘નત્થિ’ નથી.

ભાવાર્થ—કેવળી તીર્થઙ્કર ભગવાનને અષ્ટવિધકર્મરૂપ ઉપાધિ નથી, અને કર્મજન્ય નરકાદિપર્યાયરૂપ ઉપાધિ પણ નથી. તે તો ઉપાધિથી નિર્મુક્ત છે.



“ दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं, प्रादुर्भवति नाङ्कुरः ।

कर्मबीजे तथा दग्धे, न रोहति भवाङ्कुरः ” ॥ इति ॥

इति ब्रवीमि—इति=इदं, ब्रवीमि=यथा श्रुतं भगवन्मुखात् तथा कथयामीत्यर्थः ॥ सू० १३ ॥

॥ तृतीयाध्ययनस्य चतुर्थोद्देशः समाप्तः ॥ ३-४ ॥

“ तृतीयेऽध्ययने सुप्तजागरूकौ च वर्णितौ ।

सुप्तदुःखं मुनिस्त्वे च, कारणं क्रोधवर्जनम् ” ॥ १ ॥ इति ॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललित-  
कलापाऽऽलापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-शाहू-  
छत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त-“जैनशास्त्राचार्य”-पदभूषित-कोल्हापुर-  
राजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्री-  
घासीलाल-व्रतिविरचितायाम् आचाराङ्गसूत्रस्याचारचिन्ता-  
मणिटीकायां शीतोष्णीयाख्यं तृतीयमध्ययनं संपूर्णम् ॥ ३ ॥

हैं । क्यों कि उनके कर्मरूपी बीज जल चुका है, कहा भी है—

“ दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं, प्रादुर्भवति नाङ्कुरः ।

कर्मबीजे तथा दग्धे, न रोहति भवाङ्कुरः ” ॥ १ ॥ ” इति ।

जिस प्रकार बीजके नष्ट होनेपर अङ्कुर उत्पन्न नहीं होता है उसी प्रकार कर्मरूपी बीजके विनाश होने पर संसाररूपी अङ्कुर उत्पन्न नहीं होता है । ‘ त्ति वे मि ’ इति ब्रवीमि ’ इस प्रकार मैं कहता हूँ, अर्थात्—भगवानके मुखसे मैंने जैसा सुना है वैसा ही तुमसे कहता हूँ ॥ सू० १३ ॥

तीसरे अध्ययन का चौथा उद्देश समाप्त ॥ ३-४ ॥

इस तृतीय अध्ययनके चार उद्देशोंमें यथाक्रमसे इस प्रकार विषय वर्णित हुए हैं ।

કારણ કે તેને કર્મરૂપી બીજ બળી ગયેલ છે, કંઈ પણ છે—

“ દગ્ધે બીજે યથાઽત્યન્તં, પ્રાદુર્ભવતિ નાઙ્કુરઃ ।

કર્મબીજે તથા દગ્ધે, ન રોહતિ ભવાઙ્કુરઃ ” ॥ ૧ ॥

જેવી રીતે બીજનો નાશ થવાથી અંકુર ઉત્પન્ન થતાં નથી તે પ્રકારે કર્મ રૂપી બીજનો વિનાશ થવાથી સંસારરૂપી અંકુર ઉત્પન્ન થતો નથી.

‘ ત્તિ વેમિ ’ ઇતિ બ્રવીમિ—આ પ્રકારે હું કહું છું. અર્થાત્ ભગવાનના મુખથી મેં જેવું સાંભળ્યું છે તેવું જ હું તમોને કહું છું. ॥ સૂ. ૧૩ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૪ ॥

આ ત્રીજા અધ્યયનના ચાર ઉદ્દેશોમાં યથાક્રમથી આ પ્રકારે વિષય વર્ણિત થયેલ છે.—

(૧) પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુષ્પ્ત સંયમિયોંકે દોષ ઓર સંયમમાં જાગરૂક સંયમિયોં કે ગુણ પ્રકટ કિયે હૈ ।

(૨) દ્વિતીય ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાલે સંયમિયોંકો અનેક દુઃખોંકા અનુભવ કરના પડતા હૈ, યહ વિષય વર્ણિત કિયા ગયા હૈ ।

(૩) તૃતીય ઉદ્દેશમાં સંયમાચરણકે વિના કેવલ દુઃખોંકે સહનમાત્ર સે કોઈ સાધુ નહીં કહલા સકતા, યહ વિષય પ્રતિપાદિત કિયા હૈ ।

(૪) ચતુર્થ ઉદ્દેશમાં છર્દિત-વાન્ત-અન્નકે સમાન કષાય ત્યાગને યોગ્ય હૈ, પાપકર્મ પરિહરણીય હૈ, તથા પદાર્થોંકે સ્વરૂપકો જાનનેવાલે સંયમીકે લિયે સંયમ આરાધનીય હૈ, ઇત્યાદિ સમસ્ત વિષય પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ॥ ૧૧ ॥

॥ યહ આચારાંગસૂત્રકે શીતોષ્ણીયનામક તૃતીય અધ્યયનકા  
હિન્દી-ભાષાનુવાદ સમાપ્ત ॥૩॥

(૧) પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુષ્પ્ત સંયમિયોના દોષ અને જાગરૂક સંયમિયોના ગુણ પ્રકટ કરેલ છે.

(૨) બીજા ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાળા સંયમિયોને અનેક દુઃખોના અનુભવ કરવો પડે છે. એ વિષય વર્ણિત કરેલ છે.

(૩) ત્રીજા ઉદ્દેશમાં સંયમાચરણ વિના કેવળ દુઃખોના સહન માત્રથી કોઈ સાધુ કહેવાતા નથી. એ વિષય પ્રતિપાદિત કરેલ છે.

(૪) ચોથા ઉદ્દેશમાં છર્દિત—વાન્ત અન્ન સમાન કષાય ત્યાગવાયોગ્ય છે. પાપકર્મ પરિહરણીય છે. તથા પદાર્થોના સ્વરૂપને જાણવાવાળા સંયમી માટે સંયમ આરાધનીય છે. ઇત્યાદિ સમસ્ત વિષય પ્રગટ કરેલ છે.

આ આચારાંગસૂત્રના શીતોષ્ણીય નામના ત્રીજા અધ્યયનનો  
ગુજરાતી-ભાષાનુવાદ સમાપ્ત ॥ ૩ ॥

। અથાચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય સમ્યક્ત્વનામકં ચતુર્થમધ્યયનમ્ ।

નિરૂપાધિકં સંયમાનુષ્ઠાનં મુનિત્વસ્ય મોક્ષસ્ય ચ કારણમિતિ પ્રાગુક્તાધ્યયન-  
ત્રયેણ પ્રતિપાદિતં, તદ્દિ સમ્યક્ત્વમન્તરેણ ન સંભવતીત્યતઃ સમ્યક્ત્વાભ્યં ચતુર્થ-  
મધ્યયનં કથયતિ । સમ્યક્ત્વપ્રતિબોધકત્વાદિદમધ્યયનમપિ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।  
યથા ચતુઃશાલમધ્યગતઃ પ્રદીપઃ શાલાચતુષ્ઠયં પ્રદ્યોતયતિ, તદ્વદિદં મધ્યગતમધ્યયનં  
સર્વાધ્યયનસ્થમાચારમવભાસયતિ । પ્રસન્નતસ્તાવત્ સમ્યક્ત્વં નિરૂપ્યતે—

સમશ્ચતિ જ્ઞાનાદિગુણં પ્રાપ્નોતીતિ સમ્યગ્=જીવસ્તસ્ય ભાવઃ સમ્યક્ત્વમ્ । તચ  
તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમ્, તત્ત્વાર્થેષુ સર્વજ્ઞવીતરાગોપદિષ્ટતયા પારમાર્થિકેષુ જીવાજીવાદિ-  
પદાર્થેષુ શ્રદ્ધાનં=રુચિરભિપ્રીતિઃ । ઉક્તશ્ચ—

। આચારાઙ્ગસૂત્રકા સમ્યક્ત્વનામક ચતુર્થ અધ્યયન ।

ઉપાધિરહિત સંયમકા આરાધન, મુનિપનેકા ઔર મોક્ષકા કારણ  
હોતા હૈ, યહ બાત યદ્યપિ પહિલે કહે ગયે ત્રીન અધ્યયનોંમેં અચ્છી  
તરહ સે પ્રકટ કી જા ચુકી હૈ । પરન્તુ વહ સંયમારાધન સમ્યક્ત્વકે વિના  
નહીં હો સકતા હૈ । ઇસલિયે સમ્યક્ત્વ નામકા ચૌથા અધ્યયન કહા  
જાતા હૈ । જૈસે આમને-સામનેકે ચાર મકાનોંકે ચૌક મેં રહ્યા હુઆ  
દીપક ડન ચારોં હી મકાનોંકો પ્રકાશિત કરનેવાલા હોતા હૈ, ઠીક ઇસી  
તરહસે સબ અધ્યયનોંકે મધ્ય મેં રહ્યા હુઆ યહ અધ્યયન મી સમસ્ત  
અધ્યયનોંકે આચાર કા પ્રકાશક હૈ । ઇસલિયે પ્રકરણવશ ડસીકા  
નિરૂપણ કિયા જાતા હૈ ।

જ્ઞાનાદિક ગુણોંકો જો પ્રાપ્ત કરતાં હૈ ડસકા નામ સમ્યક્ હૈ । ઇસ  
અપેક્ષા સે વહ સમ્યક્ જીવસ્વરૂપ હૈ । ડસકા જો ભાવ ડસે સમ્યક્ત્વ

આચારાંગસૂત્રનું સમ્યક્ત્વનામનું ચોથું અધ્યયન.

ઉપાધિરહિત સંયમનું આરાધન મુનિપણનું તથા મોક્ષનું કારણ થાય  
છે, આ વિષય પહેલાં ત્રણ અધ્યયનોમાં સ્પષ્ટ રીતે પ્રકાશિત કરવામાં આવેલ છે;  
પણ આ સંયમારાધન સમ્યક્ત્વ વિના બની શકતું નથી. માટે સમ્યક્ત્વ નામનું  
ચોથું અધ્યયન કહેવામાં આવે છે. જેવી રીતે ચાર મકાનોના ચોકમાં રાખેલ  
એક દીપક ચારે મકાનોને પ્રકાશિત કરે છે તેવી રીતે બધા અધ્યયનોના મધ્યમાં  
સ્થિત આ અધ્યયન બધા અધ્યયનોના આચારનું પ્રકાશક છે. આ માટે પ્રકરણ  
વશ તેનું જ પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે.

જ્ઞાનાદિક ગુણને જે પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ સમ્યક્ છે. તે અપેક્ષાએ  
આ સમ્યક્ જીવસ્વરૂપ છે. એનો જે ભાવ તેને સમ્યક્ત્વ કહે છે. આ સમ્યક્ત્વ  
તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ છે. સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુદ્વારા ભાષિત હોવાથી પારમાર્થિક સત્ય-



“ જિનોક્તતત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । ” ઇતિ ।

જિનોક્તતત્ત્વેષુ જીવાજીવાદિપદાર્થેષુ યા શુદ્ધા=અજ્ઞાનસંશયવિપર્યયનિરાકરણેન નિર્મલા રુચિઃ=શ્રદ્ધાનં સા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

કહતે છે । વહ સમ્યક્ત્વ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ છે । સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુકે દ્વારા કહે હુણ હોનેસે પારમાર્થિક-સત્યસ્વરૂપ જીવ અજીવાદિક પદાર્થોં મેં જો શ્રદ્ધા-રુચિ-પ્રીતિ છે ડસીકા નામ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન છે । કહા મી છે-

“ જિનોક્તતત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ” ઇતિ ।

અર્થાત્—જિનેન્દ્ર ભગવાન્ દ્વારા કહે ગયે તત્ત્વોં મેં જો નિર્દોષ રુચિ-પ્રીતિ છે, ડસીકા નામ સમ્યક્ત્વ છે ।

વિશેષાર્થઃ—સર્વજ્ઞ, વીતરાગ ઓર હિતોપદેશી પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત કિયે ગયે જો જીવ-અજીવ આદિ નો પદાર્થ છે, વે યહાં પર ‘તત્ત્વ’-શબ્દવાચ્ય છે । ‘તત્ત્વ’ શબ્દ કા અર્થ પારમાર્થિક-વાસ્તવિક છે । ‘શ્રદ્ધાન’ શબ્દકા અર્થ રુચિ-દૃઢ વિશ્વાસ-આસ્થા છે । જીવ અજીવાદિક પદાર્થ પ્રભુદ્વારા ઉપદિષ્ટ હોને સે સત્ય-વાસ્તવિક છે । ફલિતાર્થ ડસકા યહી છે—જીવાદિક પદાર્થ વીતરાગ પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત કિયે ગયે છે, ડસી-લિયે વે યથાર્થ-સત્ય તત્ત્વ છે । ડનમેં જો દૃઢ વિશ્વાસ છે ડસીકા નામ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન છે । ડસીકા નામ સમ્યગ્દર્શન છે ।

સ્વરૂપ જીવ અજીવ આદિ પદાર્થોંમાં જે શ્રદ્ધાન-રુચિ પ્રીતિ છે એનું નામ તત્ત્વાર્થ-શ્રદ્ધાન છે. કહ્યું છે—

“ જિનોક્ત તત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ” ઇતિ ।

અર્થાત્—જિનેન્દ્ર ભગવાન દ્વારા જે તત્ત્વો કહેવાયા છે એમાં જે નિર્દોષ રુચિ-પ્રીતિ છે એનું નામ સમ્યક્ત્વ છે.

વિશેષાર્થઃ—સર્વજ્ઞ, વીતરાગ અને હિતોપદેશી પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત જે જીવ-અજીવ આદિ નવ પદાર્થ છે તે અહીંયા તત્ત્વશબ્દવાચ્ય છે. તત્ત્વ-શબ્દનો અર્થ પારમાર્થિક-વાસ્તવિક છે. શ્રદ્ધાન-શબ્દનો અર્થ રુચિ-દૃઢવિશ્વાસ-આસ્થા છે. જીવ અજીવ આદિ પદાર્થ પ્રભુદ્વારા ઉપદિષ્ટ હોવાથી સત્ય-વાસ્તવિક છે. એનો ફલિતાર્થ એ છે કે—જીવાદિક પદાર્થ વીતરાગ પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત કરેલ છે. જેથી તે યથાર્થ-સત્ય તત્ત્વ છે, એમાં જે દૃઢ વિશ્વાસ છે તેનું નામ તત્ત્વાર્થ શ્રદ્ધાન છે. એનું જ નામ સમ્યગ્દર્શન છે.

નનુ યદુચ્યતે—“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યક્ત્વ”-મિતિ; તત્ત્વશ્રદ્ધાનં તથેતિપ્રત્યયઃ, તીર્થકરેણ યથા પ્રતિબોધિતં તથૈવ વસ્તુતો જીવાજીવાદિપદાર્થાનાં સ્વરૂપમિતિ નિશ્ચયપૂર્વિકા પ્રીતિરૂપા રુચિનામ્ની માનસી પરિણતિઃ । ઇયં સ્વલ્પપર્યાપ્તકાઘવસ્થાયાં

રુચિ (પ્રીતિ) કે સાથ જો શુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ દિયા ગયા છે. ઉસકા ભાવ યહી છે કે વહ રુચિ (પ્રીતિ) અજ્ઞાન સંશય ઓર વિપર્યય, ઇન ત્રીન દોષોં સે રહિત હોની ચાહિયે, તવ હી વહ નિર્દોષ રુચિ છે । જિસમેં ઇન અજ્ઞાનાદિકા સદ્ભાવ છે વહ સત્ય રુચિ નહીં, કિન્તુ સદોષ રુચિ છે ।

વિશેષાર્થઃ—પરસ્પર વિરુદ્ધ અનેક કોટિકે સ્પર્શ કરનેવાલે જ્ઞાન કો ‘સંશય’ કહતે હૈં । જૈસે-યહ સ્થાણુ છે કે પુરુષ છે ? । વિપરીત એક કોટિકા નિશ્ચય કરનેવાલા જ્ઞાન ‘વિપર્યય’ કહલાતા હૈં-જૈસે સીપ કો ચાંદી સમજના । યહ કુછ હોગા, એસે પ્રતિભાસકો અજ્ઞાન યા અનધ્યવસાય કહતે હૈં, જૈસે માર્ગ ચલતે હુએ કો તૃણસ્પર્શ વગૈરહ કા જ્ઞાન । યે ત્રીન-અજ્ઞાન, સંશય, વિપર્યય, રુચિકે દૂષણ હૈં । ઇનસે રહિત રુચિ હી સમ્યક્-યથાર્થ રુચિ કહલાતી છે ।

શંકા—“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન સમ્યગ્દર્શન છે” એસા જો સમ્યક્ત્વકા લક્ષણ કહા ગયા છે, વહાં “તથા” ઇસ પ્રકાર કે પ્રત્યય-વિશ્વાસ કા નામ હી શ્રદ્ધાન છે । અર્થાત્-‘તીર્થકર પ્રભુને જીવાદિક પદાર્થોં કા જિસ સ્વરૂપસે પ્રતિપાદન કિયા છે, ઊન જીવાદિક પદાર્થોં કા વૈસા હી સ્વરૂપ છે’ ઇસ પ્રકાર

રૂચિ (પ્રીતિ) ની સાથે જે શુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ આપવામાં આવ્યું છે તેનો ભાવ એ છે કે તે રૂચિ (પ્રીતિ) અજ્ઞાન, સંશય અને વિપર્યય, આ ત્રણ દોષોથી રહિત હોવી જોઈએ. ત્યારેજ તે નિર્દોષ રૂચિ છે, જેમાં આ અજ્ઞાનાદિનો સદ્ભાવ છે તે સત્ય રૂચિ નહીં; પણ સદોષ રૂચિ છે.

વિશેષાર્થઃ—પરસ્પર વિરુદ્ધ અનેક કોટિના (પ્રકારના) સ્પર્શ કરવાવાળા જ્ઞાનને સંશય કહે છે, જેમ-આ સ્થાણુ છે કે પુરુષ છે ? । વિપરીત એક કોટિના નિશ્ચય કરવાવાળા જ્ઞાનને વિપર્યય કહે છે, જેમ-છીપને ચાંદી બાણવી. આ કાંઈક હશે, આવા પ્રતિભાસને અજ્ઞાન અગર અનધ્યવસાય કહે છે, જેમ-માર્ગ પર ચાલવાવાળાને તૃણસ્પર્શ વિગેરેનું જ્ઞાન, આ ત્રણ-અજ્ઞાન, સંશય, વિપર્યય-રૂચિનાં દૂષણો છે. એનાથી રહિત રૂચી જ સમ્યક્-યથાર્થ-રૂચી કહેવાય છે.

શંકા—“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન સમ્યગ્દર્શન છે” એવું જે સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહેવામાં આવે છે ત્યાં “તથા” આવા પ્રકારના પ્રત્યય-વિશ્વાસ-નું નામ જ શ્રદ્ધાન છે. અર્થાત્ ‘તીર્થકર પ્રભુએ જીવાદિક પદાર્થોને જે સ્વરૂપે પ્રતિપાદન કર્યા છે. એ જીવાદિક પદાર્થોના તેવા જ સ્વરૂપ છે’ આવા પ્રકારની નિશ્ચયપૂર્વક જે



नेष्यते, सम्यक्त्वं तु तस्यामपीष्टं, षट्पष्टिसागरोपमरूपायाः साद्यपर्यवसितकालरूपायाश्च तस्योत्कृष्टस्थितेः प्रतिबोधनादिति कथं नागमविरोधः ? किंच-तत्त्वार्थ-श्रद्धानस्य रागात्मकरुचिरूपत्वेन वीतरागे तदभावात् तत्र सम्यक्त्वं कथमुपपद्येत ?—

की निश्चयपूर्वक जो प्रीतिस्वरूप रुचि नाम की मानसिक परिणति है वही तत्त्वार्थ-श्रद्धान है । यह अपर्याप्तावस्था में घटित नहीं होती, परंतु सम्यक्त्व तो वहां पर भी माना गया है । कारण कि कुछ अधिक छासठ ६६ सागर एवं सादि अनन्त उस सम्यक्त्व की उत्कृष्ट स्थिति बतलाई गई है, तब तो आगम से विरोध ही आवेगा ।

अर्थात्—आप तत्त्वार्थश्रद्धान सम्यक्त्व का लक्षण करते हैं । लक्षण के दोष-अव्याप्ति, अतिव्याप्ति और असंभव है । जो लक्षण अपने संपूर्ण लक्ष्य में नहीं घटित होता; वहां अव्याप्ति दोष होता है । जो अपने लक्ष्य में रहते हुए अलक्ष्य में भी रहता है, वहां अतिव्याप्ति दोष होता है । तथा-जिस लक्षण का समन्वय लक्ष्य में नहीं होता, वहां असंभव दोष होता है । यहां प्रकृत में अव्याप्ति दोष होगा । क्योंकि शास्त्रकारों ने क्षायोपशमिक सम्यक्त्व की उत्कृष्ट स्थिति कुछ अधिक ६६ छासठ सागरोपम और क्षायिक सम्यक्त्व की स्थिति सादि और अनन्त मानी है । क्षायिक या क्षायोपशमिक सम्यक्त्व सहित मरण करनेवाले जीव के

प्रीतिस्वरूप इत्थि नामनी मानसिक परिणति છે તે જ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન છે. એ અપર્યાપ્તાવસ્થામાં ઘટિત નથી થતી. પરંતુ સમ્યક્ત્વ તો ત્યાં પણ માનેલ છે. કારણ કે ૬૬ છાસઠ સાગર અંજેરી એવં સાદિ અનંત, એ સમ્યક્ત્વની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહેલી છે ત્યારે તો આગમથી વિરોધ આવશે.

અર્થાત—આપ ‘તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન સમ્યક્ત્વ છે.’ એ પ્રકારે સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહો છો. લક્ષણના દોષ અવ્યાપ્તિ, અતિવ્યાપ્તિ અને અસંભવ છે. જે લક્ષણ પોતાના સમસ્ત લક્ષ્યમાં ઘટિત નથી હોતું, ત્યાં અવ્યાપ્તિ દોષ થાય છે. જે પોતાના લક્ષ્યમાં અને અલક્ષ્યમાં પણ ઘટિત થાય છે ત્યાં અતિવ્યાપ્તિ દોષ થાય છે. અને જે લક્ષણનો સમન્વય લક્ષ્યમાં હોતો જ નથી, ત્યાં અસંભવ દોષ થાય છે. અહીં આ પ્રકૃતમાં અવ્યાપ્તિ-દોષ આવશે, કેમ કે શાસ્ત્રકારોએ ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ૬૬ છાસઠ સાગરોપમ અંજેરી અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ સાદી અને અનંત માનેલી છે. ક્ષાયિક અથવા ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ સહિત મરવાવાળા જીવને



અત્રોચ્યતે—તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યક્ત્વસ્ય કાર્યમ્ । સમ્યક્ત્વં તુ સમ્યગ્દર્શનાપરનામ-  
ધેયો મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યઃ પ્રશમસંવેગાદિલક્ષણઃ શુભ આત્મપરિણામવિશેષઃ ।

અપર્યાપ્તાવસ્થા મેં મી ઉસ ૨ સમ્યક્ત્વં કા સદ્ભાવ માના ગયા હૈ; પરન્તુ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન વહાં નહીં માના ગયા હૈ । આપ તો સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન કહતે હૈ ।

તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન અપર્યાપ્તાવસ્થા કે જીવોં મેં નહીં હોતા; અતઃ વહાં સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ નહીં ઘટેગા । લક્ષ્ય મેં લક્ષણકા નહીં ઘટના હી તો અવ્યાસિ હૈ, સો ઇસ લક્ષણ મેં અવ્યાસિ દોષ અનિવાર્ય હૈ । યદિ આપ કહેંગે કિ હમ અપર્યાપ્તાવસ્થા કે જીવોં મેં સમ્યક્ત્વ નહીં માનતે તો આપકો આગમવિરોધરૂપ દોષ આયેગા । ક્યોંકિ આગમ મેં અપર્યાપ્તાવસ્થા કે જીવોં મેં મી સમ્યક્ત્વ માના ગયા હૈ ।

તથા—સમ્યક્ત્વ કા યહ લક્ષણ રાગાત્મકરુચિરૂપ હોને સે વીતરાગ અવસ્થા મેં ઘટિત નહીં હોતા । કારણ કિ ઉસ અવસ્થામેં રાગાત્મક રુચિ કા સર્વથા અભાવ હૈ । એસી પરિસ્થિતિમેં વહાં સમ્યક્ત્વ કી ઉત્પત્તિ કા નિર્વાહ મી કૈસે હો સકેગા ?

સમાધાન—તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન, યહ સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ નહીં હૈ; કિન્તુ ઉસકા કાર્ય હૈ । સમ્યક્ત્વ, જિસકા દૂસરા નામ સમ્યગ્દર્શન હૈ, એવં જો મિથ્યાત્વ કે ક્ષાયોપશમિકાદિક સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ, તથા જિસકે લક્ષણ પ્રશમ, સંવેગાદિક હૈ, વહ આત્મા કા શુભપરિણામવિશેષ હૈ ।

અપર્યાપ્તાવસ્થામાં પણ તે તે સમ્યક્ત્વનો સદ્ભાવ માનેલ છે; પરન્તુ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન ત્યાં માનવામાં નથી આવેલ. આપ તો સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન કહો છો.

તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન અપર્યાપ્તાવસ્થાના જીવોમાં હોતું નથી, માટે ત્યાં સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ ઘટશે નહિ. લક્ષ્યમાં લક્ષણનો સમન્વય નહિ થવાથી જ અવ્યાસિ થાય છે. માટે આ લક્ષણમાં અવ્યાસિ-દોષ અનિવાર્ય છે. કહાય આપ કહેશો કે અમે અપર્યાપ્તાવસ્થાના જીવોમાં સમ્યક્ત્વ નથી માનતા તો આપને આગમવિરોધરૂપ દોષ લાગશે, કેમ કે આગમમાં અપર્યાપ્તાવસ્થાના જીવોમાં પણ સમ્યક્ત્વ માનેલ છે.

તથા—સમ્યક્ત્વનું એ લક્ષણ રાગાત્મકરુચિરૂપ હોવાથી વીતરાગ અવસ્થામાં ઘટિત નથી થતું, કારણ કે આ અવસ્થામાં રાગાત્મક-રુચિનો સર્વથા અભાવ છે, આવી પરિસ્થિતિમાં ત્યાં સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિનો નિર્વાહ પણ કેવી રીતે થઈ શકે ?

સમાધાન—તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન એ સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ નથી, પણ તેનું કાર્ય છે, સમ્યક્ત્વ જેનું બીજું નામ સમ્યગ્દર્શન છે, અને જે મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થાય છે તથા જેનું લક્ષણ પ્રશમ, સંવેગાદિક છે તે આત્માનું શુભ પરિણામવિશેષ છે.

अत्र मिथ्यात्वशब्देन मिथ्यात्वसप्तकं गृह्यते, तच्चानन्तानुबन्धिकषायचतुष्टयं मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वमोहनीयत्रयं चेति । इह दर्शनमोहनीयभेदसप्तकं मिथ्यात्वमुच्यते । यद्यपि—अनन्तानुबन्धिकषायचतुष्टयं चारित्रमोहनीयस्य भेदस्तथापि मिथ्यात्वक्षयोपशमाद्यवसरे तत्पूर्वं तस्य क्षय उपशमो वाऽवश्यं भवतीति कृत्वा तदपि मिथ्यात्वशब्देन व्यपदिश्यते । एतच्चाग्रे सम्यक्त्वफलप्रकरणे स्फुटीभविष्यति ।

यहां मिथ्यात्व-शब्द से मिथ्यात्वसप्तक का ग्रहण किया गया है । वे ये हैं—अनन्तानुबन्धी कषाय ४ और मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय, एवं सम्यक्त्वमोहनीय ये तीन ३ । ये सात दर्शनमोहनीय के भेद मिथ्यात्व कहे जाते हैं । यद्यपि अनन्तानुबन्धी ४ कषाय चारित्रमोहनीय के भेद हैं, तो भी मिथ्यात्वके क्षायोपशमादिक के अवसर में उसके पहिले उनका क्षय अथवा उपशम अवश्य ही हो जाता है, इसलिये मिथ्यात्व-शब्दसे उन चारों का भी व्यपदेश होता है ।

विशेषार्थः—मिथ्यात्व यह उपलक्षण शब्द है । उपलक्षण का लक्षण है—“स्वबोधकत्वे सति स्वेतरबोधकत्वम्” अर्थात्—जो स्वबोधक होते हुए अपने से इतर का भी बोधक होता है वह उपलक्षण है । इससे सात प्रकृतियों का ग्रहण होता है । वे ७ प्रकृतियां ये हैंः—अनन्तानुबन्धी क्रोध, अनन्तानुबन्धी मान, अनन्तानुबन्धी माया और अनन्तानुबन्धी लोभ, तथा मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय एवं सम्यक्त्वमोहनीय । मोहनीय कर्म के मूल भेद दो हैं—एक दर्शनमोहनीय, दूसरा चारित्रमोहनीय । इनमें दर्शन-

आ ठेकाणु मिथ्यात्व शब्दथी मिथ्यात्वसप्तकनुं ग्रहणु करैल छे । ते ओ छे—अनंतानुबन्धी कषाय बार ४, अने मिथ्यात्व-मोहनीय, मिश्र-मोहनीय, अने सम्यक्त्व-मोहनीय, ओ त्रणु ३, ओ सात दर्शन-मोहनीयना लेहो मिथ्यात्व कहेवाय छे । कहाय अनंतानुबन्धी बार ४ कषाय, चारित्र-मोहनीयना लेहो छे तो पणु मिथ्यात्वना क्षयोपशमादिकना अवसरमां ओना पड़ेलां ओना क्षय अथवा उपशम अवश्य थछे नय छे, तेथी मिथ्यात्व-शब्दथी आ बारनुं व्यपदेश थाय छे ।

विशेषार्थः—मिथ्यात्व ओ उपलक्षणु शब्द छे । उपलक्षणु लक्षणु छे—स्वबोधकत्वे सति स्वेतरबोधकत्वम्, अर्थात्—स्वबोधक होवा छतां ओ पोताथी भीनना पणु बोधक थाय छे ते उपलक्षणु छे । ओथी सात प्रकृतियेनुं ग्रहणु थाय छे । ओ सात प्रकृतियो आ छेः—अनंतानुबन्धी क्रोध, अनंतानुबन्धी मान, अनंतानुबन्धी माया अने अनंतानुबन्धी लोभ, तथा मिथ्यात्व-मोहनीय, मिश्र-मोहनीय अने सम्यक्त्व-मोहनीय । मोहनीय कर्मना भूण लेह ओ छे । ओक दर्शन-मोहनीय, भीने चारित्र-मोहनीय ।

મોહનીય કે ત્રીન ભેદ હૈં-મિથ્યાત્વ (અશુદ્ધાંશ) ૧, મિશ્ર (અર્ધશુદ્ધાંશ) ૨, ઓર સમ્યક્ત્વ (શુદ્ધાંશ) ૩. ઇસ કર્મ કે ઉદય મેં આત્માકા ગુણ સમ્યગ્દર્શન પ્રકટ નહીં હોતા. અર્થાત્ યહ કર્મ આત્માકે સમક્તિ ગુણકા ઘાતક હૈ. ચારિત્રમોહનીયકે અનંતાનુબંધી-ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ, અપ્રત્યાખ્યાન-ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, પ્રત્યાખ્યાન-ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, સંજ્વલન-ક્રોધ, માન, માયા, લોભ; ઇવં નવ નોકષાય-હાસ્ય, રતિ, અરતિ, ભય, શોક, જુગપ્સા, સ્ત્રીવેદ, પુંવેદ ઓર નપુંસકવેદ, યે ૨૫ પચીસ ભેદ હૈં. યહ કર્મ આત્મા કે ચારિત્રગુણ કા ઘાતક હોતા હૈ. ઇસકે ઉદય મેં ન તો સર્વસંયમ કા હી ઉદય હોતા હૈ ઓર ન દેશસંયમ કા હી. શંકાકાર કા યહાં પર યહ કહના હૈ કિ સમ્યગ્દર્શન કી ઉત્પત્તિ મેં દર્શનમોહનીયત્રય કા હી ક્ષયોપશમાદિક કહના ચાહિયે; ક્યોં કિ વહ હી ઇસકા પ્રતિપક્ષી કર્મ હૈ. ચારિત્રમોહનીય કે ભેદ અનંતાનુબંધી-ચતુષ્ટય કા ક્ષયોપશમાદિક ઉસકે સાથ ૨ ક્યોં કહા. વહ તો સિર્ફ આત્મા કે ચારિત્રગુણ કા હી ઘાતક હૈ? ઇસકા યહ સમાધાન હૈ કિ-દર્શનમોહનીય કે ક્ષયોપશમાદિક કે પહિલે હી ઉનકા (કષાયોં કા) ક્ષયોપશમાદિ અવશ્ય હો જાતા હૈ, ઇસકે બિના ઉસકા ક્ષયોપશમ આદિ

એમાં દર્શન-મોહનીયના ત્રણ ભેદ છે—મિથ્યાત્વ (અશુદ્ધાંશ) ૧, મિશ્ર (અર્ધશુદ્ધાંશ) ૨, અને સમ્યક્ત્વ (શુદ્ધાંશ) ૩.

આ કર્મના ઉદયમાં આત્માનો ગુણ-સમ્યગ્દર્શન-પ્રગટ નથી થતું. અર્થાત્ આ કર્મ આત્માના સમક્તિ ગુણનું ઘાતક છે. ચારિત્રમોહનીયના અનંતાનુબંધી-ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ; અપ્રત્યાખ્યાન-ક્રોધ, માન, માયા, લોભ; પ્રત્યાખ્યાન-ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, સંજ્વલન-ક્રોધ-માન-માયા-લોભ અને નવ નોકષાય-હાસ્ય, રતિ, અરતિ, ભય, શોક, જુગપ્સા, સ્ત્રીવેદ, પુંવેદ અને નપુંસકવેદ, એ પચીસ ૨૫ ભેદ છે. આ કર્મ આત્માના ચારિત્રગુણનું ઘાતક છે. આના ઉદયમાં નથી સર્વસંયમનો ઉદય થતો કે નથી દેશસંયમનો. શંકાકારનું અહીંયા એ કહેવાતું છે કે સમ્યગ્દર્શનની ઉત્પત્તિમાં દર્શનમોહનીયત્રયનું ક્ષયોપશમાદિક કહેવું બેઠું એ. કારણ કે તે જ એનું પ્રતિપક્ષી કર્મ છે. ચારિત્રમોહનીયના ભેદ અનંતાનુબંધિચતુષ્ટયના આની સાથેર ક્ષયોપશમાદિક કેમ કહ્યા? એ તો કહ્યા આત્માના ચારિત્રગુણના ઘાતક છે? એનું એ સમાધાન છે કે-દર્શન મોહનીયના ક્ષયોપશમાદિકના પહેલાં જ એનું (કષાયોનું) ક્ષયોપશમાદિ અવશ્ય થઈ જાય છે, આના બિના એનું (મોહનીયનું) ક્ષયોપશમ



ઉક્તઞ્ચ ચાવશ્યકસૂત્રે—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોપસમક્કયસમુત્થે પસમ-  
સંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પળ્લસે ” ઇતિ ।

છાયા—તત્ત્વ સમ્યક્ત્વં પ્રશસ્તસમ્યક્ત્વમોહનીયકર્માનુવેદનોપશમક્ષયસમુત્થઃ  
પ્રશમસંવેગાદિલિઙ્ગઃ શુભઃ આત્મપરિણામઃ પ્રવ્રણ્ણ ઇતિ ।

કાર્યે કારણોપચારાત્ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમપિ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । તથા ચોક્તં—

“ જીવાઈનવપયત્થે, જો જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્દંતે, અયાણમાણે વિ સમ્મત્તં ” ॥ ઇતિ ।

હો હી નહીં સકતા । ઇસકા ખુલાસા આગે સમ્યક્ત્વ કે ફલકે પ્રકરણમેં  
અચ્છી તરહ સે હો જાયગા ।

આવશ્યક સૂત્રમેં યહી વાત કહી હૈ—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોપસમક્કય-  
સમુત્થે પસમસંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પળ્લસે ” ઇતિ । અર્થાત્—  
વહ સમ્યગ્દર્શન પ્રશસ્ત સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે અનુવેદન કે ઉપશમ  
ઔર ક્ષય સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ, તથા પ્રશમસંવેગાદિક લિઙ્ગોં સે જાના  
જાતા હૈ, ંવં યહ આત્મા કા શુભ પરિણામ કહા ગયા હૈ । તત્ત્વા-  
ર્થશ્રદ્ધાન સમ્યક્ત્વકા કાર્ય હૈ, યહ ઉપર કહા જા ચુકા હૈ ઔર સમ્ય-  
ક્ત્વ ઉસકા કારણ હૈ । અતઃ કાર્ય મેં કારણ કે ઉપચાર-આરોપ સે  
કાર્ય-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન મી સમ્યક્ત્વરૂપ સે કહ દિયા જાતા હૈ । અન્યત્ર  
મી ંસા હી કહા હૈ—

આદિ થઈ જ શકતું નથી. ંનેના ખુલાસા આગળ સમ્યક્ત્વના ડ્રણના પ્રકરણમાં  
ઘણી જ સરલ રીતે થઈ જશે.

આવશ્યકસૂત્રમાં આ વાત કહી છે—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોપસમક્કયસમુત્થે પસમ-  
સંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પળ્લસે ” ઇતિ ।

અર્થાત્—આ સમ્યગ્દર્શન પ્રશસ્ત સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના અનુવેદનના  
ઉપશમ ંને ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે; તથા પ્રશમસંવેગાદિક લિંગોથી જાણવામાં  
આવે છે; ંને તે આત્માના શુભ પરિણામ કહેવામાં આવે છે. તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન  
સમ્યક્ત્વનું કાર્ય છે, ં ઉપર કહેવામાં આવેલ છે ંને સમ્યક્ત્વ ંનું કારણ  
છે, ંથી કાર્યમાં કારણના ઉપચાર-આરોપથી કાર્ય-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન પણ સમ્યક્ત્વ  
રૂપથી કહેવામાં આવે છે. બીજી જગ્યાએ ંમ કહેવામાં આવેલ છે—

અસ્ય ચ લક્ષણસ્ય મનરહિતેષુ સિદ્ધાદિષ્વપિ સમન્વયો ભવતિ ।

યદ્વા-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમિતિ લક્ષણં સરાગસમ્યક્ત્વસ્યૈવ, અત એવ સ્થાનાઙ્ગસૂત્રે પ્રોક્તમ્-

“ દસવિદ્દે સરાગસમ્મત્તદંસણે પણ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરુદ્ધં, આણારુદ્ધં સુત્તવીયરુદ્ધમેવ ।

અભિગમવિત્થારુદ્ધં, કિરિયા-સંખેવ-ધમ્મરુદ્ધં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

એવં ચાપર્યાપ્તકાદૌ વીતરાગે ચ રુચ્યભાવેऽપિ ન ક્ષતિઃ ।

“ જીવાહનવપયત્થે, જે જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્દહંતે, અચાણમાણે વિ સમ્મત્તં ॥ ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—જીવાદિક નવ પદાર્થોંનો જો જાનતા હૈં ઉસકો સમ્યક્ત્વ હોતા હૈં । તથા નહીં જાનને પર ભીં ઉનકા ભાવ સે શ્રદ્ધાન કરનેવાલે કે ભીં સમ્યક્ત્વ કહા ગયા હૈં । ઇસ કથન સે ઇસ લક્ષણકા સમન્વય મનરહિત સિદ્ધાદિકોં મેં ભીં હો જાતા હૈં ।

અથવા—“ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન ” યહ લક્ષણ સરાગ સમ્યક્ત્વકા હીં સમક્ષના ચાહિયે, ઇસલિયે સ્થાનાઙ્ગસૂત્રમેં “ દસવિદ્દે ” ઇત્યાદિ દસ પ્રકાર કા સરાગ સમ્યગ્દર્શન કહા ગયા હૈં । જૈસે—

“ દસવિદ્દે સરાગસમ્મત્તદંસણે પણ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરુદ્ધં, આણારુદ્ધં સુત્તવીયરુદ્ધમેવ ।

અભિગમવિત્થારુદ્ધં, કિરિયા-સંખેવ-ધમ્મરુદ્ધં ” ॥ ૧ ॥

સરાગસમ્યગ્દર્શનકે દસ પ્રકાર યે હૈં—(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપ-

“ જીવાહનવપયત્થે, જે જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્દહંતે, અચાણમાણે વિ સમ્મત્તં ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—જીવાદિક નવ પદાર્થોંને જે જાણે છે તેને સમ્યક્ત્વ થાય છે. અને ન જાણવા છતાં પણ ભાવથી તેનું શ્રદ્ધાન કરવાવાળાને પણ સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે. આ વાક્યથી આ લક્ષણને સમન્વય મનરહિત સિદ્ધાદિકોંમાં પણ થાય છે.

અથવા—“ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન ” એ લક્ષણ સમ્યક્ત્વનું જ સમજવું જોઈએ; માટે સ્થાનાંશસૂત્રમાં “ દસવિદ્દે ” ઇત્યાદિ દશ પ્રકારના સરાગ સમ્યગ્દર્શન કહ્યા છે. જેમ—

“ દસવિદ્દે સરાગસમ્મત્તદંસણે પણ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરુદ્ધં, આણારુદ્ધં સુત્ત-વીય-રુદ્ધમેવ ।

અભિગમ-વિત્થારુદ્ધં, કિરિયા-સંખેવ-ધમ્મરુદ્ધં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

સરાગ સમ્યગ્દર્શનના દશ પ્રકાર આ છે—(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપ-

वस्तुतस्तु-इदं सम्यक्त्वलक्षणं न तत्स्वरूपं, किंतु तल्लिङ्गं तद्व्यञ्जकमिति यावत्। व्यञ्ज्यभूतं सम्यक्त्वं हि मिथ्यात्वक्षयोपशमादिजन्यं शुद्धात्मपरिणामरूपं परमार्थ-तोऽनाख्येयं स्वानुभवगम्यमेव ।

यथा वह्नियुक्तस्य धूमस्यासद्भावेऽपि संतप्तायोगोलके वह्निरस्ति, तथा तत्त्वार्थाभिरुच्यभावेऽपि आत्मपरिणामरूपसम्यक्त्वमस्त्येव । अत एवोत्तराध्ययनसूत्रे प्रोक्तम् ।

देशरुचि, (३) आज्ञारुचि, (४) सूत्ररुचि, (५) बीजरुचि, (६) अभिगमरुचि, (७) विस्ताररुचि, (८) क्रियारुचि, (९) संक्षेपरुचि, १० धर्मरुचि ॥

इस अपेक्षासे अपर्याप्त अवस्था एवं वीतरागदशा में रागात्मक रुचिका अभाव होने पर भी उसके सद्भाव में किसी भी प्रकारकी क्षति नहीं आती ।

यथार्थ में तो यह सम्यक्त्व का लक्षण-सम्यक्त्व का स्वरूप-नहीं है; किन्तु उसका व्यञ्जक एक लिङ्ग है । जो लिङ्ग होता है वह अपने लिङ्गी का बोधक या व्यञ्जक हुआ करता है । मिथ्यात्वके क्षयोपशमादिक से उत्पन्न होनेवाला, तथा शुद्ध आत्मपरिणामस्वरूप वह सम्यक्त्व तो वास्तवमें अनाख्येय-वचनके अगोचर ही है । जैसे-अग्निका अभिव्यञ्जक धूम हुआ करता है, परन्तु तप्त अयोगोलक (लोहे के पिण्ड) में उसके अभाव में भी अग्निका सद्भाव रहता है । उसी तरह से तत्त्वार्थश्रद्धान के अभाव में भी आत्मपरिणामस्वरूप सम्यक्त्वका सद्भाव सिद्धादिकों में रहता ही है । इसलिये उत्तराध्ययन सूत्र (अध्य० २८) में कहा है-

देशइयि, (३) आज्ञाइयि, (४) सूत्रइयि, (५) बीजइयि, (६) अभिगमइयि, (७) विस्तारइयि, (८) क्रियाइयि, (९) संक्षेपइयि, (१०) धर्मइयि ।

आ अपेक्षाधी अपर्याप्त अवस्था तेमज् वीतराग दशाभां रागात्मक इयिने अभाव होवा छतां पणु तेना सद्भावभां डोछ पणु प्रकारे क्षति आवती नथी ।

यथार्थभां तो आ सम्यक्त्वनुं लक्षण-सम्यक्त्वनुं स्वरूप-नथी, पणु तेनुं व्यञ्जक ओक लिङ्ग छे । जे लिङ्ग थाय छे ते पोताना लिङ्गीना ओधक अगर व्यञ्जक थया करे छे । मिथ्यात्वना क्षयोपशमादिकधी उत्पन्न थवावाला, तथा शुद्ध आत्मपरिणामस्वरूप ओ सम्यक्त्व तो वास्तवभां अनाख्येय-वचननुं अगोचर छे, जेम अग्निने अभिव्यञ्जक धूम थया करे छे, परन्तु तप्त अयोगोलक (लोडना पिंड)भां ओना अभावभां पणु अग्निने सद्भाव रहे छे । ओवी रीते तत्त्वार्थश्रद्धानना अभावभां पणु आत्मपरिणामस्वरूप सम्यक्त्वने सद्भाव सिद्धादिकेभां पणु रहे छे । तेथी उत्तराध्ययन सूत्र अध्य० २८ भां कह्युं छे-



“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તહા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય, એયં જીવસ્સ લક્ખણં ” ॥૧॥ ઇતિ ।

અત્ર જ્ઞાનાદિકં જીવસ્વરૂપવ્યજ્ઞકરૂપં જીવલક્ષણમુક્તં, તેન જ્ઞાનાદીનામન-  
ભિવ્યક્તાવપિ પૃથિવ્યાદિષુ જીવસદ્ભાવઃ । શુદ્ધાત્મપરિણામરૂપં સમ્યક્ત્વં નાન્યપ્ર-  
માણવિષયસ્તસ્માત્ સ્વાનુભવગમ્યમેવેતિ નિર્ણયિતે ।

एतच्चात्रापि पञ्चमाध्ययने शुद्धात्मस्वरूपं प्रतिबोधतया भगवता वक्ष्यते—

“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તહા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય, એયં જીવસ્સ લક્ખણં ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, તપ તથા વીર્યં એવં ઉપયોગ, એ જીવકે  
લક્ષણ હૈં ।

इस गाथा में ज्ञानादिकों को जीवस्वरूपादिव्यञ्जक जीवलक्षण कहा है, इससे पृथिव्यादिक एकेन्द्रिय जीवों में ज्ञानादिककी स्पष्टतः अभिव्यक्ति-प्रकटता नहीं प्रतीत होने पर भी वहां पर जीवत्वका सद्भाव सिद्ध होता है । सम्यक्त्व जो शुद्ध आत्मपरिणामस्वरूप है और जिसे अनाख्येय-वचनअगोचर-कहा गया है उसका कारण यही है कि वह अन्य किसी भी प्रमाण का विषय नहीं होता है । इसीलिये तो वह स्वानुभवगम्य कहा जाता है । यही बात आगे इसी शास्त्रके पञ्चमाध्ययन में शुद्ध आत्मस्वरूपका कथन करते समय भगवान स्वयं कहेंगे । जैसे—

“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તહા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય, એયં જીવસ્સ લક્ખણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, તપ તથા વીર્યં અને ઉપયોગ એ જીવના લક્ષણ છે.  
આ ગાથામાં જ્ઞાનાદિને જીવસ્વરૂપાભિવ્યજ્ઞક જીવલક્ષણ કહે છે. એથી  
પૃથિવી આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં જ્ઞાનાદિકની સ્પષ્ટતઃ અભિવ્યક્તિ પ્રગટ નેવામાં  
આવતી નથી તો પણ આ ઠેકાણે જીવને સદ્ભાવ સિદ્ધ થાય છે. સમ્યક્ત્વ જે  
શુદ્ધ આત્મપરિણામસ્વરૂપ છે અને જેને અનાખ્યેય-વચનઅગોચર કહ્યું છે,  
એનું કારણ એ છે કે તે બીજા કોઈ પ્રમાણનો વિષય બનતો નથી, તેથી તો  
તે સ્વાનુભવગમ્ય કહેવાય છે. આ વાત આગળ આ શાસ્ત્રના પાંચમા અધ્યયનમાં  
શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપનું કથન કરતી વખત ભગવાન સ્વયં કહેશે. જેમ—

“ સઘ્વે સરા ણિયદંતિ તક્કા જત્થ ણ વિજ્ઞહિ, મઈ તત્થ ણ ગાહિઆ ” ઇત્યાદિ ।  
છાયા-“ સર્વે સ્વરા નિવર્તન્તે, તર્કા યત્ર ન વિદ્યતે, મતિસ્તત્ર ન ગ્રાહિતા ” ઇત્યાદિ ।  
સ્વાનુભવવિષયત્વેઽપિ સમ્યક્ત્વસ્યેશુક્ષીરાદિરસમાધુર્યવિશેષાણામિવ વાગ્વિષય-  
ત્વાઽભાવાદનાસ્થેયત્વમ્ । તથા ચોક્તમ્—

“ ઇશુક્ષીરગુડાદીનાં માધુર્યસ્યાન્તરં મહત્ ।  
તથાપિ ન તદાસ્થાતું સરસ્વત્યાપિ પાર્યતે ” ॥ ૨ ॥

“ સઘ્વે સરા ણિયદંતિ તક્કા જત્થ ણ વિજ્ઞહિ, મઈ તત્થ ણ ગાહિઆ ” ઇત્યાદિ ।  
સમસ્ત સ્વરોંકી વહાં પર નિવૃત્તિ હોતી હૈ, તર્ક ભી વહાં પ્રવેશ  
નહીં કર સકતા હૈ, એવં બુદ્ધિ કે ભી વહ અગમ્ય હૈ । ઇત્યાદિ ।

શુદ્ધ સમ્યક્ત્વ કો જો વચનાતીત એવં સ્વાનુભવગમ્ય કહા હૈ વહ  
હસ પ્રકાર સે-જૈસે-ઇશુ- ( ગન્ના ) ઓર દુગ્ધાદિકકી મધુરતા ઉપ-  
ભોક્તા કે હી અનુભવગમ્ય હોતી હૈ । ડસસે યદિ કોઈ યહ પૂછે કિ  
ગન્ના કૈસા મીઠા હૈ ? દૂધ કી મધુરતા કૈસી હૈ ? , તો વહ હસ વાતકો  
વચન સે નહીં કહ સકતા, વહ તો ડનકી મધુરતા અપને નિજી અનુભવ  
સે હી જાનતા હૈ । યહી વાત અન્યત્ર ભી કહી હૈ ।

“ ઇશુ-ક્ષીર-ગુડાદીનાં, માધુર્યસ્યાન્તરં મહત્ ।  
તથાપિ ન તદાસ્થાતું, સરસ્વત્યાપિ પાર્યતે ” ॥ ૧ ॥

યદ્યપિ ગન્ના, દૂધ ઓર ગુડ આદિ મિષ્ટ પદાર્થોં કી મધુરતા મેં  
બહુત હી અન્તર હૈ, તો ભી ડનકે ડસ અન્તર કો સરસ્વતી ભી નહીં  
કહ સકતી ॥ ૧ ॥

“ સઘ્વે સરા ણિયદંતિ તક્કા જત્થ ણ વિજ્ઞહિ. મઈ તત્થ ણ ગાહિઆ ” ઇત્યાદિ.  
સમસ્ત સ્વરોંની જ્યાં નિવૃત્તિ થઈ જાય છે, ત્યાં તર્ક પણ પ્રવેશ કરી  
શકતો નથી. તેમ જ બુદ્ધિથી પણ તે અગમ્ય છે. ઇત્યાદિ. શુદ્ધ સમ્યક્ત્વને  
જે વચનાતીત અને સ્વાનુભવગમ્ય કહેલ છે તે આ પ્રકારે કે જેવી રીતે ઇશુ  
( શેરડી ) અને દુગ્ધાદિકની મધુરતા ઉપભોક્તાથી અનુભવગમ્ય હોય છે. કદાચ  
કોઈ તેને પૂછે કે શેરડી કેવી મીઠી છે ? દૂધની મધુરતા કેવી છે ? , તો તે આ વાતને  
વચનથી કહી શકશે નહિ. તે તો તેની મધુરતાને પોતાના નિજ અનુભવથી જ જાણે  
છે. આ વાત બીજી જગ્યાએ પણ કહેવામાં આવી છે—

“ ઇશુ-ક્ષીર-ગુડાદીનાં, માધુર્યસ્યાન્તરં મહત્ ।  
તથાપિ ન તદાસ્થાતું, સરસ્વત્યાપિ પાર્યતે ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

જે કે-શેરડી, દૂધ અને ગોળ આદિ મિષ્ટ પદાર્થોંની મધુરતામાં ઘણો જ  
ભેદ છે તો પણ એ ભેદને સરસ્વતી પણ કહી શકતી નથી.

સમ્યક્ત્વભેદઃ—સમ્યક્ત્વં દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધમ્ । તત્ર દ્રવ્યતઃ સમ્યક્ત્વં વિશોધિતા મિથ્યાત્વપુદ્ગલા એવ । વિશોધિતા હિ મિથ્યાત્વપુદ્ગલા અતિસ્વચ્છ-સૂક્ષ્મવસ્ત્રમિવ દૃષ્ટેરધ્યવસાયાત્મકસ્ય સમ્યક્ત્વસ્યાઽઽવરકા ન ભવન્તિ, તસ્માત્ તત્ર સમ્યક્ત્વોપચારઃ । ભાવતસ્તુ-મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યઃ શુભ આત્મપરિણામવિશેષઃ ।

### સમ્યક્ત્વકે ભેદ—

સમ્યક્ત્વ દો પ્રકાર કા હૈ—(૧) દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ, (૨) ભાવ-સમ્યક્ત્વ મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિ કે જો વિશુદ્ધ પુદ્ગલ હૈં વે દ્રવ્યસમ્યક્ત્વ હૈ । યે વિશુદ્ધ મિથ્યાત્વ કે પુદ્ગલ, જિસ તરહ સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર દૃષ્ટિકા રોધક નહીં હોતા ઉસી તરહ અધ્યવસાયસ્વરૂપ સમ્યક્ત્વ કે પ્રતિબન્ધક નહીં હોતે । અર્થાત્ જૈસે સૂક્ષ્મવસ્ત્ર દૃષ્ટિકા પ્રતિબન્ધક નહીં હોતા, ઠીક હસી પ્રકાર સે વહ મિથ્યાત્વ કા શુદ્ધ પુંજ સમ્યક્દર્શનરૂપ દૃષ્ટિકા રોધક નહીં હોતા । હસ કારણ ઉસે ઉપચાર સે સમ્યક્ત્વ કહા ગયા હૈ । મિથ્યાત્વ કર્મ કે ક્ષયોપશમાદિક ઉત્પન્ન હુઆ આત્માકા શુભ પરિણામ ભાવ-સમ્યક્ત્વ હૈ । અન્ય પ્રકાર સે ખી સમ્યક્ત્વ દો પ્રકાર કા હૈ—(૧) નૈશ્ચ-યિક-સમ્યક્ત્વ, (૨) વ્યાવહારિક-સમ્યક્ત્વ । એક પૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ, દૂસરા અપૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ । એક નૈસર્ગિક ઓર દૂસરા આધિગમિક સમ્યક્ત્વ ।

### સમ્યક્ત્વના ભેદ—

સમ્યક્ત્વ બે પ્રકારનું છે. (૧) દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ (૨) ભાવ-સમ્યક્ત્વ, મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિના જે વિશુદ્ધ પુદ્ગલ છે તે દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ છે. જેવી રીતે સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર દૃષ્ટિનું રોધક નથી થતું તેવી રીતે એ વિશુદ્ધ મિથ્યાત્વના પુદ્ગલ અધ્યવસાય-સ્વરૂપ સમ્યક્ત્વનાં પ્રતિબન્ધક નથી થતાં. અર્થાત્-જેવી રીતે સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર દૃષ્ટિનું પ્રતિબન્ધક નથી થતું, ઠીક આ પ્રકારથી તે મિથ્યાત્વના વિશુદ્ધ પુદ્ગલ પુંજ સમ્યક્દર્શનરૂપ દૃષ્ટિનાં રોધક નથી થતાં. આ કારણે તેને ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવે છે. મિથ્યાત્વ કર્મના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થયેલા આત્માના શુભ પરિણામ ભાવ-સમ્યક્ત્વ છે. બીજા પ્રકારે પણ સમ્યક્ત્વ બે પ્રકારના છે (૧) નૈશ્ચયિક-સમ્યક્ત્વ (૨) વ્યાવહારિક-સમ્યક્ત્વ, એક પૌદ્ગલિક સમ્યક્ત્વ, બીજું અપૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ, એક નિસર્ગ અને બીજું અધિગમ-સમ્યક્ત્વ.



પ્રકારાન્તરૈરપિ સમ્યક્ત્વં દ્વિવિધમ્, યથા-નૈશ્વર્યિક-વ્યાવહારિકભેદાદ્ દ્વિ-  
વિધમ્, પૌદ્ગલિકાપૌદ્ગલિકભેદાદ્ દ્વિવિધમ્, નૈસર્ગિકાધિગમિકભેદાદ્ દ્વિવિધમિતિ ।

તત્ર મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યં શુદ્ધાત્મપરિણામવિશેષરૂપં નૈશ્વર્યિકં સમ્યક્ત્વમ્ ।  
વ્યાવહારિકં તુ કુદેવકુગુરુકુધર્મપરિત્યાગપૂર્વકં નિશ્ચિતરૂપેણ સુદેવસુગુરુસુધર્મસ્વીકરણં  
રુચિરૂપં તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનાદિકમપિ ।

તથા—અપનીતમિથ્યાત્વસ્વભાવસમ્યક્ત્વપુઞ્જગતપુદ્ગલવેદનસમુત્થં ક્ષાયોપશ-  
મિકં વેદકં ચ પૌદ્ગલિકં સમ્યક્ત્વમ્ । અપૌદ્ગલિકં તુ પુદ્ગલવેદનવર્જિતં કેવલજીવ-  
પરિણામરૂપં ક્ષાયિકમૌપશમિકં ચ । નૈસર્ગિકમાધિગમિકં ચ સમ્યક્ત્વં પ્રથમાધ્યયને  
તૃતીયોદ્દેશે પ્રાગેવ વર્ણિતમ્ ।

ભાવ-સમ્યક્ત્વ કા જો લક્ષણ કહા હૈ વહી નૈશ્વર્યિક-સમ્યક્ત્વ કા  
સ્વરૂપ હૈ । અર્થાત્ મિથ્યાત્વકર્મ કે ક્ષયોપશમાદિક સે ઉત્પન્ન હુઆ  
આત્મા કા શુભ અધ્યવસાયવિશેષ હી નૈશ્વર્યિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । કુદેવ,  
કુગુરુ ઓર કુધર્મ કા પરિહાર-ત્યાગ-પૂર્વક નિશ્ચિતરૂપ સે સુદેવ, સુગુરુ  
ઓર સુધર્મ કા સ્વીકાર કરના, તથા રુચિરૂપ સે તત્ત્વાર્થ કા શ્રદ્ધાન  
કરના આદિ વ્યવહાર-સમ્યક્ત્વ હૈ । હસી પ્રકાર મિથ્યાત્વ સ્વભાવ જિસ  
સે દૂર હો ચુકા હૈ એસા જો સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કા પુંજ હૈ ઉસકે ખીતર રહે  
હુઅ પુદ્ગલોં કે વેદનસે ઉત્પન્ન હુઆ જો ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ એવં વેદક-  
સમ્યક્ત્વ હૈ વહ પૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । ઉસ પુદ્ગલ કે વેદન સે રહિત  
કેવલ જીવ કે પરિણામસ્વરૂપ જો ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ ઓર ઔપશમિક  
સમ્યક્ત્વ હૈ, વહ અપૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । નૈસર્ગિક ઓર આધિગમિક  
સમ્યક્ત્વકા વર્ણન પ્રથમ અધ્યયન કે તીસરે ઉદ્દેશ મેં કિયા જા ચુકા હૈ ।

ભાવ-સમ્યક્ત્વનું જે લક્ષણ કહ્યું છે તે નૈશ્વર્યિક-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ છે.  
અર્થાત્ મિથ્યાત્વ કર્મના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થયેલા આત્માનું શુભ અધ્ય-  
વસાયવિશેષ જ નૈશ્વર્યિક-સમ્યક્ત્વ છે. કુદેવ, કુગુરુ અને કુધર્મના પરિહાર-  
ત્યાગ-પૂર્વક નિશ્ચિતરૂપથી સુદેવ, સુગુરુ અને સુધર્મનો સ્વીકાર કરવો, તથા રૂચિ-  
રૂપથી તત્ત્વાર્થનું શ્રદ્ધાન કરવું આદિ વ્યવહાર-સમ્યક્ત્વ છે. આ પ્રકારે મિથ્યાત્વ  
સ્વભાવ જેનાથી દૂર થઈ ગયેલ છે એવા જે સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિના પુંજ છે એની અંદર  
રહેલા પુદ્ગલોના વેદનથી ઉત્પન્ન થયેલા જે ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ તેમજ વેદક-  
સમ્યક્ત્વ છે તે પૌદ્ગલિક સમ્યક્ત્વ છે. એ પુદ્ગલના વેદનથી રહિત કેવલ જીવના  
પરિણામસ્વરૂપ જે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ અને ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે આ અપૌદ્ગલિક  
સમ્યક્ત્વ છે. નિર્સર્ગ અને અધિગમ સમ્યક્ત્વનું વર્ણન પ્રથમ અધ્યયનના ત્રીજા  
ઉદ્દેશમાં કરવામાં આવેલ છે.

પ્રકારાન્તરેણ સમ્યક્ત્વં દશથા, તદ્યથા-(૧) ઔપશમિક-(૨) ક્ષાયિક-(૩) ક્ષાયોપશમિક-(૪) સાસ્વાદન-(૫) વેદકભેદાત્ પञ्चविधम् । તત્ર પ્રત્યેકં નૈસર્ગિકાધિગમિકભેદાદ્ દ્વૈવિધ્યે દશવિધત્વં ભવતિ ।

(૧) અનન્તાનુબન્ધિકપાયચતુષ્ટયોપશમાનન્તરં મિથ્યાત્વ-મિશ્ર-સમ્યક્ત્વ-મોહનીયકર્મણાં સર્વથોપશમાજ્ઞાતો જીવસ્ય તત્ત્વરુચિરૂપઃ શુભપરિણામઃ ઔપશમિકં સમ્યક્ત્વમ્ । એતદ્ધોપશમશ્રેણિપ્રતિપન્નસ્ય જીવસ્ય ભવતિ ।

(૨) તેષાં સર્વથા ક્ષયેણ નિર્વૃત્તં જીવસ્ય શુભપરિણામરૂપં ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વમ્ ।

(૩) ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વં પ્રોચ્યતે—અનન્તાનુબન્ધિકપાયચતુષ્ટય-

અન્ય પ્રકાર સે સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકાર કા મી કહા ગયા હૈ, જૈસે-(૧) ઔપશમિક, (૨) ક્ષાયિક, (૩) ક્ષાયોપશમિક, (૪) સાસ્વાદન, ઔર (૫) વેદક । યે પાંચો હી નિસર્ગ ઔર અધિગમ કે ભેદ સે દો દો પ્રકારકે હોતે હૈ, ઇસ પ્રકાર સમ્યક્ત્વ કે દશ ભેદ હો જાતે હૈ ।

(૧) અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધ, માન, માયા ઔર લોભ, ઇન ચાર કષાયોં કે ઉપશમ ( સત્તા મેં સ્થિત રહને )કે વાદ મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્ર-મોહનીય એવં સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે સર્વથા ઉપશમ સે ઉત્પન્ન હુઆ જો તત્ત્વરુચિરૂપ જીવકા શુભ પરિણામવિશેષ હૈ વહ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ ઉપશમ શ્રેણિવાલે જીવ કે હોતા હૈ ? ।

(૨) અનન્તાનુબન્ધી આદિ (૭) સાત પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય સે જો જીવ કો શુભ પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હૈ ૨ ।

(૩) ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ ઇસ પ્રકાર હૈ--

મીના પ્રકારે સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકારના પાણુ કહેવામાં આવે છે. જેમ-(૧) ઔપશમિક, (૨) ક્ષાયિક, (૩) ક્ષાયોપશમિક, (૪) સાસ્વાદન, અને (૫) વેદક. એ પાંચે નિસર્ગ અને અધિગમના ભેદથી બે બે પ્રકારના છે. એ રીતે સમ્યક્ત્વના દશ ભેદ થઈ જાય છે.

(૧) અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધ માન માયા અને લોભ, એ ચાર કષાયોના ઉપશમ ( સત્તામાં સ્થિત રહેવું ) પછી મિથ્યાત્વ મોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વ મોહનીય કર્મોના સર્વથા ઉપશમથી ઉત્પન્ન થયેલાં જે તત્ત્વરુચિરૂપ જીવના શુભ પરિણામવિશેષ છે તે ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે. આ સમ્યક્ત્વ ઉપશમ શ્રેણીવાળા જીવને થાય છે (૧).

(૨) અનન્તાનુબન્ધી આદિ ૭ સાત પ્રકૃતિયોના સર્વથા ક્ષયથી જે જીવને શુભ પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ છે (૨).

(૩) ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વના લક્ષણ આ પ્રકારે છે--

ક્ષયાન્તરં મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મણાં ક્ષયોપશમાત્ સમ્યક્ત્વમોહનીયકર્મણામુદયાચ્ચ સંજાત આત્મપરિણામઃ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વમ્ । તન્નેદમવગન્તવ્યમ્—યદુદીર્ણમુદય-માગતં મિથ્યાત્વમોહનીયં કર્મ, તદ્વિ વિપાકોદયેન વેદિતત્વાત્ ક્ષયં પ્રાપ્તમ્, યચ્ચ શેષસત્તાયામનુદિતં વર્તેતે, તદુપશાન્તમ્ । ઉપશાન્તં નામ—અનુદયાવસ્થાપન્નમ્ । તત્ર—મિથ્યાત્વમિશ્રપુઝાવાશ્રિત્યાનુદયાવસ્થાપન્નં સમ્યક્ત્વપુઝમાશ્રિત્ય તુ અધિકાંશ-તયા ઉદીર્ણાવસ્થાપન્નમ્ । તદેવમુદિતસ્ય મિથ્યાત્વસ્ય ક્ષયેણાનુદિતસ્ય ચોપશમેન સમ્ય-ત્વકર્મપુદ્ગલાનાં કિયતાશ્ચિદ્વેદનેન ચ નિર્વૃત્તં=નિષ્પન્નં ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

અનન્તાનુબન્ધી ચાર કષાયોં કે ક્ષય કે અનન્તર, મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે, એવં સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે ઉદય સે જો આત્મા કા પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ હૈ, અર્થાત્ હસ સમ્યક્ત્વમેં મિથ્યાત્વ કે કુછ ભાગકા ક્ષય હો જાતા હૈ ઓર કુછ ભાગકા ઉપશમ રહતા હૈ, વહ હસ પ્રકાર સે કિ—મિથ્યાત્વકે જો સર્વઘાતિસ્પર્દક હૈં ડનકા તો ઉદયભાવી ક્ષય (ઉદય મેં આયે હુએ સર્વઘાતિસ્પર્દકોં કા વિના ફલ દિયે હી ધિર જાના) હો જાતા હૈ, એવં ડન્હીં કે આગામી કાલમેં ઉદય આનેવાલે નિષેકોં (કર્મ પુદ્ગલોંકે રચનાવિશેષોં) કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહતા હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિ જો દેશઘાતી હૈ ડસકા યહાં પર ઉદય રહતા હૈ, અતઃ યહાં પર મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કા જિતના મી અંશ ઉદય મેં આયા હૈ, વહ તો વિપાકરૂપ ઉદય સે વેદ લિયા ગયા હૈ, હસલિયે ડતને ભાગ કા તો ક્ષય હો ચુકા હૈ, એવં જો અવશિષ્ટ અવેદિત ભાગ હૈ કિ જો અમી તક

અનંતાનુબંધી ચાર કષાયોના ક્ષયના અનન્તર મિથ્યાત્વ-મોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમથી અને સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના ઉદયથી જે આત્માનો પરિણામ-ભાવ-ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે. અર્થાત્ આ સમ્યક્ત્વમાં મિથ્યાત્વના કોઈ ભાગનો ક્ષય થઈ જાય છે અને કોઈ ભાગનો ઉપશમ રહે છે. તે એ પ્રકારથી કે મિથ્યાત્વના જે સર્વઘાતી સ્પર્દક છે તેનો તો ઉદય-ભાવી ક્ષય (ઉદયાગત સર્વઘાતિ સ્પર્દકોતું ક્ષય આપ્યા વિના તુટી જવું) થઈ જાય છે અને એના આગામી કાળમાં ઉદય આવવાવાળા નિષેકો (કર્મ પુદ્ગલોના રચના વિશેષો) નો સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહે છે અને સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ જે દેશઘાતી છે એનો આંહી ઉદય રહે છે, એટલે આંહીયા મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મના જેટલો પણ અંશ ઉદયમાં આવ્યો તે તો વિપાકરૂપ ઉદયથી વેદવામાં આવેલ છે જેથી એટલા ભાગનો તો ક્ષય થઈ ગયેલ છે. અને જે અવશિષ્ટ અવેદિત ભાગ છે



આત્મપરિણામરૂપસ્ય સમ્યક્ત્વસ્યાનાવરકત્વાદયં વિશોધિતપુદ્ગલપુઞ્જોઽપ્યુપ-  
ચારતઃ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । સમ્યક્ત્વપુદ્ગલવેદનસમુદ્ભૂતત્વાદિદં સમ્યક્ત્વં પૌદ્ગલિકમ્ ।

ઉદય મેં નહીં આયા છે-સિર્ફ સત્તા મેં હી બેઠા હુઆ છે, બસ इसीका नाम सदवस्थारूप उपशम है, इसीको अनुदित=अनुदय अवस्था भी कहते हैं । यहां पर जो मिथ्यात्व की अनुदयावस्था कही गई है वह मिथ्यात्वके कुछ भाग की तथा मिश्रपुंजकी अपेक्षा को लेकर ही कही गई है, क्योंकि इनका यहां पर उदय नहीं है तथा सમ્યક્त्वप्रकृतिका ही कितनेक अंश से उदय है । इसप्रकार उदित मिथ्यात्व के क्षय से और अनुदित उसी मिथ्यात्व के उपशम से और कितनेक सમ્યक्त्व-कर्मके पुद्गलों के वेदन होनेसे यह क्षायोपशमिक सम्यक्त्व उत्पन्न होता है । इस प्रकार से क्षायोपशमिक सम्यक्त्व का लक्षण सुघटित हो जाता है ।

यह सम्यक्त्व आत्मपरिणामरूप सम्यक्त्व का अनावारक-आवरण करनेवाला नहीं-होने से उपचार से सम्यक्त्व कहा गया है, क्योंकि इस सम्यक्त्वमें विशोधितपुद्गलपुंज का-सम्यक्त्व-प्रकृतिका उदय है और उसीके उदयरूप वेदन से यह सम्यक्त्व हुआ है, इसलिये पुद्गलजनित होने से यह पौद्गलिक है । इस पौद्गलिक कार्य को जो सम्यक्त्व कहा गया है वह इसी हेतु से कि वह आत्मपरिणामरूप जो सम्यक्त्व है उसका आवरण नहीं करता है ।

જે હબ્ધુ સુધી ઉદયમાં આવેલ નથી ફક્ત સત્તામાંજ બેઠેલ છે, બસ એનું નામ સદવસ્થારૂપ ઉપશમ છે, એને અનુદિત-અનુદયઅવસ્થા પણ કહે છે. અહીંયા જે મિથ્યાત્વની અનુદયાવસ્થા કહેવાઈ છે તે મિથ્યાત્વના કેઈ ભાગની અને મિશ્ર-પુંજની અપેક્ષાએ કહેવાઈ છે. કારણ કે એનો આ જગ્યોએ ઉદય નથી, તથા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિનો થોડા ભાગે ઉદય છે. આ પ્રકારે ઉદિત મિથ્યાત્વના ક્ષયથી, અને અનુદિત એજ મિથ્યાત્વના ઉપશમથી અને કેટલાંક સમ્યક્ત્વકર્મના પુદ્ગલોના વેદન હોવાથી આ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે. આ પ્રકારથી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વના લક્ષણ સુઘટિત થઈ જાય છે.

આ સમ્યક્ત્વ આત્મ-પરિણામરૂપ સમ્યક્ત્વના અનાવારક-આવરણ કરવાં વાળાં નહિ-હોવાથી ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે, કારણ કે આ સમ્યક્ત્વમાં વિશોધિતપુદ્ગલપુંજનો-સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિનો ઉદય છે અને એના ઉદયરૂપ વેદનથી એ સમ્યક્ત્વ થયેલ છે, માટે પુદ્ગલજન્ય હોવાથી આ પૌદ્ગલિક છે, અને આ પૌદ્ગલિક કાર્યને જે સમ્યક્ત્વ કહેલ છે તે આ હેતુથી કે તે આત્મપરિણામરૂપ જે સમ્યક્ત્વ છે એનું આવરણ નથી કરતું.

નનુ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વસ્યૌપશમિકસમ્યક્ત્વાત્કો ભેદઃ ? इति चेदुच्यते—  
ક્ષાયોપશમિકે મિથ્યાત્વદલિકવેદનં વિપાકતો નાસ્તિ, પ્રદેશતસ્તુ વિદ્યતે । ઔપશ-  
મિકે તુ પ્રદેશતોઽપિ નાસ્તીતિ વિશેષ ઇતિ ।

(૪) અથ સાસ્વાદનં સમ્યક્ત્વમુચ્યતે—આસ્વાદનેન=સમ્યક્ત્વરસાસ્વાદ-  
નેન સહ વર્તત ઇતિ સાસ્વાદનમ્ । યથા—ક્ષીરાન્નં શુક્ત્વા તદ્વિષયે ચિત્તવિકારેણ યદિ  
કથિત્ તદ્વમતિ, તદાઽસૌ વમનકાલે ક્ષીરાન્નરસમાસ્વાદયતિ, તથા મિથ્યાત્વોદયે

શંકા—ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં ઔર ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં  
કયા ભેદ હૈ? શંકાકારકા અભિપ્રાય યહાં પર ઇતના હી હૈ કિ જૈસે  
ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વકા ઉદય નહીં હૈ, ઉસી પ્રકાર સે  
ઉપશમસમ્યક્ત્વ મેં ભી નહીં હૈ; ફિર ઇન દોનોં મેં અન્તર કયા હૈ? ।

ઉત્તર—ઇન દોનોં મેં અન્તર હૈ ઔર વહ ઇસ પ્રકાર સે હૈ કિ  
ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વકે દલિયોં કા વેદન યદ્યપિ વિપાક-  
રુપ સે નહીં હૈ પરન્તુ પ્રદેશોદય સે ઉનકા વેદન વહાં પર હૈ હી । ઔપ-  
શમિક સમ્યક્ત્વ મેં તો દોનોં રુપ સે હી ઉનકા વેદન નહીં હૈ ૩ ।

(૪) અથ સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વ કા સ્વરુપ કહતે હૈ—

‘સહ-આસ્વાદનેન વર્તતે ઇતિ સાસ્વાદનમ્’—અર્થાત્ જો સમ્યક્ત્વ-  
રુપ રસકે આસ્વાદન સે સહિત હો ઉસકા નામ સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વ હૈ ।  
જૈસે કોઈ વ્યક્તિ સ્ત્રીર સ્વાકર પશ્ચાત્ ચિત્ત મેં તદ્વિષયક વિકાર હોનેપર  
વમન કરતા હૈ ઉસ સમય મેં ભી વહ ઉસકે રસાસ્વાદકા અનુભવ કરતા હૈ,

શંકા—ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં અને ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં શો ભેદ  
છે ? શંકાકારનો અભિપ્રાય આ ઠેકાણે એ છે કે જેવી રીતે ક્ષાયોપશમિક-સ-  
મ્યક્ત્વમાં મિથ્યાત્વનો ઉદય નથી તેવી જ રીતે ઉપશમ-સમ્યક્ત્વમાં પણ નથી  
તો પછી એ બન્નેમાં ભેદ શો છે ?

ઉત્તર—એ બન્નેમાં ભેદ છે અને તે આ પ્રકારે છે—ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં  
મિથ્યાત્વના દલિયોતું વેદન છે, જો કે વિપાકરૂપથી નથી પરન્તુ પ્રદેશોદયથી એતું વેદન  
ત્યાં છે જ. ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં તો બન્ને રૂપથી તેતું વેદન છે જ નહિ. (૩)

(૪) હવે સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વતું સ્વરૂપ કહે છે—

‘સહ આસ્વાદનેન વર્તતે ઇતિ સાસ્વાદનમ્’—અર્થાત્ જે સમ્યક્ત્વરૂપ રસના  
આસ્વાદનથી સહિત છે એતું નામ સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ છે, જેમકે કોઈ વ્યક્તિ  
દૂધપાક જમ્યા પછી ચિત્તમાં તદ્વિષયક વિકાર થવાથી વમન કરે છે એ સમયમાં  
પણ તે એના રસાસ્વાદનો અનુભવ કરે છે. આ પ્રકારે મિથ્યાત્વના ઉદયથી મિથ્યા-

સતિ મિથ્યાત્વાભિમુખતયાઽનન્તાનુબન્ધિકષાયોદયાદૌપશમિકસમ્યક્ત્વોપરિ વ્ય-  
લીકચિત્તસ્ય તત્સમ્યક્ત્વમુદ્ગમતસ્તદ્રસાસ્વાદનં જઘન્યતઃ સમયમાત્રે, ઉત્કર્ષતશ્ચ પઢા-  
વલિકાયાં ભવતિ, તસ્માદિદં સમ્યક્ત્વં સાસ્વાદનમુચ્યતે । અસ્મિન્ સમ્યક્ત્વેઽનન્તા-  
નુબન્ધિકષાયોદયસત્ત્વેનાત્મપરિણામનૈર્મલ્યાભાવાદવ્યક્તા તત્ત્વાર્થાનભિરુચિસ્તિષ્ઠતિ,  
મિથ્યાત્વે તુ વ્યક્તા, इत्येव तयोर्भेदः ।

યદ્વા-इदं सासादननाम्नाऽपि निगद्यते । तत्र-आयम्=औपशमिकसम्य-  
क्त्वलाभं सादयति=अपनयतीत्यासादनम्=अनन्तानुबन्धिकषायवेदनम् । तस्मिन्  
उसी प्रकार मिथ्यात्वके उदय होनेसे मिथ्यात्वप्राप्तिके सम्मुख हुआ  
जीव भी अनन्तानुबन्धी कषाय के उदय से जब औपशमिक सम्यक्त्वके  
ऊपर अरुचि-चित्तवाला होकर उसका वमन-त्याग कर देता है, अर्थात्  
-जब वह सम्यक्त्व उससे छूट जाता है, तब उसका आस्वादन भी उसे  
कमसे कम एक समय तक, और ज्यादा से ज्यादा छह आवलिकाल तक  
बना ही रहता है । इस कारण इस सम्यक्त्व को सास्वादनसम्यक्त्व  
कहा गया है । इस सम्यक्त्वमें अनन्तानुबन्धी कषाय के उदय का सद्भाव  
होने से (क्रोधादिकों में से किसी एक के उदयका सद्भाव होने से) आत्मा के  
परिणामों में यथावत् निर्मलता-विशुद्धि-का अभाव हो जाता है । इससे  
यहां तत्त्वार्थ के प्रति यद्यपि व्यक्त-प्रगट-रूप में अप्रीति-अरुचि नहीं है;  
फिर भी अव्यक्त रूपसे वह यहां है ही । इसीलिये तो मिथ्यात्व और  
सास्वादनमें इसी अप्रीति की व्यक्ताव्यक्तता से भेद माना गया है ।

ત્વપ્રાપ્તિના સમ્મુખ થયેલ જીવ પણ અનંતાનુબંધી કષાયના ઉદયથી જ્યારે  
ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વના ઉપર અરુચિચિત્તવાળા થઈને એનો વમન-ત્યાગ કરે  
છે, અર્થાત્ જ્યારે તે સમ્યક્ત્વ છૂટી જાય છે ત્યારે એનું આસ્વાદન પણ એને  
ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમાં વધારે છ-આવલિકાળ સુધી  
રહે છે. આ કારણે આ સમ્યક્ત્વને સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે.

આ સમ્યક્ત્વમાં અનંતાનુબંધી કષાયના ઉદયનો સદ્ભાવ હોવાથી (ક્રોધા-  
દિકોમાંથી કોઈ એકના ઉદયનો સદ્ભાવ હોવાથી) આત્માના પરિણામોમાં યથાવત્  
નિર્મળતા-વિશુદ્ધિ-નો અભાવ થઈ જાય છે, તેથી અહીંયા તત્ત્વાર્થના પ્રતિ  
યદ્યપિ વ્યક્ત-પ્રગટ-રૂપમાં અપ્રીતિ-અરુચિ નથી; તો પણ અવ્યક્તરૂપથી તે  
અહીંયા છે જ. તેથી તો મિથ્યાત્વ અને સાસ્વાદનમાં એ જ અપ્રીતિની વ્યક્તા-  
વ્યક્તતાથી ભેદ માનવામાં આવે છે.



સતિ હિ-અનન્તસુખદો નિઃશ્રેયસતરુવીજભૂત ઔપશમિકસમ્યક્ત્વલાભો જઘન્યતઃ સમયમાત્રેણ ઉત્કર્ષતઃ ષટ્ભિરાવલિકાભિરપગન્ઞતિ । આસાદનમિત્યત્ર પૃષોદરાદિત્વાદ્ યકારલોપઃ, 'કૃદ્બહુલ'-મિતિ કર્તર્યનટ્ । આસાદનેન સહ વર્તત-ઇતિ સાસાદનમ્ । અનન્તાનુબન્ધિકષાયોદયે સતિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વાત્ પ્રપતન્ મિથ્યાત્વસંક્રમણા-ભિમુખઃ સન્ યાવત્ મિથ્યાત્વભૂમિં ન પ્રાપ્નોતિ તદન્તરાલે વર્તમાનસ્ય યત્ સમ્યક્ત્વં તત્ સાસાદનં ભવતિ ।

અથવા—યહ સમ્યક્ત્વ સાસાદન કે નામ સે ખી કહા જાતા હૈ, અર્થાત્ ઇસકા દૂસરા નામ સાસાદનસમ્યક્ત્વ ખી હૈ । 'આયં સાદયતિ-અપનયતીત્યાસાદનમ્; આસાદનેન સહ વર્તતે-ઇતિ સાસાદનમ્' અર્થાત્- 'આય' નામ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વકે લાભકા હૈ । ઉસ લાભ કો જો હટાતા હૈ, ઉસે આસાદન કહતે હૈ । ઉસકે સહિત હોને સે વહ સાસાદન કહા જાતા હૈ । ઇસ સમ્યક્ત્વ કી પ્રાસિરૂપ લાભકો હટાનેવાલા અનંતાનુબંધી કષાય કે ઉદયકા વેદન હી હૈ । ક્યોં કિ ઇસકે હોને પર અનન્ત સુખદાતા ઔર નિશ્રેયસ-મોક્ષરૂપ વૃક્ષકા બીજરૂપ જો ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ હૈ ઉસકા લાભ-સદ્ભાવ કમ સે કમ એક સમય તક ઔર અધિક સે અધિક છહ આવલિકાલ તક હી રહ કર ફિર દૂર હો જાતા હૈ । ઇસકા ફલિતાર્થ યહી હૈ કિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વમેં જો અનંતાનુબંધી કષાય કા ઉપશમ હૈ વહ અપને કાલ-અન્તર્મુદૂર્ત-તક હી રહતા હૈ । ઇસકે બાદ જબ ઉસ કષાય કા ઉદય હો જાતા હૈ તબ યહ જીવ ઔપ-

અથવા—આ સમ્યક્ત્વ સાસાદનના નામથી પણ કહેવામાં આવે છે. અર્થાત્ એનું બીજું નામ સાસાદન-સમ્યક્ત્વ પણ છે. 'આયં સાદયતિ-અપનયતીત્યાસાદનમ્, આસાદનેન સહ વર્તતે ઇતિ સાસાદનમ્' અર્થાત્ 'આય' નામ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વના લાભનું છે. એ લાભને જે કહેવે છે એને આસાદન કહે છે. એના સહિત હોવાથી તે સાસાદન કહેવાય છે.

આ સમ્યક્ત્વની પ્રાસિરૂપ લાભને કહેવાવાળા અનંતાનુબંધી કષાયના ઉદયનું વેદન જ છે, કારણ કે આના હોવાથી અનન્ત સુખ દેવાવાળા અને નિશ્રેયસ-મોક્ષ-રૂપ વૃક્ષના બીજસ્વરૂપ જે ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે એનો લાભ-સદ્ભાવ ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમાં વધારે છ આવડી કાળ સુધી રહીને પછી દૂર થઈ જાય છે. એનો ફલિતાર્થ એ છે કે ઔપશમિક સમ્યક્ત્વમાં જે અનંતાનુબંધી કષાયનો ઉપશમ છે તે પોતાના કાલ-અન્તર્મુદૂર્ત સુધી રહે છે. ત્યારબાદ જ્યારે એ કષાયનો ઉદય થઈ જાય છે

(૫) વેદકસમ્યક્ત્વમુચ્યતે-વેદયતિ-અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલો નિતિ વેદ-કોઽનુભવિતા, તદર્થાન્તર્ભૂતત્વાત્ સમ્યક્ત્વમપિ વેદકમ્ । સમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુઞ્જસ્ય બહુ-તરક્ષપિતસ્ય ચરમપુદ્ગલોનાં ગ્રાસસમયે વેદકસમ્યક્ત્વં ભવતિ । તથાહિ-ક્ષપકશ્રેણિ-પ્રાપ્તોઽન્તાનુબંધિકવાયચતુષ્ઠયમપિ ક્ષપયિત્વા મિથ્યાત્વમિથપુદ્ગલપુઞ્જાન્ ક્ષપયતિ, ક્ષમિકસમ્યક્ત્વસે પતિત હોકર મિથ્યાત્વકે સમ્મુખ હોતા હૈ-(અમી મિથ્યાત્વમેં પ્રાપ્ત નહીં હુઆ હૈ કિન્તુ ઉસકે સમ્મુખ હી હુઆ હૈ); સો જબ તક યહ જીવ મિથ્યાત્વરૂપી ભૂમિ કો પ્રાપ્ત નહીં હુઆ હૈ, અર્થાત્-જબ તક સમ્યક્ત્વરૂપી પર્વત સે ગિર કર બીચમેં હી હૈ, તબ તક ઉસ જીવકા જો સમ્યક્ત્વ હૈ ઉસકા નામ સાસાદન હૈ ૪ ।

(૫) વેદકસમ્યક્ત્વ કા સ્વરૂપ—

વેદયતિ=અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલો-ઇતિ વેદકઃ=અનુભવિતા, તદર્થાન્તર્ભૂતત્વાત્ સમ્યક્ત્વમપિ વેદકમ્ ।

અર્થાત્-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલોં કા જો અનુભવ કરનેવાલા હૈ, ઉસે વેદક-અનુભવિતા કહતે હૈં । ઉસસે અભિન્ન હોનેસે સમ્યક્ત્વ મી વેદક કહલાતા હૈ । સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે જિતને મી પુદ્ગલપુંજ હૈં, ઉનમેં સે અધિકતર પુદ્ગલપુંજોં કા ક્ષય હો ચુકને પર બાકી જો ચરમપુદ્ગલપુંજ રહતે હૈં ઉનકે ગ્રાસકે સમીપ ( નષ્ટ કરને કે સમય )મેં વહ વેદકસ-મ્યક્ત્વ હોતા હૈ । ક્ષપકશ્રેણીકો પ્રાપ્ત હુઆ જીવ અનંતાનુબંધિચતુષ્ઠય

ત્યારે એ જીવ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વથી પતિત થઈ મિથ્યાત્વની સમ્મુખ થાય છે ( હજી મિથ્યાત્વમાં પ્રાપ્ત નથી થયોપણ એની સમ્મુખ થયો છે ) માટે જ્યાં સુધી એ જીવ મિથ્યાત્વરૂપી ભૂમિને પ્રાપ્ત નથી થયો, અર્થાત્-જ્યાં સુધી સમ્યક્ત્વરૂપી પર્વતથી પડીને વચમાં જ છે. તે સમય તે જીવનું જે સમ્યક્ત્વ છે તેનું નામ સાસાદન છે (૪).

(૫) વેદક-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ કહે છે—‘વેદયતિ=અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલો-ઇતિ વેદકઃ=અનુભવિતા, તદર્થાન્તર્ભૂતત્વાત્ સમ્યક્ત્વમપિ વેદકમ્’

અર્થાત્—સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલોનો જે અનુભવ કરવાવાળો છે, એને વેદક-અનુભવિતા કહે છે. એનાથી અભિન્ન હોવાથી સમ્યક્ત્વ પણ વેદક કહેવાય છે. સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના જેટલા પણ પુદ્ગલપુંજ છે, એમાંથી અધિકતર પુદ્ગલપુંજનો નાશ થયા પછી બાકી જે ચરમ પુદ્ગલ રહે છે એના ગ્રાસની સમીપ (નાશ કરવાના સમય)માં તે વેદક-સમ્યક્ત્વ થાય છે. ક્ષપકશ્રેણીને પ્રાપ્ત થયેલા જીવ અનંતાનુબંધિ-ચતુષ્ઠયનું પણ ક્ષપણ કરીને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ

તતઃ પરં સમ્યક્ત્વપુઞ્નમપિ ઉદીર્યોદીર્યાનુભવેન નિર્જરયતિ, તેનોદીરણીયસમ્યક્ત્વ-પુઞ્જાભાવો જાયતે, તદેવં ચરમગ્રાસેઽવતિષ્ઠમાનેઽઘ્યાપિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલનાં ક્રિયતા-મપિ વેદ્યમાનત્વાત્ વેદકં સમ્યક્ત્વમુપજાયતે । इदमपि सत्यत्वं पौद्गलिकं विज्ञेयम् ।

ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વી જીવઃ સમ્યક્ત્વમોહનીયપુઞ્નસ્યાધિકાંશં ક્ષપયિત્વા યદા સમ્યક્ત્વમોહનીયસ્યાન્તિમપુદ્ગલનાં વેદનં કરોતિ તદાનીં જાયમાન આત્મપરિણામો વેદકસમ્યક્ત્વમિતિ નિષ્કર્ષઃ । વેદકસમ્યક્ત્વપ્રાપ્ત્યનન્તરં ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં લભ્યત એવ ।

કાં બી ક્ષાપણ કરકે મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ ઓર મિશ્રપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોંકા જવ ક્ષય કર દેતા હૈ તવ ઉસકે બાદ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુંજોંકી અપને અનુભવ સે ઉદીરણા કરકે નિર્જરા કરતા હૈ । એસા કરને સે ઉદીરણીય-ઉદીરણા કરને યોગ્ય-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુંજોંકા અભાવ હો જાતા હૈ । હસ પ્રકાર અન્તિમ ગ્રાસ કે રહને પર ઉસ સમય બી કિતનેક અંતિમ અંશવર્તી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોંકા અનુભવ હોતા હૈ । હસકા અનુભવ કરના હી વેદક-સમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ બી પૌદ્ગલિક જાનના ચાહિયે ।

હસકા ફલિતાર્થ યહી હૈ-કિ ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વવાલા જીવ સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે પુદ્ગલપુંજકે અધિકાંશ ભાગકા ક્ષય કરકે જવ ઉસી સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે અંતિમ પુદ્ગલોંકા વેદન કરતા હૈ ઉસ સમય મેં ઉત્પન્ન હોનેવાલા આત્મપરિણામ વેદક-સમ્યક્ત્વ હૈ । વેદકસમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિકે બાદ જીવ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કર હી લેતા હૈ ।

અને મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજોને ન્યારે ક્ષય કરી નાખે છે ત્યારે પછી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુંજની પોતાના અનુભવથી ઉદીરણા કરીને નિર્જરા કરે છે. એમ કરવાથી-ઉદીરણીય-ઉદીરણા કરવા યોગ્ય સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિના પુંજનો અભાવ થઈ જાય છે. આ પ્રકારે અન્તિમ ગ્રાસના રહેવાથી તે સમય પણ કેટલાક અંતિમ અંશવર્તી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજોને અનુભવ થાય છે. એનો અનુભવ કરવો તે વેદક-સમ્યક્ત્વ છે. આ સમ્યક્ત્વ પણ પૌદ્ગલિક જાણવું જોઈએ.

આનો ફલિતાર્થ એ છે કે ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વવાળા જીવ સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના પુદ્ગલપુંજના અધિકાંશ ભાગનો ક્ષય કરીને ન્યારે એ સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના અંતિમ પુદ્ગલોના વેદન કરે છે તે સમયમાં ઉત્પન્ન થવાવાળા આત્મપરિણામ વેદક-સમ્યક્ત્વ છે, વેદક-સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ પછી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વને જીવ પ્રાપ્ત કરી જ લે છે.



નન્વેવં સતિ વેદકસ્ય ક્ષાયોપશમિકાત્ કો ભેદઃ, સમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજ્જવેદનસ્યો-  
ભયત્રાપિ તુલ્યત્વાત્ ? અત્રોચ્યતે—વેદકે સ્વલુ સર્વોદિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજ્જચરમગ્રાસ-  
વેદનમ્, ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિ-  
ષ્ઠન્તિ, તેન તદ્વર્જિતપુદ્ગલાનાં વેદનં ભવતિ, ઇતિ વિશેષોઽવધારણીય ઇતિ । ઉક્તશ્ચ—

શંકા—યદિ યહી બાત હૈ કિ ઇન દોનોં સમ્યક્ત્વોં મેં સમ્યક્ત્વ-  
પ્રકૃતિ કે પુંજોં કા વેદન હોતા હૈ તો ફિર વેદકસમ્યક્ત્વકા ક્ષાયોપ-  
શમિકસમ્યક્ત્વસે ભેદ હી ક્યા રહા ?

સમાધાન—વેદકસમ્યક્ત્વમેં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે ચરમપુદ્ગલોં કા  
વેદન હોતા હૈ, ઓર ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વમેં ઇનસે અવશિષ્ટોંકા ।  
બસ, યહી ઇન દોનોં મેં ભેદ હૈ । ઇસી બાત કો “વેદકે સ્વલુ સર્વો-  
દિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજ્જચરમગ્રાસવેદનમ્, ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ  
ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિષ્ઠન્તિ ” । ઇન પંક્તિયોં મેં  
ટીકાકારને સ્પષ્ટ કિયા હૈ । અર્થાત્—વેદકસમ્યક્ત્વમેં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિકે  
ઉદિત હુઅ સમસ્ત પુદ્ગલપુંજોંમેંસે સિર્ફ ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગલોં કા વેદન  
હોતા હૈ । ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વ કે સમય મેં તો ડસ ચરમગ્રાસવર્તી  
પુદ્ગલપુંજ સે અવશિષ્ટ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોં કા વેદન હોતા હૈ ।  
કલ્પના કીજિયે—સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે સમસ્ત પુદ્ગલપુંજોંકી સંખ્યા ૧૦૦ હૈ ।

શંકા—જો એ વાત છે કે જ્યારે એ બન્ને સમ્યક્ત્વોમાં સમ્યક્ત્વપ્રકૃ-  
તિના પુંજોનું વેદન થાય છે તો પછી વેદક—સમ્યક્ત્વના ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વથી  
ભેદ જ શો રહ્યો ?

સમાધાન—વેદક—સમ્યક્ત્વમાં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના ચરમ પુદ્ગલોનું વેદન થાય  
છે, અને ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વમાં એનાથી અવશિષ્ટોનું વેદન થાય છે. બસ  
આજ આ બંનેમાં ભેદ છે.

આજ વાતને “વેદકે સ્વલુ સર્વોદિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજ્જચરમગ્રાસવેદનમ્ ક્ષાયોપ-  
શમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિષ્ઠન્તિ ”

આ પંક્તિઓમાં ટીકાકારે સ્પષ્ટ કરી છે. અર્થાત્ વેદક—સમ્યક્ત્વમાં સમ્ય-  
ક્ત્વપ્રકૃતિના ઉદિત થયેલ બધા પુદ્ગલપુંજોમાંથી ફક્ત ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગ-  
લોનું જ વેદન થાય છે.

ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વના સમયમાં તો આ ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગલપુંજથી  
અવશિષ્ટ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના અવ્યવહિત પૂર્વવર્તી પુદ્ગલપુંજોનું વેદન થાય છે.  
કલ્પના કરિયે કે સમ્યક્ત્વ—પ્રકૃતિના સમસ્ત પુદ્ગલપુંજોની સંખ્યા ૧૦૦ છે.

“खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।  
 वेयगमिह सव्वोइय, चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥  
 उवसमसेट्ठिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।  
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥  
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।  
 सासायणसम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥  
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।  
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ” ॥ ४ ॥ इति ।

इनमें से ९९ वें तकके पुद्गलपुंजोंका वेदन क्षायोपशमिकसम्यक्त्वमें होगा, अन्तिम १०० वें का वेदन वेदकसम्यक्त्वमें । इस अन्तिम १०० वें का वेदन क्षायोपशमिक-सम्यक्त्वमें नहीं होगा ५ । औपशमिकसम्यक्त्वादिकों का स्वरूप इन गाथाओंमें भी संक्षेपरूप से इस प्रकार कहा है—

गाथा—खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।  
 वेयगमिह सव्वोइय, चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥  
 उवसमसेट्ठिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।  
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥  
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।  
 सासायणसम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥  
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।  
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ॥ ४ ॥ ” इति ।

आमांथी ८८ सुधीना पुद्गलपुंजेतुं वेदन क्षायोपशमिक-सम्यक्त्वमां थशे.  
 अन्तिम १०० मातुं वेदन वेदक-सम्यक्त्वमां थशे (५).

औपशमिक-सम्यक्त्वादिकेतुं स्वरूप आ गाथाओमां पणु संक्षेपपथी  
 आ प्रकारे कलुं छे:—

“खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।  
 वेयगमिह सव्वोइय, चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥  
 उवसमसेट्ठिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।  
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥  
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।  
 सासायण-सम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥  
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।  
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ” ॥ ४ ॥ इति ॥



છાયા—ક્ષીણે દર્શનમોહે, ત્રિવિધેઽપિ ક્ષાયિકં ભવતિ સમ્યક્ ( સમ્યક્ત્વમ્ ) ।  
 વેદકમિહ સર્વોદિત-ચરમકપુદ્ગલગ્રાસમ્ ॥ ૧ ॥  
 ઉપશમશ્રેણિગતસ્ય તુ, ભવતિ હુ ઔપશમિકં તુ સમ્યક્ત્વમ્ ।  
 યો વા અકૃતત્રિપુઞઃ, અક્ષપિતમિથ્યાત્વો લભતે સમ્યક્ ( સમ્યક્ત્વમ્ ) ॥૨॥  
 ઉપશમસમ્યક્ત્વાત્ ચ્યુત્વા મિથ્યાત્વમપ્રાપ્નુવતઃ ।  
 સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વં, તદન્તરાલે પઢાવલિકમ્ ॥ ૩ ॥  
 મિથ્યાત્વં યદુદીર્ઘં, તત્ક્ષીણમનુદિતં ચોપશાન્તમ્ ।  
 મિશ્રીભાવપરિણતં, વેદ્યમાનં ક્ષાયોપશમમ્ ( ક્ષાયોપશમિકમ્ ) ॥૪॥ ઇતિ ।

મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય ઓર સમ્યક્ત્વમોહનીયરૂપ દર્શન-મોહનીય કર્મ કે સર્વથા ક્ષય હોને પર હી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, સબ ઉદિત પુદ્ગલોં મેં ચરમ-અન્તિમ-અંશવર્તી પુદ્ગલોંકા વેદન હોના વેદકસમ્યક્ત્વ હૈ ॥ ૧ ॥ ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવોંકો ઉપશમસમ્યક્ત્વ કા લાભ હોતા હૈ । અથવા જિસને મિથ્યાત્વકર્મ કે ત્રીન પુંજ નહીં કિયે હૈં એસે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ કે, તથા જિસને મિથ્યાત્વકા ક્ષય મી નહીં કિયા હૈ કિંતુ ઉસકા ઉપશમ કિયા હૈ ઉસ જીવ કે ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવકે ૭ પ્રકૃતિયોં ( અનન્તાનુબન્ધી ૪, મિથ્યાત્વમોહનીય ૫, મિશ્રમોહનીય ૬, સમ્યક્ત્વમોહનીય ૭ ) કે ઉપશમસે ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ; એસા સિદ્ધાન્તકારોંને કહા હૈ । ૮વેં ૯વેં ૧૦વેં ઓર ૧૧ વેં ગુણસ્થાનમેં ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, ક્યોં કિ યે ઉપશમશ્રેણિ કે સ્થાન હૈં । તથા અનાદિ-મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ

“ મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વમોહનીયરૂપ દર્શનમોહ-નીય કર્મનો ક્ષય થયા પછી જ ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે, બધા ઉદિત પુદ્ગલોમાં ચરમ-અન્તિમ-અંશવર્તી પુદ્ગલોના વેદન થવું વેદક-સમ્યક્ત્વ છે (૧) ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવોને ઉપશમ-સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે. અથવા જો જો મિથ્યાત્વકર્મના ત્રણ પુંજ નથી કર્યા, એવા મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવને તથા મિથ્યાત્વનો ક્ષય કર્યો નથી પણ તેનો ઉપશમ કર્યો છે, એ જીવને ઉપશમ-સમ્યક્ત્વ થાય છે. મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવની સાત ૭ પ્રકૃતિયો ( અનન્તાનુબન્ધી ૪, મિથ્યાત્વમોહનીય ૫, મિશ્રમોહનીય ૬, સમ્યક્ત્વમોહનીય ૭ )ના ઉપશમથી ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે; એવું સિદ્ધાન્તકારોએ કહ્યું છે. ૮ માં, ૯ માં, ૧૦ માં અને ૧૧ માં ગુણસ્થાનમાં ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે; કારણ કે એ ઉપશમશ્રેણીનું સ્થાન છે. તથા અનાદિ



યન્મિથ્યાત્વમુદીર્ણં તત્ ક્ષીણમ્ । યત્ અનુદિતમ્ અનુદીર્ણં તન્મિથ્યાત્વં, મિ-  
શ્રીભાવપરિણતં=મિશ્રમોહનીયં, ચ શબ્દાત્ સમ્યક્ત્વદલિકં યદનુદીર્ણમનુદિતં તદપિ,  
ઉપશાન્તમ્, અનુદીર્ણાનુદિતમિથ્યાત્વમિશ્રસમ્યક્ત્વદલિકેતિત્રયમુપશમાવસ્થમિ-  
ત્યર્થઃ । વેદ્યમાનમ્=ઉદયાવસ્થાં સમાપન્નં સમ્યક્ત્વદલિકં યત્ર તત્ ક્ષાયોપશમિકં  
સમ્યક્ત્વમુચ્યતે, इत्यर्थः ॥ ૪ ॥

કે સર્વપ્રથમ ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । યહ જીવ મિથ્યાત્વ કર્મ કે  
ત્રીન પુંજ નહીં કરતા હૈ ઓર ન મિથ્યાત્વકા ક્ષય હી કરતા હૈ ॥ ૨ ॥  
ઉપશમસમ્યક્ત્વ સે ચ્યુત હોકર મિથ્યાત્વ કો નહીં પ્રાપ્ત હુએ જીવ  
કે હી અન્તરાલ સમય મેં કમ સે કમ ૧ સમય ઓર અધિક સે અધિક  
૬ આવલીકાલ તક સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ રહતા હૈ ॥ ૩ ॥ ઉદય પ્રાપ્ત  
મિથ્યાત્વકા નાશ ઓર અનુદિત મિથ્યાત્વકા ઉપશમ, ઇન દો અવસ્થાઓં  
સે મિશ્રિત ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ હૈ ॥ ૪ ॥

इस सम्यक्त्व में उदयप्राप्त मिथ्यात्वका विनाश-क्षय होता है  
और अनुदीर्ण मिथ्यात्व का क्षय नहीं है; किन्तु उसका परिणमन मिश्र  
प्रकृति के रूपमें है, और इसका यहां पर उपशम है । इसी प्रकार सम्य-  
क्त्वप्रकृति का पुंज भी जो अनुदीर्ण है वह भी उपशम अवस्था में है ।  
यह बात भी श्लोकमें आये हुए 'च' शब्द से प्रकट है । अतः 'जो क्षय  
और उपशम से उत्पन्न होता है, वह क्क्षायोपशमिक-सम्यक्त्व है' इस प्रकार

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવને સર્વ પ્રથમ ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે. આ જીવ મિથ્યાત્વ  
કર્મના ૩ વ્રણ પુંજ નથી કરતો, તેમજ મિથ્યાત્વનો ક્ષય પણ નહિ. (૨)  
ઉપશમસમ્યક્ત્વથી જીવ પડી મિથ્યાત્વને નહિ પ્રાપ્ત થયેલ જીવને અંતરાણ  
સમયમાં ઓછામાં ઓછું ૧ એક સમય અને વધારેમાં વધારે ૬ છ આવલીકાળ  
સુધી સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ રહે છે. (૩)

ઉદયપ્રાપ્ત મિથ્યાત્વનો નાશ અને અનુદિત મિથ્યાત્વનો ઉપશમ, એ બે  
અવસ્થાઓથી મિશ્રિત ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ છે. (૪)

આ સમ્યક્ત્વમાં ઉદયપ્રાપ્ત મિથ્યાત્વનો વિનાશ-ક્ષય થાય છે, અને અનુ-  
દીર્ણ મિથ્યાત્વનો ક્ષય નથી; પણ એનું પરિણમન મિશ્રપ્રકૃતિના રૂપમાં છે, અને  
તેનો અર્હીયા ઉપશમ છે. આ પ્રકારે સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુંજ પણ જે અનુ-  
દીર્ણ છે તે પણ ઉપશમ અવસ્થામાં છે. આ વાત પણ શ્લોકમાં આવેલ "ચ"  
શબ્દથી પ્રગટ છે, માટે 'જે ક્ષય અને ઉપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્ષયો-  
પશમ-સમ્યક્ત્વ છે' એવી રીતે જે ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહ્યું છે, તે

પ્રકારાન્તરેણાપિ સમ્યક્ત્વસ્ય દશવિધત્વં સ્થાનાઙ્ગાદૌ પ્રતિબોધિતમ્, યથા—  
(૧) નિસર્ગરુચિઃ, (૨) ઉપદેશરુચિઃ, (૩) આજ્ઞારુચિઃ, (૪) સૂત્રરુચિઃ, (૫) બીજ-  
રુચિઃ, (૬) અધિગમરુચિઃ, (૭) વિસ્તારરુચિઃ, (૮) ક્રિયારુચિઃ, (૯) સંક્ષેપરુચિઃ  
(૧૦) ધર્મરુચિરિતિ ।

તત્ર-નિસર્ગઃ સ્વભાવસ્તેન રુચિર્જિનોક્તતત્ત્વાભિલાષરૂપા યસ્ય સ નિસર્ગ-  
રુચિઃ ૧ । ઉપદેશો ગુર્વાદિર્ભિર્વસ્તુતત્ત્વકથનં, તેન રુચિર્યસ્ય સ ઉપદેશરુચિઃ ૨ ।

જો ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ કહા હૈ, વહ બી સુઘટિત હો જાતા  
હૈ; કારણ કિ યહાં પર મિથ્યાત્વમોહનીય મિશ્રમોહનીય ઓર સમ્ય-  
ક્ત્વમોહનીય પ્રકૃતિયોં કો અનુદીર્ણ પુંજ ઉપશમ-અવસ્થા મેં રહતે હૈં  
અંવં ઉદીર્ણ મિથ્યાત્વ કા ક્ષય હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિ કો દલોંકા વર્ત-  
માન મેં ઉદય હો રહા હૈ ।

પ્રકારાન્તર સે બી સમ્યક્ત્વ દસ પ્રકાર કા હૈ, વહ સ્થાનાઙ્ગ આદિ  
સૂત્રોં મેં વર્ણિત હૈ, જૈસે—(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપદેશરુચિ, (૩) આજ્ઞા-  
રુચિ, (૪) સૂત્રરુચિ, (૫) બીજરુચિ, (૬) અધિગમરુચિ, (૭) વિસ્તારરુચિ,  
(૮) ક્રિયારુચિ, (૯) સંક્ષેપરુચિ, (૧૦) ધર્મરુચિ ।

નિસર્ગ નામ સ્વભાવ કા હૈ; સ્વભાવ સે હી જિસ જીવ કો  
જિનોક્ત તત્ત્વોં મેં રુચિ-અભિલાષા હોતી હૈ ઉસકે યહ સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ ।  
અર્થાત્-સ્વભાવ સે હી જીવ કી રુચિ જિસકે દ્વારા જિનકથિત તત્ત્વોં મેં  
હુઆ કરતી હૈ વહ નિસર્ગરુચિ હૈ (૧) । ગુર્વાદિક કો ઉપદેશ સે તત્ત્વોં મેં જો

પણ સુઘટિત થઈ જાય છે, કારણ કે આ ઠેકાણે મિથ્યાત્વમોહનીય મિશ્રમોહનીય  
અને સમ્યક્ત્વમોહનીય પ્રકૃતિયોના અનુદીર્ણ પુંજ ઉપશમ અવસ્થામાં રહે છે,  
એવં ઉદીર્ણ મિથ્યાત્વનો ક્ષય છે અને સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના દળિઓનો વર્તમાનમાં  
ઉદય થાય છે.

પ્રકારાન્તરથી પણ સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકારના છે, તે સ્થાનાંગ આદિ સૂત્રોમાં  
વર્ણિત છે. જેમ:—(૧) નિસર્ગરૂચિ, (૨) ઉપદેશરૂચિ, (૩) આજ્ઞારૂચિ, (૪) સૂત્ર  
રૂચિ, (૫) બીજરૂચિ, (૬) અધિગમરૂચિ, (૭) વિસ્તારરૂચિ, (૮) ક્રિયારૂચિ,  
(૯) સંક્ષેપરૂચિ, (૧૦) ધર્મરૂચિ.

નિસર્ગ નામ સ્વભાવનું છે; સ્વભાવથી જ જે જીવને જિનોક્ત તત્ત્વોમાં  
રૂચિ-અભિલાષા થાય છે તેને આ સમ્યક્ત્વ થાય છે. અર્થાત્-સ્વભાવથી જ જીવની  
રૂચિ જેના દ્વારા જિનકથિત તત્ત્વોમાં થયા કરે છે, તે નિસર્ગરૂચિ છે (૧).  
ગુર્વાદિકના ઉપદેશથી તત્ત્વોમાં જે રૂચિ જીવને માટે પેદા કરવામાં આવે



આજ્ઞા=સર્વજ્ઞવીતરાગવચનાત્મિકા, તત્ત્વ રુચિરમિલાષો यस્ય સ આજ્ઞારુચિઃ ૩ । સૂત્રમ્-આચારાજ્ઞાદિકમ્, આવશ્યક-દશવૈકાલિકાદિકં ચ, તેન રુચિર્યસ્ય સ સૂત્રરુચિઃ ૪ । બીજમિવ બીજં યદેકમપ્યનેકાર્થબોધજનકં વચઃ, તેન રુચિર્યસ્ય સ બીજરુચિઃ ૫ । અધિગમેન=વિશિષ્ટપરિજ્ઞાનેન રુચિર્યસ્ય સઃ અધિગમરુચિઃ ૬ । વિસ્તારઃ=સકલદ્વાદશાંગસ્ય નયૈઃ પર્યાલોચનમ્, તેન પરિવર્ધિતા રુચિર્યસ્ય સ વિસ્તારરુચિઃ ૭ । ક્રિયા=યથાવિધિ સંયમાનુષ્ઠાનં તસ્યાં રુચિર્યસ્ય સ ક્રિયારુચિઃ ૮ । સંક્ષેપઃ=સંગ્રહઃ, તત્ત્વ રુચિર્યસ્ય સ સંક્ષેપરુચિઃ । વિસ્તારાર્થપરિજ્ઞાનાભાવેન સંક્ષેપે રુચિર્ભવતિ ૯ । ધર્માસ્તિકાયે શ્રુતધર્માદૌ વા રુચિર્યસ્ય સ ધર્મરુચિઃ ૧૦ । ઇહ સમ્યક્ત્વસ્ય જીવભેદેન કથનં ગુણગુણિનોઃ કથંચિદભેદોઽસ્તીતિ બોધનાર્થમ્ ।

રુચિ જીવ કે લિયે પૈદા કરાવી જાતી હૈ ઉસકા નામ ઉપદેશરુચિ હૈ (૨) સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુકે વચનોં મેં જો રુચિ જીવ કો હોતી હૈ ઉસે આજ્ઞારુચિ કહતે હૈં (૩) । આચારાજ્ઞ આદિ અજ્ઞપ્રવિષ્ટ એવં આવશ્યક, દશ વૈકાલિક આદિ અજ્ઞબાહ્યોં કે દ્વારા તત્ત્વોં મેં જીવ કી જો પ્રીતિ-શ્રદ્ધા કરાઈ જાતી હૈ વહ સૂત્રરુચિ નામકા સમ્યક્ત્વ હૈ (૪) । જિસ પ્રકાર એક હી બીજસે અનેક ફલોંકી ઉત્પત્તિ હુઆ કરતી હૈ ઉસી પ્રકાર જિસ એક વચન સે અનેક પદાર્થોં કી પ્રતીતિ હો ઉસકા નામ બીજ હૈ, ઉસસે જિસ જીવકો તત્ત્વોં મેં રુચિ જાગૃત હોતી હૈ ઉસકા નામ બીજરુચિ હૈ (૫) । વિશિષ્ટ જ્ઞાનકો અધિગમ કહતે હૈં, ઇસકે દ્વારા જિસ જીવકો તત્ત્વોં મેં રુચિ હોતી હૈ ઉસે અધિગમરુચિ કહતે હૈં (૬) । સમ્પૂર્ણ નયોંકે દ્વારા સકલ દ્વાદશાંગ કા પર્યાલોચન કરના, ઇસકા નામ વિસ્તારરુચિ હૈ । ઇસ કે દ્વારા જીવ કી રુચિ તત્ત્વોં મેં પરિવર્ધિત કરાઈ જાતી હૈ (૭) । શાસ્ત્ર-

છે તેનું નામ ઉપદેશરુચિ છે (૨). સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુના વચનોમાં જે રુચિ જીવની થાય છે તેને આજ્ઞારુચિ કહે છે (૩). આચારાંગ આદિ અંગપ્રવિષ્ટ એમજ આવશ્યક, દશવૈકલિક, આદિ અંગબાહ્યો દ્વારા તત્ત્વોમાં જીવની જે પ્રીતિ-શ્રદ્ધા કરવામાં આવે છે તે સૂત્રરુચિ નામનું સમ્યક્ત્વ છે (૪). જેવી રીતે એકજ બીજથી અનેક ફલોની ઉત્પત્તિ થાય છે એ પ્રકારે એકજ વચનથી અનેક પદાર્થોની જે પ્રતીતિ થાય તેનું નામ બીજ છે, તેનાથી જે જીવને તત્ત્વોમાં રુચિ જાગૃત થાય છે તેનું નામ બીજરુચિ છે (૫). વિશિષ્ટ જ્ઞાનને અધિગમ કહે છે. એના દ્વારા જે જીવને તત્ત્વોમાં રુચિ થાય છે એને અધિગમરુચિ કહે છે. (૬) સંપૂર્ણ નયોના દ્વારા સકલ દ્વાદશાંગનું પર્યાલોચન કરવું તેનું નામ વિસ્તારરુચિ છે, એના દ્વારા જીવની રુચિ તત્ત્વોમાં પરિવર્ધિત કરવામાં આવે



વિહિત વિધિકે અનુસાર સંયમકા અનુષ્ઠાન કરના ક્રિયા છે, હાલમાં જિસ જીવકી રુચિ હોતી છે વહ ક્રિયારુચિ નામકા સમ્યક્ત્વ છે (૮)। સંક્ષેપ નામ સંગ્રહકા છે, હાલમાં જો રુચિ હો વહ સંક્ષેપરુચિ છે। અર્થાત્-જિસ જીવકો વિસ્તૃતરૂપસે પદાર્થપરિજ્ઞાન નહીં છે હાલમાં સંક્ષેપમાં રુચિ હુઆ કરતી છે। હાલમાં અપેક્ષા સે હાલમાં સમ્યક્ત્વ કા નામ સંક્ષેપરુચિ છે। હાલમાં સમ્યક્ત્વવાળા જીવ જીવાદિક પદાર્થોમાં વિસ્તારરૂપ સે રુચિ-સંપન્ન નહીં હોતા; કિન્તુ સંક્ષેપરૂપ સે હી હાલમાં સમજ કર હાલમાં દૃઢ આસ્થાવાળા હો જાતા છે (૯)। ધર્માસ્તિકાયાદિક જો અમૂર્તિક પદાર્થ છે, હાલમાં અથવા શ્રુત એવં ધર્માદિકમાં જીવકો જિસકે દ્વારા રુચિ હોતી છે વહ ધર્મરુચિ છે (૧૦)। યદ્યપિ સમ્યક્ત્વ આત્માકા નિજી ગુણ છે, પરંતુ હાલમાં દસ પ્રકાર કે સમ્યક્ત્વ કથનમાં જો હાલમાં જીવ સે ભિન્નરૂપમાં જો કથન ક્રિયા છે વહ હાલમાં વાતકી પુષ્ટિ કરતા છે કિ ગુણ ઓર ગુણીમાં કથંચિત્ ભિન્નતા ઓર કથંચિત્ અભિન્નતા છે। દ્રવ્યાર્થિક નયકી અપેક્ષા સે ગુણ ઓર ગુણી અભિન્ન છે। પર્યાયાર્થિક નયકી વિવક્ષા સે યે દોનો લક્ષણ, સંખ્યા આદિકી અપેક્ષા સે ભિન્ન ૨ છે। યહ દશપ્રકાર કે સમ્યક્ત્વ કા વર્ણન હુઆ (૧૦)।

છે (૭). શાસ્ત્રવિહિત વિધિના અનુસાર સંયમનું જે અનુષ્ઠાન કરવું તે ક્રિયા છે, તેમાં જે જીવની રૂચિ થાય તે ક્રિયારૂચિ નામનું સમ્યક્ત્વ છે (૮). સંક્ષેપ નામ સંગ્રહનું છે. એમાં જેની રૂચિ હોય તે સંક્ષેપરૂચિ છે. અર્થાત્-જે જીવને વિસ્તૃતરૂપથી પદાર્થપરિજ્ઞાન નથી તેને સંક્ષેપમાં રૂચિ થયા કરે છે, એ અપેક્ષાથી એ સમ્યક્ત્વનું નામ સંક્ષેપરૂચિ છે. આ સમ્યક્ત્વવાળા જીવ જીવાદિક પદાર્થોમાં વિસ્તારરૂપથી રૂચિસંપન્ન નથી થતા; પણ સંક્ષેપરૂપથી જ તેને સમ-જીવે એમાં દૃઢ આસ્થાવાળા બની રહે છે (૯). ધર્માસ્તિકાયાદિક જે અમૂર્તિક પદાર્થ છે એમાં, અથવા શ્રુત એમજ ધર્માદિકમાં જીવની જેના દ્વારા રૂચિ થાય છે તે ધર્મરૂચિ છે (૧૦). યદ્યપિ સમ્યક્ત્વ આત્માના નિજગુણ છે; પરંતુ આ દશ પ્રકારના સમ્યક્ત્વ કથનમાં તેનું જીવથી ભિન્નરૂપમાં જે કથન કર્યું છે તે એ વાતની પુષ્ટિ કરે છે કે ગુણ અને ગુણીમાં કથંચિત્ ભિન્નતા અને કથંચિત્ અભિન્નતા છે. દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાથી ગુણ અને ગુણી અભિન્ન છે, પર્યાયાર્થિક નયની વિવક્ષાથી એ બંને લક્ષણ સંખ્યા આદિની અપેક્ષાથી ભિન્નભિન્ન છે. આ દશ પ્રકારના સમ્યક્ત્વનું વર્ણન થયું ૧૦

### (૧) સમ્યક્ત્વસ્થિતિ :

સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિરેકસમયમાત્રં જઘન્યતઃ, ઉત્કર્ષતસ્તુ ષડાવલિકાઃ, ઔપશમિકસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિર્જઘન્યોત્કૃષ્ટા ચાન્તર્મુહૂર્તમ્ । વેદક-સમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિર્જઘન્યોત્કૃષ્ટા ચૈકસમયમાત્રમ્ । ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વસ્ય જઘન્યા સ્થિતિરેકસમયમાત્રમ્, ઉત્કૃષ્ટા તુ કિંચિદધિકષટ્પષ્ટિસાગરોપમા, ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિઃ સાઘર્પ્યવસિતકાલરૂપા ।

### (૨) સમ્યક્ત્વસ્ય પ્રાદુર્ભાવવ્યવસ્થા ॥

एकभवमाश्रित्यौपशमिकसास्वादनसम्यक्त्वे जघन्यतः सकृदेव प्रादुर्भवतः । उत्कृष्टतस्तु पञ्चवारम् । वेदकसम्यक्त्वं जघन्यत उत्कृष्टतश्चैकवारं प्रादुर्भवति ।

### (૧) સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ ।

સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ જઘન્ય એક સમય માત્ર ઔર ઉત્કૃષ્ટ છહ ૬ આવલિકા પ્રમાણ હૈ, ઔપશમિક ઔર વેદક સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ જઘન્ય ઔર ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહૂર્ત કી હૈ । ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકી જઘન્ય એકસમયમાત્ર ઉત્કૃષ્ટ કુછ અધિક ૬૬ છાસઠ સાગર પ્રમાણ હૈ, ઔર ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ સાદિ અનંત હૈ ।

### (૨) સમ્યક્ત્વકી ઉત્પત્તિકી વ્યવસ્થા—

एक भवकी अपेक्षा औपशमिक सम्यक्त्व और सास्वादन सम्यक्त्व जघन्यसे एक बार ही उत्पन्न होते हैं और उत्कृष्टसे पांच बार । वेदक सम्यक्त्व उत्कृष्टसे और जघन्य से एक ही बार उत्पन्न होता है ।

### (૧) સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ

સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ જઘન્ય એક સમય માત્ર અને ઉત્કૃષ્ટ ૬ આવલિકાપ્રમાણ છે. ઔપશમિક અને વેદક સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહૂર્તની છે. ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વની જઘન્ય એકસમયમાત્ર, ઉત્કૃષ્ટ કાંઈ અધિક ૬૬ છાસઠ સાગર પ્રમાણ છે, અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ સાદિ અનંત છે.

### (૨) સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિની વ્યવસ્થા

એક ભવની અપેક્ષાએ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ અને સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વ જઘન્યથી એક વાર જ ઉત્પન્ન થાય છે. અને ઉત્કૃષ્ટથી પાંચ વાર. વેદક સમ્યક્ત્વ ઉત્કૃષ્ટથી અને જઘન્યથી એક જ વાર ઉત્પન્ન થાય છે. ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ જઘન્યથી એક વાર અને ઉત્કૃષ્ટથી અસંખ્યાતવાર ઉત્પન્ન થાય છે.

ક્ષાયોપશમિકં જઘન્યતઃ સકૃત્, ઉત્કૃષ્ટતસ્ત્વસંખ્યાતવારમ્ । ક્ષાયિકં તુ પ્રાદુર્ભૂતં સત્ પુનર્ન પ્રતિનિવર્તતે । પ્રાદુર્ભાવાનન્તરમવિચ્છેદેન સર્વદા તિષ્ઠતિ ।

### (૨) સમ્યક્ત્વસ્યાઽન્તરકાલઃ ।

ઔપશમિક-સાસ્વાદન-ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વાનાં પ્રત્યેકમન્તરકાલો જઘન્યતોઽન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કૃષ્ટતસ્તુ દેશોનાર્દ્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાલઃ । વેદકસ્યાઽન્તરં ન ભવતિ, તદનન્તરં નિયમતઃ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વોત્પત્તેઃ સંભવાત્ । ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં સાધનન્તં ચ, તસ્ય પુનર્નિવૃત્ત્યભાવાદન્તરં ન ભવતિ ।

ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ જઘન્યસે એક વાર ઔર ઉત્કૃષ્ટસે અસંખ્યાત વાર ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોનેકે બાદ ફિર નિવૃત્ત નહીં હોતા । વહ તો ઉત્પન્ન હોનેકે બાદ અવિચ્છિન્નરૂપસે સર્વદારહતા હૈ ।

### (૩) સમ્યક્ત્વકા અન્તરકાલ

ઔપશમિક, સાસ્વાદન, ઔર ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વમેં સે પ્રત્યેક કા વિરહકાલ જઘન્ય અંતર્મુહૂર્ત ઔર ઉત્કૃષ્ટ કુછ કમ અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાલ પ્રમાણ હૈ । વેદક-સમ્યક્ત્વમેં વિરહકાલ સંભવિત નહીં હૈ, ક્યોં કિ હિસ સમ્યક્ત્વ કે અનંતર નિયમ સે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકા લાભ જીવકો હો જાતા હૈ । ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ મેં અંતરકાલ નહીં હૈ, કારણ કિ હિસકા સદ્ભાવ હોને પર જીવ કો મુક્તિકા લાભ હો જાતા હૈ, હિસી લિયે યહ સમ્યક્ત્વ સાદિ ઔર અનન્ત હૈ । એક વાર સમકિત હો કર ફિર છૂટ જાને પર ફિર સે ઉસકી પ્રાપ્તિ હોને મેં જિતના સમય લગતા હૈ ઉસકા નામ વિરહ-કાલ હૈ । વેદક-સમ્યક્ત્વમેં વિરહ-કાલકા અભાવ

ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થયા પછી ફરી નિવૃત્ત થતું નથી. તે તો ઉત્પન્ન થયા પછી અવિચ્છિન્નરૂપથી સર્વદા રહે છે.

### (૩) સમ્યક્ત્વનો અંતરકાલ

ઔપશમિક, સાસ્વાદન અને ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ, એ પ્રત્યેકના વિરહકાલ જઘન્ય અંતર્મુહૂર્ત અને ઉત્કૃષ્ટ કાંઈ ઓછું અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાળ પ્રમાણ છે. વેદક સમ્યક્ત્વમાં વિરહકાળ સંભવિત નથી, કારણ કે આ સમ્યક્ત્વની પછી નિયમથી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ જીવને થઈ જાય છે. ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વમાં અંતરકાલ નથી, કારણ કે એનો સદ્ભાવ થવાથી જીવને મુક્તિનો લાભ થઈ જાય છે, તેથી આ સમ્યક્ત્વ સાદિ અને અનન્ત છે. એક વાર સમ્યક્ત્વ થઈને પછી જ્યારે તે છૂટી જાય છે ત્યારે ફરીથી તેની પ્રાપ્તિ થવામાં જોડલો સમય લાગે છે તેનું નામ વિરહકાળ છે. વેદક-સમ્યક્ત્વમાં વિરહકાળનો અભાવ



### (૪) સમ્યક્ત્વસ્ય ફલમ્—

સમ્યક્ત્વે સતિ-અસદ્ગ્રહઃ=આસવચનવાધિતાર્થેષુ પક્ષપાતો ન ભવતિ। અસદ્ગ્રહં પ્રતિ મિથ્યાત્વોદયસ્ય કારણત્વાત્ સમ્યક્ત્વસ્ય મિથ્યાત્વેક્ષયોપશમજન્યત્વેન સમ્યક્ત્વસદ્ભાવકાલે મિથ્યાત્વોદયાભાવાત્ ।

સમ્યક્ત્વે સતિ શ્રુતશ્રવણવાઙ્મણા, શ્રુતચારિત્રધર્મરાગઃ, ચતુર્વિધતીર્થવૈયાવૃત્ત્ય-નિયમશ્ચ ભવતિ । एषामुत्તरोत्तरं પ્રતિ પૂર્વપૂર્વસ્ય હેતુત્વં વોદ્યમ્ ।

હૈ, ક્યોં કિ વેદક-સમ્યક્ત્વ હોને પર ઉસકે વાદ ફિર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, વેદક-સમ્યક્ત્વ નહીં । વેદક-સમ્યક્ત્વકે છૂટને પર યદિ વેદક-સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ ફિર સે હોતી તો વિરહકાલ વહાં સંભવિત હોતા । ઇસ પ્રકાર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકે હોને પર જીવ અપની સ્થિતિ કો પૂર્ણ કર મુક્તિ સ્થાનકા હી સ્વામી બન જાતા હૈ, અતઃ એક વાર ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકે હોને પર ફિર ઉસી જીવકો ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ નહીં કરની પડતી । અતઃ યહાં પર બી વિરહકાલ સંભવિત નહીં ।

### (૪) સમ્યક્ત્વકા ફલ—

સમ્યક્ત્વકે હોતે હી જીવ કદાગ્રહસંપન્ન નહીં હોતા હૈ । ઉસકી દૃષ્ટિ-શ્રદ્ધા આસવચન સે અવાધિત પદાર્થોં મેં અનુરાગવાલી હોતી હૈ, ઇનસે ભિન્ન પદાર્થોં મેં નહીં । ક્યોંકિ કદાગ્રહ કા કારણ મિથ્યાત્વ કા ઉદય બતલાયા હૈ ઓર મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમાદિસે સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । સમ્યક્ત્વકે હોને પર મિથ્યાત્વકા અભાવ હો જાતા હૈ । કારણ કે અભાવમેં કાર્યકા અભાવ સુતરાં સિદ્ધ હી હૈ । કદાગ્રહ કા કારણ

છે, કારણ કે વેદક-સમ્યક્ત્વ થયાં પછી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે, વેદક-સમ્યક્ત્વ નહિ. વેદક-સમ્યક્ત્વના છુટ્યા પછી જો વેદક-સમ્યક્ત્વની ફરીથી પ્રાપ્તિ થતી હોત તો વિરહકાળ ત્યાં સંભવિત થાત. એ પ્રકારે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ થયા પછી જીવ પોતાની સ્થિતિને પૂર્ણ કરીને મુક્તિસ્થાનનો સ્વામી બની જાય છે. તેથી એક વાર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થતાં તે જ જીવને પછીથી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કરવી પડતી નથી, માટે આ ઠેકાણે પણ વિરહકાળ સંભવિત નથી.

### (૪) સમ્યક્ત્વનું ફલ

સમ્યક્ત્વ થવાથી જીવ કદાગ્રહસંપન્ન થતો નથી, એની દૃષ્ટિ-શ્રદ્ધા આપ્ત વચનથી અવાધિત પદાર્થોમાં જ અનુરાગવાળી થાય છે, એથી ભિન્ન પદાર્થોમાં નહિ. કેમ કે કદાગ્રહનું કારણ મિથ્યાત્વનો ઉદય બતાવ્યો છે, અને મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિથી સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે. સમ્યક્ત્વના હોવાથી મિથ્યાત્વનો અભાવ થઈ જાય છે. કારણના અભાવમાં કાર્યનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ છે. કદાગ્રહનું

મિથ્યાત્વ હૈ । સમ્યક્ત્વી જીવકે હસકા અભાવ હૈ ।

સમ્યક્ત્વકે હોને પર શ્રુતશ્રવણ કી અભિલાષા, શ્રુતધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ ઓર ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ, ંવં ચતુર્વિધ સંઘ કી વૈયાવૃત્તિ કરનેકા નિયમ જીવકે જાગૃત હોતા હૈ । ંનમેં આગે ૨ કે પ્રતિ પૂર્વ ૨ કો કારણતા હૈ, અર્થાત્ શ્રુતધર્મકા અનુરાગ જીવ કે તબ હી જાગૃત હો સકેગા જબ ંસકે અન્તરંગમેં શ્રુતશ્રવણકી ંચ્છા હોગી, શ્રુતશ્રવણેચ્છા કે વિના શ્રુતમેં અનુરાગ નહીં હો સકતા, જબ સદ્ગુણોંમેં અનુરાગ હૈ તો ંહ શ્રુતભક્તિરૂપ કાર્ય શ્રુતશ્રવણકે વિના નહીં હો સકતા, શ્રુતશ્રવણ ંધી વિના ંચ્છા કે સંભવિત નહીં । શ્રુતધર્મકે અનુરાગકે પ્રતિ શ્રુતશ્રવણ કી વાઙ્છા કારણ હૈ । ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ ંધી જીવકો તબ હી હોગા જબ ંસકે અન્તરંગમેં શ્રુતધર્મકા અનુરાગ હોગા । શ્રુતાનુરાગ કા અભિપ્રાય ંહી હૈ કિ શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ પર દૃઢ આસ્થા । ંસ માર્ગ પર દૃઢ આસ્થાવાલા જીવ હી ચારિત્રધર્મકા સ્વયં આરાધન કરનેવાલા, અથવા ંસકે ધારક મુનિયોંકે પ્રતિ અનુરાગી બનતા હૈ, અનાસ્થાવાલા નહીં, અતઃ ચારિત્રધર્મકે અનુરાગ કા કારણ શ્રુતાનુરાગ હી હૈ । ચારિત્રધર્મમેં જબ તક અનુરાગ નહીં હોગા તબ તક ંહ જીવ કિસી પ્રકાર ંધી ચતુર્વિધ સંઘ કી સેવા કરને કા નિયમકર્તા નહીં હો સકતા; અતઃ ંન

કારણ મિથ્યાત્વ છે. સમ્યક્ત્વી જીવને એનો અભાવ છે

સમ્યક્ત્વના હોવાથી શ્રુતશ્રવણની અભિલાષા, શ્રુતધર્મ પ્રતિ અનુરાગ અને ચારિત્રધર્મ પ્રતિ અનુરાગ એમજ ચતુર્વિધ સંઘની વૈયાવૃત્તિ કરવાનો નિયમ જીવને જાગૃત થાય છે. એમાં આગળ ૨ ના પ્રતિ પૂર્વ ૨ માં કારણતા છે. અર્થાત્ શ્રુતધર્મનો અનુરાગ જીવને ત્યારે જ જાગૃત થાય છે, જ્યારે એના અંતરંગમાં શ્રુતશ્રવણની ંચ્છા થાય છે. શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિના શ્રુતમાં અનુરાગ થઈ જ શકતો નથી. જ્યારે સદ્ગુણોમાં અનુરાગ છે તો એ શ્રુતભક્તિરૂપ કાર્ય શ્રુતશ્રવણ વિના નથી થતું. શ્રુતશ્રવણ પણ વગર ંચ્છાએ સંભવિત નથી. શ્રુતધર્મના અનુરાગની પ્રતિ શ્રુતશ્રવણની ંચ્છા કારણ છે. ચારિત્રધર્મના પ્રતિ અનુરાગ પણ જીવને ત્યારે જ થશે જ્યારે એના અંતરંગમાં શ્રુતધર્મનો અનુરાગ હોય. શ્રુતાનુરાગનો અભિપ્રાય એ છે કે શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ પર દૃઢ આસ્થાવાળા જીવ જ ચારિત્રધર્મનું સ્વયં આરાધન કરવાવાળા, અથવા એના ધારક મુનિયોની પ્રતિ અનુરાગી બને છે, અનાસ્થાવાળા નહિ, માટે ચારિત્રધર્મના અનુરાગનું કારણ શ્રુતાનુરાગ જ છે. ચારિત્રધર્મમાં જ્યાં સુધી અનુરાગ નહિ થાય ત્યાં સુધી એ જીવ કોઈ પ્રકારે પણ ચતુર્વિધ સંઘની સેવા કરવાનો નિય-

નન્વસદ્ગ્રહસ્ય મિથ્યાત્વોદયજન્યત્વેન સમ્યક્ત્વે સતિ તત્ક્ષયોપશમાદસ્તુ તદભાવઃ, કિંતુ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદીનાં જ્ઞાનચારિત્રાંશરૂપત્વેન જ્ઞાનાવરણીયચારિત્રમોહનીયવીર્યાન્તરાયકર્મક્ષયોપશમજન્યત્વાત્ કથં સમ્યક્ત્વફલરૂપત્વં તેષામ્ ? इति चेत्,

કી સેવા આદિ કરનેરૂપ નિયમ કે પ્રતિ ચારિત્રધર્મકા અનુરાગ હી કારણ હોતા હૈ ।

શઙ્કા—માના કિ અસદ્ગ્રહ કે મિથ્યાત્વોદયજન્ય હોને સે મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમ સે ઉસ અસદ્ગ્રહકા અભાવ હો જાતા હૈ, પરન્તુ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વગેરહ જો જ્ઞાન ઓર ચારિત્રકે અંશરૂપ હૈં, इन्हें सમ्यक्त्व का फल कैसे माना जा सकता है ? कारण कि इनके रोधक ज्ञानावरणीय, चारित्रमोहनीय और वीर्यान्तर कर्म हैं, इनके क्षयोपशम से उनका प्रादुर्भाव होता है, अतः श्रुतश्रवणेच्छा वगैरह को सत्यक्त्वका फल न मानकर ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंके क्षयोपशमका ही फल मानना चाहिये।

વિશેષાર્થ—શઙ્કાકારકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ શ્રુતશ્રવણેચ્છા મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમાદિસે નહીં હોતી હૈ; કિન્તુ વહ શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમસે હી જીવ કો હોતી હૈ । શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ જ્ઞાનાવરણીય કર્મકા ઇક ભેદ હૈ । ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ જીવકા અનુરાગ ખી ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમાધીન હૈ, અતઃ ઇસે ખી સમ્યક્ત્વ કા ફલ ન માન કર ચારિત્રમોહનીય કે ક્ષયોપશમ કા હી ફલ માનના

મકર્તા નથી થતો. માટે એની સેવા કરવારૂપ નિયમની પ્રતિ ચારિત્રધર્મનો અનુરાગ જ કારણ રૂપ થાય છે.

શંકા—માન્યું કે અસદ્ગ્રહ મિથ્યાત્વોદયજન્ય હોવાથી મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમથી એ અસદ્ગ્રહનો અભાવ થઈ જાય છે. પરંતુ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિગેરે જે જ્ઞાન અને ચારિત્રના અંશરૂપ છે એને સમ્યક્ત્વનું ફળ કેવી રીતે માનવામાં આવે ? કારણ કે એના રોધક જ્ઞાનાવરણીય ચારિત્રમોહનીય અને વીર્યાન્તરાય કર્મ છે. એના ક્ષયોપશમથી એનો પ્રાદુર્ભાવ થાય છે. માટે શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિગેરેને સમ્યક્ત્વનું ફળ ન માનીને જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના ક્ષયોપશમનું જ ફળ માનવું જોઈએ.

વિશેષાર્થ—શંકાકારનો એ અભિપ્રાય છે કે:—શ્રુતશ્રવણેચ્છા મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિથી નથી થતી કિન્તુ તે શ્રુત જીવને જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી જ થાય છે. શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો એક ભેદ છે. ચારિત્રધર્મની પ્રતિ જીવનો અનુરાગ પણ ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમાધીન છે. માટે એને સમ્યક્ત્વનું ફળ ન માનીને ચારિત્રમોહનીયના ક્ષયોપશમનું જ ફળ



અત્રોચ્યતે—મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાવસરે જ્ઞાનાવરણીયાનન્તાનુબંધિકષાયરૂપ-  
ચારિત્રમોહનીયાદિકર્મણામપિ ક્ષયોપશમો ભવતીતિ કૃત્વા સમ્યક્ત્વે સતિ શ્રુતશ્રવ-  
ણેચ્છાદયો ભવન્તીત્યુચ્યતે । યથા કેવલજ્ઞાનાવરણક્ષયજન્યમપિ કેવલજ્ઞાનં ચારિ-  
ત્રમોહનીયાંશકષાયક્ષયે સત્યેવ ભવતીતિ । યથા વા મિથ્યાત્વક્ષયોપશમલભ્યમપિ  
સમ્યક્ત્વમનન્તાનુબંધિકષાયરૂપચારિત્રમોહનીયોદયે સતિ ન લભ્યતે । ઉક્તશ્ચ—  
ઉપયુક્ત પ્રતીતિ હોતા હૈ । નિષ્કર્ષ યહી હૈ કિ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કો  
સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્રકા હી ફલ માનના ચાહિયે, સમ્ય-  
ક્ત્વ કા નહીં ।

સમાધાન—શઙ્કાકારકી શઙ્કા ઠીક નહીં । કારણ કિ જિસ સમય  
મિથ્યાત્વકા ક્ષયોપશમ હોતા હૈ ઉસ સમય જ્ઞાનાવરણીય ઓર અનન્તા-  
નુબંધિકષાયરૂપ ચારિત્રમોહનીયાદિક કર્મોં કા મી ક્ષયોપશમ હોતા  
હૈ । હીસી ધ્યેય કો લેકર—‘સમ્યક્ત્વ કે હોને પર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક હોતે  
હૈ’ એસા કહા ગયા હૈ । જૈસે—કેવલજ્ઞાન, કેવલજ્ઞાનાવરણકે ક્ષય સે  
ઉત્પન્ન હોતા હૈ, પરન્તુ જબ તક ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે અંશ—ભેદ-  
સ્વરૂપ કષાયોં કા ક્ષય નહીં હોતા તબ તક કેવલજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિ નહીં  
હોતી, અતઃ કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ હનકે ક્ષય હોને પર હી હોતી હૈ ।  
હીસી પ્રકાર સમ્યક્ત્વ મી યદ્યપિ મિથ્યાત્વકે ક્ષયોપશમ સે હી હોતા હૈ,  
પરન્તુ જબ તક અનંતાનુબંધિકષાયરૂપ ચારિત્રમોહનીયકા ઉદય બના  
રહતા હૈ તબ તક યહ પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા હૈ ।

માનવું ઉપયુક્ત પ્રતીતિ થાય છે. નિષ્કર્ષ એ છે કે શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોને સમ્ય-  
ગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રનું જ ફળ માનવું બેઠ્યું, સમ્યક્ત્વનું નહિ.

સમાધાન—શંકાકારની શંકા ઠીક નહિ, કારણ કે જે વખતે મિથ્યાત્વનો  
ક્ષયોપશમ થાય છે તે વખતે જ્ઞાનાવરણીય અને અનંતાનુબંધિકષાયરૂપ ચારિત્ર  
મોહનીયાદિક કર્મોનો પણ ક્ષય થાય છે.

એ ધ્યેયને લઈને જ—‘સમ્યક્ત્વના થવાથી શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક થાય છે’—  
એવું કહેવામાં આવ્યું છે. જેવી રીતે કેવળજ્ઞાન કેવળ જ્ઞાનાવરણના ક્ષયથી ઉત્પન્ન  
થાય છે; પરન્તુ જ્યાં સુધી ચારિત્રમોહનીય કર્મના અંશ—ભેદ-સ્વરૂપ કષાયોનો ક્ષય  
નથી થતો ત્યાં સુધી કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ નથી થતી, માટે કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ  
એનો ક્ષય થવાથી જ થાય છે. એવી જ રીતે સમ્યક્ત્વ પણ યદ્યપિ મિથ્યાત્વના  
ક્ષયોપશમથી જ થાય છે, પરંતુ જ્યાં સુધી અનંતાનુબંધિકષાયરૂપ ચારિત્ર  
મોહનીયનો ઉદય બન્યો રહે છે ત્યાં સુધી તે પ્રાપ્ત થતું નથી.

વિશેષાર્થ—કારણ દો પ્રકારકે હુઆ કરતે હૈ—એક સંનિકટ-કારણ દૂસરા વ્યવહિત-કારણ, સંનિકટ-કારણ કો મુખ્ય કારણ ઓર વ્યવહિત કારણ કો ગૌણ કારણ મી કહતે હૈ. પ્રકૃતમેં શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા મુખ્ય કારણ સમ્યગ્દર્શન હી હૈ, ક્યોં કિ વિના સમ્યગ્દર્શન કે इनका सद्भाव नहीं हो सकता, सत्यगदर्शन के होने पर ही ये होते हैं, इसी लिये ये सत्यगदर्शन के फलरूप से कहे गये हैं। “ एक कार्य के अनेक कारण भी होते हैं, परन्तु जो मुख्य होता है वही प्रधान माना जाता है। ” इस नीतिके अनुसार भले ही श्रुतश्रवणेच्छादिकों का कारण ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का क्षयोपशम भी हो, परन्तु ये सब व्यवहित कारण हैं। दृष्टान्त के लिये—केवलज्ञानकी प्राप्ति का मुख्य कारण केवल ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय ही है, परन्तु जब तक मोहनीय कर्मका क्षय नहीं होता, तब तक केवलज्ञानावरणीय कर्मका क्षय नहीं हो सकता।

“ खीणमोहस्सणं अरहओ तओ कम्मंसा जुगवं खिज्जंति, तं जहा-नाणावरणिज्जं, दंसणावरणिज्जं, अंतराइयं ” ( स्था. स्था. ૩ ડ. ૪ )

यही बात इस सूत्रमें प्रगट की गई है। इसी तरह सत्यगदर्शन भी मिथ्यात्व के क्षयोपशम से होता है, परन्तु जब तक अनंतानुबंधी कषाय

વિશેષાર્થ—કારણ બે પ્રકારે થયા કરે છે—એક સંનિકટ-કારણ, બીજું વ્યવહિત-કારણ. સંનિકટ-કારણને મુખ્ય કારણ અને વ્યવહિત કારણને ગૌણ કારણ પણ કહે છે. પ્રકૃતમાં શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મુખ્ય કારણ સમ્યગ્દર્શન છે, કારણ કે સમ્યગ્દર્શન વિના તેનો સદ્ભાવ નથી થતો. સમ્યગ્દર્શનના થવાથી તે થાય છે, તેથી તે સમ્યગ્દર્શનના ફળરૂપથી કહેવામાં આવે છે. “ એક કાર્યના અનેક કારણો પણ થાય છે પરંતુ જે મુખ્ય થાય છે તે જ પ્રધાન માનવામાં આવે છે ” આ નીતિ-અનુસાર ભલે શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કારણ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનો ક્ષયોપશમ પણ હોય, પરંતુ એ બધા વ્યવહિત કારણ છે. દૃષ્ટાન્તને માટે—કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિનું મુખ્ય કારણ કેવળજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષય જ છે, પરંતુ જ્યાં સુધી મોહનીયકર્મનો ક્ષય નથી થતો ત્યાં સુધી કેવળજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષય નથી થતો.

“ खीणमोहस्स णं अरहओ तओ कम्मंसा जुगवं खिज्जंति, तं जहा-नाणा-वरणिज्जं, दंसणावरणिज्जं अंतराइयं ( स्था. स्था. ૩ ડ ૪ )

આ વાત આ સૂત્રથી પ્રગટ કરી છે. એ પ્રકારે સમ્યગ્દર્શન પણ મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમથી થાય છે, પરંતુ જ્યાંસુધી અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષયોપશમ નથી થતો ત્યાં સુધી મિથ્યાત્વનો ક્ષયોપશમ નથી થતો.

“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે નિયમા, સંજોયણા કસાયાણં ।  
સમ્મહંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥

હાયા — “ પ્રાથમિકાનામુદયે નિયમાત્ સંયોજના કષાયાણામ્ ।  
સમ્યગ્દર્શનલાભં, ભવસિદ્ધિકા અપિ ન લભન્તે ॥ ૧ ॥

નનુ વૈયાવૃત્ત્યનિયમસ્ય તપઃપ્રભેદત્વેન ચારિત્રાંશરૂપતાત્ સમ્યક્ત્વે સતિ  
ચાવશ્યંભાવાદવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિગુણસ્થાનં વિલુપ્યેત ? ૨ ૩ ૪ ૫ ૬ ૭ ૮ ૯ ૧૦ ૧૧ ૧૨ ૧૩ ૧૪ ૧૫ ૧૬ ૧૭ ૧૮ ૧૯ ૨૦ ૨૧ ૨૨ ૨૩ ૨૪ ૨૫ ૨૬ ૨૭ ૨૮ ૨૯ ૩૦ ૩૧ ૩૨ ૩૩ ૩૪ ૩૫ ૩૬ ૩૭ ૩૮ ૩૯ ૪૦ ૪૧ ૪૨ ૪૩ ૪૪ ૪૫ ૪૬ ૪૭ ૪૮ ૪૯ ૫૦ ૫૧ ૫૨ ૫૩ ૫૪ ૫૫ ૫૬ ૫૭ ૫૮ ૫૯ ૬૦ ૬૧ ૬૨ ૬૩ ૬૪ ૬૫ ૬૬ ૬૭ ૬૮ ૬૯ ૭૦ ૭૧ ૭૨ ૭૩ ૭૪ ૭૫ ૭૬ ૭૭ ૭૮ ૭૯ ૮૦ ૮૧ ૮૨ ૮૩ ૮૪ ૮૫ ૮૬ ૮૭ ૮૮ ૮૯ ૯૦ ૯૧ ૯૨ ૯૩ ૯૪ ૯૫ ૯૬ ૯૭ ૯૮ ૯૯ ૧૦૦

કા ક્ષયોપશમ નહીં હોતા, તબ તક મિથ્યાત્વ કા ક્ષયોપશમ નહીં હો  
સકતા । હસી લિયે મિથ્યાત્વકે ક્ષયોપશમકે અવસર મેં અનંતાનુબંધી  
કષાયકા ક્ષયોપશમ અપેક્ષણીય હોતા હૈ । નિષ્કર્ષ-શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં  
કા અવ્યવહિત-મુખ્ય-કારણ સમ્યગ્દર્શન હી હૈ, અતઃ યે ઉસકે હી ફલ  
સ્વરૂપ સે યહાં પ્રકટ કિયે ગયે હૈ । કહા ખી હૈ—

“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે, નિયમા સંજોયણા કસાયાણં ।

સમ્મહંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥ ૨ ૩ ૪ ૫ ૬ ૭ ૮ ૯ ૧૦ ૧૧ ૧૨ ૧૩ ૧૪ ૧૫ ૧૬ ૧૭ ૧૮ ૧૯ ૨૦ ૨૧ ૨૨ ૨૩ ૨૪ ૨૫ ૨૬ ૨૭ ૨૮ ૨૯ ૩૦ ૩૧ ૩૨ ૩૩ ૩૪ ૩૫ ૩૬ ૩૭ ૩૮ ૩૯ ૪૦ ૪૧ ૪૨ ૪૩ ૪૪ ૪૫ ૪૬ ૪૭ ૪૮ ૪૯ ૫૦ ૫૧ ૫૨ ૫૩ ૫૪ ૫૫ ૫૬ ૫૭ ૫૮ ૫૯ ૬૦ ૬૧ ૬૨ ૬૩ ૬૪ ૬૫ ૬૬ ૬૭ ૬૮ ૬૯ ૭૦ ૭૧ ૭૨ ૭૩ ૭૪ ૭૫ ૭૬ ૭૭ ૭૮ ૭૯ ૮૦ ૮૧ ૮૨ ૮૩ ૮૪ ૮૫ ૮૬ ૮૭ ૮૮ ૮૯ ૯૦ ૯૧ ૯૨ ૯૩ ૯૪ ૯૫ ૯૬ ૯૭ ૯૮ ૯૯ ૧૦૦

શઙ્કા—વૈયાવૃત્ત્યનિયમ કો આપને સમ્યક્ત્વ કા ફલ કૈસે કહ  
દિયા ? કારણ કિ વહ તો અંતરંગ ચારિત્રકા એક ભેદ હૈ । યદિ હસ  
વૈયાવૃત્ત્યનિયમોં કા સમ્યક્ત્વ કે હોને પર અવશ્યંભાવ માના જાવે તો  
ફિર અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ નામકા ચતુર્થ ગુણસ્થાન હી નહીં બન સકતા,  
કારણ કિ હસ અવસ્થા મેં ખી આંશિક રૂપસે ચારિત્રકા સદ્ભાવ હસ  
માન્યતા સે સિદ્ધ હો જાતા હૈ ।

એથી મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમના અવસરમાં અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષયો-  
પશમ અપેક્ષણીય થાય છે. નિષ્કર્ષ-શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનું અવ્યવહિત-મુખ્ય-કારણ  
સમ્યગ્દર્શન જ છે, માટે એ એના જ ફલસ્વરૂપથી અહીંયા પ્રગટ કરવામાં  
આવેલ છે. કહ્યું પણ છે—

“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે, નિયમા સંજોયણા કસાયાણં ।

સમ્મહંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥ ૨ ૩ ૪ ૫ ૬ ૭ ૮ ૯ ૧૦ ૧૧ ૧૨ ૧૩ ૧૪ ૧૫ ૧૬ ૧૭ ૧૮ ૧૯ ૨૦ ૨૧ ૨૨ ૨૩ ૨૪ ૨૫ ૨૬ ૨૭ ૨૮ ૨૯ ૩૦ ૩૧ ૩૨ ૩૩ ૩૪ ૩૫ ૩૬ ૩૭ ૩૮ ૩૯ ૪૦ ૪૧ ૪૨ ૪૩ ૪૪ ૪૫ ૪૬ ૪૭ ૪૮ ૪૯ ૫૦ ૫૧ ૫૨ ૫૩ ૫૪ ૫૫ ૫૬ ૫૭ ૫૮ ૫૯ ૬૦ ૬૧ ૬૨ ૬૩ ૬૪ ૬૫ ૬૬ ૬૭ ૬૮ ૬૯ ૭૦ ૭૧ ૭૨ ૭૩ ૭૪ ૭૫ ૭૬ ૭૭ ૭૮ ૭૯ ૮૦ ૮૧ ૮૨ ૮૩ ૮૪ ૮૫ ૮૬ ૮૭ ૮૮ ૮૯ ૯૦ ૯૧ ૯૨ ૯૩ ૯૪ ૯૫ ૯૬ ૯૭ ૯૮ ૯૯ ૧૦૦

શંકા—વૈયાવૃત્ત્ય નિયમને આપે સમ્યક્ત્વનું ફળ કેવી રીતે કહ્યું, કારણ  
કે તે તો અંતરંગ ચારિત્રનો એક ભેદ છે. યદિ સમ્યક્ત્વ થવાથી એનો અવ-  
શ્યંભાવ માનવામાં આવે તો પણ અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ નામનું ચતુર્થ ગુણસ્થાન  
બની શકતું નથી, કારણ કે આ અવસ્થામાં પણ આંશિક રૂપથી ચારિત્રનો સદ્ભાવ  
આ માન્યતાથી સિદ્ધ થાય છે.



वैयावृत्यनियमरूपचारित्रस्याल्पतमत्वेन चारित्रतया तद्विवक्षाया अभावात् । यथा-संमूर्च्छनजानां संज्ञासामान्यसत्त्वेऽपि विशिष्टसंज्ञाया अभावादसंज्ञित्वमङ्गीकृतम् । विरतत्वं हि महाव्रतादिरूपानल्पचारित्रसद्भाव एव स्वीक्रियते । यथा-एकरूप्यकमात्रधनेन धनधान्यमिति न व्यपदिश्यते, यथा वा नाप्येकया गवा गोमान् ; यथा वा एकेनैव शुण्ठीग्रन्थिना 'पंसारी' ति-भाषापदव्यपदेश्यो वणिग् न भवतीति ।

शङ्काकार की शङ्का का खुलासा इस प्रकार है-चतुर्थगुणस्थानवर्ती जीवके चारित्रका सद्भाव नहीं माना गया है, कारण कि वह अविरत-दशासंपन्न है । उसके केवल एक सम्यग्दर्शनरूपी ज्योतिका प्रादुर्भाव है, चारित्र का नहीं । चारित्रका सद्भाव पंचमगुणस्थान से प्रारंभ होता है । अब यदि वैयावृत्यनियम को सम्यग्दर्शन का फल माना जावेगा तो सम्यग्दर्शन के होने पर इसका सद्भाव अवश्य मानना ही पड़ेगा । ऐसी दशा में चतुर्थगुणस्थानवर्ती जीवके भी आंशिकरूप से चारित्र का सद्भाव सिद्ध हो जाता है, तब वह अविरत न रह कर विरत ही सिद्ध हुआ ।

समाधान-वैयावृत्यनियम चारित्र का एक भेद है, परन्तु वह पूर्ण चारित्र नहीं है, आंशिक चारित्र ही है, और यह यहां पर बहुत ही अल्प दशामें है, इस लिये उसकी चारित्ररूप से यहां विवक्षा नहीं है । महाव्रतादिरूप विशिष्ट चारित्र ही चारित्ररूपसे विवक्षित होते हैं, वे यहां पर नहीं हैं; अतः सम्यग्दर्शनका अस्तित्व होने पर भी इस दशामें इस प्रकारका कोई भी चारित्र यहां पर नहीं है । इसी लिये यह अविरत

शंकाकारની શંકાનો ખુલાસો આ પ્રકારે છે:- ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી જીવને ચારિત્રનો સદ્ભાવ માનવામાં નથી આવ્યો, કારણ કે તે અવિરતદશાસંપન્ન છે. તેને ફક્ત એક સમ્યગ્દર્શનરૂપી જ્યોતિનો પ્રાદુર્ભાવ છે, ચારિત્રનો નહિ. ચારિત્રનો સદ્ભાવ પંચમગુણસ્થાનથી પ્રારંભ થાય છે. હવે જો વैयाવૃત્યનિયમને સમ્યગ્દર્શનનું ફળ માનવામાં આવે તો સમ્યગ્દર્શનના થવાથી એનો સદ્ભાવ અવશ્ય માનવો પડે. આવી દશામાં ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી જીવને પણ આંશિકરૂપથી ચારિત્રનો સદ્ભાવ સિદ્ધ થાય છે, ત્યારે એ અવિરત ન રહીને વિરત જ સિદ્ધ થાય છે.

સમાધાન-વैयाવૃત્યનિયમ ચારિત્રનો એક ભેદ છે, પરન્તુ તે પૂર્ણ ચારિત્ર નથી, આંશિક ચારિત્ર છે, અને તે અહીંયા ઘણો જ અલ્પ દશામાં છે, એથી એના ચારિત્રરૂપથી આ ઠેકાણે વિવક્ષા નથી. મહાવ્રતાદિરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર જ ચારિત્રરૂપથી વિવક્ષિત થાય છે, તે આ ઠેકાણે નથી; માટે સમ્યગ્દર્શનનું અસ્તિત્વ હોવા છતાં પણ આ દશામાં આ પ્રકારનું કોઈ પણ ચારિત્ર આ ઠેકાણે નથી,

નનૂપશાન્તમોહાદીનાં સમ્યક્ત્વે સત્યપિ કૃતકૃત્યતયા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદયો ન ભવન્તિ, તથા ચ કાર્યકારણભાવનિયામકાન્વયવ્યતિરેકવિરહાત્ તેષાં સમ્યક્ત્વ-સમ્યગ્દષ્ટિ કહલાતા છે. અલ્પતમ ચારિત્રકે સદ્ભાવસે યહ ચારિત્રરૂપસે વિવક્ષિત નહીં હો સકતા છે. જૈસે-સંમૂર્છજન્મસે ઉત્પન્ન હુણ જીવ અત્યન્ત સામાન્ય સંજ્ઞાકા સદ્ભાવ રહને પર મી વિશિષ્ટ સંજ્ઞાકે અભાવ હોને સે અસંજી હી કહે જાતે હૈં. હાં, મહાવ્રતાદિકરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર યદિ કોઈ હોતા તો યહ વ્રતી કહલાતા. ક્યોં કિ-સમસ્ત મહાવ્રતરૂપી ચારિત્રકે સદ્ભાવ મેં હી વ્રતિત્વ સ્વીકાર કિયા જાતા છે. હસી વસ્તુ કો ટીકાકાર કહતે હૈં--

“વિરતત્વં હિ મહાવ્રતાદિરૂપાનલ્પચારિત્રસદ્ભાવ એવ સ્વીક્રિયતે” ઇતિ.

ટીક છે; જૈસે-માત્ર એક રૂપયા કે રહને પર કોઈ ધની નહીં માના જાતા છે?, જૈસે એક હી ગાય કે અસ્તિત્વમેં કોઈ ગોપાલ નહીં કહા જાતા છે, ઓર જૈસે એક ગાંઠ સોંઠકે રાવને સે કોઈ પંસારી નહીં હોતા છે, હસી પ્રકાર હસ અલ્પતમ આંશિક ચારિત્ર કે અસ્તિત્વ સે મી સમ્યગ્દષ્ટિ ( અવિરતદશાસંપન્ન સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ ) ચારિત્રી નહીં બન સકતા.

શઙ્કા—ઉપશાન્તમોહવાલે જીવોં કે સમ્યક્ત્વકે હોને પર મી શ્રુત-શ્રવણેચ્છાદિક નહીં હોતે હૈં, કારણ કિ વે કૃતકૃત્ય હો ચુકે હૈં. હસ

તેથી આ અવિરતસમ્યગ્દષ્ટિ કહેવાય છે. અલ્પતમ ચારિત્રના સદ્ભાવથી એ ચારિત્રરૂપથી વિવક્ષિત નથી થઈ શકતું. જેમ સંમૂર્છન જન્મથી ઉત્પન્ન થયેલ એવ અત્યન્ત સામાન્ય સંજ્ઞાનો સદ્ભાવ હોવા છતાં પણ વિશિષ્ટ સંજ્ઞાનો અભાવ હોવાથી અસંજી કહેવાય છે. હાં, મહાવ્રતાદિકરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર યદિ કોઈ હોત તો તે વ્રતી કહેવાત? કારણ કે-સમસ્ત મહાવ્રતરૂપી ચારિત્રના સદ્ભાવમાં જ વ્રતિત્વ સ્વીકાર કરવામાં આવે છે, એ જ વસ્તુને ટીકાકાર કહે છે:--

“વિરતત્વં હિ મહાવ્રતાદિરૂપાનલ્પચારિત્રસદ્ભાવ એવ સ્વીક્રિયતે” ઇતિ.

ટીક પણ છે; જેમ ફક્ત એક રૂપિયાના રહેવાથી કોઈ ધનવાન નથી કહેવાતો, જેમ એક ગાય રહેવાથી કોઈ ગોપાલ નથી કહેવાતો, અને જેમ સુંઠની એક ગાંઠ રાખવાથી કોઈ ગાંધી નથી થતો, તે પ્રકારે આ અલ્પતમ આંશિક ચારિત્રના અસ્તિત્વથી પણ સમ્યગ્દષ્ટિ ( અવિરતદશાસંપન્ન સમ્યગ્દષ્ટિ એવ ) ચારિત્રી બની શકતો નથી.

શંકા—ઉપશાન્તમોહવાળા એવોને સમ્યક્ત્વ હોવા છતાં પણ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક નથી થતાં, કારણ કે તે કૃતકૃત્ય થયેલ છે, તેથી કાર્યકારણભાવનું નિયામક



ફલત્વં ન સંભવતીતિ ચેત્, મૈવમ્, શ્રુતશ્રવણેચ્છાદીનાં મોહોપશાન્તિફલકત્વેન ફલરૂપેણ તેષ્વપિ શ્રુતશ્રવણવાચ્છાદિસદ્ભાવાત્, યદ્વા-શ્રાવકાવસ્થાયાં યત્ સમ્યક્ત્વં તદાશ્રિત્ય શ્રુતશ્રવણેચ્છાદયો ભવન્તીતિ વિવક્ષયા તેષાં સમ્યક્ત્વફલત્વં સંભવત્યેવેતિ ।

લિયે કાર્યકારણભાવકે નિયામક અન્વય ઓર વ્યતિરેકકા વિઘટન હોનેસે સમ્યક્ત્વ ઓર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં પરસ્પરમેં કાર્યકારણભાવ નહીં બન સકતા ।

સમાધાન—શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા મોહોપશાન્તિ ફલવાલે હોનેસે ફલરૂપસે વહાં પર સદ્ભાવ હૈ ।

વિશેષાર્થ—અમી પ્રતિવાદીને જો સમ્યગ્દર્શન ઓર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા યહાં પર કાર્યકારણભાવ, અન્વય વ્યતિરેક કે ન ઘટનેસે નહીં સ્વીકાર કિયા થા ઉસકા સમાધાન કરતે હુએ આચાર્ય મહારાજ કહતે હૈં કિ-હે શિષ્ય ! ઉપશાન્ત મોહવાલે જીવોંમેં મી શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા સદ્ભાવ હૈ । યદિ ઇનકા યહાં પર સદ્ભાવ ન માના જાવે તો ઇન જીવોંકી ઉપશાન્તતા હુઈ હૈ વહ ઘટિત નહીં હો સકતી । મોહકી ઉપશાન્તતા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા ફલ હૈ, ઓર શ્રુતશ્રવણાદિક સમ્યગ્દર્શનકે ફલ સ્વરૂપ હૈ, ઇતાવતા વે નિષ્ફલ હોં યહ બાત નહીં; કારણ કિ ફલ મી તો સ્વયં ફલવાન હુઆ કરતે હૈં, અતઃ ઉપશાન્ત મોહવાલે જીવોંમેં વિદ્યમાન સમ્યગ્દર્શન સફલ હૈ; નિષ્ફલ નહીં, ઇસ લિયે સમ્યગ્દર્શન

અન્વય અને વ્યતિરેકનું વિઘટન હોવાથી સમ્યક્ત્વ અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંમાં પરસ્પરમાં કાર્યકારણભાવ બની શકતો નથી.

સમાધાન—શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનો મોહોપશાન્તિ ઇળવાળા હોવાથી ઇળરૂપથી ત્યાં પણ સદ્ભાવ છે.

વિશેષાર્થ:—અત્યારે પ્રતિવાદીએ જે સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંના આ ઠેકાણે કાર્યકારણ-ભાવ અન્વયવ્યતિરેકના નહિ ઘટવાથી સ્વીકાર કરેલ નથી, એનું સમાધાન કરતાં આચાર્ય મહારાજ કહે છે કે-ભાઈ ! ઉપશાન્તમોહવાળા જીવોંમાં પણ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનો સદ્ભાવ છે. જે તેનો ત્યાં સદ્ભાવ ન માનવામાં આવે તો આ જીવોંના મોહની જે ઉપશાન્તતા થઈ છે તે ઘટિત થતી નથી. મોહની ઉપશાન્તતા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનું ઇળ છે, અને શ્રુતશ્રવણાદિક સમ્યગ્દર્શનનું ઇળસ્વરૂપ છે, તેથી તે સમ્યગ્દર્શન નિષ્ફળ થાય એવી કોઈ વાત નહિ; કારણ કે ઇળ પણ સ્વયં ઇળવાન થયા કરે છે, તેથી ઉપશાન્ત-મોહવાળા જીવોંમાં વિદ્યમાન સમ્યગ્દર્શન સફળ થાય છે; નિષ્ફળ નહિ. આ માટે



ભાવતો વ્રતાઙ્ગીકરણમપિ સમ્યક્ત્વસ્ય ફલં ભવતિ, પરન્તુ સમ્યક્ત્વે સતિ કદાચિત્ તદ્ ભવતિ, કદાચિન્ન । યદપિ ગ્રન્થિભેદાદેવ સમ્યક્ત્વમુદ્ભવતિ સમ્યક્ત્વ-વાંશ્ચ વ્રતાઙ્ગીકરણમેવોપાદેયતરં વિજાનાતિ; તથાપિ યાવત્યાં કર્મસ્થિતૌ સત્યાં સમ્યક્ત્વલાભો ભવતિ તાવત્યામેવ વ્રતાઙ્ગીકરણં ન સંભવતિ । વ્રતાઙ્ગીકરણં પ્રતિ ચારિત્રમોહનીયકર્મક્ષયોપશમસ્ય સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિકરણકર્મક્ષયોપશમાપેક્ષયાઽધિકત-રસ્ય કારણત્વાત્ ।

ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં પરસ્પર કાર્યકારણ સંબંધ સુઘટિત હો જાતા હૈ । અથવા—સમ્યગ્દર્શન ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં જો કાર્યકારણ ભાવ સંબંધ કહા ગયા હૈ વહ શ્રાવક-અવસ્થા મેં હોનેવાલે સમ્યગ્દર્શનકી અપેક્ષા સે સમજ લેના ચાહિયે । શ્રાવક-અવસ્થા મેં વિદ્યમાન સમ્યક્ત્વ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા જનક વહાં પર હોતા હૈ ।

સદ્ભાવનાપૂર્વક વ્રતાદિકોં કા અંગીકાર કરના મી સમ્યક્ત્વ કા ફલ હૈ । યહાં ટીકા મેં જો “અપિ” શબ્દ દિયા ગયા હૈ ઉસકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ સમ્યક્ત્વ કે હોને પર વ્રતાદિકોં કા આચરણ કમી હોતા મી હૈ ઔર કમી નહીં મી હોતા । યહ નિયમ નહીં કિ સમ્યક્ત્વ કે હોને પર વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોં કા સદ્ભાવ જીવોં કે હોવે હી । યદપિ રાગદ્વેષકી પ્રબલ ગ્રન્થિ કે ભેદ સે હી સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઔર સમ્યક્ત્વી જીવ વ્રતા-દિક અનુષ્ઠાનોં કા અંગીકાર કરના શ્રેયસ્કર માનતા હૈ, પરન્તુ જિતની કર્મકી સ્થિતિ રહને પર સમ્યક્ત્વકા લાભ હોતા હૈ ઉતની સ્થિતિમેં વ્રત

સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંમાં પરસ્પર કાર્યકારણ સંબંધ સુઘટિત થઈ જાય છે. અથવા—સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંમાં જે કાર્યકારણભાવ સંબંધ કહેવામાં આવ્યો છે તે શ્રાવક-અવસ્થામાં જનવાવાળા સમ્યગ્દર્શનની અપેક્ષાથી સમજ લેવું જોઈએ. શ્રાવક-અવસ્થામાં વિદ્યમાન સમ્યક્ત્વ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનો ઉત્પાદક ત્યાં અવશ્ય થાય છે.

સદ્ભાવનાપૂર્વક વ્રતાદિકોંનું અંગીકાર કરવું તે પણ સમ્યક્ત્વનું ફળ છે. અહીંયા ટીકામાં જે “અપિ” શબ્દ આવ્યો છે એનો અભિપ્રાય એ છે કે સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતાદિકોંનું આચરણ કોઈ વખત થાય પણ છે અને કોઈ વખત નથી પણ થતું. એ નિયમ નથી કે સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોનો સદ્ભાવ જીવોને થાય જ. કદાચ રાગદ્વેષની પ્રબલ ગ્રન્થિના લેહથી જ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે, અને સમ્યક્ત્વી જીવ વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોનું અંગીકાર કરવું શ્રેયસ્કર માને છે, પરન્તુ જેટલી કર્મની સ્થિતિ રહેવાથી સમ્યક્ત્વનો

અત્રેદમવગન્તવ્યમ્-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મસ્થિતેર્હિ દ્વિપ્રભૃતિનવપર્યન્તસંખ્યારૂપે પલ્યોપમપૃથક્ત્વે વેદનાદપગતે સતિ ભાવતો વ્રતાઙ્ગીકરણં ભવતિ । તત્રૈવં ક્રમઃ—

મોહનીયાદિકર્મણામુત્કૃષ્ટા સ્થિતિઃ સાગરોપમકોટીકોટીસપ્તત્યાદિકા, તન્મધ્યાત્ તાવર્તી સ્થિતિં યથાપ્રવૃત્તિકરણેનાદૌ ક્ષપયતિ, યેન પલ્યોપમાનામસંખ્યેય-ભાગન્યૂના એકસાગરોપમકોટીકોટી શેષા સ્થિતિર્ભવતિ । તતો ગ્રન્થિભેદેન સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્નોતિ । તદનન્તરં શેષકર્મસ્થિતેઃ પલ્યોપમપૃથક્ત્વે ક્ષપિતે સત્યણુવ્રતં લભતે, એવમેવ ભાવતો વ્રતપ્રાપ્તિર્ભવતિ, પરન્તુ દીર્ઘતરકર્મસ્થિતૌ સત્યામપિ દ્રવ્યતોઽણુવ્રતં મહાવ્રતં ચ ભવતિ । તથા ચોક્તમ્—

કા અંગીકાર કરના સંભવિત નહીં હોતા । સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ હોના એક વાત હૈ ઓર ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોના ઇસ સે ભિન્ન વાત હૈ । સમ્યક્ત્વ કી ઉત્પત્તિકા કારણ મિથ્યાત્વ (દર્શનમોહનીયાદિક) કા ક્ષયોપશમાદિક હૈ ઓર ચારિત્ર કી ઉત્પત્તિકા કારણ ચારિત્રમોહનીય કર્મકા ક્ષયોપશમ હૈ । યહ ક્ષયોપશમ, સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કે કારણ કી અપેક્ષા વ્રત અંગીકાર કરનેમેં અધિકતર રૂપસે કારણ માના ગયા હૈ । સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ હોને પર મી યદિ ચારિત્રમોહનીય કર્મકા ક્ષયોપશમ નહીં હુઆ હૈ તો ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ જીવકો નહીં હોતી હૈ । સમ્યક્ત્વકે હોતે હી ચારિત્રમોહનીય કર્મકા ક્ષયોપશમ નહીં હોતા હૈ, કિન્તુ સમ્યક્ત્વકે હોને પર જબ જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મેં કી સ્થિતિ અપનીર સ્થિતિમેંસે દો સે લગા કર નૌ પલ્ય તક ઓર ઘટ જાતી હૈ તબ હી જીવ ભાવકી અપેક્ષા વ્રતોંકો અંગીકાર કરતા હૈ । ઇસકા ક્રમ ઇસ પ્રકાર હૈ—મોહનીયાદિ કર્મોંકી જિતનીર

લાભ થાય છે તેટલી સ્થિતિમાં વ્રતનું અંગીકાર કરવું સંભવિત નથી. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થવી એક વાત છે અને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થવી એનાથી ભિન્ન વાત છે. સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિનું કારણ મિથ્યાત્વના (દર્શનમોહનીયાદિના) ક્ષયોપશમાદિક છે. ચારિત્રની ઉત્પત્તિનું કારણ ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ છે. આ ક્ષયોપશમ, સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિના કારણની અપેક્ષાએ વ્રત અંગીકાર કરવામાં અધિકતર રૂપથી કારણ માનવામાં આવે છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થાય તો પણ જો ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ નહિ થયો હોય તો ચારિત્રની પ્રાપ્તિ હોવને નથી થતી. સમ્યક્ત્વના થવાથી જ ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ નથી થતો; પણ સમ્યક્ત્વના થવાથી જ્યારે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોની સ્થિતિ પોતપોતાની સ્થિતિમાંથી બેથી માંડીને નવ પદ્ય સુધી ઘટી જાય છે ત્યારે હવ, ભાવની અપેક્ષા વ્રતોને અંગીકાર કરે છે. એનો ક્રમ આ પ્રકારે છે—

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ હૈ વહ જબ અન્તઃકોટાકોટીસાગર પ્રમાણ રહ જાતી હૈ તબ હી જીવ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિ કરને કે યોગ્ય હોતા હૈ । જૈસે મોહનીય કર્મ કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) સત્તર કોડાકોડી સાગર પ્રમાણ હૈ । હસ સ્થિતિકો યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામ સે જીવ ક્ષય કરતા હુઆ જબ પલ્યકે અસંખ્યાતવેં ભાગ ન્યૂન-કમ એક કોડાકોડી સાગર કી કર લેતા હૈ તબ રાગ-દ્વેષરૂપી પ્રબલ ગ્રન્થિ કે ભેદસે સમ્યક્ત્વકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । આયુકર્મકો છોડ કર હસી પ્રકાર શેષ કર્મોં કી સ્થિતિ ભી અન્તઃકોટા-કોટીસાગરપ્રમાણ રહ જાની ચાહિયે । કર્મોં કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ મેં ઔર જઘન્ય સ્થિતિમેં જીવ કે સમ્યક્ત્વ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી, યહ નિયમ હૈ । સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ આયુકર્મ કો છોડ કર શેષ મોહનીયાદિ ( ૭ ) સાત કર્મોં કી અન્તઃ કોડાકોડ સાગરકી સ્થિતિ રહ જાને પર હી હોતી હૈ । હસકે બાદ અવશિષ્ટ કર્મસ્થિતિ જબ પલ્યોપમપૃથક્ત્વ પ્રમાણ ક્ષીણ હો જાતી હૈ હસ સમય જીવ ભાવકી અપેક્ષા અણુવ્રતરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ કરતા હૈ । હસ કર્મસ્થિતિમેં હતના જબ પરિવર્તન હો જાતા હૈ તબ હી ભાવસે વ્રતપ્રાપ્તિ હુઆ કરતી હૈ । હસસે યહ સાબિત હોતા હૈ કિ ‘સમ્ય-ગ્દર્શનકે હોને પર જીવ ભાવસે વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કર હી લેતા હૈ’ યહ નિયમ નહીં હૈ । દીર્ઘતર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમેં દ્રવ્ય સે હી ( ભાવશૂન્ય )

મોહનીયાદિ કર્મોંની જેટલી જેટલી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ છે તે જ્યારે અન્તઃકોટાકોટી સાગર પ્રમાણ રહી જાય છે ત્યારે જ જીવ સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કરવાને યોગ્ય થાય છે. જેમ મોહનીય કર્મની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) સિત્તર કોડાકોડી સાગર પ્રમાણ છે. આ સ્થિતિનો યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામથી જીવ ક્ષય કરીને જ્યારે પલ્યના અસંખ્યાતમાં ભાગ ન્યૂન કોડાકોડી સાગરની કરે છે ત્યારે રાગદ્વેષરૂપી પ્રબલ ગ્રન્થિના લેદથી સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, આયુકર્મને છોડીને આ જ પ્રકારે શેષ કર્મોંની સ્થિતિ પણ અન્તઃકોટાકોટીસાગરપ્રમાણ રહેવી જોઈએ. કર્મોંની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમાં અને જઘન્ય સ્થિતિમાં સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિ જીવને નથી થતી, એ નિયમ છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ આયુકર્મને છોડીને શેષ મોહનીયાદિ (૭) સાત કર્મોંની એક કોડાકોડ સાગરની સ્થિતિ રહેવાથી જ થાય છે. ત્યાર બાદ અવશિષ્ટ કર્મસ્થિતિ જ્યારે પલ્યોપમપૃથક્ત્વપ્રમાણ ક્ષીણ થઈ જાય છે તે વખતે જીવ, ભાવની અપેક્ષા અણુવ્રતરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ કરે છે. આ પ્રકારે કર્મસ્થિતિમાં એટલું જ્યારે પરિવર્તન થાય છે ત્યારે ભાવથી વ્રતપ્રાપ્તિ થાય છે. એથી એ સાબિત થાય છે કે ‘સમ્યગ્દર્શનના થવાથી જીવ, ભાવથી વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરી જ લે છે’ એ નિયમ નથી, દીર્ઘતર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમાં દ્રવ્ય-



“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

મણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ મણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિતિં સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

ઢાયા—સર્વજીવાનાં યસ્માત્સૂત્રે ગ્રૈવેયકેષૂપપાતઃ ।

મણિતો જિનૈઃ સ ન ચ લિંગં મુક્ત્વા યતો મણિતમ્ ॥ ૧ ॥

યે દર્શનવ્યાપન્ના, લિંગગ્રહણં કુર્વન્તિ શ્રામણ્યે ।

તેવામપિ ચોપપાત, ઉત્કર્ષો યાવદ્ ગ્રૈવેયકાન્ ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

અયમત્ર સારાંશઃ—યાવત્યાં કર્મસ્થિતૌ સત્યાં સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્તં, તન્મધ્યાત્ પલ્યોપમપૃથક્ત્વરૂપે સ્થિતિભાગેઽનુક્રમેણ વીર્યોલ્લાસાત્ ક્ષપિતે સતિ દેશવિરતો ભવતિ ।

અણુવ્રત-મહાવ્રતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરતા હૈ, જિસકા ફલ કર્મક્ષય નહીં હૈ । દ્રવ્યચારિત્રકા અભિપ્રાય ભાવશૂન્ય ચારિત્ર હૈ । યહ ચારિત્ર સમ્ય-ગ્દર્શનમૂલક નહીં હોતા । ભાવચારિત્ર હી સમ્યગ્દર્શનમૂલક હોતા હૈ । કહા બી હૈ—

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

મણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ મણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિતિં સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

इन सब पूर्वोक्त कथनका सारांश यही है कि—जितनी कर्मस्थितिके रह जाने पर सम्यक्त्वका लाभ हुआ है, उस स्थितिमें से कम से कम पल्योपमपृथक्त्व (दो से लगाकर ९ पल्य तक) प्रमाण स्थिति

થી જ (ભાવશૂન્ય) અણુવ્રત મહાવ્રતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરે છે, જેનું ફળ કર્મ-ક્ષય નથી. દ્રવ્યચારિત્રનો અભિપ્રાય ભાવશૂન્ય ચારિત્ર છે. આ ચારિત્ર સમ્યગ્દર્શન-મૂલક નથી થતું. ભાવચારિત્ર જ સમ્યગ્દર્શનમૂલક થાય છે. કહ્યું પણ છે:—

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

મણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ મણિયં ॥ ૧ ॥

જે દંસણવાવણ્ણા લિંગગ્ગહણં કરિતિં સામન્ને ।

તેસિપિ ય ઉવવાઓ ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

આ બધા પૂર્વોક્ત કથનનો સાર એ છે કે જેટલી કર્મસ્થિતિના રહેવાથી સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે, આ સ્થિતિમાંથી ઓછામાં ઓછું પલ્યોપમ પૃથક્ત્વ (જે થી માંડી ૯ પલ્ય સુધી) પ્રમાણ સ્થિતિ વીર્યોલ્લાસથી ક્ષપિત થઈ જાય

દેશવિરતિપ્રાપ્ત્યનન્તરં સંખ્યાતેષુ સાગરોપમેષુ ક્ષપિતેષુ સર્વવિરતિચારિત્રં લભતે । તદનન્તરમપિ સંખ્યાતેષુ સાગરોપમેષુ ક્ષપિતેષુપશમશ્રેણિં પ્રતિપદ્યતે । તતોઽપિ સંખ્યાતેષુ સાગરોપમેષુ ક્ષપિતેષુ ક્ષપકશ્રેણિર્ભવતિ । તતસ્તસ્મિન્નેવ ભવે મોક્ષ इति । एवं यस्य सम्यक्त्वमप्रतिपतितं तस्यैव देवमनुष्यभवेषु संसरणं कुर्वतो देशविरत्यादि-  
લામો ભવતિ । સમ્યક્ત્વં હિ અનન્તાનન્દ-રૂપાનુપમ મોક્ષસુખસ્ય કારણમ્ । ઉક્તઞ્ચ—

“ જાત્યન્ધસ્ય યથા પુંસશ્ચકુર્ભામે શુભોદયે ।

સદર્શનં તથૈવાસ્ય, સમ્યક્ત્વે સતિ જાયતે ॥ ૧ ॥

આનન્દો જાયતેઽત્યન્તં, સાત્ત્વિકોઽસ્ય મહાત્મનઃ ।

સદ્બોધ્યુપગમે યદ્વદ્, વ્યાધિતસ્ય સર્વોપધમ્ ” ॥ ૨ ॥ इति ।

વીર્યોલ્લાસ સે ક્ષપિત હો જાવે તથ દેશવિરતિકા લાભ હોતા હૈ । દેશ-  
વિરતિ-શ્રાવકચારિત્ર-પંચમ ગુણસ્થાન કી પ્રાપ્તિકે અનન્તર સંખ્યાત  
સાગરપ્રમાણ સ્થિતિકે ક્ષય હોને પર સર્વવિરતિ-મુનિવ્રત-ષષ્ઠગુણ-  
સ્થાનકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ઇસકે બાદ સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ સ્થિતિકે  
વ્યતીત હો જાનેપર ઉપશમશ્રેણિ ઓર ફિર સંખ્યાતસાગરપ્રમાણસ્થિતિ  
કે ક્ષય હોને પર ક્ષપકશ્રેણિકા લાભ હોતા હૈ । ફિર ડસી ભવસે ડસકો  
મુક્તિકી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ । દેશવિરતિ આદિ ચારિત્રકા લાભ ડસી  
જીવકે હોતા હૈ કિ જિસને અપને સમ્યક્ત્વ કી વિરાધના દેવ મનુષ્ય ભવોંમેં  
રહતે હુઅ નહોં કી હૈ । અર્થાત્ દેવપર્યાય મેં યા મનુષ્યપર્યાય મેં જિસકે  
સમ્યક્ત્વકી વિરાધના હો ગઈ હૈ ડસ જીવકે દેશવિરતિ આદિ ચારિત્ર  
કા લાભ નહોં હોતા । યહ સમ્યક્ત્વ અનન્તઆનન્દરૂપ અનુપમ મોક્ષ-  
સુખકા કારણ હૈ । જૈસે કહા હૈ—

ત્યારે દેશવિરતિનો લાભ થાય છે. દેશવિરતિ-શ્રાવકચારિત્ર પાંચમા ગુણસ્થાનની  
પ્રાપ્તિની પછી સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ સ્થિતિનો ક્ષય થવાથી સર્વવિરતિ-  
મુનિવ્રત-છઠ્ઠા ગુણસ્થાનની પ્રાપ્તિ થાય છે. ત્યાર બાદ સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ  
સ્થિતિના વ્યતીત થઈ જવાથી ઉપશમશ્રેણિ, અને પછી સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ  
સ્થિતિનો ક્ષય થવાથી ક્ષપકશ્રેણીનો લાભ થાય છે. વળી એ જ ભવથી તેને  
મુક્તિની પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે. દેશવિરતિ આદિ ચારિત્રનો લાભ તે જ જીવને  
થાય છે કે જેણે પોતાના સમ્યક્ત્વની વિરાધના દેવ મનુષ્ય ભવોમાં રહીને નથી  
કરી. અર્થાત્-દેવપર્યાયમાં અગર મનુષ્યપર્યાયમાં જેને સમ્યક્ત્વની વિરાધના  
થઈ ગઈ છે એ જીવને દેશવિરતિ આદિ ચારિત્રનો લાભ નથી થતો. તે સમ્યક્ત્વ  
અનન્ત આનન્દરૂપ અનુપમ મોક્ષસુખનું કારણ છે. જેમ કહ્યું છે—



અન્યચ્—“દ્વારં મૂલં પ્રતિષ્ઠાનમાધારો ભાજનં નિધિઃ ।

દ્વિષટ્કસ્યાસ્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરિકીર્તિતમ્” ॥ ૩ ॥

અપરં ચ—“સસ્યાનીવોષરક્ષેત્રે, નિશ્ચિન્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ, જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે” ॥ ૪ ॥

“જાત્યન્ધસ્ય યથા પુંસશ્ચક્ષુર્લાભે શુભોદયે ।

સદ્દર્શનં તથૈવાસ્ય, સમ્યક્ત્વે સતિ જાયતે ॥ ૧ ॥

આનન્દો જાયતેऽત્યન્તં, સાત્ત્વિકોઽસ્ય મહાત્મનઃ ।

સદ્બોધ્યુપગમે યદ્વદ્, વ્યાધિતસ્ય સદૌષધમ્” ॥ ૨ ॥

અન્યચ્—“દ્વારં ૧ મૂલં ૨ પ્રતિષ્ઠાન ૩ માધારો ૪ ભાજનં ૫ નિધિઃ ૬ ।

દ્વિષટ્કસ્યાસ્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરિકીર્તિતમ્” ॥ ૩ ॥

અપરશ્ચ—“સસ્યાનીવોષરક્ષેત્રે, નિશ્ચિન્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે” ॥ ૪ ॥

અર્થાત્—જન્માન્ધ પુરુષકો શુભ કર્મોંકે ઉદયસે નેત્રોંકે ખુલ જાને પર જિસ પ્રકાર સદ્દર્શન ( સમસ્ત વસ્તુઓંકા દીઁખના ) હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર હિસ જીવકો સમ્યક્ત્વકા લાભ હોને પર યથાર્થ જ્ઞાન હોતા હૈ । ૧।

જિસ પ્રકાર રોગીકો શ્રેષ્ઠ ઔષધસે આરોગ્યપ્રાપ્તિ હોને પર આનન્દ હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર સદ્બોધિ ( સમ્યક્ત્વ ) કે પ્રાપ્તિ હોને પર ઉસ મહા-ત્મા પુરુષ કો સાત્ત્વિક અત્યાનન્દ હોતા હૈ ॥ ૨ ॥

“જાત્યન્ધસ્ય યથા પુંસશ્ચક્ષુર્લાભે શુભોદયે ।

સદ્દર્શનં તથૈવાસ્ય, સમ્યક્ત્વે સતિ જાયતે ॥ ૧ ॥

આનન્દો જાયતેऽત્યન્તં, સાત્ત્વિકોઽસ્ય મહાત્મનઃ ।

સદ્બોધ્યુપગમે યદ્વદ્, વ્યાધિતસ્ય સદૌષધમ્” ॥ ૨ ॥

અન્યચ્—“દ્વારં ૧ મૂલં ૨ પ્રતિષ્ઠાન ૩, માધારો ૪ ભાજનં ૫ નિધિઃ ૬

દ્વિષટ્કસ્યાસ્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરિકીર્તિતમ્” ॥ ૩ ॥

અપરં ચ—“સસ્યાનીવોષરક્ષેત્રે, નિશ્ચિન્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ, જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે” ॥ ૪ ॥

અર્થાત્—જન્માન્ધ પુરુષને શુભ કર્મના ઉદયથી નેત્રોના ખુલવાથી જે પ્રકારે સદ્દર્શન ( દરેક વસ્તુઓનું દેખવું ) થાય છે, તે પ્રકારે આ જીવને સમ્યક્ત્વનો લાભ થવાથી યથાર્થ જ્ઞાન થાય છે. (૧)

જે પ્રકારે રોગીને શ્રેષ્ઠ ઔષધથી આરોગ્યપ્રાપ્તિ થવાથી આનન્દ થાય છે તે પ્રકારે સદ્બોધિ ( સમ્યક્ત્વ ) ની પ્રાપ્તિ થવાથી તે મહાત્મા પુરુષને સાત્ત્વિક અત્યાનન્દ થાય છે. (૨)



નનુ યદુક્તં સમ્યક્ત્વે સતિ કદાચિદ્ વ્રતાઙ્ગીકરણં નાપિ ભવતીતિ, તત્ કથં સંભવતિ ? ઉચ્યતે—

યદા સમ્યક્ત્વલાભાનન્તરં નવપલ્યોપમાધિકસ્થિતિકો દેવેષૂત્પદ્યતે તદા તસ્યામ-  
વસ્થાયાં યાવતીં સ્થિતિં ક્ષપયતિ તાવતીમન્યાં બદ્ધનાતિ, તતો દેશોનસાગરોપમકોટી-  
કોટીરૂપાયા અધિકૃતકર્મસ્થિતેઃ પલ્યોપમપૃથક્ત્વસ્યાપગમો ન ભવતીતિ—અતો દેવમ-  
વે દેશવિરતિલાભો ન સંભવતિ, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વે સત્યપિ વ્રતાનઙ્ગીકરણં સિદ્ધમ્ ।

ઔર મી—યહ સમ્યક્ત્વ બારહ પ્રકારકે શ્રાવક ધર્મકા દ્વાર હૈ ૧, મૂલ હૈ ૨, પ્રતિષ્ઠાન (આલમ્બન) હૈ ૩, આધાર હૈ ૪, ભાજન-પાત્ર હૈ ૫, ઔર નિધિરૂપ હૈ ૬ ॥ ૩ ॥

ફિર મી—જિસ પ્રકાર ડપર ક્ષેત્રમેં બોયે હુએ બીજ નહીં ડગતે હૈં  
ડસી પ્રકાર મિથ્યાત્વવાસિત જીવમેં વ્રતોંકા ડદય નહીં હોતા ॥૪॥

શઙ્કા—સમ્યક્ત્વ કે હોને પર કદાચિન્ વ્રતકા લાભ નહીં મી હોતા  
હૈ, યહ બાત કૈસે સંભવ હોતી હૈ ? ।

સમાધાન—સમ્યક્ત્વકે હોને પર મી વ્રતકા લાભ નહીં હોતા, યહ બાત  
ઁક તો ડપર કથિત પ્રકારસે પ્રકટ કી ગઈ હૈ, ઔર ડૂસરા પ્રકાર યહ મી હૈ—  
જિસ જીવકો સમ્યક્ત્વકા લાભ હુઆ હૈ વહ અપની આયુકે અન્તમેં  
નૌ પલ્યસે અધિક સ્થિતિકા બંધ કર દેવપર્યાય મેં ઉત્પન્ન હુઆ ડસ  
સમય વહ ડસ પર્યાય મેં સે જિતની મી સ્થિતિકા ક્ષય કરતા હૈ ડતની  
ઔર ડૂસરી સ્થિતિકા બંધ મી કરતા રહતા હૈ । સમ્યક્ત્વકે ઉત્પાદનકે

ફરી—આ સમ્યક્ત્વ બાર પ્રકારના શ્રાવક ધર્મનું દ્વાર છે ૧, મૂલ છે ૨, પ્રતિ-  
ષ્ઠાન (આલંબન) છે ૩, આધાર છે ૪, ભાજન-પાત્ર છે ૫ અને નિધિ છે ૬. (૩)

વળી—જે પ્રકારે ડપર ક્ષેત્રમાં વાવેલા બીજ ડગતા નથી તે પ્રકારે મિથ્યા-  
ત્વવાસિત જીવમાં વ્રતનો ઉદય થતો નથી. (૪)

શંકા—સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતનો લાભ કોઈ વખત નહીં પણ થાય, આ વાત  
કેમ સંભવે છે ?

સમાધાન—સમ્યક્ત્વના થવાથી પણ વ્રતનો લાભ નથી થતો, એ વાત એક તો  
ડપર કથિત પ્રકારથી પ્રગટ કરી છે, અને બીજો પ્રકાર એ પણ છે—જે જીવને સમ્યક્ત્વનો  
લાભ થયો છે તે પોતાની આયુના અંતમાં નવ પલ્યથી અધિક સ્થિતિનો બંધ કરીને  
દેવપર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયો, તે વખત તે પર્યાયમાં જેટલી સ્થિતિનો ક્ષય કરે છે તેટલી  
બીજી સ્થિતિનો તે બંધ પણ કરે છે. એ પ્રકારે સમ્યક્ત્વના ઉત્પાદનના સમયની

यस्य सम्यक्त्वान्नो व्रतप्राप्तिर्न भवति, स तु अव्रती सम्यग्दृष्टिः श्रावको निगद्यते ।

किंच—सम्यक्त्वाभावे सति मोक्षो न लभ्यते । मिथ्यादृष्टिर्हि कुशास्त्रप्रति-  
बोधितां संयमनियमादिरूपां निवृत्तिमाचरन्नपि, स्वजनधनभोगान् परित्यजन्नपि,  
शीतोष्णक्षुत्पिपासादिभिर्दुःखस्य परां काष्ठागुपगच्छन्नपि सम्यक्त्वरहितत्वेन  
मोक्षसिद्धये न प्रभवति । सम्यक्त्वाभावे सति कर्मक्षयो न भवति । सम्यक्त्ववतामेव  
ज्ञानतपश्चारित्राण्यपि सफलीभवन्ति । सम्यक्त्वे सत्येव चाणुव्रतगुणव्रतशिक्षाव्रतानि  
भवितुमर्हन्ति, तस्मात् सम्यक्त्वं मोक्षस्य बीजमिति बोध्यम् ।

समय की कुछ कम कोटाकोटीसागरोपम स्थितिमेंसे पल्योपम-  
पृथक्त्वरूप स्थितिका अपगम-अभाव नहीं होनेसे देवपर्यायमें देशविरति  
का लाभ संभवित नहीं होता ।

जिस सम्यक्त्वीको व्रतप्राप्ति नहीं होती है वह सम्यग्दृष्टि श्रावक  
कहलाता है । इसको कभी न कभी (अर्धपुद्गलपरावर्तनकालके बाद)  
मुक्तिका लाभ अवश्य हो जाता है, परन्तु जिसके मूलमें सम्यक्त्व ही  
नहीं है उसको मुक्तिपद की प्राप्ति हो नहीं सकती । मिथ्यादृष्टि जीव  
(द्रव्यलिङ्गी मुनि जैसा) खोटे २ शास्त्रों के द्वारा प्रतिपादित संयम  
नियमादिरूप चारित्रिका पालन करनेपर भी स्वजन धन एवं पांच इन्द्रियों  
के विषयों का परित्यागी होने पर भी, और अनेक प्रकारसे शीत उष्ण,  
भूख और प्यास आदि परीषहजन्य कष्टों का कठोर से कठोर सामना  
करते हुए भी सम्यक्त्व से रहित होनेके कारण ही मोक्षरूपी सिद्धि  
का भागी नहीं माना गया है । यह तो अटल सिद्धान्त है कि-सम्य-

कांछ ओछी कोटाकोटीसागरोपम स्थितिमांथी पल्योपमपृथक्त्वश्च स्थितिना  
अपगम-अभाव नहिं थवाथी देवपर्यायमां देशविरतिना लाभ संभवित थतो नथी.

जे सम्यक्त्वाने व्रतप्राप्ति नथी थती ते अविरतसम्यग्दृष्टि श्रावक  
कहेवाय छे. ओने कोछ वणत (अर्धपुद्गलपरावर्तन कालनी पछी) मुक्तिना  
लाभ अवश्य थाय छे. पणु जेना भूणमां सम्यक्त्व नथी तेने मुक्तिपदनी प्राप्ति  
थती नथी. मिथ्यादृष्टि गुव (द्रव्यलिङ्गी मुनि जेवा) जोटा जोटा शास्त्रोद्वारा  
प्रतिपादित संयमनियमादिरूप चारित्रिणुं पालन करवाथी स्वजन धन अने पंचे-  
न्द्रियोना विषयोना परित्यागी होवा छतां पणु, अने अनेक प्रकारथी शीत,  
उष्ण, भूण अने प्यास आदि परिषहजन्य कष्टोना कठोरमां कठोर सामना करवा  
छतां पणु सम्यक्त्वथी रहित होवाना कारणे मोक्षरूपी सिद्धिना लागी मानवामां  
आवतो नथी. ओ तो अटल सिद्धान्त छे के—सम्यक्त्वप्राप्ति विना कर्म क्षय



નન્વાત્મપરિણામરૂપં સમ્યક્ત્વં કથં વિજ્ઞેયં ભવેદિતિ ચેત્, ઉચ્યતે—સમ્યક્ત્વ-  
કાર્યરૂપૈઃ શમસંવેગનિર્વેદાનુકમ્પાસ્તિક્યૈઃ સાધુસામાચારીપ્રવૃત્ત્યાદિરૂપૈઃ સામાયિક-  
પૌષધપ્રતિક્રમણત્યાગપ્રત્યાખ્યાનાદિશ્રાવકાચારરૂપૈશ્ચ બાહ્યપ્રશસ્તવ્યાપારૈરેતદવગતું  
શક્યતે । તત્ર—

ક્ત્વપ્રાપ્તિકે વિના કર્મક્ષય હોતા હી નહીં હૈ । સમ્યક્ત્વકે વિના જ્ઞાન  
ઔર ચારિત્ર નિષ્ફલ હૈ । ઇનકી સફલતા કા મૂલ કારણ યદિ કોઈ હૈ  
તો વહ એક સમ્યક્ત્વ હી હૈ । સમ્યક્ત્વી જીવ કે હી જ્ઞાન તપ ચારિત્ર  
સફલ હોતે હૈ, અણુવ્રત, ગુણવ્રત એવં શિક્ષાવ્રત-રૂપ શ્રાવકકા દેશ  
ચારિત્ર મી સમ્યક્ત્વ કે સદ્ભાવમેં હી સફલ માના ગયા હૈ, ઇસ લિયે  
સમ્યક્ત્વ હી મોક્ષકા કારણ હૈ ।

શઙ્કા—સમ્યક્ત્વ તો આત્માકા એક પરિણામ હૈ, ડસકા અસ્તિત્વ  
કૈસે જાના સકતા હૈ ?

શઙ્કાકારકા અભિપ્રાય યહાં ઇસ પ્રકારકા હૈ કિ જબ સમ્યક્ત્વ  
આત્માકા એક પરિણામ હૈ તો વહ મી અમૂર્ત્ત હી હોગા । અર્થાત્—જિસ  
પ્રકાર આત્મા અમૂર્ત્ત હૈ ડસી પ્રકાર વહ સમ્યક્ત્વ મી અમૂર્ત્ત હોગા, ફિર  
ડસકે અસ્તિત્વકા બોધ કૈસે હોતા હૈ ?

ઇસ શઙ્કાકા સમાધાન કરતે હુએ આચાર્ય મહારાજ કહતે હૈ—  
બાત ટીક હૈ; પરંતુ ડસકે કાર્યો સે ડસકે અસ્તિત્વ કા ભાન હોતા હૈ ।  
શમ, સંવેગ, નિર્વેદ, અનુકમ્પા, આસ્તિક્ય, સાધુઓંકી સમાચારીરૂપ  
પ્રવૃત્તિ આદિ, એવં સામાયિક, પૌષધ, પ્રતિક્રમણ, ત્યાગ, પ્રત્યાખ્યાન

થતાં નથી, સમ્યક્ત્વ વિના જ્ઞાન અને ચારિત્ર નિષ્ફળ છે, એની સફળતાનું મૂળ  
કારણ જો કોઈ હોય તો તે એક સમ્યક્ત્વ જ છે. સમ્યક્ત્વી જીવને જ જ્ઞાન તપ  
ચારિત્ર સફળ થાય છે. અણુવ્રત, ગુણવ્રત અને શિક્ષાવ્રતરૂપ શ્રાવકનું દેશચારિત્ર  
પણ સમ્યક્ત્વના સદ્ભાવમાં જ સફળ મનાય છે, તેથી સમ્યક્ત્વ જ મોક્ષનું કારણ છે.

શંકા—સમ્યક્ત્વ તો આત્માનું એક પરિણામ છે, તેનું અસ્તિત્વ કેવી  
રીતે જાણી શકાય ? શંકાકારનો અભિપ્રાય આ ઠેકાણે આ પ્રકારનો છે કે જ્યારે  
સમ્યક્ત્વ આત્માનું એક પરિણામ છે તો તે પણ અમૂર્ત્ત થશે. અર્થાત્—જે પ્રકારે  
આત્મા અમૂર્ત્ત છે તે પ્રકારે તે સમ્યક્ત્વ પણ અમૂર્ત્ત થશે, પછી તેના અસ્તિત્વનો  
બોધ કેવી રીતે થાય ? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં આચાર્ય મહારાજ કહે છે  
કે—વાત ટીક છે; પરંતુ તેના કાર્યોથી તેના અસ્તિત્વનું ભાન થાય છે. શમ, સંવેગ  
નિર્વેદ, અનુકમ્પા, આસ્તિક્ય, સાધુઓની સમાચારીરૂપ પ્રવૃત્તિ આદિ, અને સા-



(૧) શમરૂપેણ સમ્યક્ત્વપરિણામેન સર્વસ્મિન્નપિ કાલે પ્રતિકૂલકારિણેઽપિ ન ક્રુધ્યતિ ।

(૨) સંવેગાશ્યેન તેન 'સકલમહીમળડલેશ્વરસ્ય દેવેન્દ્રસ્ય ચ સુખં પરમાર્થતો દુઃખમેવ, કર્મજન્યત્વાત્ સાવસાનત્વાદસ્વાભાવિકત્વાચ્છેતિ મન્યમાનો મોક્ષાદન્યત્ કિંચિન્ન વાઙ્છતિ, મોક્ષો हि स्वाभाविकात्मपरिणामरूपः कर्माजन्यः पर्यवसानरहितो निरतिशयानन्दरूपश्चास्ति ।

આદિ જો બાહર કે પ્રશસ્ત વ્યાપાર હૈં યે હી ઉસકે કાર્ય હૈં । ઇનસે હી ઉસકે અસ્તિત્વકા બોધ હોતા હૈ ।

(૧) શમ—શમરૂપ સમ્યક્ત્વકે પરિણામવાલા જીવ કિસી ખી સમય અપને સે પ્રતિકૂલ આચરણ કરનેવાલોં પર ખી ક્રોધ નહીં કરતા હૈ, અર્થાત્—કષાયોં કા શમનરૂપ યહ પરિણામ હૈ, અથવા કષાયોં કા શમન હી શમ હૈ ।

(૨) સંવેગ—સંસારાદ્ભીરુતા સંવેગઃ—સંસારસે ભયભીત હોના હી સંવેગ હૈ । ઇસ પરિણામવાલા જીવ ચક્રવર્તીં ઔર ઇન્દ્ર કે ખી વૈષયિક સુખોં કો અપની દૃષ્ટિસે દુઃખરૂપ હી માનતા હૈ । કારણ કિ વહ ઉનકા સુખ, કર્મ—( સાતાવેદનીય ) કે ઉદયાધીન હોને સે સાન્ત—નાશવાન હૈ, ઇવં યહ આત્મિક સ્વભાવ સે પ્રતિકૂલ હૈ, ઔર મોક્ષ તો ઇસસે વિપરીત સ્વભાવવાલા હૈ, અતઃ ઉસકે અતિરિક્ત ઔર કોઈ ખી સાંસારિક પદાર્થ ઇસકી દૃષ્ટિ કા મોહક નહીં બન સકતા, ઇસલિય મોક્ષ કે અતિરિક્ત ઔર કિસી ખી પદાર્થ કી પ્રાપ્તિકી વાંછા ઇસકે નહીં રહતી । 'મોક્ષ ઇસસે વિપ-

માયિક પોષધ, પ્રતિકૂલ, ત્યાગ, પ્રત્યાખ્યાન આદિ જે બાહ્ય પ્રશસ્ત વ્યાપાર છે તે જ તેના કાર્યો છે, તેનાથી જ તેના અસ્તિત્વનો બોધ થાય છે.

(૧) શમ—શમરૂપ સમ્યક્ત્વના પરિણામવાળો જીવ કોઈ વખત પોતાથી પ્રતિકૂળ આચરણ કરવાવાળા ઉપર પણ ક્રોધ કરતો નથી. અર્થાત્ કષાયોના શમનરૂપ આ પરિણામ છે, અથવા કષાયોનો શમન જ શમ છે.

(૨) સંવેગ—'સંસારાદ્ભીરુતા સંવેગઃ' સંસારથી ભયભીત થવું તે સંવેગ છે. આ પરિણામવાળા જીવ ચક્રવર્તી અને ઇન્દ્રોના વૈષયિક સુખોને પણ પોતાની દૃષ્ટિથી દુઃખરૂપ જ માને છે. કારણ કે તે એના સુખ, કર્મ (સાતાવેદનીય)ના ઉદયાધીન હોવાથી સાન્ત—નાશવાન છે, એ આત્મિકસ્વભાવથી જ પ્રતિકૂળ છે, અને મોક્ષ તો એનાથી વિપરીત સ્વભાવવાળો છે. એથી એનાથી અતિરિક્ત બીજો કોઈ પણ સાંસારિક પદાર્થ એની દૃષ્ટિનો મોહક નથી બની શકતો, તેથી મોક્ષના અતિરિક્ત કોઈ પણ પદાર્થની પ્રાપ્તિની વાંછના એને રહેતી નથી. 'મોક્ષ એથી

(૩) નિર્વેદાશ્વેન સમ્યક્ત્વપરિણામેન જીવો મન્યતે—‘નારકતિર્યક્મનુષ્યદેવ-ભવેષુ સર્વેષ્વેવ દુઃખમસ્તિ, અતઃ સર્વમેવ જગન્નિઃસાર’-મિતિ । અપિ ચ મમત્વવિષ-વેગરહિતો ભવતિ ।

(૪) પ્રાણિવર્ગે સમન્તાદવલોક્યાનુકમ્પાશ્વેન સમ્યક્ત્વપરિણામેન—‘ઇમે સંસારચક્રપરિભ્રાન્તાઃ શારીરૈર્માનસૈશ્વ વિવિધદુઃખૈઃ પરાભૂતાઃ સન્તી’-તિ મત્વા સ્વા-ત્મૌપમ્યેન તેષાં દુઃશ્વાન્યનુભૂય સ્વકીયપરકીયભાવાઽભાવપૂર્વકમભયદાનેન, પ્રાણિનાં રીત સ્વભાવવાલા હૈ’ इसका तात्पर्य यही है कि वह कर्म के उदय के आधीन नहीं है, अपितु आत्मा का निजस्वभाव है । एक बार जिस जीव को इसकी प्राप्ति हो जाती है उसको फिर इस संसारमें परिभ्रमण नहीं करना पड़ता, एवं जीव को वहां पर निरतिशय अनंत आनन्द की प्राप्ति होती है इसलिये वह मोक्ष स्वयं अपूर्व अनंत आनन्द का एक धाम है । संवेग परिणामवाला जीव इस प्रकारके मोक्षसुखकी ही अभिलाषा करता है ।

(૩) નિર્વેદ—નિર્વેદગુણવાલા જીવ—‘નરક, તિર્યશ્ચ દેવ ઓર મનુ-ષ્યભવમેં સર્વત્ર હી દુઃખકા સામ્રાજ્ય છાયા હુઆ હૈ’ इस लिये यह समस्त जगत दुःखका एक भाजन है’ ऐसा समझ कर उसको निःसार—साररहित ही जानता है । ममत्तारूप जहर से वह दूर ही रहता है ।

(૪) અનુકંપા—દુઃખી જીવોં પર દયાભાવ હોના હી અનુકંપા હૈ । इस गुणवाला जीव संसारस्थ समस्त प्राणिवर्ग को शारीरिक मानसिक

વિપરીત સ્વભાવવાળો છે’ એનો તાત્પર્ય એ છે કે તે કર્મના ઉદયને આધીન નથી પણ આત્માનો નિજસ્વભાવ છે. એક વાર જે જીવને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થઈ ગઈ તો પછી એને આ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરવું પડતું નથી. અને જીવને ત્યાં નિરતિ-શય અનંત આનંદની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી તે મોક્ષ પોતે અપૂર્વ અનંત આનંદનો ધામ છે. સંવેગપરિણામવાળો જીવ આવા પ્રકારના મોક્ષ-સુખનીજ અભિલાષા કરે છે.

(૩) નિર્વેદ—નિર્વેદગુણવાળો જીવ—‘નરક, તિર્યચ, દેવ અને મનુષ્ય ભવમાં સર્વત્ર દુઃખનું સામ્રાજ્ય જ પથરાયેલું છે, એથી સમસ્ત આ જગત દુઃખનું’ એક ભાજન છે’ એવું સમજીને તેને નિઃસાર—સારરહિત માને છે. મમતારૂપી ઝેરથી તે દૂર જ રહે છે.

(૪) અનુકંપા—દુઃખી જીવો ઉપર દયા કરવી તેનું નામ અનુકંપા છે. આ ગુણવાળો જીવ સંસારના સમસ્ત પ્રાણિવર્ગને અનેક શારીરિક માનસિક કષ્ટોથી



रक्षणेन, मार्यमाणानां संकटान्मोचनेन, धर्मोपदेशेन मोक्षमार्गे योजनया च यथा-  
सामर्थ्यमनुग्रहं कुरुते ।

(५) आस्तिक्यपरिणामेन च 'यदिह तीर्थकरैः प्रतिबोधितं तत् सर्वमेव सत्यं,  
तथैव सर्वे जीवाजीवादयोऽर्थाः सन्ति निश्चङ्कम्' इति मन्यते । स च काङ्क्षादि-  
विस्रोतसिकारहितो भवति ।

एवंभूतैः शमादिपरिणामैः सम्यक्त्वं विज्ञेयं भवितुमर्हति । लब्धसम्यक्त्वश्च  
सम्पद्गृष्टिरित्युच्यते । स चान्तर्मुहूर्तकालमपि सम्यक्त्वेन स्पृष्टश्चेदुत्कृष्टतो देशो-

अनेक कष्टों से व्यथित ही अनुभव किया करता है, और अपने  
समान ही उन्हें मान कर उनके उन दुःखों का स्वयं अनुभव करके निष्पक्ष  
दृष्टि से युक्त हो कर उनके उन दुःखों को दूर करने की यथाशक्ति कोशिश  
में रहता है । अपनी शक्तिके अनुसार उनकी रक्षा करता है । मरते हुए  
तथा घातकद्वारा मारे जाते हुए जीवों को यथाशक्ति बचाता है और  
मोक्षमार्गसे विपरीत जनों को सद्धर्मके उपदेश से भावित कर उन्हें  
मोक्षमार्ग में लगाने की अपनी शक्तिके अनुसार चेष्टा भी करता है ।

(५) आस्तिक्य—“जो जिनेन्द्रदेवने कहा है वह सर्व ही सत्य है”  
इस प्रकार दृढ़ आस्थावाली मति ही आस्तिक्य भाव है । इस आस्तिक्य  
भाववाला जीव जिनप्रतिपादित तत्त्वों में निश्चङ्क होकर दृढ़ आस्था-  
सम्पन्न होता है । वह जीव जिनवचनों में शंकाकाङ्क्षादिरहित होता है ।

इन पूर्वोक्त शमादिभावरूप चिह्नोंसे सम्यक्त्व का अस्तित्व जाना  
जाता है । जीव यदि सम्यग्दर्शनका एक अंतर्मुहूर्त भी स्पर्श कर लेता

व्यथित જ અનુભવ કર્યા કરે છે. અને પોતાના સમાન જ તેઓને માનીને તેઓના  
તે દુઃખોનો અનુભવ સ્વયં કરીને નિષ્પક્ષદૃષ્ટિયુક્ત થઈ તેઓના તે દુઃખોને દૂર  
કરવાની યથાશક્તિ કોશિશમાં રહે છે, પોતાની શક્તિના પ્રમાણમાં તેની રક્ષા કરે છે.  
મરતા જીવોને તથા ઘાતકીદ્વારા મરતા જીવોને યથાશક્તિ બચાવે છે, અને  
મોક્ષમાર્ગથી વિપરીત જનોને સદ્ધર્મના ઉપદેશથી ભાવિત કરી તેને  
મોક્ષમાર્ગમાં લગાડવામાં પોતાની શક્તિ-અનુસાર ચેષ્ટા કરે છે.

(૫) આસ્તિક્ય—“જે જિનેન્દ્ર દેવે કહ્યાં છે તે સર્વે સત્ય છે.” આ પ્રકારની  
દૃઢ આસ્થાવાળી મતિ જ આસ્તિક્ય ભાવ છે. આ આસ્તિક્યભાવવાળાં જીવ  
જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોમાં નિશ્ચંક થઈને દૃઢ આસ્થાવાળા થઈ જાય છે. તે જીવ જિન  
વચનોમાં શંકાકાંક્ષાદિરહિત હોય છે.

આ પૂર્વોક્ત શમાદિભાવરૂપ ચિહ્નોથી સમ્યક્ત્વનું અસ્તિત્વ જાણવામાં આવે  
છે. જીવ જો સમ્યગ્દર્શનનો એક અંતર્મુહૂર્ત પણ સ્પર્શ કરી લે તો તે નિયમથી



નાર્ધપુદ્ગલપરાવર્ત્તાન્તરે નિયમેન મોક્ષં પ્રાપ્નોતિ । અલમધિકેન, લબ્ધસમ્યક્ત્વઃ સુરગતિં નિયમતો લભતે । તથા ચોક્તમ્—

“ અંતોમુહુત્તમિત્તં, -પિ ફાસિઅં હુજ્જ જેહિં સમ્મત્તં ।

તેસિં અવહ્દપુગ્ગલ, -પરિઅટ્ટો ચેવ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

હાયા—અન્તર્મુહૂર્ત્તમાત્રમપિ સ્પૃષ્ટં ભવેદ્દયૈઃ સમ્યક્ત્વમ્ ।

તેષામપાર્દપુદ્ગલપરિવર્ત્ત એવ સંસારઃ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અપરં ચ—“ સમ્મદિટ્ઠી જીવો, ગચ્છહ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહ ન વિગયસંમત્તો, અહવ ન વદ્ધાઉઓ પુર્વિ ” ॥ ૧ ॥

હૈ તો વહ નિયમસે જ્યાદા સે જ્યાદા અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તન કાલ તક હી ઇસ સંસાર મેં રહતા હૈ ઓર ઉસકે બાદ મોક્ષસ્થાનકો પ્રાપ્ત કર હી લેતા હૈ । કહા બી હૈ—

“ અંતોમુહુત્તમિત્તં, -પિ ફાસિઅં હુજ્જ જેહિં સમ્મત્તં ।

તેસિં અવહ્દપુગ્ગલ, -પરિઅટ્ટો ચેવ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જિન જીવોને એક અંતર્મુહૂર્ત્તમાત્ર બી સમ્યક્ત્વકા સ્પર્શ કિયા હૈ ડન જીવોં કા સંસાર અર્ધ પુદ્ગલપરાવર્તનકાલ તક હી અવશિષ્ટ રહતા હૈ । ઇસ વિષયમેં અધિક કયા કહા જાય ? સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ નિયમ સે, યદિ વહ વિગતસમ્યક્ત્વ નહીં હૈ, તથા વદ્ધાયુષ્ક નહીં હૈ તો, વૈમાનિક દેવોં મેં જન્મ ધારણ કરતા હૈ । કહા બી હૈ—

“ સમ્મદિટ્ઠી જીવો, ગચ્છહ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહ ન વિગયસંમત્તો, અહવ ન વદ્ધાઉઓ પુર્વિ ” ॥ ૧ ॥

વધારેમાં વધારે અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તન કાળ સુધી જ આ સંસારમાં રહે છે, અને ત્યાર પછી મોક્ષસ્થાનને પ્રાપ્ત કરી જ લે છે. કહ્યું છે:—

“ અંતોમુહુત્તમિત્તં, -પિ ફાસિઅં હુજ્જ જેહિં સમ્મત્તં ।

તેસિં અવહ્દપુગ્ગલ, -પરિઅટ્ટો ચેવ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જે જીવોએ એક અંતર્મુહૂર્ત્ત માત્રપણ સમ્યક્ત્વનો સ્પર્શ કર્યો છે તે જીવોનો સંસાર અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાળ સુધી જ અવશિષ્ટ રહે છે, આ વિષયમાં વધારે શું કહેવું ? સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ, જે તે વિગતસમ્યક્ત્વ નથી તથા વદ્ધાયુષ્ક નથી તો નિયમથી તે વૈમાનિક દેવોમાં જન્મ ધારણ કરે છે. કહ્યું છે:—

“ સમ્મદિટ્ઠી જીવો, ગચ્છહ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહ ન વિગયસંમત્તો, અહવ ન વદ્ધાઉઓ પુર્વિ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

छाया—सम्यग्दृष्टिर्जीवो, गच्छति नियमाद् विमानवासिषु ।

यदि न विगतसम्यक्त्वः, अथवा न बद्धायुष्कः पूर्वम् ॥ १ ॥

अन्यच्च— ‘जं सकइ तं कीरइ, जं च न सकइ तयम्मि सदहणा ।

सदहमाणो जीवो, वच्चइ अयरामरं ठाणं” ॥ १ ॥ इति ।

छाया—यत् शक्नोति (कर्तुं) तत् क्रियते, यच्च न शक्नोति तस्मिन् श्रद्धा ।

श्रद्धधानो जीवो, व्रजति अजरामरं स्थानम् ॥ १ ॥ इति ।

नन्वेवं सम्यक्त्वेनैव मोक्षप्राप्तिश्चेत्तर्हि किं पुनस्तीव्रतरकष्टसाध्यैरहिंसादिव्रत-

सम्यग्दृष्टि जीव मर कर नियमसे वैमानिक देवों में उत्पन्न होता है यदि उसका सम्यक्त्व विगत (नष्ट) नहीं हुआ है, और सम्यक्त्वप्राप्तिके पहले अन्य गतियों की आयु नहीं बांधी है तो ॥ १ ॥

इसलिये प्रत्येक संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त प्राणी का कर्तव्य है कि वह ऐसे सुन्दर सम्यक्त्व को प्राप्त करनेका प्रयत्न करता रहे । कहा भी है—

“जं सकइ तं कीरइ, जं च न सकइ तयम्मि सदहणा ।

सदहमाणो जीवो, वच्चइ अयरामरं ठाणं” ॥ १ ॥ इति ।

जो शुभ कर्तव्य प्राणी से हो सकता हो वह आत्मवीर्य—बल पराक्रमको नहीं गोपते हुए अवश्य करना चाहिये । यदि न बन सके तो भी उसमें श्रद्धा रखनी ही चाहिये, क्योंकि कि शुद्ध श्रद्धाके प्रभावसे ही जीव अजर—अमर पदका अधिकारी बनता है ॥ १ ॥

शङ्का—यदि ऐसी ही बात है तो फिर तीव्रतर कष्टोंके द्वारा साध्य

सम्यग्दृष्टि एवं मरीने नियमથી वैमानिक દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. જો એનો સમ્યક્ત્વ વિગત નથી થયો અને તેને સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્તિના પહેલાં અન્ય ગતિની આયુ નહિ બાંધી હોય તો ॥ ૧ ॥

તેથી પ્રત્યેક સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત પ્રાણીનું કર્તવ્ય છે કે તે આવા સુંદર સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરવા પ્રયત્ન કરતો રહે. કહ્યું છે—

“જં સકઈ તં કીરઈ, જં ચ ન સકઈ તયમ્મિ સદહણા ।

સદહમાણો જીવો, વચ્ચઈ અયરામરં ઠાણં” ॥ ૧ ॥ इति ।

જો શુભ કર્તવ્ય પ્રાણીથી બની શકતું હોય તે આત્મવીર્ય—બલ પરાક્રમને છુપાવ્યા વિના અવશ્ય કરવું જોઈએ. જો ન બની શકે તો પણ તેમાં શ્રદ્ધા રાખવી જ જોઈએ, કારણ કે શુદ્ધ શ્રદ્ધાના પ્રભાવથી જ એવ અજર—અમર પદનો અધિકારી બને છે ॥ ૧ ॥

શંકા—જો આવી વાત છે તો પછી તીવ્રતર કષ્ટોદ્ધાર સાધ્ય અહિંસાદિ



સંયમતપઃસમારાધનૈઃ, તથાહિ-પર્યાપ્તાપર્યાપ્તકાદિભેદવતાં પૃથિવ્યપ્તેજોવાયુવનસ્પ-  
તીનાં દ્વીન્દ્રિયાદિવિવિધવ્રતસાનાં ચ ત્રિકરણત્રિયોગૈરુપમર્દનપરિહારપૂર્વકરક્ષણરૂપમ  
હિંસાવ્રતં, તથા સ્વસ્વભેદૈર્વહુવિધમૃષાવાદાદત્તાદાનમૈથુનપરિગ્રહપરિહારરૂપાણિ  
વ્રતાનિ, શીતોષ્ણાદિકઠિનતરપરિષહસહનપૂર્વકસપ્તદશવિધસંયમસમારાધનમ્, અનશ-  
નાદ્યુગ્રતરદ્વાદશવિધતપશ્ચરણજનિતશરીરાદિશોષणेન ધન્યમુનિવદ્ ઘોરતરકષ્ટસહનં  
ચેતિ । તથા-કિં પુનર્મહાવિસ્તરદુરધિગમસામાયિકાદિદ્વાદશાન્ગરૂપશ્રુતજ્ઞાનૈરપિ ?  
इति चेन्न,

અહિંસાદિ મહાવ્રત સંયમ ઓર તપ આદિકે પાલન એવં આરાધન કરને  
કી આવશ્યકતા ક્યા હૈ ? અર્થાત્-એક સમ્યગ્દર્શન સે હી જીવકો મુક્તિ  
કા લાભ હો જાવે તો પર્યાપ્ત ઓર અપર્યાપ્ત-ભેદવિશિષ્ટ એકેન્દ્રિય-  
પૃથિવીકાય, અપકાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય, ઓર વનસ્પતિકાયકે જીવોં  
કી, એવં દ્વીન્દ્રિયાદિક અનેક પ્રકારકે વ્રત જીવોં કી કૃત કારિત અનુ-  
મોદના ઓર મન વચન કાયસે વિરાધના કા ત્યાગ કરના, એવં उनका  
રક્ષણ કરના જો અહિંસા-મહાવ્રત હૈ उसका पालन १, तथा અનેક પ્રકાર-  
કે મૃષાવાદ ૨, અનેક પ્રકારકે અદત્તાદાન-ચોરી ૩, મૈથુન ૪, એવં પરિ-  
ગ્રહ ૫ કા ત્યાગરૂપ પાંચ મહાવ્રતોં કા આરાધન, એવં કઠિનતર પરિષહોં  
કે સહનપૂર્વક (૧૭) સતરહ પ્રકારકે સંયમ કા સેવન કરના, તથા ધન્ય  
મુનિકી તરહ અનશનાદિક (૧૨) ચારહ પ્રકારકે તપકે આચરણસે ઉત્પન્ન  
શરીરાદિક શોષણ સે ઘોરતર કષ્ટોં કા સહન કરના; ये सभी बिल्कुल  
હી વ્યર્થ હૈ ? तथा सामायिकादिद्वादशांगरूप श्रुतज्ञान, कि जो महा-

મહાવ્રત સંયમ અને તપ વિગેરેનું પાલન અને આરાધન કરવાની આવશ્યકતા જ  
શી છે ? અર્થાત્-એક સમ્યગ્દર્શનથી જ જીવને મુક્તિનો લાભ થઈ જાય તો  
પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત ભેદ-વિશિષ્ટ એકેન્દ્રિય-પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય,  
વાયુકાય, અને વનસ્પતિકાય-ના જીવોની, અને બેઈન્દ્રિયાદિક અનેક પ્રકારના  
વ્રત જીવોની કૃત કારિત અનુમોદના અને મનવચન કાયાથી વિરાધનાનો ત્યાગ કરવો,  
અને તેનું રક્ષણ કરવું જે અહિંસામહાવ્રત છે તેનું પાલન ૧, તથા અનેક પ્રકારના  
મૃષાવાદ, અનેક પ્રકારના અદત્તાદાન-ચોરી ૩, મૈથુન ૪, અને પરિગ્રહ ૫ ના ત્યાગરૂપ  
પાંચ મહાવ્રતોનું આરાધન, અને કઠિનતર પરિષહોનું સહનપૂર્વક સતર પ્રકારે સંયમનું  
સેવન કરવું, તથા ધન્યમુનિની પેઠે અનશનાદિક ચાર પ્રકારના તપના આચરણથી  
ઉત્પન્ન શરીરાદિક શોષણથી ઘોરતર કષ્ટોનું સહન કરવું, એ બધા બિલકુલ જ



જ્ઞાનચારિત્રસમુત્પાદનદ્વારા સમ્યક્ત્વસ્ય મોક્ષં પ્રતિ કારણત્વાત્, તથાહિ-ન કેવલં સમ્યક્ત્વમાત્રેણ સિદ્ધિપદં લબ્ધું શક્યતે, કિન્તુ સમ્યક્ત્વકાર્યસ્ય તદભિ-વ્યજ્ઞકસ્ય ચારિત્રસ્યૈવ મોક્ષં પ્રતિ સાક્ષાત્કારણતયા તેનૈવ તત્પ્રાપ્તિર્ભવિતુમર્હતિ, સમ્યગ્જ્ઞાનમપિ ચારિત્રોત્પાદનદ્વારેણૈવ મોક્ષજનકમ્ । યતશ્ચારિત્રપરિણામેનૈવ જ્ઞાન-મપિ મોક્ષાય પ્રભવતિ, ન કેવલં સ્વસત્તામાત્રેણ । અત એવ ભગવતાઽત્રૈવ પ્રથમાધ્યયને વિસ્તારસમ્પન્ન એવં દુરધિગમ હૈ, ઉસકા શ્રવણ, મનન આદિ કરના મી નિસ્સાર હી હૈ ? ।

સમાધાન—શંકાકારકી યહ શંકા ઠીક નહીં હૈ; ક્યોં કિ સ્વતન્ત્ર સમ્યગ્દર્શન મોક્ષકા કારણ નહીં માના ગયા હૈ । જબ તક જીવ કો સમ્ય-ક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ તબ તક ઉસકે જ્ઞાન ઓર ચારિત્ર મિથ્યા-રૂપ મેં રહતે હૈં । જ્ઞાન ઓર ચારિત્રમેં સમ્યક્પના હસી સમ્યક્ત્વ કે દ્વારા આના હૈ, અતઃ સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર કી ઉત્પત્તિ દ્વારા હી સમ્યક્ત્વ મોક્ષકા હેતુ હોતા હૈ । હસી અભિપ્રાયકો લે કર સમ્યક્ત્વ, મોક્ષકા કારણ કહા ગયા હૈ । જબ તક સમ્યક્ત્વ પૂર્ણ જ્ઞાન ઓર પૂર્ણ ચારિત્ર કો ઉત્પન્ન નહીં કર દેતા તબ તક વહ મોક્ષકા કારણ નહીં હોતા । મુક્તિ સમ્યક્ચારિત્ર સે હી પ્રાપ્ત હોતી હૈ, હસ કારણ સે સમ્યક્ ચારિત્ર હી મુક્તિકા સાક્ષાત્ કારણ હૈ । યહ ચારિત્ર સમ્યક્ત્વ કા કાર્ય ઓર ઉસકા અભિવ્યંજક-પ્રકાશક હોતા હૈ ।

વ્યર્થ છે ? તથા સામાયિકદિદ્રાદશાંગરૂપ શ્રુતજ્ઞાન, કે જે મહાવિસ્તારસંપન્ન અને દુરધિગમ છે; તેનું શ્રવણ મનન આદિ કરવું પણ નિસ્સાર જ છે ?

સમાધાન—શંકાકારની શંકા ઠીક નથી; કારણ કે સમ્યગ્દર્શન મોક્ષનું સ્વ-તન્ત્ર કારણ માનવામાં આવ્યું નથી. જ્યાં સુધી જીવને સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ નથી થતી ત્યાં સુધી તેનું જ્ઞાન અને ચારિત્ર મિથ્યારૂપમાં રહે છે. જ્ઞાન અને ચારિ-ત્રમાં સમ્યક્પણું આ સમ્યક્ત્વદ્વારા આવે છે, એથી સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્-ચારિત્રની ઉત્પત્તિ દ્વારા જ સમ્યક્ત્વ મોક્ષનો હેતુ થાય છે. આ અભિપ્રાયને લઈને જ સમ્યક્ત્વને મોક્ષનું કારણ કહેવામાં આવ્યું છે. જ્યાં સુધી સમ્યક્ત્વ પૂર્ણ જ્ઞાન અને પૂર્ણ ચારિત્રને ઉત્પન્ન નથી કરતું ત્યાં સુધી તે મોક્ષનું કારણ નથી થતું. મુક્તિ સમ્યક્-ચારિત્રથી જ પ્રાપ્ત થાય છે, આ કારણથી સમ્યક્ ચારિત્ર જ મુક્તિનું સાક્ષાત્ કારણ છે. આ ચારિત્ર સમ્યક્ત્વનું કાર્ય અને તેનું અભિવ્યંજક (પ્રગટ કરવાવાળું) થાય છે.

‘સે હુ મુળી પરિણાયકમ્મે’ ઇતિ પુનઃ પુનર્વદતા સમ્યક્ચારિત્રમેવ મોક્ષપ્રાપ્તિ-  
કારણમિતિ પ્રતિબોધિતમ્ । ઉત્તરાધ્યયનેऽપિ—

“નાદંસણિસ્સ નાણં, નાણેણ વિણા ન હંતિ ચરણગુણા ।

અગુણિસ્સ નત્થિ મોક્ખો, નત્થિ અમોક્ખસ્સ નિવ્વાણં” ॥૧॥ (અ૦ ૨૮)

સમ્યગ્જ્ઞાન મી સમ્યક્ચારિત્ર કો ઉત્પન્ન કરતા હુઆ મોક્ષકા કારણ માના ગયા હૈ । જ્ઞાનકી સત્તા મલે હી આત્મા મેં હો પરન્તુ જબ તક વહ આત્મામેં ચારિત્રપરિણામ કો ઉત્પન્ન નહીં કર દેતા, તબ તક મોક્ષ કા જનક નહીં હો સકતા । ઇસી અભિપ્રાય કો લે કર મગવાનને ઇસી પ્રથમ અધ્યયનમેં “સે હુ મુળી પરિણાયકમ્મા” અર્થાત્—જો છ કાય કે આરંભ કો જ્ઞપરિજ્ઞા સે જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ત્યાગતા હૈ વહી મુનિ ચારિત્રવાન ગિના જાતા હૈ । ઇસ કથન દ્વારા મી સમ્યક્ચારિત્ર કો હી મોક્ષપ્રાપ્તિકા કારણ પ્રકટ કિયા હૈ । ઉત્તરાધ્યયનકે ૨૮ વેં અધ્ય-  
યનમેં મી ઇસકી પુષ્ટિ કી ગઈ હૈ । જૈસે—

“નાદંસણિસ્સ નાણં, નાણેણ વિણા ન હંતિ ચરણગુણા ।

અગુણિસ્સ નત્થિ મોક્ખો, નત્થિ અમોક્ખસ્સ નિવ્વાણં” ॥૧॥

અર્થાત્—સમ્યગ્દર્શનરહિત આત્મામેં સમ્યગ્જ્ઞાન નહીં હોતા । સ-  
મ્યગ્જ્ઞાન સે રહિત આત્મા કો ચારિત્રગુણકી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી । ચારિત્ર  
ગુણ કી પ્રાપ્તિ કિયે વિના મોક્ષ નહીં હોતા, એવં અમુક્તકા નિર્વાણ નહીં  
હોતા ॥ ૧ ॥ ઉત્ત૦ અ૦ ૨૮ ॥

સમ્યગ્જ્ઞાન પણ સમ્યક્-ચારિત્રને ઉત્પન્ન કરતાં મોક્ષનું કારણ માનવામાં આવે છે. જ્ઞાનની સત્તા ભલે જ આત્મામાં છે, પરંતુ જ્યાં સુધી તે આત્મામાં ચારિત્રપરિણામને ઉત્પન્ન નથી કરતું ત્યાં સુધી મોક્ષનું ઉત્પાદક નથી થતું. આ અભિપ્રાયને લઈને ભગવાને આ પ્રથમ અધ્યયનમાં “સે હુ મુળી પરિણાયકમ્મા” અર્થાત્—જે છ કાયના આરંભને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી ત્યાગે છે તે જ મુનિ ચારિત્રવાન માનવામાં આવે છે. આ કથન દ્વારા પણ સમ્યક્-ચારિત્રને જ મોક્ષપ્રાપ્તિનું કારણ પ્રગટ કર્યું છે. ઉત્તરાધ્યયન અધ્યયન ૨૮માં પણ એની પુષ્ટિ કરી છે. જેમ—

“નાદંસણિસ્સ નાણં, નાણેણ વિણા ન હંતિ ચરણગુણા ।

અગુણિસ્સ નત્થિ મોક્ખો, નત્થિ અમોક્ખસ્સ નિવ્વાણં” ॥૧॥ ઉત્ત૦ અ૦ ૨૮ ॥

અર્થાત્—સમ્યગ્દર્શનરહિત આત્મામાં સમ્યગ્જ્ઞાન નથી થતું. સમ્યગ્જ્ઞાનથી રહિત આત્માને ચારિત્ર ગુણની પ્રાપ્તિ થતી નથી. ચારિત્રગુણની પ્રાપ્તિ કર્યા વિના મોક્ષ થતું નથી, અને અમુક્તનું (કર્મથી મુક્ત નહિ તેનું) નિર્વાણ થતું નથી. ૧



सूत्रकृताङ्गे च—“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ॥१॥ ” (अ० ११)

ज्ञानं हि क्रियापरिणामाऽनापन्नं सत् कमप्यर्थं साधयितुं न शक्नोति । यथा शास्त्राभ्यासनकुशलोऽपि तदर्थविज्ञाननिपुणोऽपि तदुक्तधर्मानाचरणेन तदभ्यासनादिकं सर्वं निष्फलीकुर्वन्नहि विद्वत्पदं लभते । यथा वा—औषधस्वरूपगुणप्रज्ञावतामपि वैद्यानां तत्सविधिसेवनक्रियामन्तरेण तत्प्रज्ञा नैरुज्यं न जनयति, यद्यौषधज्ञानवतामियम-वस्था, तर्हि का वार्त्ता केवलं तन्नामरटनशीलानां जनानाम् । तथा चोक्तम्—

सूत्रकृताङ्गं मे भी यही लिखा है—

“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ” ॥ १ ॥ (सू० अ० ११)

ज्ञान जब तक क्रियात्मक ( चारित्ररूप ) नहीं होता तब तक वह किसी भी इष्ट अर्थ की पुष्टि नहीं कर सकता । जैसे—शास्त्रके अभ्यास करनेमें कुशलमति व्यक्ति उसके अर्थका विशिष्ट ज्ञाता होकर भी जब तक शास्त्रविहित मार्ग को जीवनमें क्रियात्मकरूप नहीं देता तब तक वह उसके अभ्यास या ज्ञान से अपने किसी भी इच्छित कार्य की सिद्धि नहीं कर सकता है, और न वह यथार्थ विद्वत्ता के पदसे ही विभूषित हो सकता है । अतः उसको क्रियात्मक रूप देने के बिना जैसे उसका वह अभ्यास एवं ज्ञान निष्फल है, उसी प्रकार सम्यग्दर्शन भी ज्ञान-क्रियाके अभाव में मोक्षका साधक नहीं होता है । वैद्यका औषधि-

सूत्रकृताङ्गमां पणु अे न् दण्णुं छे—

“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ” ॥ १ ॥ सूत्र० अ० ११ ।

ज्ञान न्यां सुधी क्रियात्मक ( चारित्ररूप ) नहीं थतुं त्यां सुधी ते डेछ पणु छण्ट अर्थनी पुष्टि नहीं करी शक्तुं । जेम शास्त्रनो अभ्यास करवामां कुशलमति मनुष्य अेना अर्थनो विशिष्ट ज्ञाता होवा छतां पणु न्यां सुधी शास्त्रविहित मार्गने जवनमां क्रियात्मकरूपथी नहीं उतारतो त्यां सुधी ते तेना अभ्यासना ज्ञानथी पोताना डेछ पणु छिच्छित कार्यनी सिद्धि प्राप्त करी शक्तो नहीं, अने यथार्थ विद्वत्ताना पदथी पणु ते विभूषित थछ शक्तो नहीं । अथी तेने क्रिया-त्मक रूप आभ्या विना जेम तेना आ अभ्यास तेमज् ज्ञान निष्फल छे ते प्रकारे सम्यग्दर्शन पणु ज्ञान-क्रियाना अभावमां मोक्षनुं साधक थतुं नहीं । वैद्यनो औषधविषयक अभ्यास अने परिपक्व ज्ञान औषधिसेवनना विधिनी



“ શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।  
સુચિન્તિતં ચૌષધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્ ” ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વસદ્ભાવે શમસંવેગાદયો ગુણાઃ પ્રસન્નમુદયન્તે, તદાનીં કથમપિ તદુ-  
દયં પ્રતિરોદું ન કથ્વન સમર્થો ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

“ અસમસુખનિધાનં ધામ સંવિગ્નતાયાઃ, ભવસુખવિમુક્ત્વોદીપને સદ્વિવેકઃ ।  
નરનરકપશુત્વોચ્છેદહેતુર્નરાણાં, શિવસુખતરુવીજં શુદ્ધસમ્યક્ત્વલાભઃ ” ॥ ૧ ॥

વિષયક અભ્યાસ, એવં પરિપક્વ જ્ઞાન કયા કમી ઔષધિસેવનકે વિધિ  
કી અનભિજ્ઞતા મેં નીરોગતા કા કારણ હો સકતા હૈ ? નહીં હો સકતા ।  
યદિ હો સકતા તો ફિર ઉસકા નામ રટનેવાલે રોગી પુરુષોં કી બાત હી  
કયા કહની ? ઉન્હેં મી ઉસસે ફાયદા હો જાના ચાહિયે । કહા મી હૈ—

“ શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, —યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।  
સુચિન્તિતં ચૌષધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્ ” ॥ ૧ ॥

શાસ્ત્રોંકો પઢકર મી મનુષ્ય મૂર્ખ રહ જાતે હૈ । જો ક્રિયાવાન્ હૈ  
વહી વિદ્વાન્ હૈ । બીમાર વ્યક્તિકો સુચિન્તિત મી ઔષધિ નામમાત્ર  
લેને સે આરોગ્યદાયક નહીં હોતી ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વકે સદ્ભાવમેં શમસંવેગાદિક ગુણોંકી ઉત્પત્તિ અવશ્ય  
હોતી હૈ, ઉનકો રોકને કેલિયે કોઈ મી સમર્થ નહીં હો સકતા, ક્યોં  
કિ યહ સર્વગુણસમ્પન્ન હૈ । કહા મી હૈ—

“ અસમસુખનિધાનં ધામ સંવિગ્નતાયાઃ,  
ભવસુખવિમુક્ત્વોદીપને સદ્વિવેકઃ ।

નરનરકપશુત્વોચ્છેદહેતુર્નરાણાં,

શિવસુખતરુવીજં શુદ્ધસમ્યક્ત્વલાભઃ ” ॥ ૧ ॥

અનભિજ્ઞતામાં નીરોગતાનું કારણ કોઈ વખત બની શકે છે ?—નથી બની શકતું.  
જો બની શકે તો ‘પછી તેનું’ નામ લેવાવાળા રોગી પુરુષોની વાત જ શું કહેવી ?  
તેને પણ તેનાથી કાચકો થવા બોધએ. કહ્યું પણ છે:—

“ શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, —યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।  
સુચિન્તિતં ચૌષધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્ ” ॥ ૧ ॥

શાસ્ત્રનો અભ્યાસ કરીને પણ મનુષ્ય મૂર્ખ રહી બાક છે. જે ક્રિયાવાન  
છે તે વિદ્વાન છે. બીમાર મનુષ્યને સુચિન્તિત પણ ઔષધિ નામમાત્ર લેવાથી  
આરોગ્યદાયક નથી થતી ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વના સદ્ભાવમાં શમસંવેગાદિક ગુણોની ઉત્પત્તિ અવશ્ય થાય છે, એને  
રોકવાને માટે કોઈ સમર્થ થતું નથી. કારણ કે તે સર્વગુણસમ્પન્ન છે. કહ્યું પણ છે—

કિંચ—“ સમ્યક્ત્વરત્નાન્ન પરં હિ રત્નં, સમ્યક્ત્વબન્ધોર્ન પરોઽસ્તિ બન્ધુઃ ।  
સમ્યક્ત્વમિત્રાન્ન પરં હિ મિત્રં, સમ્યક્ત્વલાભાન્ન પરોઽસ્તિ લાભઃ ” ॥ ૨ ॥  
તદેવં સમ્યક્ત્વમિહ મોક્ષસ્ય વીજમિતિ સિદ્ધમ્ ।

### સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિક્રમઃ ।

અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટેર્જીવસ્ય સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તૌ યથાક્રમં ત્રીણિ કરણાનિ ભવન્તિ ।

યહ સમ્યક્ત્વ અનુપમ સુખકા નિધાન હૈ, વૈરાગ્યકી ઉત્પત્તિ કા કારણ હૈ, વૈરાગ્યકો પ્રકટ કરને મેં શુદ્ધ વિવેક હૈ, ચાર ગતિકે દુઃખોંકા ઉચ્છેદ કરને મેં કારણ હૈ ઓર મોક્ષસુખરૂપ વૃક્ષકા યહ વીજ હૈ ॥ ૧ ॥

ઔર મી કહા હૈ—

“ સમ્યક્ત્વરત્નાન્ન પરં હિ રત્નં, સમ્યક્ત્વબન્ધોર્ન પરોઽસ્તિ બન્ધુઃ ।  
સમ્યક્ત્વમિત્રાન્ન પરં હિ મિત્રં, સમ્યક્ત્વલાભાન્ન પરોઽસ્તિ લાભઃ ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વ-રત્નસે કોઈ ઉત્કૃષ્ટ રત્ન નહીં હૈ, ઇસસે બઢકર કોઈ બન્ધુ નહીં હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ પરમ મિત્ર હૈ, ઔર ઇસકા લાભ હી પરમલાભ હૈ ॥

ઇસસે યહ સિદ્ધ હુઆ કિ સમ્યક્ત્વ મોક્ષકા મૂલ કારણ હૈ ।

### સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિકા ક્રમ—

અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ જબ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિકે સંમુખ હોતા હૈ ડસ સમય ડસકે યથાક્રમસે ત્રીન કરણ હોતે હૈ—(૧) યથાપ્રવૃત્તિકરણ, (૨) અપૂર્વકરણ, (૩) અનિવૃત્તિકરણ ।

“ અસમસુખનિધાનં ધામ સંવિગ્નતાયાઃ, ભવસુખવિમુક્ત્વોદ્ધીપને સદ્વિવેકઃ ।

નરનરકપશુવોચ્છેદદેહતુર્નરાણાં, શિવસુખતરુવીજ શુદ્ધસમ્યક્ત્વલાભઃ ” ॥ ૧ ॥

આ સમ્યક્ત્વ અનુપમ સુખનું નિધાન છે. વૈરાગ્યની પ્રાપ્તિનું કારણ છે. વૈરાગ્યને પ્રગટ કરવામાં શુદ્ધ વિવેક છે. ચાર ગતિના દુઃખના ઉચ્છેદ કરવામાં કારણ છે અને મોક્ષસુખરૂપ વૃક્ષનું એ બીજ છે. ॥ ૧ ॥ વળી પણ કહ્યું છે—

“ સમ્યક્ત્વરત્નાન્ન પરં હિ રત્નં, સમ્યક્ત્વબન્ધોર્ન પરોઽસ્તિ બન્ધુઃ ।

સમ્યક્ત્વમિત્રાન્ન પરં હિ મિત્રં, સમ્યક્ત્વલાભાન્ન પરોઽસ્તિ લાભઃ ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વરત્નથી કોઈ ઉત્કૃષ્ટ રત્ન નથી. એનાથી વધીને કોઈ બંધુ નથી.

આ સમ્યક્ત્વ પરમ મિત્ર છે, અને એનો લાભ જ પરમ લાભ છે ॥ ૧ ॥

એથી એ સિદ્ધ થયું કે સમ્યક્ત્વ મોક્ષનું મૂળ કારણ છે.

### સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિનો ક્રમ

અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ છવ જ્યારે સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિને સમ્મુખ થાય છે તે વખતે તેને યથાક્રમથી ત્રણ કરણ થાય છે—(૧) યથાપ્રવૃત્તિકરણ, (૨) અપૂર્વકરણ, (૩) અનિવૃત્તિકરણ.



યથાપ્રવૃત્તિકરણમ્, અપૂર્વકરણમ્, અનિવૃત્તિકરણં ચેતિ । યથા=અનાદિસંસિદ્ધપ્રકારેણ પ્રવૃત્તિઃ=પ્રવર્તમાનં-યથાપ્રવૃત્તિ, ક્રિયતે કર્મક્ષપણમનેનેતિ કરણં-જીવપરિણામરૂપમ્ । યથાપ્રવૃત્તિ ચ તત્ કરણં ચેતિ યથાપ્રવૃત્તિકરણમ્ ।

एवमुत्तरत्रापि करणशब्देन कर्मधारयो बोध्यः । एवं चानादिकालात् कर्मक्षपणप्रवृत्तोऽध्यवसायविशेषो यथाप्रवृत्तिकरणमिति फलितम् । एतानि त्रीण्यपि करणानि भव्यानां भवन्ति । अभव्यानां तु प्रथममेव यथाप्रवृत्तिकरणं भवति नेतरद्वयम् ।

अनादि परंपरा से जो प्रवर्तमान है वह यथाप्रवृत्ति है, तथा कर्म क्षय जिसके द्वारा किया जाता है वह करण है, यह करण जीवका परिणामस्वरूप ही है । यथाप्रवृत्तिरूप जो करण है उसका नाम यथाप्रवृत्तिकरण है । यह इसका निरुक्त-अर्थ है । इसी प्रकार आगे भी करण शब्द के साथ कर्मधारय समास का संबंध कर लेना चाहिये । इस प्रकार अनादि कालसे कर्मक्षय करनेमें प्रवृत्त जीवका परिणामविशेष ही यथाप्रवृत्तिकरण है, यही इसका फलितार्थ है । ये तीन करण भव्यों के होते हैं । अभव्यों के सिर्फ प्रथम ही करण होता है, अन्तके दो नहीं होते ।

યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ પરિણામ જીવકે હોતા હી રહતા હૈ । इसके द्वारा जीव उदयमें आये हुए ज्ञानावरणीयादिक आठ कर्मोंकी प्रकृतियों का क्षय करता रहता है । इस लिये इस परिणामके कर्मक्षय का कारण होने से जीव इसके बल पर यथासंभव कर्मस्थितिका क्षय करता हुआ घन-कठिनतर रागद्वेषरूपी ग्रन्थिके समीप तक पहुँच जाता है । यह ग्रन्थि

અનાદિ પરંપરાથી જે પ્રવર્તમાન છે તે યથાપ્રવૃત્તિ છે, અને કર્મક્ષય જેના દ્વારા કરવામાં આવે છે તે કરણ છે. આ કરણ જીવના પરિણામસ્વરૂપ છે. યથાપ્રવૃત્તિરૂપ જે કરણ છે તેનું નામ યથાપ્રવૃત્તિકરણ છે. તે એના નિરુક્ત-અર્થ છે. આ પ્રકારે આગળ પણ કરણ-શબ્દની સાથે કર્મધારયસમાસનો સંબંધ કરી લેવો જોઈએ. આ પ્રકારે અનાદિકાળથી કર્મક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત જીવનું પરિણામ વિશેષ જ યથાપ્રવૃત્તિકરણ છે, તે તેનું ફલિતાર્થ છે. એ ત્રણ કરણ ભવ્યોને થાય છે. અભવ્યોને ફક્ત પ્રથમ જ કરણ થાય છે, બાકીનાં બે નથી થતાં.

યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ પરિણામ જીવને થતાં જ રહે છે. એના દ્વારા જીવ ઉદયમાં આવેલા જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોની પ્રકૃતિયોનો ક્ષય કરતો રહે છે. તેથી આ પરિણામ કર્મક્ષયનું કારણ હોવાથી આ જીવ તેના બલ ઉપર યથાસંભવ કર્મસ્થિતિનો ક્ષય કરતાં ઘન-કઠિનતર રાગદ્વેષરૂપી ગ્રન્થિની સમીપ સુધી પહોંચી જાય છે. આ ગ્રન્થિ એટલી ગાઢ-અખલતમ છે કે જેનું આ



અધ્યવસાયસ્ય સર્વદૈવ ભાવાદુદયપ્રાપ્તાનાં જ્ઞાનાવરણીયાચ્છકર્મપ્રકૃતીનાં ક્ષપણેન કર્મક્ષયકારણતયા યથાપ્રવૃત્તિકરણેન યથાસંભવં કર્મસ્થિતિં ક્ષપયતો જીવસ્ય ઘનરાગ-  
દ્વેષપરિણામરૂપો ગ્રન્થિરવતિષ્ઠતે, યથાપ્રવૃત્તિકરણસ્ય મન્દવિશુદ્ધિપરિણામરૂપત્વેન ગ્રન્થિભેદનસામર્થ્યાભાવાત્ ।

નનુ તર્હિ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન કિયતી કર્મસ્થિતિઃ ક્ષપિતા ભવતિ ? ઉચ્યતે-  
યથા ગિરિનદ્યાં પાપાણસ્વપ્ણાનિ તદ્વેગતો ઘર્ષણાદિના વર્તુલાકારાણિ જાયન્તે,  
એવમનાદિકાલતઃ પૂર્વપૂર્વકર્મવશાચ્ચતુર્ગતિકસંસારસાગરં પ્રાપ્તસ્યાનન્તદુઃખાનિ સહ-  
માનસ્ય જીવસ્ય પરિણામસ્વભાવતયાઽનામોગનિર્વર્તિતેન યથાપ્રવૃત્તિકરણાણ્યેન  
વિશુદ્ધિપરિણામેન દીર્ઘતરાઽપિ કર્મસ્થિતિસ્તથા ક્ષપિતા ભવતિ યથાઽઽયુર્વર્જાનાં  
જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણાં સર્વેષાં સ્થિતિઃ પર્યોપમાસંખ્યાતભાગન્યૂનૈકકોટીકોટી-  
સાગરોપમપ્રમાણાઽવશેષા તિષ્ઠતિ ।

ઇતની ગાઢ-પ્રબલતમ હતી છે કે જિસકા હસ પરિણામકે દ્વારા ભેદન  
કરના સર્વથા અશક્ય કાર્ય છે । જીવકો હસ ગ્રન્થિકે દેશ તક પહુંચાના  
હી હસ પરિણામ કા કામ છે । ગ્રન્થિકા ભેદન હસકે દ્વારા હસ લિયે  
નહીં હોતા છે કે યહ પરિણામ મન્દવિશુદ્ધિવાળા છે ।

શક્કા—આપકા કથન ઠીક છે; પરન્તુ અમી તક યહ માલૂમ નહીં  
હો રહા છે કે હસ પરિણામકે દ્વારા કિતની કર્મસ્થિતિકા ક્ષય હોતા છે ।

ઉત્તર—જેસે પર્વતીય નદી મેં પાષાણસ્વપ્ણ નદીકે પ્રબલ પ્રવાહ કે વેગસે  
લુઢકતે હુએ ઓર હધર ઓધર સે ટકરાતે હુએ સ્વાભાવિક રીતિસે ગોળમોલ  
હો જાતા છે, ઉસી પ્રકાર અનાદિકાલસે કર્મકી અનવચ્છિન્ન સંતતિ (અટૂટ  
પરંપરા) કે વશીભૂત રહ કર ચતુર્ગતિસ્વરૂપ હસ સંસાર મહાસાગરમેં ગોતે

પરિણામદ્વારા ભેદન કરવું સર્વથા અશક્ય કાર્ય છે. જીવને આ ગ્રન્થિના દેશ સુધી  
પહોંચ્યાડવું જ આ પરિણામનું કામ છે. ગ્રન્થિનું ભેદન એના દ્વારા તે માટે નથી  
થતું કે આ પરિણામ મન્દવિશુદ્ધિવાળું છે.

શંકા—આપનું કથન ઠીક છે; પરંતુ હજી સુધી એ માલૂમ નથી કે આ  
પરિણામદ્વારા કેટલી કર્મસ્થિતિનો ક્ષય થાય છે.

ઉત્તર—જેમ પર્વતીય નદીમાં પાષાણખંડ એના પ્રબલ પ્રવાહના વેગથી  
આમ-તેમ અથડાઈને ઘસાતો ઘસાતો સ્વાભાવિક રીતિથી ગોળમોલ થઈ જાય  
છે, તે જ પ્રકારે અનાદિ કાળથી કર્મની અનવચ્છિન્નસંતતિ-અતુટપરંપરાને  
વશીભૂત રહીને ચતુર્ગતિસ્વરૂપ આ સંસારમહાસાગરમાં ગોથા ખાતાં અને  
અનંત દુઃખોની પરંપરાને સહન કરતાં એ જીવને સ્વાભાવિક રીતિથી-વિના કોઈ

સ્વાતે, તથા અનંત દુઃસ્વોંની પરંપરાકો સહતે હુણ હસ જીવકે સ્વાભાવિક રીતિ સે-વિના કિસી પ્રયત્ન કે-વિશુદ્ધ યથાપ્રવૃત્તિકરણ નામકા પરિણામ પ્રગટ હોતા હૈ, જિસકે દ્વારા યહ જીવ દીર્ઘતર કર્મસ્થિતિ કો ખી હતની સ્વપા દેતા હૈ કિ જિસસે આયુકર્મ કો છોડ કર શેષ જ્ઞાનાવરણીયાદિક સમસ્ત સાત કર્મોંની સ્થિતિ પત્ય કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કમ એક કોટાકોટીસાગરપ્રમાણ અવશિષ્ટ રહ જાતી હૈ ।

વિશેષાર્થ—જૈસે પર્વતપ્રદેશમેં વહેનેવાલી નદીકા પથર ઉસકી પ્રબલ ધારાસે આહત હો હધર-ઉધર ટકરા કર સ્વાભાવિક રીતિસે ગોલમોલ હો જાયા કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર અનાદિકાલસે કર્મકે વશીભૂત હોકર સંસારરૂપી સમુદ્રમેં પડા હુઆ યહ જીવરૂપી પાષાણમ્વળદ ખી ચતુર્ગતિયોં કે દુઃસ્વરૂપી પ્રબલતમ પ્રવાહોં સે રાત-દિન ટકરાર કર ગોલમોલસ્વરૂપ યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ-અવસ્થાસંપન્ન હો જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર નદીકા પાષાણ વિના કિસી પ્રયત્ન એવં અનાભોગરૂપસે (સ્વાભાવિકરૂપસે) ગોલ હો જાયા કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર યહ કરણ ખી વિના કિસી પ્રયત્ન સે-સ્વાભાવિકરૂપ સે હી જીવ કો પ્રાપ્ત હો જાયા કરતા હૈ । યહ જીવ કા વિશુદ્ધ પરિણામ હૈ । હસકે પ્રભાવસે ઉસકે આયુકર્મ કો છોડ કર અવશિષ્ટ (શેષ) સાત કર્મોંની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ઘટ કર પત્યકે અસં-

પ્રયત્ને વિશુદ્ધ યથાપ્રવૃત્તિકરણ નામનું પરિણામ પ્રાદુર્ભૂત (પ્રગટ) થાય છે. જેના દ્વારા આ જીવ દીર્ઘતર કર્મસ્થિતિને પણ એટલી ખપાવી દે છે કે જેથી આયુકર્મને છોડીને શેષ જ્ઞાનાવરણીયાદિક સમસ્ત સાત કર્મોંની સ્થિતિ પત્યના અસંખ્યાતમાં ભાગ હીન એકકોટાકોટિસાગરપ્રમાણ અવશિષ્ટ રહી જાય છે.

વિશેષાર્થ—જેમ પર્વતપ્રદેશમાં વહેવાવાળી નદીનો પથર એની પ્રબલ ધારાથી અહીં-તહીં અથડાઈ કુટાઈને સ્વાભાવિક રીતિથી ગોળમોળ થઈ જાય છે, તે પ્રકારે અનાદિ કાળથી કર્મના વશીભૂત થઈને સંસારરૂપી સમુદ્રમાં પડી રહેલા આ જીવરૂપી પાષાણખંડ પણ ચતુર્ગતિના દુઃખરૂપ પ્રબલ પ્રવાહથી રાત્રિનિ અથડાઈને ગોળમોલસ્વરૂપ યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ-અવસ્થાસંપન્ન થઈ જાય છે. જેમ નદીના પાષાણ, કેઈ પ્રયત્ન વિના અને અનાભોગરૂપથી (સ્વાભાવિક રૂપથી) ગોળ થયા કરે છે તે પ્રકારે આ કરણ પણ કેઈ પ્રયત્ન વિના સ્વાભાવિક રૂપમાં જ જીવને પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. આ જીવનો વિશુદ્ધ પરિણામ છે. આના પ્રભાવથી એ જીવના આયુકર્મને છોડીને અવશિષ્ટ (શેષ) સાત કર્મોંની



અત્રાન્તરે ચ જીવસ્ય કર્મજનિતો ઘનરાગદ્વેષપરિણામરૂપઃ કર્કશનિબિડચિરપ્રહ-  
ઢગૂઢવક્રગ્રન્થિવદ્ દુર્ભેદઃ કર્મસ્થિતિવિશેષો ગ્રન્થિર્ભવતિ ।

અભવ્યોઽપિ જીવઃ સ્વલુ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન પ્રાગુક્તકર્મણાં દીર્ઘતરસ્થિતિં  
હાસયન્નેકકોટીકોટીસાગરોપમપ્રમાણાં કર્તુમર્હતિ, પરન્તુ ગ્રન્થિભેદનાય ન સમર્થો  
હ્યાતર્વે ભાગ કમ એકકોટાકોટિસાગરપ્રમાણ ( અન્તઃકોટાકોટિ  
સાગરપ્રમાણ ) રહ જાતી છે ।

इसके बाद जीवके कर्मजनित-कर्मों से उत्पन्न की गई-और सघन  
कठिनतर रागद्वेष परिणामवाली कर्मों की विशेषस्थितिरूप एक ग्रन्थि  
होती है, जो अत्यन्त कठोर, सघन और पुरानी गूढ गांठके समान  
दुर्भेद्य होती है । जैसे-बहुत पुरानी कठोर गांठका-कि जो चिकनाई  
आदिके संबंधसे अत्यन्त चिपट गई है और जिसका फंदा भी नजर  
नहीं आ रहा है, एवं जो टेढ़ी मेढ़ी लगी हुई है; उसका खोलना दुःशक्य  
है, उसी प्रकार की यह कर्मस्थिति भी एक दुर्भेद्य गांठ है ।

અભવ્ય જીવ મી ઇસી યથાપ્રવૃત્તિકરણ દ્વારા આયુકર્મ સિવાય અન્ય  
સાત કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કો સ્વપા કર એક કોટાકોટી સાગર પ્રમાણ  
કર દેતા છે; પરન્તુ ગ્રન્થિભેદન નહીં કર સકતા । ઇસકે પશ્ચાત્ કોઈ હી  
મહાત્મા અન્ય જીવ યથાપ્રવૃત્તિકરણ સે મી અધિક વિશુદ્ધિસંપન્ન અપૂર્વ  
કરણ કો પ્રાપ્ત કરતા છે । ઇસકે દ્વારા વહ ઘન રાગદ્વેષરૂપ અતિદૃઢ

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ઘટીને પદ્યના અસંખ્યાતમાં ભાગ હીન એક કોટાકોટીસાગર  
પ્રમાણ ( અન્તઃકોટાકોટિસાગરપ્રમાણ ) રહી જાય છે.

ત્યાર બાદ જીવની કર્મજનિત-કર્મોથી ઉત્પન્ન થયેલી-અને સઘન કઠિનતર  
રાગદ્વેષપરિણામવાળી કર્મોની વિશેષ સ્થિતિરૂપ એક ગ્રન્થિ હોય છે, જે  
અત્યન્ત કઠોર, સઘન અને જીવી ગૂઢ-ગાંઠની સમાન દુર્ભેદ્ય હોય છે. જેમ  
ઘણી જીવી કઠણ ગાંઠનું, કે જે ચિકણાપણા વિગેરેના સંબંધથી અત્યન્ત ચોંટી  
ગયેલ છે, અને જેનો સાંધો પણ નજર નથી આવતો, અને જે વાંકીચુકી લાગેલી  
છે; એનું તોડવું જેમ અશક્ય હોય છે. તે જ પ્રકારની આ કર્મસ્થિતિ પણ  
એક દુર્ભેદ્ય ગાંઠ છે.

અભવ્ય જીવ પણ આ યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા આયુકર્મ સિવાય અન્ય  
સાત કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિને સ્વપાવીને એકકોટાકોટીસાગરપ્રમાણ કરી દે  
છે, પરંતુ ગ્રન્થિભેદન કરી શકતા નથી. એના પશ્ચાત્ કોઈ પણ મહાત્મા ભવ્ય  
જીવ યથાપ્રવૃત્તિકરણથી પણ અધિકવિશુદ્ધિસંપન્ન અપૂર્વ-કરણને પ્રાપ્ત  
કરે છે. એના દ્વારા તે ઘન-રાગદ્વેષરૂપ અતિદૃઢ ગ્રન્થિને સર્વ પ્રકારથી છેદી



ભવતિ । એતદનન્તરં કશ્ચિદેવ મહાત્મા ભવ્યજીવસ્તુ યથાપ્રવૃત્તિકરણાખ્યપરિણામા-  
દપ્યધિકવિશુદ્ધિપરિણામં પ્રાપ્તુમર્હતિ, સ એવાપૂર્વકરણાખ્યઃ પરિણામઃ । તં પ્રાપ્યાસૌ  
નિશિતકુઠારધારયેવ પરમવિશુદ્ધ્યા ઘનરાગદ્વેષાતિદ્વહસંસ્કારરૂપં ગ્રન્થિ સર્વથા  
છિનત્તિ ભિનત્તિ ચ ।

યત્ પૂર્વં ન જાતં તદપૂર્વમ્, અપૂર્વં ચ તત્ કરણં ચેત્યપૂર્વકરણમ્ । અયં પરિ-  
ણામઃ સકૃદેવ ભવતિ, ન તુ પુનઃ પુનરિતિ । યથાપ્રવૃત્તિકરણં લભ્યમાનામપ્યનન્તશઃ  
પ્રાદુર્ભવતિ । તસ્માદભવ્યા અપિ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન કર્મ ક્ષપયિત્વા ગ્રન્થિ યાવદન-  
ન્તશઃ સમાગચ્છન્તિ ।

અપૂર્વકરણપરિણામેન ગ્રન્થેઃ સર્વથા ભેદને કૃતે સતિ તદપેક્ષ્યાડપ્યધિકવિશુદ્ધિ-  
પરિણામો ભવતિ, સ ત્વનિવૃત્તિકરણપરિણામઃ । તદવ્યવહિતોત્તરકાલે જીવઃ સમ્ય-  
ક્ત્વં નિયમતઃ પ્રાપ્નોતિ, ન ચાસૌ સમ્યક્ત્વમનવાપ્ય નિવર્તતે, તસ્માદનિવૃત્તિ-  
ગ્રન્થિકો સર્વ પ્રકાર સે છિન્ન-ભિન્ન કર ડાલતા હૈ । યહ પરિણામ જીવ  
કો પહિલે કમી મી પ્રાપ્ત નહીં હુઆ ઇસી લિયે ઇસકી અપૂર્વકરણ સંજ્ઞા  
હૈ । જો પહિલે ન હુઆ હો વહ અપૂર્વ હૈ । અપૂર્વ જો કરણ વહ અપૂર્વકરણ  
હૈ । વહ પરિણામ જીવકે લિયે એકવાર હી હોતા હૈ, વારંવાર નહીં । યથા-  
પ્રવૃત્તિકરણ તો અભવ્યોં કે અનન્તવાર મી હો જાતા હૈ, ઇસ લિયે વે  
ઇસ કે દ્વારા કર્મોંકા ક્ષપણ કર ગ્રન્થિદેશ તક અનન્તવાર આ જાતે હૈં ।

અપૂર્વકરણ-પરિણામ સે ગ્રન્થિકા સર્વથા ભેદ હોને પર ઇસકે  
અનન્તર ઇસ સે મી અધિક વિશુદ્ધ પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, જિસ  
કા નામ અનિવૃત્તિકરણ હૈ । ઇસકે દ્વારા વ્યવધાનરહિત ઇસીકે ઉત્તર-  
કાલમેં (ઇસી સમય) જીવ નિયમસે સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કર લેતા હૈ ।

નાંખે છે અને ભેદી નાંખે છે. આ પરિણામ જીવને પહેલાં કોઈ વખત પણ  
પ્રાપ્ત નથી થયું તેથી એની અપૂર્વકરણ સંજ્ઞા છે. જે પહેલા નથી થયું તે  
અપૂર્વ છે. અપૂર્વ જે કરણ તે અપૂર્વ કરણ છે. આ પરિણામ જીવને માટે એક  
વાર જ થાય છે, વારંવાર નહિ. યથાપ્રવૃત્તિકરણ તો અભવ્યોને અનન્ત વાર પણ  
થાય છે. આથી તે એના દ્વારા કર્મોંનું ક્ષપણ કરીને ગ્રન્થિદેશ સુધી અનન્તી-  
વાર આવે છે.

અપૂર્વકરણ-પરિણામથી ગ્રન્થિનો સર્વથા ભેદ થવાથી એના પછી  
આનાથી પણ અધિક વિશુદ્ધ પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે, જેનું નામ અનિવૃત્તિ-  
કરણ છે. એના દ્વારા વ્યવધાનરહિત એના ઉત્તરકાળમાં (એ જ વખતે) જીવ  
નિયમથી સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કરી લે છે. આ પરિણામ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિ કરાવ્યા

કરણમિત્યુચ્યતે । તસ્ય સ્થિતિકાલોઽન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણઃ, તદાનીં જીવસ્ય વીર્યસમુદ્ધા-  
સોઽપૂર્વકરણાપેક્ષયા પરિવર્ધતે । તસ્યાન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણાયાં સ્થિતૌ સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ  
ગતેષુ સત્સ્વેકસ્મિન્ન સંખ્યેયતમે ભાગે શેષે તિષ્ઠતિ સતિ મિથ્યાત્વપ્રદેશવેદ્યદલિકા-  
ભાવકરણરૂપમ્ અન્તરકરણં પ્રવર્તતે । અન્તરકરણાશ્ચયસ્ય જીવપરિણામસ્યાપિ સ્થિ-  
તિકાલોઽન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણઃ, પરંત્વન્તર્મુહૂર્તસ્યાસંખ્યાતભેદસદ્ભાવેનાનિવૃત્તિકરણકાલ-  
સ્વરૂપાન્તર્મુહૂર્તાપેક્ષયા તદન્તિમભાગવર્તી ન્યૂનોઽયમન્તરકરણકાલોઽન્તર્મુહૂર્તમિતિ ।

અનિવૃત્તિકરણસ્યાન્તિમે ભાગેઽન્તરકરણસ્ય કાર્યં પ્રારમ્ભ્યતે, તદ્યથા-અપૂર્વક-  
રણાનિવૃત્તિકરણલક્ષણવિશુદ્ધિપરિણામજનિતસામર્થ્યસમન્વિતો મહ્યસ્તદવ્યવહિતોત્ત-

યહ પરિણામ સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કરાવે વિના છૂટતા હી નહીં હૈ, ઇસી લિયે  
ઇસકા નામ “ અનિવૃત્તિકરણ ” પડા હૈ । ઇસકી સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્ત કી  
હૈ, જીવકે અપૂર્વકરણકી અપેક્ષા ઇસ સમય અધિક માત્રામૈં વીર્યોલ્લાસ  
બઢતા હૈ । અન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણ સ્થિતિ મૈં સે સંખ્યાત ભાગ ઘટતે ૨ જવ  
ઁસકા અન્તિમ સંખ્યાતવાં ભાગ અવશિષ્ટ રહ જાતા હૈ ઁસ સમય  
અન્તરકરણ હોતા હૈ । યહ મિથ્યાત્વ કે પ્રદેશોંકે વેદન કરને યોગ્ય દ-  
લિયોં કે અભાવ ( ક્ષય ) કા કારણ હોતા હૈ । ઇસકી મી સ્થિતિ અન્ત-  
ર્મુહૂર્ત કી હૈ । યહ અન્તર્મુહૂર્ત જઘન્ય અન્તર્મુહૂર્ત હૈ । અનિવૃત્તિકરણ  
કે કાલકા અન્તર્મુહૂર્ત ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહૂર્ત હૈ । અન્તર્મુહૂર્તકે મી અસં-  
ખ્યાત ભેદ હૈ ।

અનિવૃત્તિકરણ કે અંતિમ ભાગમૈં અન્તરકરણકા કાર્ય પ્રારમ્ભ હોતા  
હૈ । મિથ્યાત્વકે પ્રદેશોંકે વેદન કરને યોગ્ય દલિયોં કા અભાવ કરના હી  
અન્તરકરણકા કાર્ય હૈ । વહ કાર્ય ઇસકે દ્વારા જીવ જિસ પ્રકાર સે કરતા

વગર છૂટતો જ નથી, તેથી તેનું નામ “ અનિવૃત્તિકરણ ” પડ્યું છે, એની  
સ્થિતિ અંતર્મુહૂર્તની છે. જીવને અપૂર્વકરણની અપેક્ષા આ સમયે અધિક માત્રામાં  
વીર્યોલ્લાસ વધે છે. અન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણ સ્થિતિમાંથી સંખ્યાત ભાગ ઘટતાં ઘટતાં  
જ્યારે તેનો અંતિમ સંખ્યાતભાગ અવશિષ્ટ રહી જાય છે તે વખતે અન્ત-  
રકરણ થાય છે. આ મિથ્યાત્વના પ્રદેશોના વેદન કરવા યોગ્ય દલિયોના અભાવ  
( ક્ષય ) નું કારણ થાય છે. એની પણ સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તની છે. આ અન્ત-  
ર્મુહૂર્ત જઘન્ય અન્તર્મુહૂર્ત છે. અનિવૃત્તિકરણના કાળનું અંતર્મુહૂર્ત ઉત્કૃષ્ટ  
અંતર્મુહૂર્ત છે. અંતર્મુહૂર્તના પણ અસંખ્યાત ભેદ છે.

અનિવૃત્તિકરણના અંતિમ ભાગમાં અન્તરકરણનું કાર્ય પ્રારંભ થાય છે.  
મિથ્યાત્વના પ્રદેશોના વેદન કરવા યોગ્ય દલિયોના અભાવ કરવો, એ જ અંતર-



રાન્તર્મુહૂર્તકાલે ઉદેષ્યમાણં મિથ્યાત્વદલિકં દ્વિધા વિધાય તત્રૈકં દલિકમનિવૃત્તિ-  
કરણાન્તિમસમયપર્યન્તે ઉદયમાનમિથ્યાત્વદલિકેષુ નિષ્પતિ, દ્વિતીયં દલિકં  
ત્વનિવૃત્તિકરણાવ્યવહિતોત્તરકાલિકાન્તર્મુહૂર્તસમાપ્ત્યનન્તરકાલે ઉદેષ્યમાણૈર્મિથ્યા-  
ત્વદલિકૈઃ સહ સંયોજયતિ । તથા ચાનિવૃત્તિકરણકાલાવ્યવહિતોત્તરકાલે પ્રથમો-  
ઽન્તર્મુહૂર્તકાલ એકસ્તાદશઃ સંજાયતે યથ મિથ્યાત્વકર્મણાં કિંચિદપિ દલિકં નૈવ  
તિષ્ઠતિ । તથાચાનેનાન્તરકરણેન ભવ્યસ્તસ્મિન્નન્તર્મુહૂર્તે ઉદયયોગ્યમિથ્યાત્વદલિક-

હૈ વહ કહતે હૈ—જિસકે અપૂર્વકરણ ઓર અનિવૃત્તિકરણ, ઇન દો  
વિશુદ્ધ પરિણામોં સે વિશિષ્ટ શક્તિકા વિકાસ હુઆ હૈ એસા ભવ્ય જીવ  
વ્યવધાનરહિત અનિવૃત્તિકરણ કે ઉત્તર અન્તર્મુહૂર્ત-સમય મેં આગામી  
કાલમેં ઉદય આને યોગ્ય મિથ્યાત્વ દલિયોં કે દો ટુકડે-ભાગ કરતા હૈ।  
ઉસમેં એક ટુકડે કો અનિવૃત્તિકરણકે અન્તિમસમયપર્યન્ત ઉદયાગત  
મિથ્યાત્વકે દલિયોં મેં પ્રક્ષિપ્ત કરતા હૈ, ઓર દુસરે ભાગકો અનિવૃત્તિ-  
કરણ કે અવ્યવહિત ઉત્તરકાલીન અન્તર્મુહૂર્ત કી સમાપ્તિકે અનન્તર  
(અન્તરરહિત) કાલમેં ઉદય આને યોગ્ય મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે સાથ  
સંયુક્ત કરતા હૈ । ઇસ તરહ અનિવૃત્તિકરણ કાલકે વ્યવધાનરહિત  
ઉત્તર કાલમેં પ્રથમ અન્તર્મુહૂર્તકાલ એક એસા કાલ હોતા હૈ કિ જિસમેં  
મિથ્યાત્વ કર્મકા એક બી દલિયા શેષ નહીં રહતા । ઇસ અન્તરકરણ  
પરિણામ કે દ્વારા ભવ્ય જીવ ઉસ અન્તર્મુહૂર્તકાલમેં ઉદય યોગ્ય મિથ્યાત્વ  
કે દલિયોં કે પ્રથમ સ્થિતિરૂપ એક ભાગકો ઉસકે પૂર્વકાલવર્તી જો અ-

કરણનું કાર્ય છે, આ કાર્ય એના દ્વારા જીવ બે પ્રકારથી કરે છે તે કહે છે—જેને  
અપૂર્વકરણ અને અનિવૃત્તિકરણ, આ બે વિશુદ્ધ પરિણામોંથી વિશિષ્ટ શક્તિનો  
વિકાસ થયો છે આવા ભવ્ય જીવ વ્યવધાનરહિત અનિવૃત્તિકરણની પછી અન્તર્મુહૂર્ત  
સમયમાં આગામી કાળમાં ઉદય આવવા યોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોના બે ટુકડા-ભાગ  
કરે છે. એમાં એક ટુકડાને અનિવૃત્તિકરણના અંતિમ સમયના અન્તમાં ઉદયાગત  
મિથ્યાત્વના દલિયોમાં પ્રક્ષિપ્ત કરે છે. અને બીજા ભાગને અનિવૃત્તિકરણના અવ્ય-  
વહિત ઉત્તરકાલીન અન્તર્મુહૂર્તની સમાપ્તિના અનન્તર (અન્તરરહિત) કાળમાં ઉદય  
આવવા યોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોની સાથે સંયુક્ત કરે છે. આ રીતે અનિવૃત્તિ-  
કરણકાળના વ્યવધાનરહિત ઉત્તર કાળમાં પ્રથમ અન્તર્મુહૂર્તકાળ એક એવો કાળ  
થાય છે કે જેમાં મિથ્યાત્વ કર્મનો એક પણ દલિયું શેષ નથી રહેતું. આ અન્તર-  
કરણ-પરિણામદ્વારા ભવ્ય જીવ આ અન્તર્મુહૂર્તકાળમાં ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વના  
દલિયોના પ્રથમ સ્થિતિરૂપ એક ભાગને એનો પૂર્વકાળવર્તી જે અનિવૃત્તિકરણનો



સ્યૈકભાગં પ્રથમસ્થિતિરૂપં તત્પૂર્વકાલવર્ત્યનિવૃત્તિકરણસ્ય ચરમભાગે ઉદયમાનમિથ્યાત્વદલિકૈઃ સહ સંયોજ્ય સ્વોદયકાલાત્ પ્રાગેવોદયં પ્રાપયતિ, તેન તસ્ય મિથ્યાત્વદલિકસ્ય સ્વોદયકાલે ઉદયં પ્રતિરૂપદ્વિ । દ્વિતીયભાગસ્યાપિ દ્વિતીયસ્થિતિનામ્નસ્તસ્માદન્તર્મુહૂર્તાદવ્યવહિતોત્તરકાલે ઉદેષ્યમાણતયા સ્વોદયકાલે ઉદયં પ્રતિરોધયતિ; તદેવમનિવૃત્તિકરણાનન્તરોદયયોગ્યદલિકાનાં વ્યવધાનકરણાદન્તરકરણમિત્યુચ્યતે ।

નિવૃત્તિકરણ કા અન્તિમ ભાગ હૈ ઉસમેં ઉદયમાન મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે સાથ સંયુક્ત કરકે ઉસે અપને નિજ ઉદયકાલસે પહિલે હી ઉદય મેં લે આતા હૈ, ઇસ સે વહ ભવ્ય જીવ ઉસ મિથ્યાત્વ કે દલિયે કે ઉદય કો ઉસકે અપને ઉદયકાલમેં રોક દેતા હૈ । તથા દૂસરી સ્થિતિરૂપ મિથ્યાત્વકા જો દ્વિતીય ભાગ હૈ, જો ઉસ અન્તર્મુહૂર્ત સે વ્યવધાનરહિત ઉત્તર કાલમેં ઉદય મેં આને યોગ્ય હૈ; ઉસકે ઉદય કો ઉસકે અપને ઉદયકાલ મેં રોક દેતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અનિવૃત્તિકરણ કે અનન્તર ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે ઉદય મેં વ્યવધાન કરનેવાલા હોને સે યહ 'અન્તરકરણ' કહલાતા હૈ । યહ કરણ મિથ્યાત્વકે દલિયોં કો અગલે ઓર પિછલે ભાગમેં મિલા દેતા હૈ । અનિવૃત્તિકરણ કા અન્તિમ સમય પૂર્ણ હોને પર અન્તર્મુહૂર્ત તક મિથ્યાત્વકે દલિયોંકા કિસી મી તરહ સે ઉદય નહીં હો સકતા । ઉસ સમય જિન મિથ્યાત્વકે દલિયોંકા ઉદય સંભવ થા, ઉનમેંસે કિતનેક દલિયોંમેં અપને ઉદયકાલ સે પહિલે હી ઉદયમેં આને કી યોગ્યતા આતી હૈ, ઓર કિતનેક દલિયોંમેં અપને ઉદયકાલસે

અંતિમ ભાગ છે તેમાં ઉદયમાન મિથ્યાત્વના દલિયોની સાથે સંયુક્ત કરીને તેને પોતાના નિજ ઉદયકાળથી પહેલા જ ઉદયમાં લઈ આવે છે, આ કારણે તે ભવ્ય જીવ તે મિથ્યાત્વના દલિયાના ઉદયને તેના પોતાના ઉદયકાળમાં રોકી દે છે, અને બીજી સ્થિતિરૂપ મિથ્યાત્વનો જે બીજો ભાગ છે જે તે અન્તર્મુહૂર્તથી વ્યવધાનરહિત ઉત્તર કાળમાં ઉદયમાં આવવા યોગ્ય છે તેના ઉદયને તેના પોતાના ઉદયકાળમાં રોકી દે છે. આ પ્રકારે અનિવૃત્તિકરણના અનન્તર ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોના ઉદયમાં વ્યવધાન કરવાવાળા હોવાથી આ 'અન્તરકરણ' કહેવાય છે.

આ કારણે મિથ્યાત્વના દલિયોને આગળ અને પાછળના ભાગમાં બેડી આવે છે, અને અનિવૃત્તિકરણનો અંતિમ સમય પૂર્ણ થતાં તેની પછી અન્તર્મુહૂર્ત સુધી મિથ્યાત્વના દલિયોનો કેઈ પણ પ્રકારથી ઉદય થતો નથી. તે જે મિથ્યાત્વના દલિયોનો ઉદય સંભવ હતો, તેમાંથી કેટલાક દલિયોમાં પોતાના ઉદયકાળના પહેલાં જ ઉદયમાં આવવાની યોગ્યતા આવે છે, અને કેટલાક દલિયોમાં પોતાના

અનિવૃત્તિકરણાન્તિમસમયે વ્યતીતે સતિ યાવદન્તર્મુહૂર્તં કથમપિ મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયો ન ભવતિ તદાનીં યેષાં મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયસંભવસ્તેષુ કેષાંચિદ્ દલિકાનાં તત્પૂર્વકાલે, કેષાંચિત્ તત્પશ્ચાત્કાલેઽન્તરકરણેનોદયાર્હતા સંપાદ્યતે । અનિવૃત્તિકરણસ્ય ચરમસમયપર્યન્તં મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયસદ્ભાવેન તાવત્કાલપર્યન્તં જીવો મિથ્યાત્વી વર્તતે, પરં ત્વનિવૃત્તિકરણકાલે વ્યતીતે સતિ સપદિ જીવેનોપશમિકસમ્યક્ત્વં પ્રાપ્યતે, તદાનીં મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મણો વિપાકતઃ પ્રદેશતશ્ચ સર્વથોદયાભાવાત્, અત એવ જીવસ્ય સ્વાભાવિકઃ સમ્યક્ત્વપરિણામઃ પ્રકટીભવતિ । इदं च सम्यक्त्वमौपशमिकमित्युच्यते । उक्तञ्च—

“ જા ગંઠી તા પઢમં, ગંઠિં સમહચ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટીકરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલહે જીવે ” ॥ ૧ ॥

છાયા—યાવદ્ગ્રન્થિસ્તાવત્પ્રથમં (કરણં) ગ્રન્થિં સમતિક્રામતો ( મિન્દાનસ્ય ) ભવેદ્ દ્વિતીયમ્ । અનિવૃત્તિકરણં પુનઃ સમ્યક્ત્વપુરસ્કૃતે જીવે (ભવતિ) ॥ ૧ ॥ इति ।

પીછે ઉદયમેં આનેકી યોગ્યતા આતી હૈ । અનિવૃત્તિકરણ કે ચરમ સમય પર્યન્ત મિથ્યાત્વ કે દલિયોંં કા ઉદય હોનેસે ઉતને સમય તક જીવ મિથ્યાત્વી રહતા હૈ, પરન્તુ જ્યોંંહી અનિવૃત્તિકરણ કા કાલ સમાપ્ત હો જાતા હૈ ત્યોંં હી જીવ જ્ઞાતિ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ । इस समय मिथ्यात्वमोहनीय कर्म का न तो विपाकोदय ही रहता है और न प्रदेशोदय ही । सर्वप्रकार से उसके उदय का इस समय अभाव रहता है । इसी लिये जीव का नैसर्गिक औपशमिकसम्यक्त्वरूप परिणाम उद्भूत (प्रगट) हो जाता है । कहा भी है—

“ જા ગંઠી તા પઢમં, ગંઠિં સમહચ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટી કરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલહે જીવે ” ॥ ૧ ॥

ગ્રન્થિદેશ તક જીવકો પહુંચા દેના યહ યથાપ્રવૃત્તિકરણ (પ્રથમ

ઉદયકાળની પછી ઉદયમાં આવવાની યોગ્યતા આવે છે. અનિવૃત્તિકરણના ચરમ સમયના અંતિમભાગમાં મિથ્યાત્વના દલિયોના ઉદય હોવાથી એટલા સમય સુધી જીવ મિથ્યાત્વી રહે છે, પરંતુ જ્યારે અનિવૃત્તિકરણનો કાળ સમાપ્ત થઈ જાય છે ત્યારે જ જીવ જ્ઞાતિ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી લે છે. આ સમયે મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મના નથી વિપાકોદય જ રહેતા અગર નથી પ્રદેશોદય જ. સર્વ પ્રકારથી તેના ઉદયનો આ વખત અભાવ રહે છે તેથી જીવનું નૈસર્ગિક ઔપશમિકસમ્યક્ત્વરૂપ પરિણામ પ્રગટ થઈ જાય છે. કહ્યું છે:—

“ જા ગંઠી તા પઢમં, ગંઠિં સમહચ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટીકરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલહે જીવે ” ॥ ૧ ॥



અન્યત્ત્વ—

“કાઝળ ગંઠિભેયં, સહસંમહ્યાણ પાણિણો કોઢ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વાધિકારી જીવો દ્વિવિધઃ—(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી, (૨) તીવ્ર-વિશુદ્ધિપરિણામી ચેતિ । તત્ર—

(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી ભવ્યોઽપૂર્વકરણમારૂઠો ગ્રન્થિભેદં વિધાયાઽપિ તીવ્રાધ્યવસાયાભાવાન્ન મિથ્યાત્વં ત્રિપુજ્જીકર્તું શક્નોતિ । તતોઽનિવૃત્તિકરણં પ્રાપ્યા-કરણ ) કા, ઔર ઉસકા ભેદન કરના-અપૂર્વકરણ ( દ્વિતીય કરણ ) કા, ઔર-સમ્યક્ત્વકે સન્મુખ જીવકો કર દેના યહ અનિવૃત્તિકરણ ( તૃતીય કરણ ) કા કાર્ય હૈ ॥ ૧ ॥

ફિર મી—

“કાઝળ ગંઠિભેયં, સહસંમહ્યાણ પાણિણો કેઢ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

ગ્રન્થિભેદ કરકે કિતનેક પ્રાણી નિસર્ગ-સ્વભાવ-જાતિસ્મરણ આદિ સે સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં ઔર કિતનેક પરકે ઉપદેશસે પાતે હૈં । ૨।

સમ્યગ્દષ્ટિ ( સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ ) દો પ્રકાર કે હોતે હૈં—  
(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ઔર (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ।

इनमें से—(१) मन्दविशुद्धिपरिणामवाला भव्य जीव अपूर्वकरण परिणाम के अवलम्बन से ग्रन्थि का भेदन करके भी तीव्र अध्यवसाय के

ગ્રન્થિદેશ સુધી જીવને પહોંચાડવો એ યથાપ્રવૃત્તિકરણ ( પ્રથમ કરણ ) નું અને એનું ભેદન કરવું અપૂર્વકરણ ( બીજા કરણ ) નું, અને સમ્યક્ત્વની સન્મુખ જીવને કરવો, એ અનિવૃત્તિકરણ ( ત્રીજા કરણ ) નું કાર્ય છે ॥ ૧ ॥ વળી:—

“કાઝળ ગંઠિભેયં, સહસંમહ્યાણ પાણિણો કેઢ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

ગ્રન્થિભેદ કરીને કેટલાક પ્રાણી નિસર્ગ-સ્વભાવ-જાતિસ્મરણ આદિથી સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, અને કેટલાક બીજાના ઉપદેશથી મેળવે છે ॥ ૨ ।

સમ્યગ્દષ્ટિ ( સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ ) બે પ્રકારના હોય છે. (૧) મન્દ-વિશુદ્ધિપરિણામવાળાં અને (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાળાં.

આમાંથી (૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાળાં ભવ્ય જીવ અપૂર્વકરણ પરિણામના અવલંબનથી ગ્રન્થિનું ભેદન કરીને પણ તીવ્ર અધ્યવસાયનો અભાવ હોવાથી



નતરકરણં કૃત્વાડનુપદોક્તરીત્યા પ્રથમમૌપશમિકસમ્યક્ત્વં લભતે । અયમૌપશમિકસમ્યક્ત્વમન્તર્મુહૂર્તમનુભૂય તદનન્તરમવશ્યં સર્વપ્રતિપાતેન પુનર્મિથ્યાત્વી ભવતિ ।

(૨) યસ્તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામી ભવતિ, સ સ્વલ્પપૂર્વકરણમારુદ્ધો મિથ્યાત્વં ત્રિપુઞ્જીકૃત્ય તદનન્તરમનિવૃત્તિકરણે પ્રવિષ્ટઃ સમ્યક્ત્વપુઞ્જોદયાત્ પ્રથમતયા ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમવાપ્નોતિ, પરન્તુ કૃતત્રિપુઞ્જોડયં પ્રથમતયૌપશમિકસમ્યક્ત્વં ન લભતે ।

ઔપશમિકસમ્યક્ત્વં દ્વિવિધમ્—ગ્રન્થિભેદજન્યમ્, ઉપશમશ્રેણિભાવિ ચેતિ । તત્ર પ્રથમં ગ્રન્થિભેદજન્યં મન્દવિશુદ્ધિપરિણામિનો જીવસ્ય ભવતિ, દ્વિતીયં તૂપશમ-અભાવ હોનેસે મિથ્યાત્વકે ત્રીન પુંજ કરનેકી શક્તિ સે શૂન્ય રહતા હૈ, ઇસલિયે યહ અનિવૃત્તિકરણ કો પ્રાપ્ત હો કર અન્તરકરણ કરકે ઉપર્યુક્ત રીતિસે સર્વ પ્રથમ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકી અન્તર્મુહૂર્તપરિમિત સ્થિતિકા અનુભવ કર પશ્ચાત્ ઉસકે પૂર્ણ હોતે હી અવશ્ય સર્વપ્રતિપાત સે વહ પુનઃ મિથ્યાત્વી હો જાતા હૈ ।

(૨) જો તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામી હોતા હૈ વહ અપૂર્વકરણ મેં રહ કર મિથ્યાત્વ કે ત્રીન પુંજ કરકે પશ્ચાત્ અનિવૃત્તિકરણ મેં પ્રવિષ્ટ હોકર સમ્યક્ત્વમોહનીયપુંજકે ઉદયસે સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકા લાભ કરતા હૈ, ઉપશમ સમ્યક્ત્વકા નહીં ।

ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકે દો ભેદ હૈ । (૧) ગ્રન્થિભેદજન્ય ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકે (૨) ઉપશમશ્રેણિભાવિ । ઇનમેં ગ્રન્થિભેદજન્ય ઉપશમસમ્યક્ત્વ, મન્દ-વિશુદ્ધિપરિણામવાલે જીવ કે હોતા હૈ । દૂસરા ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવ

મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કરવાની શક્તિથી શૂન્ય રહે છે. તેથી આ અનિવૃત્તિકરણને પ્રાપ્ત કરીને અને અન્તરકરણ કરીને ઉપર બતાવેલી રીતિથી સર્વ પ્રથમ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે. અન્તર્મુહૂર્તની ઔપશમિક સમ્યક્ત્વની સ્થિતિનો અનુભવ કરીને પછી તેના પૂર્ણ થતાં જ અવશ્ય સર્વપ્રતિપાતથી તે પુનઃ મિથ્યાત્વી થઈ જાય છે.

જે (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામી હોય છે તે અપૂર્વકરણમાં રહીને મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કરીને પછી અનિવૃત્તિકરણમાં પ્રવિષ્ટ થઈને સમ્યક્ત્વમોહનીય પુંજના ઉદયથી સર્વ પ્રથમ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વનો લાભ કરે છે, ઉપશમ-સમ્યક્ત્વનો નહિ.

ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વના બે ભેદ છે (૧) એક ગ્રન્થિભેદજન્ય અને બીજો (૨) ઉપશમશ્રેણિભાવી. આમાં ગ્રન્થિભેદજન્ય ઉપશમસમ્યક્ત્વ મન્દવિશુદ્ધિ-

શ્રેણિગતસ્ય । તત્રોપશમશ્રેણિગતઃ સમ્યક્ત્વી દેશપ્રતિપાતેન સર્વપ્રતિપાતેન વા પ્રતિ-  
પતતિ-મિથ્યાત્વમવાપ્નોતિ । અસ્મિન્ સમ્યક્ત્વે પ્રાપ્તે સતિ જીવસ્ય પદાર્થાનાં  
સ્ફુટતયા નિશ્ચિન્ન પ્રતીતિર્જન્માન્ધસ્ય નેત્રલાભે સતીવ જાયતે । સદૌષધસેવનેન  
રોગે પ્રતિનિવૃત્તે વ્યાધિતેનેવ મિથ્યાત્વમહારોગેऽપગતે સત્યપૂર્વ આનન્દોऽનુભૂયતે  
જીવેન ।

ગ્રંથિભેદજન્યમૌપશમિકસમ્યક્ત્વમનાદિમિથ્યાત્વમવ્યાનાં ભવતિ । इदं च  
प्रथमोपशमसम्यक्त्वमित्यपि कथ्यते । उपशमश्रेणिभाविन औपशमिकसम्यक्त्वस्य  
को होता है । उपशमश्रेणिप्राप्त जीव नियमसे वहां से सर्वदेशके प्रतिपात  
से अथवा एकदेशके प्रतिपात से नीचे के गुणस्थानको प्राप्त हो जाता है ।

जैसे—जन्मान्धको नेत्रके लाभ होने पर पदार्थों की प्रतीति विना  
किसी सन्देह के स्फुटरूपसे होने लगती है उसी प्रकार इस सम्यक्त्व  
के प्राप्त होने पर जीवादि पदार्थोंकी प्रतीति भी विना किसी सन्देह के  
स्फुटरूप से जीवको होती है । तथा जिस प्रकार निर्दोष औषध के  
सेवन से रोगके चले जाने पर रोगी पुरुष अपूर्व आनन्दका अनुभव  
करता है, उसी प्रकार मिथ्यात्व महारोगके नष्ट होने पर इस समकित  
वाला जीव भी अपूर्व आनन्दका अनुभव करता है ।

ग्रंथिभेदसे उत्पन्न सम्यક્त्व ( औપશમિક સમ્યક્ત્વ ) અનાદિ-  
મિથ્યાદૃષ્ટિમવ્યજીવોં કે હોતા હૈ । હસ સમ્યક્ત્વકા દૂસરા નામ પ્રથ-

પરિણામવાળા જીવને થાય છે. બીજું ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવને થાય છે. ઉપશમ-  
શ્રેણિપ્રાપ્ત જીવ નિયમથી ત્યાંથી સર્વ દેશના પ્રતિપાતથી અથવા એક દેશના  
પ્રતિપાતથી નીચેના ગુણસ્થાનોમાં આવીને આખરે મિથ્યાત્વગુણસ્થાનને પ્રાપ્ત  
થઈ જાય છે.

જેવી રીતે જન્માંધને નેત્રનો લાભ થતાં જ પદાર્થોની પ્રતીતિ કોઈ જાતના  
સંદેહ વિના સ્ફુટરૂપથી થવા માંડે છે, તે પ્રકારે આ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થતાં  
જ જીવાદિ પદાર્થોની પ્રતીતિ પણ કોઈ જાતના સંદેહ વગર સ્ફુટરૂપથી જીવને  
થાય છે. તથા જે પ્રકારે નિર્દોષ ઔષધના સેવનથી રોગનો નાશ થતાં જ રોગી  
પુરૂષ અપૂર્વ આનંદનો અનુભવ કરે છે તેવી રીતે મિથ્યાત્વ-મહારોગનો નાશ  
થતાં જ આ સમ્યક્ત્વવાળા જીવ પણ અપૂર્વ આનંદનો અનુભવ કરે છે.

ગ્રંથિ-લેહથી ઉત્પન્ન સમ્યક્ત્વ ( ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ ) અનાદિમિથ્યા-  
દૃષ્ટિ લબ્ધ જીવોને થાય છે. આ સમ્યક્ત્વનું બીજું નામ પ્રથમોપશમ-સમ્યક્ત્વ

પ્રાપ્તિશ્વતુર્થપશ્ચમષ્ઠસપ્તમેષુ કસ્મિંશ્ચિદ્ ગુણસ્થાને ભવિતુમર્હતિ, પરં તુ અષ્ટમગુણ-સ્થાને તત્પ્રાપ્તિરવશ્યમેવ ભવતિ ।

મિથ્યાત્વં ત્રિપુઙ્ગીકૃત્ય સમ્યક્ત્વપુઙ્ગોદયાત્ ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમવાપ્નોતિ-  
ઇતિ યદુક્તં, તત્રાયં ક્રમઃ—કેવલિપ્રભૃતીનાં વચઃ શ્રુત્વા, જાતિસ્મરણાદિના વા  
સમ્યક્ત્વસ્વરૂપં જ્ઞાત્વાઽપૂર્વકરણે વર્ધમાનપરિણામો દર્શનમોહનીયાપરનામકમિથ્યા-  
ત્વપુદ્ગલોન યુગપત્ ત્રિધા કરોતિ, સમ્યક્ત્વમોહનીય—મિશ્રમોહનીય—મિથ્યાત્વમોહ-  
નીયભેદાત્ । તત્ર તાવત્ સમ્યક્ત્વમોહનીયમુચ્યતે—

મોહામસમ્યક્ત્વ મ્હી હૈ । ઉપશમશ્રેણિગત જીવોંકો જો સમકિત હોતા  
હૈ વહ ઉપશમશ્રેણિમાવિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ ચૌથે,  
પાંચવેં, છઠવેં ઔર સાતવેં ગુણસ્થાનોં મેં સે કિસીં એક ગુણસ્થાનમેં હો  
સકતા હૈ, પરંતુ આઠવેં ગુણસ્થાનમેં તો ઉસકી પ્રાપ્તિ જીવકો અવશ્ય  
હી હો જાતી હૈ ।

મિથ્યાત્વકે ત્રીન પુંજ કરને કે બાદ જીવ ઉન ત્રીન પુંજોં મેં સે એક  
સમ્યક્ત્વમોહનીયપુંજકે ઉદયસે ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કિયા  
કરતા હૈ । યહ જો બાત ઉપર કહી ગઈ હૈ વહાં પર હસ પ્રકારકા ક્રમ સમ-  
જ્ઞના ચાહિયે । કેવલી વગૈરહ કે વચન સુન કર અથવા જાતિસ્મરણાદિક સે  
સમ્યક્ત્વકે સ્વરૂપકો જાન કર અપૂર્વકરણમેં જિસકા પરિણામ વૃદ્ધિગત હો  
રહા હૈ, એસા જીવ દર્શનમોહનીય કર્મ કો—જિસકા દૂસરા નામ મિથ્યાત્વ  
પુદ્ગલ હૈ ઉસકો—એક સાથ ત્રીન ભેદોં મેં, અર્થાત્—મિથ્યાત્વમોહનીય,  
મિશ્રમોહનીય ઔર સમ્યક્ત્વમોહનીયકે રૂપમેં પરિણમાતા હૈ ।

પણ છે. ઉપશમશ્રેણિગત જીવોને જે સમ્યક્ત્વ થાય છે તે ઉપશમશ્રેણિભાવી  
ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે. આ સમ્યક્ત્વ ચોથા, પાંચમા, છઠ્ઠા અને સાતમા ગુણ-  
સ્થાનોમાંથી કોઈ એક ગુણસ્થાનમાં થઈ શકે છે, પરંતુ આઠમા ગુણસ્થાનમાં તો  
તેની પ્રાપ્તિ જીવને અવશ્ય જ થઈ જાય છે.

મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કર્યા બાદ જીવ આ ત્રણ પુંજોમાંથી એક સમ્યક્ત્વ-  
મોહનીયપુંજના ઉદયથી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કર્યા કરે છે. આ જે વાત  
ઉપર કહેવાઈ ગઈ છે ત્યાં આ પ્રકારનો ક્રમ સમજવો જોઈએ—કેવળી વિગેરેનું  
વચન સુણીને અથવા જાતિસ્મરણાદિકથી સમ્યક્ત્વના સ્વરૂપને જાણીને અપૂર્વકરણમાં  
જેનો પરિણામ વૃદ્ધિગત થઈ રહ્યો છે; એવો જીવ દર્શનમોહનીય કર્મને, જેનું  
બીજું નામ મિથ્યાત્વપુદ્ગલ છે તેને એકસાથ ત્રણ ભેદોમાં, અર્થાત્ મિથ્યાત્વ-  
મોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વમોહનીયના રૂપમાં પરિણમાય છે.



### સમ્યક્ત્વમોહનીયસ્ય સ્વરૂપમ્—

યસ્ય કર્મણઃ પ્રભાવાત્ જીવાજીવાદિનવતત્ત્વેષુ શ્રદ્ધા સમુત્પદ્યતે તત્ સમ્યક્ત્વ-મોહનીયમ્ । યથા—ઉપનેત્રં નેત્રાવરકં સદપિ દૃષ્ટિ ન પ્રતિરુણદ્ધિ, તથૈવ સમ્ય-ક્ત્વમોહનીયમાવરણસ્વરૂપમપિ સદ્ વિશુદ્ધતાત્ તત્ત્વાત્ શ્રદ્ધાનં નહિ વિઘાતયતિ, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વમોહનીયકર્મત એવ નવતત્ત્વેષુ શ્રદ્ધા ભવતીતિ સિદ્ધમ્ ।

અપૂર્વકરણાધ્યવસાયેન યસ્ય મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુણ્ડ્રસ્ય મિથ્યાત્વસ્વભાવોઽપનીતઃ સ શોધિતમિથ્યાત્વપુદ્ગલપુણ્ડ્રઃ, સ એવ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપસ્ય જીવપરિણામસ્યાના-વરકત્વાદુપચારતઃ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

સમ્યક્ત્વમોહનીયકા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર હૈ—જિસ કર્મકે પ્રભાવ સે જીવાદિક નૌ તત્ત્વોં મેં જીવકો શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન હોતી હૈ ઉસકા નામ સમ્ય-ક્ત્વમોહનીય હૈ । જિસ પ્રકાર ચક્ષુમા નેત્રોંકા પ્રતિબન્ધક હોતા હુઆ ભી પદાર્થોં કે દેખને મેં દૃષ્ટિકા વિઘાત નહીં કરતા, ઉસી પ્રકાર યહ સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મ યદ્યપિ મિથ્યાત્વકા અંશ હોને સે આવરણ સ્વરૂપ હૈ તો ભી ઉસકા શોધિત અંશ હોને કી વજહ સે વિશુદ્ધ હૈ, હસલિયે વહ તત્ત્વ-શ્રદ્ધાન કા વિઘાતક નહીં હોતા હૈ । જીવ કો નવ તત્ત્વોં મેં શ્રદ્ધા હસી સમ્યક્ત્વમોહનીય કે દ્વારા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । યદ્યપિ યહ મિથ્યાત્વ કા હી અંશ હૈ તો ભી શ્રદ્ધા કા વિઘાતક નહીં હૈ, કારણ કિ અપૂર્વકરણરૂપ પરિણામ હસમેં સે શ્રદ્ધાવિઘાતક અંશ કો, કિ જિસકા દૂસરા નામ મિથ્યાત્વ સ્વભાવ હૈ; દૂર કર દેતા હૈ । યહ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ

સમ્યક્ત્વ મોહનીયનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે છે—

સમ્યક્ત્વમોહનીયનું સ્વરૂપ—જે કર્મના પ્રભાવથી જીવાદિક નવ તત્ત્વોમાં જીવને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ સમ્યક્ત્વમોહનીય છે. જેવી રીતે ચક્ષુમા નેત્રોના પ્રતિબંધક હોવા છતાં પણ પદાર્થોના દેખવામાં દૃષ્ટિનો વિઘાત નથી કરતાં તેમ આ સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ જે કે મિથ્યાત્વનો અંશ હોવાથી આવ-રણસ્વરૂપ છે તો પણ તેના શોધિત અંશ હોવાથી વિશુદ્ધ છે, તેથી તે તત્ત્વ-શ્રદ્ધાનનો વિઘાતક નથી થતું. જીવને નવતત્ત્વોમાં શ્રદ્ધા આ સમ્યક્ત્વ—મોહનીય દ્વારા ઉત્પન્ન થાય છે, જે કે આ મિથ્યાત્વનો જ અંશ છે તો પણ શ્રદ્ધાનો વિઘાતક નથી. કારણ કે અપૂર્વકરણરૂપ પરિણામ આમાંથી શ્રદ્ધાવિઘાતક અંશોને જેનું બીજું નામ મિથ્યાત્વ—સ્વભાવ છે તેને દૂર કરે છે. આ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ

યથા—સતુષકોદ્રવા ભક્ષણેન માદકા ભવન્તિ, ત એવ યદ્યપનીતતુષાસ્તક્રાદિના શોધિતાસ્તર્હિ મદં ન જનયન્તિ, તથા મિથ્યાત્વમોહનીયપુદ્ગલાઃ જીવં હિતાહિત-જ્ઞાનરહિતં કુર્વન્તિ । તત્ર દ્વિસ્થાનકાદિશ્વતુઃસ્થાનકાન્તઃ સર્વઘાતી રસસ્તિષ્ઠતિ । યદિ સ્વકીયવિશુદ્ધપરિણામબલત્તેષાં સર્વઘાતિરૂપં રસં ક્ષપયતિ, તદા સ્વાભાવિકસ્યૈકસ્થાનકરસસ્ય સદ્ભાવે મિથ્યાત્વમોહનીયપુદ્ગલા એવ સમ્યક્ત્વમોહનીયા ઉચ્ચન્તે । વિશોધિતત્વાદિદં કર્મ તત્ત્વરુચિરૂપસમ્યક્ત્વં ન પ્રતિરોધયતિ, પરં ત્વે-તત્કર્મોદયાદાત્મસ્વભાવરૂપમૌપશમિકસમ્યક્ત્વં ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં ચ ન પ્રાદુર્ભવતિ, સૂક્ષ્મતત્ત્વસમાલોચનાયાં શઙ્કાશ્ચોત્તિષ્ઠન્તિ, યતઃ સમ્યક્ત્વે માલિન્યમુપજાયતે । અસ્માદેવ દોષાદેતત્ કર્મ સમ્યક્ત્વમોહનીયં વ્યપદિશ્યતે ।

હૈ । યહી શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુજ્જ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ જીવકે પરિણામ કા અનાવારક હોને કી વજહ્ સે કારણ મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે સમ્યક્ત્વ કહા ગયા હૈ ।

જૈસે—સતુષ (તુષયુક્ત) કોદ્રવ (અન્નવિશેષ) ખાને પર માદકતા ઉત્પન્ન કરતે હૈ; પરન્તુ જબ વે હી કોદ્રવ નિસ્તુષ કર દિયે જાતે હૈં ઓર તત્ર (છાશ) વગૈરહ કે દ્વારા ડનકા માદક અંશ દૂર કર દિયા જાતા હૈ તબ ડનમેં સે માદકશક્તિકા અભાવ હો જાતા હૈ ઓર ખાને પર ફિર વે માદકતા પૈદા નહીં કરતે । ઠીક ઇસી તરહ સે યહ મિથ્યાત્વમોહનીય જબ તક અશોધિત અવસ્થા મેં રહતા હૈ તમી તક જીવ કો હિતાહિત-વિવેકસે શૂન્ય કરતા રહતા હૈ; ક્યોં કિ ઇસમેં દ્વિસ્થાન સે લેકર ચતુઃ-સ્થાન તક વાલા સર્વઘાતી રસ રહતા હૈ । પરન્તુ જ્યોં હી ઇસમેં સે સર્વ-ઘાતી રસ કા ક્ષય હો જાતા હૈ ત્યોં હી યહ શુદ્ધ અવસ્થાવાલા પુજ્જ કહ-

છે. આ જ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ જીવના પરિણામનો અનાવારક હોવાથી કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવાય છે.

જેમ સતુષ (તુષયુક્ત) કોદ્રવ (અન્નવિશેષ) ખાવાથી માદકતા ઉત્પન્ન કરે છે; પરન્તુ જ્યારે તે જ કોદ્રવ નિસ્તુષ કરી દેવામાં આવે છે અને તક (છાશ) વિશેષ દ્વારા તેનો માદક અંશ દૂર કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમાંથી માદક શક્તિનો અભાવ થઈ જાય છે, અને ખાવાથી ફરી તે માદકતા પેદા કરતું નથી. ઠીક આ પ્રકારે આ મિથ્યાત્વમોહનીય જ્યાં સુધી અશોધિત અવસ્થામાં રહે છે ત્યાં સુધી જીવને હિતાહિતવિવેકથી શૂન્ય કરતું રહે છે, કારણ કે આમાં દ્વિસ્થાનથી લઈને ચારસ્થાનવાળા સર્વઘાતી રસ રહે છે, પરંતુ જ્યારે જ તેમાંથી સર્વઘાતી રસનો ક્ષય થઈ જાય છે, ત્યારે જ શુદ્ધ અવસ્થાવાળા પુંજ



લાને લગતા છે । મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ યહ સર્વધાતિપ્રકૃતિ છે । ઇસમેં બહુત ભાગ સર્વધાતિરસ છે ઓર શેષ એક ભાગ દેશધાતિરસ છે । કર્માં મેં મન્દ, તીવ્ર, તીવ્રતર ઓર તીવ્રતમ ઇસ પ્રકારકી ચાર શક્તિરૂપ રસ રહતા છે । ઇનમેંસે ઇસ મિથ્યાત્વ કર્મ મેં તીવ્ર, તીવ્રતર ઓર તીવ્રતમ યે ત્રીન શક્તિયાં-જિન્હેં સર્વધાતિરસ કહા ગયા છે-હેં । યદિ કોઈ ભવ્ય જીવ અપને વિશુદ્ધ પરિણામકે બલસે ઇસમેં સે ઇન ત્રીન શક્તિરૂપ સર્વધાતિ-રસકા ક્ષય કર દેતા છે તો ઇસમેં સ્વભાવતઃ એક સ્થાનક રસકા હી સદ્ભાવ રહતા છે । ઇસ પરિસ્થિતિ મેં મિથ્યાત્વમોહનીય કા નામાન્તર હી સમ્યક્ત્વમોહનીય હો જાતા છે । શુદ્ધ હોનેસે યહ કર્મ યદ્યપિ તત્ત્વ-રુચિરૂપ સમ્યક્ત્વ કા પ્રતિરોધક નહીં હોતા છે તો બી ઇસકે સદ્ભાવ મેં એક તો આત્મસ્વભાવરૂપ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ, એવં ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વ કા પ્રાદુર્ભાવ નહીં હોતા, દૂસરે ઇસકે અસ્તિત્વ મેં સૂક્ષ્મ તત્ત્વ કી ગવે-ષણા કરતે સમય શંકાઓંકા બી ઉત્થાન હો જાયા કરતા છે; જિસસે સમકિત મેં મલિનતા આ જાતી છે । ઇસી દોષકી વજહ સે ઇસ કર્મકી “સમ્યક્ત્વમોહનીય” યહ સંજ્ઞા પડી છે ।

કહેવાવામાં આવે છે. મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ એ સર્વધાતિ પ્રકૃતિ છે. એમાં ઘણા ભાગ સર્વધાતિ રસ છે અને શેષ એક ભાગ દેશધાતિ રસ છે. કર્મોમાં મન્દ, તીવ્ર, તીવ્ર-તર અને તીવ્રતમ, આ પ્રકારની ચાર શક્તિરૂપ રસ રહે છે. એમાંથી આ મિથ્યાત્વ કર્મમાં તીવ્ર, તીવ્રતર અને તીવ્રતમ, એ ત્રણ શક્તિઓ-જેને સર્વ-ધાતિ રસ કહેવામાં આવે છે-રહે છે. જો કોઈ ભવ્ય જીવ પોતાના વિશુદ્ધ પરિ-ણામના બળથી એમાંથી આ ત્રણ શક્તિરૂપ સર્વધાતિ રસનો ક્ષય કરી દે છે તો તેમાં સ્વભાવતઃ એક સ્થાનક રસનો જ સદ્ભાવ રહે છે. આ પરિસ્થિતિમાં મિથ્યા-ત્વમોહનીયનું નામાન્તર જ. સમ્યક્ત્વમોહનીય થઈ જાય છે. શુદ્ધ હોવાથી તે કર્મ જો કે તત્ત્વરૂચિરૂપ સમ્યક્ત્વનું પ્રતિરોધક નથી થતું તો પણ એના સદ્ભાવમાં એક તો આત્મસ્વભાવરૂપ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ અને ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વનો પ્રાદુર્ભાવ નથી થતો, બીજું એના અસ્તિત્વમાં સૂક્ષ્મ તત્ત્વોની ગવેષણા કરતી સમય શંકાઓની પણ ઉત્પત્તિ થઈ જાય છે; જેથી સમ્યક્ત્વમાં મલિનતા આવી જાય છે. આ દોષના કારણથી આ કર્મની “સમ્યક્ત્વમોહનીય” એ સંજ્ઞા પડી છે.



### ॥ મિશ્રમોહનીયમ્ ॥

येषां केचिदंशाः सतुषाः केचिद् विशुद्धास्तैः कोद्रवैः साम्यं मिश्रमोहनीय-  
पुद्गलानाम् । एतत्कर्मोदयात्तत्त्वरुचिर्नोत्पद्यते, न चातत्त्वरुचिरपि । मिश्रमोहनीय-  
कर्मपुद्गलेषु द्विस्थानको रसः सर्वधाती विद्यते ।

### ॥ मिथ्यात्वमोहनीयम् ॥

सतुषकोद्रवसमा मिथ्यात्वमोहनीयपुद्गलाः, तस्मादेतत्कर्मोदयाज्जीवो हितम-  
हितरूपेण जानाति, हितरूपेण चाहितमपि । मिथ्यात्वमोहनीयकर्मपुद्गलेषु चतुः-  
स्थानकस्त्रिस्थानको द्विस्थानकश्च रसो भवति ।

### મિશ્રમોહનીય—

જિન કોદ્રવોં કા કુછેક અંશ સતુષ હૈં ઔર કુછેક અંશ નિસ્તુષ હૈં, ઊન કોદ્રવોં કે સાથ મિશ્રમોહનીય કે પુદ્ગલોં કી સમાનતા જાનના ચા-  
હિયે । ઇસ કર્મ કે ઉદયસે ન તો તત્ત્વરુચિરૂપ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈં, ઔર ન અતત્ત્વરુચિ મિથ્યાત્વ હી । ઇસ કર્મ કે પુદ્ગલોં મેં સર્વધાતિરસ કા દ્વિતીય ( તીવ્રતર ) અંશ હૈં ।

### મિથ્યાત્વમોહનીય—

સતુષ કોદ્રવોં કે સ્થાનાપન્ન મિથ્યાત્વમોહનીય કે પુદ્ગલ હૈં । ઇસ કર્મ કે ઉદય સે જીવ અહિતકારી પદાર્થોં કો હિતકારી ઔર હિતકારી પદાર્થોં કો અહિતકારી માનતા રહતા હૈં । ઇસ કર્મ કે પુદ્ગલોં મેં ચતુઃ-  
સ્થાનક, ત્રિસ્થાનક ઔર દ્વિસ્થાનક રસ રહતા હૈં ।

### મિશ્રમોહનીય —

એ કોદ્રવોના કોઈ કોઈ અંશ સતુષ છે અને કોઈ કોઈ અંશ નિસ્તુષ છે, એ કોદ્રવોની સાથે મિશ્રમોહનીયના પુદ્ગલોની સમાનતા સમજવી જોઈએ. આ કર્મના ઉદયથી નથી તત્ત્વરુચિરૂપ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થતું અને નથી અતત્ત્વરુચિરૂપ મિથ્યાત્વજ. આ કર્મના પુદ્ગલોમાં સર્વધાતિ રસનો બીજો (તીવ્રતર) અંશ છે.

### મિથ્યાત્વમોહનીય —

સતુષ કોદ્રવોના સ્થાનાપન્ન મિથ્યાત્વમોહનીયના પુદ્ગલો છે. આ કર્મના ઉદયથી જીવ અહિતકારી પદાર્થોને હિતકારી, અને હિતકારી પદાર્થોને અહિતકારી માનતો રહે છે. આ કર્મના પુદ્ગલોમાં ચતુઃસ્થાનક, ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિ-  
સ્થાનક રસ રહે છે.

एकस्य चतुर्थांशश्चतुःस्थानकः, तृतीयांशस्त्रिस्थानकः, द्वितीयांशो द्विस्थानक उच्यते । यश्च रसः स्वाभाविकः स एकस्थानक इति बोध्यम् । शुभाशुभफलप्रदा कर्मणां तीव्रतमा शक्तिश्चतुःस्थानकरसः, तथा तीव्रतरा शक्तिस्त्रिस्थानकरसः, तीव्रा शक्तिर्द्विस्थानकरसोऽवगन्तव्यः । मन्दशक्तिस्त्वेकस्थानको रस इत्यन्यत्र विस्तरः ।

अथैतेषां त्रिविधानां पुद्गलानां किं परस्परं संक्रमो भवति, किं वा न ? उच्यते- भवतीति । प्रवर्धमानपरिणामः सम्यग्दृष्टिः मिथ्यात्वदलिकात् पुद्गलानाकृष्य मिश्रे सम्यक्त्वे च संक्रमयति । मिश्रपुद्गलानां संक्रमो द्वयोर्भवति-सम्यक्त्वे

एक रस का चतुर्थांश चतुःस्थानक, तृतीय अंश त्रिस्थानक, और द्वितीय अंश द्विस्थानक होता है । अर्थात् शुभ और अशुभरूप अपने-२ फल देनेवाले प्रत्येक कर्मों के तीव्रतम अंश की चतुःस्थानक, तीव्रतर अंश की त्रिस्थानक और द्वितीय तीव्र अंश की द्विस्थानक एवं प्रथम मन्द अंश की एक स्थानक संज्ञा है । प्रथम अंश स्वाभाविक है । इसीलिये उसे एक स्थानक कहा है । इस विषयका खुलासा अन्य शास्त्रों में विस्तार से किया गया है ।

प्रश्न—इन तीन प्रकार के पुद्गलों का परस्पर में संक्रमण होता है या नहीं ?

उत्तर—हां, होता है । जिसका अध्यवसाय अहर्निश वृद्धिगत हो रहा है ऐसा सम्यक्त्वी जीव मिथ्यात्वके दलिये से पुद्गलपुञ्जको खींच कर मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृति के पुद्गलपुञ्जोंमें उन्हें संक्रमित करता है । मिश्रप्रकृति के पुद्गलोंका संक्रमण मिथ्यात्व और सम्यक्त्व, इन दोनों प्रकृतियों में होता है । प्रवर्धमानपरिणामवाला सम्यग्दृष्टि जीव

એક રસનો ચતુર્થાંશ ચતુઃસ્થાનક, તૃતીય અંશ ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિતીય અંશ દ્વિસ્થાનક હોય છે. અર્થાત્ શુભ અને અશુભ-૩૫ પોતપોતાનાં ફળ દેવાવાળાં પ્રત્યેક કર્મોની તીવ્રતમ અંશની ચતુઃસ્થાનક, તીવ્રતર અંશની ત્રિસ્થાનક અને દ્વિતીય તીવ્ર અંશની દ્વિસ્થાનક અને પ્રથમ મંદ અંશની એકસ્થાનક સંજ્ઞા છે. પ્રથમ અંશ સ્વાભાવિક છે, તેથી તેને એક સ્થાનક કહે છે. આ વિષયનો ખુલાસો બીજા શાસ્ત્રોમાં વિસ્તારથી આપ્યો છે.

પ્રશ્ન—આ ત્રણ પ્રકારના પુદ્ગલોના પરસ્પરમાં સંક્રમણ થાય છે કે નહિ ?

ઉત્તર—હાં, થાય છે. જેનો અધ્યવસાય અહર્નિશ વૃદ્ધિગત થતો રહે છે એવો સમ્યક્ત્વી જીવ મિથ્યાત્વના દલિયાથી પુદ્ગલપુંજને ખેંચીને મિશ્ર અને સમ્યક્ત્વ-પ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજોમાં એને સંક્રમિત કરે છે. મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલોના સંક્રમણ મિથ્યાત્વ અને સમ્યક્ત્વ, એ બંને પ્રકૃતિઓમાં થાય છે. પ્રવર્ધમાન



મિથ્યાત્વે ચ । તત્ર પ્રવર્ધમાનપરિણામઃ સમ્યગ્દષ્ટિર્મિશ્રપુદ્ગલાન્ સમ્યક્ત્વે સંક્રમયતિ, મિથ્યાદષ્ટિસ્તુ તાન્ મિથ્યાત્વે । સ ચ સમ્યક્ત્વદલિકાત્ પુદ્ગલાન્ આકૃષ્ય મિથ્યાત્વ એવ સંક્રમયતિ, ન તુ મિશ્રે । તસ્ય સમ્યક્ત્વાંશાભાવાત્ ।

સમ્યગ્દર્શનપ્રાપ્તૌ સત્યાં હીયમાનપરિણામસ્તુ મિશ્રપુદ્ગલાન્ મિથ્યાત્વપુદ્ગલાંશ્ચ ન સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાન્ કરોતિ, ન ચ તસ્ય કેચિદન્યે શોધિતપુદ્ગલાઃ સન્તિ, યાન્ સંપ્રતિ પ્રસ્તુતસમ્યક્ત્વપુજ્જનિષ્ઠાકાલે વેદયેત્ । તતઃ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાનામન્તિમગ્રાસં વેદયિત્વા પૂર્વ લબ્ધસમ્યક્ત્વોઽપિ પશ્ચાન્મિથ્યાત્વમેવ સંક્રામતિ ।

મિશ્રપ્રકૃતિ સે મિશ્રપુદ્ગલપુજ્જ કો સ્વીંચ કર સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિકે રૂપમેં, ઓર મિથ્યાદષ્ટિ જીવ ડન્હીં પુદ્ગલોં કો મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિ કે રૂપમેં પરિણમાતા હૈ । તથા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે દલિયે સે પુદ્ગલોં કો લેલે કર વહી મિથ્યાદષ્ટિ જીવ મિથ્યાત્વ મેં હી ડનકા સંક્રમણ કિયા કરતા હૈ, મિશ્રમેં નહીં; કારણ કિ ડસકે સમ્યક્ત્વકા અંશ હી નહીં હૈ ।

સમ્યગ્દર્શન કી પ્રાપ્તિ હોને પર હી જિસકા પરિણામ હીયમાન હૈ એસા સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ મિશ્રપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોં કા, એવ મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોંકા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોંમેં સંક્રમણ નહીં કરતા; કારણ કિ ડસકે નિકટ દૂસરે કોઈ શોધિત પુદ્ગલ નહીં હૈ કિ જિન્હેં વહ વર્તમાન મેં પ્રાપ્ત સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલોંકે સમાપ્તિ કાલ મેં વેદન કર સકે । ડસલિયે વહ જીવ યદ્યપિ લબ્ધસમ્યક્ત્વ હૈ તો હી હીયમાનપરિણામવાલા હોને સે સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે અન્તિમ ગ્રાસ કા વેદન કર પીછે સે મિથ્યાત્વ મેં હી સંક્રમણ કરતા હૈ ।

પરિણામવાળા સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ મિશ્રપ્રકૃતિથી મિશ્ર પુદ્ગલપુંજને ખેંચીને સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિના રૂપમાં, અને મિથ્યાદષ્ટિ જીવ તે જ પુદ્ગલોને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિના રૂપમાં પરિણામ લે છે. તથા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના દલિયાથી પુદ્ગલોને લઈ-લઈને તે મિથ્યાદષ્ટિ જીવ મિથ્યાત્વમાં જ તેનું સંક્રમણ કર્યા કરે છે, મિશ્રમાં નહિ; કારણ કે તેને સમ્યક્ત્વનો અંશ પણ નથી.

સમ્યગ્દર્શનની પ્રાપ્તિ થતાં પણ જેના પરિણામ હીયમાન છે એવો સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેનું અને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેનું સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેમાં સંક્રમણ નથી કરતો. કારણ કે એની નજીક ખીજ કોઈ શોધિત પુદ્ગલ નથી કે જેને તે વર્તમાનમાં પ્રાપ્ત સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલોની સમાપ્તિ કાળમાં વેદન કરી શકે. તેથી તે જીવ જે કે લબ્ધસમ્યક્ત્વ છે તો પણ હીયમાન પરિણામવાળા હોવાથી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના અન્તિમ ગ્રાસનો વેદન કરી પછીથી મિથ્યાત્વમાં જ સંક્રમણ કરે છે.



મિથ્યાત્વપુંજસ્ય ક્ષયાભાવે યઃ સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ સ ત્રિપુંજી, ક્ષીણે તુ મિથ્યાત્વ-પુંજે દ્વિપુંજી, મિથ્યાત્વપુંજસ્ય મિશ્રપુંજસ્ય ચ ક્ષયે ત્વેકપુંજી, સમ્યક્ત્વપુંજસ્યાંપ ક્ષયે તુ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી ભવતીતિ ।

કારણવશાત્ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તાવષ્ઠૌ દૃષ્ટાન્તાઃ સન્તિ । યથા—(૧) ગિરિનદીપ્રસ્તરઃ (૨) પન્થાઃ, (૩) જ્વરઃ, (૪) વસ્ત્ર, (૫) જલ, (૬) પિપીલિકા, (૭) પુરુષઃ (૮) કોદ્રવથેતિ ।

(૧) યથાપ્રવૃત્તારુચે કરણે ગિરિનદીપ્રસ્તરદૃષ્ટાન્તઃ, યથા ગિરિનદ્યાં પ્રસ્તર-ખણ્ડાસ્તદ્વેગતો ઘર્ષણાદિના વર્તુલા જાયન્તે, एवं યથાપ્રવૃત્તકરણપ્રભાવાદ્ દીર્ઘત-રાયા અપિ કર્મસ્થિતેસ્તાવત્ ક્ષપણં ભવતિ યાવતા ગ્રન્થિરૂપઃ શેષોઽવતિષ્ઠતે ।

મિથ્યાત્વપુંજ કા જિસને ક્ષય નહીં કિયા હૈ એસા જીવ સમ-કિત કી પ્રાપ્તિ હોને પર ત્રિપુંજી, મિથ્યાત્વ કે ક્ષય હોને પર દ્વિપુંજી, ઔર મિથ્યાત્વપુંજ એવં મિશ્રપુંજકે ક્ષય હોને પર એકપુંજી (સમ્યક્ત્વપુંજવાલા) હોતા હૈ, તથા એક પુંજ-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે ક્ષય હોને પર ક્ષાયિકસમ્ય-ક્ત્વી હો જાતા હૈ ।

સમકિતપ્રાપ્તિ મેં આઠ દૃષ્ટાન્ત હૈ—(૧) ગિરિનદીપ્રસ્તર, (૨) માર્ગ, (૩) જ્વર, (૪) વસ્ત્ર, (૫) જલ, (૬) કીડી, (૭) પુરુષ, ઔર ૮વાં કોદ્રવ । इनका खुलासा अर्थ इस प्रकार है—

(૧) પહિલા દૃષ્ટાન્ત યથાપ્રવૃત્તિનામક કરણમેં હૈ । જૈસે-પર્વત ડપરસે બહનેવાલી નદીમેં પથરોં કે ટુકડે ઉસકે પ્રવાહ કે વેગસે ઇધર-ઉધર ઘિસે જાકર ગોલ હો જાતે હૈ, ઇસીપ્રકાર યથાપ્રવૃત્તિકરણ કે પ્રભાવ સે ઉત્કૃષ્ટ મી કર્મસ્થિતિ ઘટતે ૨ ઇતની કમ રહ જાતી હૈ જિસકી વજહ સે

મિથ્યાત્વપુંજનો જેણે ક્ષય નથી કર્યો એવો જીવ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થતાં ત્રિપુંજ, મિથ્યાત્વનો ક્ષય થતાં દ્વિપુંજ, મિથ્યાત્વપુંજ અને મિશ્રપુંજનો ક્ષય થતાં એકપુંજ (સમ્યક્ત્વપુંજવાળો) થાય છે, તથા એક પુંજ-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિનો ક્ષય થતાં જ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી થઈ જાય છે.

સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિમાં આઠ દૃષ્ટાન્તો છે. (૧) ગિરિનદીપ્રસ્તર, (૨) માર્ગ, (૩) જ્વર, (૪) વસ્ત્ર, (૫) જળ, (૬) કીડી, (૭) પુરુષ, અને (૮) કોદ્રવ. એનો સ્પષ્ટ અર્થ આ પ્રકારે થાય છે—

(૧) પહેલો દૃષ્ટાન્ત યથાપ્રવૃત્તિનામવાળા કરણમાં છે. જેમ પર્વતથી વહેવાવાળી નદીમાં પથરનો ટુકડો તેના પ્રવાહના વેગથી અહીં-તહીં ઘસડાઈ જેમ ગોળ થઈ જાય છે, તે પ્રકારે યથાપ્રવૃત્તિકરણના પ્રભાવથી ઉત્કૃષ્ટી

(૨) અનિવૃત્તિકરણં સમ્યક્ત્વપુરસ્કૃતે જીવે ભવતિ । કથં તત્ સમ્યક્ત્વં ભવતિ ? ઉચ્યતે—ઉપદેશતઃ સ્વયં વા । તત્ર પથિદૃષ્ટાન્તઃ—યથા કશ્ચિન્નષ્ટપથઃ પુરુષોઽન્યં દૃષ્ટ્વા તદુપદેશતો માર્ગમારોહતિ, કશ્ચિત્ સ્વયમેવોહાપોહં કૃત્વા, તથા કશ્ચિદાચાર્યાદીનામુપદેશતઃ સમ્યક્ત્વં લભતે, કશ્ચિત્ સ્વયમેવ જાતિસ્મરણાદિના ।

(૩) જ્વરદૃષ્ટાન્તોઽપ્યત્રૈવ, યથા—જ્વરિતઃ કશ્ચિદૌષધાદારોગ્યં લભતે, કશ્ચિત્તુ તદ્ વિનૈવ લઙ્ઘનાદિના; તથાઽત્રાપિ કસ્યચિન્મિથ્યાત્વં ગુર્વાદ્યુપદેશતો નશ્યતિ, કસ્ય-ચિત્તુ સ્વયમેવ તત્ત્વપર્યાલોચનતઃ ।

યહ જીવ ગ્રન્થિદેશ તક પહુંચ જાતા હૈ । અર્થાત્—હસ કરણ કે પ્રભાવ સે ઉત્કૃષ્ટ મી કર્મસ્થિતિ ક્ષય હોતે ૨ ગ્રંથિ રૂપમેં અવશિષ્ટ રહ જાતી હૈ ।

(૨) સમ્યક્ત્વ કે સંમુખ હુએ જીવ કે અનિવૃત્તિકરણ હોતા હૈ । સમ-ક્તિ કી પ્રાપ્તિ કે દો ઉપાય હૈ—(૧) ગુર્વાદિકકા ઉપદેશ, (૨) નિસર્ગ । યહાં પર માર્ગ કા દૃષ્ટાન્ત હૈ । જૈસે—કોઈ ૨ માર્ગ ભૂલા પથિક ઉસી માર્ગ પર ચલતે હુએ દૂસરે કો દેખ કર યા ઉસસે પૂછ કર તથા કોઈ ૨ સ્વયં તર્ક-વિતર્ક કરકે અપને માર્ગ કી પ્રાપ્તિ કર લિયા કરતે હૈ, ઉસી તરહ કોઈ ૨ પ્રાણી આચાર્યાદિક ગુરુઓં કે ઉપદેશ સે, ઓર કોઈ ૨ સ્વયં અપને આપ જાતિસ્મરણાદિક સાધનોં સે સમક્તિ કા લાભ કર લેતે હૈ ।

(૩) જ્વર કા દૃષ્ટાન્ત મી યહીં પર ઘટિત હોતા હૈ । જૈસે—કિસી રોગી કા જ્વર ઓષધિ કે સેવન સે ઓર કિસી ૨ કા વિના ઓષધિ કે કેવલ લંઘનાદિક કરને સે શાન્ત હો જાતા હૈ, ઉસી પ્રકાર કિસી ૨ જીવ

કર્મસ્થિતિ ઘટતી ઘટતી એટલી ઓછી રહી જાય છે કે જેના કારણથી એ જીવ ગ્રન્થિદેશ સુધી પહોંચી જાય છે, અર્થાત્ આ કારણના પ્રભાવથી ઉત્કૃષ્ટી કર્મસ્થિતિ ક્ષય થતાં થતાં ગ્રન્થિરૂપમાં અવશિષ્ટ રહી જાય છે.

(૨) સમ્યક્ત્વના સંમુખ થયેલ જીવને અનિવૃત્તિકરણ થાય છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિના બે ઉપાયો છે—(૧) ગુર્વાદિકનો ઉપદેશ, (૨) નિસર્ગ. આ ઠેકાણે માર્ગનો દૃષ્ટાન્ત છે. જેમ કોઈ કોઈ માર્ગભૂલ્યા મુસાફિર તે માર્ગ પર ચાલતાં બીજાને દેખીને અગર તેને પૂછીને, તથા કોઈ કોઈ સ્વયં તર્ક વિતર્ક કરીને પોતાના માર્ગની પ્રાપ્તિ કરી લે છે. તેવી રીતે કોઈ કોઈ પ્રાણી આચાર્યાદિક ગુરુઓના ઉપદેશથી અને કોઈ સ્વયં પોતે પોતાના જાતિસ્મરણાદિક સાધનોથી સમ્યક્ત્વનો લાભ કરી લે છે.

(૩) જ્વરનો દાખલો પણ આ ઠેકાણે ઘટિત થાય છે. જેમ કોઈ કોઈ રોગીનો જ્વર ઓષધીના સેવનથી, અને કોઈ કોઈનો ઓષધિ વિના લંઘનાદિક કરવાથી



(૪-૫) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામિજીવસ્ય પ્રથમતયા ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વં ભવતિ, તત્ સ્વલ્પપૂર્વકરણવશાત્ । તત્રાપૂર્વકરણેન જીવો મિથ્યાત્વદલિકં ત્રિધા કરોતિ, તથા—(૧) મિથ્યાત્વં, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વં, (૩) સમ્યક્ત્વં ચેતિ । તત્ર (૪) વસ્ત્રં, (૫) જલં ચેતિ દૃષ્ટાન્તદ્વયમ્ । યથા કિંચિદ્ વસ્ત્રં જલં વા મલિનં ભવતિ, કિંચિદીષદ્ વિશુદ્ધં, કિંચિત્ શુદ્ધમ્, તથા મિથ્યાત્વદલિકમપ્યપૂર્વકરણવશાત્ કિંચિન્મિથ્યાત્વરૂપં મલિનં ભવતિ, કિંચિત્ સમ્યગ્મિથ્યાત્વરૂપમીષદ્ વિશુદ્ધં, કિંચિત્ સમ્યક્ત્વરૂપં શુદ્ધમ્ ।

કા મિથ્યાત્વ ગુર્વાદિક કે ઉપદેશ સે, ઓર કિસી ૨ કા અપને આપ તત્ત્વોં કી પર્યાલોચના સે નષ્ટ હો જાતા હૈ ।

(૪-૫) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાલે જીવ કે અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે હી જીવ મિથ્યાત્વ કે (૩) ત્રીન ભાગ કરતા હૈ—(૧) મિથ્યાત્વ, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, (૩) સમ્યક્ત્વ । યહાં પર વસ્ત્ર ઓર જલ યે દો દૃષ્ટાન્ત ઘટિત હોતે હૈ । જૈસે—કોઈ વસ્ત્ર અથવા જલ અત્યન્ત મલિન હોતા હૈ, ઓર કોઈ ઉસસે કુછ કમ મલિન, ઓર કોઈ ૨ બિલ્કુલ સાફ—નિર્મલ હોતા હૈ, ઉસી તરહ સે જીવ અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે મિથ્યાત્વ કે ત્રીન ટુકડે કર દેતા હૈ, ઉનમેં કોઈ ટુકડા બિલ્કુલ મલિન, ઓર કોઈ ટુકડા કુછ કમ મલિન, એવં કોઈ ટુકડા બિલ્કુલ સાફ—શુદ્ધ હોતા હૈ । બિલ્કુલ મલિન ટુકડે કા નામ મિથ્યાત્વ, કુછ કમ મલિન ટુકડે કા નામ સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, ઓર સર્વથા શુદ્ધ ટુકડે કા નામ સમ્યક્ત્વ હૈ ।

શાંત થઇ જાય છે, તે પ્રમાણે કોઈ કોઈ જીવનો મિથ્યાત્વ ગુર્વાદિકના ઉપદેશથી, અને કોઈ કોઈનો પોતાની મેળે તત્ત્વોની પર્યાલોચનાથી નષ્ટ થઇ જાય છે.

(૪-૫) તીવ્ર વિશુદ્ધિ પરિણામવાળા જીવને અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે. અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી જ જીવ મિથ્યાત્વના ત્રણ ભાગ કરે છે—(૧) મિથ્યાત્વ, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, (૩) સમ્યક્ત્વ. આ ટેકાણે વસ્ત્ર અને જળ, આ બે દૃષ્ટાન્ત ઘટિત થાય છે. જેમ કોઈ વસ્ત્ર અથવા જળ અત્યન્ત મલિન છે, અને કોઈ એનાથી ઓછું મલિન, અને કોઈ કોઈ બિલ્કુલ સાફ—નિર્મળ હોય છે, તેમજ જીવ અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી મિથ્યાત્વના ત્રણ ભાગ કરી નાંખે છે. તેમાં કોઈ ભાગ બિલ્કુલ મલિન અને કોઈ ભાગ થોડો મલિન, કોઈ ભાગ તદ્દન સાફ—શુદ્ધ હોય છે. તદ્દન મલિન ભાગનું નામ મિથ્યાત્વ, થોડા ઓછા મલિન ભાગનું નામ સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, અને સર્વથા શુદ્ધ ભાગનું નામ સમ્યક્ત્વ છે.



(૬) નન્વભવ્યાઃ કથં તસ્મિન્ યથાપ્રવૃત્તિકરણેઽવતિષ્ઠન્તે, કથં વા તતઃ પ્રતિ-  
પતન્તિ, ?, ભવ્યા વા ગ્રન્થિ મિત્વા કથં તતઃ પરતો ગચ્છન્તિ ?; અત્રોચ્યતે—  
પિપીલિકાદૃષ્ટાન્તાત્ । તથાહિ—કાશ્ચિત્ પિપીલિકા અનાભોગતો બિલા-  
ન્નિસ્સૃત્ય ઇતસ્તતો ગન્તુ પ્રવૃત્તાઃ, કાશ્ચિદપૂર્વકરણેન વૃક્ષાદાવારૂઢાઃ, તાસામપિ  
મધ્યે પક્ષરહિતાસ્તત્રૈવ તિષ્ઠન્તિ, તતઃ પ્રત્યવરોહન્તિ ચ । કાશ્ચિત્ પક્ષોદ્ભવેન તત  
ઉડ્ડીયન્તે । ઇહ યથા પિપીલિકાનામિતસ્તતો ગમનં યથાપ્રવૃત્તિકરણેન, વૃક્ષાદાવા-  
રોહણમપૂર્વકરણેન, ઉડ્ડયનમનિવૃત્તિકરણેન, તથાઽત્રાપિ ગ્રન્થિદેશગમનં યથાપ્રવૃત્તિ-

(૬) અભવ્ય જીવ કૈસે યથાપ્રવૃત્તિકરણમેં સ્થિત હોતે હૈં ? ઔર કૈસે  
ફિર વહાં સે ચ્યુત હો જાતે હૈં ? તથા ભવ્ય જીવ ગ્રન્થિ કા ભેદન કર  
કૈસે ઉસસે આગે બઢ જાતે હૈં ?, એસી શંકા કો દૂર કરને કે લિયે પિપી-  
લિકા-દૃષ્ટાન્ત કી સાર્થકતા હૈ ।

જૈસે કિતનેક પિપીલિકાઈ ( કીડિયાં ) યૌં હી અપને બિલસે બાહર  
નિકલ કર ઇધર-ઉધર ઘૂમને લગતી હૈં, ઔર इनमेंसे કિતનીક પિપી-  
લિકાઈ અપૂર્વકરણ સે વૃક્ષાદિક કે ઉપર ચઢ જાતી હૈં । અનન્તર उनमें  
पांखरहित कितनीक वहीं पर रह जाती हैं, ઔર કિતનીક વહાં સે ઉતર  
આતી હૈં, ઔર કિતનીક પિપીલિકાઈ કે જિનકે પર હોતે હૈં વે વહાંસે  
ઉડ જાતી હૈં । જૈસે પિપીલિકાઓં કા ઇધર-ઉધર ભ્રમણ યથાપ્રવૃત્તિ-  
કરણસે હોતા હૈ, વૃક્ષાદિક પર उनका चढ़ना अपूर्वकरण से होता है,  
एवं वहां से उनका उड़ जाना अनिवृत्तिकरणसे होता है, उसी प्रकार  
जीवका ग्रन्थि देश तक जाना-यथाप्रवृत्तिकरणके द्वारा होता है, ग्रन्थिका

(૬) અભવ્ય જીવ કેવી રીતે યથાપ્રવૃત્તિકરણ કરે છે ? અને કેવી રીતે  
પછી ત્યાંથી પતિત થઈ જાય છે ? તથા ભવ્ય જીવ ગ્રન્થિનું ભેદન કરીને કેવી  
રીતે એનાથી આગળ વધી જાય છે ? આવી શંકાને દૂર કરવાને માટે પિપીલિકા  
ઓ (કીડીઓ)ના દૃષ્ટાન્તની સાર્થકતા છે. જેમ કેટલીક પિપીલિકાઓ (કીડીઓ)  
એમજ પોતાના દરથી બહાર નિકળીને અહીંતહીં ફરવા લાગે છે, અને તેઓમાંથી  
કેટલીક કીડીઓ વૃક્ષાદિકની ઉપર ચઢી જાય છે. બાદમાં તેઓમાંથી પાંખરહિત  
કેટલીક કીડીઓ ત્યાં જ રહી જાય છે, અને કેટલીક કીડીઓ ત્યાંથી ઉતરી આવે  
છે, તથા કેટલીક કીડીઓ—કે જેઓ પાંખસહિત હોય છે તેઓ ત્યાંથી ઉડી જાય  
છે. જેમ કીડીઓનું અહીંતહીં ફરવું યથાપ્રવૃત્તિકરણથી થાય છે, વૃક્ષાદિકની ઉપર  
તેઓનું ચઢવું અપૂર્વકરણથી થાય છે, અને ત્યાંથી તેઓનું ઉડવું અનિવૃત્તિકરણથી  
થાય છે; તે જ પ્રમાણે જીવનું ગ્રન્થિદેશ સુધી જવું તે યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા થાય

करणेन, ग्रन्थिभेदनमपूर्वकरणेन, सम्यक्त्वमनिवृत्तिकरणेन । पक्षरहितास्तु यथा वृक्षादौ स्थितास्ततः प्रत्यवरोहन्ति, तथाऽध्यवसायस्य मान्द्यात् कोऽपि तीव्रविशोधि-रहितोऽपूर्वकरणेन ग्रन्थिभेदं कर्तुमुद्यतोऽपि तीव्ररागद्वेषपरिणामोदयात् तत्रैव तिष्ठति, पश्चात् तत एव परावर्तते ।

(७) अत्रैव पुरुषदृष्टान्तोऽपि—यथा त्रयो मनुष्याः भयङ्करं पन्थानं भयेन गच्छन्तः सायंकाले समागते त्वरमाणा व्रजन्ति । अत्रान्तरे खड्गहस्तौ द्वौ चौरौ पार्श्वद्वयतः संप्राप्तौतौ चैत्रमाक्षिपतः—“क्व गच्छथ यूयं? युष्माकमिदानीं मरणं भेदन करना यह अपूर्वकरण के द्वारा होता है, और समकित की प्राप्ति करना यह अनिवृत्तिकरण के द्वारा होता है । पक्षरहित पिपीलिकाएँ जैसे वृक्षादिक पर चढ़ कर वहाँ से फिर उतरती हैं उसी प्रकार अध्यव-साय की मन्दतासे जीव भी तीव्रविशुद्धिसम्पन्न परिणाम के बिना अपूर्वकरण के द्वारा ग्रन्थिभेद करनेमें उद्यत होता हुआ भी तीव्र राग-द्वेष परिणामके उदयसे वहीं पर ठहर जाता है और पीछे वहाँ से लौट आता है; आगे नहीं बढ़ सकता ।

(७) यहीं पर पुरुषका दृष्टान्त भी लागू पड़ता है । जैसे तीन मनुष्य भय से संव्रस्त हो विकट मार्ग से जाते हुए सायंकाल के समय अपने स्थानकी ओर बहुत ही शीघ्रतासे आगे बढ़ रहे थे, इनमें से एकके पास ही तलवार थी । इसी समय तलवार लिये हुए दो चोर भी जो इनके पीछे लगे हुए थे, वे उनके सामने आ कर बोले—‘तुम लोग कहां जाते हो ? जो कुछ हो हमें दे दो, नहीं तो तुम्हारी इस समय मृत्यु निकट

छे. ग्रन्थिनुं भेदन करवुं, ते अपूर्वकरणद्वारा थाय छे, अने समकितनी प्राप्ति करवी ते अनिवृत्तिकरण द्वारा थाय छे. पांजरडित डीडिओ जेम वृक्षादिनी उपर चढीने उतरे छे. ते प्रमाणे अध्यवसायनी मन्दताथी एव पणु तीव्र विशुद्ध-संपन्न परिणामना अलावे अपूर्वकरणद्वारा ग्रन्थिभेद करवामां तैयार होवा छतां पणु तीव्ररागद्वेषपरिणामना उदयथी त्यां न रोकाछ नय छे अने पछी त्यांथी डरी आवे छे अने आगण वधी शकतां नथी.

(७) ये न ठेकाणु पुरुषना दृष्टान्त पणु दाशु पडे छे जेम-सायंकालनी वज्रत विकट मार्गथी नतां त्रणु मनुष्य लयथीहुःभी छता, अने पोताना स्थाननी तरङ्ग धणु न शीघ्रताथी आगण वधी रह्या छता. तेमां ऐकनी पासे तलवार छती. आ वज्रते तलवारवाणा ये चोर जे तेमनी पछवाडे पड्यां छतां ते ऐमनी सामे आवी ओल्यां—‘तमे लोक कथां नय्यो छे ? तमारी पासे जे डोय



સમાયાતમ્ ” ઇતિ । તત્રૈકઃ પુરુષસ્તૌ સમાપતન્તૌ વિલોક્ય પ્રથમતઃ પ્રથમતઃ એવ નિવૃત્તઃ, દ્વિતીયસ્તદ્વાક્યશ્રવણેન સ્વદ્ગદર્શનેન ચ સંજાતભયસ્તત્રૈવ સ્થિતઃ, તૃતીયસ્તુ પરમ-સાહસિકઃ પ્રકટીકૃતક્રૂપાણસ્તૌ દ્વાવપિ ચૌરૌ પશ્ચાત્કૃત્ય તત્ સ્થાનમતિક્રાન્તઃ ।

इह त्रयाणामपि या प्रथमतः क्रमेण गतिः सा यथाप्रवृत्तिकरणम्, यत्तु तद्वयं तदपूर्वकरणम्, यच्च तौ पराजित्य तत्परतो गमनं तत् तृतीयमनिवृत्तिकरणं द्रष्टव्यम् । यच्च ततः पलायनं तत् पतनम् ।

(૮) અપૂર્વકરણેન મિથ્યાત્વં ત્રિધા કરોતીતિ યદુક્તં તત્ર કોદ્રવદૃષ્ટાન્તઃ । સ તુ પ્રાગેવ નિરૂપિતઃ ।

है' यह सुनते ही उनमें से एक पुरुष तो पहिले से ही कहीं भाग गया । दूसरा उनकी बात सुन कर और तलवार देख कर वहीं पर चुपचाप खड़ा रह गया । तीसरेने जो परमसाहसी था अपनी तलवार निकाल कर उनका सामना किया और उन्हें परास्त कर आगे बढ़ गया । यहां तीनों का गमन करना यह यथाप्रवृत्तिकरण के, तथा उनमें से दूसरे का भयान्वित हो कर वहीं पर खड़े रहना यह अपूर्वकरणके और तीसरे का चोरोंको परास्त कर आगे बढ़ना यह अनिवृत्तिकरणके स्थानापन्न समझना चाहिए । तथा भागना यह पतन का स्थानापन्न है ।

(૮) અપૂર્વકરણ-પરિણામ કે દ્વારા યહ જીવ જો મિથ્યાત્વકે ત્રીન સ્વપ્ન કરતા હૈ વહાં પર કોદ્રવ કા દૃષ્ટાન્ત લાગૂ પડતા હૈ । ઇસ દૃષ્ટાન્ત કા સમન્વય પહિલે કિયા જા ચુકા હૈ ।

તે અમોને આપી ઘો, નહિ તો તમારો મોત આ વખતે નજીક છે' આ સાંભળતાં જ તેમાંથી એક પુરુષ તો પહેલેથી જ ક્યાંક ભાગી ગયો, બીજો તેમની વાત સાંભળી અને તલવાર દેખીને ચુપચાપ ઉભો રહ્યો, ત્રીજો જે ઘણો સાહસિક હતો તેણે પોતાની તલવાર કાઢીને સામો થઈ ગયો અને તેમને ભગાડીને આગળ વધી ગયો.

આ ઠેકાણે ત્રણેતું જતું તે યથાપ્રવૃત્તિકરણતું, તથા આમાંથી બીજાતું ભયભીત થઈ ત્યાં રોકાઈ જતું તે અપૂર્વકરણતું, અને ત્રીજાતું ચોરોને હરાવીને આગળ વધતું તે અનિવૃત્તિકરણતું સ્થાનાપન્ન સમજવું જોઈએ. જે ભાગવું તે પતનતું સ્થાનાપન્ન છે.

(૮) અપૂર્વકરણ પરિણામ દ્વારા આ જીવ જે મિથ્યાત્વના ત્રણ ખંડ કરે છે ત્યાં કોદ્રવનો દૃષ્ટાન્ત લાગૂ પડે છે. આ દૃષ્ટાન્તનો સમન્વય પહેલાં જ કરવામાં આવ્યો છે.



आर्हतधर्म एव श्रेष्ठेय इति बोधयितुं श्रीसुधर्मास्वामी कथयति—‘से बेमि’ इत्यादि ।

मूलम्—से बेमि, जे अईया जे य पडुप्पन्ना जे य आगमि-  
स्सा अरहंता भगवंतो ते सव्वेवि एवमाइक्खंति एवं भासंति  
एवं पण्णवित्ति एवं परूवित्ति—सव्वे पाणा सव्वे भूया सव्वे  
जीवा सव्वे सत्ता न हंतव्वा, न अज्जावेयव्वा, न परिघेत्तव्वा,  
न परियावेयव्वा, न उद्वेयव्वा ॥ सू० १ ॥

छाया—तद् ब्रवीमि, ये अतीता ये च प्रत्युपन्नाः ये चागमिष्यन्तः अर्हन्तो  
भगवन्तस्ते सर्वेऽपि एवमाख्यान्ति, एवं भाषन्ते, एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूपयन्ति—  
सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः सर्वे जीवाः सर्वे सत्त्वाः न हन्तव्याः, न आज्ञापयितव्याः,  
न परिग्रहीतव्याः, न परितापयितव्याः, नापद्रावयितव्याः ॥ सू० ॥ १ ॥

तीर्थकरैर्गणधरैश्च स्वस्वशिष्येभ्यो यत् सम्यक्त्वमुक्तं तदहं ब्रवीमि=कथयामि ।  
यद्वा—‘से’ इत्यस्य स इतिच्छाया । येन मया भगवतः श्रीवर्धमानस्वामिन-  
स्तीर्थकरस्य सकाशे तद्वचनेन तत्त्वज्ञानं लब्धं, सोऽहं ब्रवीमि । भगवदुक्तमेवार्थं  
कथयामि, तस्मान्मम वाक्यं श्रेष्ठेयमिति भावः ।

अर्हन्त प्रभुके द्वारा प्रतिपादित धर्म ही श्रेष्ठा करनेके योग्य है । इस  
वातका प्रतिबोध करानेके लिये श्रीसुधर्मास्वामी जम्बूस्वामी से कहते हैं—  
—‘से बेमि’ इत्यादि ।

हे जम्बू ! तीर्थङ्करों ने एवं गणधरादिकों ने अपने २ शिष्योंके लिये  
जिस सम्यक्त्वका उपदेश दिया है उसी सम्यक्त्वका मैं व्याख्यान करता  
हूँ । अथवा भगवान् श्रीवर्धमान तीर्थङ्कर के निकट जो उनके वचनोंद्वारा  
सुना है, वही मैं कहता हूँ, किन्तु अपनी तर्फसे कुछ भी नहीं कहता हूँ ।

‘अर्हुत प्रभुद्वारा प्रतिपादित धर्म न श्रेष्ठा करवायेज्य छे’ आ वातने  
प्रतिबोध करवाने भाटे श्री सुधर्मास्वामी कहे छे—‘से बेमि’ इत्यादि ।

हे जम्बू ! तीर्थकरोये तेम न गणधरादिकोये पोतपोताना शिष्योने भाटे  
ने सम्यक्त्वनो उपदेश आय्यो छे ते सम्यक्त्वनुं हुं पण्ण व्याख्यान कइं छुं ।  
अथवा भगवान् श्री वर्धमान तीर्थकर पासो तेमना वचनोथी ने सांभण्णुं छे ते  
हुं कहुं छुं पण्ण मारी तरइथी कंठ पण्ण कहेतो नथी ।

અતીતાઃ=અતીતકાલિકા અનન્તાઃ, એ ચ પ્રત્યુત્પન્નાઃ=વર્તમાનકાલિકાઃ-પશ્ચ-  
ભરતેષુ પશ્ચૈરવતેષુ પશ્ચમહાવિદેહેષુ વર્તમાનાઃ, એ ચ આગમિષ્યન્તઃ=ભવિષ્યત્કાલે  
આગમિનોઽનન્તાઃ, તે સર્વે=અર્હન્તો ભગવન્તઃ એવં=વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ, આશ્વાન્તિ=  
પરપ્રશ્નાવસરે કથયન્તિ ।

અત્ર વર્તમાનગ્રહણમુપલક્ષણં, તેનાતીતાનાગતયોરપિ ગ્રહણમ્ । તથા ચ-એવમાચ-  
શ્યુઃ, એવમાશ્વાસ્યન્તીત્યપિ યોજનીયમ્ । એવં સર્વત્ર ક્રિયાસુ યોજનીયમ્ । તથા-  
એવં ભાષન્તે=સુરનરપરિપદિ સર્વજીવાનાં સ્વસ્વભાષાપરિણામિન્યાઽર્ધમાગધ્યા  
ભાષયા બ્રુવન્તિ । તથા-એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ=હેતુદૃષ્ટાન્તાદિના પ્રકર્ષેણ બોધયન્તિ । તથા  
-એવં પ્રરૂપયન્તિ=તત્તદ્ભેદં પ્રદર્શ્ય પ્રકર્ષેણ નિર્ણયન્તિ ।

અતીતકાલ મેં જિતને મી અનન્ત તીર્થઢૂર હુએ હૈં, તથા પાંચ ભરત,  
પાંચ ઁરવત ઔર પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્ર મેં જિતને વિદ્યમાન હૈં, ઔર  
ભવિષ્યત્કાલમેં જિતને મી તીર્થઢૂર હોંગે ઁન સબોને દૂસરોં કે પ્રશ્નાવસરમેં  
હસી પ્રકાર સે કહા હૈ, કહતે હૈં ઔર કહેંગે । યહાં પર “ આશ્વાન્તિ ”  
યહ વર્તમાનકાલિક ક્રિયા હૈ, હસસે ભૂત ઔર ભવિષ્યત્-કાલીન ક્રિયા  
મી સમજ્ઞ લેના ઑહિએ । ઁગે મી જહાં પર વર્તમાન ક્રિયાપદકા પ્રયોગ  
હો, વહાં પર ભૂત ઔર ભવિષ્યત્-કાલીન ક્રિયાપદકા ઉપલક્ષણ સે અધ્યા-  
હાર કર લેના ઑહિયે ।

“ એવં ભાષન્તે ” ઁન સમસ્ત તીર્થઢૂર મહાપ્રભુઁઓને દેવ, મનુષ્યોં  
કી સભામેં અપની અર્ધમાગધી ભાષાકે દ્વારા, જો ભાષા સમસ્ત જીવોંકી  
ભાષામેં પરિણત હો જાતી હૈ; હસ પ્રકાર સ્પષ્ટ કહા હૈ ।

અતીતકાળમાં જેટલા પણ અનંત તીર્થકર થયાં છે, તથા પાંચ ભરત પાંચ ઔર-  
વત અને પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં જેટલાં વિદ્યમાન છે, અને ભવિષ્યકાળમાં જેટલાં  
પણ તીર્થકર થશે તે બધા બીજાના પ્રશ્નાવસરમાં આ પ્રકારથી કહ્યું છે, કહે છે  
અને કહેશે. આ ઠેકાણે “ આશ્વાન્તિ ” તે વર્તમાનકાલિક ક્રિયા છે, એથી ભૂત  
અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયા પણ સમજી લેવી જોઈએ. આગળ પણ જે ઠેકાણે  
વર્તમાનકાલિક ક્રિયાપદનો પ્રયોગ છે, ત્યાં પણ ભૂત અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયા-  
પદનો ઉપલક્ષણથી અધ્યાહાર કરી લેવો જોઈએ.

“ એવં ભાષન્તે ” આ સમસ્ત તીર્થકર મહાપ્રભુઓએ દેવ મનુષ્યોની સભામાં  
પોતાની અર્ધમાગધીભાષાદ્વારા-જે ભાષા સમસ્ત જીવોની ભાષામાં પરિણત થઈ  
જાય છે-આ પ્રકારે સ્પષ્ટ કહ્યું છે.



સર્વેર્હન્તો ભગવન્ત એવં કિમાર્યાન્તીતિ જિજ્ઞાસાયામાહ—‘સઁવ્વે પાણા’  
 ઇત્યાદિ । સર્વે=નિરવશેષાઃ પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ પૃથિવ્યાદયઃ સ્થાવરાઃ, દ્વીન્દ્રિયાદિ-  
 પચ્ચેન્દ્રિયપર્યન્તાઃ ત્રસાચ્ચેત્યર્થઃ, ઇન્દ્રિયાદિપ્રાણાનાં યથાસંભવં ધારણાત્ તેષુ પ્રા-  
 ણિત્વમસ્તીતિ ભાવઃ । તથા સર્વે ભૂતાઃ=ભવન્તિ ભવિષ્યન્ત્યભૂવન્નિતિ ચ ભૂતાઃ ચતુર્દશ-  
 ભૂતગ્રામરૂપાઃ, તથા—સર્વે જીવાઃ=જીવન્તિ જીવિષ્યન્ત્યજીવિષુરિતિ, જીવાઃ નાર-  
 કતિર્યદ્મનુષ્યદેવરૂપાશ્ચતુર્ગતિકાઃ, તથા સર્વે સત્ત્વાઃ=સ્વકૃતકર્મજન્યસુખદુઃસ્વ-  
 સત્તાવન્તઃ । તત્ત્વાનાં ભેદપર્યાયૈઃ પ્રતિબોધનમર્હન્તો ભગવન્તઃ કુર્વન્તીતિ કૃત્વા પર્યાયશ-  
 બ્દનિર્દેશઃ । યદ્વા—સર્વપ્રાણિષુ પુનઃ પુનર્દયાભાવસમુત્પાદનાય પર્યાયશબ્દનિર્દેશઃ । ન  
 હન્તવ્યાઃ=દષ્ટાદિભિર્ન તાડયિતવ્યા ઇત્યર્થઃ । નાજ્ઞાપયિતવ્યાઃ=અનભિમતકાર્યેષુ ન  
 પ્રવર્તયિતવ્યાઃ, ન પરિગ્રહીતવ્યાઃ=ઇમે ભૃત્યાદયો મમેતિ કૃત્વા પરિગ્રહરૂપેણસ્વાધીન-  
 તયા ન સ્વીકર્તવ્યાઃ, ન પરિતાપયિતવ્યાઃ=ન અન્નપાનાદ્યવરોધનેન ગ્રીષ્માતપાદૌ  
 સ્થાપનેન ચ પીડનીયાઃ, નાપદ્રાવયિતવ્યાઃ=ન વિપશસ્ત્રાદિના મારયિતવ્યાઃ ॥સૂ૦ ૧॥

‘એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ’ હેતુ દૃષ્ટાન્તાદિક કે દ્વારા અચ્છી તરહ સે સમજાયા હૈ,  
 ઔર ‘એવં પ્રરૂપયન્તિ’ ભેદપ્રભેદપૂર્વક સ્પષ્ટ રીતિ સે નિર્ણય કિયા હૈ ।

સમસ્ત તીર્થઙ્કરોં ને ક્યા કહા ? ઇસ પ્રકાર કી જિજ્ઞાસા હોને પર  
 ભગવાન્ કહતે હૈ—‘સઁવ્વે પાણા’ ઇત્યાદિ ।

સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ ઔર સમસ્ત સત્ત્વોં કો  
 અર્થાત્ કિસી કો ઔ ‘ન હંતઁવા’ ડંડે આદિ સે ન હને । ‘ન અજ્જાવે-  
 યઁવા’ ન ઇનકો મારનેકે લિયે આજ્ઞા દે । ‘ન પરિચેતઁવા’ ‘યે ભૃત્યાદિક  
 મેરે અધીન હૈ’ ઁસા સમજ કર ઁન્હેં દાસ નહીં બનાવેં । ‘ન પરિયાવેયઁવા’  
 અન્નપાની આદિ બંધ કરકે તથા ધૂપ આદિમેં રલ્લ કર ન પીડા પહુંચાવે  
 ‘ન કિલામેયઁવા’ બન્ધનાદિ સે ન લેદ પહુંચાવે ‘ન ઁદ્વેયઁવા’ ઇનકા

‘એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ’ હેતુદષ્ટાન્તાદિકથી સારી રીતે સમજાવ્યું છે અને  
 “ એવં પ્રરૂપયન્તિ ” ભેદપ્રભેદપૂર્વક સ્પષ્ટ રીતિથી નિર્ણય કર્યો છે.

સમસ્ત તીર્થંકરોએ શું કહ્યું ? આ પ્રકારની જાણવાની ઇચ્છા થવાથી ભગ-  
 વાન કહે છે—‘સઁવ્વે પાણા’ ઇત્યાદિ.

સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સત્ત્વોને અર્થાત્ કોઈને  
 પણ ‘ન હંતઁવા’ લાકડી આદિથી ન મારે. ‘ન અજ્જાવેયઁવા’ ન મારવાને માટે આજ્ઞા  
 આપે, ‘ન પરિચેતઁવા’ ‘આ નોકરાદિ મારી આજ્ઞામાં છે’ એવું સમજીને  
 તેઓને દાસ ન બનાવે. ‘ન પરિયાવેયઁવા’ અન્ન પાણી આદિ બંધ કરીને તથા  
 તડકા આદિમાં શખીને ન પીડા પહોંચાડે. ‘ન કિલામેયઁવા’ બંધનાદિથી ખેદ ન



વિષ શસ્ત્રાદિક સે પ્રાણવિયોગ ન કરે । પ્રાણી, ભૂત, જીવ ઓર સત્ત્વ, યે યદ્યપિ જીવ કે હી પર્યાયવાચી શબ્દ હૈ, ફિર ખી ભિન્નરૂપસે જો इनका यहां पर निर्देश किया है वह पर्यायभेद मान कर ही किया है, और पर्यायभेद से अर्थभेद होता है इसलिये यहां पुनरुक्ति दोषकी संभावना नहीं है । जो इन्द्रियादिक दश प्राणोंको यथासंभव धारण करते हैं वे प्राणी कहलाते हैं । वे त्रस और स्थावरके भेद से दो प्रकारके होते हैं । द्वीन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रियपर्यन्त जीव त्रस, और एकेन्द्रिय-पृथिवीकायादिक जीव स्थावर हैं । ये सब हैं, होंगे एवं हुए हैं, इसलिये भूत कहलाते हैं । ये चौदह प्रकारके हैं । ये सब जीते हैं, आगे भी जीयेंगे और भूतकाल में जीये, इसलिये इनकी 'जीव' संज्ञा सार्थक है । नारकी, तिर्यञ्च, मनुष्य और देवके भेदसे ये चार गतिवाले हैं । तथा ये समस्त ही अपनेर कर्मोदयजन्य सुख दुःखोंकी सत्तावाले होते रहते हैं; इसलिये सत्त्व हैं ।

તીર્થંકર પ્રભુ તત્ત્વોં કી વિવેચના, ભેદ ઓર પર્યાયોં કે દ્વારા કિયા કરતે હૈ, હસ કારણસે પર્યાય-શબ્દોંકા નિર્દેશ કિયા ગયા હૈ । અથવા 'સર્વ જીવોં કે ઉપર અત્યંત દયા રખની ચાહિયે' હસ વાત કો વાર વાર સમજાને કે અભિપ્રાય સે ખી હન પર્યાય શબ્દોંકા કથન હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

પહોંચાડે. 'ન હવેયવા' વિષ શસ્ત્રાદિકથી તેના પ્રાણોનો વિયોગ ન કરે. પ્રાણી, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ, આ બધા શબ્દો જે કે જીવના જ પર્યાય શબ્દો છે તે પણ ભિન્ન ભિન્ન રૂપથી જેઓનો આ ઠેકાણે નિર્દેશ કર્યો છે તે પર્યાયભેદ માનીને જ કર્યો છે, અને પર્યાયભેદથી અર્થભેદ થાય છે, માટે આ ઠેકાણે પુનરુક્તિ દોષની સંભાવના નથી. જે ઇન્દ્રિયાદિક દશ પ્રાણોને યથાસંભવ ધારણ કરે છે તે પ્રાણી કહેવાય છે. તે ત્રસ અને સ્થાવરના ભેદથી બે પ્રકારે હોય છે. બેઇન્દ્રિયથી લઇને પંચેન્દ્રિયપર્યન્ત જીવ ત્રસ, અને એકેન્દ્રિય-પૃથ્વીકાયાદિક જીવ સ્થાવર છે. આ બધા-છે; થશે. તેમજ થએલ છે, તેથી ભૂત કહેવાય છે. તે ચૌદ પ્રકારના છે. એ બધા જીવે છે આગળ પણ જીવશે અને ભૂતકાળમાં જીવ્યા તેથી તેની 'જીવ' સંજ્ઞા સાર્થક છે. નારકી, તિર્યચ, મનુષ્ય અને દેવના ભેદથી એ ચાર ગતિવાળા છે. તથા એ સમસ્ત પોતપોતાનાં કર્મોદયજન્ય સુખ દુઃખોની સત્તાવાળા હોય છે તેથી સત્ત્વ છે.

તીર્થંકરપ્રભુ તત્ત્વોની વિવેચના, ભેદ અને પર્યાયો દ્વારા કરે છે. આ ખ્યાલથી પણ પર્યાય-શબ્દોનો નિર્દેશ કરવામાં આવ્યો છે. અથવા 'સર્વ જીવોની ઉપર અત્યંત દયા રાખવી જોઈએ' આ વાતને વારંવાર સમજાવવાના અભિપ્રાયથી આ પર્યાય-શબ્દોનું કથન છે ॥ સૂ. ૧ ॥

સમ્યક્ત્વમુદ્ઘાવયિતુમ્ આર્હતધર્મસ્ય મહિમાનમાહ—‘એસ ધમ્મે’ ઇત્યાદિ।

મૂલન—એસ ધમ્મે સુદ્ધે નિદ્દેસાસણ સમિચ્છ લોચં ચેય-  
ણ્ણેહિં પવેદ્દેસ, તં જહા—ઉદ્દિણ્ણસુ વા અણુદ્દિણ્ણસુ વા, ઉવદ્દિણ્ણસુ  
વા અણુવદ્દિણ્ણસુ વા, ઉવરયદંડેસુ વા અણુવરયદંડેસુ વા, સોવહિ-  
ણ્ણસુ વા અણોવહિણ્ણસુ વા, સંજોગરણ્ણસુ વા અસંજોગરણ્ણસુ વા। સૂ. ૦. ૨।

છાયા—એષ ધર્મઃ શુદ્ધઃ નિત્યઃ શાશ્વતઃ સમેત્ય લોકં ચેદજ્ઞૈઃ પ્રવેદિતઃ। તદ્  
યથા—ઉત્થિતેષુ વા અનુત્થિતેષુ વા, ઉપસ્થિતેષુ વા અનુપસ્થિતેષુ વા, ઉપરતદણ્ણેષુ  
વા અનુપરતદણ્ણેષુ વા, સોપધિકેષુ વા અનુપધિકેષુ વા, સંયોગરતેષુ વા  
અસંયોગરતેષુ વા ॥ સૂ. ૦. ૨ ॥

ટીકા—એષઃ=અનન્તરોક્તઃ સર્વાર્હદ્ભગવત્પ્રરૂપિતઃ, ધર્મઃ=સર્વપ્રાણિપ્રાણાતિપા-  
તવિરમણાદિરૂપઃ, શુદ્ધઃ=નિર્મલઃ-પાપાનુબન્ધરહિત ઇત્યર્થઃ। આર્હતધર્માદન્યસ્તુ  
ધર્મત્વેન યઃ શાક્યાદેરભિમતઃ સ ચલ્લસર્વજ્ઞસરાગોપદિષ્ટત્વેન હિંસાદિદોષાનુબ-  
ન્ધસદ્ભાવેન ચ ન શુદ્ધ ઇતિ ભાવઃ।

સમ્યક્ત્વકા ઉદ્ઘાવન કરનેકે લિયે જિનેન્દ્રપ્રતિપાદિત ધર્મકી મહિમા  
કહતે હૈં—‘એસ ધમ્મે’ ઇત્યાદિ।

સમસ્ત જીવોં કે ઘાત કરનેકા નિષેધરૂપ યહી ધર્મ—જિસે સમસ્ત  
તીર્થંકરોંને પ્રતિપાદિત કિયા હૈ—પાપાનુબંધ સે રહિત હોનેસે નિર્મલ હૈ,  
ઈસકે અતિરિક્ત બૌદ્ધાદિકોં કા અભિમત જો સિદ્ધાન્ત હૈ વહ હિંસાદિ-  
દોષવિશિષ્ટ હોનેસે નિર્મલ નહીં હૈ; યહ વાત ‘નિર્મલ’ ઇસ પદ સે પ્રકટ  
હોતી હૈ। પશ્ચમહાવિદેહોં મેં સદા વર્તમાન હોને કે કારણ યહ અવિનાશી-  
ધ્રૌવ્યસ્થિતિવાલા હૈ, શાશ્વતગતિ—મોક્ષકા કારણ હોનેસે, અથવા નિત્ય  
હોનેસે યહ શાશ્વત હૈ, અતઃ યહી ધર્મ શ્રદ્ધા કરને યોગ્ય એવં ગ્રહણ કરને

સમ્યક્ત્વ પ્રગટ કરવા માટે જીનેન્દ્ર પ્રતિપાદિત ધર્મનો મહિમા કહે છે—  
‘એસ ધમ્મે’ ઇત્યાદિ.

સમસ્ત જીવોના ઘાત કરવાના નિષેધરૂપ આ જ ધર્મ કે જેને સમસ્ત  
તીર્થંકરોએ પ્રતિપાદિત કર્યો છે, પાપાનુબંધથી રહિત હોવાથી નિર્મળ છે. એનાથી  
અતિરિક્ત બૌદ્ધાદિકોનો અભિમત જે સિદ્ધાન્ત છે તે હિંસાદિદોષવિશિષ્ટ  
હોવાથી નિર્મળ નથી; આ વાત “નિર્મલ” આ પદથી પ્રગટ થાય છે. પશ્ચ-  
મહાવિદેહોમાં સદા વર્તમાન હોવાથી આ અવિનાશી—ધ્રુવસ્થિતિવાળો છે. શાશ્વત-  
ગતિ—મોક્ષનું કારણ હોવાથી, અથવા નિત્ય હોવાથી તે શાશ્વત છે. તેથી આ જ



અત એવૈષ નિત્યઃ=અવિનાશી, સર્વદા પશ્ચસુ મહાવિદેહેષુ સદ્ભાવાત્ । તથા શાશ્વતઃ શાશ્વતગતિકારણત્વાત્, યદ્વા-યતો નિત્યસ્તસ્માચ્છાશ્વતઃ । અયમેવ ધર્મઃ શ્રદ્ધેયો ગ્રાહ્યથેત્યત્ર હેતું પ્રદર્શયન્ વિશેષણાન્તરમાહ-‘સમેત્ય’ ઇત્યાદિ । લોકં=ષડ્જીવનિકાયં દુઃસ્વદાવાનલાન્તઃપતિતં, સમેત્ય=કેવલજ્ઞાનેન પ્રત્યક્ષતયા વિજ્ઞાય, સ્વેદજ્ઞૈઃ=સર્વપ્રાણિદુઃસ્વામિજ્ઞૈસ્તીર્થકરૈઃ, પ્રવેદિતઃ=પ્રતિબોધિતઃ । ધર્મોઽયં મયા ન સ્વમનીષાકલ્પિત ઇતિ ચ સુધર્મસ્વામિના શિષ્યમુદ્દિશ્ય સૂચિતમ્ ।

તીર્થકરાણામુપદેશો યથા ભવતિ, તં પ્રકારમાહ—તદ્ યથેત્યાદિ । યથા=યેન પ્રકારેણ તત્ પ્રતિબોધિતં તત્ પ્રદર્શયામીત્યર્થઃ । ઉત્થિતેષુ વા-ઉત્થિતાઃ=ધર્માચરણાર્થમુદ્યતાઃ, તેષુ વા, તથા-અનુત્થિતેષુ=અનુત્થિતાઃ-તદ્વિપરીતાસ્તેષુ વા । ઉત્થિતાઽનુત્થિતસાધારણસ્તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

યોગ્ય હૈ । યહ અન્ય વિશેષણોં કે દ્વારા खुलासा करते हुए श्रीसुधर्मास्वामी कहते हैं कि-समस्त जीवों के नाना प्रकारके क्लेशोंके ज्ञाता श्री तीर्थङ्कर प्रभुने दुःस्वरूपी दावानलसे जलते हुए इस षड्जीवनिकायस्वरूप लोक को अपने केवलज्ञानसे प्रत्यक्ष कर इसी धर्मका उपदेश दिया है, अतः धर्मके आदि प्रवर्तक श्री तीर्थङ्कर प्रभु ही हैं । इस प्रकार श्रीसुधर्मास्वामी अपने शिष्य जम्बूस्वामीसे सूचित किया है कि मैंने अपनी कल्पना से कुछ भी नहीं कहा है ।

उन तीर्थङ्करोंका उपदेश-प्रवाह जिस एकरूपसे जहां २ बहा उसी को प्रकट करते हुए श्रीसुधर्मास्वामी कहते हैं कि-उनका उपदेश सिर्फ उन्हीं जीवोंके लिये नहीं हुआ जो धर्माचरण करनेमें उत्थित-उद्यत थे, किन्तु जो अनुत्थित-अनुद्यत थे उन्हें भी प्रभुने धर्म समझाया, अर्थात्

ધર્મ, શ્રદ્ધા કરવા યોગ્ય અને ગ્રહણ કરવાયોગ્ય છે, આ વાતનો અન્ય વિશેષણોદ્વારા ખુલાસો કરતાં શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે-સમસ્ત જીવોના નાના પ્રકારના ક્લેશોના જ્ઞાતા શ્રી તીર્થંકરપ્રભુએ દુઃસ્વરૂપી દાવાનળથી બળતાં આ ષડ્જીવનિકાયસ્વરૂપ લોકને પોતાના કેવળજ્ઞાનથી પ્રત્યક્ષ કરીને આ જ ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો છે. એથી આ ધર્મના આદિપ્રવર્તક શ્રી તીર્થંકરપ્રભુ જ છે, આ પ્રકારે શ્રીસુધર્માસ્વામી પોતાના શિષ્ય જંબૂસ્વામીને સૂચિત કરે છે કે-મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી કંઈ પણ નથી કહ્યું.

આ તીર્થંકરોનો ઉપદેશ-પ્રવાહ જે એકરૂપથી જ્યાં જ્યાં થયો તેને જ પ્રકાશિત કરતાં શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે કે-એમનો ઉપદેશ કેવલ તેવા જીવો માટે નથી થયો કે જે ધર્માચરણ કરવામાં ઉદ્યત હતા, કિન્તુ જે જીવો ધર્માચરણ કરવામાં અનુદ્યત હતા તેમને પણ પ્રભુએ ધર્મ સમજાવ્યો. અર્થાત્ એમનો ઉપ-



યદ્વા—દ્રવ્યતઃ યે ઉત્થિતાઃ, અનુત્થિતાઃ, તેષુ તેષુ વા । યથા-ઉત્થિતેષ્વે-  
કાદશસુ ગણધરેષુ શ્રીવર્ધમાનસ્વામિના ભગવતાધર્મ ઉપદિષ્ટઃ । અનુત્થિતેષુ યથા  
ચણ્ડકૌશિકાદિષુ । તથા-ઉપસ્થિતેષુ વા =ધર્મ શ્રોતું ગ્રહીતું વા યે વાઙ્છન્તિ  
તે ઉપસ્થિતાસ્તેષુ વા, યથા ચિલાતિપુત્રાદિષુ । અનુપસ્થિતેષુ વા=તદ્વિપરીતા  
અનુપસ્થિતાઃ તેષુ વા, યથા-ઇન્દ્રનાગાદિષુ, અનિચ્છયાઽપિ શ્રવણેન કર્મપરિણામ-  
વૈચિત્ર્યાત્ તેષાં ક્ષયોપશમસંભવાત્, યથા રોહકચોરસ્ય ક્ષયોપશમઃ સંજાતઃ ।  
ઉપસ્થિતાનુપસ્થિતેષ્વપિ સમાનસ્તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

उनके उपदेशका प्रवाह उभयसाधारण (दोनोंके लिये समान) था । अथवा  
जो जीव धर्माचरण से उस समय बाह्य भी थे, किंतु भगवानके दिव्य उप-  
देशका पान कर जो सुमार्ग में आनेकी योग्यता रखते थे; उन्हें भी प्रभुने  
धर्मका उपदेश दिया । जैसे—ग्यारह (११) गणधर जो द्रव्यतः उत्थित थे  
उन्हें श्रीवर्धमानप्रभुने सद्धर्मका स्वरूप समझा कर सन्मार्गगामी किया ।  
अनुत्थितों में भी इसी प्रकार से प्रभुके उपदेशका प्रवाह बहा है,  
जैसे चण्डकौशिकादिकों में । धर्मको सुननेकी अभिलाषा रखनेवाला  
चिलातिपुत्रादिकोंको, और अनुपस्थित-इससे बहिर्भूत इन्द्रनागा-  
दिकों को भी प्रभुने अपने धर्मके उपदेशका पान कराया है । धर्मके  
जाननेकी अभिलाषा से रहित प्राणी को भी जो धर्म सुनाया जाता  
है उसका कारण यही है कि जिस प्रकार अनिच्छा से पिया हुआ  
भी अमृत अपने गुण को प्रकट करता है उसी प्रकार श्रुतधर्म भी कर्म के  
परिणमनकी विचित्रता से क्षयोपशम का कारण होता हुआ अपना प्रभाव

દેશપ્રવાહ બન્નેને માટે સાધારણ-અસાધાર છે. અથવા જે જીવો ધર્માચરણથી  
તે વખત બહાર પણ હતા, કિન્તુ ભગવાનના દિવ્ય ઉપદેશનું પાન કરીને જે  
સુમાર્ગમાં આવવાની યોગ્યતા રાખતા હતા, તેને પણ ભગવાને ઉપદેશ આપ્યો.  
જેમ ગ્યારહ (૧૧) ગણધરો જે દ્રવ્યથી ઉત્થિત હતા તેઓને શ્રીવર્ધમાન પ્રભુએ  
સદ્ધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવીને સન્માર્ગ તરફ વાળ્યા. અનુત્થિતોમાં પણ આ પ્રકારે  
પ્રભુનો ઉપદેશપ્રવાહ ચાલ્યો છે, જેમ ચંડકૌશિકાદિકોમાં. ઉપસ્થિત-ધર્મને  
સાંભળવાની અભિલાષા રાખવાવાળા ચિલાતિપુત્રાદિકોને, અને અનુપસ્થિત-  
એનાથી બહિર્ભૂત ઇન્દ્રનાગાદિકોને પણ પ્રભુએ પોતાના ધર્મના ઉપદેશનું પાન  
કરાવ્યું છે. ધર્મ સાંભળવાની અભિલાષાથી રહિત પ્રાણીને પણ જે ધર્મ સાંભળા-  
વવામાં આવે છે તેનું કારણ એ જ છે કે જે પ્રકારે અનિચ્છાથી પિવાયેલું પણ  
અમૃત પોતાના ગુણને પ્રગટ કરે છે, તે જ પ્રકારે શ્રુતધર્મ પણ કર્મના  
પરિણમનની વિચિત્રતાથી ક્ષયોપશમનું કારણ થતાં પોતાનો પ્રભાવ પ્રગટ કરે છે.

તથા-ઉપરતદણ્ડેષુ વા-એકેન્દ્રિયાદીન્ પ્રાણિનો દણ્ડયતીતિ દણ્ડો મનોવા-કાયરૂપઃ, ઉપરતો દણ્ડો યેષાં તે ઉપરતદણ્ડાઃ-મુનયઃ, તેષુ વા, તદ્વિપરીતા અનુ-પરતદણ્ડાઃ-ગૃહસ્થાઃ, તેષુ વા । એતદુભયસાધારણોઽપ્યુપદેશસ્તેષામિત્યર્થઃ ।

તથા-સોપધિકેષુ વા ઇતિ । ઉપધીયતે=ગૃહ્યતે ઇત્યુપધિઃ દ્રવ્યતો હિરણ્યસુવ-ર્ણાદિઃ, ભાવતો રાગદ્વેષાદિઃ, સહોપધિના વર્તન્ત ઇતિ સોપધિકા-ભરતાદયસ્તેષુ વા । અનુપધિકેષુ વા=ન વિદ્યતે ઉપધિયેષાં તેઽનુપધિકાઃ-કાષ્ઠહારાદયસ્તેષુ વા । એતદ્વયેઽપિ તીર્થંકરોપદેશઃ સમાન એવ ભવતીત્યર્થઃ ।

પ્રકટ કરતા હૈ । હસ વિષયમેં રોહતક ચોરકા દષ્ટાન્ત શાસ્ત્રોં મેં પ્રસિદ્ધ હી હૈ । હસી પ્રકાર ઉપસ્થિતોં ઓર અનુપસ્થિતોં મેં, ઉપરતદંડવાલોં મેં ઓર અનુપરતદંડવાલોં મેં, સોપધિકોં મેં ઓર નિરુપધિકોં મેં, તથા સંયોગરતોં મેં ઓર અસંયોગરતોં મેં બી પ્રભુકા ધાર્મિક ઉપદેશ એક હી સરીઘા હુઆ હૈ । જો પ્રભુ કા ધાર્મિક ઉપદેશ સુનનેકી અભિલાષાસે સમવસરણ મેં આતે હૈં વે ‘ઉપસ્થિત’ કહલાતે હૈં, ઓર હસસે વિપરીત ‘અનુપસ્થિત’ । એકેન્દ્રિયા-દિક સ્થાવર ઓર દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોં કી હિંસાકે કારણભૂત માન-સિક, વાચિક એવં કાયિક વ્યાપારોં સે જો નિવૃત્ત હો ચુકે હૈં વે ‘ઉપ-રતદણ્ડ’ કહે જાતે હૈં, જૈસે મુનિરાજ । હસસે ઉલ્ટે ‘અનુપરતદણ્ડ’ હૈં જૈસે ગૃહસ્થ । જો ગ્રહણ કી જાવે ઉસે ‘ઉપધિ’ કહતે હૈં । યહ દો પ્રકાર કી હૈ-એક ‘દ્રવ્ય-ઉપધિ’ દૂસરી ‘ભાવ-ઉપધિ’ । ‘દ્રવ્ય-ઉપધિ’-હિરણ્ય-સુવર્ણાદિ, ઓર ‘ભાવ-ઉપધિ’ રાગદ્વેષાદિ હૈં । હસ ઉપધિસે યુક્ત જો હોતે હૈં વે ‘સોપધિક’ જૈસે ભરતાદિક, ઓર હસ ઉપધિસે રહિત જો હૈં

આ વિષયમાં રોહતક ચોરનો દષ્ટાન્ત શાસ્ત્રમાં પ્રસિદ્ધ છે. આ પ્રકારે ઉપસ્થિતો અને અનુપસ્થિતોમાં, ઉપરતદંડવાળામાં અને અનુપરતદંડવાળામાં, સોપધિકોમાં અને નિરુપધિકોમાં, તથા સંયોગરતોમાં અને અસંયોગરતોમાં પણ પ્રભુનો ધાર્મિક ઉપદેશ એક જ સરખો છે. જે પ્રભુનો ધાર્મિક ઉપદેશ સાંભળવાની ભાવનાથી સમવસરણમાં આવે છે તેઓ ‘ઉપસ્થિત’ કહેવાય છે. અને તેનાથી વિપરીત ‘અનુપસ્થિત.’ એકેન્દ્રિયાદિક સ્થાવર અને બેન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોની હિંસાના કારણભૂત માનસિક વાચિક અને કાયિક વ્યાપારોથી જે નિવૃત્ત થઈ ચુકેલાં તે ‘ઉપરતદણ્ડ’ કહેવાય છે, જેમ મુનિઓ. એનાથી ઉલટાં “અનુપરતદણ્ડ” છે, જેમ ગૃહસ્થો. જે ગ્રહણ કરવામાં આવે તેને ‘ઉપધિ’ કહે છે. આ બે પ્રકારની છે. એક દ્રવ્ય-ઉપધિ અને બીજી ભાવ-ઉપધિ. દ્રવ્ય-ઉપધિ હિરણ્યસુવર્ણાદિ અને ભાવ-ઉપધિ રાગદ્વેષાદિ છે. આ ઉપધિસહિત જે હોય છે તે ‘સોપધિક’ જેમ



तथा-संयोगरतेषु वा-संयोगः पुत्रकलत्रादिसम्बन्धस्तस्मिन् रता=आसक्ताः संयोगरताः=गृहस्था देशविरतिश्रावकास्तेषु वा । असंयोगरतेषु-असंयोगः=संयम-स्तत्र रता असंयोगरताः=उपशमश्रेण्यादिसम्पन्नास्तेषु वा । एतदुभयविधेष्वपि समान एव तदुपदेशो भवतीत्यर्थः ।

अयं भावः—तीर्थकराणामुपदेशः सूर्योदय इव प्रबोध्यविशेषमनपेक्ष्य प्रवर्तते, तस्मात् तत्र नास्ति रागद्वेषपक्षपातादिदोषलेशावसर इति ॥ सू० २ ॥

सम्यक्त्वस्य स्वरूपमाह—‘तच्चं’ इत्यादि ।

मूलम्—तच्चं चेयं तथा चेयं अस्मिन् चेयं पवुच्चइ ॥सू०३॥

छाया—तथ्यं चेदं तथा चेदं अस्मिन्चेदं प्रोच्यते ॥सू० ३ ॥

टीका—इदं=भगवद्वचनं तथ्यं च=सत्यमेव । अत्र सूत्रे चकारो नियमार्थः ।

वे ‘निरुपधिक’ हैं, जैसे कठियारादिक । पुत्रकलत्रादिक के मोहमें जो फंसे हुए हैं ऐसे गृहस्थ ‘संयोगरत’ जैसे देशविरति श्रावक, और इनके त्यागी संयमी साधु ‘असंयोगरत’ कहलाते हैं जैसे उपशमश्रेण्यादिसंपन्न । इसका फलितार्थ यही है कि जिस प्रकार सूर्यका उदय ऊंचनीच के पक्षपात से रहित हो कर समस्त जगतको प्रकाश देता है ठीक उसी तरह प्रभुका दिव्य धार्मिक उपदेश भी उत्थित और अनुत्थितादिकों के पक्षपात बिना समस्त जीवोंके हितके लिये एक ही जैसा होता है, कारण कि पक्षपातादिदोषों का कारण रागद्वेष ही है, और प्रभु वीतरागी हैं, इसलिये वे पक्षपातादि दोषों से रहित हैं ॥ सू० २ ॥

सम्यक्त्व के स्वरूप को प्रकट करते हुए श्रीसुधर्मास्वामी कहते हैं—‘तच्चं चेयं’ इत्यादि ।

भगवान् तीर्थङ्कर प्रभुके वे वचन सत्य ही हैं, कारण कि जिन प-

क्षपातदिक अने आ उपधिरहित ने छे ते ‘निरुपधिक’ छे, नेम कठियारादिक. पुत्रकलत्रादिना मोहमां ने इसेवा छे अेवा गृहस्थी ‘संयोगरत’ नेम देशविरति श्रावक. अने तेना त्यागी संयमी साधु ‘असंयोगरत’ कडेवाय छे, नेम उपशम-श्रेण्यादिसंपन्न. अेना लाव अे छे के नेम सूर्यने उदय उंचनीचना पक्षपातथी रहित थधने समस्त जगतने प्रकाश आपे छे ते ज माइक प्रभुने दिव्य धार्मिक उपदेश पणु उत्थित अने अनुत्थितादिकोना पक्षपातथी रहित थधने समस्त लवना हितने माटे अेक ज सरणेा डोय छे, केम के पक्षपातादि दोषोनुं कारण राग-द्वेष ज छे अने प्रभु वीतरागी छे; तेथी ते पक्षपातादिदोषथी रहित छे ॥ सू० २ ॥

सम्यक्त्वना स्वइपने प्रकट करीने श्रीसुधर्मास्वामी कडे छे—‘तच्चं चेयं’ इत्यादि.

भगवान् तीर्थङ्कर प्रभुना ते वचनो सत्य ज छे, कारण के ने पदार्थोनुं ने



ઇદં=તદ્વાક્યાર્થરૂપં વસ્તુ, તથા ચ=તથૈવ-તીર્થંકરભગવદ્ભિર્યથા પ્રરૂપિતં તથૈવ વસ્તુસદ્ભાવોઽપીત્યર્થઃ । એકેન્દ્રિયાદિપશ્ચેન્દ્રિયાન્તાઃ સ્થાવરત્રસરૂપાઃ સર્વે પ્રાણિનો ન હન્તવ્યાઃ, એષ ધર્મઃ શુદ્ધો નિત્યઃ શાશ્વત ઇત્યાદિ યથા પ્રરૂપિતં તદ્વાક્યાર્થોઽપિ તથૈવ વિદ્યતે, તસ્માત્ સત્યમેવેદં વચનમિતિ ભાવઃ । અનેન શ્રદ્ધાનલક્ષણં સમ્યક્ત્વં પ્રરૂપિતમ્ । અસ્મિન્શ્ચેદં પ્રોચ્યતે ઇતિ-ઇદં=શ્રદ્ધાનલક્ષણં સમ્યક્ત્વમ્, અસ્મિન્શ્ચ=આર્હતપ્રવચનવિષય એવ પ્રોચ્યતે=વિધેયતયા પ્રકર્ષણોપદિશ્યતે । કેવલમાર્હત-પ્રવચનવિષયે પુનઃ પુનરતિશયેન વા શ્રદ્ધાનલક્ષણં સમ્યક્ત્વમાસ્થેયમિત્યુપદિશ્યતે તીર્થંકરૈરિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

દાર્થોંકા જિસ સ્વરૂપ કા ભગવાનેને અપની દિવ્યવાણીદ્વારા પ્રતિપાદન કિયા હૈ ઉન પદાર્થોંકા સ્વરૂપ ઓર ઉનકા અસ્તિત્વ ડસી પ્રકાર સે હૈ; અન્યથા નહીં । ઇસ પ્રકારકા તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ સિર્ફ અર્હન્ત પ્રમુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત વચનોંમેં હી વિશ્વાસ રાખને સે જીવોંકો પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

ઇસ સૂત્રમેં ત્રીન વાર “ચ” શબ્દકા પ્રયોગ કિયા હૈ વહ નિયમ કા દ્યોતક હૈ । ઇસસે યહ સમજ્ઞના ચાહિયે કિ ભગવાનેને જો ત્રસ સ્થાવર જીવોંકો નહીં મારનેરૂપ શુદ્ધ, નિત્ય, શાશ્વત ધર્મ કે ઉપદેશરૂપ વચન કહે હૈં વે સત્ય હૈં । કારણ કિ જિન પદાર્થોંકા પ્રતિપાદન પ્રમુને અપની વાણી દ્વારા કિયા હૈ ઉન પદાર્થોંકા સ્વરૂપ ઠીક વૈસા હી હૈ, અર્થાત્—ભગવાન્ કે વચન ઇસલિયે પ્રમાણ હૈં કિ ઉન વચનોંકે પ્રતિપાદ્ય અર્થમેં કિસી મી પ્રકાર સે વિસંવાદાદિક નહીં દેખા જાતા । અર્થ

સ્વરૂપમાં લગવાને પોતાની દિવ્ય વાણીદ્વારા પ્રતિપાદન કર્યું છે તે પદાર્થોંનું સ્વરૂપ અને તેનું અસ્તિત્વ તે પ્રકારનું જ છે; અન્યથા નહિ. આ પ્રકારનું તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ ઇક્ત અર્હતપ્રમુદ્ધારા પ્રતિપાદિત વચનોમાં જ વિશ્વાસ રાખવાથી જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે.

આ સૂત્રમાં જે ત્રણ વાર “ચ” શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તે નિયમનો દ્યોતક છે. તેથી એ સમજવાનું છે કે લગવાને જે ત્રસ સ્થાવર જીવને નહિ મારવારૂપ શુદ્ધ, નિત્ય, શાશ્વત ધર્મના ઉપદેશરૂપ વચન કહ્યું છે તે સત્ય જ છે, કારણ કે જે પદાર્થોંનું પ્રતિપાદન પ્રમુદ્ધે પોતાની વાણીદ્વારા કર્યું છે તે પદાર્થોંનું સ્વરૂપ તેનું જ છે. અર્થાત્ લગવાનું વચન એટલા માટે પ્રમાણ છે કે તે વચનોના પ્રતિપાદ્ય અર્થમાં કોઈ પણ પ્રકારથી વિસંવાદાદિક નથી દેખાતું.

उक्तरीत्या सम्यक्त्वरूपं प्रदर्श्य, तत्प्राप्त्यनन्तरं तत्र स्थिरीकरणाय सम्यग्दृष्टेः कर्तव्यं प्रतिबोधयति—‘ तं आइत्तु ’ इत्यादि ।

मूलम्—तं आइत्तु न निहे न निक्खिखवे जाणित्तु, धम्मं जहा—तहा ॥ सू० ४ ॥

छाया—तत् आदाय न निह्वीत, न निक्षिपेत्, ज्ञात्वा धर्मं यथा—तथा ॥४॥

टीका—तत्=सम्यग्दर्शनापरनामकं सम्यक्त्वम्, आदाय=गृहीत्वा प्राप्येति यावत्, धर्मं=श्रुतचारित्र्यरूपं, यथा—तथा=येन केनापि प्रकारेण गुरूपदेशादिना ज्ञात्वा, यद्वा—धर्मं वस्तुस्वभावं ज्ञात्वा न निह्वीत, सम्यक्त्वं तत्कार्याऽकरणेन नाऽऽच्छादयेदित्यर्थः । प्रशमसंवेगनिर्वेदानुक्रमपादिभिः सम्यक्त्वं प्रकाशयेदिति

की प्रमाणतासे ही वचनमें प्रमाणता आती है । जब प्रतिपाद्य अर्थरूप धार्मिक उपदेश विसंवाद आदि से रहित है तो फिर क्यों नहीं उसके प्रतिपादक वचनों में सत्यता आवेगी? अवश्य ही आवेगी । इस प्रकारकी दृढ़ आस्था ही तत्त्वार्थश्रद्धानरूप सम्यक्त्व है ॥ सू० ३ ॥

पूर्वोक्त रीतिसे सम्यक्त्वका स्वरूप प्रकट कर उसकी प्राप्तिके बाद उसमें सुस्थिर करनेके लिये सम्यग्दृष्टि जीव का कर्तव्य प्रकट करते हुए श्री सुधर्मास्वामी कहते हैं—‘ तं आइत्तु न निहे ’ इत्यादि ।

जीव उस समकित को प्राप्त कर गुरूपदेशादिकरूप जिस किसी भी प्रकारसे श्रुतचारित्र्यरूप धर्म को अथवा वस्तुस्वभावको जान कर उस समकित को आच्छादित नहीं करे और न उसको छोड़े । समकित को प्राप्त कर लेने पर समकित जीव को प्रशम, संवेग, निर्वेद और

अर्थनी प्रमाणताथी न वचनमां प्रमाणता आवे छे. न्यारे प्रतिपाद्य—अर्थरूप धार्मिक उपदेश विसंवाद आदिथी रहित छे तो पछी तेना प्रतिपादक वचनोमां केम सत्यता न आवे? अवश्य न आवे. आ प्रकारनी दृढ़ आस्था न तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप सम्यक्त्व छे ॥ सू० ३ ॥

पूर्वोक्त रीतिथी सम्यक्त्वनुं स्वरूप प्रगट करीने तेनी प्राप्ति पछी तेमां सुस्थिर करवाने माटे सम्यग्दृष्टि लवनुं कर्तव्य प्रगट करतां श्रीसुधर्मास्वामी छोडे छे—‘ तं आइत्तु न निहे ’ इत्यादि.

लव ते समकितने प्राप्त करी गुर्-उपदेश आदि छोड़ पछु प्रकारे श्रुत चारित्र्यरूप धर्मने अथवा वस्तुस्वभावने जानीने ते समकितने छोड़े नाह, अने तेने छोडे पछु नहि. समकित भेजव्या पछी समकिती लवने शम, संवेग निर्वेद

ભાવઃ । ન નિશ્ચિપેદિતિ તત્ સમ્યક્ત્વં ન ત્યજેત્ । યદિ સંસર્ગાદિના મિથ્યાદૃષ્ટ્યો મિથ્યાત્વં સ્થાપયેયુઃ, તદા સ્વાત્મનઃ સામર્થ્યગુણં પ્રકાશયેદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ન નિશ્ચિપેદિતિ—નિશ્લેષણં=છર્દનં વમનમિત્યર્થઃ, યથા કશ્ચિદ્ આચાર્ય સમીપે વ્રતાનિ ગૃહીત્વા પશ્ચાત્ કાલાન્તરે તત્પરતો નિશ્ચિપ્યોત્પવ્રજતિ, પુનરાગત્ય ગૃહ્ણાતિ, તથા ન સમ્યક્ત્વં કદાપિ પરિત્યજેત્, કિંતુ યાવજ્જીવમનુપાલયેદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ધર્મ= યથાઽવસ્થિતં ધર્મં શ્રુતચારિત્રરૂપં, તથા તેનૈવ પ્રકારેણ જ્ઞાત્વા તં શ્રુતધર્મં ચારિત્ર-ધર્મં ચ ન નિશ્ચિપેત્=ન ત્યજેત્ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

અનુકમ્પા આદિ જો સમકિત કે કાર્ય હૈં વે પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં, ઉનસે હી સમકિતકા અસ્તિત્વ જાના જાતા હૈ, અતઃ ઇન કાર્યોં કો કરને સે સમ-કિત કા પ્રકાશ હોતા હૈ, નહીં કરને પર ઉસકા આચ્છાદન હોતા હૈ । યદિ કદાચિત્ મિથ્યાદૃષ્ટિયોં કી સંગતિ મી હો જાવે ઓર વે મિથ્યાત્વ કી ઓર લે જાને કા પ્રયત્ન મી કરે તો મી ઉસ સમય અપની શક્તિ કા પ્રકાશન કર સમકિત કા પરિત્યાગ નહીં કરના ચાહિયે । અથવા જૈસે કોઈ જીવ આચાર્ય કે સમીપ વ્રતોં કો ધારણ કર પશ્ચાત્ કાલાન્તર મેં ઉનકે નિકટ ઉનકા વમન-ત્યાગ કર ચલા જાતા હૈ, ઓર ફિર આકર ઉન્હેં ધારણ કર લેતા હૈ, ઉસ પ્રકાર ઇસ સમ્યક્ત્વકા વમન નહીં કરના ચાહિયે, કિંતુ પ્રાપ્ત હોને પર ઇસકો પ્રયત્નપૂર્વક યાવજ્જીવન પાલતે રહના ચાહિયે । અથવા-સમકિત કે કાર્યરૂપ શ્રુતચારિત્રધર્મ કી જિસ પ્રકાર સે અવસ્થિતિ હૈ ઉસી રૂપસે ઉન્હેં જાન કર ફિર નહીં છોડના ચાહિયે ॥૪॥

અને અનુકમ્પા આદિ જે સમકિતના કાર્ય છે તે પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. તેનાથી જ સમકિતનું અસ્તિત્વ જાણવામાં આવે છે. માટે તે કાર્યોને કરવાથી સમકિતનો પ્રકાશ થાય છે, અને નહિ કરવાથી તે ઢંકાઈ જાય છે, અને કદાચ મિથ્યાદૃષ્ટિ-ઓની સંગત પણ થઈ જાય અને તેને મિથ્યાત્વની તરફ લઈ જવાનો પ્રયાસ પણ કરે તો પણ તે વખત પોતાની શક્તિનો પ્રકાશ કરી સમકિતનો ત્યાગ નહિ કરવો જોઈએ. અથવા જેમ કોઈ જીવ આચાર્યની સમીપ વ્રતોને ધારણ કરીને પછી કાલાન્તરમાં તેની નજીક તેનો વમન-ત્યાગ કરી ચાલ્યો જાય છે અને ફરી આવીને જેમ તેને ધારણ કરી લે છે તે પ્રકારે આ સમ્યક્ત્વનો વમન-ત્યાગ કરવો નહિ જોઈએ, પણ પ્રાપ્ત થયા પછી તેને પ્રયત્નપૂર્વક જાવજીવન-પર્યન્ત પાળતાં રહેવું જોઈએ. અથવા સમકિતના કાર્યરૂપ શ્રુતચારિત્ર ધર્મની જે પ્રકારે અવસ્થિતિ છે તે રૂપમાં તેને જાણીને છોડવું ન જોઈએ ॥સૂ૦ ૪॥



અપરં ચ સમ્યગ્દષ્ટિકતવ્યમાહ—‘દિટ્ઠેહિં’ इत्यादि ।

મૂલમ્—દિટ્ઠેહિં નિવ્વેયં ગચ્છિજ્જા ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—દૃષ્ટેષુ નિવેદં ગચ્છેત્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—દૃષ્ટેષુ=દૃષ્ટિપથસમાગતેષુ એહિકેષ્ટાનિષ્ટશબ્દાદિવિષયેષુ, અસ્યો-પલક્ષણાર્થત્વાત્ સ્વર્ગાદિસમ્બન્ધિષ્વપિ, નિવેદં=વૈરાગ્યં, ગચ્છેત્=કુર્યાદિત્યર્થઃ । યદા યદા-શબ્દાઃ શ્રવણગોચરાઃ, રસા આસ્વાદિતાઃ, ગન્ધા આગ્રાતાઃ, સ્પર્શા વા સ્પૃષ્ટા ભવન્તિ, તદા તદા ભાવયેત્-શબ્દાદયઃ સ્વલુ પુદ્ગલાસ્ત એવ કદાચિત્ પ્રિય-શબ્દાદિરૂપેણ કદાચિદપ્રિયશબ્દાદિરૂપેણ પરિણમન્તે, અતઃ તેષુ પુદ્ગલપરિણા-ણામરૂપેષુ કો રાગઃ કશ્ચ વા દ્વેષ इति ॥ સૂ૦ ૫ ॥

और भी सम्यग्दृष्टिका कर्तव्य कहते हैं—‘दिट्ठेहिं’ इत्यादि ।

દૃષ્ટ પદાર્થોં મેં નિવેદ-દૃષ્ટાનિષ્ટ શબ્દાદિ વિષયોંમેં વિરક્તભાવ હો, સંસાર કે જિતને મી મનોજ્ઞ ઓર અમનોજ્ઞ પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયભૂત શ-બ્દાદિ પદાર્થ હેં ઉનમેં સમ્યગ્દષ્ટિ જીવકો વિરક્ત ભાવ રાખના ચાહિયે, કારણ કિ યે શબ્દાદિ સબ પૌદ્ગલિક હેં । જો કમી મનોજ્ઞ પ્રતીત હોતે હેં વે હી કાલાન્તર મેં અમનોજ્ઞ રૂપસે મી પરિણમિત હોતે હુએ દેસે જાતે હેં । અથવા જો એક કી અપેક્ષા મનોજ્ઞ હેં વે હી દૂસરે કી અપેક્ષા અમનોજ્ઞ હો જાતે હેં । નિમ્બ હમારી અપેક્ષા અમનોજ્ઞ હૈ પરન્તુ ઝૂંટકી અપેક્ષા મનોજ્ઞ હૈ । ફલિતાર્થ યહી હૈ કિ સંસાર ક્રા કોઈ મી પદાર્થ સર્વથા ન મનોજ્ઞ હૈ ન અમોજ્ઞ હૈ, મનકી કલ્પનાશક્તિ હી ઉસકો મનોજ્ઞ ઓર અમનોજ્ઞ રૂપસે જ્ઞાન કરાતી હૈ, અતઃ ઉનમેં રાગ દ્વેષ કરના સમકિતી જીવકા કર્તવ્ય

બીજું પણુ સમ્યગ્દષ્ટિનું કર્તવ્ય કહે છે—“દિટ્ઠેહિં” . ઇત્યાદિ.

દેખીત પદાર્થોંમાં નિવેદ-દૃષ્ટ અને અનિષ્ટ શબ્દાદિ નિષયોંમાં વિરક્તભાવ હોય, સંસારના જેટલા પણુ મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પંચેન્દ્રિયોના વિષયભૂત શબ્દ આદિ પદાર્થ છે તેમાં સમ્યગ્દષ્ટિ જીવને વિરક્તભાવ રાખવો જોઈએ, કારણ કે એ બધા પૌદ્ગલિક છે. જે કોઈ વખત મનોજ્ઞ પ્રતીત થાય છે તે જ કાલાન્તરમાં અમ-નોજ્ઞરૂપથી પણુ પરિણમિત થતાં દેખવામાં આવે છે. અથવા જે એકની અપેક્ષા મનોજ્ઞ છે, તે બીજાની અપેક્ષા અમનોજ્ઞ થઈ જાય છે. લીંબડો આપણી અપેક્ષાએ મનોજ્ઞ છે, પરંતુ ઊંટની અપેક્ષાએ મનોજ્ઞ છે. ફલિતાર્થ એ છે કે સંસારનો કોઈ પણુ પદાર્થ સર્વથા મનોજ્ઞ પણુ નથી તેમજ અમનોજ્ઞ પણુ નથી. મનની કલ્પના-શક્તિ જ તેને મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પ્રતિજ્ઞાપિત કરાવે છે, માટે તેમાં રાગદ્વેષ કરવો તે સમકિતી જીવનું કર્તવ્ય નથી. એ જ પ્રકારે સ્વર્ગાદિક સુખોની

કિંચ—“ નો લોગસ્સે. ” ત્યાદિ ।

મૂલમ્—નો લોગસ્સેસણં ચરે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—નો લોકસ્યૈષણાં ચરેત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—લોકસ્ય પ્રાણિવર્ગસ્ય, ઇષણામ્—ઇષણા=અનુકૂલેષુ શબ્દાદિવિષયેષુપા-

નહીં હૈ । ઇસી પ્રકાર સ્વર્ગાદિક સુખોંકી વાઙ્છા કરના મી સમકિતીકે લિયે યોગ્ય નહીં । અનુકૂલ શબ્દોં કે સુનને સે હર્ષિત હોના, એવં પ્રતિકૂલ શબ્દોં કે સુનને સે દુઃખિત હોના, સ્વાદિષ્ટ રસાદિકોં કે મિલનેસે આનન્દ માનના, ઔર પ્રતિકૂલ રસાદિકોંકી પ્રાપ્તિમેં આકુલિત હો જાના, સુગન્ધિત પદાર્થોં કે સૂંઘને મેં પ્રેમ પ્રદર્શિત કરના, ઔર દુર્ગન્ધિત વસ્તુઓં પર અરુચિ રખના, કોમલાદિ સ્પર્શોં મેં પ્રમુદિતમન હોના, એવં કઠિનાદિ સ્પર્શોં કે હોને પર મ્લાનવદન હોના; યહ સમકિતી કે લિયે સર્વથા અયોગ્ય હી હૈ । સમકિતી તો સમદૃષ્ટિ હોતા હૈ । ઇસ તરહ કી રાગદ્વેષમયી વિષમદૃષ્ટિ ડસમેં નહીં હોની ચાહિયે । પ્રતિકૂલ ઔર અનુકૂલ શબ્દાદિકોં કી પ્રાપ્તિ મેં ડસે યહી ભાવના કરની ચાહિયે કિ યે સબ પુઙ્ગલ કી પર્યાયેં સદા બદલતી રહતી હૈ—પર્યાયેં સ્થિરરૂપ નહીં હૈ, અતઃ ઇન અસ્થિર પર્યાયોં મેં રાગ કરનેસે ઔર દ્વેષ રખને સે મુઝે કૌનસા લાભ હો સકતા હૈ ? ॥ સૂ૦ ૫ ॥

તથા—‘ નો લોગસ્સ ’ ઇત્યાદિ ।

સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ લોકૈષણા ન કરે, જિસ પ્રકાર લોક, અનુકૂલ

ધર્મશા પણુ સમકિતીને માટે યોગ્ય નથી. અનુકૂળ શબ્દ સાંભળીને હર્ષિત થવું, અને પ્રતિકૂળ શબ્દ સાંભળીને દુઃખી થવું, સ્વાદિષ્ટ રસાદિક મળવાથી આનન્દ માનવો, અને પ્રતિકૂળ રસાદિકથી વ્યાકુળ થવું, સુગન્ધિત પદાર્થોના સૂંઘવામાં પ્રેમ દેખાડવો અને દુર્ગન્ધિત વસ્તુઓ ઉપર અરુચિ રાખવી, કોમલાદિ સ્પર્શમાં આનન્દિત થવું અને કઠણ આદિ સ્પર્શોમાં મોઢું બગાડવું; આ બધું સમકિતીને માટે સર્વથા અયોગ્ય જ છે, સમકિતી તો સમદૃષ્ટિ હોય છે. આવા પ્રકારની રાગદ્વેષવાળી વિષમદૃષ્ટિ તેને હોવી જોઈએ નહિ. પ્રતિકૂળ અને અનુકૂળ શબ્દ વિગેરેમાં તેણે ભાવના રાખવી જોઈએ કે આ બધા પર્યાયો છે. પર્યાય સદા બદલાતી જ રહે છે, પર્યાય સ્થિરરૂપ નથી, માટે આ અસ્થિર પર્યાયોમાં રાગ કરવાથી અને દ્વેષ રાખવાથી મને શું લાભ થવાનો છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

તથા—‘ નો લોગસ્સ ’ ઇત્યાદિ.

સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ લોકૈષણા કરે નહિ, અર્થાત્—જે પ્રકારે લોક, અનુકૂળ શબ્દો

દેયબુદ્ધિઃ, પ્રતિકૂલેષુ હેયબુદ્ધિસ્તાં ન ચરેત્=ન કુર્યાત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

લોકૈષણાચરણસ્ય ફલમાહ—“જસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ । યદ્વા-સમ્યક્ત્વા-  
લાભે સમ્યગ્જ્ઞાનં ન ભવતીત્યાહ—‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જસ્સ નત્થિ ઇમા જાઈ અણ્ણા તસ્સ કઓ સિયા ॥ ૭ ॥

છાયા—યસ્ય નાસ્તિ ઇયં જાતિઃ અન્યા તસ્ય કુતઃ સ્યાત્ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

દીકા—યસ્ય સાધોઃ ઇયં જાતિઃ=લોકૈષણાબુદ્ધિઃ નાસ્તિ, તસ્ય અન્યા=અન્ય-  
વિધા સાવધવ્યાપારપ્રવૃત્તિઃ કુતઃ સ્યાત્ । ભોગેચ્છા હિ લોકૈષણા, તત્પરિત્યાગેન  
સાવધક્રિયાસુ પ્રવૃત્તિર્નોપજાયતે, ઇતિ ભાવઃ ।

શબ્દાદિકોં મેં ઉપાદેય-બુદ્ધિ એવં પ્રતિકૂલ વિષકણ્ડકાદિકોં મેં હેય-બુદ્ધિ  
રખતે હૈં’ ઉસ પ્રકાર સમકિતી જીવકો અનુકૂલ પદાર્થોં મેં ઉપાદેય-બુદ્ધિ  
ઔર પ્રતિકૂલ પદાર્થોં મેં હેયબુદ્ધિ નહીં રખની ચાહિયે, અપિ તુ મધ્યસ્થ-  
ભાવ રખના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

લોકૈષણા કા ફલ કહતે હૈં—‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ પ્રકાર લોકૈષણા કી બુદ્ધિ રખનેવાલે જીવકે સાવધ વ્યાપારોં  
સે નિવૃત્તિ નહીં હો સકતી હૈ । ભોગેચ્છારૂપ હી લોકૈષણા હૈ । જિસ  
સાધુ કો ઇસ પ્રકારકી લોકૈષણા નહીં હૈ’ ઉસકી પ્રવૃત્તિ શબ્દાદિ વિષયોં  
મેં નહીં હોતી હૈ । અનુકૂલ પ્રતિકૂલ પદાર્થોં મેં હેયોપાદેયબુદ્ધિ રખનેવાલા  
વ્યક્તિ નિયમતઃ ઇસ પ્રકાર કે કાર્યોં મેં પ્રવૃત્તિ કર અપની મનોવૃત્તિકો  
દૂષિત કિયા કરતા હૈ, જબકિ સમકિતી નિરન્તર અપની પ્રવૃત્તિ કો  
નિર્મલ બનાને કી હી કોશિશ મેં રહતા હૈ, અતઃ ઇસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ

આદિમાં ઉપાદેય બુદ્ધિ અને પ્રતિકૂળ વિષ કાંટા વિગેરેમાં હેયબુદ્ધિ રાખે છે તે પ્રમાણે  
આ સમકિતી જીવને અનુકૂળ પદાર્થોમાં ઉપાદેયબુદ્ધિ અને પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં  
હેયબુદ્ધિ રાખવી જોઈ એ નહિ, બલકે મધ્યસ્થ ભાવ રાખવો જોઈ એ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

લોકૈષણાનુ’ ક્કણ કહે છે—‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ.

આ પ્રકારની લોકૈષણાની બુદ્ધિ રાખવાવાળા જીવને વ્યાપારમાંથી નિવૃત્તિ  
થતી નથી. ભોગેચ્છારૂપ જ લોકૈષણા છે. જે સાધુને આ પ્રકારની લોકૈષણા નથી  
થતી તેની પ્રવૃત્તિ શબ્દ આદિ વિષયોમાં થતી નથી. અનુકૂળ પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં  
હેય-ઉપાદેય-બુદ્ધિ રાખવાવાળા જીવ નિયમથી આ પ્રકારના કાર્યોમાં પ્રવૃત્તિ  
કરીને પોતાની મનોવૃત્તિને દૂષિત કર્યા કરે છે, જ્યારે સમકિતી હમેશા પોતાની  
પ્રવૃત્તિને નિર્મળ બનાવવાની મહેનત કર્યા કરે છે, માટે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ



યદ્વા-ઇયમ્=ઉપક્રાન્તા, જ્ઞાતિઃ=સમ્યક્ત્વરૂપા પરિણતિઃ, યસ્ય નાસ્તિ, તસ્યા-  
ન્યા=વિવેકિની પરિણતિઃ સાવધાનુષ્ઠાનપરિહારકારિણી કુતઃ સ્યાદિત્યર્થઃ ॥સૂ.૦૭॥

સમ્યક્ત્વે શિષ્યમતિસ્થિરીકરણાર્થં પુનરાહ-‘દિટ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ-દિટ્ઠં સુયં મયં વિણ્ણાયં જં ઇયં પરિકહિજ્જઈ ॥સૂ.૦૮॥

છાયા-દૃષ્ટં શ્રુતં મતં વિજ્ઞાતં યદેતત્ પરિકથ્યતે ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા-યદેતત્ સમ્યક્ત્વં મયા પરિકથ્યતે, તત્ દૃષ્ટં=તીર્થકરૈઃ કેવલાલો-  
કેનાવલોકિતમ્, તતઃ શ્રુતં=ગણધરાદિભિઃ શ્રવણવિષયીકૃતં, મતં=લઘુકર્મણાં  
મનોવૃત્તિ કો દૂષિત કરનેવાલી હોને સે હી સમકિતી કે લિયે હેય  
બતલાઈ ગઈ હૈ ।

અથવા-‘સમ્યક્ત્વ કી અપ્રાપ્તિ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ’  
ઇસ વાત કો બી ઇસી સૂત્ર મેં કહતે હૈ-‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

જિસ જીવકે પાસ સમ્યક્ત્વપરિણતિ નહીં હૈ ઉસકો સાવધ વ્યા-  
પારોંસે હટાનેવાલી વિવેકપરિણતિ બી કૈસે હો સકતી હૈ? અર્થાત્ નહીં  
હો સકતી હૈ ॥ સૂ. ૭ ॥

સમ્યક્ત્વમેં શિષ્યકી બુદ્ધિકો દૃઢ કરને કે લિયે સુધર્માસ્વામી ફિરસે  
કહતે હૈ-‘દિટ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ ।

જિસ સમકિતકા મૈને વર્ણન કિયા હૈ વહ દૃષ્ટ, શ્રુત, અનુમત ઓર  
વિજ્ઞાત હૈ । યહાં પર સુધર્માસ્વામી સમકિતકે વિષયમેં યુલાસા કરતે  
હુઈ કહતે હૈ કિ-હે જમ્બૂ ! જિસ સમકિતકા યહાં વર્ણન કિયા ગયા હૈ  
વહ મૈને અપની બુદ્ધિ સે નહીં કહા હૈ; કિંતુ ‘દૃષ્ટ’-તીર્થકુરોં ને ઉસકા

મનોવૃત્તિને દૂષિત કરવાવાળી હોવાથી જ સમકિતીને માટે હેય છે, એમ કહ્યું છે.

અથવા સમ્યક્ત્વની અપ્રાપ્તિમાં સમ્યગ્જ્ઞાન થતું નથી. આ વાતને પણ આ  
સૂત્રમાં કહે છે-‘જસ્સનત્થિ’ ઇત્યાદિ.

જે જીવની પાસે સમ્યક્ત્વપરિણતિ નથી તેને સાવધ વ્યાપારોથી દૂર  
કરવાવાળી વિવેકપરિણતિ પણ કેવી રીતે થઈ શકે? અર્થાત્ થઈ શકતી નથી ॥સૂ.૦૭॥

સમ્યક્ત્વમાં શિષ્યની બુદ્ધિને દૃઢ કરવાને માટે સુધર્માસ્વામી ફરીથી કહે  
છે-‘દિટ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ.

જે સમકિતનું મેં વર્ણન કર્યું છે તે દૃષ્ટ, શ્રુત, અનુમત અને વિજ્ઞાત છે.

આ ઠેકાણે સુધર્માસ્વામી સમકિતવિષયમાં યુલાસો કરીને કહે છે કે-હે જમ્બુ !

જે સમકિતનું આ ઠેકાણે વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે મેં પોતાની બુદ્ધિથી  
નથી કર્યું; પણ ‘દૃષ્ટ’ તીર્થકરોએ તેનો પોતાના કેવળજ્ઞાનરૂપી પ્રકાશથી સાક્ષા-

भव्यानां मतं, विज्ञातं=ज्ञानावरणीयक्षयोपशमात्, अतः सम्यक्त्वलाभे तद्रक्षणे च प्रयतितव्यमित्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

ये तु सम्यक्त्वमुपेक्षन्ते तेषामनन्तदुःखमयी संसारगतिर्नैव विरमतीत्याह—  
'समेमाणा पलेमाणा' इत्यादि ।

मूलम्—समेमाणा पलेमाणा पुणो पुणो जाइं पकप्पंति ॥सू० ९॥

छाया—समायन्तः प्रलीयमानाः पुनः पुनर्जातिं प्रकल्पयन्ति ॥सू० ९॥

टीका—समायन्तः=समागच्छन्तः=आर्हतागमविषये श्रद्धानलक्षणसम्यक्त्वा-  
करणेन मातापित्रादिभिः सह संसारसम्बन्धं कुर्वन्तः, प्रलीयमानाः=मृत्युवशाद्  
मातापित्रादिभ्यो वियुज्यमानाः, यद्वा—प्रलीयमानाः=शब्दादिविषयेषु समासक्तिं  
कुर्वाणाः पुनः पुनः=अनन्तशः जातिम्=एकेन्द्रियादिरूपां प्रकल्पयन्ति । सम्यक्त्व-  
मनवाप्ताः संसारदुःखतो न मुच्यन्त इति भावः ॥ सू० ९ ॥

अपने केवलज्ञानरूपी प्रकाश से साक्षात्कार किया है, 'श्रुतं'—गणधरा-  
दिकोंने उनसे सुना है, 'मतं'—हलुकर्मी भव्योंने उसे माना है, और  
'विज्ञातम्'—अपने ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशमानुसार उन्होंने इसे  
जाना है, अतः सम्यक्त्वका लाभ होने पर उस की रक्षा करने में सदा  
सावधान रहना चाहिये ॥सू० ८॥

जो व्यक्ति इस सुन्दर समकितके प्रति उपेक्षा भाव रखता है उसके  
इस अनन्त दुःखरूप संसारका अन्त नहीं आता, यही बात कहते हैं—  
"समेमाणा" इत्यादि ।

जो प्राणी प्रभुप्रतिपादित आगमकी श्रद्धारूप इस समकितसे शून्य  
रहता है वह संयोग वियोग को पाता हुआ जन्म मरण कर बारंबार एके-  
न्द्रियादिक भवों में भटकता फिरता है ।

તકાર કર્યો છે. 'શ્રુતં' ગણધરાદિકોએ તેમનાથી સાંભળ્યું છે. 'મતં' હલુકર્મી  
ભવ્યોએ તે માન્યું છે, અને 'વિજ્ઞાતમ્' પોતાના જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપ-  
શમ અનુસાર તેઓને તેમણે બહુમાં છે, તેથી સમ્યક્ત્વનો લાભ થઈ ગયા પછી  
તેની રક્ષા કરવામાં હમેશાં સાવધાન રહેવું જોઈએ ॥ સૂ. ૮ ॥

જે છવ આ સુંદર સમકિત પ્રત્યે ઉપેક્ષાભાવ રાખે છે તેનો આ અનંત  
દુઃખરૂપ સંસારનો અંત આવતો નથી. આ વાત કહે છે—'સમેમાણા' ઇત્યાદિ.

જે પ્રાણી પ્રભુપ્રતિપાદિત આગમની શ્રદ્ધારૂપ આ સમકિતથી શૂન્ય રહે  
છે તે સંયોગ-વિયોગને મેળવતો જન્મ મરણ કરીને વારંવાર એકેન્દ્રિયાદિક  
ભવોમાં ભટકતો ફરે છે.



યથેવં તતઃ કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—“અહો ય રાઓ ય” ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—અહો અ રાઓ ય જયમાણે ધીરે સયા આગયપણાણે પમત્તે બહિયા પાસ અપ્પમત્તે સયા પરિક્કમિજ્જાસિ—ત્તિવેમિ ।સૂ૧૦।

॥ પદમો ઉદેસો સમત્તો ॥ ૪-૧ ॥

છાયા—અહશ્ચ રાત્રિં ચ યતમાનો ધીરઃ સદા આગતપ્રજ્ઞાનઃ પ્રમત્તાન્ બહિઃ પદ્ય, અપ્રમત્તઃ સદા પરાક્રમેથાઃ, ઇતિ બ્રવીમિ ॥ મૂ. ૧૦ ॥

॥ પ્રથમ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥

ટીકા—અહશ્ચ રાત્રિં ચ=અહર્નિશં, યતમાનઃ=મોક્ષપ્રાપ્તયે સમુદ્યુક્તઃ, ધીરઃ=મિથ્યાદૃષ્ટિભિઃ સંસર્ગાદિના સ્થાપિતેઽપિ મિથ્યાત્વે વિશુદ્ધિપરિણામધારામનવરુ-

જો પ્રાણી હસ સમકિત કે લાભસે વંચિત રહતા હૈ વહ અનન્ત કાલ તક અનન્ત વાર માતા-પિતાકે સાથ ‘યે મેરે માતા-પિતા હૈ, મૈં હનકા પુત્ર હૂં’ હસ પ્રકારકા સંબંધ કરતા હૈ, ઔર અન્તમેં મૃત્યુકા ગ્રાસ બનકર એકેન્દ્રિયાદિક કુયોનિયોં મેં ભ્રમણ કરતા હૈ ।

અથવા શબ્દાદિવિષયોં મેં આસક્તિ ધારણ કર અનન્તવાર એકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોં મેં ઉત્પન્ન હોતા રહતા હૈ, તથા વહાંકે અનન્ત કષ્ટોંકો સહન કરતા રહતા હૈ । અર્થાત્-અસમ્યક્ત્વી જીવ સંસાર કે દુઃખસે કમી ખી છુટકારા કહીં પાતા ॥ સૂ. ૧. ॥

અગર એસા હો તો કયા કરના ચાહિયે ? સો કહતે હૈ—‘અહો ય રાઓ ય’ ઇત્યાદિ ।

હે જમ્બૂ ! તુમ અહર્નિશ મોક્ષપ્રાપ્તિકે લિયે પ્રયત્નશીલ બનો, ઔર ધીર વીર બન કર સદા ઉત્તરોત્તર હેયોપાદેયકે વિવેક સે વિશિષ્ટ

જે પ્રાણી આ સમકિતના લાભથી વંચિત રહે છે તે અનંતકાળસુધી અનંતી વાર માતા-પિતાની સાથે ‘આ મારા માતા-પિતા છે, હું એમનો પુત્ર છું’ આ પ્રકારના સંબંધ કરે છે, અને છેવટમાં મરીને એકેન્દ્રિયાદિક કુયોનિયામાં ભ્રમણ કરે છે. અથવા શબ્દ આદિ વિષયોમાં આસક્તિ ધારણ કરી અનંતીવાર એકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તથા ત્યાંના અનંત દુઃખોને સહન કરતો રહે છે. અર્થાત્-અસમ્યક્ત્વી જીવ સંસારના દુઃખોથી કચારે પણ છુટતો નથી. ॥સૂ.૦૬॥

જે આ પ્રમાણે છે તો શું કરવું જોઈએ ? તે કહે છે—‘અહો ય રાઓ ય’ ઇત્યાદિ.

હે જમ્બૂ ! તમે અહર્નિશ મોક્ષપ્રાપ્તિને માટે પ્રયત્નશીલ બનો, અને ધીર વીર બનીને હમેશાં ઉત્તરોત્તર હેયોપાદેયના વિવેકથી વિશિષ્ટ બનીને અસંયમી



न्धानः, अत एव सदा=सर्वस्मिन् काले, आगतप्रज्ञानः=उत्तरोत्तरप्रवर्धमानहेयो-  
पादेयविवेकपरिणामः सन्, प्रमत्तान्=असंयतान्, बहिः=आर्हतधर्माद्बहिरवस्थि-  
तान् अलब्धसम्यक्त्वान् इति यावत्, पश्य। दृष्ट्वा च अप्रमत्तः=पञ्चविधप्रमादरहितः  
सन् सदा=अविच्छेदेन पराक्रमेयाः=मोक्षतरुबीजस्य सम्यक्त्वस्य लाभार्थं रक्षणार्थं च  
हो कर असंयमी जीवों के संसर्ग से सदा दूर रहो। एवं स्वकर्तव्य में  
अप्रमत्त हो सम्यग्दर्शन की प्राप्ति और उसका रक्षण करने के लिए, अथवा  
कर्म शत्रुओं पर विजय पाने के लिये कटिबद्ध रहो। हे जम्बू! मैंने जैसा  
भगवान से सुना है वैसा ही तुम्हें कहता हूँ।

इस सूत्रमें जम्बूस्वामीको संबोधन करते हुए श्रीसुधर्मास्वामी  
कहते हैं कि—हे जम्बू! जब प्रत्येक प्राणीका लक्ष्य मोक्षकी प्राप्ति करनेका  
है तो उसका यह प्रधान कर्तव्य है कि वह सर्वप्रथम सम्यग्दर्शन की  
प्राप्ति करनेके लिये अहर्निश—सदा कटिबद्ध रहे, कारण कि—एक तो  
इसके अभाव में मुक्ति की प्राप्ति नहीं हो सकती, दूसरे सांसारिक  
अनन्त कष्टों का अन्त भी नहीं आ सकता। यद्यपि यह बात निश्चित  
है कि मिथ्यादृष्टि जीव अपने संसर्ग से मिथ्यात्वकी स्थापना करनेमें  
कसर नहीं रखते हैं तो भी भव्य जीवका कर्तव्य है कि वह ऐसे समयमें  
अपनी विशुद्ध परिणामधाराको न रोके; किन्तु परिणामों में विशुद्धता  
जिस प्रकारसे बढे उस प्रकार से उसको बढ़ाने का उत्तरोत्तर प्रयत्न करता

लुपोना संसर्गं सदा दूर रहो, अने स्वकर्तव्यमां अप्रमत्त थाव, सम्यग्दर्शननी  
प्राप्ति अने तेना रक्षणने माटे, अथवा कर्मशत्रुओ उपर विजय भेगवाने  
माटे कटिबद्ध रहो। हे जम्बू! मे' जेम लगवान पासेथी सांलज्यु' छे तेम  
तमने कहुं छुं.

आ सूत्रमां जम्बूस्वामीने संबोधन करीने श्रीसुधर्मास्वामी कहे छे के—  
हे जम्बू! ज्यारे दरेक प्राणीनुं लक्ष मोक्षनी प्राप्ति करवानुं छे तो तेनुं जे  
मुष्ण कर्तव्य छे के पड़ेलां सम्यग्दर्शननी प्राप्ति करवाने माटे उमेशां तैयार  
रहे, कारण के अेक तो तेना अलावमां मुक्तिनी प्राप्ति थती नथी, तेमज्जणीनुं  
सांसारिक अनंत दुःखोनो अंत पणु नथी आवतो. जे के आ बात निश्चित छे  
के मिथ्यादृष्टि लुव पोताना संसर्गंथी मिथ्यात्वनी स्थापना करवामां कसर राखतो  
नथी, तो पणु लव्य लुवनुं कर्तव्य छे के ते आवा समयमां पोतानी विशुद्ध  
परिणामधाराने न रोकी राखे; पणु परिणामोमां विशुद्धता जे प्रकारे वधे ते प्रकारे,  
तेने वधारवामां उत्तरोत्तर प्रयत्न करता रहे. जेनाथी डेयोपादेयनो विवेक जगशे

વિશુદ્ધિપરિણામપ્રકર્ષે સોત્સાહં પ્રયત્નમાનો ભવ । યદ્વા-પરાક્રમેથાઃ=અષ્ટવિધકર્મશ-  
ત્રૂન્ વિજેતું વિશુદ્ધિપરિણામપ્રકર્ષેણ વીર્યગુણસામર્થ્યમુદ્ઘાવયેત્યર્થઃ । ઇતિ=અધિ-  
કારપરિસમાપ્તૌ, બ્રવીમિ=ભગવન્મુખાદ્યથા શ્રુતં તથા કથયામીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

॥ ઇતિ ચતુર્થાધ્યયને પ્રથમ ઉદ્દેશઃ સંપૂર્ણઃ ॥ ૪-૧ ॥

રહે । इससे हेयोपादेयका विवेक जागृत होगा और इस विवेकबुद्धिसे वह यह समझ सकेगा कि 'जो समकितसे शून्य हैं वे इस धर्मसे बहिर्भूत हैं अतः मैं भी पांच प्रकारके प्रमादोंका त्याग कर मोक्षतरु का बीज-स्वरूप समकितकी प्राप्ति करनेमें, और प्राप्त समकित की रक्षा करनेमें कारणभूत विशुद्ध परिणाम धाराके बढ़ानेमें सदा यत्न करता रहूँ।' अथवा 'इस अनन्त संसारमें अनन्तकष्टप्रदाता कर्मरूप शत्रु ही हैं; अतः इन्हें परास्त करनेके लिये भी मैं अपने भीतर विशुद्ध परिणामोंकी धारा बहा कर वीर्यगुणस्वरूप अपनी शक्तिका विकास करूँ तो अवश्य ही सफलता प्राप्त कर लूँगा' इस प्रकार सदा उस भव्य जीव को उत्साहित रहना चाहिये ॥ सू. १० ॥

॥ चतुर्थ अध्ययन का प्रथम उद्देशक संपूर्ण ॥ ४-१ ॥

અને આ વિવેકબુદ્ધિથી તે એ સમજી શકશે કે 'જે સમકિતથી શૂન્ય છે તે આ ધર્મથી બહિર્ભૂત છે, તેથી હું પણ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદોને ત્યાગીને મોક્ષવૃક્ષના બીજસ્વરૂપ સમકિતની પ્રાપ્તિ કરવામાં, અને મેળવેલાં સમકિતની રક્ષા કરવામાં કારણભૂત વિશુદ્ધ પરિણામધારાને વધારવામાં હમેશાં યત્ન કરતો રહું.' અથવા- 'આ અનન્ત સંસારમાં અનન્ત દુઃખ આપવાવાળા કર્મરૂપ શત્રુ જ છે, તેનો પરાજય કરવાને માટે પણ મારા અંતરની વિશુદ્ધ પરિણામોની ધારા વહાવીને વીર્યગુણ-સ્વરૂપ મારી શક્તિનો વિકાસ કરું તો અવશ્ય સફળતા પ્રાપ્ત થશે.' એવા પ્રકારે હમેશાં ભવ્ય જીવે ઉત્સાહી રહેવું જોઈએ. ॥ સૂ. ૧૦ ॥

એવા અધ્યયનનો પ્રથમ ઉદ્દેશ સંપૂર્ણ ॥ ૪-૧ ॥





## ॥ अथ चतुर्थाध्ययनस्य द्वितीय उद्देशः ॥

इहानन्तरप्रथमोद्देशके सम्यग्दर्शनं प्रतिबोधितम् । तच्च नवतत्त्वश्रद्धानात्मकम् । तत्र—किं तत्त्वं संसारकारणं ? किं च मोक्षकारणम् ? इत्युभयोर्निर्णयमन्तरेण मुमुक्षोः सम्यग्दर्शनं न संभवतीत्यतः सम्यक्त्वप्रतिबोधनप्रसङ्गागते आस्रवनिर्जरे संसार-मोक्षहेतुभूते प्रतिबोधयितुमाह—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

मूलम्—जे आसवा ते परिस्सवा, जे परिस्सवा ते आसवा ।

जे अणासवा ते अपरिस्सवा, जे अपरिस्सवा ते अणासवा ॥सू०१॥

छाया—ये आस्रवास्ते परिस्सवाः, ये परिस्सवास्ते आस्रवा ।

ये अनास्रवास्ते अपरिस्सवाः, ये अपरिस्सवास्ते अनास्रवाः ॥ सू० १ ॥

## ॥ चौथे अध्ययन का दूसरा उद्देश ॥

सम्यक्त्व नामक चतुर्थ अध्ययनके प्रथम उद्देशकमें सम्यग्दर्शन का स्वरूप समझा दिया गया है । वहां यह कहा गया है कि—वह सम्यग्दर्शन नव तत्त्वों की श्रद्धास्वरूप है । वे नवतत्त्व ये हैं—१ जीव, २ अजीव, ३ पुण्य, ४ पाप, ५ आस्रव, ६ संवर, ७ निर्जरा, ८ बन्ध और ९ मोक्ष । मोक्षाभिलाषी को जब तक यह निश्चय नहीं हो जाता कि इनमें से कौनसा तत्त्व संसारका कारण है और कौनसा मोक्षका, तब तक उसके समकित की प्राप्ति नहीं हो सकती, अतः उसके लिये इस सम्यक्त्वबोधन के प्रकरणमें आये हुए तत्त्वोंमेंसे ‘आस्रव संसार का और निर्जरा मोक्षका कारण है’ इस बातको स्पष्ट करने के लिए कहते हैं—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

## ચોથા અધ્યાયના બીજો ઉદ્દેશ

સમ્યક્ત્વ નામના ચોથા અધ્યયનના પહેલા ઉદ્દેશમાં સમ્યગ્દર્શનનું સ્વરૂપ સમજાવવામાં આવ્યું છે. ત્યાં બતાવવામાં આવ્યું છે કે—તે સમ્યગ્દર્શન નવ તત્ત્વોની શ્રદ્ધાસ્વરૂપ છે. આ નવ તત્ત્વ નીચે પ્રમાણે છે:—

જીવ ૧, અજીવ ૨, પુણ્ય ૩, પાપ ૪, આસ્રવ ૫, સંવર ૬, નિર્જરા ૭, બંધ ૮, અને મોક્ષ ૯. ત્યાં સુધી મોક્ષાભિલાષીને એ નિશ્ચય નથી થતો કે આમાંથી કયું તત્ત્વ સંસારનું કારણ છે ? અને કયું મોક્ષનું ? , ત્યાં સુધી તેને સમકિતની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એથી તેને માટે આ સમ્યક્ત્વબોધનના પ્રકરણમાં આવેલા તત્ત્વોમાંથી આસ્રવ સંસારનું અને નિર્જરા મોક્ષનું કારણ છે, આ વાતને સ્પષ્ટ કરવાને માટે કહે છે— ‘જે આસવા’ ઇત્યાદિ.



ટીકા—યે આસ્રવાઃ=અષ્ટવિધં કર્માસ્રવતિયૈસ્તે આસ્રવાઃ=કર્મબન્ધહેતવો વિષયાઃ, તે પરિસ્રવાઃ=પરિ=સમન્તાત્ સ્રવતિ=અપગચ્છતિ અષ્ટપ્રકારં કર્મયૈસ્તે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાહેતવઃ, વિષયસુખાઽસક્તાનાં સ્વચ્ચન્દનવનિતાદયો વિષયાઃ કર્મબન્ધજનકત્વાદાસ્રવા ભવન્તિ, ત એવ સેવનચિન્તનાદિભિઃ સંસારાનન્તદુઃસ્વકર-  
ણતયા પ્રતીયમાના હેયોપાદેયવિવેકવતાં તત્ત્વજ્ઞાનિનાં વૈરાગ્યજનકત્વાત્ પરિસ્રવા ભવન્તિ । યથા ભરતસ્ય આસ્રવાઃ પરિસ્રવરૂપેણ પરિણતા બભૂવુઃ, યથા વા-સમુદ્ર-  
પાલસ્ય, યથા વા નમિરાજર્ષેઃ । તથા ચોક્તમ્—

‘યે આસ્રવાઃ’ જો કિસી અપેક્ષાસે કર્મબન્ધકે હેતુ હૈં ‘તે પરિ-  
સ્રવાઃ’ વે હી કિસી દૂસરી અપેક્ષાસે કર્મોંકી નિર્જરાકે મી હેતુ હૈં ।  
‘યે પરિસ્રવાઃ’ જો નિર્જરાકે હેતુ હૈં ‘તે આસ્રવાઃ’ વે આસ્રવકે  
મી હેતુ હૈં । ‘યે અનાસ્રવાઃ’ જો આસ્રવસે ભિન્ન હૈં ‘તે અપરિસ્રવાઃ’  
વે કર્મબન્ધકે મી કારણ હૈં । ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ જો કર્મબન્ધકે કારણ હૈં ‘તે  
અનાસ્રવા’ વે કર્મબન્ધકે કારણ નહીં મી હૈં ।

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારકે કર્મ  
જિનકે દ્વારા આતે હૈં એસે કર્મબન્ધકે કારણરૂપ જો વિષયકષાયાદિક હૈં  
અન્હેં આસ્રવકહતે હૈં । તથા જિનકે દ્વારા અષ્ટ પ્રકારકે કર્મ સર્વથા નિર્જરિત  
હોતે હૈં, એસે નિર્જરાકે કારણ જો તપસંયમાદિક હૈં અન્હેં પરિસ્રવકહતે હૈં ।  
વિષયસુખોંમેં આસક્ત મનવાલેકે લિયે માલા ચન્દન એવં વનિતાદિક જો  
પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષય હૈં વે કર્મબન્ધકે કારણ હોનેસે આસ્રવ હોતે હૈં,  
કારણ કિ વહુ ડનકે સેવનસે અપને કો પરમસુખી માનતા હૈ, એવં અન્હેં

‘યે આસ્રવાઃ’ જે કોઈ અપેક્ષાથી કર્મબંધના હેતુ છે ‘તે પરિસ્રવાઃ’ તે જ  
કોઈ બીજી અપેક્ષાએ કર્મોની નિર્જરાના હેતુ છે. ‘યે પરિસ્રવાઃ’ જે નિર્જરાના હેતુ  
છે ‘તે આસ્રવાઃ’ તે આસ્રવના પણ હેતુ છે. ‘યે અનાસ્રવાઃ’ જે આસ્રવથી ભિન્ન છે  
‘તે અપરિસ્રવાઃ’ તે કર્મબંધના પણ કારણ છે. ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ જે કર્મબંધના કારણ  
છે ‘તે અનાસ્રવાઃ’ તે કર્મબંધના કારણ હોતા પણ નથી.

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારના કર્મ જે દ્વારા  
આવે છે એવા કર્મબંધના કારણરૂપ જે વિષયકષાયાદિક છે તેને આસ્રવ કહે છે.  
તથા જે દ્વારા આઠ પ્રકારના કર્મ સર્વથા નિર્જરિત થાય છે, એવા નિર્જરાના જે  
કારણ છે તેને પરિસ્રવ કહે છે. વિષયસુખોમાં આસક્તમનવાળાને માળા, ચંદન  
અને સ્ત્રી આદિક જે પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય છે તે કર્મબંધના કારણ હોવાથી  
આસ્રવ થાય છે, કારણ કે તે તેના સેવનથી પોતાને ઘણો સુખી માને છે, અને તેને

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ સંસારાવેશહેતવઃ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણસુખહેતવઃ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

શાશ્વત-નિત્ય સમદ્વિતા છે, ‘યે મેરે હૈં ઓર મૈં ઇનકા હૂં’ ઇસ પ્રકારકી ડસકી સદા માન્યતા હોતી છે, ડનકે બિગાડમેં અપના બિગાડ, ઓર ડનકે સુધારમેં અપના સુધાર માનતા છે, તબ જ્ઞાની કિ જિસકે હૃદયમેં હેયોપાદેયકા વિવેક જાગૃત હો રહા છે ઓર જો કર્મ કે ઉદયસે ઇનકા સેવન ખી કરતા છે ફિર ખી ઇનસે અપનેકો જલમેં કમલ કી તરહ સર્વથા ભિન્ન હી દેખતા છે, યે હી પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષય ડસકો સાંસારિક અનન્ત કષ્ટોંકે કારણરૂપ પ્રતીત હોનેસે વૈરાગ્ય કે જનક, પરિસ્ત્રવ-હોતે હૈં, ઇસ કારણ ડસકે લિયે યે આસ્ત્રવ કર્મકી નિર્જરાકે હી કારણ હૈં। જૈસે છહ ચ્છણ્ડોં કા રાજ્ય કરનેવાલે ભરતચક્રવર્તીં કે લિયે ંવં સમુદ્રપાલ તથા નમિ રાજર્ષિકે લિયે વે હી પદાર્થ જો અજ્ઞાનીકે લિયે આસ્ત્રવ કે કારણ થે, નિર્જરા કે હી કારણ હું। જૈસે કહા છે—

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ, સંસારાવેશહેતવઃ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણસુખહેતવઃ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ।

અર્થાત્—જિસ પ્રકારકે જિતને સંસારપરિભ્રમણ કે કારણ હોતે હૈં, ડનસે વિપરીત પ્રકારકે ડતને હી મોક્ષસુખકે કારણ હોતે હૈં ॥ ૧ ॥

શાશ્વત-નિત્ય સમજે છે. ‘આ મારા છે અને હું તેમને છું’ આ પ્રકારની તેની સદા માન્યતા રહે છે. તેના અગડવામાં પોતાનું ખરાબ થયેલ, અને તેના સુધારામાં પોતાનો સુધારો માન્યા કરે છે. ત્યારે જ્ઞાની કે જેના હૃદયમાં હેયોપાદેયનો વિવેક જાગૃત થયેલ છે અને કર્મના ઉદયથી તેનું સેવન પણ કરે છે તો પણ તેનાથી પોતાને જળમાં કમળની માફક સર્વથા ભિન્નપણે દેખે છે. આ પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયો તેને સાંસારિક અનન્ત દુઃખોનું કારણરૂપ પ્રતીત થવાથી તેના માટે તેવૈરાગ્યના કર્તા બને છે, આ કારણ તેના માટે તે કર્મની નિર્જરાના જ કારણ છે. જેમ છ ખંડનું રાજ્ય કરવાવાળા ભરત ચક્રવર્તીને માટે અને સમુદ્રપાલ તથા નમિરાજર્ષિને માટે તે જ પદાર્થો, જે અજ્ઞાનીને માટે આસ્ત્રવના કારણ હતા; નિર્જરાના જ કારણ થયા. જેમ કહ્યું છે—

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ, સંસારાવેશહેતવઃ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણસુખહેતવઃ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ।

અર્થાત્—જે પ્રકારના જેટલા સંસારપરિભ્રમણના કારણ થાય છે, તેનાથી વિપરીત પ્રકારના તેટલા જ મોક્ષસુખના કારણ થાય છે. (૧)



રાગદ્વેષમલિનમનસો વૈષયિકસુખોન્મુલ્યસ્ય સર્વં સંસારકારણં ભવતિ, યથા નિમ્બરસાક્રાન્તરસનસ્ય ક્ષીરશર્કરાદિકં સર્વં મધુરં કટુતયા પરિણમતે । સમ્યગ્દૃષ્ટે-સ્તુ વિષયવિતૃષ્ણસ્ય સર્વં સ્વક્ચન્દનવનિતાઽઽદિકમશુચિ દુઃસ્વકારણં ચેતિ ભાવયતઃ પ્રાદુર્ભૂતસંવેગસ્ય તદેવ મોક્ષજનકં ભવતિ ।

ઉક્તાર્થમેવ દ્રઢયિતું પરાવૃત્ય કથયતિ—“ જે પરિસ્સવા ” ઇત્યાદિ । ય એવ પરિસ્સવાઃ=નિર્જરાહેતવસ્તપઃસંયમાદયસ્ત એવ કર્મોદયપતિરુદ્ધશુભપરિણામસ્ય સાવધક્રિયાપ્રવૃત્તસ્ય જન્તોર્કદ્વિરસસાતગૌરવપ્રાપ્તિમનસઃ આસ્રવા ભવન્તિ । કર્મ-નિર્જરાર્થં યાવન્તિ સંયમસ્થાનાનિ તાવન્ત્યેવ કર્મબન્ધનાયાસંયમસ્થાનાનિ । યથા તાગેશ્વરીબ્રાહ્મણ્યાઃ પરિસ્સવા આસ્રવરૂપેણ પરિણતા બભૂવુઃ ॥

રાગ દ્વેષસે આકુલ એવં વૈષયિક સુખમેં લવલીન જીવકે લિયે પંચેન્દ્રિયોંકે સમી વિષય સંસારકે કારણ હોતે હૈં । જૈસે-નીમ કે રસપાન કરનેસે જિસકી જીભકા સ્વાદ કટુ ( કડુઆ ) હો ચુકા હૈં એસે વ્યક્તિ કે લિયે મીઠા પદાર્થ મી કડુઆ પ્રતીત હોતા હૈં । સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવકે લિયે, કિ જિસકા ચિત્ત વિષયાદિકોંસે વિતૃષ્ણ-તૃષ્ણારહિત હો ચુકા હૈં, વે હી માલા ચન્દન આદિ સમસ્ત વિષય અપવિત્ર ઔર દુઃસ્વકે હી કારણરૂપ પ્રતીત હોતે હૈં, અતઃ ઇનસે ઁનકા ચિત્ત સદા વિરક્ત રહા કરતા હૈં, ઇસલિયે ઁનકે પ્રતિ સંવેગભાવ કી જાગૃતિ હોનેસે વે હી વસ્તુઁ ઁસકે લિયે નિર્જરાકા કામ કરતી હૈં ।

નિર્જરા હી મોક્ષકા કારણ હૈં, ઇસી વાતકો દૃઢ કરનેકે લિયે ઁપર કહે હુઁ અર્થકો હી ઁમાકર કહતે હૈં—(૨) “ ઁ પરિસ્સવાસ્તે આસ્રવાઃ ” ઇત્યાદિ । જો તપસંયમાદિક ભાવ જ્ઞાની કે ‘ પરિસ્સવાઃ ’ નિર્જરા કે કારણ હોતે હૈં, વે હી અજ્ઞાની કે કિ-જિસ કી અપને કર્મકે

રાગદ્વેષથી વ્યાકુળ તેમજ વૈષયિક સુખમાં રાચેલાં જીવોને માટે પાંચ ઈન્દ્રિયોના બધા વિષયો સંસારના કારણ થાય છે, જેમ લીંબડાનો રસ પીવાથી જેની જીભનો સ્વાદ કડવો બનેલ છે તેવી વ્યક્તિને માટે મીઠો પદાર્થ પણ કડવો લાગે છે. સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ કે જેનું ચિત્ત વિષયાદિકની તૃષ્ણાથી રહિત છે તે માળા, ચન્દન આદિ સમસ્ત વિષયોને અપવિત્ર અને દુઃખનું કારણ માને છે, તેથી તે વિષયોથી તેનું ચિત્ત હમેશાં વિરક્ત રહ્યા કરે છે. આ માટે તેના પ્રતિ સંવેગભાવની નબળાઈ થવાથી તેજ વસ્તુઓ તેને માટે નિર્જરાનું કામ કરે છે.

નિર્જરાજ મોક્ષનું કારણ છે. આ વાતને દૃઢ કરવાને માટે ઁપર કહેલા અર્થને જ ફરીને કહે છે—(૨) ‘ પરિસ્સવાસ્તે આસ્રવાઃ ’ ઇત્યાદિ. જે તપ, સંયમ આદિ ભાવો જ્ઞાની માટે ‘ પરિસ્સવાઃ ’ નિર્જરાના કારણ થાય છે, તે અજ્ઞાની માટે—



ये अनास्रवाः=आस्रवेतराः-व्रतविशेषाः, तेऽपि कर्मोदयवशादशुभाध्यवसायवतो  
जन्तोरपरिस्रवाः=कर्मबन्धकारणानि भवन्ति, यथा बान्तसम्यक्त्वस्य मुनेः । तथा-ये  
अपरिस्रवाः=कर्मबन्धहेतवः ते प्रवचनोपकारादिना क्रियमाणाः अनास्रवाः भवन्ति,  
कर्मबन्धजनका न भवन्तीत्यर्थः, यथा बालनानाद्यर्थं नित्यपिण्डादिग्राहकस्य ।

यद्वा—अत्र सूत्रे चतुर्भङ्गी प्रोच्यते, तथाहि—

ઉદયસે શુભ પરિણામધારા રુકી હુઈ છે, સાવચ ક્રિયાઓં કે કરનેમેં હી  
જિસકી પ્રવૃત્તિ ચાલૂ રહતી છે, ઔર જો ઋદ્ધિ, રસ, સાત ગૌરવકી  
પ્રાપ્તિ કરનેકે અભિપ્રાય સે હી તપ સંયમાદિકોંકા આરાધન કરતા  
હૈં ઉસકે આસ્રવ-નવીન ૨ કર્મોં કે આને કે દ્વાર હોતે હૈં । સમકિતકે  
વિના કી ગઈ સમસ્ત હી ક્રિયાએં કર્મબન્ધકા કારણ હોતી હૈં । અજ્ઞા-  
નિયોં કે તપસંયમાદિક, સમકિત કે અભાવમેં મિથ્યારૂપ-અસંયમરૂપ  
હોતે હૈં, અતઃ વે ઉસકે નિર્જરાકે હેતુ ન હો કર ઉલ્ટે આસ્રવકે હી કારણ  
બનતે હૈં । સમકિતી કે કર્મનિર્જરાકે લિયે જિતને બી સંયમસ્થાન હૈં  
ઉતને હી અજ્ઞાનિયોં કે કર્મબન્ધકે લિયે અસંયમસ્થાન બી હૈં । ઇસ  
વિષયમેં નાગેશ્વરી બ્રાહ્મણીકા દૃષ્ટાન્ત પ્રસિદ્ધ હૈં, ઉસકે લિયે પરિસ્રવ  
આસ્રવરૂપસે પરિણત હુએ હૈં ।

(૩) 'ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः'—જિનસે કર્મબન્ધ નહીં હોતા  
એસે જો વ્રતવિશેષ હૈં વે બી, કર્મોદયકે વશસે જિસકે અધ્યવસાય  
અશુભ હો રહે હૈં એસે અજ્ઞાની જીવકે લિયે કર્મબન્ધકે હી કારણ હોતે હૈં ।

જેની પોતાના કર્મના ઉદયથી શુભપરિણામધારા બન્ધ છે, સાવચ-ક્રિયાઓ કરવામાં  
જે જેની પ્રવૃત્તિ ચાલુ છે, અને જે ઋદ્ધિ, રસ, સાત ગૌરવની પ્રાપ્તિ કરવામાં  
જે તપસંયમાદિનું આરાધન કરે છે તેને માટે આસ્રવના-નવા નવા કર્મોના  
આવવાના-દ્વાર થાય છે. સમકિત વગર કરવામાં આવેલી બધી ક્રિયાઓ કર્મ-  
બંધના કારણ થાય છે. અજ્ઞાનિઓના તપ સંયમાદિ સમકિતના અભાવમાં મિ-  
થ્યારૂપ-અસંયમરૂપ થાય છે, તેથી તે નિર્જરાના હેતુ ન થઈને આસ્રવના જ કારણ  
બને છે. સમકિતીના કર્મનિર્જરાને માટે જેટલા પણ સંયમ-સ્થાનો છે તેટલા જ  
અજ્ઞાનિઓના કર્મબંધના માટે અસંયમ-સ્થાનો પણ છે. આ વિષયમાં નાગેશ્વરી  
બ્રાહ્મણીનું દૃષ્ટાન્ત પ્રસિદ્ધ છે. તેને માટે પરિસ્રવ, આસ્રવરૂપથી પરિણત થયેલ છે.

(૩) 'ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः' જેનાથી કર્મબંધ નથી થતા એવા જે  
વ્રત-વિશેષ છે તે પણ કર્મોદયના વશથી જેના અધ્યવસાય અશુભ જ રહેલા  
છે, એવા અજ્ઞાની જીવને માટે કર્મબંધના જ કારણ બને છે.

(૧) યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ, (૨) યે આસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ,

(૩) યે અનાસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ, (૪) યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ,

(૧) યે આસ્રવાઃ—આસ્રવન્તિ=કર્મ સંચિન્વન્તીત્યાસ્રવાઃ=કર્મબન્ધકર્તારો જીવાઃ, ત એવ પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારઃ । અસ્મિન્ પ્રથમભજ્જે સર્વે સંસારિણો જીવાઃ પ્રવિષ્ઠાઃ, તે હિ પ્રતિક્ષણમિથ્યાત્વાદિભિરાગન્તુકાનાં કર્મણાં બન્ધં, પૂર્વાર્જિતાનાં ચ નિર્જરાં કુર્વન્તિ ।

તથા—(૨) યે આસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ, ઇતિ દ્વિતીયભજ્જવર્તિનો જીવાઃ

(૪) ‘યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ’ જો કર્મકે બન્ધ કરાને મેં કારણ હોતે હૈં વે હી પ્રવચનકે ઉપકારકે અભિપ્રાયસે કિયે હુએ હોને સે કર્મ-બન્ધકે કારણ નહીં હોતે, જૈસે બાલગ્લાનાદિકે લિયે નિત્યપિણ્ડાદિ કા ગ્રહણ કરના । હસ સૂત્રમેં આદિ અંત કે દો હી ભંગ બતલાયે ગયે હૈં, મધ્ય કે નહીં, ઉનકા ગ્રહણ કરને પર હસ સૂત્રમેં ચતુર્ભજ્જી હસ પ્રકાર સે બનતી હૈ—

(૧) યે આસ્રવાઃ—તે પરિસ્રવાઃ, (૨) યે આસ્રવાઃ—તે અપરિસ્રવાઃ

(૩) યે અનાસ્રવાઃ—તે પરિસ્રવાઃ, (૪) યે અનાસ્રવાઃ—તે અપરિસ્રવાઃ

૧—યહાં પર પ્રથમ ભજ્જ મેં સમસ્ત સંસારી જીવોં કા સમાવેશ હો જાતા હૈ, કારણ કિ વે હી જીવ પ્રતિક્ષણ મિથ્યાત્વાદિક જો કર્મબન્ધકે કારણ હૈં ઉનસે કર્મોંકા બન્ધ કરતે રહતે હૈં, ઓર પૂર્વોપાર્જિત સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા ભા કિયા કરતે હૈં ।

૨—દ્વિતીય ભજ્જ શૂન્ય હૈ; કારણ—એસે કોઈ ભી જીવ નહીં હૈં જો

(૪) ‘યે અપરિસ્રવાઃ તે અનાસ્રવાઃ’ જે કર્મબંધ કરાવવામાં કારણ બને છે, પ્રવચનના ઉપકાર કરવાના અભિપ્રાયથી કરવામાં આવેલ તે જ કર્મબંધના કારણ થતા નથી, જેમ બાળ-ગ્લાનાદિ માટે નિત્યપિંડાદિનું ગ્રહણ કરવું. આ સૂત્રમાં આદિઅંતના બે ભંગ બતાવેલ છે, મધ્યના નહિ. આના ગ્રહણ કરવાથી આ સૂત્રમાં ચતુર્ભંગી આ પ્રકારે બને છે—

(૧) યે આસ્રવાઃ — તે પરિસ્રવાઃ, (૨) યે આસ્રવાઃ — તે અપરિસ્રવાઃ,

(૩) યે અનાસ્રવાઃ — તે પરિસ્રવાઃ, (૪) યે અનાસ્રવાઃ — તે અપરિસ્રવાઃ ।

(૧) અહીં પ્રથમ ભંગમાં સમસ્ત સંસારી જીવોના સમાવેશ થઈ જાય છે, કારણ કે તે જ જીવ પ્રતિક્ષણ મિથ્યાત્વાદિક જે કર્મબંધના કારણ છે તે-ઓથી કર્મના બંધ કરે છે, અને પૂર્વોપાર્જિત સંચિત કર્મોની નિર્જરા કરે છે.

(૨) બીજો ભંગ શૂન્ય છે; કારણ કે એવો કોઈ પણ જીવ નથી જે આસ્રવકર્તા



કેડપિ નોપલભ્યન્તે, કુતઃ ? એ-આસ્રવાઃ-કર્મબન્ધકર્તારસ્તેઽવશ્યમેવ કર્મ-  
નિર્જરાકર્તારો ભવન્તિ, તસ્માત્તે-અપરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાયાઃ અકર્તારો ન ભવન્તિ ।

તથા-(૩) એ અનાસ્રવાઃ=કર્મબન્ધસ્યાઽકર્તારસ્તે પરિસ્રવાઃ=પૂર્વકર્મનિર્જરા-  
કર્તારઃ, इत्येतस्मिन् तृतीयभङ्गे चायोगिकेवलिनश्चतुर्दशगुणस्थानवर्तिनः सन्ति ।

તથા-(૪) એ અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ, इति चतुर्थभङ्गे सिद्धाः सन्ति, तेषा-  
मनास्रवत्वादपरिस्त्रवत्वाच्च । अत्राद्यन्तभङ्गौ मूत्रे गृहीतौ । आद्यन्तभङ्गग्रहणेन मध्यम-  
भङ्गद्वयं सुतरां गृह्यते ॥

યદ્વા-એ આસ્રવાઃ=કર્મબન્ધકર્તારો જીવાસ્તે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારો  
ભવન્તિ । તથા-એ પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારસ્તે આસ્રવાઃ=પુનર્નવીનકર્મબન્ધ-  
કર્તારો ભવન્તિ ।

આસ્રવકર્તા હોતે હુણ્મી નિર્જરા કે કર્તા નહીં, જો કર્મબન્ધકે કર્તા હોતે  
હૈં વે અવશ્ય હી કર્મકી નિર્જરા કે ખી કર્તા હોતે હૈં ।

૩-તૃતીય ભંગમેં અયોગિકેવલિનામક ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં રહ-  
નેવાલે જીવોંકા ગ્રહણ હૈ, કારણ કિ ઉનકે નવીન કર્મોંકે બન્ધકા અભાવ  
હૈ, ઓર પૂર્વોપાર્જિત કર્મોં કી નિર્જરા કા સદ્ભાવ હૈ ।

૪-ચતુર્થ ભંગ મેં સિદ્ધ જીવોંકા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ, વહાં પર ન  
કર્મોં કા આસ્રવ હૈ ઓર ન ઉનકી નિર્જરા હી હૈ ।

અથવા-જો જીવ આસ્રવ-કર્મબન્ધકે કરનેવાલે હૈં વે પરિસ્રવ-કર્મ-  
નિર્જરાકે કરનેવાલે હૈં, તથા-જો પરિસ્રવ-કર્મનિર્જરા કે કરનેવાલે હૈં વે  
આસ્રવ-ફિરસે નવીન કર્મોં કે બન્ધ કરનેવાલે હૈં ।

હોવા છતાં નિર્જરાનો કર્તા ન હોય ? જે કર્મબંધનો કર્તા હોય છે તે અવશ્ય  
જે કર્મની નિર્જરાનો પણ કર્તા હોય છે.

(૩) ત્રીજા ભંગમાં અયોગિકેવળી નામના ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં રહેવાવાળા  
જીવોનું ગ્રહણ છે, કારણ કે તેને નવા કર્મના બંધનો અભાવ છે, અને પૂર્વોપાર્જિત  
કર્મોની નિર્જરાનો સદ્ભાવ છે.

(૪) ચોથા ભંગમાં સિદ્ધ જીવોનું ગ્રહણ કરેલું છે. ત્યાં નથી કર્મોનું આસ્રવ  
અને નથી તેઓની નિર્જરા.

અથવા-જે જીવો આસ્રવ-કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે તે પરિસ્રવ-કર્મ-  
નિર્જરાના કરવાવાળા છે, તથા જે પરિસ્રવ-કર્મનિર્જરાના કરવાવાળા છે તે આસ્રવ-  
-કર્મો નવીન કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે.



નન્વેવં 'યે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ' ઇતિ સ્વીકારે ત્રયોદશે સયોગિકેવલિ-ગુણસ્થાને ઈર્યાપથિકક્રિયયા સમાગતં કર્મ નિર્જરયતો મુનેઃ પુનર્નવીનકર્મબન્ધાપત્તૌ સત્યાં કર્મબન્ધપરમ્પરોચ્છેદઃ કદાપિ ન સ્યાત્, તથા ચ-આગમોક્તમોક્ષવાદસ્ય વૈયથ્યં પ્રસજ્યેત ? ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે—

ત્રયોદશગુણસ્થાનસમાગતકર્મણો નિર્જરા યદિ જીવેન પ્રયત્નવિશેષેણ ક્રિયેત તર્હિ યથોક્તરીત્યા તન્નિર્જરાકર્તુર્મુનેઃ પુનરપિ નવીનકર્મબન્ધકર્તૃત્વમાપદ્યેત, પરન્તુ નૈવં ભવતિ, યતઃ—તસ્ય કર્મણો નિર્જરા સ્વભાવાદેવ જાયતે ।

શંકા—“જો નિર્જરા કરનેવાલે હૈં વે નવીન કર્મકા બન્ધ કરનેવાલે હૈં” ઇસ પ્રકારકે પૂર્વોક્ત ભક્તી સ્વીકૃતિમેં સયોગિ-કેવલિનામક તેરહવેં ગુણસ્થાનવર્તી જીવોં કે ખી નવીન કર્મબન્ધકા સદ્ભાવ માનના પડેગા; કારણ કિ વહાં પર નિર્જરા ખી હોતી હૈં ઓર ઈર્યાપથ ક્રિયાસે નવીન કર્મોંકા બન્ધ ખી હોતા હૈં । ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા કે અનુસાર તો વહાં કખી ખી કર્મબન્ધ કી પરમ્પરા કા ઉચ્છેદ હી નહીં હો સકેગા; ફિર આગમમેં જિસ મુક્તિવાદ કા સમર્થન કિયા હુઆ મિલતા હૈં વહ સર્વથા અસંગત હી ઠહરેગા ?

ઉત્તર—યહ આપકા કહના તબ ઠીક હો સકતા, જબ કિ ત્રયોદશ ગુણસ્થાનવર્તી જીવકે આગત કર્મોં કી નિર્જરા કિસી પ્રયત્ન વિશેષસે સાધ્ય હોતી માની જાતી, પરંતુ એસી માન્યતા તો હૈં હી નહીં, ક્યોં કિ વહાં પર આગત કર્મોં કી નિર્જરા સ્વતઃ-સ્વભાવ સે હી હોતી હૈં ।

શંકા—‘યે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ’ અર્થાત્—“જે નિર્જરા કરવાવાળા છે તે નવીન કર્મોંના બંધ કરવાવાળા છે.” આ પ્રકારે જે માનવામાં આવે તો સયોગિકેવળીનામના તેરમાં ગુણસ્થાનવર્તી જીવોને પણ નવા કર્મોંના બંધનો સદ્ભાવ માનવો પડશે, કારણ કે ત્યાં નિર્જરા પણ થાય છે અને ઈર્યાપથક્રિયાથી નવા કર્મોંનો બંધ પણ થાય છે. આવા પ્રકારની માન્યતાના અનુસારે તો ત્યાં કોઈ વખત પણ કર્મબંધની પરંપરાનો ઉચ્છેદ થઈ શકે નહિ, તો પછી આગમમાં જે મુક્તિવાદનું સમર્થન કરેલું છે તે સર્વથા અસંગત જ થઈ જશે.

ઉત્તર—આ આપનું કહેવું ત્યારે સંગત થાય, જ્યારે ત્રયોદશગુણસ્થાનવર્તી જીવના આગત-કર્મોંની નિર્જરા કોઈ પ્રયત્નવિશેષાધીન માનવામાં આવે, પરંતુ એવી માન્યતા તો છે જ નહિ, કેમ કે તે ઠેકાણે આગત (આવેલા) કર્મોંની નિર્જરા સ્વભાવથી જ થાય છે.

અત્ર પરિસ્ત્રવપદાર્થે જીવપ્રયત્નકૃતા નિર્જરા પરિગૃહ્યતે, एवं च नोक्तदोषप्रसङ्गः । त्रयोदशगुणस्थाने उक्तकर्मैव जीवो निर्जरयति, प्रथमसमये ऐर्यापथिककर्मणो बन्धः, द्वितीये तद्वेदनं, तृतीये च तन्निर्जरेत्येवं क्रमेण बन्धो निर्जरा चेति द्वयं स-योगिकेवल्लिगुणस्थानं यावत् प्रवर्तते । तत्रत्या निर्जरा न जीवप्रयत्नजनिता किंतु स्वभावादेवेति पुनः पुनः स्मृतिपथमानेतव्यम् ।

तथा-चतुर्दशगुणस्थानवर्तिजीवोऽपि नैतद्वाक्यविषयः । तस्याघातिकर्मचतुष्टय-निर्जराकर्तृत्वं प्रयत्नविशेषमनपेक्ष्य भवति, केवलज्ञानोत्पत्तौ सत्यां तत्सामर्थ्या-दवशिष्टकर्मचतुष्टयनिर्जराया अवश्यम्भावनिरूप्यते ।

“પરિસ્ત્રવ” હસ શબ્દ મેં જીવકે પ્રયત્ન સે હોનેવાલી નિર્જરા કા હી ગ્રહણ ક્રિયા ગયા હૈ, અતઃ ઉસ ગુણસ્થાનવર્ત્તી જીવ કે નવીન કર્મબંધ કે પ્રતિ કર્તાપન કિસી પ્રકાર ખી સંભવિત નહીં હો સકતા હૈ । વહાં પ્રથમ સમય મેં ઈર્યાપથ ક્રિયાસે આગત કર્મકા બંધ હોતા હૈ, દ્વિતીય સમયમેં ઉસકા વેદન ઔર તૃતીય સમયમેં ઉસકી નિર્જરા । હસ પ્રકારકા ક્રમ ઉસ જીવ કે તબ તક ચાલૂ રહતા હૈ જબ તક ઉસ જીવ કે ઉસ ગુણસ્થાનવર્ત્તીપના રહતા હૈ, અતઃ યહ માનના કિ-ઉસકે આગત કર્મોં કી નિર્જરા કિસી પ્રયત્નવિશેષાધીન હોતી હૈ, યહ એક ભ્રમ હી હૈ, ક્યોં કિ ઉન કર્મોં કી નિર્જરા તો સ્વાભાવિક હી હૈ ।

તથા ચૌદહવેં ગુણસ્થાનવર્ત્તી જીવમેં અવશિષ્ટ અઘાતિયા કર્મોંકી નિર્જરા કે પ્રતિ કર્તૃત્વ પ્રયત્નવિશેષકે વિના સ્વતઃ હી હૈ, કારણ કિ કેવલજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિ હોને પર ઉસકે પ્રભાવસે ઉન અઘાતિયા કર્મોંકી

“પરિસ્ત્રવ” આ શબ્દમાં જીવના પ્રયત્નથી થવાવાળી નિર્જરાનું જ અહણ કરેલ છે, તેથી આ ગુણસ્થાનવર્ત્તી જીવનું નવીન કર્મબંધ કરવામાં કર્તાપણું કોઈ પણ પ્રકારે સંભવિત થઈ શકતું નથી. ત્યાં પ્રથમ સમયમાં ઈર્યાપથક્રિયાથી આગત (આવતા) કર્મનો બંધ થાય છે, બીજા સમયમાં તેનું વેદન અને ત્રીજા સમયમાં તેની નિર્જરા. આ પ્રકારનો ક્રમ તે જીવને ત્યાં સુધી ચાલુ રહે છે જ્યાં સુધી તે જીવને તે ગુણસ્થાનવર્ત્તીપણું રહે છે. આથી એમ માનવું કે ‘તેના આગત કર્મની નિર્જરા કોઈ પ્રયત્નવિશેષાધીન હોય છે.’ એ એક ભ્રમ જ છે, કારણ કે તે કર્મોની નિર્જરા તો સ્વાભાવિક જ થાય છે.

તથા—ચૌદમ ગુણસ્થાનવર્ત્તી જીવમાં અવશિષ્ટ (બાકી રહેલા) અઘાતિયા કર્મોની નિર્જરા પ્રતિ કર્તાપણું કોઈ એક પ્રયત્ન વગર સ્વતઃ જ છે. તેનું કારણ એ છે કે કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થતાં જ તેના પ્રભાવથી તે અઘાતિયા કર્મોની



एवञ्च—‘ये आस्रवास्ते परिस्रवाः, ये परिस्रवास्ते आस्रवाः’ इति पूर्वाद्वैवाक्यं चतुर्गतिभ्रमणाधिकारिजीवाभिप्रायेण कथितम् । ‘ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः, ये अपरिस्रवास्ते अनास्रवाः’ इत्युत्तराद्वैवाक्यं तु सिद्धापेक्षया; ते हि—नवीनकर्मबन्धकर्तृत्वाऽभावादनास्रवाः, सकलपूर्वकर्मक्षयेण नवीनकर्मबन्धाभावेन च निर्जराणीयकर्माभावात्कर्मनिर्जराया अकर्तारस्तस्मादपरिस्रवाः ।

तथा—सकलपूर्वकर्मक्षयेण नवीनकर्मानागमनेन च निर्जराणीयकर्माभावात्कर्म-निर्जराया अकर्तृत्वाद् अपरिस्रवाः, नवीनकर्मबन्धकर्तृत्वाभावाच्च अनास्रवाः, इति ।

निर्जरा नियमसे होती है, इसे रोकनेवाली कोई भी शक्ति नहीं है, इसलिये चौदहवें गुणस्थानवर्त्ती जीवके प्रति भी यह आक्षेप नहीं होता ।

इस प्रकार “ये आस्रवास्ते परिस्रवाः, ये परिस्रवास्ते आस्रवाः” यह पूर्वार्ध वाक्य चतुर्गतियों में भ्रमण करनेके अधिकारी जीवों की अपेक्षा से ही कहा गया है । तथा—“ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः, ये अपरिस्रवास्ते अनास्रवाः” यह उत्तरार्ध वाक्य सिद्धों की अपेक्षासे कहा गया है, कारण कि एक तो वे नवीन कर्मबन्धके कर्ता नहीं हैं इससे वे अनास्रव हैं । दूसरे उनमें पूर्वके सकल कर्मोंका क्षय और आगामी नवीन कर्मबन्धका अभाव भी हो चुका है, इसलिये निर्जराके भी कर्ता नहीं माने गये हैं । इसलिये वे अपरिस्रव हैं । तथा—उनमें पूर्वसंचित सकल कर्म के क्षय से और नवीन कर्मों के नहीं आने के कारण निर्जरा करने योग्य कर्मोंके अभाव से कर्मोंकी निर्जराके कर्ता नहीं होने के कारण वे अपरिस्रव हैं, और नवीन कर्मोंके बन्ध नहीं करने के कारण वे अनास्रव हैं ।

નિર્જરા નિયમથી થઈ જાય છે, તેને રોકવાવાળી કોઈ પણ શક્તિ નથી, માટે ચૌદમા ગુણસ્થાનવર્ત્તી જીવના પ્રતિ પણ આ આક્ષેપ થઈ શકતો નથી.

આ પ્રકારે “યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ, યે પરિસ્રવાસ્તે આસ્રવાઃ” આ પૂર્વાર્ધ વાક્ય ચતુર્ગતિઓમાં ભ્રમણ કરવાવાળા જીવોની અપેક્ષાથી જ કહેલ છે. તથા—“યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ, યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ” આ ઉત્તરાર્ધ વાક્ય સિદ્ધોની અપેક્ષાએ કહેલ છે. કારણ કે એક તો તે નવા કર્મબંધના કર્તા નથી તેથી તે અનાસ્રવ છે. બીજું તેમાં પૂર્વના સકળ કર્મનો ક્ષય અને આગામી નવા કર્મબંધનો અભાવ પણ થઈ ચુકેલ છે, માટે નિર્જરા કરવાયોગ્ય કર્મોનો અભાવ થવાથી તે નિર્જરાના પણ કર્તા માનવામાં આવેલ નથી, માટે તે અપરિસ્રવ છે. તથા—તેમાં પૂર્વસંચિત સકળ કર્મના ક્ષયથી, અને નવીન કર્મોનાં નહિ આવવાથી, નિર્જરા કરવાયોગ્ય કર્મોનો અભાવ થવાથી કર્મોની નિર્જરાના કર્તા નહીં હોવાને લીધે તે અપરિસ્રવ છે. અને નવીન કર્મો તો બંધ નહીં કરવાથી તે અનાસ્રવ છે.



યદ્વા-અનાસ્રવાપરિસ્રવયોઃ ક્રમં દર્શયતિ-‘યેઽનાસ્રવાસ્તેઽપરિસ્રવાઃ’ ઇતિ । યે પ્રથમે સમયેઽનાસ્રવા ભવન્તિ-કર્મબન્ધકા ન ભવન્તિ, તે તત્પશ્ચાત્ સમયે અપરિસ્રવા ભવન્તિ-કર્મનિર્જરકા ન ભવન્તિ, વદ્વસ્યૈવ કર્મણો નિર્જરણીયત્વાત્ । एवं येऽपरि-  
स्रवास्तेऽनास्रवा इति बोध्यम् । एतदपि व्याख्यानं सिद्धापेक्षया ॥ सू० १ ॥

યથેવં તતઃ કિમ્ ? ઇત્યાહ-‘एए पए’ इत्यादि ।

મૂલમ્-एए पए संबुज्जमाणे लोयं च आणाए अभिसमिच्चा  
पुढो पवेइयं ॥ सू० २ ॥

છાયા-एतानि पदानि संबुध्यमानः लोकं चाज्ञयाऽभिसमेत्य पृथक् प्रवेदितम् । २ ।

ટીકા-एतानि=अनन्तरोक्तानि, पदानि=‘ये आस्रवास्ते परिस्रवाः’ इत्यादीनि  
संबुध्यमानः=सम्यग् जानन्, तथा लोकं=षड्जीवनिकायम् आस्रवागतकर्मणा

અથવા-अनास्रव और अपरिस्रव के क्रमको दिखाते हैं-“ ये  
अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः ’ जो प्रथम समयमें अनास्रव हैं-कर्मबन्ध के  
कर्ता नहीं हैं, वे उसके बाद के समयमें अपरिस्रव हैं-कर्म की निर्जरा  
करनेवाले नहीं हैं, कारण कि जो कर्मोंसे बंधा हुआ होता है वही उनकी  
निर्जरा करनेवाला भी होता है । जो कर्मोंसे बंधा हुआ ही नहीं है वह  
निर्जरा भी किसकी करेगा । इसी प्रकार “ये अपरिस्रवास्ते अनास्रवाः”  
यह वाक्य भी समझ लेना चाहिये । यह विवरण भी सिद्धोंकी अपेक्षा  
से ही किया गया है ऐसा समझना चाहिये ॥ सू० १ ॥

यदि ऐसा है तो इससे क्या ? इसका उत्तर कहते हैं-‘एए पए  
संबुज्जमाणे’ इत्यादि ।

इन पूर्वोक्त पदों को अच्छी तरहसे जाननेवाला कौनसा ऐसा प्राणी  
होगा जो आस्रवसे आये हुए कर्मों से बंधे हुए, और तप एवं संयम के

અથવા-અનાસ્રવ અને અપરિસ્રવના ક્રમને બતાવે છે-

“ ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः ” જે પ્રથમ સમયમાં અનાસ્રવ છે-કર્મબંધના  
કર્તા નથી તે ત્યારબાદના સમયમાં અપરિસ્રવ છે-કર્મની નિર્જરા કરવાવાળાં નથી,  
કારણ કે જે કર્મોથી બંધાયેલા રહે છે તે તેની નિર્જરા કરવાવાળા પણુ  
હોય છે. જે કર્મોથી બંધાયેલા જ નથી તે નિર્જરા પણુ કોની કરશે ? આ જ  
પ્રકારે “ ये अपरिस्रवास्ते अनास्रवाः ” આ વાક્ય પણુ સમજી લેવું જોઈએ. આ  
વિવેચન પણુ સિદ્ધોની અપેક્ષાથી જ કરેલ છે. ॥ सू० १ ॥

જો એમ છે તો તેનાથી શું ? આનું ઉત્તર કહે છે-‘एए पए संबुज्जमाणे’ ઇત્યાદિ ।  
તે પૂર્વોક્ત પદોને ઘણી સારી રીતે જાણનાર કોણ તેવો પ્રાણી હશે જે  
આસ્રવથી આવેલા કર્મોથી બંધાયેલા અને તપ સંયમના આરાધનથી રહિત આ

વધ્યમાનં, તપઃસંયમસમારાધનેન ચ મુચ્યમાનમ્, આજ્ઞયા=આર્હતાગમાનુસારેણ, અભિસમેત્ય=સમ્યગ્ વિજ્ઞાય, પૃથક્=અન્યાન્યપ્રકારેણ પ્રવેદિતં ચ=અતીતાનાગતવર્તમાનૈઃ સર્વતીર્થકરૈઃ પ્રબોધિતં બન્ધકારણં નિર્જરાકારણં ચ, અભિસમેત્ય=જ્ઞાત્વા, કો નામ ધર્માચરણે પ્રવૃત્તો ન ભવેત્? અપિ તુ ભવે દેવે દિત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૨ ॥

આર્હતપ્રવચનાનુસારી ચતુર્દશપૂર્વધરાદિરપિ જીવાનાં હિતાય પ્રવેદયતીત્યાહ-  
'આઘાઙ નાળી' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—આઘાઙ નાળી ઇહ માણવાળં સંસારપડિવળ્લાળં સંબુજ્ઞમાળાળં વિજ્ઞાણપત્તાળં અટ્ટાવિ સંતા અદુવા પમત્તા અહા-  
સચ્ચમિળં—તિબેમિ ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા—આખ્યાતિ જ્ઞાની ઇહ માનવેભ્યઃ સંસારપ્રતિપન્નેભ્યઃ સંબુધ્યમાનેભ્યઃ વિજ્ઞાનપ્રાપ્તેભ્યઃ, આર્તા અપિ સન્તઃ અથવા પ્રમત્તાઃ યથાસત્યમિદમ્ ઇતિ બ્રવીમિ ॥૩॥

ટીકા—જ્ઞાની=પ્રવચનજ્ઞાનસંપન્નઃ, ઇહ=પ્રવચને પ્રોક્તં ધર્મ માનવેભ્યઃ, આ-  
ખ્યાતિ=ઇત્યન્વયઃ, મનુષ્યાળાં સર્વસંવરચારિત્રસંભવાત્તેભ્ય ઉપદિશતીત્યર્થઃ ।

આરાધનસે રહિત ઇસ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકો તથા અતીત, અનાગત ઔર વર્તમાન સમસ્ત તીર્થકરોં દ્વારા ભિન્ન ૨ પ્રકારસે ઉપદિષ્ટ બંધકે કારણોં ંવં નિર્જરા કે કારણોં કો જિનાગમસે જાન કર ધર્માચરણ કરને મેં પ્રવૃત્ત નહીં હોગા ? અપિતુ અવશ્ય હી હોગા ॥ સૂ. ૨ ॥

આર્હત પ્રભુકે પ્રવચનાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનેવાલે ચતુર્દશપૂર્વ કે પાઠી ગળધરાદિક ભી જીવોં કે હિતકે લિયે હી ઉપદેશ કરતે હેં; યહી વાત પ્રકટ કી જાતી હૈ—'આઘાઙ નાળી' ઇત્યાદિ ।

જિનેન્દ્રોપદિષ્ટ પ્રવચનકે જ્ઞાનસે સંપન્ન જ્ઞાની ગળધરાદિક શાસ્ત્ર-  
વિહિત ધર્મકા પ્રતિપાદન, હેયોપાદેય-વિવેકશીલ સંસારી મનુષ્યોં કે

પરુજીવનિકાયરૂપ લોકને, તથા અતીત અનાગત અને વર્તમાન સમસ્ત તીર્થકરોં દ્વારા બુદ્ધ બુદ્ધ પ્રકારથી ઉપદિષ્ટ બંધના કારણોને અને નિર્જરાના કારણોને જ્ઞાન-  
ગમથી જાણીને ધર્માચરણ કરવામાં પ્રવૃત્ત ન થાય ? પરન્તુ અવશ્ય જ થાય. ॥સૂ. ૨॥

અર્હન્ત પ્રભુના પ્રવચન અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનાર ચતુર્દશ-ચૌદ પૂર્વના પાઠી ગળધરાદિક પણ જીવના હિતને માટે જ ઉપદેશ કરે છે. આ વાત પ્રગટ કરવામાં આવે છે—'આઘાઙ નાળી' ઇત્યાદિ.

જિનેન્દ્ર ભગવાને કહેલાં પ્રવચનના જ્ઞાનથી સંપન્ન જ્ઞાની ગળધરાદિક શાસ્ત્રવિહિત ધર્મનું પ્રતિપાદન હેયોપાદેયવિવેકશીલ સંસારી મનુષ્યોને માટે કરે છે. આ સૂત્રમાં



કથંમૂતેભ્યો માનવેભ્યઃ ? સંસારપ્રતિપન્નેભ્યઃ=ચતુર્ગતિષુ વર્તમાનેભ્યઃ, કેવલિપ્રમુ-  
તીનામુપદેશશ્રવણપ્રયોજનં નાસ્તીતિ માવઃ । સંસારિષ્વપિ ધર્મગ્રહણયોગ્યા એવ ઉપ-  
દેશાર્હાં ઇત્યત આહ-સંબુધ્યમાનેભ્ય ઇતિ, યથોપદિષ્ટં ધર્મજ્ઞાતૃભ્ય ઇત્યર્થઃ ।  
અસંજ્ઞિનો નોપદેશાર્હાઃ, ઇત્યતસ્તાન્ વ્યાવર્તયિતું વિશેષણાન્તરમાહ-વિજ્ઞાનપ્રાપ્તેભ્ય  
ઇતિ હેયોપાદેયજ્ઞાનવદ્ભ્યઃ-સર્વથાપર્યાપ્તકેભ્યઃ સંજ્ઞિભ્ય ઇત્યર્થઃ ।

લિયે કરતે હૈં । હસ સૂત્રમેં જિનેન્દ્રપ્રતિપાદિત સદ્ધર્મકા ઉપદેશ સંસારી  
માનવોં કે લિયે જો પ્રકટ કિયા ગયા હૈં ઉસકા કારણ યહી હૈં કિ ઉનમેં  
હી સર્વસંવર ઓર સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કે આરાધન કરને કી યોગ્યતા  
રહી હુઈ હૈં । ઉનમેં બી જો ધર્મગ્રહણ કરનેકી યોગ્યતા સે સમ્પન્ન હોતે  
હૈં ઉન્હેં હી ધર્મકા ઉપદેશ દિયા જાતા હૈં, ઓર વહીં પર વહ અસરકાર-  
ક હોતા હૈં । જો અપર્યાપ્તાવસ્થામેં રહે હુએ હૈં વે ધાર્મિક ઉપદેશકે પાત્ર  
નહીં હૈં । યહી વાત 'સંબુધ્યમાન' ઓર 'વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત' હન દો વિશે-  
ષણોં સે પ્રકટ કી ગઈ હૈં । જો ધાર્મિક ઉપદેશકો યથાવત્ નહીં સમજ  
સકતે વે ઉસ ઉપદેશ સે લાભ બી કુછ નહીં પ્રાપ્ત કર સકતે ।  
એવં જો અપર્યાપ્ત હૈં, અસંજ્ઞી હૈં, ઉન પર બી ઉપદેશ અપના કુછ બી  
પ્રભાવ નહીં દિશ્વા સકતા । મનકે વિના વિચારશક્તિકા અભાવ  
હોનેસે વે ઉસ લાભસે સર્વથા વંચિત હી રહતે હૈં, અતઃ જો સંજ્ઞી હૈં,  
જિનમેં 'યહ હેય હૈં યહ ઉપાદેય હૈં' હસ પ્રકારકા જ્ઞાન જાગૃત હો રહા  
હૈં, વહીં પર દિયા ગયા ધાર્મિક ઉપદેશ અપના પ્રભાવ પ્રકટ કરતા હૈં ।

જિનેન્દ્રપ્રતિપાદિત સદ્ધર્મનો ઉપદેશ સંસારી જીવોને માટે જે પ્રગટ કરવામાં  
આવેલ છે તેનું કારણ એ જ છે કે તેમાં સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ  
ચારિત્રનું આરાધન કરવાની યોગ્યતા રહેલી છે. તેમાં પણ જે ધર્મ ગ્રહણ કરવાની  
યોગ્યતાથી સંપન્ન હોય છે તેને જ ધર્મનો ઉપદેશ આપવામાં આવે છે, અને  
ત્યાં જ તે અસરકારક પણ થાય છે. જે અપર્યાપ્તાવસ્થામાં રહેલાં છે તે ધાર્મિક  
ઉપદેશને પાત્ર નથી, આ વાત 'સંબુધ્યમાન' અને 'વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત' આ એ વિશે-  
ષણોથી પ્રગટ કરેલ છે. જે ધાર્મિક ઉપદેશને યથાવત્ નથી સમજી શકતા તે  
એ ઉપદેશથી કાંઈ પણ લાભ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેમજ જે અપર્યાપ્ત છે-  
અસંજ્ઞી છે તેની ઉપર પણ ઉપદેશ પોતાનો કાંઈ પણ પ્રભાવ પાડી શકતો નથી.  
મન વગર વિચાર-શક્તિનો અભાવ હોવાથી તે એ લાભથી સર્વથા દૂર જ રહે  
છે, પણ જે સંજ્ઞી છે જેમાં 'આ હેય છે, આ ઉપાદેય છે' આવા પ્રકારના  
જ્ઞાનની જાગૃતિ છે તેવાઓને ધર્મનો ઉપદેશ પોતાનો પ્રભાવ બતાવી શકે છે.



જ્ઞાનીકા દિવા ગયા ધાર્મિક ઉપદેશ ઇસ પદ્ધતિ કા હોતા હૈ જો પૂર્વોક્ત-વિશેષણવિશિષ્ટ માનવોં મેં અપને કર્તવ્ય માર્ગકી અવશ્ય ૨ જાગૃતિ કરતા હુઆ ઉન્હેં ધર્મકી ભાવનાસે ભાવિત કર દેતા હૈ । યદિ કોઈ કિસી કારણ સે આતુર-પીડિત યા પ્રમત્ત-પ્રમાદદશાવાલા ભી હો તો ભી વહ ઉસ ઉપદેશદ્વારા પ્રતિબોધિત હો જાતા હૈ । યહી “અદ્વા વિ સંતા અદુવા પમત્તા ” ઇસ પદ સે સ્પષ્ટ કિયા ગયા હૈ । કિસી કારણવશ જો આર્તધ્યાનમેં લવલીન હૈ, અથવા રાગદ્વેષ આદિ કારણોં સે યા વૈષયિક કિસી ભી સંબંધ સે જો પ્રમત્ત હો રહે હૈ; એસે માનવ ભી જ્ઞાની કે દિવ્ય ઉપદેશ સે ધાર્મિક લાભસે સંપન્ન હુએ હૈ । જૈસે-આર્ત ચિલાતિપુત્ર વગેરહ ઓર પ્રમત્ત શાલિભદ્રાદિકોંને ધર્મકા લાભ જ્ઞાનીકે ઉપદેશસે લિયા હૈ ।

ઇસ સૂત્રમેં “ મનુષ્યોં કે લિયે જ્ઞાની ધર્મકા ઉપદેશ દેતે હૈ ” યહ જો પ્રકટ કિયા ગયા હૈ, ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ-ઉનમેં સર્વસંવર ઓર સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રારાધન કરનેકી અધિકારિતા હૈ । યદ્યપિ પ્રભુકા ધાર્મિક આખ્યાન-સ્ત્રોત મેઘધારાકી તરહ એકસી ધારામેં સર્વત્ર પક્ષપાત રહિત વહતા હૈ । ઉનકી પર્ષદા-સમવસરણ-મેં જો (૧૨) બારહ પ્રકારકી પરિષદ હોતી હૈ ઉસમેં સબકે લિયે પ્રભુકી દિવ્યવાણી એકરૂપમેં વિના કિસી ભેદભાવકે ઉન ૨ જીવોંકી ભાષામેં પરિણત હોતી હૈ ।

જ્ઞાનીએ આપેલ ધાર્મિક ઉપદેશ પણ આ પદ્ધતિને હોય છે જે પૂર્વોક્ત વિશેષણ-વિશિષ્ટ મનુષ્યોમાં પોતાના કર્તવ્ય માર્ગની અવશ્ય અવશ્ય જાગૃતિ કરતાં કરતાં તેમાં ધર્મની ભાવના ભરી દે છે. કદાચ કોઈ કોઈ કારણથી પીડિત અગર પ્રમાદદશાવાળા પણ હોય તો પણ તે આ ઉપદેશદ્વારા પ્રતિબોધિત થઈ જાય છે, માટે “અદ્વા વિ સંતા અદુવા પમત્તા ” આ પદોથી સ્પષ્ટ કરેલ છે. કોઈ કારણ-વશ જે આર્તધ્યાનમાં તત્પર છે, અથવા રાગદ્વેષ આદિ કારણોથી યા વૈષયિક કોઈ પણ સંબંધથી જે પ્રમત્ત થઈ રહ્યા છે; એવા મનુષ્ય પણ જ્ઞાનીના દિવ્ય ઉપદેશથી ધાર્મિક લાભ પ્રાપ્ત કરે છે, જેમ આર્ત-ચિલાતિપુત્ર વિગેરે, અને પ્રમત્ત-શાલિભદ્રાદિકોએ ધર્મનો લાભ જ્ઞાનીના ઉપદેશથી લીધો છે.

આ સૂત્રમાં “ મનુષ્યોને માટે જ્ઞાની ધર્મનો ઉપદેશ આપે છે ” આ જે પ્રગટ કરેલ છે તેનું કારણ એ છે કે-તેમાં સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરવાની યોગ્યતા છે. પ્રભુનું ધાર્મિક આખ્યાનસ્ત્રોત વરસાદધારાની માફક એક ધારાથી સર્વત્ર પક્ષપાતરહિત વહે છે. તેમની પર્ષદા-સમવસરણ-માં જે બાર પ્રકારની પરિષદ ભરાય છે તેમાં બધાને માટે પ્રભુની દિવ્ય વાણી કોઈ પણ ભેદભાવ વિના-એક રૂપમાં તે તે જીવોની ભાષામાં પરિણત થાય છે,

ज्ञानी यथा धर्ममाख्याति तथा दर्शयति—‘ आर्ताअपि ’ इत्यादि । आर्ताअपि = कुतश्चित् कारणात् आतुरा अपि, अथवा रागद्वेषोदयात् अन्यस्माद् वा विषय-संगवशात् प्रमत्ता अपि सन्तः प्रतिबुध्यन्ते, यथा—आर्ताश्चिलातिपुत्रादयः, प्रमत्ताः शालिभद्रादयो धर्मं विदन्ति स्म, तथा ज्ञानी पुरुषो धर्ममुपदिशतीत्यर्थः । एतस्मिन् विषये श्रद्धानं विधेयमिति दर्शयितुमाह—‘ यथासत्यमिदम् ’ इति । मया यत् कथितं कथ्यमानं च तदिदं यथासत्यं सत्यमनतिक्रम्य वर्तते—इत्यर्थः, मुमुक्षुर-फिर भी जो यहां पर मनुष्यों के लिये ज्ञानी पुरुष धर्मका उपदेश देते हैं उसका कारण उनमें सर्वसंवर और सर्वविरतिरूप चारित्राराधन करने की योग्यता ही है । और उसी योग्यता को लक्षमें रख कर यह कहा गया है ।

मनुष्यों के सिवाय अन्यगतियों के जीवों में यह योग्यता नहीं है । तिर्यञ्चगतिके जीव (५) पांच गुणस्थानों से आगे नहीं बढ़ सकते हैं । देवगति के जीवों में (४) चार गुणस्थान ही पाये जाते हैं, अन्य गुणस्थान नहीं । मनुष्यों में ही (१४) चौदह गुणस्थानों के आराधन करने की योग्यता है । इतना होने पर भी जो पर्याप्त नहीं हैं किन्तु अपर्याप्तदशावर्त्ती हैं, वे उपदेशके पात्र ही नहीं हैं ।

‘ निर्वृत्यपर्याप्तक ’ वे हैं—जिनकी अभी पर्याप्तियां पूर्ण नहीं हुई हैं, एक अन्तर्मुहूर्त में नियम से पूर्ण हो जावेंगी । ‘ लब्ध्यपर्याप्तक ’ वे हैं—जो पर्याप्तियों की पूर्णतासे रहित हैं, और अन्तर्मुहूर्त में जिनका मरण

तो પણ જે આ ઠેકાણે ‘ મનુષ્યોને માટે જ્ઞાની પુરુષ ધર્મનો ઉપદેશ આપે છે ’ આવું જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ તેમાં સર્વ—સંવર અને સર્વ—વિરતિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરવાની યોગ્યતા જ છે. અને તે યોગ્યતાને ધ્યાનમાં રાખીને આ કહેવામાં આવેલ છે.

મનુષ્ય સિવાય બીજી ગતિઓના જીવોમાં આ યોગ્યતા નથી. તિર્યંચ ગતિના જીવો પાંચ ગુણસ્થાનથી આગળ વધી શકતા નથી. દેવગતિમાં જીવોને ચાર ગુણસ્થાન જ દેખાય છે, બીજા ગુણસ્થાનો નથી. મનુષ્યોમાં જ ચૌદ ગુણ-સ્થાન આરાધન કરવાની યોગ્યતા છે. આટલું હોવા છતાં જે પર્યાપ્ત નથી પણ અપર્યાપ્તદશાવર્તી છે તે ઉપદેશને પાત્ર નથી.

‘ નિર્વૃત્ત્યપર્યાપ્તક ’ તે છે, જેની હજી પર્યાપ્તિઓ પુરી થઈ નથી, એક અંતર્મુહૂર્તમાં નિયમથી પૂર્ણ થશે. ‘ લબ્ધ્યપર્યાપ્તક ’ તે છે જે પર્યાપ્તિઓની પૂર્ણ-તાથી રહિત છે, અને અંતર્મુહૂર્તમાં જેનું મરણ અવશ્યભાવી છે, તે સંમૂર્ધિષ્ઠ



સ્મિન્ વિષયે સમ્યક્ત્વં કુર્યાદિતિ ભાવઃ । ઇતિ=ઈદં બ્રવીમિ=યથા મયા ભગવદ્વાક્યં શ્રુતં તથા કથયામીત્યર્થઃ । દુર્લભં સમ્યક્ત્વં ચારિત્રં વા પ્રાપ્ય પ્રમાદો ન કર્તવ્ય ઇતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૩ ॥

પ્રમાદવતાં સંસારિણાં પુનઃ પુનર્મરણં જન્મ ચ નિરવસાનં ભવતીતિ બોધયિતુમાહ — ‘નાણાગમો’ ઇત્યાદિ ।

અવશ્યંભાવી છે । એ સંમૂર્ચ્છિમ મનુષ્ય હોતે છે । इसी बातको प्रकट करने के लिये सूत्रमें ‘संबुध्यमान’ और ‘विज्ञानप्राप्त’ ये दो विशेषण दिये गये हैं ।

કૈસી ૨ દશાસંપન્ન જીવોં ને પ્રભુકી ધર્મદેશના સે ધર્મલાભ લિયા છે, यह बात चिलातिपुत्र और शालिभद्र आदिके दृष्टान्तसे स्पष्ट की गई है । इनका कथानक शास्त्रों में वर्णित है ।

हे जम्बू ! इस विषयमें जो मैंने कहा है, अथवा आगे भी जो कहा जायगा वह सब सर्वथा सत्य ही है । मुमुक्षुका कर्तव्य है कि वह इस विषयमें पूर्ण श्रद्धालु हो, कारण कि प्रभुके मुख से जैसा सुना है वैसा ही मैं तुझे कहता हूं, अतः हे जम्बू ! दुर्लभ सम्यक्त्व और चारित्रको प्राप्त कर प्रमादका सेवन न करो, यही बारबार कहना है ॥सू० ३॥

પ્રમાદી સંસારી જીવોંકા પુનઃ પુનઃ મરણ ઓર જન્મ નિરંતર હોતા રહતા છે, यही प्रकट किया जाता है—‘नाणागमो’ इत्यादि ।

મનુષ્ય હોય છે, આ જ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રમાં ‘સંબુદ્ધમાન’ અને ‘વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત’ એ બે વિશેષણો આપેલા છે.

કેવી કેવી દશાવાળા જીવોને પ્રભુની ધર્મદેશનાથી ધર્મનો લાભ થયેલ છે તે વાત ચિલાતિપુત્ર અને શાલિભદ્ર આદિના દૃષ્ટાન્તથી સ્પષ્ટ છે. ( આની કથા શાસ્ત્રોમાં વર્ણવેલી છે )

હે જમ્બૂ ! આ વિષયમાં જે મેં કહ્યું છે અને આગળ પણ જે કહેવામાં આવશે તે બધું સાચું જ છે. મોક્ષાભિલાષીનું કર્તવ્ય છે કે તે આ વિષયમાં પૂર્ણ શ્રદ્ધાળુ રહે; કારણ કે પ્રભુના મુખથી જેવું સાંભળ્યું છે તેવું જ હું તમોને કહું છું, માટે હે જમ્બૂ ! દુર્લભ સમ્યક્ત્વ અને ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરીને પ્રમાદનું સેવન ન કરો, એ જ વારંવાર કહેવાનું છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

પ્રમાદી સંસારી જીવોના વારંવાર મરણ અને જન્મ નિરંતર થયા કરે છે, તેને પ્રગટ કરવામાં આવે છે—‘નાણાગમો’ ઇત્યાદિ.



मूलम्—नाणागमो मच्चुमुहस्स अत्थि, इच्छा पणीया वंकानि-  
केया कालग्गहीया निचये निविट्ठा पुढो पुढो जाइं पकप्पयंति । सू० ४।

छाया—नाऽनागमो मृत्युमुखस्यास्ति, इच्छा प्रणीता वङ्कानिकेताः, काल-  
गृहीता निचये निविष्टाः पृथक् पृथक् जार्ति प्रकल्पयन्ति ॥ सू० ४ ॥

टीका—मृत्युमुखस्यानागमः संसारिणां नास्तीत्यन्वयः । एवंभूतः कश्चिदपि  
संसारी नास्ति, य उपक्रमेण निरुपक्रमेण वा मृत्युमुखे नाऽऽपततीत्यर्थः । उपक्रमो  
=निमित्तं-दण्डकशाशस्त्ररज्जुविषादयः, निरुपक्रमो=निमित्ताभावः । तथा चोक्तम्—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनं क्रियां,  
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।  
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,  
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ” ॥ १ ॥ इति,

ऐसा कोई संसारी जीव नहीं है जो कि उपक्रम-निमित्तसे अथवा  
अनुपक्रम-विना निमित्त से मृत्युके मुखमें नहीं पड़ता हो । कहा भी है—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनक्रियां,  
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।  
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,  
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ॥ १ ॥ ” इति ।

अर्थात्—कायर पुरुष मृत्युके भयसे चाहे कहीं भग जाय, या मृत्यु  
की लाचारी करे, कहीं चला जाय, कोई प्रपञ्च करे, अथवा अमर होनेके  
लिये रसायन क्रिया ( कायाकल्प ) करे, तथा बडे २ व्रत करे, पहाड़ों की  
गुफाओं में छिप जावे, अनेक प्रकारके तप तपे, परिमित खोराक खावे,

येवो केह संसारी जेव नथी जे निमित्तथी अथवा वगर निमित्तथी  
मृत्युना मुण्णमां न पडता होय. कहूं छे—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनक्रियां,  
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।  
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,  
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ” ॥ १ ॥ इति ।

अर्थात्—कायर पुरुष मृत्युना लयथी लवे केह जग्याये लागी जय,  
अथवा मृत्युनी लाचारी करे, केह जग्याये यादी जय, केह प्रपञ्च करे, अथवा  
अमर थवाने माटे रसायन क्रिया ( कायाकल्प ) करे, तथा मोटा व्रत करे, पहाड़ोनी  
गुफाओमां छुपाई जय, अनेक प्रकारना तप करे, परिमित जोराक जाय, मन्त्र-

ये तु रागान्धतया प्रमत्ता धर्मं नाभिजानन्ति ते किंभूता भवन्तीत्याह—‘इच्छा’ इत्यादि । इच्छया=विषयसुखवाञ्छया, प्रणीताः=विषयाभिमुखं प्रकर्षेण नीताः, इच्छापरतन्त्रा इत्यर्थः । यद्वा—इहेन्द्रियाद्यनुकूला प्रवृत्तिरिच्छा, तया संसाराभिमुखं मन्त्रसाधना करे; तो भी वह कराल कालके तीखे दांतों से चीरा ही जाता है, अर्थात् किसी प्रकार भी प्राणी मृत्यु से नहीं बच सकता ॥१॥

उपक्रम—मृत्युका निमित्त कारण । जैसे—दण्ड, चाबुक, शस्त्र, रस्सी, विष आदि । निरूपक्रम—निमित्त रहित—आयुके पूर्ण होने पर अपने—आप मृत्युको प्राप्त होना ।

इस सूत्र में यह प्रकट किया जा रहा है कि जो राग और द्वेषसे अन्धे होकर प्रमादी हुए हैं और धर्म को नहीं जान रहे हैं वे विषय-सुख की वाञ्छा से ही विषयों में आसक्त होते हैं । अपनी उस अभिलाषा की पूर्त्तिकरनामात्र ही वे अपना परम कर्तव्य समझते हैं । इस समय उन्हें न्याय अन्याय का कुछ भी ध्यान नहीं रहता है । इच्छा की पूर्ति करनामात्र ही एक लक्ष्य होता है । इन्द्रियों के अनुकूल प्रवृत्तिका नाम ही इच्छा है । जो इन्द्रियोंके इन्हें अनुकूल जचा उसमें ही अन्धे होकर ये गिर पड़ते हैं, ‘इसका भविष्यमें क्या परिणाम होगा ?’ यह विचार इन्हें नहीं रहता । इच्छाओंके आधीन बने हुए मनुष्य संसारकी ओर ही दौड़ लगा रहे हैं । निवृत्तिमार्गसे वे दूर हैं । निवृत्तिमार्गकी प्राप्ति

સાધના કરે તો પણ તે કરાળકાળના તીખા દાંતથી ચિરાઈ જાય છે, અર્થાત્ પ્રાણી મૃત્યુથી કોઈ પ્રકારે પણ બચી શકતો નથી. ॥ ૧ ॥

उपक्रम—मृत्युतुं निमित्तकारण, जेम—दंड, चाबुक, शस्त्र, रस्सी, विष आदि.

निरूपक्रम—निमित्तरहित—आयुष्य पुर्ण થવાથી આપમેળે મૃત્યુને વશ થવું.

આ સૂત્રમાં એમ કહેવામાં આવેલ છે કે જેઓ રાગ અને દ્વેષથી અંધ બનીને પ્રમાદી બને છે અને ધર્મને જાણતા નથી તેઓ વિષયસુખની ઇચ્છાથી વિષયોમાં આસક્ત બને છે. પોતાની આ ઇચ્છાને પૂર્ણ કરવામાં જ પોતાનું પરમ કર્તવ્ય સમજે છે. આ વખતે ન્યાય અન્યાયનો કોઈ ખ્યાલ રાખતો નથી. ઇચ્છાને પૂર્ણ કરવાનો જ માત્ર એક ખ્યાલ રાખે છે. ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ પ્રવૃત્તિનું નામ જ ઇચ્છા છે. જે ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ ગમ્યું તેમાં જ અંધ બનીને તેઓ પડે છે. ‘એનું ભવિષ્યમાં શું પરિણામ આવશે ?’ આ વિચાર એને નથી આવતો. ઇચ્છાએને આધીન બનેલો મનુષ્ય સંસારની તરફ જ દોટ લગાવે છે. નિવૃત્તિ માર્ગથી તે દૂર છે. નિવૃત્તિ માર્ગની પ્રાપ્તિ વિના ઇચ્છાઓ પર અંકુશ થતો



प्रणीता इत्यर्थः । अत एव-वङ्कानिकेताः वङ्कः असंयमस्तस्य आ-समन्तात् निकेताः आश्रयाः, अत एव-कालगृहीताः=कालेन-मृत्युना गृहीताः-पुनःपुनर्मरणदुःखभागिनः, यद्वा-कालगृहीताः-गृहीतः कालो यैस्ते कालगृहीताः, आर्षत्तान्निष्ठान्तस्य परनिपातः, धर्माचरणाय कालाभिसन्धायिनः-‘वृद्धावस्थायां परुषं वा परारि वा तनय-दुहितृपरिणयानन्तरं वा धर्मं करिष्यामः’ इत्येवं संकल्पकारिण इत्यर्थः । अत एव निचये निविष्टाः=द्रव्यतो हिरण्याद्युपचये, भावतः कर्मोपचये निविष्टाः=संलग्नाः सन्तः, पृथक् पृथक् अन्यामन्याम् जातिम्=एकेन्द्रियादिकाम् अनन्तवारं प्रकल्पयन्ति

विना, इच्छाओं पर अंकुश नहीं हो सकता है, यह निर्विवाद सिद्ध है । जहां तक प्रवृत्तिमार्ग है वहीं तक संसार है । निवृत्तिमार्गकी प्राप्ति ही संसारका साक्षात् या परम्परारूपसे अन्त है । इच्छाओं पर विजय पाना यही तो संयमभाव है । इसके विपरीत असंयमभाव है । असंयमी जीव धर्मकी प्राप्ति करने में काल-समयका बहाना किया करते हैं— “अभी तो जवानीका समय है सांसारिक आनन्द भोग लूं, वृद्धावस्था आने पर धर्म धारण कर लूंगा । अथवा आगामी वर्ष में या उसके बाद के वर्ष में अथवा पुत्र-पुत्रियों का विवाह करके फिर धर्म करूंगा । ” इस प्रकार का विचार करते २ ही वे काल के ग्रास बन जाते हैं और धर्मके लाभ से वंचित रह जाते हैं । विषयेच्छा के आधीन बना हुआ संसारी मनुष्य जिस किसी प्रकारसे हिरण्य-सुवर्णादिक परिग्रहके संचय करने में ही अपने जीवन के अधिकांश भाग को नष्ट कर देता है, और उपार्जित कर्मानुसार एकेन्द्रियादिक योनियोंमें अनन्तवार जन्ममरण के अनन्त

नहीं, ते निर्विवाद सिद्ध छे. ज्यों सुधी प्रवृत्तिमार्ग छे त्यों सुधी संसार छे. निवृत्तिमार्गनी प्राप्ति संसारनो साक्षात् अगर परंपराधी अंत छे. इच्छाओं उपर विनय भेजवो ते न संयम-भाव छे. तेथी विपरीत असंयमभाव छे. असंयमी जेव धर्मनी प्राप्ति करवामां समयतुं ँडातुं अतावे छे—‘इल तो जवानीनो समय छे, सांसारिक आनंद भोगवी लउं, वृद्धावस्था आव्या पछी धर्म धारण करी लईश. अथवा-आगामी वर्षमां, अगर तेना आदना वर्षमां, अथवा पुत्र-पुत्रीओना विवाह थया पछी धर्म करीश. ’ आवा प्रकारना विचार करी करीने ते काणनो ग्रास अनी नय छे, अने धर्मना लाभथी वंचित रही नय छे. विषयेच्छाने आधीन अनेला संसारी मनुष्य जे कोछ प्रकारथी हिरण्य-सुवर्णादिक परिग्रहनो संचय करवामां न पोताना जवनना अधिकांश लागने नष्ट करे छे, अने उपार्जित-कर्मानुसार एकेन्द्रियादिक योनियोमां अनंत वार जन्म मरणना



=જનયન્તિ । રાગદ્વેષવશાત્પ્રમાદિનઃ સંસારિણો ધર્મમનવબુદ્ધ્ય ઇન્દ્રિયાનુકૂલવિષયે મોહં પ્રાપ્ય પુનઃ પુનઃ કર્મોપચયં કુર્વન્તસ્તદ્વન્ધ્યાત્ પ્રચ્યુતા ન ભવન્તીતિ ભાવઃ ॥૪॥

પ્રમાદવતાં પુનઃ પુનર્જાતિપ્રકલ્પને કા હાનિર્ભવતીતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ—  
'ઇહમેગેસિં તત્થ તત્થ' इत्यादि ।

મૂલમ્—ઇહમેગેસિં તત્થ તત્થ સંત્થવો ભવઈ । અહોવવાઈણ  
ફાસે પડિસંવેયાંતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—ઇહૈકેષાં તત્ર તત્ર સંસ્તવો ભવતિ । અથઔપપાતિકાન્ સ્પર્શાન્ પ્રતિ  
સંવેદયન્તિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—અસ્મિન્ લોકે, એકેષાં=મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકષાયવતાં, તત્ર-તત્ર=નરકાદિયાતનાસ્થાનેષુ, સંસ્તવઃ=પ્રકર્ષેણ પરિચયો ભવતિ, તત્ર પુનઃ-પુનર્ગમનવશા-  
કષ્ટોં કો સહન કરતા રહતા હૈ । સારાંશ યહ હૈ કિ-રાગદ્વેષકે વશ સે સંસારી જીવ ધર્મ કો નહીં સમક્ષ કર ઇન્દ્રિયાં ઔર મન કે અનુકૂલ વિષયોં મેં મુગ્ધ હોકર વારંવાર કર્મપરંપરા કી વૃદ્ધિ કરતા હુઆ કર્મોં સે રહિત નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

પ્રમાદશાલી જીવોં કી એકેન્દ્રિયાદિક યોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કરને પર કયા હાનિ હોતી હૈ ? એસી શિષ્યકી જિજ્ઞાસા હોને પર ઉત્તર દેતે હૈ—'ઇહમેગેસિં' इत्यादि ।

ઇસ સંસાર મેં મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ ઔર કષાયવાલે જીવોં કા છેદન, ભેદન, બન્ધન આદિ કષ્ટોં કે સ્થાનભૂત નરકાદિમેં બારંબાર ઉત્પન્ન હોને સે ડન નરકાદિકોંકે સાથ અધિક પરિચય હો જાતા હૈ, ઇસસે વે વહાં કે દુઃસ્વોં કો ભોગતે રહતે હૈ ।

અનંત દુઃખોને સહન કરતા રહે છે. આ કથનનો સાર એ છે કે—રાગ દ્વેષના કારણથી સંસારી જીવ ધર્મને નહિ સમજીને ઇન્દ્રિયો અને મનના અનુકૂળ વિષયોમાં મુગ્ધ થઈને વારંવાર કર્મપરંપરાની વૃદ્ધિ કરે છે, અને કર્મોથી રહિત થતા નથી. ॥સૂ૦ ૪॥

પ્રમાદશાળી જીવોની એકેન્દ્રિયાદિક યોનિયોમાં જન્મ ધારણ કરવાથી શું નુકસાન થાય છે ? એવી શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી ઉત્તર આપે છે—'ઇહમેગેસિં' इत्यादि.

આ સંસારમાં મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ અને કષાયવાળા જીવોને છેદન ભેદન, બન્ધન આદિ દુઃખોના સ્થાનભૂત નરકાદિમાં વારંવાર ઉત્પન્ન થવાથી તે નરકાદિકોની સાથે અધિક પરિચય થઈ જાય છે, તે ત્યાંના દુઃખોને ભોગવતા રહે છે.

दिति भावः । तत्परिचये सति किं भवतीत्याह—‘अधऔपपातिकान्’ इत्यादि। भोगेच्छापरतन्त्रतयेन्द्रियानुकूलाऽऽचरणेन नरकादिस्थानं संप्राप्ताः, अधऔपपातिकान्=नरकादिसम्बन्धिनः, स्पर्शान्=दुःखानि प्रतिसंवेदयन्ति=अनुभवन्ति ॥५॥

ननु भोगेच्छाविवशाः सर्वेऽपि अधऔपपातिकान् स्पर्शान् प्रतिसंवेदयन्ति, किं वा तेषु कश्चिदेवेति जिज्ञासायामाह—‘चिट्ठं कूरेहिं’ इत्यादि ।

मूलम्—चिट्ठं कूरेहिं कम्ममेहिं चिट्ठं परिचिट्ठइ । अचिट्ठं कूरेहिं कम्ममेहिं नो चिट्ठं परिचिट्ठइ ॥ सू० ६ ॥

छाया—तिष्ठन् कूरेषु कर्मसु भृशं परितिष्ठति । अतिष्ठन् कूरेषु कर्मसु नो भृशं परितिष्ठति ।

यद्वा—भृशं क्रूरैः कर्मभिः भृशं परितिष्ठति । अभृशं क्रूरैः कर्मभिः नो भृशं परितिष्ठति ॥ सू० ६ ॥

जो कर्मबन्ध के कारण मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद और कषाय के सेवन करनेमें ही रातदिन संलग्न रहते हैं, एवं विषयभोगों की इच्छा के आधीन होने से धार्मिक आचारविचार से शून्य हैं, इन्द्रियों के अनुकूल आचरण करनेमें ही जो लगे हैं वे मृत्यु के ग्रास बनकर नरकादियोनियों में—कि जहां पर छेदन, भेदन, बन्धनादि अपार कष्ट हैं—बार बार उत्पन्न होते हैं और वहां के उन अनन्त कष्टों को भोगते रहते हैं ॥सू०५॥

क्या विषयभोगोंकी इच्छा के पराधीन बने हुए समस्त ही प्राणी नरकादियोनियों के कष्टों को भोगते हैं या उनमें से कोई २ ? इस प्रकार के प्रश्नका उत्तर कहते हैं—‘चिट्ठं कूरेहिं’ इत्यादि ।

જે મનુષ્ય કર્મબંધના કારણે મિથ્યાત્વ અવિરતિ પ્રમાદ અને કષાયના સેવન કરવામાં રાત-દિન રચ્ચો-પચ્ચો રહે છે, અને વિષયભોગોની ઇચ્છાને અધીન હોવાથી ધાર્મિક આચાર વિચારથી શૂન્ય છે, ઇન્દ્રિયોના અનુકૂળ આચરણ કરવામાં જ જે લાગેલ છે, તે મૃત્યુનો ગ્રાસ બનીને નરકાદિ યોનિયોમાં કે જે ઠેકાણે છેદન-ભેદન બંધનાદિ અપાર દુઃખો છે, ત્યાં વારંવાર ઉત્પન્ન થાય છે અને ત્યાંના તે અનન્ત દુઃખોને ભોગવતો રહે છે. ॥સૂ. ૫॥

શું વિષયભોગોની ઇચ્છાને પરાધીન બનેલા સમસ્ત પ્રાણી નરકાદિ યોનિયોમાં દુઃખોને ભોગવે છે કે તેમાંથી કેઈ કેઈ ભોગવે છે? આ પ્રકારના પ્રશ્નના જવાબમાં કહે છે—‘ચિટ્ઠં કૂરેહિં’ ઇત્યાદિ.



ટીકા—ક્રૂરેષુ=ઘોરતરપરિણામેષુ વધવન્ધાદિષુ, કર્મસુ=ક્રિયાસુ, તિષ્ઠન્=પ્રવૃત્તિઃ, મૃશમ્=અત્યર્થ—ચિરં નરકે પરિતિષ્ઠતિ—તત્ર વૈતરણીતરણાઽસિપત્રપાતાઽઽદિ-જનિતં ઘોરતરં દુઃસ્વમનુભવન્ દીર્ઘકાલમવસ્થિતો ભવતીત્યર્થઃ । ક્રૂરેષુ કર્મસુ અતિ-ષ્ઠન્=અપ્રવૃત્તસ્તુ મૃશં=સર્વથા નરકે નો પરિતિષ્ઠતિ=ઉપસ્થિતો ન ભવતિ, ન તત્રોત્પ-દ્યતે इत्यર્થઃ ।

યદ્વા—મૃશં ક્રૂરૈઃ=અતિકુટિલૈઃ પ્રાણાતિપાતાદિભિઃ કર્મભિઃ=વ્યાપારૈઃ, મૃશમ્=અત્યર્થ—ચિરં નરકે પરિતિષ્ઠતિ । એવમ્ અમૃશં ક્રૂરૈઃ=મન્દક્રૂરૈઃ કર્મભિઃ નરકે મૃશમ્=અત્યર્થ—ચિરં નો પરિતિષ્ઠતિ, શ્રેણિકવત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જિનકા પરિણામ ઘોરતર હૈ, એસે વધ-બંધનાદિક જો ક્રૂર કર્મ હૈં ઉનમેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા પ્રાણી મરકર નરકોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઓર ચિરકાલ તક અનેક સાગરપર્યન્ત વહાં કે દુઃસ્વ ભોગના, વૈતરણી નદી મેં તૈરના, શાલ્મલી-સેમર જાતકે વૃક્ષોંકે તલવાર કી ધાર કે સદૃશ પત્તોં કે ગિરને સે દેહ કા ચીરે જાના આદિ જો ભયંકર દુઃસ્વ હૈં ઉન્હેં ભોગતા હુઆ વહીં પર અપની ભુજ્યમાન આયુકો વ્યતીત કરતા હૈ । જો ઇન ક્રૂર કર્મોં કે સેવન મેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરતા હૈ વહ નરક-નિગોદ મેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ ।

અથવા—અતિકુટિલ જો પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મ હૈં ઉનકે દ્વારા યહ પ્રાણી ચિરકાલ તક નરક મેં નિવાસ કરતા હૈ ઓર મન્દ ક્રૂર કર્મોં કે દ્વારા વહાં ચિરકાલ તક નહીં, કિન્તુ કુછ કાલ તક હી શ્રેણિક રાજા કી તરહ રહતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જેના પરિણામ ઘોરતર છે એવા વધ બંધનાદિક જે જે ક્રૂર કર્મ છે તેમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા પ્રાણી મરીને નરકમાં ઉત્પન્ન થાય છે, અને ચિરકાળ સુધી અનેક સાગર પર્યન્ત ત્યાંના દુઃખને ભોગવવું, વૈતરણી નદીમાં તરવું, શાલ્મલી-સેમર જાતના વૃક્ષોના તલવારની ધાર જેવા પાંદડાઓના પડવાથી દેહનું ચીરાઈ જવું આદિ જે ભયંકર દુઃખો છે તેઓને ભોગવતાં ભોગવતાં ત્યાં જ પોતાના ભુજ્ય-માન આયુષ્યને વ્યતીત કરે છે. જે આવા ક્રૂર કર્મોનું સેવન કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરતા નથી તે નરક-નિગોદમાં ઉત્પન્ન થતા નથી.

અથવા—અતિકુટિલ જે પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મોં છે તેઓ દ્વારા આવા પ્રાણી ચિરકાળ સુધી નરકમાં નિવાસ કરે છે, અને મંદ ક્રૂર કર્મોં દ્વારા ત્યાં ચિરકાળ સુધી નહિ પણ કાંઈક ઓછા સમય સુધી શ્રેણિક રાજાની માફક રહે છે. ॥સૂ૦ ૬॥



एवं को वदति, यस्य वचनेऽस्माकं श्रद्धा समुत्पद्येत ? इति जिज्ञासायामाह—  
' एगे वयंति ' इत्यादि ।

मूलम्—एगे वयंति अदुवावि नाणी, नाणी वयंति अदुवावि  
एगे ॥ सू० ७ ॥

छाया—एके वदन्ति अथवाऽपि ज्ञानिनः । ज्ञानिनो वदन्ति अथवाऽपि एके ॥७॥

टीका—एके=चतुर्दशपूर्वधराः श्रुतकेवलिनो यद् वदन्ति, अथवा ज्ञानिनः निरा-  
वरणज्ञानवन्तः सर्वज्ञा अपि तदेव वदन्ति । उक्तार्थमेव परावर्त्य कथयति—' ज्ञानिनः'  
इत्यादि । ज्ञानिनः=निरावरणज्ञानवन्तः केवलिनो यद् वदन्ति, अथवा—एकेऽपि=

श्री जम्बूस्वामी श्रीसुधर्मास्वामी से पूछते हैं कि—हे भदन्त ! ऐसी  
प्ररूपणा कौन करते हैं कि जिनके वचनों में हम श्रद्धा करें ? श्री सुधर्मा  
स्वामी कहते हैं—' एगे वयंति ' इत्यादि ।

इस प्रकारका प्रतिपादन चतुर्दश पूर्व के पाठी श्रुतकेवली श्रीगण-  
धरादिक देव करते हैं, और यही बात निरावरणज्ञानशाली श्री सर्वज्ञ  
भगवान भी कहते हैं । दोनों का इस विषयमें एक मत है । इस विषय  
की आचार्य महाराज फिर पुष्टि करते हैं कि—जिस अर्थका प्रतिपादन  
केवली करते हैं उसीका प्रतिपादन श्रुतकेवली महाराज करते हैं । कारण  
कि केवली और श्रुतकेवली के कथनमें रंचमात्र भी फरक नहीं होता है ।  
केवली भगवान केवलज्ञानविशिष्ट होते हैं, और श्रुतकेवली चौदह पूर्व  
के पाठी होते हैं; अतः ये दोनों यथार्थवक्ता हैं । यद्यपि केवली और  
श्रुतकेवली के ज्ञानमें प्रत्यक्ष और परोक्ष के रूपसे भिन्नता है; परन्तु वस्तु-

श्री जम्बूस्वामी श्री सुधर्मास्वामीने पूछे છે કે—હે ભદન્ત ! આવી પ્રરૂપણા  
કેણુ કરે છે જે તેનાં વચનોમાં અમે શ્રદ્ધા કરીએ ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે—  
—' એગે વયંતિ ' ઇત્યાદિ.

આ પ્રકારનો પ્રતિપાદન ચતુર્દશ પૂર્વના પાઠી, શ્રુતકેવળી, શ્રીગણધરાદિક  
દેવ કરે છે, અને આ વાત નિરાવરણજ્ઞાનશાળી શ્રી સર્વજ્ઞ ભગવાન પણ કહે છે.  
આ વિષયમાં બન્નેના એક મત છે. આ વિષયની આચાર્ય મહારાજ ફરીથી પુષ્ટિ  
કરે છે કે જે અર્થનું પ્રતિપાદન કેવળી કરે છે તેજ અર્થનું પ્રતિપાદન શ્રુતકેવળી  
મહારાજ કરે છે, કારણુ કે કેવળી અને શ્રુતકેવળીના વચનોમાં જરા પણ ફરક પડતો  
નથી. કેવળી ભગવાન કેવળજ્ઞાન-વિશિષ્ટ છે અને શ્રુતકેવળી ચૌદ પૂર્વના પાઠી  
છે, માટે આ બન્ને યથાર્થવક્તા છે. જે કે કેવળી અને શ્રુતકેવળીના જ્ઞાનમાં પ્રત્યક્ષ  
અને પરોક્ષ રૂપથી ભિન્નતા છે પરન્તુ વસ્તુસ્વરૂપના પ્રતિપાદન કરવામાં અગર

શ્રુતકેવલિનોડપિ તદેવ વદન્તિ । દિવ્યજ્ઞાનવન્તઃ કેવલિનઃ, ચતુર્દશપૂર્વધરાઃ શ્રુત-  
કેવલિનશ્ચેત્યુભયે યથાર્થવાદિત્વાદેકમેવાર્થ વદન્તિ, ન તુ વિરુદ્ધમિતિ ભાવઃ ॥૭॥

एवं वक्ष्यमाणेऽप्यर्थे तेषामेकवाक्यताऽस्तीत्याह—‘आवंती’ इत्यादि ।

મૂલમ્—આવંતી કેયાવંતી લોચંસિ સમણા ય માહણા ય  
પુઢો વિવાયં વયંતિ—“સે દિટ્ઠં ચ ણે, સુયં ચ ણે, મયં ચ ણે, વિણ્ણાયં  
ચ ણે, ઉડ્ઢં અહં તિરિયં દિસાસુ સવ્વઓ સુપહિલેહિયં ચ ણે—  
સવ્વે પાણા સવ્વે ભૂયા સવ્વે જીવા સવ્વે સત્તા હંતવ્વા  
અજ્ઞાવેયવા પરિઘેતવા પરિયાવેયવા ઉદ્ધવેયવા, ઇત્થવિ જાણહ,  
નત્થિત્થ દોષો, ”—અણારિયવયણમેયં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—યાવન્તઃ કિયન્તો લોકે શ્રમણાશ્ચ બ્રાહ્મણાશ્ચ પૃથક્ વિવાદં વદન્તિ—  
“તત્ દૃષ્ટં ચ નઃ, શ્રુતં ચ નઃ, મતં ચ નઃ, વિજ્ઞાતં ચ નઃ, ઊર્ધ્વમધસ્તિર્યગ્ દિશાસુ  
સર્વત્ર સુપ્રતિલેખિતં ચ નઃ—સર્વે પ્રાણાઃ, સર્વે ભૂતાઃ સર્વે જીવાઃ સર્વે સત્ત્વાઃ હન્ત-  
વ્યાઃ આજ્ઞાપયિતવ્યાઃ પરિગ્રહીતવ્યાઃ પરિતાપયિતવ્યાઃ અપદ્રાવયિતવ્યાઃ, અત્રાપિ  
જાનીત, નાસ્ત્યત્ર દોષઃ ” અનાર્યવચનમેતત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—લોકે=મનુષ્યલોકે યાવન્તઃ કિયન્તઃ=વહવ્યેત્યર્થઃ શ્રમણાઃ=દણ્ડિ-  
શાક્યાદયઃ, બ્રાહ્મણાઃ=ઔદેશિકભોજિનઃ પૃથક્=અન્યપ્રકારેણ વિવાદં=ધર્મવિરુદ્ધ-  
વચનં વદન્તિ । તદ્વિવાદસ્વરૂપં દર્શયિતુમાહ—‘તદ્ દૃષ્ટમ્’ ઇત્યારમ્ય યાવત્

સ્વરૂપ કે પ્રતિપાદન કરને મેં જરા મી ભિન્નતા નહીં હૈ । કેવલી ઓર  
શ્રુતકેવલી યથાર્થવક્તા હોનેસે એક હી અર્થકા પ્રતિપાદન કરતે હૈ, વિરુદ્ધ  
અર્થકા નહીં ॥ સૂ૦ ૭ ॥

इसी प्रकार आगे कहे जानेवाले अर्थ में भी एकवाक्यता होती है;  
वह दिखलाते हैं—“आवंती केयावंती” इत्यादि ।

हम लोकमें जितने भी श्रमण और ब्राह्मण हैं वे सब धर्मके विरुद्ध  
पृथक् २ रूपसे प्ररूपणा करते हैं और कहते हैं कि—“जो कुछ भी हमारी

તેને બાણુવામાં બંનેના જ્ઞાનમાં જરા પણ ભિન્નતા નથી. કેવળી અને શ્રુતકેવળી  
યથાર્થવક્તા હોવાથી એક જ અર્થનો પ્રતિપાદન કરે છે, વિરુદ્ધ અર્થનો નહિ. ॥સૂ૦૭॥

આ જ પ્રકારે આગળ કહેવામાં આવનારા અર્થમાં પણ એકવાક્યતા થાય  
છે; તે બતાવે છે—‘આવંતી કેયાવંતી’ ઇત્યાદિ.

આ લોકમાં જેટલા પણ શ્રમણ એટલે દંડી શાક્યાદિક અને બ્રાહ્મણ એટલે  
ઔદેશિક આહાર લેવાવાળા છે તે બધા, ધર્મની વિરુદ્ધ જુદા જુદા રૂપે પ્રરૂપણા



‘नास्त्यत्र दोषः’ इति । ‘तद् दृष्टं च नः’ इति, यद्वयं वक्ष्यामस्तदस्माकं दृष्टम्—दिव्य-  
ज्ञानेन प्रत्यक्षीकृतम् । ‘नः’ इति कर्तुः सम्बन्धसामान्यविवक्षायां षष्ठी । यद्वा  
—अस्माकमाचार्यैर्दृष्टम् । श्रुतं च नः=अस्माकं श्रुतं च आचार्यादिभ्यः । मतं च  
नः=युक्तियुक्तत्वादस्माकम् अस्मदाचार्याणां वा अभिमतम् । विज्ञातं च नः=पदार्थानां  
भेदपर्यायैरस्माकम्, अस्मदाचार्याणां वा विज्ञातम् । एतच्च—ऊर्ध्वम्, अधः, तिर्यक्षु  
दिशासु—दशसु दिक्षु इत्यर्थः; सर्वतः=प्रत्यक्षादिभिः सर्वैः प्रमाणैः सर्वप्रकारेण वा  
सुप्रतिलेखितं च नः=मनःप्रणिधानादिनाऽस्माकमस्मदाचार्याणां वा सुष्ठु पर्या-  
लोचितं च । यद् दृष्टं श्रुतं मतं विज्ञातं सुप्रतिलेखितं, तत्स्वरूपं प्रदर्शयति—“सर्वे  
प्राणाः” इत्यादि । सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः सर्वे जीवाः सर्वे सत्त्वा हन्तव्याः, आज्ञाप-  
यितव्याः, परिग्रहीतव्याः, परितापयितव्याः, अपद्रावयितव्याः, एतद् वाक्यं प्राग्-  
मान्यता है वह हमारी देखी हुई है, हमारी सुनी हुई है, हमारी मानी  
हुई है और हमारी जानी हुई है, तथा ऊर्ध्व (उंची) अधः (नीची) और  
तिर्यग् (तिरछी), इन समस्त दिशाओं में हमने अथवा हमारे आचा-  
र्यों ने अच्छी तरह से इसका पर्यालोचन भी किया है कि—समस्त प्राणी,  
समस्त भूत, समस्त जीव, और समस्त सत्त्व मारने योग्य हैं, मारनेके  
लिए आज्ञा देने के योग्य हैं, मारनेके लिए ग्रहण करनेके योग्य हैं, परि-  
तापित करनेके योग्य हैं और विष-शस्त्रादिक के द्वारा वध करने योग्य  
हैं । यह हमारा अभिमत निर्दोष है । ” ये सब अनायों के वचन हैं,  
आर्यों के नहीं ।

स्पष्टार्थ—परस्परविरुद्धार्थ का कथन अल्पज्ञता के होने पर ही होता  
है । केवली और श्रुतकेवली पदार्थों के जानकार होते हैं; अतः उन्होंने

करे छे अने कहे छे—“जे कांछ अमारी मान्यता छे ते अमारी हेजेली छे,  
अमारी सांलणेली छे, अमारी मानेली छे अने अमारी नालेली छे  
तथा ऊर्ध्व—(उंची) अधः (नीची) अने तिर्यग् (तिरछी) आ समस्त  
दिशाओंमां अमे तथा अमारा आचार्यों छे धरुनी सारी रीते तेनुं पर्यालोचन  
कर्युं छे के समस्त प्राणी, समस्त भूत, समस्त जीव, अने समस्त सत्त्व मारवा  
योग्य छे, मारवा माटे आज्ञा आपवा योग्य छे, मारवा माटे ग्रहण करवा योग्य  
छे, परितापित करवा योग्य छे, अने विष शस्त्रादिक द्वारा वध करवा योग्य छे, आ  
अमारे अलिप्राय निर्दोष छे.” आ जेधा अनार्योंना वचन छे, आर्योंना नथी.

स्पष्टार्थ—परस्पर विरुद्धार्थनुं कथन अल्पज्ञता होवार्थी थाय छे, केवली  
अने श्रुतकेवली पदार्थोंना नालुकार छे, माटे तेमणे जे कांछ प्रतिपादन कर्युं



જો કુછ બી પ્રતિપાદન કિયા હૈ વહ નિર્દોષ એવં પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થતા સે રહિત હૈ । અલ્પજ્ઞોં કે વચનોં મેં યહ વાત નહીં પાઈ જાતી, ઉનકે વચન સદોષ ઔર પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક હુઆ કરતે હૈ । યહી વાત ઇસ સૂત્ર મેં ભાષ્યરૂપસે પ્રકટ કા ગઈ હૈ ।

દુનિયા મેં જિતને બી બ્રાહ્મણ યા શ્રમણ, ઢંડી, બુદ્ધમતાનુયાયી આદિ હૈં વે સબ ધર્મતત્ત્વ કે યથાર્થ સ્વરૂપસે અનભિજ્ઞ હૈં । ઉનકી માન્યતા પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક હૈ । હિંસાદિક પાપોં કે સેવન કરનેમેં ઇનકી માન્યતાનુસાર કોઈ દોષ નહીં હૈ ।

વે એસે હી ઇન અકૃત્યોં કી પુષ્ટિ કરતે હુએ કહતે હૈં કિ-જો કુછ હમારે યહાં કહા ગયા હૈ વહ કપોલકલ્પિત-અસત્ય નહીં હૈ; કિંતુ હમને અપને દિવ્યજ્ઞાનસે ઇસકા સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ । અથવા—હમારે આચાર્યોં ને અપને દિવ્યજ્ઞાનસે ઇસકા સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ । હમને યહ અપને આચાર્યાદિકોં સે સુના હૈ । યુક્તિયુક્ત હોનેસે હમેં યા હમારે આચાર્યોંકે લિયે યહ માન્ય હૈ । પદાર્થોં કા ભેદ પર્યાયોં દ્વારા વિશ્લેષણ કરને સે હમને ઔર હમારે આચાર્યોં ને યહ ભેદ અચ્છી તરહ જાન બી લિયા હૈ । પ્રત્યેક દિશામેં હમને તથા હમારે આચાર્યોં ને પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોં સે ઇસકા ભલી-પ્રકાર શાન્તચિત્ત હોકર નિર્ણય બી કર લિયા હૈ કિ-સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત

છે તે નિર્દોષ અને પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થી રહિત છે. અલ્પજ્ઞોના વચનોમાં આ વાત દેખવામાં આવતી નથી. તેના વચન સદોષ અને પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક થયા કરે છે. આ વાત આ સૂત્રમાં ભાષ્યરૂપથી પ્રગટ કરેલ છે.

સંસારમાં જોડલા શ્રમણ, ઢંડી બુદ્ધમતાનુયાયી આદિ છે અને બ્રાહ્મણ-ઔદેશિક આહરના લેવાવાળા છે ધર્મતત્ત્વના યથાર્થ સ્વરૂપથી અનભિજ્ઞ છે, તેમની માન્યતા પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક છે, હિંસાદિક પાપોનું સેવન કરવામાં તેમની માન્યતા મુજબ કોઈ દોષ નથી. તે આવા કૃત્યોની પુષ્ટિ કરતાં કહે છે કે-જે કંઈ અમેને કહેવામાં આવ્યું છે તે કપોળકલ્પિત-અસત્ય નથી; પણ અમે પોતાના દિવ્યજ્ઞાનથી એનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે. અથવા-અમારા આચાર્યોએ પોતાના દિવ્ય જ્ઞાનથી એનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે. અમેએ આ અમારા આચાર્યોદિકોથી સાંભળ્યું છે. યુક્તિયુક્ત હોવાથી અમેને તેમજ અમારા આચાર્યોને માટે માન્ય છે, પદાર્થોના ભેદ પર્યાયોદ્વારા પૃથક્કરણ કરવાથી અમે અને અમારા આચાર્યોએ આ ભેદો સારી રીતે બાણી લીધેલ છે. પ્રત્યેક દિશામાં અમે તથા અમારા આચાર્યોએ પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોથી તેનો સારી રીતે શાન્તચિત્તે નિર્ણય પણ કર્યો છે કે—સમસ્ત પ્રાણી,

व्याख्यातम् । अत्र धर्मविषये-मन्दिरनिर्माणप्रतिमाप्रतिष्ठादौ, अपिशब्दादौ देशिके, तथा-विहारादौ श्रावकं सार्थीकृत्य स्वसेवाद्यर्थमनुज्ञाप्य तत्कृताऽऽहारादिग्रहणे च जानीत, अत्र-अस्मिन्नुक्तविषये नास्ति दोषः=नास्ति पापानुबन्ध इति । अनार्य-वचनमेतदिति । आराद् याताः=सर्वसावद्यव्यापारेभ्यो दूरं गता इति-आर्याः, तद्वि-परीता अनार्याः-क्रूरकर्माणः, तेषां प्राण्युपमर्दकं वचनमेतत् ॥ सू० ८ ॥

भूत, समस्त जीव और समस्त सत्त्व मारने योग्य हैं, मारनेकी आज्ञा देने योग्य हैं, मारने के लिये ग्रहण करने योग्य हैं, परितापित करने योग्य हैं और विषशस्त्रादिकों के द्वारा वध करने योग्य हैं । प्राणी सत्त्व आदि शब्दों का व्युत्पत्तिसिद्ध अर्थ पहिले प्रकट किया जा चुका है ।

इसी प्रकार जिनप्रतिपादित धर्म में भी मंदिरादिक के निर्माण करने की एवं जिनप्रतिमा बनवा कर उसकी प्रतिष्ठा करने की जो प्रथा चालू है वह पद्धति भी सदोष है, उपादेय नहीं है । तथा साधुओं में औद्देशिक आहार ग्रहण करने की एवं विहारादिक करते समय अपनी सेवा करवाने के बहाने से श्रावकों को साथ लेकर उनके द्वारा तैयार किये आहारादिक लेनेकी एक प्रकार की जो प्रथा सी चल पड़ी है, और उसमें जो दोष-पापानुबन्ध नहीं मानते हैं, प्रत्युत इसका किसी दूसरे रूपसे समर्थन करते हैं; यह सब पूर्वोक्त कथन अनार्यों का ही समझना चाहिये ।

सावद्य व्यापार से जो दूर रहते हैं उनकी आर्यसंज्ञा और विप-

समस्त भूत, समस्त जिव, अने समस्त सत्त्व मारवा योग्य छे, मारवानी आज्ञा देवा योग्य छे, मारवा माटे अड्डण करवा योग्य छे, परितापित करवा योग्य छे, अने विषशस्त्रादिक द्वारा वध करवा योग्य छे. प्राणी सत्त्व आदि शब्दोना व्युत्पत्तिसिद्ध अर्थ पड़ेला न प्रकट करवाभां आवेल छे.

आ प्रकारे जिनप्रतिपादित धर्मभां पणु मंदिरादिक निर्माण करवानुं, तेमज्ज जिनप्रतिमा बनावी तेनी प्रतिष्ठा करवानी जे प्रथा चालु छे ते पद्धति पणु सदोष छे, उपादेय नथी. तथा साधुओभां औद्देशिक आहार लेवानी तेमज्ज विहारादिक करती वणते पोतानी सेवा करवाना भड्डाने श्रावकोने साथे लधने तेना द्वारा तैयार करेला आहार पाणी लेवानी ओक प्रकारनी जे प्रथा चालु थछे, अने तेमां जे दोष-पापानुबन्ध नथी मानता, अने दरेक ते जाणतने भीजइपथी समर्थन करे छे ते भधा पूर्वोक्त कथन अनार्योना न समजवा नेधओ.

सावद्य व्यापारथी जे दूर रहे छे तेनी आर्य संज्ञा, अने तेनाथी विपरीतनी



ये तु आर्यास्ते किं वदन्तीति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘तत्थ जे’ इत्यादि ।

मूलम्—तत्थ जे आरिया ते एवं वयासी—“से दुद्धिदं च भे, दुस्सुयं च भे, दुम्मयं च भे, दुव्विण्णायं च भे, उद्धं अहं तिरियं दिसासु सव्वओ दुप्पडिलेहियं च भे; जंणं तुब्भे एवं आइक्खह, एवं भासह, एवं परूवेह, एवं पण्णवेह—सव्वे पाणा ४, हंतव्वा ५, इत्थ वि जाणह नत्थित्थ दोसो” अणारियवयणमेयं ॥ सू० ९॥

छाया—तत्र ये आर्यास्त एवमवादिषुः—तद् दुर्दृष्टं च वः, दुःश्रुतं च वः, दुर्मतं च वः, दुर्विज्ञातं च वः, ऊर्ध्वम् अधः तिर्यग् दिशासु सर्वतः दुष्प्रतिलेखितं च वः, यत् खलु युयमेवम् आख्याय, एवं भाषध्वे, एवं प्ररूपयथ, एवं प्रज्ञापयथ—सर्वे प्राणाः ४ हन्तव्याः ५ । अत्रापि जानीत, नास्त्यत्र दोषः । ” अनार्य-वचनमेतत् ॥ सू० ९ ॥

टीका—ये देशतो भाषातश्चारित्रतश्चार्यास्ते, तत्र=उक्तविषये, एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादिषुः=उक्तवन्तः—‘तद् दुर्दृष्टं च वः’ इत्यादि । युष्माभिर्भ्य-दुक्तं—‘तद् दृष्टं च नः’ इति, तद् वः=युष्माकं युष्मदाचार्याणां वा दृष्टं दुर्दृष्टम्=

રીત કી અનાર્યસંજ્ઞા છે । યે કૂરકર્મી હોતે હૈં । યહ પ્રાણિયોં કે પીડા-કારક સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન ઇન્હોં અનાર્યોં કા પ્રતિપાદિત કિયા હુઆ છે । ૮।

यदि यह पूर्वोक्त समस्त धर्मविरुद्ध कथन अनार्यों का है तो फिर आर्यों की मान्यता कैसी है ? इस प्रकार शिष्यकी जिज्ञासा का समाधान किया जाता है—‘तत्थ जे आरिया’ इत्यादि ।

इस पूर्वोक्त कथनमें आर्यों की इस प्रकार की प्रत्युत्तररूप मान्यता है, अर्थात्—देश से, भाषा से और चारित्र से जो आर्य हैं उनका इस प्रकार का कथन है कि—आपने व आपके आचार्यों ने जो देखा है, जो

અનાર્ય સંજ્ઞા છે. તે કૂરકર્મી હોય છે. પ્રાણીઓને માટે પીડાકારક આ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન આ અનાર્યોના જ પ્રતિપાદિત કરેલાં છે. ॥ સૂ. ૮ ॥

આ પૂર્વોક્ત સમસ્ત ધર્મવિરુદ્ધ કથન અનાર્યોના છે તો પછી આર્યોની માન્યતા કેવી છે ? આ પ્રકારની શિષ્યની શંકાનું સમાધાન કરે છે—‘તત્થ જે આરિયા’ ઇત્યાદિ.

આ પૂર્વોક્ત કથનમાં આર્યોની આ પ્રકારની પ્રત્યુત્તરરૂપ માન્યતા છે, અર્થાત્—દેશથી ભાષાથી અને ચારિત્રથી જે આર્ય છે તેનું આ પ્રકારનું કથન છે કે—તમેએ તમારા આચાર્યોએ જે દેખ્યું છે, સાંભળ્યું છે, માન્યું છે અને જે



=दुष्टं दृष्टं न तु सम्यग् दृष्टमित्यर्थः । एवं यावत् “दुष्प्रतिलेखितं च वः” इति स्वयमूहनीयम् । पुनरपि त एवार्थाः प्रागुक्तश्रमणादिवचनं हिंसादिप्रवर्तक-तया सदोषमिति बोधयितुं यदवादिपुस्तदाह—‘यत् खलु यूयमेवम्’ इत्यादि । एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण यूयं यद्वचनमाख्याय, एवं यद् भाषध्वे, एवं यत् प्रज्ञापयथ, एवं यत् प्ररूपयथ—सर्वे प्राणाः ४ हन्तव्याः ५ इत्यादि, यावत्-नास्त्यत्र दोष इति, तदेतत् सर्वमनार्थवचनं=हिंसादिप्रवर्तकतया पापानुबन्धि वचनं युष्मदाचार्याणां वेत्यर्थः ॥ सू० ९ ॥

सुना है, जो माना है, और जो जाना है एवं प्रत्येक दिशामें जिसकी प्रत्यक्षादि प्रमाणों के द्वारा अच्छीतरह से छान-बीन की है; वह सर्वथा सदोष है—वह आपका व आपके आचार्यों का देखना, सुनना, मानना, एवं जानना और पर्यालोचना करना दोषोंसे रिक्त नहीं है, अतः आपने व आपके आचार्यों ने जो देखा है वह सुन्दर निर्दोष नहीं देखा, जो सुना है वह निर्दोष नहीं सुना, जो माना है वह निर्दोष नहीं माना, जो जाना है वह निर्दोष नहीं जाना, एवं जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों द्वारा प्रत्येक दिशामें पर्यालोचना की है वह भी निर्दोष नहीं की । यह सब उनका व आपका नाममात्रका ही देखना सुनना वगैरह हुआ है, कारण कि यह आपका पूर्वोक्त कथन जीवों की हिंसादिक पापों में प्रवृत्ति की जागृति करानेवाला है, अतः ‘समस्त प्राणी, समस्त जीव, समस्त भूत और समस्त सत्त्व मारने योग्य हैं, मारने की आज्ञा देनेयोग्य हैं, मारने के लिए ग्रहण करने योग्य हैं, परितापित करनेयोग्य हैं’ और विष-श-

બાણ્યું છે તેમજ પ્રત્યેક દિશામાં જેની પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોદ્ધારા સારી રીતે શોધ કરી છે તે સર્વથા સદોષ છે. તે તમારું તેમજ તમારા આચાર્યોનું દેખવું, સાંભળવું, માનવું, તેમજ બાણ્યું અને પર્યાલોચના કરવી તે દોષોથી સુક્ત નથી, માટે તમેજે તેમજ તમારા આચાર્યોએ જે દેખ્યું છે તે સુંદર-નિર્દોષ નથી દેખ્યું, જે સાંભળ્યું છે નિર્દોષ નથી સાંભળ્યું, જે માન્યું તે નિર્દોષ નથી માન્યું, તેમજ જે બાણ્યું છે તે નિર્દોષ નથી બાણ્યું, અને જે પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોદ્ધારા પ્રત્યેક દિશામાં પર્યાલોચના કરી છે તે પણ નિર્દોષ નથી કરી, આ બધું તેઓનું તેમજ તમારું નામમાત્રનું દેખવું સાંભળવું વિગેરે થયું છે, કારણ કે તમારું પૂર્વોક્ત કથન જીવોની હિંસાદિક પાપોમાં પ્રવૃત્તિ બંધત કરવાવાળું છે, માટે ‘સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા યોગ્ય છે, મારવાની

एवं केवलिनो दण्डिशाक्यादीनां वादे हिंसादिदोषसद्भावादधर्मविरोधं प्रदर्श्य स्वमतं प्रतिबोधयितुं वदन्ति—‘ वयं पुण ’ इत्यादि ।

मूलम्—वयं पुण एवमाइक्खामो, एवं भासामो, एवं पन्नवेमो, एवं परूवेमो—सवे पाणा, सवे भूया, सवे जीवा, सवे सत्ता ण हंतवा, ण अज्जावेयवा, ण परिघेतवा, ण परियावेयवा, ण उद्देयवा । एत्थवि जाणह, णत्थित्थ दोसो । आरियवयणमेयं ॥ सू० १० ॥

स्त्रादिकों के द्वारा वध करने योग्य हैं, इसमें कोई दोष नहीं है । ’ यह जो आपका कथन है, आपका भाषण है, आपकी प्रज्ञापना है, आपकी प्ररूपणा है, तथा इसे जो आपने निर्दोष प्रकट किया है; वे सब अनार्यों के ही वचन हैं और सदोष हैं, कारण कि आपके व आपके आचार्यों के इन वचनों में प्रवृत्ति करनेवाला प्राणी केवल पापका ही उपा-र्जन करनेवाला होता है, धर्मका नहीं, अतः अनार्यवचन होने से ये त्याज्य ही हैं । इस पूर्वोक्त कथन का तात्पर्य यही है कि यह सब कथन धर्मविरुद्ध होनेसे जीवों में असदाचार की प्रवृत्ति का कारण होने से सदोष एवं पापानुबन्ध का हेतु है, अतः अनार्य वचन होने से यह सर्वथा निन्दनीय एवं गर्हणीय है ॥ सू० ९ ॥

केवली भगवान इस प्रकार दण्डी शाक्यादिकों के कथन में हिंसा-दिक दोषों का सद्भाव होनेसे धर्मविरुद्धता प्रदर्शित कर अपना सिद्धान्त प्रकट करनेके लिये कहते हैं—‘ वयं पुण ’ इत्यादि ।

આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, મારવાને અહણુ કરવા યોગ્ય છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિષશસ્ત્રાદિકો દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે, આમાં કાંઈ પણ દોષ નથી. ’ આ પ્રકારે જે તમારું કથન છે, તમારું ભાષણ છે, તમારી પ્રજ્ઞાપના છે, તમારી પ્રરૂપણા છે, તથા એને જે તમે એ નિર્દોષ પ્રગટ કરેલ છે તે બધા અનાર્યોના જ વચનો છે અને સદોષ છે, કારણ કે તમારા તેમજ તમારા આચાર્યોના આ વચનોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળાં પ્રાણી કેવળ પાપના જ ઉપાર્જન કરવાવાળા બને છે, ધર્મના નહીં, માટે અનાર્યવચન હોવાથી તે તજવા યોગ્ય છે. આ પૂર્વોક્ત કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આ બધા કથન ધર્મ-વિરુદ્ધ હોવાથી જીવોને અસદાચારની પ્રવૃત્તિનું કારણ હોવાથી સદોષ અને પાપાનુબંધનો હેતુ છે, માટે અનાર્યવચન હોવાથી તે સર્વથા નિન્દનીય તેમજ ગર્હણીય છે. ॥સૂ૦ ૯॥

કેવળી ભગવાન આ પ્રકારે દંડી શાક્યાદિકોના કથનમાં હિંસાદિક દોષોનો સદ્ભાવ હોવાથી ધર્મ-વિરુદ્ધતા પ્રદર્શિત કરી પોતાનો સિદ્ધાંત પ્રગટ કરવાને માટે કહે છે—‘ વયં પુણ ’ ઇત્યાદિ.



छाया—वयं पुनरेवमाख्यामः, एवं भाषामहे, एवं प्रज्ञापयामः, एवं प्ररूपयामः—सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः, सर्वे जीवाः, सर्वे सत्त्वाः, न हन्तव्याः १, न आज्ञापयितव्याः २, न परिग्रहीतव्याः ३, न परितापयितव्याः ४, न अपद्रावयितव्याः ५ । अत्रापि जानीत, नास्त्यत्र दोषः । आर्यवचनमेतत् ॥ सू० १० ॥

टीका—वयं पुनरित्यादि । अत्र पुनः—शब्द उक्तश्रमणादिवैलक्षण्यद्योतनाय । यथा धर्मविरुद्धवादो न भवति, तथा वयम् एवं=वक्ष्यमाणरीत्या आख्यामः, एवं भाषामहे, एवं प्रज्ञापयामः, एवं प्ररूपयामः—सर्वे प्राणाः ४ न हन्तव्याः ५ । एतानि पदानि प्राग् व्याख्यातानि । अत्रापि—अत्रैव=अस्मिन् उक्तविषये—सर्वे प्राणाः ४ न हन्तव्याः ५, इत्यत्रैव जानीत=यूयमवबुध्यध्वम्, अत्र=अस्मिन्—अस्मद्वाक्ये

इस सूत्रमें “पुनः” यह शब्द पूर्वोक्त श्रमणादिकों की मान्यतासे केवलियों की मान्यतामें भिन्नप्रकारता का द्योतन करनेवाला है, अर्थात् केवलियों का कथन इस प्रकारका नहीं है, किन्तु ऐसा है कि जिससे उसमें किसी भी प्रकार धर्मसे विरोध नहीं आ सकता है । उनका कहना है कि हम तो इस प्रकार का कथन करते हैं, भाषण करते हैं, प्रज्ञापना करते हैं, प्ररूपणा करते हैं कि—समस्त प्राणी, समस्त जीव, समस्त भूत और समस्त सत्त्व न मारने योग्य हैं, न मारनेकी आज्ञा देने योग्य हैं, न मारनेके लिए ग्रहण करने योग्य हैं, न परितापित करने योग्य हैं और न विषशस्त्रादिकों के द्वारा वध करने योग्य ही हैं । ( इन समस्त पदों का विवरण पहिले लिखा जा चुका है ) यह हमारा कथन हिंसादिक पापों में जीवों की प्रवृत्ति करानेवाला नहीं होनेसे प्रमाणरूप निर्दोष है । यह आप अच्छी तरहसे समझ लें । यही

आ सूत्रमां ‘पुनः’ आ शब्द पूर्वोक्त श्रमणादिकोनी मान्यताथी केवणी-योनी मान्यतामां भिन्न-प्रकारता प्रकाशित करे छे. अर्थात्—केवणीओनुं कथन आ प्रकारनुं नथी पणु आभ छे जेनाथी केछ पणु प्रकारे धर्मथी विरोध आवी शकतो नथी. ओमनुं कहेवुं छे के—अमे तो आ प्रकारनुं कथन करीओ छीओ, लाषणु करीओ छीओ, प्रज्ञापना करीओ छीओ अने प्ररूपणा करीओ छीओ के समस्त प्राणी, समस्त भूत, समस्त जिव अने समस्त सत्त्व मारवा योग्य नथी, मारवानी आज्ञा देवा योग्य नथी, मारवाने माटे ग्रहणु करवा योग्य नथी, परितापित करवा योग्य नथी, तेमज विष अने शस्त्रादिकोथी वध करवाने योग्य नथी. ( आ समस्त पदार्थानुं विवेचन पहेलां करवामां आओछे ) आ अमाइ कथन हिंसादिक पापेमां जेवानी प्रवृत्ति करवाणुं नहि होवाथी प्रमाणरूप निर्दोष छे. ओ तमे सारी रीते समस्त



દોષો નાસ્તિ; હિંસાદિપ્રવર્તકત્વાભાવાદિતિ ભાવઃ । એતચ્ચ આર્યવચનમ્=દેશતો ભાષાતશ્ચારિત્રતશ્ચ યે આર્યાસ્તેષાં વાક્યં, તસ્માન્નાસ્ત્યત્ર દોષ इत्यर्थः ॥ સૂ. ૧૦ ॥

દળિડશાક્યાદીનાં પાપણ્ડિનાં ધર્મવિરુદ્ધવાદપ્રશમનાય કેવલિનો યદ્ વદન્તિ તદાહ—‘ પુવ્વં નિકાય ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—પુવ્વં નિકાય સમયં પત્તેયં પત્તેયં પુચ્છિસ્સામો, હં ભો પવાડયા ! કિં મે સાયં દુઃખં અસાયં? સમિયા પઢિવણ્ણે યાવિ એવં બ્રૂયા—સવ્વેસિં પાણાણં સવ્વેસિં ભૂયાણં સવ્વેસિં જીવાણં સવ્વેસિં સત્તાણં અસાયં અપરિનિવ્વાણં મહવ્ભયં દુઃખં-તિવેમિ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

છાયા—પૂર્વ નિકાય સમયં પ્રત્યેકં પ્રત્યેકં પ્રદ્યામઃ, હં ભોઃ પ્રાવાદુકાઃ ! કિં યુષ્માકં સાતં દુઃખમ્ અસાતમ્? સમ્યક્પ્રતિપન્નાંશ્ચ અપ્યેવં બ્રૂયાત્—સર્વેષાં પ્રાણાનાં સર્વેષાં ભૂતાનાં સર્વેષાં જીવાનાં સર્વેષાં સત્ત્વાનાં અસાતમ્ અપરિનિર્વાણં મહાભયં દુઃખમ્—इति ब्रवीमि ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ટીકા—ભોઃ પ્રાવાદુકાઃ ! વયં પૂર્વમ્=આદૌ, સમયમ્=આગમમ્ આગમોક્ત-મર્થ, નિકાય=વ્યવસ્થાપ્ય, યુષ્માન્ પ્રત્યેકં પ્રત્યેકં પ્રદ્યામઃ, દુઃખં યુષ્માકં કિં સાતં=મનોઽનુકૂલં, કિં વા અસાતમ્=મનઃપ્રતિકૂલમ્ ?

દેશસે, ભાષાસે ઓર ચારિત્રસે જો આર્ય હૈં ડનકા કથન હૈ, ઇસી કારણ યહ નિર્દોષ હૈ । આર્ય દેશમેં જો ઉત્પન્ન હુણ હૈં વે દેશસે આર્ય, આર્યોંની ભાષા જો બોલતે હૈં વે ભાષાસે આર્ય ઓર ચારિત્ર કા જો આરાધન કરતે હૈં વે ચારિત્રસે આર્ય કહલાતે હૈ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

દળડીશાક્યાદિક પાપણ્ડિયોં કે ધર્મવિરુદ્ધ કથનકો શાન્ત કરને કે લિયે કેવલિયોં કા જો કથન હૈ વહ કહા જાતા હૈ—‘ પુવ્વં નિકાય ’ इत्यादि ।

હે વાદિયોં ! હમ સબસે પ્રથમ આગમોક્ત-અર્થતત્ત્વકી વ્યવસ્થા કર કે આપ લોગોં મેં સે પ્રત્યેક કો યહ પૂછતે હૈં કિ આપ દુઃખ કિસે માનતે

દ્યો. દેશથી, ભાષાથી અને ચારિત્રથી જે આર્ય છે તેનું આ જ કથન છે, આ માટે જ આ નિર્દોષ છે. આર્ય દેશમાં જે ઉત્પન્ન થયાં છે તે દેશથી આર્ય, આર્યોની ભાષા બોલે છે માટે ભાષાથી આર્ય અને ચારિત્રનું જે આરાધન કરે છે તે ચારિત્રથી આર્ય કહેવાય છે. ॥ સૂ. ૧૦ ॥

દંડીશાક્યાદિક પાપણ્ડિયોના ધર્મવિરુદ્ધ કથનને શાંત કરવા માટે કેવ-ળીયોનું જે કથન છે તે કહે છે—‘ પુવ્વં નિકાય ’ इत्यादि.

હે વાદવિવાદ કરવાવાળા ! અમે સૌથી પ્રથમ આગમોક્ત અર્થ-તત્ત્વ-ની વ્યવસ્થા કરીને તમારે લોકોમાંથી દરેકને પૂછીએ છીએ કે તમે દુઃખ કોને માને છો ? જે

एवं पृष्ठाः सन्तो यदि ते 'दुःखं सातम्' इति ब्रूयुस्तदा तेषां प्रत्यक्षाग-  
मलोकविरोध आपद्येत, यदि तु दुःखमसातम्' इति वदेयुस्तदा सम्यक्-  
प्रतिपन्नान्=यथार्थमर्थं ज्ञातवतः प्रावादुकान् स्वतः स्तम्भितवाक्प्रचारान्, अप्येवम्-  
अपिशब्दः संभावनार्थद्योतकः; एवं संभाव्यते-दुःखं भवतामेव नासातरूपं, किंतु  
सर्वेषामपि प्राणिनां सर्वेषामपि भूतानां सर्वेषामपि जीवानां सर्वेषामपि सत्त्वानां  
दुःखम्-असातं=मनःप्रतिकूलम्-अप्रियमित्यर्थः । तथा-अपरिनिर्वाणम्=अशान्तं  
है ? जो शाता-मनके अनुकूल है वह दुःख है ? या जो अशाता-मनके  
प्रतिकूल है वह दुःख है ?

मनके अनुકૂલ શાતાકો યદિ દુઃખ માના જાવે તો હસમેં પ્રત્યક્ષ  
તથા આગમ પ્રમાણસે ઓર લોકસે ખી વિરોધ આતા હૈ, કારણ કિ  
મન અપને અનુકૂલ પદાર્થકે સેવનમેં સુખ માનતા હૈ, યહ પ્રત્યક્ષસિદ્ધ  
વાત હૈ । આગમમેં ખી 'મનોઽનુકૂલં સુખં' યહ લિખા હુઆ હૈ, અર્થાત્  
મનોઽનુકૂલ પદાર્થોં કી પ્રાપ્તિ શાતાવેદનીય કર્મકે ઉદયસે હી જીવોંકો  
પ્રાપ્ત હોતી હૈ, ંસા શાસ્ત્રકા વચન હૈ । લોક ખી મનોઽનુકૂલ પદાર્થકે  
સેવનમેં સુખ હૈ-ંસા હી કહતે ઓર માનતે હૈં ।

મનકે પ્રતિકૂલ અશાતા કો યદિ દુઃખ માના જાવે તો જો યથાર્થવક્તા-  
સમજદાર પ્રવાદી હૈં ઓર જો હસ વિષય મેં કેવલ મૌન હૈં, ંસે હમ  
યહી કહેંગે કિ જિસ પ્રકાર અશાતા તુમ્હેં દુઃખરૂપ પ્રતીત હોતી હૈં ંસી  
તરહસે સમસ્ત પ્રાણિયોં કો, સમસ્ત ભૂતોં કો, સમસ્ત જીવોં કો ઓર  
સમસ્ત સત્ત્વોં કો યહ અશાતા મહાઘોર ઓર ંનકે પ્રાણોં કો કષ્ટ

શાતા-મનને અનુકૂળ છે તે દુઃખ છે ? અગર જે અશાતા-મનને પ્રતિકૂળ છે તે  
દુઃખ છે ?

મનને અનુકૂળ-શાતાને કહાય દુઃખ માનવામાં આવે તો તેમાં પ્રત્યક્ષ તથા  
આગમપ્રમાણથી અને લોકથી પણ વિરોધ આવે છે, કારણ કે મન પોતાના અનુ-  
કૂળ પદાર્થના સેવનમાં સુખ માને છે એ પ્રત્યક્ષ-સિદ્ધ વાત છે. આગમમાં પણ  
'મનોઽનુકૂલં સુખં' એમ લખેલ છે, અર્થાત્-મનના અનુકૂળ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ  
જીવોને શાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી જ થાય છે, એવું શાસ્ત્રતું વચન છે, લોક પણ  
'મનને અનુકૂલ પદાર્થના સેવનમાં સુખ છે' એવું જ કહે છે તેમ જ માને છે. મનને  
પ્રતિકૂળ અશાતાને કહાય દુઃખ માનવામાં આવે તો જે યથાર્થવક્તા-સમજદાર  
પ્રવાદી છે અને જે આ વિષયમાં કેવળ મૌન છે તેને પણ અમે એ જ કહીશું કે  
—જે પ્રકારે અશાતા તમોને દુઃખરૂપ પ્રતીત થાય છે તે માફક સમસ્ત પ્રાણિયો  
સમસ્ત ભૂતો; સમસ્ત જીવો અને સમસ્ત સત્ત્વોને આ અશાતા મહાઘોર અને

ઘોરમિત્યર્થઃ । તથા-મહાભયમ્=નિશ્ચિલપ્રાણિપ્રાણોદ્વેજકત્વાન્મહાભયરૂપમ્ । इत्येवं ब्रूयात्='प्रत्येकं प्रत्येकं गणयित्वा, सर्वे प्राणिनो न हन्तव्या नाज्ञापयितव्या न परिग्रहीतव्या न परित्तापयितव्याः, नापद्रावयितव्याः, यतो हिंसादिकरणे दोषः प्रसज्येत' इत्येवं वचनं वदेदित्यर्थः । यस्तु हिंसादिकरणे दोषो नास्तीति वदति, तदनार्यवचनम्-इति प्रत्यक्षानुमानोपमादिप्रमाणैः सिद्धमिति भावः । इति ब्रवीमीति पूर्ववद् व्याख्याऽवगन्तव्या ॥ सू० ११ ॥

॥ चतुर्थाध्ययनस्य द्वितीय उद्देशः समाप्तः ॥ ४-२ ॥

પહુંચાનેવાલી હોનેસે મહાભયરૂપ પ્રતીતિ હોતી છે, અતઃ સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ ઓર સમસ્ત સત્ત્વ ન મારને યોગ્ય છે, ન મારને કી આજ્ઞા દેને યોગ્ય છે, ન મારનેકે લિપ્ત ગ્રહણ કરનેયોગ્ય છે ન પરિતાપિત કરને યોગ્ય છે ઓર ન વધ કરને યોગ્ય છે । અશાતા દેનેસે હિંસાદિક દોષોં કા ભાગી હોના પડતા છે । જો હિંસાદિક પાપોં કે કરને મેં દોષ નહીં માનતે છે વે અનાર્ય છે ઓર “ હિંસાદિક પાપોં કે કરને મેં દોષ નહીં છે ” ઉનકે યે વચન અનાર્યવચન હી છે । શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે છે—હે જમ્બૂ ! જૈસા મૈને ભગવાન કે સમીપ સુના છે વૈસા હી કહતા હૂં ॥ સૂ० ૧૧ ॥

॥ चौथे अध्ययनका दूसरा उद्देश समाप्त ॥ ४-२ ॥

તેમના પ્રાણોને દુઃખ પહોંચાડવાવાળી હોવાથી મહાભયરૂપ પ્રતીતિ થાય છે, માટે સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સત્ત્વ નહિ મારવાયોગ્ય છે, નહિ મારવાની આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, નહિ મારવાને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, નહિ પરિતાપિત કરવાને યોગ્ય છે, નહિ વધ કરવા યોગ્ય છે. અશાતા દેવાથી હિંસાદિક દોષોનું ભાગી બનવું પડે છે. જે હિંસાદિક પાપો કરવામાં દોષ નથી માનતા તે અનાર્ય છે, અને “ હિંસાદિક પાપો કરવામાં દોષ નથી ” એમ જે તેનું વચન છે આ અનાર્યવચન છે. સુધર્માસ્વામી કહે છે—હે જમ્બૂ ! જેવું મેં ભગવાન સમીપે સાંભળ્યું છે તેવું કહું છું. ॥ સૂ० ૧૧ ॥

ચોથા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૨ ॥



### अथ चतुर्थाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः ।

इहानन्तरद्वितीयोद्देशके दण्डिशाक्यादिपाषण्डिमतनिराकरणेन सम्यक्तत्वं स्थिरीकृतम् । सत्यपि सम्यक्तत्वे निरवद्यतपश्चरणमन्तरेण कर्मक्षयो न भवतीत्यतः स्तत्र प्रवर्तयितुं तृतीयोद्देशकं कथयति । तत्र प्रथमं धर्मबहिष्क्रान्तस्यानार्यतया तदुपेक्षा करणीयेति बोधयितुमाह—‘उवेहि णं’ इत्यादि ।

मूलम्—उवेहि णं बहिया य लोगं, से सबलोगंमि जे केइ विण्णू ॥ सू० १ ॥

छाया—उपेक्षस्व खलु बहिश्च लोकम्, स सर्वलोके ये केचिद् विज्ञः ॥ सू० १ ॥

टीका—बहिः=धर्माद् बहिष्क्रान्तं लोकं खलु=निश्चयेन उपेक्षस्व=मा अनुसर । दण्डिशाक्यादिपाषण्डिमं मा अनुमन्यस्वेत्यर्थः । धर्मबहिष्क्रान्तलोकोपेक्ष-

### चौथे अध्ययनका तीसरा उद्देश

इस पीछेके द्वितीय उद्देश में दण्डी शाक्यादिक पाषण्डियोंकी मान्यताका निराकरण करके सम्यक्तत्त्वको सुस्थिर किया; परन्तु इतने मात्र से कर्मक्षय नहीं हो सकता, कर्मक्षय तो निरतिचार तपश्चरण से ही होता है, इसलिये उस तपमें जीवों की प्रवृत्ति कराने के लिये इस तृतीय उद्देशका कथन प्रारंभ किया जाता है । इसमें सर्वप्रथम धर्मसे बहिर्भूत जो व्यक्ति हैं वे अनार्य हैं और उनके साथ रागद्वेष न करते हुए उपेक्षाभाव ही रखना चाहिये, इस बातका परिज्ञान कराने के लिये कहते हैं—‘उवेहि णं’ इत्यादि ।

धर्मसे बहिर्भूत व्यक्तियों की सदा उपेक्षा ही करनी चाहिए । अर्थात्—दण्डी शाक्यादिक जो धर्मसे बहिर्भूत हैं, धर्मका यथार्थ स्वरूप

### ચોથા અધ્યયનના ત્રીજો ઉદ્દેશ.

પાછળનાં બીજા ઉદ્દેશમાં દંડી-શાક્યાદિક પાંખડીઓની માન્યતાનું નિરાકરણ કરીને સમ્યક્ત્વને સુસ્થિર કર્યું, પણ આટલાથી જ કર્મક્ષય થઈ શકે નહિ. કર્મક્ષય તો નિરતિચાર તપશ્ચરણથી જ થાય છે, માટે તે તપમાં જીવેની પ્રવૃત્તિ કરવાને માટે આ ત્રીજા ઉદ્દેશના કથનનો પ્રારંભ કરવામાં આવે છે. આમાં સર્વ-પ્રથમ ધર્મથી બહિર્ભૂત જે વ્યક્તિ છે તે અનાર્ય છે અને તેની સાથે રાગ દ્વેષ ન કરતાં ઉપેક્ષા ભાવ જ રાખવો જોઈએ, આ વાતનું પરિજ્ઞાન કરવાને માટે કહે છે—‘ઉવેહિ ણં’ ઇત્યાદિ.

ધર્મથી બહિર્ભૂત વ્યક્તિઓની સદા ઉપેક્ષા જ રાખવી જોઈએ. અર્થાત્—દંડી શાક્યાદિક જે ધર્મથી બહિર્ભૂત છે, ધર્મનું યથાર્થ સ્વરૂપ નથી જાણતા તેમજ

કસ્ય ગુણમાહ—‘સ સર્વલોકે’ ઇત્યાદિ । યોઙ્નાર્ય મત્વા ધર્મવહિષ્ક્રાન્તલોકં નાનુસરતિ, સ સર્વલોકે=સમસ્તે મનુષ્યલોકે, યે કેચિદ્ વિદ્વાંસસ્તતોઽપ્યધિકો વિજ્ઞઃ=વિદ્વાનિત્યર્થઃ ॥ મૂ૦ ૧ ॥

નહીં જાનતે હૈં એવં હિંસાદિક પાપ કાર્યોં મેં જીવોં કો પ્રવર્તિત કરાને કે લિયે મિથ્યા ઉપદેશ કરતે હૈં, ઉનકા અનુસરણ નહીં કરના ચાહિયે । જિસ પ્રકાર ઘાસકે તૃણ કે ઉપર સમજદાર જીવકે હૃદયમેં ન રાગ હોતા હૈં ઓર ન દ્વેષ હી હોતા હૈં; કિન્તુ સદા માધ્યસ્થ્યભાવ રહતા હૈં । ઇસી પ્રકાર જો આર્હત ધર્મ કે વિપરીત ચલનેવાલે હૈં ઓર ઉસસે અપની વૃત્તિ કો વિકૃદ્ બનાયે હુણ હૈં ઉનકે પ્રતિ ખી ભગવાન્ કા યહી આદેશ હૈં કિ હે મહાનુભાવોં ! તુમ ખી રાગ દ્વેષ ન કરકે ઉનકે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ હી રક્ષો; કારણ કિ ઇસ ઉપેક્ષાભાવસે આત્મામેં શાંતિ કી માત્રા અધિક રૂપમેં જાગૃત હોતી રહતી હૈં । નવીન કર્મોં કા બંધ, જો ઉસકે પ્રતિ રાગદ્વેષ કરને સે ઉત્પન્ન હોતા હૈં વહ રુક જાતા હૈં, અતઃ ધર્મવહિર્ભૂત મનુષ્યોં કો અનાર્ય સમજ કર જો ઉનકા અનુસરણ નહીં કરતા હૈં વહ મનુષ્ય ઇસ લોકમેં જિતને ખી વિદ્વાન્ હૈં ઉન સબસે અધિક વિજ્ઞ-વિદ્વાન્ હૈં । યહાં પર જો ઉસ વ્યક્તિ કો સમસ્ત વિદ્વાનોં સે અધિક વિદ્વાન્ બતલાયા ગયા હૈં, વહ તત્ત્વોં કા સમ્યક્ પ્રકારસે જાનનેવાલે હોનેસે હી સમજના ચાહિયે, કારણ કિ વહ સમકિતી જીવ અપને પ્રયોજનભૂત તત્ત્વોં સે હી મતલબ

હિંસાદિક પાપ કાર્યોંમાં જીવોંની પ્રવૃત્તિ કરાવવામાં મિથ્યા ઉપદેશ આપે છે તેનું અનુસરણ નહિ કરવું જોઈએ. જેમ ઘાસના તણખલા ઉપર સમજદાર જીવના હૃદયમાં રાગ તેમજ દ્વેષ હોતો નથી પણ હમેશાં મધ્યસ્થ ભાવ રહે છે, તે પ્રકારે જે આર્હત ધર્મથી વિપરીત ચાલવાવાળાં છે, અને તેનાથી જેની વૃત્તિ વિરૂદ્ધ બનેલી છે તેના પ્રત્યે પણ ભગવાનનો એ જ આદેશ છે કે-હે દેવાનુપ્રિય ! તમે રાગ દ્વેષ ન કરતાં તે પ્રત્યે ઉપેક્ષા ભાવજ રાખો, કારણ કે આ ઉપેક્ષાભાવથી આત્મામાં શાંતિની માત્રા અધિક રૂપમાં બચત થાય છે. નવીન કર્મોના બંધ, જે તે પ્રત્યે રાગ દ્વેષ કરવાથી ઉત્પન્ન થાય છે તે રોકાઈ જાય છે, તેથી ધર્મવિમુખ મનુષ્યોને અનાર્ય સમજીને જે તેનું અનુસરણ નથી કરતા તે મનુષ્ય આ લોકમાં જેટલાં વિદ્વાનો છે તે બધાં કરતાં પણ અધિક વિદ્વાન છે, પણ આ ઠેકાણે તે વ્યક્તિ જેને બધા વિદ્વાનો કરતા વધારે જાણવાવાળો બતાવેલ છે તે તત્ત્વોના સમ્યક્ પ્રકારથી જાણવાવાળા હોવાથી જ સમજવું જોઈએ; કારણ કે તે સમકિતી જીવ પોતાના પ્રયોજન-ભૂત તત્ત્વોથી જ મતલબ રાખે છે. એનાથી વિમુખ તત્ત્વોમાં

નનુ તે વિદ્વાંસઃ કથં વિજ્ઞેયાઃ ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘अणुवीड्’ इत्यादि।

મૂલમ્—અણુવીડ પાસ, નિશ્ચિત્તદંડા જે કેડ સત્તા પલિયં ચયંતિ, નરા મુયચ્ચા ધમ્મવિઉ-ત્તિ અંજૂ, આરંભજં દુઃખમિણં-તિ ણચ્ચા, એવમાહુ સંમત્તદંસિણો ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—અનુવિચિન્ત્ય પશ્ય, નિશ્ચિત્તદંડાઃ યે કેડપિ સત્ત્વાઃ પલિતં ત્યજન્તિ, નરા મૃતાર્ચા ધર્મવિદઃ ઋજવઃ આરંભજં દુઃખમ્ ઇદમિતિ જ્ઞાત્વા એવમાહુઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—અનુવિચિન્ત્ય=પુનઃ પુનઃ પર્યાલોચ્ય, પશ્ય=જ્ઞાનદૃષ્ટ્યા વિલોકય, યે કેડપિ સત્ત્વાઃ=જીવાઃ, નિશ્ચિત્તદંડાઃ=પરિત્યક્તમનોવાક્યાયમયસાવધવ્યાપારરૂપ-દંડાઃ સન્તઃ, પલિતં=પુરાતનં કર્મેત્યર્થઃ, અનાદિકાલવસ્થાયિત્વેન ચિરન્તનં કર્માપિ રચતા હૈ, इनसे बहिर्भूत तत्त्वों में उसकी सदा उपेक्षा ही बनी रहती है। जहाँ अपने में स्वपरका विवेक जागृत हो रहा है वही दुनियां में विद्वानों से भी अधिक विद्वान् है। अनेक शास्त्रों का अध्येता हो कर भी जो इस ज्ञानसे शून्य है वह विद्वान् होकर भी सिद्धान्तज्ञों की दृष्टि में मूर्ख ही है ॥ सू० १ ॥

જિનધર્મ સે બહિર્ભૂત વ્યક્તિયોં કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરને-વાલા મનુષ્ય વિદ્વાન્ કયોં બતલાયા ગયા હૈ? इस प्रकार शिष्य की जिज्ञासा होने पर कहते हैं—‘अणुवीड्’ इत्यादि।

જો મનુષ્ય વારંવાર વિચાર કરકે તથા જ્ઞાનદૃષ્ટિ સે દેવકર મન, વચન ઔર કાયકે સાવધવ્યાપારરૂપ દંડોં સે રહિત હો જાતા હૈ વહી અનાદિકાલસે આત્માકે સાથે એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ હોને સે આબદ્ધ ચિર-

તેની સદા ઉપેક્ષા જ રહે છે. જે જીવમાં સ્વ-પરના વિવેક જાગૃત રહે છે તે જ સંસારમાં સૌ વિદ્વાનો કરતાં પણ અધિક વિદ્વાન છે. અનેક શાસ્ત્રોના જાણકાર હોવા છતાં પણ જે જ્ઞાનથી શૂન્ય છે તે વિદ્વાન હોવા છતાં પણ સિદ્ધાંતોની દૃષ્ટિમાં મૂર્ખ જ છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

જિનધર્મથી વિમુખ વ્યક્તિયો પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરવાવાળા મનુષ્યને વિદ્વાન કેમ માનવામાં આવેલ છે? આ પ્રકારની શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી કહે છે—‘અણુવીડ્’ ઇત્યાદિ.

જે મનુષ્ય વારંવાર વિચાર કરીને તથા જ્ઞાનદૃષ્ટિથી જોઈ મન, વચન અને કાયાના સાવધવ્યાપારરૂપ દંડોથી રહિત થઈ જાય છે તે જ અનાદિ કાળથી એક જ ક્ષેત્રમાં રહેવાવાળા હોવાથી આત્માની સાથે બંધાયેલા પુરાતન અષ્ટવિધ



પલિતસાદૃશ્યાત્પલિતમિત્યુચ્યતે; ત્યજન્તિ, આત્મનો માલિન્યકરણાદ્રજોરૂપમષ્ટવિધં કર્માપનયન્તિ તે વિદ્વાંસ इति भावः । ये निक्षिप्तदण्डाः सन्तोऽष्टविधं कर्म क्षपय-  
यन्ति, एवંभूताः के जीवविशेषाः सन्तीति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘नरा’इत्यादि ।

નત્તન અષ્ટવિધ કર્મોં કો, જો વસ્ત્રાદિકોં કો ધૂલકે સમાન આત્મા કો મલિન કર રહે હૈં; અપનેસે દૂર કર દેતા હૈ, ઓર વહી વિદ્વાન બી હૈ । શિષ્યને જો યહ પ્રશ્ન કિયા થા કિ ‘જિનધર્મ સે બહિર્ભૂત વ્યક્તિયોં મેં ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરનેવાલા વ્યક્તિ ઉત્તમ વિદ્વાન ક્યોં બન જાતા હૈ?’ ઉસકા હી યહ સમાધાન હૈ—‘વેત્તીતિ વિદ્વાન્’—અર્થાત્ જિસકે ખીતર સ્વપર કા વિવેક જાગૃત હો રહા હૈ વહી વિદ્વાન હૈ । ઇસ પ્રકારકી વિદ્વત્તા પ્રાપ્ત કરનેકે લિયે સર્વપ્રથમ ઇસ બાતકા જ્ઞાનદૃષ્ટિસે અવશ્ય વિચાર કરના ચાહિયે કિ યે કર્મ જો અનાદિ કાલસે મેરી આત્મા કે સાથ ક્ષીર-નીરકી તરહ સંબંધિત હો રહે હૈ, ઇસકા કારણ ક્યા હૈ?, સૂક્ષ્મ વિચાર કરને પર જ્ઞાત હોગા કિ ઇનકે સાથ અખી તક સંબંધ હોનેકા કારણ મન, વચન ઓર કાયકી સાવચ પ્રવૃત્તિ હી હૈ, અતઃ જૈસે ૨ યહ પ્રવૃત્તિ રુકેગી વૈસે ૨ નવીન કર્મોં કા આસ્ત્રવ રુકેગા ઓર સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા હોગી । મન ઓર કાયકી સાવચ પ્રવૃત્તિ કો રોકનેકે લિયે તપ સંયમ કે આરાધન કરનેકી પૂર્ણ આવશ્યકતા શાસ્ત્રકારોં ને બતલાઈ હૈ । તપ સંયમ કે આરા-ધન કરને સે સાવચ વ્યાપારોં કા જિતને ૨ અંશ મેં અભાવ હોગા ઉતને ૨

કર્મોને-ધૂળ જેમ વસ્ત્રાદિકોને મલિન કરે છે તેમ આત્માને જેઓ મલિન કરી રહ્યા છે તેઓને-પોતાથી દૂર કરી નાખે છે, અને તે જ વિદ્વાન પણ છે. શિષ્યે જે પ્રશ્ન કરેલો હતો કે ‘જનધર્મથી વિમુખ વ્યક્તિઓમાં ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરવાવાળી વ્યક્તિને ઉત્તમ વિદ્વાન કેમ માનવામાં આવે છે?’ તેનું આ સમા-ધાન છે—‘વેત્તીતિ વિદ્વાન્’—અર્થાત્ જેની અંદર સ્વ-પરનો વિવેક જાગૃત છે તે જ વિદ્વાન છે. આ પ્રકારની વિદ્વત્તા પ્રાપ્ત કરવા માટે સર્વ પ્રથમ આ વાતનું જ્ઞાનદૃષ્ટિથી વિચાર અવશ્ય કરવો જોઈએ કે આ કર્મો જે અનાદિ કાળથી મારા આત્માની સાથે દૂધ-પાણીની માફક એક થઈ રહ્યા છે તેનું કારણ શું છે? સૂક્ષ્મ વિચાર કરવાથી જ્ઞાત થશે કે એની સાથે હજી સુધી સંબંધ રહેવાનું કારણ મન, વચન અને કાયની સાવચ પ્રવૃત્તિ જ છે, માટે જેમ જેમ આ પ્રવૃત્તિ રોકશે તેમ તેમ નવા કર્મોનો આસ્ત્રવ અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા થશે. મન, વચન અને કાયની સાવચ પ્રવૃત્તિ રોકવાને માટે તપ સંયમ આરાધન કરવાની આવશ્યકતા શાસ્ત્રકારોએ બતાવી છે. તપ સંયમની આરાધના કરવાથી સાવચ વ્યાપારોનો જેટલા જેટલા અંશે અલાવ થશે, તેટલા તેટલા અંશે આત્મામાં

नराः=मनुष्याः, तेषामेव निरवशेषकर्मक्षपणसामर्थ्यमस्तीति भावः । तत्रापि साधारणतया न सर्वे मनुष्या अशेषकर्मक्षपणसामर्थ्यवन्तः—इति बोधयितुं तद्विशेषणमाह—‘मृतार्चा’ इति ।

अंशमें आत्मा में निर्मलता जागृत होगी । इस निर्मलता के आते ही स्वतः शब्दादि विषयों में जीवको उपेक्षाभावकी जागृति हो जाती है । मनुष्य को तप संयम ही उत्तम विद्वत्ता के स्थान पर लाकर रखने-वाला होता है, इसीलिये सिद्धान्तकारों ने ऐसे मनुष्यको विद्वानों में श्रेष्ठ माना है ।

यहां पर ‘पलित’ शब्द का अर्थ ‘पुरातनकर्म’ है । अनादिकालिक होने के कारण पुरातन कर्म भी पलित=श्वेतकेश सदृश हैं, अतः उन्हें यहां पलित कहा गया है । इसका अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार मनुष्य पलित-सफेद केश को शीघ्र उखाड़ डालता है उसी प्रकार मन, वचन और कायकी सावध प्रवृत्ति को त्याग करनेवाला मनुष्य भी उन पुरातन कर्मों को शीघ्र नष्ट कर देता है । यह काम सामान्य जीवों से नहीं हो सकता इसलिये इस कार्य के करनेवाले विशेष जीव ही होते हैं, इसी बातको प्रकट करने के लिये सूत्रकार इस सूत्रमें “नराः” इस पदका विन्यास करते हैं; क्यों कि समस्त कर्मों के विनष्ट करने की साक्षात् शक्ति मनुष्य में ही रही हुई है । इनमें भी सभी मनुष्य समस्त कर्मों के क्षपण करने में समर्थ नहीं होते हैं; यही बात “मृतार्चा” इस पदसे प्रकट की गई है ।

निर्मलता जागृत थो. आ निर्मलता आववाथी शब्दादिविषयोमां जवने उपेक्षा लावनी जागृति थाय छे. मनुष्यने तप संयम न विद्वत्ताना स्थान पर लावने राखवावाणां छे, माटे सिद्धांतकारोन्मे आवा मनुष्यने विद्वानोमां उत्तम मानेले छे.

आ ठेकाणु ‘पलित’ शब्दने अर्थ ‘पुरातनकर्म’ छे. अनादिकालिक होवाना कारणे पुरातन कर्मो पाणु पलित-श्वेतकेशसदृश छे, माटे तेजोने अर्ही पलित कहा छे. आनो अलिप्राय आ छे के-ने प्रकारे मनुष्य पलित-सफेद वाणने शीघ्र उखाड़ी नाछे छे ते प्रकारे मन वचन कायानी सावध प्रवृत्तिनो त्याग करवावाणा मनुष्य पाणु आ पुराणु कर्मोने शीघ्र नष्ट करी दे छे. आ काम सामान्य जवथी थछ शक्तुं नथी; माटे आ कार्यने करवावाणा कोछक न जव होय छे. आ वातने प्रकट करवाने माटे सूत्रकारे आ सूत्रमां “नराः” आ पद राख्युं छे; केम के जथा कर्मोना नाश करवानी साक्षात् शक्ति मनुष्यमां न रहैली छे. आमां पाणु जथा मनुष्यो सकल कर्मोना क्षय करवामां समर्थ थता नथी. आ वात ‘मृतार्चा’ आ शब्दथी प्रकट करवामां आवी छे.



સંસ્કારરાહિત્યાદ્ મૃતેવ મૃતા-અર્ચા શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ, શુશ્રૂષાવિભૂષાદિવર્જિતશરીરા इत्यर्थः । यद्वा-अर्चा अर्चिः, तत्सादृश्यात् क्रोधोऽप्यर्चा, स च कषायमात्रोपलक्षणम् । तथा च-मृता नष्टा अर्चा कषायरूपा येषां ते मृतार्चाः, कषायरहिता इत्यर्थः । किंच-धर्मविदः=श्रुतचारित्रधर्मज्ञानवन्तः,

“મૃતેવ મૃતા અર્ચા-શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ” અર્થાત્-શારીરિક-શુશ્રૂષાવિભૂષારૂપસંસ્કારરહિત હોનેસે મૃતકે સમાન હૈ શરીર જિનકા એસે અપને શરીરમેં નિસ્પૃહવૃત્તિ રાખનેવાલે મનુષ્યશિરોમણિ હી ઇન કમૌ પર વિજય લાભ કરતે હૈ । અથવા “અર્ચા-અર્ચિઃ” અર્થ હૈ જ્વાલા । જિસ પ્રકાર અગ્નિકી જ્વાલા લાલ હોતી હૈ ઉસી પ્રકાર ક્રોધ બી લાલ હોતા હૈ; અતઃ જ્વાલાકે સાદૃશ્ય સે ક્રોધ કો બી અર્ચા કહા હૈ । ક્રોધ યહ અન્ય કષાયોં કા ઉપલક્ષણ હૈ, ઇસસે માન, માયા ઓર લોભ કા બી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । જિનકી આત્માસે કષાયરૂપ અર્ચા નષ્ટ હો ચુકી હૈ, અર્થાત્ જો કષાયરહિત હો ચુકે હૈં વે મનુષ્ય હી અષ્ટવિધ કમૌ કે નષ્ટ કરનેમેં વિશિષ્ટશક્તિશાલી હોતે હૈં । સંસારમેં બહુત સે એસે બી બહુત સે મનુષ્ય હોતે હૈં કિ જિન્હેં શારીરિક શૃંગાર કરને કા જીવન મેં અવસર તક હી પ્રાપ્ત નહીં હોતા હૈ, ભીલ આદિ એસે હી મનુષ્યોં મેં હૈં; અતઃ ઇનકી બી યહ અવસ્થા કર્મક્ષપણ કે યોગ્ય માની જાની ચાહિયે ? ઇસ પ્રકારકી આશંકાકો દૂર કરનેકે લિયે હી “મૃતાર્ચા”

“મૃતેવ મૃતા અર્ચા-શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ” અર્થાત્ શારીરિક શુશ્રૂષા વિભૂષારૂપ સંસ્કાર રહિત હોવાથી મૃતકસદૃશ જેનું શરીર છે; આવા પોતાના શરીરમાં નિસ્પૃહ વૃત્તિ રાખવાવાળા મનુષ્યશિરોમણિ જ આ કર્મો ઉપર વિજય લાભ કરે છે, અથવા “અર્ચા-અર્ચિઃ”નો અર્થ જવાળા છે. જે પ્રકારે અગ્નિની જવાળા લાલ હોય છે તે પ્રકારે ક્રોધ પણ લાલ છે, માટે જવાળાની સદૃશતાથી ક્રોધને પણ અર્ચા કહે છે, ક્રોધ-શબ્દ ખીલ કષાયોનું ઉપલક્ષણ છે. આમાં માન, માયા અને લોભનો પણ સમાવેશ થાય છે. જેના આત્માથી કષાયરૂપી અર્ચાનો નાશ થયેલ છે, અર્થાત્-જે કષાયરહિત છે તે જ મનુષ્ય આઠ પ્રકારના કર્મોનો ક્ષય કરવામાં વિશિષ્ટશક્તિશાળી છે. સંસારમાં એવા પણ ઘણા માણસો છે કે જેને શારીરિક શૃંગાર કરવાનો અવસર જીવનમાં કોઈ વખત પણ પ્રાપ્ત થતો નથી, ભીલ આદિ એવા મનુષ્યો છે, માટે તેની પણ આ અવસ્થા કર્મક્ષપણયોગ્ય માનવી જોઈએ ? આ પ્રકારની શંકાને દૂર કરવાને માટે જ “મૃતાર્ચા” શબ્દનો અર્થ “કષાયરહિત”



અત એવ ઋજવઃ=સરલહૃદયાઃ, અમાયિન इत्यर्थः । मनुष्याः किं कृत्वा एवं भवन्ती-  
ती जिज्ञासायामाह—‘ आरम्भजम् ’ इत्यादि । इदं सर्वप्राणिप्रत्यक्षं दुःखम्  
शब्दका अर्थ “ कषायरहित ” किया है । यद्यपि असाता-अशुभ कर्म के  
तीव्र उदय होने से वे उस प्रकारकी सामग्री से रहित हैं फिर भी वे उस  
जातकी कषाय से रहित नहीं हैं, अतः शारीरिक संस्कार से रहित होकर  
भी जो कषायोंसे रहित होते हैं वे ही कर्मक्षपण करनेमें शक्ति-सम्पन्न  
होते हैं । सच्चे शारीरिक संस्कार से विहीन वे होंगे जो इस शरीर को  
अपवित्र एवं मल, रुधिर, राध ( पीव ) की थैली मान कर निस्सार सम-  
झेंगे । शारीरिक संस्कार करना यह एक जातकी कषाय है । इस प्रकार  
के मनोभाव की जागृति आत्मामें विना श्रुतचारित्र धर्म के ज्ञान हुए  
नहीं हो सकती, अतः ‘ धर्मविदः ’ यह विशेषण इसी बातकी पुष्टि  
करता है । धर्मके यथार्थ स्वरूप को जान कर उस पर श्रद्धा रखनेवाला  
मनुष्य ही धार्मिक नियमों को अपनी आत्मामें उतारनेकी चेष्टा या  
उत्साह से सम्पन्न होता है । धार्मिक ज्ञान भी उसीकी आत्मामें अपना  
प्रभाव प्रकट करता है और वही ‘ अमायावी ’ सरल हृदयवाला होता  
है । मायावी-दुरंगी चाल चलने वाले-मनुष्य धर्मका सेवन करते हुए भी  
उससे जैसा फल प्राप्त उन्हें होना चाहिये वैसे फलसे सदा वंचित ही  
रहते हैं । यही बात सूत्रकारने “ ऋजवः ” इस पदसे स्पष्ट की है ।

કર્થો છે. જે કે અસાતા-અશુભ કર્મ-નો તીવ્ર ઉદય હોવાથી તે તેવા પ્રકારની  
સામગ્રીથી રહિત છે તો પણ તે તેવા પ્રકારના કષાયથી રહિત નથી, માટે શારી-  
રિક સંસ્કારથી રહિત થઈને પણ જે કષાયોથી રહિત થાય છે તે જ કર્મક્ષપણ  
કરવામાં શક્તિસંપન્ન થાય છે. સાચા શારીરિક સંસ્કારથી દૂર તેજ થશે જે આ  
શરીરને અપવિત્ર અને મળ, લોહી, રક્તની થેલી માનીને નિસ્સાર સમજશે.  
શારીરિક સંસ્કાર કરવો તે પણ એક બાતનો કષાય છે. આ પ્રકારના મનોભાવની  
બાગૃતિ આત્મામાં શ્રુતચારિત્ર ધર્મનું જ્ઞાન થયા વગર થતી નથી માટે ‘ ધર્મ-  
વિદઃ ’ આ વિશેષણ આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે. ધર્મના યથાર્થ સ્વરૂપને બાણીને  
તેના ઉપર શ્રદ્ધા રાખવાવાળા મનુષ્ય જ ધાર્મિક નિયમોને પોતાના આત્મામાં  
ઉતારવાની ચેષ્ટા અને ઉત્સાહ રાખે છે. ધાર્મિક જ્ઞાન પણ તેના જ આત્મામાં  
પોતાનો પ્રભાવ પાડે છે, અને તે જ ‘ અમાયાવી ’ સરળ હૃદયવાળો હોય છે.  
માયાવી—માયા-કપટથી ચાલવાવાળો—મનુષ્ય ભલે તે ધર્મનું સેવન કરતો હોય  
તો પણ જેવું જ્ઞ તેને મળવું જોઈએ તેવા જ્ઞથી તે સદા વંચિત જ રહે છે.  
આ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ સૂત્રકારે “ ઋજવઃ ” આ પદથી કર્યું છે.

આરમ્ભજમ્=કૃષિવાણિજ્યાદિસકલસાવચ્ચવ્યાપાર આરમ્ભઃ, તસ્માજ્જાતમ્, इति  
જ્ઞાત્વા=‘આરમ્ભે કૃતે સતિ પ્રાણિનાં દુઃખમુત્પદ્યતે’ इति વિદિત્વા તતો નિવૃત્તા  
નરાઃ સર્વં કર્મ ક્ષપયન્તીત્યર્થઃ । અસ્મિન્ વિષયે શ્રદ્ધાનં વિધેયમિતિ વોધયિતુમાહ  
—એવમાહુઃ સમ્યક્ત્વદર્શિન इति । સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ=સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્તાઃ કેવલિ-  
પ્રમૃતયઃ, અથવા સમત્વદર્શિનઃ=રાગદ્વેષાભાવેન એકેન્દ્રિયાદિસર્વજીવે તુલ્યભાવેના-  
વલોકિનઃ એવમ્=ઉક્તરીત્યા આહુઃ=વદન્તિ । તસ્માદત્ર શ્રદ્ધાનં વિધેયમિતિભાવઃ । ૨ ।  
કુતઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનો વદન્તીતિ જિજ્ઞાસાયમાહ—‘તે સવ્વે’ इत्यादि ।

કૃષિ-ખેતી, વાણિજ્ય-વ્યાપાર આદિ સાવચ્ચ કાર્યોંકા નામ આરંભ હૈ ।  
इस आरम्भ से ही समस्त जीवों को दुःख उत्पन्न होता है और इस दुःखका  
समस्त ही जीव अपने २ स्वानुभवरूप प्रत्यक्ष से साक्षात् अनुभव करते हैं,  
ऐसा समझ कर जो मनुष्य उस सावद्य व्यापारसे निवृत्त हो जाते हैं वे ही  
समस्त कर्मों का क्षय करते हैं । इस प्रकार के इस कथनमें भव्य प्राणियों  
को श्रद्धा करना चाहिये । इस प्रकारकी सूचना करते हुए सूत्रकार कहते  
हैं कि—इस प्रकार का यह कथन समकित को प्राप्त हुए केवली आदि  
महापुरुषोंने, अथवा जो समदर्शी हैं, समस्त जीवोंको राग द्वेष के अभाव  
होनेसे अपने तुल्य समझते हैं—उन्होंने किया है । इस विषयमें निश्शङ्क  
होकर दृढ श्रद्धा ही करनी चाहिये ॥ सू० २ ॥

સમ્યક્ત્વદર્શી કેવલી આદિ એસા ક્યોં કહતે હૈં ? इस प्रकारकी शि-  
ष्यकी जिज्ञासा शांत करनेके लिये सूत्रकार कहते हैं—‘ते सव्वे’ इत्यादि ।

ખેતી, વ્યાપાર આદિ સાવચ્ચ કાર્યોંનું નામ આરંભ છે. આ આરંભથી જ  
સર્વ જીવોને દુઃખ ઉત્પન્ન થાય છે, અને આ દુઃખને સર્વ જીવ પોતપોતાના  
સ્વાનુભવરૂપ પ્રત્યક્ષથી સાક્ષાત્ અનુભવ કરે છે. એવું સમજીને જે મનુષ્ય આવા  
સાવચ્ચ વ્યાપારથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે તે જ સર્વ કર્મોંનો ક્ષય કરે છે. આવા  
પ્રકારના આ કથનમાં ભવ્ય પ્રાણિઓએ શ્રદ્ધા રાખવી જોઈએ. આ પ્રકારની  
સૂચના કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—આવા પ્રકારનું આ કથન સમકિતને પ્રાપ્ત  
થયેલાં કેવળી આદિ મહાપુરુષોએ, અથવા સમદર્શી છે, રાગદ્વેષ રહિત હોવાથી  
સર્વ જીવોને પોતાના તુલ્ય માને છે, તેઓએ કયું છે, આ વિષયમાં નિશ્ચંક  
થઈને દૃઢ શ્રદ્ધા જ રાખવી જોઈએ ॥ સૂ० ૨ ॥

સમ્યક્ત્વદર્શી કેવળી આદિ આ પ્રકારે કેમ કહે છે ? આ પ્રકારની  
શિષ્યની જિજ્ઞાસાને શાન્ત કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘તે સવ્વે’ इत्यादि.



मूलम—ते सवे पावाइया दुखस्स कुसला परिणमुदाहरन्ति  
इय कम्म परिणाय सव्वसो ॥ सू० ३ ॥

छाया—ते सर्वे प्रावादिकाः दुःखस्य कुशलाः परिज्ञामुदाहरन्ति इति कर्म  
परिज्ञाय सर्वशः ॥ सू० ३ ॥

टीका—यतस्ते सर्वे सर्वविदः, प्रावादिकाः=प्र=प्रकर्षेण आ=धर्ममर्यादापुर-  
स्सरं वदितुं शीलं येषां ते प्रावादिनस्त एव प्रावादिकाः—यथावस्थितार्थं प्रतिबो-  
धयितुं वाग्मिन इत्यर्थः । दुःखस्य=शारीरमानसदुःखकारणस्य, कारणे कार्योपचा-  
रात् अष्टविधकर्मण इति यावत्, अपनोदने कुशलाः=प्रवीणाः सन्तः, सर्वशः=  
सर्वप्रकारैः मूलोत्तरप्रकृतिप्रकारैरित्यर्थः, कर्म परिज्ञाय इति=अनया रीत्या परिज्ञां

वे समस्त सर्वज्ञ केवली भगवान् कि जिनका स्वभाव धार्मिक-  
मर्यादा के अनुसार ही बोलने-उपदेश देनेका है, अर्थात्—जो वाग्मी-  
यथावस्थित पदार्थका प्रतिबोधन करनेमें पटु हैं और जो शारीरिक और  
मानसिक दुःखके कारणभूत अष्टविध कर्म को नष्ट करने में कुशल हैं,  
मूल और उत्तर प्रकृति के भेदसे विविधरूप (८ और १४८) कर्म को  
जान कर ज्ञपरिज्ञा और प्रत्याख्यानपरिज्ञाके भेदसे दो प्रकार की परिज्ञाका  
प्रतिपादन करते हैं, अर्थात्—‘ज्ञ’ परिज्ञा से अष्ट प्रकार के कर्म को जान कर  
‘प्रत्याख्यान’ परिज्ञा से उस समस्त कर्मका परिहार करे, ऐसा कहते हैं ।

परिज्ञा दो प्रकारकी है (१) ज्ञपरिज्ञा, (२) प्रत्याख्यानपरिज्ञा । ज्ञाता  
ज्ञपरिज्ञासे कर्मों के स्वरूपादिक को जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञासे—ज्ञान-  
पूर्वक त्यागसे उनके नाश करने में उद्यमशील होता है । कर्मों की मूल

ते બધા સર્વજ્ઞ કેવળી ભગવાન, જે બોલના સ્વભાવ ધાર્મિક મર્યાદા અનુસાર જ  
બોલવાનો—ઉપદેશ દેવાનો—છે, અર્થાત્ જે વાગ્મી યથાવસ્થિત પદાર્થનું પ્રતિ-  
બોધન કરવામાં કુશળ છે, અને જે શારીરિક અને માનસિક દુઃખના કારણભૂત  
આઠ પ્રકારના કર્મોનો નાશ કરવામાં કુશળ છે, મૂળ અને ઉત્તર પ્રકૃતિના ભેદથી  
વિવિધરૂપ (આઠ કર્મ અને એકસો અડતાલીસ પ્રકૃતિરૂપ કર્મ) કર્મને બાણીને જ-  
પરિજ્ઞા અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાના ભેદથી બે પ્રકારની પરિજ્ઞાનું પ્રતિપાદન કરે છે.  
અર્થાત્—‘જ્ઞ’ પરિજ્ઞાથી આઠપ્રકારના કર્મને બાણીને ‘પ્રત્યાખ્યાન’ પરિજ્ઞાથી તે  
સમસ્ત કર્મનો નાશ કરે, એમ કહે છે.

પરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે. (૧) જ્ઞ-પરિજ્ઞા, (૨) પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા, જ્ઞાતા  
જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી કર્મોના સ્વરૂપાદિક બાણીને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી જ્ઞાનપૂર્વક ત્યાગથી  
તેનો નાશ કરવામાં ઉદ્યમશીલ રહે છે. કર્મોની મૂલ પ્રકૃતિઓ ૮ છે, અને ઉત્તર



જપ્રત્યાખ્યાનભેદાદ્ દ્વિવિધામ્, ઉદાહરન્તિ=કથયન્તિ । જપરિજ્ઞયા અષ્ટવિધં કર્મ સર્વથા પરિજ્ઞાય, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા તત્ સર્વં પરિહરેદિતિ વદન્તીત્યર્થઃ ॥૩॥

યદિ સર્વજ્ઞાઃ કર્મપરિજ્ઞાસુદાહરન્તિ, તસ્માત્ કિં કર્તવ્યમ્ ? ઇતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ—‘ઇહ આણાકંચી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઇહ આણાકંચી પંડિત અણિહે, એગમપ્પાણં સંપેહાણ ધુણે સરીરં ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—ઇહ આજ્ઞાકાઙ્ક્ષી પંડિતઃ અસ્મિન્, એકમાત્માનં સંપેક્ષ્ય ધુનીયાત્ શરીરમ્ ॥ સૂ. ૪ ॥

પ્રકૃતિયાં ૮ હૈં ઓર ઉત્તરપ્રકૃતિયાં ૧૪૮ હૈં । સૂત્રમેં ‘દુઃખ’ શબ્દ સે ઉસકે કારણભૂત કર્મોંકા કારણ મેં કાર્યકે ઉપચાર સે ગ્રહણ કિયા હૈં । કેવલી ભગવાન્ વે હૈં જો સમસ્ત જીવોં કો ધાર્મિક મર્યાદા કે અનુસાર હી હિતકા ઉપદેશ દેતે હૈં ઓર સ્વયં જો અષ્ટ કર્મોં મેં સે ચાર ઘાતિયા કર્મોં કો નષ્ટ કર ચુકે હૈં, અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોંકા નાશ કરને મેં જો લગેહુએ હૈં, શારીરિક ઓર માનસિક આધિ વ્યાધિ જિનમેં નહીં હૈ, ઓર જો યહી પ્રવચન કરતે હૈં કિ જો દુઃખસે છૂટને કી અભિલાષા રખતે હૈં ઉનકા કર્તવ્ય હૈ કિ વે પહિલે દુઃખકે કારણભૂત કર્મોંકે જ્ઞાતા બનેં ઓર ફિર જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રકે આરાધન સે ઉનકા સમૂલ વિચ્છેદ કરેં ॥ સૂ. ૩ ॥

યદિ સર્વજ્ઞ ભગવાન્ કર્મપરિજ્ઞા કા કથન કરતે હૈં તો ઇસસે ભવ્ય જીવોંકા કયા કર્તવ્ય હૈ ? એસી શિષ્ય કી જિજ્ઞાસા હોને પર કહતે હૈં—‘ઇહ આણાકંચી’ ઇત્યાદિ ।

પ્રકૃતિઓ ૧૪૮ છે, સૂત્રમાં ‘દુઃખ’ શબ્દથી તેના કારણભૂત કર્મોનું કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી ગ્રહણ કરેલ છે. કેવળી ભગવાન તે છે જે સર્વ જીવોને ધાર્મિક મર્યાદા અનુસાર જ હિતનો ઉપદેશ આપે છે, અને પોતે આઠ કર્મમાંથી ચાર ઘાતિયા કર્મોનો નાશ કરી ચૂક્યા છે, અવશિષ્ટ રહેલાં ચાર અઘાતિયા કર્મોનો નાશ કરવામાં જે લાગેલ છે, શારીરિક અને માનસિક આધિ-વ્યાધિ જેઓમાં નથી, અને જેઓનું પ્રવચન આ પ્રકારનું છે કે-જે દુઃખથી છુટવાની અભિલાષા રાખે છે તેમનું કર્તવ્ય એ છે કે-પહેલાં દુઃખના કારણભૂત કર્મોને બાંધે અને પછી જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રનું આરાધન કરવાથી તેનો સમૂળો નાશ કરે ॥ સૂ. ૩ ॥

યદિ સર્વજ્ઞ ભગવાન કર્મ પરિજ્ઞાનું કથન કરે છે તો તેથી ભવ્ય જીવોનું શું કર્તવ્ય છે ? એવી શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી કહે છે-‘ઇહ આણાકંચી’ ઇત્યાદિ.

टीका—इह=अस्मिन् मनुष्यलोके, आज्ञां=सर्वज्ञनिदेशं काङ्क्षितं शीलमस्येति आज्ञाकाङ्क्षी सम्यक्त्वस्य दृढीकरणेन पुनः पुनरार्हतागमश्रवणमननसमाराधनशीलः, अत एव पण्डितः=हेयोपादेयविवेकनिपुणः, अत एव अस्निहः=स्निह्यतीति स्निहः रागवान्, न स्निह इत्यस्निहः, स्निह इत्युपलक्षणं, तेन रागद्वेषरहित इत्यर्थः, आत्मानम् एकं=स्वजनधनशरीरादिभ्यः पृथग्भूतं संप्रेक्ष्य=विविच्य-पर्यालोच्य शरीरं=स्वदेहं धुनीयात्=निर्ममत्वभावेन निराद्रियेत, कञ्चुके सर्प इव शरीरे ममत्वं परित्यजेदित्यर्थः। अयं भावः—स्वजनधनशरीरादिषु क्षणभङ्गुरत्वादितोषदर्शनेन रागापगमो भवति। तदनन्तरमयमात्मा—एक एवास्तीति पर्यालोचयति। यथा—

इस मनुष्यलोकमें सर्वज्ञ भगवानकी एकमात्र आज्ञाके समाराधन करनेके स्वभाववाला हेयोपादेय के विवेक करनेमें निपुणमतिवाला और रागद्वेषसे विरक्तबुद्धिवाला भव्य जीव अपनी आत्माकी पर्यालोचना करके शरीर को निर्ममत्व-भावसे रखे।

शरीर में जितना अधिक ममत्व होगा उतना ही अधिक इस संसार के चक्रमें फँसेगा। 'ममेदं' भावसे शरीरकी सेवा ही आत्मकल्याण से विमुख होनेकी निशानी है, अतः सूत्रकार यहाँ पर इसी बातका उल्लेख करते हुए उपदेश देते हैं कि—हे भव्य ! तुम सर्वप्रथम समकित को दृढ करो। इसकी दृढता होने पर तुम्हें अपने कल्याण का मार्ग अपने आप ज्ञात होने लगेगा। उस समय तुम्हारा आत्मस्वभाव शब्दादि विषयों की ओर न झुक कर प्रभुप्रतिपादित आगमके श्रवण, मनन और उसके समाराधन की ओर ही झुकेगा। उससे तुम समझ सकोगे कि हमारा

आ मनुष्यलोकમાં सर्वज्ञ ભગવાનની એક માત્ર આજ્ઞાનું આરાધન કરવાનાં સ્વભાવવાળા, હેયોપાદેયના વિવેક કરવામાં નિપુણ મતિવાળા અને રાગ દ્વેષથી વિરક્ત બુદ્ધિવાળા ભવ્ય જીવ પોતાના આત્માની પર્યાલોચના કરીને શરીરને નિર્મમત્વ ભાવથી રાખે.

શરીરમાં જેટલો અધિક મમત્વ હશે તેટલો જ અધિક આ સંસારના ચક્રમાં ફસાશે. 'મમેદં' ભાવથી—'આ માંડું છે'—એવા ભાવથી શરીરની સેવા જ આત્મ-કલ્યાણથી વિમુખ થવાની નિશાની છે, માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે આ વાતનો ઉલ્લેખ કરીને ઉપદેશ આપે છે કે—હે ભવ્ય ! તમે પહેલાં સમકિતને દૃઢ કરો. સમકિતની દૃઢતા હોવાથી તમને તમારા કલ્યાણનો માર્ગ આપમેળે જાણવામાં આવશે. એવે વખતે તમારો આત્મસ્વભાવ શબ્દાદિ વિષયોની તરફ ન જતાં પ્રભુપ્રતિપાદિત આગમનું શ્રવણ મનન અને તેના આરાધનની તરફ જ વળશે,



ઉપાદેય ક્યાં છે અને હેય ક્યાં છે ? હસ પ્રકાર કા પરિપક્વ-પુષ્ટ વિવેક જલ આત્મામેં સ્થિરતા ધારણ કર લેગા તલ બાહ્ય પદાર્થોં મેં જો રાગ ઓર દ્વેષકી ભાવના જાગૃત હો જાયા કરતી છે વહ રુક જાયગી, યહાં તલ કલ જો શરીર, આત્માકા અત્યન્ત નલકટ સમ્બન્ધી છે ડસકે પ્રતલ મી 'મમેદં' ભાવકા સર્વથા હાસ હો જાવેગા ઓર 'તપ-સંયમ હી ઉપાદેય વસ્તુ છે' હસકા ભાન અચ્છી તરહ સે હોને લેગેગા ।

તાત્પર્ય હસકા યહી છે કલ કર્મ કે સ્વરૂપકો જાન કર મનુષ્ય સાંસારલ પદાર્થોં કી ઓર સે ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરે । હસસે મોહ કી ન્યૂનતા હોતે ૨ સમકલત કી ઉત્પત્તલ ઓર પુષ્ટલ હોગી । હસકી પુષ્ટલ હોને પર આર્હત પ્રવચનકે આરાધન કી ઓર હી ધ્યાન આકૃષ્ટ હોગા । હસસે હેયોપાદેય કા વિવેક જાગૃત હોકર આત્માકો પરપદાર્થોં કી ઓર રાગદ્વેષ કી પરલણતલ સે રહલત કરેગા; તલ જ્ઞાત હોગા કલ યહ આત્મા સ્વજન-સ્ત્રી-પુત્ર-મલત્રાલલકોં સે ઓર શરીર સે સર્વથા મલત્ર-જુદા છે, ડનકે સાથ હસકા કલસીંમી પ્રકાર કા સમ્બન્ધ નહીં છે । ડનકે સુધાર-લલગાડ મેં હસકા યત્લલકલત્ મી સુધાર-લલગાડ નહીં છે । હસ પ્રકાર કી ધારણા પરલપુષ્ટ હોને પર જ્ઞાની આત્મા જૈસે કચ્ચુક (કાંચલી) કો સર્પ નલર્મમત્વભાવસે છોડ દેતા છે ડસી પ્રકાર હસ શરીર મેં 'મમત્વ' ભાવ

અને તેથી તમે સમજી શકશો કે અમારું ઉપાદેય શું છે અને હેય શું છે ? આ પ્રકારનો પરિપક્વ-પુષ્ટ વિવેક જ્યારે આત્મામાં સ્થિર થશે ત્યારે જ બહારના પદાર્થોમાં જે રાગ દ્વેષની ભાવના જાગૃત થાય છે તે રોકાઈ જશે, ત્યાં સુધી કે શરીર આત્માનું અત્યંત નિકટ સંબંધી છે તેના પ્રતિ પણ 'મમેદં' ભાવનો- 'આ મારું છે' એવા ભાવનો સર્વથા નાશ થઈ જશે, અને 'તપ સંયમ જ ઉપાદેય વસ્તુ છે' તેનું ભાન સારી રીતે થઈ જશે.

આનો અભિપ્રાય એ છે-મનુષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે સાંસારલ પદાર્થોં પ્રતલ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરે. આથી મોહની અલ્પતા થતાં થતાં સમકલતની ઉત્પત્તલ અને પુષ્ટલ થશે. સમકલતની પુષ્ટલ થતાં જ આર્હત પ્રવચનનું આરાધન કરવાની તરહ ધ્યાન દોરાશે, અને તેથી હેયોપાદેયનો વિવેક જાગૃત થઈ આત્માને પરપદાર્થોંની તરહ રાગદ્વેષપરલ્લુતલરહલત કરશે, ત્યારે ભાન થશે કે આ આત્મા સ્વજન સ્ત્રી પુત્ર મલત્રાલલકોંથી અને શરીરથી સર્વથા જુદો છે, તેની સાથે આત્માનો કોઈ પ્રકારનો સંબંધ નથી. તેમના સુધરવા બગડવામાં તેનો એટલે આત્માનો જરા પણ સુધારો-બગાડો નથી. આ પ્રકારની ધારણા પાડી થવાથી સાપ જેમ કાંચળીને મમતા વગર છોડી દે છે તે રીતે જ તે જ્ઞાની



“ કાયઃ સંનિહિતાપાયઃ, સંપદઃ પદમાપદામ્ ।  
સમાગમાઃ સાપગમાઃ, સર્વમુત્પાદિ મહુરુમ્ ॥ ૧ ॥  
નાયમત્યન્તસંવાસઃ, કસ્યચિત્ કેનચિત્ સહ ।  
અપિ સ્વેન શરીરેણ, કિમુતાન્યૈઃ પૃથગ્જનૈઃ ॥ ૨ ॥

કા પરિત્યાગ કરતા હૈ । વહ જાનતા હૈ કિ ઇન સ્વજન ધન ઓર શરી-  
રાદિકોં કે સાથ જો ઇસ જ્ઞાતા દ્રષ્ટા આત્મા કા સમ્બન્ધ હુઆ હૈ વહ  
કેવલ સંયોગમાત્ર હૈ । સંયોગસમ્બન્ધવાલોં કા વિયોગ અવદ્યંભાવી  
હૈ । જ્ઞાન ઓર આત્મા કા જિસ પ્રકાર તાદાત્મ્યસમ્બન્ધ હૈ ઉસ પ્રકાર  
કા સમ્બન્ધ ઇસકે સાથ ઇનકા નહીં હૈ, અતઃ ઇનકા યહ સંયોગ ક્ષણભં-  
ગુર હૈ, ઓર આત્માકા સ્વભાવ શાશ્વત હૈ, ફિર ક્ષણિક પદાર્થોંકે સાથ  
રાગ કરનેસે લાભ હી ક્યા હૈ ? । ઇસ પ્રકારકે વિવેકપૂર્ણ સદ્વિચારોં સે  
જબ ઉનકે પ્રતિ ઉસકી દૃષ્ટિ રાગરહિત હોતી હૈ ઓર આત્મસ્વભાવકી  
ઓર વિશેષ ઉન્મુખ હોતી હૈ તબ વહ વિચારતા હૈ કિ-મૈં એકાકી હું,  
સંસારમેં મેરા કોઈ નહીં હૈ ઓર મૈં બી કિસીકા નહીં હું । કહા બી હૈ-

“ કાયઃ સંનિહિતાપાયઃ, સંપદઃ પદમાપદામ્ ।  
સમાગમાઃ સાપગમાઃ, સર્વમુત્પાદિ મંગુરુમ્ ॥ ૧ ॥  
નાયમત્યન્તસંવાસઃ, કસ્યચિત્ કેનચિત્સહ ।  
અપિ સ્વેન શરીરેણ, કિમુતાન્યૈઃ પૃથગ્જનૈઃ ॥ ૨ ॥

આત્મા આ શરીરના મમત્વભાવનો ત્યાગ કરે છે. તે જાની બાણુ છે કે-આ  
સ્વજન ધન અને શરીરાદિકોની સાથે જે આ જ્ઞાતા દ્રષ્ટા આત્માનો સંબંધ  
થયેલ છે તે કેવળ સંયોગમાત્ર છે. સંયોગ-સંબંધવાળાઓનો વિયોગ અવશ્ય-  
ભાવી છે. જ્ઞાન અને આત્માનો જે પ્રકારે તાદાત્મ્ય સંબંધ છે તે પ્રકારનો સંબંધ  
તેની સાથે તેનો નથી, માટે આ તેનો સંયોગ ક્ષણભંગુર છે, અને આત્માનો  
સ્વભાવ શાશ્વત છે; પછી ક્ષણિક પદાર્થોની સાથે રાગ કરવાથી લાભ જ શું છે ?,  
આવા પ્રકારના વિવેકપૂર્ણ સદ્વિચારોથી જ્યારે તેના પ્રતિ તેની દૃષ્ટિ રાગ-રહિત  
થાય છે, અને આત્મસ્વભાવની તરફ વિશેષ ઉન્મુખ થાય છે ત્યારે આ રીતે  
વિચારે છે કે-હું એકલો જ છું, સંસારમાં માફે કોઈ નથી, અને હું પણ કોઈનો  
નથી. કહું પણ છે—

“ કાયઃ સંનિહિતાપાયઃ, સંપદઃ પદમાપદામ્ ।  
સમાગમાઃ સાપગમાઃ, સર્વમુત્પાદિ મંગુરુમ્ ॥ ૧ ॥  
નાયમત્યન્તસંવાસઃ, કસ્યચિત્કેનચિત્સહ ।  
અપિ સ્વેન શરીરેણ, કિમુતાન્યૈઃ પૃથગ્જનૈઃ ॥ ૨ ॥

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥

अपरं च—“ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक, - एको याति भवान्तरम् ” ॥ ४ ॥

अन्यच्च —“ सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भावीति यो मम ” ॥ ५ ॥

किंच —“ न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिषुमवशं रुजन्ति वश्याः

तटतरुमाप इवाऽऽपगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

तस्मात् स्वजनधनशरीरादिषु ममत्वं परिवर्जयेदिति ॥ सू० ४ ॥

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥ इति ।

तथा “ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक, - एको याति भवान्तरम् ” ॥ ४ ॥

सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याऽहं, नासौ भावीति यो मम ” ॥ ५ ॥

न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिषुमवशं रुजन्ति वश्याः,

तटतरुमाप इवापगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥ इति ।

तथा—“ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक, - एको याति भवान्तरम् ” ॥ ४ ॥

सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भावीति यो मम ” ॥ ५ ॥

न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिषुमवशं रुजन्ति वश्याः,

तटतरुमाप इवाऽऽपगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

યહ શરીર જો મુદ્ધે પ્રાપ્ત હુઆ હૈં ઉસકા પતન અવશ્યંભાવી હૈં । સંપત્તિ અનેક વિપત્તિયોં કી જનની હૈં । ઇષ્ટમિત્રાદિકોં કા સમાગમ ધ્રુવ નહીં હૈં । સબ પદાર્થ ઉત્પત્તિ ઓર વિનાશ સ્વભાવવાલે હૈં ॥ ૧ ॥ યહાં પર કિસી કા કિસી કે સાથ નિવાસ સ્થિર નહીં હૈં । દૂસરોં કી તો વાત હી કયા કરની ? અરે ! ઇસ શરીર કે સાથ મી તો આત્માકા સમ્બન્ધ સ્થિર નહીં હૈં ॥ ૨ ॥ ઇસ અનન્ત સંસારમેં જો મેરે હજારોં માતા-પિતા હો ગયેવે દૂસરે હી થે; અમી જો હૈં વે દૂસરે હી હૈં; આગે જો હોંગે વે મી દૂસરે હી હોંગે ॥ ૩ ॥ ફિર મી કહા હૈં—

યહાં પર જીવ અકેલા હી શુભાશુભ કર્મોંકા કર્તા હૈં ઓર અકેલા હી શુભાશુભ ફલોંકા ભોક્તા હૈં । યહ અકેલા હી મરતા હૈં ઓર અકેલા હી ભવાન્તરમેં જાતા હૈં ॥ ૪ ॥

મૈં સદા અકેલા હૂં, ન મેરા કોઈ હૈં ઓર ન મૈં કિસીકા હૂં । મૈં જિનકા હૂં એસે અપને પિતા-પિતામહાદિકોં કો આજ નહીં દેખ રહા હૂં, કયોં કિ વે કાલકવલિત હો ગયે । ઓર એસા મી કોઈ નહીં હોગા જિસકા મૈં હોઝું । અર્થાત્-મેરે કાલકવલિત હો જાને પર મૈં મી અપને પુત્રાદિકોં કા નહીં રહૂંગા ॥ ૫ ॥ જો ઇસ સંસારસે પરલોકવાસી હો ગયે હૈં વે અબ મિલનેકે

આ શરીર જે મને પ્રાપ્ત થયેલ છે, તેનો નાશ જરૂર છે. સંપત્તિ અનેક વિપત્તિઓની માતા છે. ઇષ્ટ મિત્રોનો સમાગમ પણ ધ્રુવ નથી. જે ઉત્પત્તિશીલ પદાર્થો છે તે બધા ક્ષણભંગુર છે. (૧) અહીં આ કોઈનો કોઈની સાથે નિવાસ સ્થિર નથી. બીજાની તો વાત જ શી કરવી ? અરે ! આ શરીરની સાથે આત્માનો સંબંધ પણ સ્થિર નથી. (૨) આ અનંત સંસારમાં જે મારા હબરો માતા પિતા અને સેંકડો પુત્રો અને સ્ત્રીઓ થઈ ગયા તે બીજા જ હતા; અને જે અત્યારે છે તે પણ બીજા જ છે; અને જે આગળ થશે તે પણ બીજા જ થશે. ॥૩॥ વળી પણ કહું છે—

અહીં જીવ એકલો જ શુભાશુભ કર્મોનો કર્તા છે, અને એકલો જ શુભાશુભ ફળોનો ભોક્તા છે. તે એકલો જ મરે છે અને એકલો જ ભવાન્તરમાં જાય છે. (૪)

હમેશાં હું એકલો છું, મારો કોઈ નથી, તેમ જ હું પણ કોઈનો નથી. જેનો હું છું એવા પોતાના આપ દાદાઓને આજે હું જોતો નથી; કેમ કે—તે બધા કાળકવળિત થઈ ગયા, અને એવો પણ કોઈ નહિ થશે જેનો હું થાઉં, અર્થાત્—મારું શરીર છુટ્યા પછી હું પણ પોતાના પુત્રાદિકોનો રહીશ નહિ (૫) જે આ સંસારથી પરલોકવાસી થયા છે તે હવે મળવાનાં નથી, જે હાલ



કિંચ—કસેહિ અપ્પાણં ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કસેહિ અપ્પાણં જરેહિ અપ્પાણં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—કુશં કુરુ આત્માનં જારય આત્માનમ્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—આત્માનં=શરીરમ્, ઇહ આત્મશબ્દઃ શરીરવાચી ગૃહ્યતે; કુશં કુરુ=તપશ્ચરણાદિના શરીરશોષણે પ્રવૃત્તો ભવેદિત્યર્થઃ । તથા—આત્માનં=શરીરં જારય=જીર્ણં કુરુ, તપશ્ચરણેન તથા કુરુ યથા જરાજીર્ણમિવ ભવેદિત્યર્થઃ । શુશ્રૂષાવિભૂષાપરિહારેણ શરીરસ્ય નિઃસારતામાપાદય, સ્વદેહં નિર્વલં રૂક્ષં ચ કુરુષ્વેતિ ભાવઃ ॥સૂ૦ ૫॥

નહીં; જો અમી સાથમેં રહ રહે હૈં વે મી સદા સાથ રહનેકે નહીં । જિસ પ્રકાર નદિયોં કે તટ પર સ્વહે હુએ વૃક્ષોંકો ઉનકા જલ ઉત્ત્રાઢ કર ફેંક દેતા હૈં ઉસી પ્રકાર મેરે યે સ્વજનાદિક મુઝે હર તરહ સે આત્મસ્વરૂપ સે ઉત્ત્રાઢ દેનેકી કોશિશ મેં લગે હુએ હૈં ॥ ૬ ॥

ઇસલિયે મનુષ્યકો યાહિયે કિ ઇન સંયોગી પદાર્થોં સે મમત્વરહિત હોકર આત્મકલ્યાણકે માર્ગકા પથિક બને ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ભગવાન અપની દિવ્યદેશનામેં ભવ્ય જીવોંકો સમજાતે હુએ કહતે હૈં—  
' કસેહિ અપ્પાણં ' ઇત્યાદિ ।

હે ભવ્ય ! તું ઇસ શરીરકા તપસ્યા આદિ શુભ સાધનોં કે દ્વારા શોષણ કર, તથા તપસ્યા મી ઁસી કર કિ જિસસે યહ શરીર જરા-વૃદ્ધાવસ્થા સે જીર્ણ હુએ કે સમાન હો જાવે ।

શરીરકે પ્રતિ મમતા રચ કર ઉસકી સેવા શુશ્રૂષા ઔર વિભૂષા આદિ ન કર; કિન્તુ તપશ્ચર્યાં કે દ્વારા ઇસે નિર્વલ ઔર રૂક્ષ બના ॥સૂ૦ ૫॥

સાથે રહે છે તે પણ હુમેશાં સાથે રહેનાર નથી. જેવી રીતે નદીના કિનારા ઉપરના વૃક્ષોને તેનું પાણી ઉખાડીને ફેંકી દે છે તેવી જ રીતે મારા આ સ્વજનાદિક મને કોઈ પ્રકારે આત્મસ્વરૂપથી ઉખાડી દેવાની કોશિશમાં લાગેલાં છે. (૬)

માટે મનુષ્યોને સમજવું જોઈએ કે—આ સંયોગી પદાર્થોથી મમત્વ-રહિત થઈને આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં આગળ વધે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ભગવાન પોતાની દિવ્યદેશનામાં ભવ્ય જીવોને સમજાવતાં કહે છે—  
' કસેહિ અપ્પાણં ' ઇત્યાદિ.

હે ભવ્ય ! તું આ શરીરનું તપ આદિ શુભસાધનદ્વારા શોષણ કર, અને તપ પણ એવી રીતે કર કે જેથી તારું આ શરીર જરા-વૃદ્ધાવસ્થાથી જીર્ણ જેવું થઈ જાય. શરીર પ્રતિ મમતા રાખીને તેની સેવા શુશ્રૂષા અને વિભૂષા આદિ ન કર, કિન્તુ તપશ્ચર્યાદ્વારા તેને નિર્બળ અને રૂક્ષ બનાવ. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

किमर्थम् इत्येतदिति जिज्ञासायामाह—‘जहा जुन्नाइ’ इत्यादि ।

मूलम्—जहा जुन्नाइं कट्ठाइं हववाहो पमत्थइ, एवं अत्तस-  
माहिण् अणिहे ॥ सू० ६ ॥

छाया—यथा जीर्णानि काष्ठानि हव्यवाट् प्रमथ्नाति, एवम् आत्मसमाहितः  
अस्निहः ॥ सू० ६ ॥

टीका—यथा हव्यवाट्=अग्निः, जीर्णानि=असाराणि शुष्काणि, काष्ठानि प्रम-  
थ्नाति=त्वरितं भस्मसात् करोति, एवम्=अनेन प्रकारेण अस्निहः=शब्दादिविष-  
येषु रागरहितः सन्, शरीरादौ निर्ममो भूत्वा, इति फलितार्थः; आत्मसमाहितः=  
आत्मनि=आत्मनः शुभपरिणामे सम्यग्दर्शनादौ समाहितः=सावधानः आत्मनिष्ठ  
इत्यर्थः, अतएव-अस्निहः शब्दादिविषयेषु रागरहितः सन् ज्ञानावरणीयाद्यष्टविध-  
कर्मकाष्ठानि प्रमथ्नातीत्यर्थः ॥ सू० ६ ॥

इस प्रकार शरीरको निर्बल और रुक्ष करनेकी आवश्यकता क्यों  
है ? इसको कहते हैं—‘जहा जुन्नाइं’ इत्यादि ।

जिस प्रकार शुष्क काष्ठको अग्नि शीघ्र भस्म कर देती है उसी  
प्रकार शब्दादि विषयों में निर्मम होकर केवल आत्माके शुभपरिणाम-  
रूप समकित आदिमें सावधान-आत्मनिष्ठ हुआ मनुष्य ज्ञानावरणी-  
यादिक अष्ट प्रकारके कर्मरूप काष्ठको जला देता है—नष्ट कर देता है ।

शरीरमें जब तक ममत्वभाव रहता है तब तक यथावत् तपश्चर्यादिक  
साधनों का अनुष्ठान नहीं हो सकता है, अतः यथावत् तपश्चर्यादिक  
अनुष्ठानों को करने के लिये शरीरमें निर्ममत्व भावकी जागृति अवश्य  
आवश्यक है । ऐसा होने पर यथावत् अनुष्ठित तपश्चर्यादिक साधनों  
से कर्मों का नाश अवश्यभावी है ॥ सू० ६ ॥

આ પ્રકારે શરીરને નિર્બળ અને રૂક્ષ બનાવવાની આવશ્યકતા શા માટે ?  
તો કહે છે—‘જહા જુન્નાઈ’ ઇત્યાદિ.

જેમ સુકા લાકડાને અગ્નિ જલ્દી બાળી નાંખે છે તેમ શબ્દાદિ વિષયોમાં  
મમતા વગર થઈને ફક્ત આત્માના શુભપરિણામરૂપ સમકિત આદિમાં સાવ-  
ધાન-આત્મનિષ્ઠ થયેલો મનુષ્ય જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકારના કર્મરૂપ કાષ્ઠોને  
બાળી નાંખે છે—નાશ કરે છે.

શરીરમાં જ્યાં સુધી મમતાભાવ રહે છે ત્યાં સુધી બરોબર રીતે તપશ્ચર્યા-  
દિક સાધનોનું અનુષ્ઠાન બનતું નથી, માટે બરોબર રીતે તપશ્ચર્યાદિક અનુષ્ઠાનોને  
કરવા શરીરમાં નિર્મમત્વ ભાવની જાગૃતિની ખાસ જરૂર છે. આમ થવાથી સરખી  
રીતે અનુષ્ઠિત તપશ્ચર્યાદિક સાધનોદ્વારા કર્મોનો અવશ્ય નાશ થાય છે. ॥ સૂ. ૬ ॥



ઉત્તરીત્યા રાગનિવૃત્તિ પ્રદર્શ્ય દ્વેષનિવૃત્તિમાહ-‘ વિગિંચ કોહં ’ ઇત્યાદિ ।  
મૂલમ્-વિગિંચ કોહં અવિકંપમાણે ઇમં નિરુદ્ધાઉયં સંપેહાણ ॥૭॥

છાયા-વેવિક્ષ્વ ક્રોધમ્ અવિકમ્પમાનઃ ઇમં નિરુદ્ધાયુષ્કં સંપ્રેક્ષ્ય ॥ મૂ० ૭ ॥

ટીકા--ઇમં=મનુષ્યલોકં, નિરુદ્ધાયુષ્કમ્=અવર્ધિતાયુષ્કં સંપ્રેક્ષ્ય=પર્યાલોચ્ય,  
અવિકમ્પમાનઃ ક્રોધજનિતકમ્પરહિતઃ પ્રશમગુણસમન્વિતઃ સન્નિત્યર્થઃ, ક્રોધમ્-  
પ્રજ્વલનરૂપાતિક્રૂરાધ્યવસાયઃ ક્રોધસ્તં વેવિક્ષ્વ=પરિત્યજ, ક્રોધમિતિપદં સકલક-  
ષાયોપલક્ષણમ્ ॥ મૂ० ૭ ॥

પૂર્વોક્ત રીતિસે રાગની નિવૃત્તિ પ્રકટ કર અબ દ્વેષની નિવૃત્તિ કહતે  
હૈં । ‘ વિગિંચ કોહં ’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ મનુષ્યલોકનો અવર્ધિત-નિયમિત આયુવાળા જાન ક્રોધસે  
ઉત્પન્ન હુણ વિકાર-પરિણામસે રહિત હોકર અર્થાત્ પ્રશમગુણસમ્પન્ન  
હોકર આત્માનો જલાનેવાલે ક્રૂર અધ્યવસાયસ્વરૂપ ઇસ ક્રોધકા, ઉપલ-  
ક્ષણસે-માન, માયા ઓર લોભકા મી ત્યાગ કર ।

તાત્પર્ય યહ હૈં કિ જિસ પ્રકાર રાગભાવ ત્યાજ્ય હૈં ઉસી પ્રકાર  
દ્વેષભાવ મી ત્યાજ્ય હૈં, અતઃ જબ કિસી મી સચેતન, અચેતન વસ્તુ  
પર દ્વેષ હોતા હૈં તબ આત્મામેં ક્રોધ પેદા હોતા હૈં; ક્રોધસે શરીરમેં કંપ  
કી જાગૃતિ હોતી હૈં; શારીરિક કંપ સે આત્માકે પ્રદેશોમેં મી એક પ્રકાર કી  
પરિસ્પંદરૂપ ક્રિયા હોતી હૈં જિસસે ઉસ હાલતમેં અધિક શ્વાસ-ઉચ્છ્વાસ  
ચલને લગતે હૈં, અધિક શ્વાસોચ્છ્વાસોં કે ચલને સે આયુકર્મ કે અવિભાગી  
પ્રતિચ્છેદોં-વિભાગોં-કા હાસ હોતા હૈં, ઓર ઇસ તરહસે અકાલમેં હી આયુ-

પૂર્વોક્ત રીતિથી રાગની નિવૃત્તિ પ્રગટ કરી, હવે દ્વેષની નિવૃત્તિ કહે છે-  
‘ વિગિંચ કોહં ’ ઇત્યાદિ.

આ મનુષ્યલોકને અવર્ધિત-નિયમિત આયુવાળો જાણીને ક્રોધથી ઉત્પન્ન  
થયેલ વિકારપરિણામથી રહિત થઈ અર્થાત્ પ્રશમગુણસંપન્ન થઈ આત્માને  
બાળવાવાળા ક્રૂરઅધ્યવસાયસ્વરૂપ આ ક્રોધનો, ઉપલક્ષણથી માન માયા અને  
લોભનો ત્યાગ કર. તાત્પર્ય એ છે કે-જે પ્રકારે રાગભાવ ત્યાજ્ય છે  
તે પ્રકારે દ્વેષભાવ પણ ત્યાજ્ય છે, માટે જ્યારે કોઈ પણ સચેત-અચેત વસ્તુ  
ઉપર દ્વેષ થાય છે ત્યારે આત્મામાં ક્રોધ પેદા થાય છે. ક્રોધથી શરીર ધ્રુજવા  
માંડે છે. શરીરના ધ્રુજવાથી આત્માના પ્રદેશોમાં પણ એક પ્રકારની પરિસ્પંદરૂપ  
ક્રિયા થાય છે જેથી તેવી હાલમાં અધિક શ્વાસ-ઉચ્છ્વાસ ચાલવા લાગે છે, અધિક  
શ્વાસોચ્છ્વાસોના ચાલવાથી આયુકર્મના અવિભાજ્ય પ્રતિચ્છેદો-વિભાગો-નો હાસ



કિંચ—‘દુઃખં ચ જાણ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—દુઃખં ચ જાણ અદુ આગમેસ્સં, પુઢો ફાસાઈં ચ ફાસે,  
લોયં ચ પાસ વિફંદમાણં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—દુઃખં ચ જાનીહિ અથ આગમિ, પૃથક્ સ્પર્શાન્ ચ સ્પૃશેત્, લોકં ચ  
પશ્ય વિસ્પન્દમાનમ્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—ક્રોધાદિવશાત્ ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પ્રાણાત્તિપાતાદિકરણે સમુત્પદ્યમાનં  
કર્મ કી સ્થિતિ પૂર્ણ હો જાતી હૈ, અતઃ ભગવાન્ કા કથન હૈ કિ કષાય-  
રૂપ ક્રોધ કરતે સમય હસ વાતકા પ્રત્યેક આત્મહિતૈષી જીવકો વિચાર  
કરના ચાહિયે કિ જિસ પ્રકાર ઘડી કી ચાવી ઉસકે નીચે ચલતે હુણ  
ગોલે કો અધિક-બારંબાર ઘુમાનેસે અસમયમેં ચાલી હો જાતી હૈ ઉસી  
પ્રકાર કષાયાદિ કરને સે આયુકર્મ કી સ્થિતિ ખી અસમયમેં ચિર જાતી  
હૈ । આયુકર્મ કી નિર્જરા તો હોતી હૈ પરન્તુ વદ્ધ આયુ મેં ઉત્કર્ષણ  
( અધિકતા ) નહીં હોતા । જિસ પ્રકાર જીવ સાત કર્મો કો પ્રત્યેક સમય  
બાંધતા ઓર નિર્જોર્ણ કરતા હૈ ઉસ પ્રકાર આયુકર્મ કો નહીં બાંધતા ।  
જિતની કુછ આયુકર્મ કી સ્થિતિ બંધ ચુકી વહ ઉતની હી રહેગી, ઉસમેં  
ફિર વૃદ્ધિ નહીં હો સકતી । હાં ! બાહ્ય નિમિત્તો કો લેકર ઉસમેં અપ-  
કર્ષણ ( હાસ ) જરૂર હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ફિર ભગવાન કહતે હૈ—‘દુઃખં ચ જાણ’ ઇત્યાદિ ।

યહ નિશ્ચિત હૈ કિ-ક્રોધાદિક કષાયકે આધીન હોકર જબ જીવ

થાય છે, અને આવી રીતે અકાળે આયુકર્મની સ્થિતિ પૂર્ણ થઈ જાય છે, માટે ભગ-  
વાનનું કથન છે કે-કષાયરૂપ ક્રોધ કરતી વખતે પ્રત્યેક આત્મહિતૈષી જીવને વિચાર  
કરવો જોઈએ કે જેમ ઘડીયાળની ચાવી તેની નીચે ચાલતા લોકને વારંવાર  
અધિક ઘુમાવવાથી અસમયમાં ખાલી થઈ જાય છે, તેમ કષાયાદિ કરવાથી આયુ-  
કર્મની સ્થિતિ પણ અસમયમાં ખલાસ થઈ જાય છે, આયુ કર્મની નિર્જરા તો  
થાય છે પણ બદ્ધ-બાંધેલા આયુમાં ઉત્કર્ષણ ( અધિકપણ ) નથી હોતું. જેવી  
રીતે જીવ સાત કર્મોને પ્રત્યેક સમય બાંધે છે, અને તેની નિર્જરા કરે છે, તેવી  
રીતે આયુકર્મને નથી બાંધતો. જેટલી પણ આયુકર્મની સ્થિતિ બાંધાએલી છે  
તે તેટલી જ રહેશે. તેમાં વધારો થઈ શકતો નથી. હાં, બાહ્ય નિમિત્તો લઈને  
તેમાં અપકર્ષણ ( હાસ ) અવશ્ય થાય છે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

વળી ભગવાન કહે છે—‘દુઃખં ચ જાણ’ ઇત્યાદિ.

એ નિશ્ચિત છે કે-ક્રોધાદિક કષાયને આધીન થઈ જ્યારે જીવ કરવું,

પ્રાણિનાં દુઃખં જાનીહિ, યદ્વા-ક્રોધાદિના પ્રજ્વલિતાત્મનો યન્માનસં દુઃખમુપજા-  
યતે તજ્જાનીહિ । અથ-આગમિ=ક્રોધજનિતકર્મવિપાકોદયાજ્જાયમાનમનાગતકા-  
લિકં દુઃખં ચ જાનીહિ । આગમિનો દુઃખસ્ય પ્રાપ્તિસ્થાનમાહ-‘પૃથક્’ ઇત્યાદિ ।  
પૃથક્=અન્યત્ર નરકનિગોદાદૌ સ્પર્શાન્=દુઃખાનિ ચ ક્રોધી સ્પૃશેત્=અનુભવેત્ ।  
અત્ર ચકારઃ સમુચ્ચયાર્થઃ, ક્રોધપ્રજ્વલિતાત્મનો ન કેવલં વર્તમાનકાલિક એવ મનસ્તાપઃ  
કિંતુ ભવિષ્યત્કાલેઽપિ નરકાદૌ ક્રોધજનિતકર્મફલભૂતં દુઃખં ભવતીત્યર્થઃ । મોક્ષ-

કરના કરાના ઓર અનુમોદના, હન તીન કરણોં સે, એવં મન, વચન  
તથા કાય સે દૂસરે જીવોં કી હિંસાદિક કરને મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ તબ ડન  
પ્રાણિયોં કો દુઃખ અવશ્ય ઉત્પન્ન હોતા હૈ । અથવા-ક્રોધાદિ કષાય સે  
આત્મા જબ સંતસ હો જાતા હૈ તબ ડસકે લિયે અવશ્ય માનસિક કષ્ટ  
હોતા હૈ । તથા ક્રોધ કષાય કરતે સમય જીવ જિન કર્મોં કા બંધ કરતા  
હૈ ઓર જબ વે તીવ્ર અનુભાગરૂપસે ઉદયમેં આતે હૈં તબ ડનકા ફલ  
દુઃખરૂપ હી હોતા હૈ । ઇસ ફલકી પ્રાપ્તિ જીવકો નરકનિગોદાદિ ગતિયોં  
મેં વહાં કે અનંત કષ્ટોં કો ભોગને કે રૂપમેં હોતી હૈ ।

યહાં પર ‘ચકાર’ સમુચ્ચય અર્થ કો પ્રકટ કરતા હૈ, અર્થાત્-  
ક્રોધસે સંતસ આત્મા કેવલ વર્તમાનકાલમેં ( ડસી ભવમેં ) હી મનસ્તાપ-  
રૂપ દુઃખકો નહીં ભોગતા હૈ; કિન્તુ આગામી કાલમેં ( પરભવમેં ) મી  
નરકાદિ ગતિયોં મેં ડસ ક્રોધસે જનિત કર્મકે ફલરૂપ દુઃખકા અનુભવ  
કરતા હૈ, ઇસલિયે ક્રોધાદિક કષાયોં કો છોડ કર મોક્ષ માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ

કરાવવું, અને અનુમોદવું, આ ત્રણ કારણોથી, અને મન, વચન, કાયાથી ખીન્ન  
હોવાની હિંસા આદિ કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે આ પ્રાણીએને દુઃખ અવશ્ય  
થાય છે. અથવા-ક્રોધાદિ કષાયથી આત્મા જ્યારે સંતસ થઈ જાય છે ત્યારે તેને  
માટે માનસિક કષ્ટ અવશ્ય થાય છે. તથા ક્રોધકષાય કરતી વખતે જીવ જે  
કર્મોના બંધ કરે છે, અને જ્યારે તે તીવ્ર અનુભાગરૂપથી ઉદયમાં આવે છે  
ત્યારે તેનું ક્ષણ દુઃખરૂપ જ થાય છે. આ ક્ષણની પ્રાપ્તિ જીવને નરકનિગોદાદિ  
ગતિઓમાં ત્યાંના અનંત કષ્ટોના ભોગવવારૂપે થાય છે.

આ ઠેકાણે ‘ચકાર’ સમુચ્ચય અર્થને પ્રગટ કરે છે, અર્થાત્-ક્રોધથી સંતસ  
આત્મા કેવળ વર્તમાનકાળમાં ( આ ભવમાં જ ) મનસ્તાપરૂપી દુઃખને ભોગવતો  
નથી; પરંતુ આગામી કાળમાં ( પરભવમાં ) પણ નરકાદિ ગતિઓમાં તે ક્રોધથી  
ઉત્પન્ન થયેલાં કર્મના ક્ષણરૂપ દુઃખનો અનુભવ કરે છે, માટે ક્રોધાદિકષાયોને



मार्गे प्रवर्तयितुमाह—‘लोकं च’ इत्यादि । विस्पन्दमानं=दुःखागमभयात् कम्प-  
मानं लोकं=जीवनिकायं पश्य, प्रशमसमन्वितः सन् दुःखभयात्कम्पमानं जीवलोकं  
दयादृष्ट्याऽवलोकयेत्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

कराने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि—हे भव्य ! दुःखकी प्राप्ति के भयसे  
कंपायमान इस षड्जीवनिकाय को तूं देख, अर्थात् प्रशमभाव से युक्त  
होकर दुःखके भयसे त्रस्त जीवलोक को सदा तूं दयादृष्टिसे देख ।

बन्ध चार प्रकारका है—प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध  
और प्रदेशबन्ध । इनमें योगसे प्रकृतिबन्ध और प्रदेशबन्ध होते हैं ।  
कषायसे स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध होते हैं । रंगका काम कपड़ेको  
रंगने का है परन्तु हरा और फिटकरी के समागमसे जिस प्रकार वह  
रंग कपड़े पर गहरा हो जाता है उसी प्रकार कषाय की अल्पता और  
अधिकता कर्मोंके स्थितिबन्ध और अनुभागबन्धकी अल्पता और अधि-  
कता में कारण होती है, अत एव कषाय यदि तीव्र होगी, तो कर्मों का  
तीव्र स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध होगा । कषाय मध्यमांशवाली होगी  
तो उनका मध्यमांश बंध होगा । बुद्धिपूर्वक प्राणातिपातादि सावध  
व्यापार करते समय जीवको अनन्तानुबन्धी क्रोधकषाय का तीव्रतम  
अंश होता है, ऐसी हालतमें जीवको जो कर्मों का बंध होगा वह  
तीव्रतम स्थिति और अनुभागबंध को ही लेकर होगा । ऐसी हालतमें

छोडीने मोक्षमार्गमां प्रवृत्ति करववा सूत्रकार कहे छे के-हे भव्य ! दुःखना  
लयथी कंपायमान आ षड्जीवनिकायने तूं देख, अर्थात्-प्रशमभावथी युक्त  
थछ दुःखना लयथी त्रासेला लुवलोकेने सदा तूं दयादृष्टिथी देख.

बंध चार प्रकारना छे—प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध अने प्रदे-  
शबंध. आमां योगथी प्रकृतिबंध अने प्रदेशबंध थाय छे. कषायथी स्थितिबंध  
अने अनुभागबंध थाय छे. रंगनुं काम कपडाने रंगवानुं छे परंतु डरडां  
अने फिटकरीथी ने प्रकारे ते रंग वधारे गाढा थाय छे ते प्रकारे कषायनी अल्पता  
अने अधिकता कर्मोना स्थितिबंध अने अनुभागबंधनी अल्पता अने अधिकतामां  
कारण थाय छे, माटे कषाय ने तीव्र डशे तो कर्मोना स्थितिबंध अने अनुभागबंध  
तीव्र थशे. कषाय मध्यमांशवाणो डशे तो कर्मोना स्थितिबंध अने अनुभागबंध  
मध्यम थशे. बुद्धिपूर्वक प्राणातिपातादि सावध व्यापार करती वणते लुवने अ-  
नन्तानुबन्धी क्रोधकषायने तीव्रतम अंश थाय छे, तेवी हालतमां लुवने ने ते  
समये कर्मोना बंध थशे ते तीव्रतम स्थितिबंध अने अनुभागबंधने न लधने



જબ ઉનકા અપને અબાધાકાલ કો છોડ કર ઉદય આવેગા તબ વહ ભી તીવ્રતમ રૂપસે હી અપના ફલ દેગા, અતઃ જીવ યા તો હસી ભવમેં તજ્જન્ય દુઃખાદિકોં કા પૂર્ણ ભોક્તા હોગા, ઓર યદિ અવશિષ્ટ બચેંગે તો ઉનકા ફલ ઉસે નરકનિગોદાદિ મેં જાકર ભોગના પડેગા। યહી બાત હસ સૂત્રમેં પ્રકટ કી ગઈ હૈ। ‘ચકાર’ શબ્દ જો સૂત્રમેં પડા હૈ વહ યહ ભી પ્રકટ કરતા હૈ કિ-ક્રોધકષાય કે વશ હોકર પ્રાણાતિપાતાદિક મેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા જીવ તજ્જન્ય દુઃખ કો હસ ભવમેં ઓર પર-ભવમેં (નરકનિગોદાદિકોં મેં) ભી ભોગતા હૈ।

ક્રોધકષાય સે જિસ સમય આત્મા સંતપ્ત હો જાતા હૈ ઉસ સમય ઉસ આત્મા કા મન સંતપ્ત હોતા હૈ, મનકા સંતપ્ત હોના હી ભાવહિંસા હૈ। મનકે સંતાપ સે અશુભ કર્મોં કા આસ્રવ હોતા હૈ।

અન્તમેં સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતે હુએ કહતે હૈં કિ જબ ક્રોધાદિક કષાયોં કે કરને સે જીવોં કો દુઃખ ભોગના પડતા હૈ ઓર સંસાર મેં કોઈ ભી પ્રાણી દુઃખ કો નહીં યાહતા, સબ સુખકે હી અભિલાષી હૈં, તો ભવ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ હસ દુઃખ કે અભાવરૂપ મોક્ષ માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ કરે। સંસાર મેં થોડા સા ભી સુખ નહીં હૈ। જિસે જીવને સુખ માન રખા હૈ વહ કાલ્પનિક હૈ। આકુલતા કા જબ તક સર્વથા અન્ત નહીં હો

થશે. એવી સ્થિતિમાં જ્યારે પોતાના અબાધાકાળને છોડીને તેનો ઉદય થશે ત્યારે તે પણ તીવ્રતમરૂપથી જ પોતાનું ક્ષણ આપશે, માટે જુવ કાં તો આ ભવમાં જ તજ્જન્ય દુઃખાદિકોને પૂર્ણરૂપે ભોગવશે, અને જો અવશિષ્ટ બચશે તો તેનું ક્ષણ તેણે નરક નિગોદાદિમાં જઈને ભોગવવું પડશે. આ જ વાત આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરવામાં આવી છે. ‘ચકાર’ શબ્દ જે સૂત્રમાં છે, તે એમ પ્રગટ કરે છે કે—ક્રોધ-કષાયને વશ થઈ પ્રાણાતિપાતાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળાં જુવ તજ્જન્ય દુઃખને આ ભવમાં અને પરભવમાં (નરકનિગોદાદિકોમાં) પણ ભોગવે છે.

ક્રોધ-કષાયથી જે વળતે આત્મા સંતપ્ત થઈ જાય છે, તે વળતે તે આત્માનું મન સંતપ્ત થાય છે. મનનું સંતપ્ત થવું એ જ ભાવહિંસા છે.

મનના સંતાપથી અશુભ કર્મોના આસ્રવ થાય છે. અંતમાં સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતાં કહે છે કે—જ્યારે ક્રોધાદિક કષાયો કરવાથી જીવોને દુઃખ ભોગવવું પડે છે અને સંસારમાં ક્રોધ પણ પ્રાણી દુઃખને નથી યાહતો, બધા સુખના જ અભિલાષી છે, ત્યારે ભવ્ય પ્રાણીનું કર્તવ્ય છે કે આ દુઃખના અભાવરૂપ મોક્ષમાર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરે. સંસારમાં થોડું પણ સુખ નથી, જીવે જેને સુખ માન્યું છે તે કાલ્પનિક છે. આકુલતાનો જ્યાં સુધી સર્વથા અંત નથી થતો ત્યાં

ये तु एवं न सन्ति, ते कथं भवन्ति ? इत्यत आह—‘जे निव्वुडा’ इत्यादि ।  
मूलम्—जे निव्वुडा पावेहिं कम्मेहिं आणियाणा ते वियाहिया ॥ ९ ॥

छाया—ये निर्वृताः पापेषु कर्मसु अनिदानाः ते व्याख्याताः ॥ सू० ९ ॥

टीका—ये भगवत्तीर्थकरोपदेशे श्रद्धावन्तस्तदुपदेशधारणया क्रोधादिकषा-  
यानलप्रशमनाभिर्वृताः=शीतीभूताः, अत एव पापेषु कर्मसु अनिदानाः=निदान-  
रहिताः, ते व्याख्याताः=मोक्षमुखस्थानरूपेण कथिताः, इह लोके औपशमिकमुख-  
वस्त्वेन ख्यातिमुपगता भवन्तीत्यर्थः ॥ सू० ९ ॥

जाता, तब तक सुख प्राप्त नहीं हो सकता । सांसारिक जीवन का एक भी क्षण बिना आकुलता के नहीं है । उस आकुलतारूप परिणतिका अभाव तो मोक्षमार्ग में ही है, इसलिये प्रत्येक आत्मक-  
ल्याणाभिलाषी जीवको उस मार्ग में ही लगने की परमावश्यकता है । जबतक उस मार्ग में नहीं लगा जावेगा तब तक दुःख और आकुलता का अन्त नहीं हो सकता । मोक्षमार्ग में लगा हुआ प्राणी अवश्य ही दुःख की प्राप्ति के भय से त्रस्त इस प्रत्यक्ष में दिखनेवाले षड्जीवनिकाय को प्रशमभावसे समन्वित होकर दयादृष्टि से देखेगा । किसीको भी स्वप्न तक में सताने की भावना नहीं करेगा । उसकी भावना यही सदा रहेगी कि ये दुःख से कैसे छूटें ? ॥ सू० ८ ॥

जो क्रोधादि कषायों से रहित होते हैं वे कैसे होते हैं ? सो कहते हैं—‘जे निव्वुडा’ इत्यादि ।

भगवान् तीर्थङ्कर के उपदेश में जो श्रद्धासम्पन्न हैं, अर्थात्—उनके दिव्य उपदेश की धारणा से जो क्रोधादिक कषाय रूप अग्निके शमन होने

सुख प्राप्त થતું નથી, સાંસારિક જીવનમાં એક પણ ક્ષણ આકુળતા વગર નથી. આ આકુળતારૂપ પરિણતિનો અભાવ તો મોક્ષમાર્ગમાં જ છે, માટે આત્મકલ્યાણ ઇચ્છવાવાળા પ્રત્યેક જીવને તે માર્ગમાં જ લાગવાની પરમ આવશ્યકતા છે. જ્યાં સુધી જીવ તે માર્ગમાં નહિ જશે, ત્યાં સુધી દુઃખ અને આકુળતાનો અંત થઈ શકતો નથી. મોક્ષમાર્ગમાં લાગેલા પ્રાણી જરૂર જ દુઃખ આવવાના ભયથી ત્રાસેલા આ પ્રત્યક્ષમાં દેખાતા ષડ્જીવનિકાયને પ્રશમભાવથી સમન્વિત થઈ દયાદૃષ્ટિથી જશે, કેઈને પણ સ્વપ્નમાં પણ સતાવવાની ભાવના રાખશે નહિ. તેની ભાવના સદા એવી જ રહેવાની કે ક્યારે આ પ્રાણી દુઃખથી છૂટે ॥ સૂ० ૮ ॥

જે ક્રોધાદિ કષાયથી રહિત છે તે કેવા છે ? તે કહે છે—‘જે નિવ્વુડા’ ઇત્યાદિ.

ભગવાન તીર્થંકરના ઉપદેશમાં જેને શ્રદ્ધા છે અર્થાત—પ્રભુના દિવ્ય ઉપદેશની ધારણાથી જેનો ક્રોધાદિકકષાયરૂપ અગ્નિ શાંત થઈ ગયેલ છે, અને તેથી



સે સર્વદા શાંત હો ચુકે હૈં, ઓર ઇસીલિયે પાપકર્મોં મેં જો નિદાનબન્ધ સે રહિત હૈં વે પરમ સુખ કે સ્થાનરૂપ સે કહે ગયે હૈં ।

ટીકાકારને જો ક્રોધાદિક કષાયોં કે લિયે અગ્નિ કી ઉપમા દી હૈ વહ સાર્થક હૈ, કારણ કિ જિસ પ્રકાર અગ્નિ સે અત્યન્ત તસ લોહે કા ગોલા પાની મેં ઢાલને પર અપને ચારોં ઓર કે પાની કો સ્વીંચતા હૈ ઁસી પ્રકાર યહ આત્મામી જબ કષાયોં સે અત્યન્ત સંતસ હો જાતા હૈ તબ અપની ચારોં ઓર ભરી હુઈ કાર્મણવર્ગણાઓં કો મન, વચન, કાયરૂપ નાલિયોં સે સ્વીંચતા હૈ । સ્વાયા હુઆ અન્ન જિસ પ્રકાર રસ-રુધિર-આદિ રૂપમેં પરિણત હોતા હૈ ઁસી પ્રકાર ગૃહીત વે કાર્મણવર્ગણાઓં મી જ્ઞાનાવરણાદિક-કર્મરૂપસે ઁકઠ્ઠી સાથ પરિણત હો જાતી હૈં । કર્મરૂપ સે બંધી હુઈ ઇન કાર્મણવર્ગણાઓં કી ચાર પ્રકાર કી અવસ્થાઓં હોતી હૈં, પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિ-બંધ અનુભાગબંધ ઓર પ્રદેશબંધ । યહ નિશ્ચિત હૈ કિ જબ કોઈ ઁક પદાર્થ કિસી દૂસરે પદાર્થ કો આવૃત કરતા હૈ યા ઁસકી શક્તિ કા ઘાત કરતા હૈ તબ આવરણ કરનેવાલે પદાર્થમેં-‘આવરણ કરને કા સ્વભાવ, આવરણ કરને કા કાલ, આવરણકી શક્તિ કી હીનાધિકતા ઓર આવરણ કરને-વાલે પદાર્થ કા પરિમાણ, ઁ ચાર અવસ્થાઓં ઁક સાથ પ્રકટ હોતી હૈં । યહી ઘાત ઇન બંધ કે ભેદોં મેં મી સમજના ચાહિયે । આત્મા આત્રિયમાણ હૈ

તે સર્વથા શાંત થયેલ છે. આથી જે પાપકર્મોમાં નિદાનબંધથી રહિત છે તેને પરમ સુખના સ્થાનરૂપ કહેવામાં આવેલ છે. ટીકાકારે ક્રોધાદિક કષાયોને માટે જે અગ્નિની ઉપમા આપી છે તે બરોબર છે, કારણ કે જે પ્રકારે અગ્નિથી અત્યન્ત તપાવેલો લોખંડનો ગોળો પાણીમાં નાંખવાથી પોતાના ચારે બાજુના પાણીને ખેંચે છે તે પ્રકારે જ્યારે આત્મા પણ કષાયોથી અત્યન્ત સંતપ્ત થાય છે ત્યારે પોતાની ચારે બાજુ ભરેલી કાર્મણવર્ગણાઓને મન-વચન-કાયરૂપ નાળિયોથી ખેંચે છે. જેવી રીતે ખાંધેલું અનાજ રસ રુધિર આદિ રૂપમાં પરિણત થાય છે તે પ્રકારે ગૃહીત આ કાર્મણવર્ગણાઓ પણ જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મરૂપથી એક જ સાથે પરિણત થઈ જાય છે. કર્મરૂપથી ખાંધેલી આ કાર્મણવર્ગણાઓની ચાર પ્રકારની અવસ્થાઓ થાય છે-પ્રકૃતિબંધ સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ અને પ્રદેશબંધ, એ નિશ્ચિત છે કે જ્યારે કોઈ એક પદાર્થ કોઈ બીજા પદાર્થને આવૃત કરે છે અગર તેની શક્તિનો ઘાત કરે છે ત્યારે આવરણ કરનાર પદાર્થોમાં-આવરણ કરવાનો સ્વભાવ ૧, આવરણ કરવાનો કાળ ૨, આવરણની શક્તિની હીનાધિકતા ૩, અને આવરણ કરનાર પદાર્થનું પરિમાણ ૪. આ ચાર અવસ્થાઓ એક સાથે પ્રગટ થાય છે, આ વાત બંધના ભેદોમાં પણ સમજાવી



और कर्म आवरण हैं, अतः कर्म की भी बंध के समय में चार अवस्थाएँ प्रगट होती हैं। ये चारों अवस्थाएँ कर्मबंध के प्रथम समय में ही सुनिश्चित हो जाती हैं। उदाहरणार्थ—जिस समय हम लालटेनको वस्त्रसे ढाँकते हैं उसी समय उस आवरण करनेवाले वस्त्रमें चार अवस्थाएँ स्पष्टतः प्रतिभासित होती हैं—

(१) वस्त्रका स्वभाव लालटेन के प्रकाशको आवृत करना (२) निश्चित काल तक लालटेन के प्रकाश को आवृत किये रहना (३) लालटेन के प्रकाश आवृत करने की शक्ति का वस्त्रमें हीनाधिक रूपसे पाया जाना और (४) आवृत करने वाले वस्त्र का परिमाण।

उन गृहीत કાર્મણવર્ગણાઓં કા પ્રત્યેક કર્મ મેં બટવારા ઇસ પ્રકાર સે હોતા હૈ। યદિ આયુકર્મ કા બી બંધ હો રહ્યા હૈ તો આયુકર્મ કો સબ સે થોડા દ્રવ્ય મિલતા હૈ। નામગોત્રમેં પ્રત્યેક કો ઇસસે અધિક દ્રવ્ય મિલતા હૈ તો બી ઇન દોનોં કર્મોં કા દ્રવ્ય સમાન રહતા હૈ। જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ ઓર અન્તરાય મેં પ્રત્યેક કો ઇસસે અધિક દ્રવ્ય મિલતા હૈ તો બી ઇનકા દ્રવ્ય પરસ્પર સમાન હોતા હૈ। ઇસસે મોહનીય કર્મ કો અધિક દ્રવ્ય મિલતા હૈ ઓર ઇસસે વેદનીય કર્મ કો અધિક દ્રવ્ય મિલતા હૈ। ઘાતિયા કર્મોં કો જો દ્રવ્ય મિલતા હૈ ઇસમેં જો સર્વઘાતિ દ્રવ્ય હૈ

જોઈએ. આત્મા આત્રિયમાણ છે અને કર્મ આવરણ છે, માટે બંધ સમયમાં કર્મની પણ ચાર અવસ્થાઓ પ્રગટ થાય છે. આ ચારે અવસ્થાઓ કર્મ-બંધના પ્રથમ સમયમાં જ સુનિશ્ચિત થઈ જાય છે. દાખલા તરીકે જ્યારે બત્તીને વસ્ત્રથી ઢાંકીએ ત્યારે આવરણ કરવાવાળા તે વસ્ત્રમાં ચાર અવસ્થાઓ સ્પષ્ટ પ્રતિભાસિત થાય છે— (૧) વસ્ત્રનો સ્વભાવ બત્તીના પ્રકાશને રોકવું. (૨) નિશ્ચિત સમય સુધી બત્તીના પ્રકાશને રોકી રાખવો. (૩) બત્તીનો પ્રકાશ આવૃત કરવાની શક્તિનો વસ્ત્રમાં હીનાધિકરૂપથી સદ્ભાવ. (૪) આવૃત કરનાર વસ્ત્રનું પરિમાણ. ગ્રહણ કરવામાં આવેલી તે કાર્મણવર્ણાઓની વહેંચણી પ્રત્યેક કર્મમાં આ પ્રકારે થાય છે—જે આયુ કર્મનો બંધ થઈ રહ્યો છે તો આયુ કર્મને બધાથી થોડું દ્રવ્ય મળે છે, નામ-ગોત્રમાં પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે તો પણ આ બન્ને કર્મોના દ્રવ્ય સમાન રહે છે. જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ અને અંતરાયમાં પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે છે તો પણ તેઓનું દ્રવ્ય પરસ્પર સમાન હોય છે. જ્ઞેનાથી મોહનીય કર્મને અધિક દ્રવ્ય મળે છે અને વેદનીય કર્મને જ્ઞેનાથી પણ અધિક દ્રવ્ય મળે છે. ઘાતિયા કર્મોને જે દ્રવ્ય મળે છે તેમાં જે સર્વઘાતિક દ્રવ્ય છે તે સર્વઘાતિક દ્રવ્યનો

ઉક્તાર્થમુપસંહરન્નાહ--‘ તમ્હા ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તમ્હા અતિવિજ્ઞો નો પડિસંજલિજ્ઞાસિ-ત્તિવેમિ ॥સૂ૦૧૦॥

છાયા--તસ્માત્ અતિવિદ્વાન્ ન પ્રતિસંજ્વલે:-ઈતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા--હે શિષ્ય ! તસ્માત્=યતઃ ક્રોધાદિકષાયવાન્ અનન્તદુઃખં પ્રાપ્નોતિ તસ્માત્, ત્વમ્-અતિવિદ્વાન્-અર્હતાગમપરિશીલનજનિતસમ્યગ્જ્ઞાનવાન્ સન્ ન પ્રતિસંજ્વલે:=ક્રોધવહ્નિનાઽઽત્માનં ન પ્રતાપયેરિત્યર્થઃ । કષાયેષુ ક્રોધસ્ય પ્રાધા-  
વહ સર્વઘાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તવાં ભાગ હોતા હૈ, ઓર જો દેશઘાતિ દ્રવ્ય હૈ વહ દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તવહુ ભાગ હોતા હૈ । ઇસમેં મ્હી દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા વટવારા દેશઘાતી પ્રકૃતિયોં મેં હી હોતા હૈ, સર્વઘાતિ દ્રવ્ય કા વટવારા સર્વઘાતી દેશઘાતી દોનોં પ્રકારકી પ્રકૃતિયોં મેં હોતા હૈ, ઓર નૌ નોકષાયોં કો દેશઘાતી દ્રવ્ય હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ, સર્વઘાતી નહીં ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ઉક્ત અર્થકા ઉપસંહાર કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ--‘ તમ્હા અતિ-વિજ્ઞો ’ ઇત્યાદિ ।

જબ યહ નિર્વિવાદ સિદ્ધ હૈ કિ ક્રોધાદિક કષાયવાલે જીવ અનન્ત યાતનાઓં કો ઇસ લોક ઓર પરલોક મેં ભોગતે હૈ તો હે શિષ્ય ! અર્હત-પ્રતિપાદિત આગમ કે પરિશીલન સે સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હોતે હુણ તુમ ક્રોધ-રૂપ અગ્નિ સે અપની આત્મા કો કમી મ્હી પ્રજ્વલિત નહીં કરના । યહાં

અનંતમે ભાગ હોય છે, અને જે દેશઘાતિક દ્રવ્ય છે તે દેશઘાતિક દ્રવ્યનો અનંત બહુભાગ હોય છે. આમાં પણ દેશઘાતી દ્રવ્યની વહેંચણી દેશઘાતિ પ્રકૃતિયોમાં જ થાય છે, સર્વઘાતિ દ્રવ્યની વહેંચણી સર્વઘાતિ દેશઘાતિ અને પ્રકારની પ્રકૃતિયોમાં થાય છે, અને નવનોકષાયોને દેશઘાતિ દ્રવ્ય જ પ્રાપ્ત થાય છે, સર્વઘાતિ નહિ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ઉક્ત અર્થનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે--‘ તમ્હા અતિવિજ્ઞો ’ ઇત્યાદિ.

અ્યારે આ નિર્વિવાદ સિદ્ધ છે કે ક્રોધાદિક કષાયવાળો જીવ અનંત યાત-નાઓને આ લોકમાં અને પરલોકમાં ભોગવે છે ત્યારે હે શિષ્ય ! અતિવિદ્વાન્-અર્હત પ્રતિપાદિત આગમના પરિશીલનથી સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન થતાં તમે ક્રોધરૂપ અગ્નિથી પોતાના આત્માને કોઈ વખતે પણ સળગાવશો નહિ. આ જગ્યાએ ક્રોધની પ્રાધા-

न्यात् क्रोधप्रतिषेधेनाऽन्येषामपि कषायाणां प्रतिषेधः कर्तव्य इति बोधितम् ।  
इति=अयमुद्देशकः समाप्यते । ब्रवीमि=भगवतः समीपे यथा श्रुतं तथा कथ-  
यामीत्यर्थः ॥ सू० १० ॥

॥ चतुर्थाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः समाप्तः ॥ ४-३ ॥

पर क्रोध की प्रधानता बतलाई है, इससे अन्य कषायों का भी परित्याग  
समझ लेना चाहिये । हे जम्बू ! मैंने भगवान् के समीप जैसा सुना है  
वैसा ही तुझे कहता हूँ ।

॥ चौथे अध्ययनका तीसरा उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥

नता अतावी છે તેથી બીજા કષાયોનો પણ પરિત્યાગ સમજી લેવો જોઈએ.  
હે જમ્બૂ ! ભગવાનની પાસે જેવું મેં સાંભળ્યું છે તેવું જ તને કહું છું.  
એથી અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૩ ॥



## । अथ चतुर्थाध्ययनस्य चतुर्थ उद्देशः ।

इहानन्तरतृतीयोद्देशकेऽनवद्यतपो वर्णितम् । तच्च संयमव्यवस्थितस्यैव संपूर्णतया भवति, तस्मात् संयमं प्रतिबोधयितुं चतुर्थोद्देशकं कथयन्नादौ गृहीतप्रव्रज्यस्य कर्तव्यमाह—‘ आवीलए ’ इत्यादि ।

मूलम्—आवीलए पवीलए निष्पीलए जहिता पुढवसंजोगं  
हिच्चा उवसमं ॥ सू० १ ॥

छाया—आपीडयेत् प्रपीडयेत् निष्पीडयेत् त्यक्त्वा पूर्वसंयोगं हित्वा उपशमम् ॥

टीका—पूर्वसंयोगं=पूर्वकालिकं मातापित्रादिसम्बन्धं, उपलक्षणात्पश्चात्सं-  
योगं श्वशुरादिसम्बन्धमपि त्यक्त्वा, यद्वा—पूर्वः=अनादिभवसमायातत्वेन प्राक्तनोऽ-  
संयमः, तेन सह संयोगः पूर्वसंयोगस्तं त्यक्त्वा, तथा—उपशमं=कर्मोपशमकार-

## ॥ चौथे अध्ययनका चौथा उद्देश ॥

इसके पहिले तृतीय उद्देशक में निरवद्य-निर्दोष तप का वर्णन किया जा चुका है, परन्तु निर्दोष तप की आराधना संपूर्ण रीति से जब तक जीव संयम में स्थित नहीं हो सकता तब तक उससे नहीं हो सकती; अतः संयम को प्रतिबोधित करने के लिये इस चतुर्थ उद्देशक का प्रारम्भ किया जाता है । उसमें भी जिसने दीक्षा धारण की है, उसका सर्व प्रथम क्या कर्तव्य है ? इसका निरूपण सूत्रकार करते हैं—‘ आवीलए ’ इत्यादि ।

पूर्वकालिक—पूर्वकाल से सम्बन्ध रखनेवाले मातापिता आदि के तथा पश्चात्कालिक-श्वशुरादि के सम्बन्ध को, अथवा अनादि जन्मपरम्परा से संबंधित होने के कारण प्राक्तन असंयम भाव के अभी तक के

## चौथा अध्ययनको चौथा उद्देश.

आ पड़ेलां त्रीज उद्देशमां निरवद्य-निर्दोष तपनुं वर्णन करेला छे, परन्तु निर्दोष तपनी आराधना संपूर्ण रीतिथी न्यां सुधी छव संयममां स्थित नथी थतो त्यां सुधी थछ शकती नथी; माटे संयमने प्रतिबोधित करवाने माटे आ चौथा उद्देशने प्रारंभ थाय छे. तेमां पणु जेहे दीक्षा धारण करेदी छे. तेनुं सर्व प्रथम शुं कर्तव्य छे तेनुं निरूपण सूत्रकार करे छे—‘ आवीलए ’ इत्यादि.

पूर्वकालीन संयम राखनार माता पिता आदिना, तथा पछीना कालमां संयम राखवावाणा श्वशुरादिना संयमने, अथवा अनादि जन्मपरंपराथी संयमित होवाने कारणे पूर्वकालिक जे असंयमभाव छे तेना आज सुधीना संयमने छोडी

णत्वात्संयमं हित्वा=गत्वा प्राप्येति यावत्, आपीडयेत् प्रथमप्रव्रज्याकालेऽविकृष्टेन तपसा शरीरमीपत्पीडयेदित्यर्थः । प्रपीडयेत्-तदनन्तरं प्रकर्षेण विकृष्टतपसा शरीरं पीडयेत् । ततः निष्पीडयेत्=पण्डितमरणेन शरीरं त्यक्तुमना मासार्धमासक्षणणादिरूपघोरतरतपोभिः शरीरं निश्चयेन पीडयेदित्यर्थः । यद्वा-आपीडयेत्=सम्यग्दृष्ट्यादिषु गुणस्थानेषु ज्ञानावरणीयादिकं कर्म ईपत् पीडयेत्, ततः प्रपीडयेत्=अपूर्वकरणानिवृत्तिबादरयोः, ततः-निष्पीडयेत्-सूक्ष्मसंपरायावस्थायाम्, यद्वा-अष्टविधं कर्म उपशमश्रेण्यामापीडयेत्, क्षपकश्रेण्यां प्रपीडयेत्, शैलेश्यवस्थायां निष्पीडयेदित्यर्थः ॥ सू० १ ॥

सम्बन्ध को छोड़ कर कर्मों के उपशम का कारण होने से उपशम-संयम को प्राप्त कर प्रथम दीक्षा के अवसर पर साधारण तप के द्वारा शरीर को किञ्चित् कृश करे । पश्चात् उत्कृष्ट तप से शरीर को पूर्ण रीति से कृश करे । तदन्तर पण्डितमरण से शरीर का नियमपूर्वक परित्याग करे ।

अथवा—सम्यग्दृष्ट्यादिक-चतुर्थादिक गुणस्थानों में ज्ञानावरणीयादिक कर्मों की स्थितिका हास करे, पश्चात् अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण में उनकी स्थिति का पहिलेकी अपेक्षा और अधिक हास करे । इस के अनन्तर सूक्ष्मसंपराय नामके दशवें गुणस्थान में और अधिक हास करे ।

अथवा—उपशमश्रेणी में ज्ञानावरणादिक कर्मों का हास करे, क्षपकश्रेणी में और अधिक हास करे तथा शैलेशी अवस्थामें उनका समूल नाश करे ॥ सू० १ ॥

कर्माणा उपशमनुं कारणं ढोवाथी उपशमसंयमने प्राप्त करी प्रथम दीक्षाना अवसरे साधारण तप द्वारा शरीरने आपीडित-किञ्चित् दुग्धं करे । पछी उत्कृष्ट तपथी शरीरने पूर्ण रूपथी दुग्धं करे । त्थार पछी पण्डितमरणथी शरीरने नियमपूर्वक परित्याग करे ।

अथवा—सम्यग्दृष्ट्यादिक-अथवा आदि-गुणस्थानां ज्ञानावरणीयादिक कर्माणा स्थितिने घटाडे । पछी अपूर्वकरण अने अनिवृत्ति करणुमां तेनी स्थितिने पछे-लांनी अपेक्षा वधारे घटाडे करे, त्थार आह सूक्ष्मसंपराय नामना दशमा गुण स्थानमां अथी वधारे घटाडे करे ।

अथवा—उपशम-श्रेणीमां ज्ञानावरणादिक कर्माणा घटाडे करे, क्षपकश्रेणीमां अथी अधिक घटाडे करे, तथा शैलेशी अवस्थांमां तेना समूलो नाश करे । ॥ सू० १ ॥

उपशमाश्रयणस्य फलं प्रदर्शयन् गृहीतप्रव्रज्यस्य मुमुक्षोः कर्तव्यमाह—  
'तम्हा अविमणे' इत्यादि।

मूलम्—तम्हा अविमणे वीरे सारए समिण्ह सहिए सया  
जए ॥ सू० २ ॥

छाया—तस्मात् अविमना वीरः स्वारतः समितः सदा यतेत ॥ सू० २ ॥

टीका—तस्मात्=उपशमाश्रयणात्, वीरः=कर्मविदारणसमर्थः अविमनाः=संय-  
माराधने खेदरहितः, अत एव स्वारतः=सुष्ठु आरतः=यावज्जीवनमर्यादया संय-  
माऽऽचरणे तत्परः, समितः=समितिसमन्वितः, सहितः=हितेन सह सहितः=सम्यग्-  
ज्ञानादिगुणयुक्तः, सदा=सर्वकालं यतेत=संयमाराधनभारोद्धहनप्रतिज्ञामङ्गीकृत्य  
तत्परिपालनार्थं प्रयतमानो भवेदित्यर्थः ॥ सू० २ ॥

पुनः पुनः संयमानुष्ठानोपदेशे हेतुं प्रदर्शयन्नाह—'दुरणुचरो' इत्यादि।

उपशमसंयम के आश्रय करने के फलको दिखाते हुए सूत्रकार  
जिसने दीक्षा अंगीकार कर ली है ऐसे मोक्षाभिलाषी मुनि का कर्तव्य  
बतलाते हैं—'तम्हा अविमणे' इत्यादि।

उपशमसंयम के आश्रय करनेसे कर्म को नष्ट करने की शक्ति से  
संपन्न जीव संयम के आराधन करने में खेदरहित होकर यावज्जीवन  
संयम के आराधना में तत्पर होता हुआ समिति से और सम्यग्दर्शन-  
ज्ञानादि गुणों से युक्त होकर सर्वदा संयम के आराधनरूपी भार को  
वहन करने की प्रतिज्ञा को अंगीकार कर उसके पालन करने में प्रयत्न  
शील बने ॥ सू० २ ॥

पुनः पुनः संयम के अनुष्ठान करने के उपदेश में कारण प्रकट करते  
हुए सूत्रकार कहते हैं—'दुरणुचरो' इत्यादि।

उपशम-संयमना आश्रय करवाना इणने देणाउतां सूत्रकार नेणु दीक्षा अंगी-  
कार करेदी छे अेवा मोक्षाभिलाषी मुनिनुं कर्तव्य कडे छे—'तम्हा अविमणे' इत्यादि।

उपशम-संयमना आश्रय करवाथी कर्मने नष्ट करवानी शक्तिवाणां एव  
संयमनुं आराधन करवामां खेदरहित थधने यावज्जीवन संयमना आराधनमां  
तत्पर अनीने समितिथी अने सम्यग्दर्शनज्ञानादि गुणोथी युक्त थधने उभेशां  
संयमना आराधनरूपी भारने वडन करवाना नियमने अंगीकार करीने तेनुं  
पालन करवामां प्रयत्नशील अने ॥ सू० २ ॥

वारंवार संयमनुं अनुष्ठान करवाना उपदेशमां कारण प्रकट करीने सूत्र-  
कार कडे छे—'दुरणुचरो' इत्यादि।



મૂલમ્—દુરણુચરો મગ્ગો વીરાણં અનિયટ્ટગામીણં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—દુરનુચરો માર્ગો વીરાણામનિવૃત્તગામિનામ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—માર્ગઃ=સંયમરૂપઃ પન્થાઃ અનિવૃત્તગામિનાં=ન નિવર્તતે યસ્માત્ સઃ  
—અનિવૃત્તો=મોક્ષઃ, તત્ર ગન્તું શીલં યેષાં તે—અનિવૃત્તગામિનસ્તેષાં, વીરાણાં=કર્મ-  
વિદારણસમર્થાનાં પ્રમાદરહિતાનાં દુરનુચરઃ—દુઃસ્થેન સદ્ અનુ=પૂર્વપૂર્વતીર્થકરેભ્યઃ  
પશ્ચાત્ ચર્યતે=ગમ્યતે इति દુરનુચરઃ=દુઃસ્વાનુગમ્યઃ—સદુઃસ્વમનુસેવ્યોઽસ્તિ,  
તસ્માત્ પુનઃ પુનઃ સંયમાનુષ્ઠાનોપદેશઃ ક્રિયત इति ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

તન્માર્ગાનુચરણં પ્રમાદપરિત્યાગાદ્ ભવતીત્યાહ—‘વિગિંચ’ इत्याદિ ।

મૂલમ્—વિગિંચ મંસસોણિયં, एस पुरिसे दविण वीरे आया-  
णिज्जे वियाहिण् जे धुणाइ समुस्सयं वसित्ता बंभचेरांसि ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—વેવિક્ષ્વ માંસશોણિતમ્, एस पुरुषो द्रविको वीर आदानीयो व्या-  
ख्यातो यो धुनाति समुच्छ्रयम् उषित्वा ब्रह्मचर्ये ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—માંસશોણિતં સ્વશરીરસ્થં વેવિક્ષ્વ=અપનય-અન્તપ્રાન્તાહારાદિના અન-

યહ સંયમ રૂપ માર્ગ, મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કરને કી ઇચ્છાવાલે પુરુષ જો કી  
વીર-કર્મોં કે નષ્ટ કરને મેં શક્તિશાલી એવં અપ્રમાદી હૈં ડનકેં લિયે ખી  
દુરનુચર-અર્થાત્ અતિકષ્ટસાધ્ય હૈ, ક્યોં કી પૂર્વ-પૂર્વ તીર્થઢૂરોં ને ઇસ  
કે આચરણ કરને કી જો વિધિ પ્રદર્શિત કી હૈ ડસીં કે અનુસાર યહ  
આચરિત કિયા જાતા હૈ, અતઃ ઇસકે અનુષ્ઠાન કરને કા વારંવાર  
ઉપદેશ દિયા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ડસ સંયમરૂપ માર્ગકા આચરણ પ્રમાદ કે ત્યાગ સે હોતા હૈ, ઇસી  
બાત કી પુષ્ટિ કરતે હૈં—‘વિગિંચ મંસસોણિયં’ इत्यादि ।

સંયમી અપને શરીર કે માંસશોણિત કો સુઝાવે, અર્થાત્ અન્તપ્રાન્ત

આ સંયમરૂપ માર્ગ, મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવા ઇચ્છનાર પુરુષ જે વીર એટલે  
કે કર્મનો ક્ષય કરવામાં શક્તિશાળી અને અપ્રમાદી છે તેના મટે પણ દુરનુ-  
ચર અર્થાત્ અતિકષ્ટસાધ્ય છે, કારણ કે પહેલાંના તીર્થકરોએ તેનું આચરણ  
કરવાની જે વિધિ બતાવી છે તદનુસાર જે એનું આચરણ કરવામાં આવે છે,  
મટે એનું અનુષ્ઠાન કરવાનો ઉપદેશ વારંવાર કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ૦ ૩ ॥

. આ સંયમરૂપ માર્ગનું આચરણ પ્રમાદના ત્યાગથી થાય છે આ વાતની  
પુષ્ટિ કરે છે—‘વિગિંચ મંસસોણિયં’ इत्यादि.

સંયમી પોતાના શરીરના માંસ લોહીને સુકાવે, અર્થાત્ અંત-પ્રાંત આહા-

શનાદિતપસા વા શરીરં શોષયેત્યર્થઃ । શરીરશોષણસ્ય ફલમાહ—‘ એષ ’ ઇત્યાદિ ।  
 એષઃ=સ્વશરીરશોષકઃ પુરુષઃ—મોક્ષાર્થી જનો દ્રવિકઃ=દ્રવઃ=સંયમઃ સ વિદ્યતે યસ્યા-  
 સૌ, સંયમીત્યર્થઃ, તથા—વીરઃ=કર્મવિદારણસમર્થઃ, તથા—આદાનીયઃ=ભવ્યાનાં ગ્રાહ્યઃ  
 શ્રદ્ધેયવચન ઇત્યર્થઃ, વ્યાખ્યાતઃ=તીર્થકરૈઃ કથિતઃ । યથ્ચ બ્રહ્મચર્યે=બ્રહ્મચર્યાભ્ય-  
 મહાવ્રતે સંયમે વા ઉષિત્વા=સ્થિત્વા—તત્પરો ભૂત્વેતિ યાવત્, સમુચ્છર્ય=કર્મોપચર્યં  
 ધુનાતિ=હાસયતિ—ક્ષપયતીત્યર્થઃ, સોઽપિ—આદાનીયો વ્યાખ્યાત ઇતિ સમ્બન્ધઃ । ૧૪।

પ્રમાદરહિતાનાં ગુણાન્ પ્રદર્શ્ય પ્રમાદવતાં દોષાનાહ—‘ નિત્તેહિં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—નિત્તેહિં પલિચ્છિન્નેહિં આયાગસોયગઢિષ્ બાલે  
 અવોચ્છિન્નબંધણે અણભિક્ષંતસંજોષ્ તમસિ અવિયાગઓ  
 આણાષ્ લંભો નત્થિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

હાયા—નેત્રૈઃ પ્રતિચ્છન્નૈઃ આદાનસ્રોતોગૃહ્ણો વાલઃ અવ્યુચ્છિન્નબન્ધનઃ અન-  
 ભિક્ષાન્તસંયોગઃ તમસિ અવિજાનત આજ્ઞાયા લાંભો નાસ્તિ—ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—નેત્રૈઃ=ચક્ષુરાદિભિરિન્દ્રિયૈઃ, પ્રતિચ્છન્નૈઃ=સ્વસ્વવિષયતોઽપવારિતૈઃ—

આહારાદિક સે અથવા અનશનાદિક તપ કે દ્વારા શરીર કા શોષણ કરે ।

ઇસ ક્રિયા કા આચરણ કરનેવાલા વહ મોક્ષાભિલાષી સંયમી જીવ  
 કર્મોંકો નષ્ટ કરને કી શક્તિ સે સમન્વિત હોતા હુઆ ભવ્ય પુરુષોં કે  
 લિયે ઉપાદેયવચનવાલા હોતા હૈ, એસા તીર્થઙ્કરોં ને કહા હૈ । તથા જો  
 બ્રહ્મચર્ય મેં અથવા સંયમ મેં તત્પર હોકર કર્મોંકો નષ્ટ કરતા હૈ વહ  
 ભી ભવ્યોં કે લિયે માનનીયવચનવાલા હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

પ્રમાદસહિત વ્યક્તિયોં મેં કયા કયા દોષ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ? યહ બાત  
 સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘ નિત્તેહિં ’ ઇત્યાદિ ।

અપનેર વિષયોં સે અપવારિત—પ્રતિરુદ્ધ ચક્ષુરાદિક ઇન્દ્રિયોં સે યુક્ત

રાદિકથી અથવા અનશનાદિક તપ દ્વારા શરીરનું શોષણ કરે.

આ ક્રિયાનું આચરણ કરવાવાળો તે મોક્ષાભિલાષી સંયમી જીવ કર્મોંને  
 નષ્ટ કરવાની શક્તિથી સંપન્ન થઈ ભવ્ય પુરુષો માટે ઉપાદેય વચનવાળો થઈ ભવ્ય  
 છે, એમ તીર્થંકરોએ કહ્યું છે. તથા જે બ્રહ્મચર્યમાં અને સંયમમાં તત્પર થઈ  
 કર્મોંનો નાશ કરે છે તે પણ ભવ્યોને માટે માનનીય—વચનવાળો થાય છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

પ્રમાદસહિત વ્યક્તિઓમાં શું શું દોષ ઉત્પન્ન થાય છે ? આ વાત સૂત્ર-  
 કાર કહે છે—‘ નિત્તેહિં ’ ઇત્યાદિ.

ચોતપોતાના વિષયોથી નિવારિત ચક્ષુ—આદિ ઇન્દ્રિયોથી યુક્ત થઈને, બ્રહ્મ-

प्रतिरुद्धैर्युक्तोऽपि, ब्रह्मचर्ये स्थितोऽपि, आदानीयो भूत्वाऽपि, यदि-आदानस्रोतो-  
गृद्धः=आदीयते=गृह्यते सावधक्रियाप्रवृत्तेन यत्-तदादानं=संसारबीजरूपं कर्म, तस्य  
स्रोतांसि=शब्दादिविषयभोगाः, तत्र गृद्धः=आसक्तो भवति, तर्हि स बालः=मोहोद-  
द्यान्मूढः सन् अव्युच्छिन्नबन्धनः=अव्युच्छिन्नं बन्धनं यस्य स तथोक्तः-अवृटित-  
कर्मबन्धः स्यादित्यर्थः । किं च—स बालः अनभिक्रान्तसंयोगः स्यादित्यन्वयः ।  
अनभिक्रान्तः=अनतिलङ्घितः संयोगः=मातापित्रादिसम्बन्धः, अथवा-असंयमसंब-  
न्धो येन सः-अनभिक्रान्तसंयोगः स्यादित्यर्थः । यः पूर्वं गृहीतप्रव्रज्यः पश्चाद्  
विषयभोगासक्तो भवति चेत्तर्हि स मूढः कदापि=शतसहस्रभवान्तेऽपि कर्मबन्धोच्छेदं  
नाप्नोति, नापि मातापित्रादिसांसारिकसम्बन्धावसानं पश्यतीति वर्तुलार्थः ।

होकर भी, ब्रह्मचर्य में स्थित रह कर भी, तथा आदानीय-लोकमान्य हो  
कर भी जो आदानस्रोतोगृद्ध, अर्थात् शब्दादि विषयभोगों में आसक्त  
हो जाता है उस बाल-अज्ञानी का कर्मबन्ध कभी भी नष्ट नहीं होता,  
और न वह माता-पिता आदि के सम्बन्ध को, अथवा असंयम के भाव  
को ही अपने से दूर कर सकता है ।

तथा-अज्ञानरूप अंधकार में रहने वाला वह बाल अज्ञानी, कि जो  
अपने हितको ही नहीं समझता है, भगवान् तीर्थङ्कर के उपदेशरूप प्रव-  
चनका लाभ नहीं ले सकता ।

विशेषार्थः—संयम का लक्षण सिद्धान्तकारों ने ' इन्द्रियवृत्तिनिरोधः  
संयमः ' इन्द्रियों की वृत्ति का निरोध करना ही बतलाया है । इन्द्रियों की  
वृत्ति का निरोध कर लेने पर भी यदि संयमी व्यक्ति के हृदय में उनके  
विषयभूत पदार्थों के सेवन के प्रति लालसा याने रागभाव बना हुआ है

अर्थों में स्थित रहने और आदानीय-लोकमान्य પણ થઈને જે આદાનસ્રોતો-  
ગૃદ્ધ-અર્થાત્ શબ્દાદિ વિષયભોગોમાં આસક્ત બની બાળ છે તે બાળ-અજ્ઞાનીનો  
કર્મબન્ધ ક્યારે પણ છૂટતો નથી અને તે માતા-પિતા-આદિના સંબંધને અથવા  
અસંયમભાવને યોતાથી દૂર કરી શકતો નથી. તથા અજ્ઞાનરૂપ અંધકારમાં રહે-  
નાર તે બાળ અજ્ઞાની જે યોતાના હિતને પણ સમજતો નથી તેને ભગવાન  
તીર્થંકરના ઉપદેશરૂપ પ્રવચનનો લાભ પણ મળી શકતો નથી.

વિશેષાર્થઃ—સંયમનું લક્ષણ સિદ્ધાન્તકારોએ ' ઇન્દ્રિયવૃત્તિનિરોધઃ સંયમઃ '  
ઇન્દ્રિયોની વૃત્તિનો નિરોધ કરવો, તેમ બતાવેલ છે. ઇન્દ્રિયોની વૃત્તિનો નિરોધ  
કરી લેવા છતાં પણ જો સંયમી વ્યક્તિના હૃદયમાં તેના વિષયભૂત પદાર્થોના  
સેવન કરવાની લાલસા એટલે રાગભાવ થાય તો શાસ્ત્રકારની દૃષ્ટિમાં તે વ્યક્તિ



તસ્ય ચાલસ્ય તમસિ=મોહરૂપે ભાવાન્ધકારે વર્તમાનસ્ય, અત એવ-અવિજાનતઃ= આત્મહિતમનવબુધ્યમાનસ્ય આજ્ઞાયાઃ=ભગવત્તીર્થકરોપદેશરૂપસ્ય પ્રવચનસ્ય લાભો નાસ્તિ । અનાદિમિથ્યાત્વપ્રતિચ્છન્નવિવેકજ્ઞાનસ્ય મહામોહવશાદાઽઽર્હતપ્રવચન-શ્રવણે પ્રવૃત્ત્યભાવાદ્ હેયોપાદેયવિવેકાનર્હત્વાચ્ચ સમ્યક્ત્વલાભાસંભવ ઇતિ ભાવઃ । યદ્વા-આજ્ઞા=વૌધિઃ-સમ્યક્ત્વમ્, તસ્યા લાભો નાસ્તીત્યર્થઃ । ઇતિ=એતદ્ બ્રવીમિ યથા ભગવદ્વચનં શ્રુતં તથા કથયामीત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૫ ॥

તો શાસ્ત્રકારોંની દૃષ્ટિમાં વહ વ્યક્તિ અસંયમી હી હૈ । વહ ઉનર પદાર્થોં કા સેવન નહીં કર રહા હૈ, બ્રહ્મચર્ય જૈસે મહાવ્રતમાં વહ સ્થિત હો, અન્ય ભવ્ય પ્રાણી ભી ઉસકે ઉપદેશ કો શ્રદ્ધાકી દૃષ્ટિ સે દેખતે ઓર માનતે હોં; તો ભી ઉસકે સંસાર કૈ કારણભૂત કર્મોં કા બન્ધ કમી ભી નષ્ટ નહીં હો સકતા । એસા વ્યક્તિ એક પ્રકાર કા ‘બકવૃત્તિ’ હી હૈ । વહ ઉપર સે શુભ-નિર્દોષ પ્રતીત હોતે હુએ ભી ખીતર સે અશુભ-મલિન હી હૈ । દિઘાને કૈ લિયે હી ઉસને બાહ્યરૂપમાં માતા-પિતાદિક અથવા અસંયમ-ભાવોં સે સંબંધ છોડ રક્ષા હૈ, ખીતર સે નહીં, અતઃ એસે વ્યક્તિયોં કો-કિ જિન્હેં વાસ્તવિક રીતિ સે હેયોપાદેય કા વિવેક નહીં હૈ, જો યહ ભી નહીં સમજતે હૈં કિ મેરા સ્વયંકા હિત કિસમાં હૈ ? હતને ગહરે અંધ-કારમાં પડે હુએ હૈં ઉન્હેં વીતરાગ પ્રભુ કી વાણીકા રસાસ્વાદ કમી ભી નહીં આ સકતા ।

‘આદીયતે યત્-તત્ આદાનમ્’ અર્થાત્-સાવચ ક્રિયામાં પ્રવૃત્તિ રચ-

અસંયમી જ છે, ભલે તે પદાર્થોનું સેવન તે ન કરતો હોય, બ્રહ્મચર્ય જેવા મહા વ્રતમાં ભલે તે સ્થિત હોય, ખીજા ભવ્ય પ્રાણી પણ તેના ઉપદેશને શ્રદ્ધાની દૃષ્ટિથી દેખતા અને માનતા હોય, તો પણ તેના સંસારના કારણભૂત કર્મોના બંધ કોઈ વખત પણ નષ્ટ થતો નથી. એવી વ્યક્તિ એક પ્રકારના ‘બકવૃત્તિ’ જ છે. તે ઉપરથી શુભ-નિર્દોષ દેખાતા છતાં પણ અંતરથી અશુભ-મલિન જ છે. દેખાડવાને જ માટે તેણે બાહ્યરૂપમાં માતા-પિતાદિક, અથવા અસંયમ ભાવોથી સંબંધ છોડી દીધેલ હોય છે, પણ અંતરથી નહિ, માટે આવી વ્યક્તિ-ઓને-કે જેઓને વાસ્તવિક રીતિથી હેયોપાદેયનો વિવેક હોતો નથી, અને જેઓ એટલા ગાઢ અંધકારમાં પડેલા હોય છે કે માફ સ્વયંનું-પોતાનું હિત શેમાં છે ? એની પણ જેઓને સમજ હોતી નથી; તેઓને વીતરાગ પ્રભુની વાણીનો રસાસ્વાદ ક્યારે પણ આવી શકતો નથી.

આદીયતે યત્ તત્ આદાનમ્—અર્થાત્-સાવચ ક્રિયામાં પ્રવૃત્તિ રાખનાર પ્રાણી દ્વારા જે પ્રહણ કરવામાં આવે છે તે આદાન-કર્મ છે, અને તે સંસારના બીજરૂપ





“યઃ પૂર્વે ગૃહીતપ્રવ્રજ્યઃ પશ્ચાદ્ વિષયભોગાસક્તો ભવતિ ચેત્તર્હિ સ મૂઢઃ કદાપિ=શતસહસ્રભવાન્તેऽપિ કર્મબન્ધોચ્છેદં નાપ્નોતિ, નાપિ માતાપિત્રાદિસાંસારિકસંબન્ધાવસાનં પश्यतीति ।”

જો પહિલે દીક્ષા અંગીકાર કર કે ખી ફિર પીછે મોહ કે પ્રબલ ઉદય સે પાંચ ઇન્દ્રિયોં કે વિષયભોગોં મેં આસક્ત હો જાતા હૈ વહ મૂઢ હૈ—બાલ હૈ । ઉસકે કર્મ કે બન્ધ કા ઉચ્છેદ—અવસાન લાગ્વોં ખવોં મેં ખી નહીં હો સકતા, ઓર ન વહ માતાપિતાદિકરૂપ સાંસારિક સંબંધ કા અંત હી કર સકતા હૈ । ‘તમસિ’ યહ પદ ગાઢ અન્ધકાર કા વાચક સસમી વિભક્તિ કા ઇક વચન હૈ । જિસ પ્રકાર અન્ધકાર મેં વર્તમાન વ્યક્તિ અપને હાથ પર ખી રગ્વી હુઈ વસ્તુ કા અવલોકન નહીં કર સકતા હૈ, ટીક ઇસી પ્રકાર મોહરૂપ ભાવાન્ધકાર મેં રહા હુઆ વ્યક્તિ ખી અપની આત્મા મેં હી સમાયે હુઇ અપને હિતરૂપ કર્તવ્ય કો નહીં જાન સકતા હૈ । ઇસે જીવ કે લિયે ભગવાન્ તીર્થંકર પ્રભુ કી ઉપદેશરૂપ વાણી કા ખી લાભ નહીં હો સકતા હૈ, કારણ કિ અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ સે ઉસકા વિવેકજ્ઞાન લુપ્ત હો રહા હૈ, ઓર પ્રબલ મોહ કે ઉદય સે અર્હન્તપ્રભુ કી વાણી કા લાભ લેને મેં અસમર્થ બન રહા હૈ, અતઃ ઉસ કી ઉનકી વાણીકે શ્રવણ કરને મેં અન્તરંગ

“યઃ પૂર્વે ગૃહીતપ્રવ્રજ્યઃ પશ્ચાદ્ વિષયભોગાસક્તો ભવતિ ચેત્તર્હિ સ મૂઢઃ કદાપિ=શતસહસ્રભવાન્તેऽપિ કર્મબન્ધોચ્છેદં નાપ્નોતિ, નાપિ માતાપિત્રાદિસાંસારિક-સંબન્ધાવસાનં પश्यतीति ”

જે પહેલાં દીક્ષા અંગીકાર કરીને પછી મોહના પ્રબળ ઉદયથી પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયભોગોમાં આસક્ત થઈ જાય છે તે મૂઢ છે—બાળ છે, તેના કર્મના બંધનો ઉચ્છેદ લાખો ભવોમાં પણ નથી થતો, તેમ જ તે માતાપિતાદિરૂપ સંબંધનો પણ અંત લાવી શકતો નથી.

“તમસિ” આ પદ ગાઢ અંધકારનું વાચક સાતમી વિભક્તિનું એકવચન છે. જે પ્રકારે અંધકારમાં કેઈ માણસ પોતાના હાથ ઉપર પણ રાખેલી વસ્તુને દેખી શકતો નથી તે પ્રકારે મોહરૂપ ભાવ-અંધકારમાં રહેલો જીવ પણ આત્મામાં રહેલાં પોતાના હિતરૂપ કર્તવ્યને જાણી શકતો નથી, એવા જીવને ભગવાન તીર્થંકર પ્રભુની ઉપદેશ વાણીનો પણ લાભ થઈ શકતો નથી, કારણ કે અનાદિ કાળના મિથ્યાત્વથી તેનું વિવેકજ્ઞાન લુપ્ત થયેલું છે, અને પ્રબળ મોહના ઉદયથી તે અર્હન્તપ્રભુની વાણીનો લાભ લેવામાં અસમર્થ બનેલ છે, તેથી તેને તેમની વાણીનું શ્રવણ કરવામાં અંતરંગથી પ્રવૃત્તિ પણ થતી નથી, અથવા હેયો-



ભાવતમસિ વર્તમાનસ્ય બાલસ્ય કથં સમ્યક્ત્વલાભાસમ્ભવઃ ? इति जिज्ञासा-  
यामाह—‘जस्स नत्थि’ इत्यादि ।

મૂલમ—જસ્સ નત્થિ પુરા પછા મજ્ઞે તસ્સ કુઓસિયા ? ૬।

છાયા—યસ્ય નાસ્તિ પુરા પશ્ચાત્ મધ્યે તસ્ય કુતઃ સ્યાત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—યસ્ય=મોહતમસિ વર્તમાનસ્ય જીવસ્ય પુરા=પૂર્વસ્મિન્ કાલે પશ્ચાત્=મવિષ્યત્કાલે નાસ્તિ=પૂર્વ સમ્યક્ત્વં નાભૂત, અગ્રેऽપિ ન તત્ મવિષ્યતિ, તસ્ય મધ્યે=મધ્યભવે-વર્તમાનજન્મનિ, કુતઃ સ્યાત્=કથં ભવેત્-ન ભવેદિત્યર્થ । “આદાવન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેऽપિ તત્તથા” इति लोकन्यायस्य सर्वानुभवसिद्धत्वादिति भावः । अव्यवहारराश्यपेक्षयैतत् ।

સે પ્રવૃત્તિ હી નહીં હોતી । અથવા હેયોપાદેય કે વિવેક કે અયોગ્ય હોને સે એસે મનુષ્ય કો સમ્યક્ત્વ કા લાભ અસમ્ભવ હૈ, યહ બી “આજ્ઞાયાઃ લાભો નાસ્તિ” इस वाक्य का अर्थ होता है, क्योंकि-‘आज्ञा’ का द्वितीय अर्थ बोधि-समकित है उसका लाभ ऐसे मनुष्य को होता नहीं ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ભાવાન્ધકાર મેં રહા હુઆ બાલ જીવ સમ્યક્ત્વ કે લાભ સે વંચિત રહતા હૈ । इसीकी पुष्टि सूत्रकार करते हैं—‘जस्स नत्थि पुरा’ इत्यादि ।

મોહરૂપી અન્ધકાર મેં રહનેવાલા અજ્ઞાની જીવ પૂર્વ જન્મમેં ઓર આગામી જન્મમેં સમકિત કે લાભ સે વંચિત રહતા હૈ તો મધ્ય અર્થાત્ વર્તમાન જન્મ મેં વહ સમકિત કા લાભ કર લેગા યહ કૈસે સમ્ભવ હો સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં હો સકતા । “આદાવન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેऽપિ તત્તથા” जिसकी सत्ता आदि और अन्त में नहीं है उसकी सत्ता वर्तमान में भी नहीं होती है । यह एक सामान्य सा नियम है ।

પાદેયના વિવેકને અયોગ્ય હોવાથી આવા મનુષ્યને સમ્યક્ત્વનો લાભ અસંભવ છે આ પણુ “આજ્ઞાયાઃ લાભો નાસ્તિ” આ વાક્યનો અર્થ થાય છે; કેમ કે ‘આજ્ઞા’નો બીજો અર્થ બોધિ એટલે સમકિત છે, તેનો લાભ આવા મનુષ્યને થતો નથી. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

લાવ-અન્ધકારમાં રહેલાં બાળ જીવ સમ્યક્ત્વના લાભથી વંચિત રહે છે. આની પુષ્ટિ સૂત્રકાર કરે છે—‘જસ્સ નત્થિ પુરા’ इत्यादि.

મોહરૂપી અન્ધકારમાં રહેનાર અજ્ઞાની જીવ પૂર્વ જન્મમાં અને આવતા જન્મમાં સમકિતના લાભથી વંચિત રહે છે, તો પછી મધ્ય અર્થાત્ વર્તમાન જન્મમાં તે સમકિતનો લાભ કરી લેશે, તેનો સંભવ કેવી રીતે હોય ? અર્થાત્ સંભવ હોતો નથી. “આદાવન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેऽપિ તત્તથા”—જેની સત્તા આદિ અને અંતમાં નથી તેની સત્તા વર્તમાનમાં પણ નથી હોતી, એ એક સામાન્ય નિયમ છે.

યદ્વા-યસ્ત્વતીતં સુખં ન સ્મરતિ, નાપિ ભવિષ્યત્કાલિકં વાઙ્મતિ, તસ્ય વર્ત-  
માનસુખેઽપિ રાગો નૈવ સ્યાદિત્યાહ-‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ । યસ્ય ભોગવિપાકં  
જાનતઃ, પુરા=પૂર્વ-પૂર્વશુક્તસુખાનુસ્મરણં નાસ્તિ, પશ્ચાત્=પશ્ચાદ્ભાવી-આગામિ-  
ભોગાભિલાષો નાસ્તિ, તસ્ય મધ્યે=વર્તમાનકાલે ક્રુતઃ ભોગેચ્છા સ્યાત્ । મોહનીય-  
કર્મોપશમાત્તસ્ય ભોગેચ્છા નૈવ ભવેદિતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

પ્રશ્ન—જિન્હોં ને પૂર્વ મેં સમકિત પ્રાપ્ત નહીં કિયા હૈ ઔર  
ભવિષ્ય મેં જો નહીં પ્રાપ્ત કરેંગે, એસે હી જીવ તો વર્તમાન મેં સમ-  
કિત કી પ્રાપ્તિ કિયા કરતે હૈં । યદિ “ આદાવન્તેઽપિ યન્નાસ્તિ વર્તમા-  
નેઽપિ તત્તથા ” યહ અટલ નિયમ માન લિયા જાવેગા તો ફિર કિસી મી  
જીવકો સમકિત કા લાભ નહીં હો સકેગા ?

ઉત્તર—યહ કથન અવ્યવહાર રાશિમેં રહેનેવાલે જીવોં કી અપેક્ષા  
સે હી સમજના ચાહિયે । વ્યવહાર રાશિમેં રહે હુણ જીવોંકી અપેક્ષાસે નહીં ।

અથવા ઇસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન ઇસ પ્રકારસે મી હોતા હૈ—

‘ભોગોં કે વિપાક કો મહા કષ્ટપ્રદ જાન કર જો પૂર્વ મેં ભોગે હુણ પાંચ  
ઇન્દ્રિયોંકે વિષયસુખ કા સ્મરણ તક નહીં કરતા હૈ ઔર ઉસ સુખ કી  
ભવિષ્યત્કાલિક પ્રાપ્તિ કી વાઙ્મતિ સે સર્વથા દૂર હૈ, એસે વ્યક્તિ કો વર્ત-  
માનકાલ મેં પ્રાપ્ત વહ સુખ ભોગેચ્છારૂપ રાગ કા કારણ કૈસે હો સકતા  
હૈ ? અર્થાત્ નહીં હો સકતા ।

પ્રશ્ન—જેઓએ પૂર્વમાં સમકિત પ્રાપ્ત નથી કર્યું અને આવતા કાળમાં પણ  
જેઓ સમકિત પ્રાપ્ત કરશે નહિ, આ પ્રકારના જ જીવો વર્તમાનમાં સમકિતની પ્રાપ્તિ  
કરે છે. એ “ આદાવન્તેઽપિ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેઽપિ તત્તથા ” આ અટલ નિયમ માન-  
વામાં આવે તો પછી કોઈ પણ જીવને સમકિતનો લાભ થઈ શકે નહિ ?

ઉત્તર—આ કથન અવ્યવહાર-રાશિમાં રહેનાર જીવોની અપેક્ષાથી જ  
સમજવું જોઈએ, વ્યવહાર-રાશિમાં રહેલાં જીવોની અપેક્ષાએ નહિ.

અથવા આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ પ્રકારે પણ થાય છે—ભોગોના વિપાકને મહા  
કષ્ટપ્રદ બાણીને જે પૂર્વમાં ભોગવેલાં પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયસુખનું સ્મરણ સુદ્ધાંત  
કરતો નથી, અને તે સુખની ભવિષ્યમાં પણ પ્રાપ્તિની વાંછથી સર્વથા દૂર છે,  
એવા જીવને વર્તમાનકાળમાં પ્રાપ્ત તે સુખ ભોગેચ્છારૂપ રાગનું કારણ કેવી રીતે  
હોઈ શકે ? અર્થાત્ નથી થતું.

યસ્ય કાલત્રયેऽપિ ભોગેચ્છા નાસ્તિ, સર્કિંભૂતઃ સ્યાદિત્યાહ-‘સે હુ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે હુ પન્નાણમંતે બુદ્ધે આરંભોવરણ । સમ્મમેયંતિ  
પાસહ । જેણ બંધં વહં ઘોરં પરિયાવં ચ દારુણં ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—સ હુ પ્રજ્ઞાનવાન્ બુદ્ધઃ આરમ્ભોપરતઃ । સમ્યગેતદિતિ પશ્યત । યેન  
બન્ધં વધં ઘોરં પરિતાપં ચ દારુણમ્ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—હુ=યતઃ-ભોગાભિલાષરહિતઃ, તસ્માત્ સ પ્રજ્ઞાનવાન્=જીવાજીવાદિ-  
પદાર્થાનાં સમ્યગ્જ્ઞાતા, અત એવ બુદ્ધઃ=તત્ત્વજ્ઞઃ, આરમ્ભોપરતઃ=આરમ્ભઃ=સાવધ-  
વ્યાપારસ્તસ્માદુપરતો=નિવૃત્તઃ । એતદ્=આરમ્ભોપરમણં, સમ્યક્=સમ્યક્ત્વમસ્તિ ।  
સમ્યક્ત્વે સતિ હિ આરમ્ભનિવૃત્તિરુપજાયતે, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વકાર્યતયાऽસરમ્ભોપ-

વાત મી ટીક હૈ; જિસકે મોહનીય કર્મ કા ઉપશમ હો ચુકા હૈ ઉસ  
વ્યક્તિ કે લિયે ‘ભોગેચ્છા-વિષયસુખો’ કો ભોગને કી લાલસા-હો હી  
કૈસે સકતી હૈ? ‘ભોગેચ્છા’ યહ મોહનીય કર્મ કા હી એક કાર્ય હૈ, અતઃ  
જબ મોહનીય કર્મ હી ઉપશમ અવસ્થામૈં હૈ તબ ‘ભોગેચ્છારૂપ’ કાર્ય કા  
આવિર્ભાવ હો મી કૈસે સકતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જિસકે ત્રિકાલ મૈં મી ‘ભોગેચ્છા’ નહીં હૈ ઉસકી પ્રશંસા કરતે હુએ  
સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘સે હુ’ ઇત્યાદિ ।

‘ભોગો’ કો ‘ભોગને’ કી અભિલાષા સે રિત્ત હોને કે કારણ વહ સંયમી  
જીવાજીવાદિક નવ તત્ત્વોં કે વાસ્તવિક સ્વરૂપ કા જ્ઞાતા બન કર તત્ત્વજ્ઞ  
હોતા હુઆ આરમ્ભ-સાવધવ્યાપારરૂપ પ્રવૃત્તિ-સે પરે હો જાતા હૈ,  
યહી સમ્યક્ત્વ હૈ । યદ્યપિ આરમ્ભનિવૃત્તિ, સમકિત કા કાર્ય હૈ; કયોં

વાત પણ ઠીક છે, જેને મોહનીય કર્મનો ઉપશમ થયેલ છે તે વ્યક્તિને  
માટે ભોગેચ્છા-વિષયસુખોને ભોગવવાની લાલસા જ કેવી રીતે થઈ શકે ?, ભોગેચ્છા  
તે મોહનીય કર્મનું જ એક કાર્ય છે, માટે જ્યારે મોહનીય કર્મ જ ઉપશમ અવ-  
સ્થામાં છે ત્યારે ભોગેચ્છારૂપ કાર્યનો આવિર્ભાવ કેવી રીતે થઈ શકે ? અર્થાત્-  
થઈ શકતો નથી. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જેને ત્રણ કાળમાં પણ ભોગેચ્છા નથી તેની પ્રશંસા કરતાં સૂત્રકાર કહે  
કે—‘સે હુ’ ઇત્યાદિ.

ભોગોને ભોગવવાની અભિલાષાથી રિત્ત હોવાના કારણે જીવાજીવાદિક  
નવ તત્ત્વોના વાસ્તવિક સ્વરૂપના જ્ઞાતા તે સંયમી તત્ત્વજ્ઞાનની આરંભ-સાવધ  
વ્યાપારરૂપ પ્રવૃત્તિથી દૂર થઈ જાય છે, એ જ સમ્યક્ત્વ છે, જો કે આરંભની



રમણમપિ સમ્યક્ત્વશબ્દવ્યપદેશ્યમિતિ ભાવઃ । ઇતિ=એવં પશ્યત=પૂર્યં જાનીત । યતઃ-  
 યેન=આરમ્ભોપરમણરૂપેણ કારણેન ધોરં=ધોરદુઃસ્વજનકં કર્મબન્ધં, વધં, દારુણં=  
 દુઃસહં પરિતાપં=શારીરં માનસં ચ દુઃસ્વં નાપ્નોતીત્યર્થઃ, તસ્માત્ સકલસાવધવ્યાપાર-  
 રેભ્યો નિવર્તિતવ્યમિતિ ભાવઃ । યદ્વા-યેન=આરમ્ભેણ સાવધાનુષ્ઠાનેન ધોરં બન્ધં વધં  
 દારુણં પરિતાપં ચ પ્રાપ્નોતિ તસ્માદારમ્ભાદુપરતો ભવેદિત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

કિ સમકિત કે હોને પર હી આરમ્ભનિવૃત્તિ હોતી હૈ, તો ખી કારણ મેં  
 કાર્ય કે ઉપચાર સે હી આરમ્ભનિવૃત્તિ કો સમકિત કહા ગયા હૈ, એસા  
 સમજના ચાહિયે ।

જીવ હસ સાવધ વ્યાપાર કે પરિત્યાગ સે હી કર્મબન્ધ, વધ ઓર  
 ઓર દુઃસહ શારીરિક એવં માનસિક કષ્ટોં સે સદા વચતા હૈ, હસ લિયે  
 આત્મહિતૈષી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ હસ સાવધવ્યાપારરૂપ ક્રિયા સે  
 સદા દૂર રહે ।

વિશેષાર્થ—યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ સાવધ વ્યાપાર સે જીવોં  
 કે પરિણામોં મેં દુર્વૃત્તિ સદા જાગૃત રહતી હૈ । ડસસે જીવ તરહ-તરહ  
 કે સાધનોં કે જુટાને મેં હી અપને જીવન કો બિતા દેતા હૈ । એસા ક્યોં  
 હોતા હૈ ? જબ હમ હસકા સૂક્ષ્મ નિરીક્ષણ કરતે હૈં તો હમેં હસ કી તહ  
 કા પતા અચ્છી તરહ સે લગ જાતા હૈ કિ વહ યહ વિષયભોગેચ્છા હી હૈ ।

હસકે ફંદમેં ફસા હુઆ જીવ જ્ઞાતા એવં તત્ત્વજ્ઞ બનને કા ઢોંગ હી  
 કરતા હૈ । ડસકે પાસ મેં નિજ કે હિત કે લિયે કુછ ખી નહીં હોતા ।

નિવૃત્તિ સમકિતનું કાર્ય છે, કારણ કે સમકિતના થવાથી જ આરંભનિવૃત્તિ થાય  
 છે; તો પણ કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી આરંભનિવૃત્તિને જ સમકિત કહેવામાં  
 આવેલ છે, એમ સમજવું જોઈએ.

જીવ આ સાવધ-વ્યાપારના પરિત્યાગથી કર્મબંધ, વધ અને દુઃસહ શારી-  
 રિક માનસિક કષ્ટોથી સદા બચે છે, માટે આત્મહિતૈષીનું કર્તવ્ય છે કે તે સદા  
 આ સાવધ-વ્યાપારથી દૂર રહે.

વિશેષાર્થ—એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે સાવધ વ્યાપારથી જીવોના પરિ-  
 ણામોમાં સદા દુર્વૃત્તિ જાગૃત રહે છે, તે થકી જીવ તરહ-તરહના સાધનોને  
 એકત્રિત કરવામાં જ પોતાના જીવનને વ્યતીત કરી દે છે. એમ કેમ બને છે ?  
 જ્યારે અમે તેનું સૂક્ષ્મ નિરીક્ષણ કરીએ છીએ ત્યારે અમેને ચોક્કસપણે તેનું  
 સમાધાન મળી જાય છે કે તે આ વિષય ભોગો જ છે.

એની પકડમાં ફસેલાં જીવ જ્ઞાતા અને તત્ત્વજ્ઞ બનવાના ઢોંગ જ કરે છે.  
 તેની પાસે પોતાના હિતને માટે કંઈ પણ હોતું નથી, પોતાના વિષય કષાયની

અપને વિષયકષાય કી પુષ્ટિ જૈસે भी हो, उसके लिये वह विहित अ-  
विहित सब तरह के उपायों को काम में लाता है। ऊपर से ही वह साधु-  
वेषधारी है, भीतर से वह अपने सच्चे हितके साधनों का नाश करता है।  
संसार में धर्मका पतन भी इसी की ओट लेकर हुए हैं और हो  
रहे हैं तथा आगे भी होंगे।

यह बड़ी बलवती व्याधि है। इसकी चिकित्सा सद्गुरु ही कर सकते  
हैं, अतः उनका कथन है कि सर्व प्रथम आत्महितैषी जीव इसकी चि-  
कित्सा कराने के लिये अपने में योग्यता लावे। यह योग्यता एक ही भवमें  
जीव को प्राप्त नहीं हो सकती। जो भी वर्तमान भवमें योग्य हुए हैं वे  
सब पूर्वके आराधक जीव थे, अतः इस व्याधि की चिकित्सा कराने की  
योग्यता प्राप्त करने की जीवमें कटिबद्धता होनी चाहिये। यह कटिबद्धता  
ही समकित है, चाहे यह स्वभाव से हो या परके उपदेश से।

यह तो निश्चित है कि इस प्रकार की योग्यता से संपन्न आत्मा भोगों  
में लालसावाला नहीं होता। उसकी प्रवृत्ति वहां पर तपे हुए लोहे पर पांव  
रखने जैसी ही होती है, अतः धीरे-धीरे अपनी उन्नति करता हुआ विषय-  
भोगेच्छा से सदा के लिये दूर हो जाता है और सावद्य व्यापारों को अनेक

પુષ્ટિ માટે તે વિહિત અવિહિત બધા પ્રકારના ઉપાયો કરે છે. ઉપરથી જ તે  
સાધુવેષધારી છે પણ અંતરથી તે પોતાના સાચા હિતના સાધનોનો નાશ જ કરે છે.  
સંસારમાં ધર્મનું પતન પણ આવા જીવોના નિમિત્તે થયું છે, થઈ રહેલું  
છે અને આગળ પણ થશે.

આ મોટી બળવાન વ્યાધિ છે. એની ચિકિત્સા સદ્ગુરુ જ કરી શકે છે.  
માટે તેમનું કથન છે—સર્વ પ્રથમ આત્મહિતૈષી જ તેની ચિકિત્સા કરાવવા  
માટે પોતાનામાં યોગ્યતા લાવે. યોગ્યતા એક જ ભવમાં જીવને પ્રાપ્ત થતી નથી.  
જે વર્તમાન ભવમાં યોગ્ય થયેલ છે તે બધા પૂર્વના આરાધક જીવ હતા, માટે  
આ વ્યાધિની ચિકિત્સા કરાવવાની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરવા માટે જીવમાં કટિબદ્ધતા  
હોવી જોઈએ. આ કટિબદ્ધતા જ સમકિત છે, ભલે તે સ્વભાવથી હોય અગર  
પારકાના ઉપદેશથી હોય.

આ નિશ્ચિત છે કે આવી યોગ્યતાથી સંપન્ન આત્મા ભોગોમાં લાલસા રાખનાર  
નથી થતા. તેની પ્રવૃત્તિ ત્યાં તપેલા લોહા ઉપર પગ રાખવા જેવી થાય છે, માટે  
તે ધીરે ધીરે પોતાની યુક્તિ-પ્રયુક્તિથી વિષય ભોગેચ્છાથી સદાને માટે દૂર



કિં કૃત્વા સાવચવ્યાપારં પરિત્યજેદિતિ જિજ્ઞાસાયમાહ-‘પલિચ્છિદિય’ઇત્યાદિ ।  
મૂલમ્-પલિચ્છિદિય બાહિરગં ચ સોયં, નિકમ્મદંસી ઇહ  
મચ્ચિણ્હિં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—પ્રતિચ્છિદ્ય બાહ્યકં ચ સ્ત્રોતઃ નિષ્કર્મદર્શીં ઇહ મર્ત્યેષુ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—બાહ્યકં=બહિર્ભવં હિરણ્યરજતમાતાપિત્રાદિસમ્બન્ધરૂપં, યદ્વા-પ્રાણા-  
તિપાતાદિકં સ્ત્રોતઃ=આસ્રવં કર્મબન્ધકારણં, ચ-શબ્દાદ્ રાગદ્વેષાત્મકં વિષયાભિલાષ-  
રૂપં વા આન્તરં સ્ત્રોતો વા પ્રતિચ્છિદ્ય=પ્રતિરુદ્ધ્ય, ઇહ=અસ્મિન્ લોકે, મર્ત્યેષુ=મનુષ્યેષુ  
મધ્યે નિષ્કર્મદર્શીં=કર્મણો નિષ્કાન્તઃ નિષ્કર્મા=મોક્ષઃ, તં દ્રષ્ટું શીલમસ્યેતિ નિ-  
ષ્કર્મદર્શીં=મોક્ષાભિલાષી સન્ સાવચવ્યાપારં પરિત્યજેદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ઇહ=અસ્મિન્  
લોકે મર્ત્યેષુ=મનુષ્યેષુ બાહ્યકં સ્ત્રોતઃ પ્રતિચ્છિદ્ય નિષ્કર્મદર્શીં ભવતિ, મોક્ષ  
પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

પ્રકાર કે ઘોર વધ, બંધન ઓર દારુણ પરિતાપ કા કારણ સમજ કર ઉનસે  
સર્વથા વિરક્ત હી રહતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

इसी विषयकी पुष्टि करते हुए सूत्रकार कहते हैं-‘पलिच्छिदिय’इत्यादि  
माता-पिता आदिक सचित्त, सुवर्ण-रजतादिक अचित्त परिग्रहरूप  
अथवा हिंसादिक पापरूप बहिरङ्ग स्रोतका एवं रागद्वेष अथवा विषया-  
भिलाषरूप अन्तरंग स्रोत का निरोध कर इस लोक के अन्दर मनुष्योंमें  
वसनेवाला निष्कर्मदर्शी--मोक्षाभिलाषी जीव सावच व्यापार का  
परित्याग करे ।

शास्त्रकारोंने ने परिग्रह दो प्रकार का बतलाया है । (१) बाह्य परिग्रह  
और (२) अन्तरङ्ग परिग्रह । धनधान्यादिक और मातापितादिक बाह्य परि-  
ग्रह है, विषयाभिलाषादिक तथा द्वेषादिक अन्तरङ्ग परिग्रह है । ‘परिग्रह’

થઈ જાય છે, અને સાવચ વ્યાપારોને અનેક પ્રકારના ઘોર બધ, બંધન અને  
દારુણ-પરિતાપનું કારણ સમજીને તેનાથી સર્વથા વિરક્તજ રહે છે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

આ વિષયની પુષ્ટિ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘પલિચ્છિદિય’ ઇત્યાદિ.

માતા-પિતા-આદિક સચિત્ત, સુવર્ણ રજતાદિક અચિત્ત પરિગ્રહરૂપ અથવા  
હિંસાદિક-પાપરૂપ બહિરંગ સ્ત્રોત (માર્ગ) નો તેમજ રાગ દ્વેષ અથવા  
વિષયાભિલાષારૂપ અંતરંગ સ્ત્રોતનો નિરોધ કરી આ લોકની અંદર મનુષ્યોમાં  
વસવાવાળો નિષ્કર્મદર્શી-મોક્ષાભિલાષી જીવ સાવચ વ્યાપારનો પરિત્યાગ કરે.

શાસ્ત્રકારોએ પરિગ્રહ બે પ્રકારનો બતાવેલ છે. (૧) બાહ્ય પરિગ્રહ અને  
(૨) અંતરંગ પરિગ્રહ. ધન-ધાન્યાદિક અને માતા-પિતાદિક બાહ્ય પરિગ્રહ છે, અને  
વિષયાભિલાષાદિક, તથા રાગ-દ્વેષાદિક અંતરંગ પરિગ્રહ છે. પરિગ્રહ શબ્દનો



शब्द का अर्थ यही है कि जिससे जीव कर्मों का ग्रहण करे। अर्थात् ममत्वभावसे ग्रहण करने को परिग्रह कहते हैं। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग, ये सब अन्तरङ्ग-परिग्रह हैं। इन्हींसे जीव नवीन २ कर्मों का बन्ध किया करता है।

जिस प्रकार नौकामें पानी आने का कारण छिद्र होता है, उसी प्रकार आत्मामें नवीन २ कर्मों के आनेके लिये परिग्रह छिद्र के स्थानापन्न माना गया है। जैसे-मिथ्यादर्शनजन्य कर्मों का बंध (१) प्रथम गुणस्थान तक; अविरतिजन्य कर्मों का बन्ध (४) चतुर्थ गुणस्थान तक, प्रमादजन्य कर्मों का बन्ध (६) षष्ठ गुणस्थान तक, कषायजन्य कर्मों का बन्ध (१०) दशवें गुणस्थान तक, और योगजन्य कर्मों का बन्ध सयोगकेवलीनामक (१३) तेरहवें गुणस्थान तक जीवोंके होता है। स्रोत शब्द का अर्थ प्रवाह भी है। जिस प्रकार जलाशयों में प्रवाह के द्वारा पानी आता है उसी प्रकार अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग परिग्रहरूप प्रवाहद्वारा आत्मामें नवीन २ कर्मों का बंध हुआ करता है, अतः संयमी जीव बाह्य परिग्रह से सर्वथा विरक्त हो जाता है। अन्तरङ्ग परिग्रह से भी वह अपने पदके अनुसार विरक्त ही रहता है। इसीलिये सूत्रकार कहते हैं कि जिस संयमी मुनिका लक्ष एक मोक्ष प्राप्ति करने का ही है वह मनुष्यलोकमें रहता हुआ भी सावद्य

अर्थ એજ છે કે એનાથી જીવ કર્મોને ગ્રહણ કરે, અર્થાત્ મમત્વ-ભાવથી ગ્રહણ કરવું તેને પરિગ્રહ કહે છે. મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ, એ બધા અંતરંગ-પરિગ્રહ છે, એનાથી જ જીવ નવા નવા કર્મોનો બંધ કરે છે.

જેમ નૌકામાં પાણી આવવાનું કારણ છિદ્ર છે તેમ આત્મામાં નવા નવા કર્મોને આવવાને માટે પરિગ્રહ છિદ્ર છે. મિથ્યાદર્શનજન્ય કર્મોનો બંધ, પ્રથમ ગુણસ્થાન સુધી, અવિરતિજન્ય કર્મોનો બંધ ચોથા ગુણસ્થાન સુધી, પ્રમાદજન્ય કર્મોનો બંધ છઠ્ઠા ગુણસ્થાન સુધી, કષાયજન્ય કર્મોનો બંધ દશમા ગુણસ્થાન સુધી અને યોગજન્ય કર્મોનો બંધ સયોગકેવળીનામક તેરમા ગુણસ્થાન સુધી જીવોને થાય છે. સ્રોત શબ્દનો અર્થ પ્રવાહ પણ છે, જેમ જળાશયોમાં પ્રવાહ-દ્વારા પાણી આવે છે તેમ આ અંતરંગ અને બહિરંગ પરિગ્રહરૂપ પ્રવાહદ્વારા આત્મામાં નવા નવા કર્મોનો બંધ થયા કરે છે, માટે સંયમી જીવ બાહ્ય-પરિગ્રહથી સર્વથા વિરક્ત થઈ જાય છે. અંતરંગ પરિગ્રહથી પણ તે પોતાના પદના અનુસાર વિરક્ત જ છે. આ માટે જ સૂત્રકારનું કથન છે કે જે સંયમી મુનિનું લક્ષ્ય એક મોક્ષપ્રાપ્તિ કરવાનું જ છે તે મનુષ્ય લોકમાં રહેવા છતાં પણ સાવધ

નનુ કર્મોપાદાનરૂપં સ્ત્રોતઃ કિં કૃત્વા પ્રતિચ્છેદ્યમિતિ જિજ્ઞાસાયમાહ--  
'કમ્મુણો' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કમ્મુણો સફલત્તં દદ્દૂણં તઓ નિજ્જાઙ્ગ વેયવી ॥ સૂ. ૦૧ ॥

છાયા—કર્મણઃ સફલત્ત્વં દૃષ્ટ્વા તતો નિર્યાતિ વેદવિત્ ॥ સૂ. ૦૧ ॥

ટીકા—મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકષાયયોગૈઃ ક્રિયતે ઇતિ કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ-  
કમ્, તસ્ય, સફલત્ત્વં=જ્ઞાનાવરણાદિસ્વસ્વફલજનનાવશ્યમ્ભાવં, દૃષ્ટ્વા વેદવિત્—વેદ્યતે  
તત્ત્વાન્યનેનેતિ વેદઃ=આર્હતાગમઃ, તં વેત્તીતિ વેદવિત્—સર્વજ્ઞોપદેશજન્યસમ્યગ્જ્ઞાન-  
વાનિત્યર્થઃ, તતઃ=કર્મણઃ કર્મબન્ધકરણાત્ નિર્યાતિ=દૂરીભવતિ, કર્મબન્ધનનિવન્ધન-  
સકલસાવધવ્યાપારં પરિવર્જયતીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૦૧ ॥

વ્યાપારોં સે સદા વિરક્ત રહે । જિસસે જીવોં કો થોડે સે ખી કષ્ટાદિક  
કાં અનુભવ હો એસી કોઈ ખી ક્રિયા વહ ન કરે । સાવચક્રિયા કરને-  
વાલે મનુષ્યોં કે સમ્પર્કમેં રહતે હુએ ખી અપને કો ઉસ વ્યાપાર સે બચા  
કર રખના યહી તો સંયમી મુનિકી વિશેષતા હૈ ।

નિષ્કર્મદર્શી—ઈસ શબ્દ કા અર્થ મોક્ષાભિલાષી હૈ, ક્યોં કિ કર્મોં  
કે સમ્બન્ધ સે રહિત જો સ્થાન હૈ વહ નિષ્કર્મ હૈ, ઉસ સ્થાન કો દેખને  
કા જિસ કા સ્વભાવ હૈ એસા જીવ નિષ્કર્મદર્શી કહલાતા હૈ । સૂત્રમેં  
“ચ” શબ્દ અન્તરજ્ઞ પરિગ્રહ કા બોધક હૈ ॥ સૂ. ૦૮ ॥

સંયમી મુનિ કયા સમજી કર કર્મોં કે આને મેં કારણરૂપ ઇસ સ્ત્રોત  
કો બંદ કરે ? ઇસ પ્રકાર કી જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કરતે હુએ સૂત્રકાર  
કહતે હૈ—'કમ્મુણો' ઇત્યાદિ ।

કર્મોં કો અપને ૨ ફલ કા દેનેવાલા જાનકર વહ જ્ઞાની—સંયમી મુનિ  
ઉન કર્મોં સે ઓર ઉનકે કારણોં સે દૂર હી રહતા હૈ ।

વ્યાપારથી સદા વિરક્ત રહે. જેનાથી જીવેને થોડા પણ કષ્ટાદિકનો અનુભવ થાય  
તેવું કોઈ કાર્ય તેઓ ન કરે. સાવધ—વ્યાપાર કરવાવાળા મનુષ્યોનાં સંપર્કમાં રહેવા છતાં  
પણ પોતાની જાતને તેવા વ્યાપારથી દૂર રાખવું, એ જ સંયમી મુનિની વિશેષતા છે.

'નિષ્કર્મદર્શી' આ શબ્દનો અર્થ મોક્ષાભિલાષી છે, કારણ કે કર્મોના સંબંધથી  
રહિત જે સ્થાન છે તે નિષ્કર્મ છે; તે સ્થાનને દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તેવો જ  
નિષ્કર્મદર્શી કહેવાય છે. સૂત્રમાં “ચ” શબ્દ અન્તરજ્ઞ પરિગ્રહનો બોધક છે. ॥ સૂ. ૦૮ ॥

જું સમજીને સંયમી મુનિ કર્મોને આવવાના કારણરૂપ આ સ્ત્રોતને બંધ કરે ?  
આ પ્રકારની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—'કમ્મુણો' ઇત્યાદિ.

કર્મોને પોતપોતાના ફળને દેવાવાળા જાણીને તે સંયમી મુનિ તે કર્મોથી  
અને તેના કારણોથી દૂર જ રહે છે.



ममैव नायमाशयः किन्तु सर्वेषामर्हतामिति दर्शयितुं भगवान् प्राह—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

यद्वा—सम्यक्त्वमुक्तं, निरवयं तपश्चारित्रमपि, इदानीं तत्फलमाह—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

मूलम्—जे खलु भो ! वीरा समिया सहिया सयाजया संघ-  
डदंसिणो आओवरया अहातहा लोयं उवेहमाणा पाईणं पडीणं  
दाहिणं उईणं इय सच्चंसि परिविचिट्टिसु ॥ सू० १० ॥

छाया-ये खलु भो ! वीराः समिताः सहिताः सदायताः संघटदर्शिनः, आत्मोपरताः  
यथातथा लोकमुपेक्षमाणाः प्राचीनं प्रतीचीनं दक्षिणम्, इति सत्ये परिव्यस्थुः ॥ १० ॥

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योगों के द्वारा जो किये जाते हैं वे कर्म हैं । ये ज्ञानावरणीयादिक के भेद से आठ प्रकारके हैं । आत्मा के साथ इनका सम्बन्ध अनादिकाल से हो रहा है । कोई भी कर्म जब तक अपना फल नहीं देता तब तक वह आत्मा से नष्ट नहीं होता; यह नियम है, अतः वह वेदवित्=सम्यग्ज्ञानी पुरुष कर्मों से और उन कर्मों के कारण मिथ्यादर्शनादिकों से, तथा मिथ्यादर्शनादिके कारण कषायों से सदा दूर ही रहता है । अर्थात् कर्मबन्ध के कारणभूत समस्त सावध्य व्यापार का वह त्याग कर देता है ॥ सू० ९ ॥

इस कथन में सब तीर्थङ्करों की सम्मति प्रदर्शित करते हैं—‘जे खलु भो’ इत्यादि । अथवा समकित को कहा और निर्दोष तप चारित्र को भी कहा; अब उसका फल कहते हैं—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय અને યોગદ્વારા જે કરવામાં આવે છે તે કર્મ છે. તે જ્ઞાનાવરણીયાદિકના લેહથી આઠ પ્રકારના છે. આત્માની સાથે તેનો સંબંધ અનાદિ કાળથી થઈ રહ્યો છે. કોઈ પણ કર્મ જ્યાં સુધી પોતાનું ફળ નથી આપતું ત્યાં સુધી તે આત્માથી નષ્ટ થતું નથી; એ નિયમ છે. તેથી તે વેદ-વિત્=સમ્યગ્જ્ઞાની પુરુષ કર્મોથી અને તે કર્મોના કારણ મિથ્યા-દર્શનાદિકો અને મિથ્યાદર્શનાદિકોના કારણ કષાયોથી સદા દૂરજ રહે છે. અર્થાત્ કર્મબંધના કારણભૂત સમસ્ત સાવધ વ્યાપારનો તે સદા ત્યાગ કરી દે છે. ॥ સૂ० ૯ ॥

આ કથનમાં બધા તીર્થંકરોની સંમતિ પ્રદર્શિત કરે છે—‘જે ખલુ ભો’ ઇત્યાદિ. અથવા સમકિત કહ્યું, નિર્દોષ તપ ચારિત્ર પણ કહ્યું; હવે તેનું ફળ કહે છે—‘જે ખલુ ભો’ ઇત્યાદિ.



ટીકા—‘મો’ इति शिष्यामन्त्रणार्थः । स वक्ष्यमाणविषये शिष्यस्य पुनः पुनरवधानार्थमामन्त्रणं द्योतयति । भोः शिष्य ! ये केचन वीराः=कर्मविदारणार्थमुत्साहवन्तः, समिताः=समितियुक्ताः, सहिताः=स्वहितार्थमुद्युक्ताः सम्यग्ज्ञानादियुक्ता वा, सदायताः=सर्वदा संयमाराधनसावधानाः, संघटदर्शिनः=हेयोपादेयस्य निरन्तरदर्शिनः, यद्वा—अव्याबाधानन्दस्वरूपमोक्षाभिलाषिणः, आत्मोपरताः—

પાંચ સમિતિયોં મેં લવલીન, આત્મહિત કી પ્રાપ્તિ મેં ઉદ્યમી અથવા સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક ગુણોં સે યુક્ત, સર્વદા સંયમ કી આરાધના કરનેમેં સાવધાન, હેયોપાદેય કે વિવેક સે યુક્ત અથવા અવ્યાબાધ-આનન્દ-સ્વરૂપ મોક્ષકે અભિલાષી, કષાયવિશિષ્ટઆત્માસે સદા પરે રહનેવાલે ઔર યથાવસ્થિતકર્મલોક કી અથવા શબ્દાદિવિષયોં કી સદા ઉપેક્ષા કરને વાલે, કર્મોં કો વિદારણ કરનેમેં ઉત્સાહશાલી જો કોઈ ભવ્ય વીર પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર ઔર દક્ષિણ દિશા મેં હુયે હૈં વે સબ સત્ય-મોક્ષસ્થાનમેં સ્થિત હો ચુકે હૈં ।

સૂત્રકાર इस सूत्र में निर्दोष तप-चारित्र की आराधना का फल प्रकट करते हुए शिष्यों से कह रहे हैं कि जिन भव्यवीरों ने पांच समितियों का निर्दोष रीतिसे पालन किया है, आत्महित की प्राप्ति में जिन्होंने कुछ भी नहीं बाकी रखा, निर्दोष संयम की आराधना करने में ही जिन्होंने अपने जीवन को बिताया, हेयोपादेय के सुन्दर विवेकसे जिन्होंने मोह-ममत्व पर विजय प्राप्त की, जिन्होंने कषाय के उदय को

પાંચ સમિતિઓમાં રાચવાવાળાં, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં ઉદ્યમી, અથવા સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક ગુણોથી યુક્ત, સર્વદા સંયમની આરાધના કરવામાં સાવધાન, હેયોપાદેયના વિવેકથી યુક્ત, અથવા અવ્યાબાધ-આનન્દસ્વરૂપ મોક્ષના અભિલાષી, કષાયવિશિષ્ટ આત્માથી સદા દૂર રહેવાવાળાં, અને યથાવસ્થિત કર્મલોકની અથવા શબ્દાદિવિષયોની સદા ઉપેક્ષા કરવાવાળાં કર્મોંનું વિદારણ કરવામાં ઉત્સાહશાળી જે ભવ્ય વીરો, પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશાઓમાં થયાં છે તે બધા સત્ય-મોક્ષસ્થાનમાં સ્થિત થઈ ચૂકેલ છે.

સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં નિર્દોષ તપ-ચારિત્રની આરાધનાનું ફળ પ્રગટ કરીને શિષ્યોને કહે છે કે જે ભવ્ય વીરોએ પાંચ સમિતિઓનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કર્યું છે, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં જેમણે કંઈ પણ બાકી ન રાખ્યું, નિર્દોષ સંયમની આરાધના કરવામાં જે જેમણે પોતાના જીવનને વીતાવ્યા, હેયોપાદેયના સુંદર વિવેકથી જેઓએ મોહ મમત્વ ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કર્યો, જેઓએ કષાયના

आत्मनः=कषायात्मन उपरताः=निवृत्ताः यथातथा=यथावस्थितं, लोकं=कर्मलोकं, शब्दादिविषयलोकं वा, उपेक्षमाणाः=दृष्ट्याऽपश्यन्त आसन्, ते प्राच्यादिदिक्ष्व-स्थिताः, सत्ये=सत्यसुखजनकत्वात् सत्यो=मोक्षमार्गः, तत्र, परिव्यस्थुः=स्थितव-न्तः, इदमुपलक्षणम्-तेनानागतवर्तमानयोरपि क्रियापदे संयोजनीये, यथा— ये वीराः सन्ति ते वर्तमानकाले पञ्चदशकर्मभूमिषु संख्येयास्तिष्ठन्ति, ये च भविष्यन्ति, ते चानागतकालेऽनन्ताः स्थास्यन्तीति ॥ सू० १० ॥

निष्फल किया और इस कर्ममय लोक की अथवा शब्दादिक पांचइन्द्रियों के विषयों की तरफ थोड़ा सा भी ध्यान नहीं दिया, उन भव्यवीरों ने-चाहे वे किसी भी दिशा में क्यों न रहें हों-नियम से मोक्ष को अपने हाथ में कर लिया है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की एकता के बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती, यह जैनसिद्धान्त का अटल नियम है। पांचसमिति वगैरह के पालन में अपने को विसर्जित कर देना यह बात सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की आराधना से ही आत्माको उपलब्ध होती है। सूत्र में “वीर” शब्द इसी बात की पुष्टि करता है। बाह्य जगत में शत्रुओं पर विजय प्राप्त करनेवाले लाखों क्या करोड़ों भी मनुष्य मिल सकते हैं, परन्तु जो अपने आत्मशत्रुओं-कर्मों पर विजय प्राप्त करने की कोशिश में हैं वे लाखों में क्या करोड़ों में भी एक दो मिलेंगे। पांच समितियों में लवलीन रहना, आत्महित की प्राप्ति में सदा उद्यम करते रहना, सर्वदा संयम की आराधना में जरा भी प्रमादशील न बनना, हेयोपादेय के विवेक में थोड़ी सी

ઉદ્યને નિષ્ફળ બનાવ્યો અને આ કર્મમય લોકની અથવા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોની તરફ થોડું પણ ધ્યાન નથી આપ્યું તેવા ભવ્ય વીરોએ ભલે તેઓ કેઇ પણ દિશામાં હોય તો પણ નિયમથી મોક્ષને પ્રાપ્ત કરેલ છે. સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની એકતા વિના મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એ જૈન-સિદ્ધાંતનો અટલ નિયમ છે. પાંચ સમિતિ વિગેરેના પાલનમાં પોતાને વિસર્જીત કરી દેવું, એ વાત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની આરાધનાથી જ આત્માને ઉપલબ્ધ થાય છે. સૂત્રમાં જે “વીર” શબ્દ છે તે આ વાતની જ પુષ્ટિ કરે છે. બાહ્ય જગતમાં શત્રુઓ પર વિજય કરનારાઓ લાખો તો શું પણ કરોડો મનુષ્યો મળી રહેશે, પરંતુ પોતાના આત્મશત્રુઓ-કર્મ પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની કોશિશમાં હોય તેવા લાખો બદકે કરોડોમાં પણ એક-બે મળશે. પાંચ સમિતિઓમાં રચ્યા રહેવું, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં સદા ઉદ્યમ કરતા રહેવું, સર્વદા સંયમની આરાધનામાં જરા પણ પ્રમાદશીલ ન બનવું, હેયોપાદેયના



મી ભૂલ ન આને દેના, કષાયોં સે સદા સાવધાન રહના ઔર શબ્દાદિક વિષયોં મેં સદા ઉપેક્ષાભાવ રાખના, યે સબ વાતેં-ક્રિયાઈ કર્મશત્રુઓં પર વિજય પાને મેં સૈન્ય કા કામ દેતી હૈં । મોક્ષાભિલાષી આત્મા સેનાપતિ હૈં, કર્મોં કી મૂલ-ઉત્તર-પ્રકૃતિરૂપ સેના શત્રુસૈન્ય હૈં, ઉસ પર વિજય પ્રાપ્ત કરને મેં ઇસ યોદ્ધા કી યે પૂર્વોક્ત ક્રિયાઈ એક અક્ષૌહિણી સેના જૈસી હૈં, અતઃ યહ આત્મા નિયમસે કર્મસેના કા પરાભવ કર અપને સ્વભાવ સે હી મોક્ષ કા પૂર્ણ ભોક્તા બન જાતા હૈં । ઇસમેં જરા મી સન્દેહ નહીં ।

સૂત્ર મેં “ભો” શબ્દ શિષ્યોં કે સંબોધન કે લિયે આયા હૈં । વહ ભગવાન કે કહે ગયે વચનોં મેં શિષ્યોં કા પુનઃ પુનઃ ધ્યાન આકર્ષિત કરને કે લિયે કહા ગયા હૈં । મૂલ મેં ‘પરિવિચિટ્ઠિસુ’ યહ ભૂતકાલિક ક્રિયાપદ હૈં । યહ વર્તમાન ઔર ભવિષ્યત્કાલિક ક્રિયાપદ કા મી ઉપલક્ષણ હૈં । ઇસકા અભિપ્રાય યહ હૈં કિ ભૂતકાલ મેં જિતને મી વીર હુણ હૈં ઉન સબને તો મોક્ષ કા માર્ગ પ્રાપ્ત કર હી લિયા હૈં, વર્તમાન મેં મી જો પાંચ ભરતક્ષેત્ર, પાંચ ઐરવત ક્ષેત્ર ઔર પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્ર મેં સંખ્યાત વીર હૈં વે ઔર અનાગત કાલમેં જો અનંત વીર હોંગે વે સબ મોક્ષકે ભોક્તા બનેંગે ।

કર્મોં કે વિદારણ કરને મેં ઉત્સાહસમ્પન્ન કો ‘વીર,’ પાંચ સમિતિયોં

વિવેકમાં જરા પણ ભૂલ ન આવવા દેવી, કષાયોથી સદા સાવધાન રહેવું, આ બધી વાતો-ક્રિયાઓ-કર્મશત્રુઓ ઉપર વિજય મેળવવામાં સૈન્યનું કામ કરે છે. મોક્ષાભિલાષી આત્મા સેનાપતિ છે. કર્મોની મૂળ-ઉત્તરપ્રકૃતિરૂપ સેના શત્રુસૈન્ય છે, તેના ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવામાં આ યોદ્ધાની તે પૂર્વોક્ત ક્રિયાઓ એક અક્ષૌહિણી સેના જેવી છે, માટે તે આત્મા નિયમથી કર્મસેનાનો પરાભવ કરીને પોતાના સ્વભાવથી જ મોક્ષનો પૂર્ણ ભોક્તા બની જાય છે, તેમાં જરા પણ સંદેહ નથી.

સૂત્રમાં “ભો” શબ્દ શિષ્યોના સંબોધનને માટે આવેલ છે, તે ભગવાને કહેલા વચનોમાં શિષ્યોનું વારંવાર ધ્યાન આકર્ષિત કરવાને માટે કહેવામાં આવેલ છે. મૂળમાં ‘પરિવિચિટ્ઠિસુ’ આ ભૂતકાલિક ક્રિયાપદ છે. આ વર્તમાન અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયાપદનું પણ ઉપલક્ષણ છે, આનો અભિપ્રાય એ છે કે—ભૂતકાળમાં જેટલા વીરો થયેલાં છે તે બધાએ મોક્ષનો માર્ગ પ્રાપ્ત કરી જ લીધેલ છે. વર્તમાનમાં પણ જે પાંચ ભરતક્ષેત્ર, પાંચ ઐરવત ક્ષેત્ર અને પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં સંખ્યાત વીરો છે, તેઓ અને આવતા કાળમાં જે અનંત વીરો થશે તેઓ બધા મોક્ષના ભોક્તા બનશે.

કર્મોનું વિદારણ કરવામાં ઉત્સાહસમ્પન્નને ‘વીર,’ પાંચ સમિતિઓનું પાલન



तेषां सत्यावस्थायिनां ज्ञानमाह—‘साहिस्सामो’ इत्यादि ।

मूलम्—साहिस्सामो नाणं वीराणं समियाणं सहियाणं सया-  
जयाणं संघटदंसीणं आओवरयाणं अहातहा लोयमुवेहमाणानं,  
किमात्थि उवाही? पासगस्सन विज्जइ, नत्थि-त्ति वेमि ॥ सू० ११ ॥

छाया—साधयिष्यामो ज्ञानं वीराणां समितानां सहितानां सदायतानां संघ-  
टदर्शिनाम् आत्मोपरतानां यथातथा लोकमुपेक्षमाणानां, किमस्ति उपाधिः पश्य-  
कस्य? न विद्यते नास्ति, इति ब्रवीमि ॥ सू० ११ ॥

टीका—तेषां वीराणां समितानां सहितानां सदायतानां संघटदर्शिनाम् आ-  
त्मोपरतानां यथातथा लोकमुपेक्षमाणानां ज्ञानम्=अभिप्रायं, साधयिष्यामः=कथ-  
के पालन करनेवाले को ‘समित,’ आत्मकल्याण में उद्यमशाली अथवा  
ज्ञानादिक गुणों से युक्त को ‘सहित,’ सर्वदा संयम की आराधना में  
सावधान को ‘सदायत,’ हेयोपादेय के विवेक से युक्त अथवा अव्याबाध  
आनन्दस्वरूप मोक्ष की अभिलाषावाले को ‘संघटदर्शी’ और कषायों  
से उपरत-निवृत्त जीवों को ‘आत्मोपरत’ कहते हैं ॥ सू० १० ॥

मोक्षमार्ग में रहनेवाले उन वीर-आत्माओं के ज्ञान के विषय में  
सूत्रकार कहते हैं:—‘साहिस्सामो नाणं’ इत्यादि ।

हम वीर, समित, सहित, सदायत, संघटदर्शी, आत्मोपरत, यथा-  
वस्थित लोक की उपेक्षा करनेवाले उन मोक्षमार्ग के पथिकों के ज्ञान के  
विषय में आगे कथन करेंगे । अभी तो इतना ही कहते हैं कि उन  
वीरादिविशेषणविशिष्ट आत्माओं के कर्मजनित कोई भी उपाधिनहीं है ।

करवावाणाने ‘समित,’ आत्मकल्याणमां उद्यमशाली अथवा ज्ञानादिक गुणोत्थी  
युक्तने ‘सहित,’ सर्वदा संयमनी आराधनामां सावधानने ‘सदायत,’ हेयोपादेयना  
विवेकथी युक्त अथवा अव्याबाधआनन्दस्वरूप मोक्षनी अभिलाषावाणाने ‘संघ-  
टदर्शी’ अने कषायोत्थी उपरत-निवृत्त जीवोने ‘आत्मोपरत’ कहे छे. ॥ सू० १० ॥

मोक्षमार्गमां रहवावाणा ते वीर-आत्माओना ज्ञानना विषयमां सूत्रकार  
कहे छे:—“साहिस्सामो नाणं” इत्यादि.

अमे वीर, समित, सहित, सदायत, संघटदर्शी, आत्मोपरत अने यथा-  
वस्थित लोकनी उपेक्षा करवावाणां ते मोक्षना पथिकोना ज्ञानना विषयमां आगण  
कहीशुं. हमणुं तो आटवुं कहीअे छीअे के ते वीरादिविशेषणविशिष्ट आत्मा-  
ओने कर्मजनित (कर्मथी थनारी) कोषिणु उपाधि नथी.

યિષ્યામઃ । વીરાદિવિશેષણશબ્દા અનન્તરપૂર્વસૂત્રે વ્યાખ્યાતાઃ । શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—  
કિમસ્તિ ઉપાધિરિતિ । કિં તેષાં મહાપુરુષાણામુપાધિરસ્તિ ?, ઉત્તરવાક્યમાહ—  
'પશ્યકસ્ય' इत्यादि । पश्यकस्य=सम्यग्दर्शनादिकं मोक्षमार्गं पश्यतीति पश्यः,  
स एव पश्यकः, तस्य कर्मजनितोपाधिर्न विद्यते नास्ति, इति ब्रवीमि=मया यथा  
भगवद्वाक्यं श्रुतं तथा कथयामीत्यर्थः ॥ सू० ११ ॥

चतुर्थीव्ययनस्य चतुर्थीदेशः समाप्तः ॥ ४-४ ॥

ભાવાર્થ—જબ તક જીવ અપને શુદ્ધસ્વરૂપ-નિર્વિકાર આનન્દ-સ્વરૂપ  
મુક્તિકો પ્રાપ્ત નહીં કર લેતા હૈ તબ તક વહ કર્મોંસે નિર્લિપ્ત નહીં હો  
સકતા હૈ । ऐसी अवस्था में जब तक सांसारिक दशा है अथवा संसार  
में रहना है तब तक कर्मों के चक्र में प्रत्येक प्राणी फँसा हुआ ही है ।  
जो कर्मों का कर्ता है वह उसके फल का भी भोक्ता माना जाता है ।  
यद्यपि यह नियम अटल है परन्तु ज्ञानी जीव उसके अपवादस्वरूप हैं,  
क्यों कि चारित्रमोहनीय के उदयसे जब तक चारित्र का अभाव उनकी  
आत्मा में नहीं हुआ है तब तक दर्शनमोहनीय कर्म के उदय से उत्पन्न  
होनेवाला कर्मबन्ध उनको नहीं होता है । जितने अंश में परपदार्थों से  
निवृत्ति है उतने अंशों में आत्मा में शुद्धि का सङ्भाव भी है, अर्थात्  
दर्शनमोहनीय कर्म के उपशम, क्षय और क्षयोपशम से जितनी भी  
आत्मा से अतत्त्वश्रद्धानपरिणति का अंत होगा उतनी ही आत्मजागृति-  
रूप शुद्धपरिणति का विकास वहां पर होगा ।

ભાવાર્થ—જ્યાં સુધી જીવ પોતાના શુદ્ધસ્વરૂપ-નિર્વિકાર આનન્દ-સ્વરૂપ  
મુક્તિને પ્રાપ્ત નથી કરી લેતો, ત્યાં સુધી તે કર્મોથી નિર્લિપ્ત થતો નથી. આવી  
અવસ્થામાં જ્યાં સુધી સાંસારિક દશા છે, અથવા સંસારમાં રહેવાનું છે ત્યાં  
સુધી કર્મોના ચક્કરમાં પ્રત્યેક પ્રાણી ફસાયેલાં જ છે. જે કર્મોના કર્તા છે તે  
તેના ફળનો પણ ભોક્તા મનાય છે. જે કે આ નિયમ અટલ છે છતાં પણ જ્ઞાની જીવ  
તેના અપવાદસ્વરૂપ છે, કેમ કે ચારિત્રમોહનીયના ઉદયથી જ્યાં સુધી ચારિત્રનો  
અભાવ તેના આત્મામાં નથી થયો ત્યાં સુધી દર્શન-મોહનીય કર્મના ઉદયથી  
ઉત્પન્ન થનાર કર્મબંધ તેને થતું નથી. જેટલા અંશમાં પરપદાર્થોની નિવૃત્તિ છે  
તેટલા અંશોમાં આત્મામાં શુદ્ધિનો સંભાવ પણ છે, અર્થાત્ દર્શન-મોહનીય  
કર્મના ઉપશમ, ક્ષય, અને ક્ષયોપશમથી આત્મામાં જેટલી પણ અતત્ત્વશ્રદ્ધાન  
પરિણતિનો અંત થશે તેટલી જ આત્મજાગૃતિરૂપ શુદ્ધ પરિણતિનો વિકાસ ત્યાં થશે.

सम्यक्त्वकरया, युक्त्या, सम्यक्त्वं तत्कलानि च ।

विदूष्यानार्यवचनं, चतुर्थेऽध्ययनेऽब्रवीत् ॥ १ ॥ इति ।

॥ इति श्री-विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललित-  
कलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-शाहू-  
छत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त-“ जैनशास्त्राचार्य ”-पदभूषित-  
कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर  
पूज्य-श्रीघासीलाल-व्रतिविरचितायाम् आचाराङ्गसूत्र-  
स्याऽऽचारचिन्तामणिटीकायां सम्यक्त्वाख्यं चतुर्थ-  
मध्ययनं सम्पूर्णम् ॥ ४ ॥

समकित के प्राप्त होते ही आत्मा में आत्मस्वरूप का भान होने से  
आंशिक रूप में सम्यग्ज्ञान और स्वानुभव में रमणरूप आंशिक चारित्र  
भी समकित की को उत्पन्न हो जाता है, अतः यहां पर सूत्रकार मोक्षमार्ग  
के पथिकों को कर्मजन्य उपाधिका अभाव बतलाते हैं, क्यों कि अज्ञानी  
जीवों को ही कर्मजन्य उपाधि हुआ करती है, ज्ञानी जीवों के नहीं ।

इस प्रकरण की समाप्ति करते हुए श्री सुधर्मास्वामी कहते हैं कि  
हे जम्बू ! जिस प्रकार से मैंने यह भगवान के समीप सुना है उसी  
प्रकार मैं कहता हूँ ॥ सू० ११ ॥

चौथे अध्ययनका चौथा उद्देश समाप्त ॥ ४-४ ॥

चौथे अध्ययन में जो विषय कहे गये हैं उनका संक्षिप्त वर्णन श्लोक  
द्वारा करते हैं—‘ सम्यक्त्वकरया ’ इत्यादि ।

समकित प्राप्त થતાં જ આત્મામાં આત્મસ્વરૂપનું ભાન થવાથી આંશિક રૂપમાં  
સમ્યગ્જ્ઞાન અને સ્વાનુભવમાં રમણરૂપ આંશિક ચારિત્ર પણ સમકિતીને ઉત્પન્ન  
થાય છે, માટે આ ઉકાળે સૂત્રકાર મોક્ષમાર્ગના પથિકોને કર્મજન્ય ઉપાધિનો અભાવ  
બતાવે છે, કેમકે અજ્ઞાની જીવોને જ કર્મજન્ય ઉપાધિ થાય છે, જ્ઞાની જીવોને નહિ.

આ પ્રકરણની સમાપ્તિ કરતાં શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે હે જમ્બૂ !  
જે પ્રકારે મેં ભગવાનની સમીપ આ સાંભળ્યું છે તે પ્રકારે હું કહું છું. ॥સૂ. ૧૧॥

ચોથા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચોથા અધ્યયનમાં જે વિષય કહેવાયા છે તેનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન શ્લોકદ્વારા  
કરે છે—‘ સમ્યક્ત્વકરયા ’ ઇત્યાદિ.



सम्यक्त्व को पुष्ट करनेवाली युक्ति से सम्यक्त्व का वर्णन तथा अनार्यों के वचनों का निराकरण करके सम्यक्त्वका फल इस चौथे अध्ययन में कहा गया है ॥ १ ॥

यह आचाराङ्गसूत्रके सम्यक्त्व नामके चौथे अध्ययनकी आचार-  
चिन्तामणि-टीकाका हिन्दीभाषानुवाद सम्पूर्ण ॥ ४ ॥

सम्यक्त्वने पुष्ट करवावाणी युक्तिथी सम्यक्त्वतुं वर्णन, तथा अनार्योंना  
वचनोतुं निराकरण करीने सम्यक्त्वतुं इण आ योथा अध्ययनमां कह्युं छे. ॥ १ ॥

आ आचाराङ्गसूत्रना सम्यक्त्वनामना योथा अध्ययननी आचार-  
चिन्तामणि-टीकाने गुजराती अनुवाद संपूर्ण ॥ ४ ॥



[ ૧ ]

શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી

જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

ગરેડીઆ કુવા રોડ - બ્રીન લોજ પાસે

રાજકોટ



સમિતિની શરૂઆત તા. ૧૮-૧૦-૪૪ થી  
તા. ૩૧-૧-૫૭ સુધીમાં દાનવીર મહારાયો  
તરફથી મળેલી રકમોની નામાવડી.



( રૂ. ૨૫૦ થી ઓછી રકમો આ યાદીમાં સામેલ કરેલ નથી. )



આદ્ય સુરજીત્રી-૪

( ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦૦ ની રકમ આપનાર )

૧૦૦૦૦	શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ, પ્રમુખ સાહેબ	અમદાવાદ
૬૦૦૦	શેઠ હરખચંદ કાલીદાસભાઈ	ભાણુવડ
	( હા. શેઠ લાલચંદભાઈ, જેયંદભાઈ, નગીનદાસભાઈ, વૃજલાલભાઈ તથા વલ્લભદાસભાઈ )	
૫૨૫૧	કેઠારી જેયંદભાઈ અજરામર હા. હરગોવિંદભાઈ જેયંદ	રાજકોટ
૫૦૦૧	શેઠ ધારશીભાઈ જીવનભાઈ	સોલાપુર

સુરજીત્રીઓ-૨૦

( ઓછામાં ઓછી રૂ. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર )

૩૬૦૫	વકીલ જીવરાજ વર્ધમાન હા. કેઠારી કહાનદાસભાઈ તથા વેણીલાલભાઈ	જેતપુર
૩૬૦૪	દોશી પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	રાજકોટ
૩૨૮૯૧૧	મહેતા ગુલામચંદ પાનાચંદ	"
૩૧૦૧	સંઘવી પીતામ્બરદાસ ગુલામચંદ	જામનગર
૨૫૦૦	શેઠ શામજીભાઈ વેલજી વીરાણી	રાજકોટ
૨૦૦૦	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસીંહજી બહાદુર	મોરબી
૨૦૦૦	શેઠ લહેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદભાઈ લહેરચંદ	સીધપુર
૨૦૦૦	શાહ ઇબ્રાહીમજી હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ	મુંબઈ
૧૬૬૩	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	મોરબી
૧૦૦૧	શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ	અમદાવાદ
૧૦૦૧	શેઠ માણેકલાલ ભાણુજીભાઈ	પોરબંદર
૧૦૦૦	શેઠ સોમચંદ તુલસીદાસ	રતલામ
૧૦૦૦	કેઠારી છત્રીલાલદાસ હરખચંદ	મુંબઈ
૧૦૦૦	કેઠારી રંગીલાલદાસ હરખચંદ	શીહોર
૧૦૦૨	બગડીઆ જગજીવનદાસ રતનશી	દામનગર
૧૦૦૧	શ્રીમાન ચંદ્રસિંહજી મહેતા ( રેલ્વે મેનેજર સાહેબ ) કલકત્તા	
૧૦૦૧	મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	જામજોધપુર
૧૦૦૧	મહેતા સોમચંદ નેણશીભાઈ ( કરાંચીવાળા )	મોરબી
૧૦૦૧	શાહ હરીલાલ અનુપચંદ	ખંભાત
૧૦૦૨	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા. દલપતરામ કપુરચંદ દોશી	જામ જોધપુર



## સહાયક મેમ્બરો-૨૧

( જોછામાં જોછી રૂ. ૫૦૦ ની રકમ આપનાર )

૭૫૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ઝુંઝાભાઈ	વઢવાણ શહેર
	વેલસીભાઈ	
૭૫૦	મોદી કેશવલાલ હરચંદ	સાબરમતી
૭૦૦	શેઠ નરોત્તમદાસ જોધડભાઈ	જોરાવરનગર
૫૦૧	શેઠ શીવલાલ ડમરભાઈ	લીંબડી
૫૦૦	કામદાર તારાચંદ પોપટલાલ ધોરાજીવાળા	રાજકોટ
૫૦૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	થાનગઢ
૫૦૦	શેઠ તારાચંદજી પુખરાજજી	ઔરંગાબાદ
૫૦૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ઔરંગાબાદ
	૧૫૦ શેઠ શેષમલજી જીવરાજજી	
	૧૨૫ „ અનરાજજી લાલચંદજી	
	૧૨૫ „ ધુકડચંદજી રૂપચંદજી	
	૧૦૦ „ દગડુમલજી ચાંદમલજી	
	૫૦૦	
૫૦૦	મહેતા મોહનલાલ કપુરચંદ	રાજકોટ
૫૦૦	શેઠ ગોવીંદજી પોપટભાઈ	રાજકોટ
૫૦૦	મહેતા મુળચંદ રાઘવજી હા. મગનલાલભાઈ તથા હર્લલજીભાઈ	ધ્રાશ
૫૦૦	શેઠ હરખચંદ પરસોત્તમ હા. ભાઈ ઈન્દુકુમાર	ચોરવાડ
૫૦૧	શેઠ ખીમજી બાવાભાઈ હા. તેમના પુત્રો કુલચંદભાઈ	
	નાગરદાસભાઈ, શુભામચંદભાઈ તથા જમનાદાસભાઈ	મુંબઈ
૫૦૧	શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. શેઠ મુલજીભાઈ મણીલાલ મુંબઈ	
૫૦૧	શેઠ ઈશ્વરલાલ પુરૂષોત્તમદાસ	અમદાવાદ
૫૦૧	શેઠ ચંદુલાલ છગનલાલ	અમદાવાદ
૫૦૧	સ્વ. કાંતીલાલભાઈના સ્મરણાર્થે હ. શેઠ બાલચંદ	
	સાકરચંદ	મુંબઈ
૫૦૦	અ. સૌ. બેન મણીગૌરી મગનલાલ તે	
	મહેતા સોમચંદ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્નિ	રતલામ
૫૦૧	સ્વ. પીતાશ્રી નંદાજીના સ્મરણાર્થે હ. વેણીચંદ	
	શાંતીલાલ (બાળુઆવાળા)	મેઘનગર

૭૫૧	શાહ રંગજીભાઈ મોહનલાલ	અમદાવાદ
૫૦૧	કામદાર રતીલાલ હર્લેલજી જેતપુરવાળા	મુંબઈ

### પ્રથમ વર્ગના મેમ્બરો-૧૮૫

(ઑછામાં ઑછી રકમ રૂ. ૨૫૦ આપનાર)

૪૦૨	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ધ્રાફા
૪૦૦	ધી વાડીલાલ ડાઇંગ એન્ડ પ્રિન્ટીંગ વર્ક્સ	રાજકોટ
૩૫૩	શેઠ રતનશી હીરજીભાઈ હા. ગોરધનદાસભાઈ	ભાભોધપુર
૩૦૧	શેઠ જેચંદભાઈ માણેકચંદ	ભાણુવડ
૨૫૧	સંઘવી માણેકચંદ માધવજી	ભાણુવડ
૨૫૧	શેઠ લાલજીભાઈ માણેકચંદ (લાલપુરવાળા)	ભાણુવડ
૨૫૧	શેઠ રામજી ઝીણાભાઈ	ભાણુવડ
૨૫૧	પંચમીયા ભવાનભાઈ કાળાભાઈ	વડીઆ
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	વાંકાનેર
૨૫૧	શેઠ રતીલાલ ન્યાલચંદ	રાજકોટ
૨૫૦	બાબુ પરશુરામ છગનલાલ શેઠ (ઉદેપુરવાળા)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ મંગનલાલ છગનલાલ વિશ્રામ (ધ્રાફાવાળા)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ જેઠાલાલ ગોરધનદાસ	ઉપલેટા
૨૫૧	સ્વ. બહેન સંતોક કચરા હા. આતમચંદભાઈ, છોટાલાલભાઈ તથા અમૃતલાલભાઈ વાલજી (કલ્યાણવાળા)	ઉપલેટા
૨૫૧	શેઠ ખુશાલચંદભાઈ કાનજીભાઈ હા. શેઠ પ્રતાપભાઈ	ઉપલેટા
૪૭૭	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ખાખીબળીયા
૨૫૧	શેઠ છોટાલાલ કેશવજી	ભામનગર
૨૫૧	શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ	જેતલસર જંકશન
૨૫૧	શાહ ચતુરદાસ ડાકરશીભાઈ	ભામનગર
૨૫૧	ખંડેરીયા કાન્તીલાલ ત્રંબકલાલ (સ્ટેશન માસ્ટર)	સુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	શાહ કેશવલાલ જેચંદ	વેરાવલ
૨૫૧	શાહ ખીમચંદ સોભાગચંદ વસનજી	વેરાવલ
૨૫૧	સ્વ. બાબડા વન્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્ની કમળભાઈ તરફથી હા. માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઈ	ગોંડલ
૨૫૧	શેઠ છગનલાલ નાગજીભાઈ	મુંબઈ
૨૫૧	ઘેલાણી ત્રીકમજી લાધાભાઈ	જીનારદેવ

૨૫૧	શેઠ ગીરધરલાલ કરમચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ છોટાલાલ વખતચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	ગોસલિયા હરિલાલ લાલચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ પ્રેમચંદ માણેકચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ માણેકલાલ ભગવાનદાસ	ખંભાત
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ મોહનલાલ ઇચ્છારામ	ખંભાત
૨૫૧	શેઠ રમણીકલાલ એ. કપાસી	આણંદ
૨૫૧	ખડેન સુરીખડેન (લક્ષ્મીબેન)	
	હા. મહેતા હરીલાલ પીતામ્બરદાસ	પાલણુપુર
૨૫૦	શેઠ વાડીલાલ નેમચંદ વકીલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ વીઠલદાસ મોદી માસ્તર	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ મણીલાલ જીવણલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નાગરદાસ વાધજીભાઈ	અમલનેર
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	અમલનેર
૨૫૧	શેઠ મનુભાઈ મુળચંદ (ઈન્જીનીયર સાહેબ)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ શાંતિલાલ પ્રેમચંદ	
	[તેમનાં ધર્મપત્નીના વરસીતપ પ્રસંગે ખુશાલીના]	રાજકોટ
૨૫૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. ચંપાલાલજી મારવે	ડોંડાઈયા
૨૫૧	શેઠ મોતીલાલજી રણજીતલાલજી હીંગડ	ઉદેપુર
૨૫૦	શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બેન્કર્સ	યાદગીરી
૨૫૦	શેઠ ગોપાલજી મીઠાભાઈ	હાટીના માળીયા
૨૫૧	ઉદાણી ન્યાલચંદ હાકેમચંદ [વકીલ]	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ પ્રભારામ વીઠલજી	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ મેઘરાજજી દેવીચંદજી મહેતા	મદ્રાસ
૨૫૧	પટેલ ગોવીંદલાલ ભગવાનજી	કેલકી
૩૦૨	પટેલ ખીમજી જેઠાભાઈ વાઘાણી	કેલકી
૨૫૧	શેઠ હકીમચંદ દીપચંદ ગોંડલવાળા [સ્ટેશન માસ્તર ભક્તિનગર]	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ વસનજી નારણજી	ભમખંભાળીયા
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ભમખંભાળીયા
૨૫૧	શેઠ કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ	ખીચન (પાલી)
૨૫૧	શેઠ પદમસી ભીમજી ફેફરીયા	ભાણુવડ



૨૫૧	અ. સૌ. બહેન બચીબહેન બાબુભાઈ	ધોરાજી
૨૫૧	શેઠ નેમચંદ સવજીભાઈ મોદી	લાલપુર
૨૫૦	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પ્રમુખ શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલાલ	નંદરબાર
૨૫૧	શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ જસાપરવાળા હા. નરભોરામભાઈ	જેતપુર
૨૫૧	દોશી છોટાલાલ વનેચંદ	જેતપુર
૨૫૧	કામદાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની	
	બાઈ ઝબકબહેન તરફથી હા. ભાઈ શાંતિલાલ	જેતલસર
૨૮૭	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	જામજોધપુર
૨૫૧	સ્વ. બહેન વિજયાગૌરી રાયચંદ હા. શેઠ રાયચંદ પાનાચંદ	ધોરાજી
૨૫૦	ગાંધી પોપટલાલ જયંદભાઈ	ધોરાજી
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	
	હા. પ્રમુખ રાયચંદ વૃજલાલ અજમેરા	વીંછીયા
૨૫૧	શેઠ મુળચંદ પોપટલાલ હા. મણીલાલભાઈ	
	તથા જેસીંગલાલભાઈ	લાલપુર
૨૫૧	શેઠ મણીલાલ મીઠાભાઈ હા. હરિલાલભાઈ	
	હાટીના માળીયાવાળા	ભુનાગઢ
૨૫૧	સ્વ. વસાણી હરજોવીંદાસ છગનલાલના સ્મરણાર્થે	
	તેમનાં ધર્મપત્ની બાઈ છબલબેન તરફથી	ખોટાદ
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ચુડા (ખાલાવાડ)
૨૫૧	શેઠ મગનલાલજી બાગરેયા	ઉદેપુર
૨૫૧	શેઠ ચાંપશીભાઈ સુખલાલ	સુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ખોટાદ
૨૫૧	સ્વ. પૂજ્ય માતૃશ્રી સમરતમાઈના સ્મરણાર્થે	
	હા. ડોકટર સાહેબ નરોત્તમદાસ ચુનીલાલ કાપડીયા	રાણપુર
૨૫૧	સ્વ. તુરખીયા લહેરચંદ માણેકચંદ સુદામકાવાળાના સ્મરણાર્થે	
	તેમનાં ધર્મપત્ની જીવતીબાઈ તરફથી હા. જયંતીલાલ લહેરચંદ ડભાસ	
૨૫૧	શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ	ઝાંગઝા
૨૫૧	શાહ દીલીપકુંવર સવાઈલાલ	
	હા. શેઠ સવાઈલાલ ત્રંબકલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શેઠ છોટુભાઈ હરજોવીંદાસ કટોરીવાળા	મુંબઈ
૨૫૧	રા. રા. નાથાલાલ ડી. મહેતા	મોંમ્બાસા
૨૫૧	સંઘવી પ્રાણુલાલ લવજીભાઈ	જામખંભાળીયા

૨૫૧	ખાવીશી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણથે તેમનાં ધર્મપત્ની બાઈ મણીબેન તરફથી હા. બાઈ રસીકલાલ, અનીલકાંત તથા વિનોદરાય આસનસોલ
૨૫૦	શેઠ માણેકલાલ અમુલખરાય મહેતા ઘાટકોપર
૨૫૧	ભાવસાર ખોડીદાસ ગણેશભાઈ ધંધુકા
૨૫૧	શાહ પોપટલાલ ધનજીભાઈ ધંધુકા
૨૫૧	સ્વ. ગુલાબચંદભાઈના સ્મરણથે હા. વોરા પોપટલાલ નાનચંદ ધંધુકા
૨૫૧	શેઠ ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ વસાણી ધંધુકા
૨૫૧	સ્વ. મોહનલાલ નરસીદાસના સ્મરણથે તેમનાં ધર્મપત્ની સુરજબેન મોરારજી તરફથી બરવાળા
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ પાણશણા (લીંબડી)
૨૫૧	સંઘાણી મુળશંકર હરજીવનભાઈના સ્મરણથે હા. તેમના પુત્રો જયંતિલાલભાઈ તથા રમણીકલાલભાઈ ઉપલેટા
૨૫૧	શાહ મગનલાલ ગોકળદાસ હા. રતીલાલ મગનલાલ વઢવાણ શહેર
૨૫૧	સંઘવી મુળચંદ બેચરભાઈ હા. જીવનલાલ ગફલદાસ વઢવાણ શહેર
૨૫૧	બહેન સુર્યબાળા નૌતમલાલ જસાણી [ વરસીતપનાં પારણાંની ખુશાલીમાં ] રાજકોટ
૨૫૧	શાહ રામચંદ ઠાકરશીના સ્મરણથે હા. બાઈ શાંતીલાલ રામચંદ લખતર
૨૫૧	ભાવસાર હરજીવનદાસ પ્રભુદાસના સ્મરણથે હા. બાઈ ત્રીલોચનદાસ હરજીવનદાસ લખતર
૨૫૧	શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણથે હા. બાઈ અમૃતલાલ તલકશી લખતર
૨૫૧	શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ લખતર
૨૫૧	શેઠ વૃજલાલ સુખલાલ વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શેઠ કાંતિલાલ નાગરદાસ વઢવાણ શહેર
૨૫૧	વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ વઢવાણ શહેર
૨૫૧	સંઘવી શીવલાલ હીમજીભાઈ વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શાહ દેવશીભાઈ દેવકરજી વઢવાણ શહેર

- ૨૫૧ શાહ બદવજી બોધહભાઈ સદાહવાળાના સ્મરણાર્થે  
હા. ભાઈ શાંતીલાલ બદવજી લખતર
- ૨૫૧ ભાવસાર ચુનીલાલ પ્રેમચંદભાઈ સુરેન્દ્રનગર
- ૨૫૧ શ્રી વર્ધમાન શ્વેતામ્બર સ્થા. શ્રાવક સંઘ  
હા. શેઠ કેસરીમલજી અનોપચંદજી ગુગળીયા મલાડ (મુંબઈ)
- ૨૫૧ દોશી ઠાકરશી ગુલાબચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં  
ધર્મપત્ની સમરતબેન વૃજલાલ તરફથી  
હા. ભાઈ જયંતિલાલ ઠાકરશી લખતર
- ૩૦૦ શાહ અમુલખ ઉર્ફે ખચુભાઈ નાગરદાસનાં ધર્મપત્ની  
અ. સૌ. બેન લીલાવંતીના વરસી તપનાં પારણાની  
ખુશાલીમાં હા. ભાઈ કાંતીલાલ નાગરદાસ વીરમગામ
- ૨૫૧ કામદાર કેશવલાલ હીમતરામ પ્રોફેસરસાહેબ (ગોંડલવાળા) વડોદરા
- ૨૫૧ શેઠ ડુંગરશી હંસરાજ વીસરીયા મુંબઈ
- ૨૫૧ શેઠ ધનરાજ મુળચંદ મુથા લોનાવાલા (પુના)
- ૨૫૧ મહેતા નાનાલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્ની  
સ્વ. ચંચળબેન તથા પુરીબેનના સ્મરણાર્થે  
હા. ભાઈ મનહરલાલ નાનાલાલ મુ. વણી (વીરમગામ)
- ૨૫૧ દોશી ચુનીલાલ કુલચંદ મોરબીવાળા મુ. શાલબની (બંગાળ)
- ૩૦૧ શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હા. શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ સાણંદ
- ૨૫૧ શેઠ મોહનલાલ જોઠાભાઈના સ્મરણાર્થે  
હા. શેઠ આત્મારામ મોહનલાલ કલોલ
- ૨૫૧ શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૈ. કાંતાબેન  
રમણીકલાલ (ધ્રાંગધ્રાવાળા) મુંબઈ
- ૨૫૧ ડોકટર મયાચંદ મગનલાલ હા. ડો. રતનચંદ મયાચંદ કલોલ
- ૨૫૧ સ્વ. શાહ નાથાલાલ ઉમેદચંદના સ્મરણાર્થે  
હા. શાહ રતીલાલ નાથાલાલ કલોલ
- ૨૫૧ શ્રી સ્થા. દરીયાપુરી જૈન સંઘ હ. ભાવસાર  
દામોદરદાસ ધધિરભાઈ કડી
- ૨૫૧ શાહ મણીલાલ તલચંદના સ્મરણાર્થે  
હા. મારફતીયા ચંદુલાલ મણીલાલ કલોલ
- ૨૫૧ અ. સૈા. ચંપાબેન હ. શેઠ જીવરાજ લાલચંદ દોશી સાણંદ
- ૨૫૧ પટેલ મહાસુખલાલ ડોસાભાઈ સાણંદ



૨૫૧	શાહ સાકરચંદ કાનજીભાઈ	સાણુંદ
૨૫૧	શાહ હીંમતલાલ હરજીવનદાસ	મુંબઈ
૨૫૧	શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ	
	(રાજ સીતાપુરવાળા)	સાબરમતી
૨૫૧	અ. સૌ. સમસ્તજેન પ્રેમચંદ	
	% પ્રેમચંદ માણેકચંદ (રાજ સીતાપુરવાળા)	સાબરમતી
૨૫૧	શા. કાંતીલાલ ત્રીલોચનદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	સ્વ. શેઠ ઉજ્જમશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે	
	તેમના પુત્રો તરફથી હા. શેઠ ચુનીલાલ નાનચંદ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શાહ મણીલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણાર્થે	
	તેમના પુત્રો તરફથી હા. ખીમચંદભાઈ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શેઠ હરીલાલ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે	
	હા. શેઠ અનુભાઈ હરીલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	સંઘવી જ્યેષ્ઠભાઈ નારાણદાસ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શાહ વેલશીભાઈ સાકરચંદના સ્મરણાર્થે	
	હા. ચીમનલાલ વેલશી કત્રાજવાળા	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	પારેખ મણીલાલ ટોકરશી લાતીવાળા	
	તરફથી મોટીજેનના સ્મરણાર્થે	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નારાણદાસ નાનજીભાઈના સુપુત્ર વાડીભાઈનાં ધર્મપત્ની	
	અ. સૌ. નારંગીજેનના વરસીતપ નિમીત્તે હા. શાંતીભાઈ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ	અમદાવાદ
૨૫૦	શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ	અમદાવાદ
૩૫૧	લાલા પુરણચંદજી જૈન (સેન્ટ્રલએકવાલા)	દીલ્લી
૨૫૧	સ્વ. છખીલદાસ ગોકળદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મ-	
	પત્નિ કમળાબેન તરફથી હા. મંજુલા કુમારી	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ રતીલાલ વાડીલાલ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ લાલભાઈ મંગળદાસ	
	”	
૨૫૧	અ. સૌ. કમળાબેન તે કામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલનાં	
	ધર્મપત્નિ (વઢવાણવાળા)	રંજુન
૨૫૧	વોરા ડોસાભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા.	
	વોરા નાનચંદ શીવલાલ	વઢવાણ શહેર

- ૨૫૧ વૌરા ધનજીભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા. વઠવાણ શહેર  
વૌરા પાનાચંદ ગોખરદાસ
- ૨૫૧ સ્વ. અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. કહાનજીભાઈ અમદાવાદ  
અમૃતલાલ દોશી
- ૨૫૧ શ્રી વીરમગામ સ્થા. જૈન શ્રાવિકા સંઘ વીરમગામ
- ૨૫૧ સ્વ. ત્રિલોચનદાસ દેવચંદ તથા સ્વ. અ. સૌ. ચંચળ-  
બેનના સ્મરણાર્થે હા. ડોકટર હિંમતલાલ સુખલાલ ”
- ૨૫૧ શાહ મુલચંદ કાનજીભાઈ તરફથી હા. શાહ નાગરદાસ  
ઝોઘડભાઈ ”
- ૨૫૧ શેઠ મોહનલાલ પીતાંબરદાસ હા. ભાઈ કેશવલાલ તથા  
મનસુખલાલભાઈ ”
- ૨૫૧ શાહ રતનશી મોણીશીની કું. મુંબઈ
- ૨૫૧ ભાવસાર ભોગીલાલ જમનાદાસ અમદાવાદ
- ૨૫૧ શાહ શીવજી માણેકભાઈ બેરાજા કચ્છ
- ૨૫૧ શાહ લુણાજી ગુલામચંદ (સંજેલી) પંચમહાલ
- ૨૫૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ પ્રેમચંદ દલીચંદ (સંજેલી) ”
- ૨૫૧ શાહ કુંવરજી ગુલામચંદ (લીમડી) ”
- ૨૫૧ શાહ પાનાચંદ સંઘજીભાઈ હા. વંખકલાલ રતીલાલ મુંબઈ
- ૩૦૧ શાહ અમુલખભાઈ મુળજી હા. પ્રકાશચંદ અમુલખ હારીજ
- ૩૦૧ સ્વ. બેન ચંદ્રકાંતાના સ્મરણાર્થે હા. અમુલખ મુળજીભાઈ ”
- ૨૫૧ સ્વ. પદમશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હા. શીવલાલ પદમશી મેસાણા
- ૨૫૧ શાહ ગોકળદાસ શામજી ઉદાણી એડન કેમ્પ
- ૨૫૧ ખાટવીયા ગીરધરલાલ પ્રમાણુ હા. અમીચંદ  
ગીરધરલાલ ખાખીખળીયા
- ૨૫૧ શ્રીમતિ અ. સૌ. બેન ચંદ્રાવતી તે શ્રીમાન બહોતલાલજી  
નાહરનાં ધર્મપતિ હા. શેઠ રણજીત લાલજી હીંગડા ઉદેપુર
- ૨૫૧ સ્વ. શેઠ વીરચંદભાઈ જેસીંગ લખતરવાળાના સ્મરણાર્થે  
હા. કેશવલાલ વીરચંદ શેઠ મુંબઈ
- ૨૫૧૮ છાજેડ ઘાસીરામ ગુલામચંદ (લીમડી) પંચમહાલ
- ૨૫૧ મહેતા પ્રજુદાસ મુળજીભાઈ ધોરાજી
- ૩૦૧ શ્રીમતી હીરાબેન નથુભાઈના વરસીતપ નીમીતે  
હા. નથુભાઈ નાનચંદ શાહ વીરમગામ
- ૨૫૧ સ્વ. મણિયાર પરસોતમ મુંદરજીના સ્મરણાર્થે  
હા. સાકરચંદ પરસોતમ ”

૨૫૧	શેઠ મણીલાલ શીવલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ ત્રીભોવનદાસ લગવાનજી પાનેલીવાળા	જામજેઘપુર
૨૫૧	શાહ નટવરલાલ ચંડુલાલ	અમદાવાદ
૩૦૧	શાહ ત્રીભોવનદાસ છગનલાલ	ગોધરા
૨૫૧	શાહ નરસીદાસ ત્રીભોવનદાસ	અમદાવાદ
૩૦૧	ખીખીનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ગોપાણી	રાણપુર
	હા. ગોપાણી ચુનીલાલ માણેકચંદ	
૨૫૧	શ્રી શાહપુર દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા.	
	વહીવટ કરનાર શેઠ ઈશ્વરદાસ પુરષોત્તમદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	શ્રી છીપાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન સંઘ	
	હ. શેઠ ચંડુલાલ અમૃતલાલ	"
૨૭૭	શ્રી. સ્થાનકવાસી છકોટી જૈન સંઘ	
	હ. મહેતા ચુનીલાલ વેલજી	માંડવી (કચ્છ)
૨૫૧	વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ મહેતા	વડોદરા
૨૫૧	વેરા મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ
૨૫૧	શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઈ C/o શાહ બાલાભાઈ મહાસુખરામ	"
૨૫૧	શા. ભાઈલાલ ઊજમશી	અમદાવાદ
૨૫૧	સ્વ. કેશવલાલ મુળજીભાઈનાં ધર્મપત્ની, સ્વ. અમૃતભાઈના	
	સ્મરણાર્થે હ. ભાઈલાલ કેશવલાલ થાનગઢવાળા	શુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	પુરીબેન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સંઘવી લીમડીવાળાના	
	સ્મરણાર્થે હ. વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી	સાણંદ
૨૫૧	પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મુળીવાળાના સ્મરણાર્થે	
	હ. ભીખાલાલ નેમચંદ	સાણંદ
૨૫૧	સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે	
	હ. જયંતીલાલ નારણદાસ	સાણંદ
૨૫૧	શા. પ્રવિણચંદ્ર નરસીદાસ સાણંદવાળા	ખોડેલી (ગુજરાત)
૨૫૧	મહેતા અમૃતલાલ જેઠાલાલ સીવીલ ઈન્જીનીયર સાહેબ	લાખેરી
		(રાજસ્થાન)
૨૫૧	ડા. કુ. સરસ્વતી બહેન શેઠ	અમદાવાદ
૨૫૧	શ્રી સૌરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈન સંઘ	અમદાવાદ



પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં  
બનાવેલાં સૂત્રો.

કાશ્મીર.....થી.....કન્યાકુમારી

તેમજ કરાંચી.....થી..... કલકત્તા

સુધી

દરેક સ્થળે હોંશથી વંચાય છે.

કારણ કે

આવી રીતે શાસ્ત્રો તૈયાર કરવાનું અનોખું કાર્ય  
હજી સુધી કોઈ કરી શક્યું નથી.

\*

\*

\*

શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સમાજ

ઉપરાંત

શ્રી દેરાવાસી સંપ્રદાયના મહાન આચાર્યશ્રી રામવિજયસૂરીજી  
તથા અન્ય મુનિવરોએ

તેમજ

તેરાપથી મહાસલા કલકત્તાવાળાએ આ સૂત્રો અપનાવ્યાં છે.

\*

\*

\*

દેશ-પરદેશના મેમ્બરો સૂત્રો વાંચી જૈન ધર્મના શ્રુતજ્ઞાનનો અણુમોલો  
લાભ લઈ રહ્યા છે.

હસણાંજ લંડનની ઈન્ડીઆ ઓફીસ લાયબ્રેરીએ આ સૂત્રો મંગાવ્યા છે.

\*

\*

\*

આપ રૂપીઆ ૨૫૧-૦-૦ મોકલી મેમ્બર તરીકે નામ નોંધાવી હપ્તે હપ્તે  
લગલગ રૂપીઆ પાંચસો સુધીની કિંમતનાં શાસ્ત્રો વિના મૂલ્યે મેળવી શકો છો.

વધુ વિગત માટે લખો :

૬. શ્રીન લોજ પાસે,  
ગરેડીઆકુવા રોડ  
રાજકોટ.

મંત્રિ

શ્રી અખિલ ભારત પ્રવે. સ્થા. જૈન  
શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ.

## આપ આ સમિતિના કાર્યમાં કઈ રીતે મદદગાર થઈ શકો ?

- રૂા. ૫૦૦૦] ઓછામાં ઓછા આપીને સંસ્થાના આદ્ય સુરખીશ્રી તરીકે સુખારક નામ લખાવી શકો છો, આપનો ફેટો તથા આપનું જીવનચરિત્ર શાસ્ત્રમાં છાપવામાં આવે છે.
- રૂા. ૩૦૦૦] ઓછામાં ઓછા આપીને આપના વડીલના સ્મરણાર્થે એક શાસ્ત્ર આપના નામથી છપાવી શકો છો સમીતિને એક શાસ્ત્ર છપાવવામાં લગભગ રૂા. ૬૦૦૦) થી રૂા. ૮૦૦૦) ખર્ચ થાય છે. તે છતાં ત્રણ હજારમાં આપને નામે શાસ્ત્ર બહાર પાડવામાં આવશે.
- રૂા. ૨૫૫] ઓછામાં ઓછા આપીને લાઈફ મેમ્બર તરીકે આપનું નામ દાખલ કરાવી શકો છો આપને ૩૨ સૂત્રો તથા તેના તમામ ભાગો મફત મળી શકે છે. ( રૂા. ૫૦૦ ની કીંમતનાં શાસ્ત્રો હફતે હફતે આપને મળી શકે છે.)

સ્થાનકવાસી સમાજમાં આ એક જ સંસ્થા શાસ્ત્રો આર ભાષામાં પ્રગટ કરીને સર્વ ઉપયોગી વાંચન રજુ કરે છે આપને જ્યારે કોઈ શાસ્ત્રની જરૂર હોય ત્યારે તેમજ કોઈ સાધુ સુનીરાજને વહોરાવવાની ઇચ્છા હોય ત્યારે શાસ્ત્ર બીજેથી નહિ મંગાવતાં આ સમિતિ પાસેથી મંગાવી લેવા વિનંતી છે.

### એક અપીલ

દીક્ષા પ્રસંગે

વરસીતપ અને બીજી તપશ્ચર્યાઓનાં પારણા પ્રસંગે

મહાવીર જયંતી, પર્યુષણ, તથા દીવાળી જેવા તહેવાર પ્રસંગે

લગ્નપ્રસંગ તથા પુત્ર જન્મની ખુશાલીમાં.

વડીલોના સ્મરણાર્થે તેમની તીથી પ્રસંગે તેમજ બીજા સર અવસરે બનતી મદદ આ સંસ્થાને મોકલવા ખાસ નોંધ રાખશો.

પુજ્ય મહાત્મા તથા મહાસતિજને

## નમ્ર પ્રાર્થના

પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રી રાત દીવસના અથાગ પરીશ્રમ સાથે એક કંતાનના કકડા પર બેસીને સમાજના ભવિષ્યના વારસદાર માટે આગમ સંશોધન કરી અણુમોલો વારસો તૈયાર કરી રહ્યા છે, તે કાર્યમાં અનેક મહાત્માઓ પ્રશંસા બતાવીને સકીય સહકાર આપી રહ્યા છે. આપને અમારી નમ્ર વિનંતી છે કે આવા મહદ કાર્યમાં ઉપદેશ દ્વારા મદદગાર થઈ શકો તેટલી સમાજને આપની જરૂર છે માટે વગર વીલંબે સારા જૈન સમાજના ઉત્કર્ષ કાર્યમાં આપનો ફાળો નોંધાવો.

